

श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदास कृत

श्री रामचरितमानस

प्रामाणिक शुद्ध पाठ सहित सुगम टीका

श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदास की जीवनी, रामशलाका, मानस के चुने हुए उपदेश तथा अनेक चित्रों से विभूषित

टीकाकार

पंडित रामनरेश त्रिपाठी

प्रकाशक—राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली

प्रथम संशोधित संस्करण

मूल्य १४

बालकृष्ण एम० ए० द्वारा युगान्तर प्रेस, डफरिन पुल, दिल्ली में मुद्रित।

रामचरितमानस की इस टीका पर महात्मा गांधीजी की सम्मति



भाई रामनरेश जी,

आप का खत मिला है और सटीक मानस भी। आजकल आराम के दिनों में रोज आध घंटा रामायण सुनता हूँ। तीन दिन से आप ही का पुस्तक पढ़ता हूँ। जो प्रसंग चल रहा है सो तो पढ़ता ही हूँ, और भूमिका से आरम्भ किया है। अब जीवनी चलती है। मेरी तो आप के अनुवाद पर श्रद्धा है, इसलिये इस बारे में तो क्या लिखूँ ?

वर्धा

५-३-१९३६

आपका

मो० क० गांधी

भूमिका

कुछ वर्ष पूर्व रामचरितमानस के शुद्ध पाठ की खोज करके मैंने उसे टीका सहित प्रकाशित कराया था।

'मानस' के प्रेमियों में इसकी बड़ी प्रसिद्धि हुई और महात्मा गाँधीजी ने भी इसको पढ़ा और आशीर्वाद दिया। 'मानस' का पहला संस्करण बहुत थोड़े समय में ही समाप्त होगया; पर उसका दूसरा संस्करण कारणवश न हो सका। हाँ, इसकी माँग बराबर बनी रही और गोस्वामी तुलसीदासजी के भक्तगण इसके नये संस्करण के लिये बराबर प्रेरणा पहुँचाते रहे। अंत में दिल्ली के राजपाल एण्ड सन्ज़, पुस्तक प्रकाशक ने इसके प्रकाशन की इच्छा प्रकट की, मैंने उनको इसका कापी-राइट दे दिया।

रामचरितमानस की विस्तृत भूमिका अलग पुस्तकाकार प्रकाशित हुई है[1]। वह इस ग्रन्थ में इसलिए सम्मिलित नहीं की क्योंकि केवल भूमिका के लिये बहुतों को पूरा रामचरितमानस खरीदना पड़ता, जो उन्हें महँगा हो जाता। आशा है, रामचरितमानस के इस नए संशोधित संस्करण से मानस के प्रेमी पाठकगण लाभ उठायेंगे।

वसंत निवास,
सुलतानपुर,
१५—११—१९५१

—रामनरेश त्रिपाठी

१. तुलसी और उनका काव्य, लेखक—रामनरेश त्रिपाठी, मूल्य ७)

गोस्वामी तुलसीदासजी का जीवन-चरित

आज से लगभग चार सौ वर्ष पहले सोरों (ज़िला एटा, उत्तर-प्रदेश) के एक मुहल्ले में एक अत्यन्त निर्धन भिक्षुक ब्राह्मण के घर एक बालक पैदा हुआ। उसके जन्म लेते ही उसकी माँ का देहान्त होगया। फिर थोड़े ही दिनों में उसका पिता भी चल बसा। बालक किसी तरह, पता नहीं दरिद्रता की किन-किन गोदों में पलकर, जीवित बच गया। शरीर में चलने-फिरने की शक्ति आते ही वह पेट का भार उठाये हुए, राम-राम बोलते हुए, पेट की आग को बुझाने के लिए स्वजाति, विजाति और कुजाति सब के घरों में खीस काढ़कर, पेट दिखाकर और बार-बार पैरों पर सिर रखकर टुकड़े माँगता फिरा, और केवल अपने बाहु-बल पर उसने करोड़ों मनुष्यों के कल्याणकारी अपने जीवन को मृत्यु से लगभग नब्बे वर्षों तक बचाये रखा।

बचपन में उसकी गरीबी का यह हाल था कि कहीं किसी के यहाँ विवाह के बाजे की आवाज़ सुनकर वह दौड़ जाता और बचा-खुचा आहार पाकर निहाल हो जाता था। किसी के यहाँ श्राद्ध का समाचार पाकर वहाँ जा बैठता और एक टुकड़े के लिए घंटों टकटकी लगाये रखता था।

उसके शरीर पर वस्त्र नहीं थे, इधर-उधर से चिथड़े जमा करके, सीकर या गाठें देकर वह तन ढक लेता। रात में कभी सड़क पर, कभी किसी मन्दिर में और कभी-कभी किसी मसजिद में भी सो रहता। इस प्रकार की न जाने कितनी भीषण वेदनाओं, असह्य यातनाओं के अन्दर से वह अपने शरीर को बचाकर समाज के सामने आया और अपने अमूल्य जीवन को उसने उसी दु:ख से दग्ध, ताप से पीड़ित और चिन्ता से व्याकुल समाज को दान कर दिया, जिसने उसकी जीवन-रक्षा में स्वेच्छा से कुछ भी हाथ नहीं बँटाया था।

वह दु:ख ही में जन्मा, दु:ख ही में पला और फिर जब तक जिया तब तक दु:ख ही को सहोदर की भाँति अपने हृदय से उसने चिपकाये रखा और फिर अपने तपोबल से उसी दु:ख को सुख बनाकर संसार को सौंप दिया।

उस चमत्कारी बालक का नाम रामबोला था, जो पीछे गोस्वामी तुलसीदास के नाम से विख्यात हुआ। तुलसीदास जी का जीवन-चरित दु:खों का मर्मबेधी इतिहास है।

उस दीन, हीन, अनाथ मनुष्य ने जागृत अवस्था में एक सुन्दर स्वप्न देखा। उसने उस स्वप्न को आदर्श पुरुष-स्त्री, आदर्श समाज और सुराज

के रूप में चित्रित किया। वही चित्र 'रामचरितमानस' है। 'रामचरितमानस' दीनता की एक अमूल्य भेंट है, जो गरीबों की ओर से एक अत्यन्त निर्धन व्यक्ति द्वारा संसार को मिली है। यह 'रामचरितमानस' गृहस्थों का अमूल्य धन है। इसे किसी मूल्य पर, बदले में बड़े-बड़े राज्य लेकर भी, वे देना स्वीकार नहीं करेंगे। यही इस युग में हिन्दुओं का वेद है।

एक गरीब ने जो कर दिखाया, वह राम से नहीं हो सका था। न अब राम है, न सीता, न लक्ष्मण, न विभीषण और न हनुमान; पर तुलसीदास अब भी हैं। 'रामचरितमानस' उनका प्रत्यक्ष रूप है, जो अमर है, अजर है, अमिट है और अचल है। तुलसीदास न होते तो शायद उनके राम भी न होते और तब हम भी न होते। परिवर्तनशील काल हमें खा चुका होता—यद्यपि यह भी राम ही की महिमा है।

माघ नाम के एक दानी कवि ने वदान्यता के असह्य भार को न सहन करके स्वयं पराजित होकर, आत्मघात कर लिया था। कहा जाता है कि वह निर्धनता से प्रताड़ित होकर एक बार धन के लिए धारा-नरेश की राजधानी में पहुँचा। उसने अपनी स्त्री के हाथ राजा के पास यह श्लोक लिखकर भेजा:—

कुमुदवनमपश्री श्रीमदम्भोजखण्डं
त्यजति मुदमुलूकः प्रीतिमाँश्चक्रवाकः
उदयमहिमरश्मिर्याति शीतांशुरस्तं
हतविधिलसितानां दुर्विपाको विचित्रः॥

'कुमुद-वन की शोभा जाती रही, कमल शोभायमान हो गए, उलूक हर्ष को त्याग रहा है, चक्रवाक प्रसन्न हो रहा है, इधर सूर्य उदय हो रहा है, उधर चन्द्र अस्त हो रहा है। हा! विधाता के कार्यों का परिणाम विचित्र है।'

इस पद्य के भाव पर मुग्ध होकर धारा-नरेश ने कवि-पत्नी को प्रचुर धन-राशि देकर विदा किया। कवि-पत्नी धन लेकर पति के पास चली। रास्ते में याचकों के मुख से अपने पति की कीर्ति सुनकर उसने सब धन उन्हें दे डाला और वह खाली हाथ पति के पास पहुँची।

माघ ने सब वृत्तान्त सुनकर कहा—तुमने बहुत अच्छा किया। पर तुम्हारे दान का समाचार पाकर जो याचकों की भीड़ आ रही है, उसे अब क्या दिया जायगा? दान-शक्ति की क्षीणता से विकल होकर माघ ने यह कहकर आत्म-हत्या करली—

अर्था न सन्ति न च मुंचति मां दुराशा,
त्यागान्न संकुचति दुर्ललितं मनो मे।
याञ्चा च लाघवकरी स्ववधे च पापं,
प्राणाः स्वयं व्रजत किं प्रविलम्बितेन ॥

'धन पास नहीं, आशा छोड़ती नहीं, मूढ़ मन दान देने से हिचकता नहीं, माँगने से लघुता प्राप्त होती है, आत्महत्या में पाप है! अरे प्राणो! क्यों देरी करते हो? स्वयं क्यों नहीं निकल जाते?'

दारिद्रानलसंतापः शान्तः सन्तोषवारिणा।
याचकाशाविघातान्तर्दाहः केनोपशाम्यति ॥

'दरिद्रतारूपी अग्नि का संताप तो सन्तोषरूपी जल से शान्त हो गया, पर याचकों की आशा के विघात से हृदय में जो जलन हो रही है, वह कैसे शान्त हो?'

व्रजत व्रजत प्राणा अर्थिनि व्यर्थतां गते।
पश्चादपि हि गन्तव्यं क्व सार्थः पुनरीदृशः ॥

'प्राणो! याचक निराश होकर चले गए, अब तुम भी चल दो। पीछे भी तो जाना ही होगा; पर ऐसा साथ कहाँ मिलेगा?'

जिस दरिद्रता से पराजित होकर माघ ने शरीर त्याग किया, उसी दरिद्रता पर विजयी होकर तुलसीदास ने वह अक्षय-भण्डार दान किया है, जिससे कोई याचक कभी निराश होकर नहीं लौटेगा। दरिद्रता पर तुलसीदास की यह विजय साधारण विजय नहीं है।

मनुष्यों का कल्याण करने के लिए तुलसीदास ने धन की लालसा ही नहीं छोड़ी, उन्होंने स्त्री का भी त्याग किया, जिसके सम्बन्ध में नीलपट्ट कवि कहता है—

स्त्री-बल से गर्वित कामदेव रति का हाथ अपने हाथ में लेकर अट्टहास करके कहता है:

अयं स भुवनत्रय प्रथित संयमी शंकरो
बिभर्ति वपुषाधुना विरहकातरः कामिनीम्।
अनेन किल निर्जिता वयमिति प्रियायाः करं
करेण परिलालयंजयति जातहासः स्मरः ॥

'देखो, यह शंकर है, जो तीनों भुवनों में जितेन्द्रिय प्रसिद्ध है। ये क्षण-भर भी अपनी प्रिया का वियोग नहीं सह सकते। उसे अपने अर्धाङ्ग में

धारण किये हुए हैं। इन्हींने, अरे इन्होंने ही, हमें जीता है।'

पर कामदेव तुलसीदास पर अट्टहास न कर सका। वे दुखियों की सेवा में निमग्न थे; इससे कामदेव के लिए उन्होंने अपने अन्तर्जगत का द्वार ही नहीं खुलने दिया।

जिस स्त्री-बल की अजेयता का गान इन शब्दों में किया गया है:—

जनमजितमयीच्छता विजेतुं निशितदशार्धशरं धनुर्विमुच्य।
अतिरभसतयोद्यता स्मरेण ध्रुवमसियष्टिरिहांगनाभिधाना॥

'मनुष्य पर विजय पाने के लिए कामदेव ने अपने पाँचों तेज़ बाण छोड़े, पर मनुष्य जीता नहीं गया। तब उसने झटपट नारी-रूपी तलवार उठा ली।'

उसी स्त्री-बल को, कामदेव की उस तलवार को, तुलसीदास ने निष्फल कर दिया।

अश्वघोष ने सच ही कहा है:

तथा ही वीराः पुरुषा न ते मता जयन्ति ये साश्वरथद्विपान् नरान्।
यथा मता वीरतरा मनीषिणो जयन्ति लोलानि षडिन्द्रियाणि ये॥

'जो घोड़े, हाथी और रथ से युक्त मनुष्यों को जीतते हैं, वे सच्चे वीर नहीं हैं। सच्चे वीर तो वे विद्वान् हैं तो छहों चंचल इन्द्रियों को जीनते हैं।'

तुलसीदास को हम ऐसे ही वीरों में अग्रगण्य पाते हैं। बाह्य जगत् में राम रावण पर विजय प्राप्त करते हैं तो तुलसीदास अपने अन्तर्जगत् के शत्रुओं—मोह, मद, मत्सर आदि से जीवन-भर युद्ध करते रह कर कीर्ति पाते हैं।

तुलसीदास ने मानव-समाज के समस्त मानसिक और प्राकृतिक व्यापारों का अनुभव किया था। उनके मुख से एक विशाल जन-समुदाय की सरस्वती बोली थी। वे एक कवि थे, भक्ति उनका गौण विषय था। वे कवि होकर ही समाज में आये और अन्त समय तक कवि ही रहे भी। यों तो कवि की प्रतिभा बहुमुखी होती है और वह प्रत्येक विषय की मर्मज्ञता प्रकट भी करता है; पर उसकी एक खास प्रकृति अलग होती है, जिसमें वह विशेष रुचि रखता है। कोई शृंगार-रस का रसिक होता है, तो कोई करुण का; कोई हास्य-रस का प्रेमी होता है तो कोई वीर का। जिसकी रुचि जिस रस में अधिक होती है, वह उस पर अधिक अनुराग रखता है। तुलसीदास की रुचि भक्ति की ओर अधिक थी, और उन्होंने अध्ययन और अनुभव से भी उसमें अन्तरंगता बढ़ा ली थी; उनका लक्ष्य भी यही था कि भक्ति को जीवन का केन्द्र बनाकर उसकी ओर लोगों को आकर्षित करें, जिससे उनके मन की

कर्कशता और उनके जीवन का कल्मष दूर हो और वे सुखी बनें। इससे उन्होंने भक्ति पर अधिक तन्मयता दिखलाई। पर भक्ति का विवेचन उन्होंने कवि ही की हैसियत से किया है।

तुलसीदास एक राम के उपासक थे। उनके राम कौन थे? 'मैं सेवक, सचराचर रूप-रासि भगवन्त' कहाने वाले राम। अर्थात् यह सचराचर जगत् ही उनका राम था। उसी के लिये उन्होंने तपस्या की थी। उनकी तपस्या का एक प्रत्यक्ष फल 'रामचरितमानस' है।

संसार की भयानक विपत्तियाँ सहकर कवि तुलसीदास ने हमें अमूल्य पदार्थ 'रामचरितमानस' के रूप में दान दिया है, उसकी तुलना संसार के किसी दान से नहीं हो सकती। 'रामचरितमानस' एक कल्याणकारी ग्रन्थ है। वह एक साँचा है जिसमें जीवन को ढालकर उससे एक सुन्दर स्वरूप प्राप्त किया जा सकता है।

इस ग्रन्थ-रत्न का आदर गरीब की झोंपड़ी से लेकर राजमहल तक है। अच्छे-अच्छे विद्वान् भी इसका आनन्द लेते हैं और अपढ़ और अशिक्षित भी इसे बड़े चाव से गाते और सुनते हैं।

ज्ञान-प्राप्ति के लिये मनुष्य ने वर्णमाला का निर्माण किया पर जो उसे नहीं जानते वे ज्ञान से भी वंचित रह जाते हैं। ज्ञान और मनुष्य के बीच में वह एक दीवार है, जिसे लाँघे बिना न कोई वाल्मीकि, व्यास को जान सकता है, न कालिदास को और न शेख सादी या शेक्सपीयर को। पर तुलसीदास ने अक्षरों की उस दीवार को तोड़ दिया है। अक्षर-ज्ञान से रहित अहीर, धोबी, चमार, नाई, कहार आदि जातियों के लोग 'मानस' की चौपाइयाँ अपने जातीय गीतों में मिलाकर गाते और नाचते हैं। अक्षरों पर इस तरह की विजय संसार में शायद ही किसी कवि को प्राप्त हुई हो।

ऐसे ग्रन्थ-रत्न की चर्चा के पहले उसके रचयिता का जीवन-चरित जानने की लालसा उसके प्रेमी पाठकों में स्वभावतः उत्पन्न होती है। पर खेद है, कवि में अपने गौरव का गर्व था ही नहीं; इससे उसने अपने बारे में हमें कुछ नहीं बताया। अपने राम से विनय-प्रदर्शन करने में प्रसंगवश उसके मुख से जो कुछ निकला है, उसी से हम उसके जीवन-चरित का कुछ अनुमान कर सकते हैं। उसके सम्बन्ध की कुछ दन्त-कथाएँ भी मुख से मुख में चली आ रही हैं, उनमें भी सचाई का बहुत कुछ अंश है। हमने उन सबको, जो उपलब्ध हो सकीं, एकत्र कर दिया है।

रामचरित मानस की विषय-सूची

अयोध्या-काण्ड

आरण्य-काण्ड

किष्किंधा-काण्ड

सुन्दर-काण्ड

उत्तर-काण्ड

श्रीरामशलाका प्रश्न

दोहा—श्रीगणपति को ध्यान करि, राम सिया चित धारि ।
प्रश्नोत्तर हित चौपदी, याते लेहु निकारि ॥

सु	प्र	उ	वि	हो	मु	ग	ब	सु	नु	बि	घ	धि	ई	द
र	रु	फ	सि	सि	रे	बस	है	मं	ल	न	ल	य	न	अं
सज	सो	ग	सु	कु	म	स	ग	त	न	ई	ल	धा	बे	नो
त्य	र	न	कु	जो	म	रि	र	र	अ	कि	हो	सं	रा	य
पु	सु	थ	सी	जे	ई	ग	म	सं	क	रे	हो	स	स	नि
ति	र	त	र	स	ई	ह	ब	ब	प	षि	स	य	स	तु
म	का	।	र	र	मा	मि	मी	म्हा	।	जा	हू	ही	।	जू
ता	रा	रे	री	हृ	का	फ	खा	जि	ई	र	रा	पू	द	ल
णि	को	भि	गो	न	म	ज	य	ने	मणि	क	ज	प	स	ल
हि	रा	म	स	रि	ग	द	न	ष	म	खि	जि	मनि	त	जं
सि	मु	न	न	कौ	मि	ज	र	ग	धु	ख	सु	का	स	र
गु	क	म	अ	ध	नि	म	ल	।	न	ब	ती	न	रि	भ
ना	पु	व	अ	ढ़ा	र	ल	का	ए	तु	र	न	नु	व	थ
सि	हू	सु	म्ह	रा	र	स	हि	र	त	न	ष	।	जा	।
र	सा	।	ला	धी	।	री	जू	हू	हीं	षा	जू	ई	रा	रे

चौपाई निकालने की रीति

दोहा—जबहीं पृच्छक अंक पर, अँगुरी को धरि देत ।
ताके अगिले अंक ते, नवमाद्दर गनि लेत ॥
ऊपर को ऊपर लिखे, नीचे निम्न लिखेत ।
रामशलाका प्रश्न यह, जथा उचित फल देत ॥

श्रीरामशलाका प्रश्न में जो चौपाइयाँ निकलती हैं उनको फलसहित लिखते हैं—

सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजहिं मन कामना तुम्हारी ॥१॥

प्रश्न उत्तम है, कार्य सिद्ध होगा ॥१॥

प्रबिसि नगर कीजै सब काजा। हृदय राखि कोशलपुर राजा ॥२॥

भगवान् का स्मरण करके कार्य का आरम्भ करो, सिद्ध होगा, फल शुभ है ॥२॥

उघरे अंत न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावण राहू ॥३॥

जो कार्य तुमने विचारा उसके अन्त में भलाई नहीं, फल मध्यम है ॥३॥

बिधिबस सुजन कुसंगति परहीं। फणिमणि सम निज गुण अनुसरहीं ॥४॥

खोटे मनुष्यों का साथ छोड़ो, कार्य में विलम्ब है ॥४॥

होइहै वहै जो राम रचि राखा। को करि तरक बढ़ावै साखा ॥५॥

अपने कार्य को भगवान् के ऊपर छोड़ो, कार्य होने में सन्देह है ॥५॥

मुदमंगलमय संत समाजू। जिमि जग जंगम तीरथ राजू ॥६॥

प्रश्न अच्छा है, कार्य सिद्ध होगा ॥६॥

गरल सुधा रिपु करै मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई ॥७॥

प्रश्न अच्छा है, शत्रुओं का नाश अवश्य होगा ॥७॥

वरुण कुबेर सुरेस समीरा। रण सन्मुख धरि काहु न धीरा ॥८॥

काय सिद्ध होने में बहुत सन्देह है, फल मध्यम है ॥८॥

सफल मनोरथ होइँ तुम्हारे। राम लषन सुनि भये सुखारे ॥९॥

सब मनोरथ सिद्ध होंगे, धन की प्राप्ति होगी, फल बहुत श्रेष्ठ है ॥९॥



भाग छोट अभिलाषु बड़, करौं एक बिस्वास ।
पैहहिं सुख सुनि सुजन, खल करिहहिं उपहास ।। —तुलसी ।

श्रीगणेशाय नमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

रा म च रि त मा न स

प्रथम सोपान

बाल-कांड

श्लोकाः

वर्णानामर्थसङ्घानां रसानां छंदसामपि ।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ ॥१॥

वर्णों (अक्षरों), अर्थ-समूह, रसों, छन्दों और मंगलों के करने वाली वाणी (सरस्वती) और विनायक (गणेशजी) की मैं वन्दना करता हूँ ॥१॥

भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम् ॥२॥

श्रद्धा और विश्वासरूपी पार्वती और शङ्कर की मैं वन्दना करता हूँ, जिनके बिना सिद्ध-जन अपने हृदय में स्थित ईश्वर को नहीं देख पाते ॥२॥

वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शङ्कररूपिणम् ।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते ॥३॥

ज्ञानमय, नित्य, शंकररूपी गुरु की मैं वन्दना करता हूँ, जिनका आश्रित होकर टेढ़ा चन्द्रमा भी सर्वत्र वंदित होता है ॥३॥

सीतारामगुणग्रामपुण्यारण्यविहारिणौ ।
वन्दे विशुद्धविज्ञानौ कवीश्वरकपीश्वरौ ॥४॥

सीता और राम के गुण-समूह-रूपी पवित्र वन में विहार करने वाले विशुद्ध विज्ञान वाले कवीश्वर (वाल्मीकि) और कपीश्वर (हनूमान) की मैं वन्दना करता हूँ ॥४॥

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम् ।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम् ॥५॥

उत्पत्ति, स्थिति (पालन), और संहार (नाश) करने वाली और क्लेशों को हरने वाली तथा सम्पूर्ण कल्याणकारिणी राम की प्रियतमा सीता को मैं नमस्कार करता हूँ ॥५॥

यन्मायावशवर्त्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवासुराः
यत्सत्त्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथाऽहेर्भ्रमः ।
यत्पादप्लवमेकमेव हि भवाम्भोधेस्तितीर्षावतां
वन्देऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम् ॥६॥

जिसकी माया के वश में समस्त संसार, ब्रह्मादिक देवता तथा असुर हैं, जिसकी सत्ता से रस्सी में सर्प के भ्रम की भाँति यह सारा जगत् सत्य प्रतीत होता है, और जिसके चरण ही भवसागर से तरने की इच्छा करने वालों के लिये एक-मात्र नौका स्वरूप हैं; समस्त कारणों से परे उन राम कहाने वाले भगवान हरि की मैं वन्दना करता हूँ ॥६॥

नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ।
स्वान्तःसुखाय तुलसीरघुनाथगाथा
भाषानिबन्धमतिमञ्जुलमातनोति ॥७॥

अनेक पुराण, वेद और शास्त्र से सम्मत तथा रामायण में वर्णित और कुछ अन्यत्र से भी प्राप्त श्रीरघुनाथजी की कथा को तुलसीदास अपने अन्तःकरण के सुख के लिये अति मनोहर भाषा की रचना में विस्तृत करता है ॥७॥

सो०: जेहि सुमिरत सिधि होइ गननायक करिबर बदन ।
करउ अनुग्रह सोइ बुद्धिरासि सुभ गुन सदन ॥१॥

जिनके स्मरण करने से सब मनोरथ सिद्ध हो जाते हैं, जो गणों के स्वामी हैं, और जिनका मुख हाथी के मुख के समान सुन्दर है, वे ही बुद्धि की राशि और सब शुभ गुणों के घर श्रीगणेशजी मुझ पर कृपा करें ॥१॥

मूक होइ बाचाल पंगु चढ़इ गिरिबर गहन।
जासु कृपा सो दयाल द्रवौ सकल कलि मल दहन ॥२॥

जिनकी कृपा से गूँगा अच्छी तरह से बोलने वाला हो जाता है और लँगड़ा दुर्गम पहाड़ पर चढ़ जाता है, वे कलियुग के सब पापों को जलाने वाले दयालु (भगवान्) मुझ पर प्रसन्न हों ॥२॥

नील सरोरुह स्याम तरुन अरुन बारिज नयन।
करउ सो मम उर धाम सदा छीर सागर सयन ॥३॥

जो नीले कमल के समान श्याम हैं, नये खिले हुए लाल कमल के समान जिनके नेत्र हैं, जो सदा क्षीरसागर में शयन करते हैं, वे विष्णु भगवान मेरे हृदय-मन्दिर में निवास करें ॥३॥

कुंद इंदु सम देह उमा रमन करुना अयन।
जाहि दीन पर नेह करउ कृपा मर्दन मयन ॥४॥

कुन्द के फूल और चन्द्रमा के समान (गौर) शरीरवाले, पार्वतीजी के साथ विहार करने वाले, करुणा के घर, और जिनका दीन जनों पर स्नेह है, वे कामदेव को भस्म करनेवाले (शिव) मुझ पर कृपा करें ॥४॥

बंदउँ गुरु पदकंज कृपासिंधु नररूप हरि।
महा मोह तम पुंज जासु बचन रबिकर निकर ॥५॥

मैं गुरुजी के कमल ऐसे चरणों की वन्दना करता हूँ, जो दया के समुद्र और नररूप में हरि हैं। अज्ञानरूपी महा अन्धकार के समूह के लिये जिनके वचन सूर्य की किरणों के समूह के समान हैं ॥५॥

बंदउँ गुरु पद पदुम परागा ❀ सुरुचि सुबास सरस अनुरागा
अमिअ मूरि मय चूरन चारू ❀ समन सकल भवरुज परिवारू

मैं गुरुजी महाराज के चरण-कमलों की धूलि की वन्दना करता हूँ जिसमें सुरुचि (प्राप्ति की उत्कण्ठा) रूपी सुगंध और प्रेमरूपी रस है, जो संजीवनी बूटी के सुन्दर चूर्ण के समान संसार की सब व्याधियों के परिवार को नाश करने वाली है।

सुकृत संभुतन विमल विभूती ❀ मंजुल मंगल मोद प्रसूती
जन मन मंजु मुकुर मल हरनी ❀ किएँ तिलक गुन गन बस करनी

वह पुण्यरूपी शिवजी के शरीर पर शोभित पवित्र विभूति अथवा ऐश्वर्य है और सुन्दर कल्याण और आनन्द उत्पन्न करनेवाली है। वह भक्त के मनरूपी दर्पण का मैल दूर करने वाली और तिलक करने से सारे गुणों को वश में करने वाली है।

श्रीगुर पद नख मनि गन जोती ❀ सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती
दलन मोहतम सो सुप्रकासू ❀ बड़े भाग उर आवइ जासू

श्रीगुरुजी महाराज के चरणों के नखों की ज्योति (चमक) मणि-समूह के प्रकाश के समान है, जिसके स्मरण से हृदय में दिव्यदृष्टि उत्पन्न होती है। वह सुन्दर प्रकाश अज्ञानरूपी अन्धकार को नाश करने वाला है, अथवा वह अपने प्रकाश से मोहरूपी अन्धकार का नाश करता है। उस मनुष्य के बड़े भाग्य हैं, जिसके हृदय में वह प्रकाश आजाय।

उघरहिं बिमल बिलोचन ही के ❀ मिटहिं दोष दुख भवरजनी के
सूझहिं रामचरित मनिमानिक ❀ गुपुत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक

उसके हृदय में आते ही हृदय के निर्मल नेत्र खुल जाते हैं और संसार-रूपिणी रात्रि के सारे दोष और दुःख मिट जाते हैं। फिर उसको रामचरितरूपी मणि-माणिक्य, जहाँ गुप्त और प्रगट जिस खानि के हैं, दिखाई पड़ने लगते हैं।

दो॰ जथा सुअंजन अंजि दृग साधक सिद्ध सुजान।
कौतुक देखहिं सैल बन भूतल भूरि निधान ॥१॥

जिस प्रकार साधक, सिद्ध और बुद्धिमान-जन उत्तम अंजन नेत्रों में आँजकर पर्वत, वन और भूमि के भाँति-भाँति के कौतुक देखते हैं ॥१॥

गुर पद रज मृदु मंजुल अंजन ❀ नयन अमिअ[1] दृग दोष विभंजन
तेहि करि बिमल बिबेक बिलोचन ❀ बरनउँ राम चरित भव मोचन

गुरु के चरणकमलों की धूलि सुन्दर और सरस नयनामृताञ्जन के समान नेत्र के सारे दोषों को दूर करने वाली है। उसी अञ्जन से विवेकरूपी नेत्रों को

१. अमृत।

निर्मल करके मैं संसार के आवागमन से छुड़ाने वाले रामचरित का वर्णन करता हूँ।

बंदउँ प्रथम महीसुर[१] चरना ❁ मोह जनित संसय सब हरना
सुजन समाज सकल गुन खानी ❁ करउँ प्रनाम सप्रेम सुबानी

मैं पहले पृथ्वी के देवता ब्राह्मणों के चरणों को प्रणाम करता हूँ, जो अज्ञान से पैदा हुए सब सन्देहों को हरने वाले हैं। सज्जनों का समाज सब गुणों की खान है। मैं प्रेमसहित सुन्दर वाणी से उसको प्रणाम करता हूँ।

साधु चरित सुभ सरिस कपासू ❁ निरस बिसद गुनमय फल जासू
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा ❁ बंदनीय जेहि जग जस पावा

सज्जनों का चरित कपास के समान कल्याण करने वाला है। नीरस (विषय-बासना से रहित) उज्ज्वल, गुण (डोरा और सद्वृत्ति) से युक्त है। जो दुःख सह करके दूसरों के छिद्र (दोष) को ढकता है और जिसने जगत में वन्दना करने योग्य यश पाया है। [पूर्णोपमालङ्कार]

मुद मंगल मय सन्त समाजू ❁ जो जग जंगम तीरथराजू
राम भगति जहँ सुरसरि धारा ❁ सरसइ[२] ब्रह्म बिचार प्रचारा

सन्तों का समाज आनन्द-मंगल-युक्त है। वह संसार में चलता-फिरता तीर्थराज (प्रयाग) है। उस सन्त-समाजरूपी प्रयाग में राम की भक्ति गङ्गा की धारा है और ब्रह्मविचार का प्रवाह सरस्वती है।

बिधि निषेधमय कलि मल हरनी ❁ करमकथा रबिनंदिनि बरनी
हरि हर कथा बिराजति बेनी[३] ❁ सुनत सकल मुद मंगल देनी

कलियुग के पापों को दूर करने वाली, करने और न करने योग्य कर्मों की कथा सूर्य-पुत्री यमुना है। इस तरह विष्णु और शिवजी की कथा त्रिवेणीरूप से शोभित है, जो सुनते ही सब आनन्द-मंगल की देने वाली है।

बटु बिस्वास अचल निज धर्मा ❁ तीरथराज समाज सुकरमा
सबहि सुलभ सब दिन सब देसा ❁ सेवत सादर समन कलेसा
अकथ अलौकिक तीरथराऊ ❁ देइ सद्य[४] फल प्रगट प्रभाऊ

उस संत-समाजरूपी प्रयाग में अपने धर्म में अचल विश्वास का होना ही

१. ब्राह्मण। २. सरस्वती। ३. त्रिवेणी। ४. तत्काल।

अक्षयवट है। तीर्थराज सुकर्मों का समाज (मेला) है। यह सब देशों में, सब दिन, सबको सहज ही प्राप्त हो सकता है। आदरपूर्वक सेवन करने से यह दुःखों का नाश करने वाला है। यह तीर्थराज अलौकिक और अकथनीय है। यह तत्काल फल देता है। इसका प्रभाव प्रत्यक्ष है।

दो०— सुनि समुझहिं जन मुदित मन मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत[1] तनु साधु समाज प्रयाग॥२॥

जो मनुष्य प्रसन्नचित्त से इस तीर्थराजरूपी संत-समाज में उपदेशों को सुनकर समझते हैं और प्रेम के साथ उसमें गोते लगाते हैं, वे इस शरीर से—इसी जन्म में—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, इन चारों फलों को पाते हैं॥२॥

मज्जन फल पेखिय ततकाला ❁ काक होहिं पिक बकउ मराला
सुनि आचरज करै जनि कोई ❁ सतसङ्गति महिमा नहिं गोई[2]

इस सन्त-समाजरूपी तीर्थराज में स्नान करने का फल तत्काल देखने में आता है कि कौए तो कोयल और बगले हंस होजाते हैं। यह सुनकर कोई आश्चर्य न करे; क्योंकि सत्संग की महिमा छिपी हुई नहीं है।

बालमीकि नारद घटजोनी[3] ❁ निज निज मुखनि कही निज होनी[4]
जलचर थलचर नभचर नाना ❁ जे जड़ चेतन जीव जहाना

बाल्मीकि, नारद और अगस्त्य मुनि ने अपनी-अपनी कथा (जीवन का वृत्तान्त) अपने ही मुँह से कही है। इस संसार में जल में रहनेवाले, भूमि पर रहनेवाले और आकाश-विहारी जो नाना प्रकार के जड़ और चेतन जीव हैं—

मति कीरति गति भूति भलाई ❁ जब जेहि जतन जहाँ जेहि पाई
सो जानब सतसङ्ग प्रभाऊ ❁ लोकहु वेद न आन[5] उपाऊ

उन्होंने जो बुद्धि, कीर्ति, गति, ऐश्वर्य और कल्याण आदि जब कभी, जिस किसी उपाय से, जहाँ-कहीं पाया है, वह सब सत्संग ही का प्रभाव जानो। इनके मिलने का लोक में और वेद में कोई दूसरा उपाय ही नहीं है।

बिनु सतसङ्ग बिबेकु न होई ❁ रामकृपा बिनु सुलभ न सोई
सतसङ्गति मुद मङ्गल मूला ❁ सोइ फल सिधि सब साधन फूला

---

१. जीते जी। २. छिपी। ३. अगस्त्य मुनि। ४. जीवन चरित्र। ५. अन्य, दूसरा।

सत्संग के बिना भले बुरे का ज्ञान नहीं होता और रामचन्द्रजी की कृपा के बिना वह सत्संग सहज में नहीं मिलता। सत्संगति आनन्द और मंगल की जड़ है। सिद्धियों का फल वही है और सब साधन तो उसके फूल हैं। [द्वितीय कारण-माला अलङ्कार]

सठ सुधरहिं सतसङ्गति पाई ❀ पारस परस कुधातु सोहाई
विधिबस सुजन कुसङ्गति परहीं ❀ फनिमनिसम निज गुन अनुसरहीं

दुष्ट भी सत्संगति पाकर सुधर जाते हैं, जैसे पारस के छू जाने से लोहा सुन्दर (सुवर्ण) हो जाता है। दैवयोग से यदि सज्जन कभी कुसंगति में पड़ जाते हैं, तो भी वे साँप की मणि के समान अपने गुणों ही का अनुसरण करते हैं। [अतद्गुण अलङ्कार]

बिधि हरि हर कबि कोबिद बानी ❀ कहत साधुमहिमा सकुचानी
सो मो[1] सन[2] कहि जात न कैसे ❀ साक बनिक मनि गुनगन जैसे

ब्रह्मा, विष्णु, महादेव, कवि, पण्डित और सरस्वती भी साधुओं की महिमा के वर्णन करने में सकुचाते हैं। वह मुझसे वैसे ही नहीं कहा जा रहा है, जैसे साग-भाजी बेचनेवाला मणियों के गुण नहीं कह सकता।

दो० बंदउँ सन्त समानचित हित अनहित नहिं कोउ।
अंजलिगत सुभ सुमन जिमि सम सुगंध कर दोउ॥३॥(१)

मैं सन्तों को प्रणाम करता हूँ, जिनका चित्त सबके लिये समान है अर्थात् जो समदर्शी हैं, और जिनका न कोई मित्र है, न कोई शत्रु; जैसे अंजलि में रखे हुये अच्छे फूल दोनों ही हाथों में बराबर सुगन्ध देते हैं॥३॥

सन्त सरलचित जगत हित जानि सुभाउ सनेहु।
बालबिनय सुनि करि कृपा रामचरन रति देहु॥३॥(२)

ऐसे सरलचित्त और जगत के हितकारी सन्तजन अपने स्वभाव और मेरे स्नेह को जानकर, मुझ बालक के विनय को सुनकर कृपा करके श्रीरामचन्द्रजी के चरणों में मुझे प्रीति दें।

बहुरि बंदि खलगन सतिभाये[3] ❀ जे बिनु काज दाहिनेहु बाये
पर हित हानि लाभ जिन्ह केरे ❀ उजरे हरष बिषाद बसेरे

१. मुझ। २. से। ३. सद्भाव से, प्रेम-सहित।

अब मैं सद्भाव से दुष्टों को प्रणाम करता हूँ, जो बिना कारण ही दाहिने के भी बायें (अनुकूल के भी प्रतिकूल) रहते हैं। अर्थात् भलाई करने वाले के साथ भी बुराई करते हैं। दूसरों के हित की हानि ही जिनका लाभ है और जिन को दूसरों के उजड़ने पर आनन्द और बसने पर शोक होता है। [प्रथम असंगति अलङ्कार]

हरि हर जस राकेस राहु से ❀ पर अकाज भट सहसबाहु से
जे परदोष लखहिं सहसाखी ❀ परहित घृत जिन्हके मन माखी

विष्णु और शिव के यशरूपी पूर्ण चन्द्र के लिये जो राहु के समान हैं, जो दूसरों का काम बिगाड़ने में सहस्रबाहु के समान योद्धा हैं, जो दूसरों के दोषों को इन्द्र के समान हज़ार नेत्रों से देखते हैं और दूसरों की भलाई रूपी घी के लिये जिनका मन मक्खी के समान है। [मालोपमा अलङ्कार]

तेज कृसानु रोष महिषेसा[1] ❀ अघ अवगुन धन धनी धनेसा
उदय केतुसम हित सबहीके ❀ कुंभकरन सम सोवत नीके

जो ताप में अग्नि और क्रोध में यमराज के समान हैं, पाप और दुर्गुणरूपी धन से जो कुबेर के समान धनी हैं, केतु (पुच्छल तारे) के उदय के समान जिन का उदय (बढ़ना) सब ही के लिये दुखदायी है, कुम्भकर्ण की तरह जिनका सोते रहना ही अच्छा है।

पर अकाजु लगि तनु परिहरहीं ❀ जिमि हिम उपल कृषी दलि[2] गरहीं[3]
बंदउँ खल जस सेष सरोषा ❀ सहसबदन बरनइ पर दोषा

जो दूसरों का अकाज करने के लिये अपने शरीर तक का नाश कर देते हैं, जैसे पाला और ओले खेती का नाश करके आप भी गल जाते हैं। मैं दुष्टों को प्रणाम करता हूँ, जो पराये दोषों को बड़े रोष के साथ शेष जी की तरह हजार मुख से वर्णन करते हैं। [उत्प्रेक्षा और पूर्णोपमा अलङ्कार]

पुनि प्रनवउँ पृथुराज समाना ❀ पर अघ सुनइ सहसदस काना
बहुरि सक्र सम बिनवउँ तेही ❀ संतत सुरानीक हित जेही
बचन बज्र जेहि सदा पिआरा ❀ सहसनयन पर दोष निहारा

फिर मैं उन दुष्टों को राजा पृथु (जिन्होंने भगवान का यश सुनने के लिये

१. यमराज। २. नाश करके। ३. गल जाते हैं।

दश हजार कान मांगे थे) के समान मानकर प्रणाम करता हूँ, जो दस हजार कानों से दूसरों की बुराइयां सुनते हैं। फिर मैं उनको इन्द्र के समान मानकर प्रणाम करता हूँ, जैसे इन्द्र को 'सुरानीक' (सुर=देव+अनीक=सेना) अर्थात् देवताओं की सेना प्रिय है, वैसे ही दुष्टों को सदा सुरा (मदिरा) नीक (अच्छी) लगती है। जिनको वचनरूपी वज्र सदा प्यारा लगता है और जो हजार आँखों से पराये दोषों को देखते हैं।

दो॰ उदासीन अरि मीत हित सुनत जरहिं खल रीति।
जानि पानि जुग जोरि जन[1] बिनती करइ सप्रीति ॥४॥

दुष्टों की यह रीति है कि वे उदासीन, शत्रु और मित्र के हित को सुनकर जलते रहते हैं। यह जानकर प्रीतिपूर्वक हाथ जोड़कर यह जन उनसे विनती करता है। [चतुर्थ तुल्ययोगिता अलंकार]

मैं अपनी दिसि कीन्ह निहोरा[2] ❀ तिन्ह निज ओर न लाउब भोरा[3]
बायस पलिअहिं अति अनुरागा ❀ होहिं निरामिष कबहुँ कि कागा

मैंने अपनी ओर से बहुत कुछ विनती की है, परन्तु वे अपनी ओर से कभी न चूकेंगे। कौए को बड़े प्रेम से पालिये, परन्तु क्या वे कभी मांस के त्यागी हो सकते हैं?

बंदउँ सन्त असज्जन चरना ❀ दुखप्रद उभय बीच कछु बरना
बिछुरत एक प्रान हरि लेहीं ❀ मिलत एक दुख दारुन देहीं

अब मैं सज्जन और दुर्जन दोनों के चरणों की वन्दना करता हूँ। दोनों दुःखदाई हैं; पर उनमें कुछ अन्तर कहा गया है। वह अन्तर यह है कि एक (सज्जन) बिछुड़ते हैं, तब प्राण हर लेते हैं, अर्थात् उनके वियोग में मरण का कष्ट होता है और एक (दुर्जन) मिलते हैं, तब दारुण दुःख देते हैं। [उन्मीलित अलंकार। उत्तरार्द्ध में व्याघात अलंकार।]

उपजहिं एक सङ्ग जग माहीं ❀ जलज जोंक जिमि गुन बिलगाहीं
सुधा सुरा सम साधु असाधू ❀ जनक एक जग जलधि अगाधू

दोनों (सज्जन और दुष्ट) एक साथ संसार में पैदा होते हैं; पर कमल और

१. सेवक, व्यक्ति। २. विनती। ३. चूक।

जोंक की तरह उनके गुण अलग-अलग होते हैं। साधु अमृत और असाधु मदिरा के समान हैं। इन दोनों का जनक—पैदा करने वाला—संसाररूपी अगाध समुद्र एक ही है।

भल अनभल निज निज करतूती ❀ लहत सुजस अपलोक बिभूती
सुधा सुधाकर सुरसरि साधू ❀ गरल अनल कलिमल सरि ब्याधू
गुन अवगुन जानत सब कोई ❀ जो जेहि भाव नीक तेहि सोई

भले और बुरे मनुष्य अपनी-अपनी करनी से जगत में यश और अपयश की सम्पत्ति पाते हैं। अमृत, चन्द्रमा, और गंगा जी और विष, अग्नि और कलियुग के पापों की नदी (कर्मनाशा) और हिंसा करने वाले व्याध के गुण और अवगुण को सब कोई जानते हैं। पर जिसको जो भाता है, वही उसे अच्छा लगता है।

दो०—भलो भलाइहि पै लहइ, लहइ[1] निचाइहि नीचु।
सुधा सराहिअ अमरता, गरल सराहिअ[2] मीचु ॥५॥

भला भलाई से शोभा पाता है और नीच नीचता से, जिस तरह अमृत की प्रशंसा अमर करने में और विष की सराहना मारने में होती है॥५॥
[पदार्थावृत्ति दीपक अलंकार]

खल अघ अगुन साधु गुन गाहा ❀ उभय अपार उदधि अवगाहा
तेहि तें कछु गुन दोष बखाने ❀ संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने

खलों के पाप और अवगुण और सज्जनों के गुणों की गाथाएँ (कथाएँ) दोनों अपार, अथाह समुद्र हैं; इसी से मैंने यहाँ उनके कुछ गुणों और दोषों का वर्णन किया है, क्योंकि बिना पहचाने उनका संग्रह या त्याग उचित नहीं।

भलेउ पोच[3] सब बिधि उपजाए ❀ गनि गुन दोष बेद बिलगाए[4]
कहहिं बेद इतिहास पुराना ❀ बिधि प्रपंचु गुन अवगुन साना[5]

ब्रह्मा ने भले-बुरे सभी पैदा किये हैं, वेदों ने उनके गुण-दोष गिनाकर अलग कर दिया है। वेद, इतिहास और पुराण बतलाते हैं कि ब्रह्मा का प्रपंच—यह संसार—गुण और अवगुण दोनों से सना हुआ है।

---

१. लहइ=लसई=शोभा पाता है। २. सराहना की जाती है। ३. बुरा। ४. अलग किया। ५. मिला हुआ।

दुख सुख पाप पुन्य दिन राती ❀ साधु असाधु सुजाति कुजाती
दानव देव ऊँच अरु नीचू ❀ अमिअ सजीवनु माहुरु मीचू

दुःख और सुख, पाप और पुण्य, दिन और रात, साधु और असाधु, सुजाति और कुजाति, राक्षस और देवता, ऊँच और नीच, अमृत और संजीवन, विष और मृत्यु,

माया ब्रह्म जीव जगदीसा ❀ लच्छि[1] अलच्छि रंक अवनीसा
कासी मग[2] सुरसरि क्रमनासा ❀ मरु मारव[3] महिदेव गवासा[4]
सरग नरक अनुराग विरागा ❀ निगम अगम गुन दोष विभागा

माया और ब्रह्म, जीवात्मा और परमात्मा, लक्ष्मी और दरिद्रता, रङ्क और राजा, काशी और मगह (मगध देश), गंगा और कर्मनाशा नदी, मारवाड़ और मालवा, ब्राह्मण और कसाई, स्वर्ग और नरक, प्रीति और वैराग्य, वेद-शास्त्र ने इन सबके गुण-दोषों का विभाग कर दिया है।

दो०- जड़ चेतन गुन दोषमय बिस्व कीन्ह करतार।
सन्त हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारिबिकार ॥६॥

ब्रह्मा ने इस जड़-चेतन जगत् को गुण और दोष से युक्त बनाया है। सन्त-रूपी हंस गुणरूपी दूध को ग्रहण करते हैं और दुर्गुण रूपी जल को छोड़ देते हैं।

अस बिबेक जब देइ बिधाता ❀ तब तजि दोष गुनहिं मनु राता
काल सुभाउ करम बरिआई ❀ भलेउ प्रकृति बस चुकइ भलाई

जब ब्रह्मा इस प्रकार का ज्ञान देते हैं, तब मन दोषों को छोड़कर गुणों में लग जाता है। समय, स्वभाव और कर्मों की प्रबलता से साधुजन भी कभी-कभी माया के फेर में पड़कर भलाई से चूक जाते हैं।

सो सुधारि हरिजन जिमि लेहीं ❀ दलि दुःख दोष बिमल जसु देहीं
खलउ करहिं भल पाइ सुसंगू ❀ मिटइ न मलिन सुभाउ अभंगू

ईश्वर-भक्त जैसे उस भूल को सुधार लेते हैं और दुःख-दोषों को मिटाकर निर्मल यश देते हैं, वैसे ही दुष्ट भी सुसंग पाकर भलाई करने लगते हैं; परन्तु

---

१. लक्ष्मी। २. मगध देश। ३. मालवा। ४. कसाई।

उनका न टूटने वाला नीच स्वभाव नहीं मिटता। [पूर्वरूप अलङ्कार]

लखि सुबेष जग बंचक जेऊ ❀ बेष प्रताप पूजिअहि तेऊ
उघरहिं[1] अंत न होइ निबाहू ❀ कालनेमि जिमि रावन राहू

जो संसार को ठगनेवाले हैं, उन्हें भी अच्छा वेष बनाये देखकर, वेष के प्रताप से लोग पूजते ही हैं। परन्तु अन्त में उनका कपट खुल जाने पर उनका निभाव नहीं होता; जैसे कालनेमि, रावण और राहु का हुआ।

कियेहु कुबेषु साधु सनमानू ❀ जिमि जग जामवंत हनुमानू
हानि कुसङ्ग सुसङ्गति लाहू ❀ लोकहु बेद बिदित सब काहू

कुवेष किये रहने पर भी साधुओं का सम्मान ही होता है, जैसे संसार में जाम्बवान और हनुमान का। कुसंग से हानि और सुसंग से लाभ होता है, यह बात संसार में और वेद में प्रकट है और इसे सब लोग जानते हैं।

गगन चढ़इ रज पवन प्रसङ्गा ❀ कीचहि मिलइ नीच जल सङ्गा
साधु असाधु सदन सुक सारी[2] ❀ सुमिरहिं रामु देहिं गनि गारी

वायु के संग से धूल आकाश में चढ़ जाती है, और वही नीच जल के साथ कुसंग में पड़कर कीचड़ में मिलती है। साधुजनों के घर में (पले हुए) तोता-मैना राम-नाम का स्मरण करते हैं और असाधुजनों के घर के तोता-मैना गिन-गिन कर गालियाँ देते हैं।

धूम कुसङ्गति कारिख होई ❀ लिखिअ पुरान मंजु मसि सोई
सोइ जल अनल अनिल सङ्घाता[3] ❀ होइ जलद जग जीवनुदाता

कुसंग में पड़कर धुआँ कालख के नाम से पुकारा जाता है और वही पुराण लिखने पर सुन्दर स्याही कहलाता है। वही धुआँ जल, अग्नि और वायु के संग से संसार को जीवन (जल और जिन्दगी) देनेवाला बादल होता है।

दो०

ग्रह भेषज जल पवन पट पाइ कुजोग सुजोग।
होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग लखहिं सुलषन लोग।७(१)

ग्रह, औषधि, जल, पवन और वस्त्र, ये सब भी कुसंग और सुसंग पाकर बुरे और भले हो जाते हैं, इसको चतुर जन देखते हैं।

१. खुल जाते हैं। २. मैना। ३. संयोग, मिलना।

सम प्रकास तम पाख दुहुँ नाम भेद विधि कीन्ह।
ससि पोषक सोषक समुझि जग जस अपजस दीन्ह ॥७(२)॥

महीने के दो पखवारों में उजाला और अन्धेरा समान ही होता है; पर ब्रह्मा ने इनके नाम में भेद (एक को कृष्ण अर्थात् काला और दूसरे को शुक्ल अर्थात् उजला) कर दिया है। एक को चन्द्रमा का बढ़ाने वाला और दूसरे को उसका घटाने वाला समझकर संसार के लोगों ने एक को सुयश और दूसरे को अपयश दे दिया है।

जड़ चेतन जग जीव जत[1] सकल राममय जानि।
बंदउँ सबके पद कमल सदा जोरि जुग पानि ॥७(३)॥

जगत् में जितने जड़ और चेतन प्राणी हैं, सबको राममय जानकर मैं उन सबके चरणकमलों को सदा दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ।

देव दनुज नर नाग खग प्रेत पितर गंधर्ब।
बंदउँ किंनर रजनिचर कृपा करहु अब सर्ब ॥७(४)॥

मैं देवता, दैत्य, मनुष्य, सर्प, पक्षी, प्रेत, पितर, गन्धर्व, किन्नर और निशाचर सबको प्रणाम करता हूँ। अब सब मुझ पर कृपा करो।

आकर चारि लाख चौरासी ❀ जाति जीव जल थल नभ बासी
सीय राममय सब जग जानी ❀ करौं प्रनाम जोरि जुग पानी

चौरासी लाख योनि वाले चार प्रकार के (स्वेदज, अंडज, उद्भिज, जरायुज) जीव जल, धरती और आकाश में रहते हैं। उनको अर्थात् सारे जगत् को सीताराममय (सीताराम का रूप) जानकर मैं दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ।

जानि कृपा कर किंकर मोहू ❀ सब मिलि करहु छाँड़ि छल छोहू
निज बुधिबल भरोस मोहि नाहीं ❀ तातें बिनय करौं सब पाहीं

मुझे अपना सेवक समझकर कृपा करके छल को छोड़कर सब मिलकर छोह कीजिये। मुझे अपनी बुद्धि का भरोसा नहीं है, इसलिये मैं सबके निकट विनती करता हूँ।

---

१. जितने।

करन चहौं रघुपति गुन गाहा ❁ लघु मति मोरि चरित अवगाहा
सूझ न एकौ अङ्ग उपाऊ ❁ मन मति रङ्क मनोरथ राऊ

मैं रामचन्द्रजी के गुणों की कथा कहना चाहता हूँ; परन्तु मेरी बुद्धि छोटी-सी है और रामचरित अथाह है। (इस काम के लिये) मुझे उपाय का एक भी अङ्ग नहीं सूझता। मेरा मन तो बुद्धि का दरिद्र है पर मनोरथ राजा-जैसा है। [दृष्टान्त अलंकार]

मति अति नीचि ऊँचि रुचि आछी ❁ चहिय अमिय जग जुरै न छाछी
छमिहहिं सज्जन मोरि ढिठाई ❁ सुनिहहिं बालबचन मन लाई

मेरी बुद्धि अति नीच है और इच्छा बड़ी ऊँची है, इच्छा तो अमृत के पाने की है, पर संसार में मट्ठा भी नहीं जुड़ता। सज्जन मेरी ढिठाई को क्षमा करेंगे और मुझ बालक के वचनों को मन लगाकर सुनेंगे।

जौं बालक कह तोतरि बाता ❁ सुनहिं मुदितमन पितु अरु माता
हँसिहहिं कूर कुटिल कुबिचारी ❁ जे पर दूषन भूषन धारी

जैसे बालक तोतली बातें कहता है, तो उसके माता-पिता उसे प्रसन्न-मन से सुनते हैं। जो लोग क्रूर हैं, खोटे हैं, बुरे विचार के हैं और जो दूसरों के दूषणों ही को अपना भूषण समझकर धारण करते हैं, वे हँसेंगे। [अनुमान प्रमाण अलंकार]

निज कवित्त केहि लाग न नीका ❁ सरस होउ अथवा अति फीका
जे परभनिति सुनत हरषाहीं ❁ ते बर पुरुष बहुत जग नाहीं

रसीली हो या बहुत फीकी, अपनी कविता किसे अच्छी नहीं लगती ? जो दूसरों की कविता को सुनकर प्रसन्न होते हैं, ऐसे श्रेष्ठ मनुष्य संसार में बहुत नहीं हैं।

जग बहु नर सर सरि सम भाई ❁ जे निज बाढ़ि बढ़हिं जल पाई
सज्जन सुकृत सिंधु सम कोई ❁ देखि पूर बिधु बाढ़इ जोई

भाई ! संसार में नदी और तालाब के समान मनुष्य बहुत हैं, जो जल पाकर अपनी बाढ़ से बढ़ जाते हैं, अर्थात् अपनी बढ़ती से प्रसन्न होने वाले बहुत हैं; लेकिन समुद्र के समान सज्जन बिरले ही हैं, जो चन्द्रमा की (पराई) बढ़ती देखकर उमड़ते हैं।

दो॰ भाग छोट अभिलाषु बड़ करउँ एक विस्वास।
पइहहिं सुख सुनि सुजन सब खल करिहहिं उपहास।८।

मेरा भाग्य छोटा और लालसा बहुत बड़ी है; परन्तु मुझे एक ही भरोसा है कि इसे सुनकर सब सज्जन सुख पायेंगे और दुर्जन हँसी उड़ायेंगे ॥८॥

खल परिहास होइ हित मोरा ❀ काक कहहिं कलकंठ कठोरा
हंसहिं बक दादुर चातकही ❀ हँसहिं मलिन खल बिमल बतकही

दुष्टों की हँसी मेरी भलाई ही होगी। कोयल की मीठी और सुरीली बोली को कौवे कठोर ही बतलाया करते हैं। जिस तरह बगले हंसों को और मेंढक पपीहों को हँसते हैं, उसी प्रकार मलिन स्वभाव के दुष्ट लोग अच्छी बातों की हँसी उड़ाते हैं।

कवित रसिक न राम पद नेहू ❀ तिन कहँ सुखद हास रस एहू
भाषाभनिति भोरि मति मोरी ❀ हँसिबे जोग हँसे नहिं खोरी

जो न तो काव्य-रस के रसिक हैं और न रामचन्द्रजी के चरणों में प्रीति रखते हैं, उन्हें भी यह कविता हास्य-रस (हँसने की वस्तु) होने से आनन्द ही देगी। एक तो यह भाषा की कविता है, दूसरे मेरी बुद्धि भी भोली है, सो हँसने के योग्य है। इससे हँसने में कोई दोष नहीं है।

प्रभुपद प्रीति न सामुझि नीकी ❀ तिन्हहिं कथा सुनि लागिहि फीकी
हरि हर पद रति मति न कुतरकी ❀ तिन्ह कहुँ मधुर कथा रघुबर की

जिन्हें न प्रभु रामचन्द्रजी के चरणों में प्रीति है और न अच्छी समझ ही है, उन्हें यह कथा सुनकर फीकी लगेगी। जिन्हें हरिहर के चरणों में प्रीति है और जिनकी बुद्धि कुतर्क करने वाली नहीं है, उन्हीं को श्रीरामचन्द्रजी की यह कथा मीठी लगेगी।

रामभगति भूषित जिय जानी ❀ सुनिहहिं सुजन सराहि सुबानी
कबि न होउँ नहिं बचन प्रबीनू ❀ सकल कला सब बिद्या हीनू

सज्जन लोग अपने जी में इस कथा को श्रीरामचन्द्रजी की भक्ति से भूषित जानकर और सुन्दर वाणी से इसकी सराहना करते हुये सुनेंगे। मैं न कवि हूँ, न बोलने में चतुर हूँ; मैं तो सब कलाओं और सारी विद्याओं से भी रहित हूँ।

आखर अरथ अलंकृति नाना ❀ छंद प्रबन्ध अनेक बिधाना
भावभेद रसभेद अपारा ❀ कवित दोष गुन बिबिध प्रकारा
कबित बिबेक एक नहिं मोरे ❀ सत्य कहौं लिखि कागद कोरे[1]

अक्षर, अर्थ, बहुत-से अलङ्कार, छन्द और उनकी रचनायें अनेक प्रकार की होती हैं। भावों और रसों के अपार भेद हैं तथा कविता में नाना प्रकार के गुण और दोष होते हैं। इनमें से काव्य का एक भी ज्ञान मुझे नहीं है। यह बात मैं कोरे कागज़ पर लिखकर (शपथ पूर्वक) सत्य कहता हूँ।

दो० भनिति[2] मोरि सब गुन रहित बिस्वबिदित गुन एक।
सो बिचारि सुनिहहिं सुमति जिन्हके बिमल बिबेक ॥९

मेरी रचना सारे गुणों से रहित है। बस, इसमें एक ही गुण है, जो सारे संसार में प्रकट है। यह विचारकर वे मनुष्य, जिनकी बुद्धि अच्छी है और जिनके हृदय में निर्मल ज्ञान है, इसे सुनेंगे ॥९॥

एहि महुँ रघुपति नाम उदारा ❀ अति पावन पुरान स्रुति सारा
मंगल भवन अमंगल हारी ❀ उमा सहित जेहि जपत पुरारी

इसमें रामचन्द्रजी का पवित्र और उदार नाम है, जो पुराणों और श्रुतियों का सार है, जो कल्याण का घर और अमंगल को दूर करने वाला है और जिसे पार्वती-सहित शिवजी जपा करते हैं।

भनिति बिचित्र सुकबि कृत जोऊ ❀ राम नाम बिनु सोह न सोऊ
बिधुबदनी सब भाँति सँवारी ❀ सोह न बसन बिना बर नारी

चाहे कैसे ही अच्छे कवि की अनोखी कविता हो, पर राम नाम के बिना उसकी शोभा नहीं होती, जैसे चन्द्रमा के समान मुख वाली सुन्दर स्त्री सब प्रकार के श्रृङ्गार करने पर भी वस्त्र के बिना शोभा नहीं पाती।

सब गुन रहित कुकबि कृत बानी ❀ राम नाम जस अंकित जानी
सादर कहहिं सुनहिं बुध ताही ❀ मधुकर सरिस सन्त गुनग्राही

किन्तु सब गुणों से रहित कुकवि की रची हुई कविता भी राम नाम के यश से अङ्कित हो तो पंडितजन उसको आदरपूर्वक कहते और सुनते हैं; क्योंकि

१. सादे। २. रचना, कविता।

सन्तजन भौंरे की भाँति गुण ही को ग्रहण करने वाले होते हैं।

जदपि कवित रस एकउ नाहीं ❀ राम प्रताप प्रगट एहि माहीं
सोइ भरोस मोरे मन आवा ❀ केहि न सुसंग बड़प्पनु पावा

यद्यपि मेरी रचना में कविता का एक भी रस नहीं है, तथापि रामचन्द्रजी का प्रताप इसमें प्रकट है। बस, मेरे मन में यही एक भरोसा है। किसने सत्संग से बड़प्पन नहीं पाया ?

धूमउ तजइ सहज करुआई[1] ❀ अगरु प्रसंग सुगन्ध बसाई[2]
भनिति भदेस[3] बस्तु भलि बरनी ❀ राम कथा जग मंगल करनी

धुआँ भी अगर के साथ से सुगन्धित होकर अपने स्वाभाविक कड़वेपन को छोड़ देता है। मेरी कविता यद्यपि भद्दी है, परन्तु इस में जगत् का मंगल करने वाली रामकथा रूपी अच्छी वस्तु का वर्णन किया गया है।

छंद—मंगल करनि कलि मल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की
गति कूर कविता सरित की ज्यों सरित पावन पाथ की
प्रभु सुजस संगति भनिति भलि होइ हि सुजन मन भावनी
भव अंग भूति मसान की सुमिरत सुहावनि पावनी

तुलसीदासजी कहते हैं कि रामचन्द्रजी की कथा कल्याण करने वाली और कलियुग के पापों को दूर करने वाली है। इस भद्दी कवितारूपी नदी की गति, पवित्र जल वाली गंगा की गति के समान है। प्रभु के सुयश के सत्संग से मेरी भद्दी कविता भी अच्छी और सज्जनों के मन को भाने वाली हो जायगी। श्मशान की अपवित्र राख महादेव जी के अङ्ग का संग पाने से सुहावनी लगती है और स्मरण करते ही पवित्र करने वाली होती है।

दो०—प्रिय लागिहि अति सबहि मम भनिति राम जस संग।
दारु[4] बिचारु कि करइ कोउ बंदिअ मलय[5] प्रसंग।१०।

श्रीरामचन्द्रजी के यश के साथ मेरी कविता भी सबको बहुत प्रिय लगेगी। क्या कोई चन्दन के लिये यह विचार करता है कि यह किस वृक्ष का काष्ठ है ?

१. कड़वापन। २. सुगंधित होकर। ३. भद्दी। ४. काष्ठ। ५. मलय पर्वत।

मलय पर्वत के प्रसंग से काष्ठमात्र वंदनीय हो जाता है।

स्याम सुरभि[1] पय बिसद अति गुनद करहिं सब पान।
गिरा ग्राम्य[2] सियराम जस गावहिं सुनहिं सुजान।१०।(२)।

श्यामा गाय काली होती है, पर दूध उज्ज्वल और अत्यन्त गुणकारी होता है, यही समझ कर सब लोग उसे पीते हैं। उसी तरह बोली गँवारू होने पर भी उसमें सीता राम जी का सुन्दर, उज्ज्वल यश होने से सज्जन उसे गाते और सुनते हैं।

मनि मानिक मुकुता छबि जैसी ❀ अहि गिरि गजसिर सोह न तैसी
नृप किरीट[3] तरुनी तनु पाई ❀ लहहिं सकल सोभा अधिकाई

मणि, माणिक्य और मोती की जैसी शोभा है वह साँप, पर्वत और हाथी के मस्तक पर वैसी शोभा नहीं पाते जैसे राजा के मुकुट और नवयौवना स्त्री के शरीर को पाकर वे अधिक शोभा को प्राप्त होते हैं।

तैसेहि सुकबि कबित बुध कहहीं ❀ उपजहिं अनत अनत छबि लहहीं
भगति हेतु बिधि भवन बिहाई ❀ सुमिरत सारद आवति धाई

इसी तरह सुकवि की कविता के सम्बन्ध में विद्वान् लोग कहते हैं कि वह पैदा तो और जगह होती है और शोभा और जगह पाती है। कोई कवि जब कविता करने बैठता है, तब उसकी भक्ति के कारण सरस्वती देवी कवि के स्मरण करते ही ब्रह्मलोक को छोड़कर तुरन्त उसके पास दौड़कर आजाती है।

राम चरित सर बिनु अन्हवाये ❀ सो स्रमु जाइ न कोटि उपाये
कबि कोबिद अस हृदयँ बिचारी ❀ गावहिं हरि जस कलि मल हारी

थकी हुई सरस्वती को रामचरितरूपी सरोवर में स्नान कराये बिना उनकी थकावट करोड़ों उपाय करने पर भी नहीं जाती। कवि और पंडित अपने हृदय में ऐसा विचार कर कलियुग के पापों को हरने वाले हरि के यश का गान करते हैं।

कीन्हे प्राकृत जन गुन गाना ❀ सिर धुनि गिरा लगति पछिताना
हृदय सिंधु मति सीप समाना ❀ स्वाती सारद कहहिं सुजाना
जौं बरखइ बर बारि बिचारू ❀ होहिं कबित मुकुता मनि चारू

---

१. गाय। २. गँवारू। ३. मुकुट।

संसारी मनुष्यों का गुणगान करने से सरस्वती सिर धुनकर पछताने लगती हैं। बुद्धिमान लोग कवि के हृदय को समुद्र, बुद्धि को सीप और सरस्वती को स्वाती नक्षत्र के समान कहते हैं। जो सरस्वती अच्छे विचाररूपी जल की वर्षा करें, तो कवितारूपी सुन्दर मुक्तामणि उससे उत्पन्न होते हैं।

दो० **जुगुति बेधि पुनि पोहिअहि राम चरित बर ताग।**
पहिरहिं सज्जन बिमल उर सोभा अति अनुराग॥११॥

उन कवितारूपी मोतियों को युक्ति से बेधकर फिर रामचरितरूपी सुन्दर तागे में पिरोकर उस माला को सज्जन लोग अपने शुद्ध हृदय में धारण करते हैं; अत्यन्त प्रेम ही उसकी शोभा है।

जे जनमे कलिकाल कराला ❀ करतब बायस बेष मराला
चलत कुपंथ बेद मग छाँड़े ❀ कपट कलेवर कलि मल भाँड़े[१]

इस कराल कलियुग में जो ऐसे जन्मे हैं कि जिनकी करनी कौए के समान और वेष हंस के समान है, जो वेद के मार्ग को छोड़कर कुमार्ग पर चलते हैं, जो कपट की मूर्ति और कलियुग के पापों के भाँड़े हैं।

बंचक भगत कहाइ राम के ❀ किंकर कंचन कोह[२] काम के
तिन्ह महँ प्रथम रेख जग मोरी ❀ धिग धरम ध्वज धंधक धोरी[३]

जो राम के भक्त कहाकर लोगों को ठगते हैं, वास्तव में वे कंचन (सोना), क्रोध और कामदेव के गुलाम हैं। जगत् के ऐसे लोगों में सब से पहले मेरी गिनती है। धर्म की झूठी पताका उड़ाने का धन्धा करने वाले मुझ सरीखे बैल को धिक्कार है। [विचित्र अलङ्कार]

जौं अपने अवगुन सब कहऊँ ❀ बाढ़इ कथा पार नहिं लहऊँ
ताते मैं अति अलप[४] बखाने ❀ थोरे महुँ जानिहहिं सयाने

यदि मैं अपने सब अवगुणों को कहने लगूँ, तो कथा बहुत बढ़ जायगी और मैं पार न पाऊँगा। इसीसे मैंने बहुत कम वर्णन किया है। बुद्धिमान लोग थोड़े ही में समझ लेंगे।

समुझि बिबिध बिधि बिनती मोरी ❀ कोउ न कथा सुनि देइहि खोरी[५]
एतेहु पर करिहहिं जे संका ❀ मोहिं ते अधिक ते जड़ मति रंका

---

१. पात्र. बरतन। २. क्रोध। ३. बैल। ४. संक्षेप। ५. रोष।

इस प्रकार मेरी अनेक प्रकार की विनती को समझ कर, कथा सुनकर कोई भी मुझे दोष न देगा। इतने पर भी जो शङ्का करेंगे, वे मुझसे भी अधिक मूर्ख और बुद्धि के दरिद्र हैं।

कबि न होउँ नहिं चतुर कहावउँ ❀ मति अनुरूप रामगुन गावउँ
कहँ रघुपति के चरित अपारा ❀ कहँ मति मोरि निरत[1] संसारा

न मैं कवि हूँ, न चतुर कहलाता हूँ। मैं अपनी बुद्धि के अनुसार रामचन्द्रजी के गुण गाता हूँ। कहाँ अपार रामचरित और कहाँ संसार के प्रपंच में फँसी हुई मेरी बुद्धि !

जेहि मारुत गिरि मेरु उड़ाहीं ❀ कहहु तूल केहि लेखे[2] माहीं
समुझत अमित राम प्रभुताई ❀ करत कथा मन अति कदराई

जिस पवन से सुमेरु जैसे पर्वत उड़ जाते हैं, कहो, उसके सामने रूई किस गिनती में है ? श्रीरामचन्द्रजी की प्रभुता को अपार समझकर कथा रचने में मेरा मन बहुत हिचकता है। [काव्यार्थापत्ति अलङ्कार]

दो० सारद सेष महेस बिधि आगम निगम पुरान।
नेति नेति कहि जासु गुन करहिं निरंतर गान ॥१२॥

सरस्वती, शेषजी, शिवजी, ब्रह्मा, शास्त्र, वेद और पुराण ये सब "नेति नेति" (इतना ही नहीं, इतना ही नहीं) कहकर जिनका गुण-गान सदा किया करते हैं।

सब जानत प्रभु प्रभुता सोई ❀ तदपि कहे बिनु रहा न कोई
तहाँ बेद अस कारन राखा ❀ भजन प्रभाउ भांति बहु भाखा[3]

यद्यपि सब जानते हैं कि प्रभु श्रीरामचन्द्रजी की प्रभुता (महिमा) वैसी ही है, तो भी कोई कहे बिना नहीं रहा। इसमें वेद ने ऐसा कारण बताया कि भजन का प्रभाव अनेक प्रकार का कहा गया है। अर्थात् भक्त को अपनी-अपनी श्रद्धा के अनुसार भजन करना चाहिये।

एक अनीह अरूप अनामा ❀ अज सच्चिदानंद परधामा
ब्यापक बिस्वरूप भगवाना ❀ तेहि धरि देह चरित कृत[4] नाना

१. फँसी हुई। २. गिनती। ३. कहा। ४. करता है।

जो परमेश्वर एक है और इच्छा से रहित है, जिसका न कोई रूप है, न नाम है, जिसका जन्म नहीं होता, जो सच्चिदानन्द और परमधाम है, जो समस्त संसार में व्यापक और विश्वरूप है, वही परमेश्वर शरीर धारण करके तरह-तरह के चरित्र दिखाया करता है।

सो केवल भगतन हित लागी ❀ परम कृपाल प्रनत अनुरागी
जेहि जन पर ममता अति छोहू ❀ जेहि करुना करि कीन्ह न कोहू[1]

वह लीला केवल अपने भक्तों ही के लिये है। क्योंकि भगवान् बड़े कृपालु और शरणागत पर स्नेह करने वाले हैं। भक्तजनों पर उनकी ममता और अत्यन्त कृपा रहती है और एक बार जिस पर कृपा की फिर कभी उन पर उन्होंने क्रोध नहीं किया।

गई[2] बहोर[3] गरीब नेवाजू[4] ❀ सरल सबल साहिब रघुराजू
बुध बरनहिं हरि जस अस जानी ❀ करहिं पुनीत सुफल निज बानी

वही प्रभु रघुनाथजी बिगड़ी वस्तु को फिर प्राप्त कराने वाले, गरीब-नेवाज (दीनबन्धु), सरल-स्वभाव, सर्वशक्तिमान् और सबके स्वामी हैं। यही समझकर पंडित लोग उन हरि का वर्णन करते और अपनी वाणी को पवित्र और सफल बनाते हैं।

तेहि बल मैं रघुपति गुन गाथा ❀ कहिहउँ नाइ राम पद माथा
मुनिन्ह प्रथम हरि कीरति गाई ❀ तेहि मग चलत सुगम मोहिं भाई

उसी बल से श्रीरामचन्द्रजी के चरणों में सिर नवाकर मैं श्रीरघुनाथजी के गुणों की कथा कहूंगा। हे भाई! मुनियों (वाल्मीकि, व्यास आदि) ने पहले हरि की कीर्ति गाई है। उसी मार्ग पर चलना मेरे लिये सुगम होगा।

दो० **अति अपार जे सरित बर जौं नृप सेतु कराहिं।**
चढ़ि पिपीलिकउ[5] परम लघु बिनुस्रम पारहिं जाहिं १३

जो बहुत बड़ी और श्रेष्ठ नदियाँ हैं उन पर राजा यदि पुल बँधवा देता है, तो उस (पुल) पर चढ़कर बहुत छोटी चींटी भी बिना परिश्रम के पार चली जाती है।

---

१. क्रोध। २. गई हुई। ३. फेर लाना। ४. कृपा करने वाले। ५. चींटी।

एहि प्रकार बल मनहिं दिखाई ❀ करिहउँ रघुपति कथा सोहाई
ब्यास आदि कवि पुंगव[1] नाना ❀ जिन्ह सादर हरि सुजस बखाना

इस प्रकार का बल मन को दिखाकर मैं रघुपति की सुहावनी कथा की रचना करूँगा। व्यास आदि जो अनेक श्रेष्ठ कवि हो गये हैं और जिन्होंने बड़े आदर से हरि का सुयश वर्णन किया है

चरन कमल बंदउँ तिन्ह केरे ❀ पुरवहु[2] सकल मनोरथ मेरे
कलि के कबिन्ह करउँ परनामा ❀ जिन्ह बरने रघुपति गुन ग्रामा

मैं उन सब कवियों के चरणकमलों को प्रणाम करता हूं। वे सब मेरे मनोरथ को पूरा करें। मैं कलियुग के भी उन कवियों को प्रणाम करता हूं, जिन्होंने रामचन्द्रजी के गुण-समूहों का वर्णन किया है।

जे प्राकृत[3] कवि परम सयाने ❀ भाषा जिन्ह हरि चरित बखाने
भये जे अहहिं[4] जे होइहहिं आगे ❀ प्रनवउँ सबहिं कपट सब त्यागे

जो अन्य बड़े बुद्धिमान संसारी कवि हैं, जिन्होंने भाषा में हरि-चरित वर्णन किये हैं, ऐसे कवि जो पहले हो चुके, जो वर्तमान हैं और जो आगे होंगे, उन सबको मैं सारा कपट छोड़कर प्रणाम करता हूँ।

होहु प्रसन्न देहु बरदानू ❀ साधु समाज भनिति सनमानू
जो प्रबंध बुध नहिं आदरहीं ❀ सो स्रम बादि[5] बाल कबि करहीं

सब कवि मुझ पर प्रसन्न होकर वरदान दीजिये कि साधु-समाज में मेरी कविता का आदर हो; क्योंकि जिस काव्य का आदर पण्डित लोग नहीं करते, उसके रचने का व्यर्थ परिश्रम बाल (मूर्ख) कवि ही करते हैं।

कीरति भनिति भूति[6] भलि सोई ❀ सुरसरि सम सब कहँ हित होई
राम सुकीरति भनिति भदेसा ❀ असमंजस अस मोहिं अँदेसा
तुम्हरी कृपा सुलभ सोउ मोरे ❀ सिअनि सोहावनि टाट पटोरे[7]

कीर्ति, कविता और सम्पत्ति वही उत्तम है, जो गङ्गाजी के समान सब का हित करने वाली हो। रामचन्द्रजी की कीर्ति तो बड़ी सुन्दर है, पर मेरी कविता भद्दी है। मुझे इस बात की बड़ी चिन्ता और अंदेशा है। परन्तु हे सुकवियो!

१. श्रेष्ठ। २. पूरा करो। ३. संसारी। ४. हैं। ५. व्यर्थ। ६. सम्पत्ति, ऐश्वर्य। ७. रेशम।

आपकी कृपा से मुझे वह (अच्छी कविता) भी सुलभ हो जायगी। रेशम की सिलाई टाट पर भी सुहावनी ही लगेगी। [दृष्टान्त अलङ्कार]

दो०—सरल कबित कीरति बिमल सोइ आदरहिं सुजान।
सहज बयर बिसराइ रिपु जो सुनि करहिं बखान।१४।

उसी सरल कविता और निर्मल कीर्ति का विद्वान् लोग आदर करते हैं, जिसे सुनकर शत्रु भी स्वाभाविक बैर को छोड़कर प्रशंसा करने लगें।

सो न होइ बिनु बिमल मति मोहिं मतिबल अतिथोर।
करहु कृपा हरि जस कहउँ पुनि पुनि करउँ निहोर।१४।(२)।

ऐसी कविता बिना शुद्ध बुद्धि के नहीं हो सकती और मुझे बुद्धि का बल बहुत ही थोड़ा है। इसलिये मैं बार-बार बिनती करता हूँ कि हे कवियो ! आप लोग मुझ पर कृपा करें, जिससे मैं हरि का यश वर्णन कर सकूँ।

कबि कोबिद रघुबर चरित मानस मंजु मराल[1]।
बालबिनय सुनि सुरुचि लखि मो पर होहु कृपाल।१४।(३)।

रामचरित-रूपी मान-सरोवर के सुन्दर हंस हे कवि और पंडितगण आप मुझ बालक की विनय सुनकर और राम-कथा कहने की सुरुचि देखकर मुझ पर कृपा करें।

सो०—बंदउँ मुनि पद कंजु[2] रामायन जेहिं निरमयउ।
सखर सुकोमल मंजु दोष रहित दूषन सहित।१४।(४)।

मैं उन बाल्मीकि मुनि के चरण-कमलों की वन्दना करता हूँ, जिन्होंने रामायण की रचना की है। जो खर (राक्षस) सहित होने पर भी कोमल और सुन्दर हैं और दूषण (राक्षस) सहित होने पर भी निर्दोष हैं। [विरोधाभास अलङ्कार]

बंदउँ चारिउ बेद भव बारिधि बोहित[3] सरिस।
जिन्हहिं न सपनेहुँ खेद बरनत रघुबर बिसद जसु।१४।(५)।

चारों वेदों की वन्दना करता हूँ, जो संसार-समुद्र के पार होने के लिये

१. हंस। २. कमल। ३. जहाज।

जहाज के समान हैं और जिन्हें रामचन्द्रजी का निर्मल यश वर्णन करने में स्वप्न में भी खेद (थकान) नहीं होता।

बंदउँ बिधि पद रेनु[1] भवसागर जेहि कीन्ह जहँ।
संत सुधा ससि धेनु प्रगटे खल बिष बारुनी ॥१४(६)॥

मैं ब्रह्मा की धूलि की वन्दना करता हूँ जिन्होंने यह भवसागर बनाया है। जिसमें एक ओर अमृत, चन्द्रमा, और कामधेनुरूपी सज्जन तथा दूसरी ओर विष और मदिरारूपी दुष्टजन उत्पन्न हुये हैं।

दो० बिबुध बिप्र बुध ग्रह चरन बंदि कहउँ कर जोरि।
होइ प्रसन्न पुरवहु सकल मंजु मनोरथ मोरि ।१४(७)।

देवता, ब्राह्मण, पण्डित, ग्रह, इन सबके चरणों की वन्दना करके मैं हाथ जोड़कर कहता हूँ कि मुझ पर प्रसन्न होकर सब मेरे सुन्दर मनोरथ को पूरा करें।

पुनि बंदउँ सारद सुरसरिता ❀ जुगल पुनीत मनोहर चरिता
मज्जन पान पाप हर एका ❀ कहत सुनत एक हर अबिबेका

फिर मैं सरस्वती और गंगाजी की वन्दना करता हूँ। दोनों पवित्र और मनोहर चरित्रवाली हैं। एक स्नान करने और जल पीने से पापों को हरती है और दूसरी गुण और यश के कहने-सुनने से अज्ञान को हर लेती है।

गुर पितु मातु महेस भवानी ❀ प्रनवउँ दीनबंधु दिन दानी
सेवक स्वामि सखा सिय पी के ❀ हित निरुपधि सब बिधि तुलसी के

मेरे गुरु, माता और पिता शिव और भवानी हैं। वे दीनबन्धु और नित्य दान देने वाले हैं। मैं उनको प्रणाम करता हूँ। वे सीतापति श्रीरामचन्द्रजी के सेवक, स्वामी और मुझ तुलसीदास के तो सब प्रकार कपट-रहित सच्चे हितकारी हैं।

कलि बिलोकि जग हित हर गिरिजा ❀ सावर मंत्र जाल जिन्ह सिरिजा
अनमिल आखर अरथ न जापू ❀ प्रगट प्रभाउ महेस प्रतापू

जिन शिव-पार्वती ने कलियुग को देखकर, जगत् के हित के लिये, सावर-

१. धूलि, रज।

मन्त्र समूह (सिद्ध साबर-तन्त्र) की रचना की है, जिन के अक्षर बेमेल हैं, जिनका न कोई ठीक अर्थ है, न जप ही होता है, तथापि शिव के प्रताप से उनका प्रभाव प्रत्यक्ष है।

सो उमेस मोहिं पर अनुकूला ❀ करउँ कथा मुद मंगल मूला
सुमिरि सिवा सिव पाइ पसाऊ ❀ बरनउँ रामचरित चित चाऊ

वे उमापति मुझ पर प्रसन्न हैं। अतएव मैं आनन्द और मंगल की जड़ राम-कथा रचता हूँ। मैं शिव और पार्वती दोनों को स्मरण करके और उनका प्रसाद पाकर बड़े चाव से रामचरित का वर्णन करता हूँ।

भनिति मोरि सिव कृपा बिभाती[1] ❀ ससि समाज मिलि मनहुँ सुराती
जे एहि कथहिं सनेह समेता ❀ कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता
होइहहिं राम चरन अनुरागी ❀ कलि मल रहित सुमंगल भागी

मेरी कविता शिवजी की कृपा से ऐसी सुहावनी लगेगी, जैसे तारागण-सहित चन्द्रमा के साथ रात्रि की शोभा होती है। जो इस कथा को प्रेम से कहेंगे, सुनेंगे और मन लगा कर समझेंगे, वे रामचन्द्रजी के चरणों के भक्त हो जायँगे और कलियुग के दोषों से मुक्त हो कर कल्याण के भागी होंगे।

दो०—सपनेहुँ साँचेहु मोहि पर जौं हर गौरि पसाउ।
तो फुर[2] होउ जो कहेउँ सब भाषाभनिति प्रभाउ।१५।

यदि मुझ पर शिवजी और पार्वती जी की प्रसन्नता स्वप्न में भी सचमुच हुई हो, तो मैंने अपनी भाषा की कविता का जो प्रभाव बताया है, वह सब सच हो।

बंदउँ अवधपुरी अति पावनि ❀ सरजू सरि कलि कलुष नसावनि
प्रनवउँ पुर नर नारि बहोरी ❀ ममता जिन्ह पर प्रभुहि न थोरी

मैं अति पवित्र अयोध्यापुरी और कलियुग के पापों का नाश करने वाली सरयू नदी की वन्दना करता हूँ। फिर उस पुरी के स्त्री-पुरुषों को प्रणाम करता हूँ, जिन पर प्रभु रामचन्द्रजी की कृपा थोड़ी नहीं है।

सिय निंदक अघ ओघ[3] नसाये ❀ लोक बिसोक बनाइ बसाये
बंदउँ कौसल्या दिसि प्राची[4] ❀ कीरति जासु सकल जग माँची

---

१. शोभा पाती है। २. सत्य। ३. समूह। ४. पूर्व दिशा।

उन्होंने सीताजी की निन्दा करनेवालों (धोबी आदि) के पापों के समूह को नाश कर, उनको शोक-रहित करके बैकुण्ठ- लोक में बसा दिया। मैं पूर्व-दिशा के समान कौशल्या माता की वन्दना करता हूँ, जिनकी कीर्ति समस्त संसार में फैल रही है।

प्रगटेउ जहँ रघुपति ससि चारू[1] ❁ बिस्व सुखद खल कमल तुषारू[2]
दसरथ राउ सहित सब रानी ❁ सुकृत सुमंगल मूरति मानी

यहाँ कौशल्यारूपिणी पूर्व दिशा में सुन्दर चन्द्रमा के समान रामचन्द्रजी का उदय हुआ, जो सारे संसार को सुख देने वाले और दुष्टरूपी कमलों के लिये पाले के समान हैं। सब रानियों-सहित राजा दशरथ को सारे पुण्यों और कल्याण की मूर्ति मान कर

करउँ प्रनाम करम मन बानी ❁ करहु कृपा सुत सेवक जानी
जिन्हहिं बिरंचि बड़ भयेउ बिधाता ❁ महिमा अवधि राम पितु माता

मैं मन, वचन और कर्म से प्रणाम करता हूँ। मुझे अपने पुत्र का सेवक जानकर मुझ पर कृपा करो। जिन को रच कर ब्रह्मा ने भी बड़ाई पाई। राम के माता और पिता होने के कारण वे महिमा की सीमा हैं।

सो॰ बंदउँ अवध भुआल सत्य प्रेम जेहि राम पद।
बिछुरत दीनदयाल प्रिय तनु तृन इव परिहरेउ ॥१६॥

मैं अवध के राजा दशरथ की वन्दना करता हूँ, जिनको रामचन्द्रजी के चरणों में सच्चा प्रेम था, जिन्होंने दीनदयालु (रामचन्द्रजी) के बिछड़ते ही अपने प्रिय शरीर को तिनके के समान त्याग दिया।

प्रनवउँ परिजन सहित बिदेहू[3] ❁ जाहि राम पद गूढ़ सनेहू
जोग भोग महुँ राखेउ गोई[4] ❁ राम बिलोकत प्रगटेउ सोई

परिवार-सहित राजा जनक को मैं प्रणाम करता हूँ, जिनको रामचन्द्रजी के चरणों में गूढ़ स्नेह था, जिन्हें उन्होंने योग और भोग में छिपा रक्खा था; परन्तु रामचन्द्रजी को देखते ही वह प्रकट हो गया।

प्रनवउँ प्रथम भरत के चरना ❁ जासु नेम ब्रत जाइ न बरना
राम चरन पंकज मन जासू ❁ लुबुध मधुप इव तजइ न पासू

१. सुन्दर। २. पाला। ३. राजा जनक। ४. गुप्त, छिपा हुआ।

भाइयों में सबसे पहले मैं भरतजी के चरणों को प्रणाम करता हूँ, जिनका नियम और व्रत वर्णन नहीं किया जा सकता, और जिनका मन रामचन्द्रजी के चरणरूपी कमलों में भौंरे के समान लुभाया हुआ पास से नहीं हटता।

बंदउँ लछिमन पद जलजाता ❀ सीतल सुभग भगत सुखदाता
रघुपति कीरति बिमल पताका ❀ दंड समान भयेउ जस जाका[1]

मैं लक्ष्मणजी के चरणकमलों की वन्दना करता हूँ, जो परम शीतल, सुन्दर और भक्तों को सुख देने वाले हैं और रामचन्द्रजी की कीर्तिरूपी विमल पताका में जिनका यश पताका को फहराने वाली लकड़ी या दंड के समान हुआ।

सेष सहस्रसीस जग कारन ❀ जो अवतरेउ भूमि भय टारन
सदा सो सानुकूल रह मोपर ❀ कृपासिंधु सौमित्रि गुनाकर

जो जगत् के कारण और हज़ार सिर वाले शेषजी हैं और जिन्होंने पृथ्वी का भय दूर करने के लिये अवतार लिया, वे कृपा-सागर, गुणों की खान, सुमित्रा के पुत्र लक्ष्मणजी सदा मुझ पर प्रसन्न रहें।

रिपुसूदन पदकमल नमामी ❀ सूर सुशील भरत अनुगामी
महाबीर बिनवउँ हनुमाना ❀ राम जासु जस आपु बखाना

मैं शत्रुघ्नजी के चरण-कमलों को प्रणाम करता हूँ, जो शूर, सुशील और भरत के पीछे चलने वाले हैं। मैं महावीर हनुमानजी की विनती करता हूं, जिन के यश का वर्णन रामचन्द्रजी ने श्रीमुख से स्वयं किया है।

सो० **प्रनवउं पवनकुमार खल बन पावक[2] ग्यानघन।**
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर ॥१७॥

मैं पवनकुमार हनुमानजी को प्रणाम करता हूँ, जो दुष्टरूपी वन के भस्म करने के लिये अग्नि रूप और ज्ञान के मेघरूप हैं; और जिनके हृदयरूपी भवन में धनुष-बाण धारण किये हुये श्रीरामचन्द्रजी निवास करते हैं।

कपिपति रीछ[3] निसाचर राजा ❀ अंगदादि जे कीस समाजा
बंदउँ सबके चरन सोहाए ❀ अधम सरीर राम जिन्ह पाए

बानरों के राजा सुग्रीव, रीछों के राजा जाम्बवान, राक्षसों के राजा विभीषण

---

१. जिसका। २. अग्नि। ३. भालू।

और अंगद आदि जो बानरों का समाज है उन सब के सुन्दर चरणों की मैं वन्दना करता हूँ, जिन्होंने अधम (पशु और राक्षस के) शरीर (योनी) में भी रामचन्द्रजी को पा लिया।

रघुपति चरन उपासक जेते ❁ खग मृग सुर नर असुर समेते
बंदउँ पद सरोज सब केरे ❁ जे बिनु काम राम के चेरे[1]

पशु, पक्षी, देवता, मनुष्य और असुर समेत जितने रामचन्द्रजी के चरणों के उपासक हैं, मैं उन सबके चरण-कमलों की वन्दना करता हूं, जो बिना किसी कामना के रामचन्द्रजी के सेवक हैं।

सुक सनकादि भगत मुनि नारद ❁ जे मुनिबर बिग्यान बिसारद
प्रनवउँ सबहिं धरनि धरि सीसा ❁ करहु कृपा जन जानि मुनीसा

शुकदेव, सनक, सनन्दन, सनत्कुमार आदि भक्त और नारद मुनि तथा जितने बड़े ज्ञानी मुनिवर हैं, उन सबको मैं धरती पर मस्तक रखकर प्रणाम करता हूं। हे मुनीश्वरो! मुझे अपना दास जानकर कृपा कीजिये।

जनकसुता जग जननि जानकी ❁ अतिसय प्रिय करुनानिधान की
ताके जुग पद कमल मनावउँ ❁ जासु कृपा निरमल मति पावउँ

राजा जनक की कन्या, जगत् की माता और करुणा-निधान रामचन्द्रजी की अत्यन्त प्यारी श्रीजानकीजी के दोनों चरणों को मैं मनाता (प्रणाम करता) हूं, जिनकी कृपा से मैं निर्मल बुद्धि पाऊँगा।

पुनि मन बचन कर्म रघुनायक ❁ चरन कमल बंदौं सब लायक
राजिव नयन धरे धनु सायक ❁ भगत बिपति भंजन सुखदायक

फिर मैं मन, वाणी और कर्म से सब लायक श्रीरामचन्द्रजी के चरण-कमलों को प्रणाम करता हूँ। उनके नयन कमल-ऐसे हैं। धनुष-बाण धारण किये हुये वे भक्तों की विपत्ति दूर कर उनको सुख देने वाले हैं।

दो॰ गिरा[2] अरथ जल बीचि[3] सम कहिअत भिन्न न भिन्न।
बंदउँ सीता राम पद जिन्हहिं परम प्रिय खिन्न[4]॥१८॥

जो वाणी और उसके अर्थ तथा जल और उसकी लहर के समान कहने

१. सेवक। २. वाणी। ३. लहर। ४. दुःखी, दुर्बल।

में अलग-अलग हैं, पर वास्तव में एक ही हैं। वैसे ही सीताराम हैं। मैं उनके चरणों को प्रणाम करता हूँ, उनको दुर्बल ही अत्यन्त प्यारे हैं।

बंदउँ राम नाम रघुबर को ❀ हेतु कृसानु[1] भानु हिमकर[2] को
बिधि हरि हर मय बेद प्रान सो ❀ अगुन अनूपम गुन निधान सो

मैं रामचन्द्रजी के नाम 'राम' की वन्दना करता हूँ, जो अग्नि, सूर्य और चन्द्रमा के हेतु (कारण) हैं। जो कृशानु (र) भानु (आ) और हिमकर (म) का बीज है, वह 'राम' नाम ब्रह्मा, विष्णु और शिव रूप है। अर्थात् इन तीनों में एक रूप होकर रम रहा है। वह वेदों का प्राण है और निर्गुण, उपमा-रहित और गुणों का भण्डार है। [यथासंख्य अलंकार]

महामंत्र सोइ जपत महेसू ❀ कासी मुकुति हेतु उपदेसू
महिमा जासु जान गनराऊ ❀ प्रथम पूजिअत नाम प्रभाऊ

वही रामनामरूपी महामन्त्र जिसको महादेवजी जपा करते हैं और जिसका उपदेश काशी में मुक्ति का कारण है, तथा जिसकी महिमा को गणेशजी जानते हैं। राम नाम ही के प्रभाव से वे सबसे पहले पूजे जाते हैं।

जान आदि कबि नाम प्रतापू ❀ भयेउ सुद्ध करि उलटा जापू
सहसनाम सम सुनि सिव बानी ❀ जपि जेईं पिय संग भवानी

आदिकवि वाल्मीकि मुनि राम नाम के प्रताप को जानते हैं। जो उलटा अर्थात् "मरा, मरा" जप करके ही पवित्र हो गये। जब पार्वतीजी ने शिवजी के मुँह से सुना कि रामनाम का एक बार का उच्चारण सहस्रनाम के बराबर है, तब इस नाम को जपकर पति के साथ उन्होंने भोजन किया।

हरषे हेतु[3] हेरि हर ही को ❀ किय भूषन तिय भूषन ती[4] को
नाम प्रभाउ जान सिव नीको ❀ कालकूट फल दीन्ह अमी को

पार्वतीजी के हृदय की ऐसी प्रीति देखकर शिवजी हर्षित हो गये और पार्वतीजी को, जो स्त्रियों में भूषण हैं, अपना भूषण (अर्धाङ्ग-निवासिनी) बना लिया। शिवजी नाम के प्रभाव को अच्छी तरह जानते हैं। नाम के प्रभाव से ही उनको कालकूट विष ने अमृत का फल दिया।

---

१. अग्नि। २. चन्द्रमा। ३. प्रीति। ४. स्त्री।

दो॰ बरषा रितु रघुपति भगति तुलसी सालि[1] सुदास।
राम नाम बर बरन[2] युग सावन भादव मास ॥१९॥

रामचन्द्रजी की भक्ति वर्षा-ऋतु है। तुलसीदास कहते हैं कि सुन्दर भक्त-जन धान हैं, राम नाम के दोनों सुन्दर अक्षर सावन और भादों के महीने हैं। [परंपरित रूपक अलंकार]

आखर मधुर मनोहर दोऊ ❀ बरन बिलोचन जन जिय जोऊ
सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू ❀ लोक लाहु परलोक निबाहू

दोनों अक्षर मधुर और मनोहर हैं। ये वर्णमाला के नेत्र भक्तों के प्राण हैं। ये स्मरण करने में सबके लिये सुलभ और सुख देने वाले हैं। इन से इस लोक में लाभ और परलोक में निर्वाह होता है, अर्थात् मुक्ति मिलती है।

कहत सुनत सुमिरत सुठि[3] नीके ❀ राम लखन सम प्रिय तुलसी के
बरनत बरन प्रीति बिलगाती ❀ ब्रह्म जीव सम सहज सँघाती[4]

दोनों अक्षर, कहने, सुनने और स्मरण करने में बहुत ही सुहावने लगते हैं। तुलसीदास को तो ये दोनों अक्षर राम-लक्ष्मण के समान प्यारे हैं। र और म का अलग अलग वर्णन करने में प्रीति में अन्तर आता है। वास्तव में ये दोनों अक्षर ब्रह्म और जीव के समान स्वाभाविक साथी हैं।

नर नारायन सरिस सुभ्राता ❀ जग पालक बिसेषि जन त्राता
भगति सुतिय[5] कल करन बिभूषन ❀ जग हित हेतु बिमल बिधु पूषन

ये दोनों अक्षर नर-नारायण के समान सुन्दर भाई हैं। ये जगत् के पालक और विशेषकर भक्तों के रखवाले हैं। ये दोनों अक्षर भक्ति-रूपिणी सुन्दर स्त्री के कानों के सुन्दर कर्णफूल हैं। संसार के हित के लिये ये दोनों अक्षर निर्मल चन्द्रमा और सूर्य हैं।

स्वाद तोष[6] सम सुगति सुधा के ❀ कमठ सेष सम धर बसुधा के
जन मन मंजु कंज मधुकर से ❀ जीह जसोमति हरि हलधर से

ये मुक्तिरूपी अमृत के स्वाद और तृप्ति के समान हैं। पृथ्वी के धारण करने के लिये ये कच्छप और शेषजी के समान हैं। भक्तों के मनरूपी सुन्दर

१. धान। २. वर्ण, अक्षर। ३. सुन्दर। ४. संगी, साथी। ५. सुन्दर स्त्री। ६. तृप्ति।

कमल के लिये ये भौंरे के समान हैं, और जिह्वारूपी यशोदा के लिये ये श्रीकृष्ण और बलराम जी के समान हैं। [मालोपमा अलंकार]

दो० **एक छत्रु एकु मुकुटमनि सब बरननि पर जोउ।**
तुलसी रघुबर नाम के बरन बिराजत दोउ ॥२०॥

तुलसीदास जी कहते हैं—श्री रामचन्द्र जी के नाम के दोनों अक्षर में से एक (रेफ— ँ) छत्र के समान और दूसरा (मकार —) मुकुट की मणि के समान सब अक्षरों के ऊपर बिराजता है। [काव्यलिंग अलंकार]

समुझत सरिस नाम अरु नामी ❀ प्रीति परसपर प्रभु अनुगामी
नाम रूप दुइ ईस उपाधी ❀ अकथ अनादि सुसामुझि साधी[1]

समझने में नाम और नामी (रामनाम और रामचन्द्र) दोनों समान हैं। दोनों में प्रीति है और दोनों स्वामी और सेवक हैं। नाम और रूप ये दोनों ईश्वर की उपाधियाँ हैं। ये दोनों अकथनीय और अनादि हैं और सुन्दर बुद्धि ही से जाने जाते हैं।

को बड़ छोट कहत अपराधू ❀ सुनि गुन भेदु समुझिहहिं साधू
देखिअहिं रूप नाम आधीना ❀ रूप ग्यान नहिं नाम बिहीना

इन में कौन बड़ा है, कौन छोटा है ? यह कहना अपराध है। इनके गुणों के भेद को सुनकर साधु पुरुष स्वयं ही समझ लेंगे। रूप नाम के अधीन देखा जाता है। नाम के बिना रूप का ज्ञान हो नहीं सकता।

रूप बिसेष नाम बिनु जाने ❀ करतल[2] गत न परहिं पहिचाने
सुमिरिअ नामु रूप बिनु देखे ❀ आवत हृदय सनेह बिसेखे

रूप कैसा ही हो, बिना उसका नाम जाने हाथ पर रक्खा हुआ भी वह पहचाना नहीं जा सकता। रूप के बिना देखे भी नाम को स्मरण करने से वह रूप विशेष प्रेम के साथ हृदय में आजाता है।

नाम रूप गति अकथ कहानी ❀ समुझत सुखद न परति बखानी
अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी ❀ उभय प्रबोधक चतुर दुभाखी[3]

नाम और रूप की गति की कथा अकथनीय है। वह समझने में आनन्द-

---

१. साध्य, जानने योग्य। २. हथेली। ३. दो भाषाओं का जानने वाला।

दायक है पर उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। निर्गुण और सगुण के बीच में नाम सुन्दर साक्षी है, फिर दोनों का यथार्थ ज्ञान कराने वाला चतुर दुभाषिया है।

दो०— राम नाम मनि दीप धरु जीह[1] देहरी[2] द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरेहुँ जौं चाहसि उँजियार[3] ॥२१॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि यदि तू घरके बाहर और भीतर दोनों ओर उजाला चाहता है, तो द्वार की जीभ रूपी देहली पर रामनाम रूपी मणि का दीपक रख।

नाम जीहँ जपि जागहिं जोगी ❀ बिरति बिरंचि प्रपंच बियोगी
ब्रह्मसुखहिं अनुभवहिं अनूपा ❀ अकथ अनामय नाम न रूपा

ब्रह्मा के बनाये हुये इस प्रपञ्च (दृश्यमान जगत) से भलीभाँति उदासीन योगीजन जीभ से नाम को ही जपते हुये जागते हैं। वे अनुपम ब्रह्म-सुख का अनुभव करते हैं, जो अकथनीय, निर्मल, बिना नाम और रूप का है।

जाना चहहिं गूढ़गति जेऊ ❀ नाम जीहँ जपि जानहिं तेऊ[4]
साधक नाम जपहिं लय लाए ❀ होहिं सिद्ध अनिमादिक पाए

जो आत्मा-परमात्मा के गूढ़ भेद को जानना चाहते हैं, वे भी नाम को जीभ से जपकर उसे जान लेते हैं। साधकजन लौ लगा कर नाम का जप करते हैं और अणिमा आदि आठों सिद्धियाँ पाकर सिद्ध हो जाते हैं।

जपहिं नाम जनु[5] आरत भारी ❀ मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी
राम भगत जग चारि प्रकारा ❀ सुकृती चारिउ अनघ उदारा

अत्यन्त दुःखी भक्त नाम को जपते हैं, उनके बुरे संकट मिट जाते हैं और वे सुखी होते हैं। संसार में चार प्रकार के राम के भक्त हैं; अर्थात् जिज्ञासु—ईश्वर के जानने की इच्छा रखनेवाला; अर्थी—किसी प्रयोजन की सिद्धि के लिये ईश्वर का स्मरण करनेवाला; आर्त्त—किसी दुःख में फंसकर ईश्वर को याद करनेवाला; ज्ञानी—ईश्वर को जानकर भजने वाला। चारों ही पुण्यात्मा, पापहीन और उदार हैं।

---

१. जीभ। २. चौखट। ३. प्रकाश। ४. वे भी। ५. भक्त।

चहूँ चतुर कहुँ नाम अधारा ❀ ग्यानी प्रभुहिं बिसेषि पिआरा
चहुँ जुग चहुँ स्रुति नाम प्रभाऊ ❀ कलि बिसेषि नहिं आन उपाऊ

चारों चतुर भक्तों को नाम ही का आधार है; पर ज्ञानी भक्त प्रभु को विशेष रूप से प्रिय है। यों तो चारों युगों के लिये चारों वेदों में नाम की महिमा गाई गई है, परन्तु कलियुग में तो नाम को छोड़कर कोई दूसरा उपाय ही नहीं।

दो० सकल कामनाहीन जे राम भगति रस लीन।
नाम सुपेम पियूष ह्रद तिन्हहुँ किये मन मीन।२२।

जो सब प्रकार कामनाओं से रहित होकर राम की भक्ति के रस में लीन हैं, उन्होंने भी रामनाम-रूपी सुन्दर प्रेम के अमृत-कुण्ड में अपने मन को मछली बना रखा है।

अगुन सगुन दुइ ब्रह्मसरूपा ❀ अकथ अगाध अनादि अनूपा
मोरे मत बड़ नाम दुहूँ ते ❀ किय जेहि जुग निज बस निज बूते[1]

निर्गुण और सगुण ब्रह्म के दो स्वरूप हैं। दोनों ही अकथनीय, अथाह, अनादि और अनुपम हैं। (तुलसीदासजी कहते हैं) मेरी सम्मति में नाम दोनों से बड़ा है, जिसने अपने बल से सगुण और निर्गुण दोनों को अपने वश में कर रखा है।

प्रौढ़ि[2] सुजन जनि[3] जानहिं जन की ❀ कहउँ प्रतीति प्रीति रुचि मन की
एक दारु गत देखिअ एकू ❀ पावक सम जुग ब्रह्म बिबेकू

सज्जनगण इस बात को मुझ दास की ढिठाई या प्रौढ़ोक्ति न समझें। मैं अपने मन के विश्वास, प्रीति और रुचि की बात कहता हूँ। दोनों प्रकार के ब्रह्म का ज्ञान (परिचय) अग्नि के समान है। एक अग्नि तो लकड़ी के भीतर व्याप्त है और दूसरी बाहर दिखाई देती है।

उभय अगम जुग सुगम नाम तें ❀ कहेउँ नामु बड़ ब्रह्म राम तें
व्यापकु एकु ब्रह्म अबिनासी ❀ सत चेतन घन आनन्दरासी

सगुण और निर्गुण दोनों का जानना कठिन है; परन्तु नाम से दोनों सुगम हो जाते हैं। इसी से मैंने निर्गुण (ब्रह्म) और सगुण (राम) दोनों को बड़ा कहा है। यद्यपि ब्रह्म सर्व व्यापक, एक, अविनाशी, सत्, चेतन और आनन्द की घनी राशि है।

---

१. बल से। २. ढिठाई। ३. मत, न।

अस प्रभु हृदय अछत अविकारी ❀ सकल जीव जग दीन दुखारी
नाम निरूपन नाम जतन तें ❀ सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन तें

हृदय में ऐसे शुद्ध और निर्विकार प्रभु के रहते हुए भी जगत् के सब जीव, दीन और दुखी हैं। नाम का निरूपण करके नाम का यत्न (जप) करने से वही ब्रह्म ऐसे प्रकट हो जाता है, जैसे रत्न के जानने से उसका मूल्य। [उदाहरण अलङ्कार]

दो॰ निरगुन तें एहि भाँति बड़ नाम प्रभाउ अपार।
कहउँ नामु बड़ राम तें निज बिचार अनुसार॥२३॥

इस प्रकार निर्गुण से नाम का प्रभाव बहुत ही बड़ा है। अब अपने विचार के अनुसार कहता हूँ कि नाम राम से भी बड़ा है।

राम भगत हित नर तनु धारी ❀ सहि संकट किय साधु सुखारी
नामु सप्रेम जपत अनयासा ❀ भगत होहिं मुद मंगल बासा

रामचन्द्र जी ने भक्तों के हित के लिये मनुष्य-शरीर धारण करके और स्वयं संकट सहकर साधुओं को सुखी किया। किन्तु प्रेम से नाम का जप करने से भक्त सहज ही में आनन्द और कल्याण के घर हो जाते हैं।

राम एक तापस तिय तारी ❀ नाम कोटि खल कुमति सुधारी
रिषि हित राम सुकेतु सुता की ❀ सहित सेन सुत कीन्हि बिबाकी

राम ने एक तपस्वी की पत्नी अहिल्या का उद्धार किया, परन्तु नाम ने करोड़ों दुष्टों की कुबुद्धि को सुधार दिया। राम ने विश्वामित्र ऋषि के हित के लिये सुकेतु की कन्या ताड़का को, उसकी सेना और पुत्र सुबाहु सहित, निःशेष (विध्वंस) कर दिया।

सहित दोष दुख दास दुरासा ❀ दलइ नाम जिमि रबि निसि नासा
भंजेउ राम आपु भव चापू ❀ भव भय भंजन नाम प्रतापू

परन्तु नाम भक्तों के दोष, दुःख और दुराशाओं का ऐसे संहार करता है, जैसे सूर्य रात्रि का नाश करता है। राम ने स्वयं भव (शिव) का धनुष तोड़ा; परन्तु नाम का प्रताप भव (संसार) के सब भयों का नाश कर देने वाला है।

दंडक बन प्रभु कीन्ह सोहावन ❀ जन मन अमित[1] नाम किय पावन
निसिचर निकर[2] दले रघुनंदन ❀ नाम सकल कलि कलुष निकंदन[3]

प्रभु राम ने दण्डक-वन को सुहावना बना दिया; किन्तु नाम ने असंख्य भक्तों के मनों को पवित्र कर दिया। राम ने राक्षसों के समूह को मारा; परन्तु नाम तो कलियुग के सारे पापों का नाश करने वाला है।

दो॰ सबरी गीध सुसेवकनि सुगति दीन्हि रघुनाथ।
नाम उधारे अमित खल बेद बिदित गुन गाथ॥२४॥

राम ने शबरी, गीध आदि उत्तम सेवकों (भक्तों) को मुक्ति दी; परन्तु नाम ने अनगिनत दुष्टों का उद्धार किया। नाम के गुणों की कथा वेदों में विदित है।

राम सुकंठ[4] बिभीषन दोऊ ❀ राखे सरन जान सबु कोऊ
नाम गरीब अनेक नेवाजे ❀ लोक बेद बर बिरद बिराजे

राम ने सुग्रीव और विभीषण दो को ही अपनी शरण में रक्खा, यह सब कोई जानते हैं। पर नाम ने अनेक दीनों पर कृपा की है। नाम का यह विरद लोक और वेद दोनों में विराजमान है।

राम भालु कपि कटकु बटोरा ❀ सेतु हेतु स्रमु कीन्ह न थोरा
नाम लेत भवसिंधु सुखाहीं ❀ करहु बिचार सुजन मन माहीं

राम ने भालू और बन्दरों की सेना बटोरी और समुद्र पर पुल बाँधने के लिये थोड़ा परिश्रम नहीं किया; पर नाम लेते ही संसाररूपी समुद्र सूख जाता है। हे सज्जनो ! मन में विचार करें (कि दोनों में कौन बड़ा है।)

राम सकुल रन रावनु मारा ❀ सीय सहित निज पुर पगु धारा
राजा रामु अवध रजधानी ❀ गावत गुन सुर मुनि बर बानी

राम ने कुटुम्ब-सहित रावण को युद्ध में मारा और सीता-सहित वे अपने नगर अयोध्या को लौटे। राम राजा हैं, उनकी राजधानी अयोध्या है; जिसके गुण देवता और मुनि सुन्दर वाणी से गाते हैं।

सेवक सुमिरत नाम सप्रीती ❀ बिनु स्रम प्रबल मोह दलु जीती
फिरत सनेह मगन सुख अपने ❀ नाम प्रसाद सोच नहिं सपने

१. असंख्य। २. समूह। ३. नाश करने वाला। ४. सुग्रीव।

परन्तु भक्त प्रेमपूर्वक नाम के स्मरणमात्र से अज्ञान की प्रबल सेना को बिना परिश्रम के जीत लेता है और प्रेम में मग्न होकर आत्मानन्द में विचरता है। नाम के प्रसाद से उसे सपने में भी कोई चिन्ता नहीं रहती।

दो० ब्रह्म राम तें नामु बड़ बरदायक बर दानि।
रामचरित सत कोटि महँ लिय महेस जियँ जानि।।२५।।

ब्रह्म और राम से नाम बड़ा है। यह वरदान देने वालों (देवताओं) को भी वर देने वाला है। सौ करोड़ या सौ प्रकार के रामचरित में से शिवजी ने इस "राम" नाम को मन में साररूप जानकर ग्रहण किया है।

नाम प्रसाद संभु अबिनासी ❀ साजु अमंगल मंगल रासी
सुक सनकादि सिद्ध मुनि जोगी ❀ नाम प्रसाद ब्रह्म-सुख भोगी

नाम ही के प्रसाद से शिवजी अविनाशी हैं और अमंगल (बुरा) वेष होने पर भी वे मंगल की राशि (मंगलमय) हैं। शुक और सनक आदि सिद्ध, मुनि, योगीजन नाम ही के प्रसाद से ब्रह्मानन्द को भोगते हैं।

नारद जानेउ नाम प्रतापू ❀ जग प्रिय हरि हरि हर प्रिय आपू
नामु जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू ❀ भगति सिरोमनि भे प्रहलादू

नाम के प्रताप को नारद जी ने जाना है। हरि सारे संसार को प्यारे हैं और हरि और हर दोनों को नारद मुनि प्यारे हैं। नाम के जपने से भगवान प्रह्लाद पर प्रसन्न हुये और वे भक्तों के शिरोमणि हो गये।

ध्रुव सगलानि जपेउ हरि नाऊँ ❀ पायउ अचल अनूपम ठाऊँ
सुमिरि पवनसुत पावन नामू ❀ अपने बस करि राखे रामू

ध्रुवजी ने (विमाता के वचनों से दुखी होने पर) ग्लानिपूर्वक नाम को जपा और अचल (स्थिर) तथा अनुपम स्थान पाया। हनुमान जी ने पवित्र नाम को जपकर राम को अपने वश में कर रक्खा है।

अपतु[1] अजामिलु गजु गनिकाऊ ❀ भये मुकुत हरि नाम प्रभाऊ
कहउँ कहाँ लगि नाम बड़ाई ❀ रामु न सकहिं नाम गुन गाई

नीच अजामिल, गज और गणिका भी भगवान् के नाम के प्रभाव से मुक्त

---

१. नीच।

हो गये। मैं नाम की बड़ाई कहाँ तक कहूँ। राम भी नाम के गुणों को नहीं गा सकते।

दो०-नामु राम को कलपतरु कलि कल्यान निवासु।
जो सुमिरत भयो भाँग[1] तें तुलसी[2] तुलसीदासु।२६।

राम का नाम कलियुग में कल्पतरु (मन चाहा पदार्थ देने वाला) और कल्याण का घर है, जिसको स्मरण करके भाँग ऐसा निकृष्ट तुलसीदास तुलसी के समान (पवित्र) हो गया।

चहुँ जुग तीनि काल तिहुँ लोका ❀ भये नाम जपि जीव बिसोका
बेद पुरान संत मत एहू ❀ सकल सुकृत फल राम सनेहू

चारों युगों में, तीनों कालों में और तीनों लोकों में नाम को जपकर जीव शोक रहित हुये हैं। वेद, पुराण और सन्तों का मत यही है कि सारे पुण्यों का फल रामचन्द्र जी में प्रेम का होना है।

ध्यानु प्रथम जुग मख बिधि दूजे ❀ द्वापर परितोषत प्रभु पूजे
कलि केवल मल मूल मलीना ❀ पाप पयोनिधि जन मन मीना

प्रथम (सत्य) युग में ध्यान से, दूसरे (त्रेता) में यज्ञ से, द्वापर में पूजन से भगवान् प्रसन्न होते हैं, परन्तु कलियुग केवल पाप की जड़ और मलिन है। मनुष्यों का मन पाप के समुद्र में मछली के समान रहता है।

नाम कामतरु काल कराला ❀ सुमिरत समन सकल जग जाला
राम नाम कलि अभिमत दाता ❀ हित परलोक लोक पितु माता

इस कराल काल में नाम ही कल्पवृक्ष है, जो स्मरण करते ही संसार के सब बन्धनों का नाश कर देता है। राम का नाम कलियुग में मनोवाँछित फल देने वाला है। यह परलोक में हित करता है और इस लोक में माता-पिता के समान (रक्षक और पालक) है।

नहिं कलि करम न भगति बिबेकू ❀ राम नाम अवलंबन[3] एकू
कालनेमि कलि कपट निधानू ❀ नाम सुमति समरथ हनुमानू

कलियुग में न कर्म है, और न भक्ति और ज्ञान ही है। केवल रामनाम ही

१. नशीला पौधा। २. पौधा, जिसकी पत्तियाँ पूजन में मूर्ति पर चढ़ाई जाती हैं। ३. आधार, सहारा।

एक आधार है। कपट की खान कलियुगरूपी कालनेमि (दैत्य) के (मारने के) लिये राम का नाम ही बुद्धिमान और समर्थ हनुमान के समान है।

दो॰ रामनाम नरकेसरी कनककसिपु कलिकालु।
जापक[1] जन प्रहलाद जिमि पालिहि दलि सुरसालु २७

राम का नाम नृसिंह है, कलियुग हिरण्यकशिपु है, और जप करने वाले भक्तजन प्रह्लाद हैं। नामरूपी नृसिंह भगवान् देवताओं को दुःख देने वाले हिरण्यकशिपु को मारकर जप करनेवाले प्रह्लाद की रक्षा करेंगे।

भायँ कुभायँ अनख[2] आलसहूँ ❀ नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ
सुमिरि सो नाम राम गुन गाथा ❀ करउँ नाइ रघुनाथहिं माथा

प्रेम से, बैर से, क्रोध से या आलस्य से किसी तरह से भी नाम जपने से दशों दिशाओं में कल्याण होता है। उसी रामनाम का स्मरण करके और रामचन्द्रजी को मस्तक नवाकर मैं राम के चरणों की कथा रचता हूँ।

मोरि सुधारिहि सो सब भाँती ❀ जासु कृपा नहिं कृपा अघाती
राम सुस्वामि कुसेवकु मो सो ❀ निजि दिसि देखि दयानिधि पोसो[3]

वे श्रीरामजी सब तरह से मेरी बिगड़ी सुधारेंगे। जिनकी कृपा से कृपा तृप्त नहीं होती अर्थात् कृपा करने से नहीं अघाती। राम से उत्तम स्वामी और मुझ-सा बुरा सेवक! इसपर अपनी ओर देखकर उन दयानिधान ने मेरा पालन किया है।

लोकहुँ बेद सुसाहिब रीती ❀ बिनय सुनत पहिचानत प्रीती
गनी[4] गरीब ग्राम-नर[5] नागर ❀ पंडित मूढ़ मलीन उजागर

लोक और वेद में भी अच्छे स्वामी की यही रीति प्रसिद्ध है कि वह विनय सुनते ही प्रार्थी की प्रीति को पहचान लेते हैं। धनी, निर्धन, गँवार, नगर-निवासी, पण्डित, मूर्ख, बदनाम, और विख्यात—

सुकबि कुकबि निज मति अनुहारी[6] ❀ नृपहि सराहत सब नर नारी
साधु सुजान सुसील नृपाला ❀ ईस अंस भव परम कृपाला

कवि और कुकवि सब स्त्री-पुरुष अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार राजा की

---

१. जप करने वाला। २. क्रोध। ३. पालन किया। ४. धनी। ५. गँवार। ६. अनुसार।

सराहना करते हैं और साधु, बुद्धिमान, सुशील और ईश्वर के अंश से उत्पन्न बड़ा दयालु राजा—

सुनि सनमानहिं सबहिं सुबानी ❀ भनिति भगति नति[1] गति पहिचानी
यह प्राकृत महिपाल सुभाऊ ❀ जानि[2] सिरोमनि कोसलराऊ
रीझत राम सनेह निसोतें ❀ को जग मंद मलिन मति मोतें

सब के कथन को सुनकर, उनकी वाणि, भक्ति, नम्रता और चाल को पहचानकर, मीठी वाणी से सबका सम्मान करता है। यह तो संसारी राजाओं का स्वभाव है। अयोध्यापति रामचन्द्रजी तो ज्ञानियों के शिरोमणि हैं। राम तो केवल विशुद्ध प्रेम से रीझ जाते हैं; पर मुझ-से बढ़कर मूर्ख और मैले मनवाला और कौन है?

दो॰ सठ सेवक की प्रीति रुचि रखिहहिं राम कृपालु।
उपल[3] किये जलजान जेहिं सचिव सुमति कपि भालु।

कृपालु रामचन्द्रजी मुझ जैसे दुष्ट सेवक की प्रीति और रुचि को अवश्य रक्खेंगे। जिन्होंने पत्थरों को जहाजरूप और बन्दर भालुओं को बुद्धिमान् मंत्री बना लिया। [अर्थान्तरन्यास अलंकार]

हौंहुँ कहावत सबु कहत राम सहत उपहास।
साहिब सीतानाथ सों सेवक तुलसीदास ॥२८॥(२)॥

मैं भी राम का भक्त कहलाता हूँ और सारा जगत् भी यही कहता है, कृपालु रामचन्द्रजी इस निन्दा को सहते हैं कि कहाँ सीतानाथ जैसे स्वामी और कहाँ तुलसीदास-सा सेवक !

अति बड़ि मोरि ढिठाई खोरी ❀ सुनि अघ नरकहु नाक सिकोरी
समुझि सहम मोहिं अपडर अपनें ❀ सो सुधि राम कीन्ह नहिं सपनें

यह कहना मेरी बड़ी ढिठाई और दोष है, मेरे पापों को सुनकर नरक भी नाक सिकोड़ता है। यह समझकर मुझे अपने ही कल्पित भय से संकोच हो रहा है; पर रामचन्द्रजी ने तो इसका स्वप्न में भी कभी ख़्याल नहीं किया।

१. नम्रता। २. ज्ञानी। ३. पत्थर।

सुनि अवलोकि सुचित चख[1] चाही[2] ❀ भगति मोरि मति स्वामि सराही
कहत नसाइ होइ हियँ नीकी ❀ रीझत राम जानि जन जी की

मेरी प्रार्थना सुनकर स्वामी रामचन्द्रजी ने आँख की अपेक्षा चित्त से अच्छी तरह देखकर मेरी मति और भक्ति की सराहना की। कहने में भले ही बिगड़ जाय, परन्तु हृदय में अच्छी हो, तो रामचन्द्रजी भक्तों के हृदय की बात जानकर रीझ जाते हैं।

रहति न प्रभु चित चूक किये की ❀ करत सुरति सय[3] बार हिये की
जेहि अघ बधेउ ब्याध जिमि बाली ❀ फिरि सुकंठ सोइ कीन्हि कुचाली

प्रभु रामचन्द्रजी के चित्त में भक्तों की की हुई भूल-चूक याद नहीं रहती। वे उनके हृदय की अच्छाई को सौ बार स्मरण करते रहते हैं। जिस पाप से रामचन्द्रजी ने बालि को व्याध की तरह मारा था, वही कुचाल फिर सुग्रीव ने चली। [निदर्शना अलंकार]

सोइ करतूति बिभीषन केरी[4] ❀ सपनेहुँ सो न राम हिय हेरी
ते भरतहिं भेंटत सनमाने ❀ राजसभा रघुबीर बखाने

वही करनी विभीषण ने की; पर उन रामचन्द्रजी ने स्वप्न में भी मन में विचार नहीं किया। उलटे भरतजी से मिलने के समय रामचन्द्रजी ने उनका सम्मान किया और राज-सभा में भी उनका बखान किया।

दो० प्रभु तरु तर कपि डार पर ते किय आपु समान।
तुलसी कहूँ न राम से साहिब सील निधान।२९। (१)

प्रभु रामचन्द्रजी तो वृक्ष के नीचे और बन्दर डाली पर; तो भी उन्होंने उन्हें अपने समान बना लिया। तुलसीदास जी कहते हैं कि रामचन्द्रजी के समान शीलनिधान स्वामी कहीं भी नहीं है।

राम निकाई[5] रावरी[6] है सब ही को नीक।
जौं यह साँची है सदा तौ नीको तुलसीक॥२९॥ (२)

हे रामचन्द्रजी! आपकी अच्छाई सबका कल्याण करने वाली है। यदि यह बात सच है, तो तुलसीदास को भी वह सदा अच्छी ही रहेगी।

१. आँख। २. अपेक्षा। ३. सौ। ४. की। ५. अच्छापन। ६. आपकी।

एहि बिधि निज गुन दोष कहि सबहिं बहुरि[1] सिरु नाइ।
बरनउँ रघुबर बिसद जसु सुनि कलि कलुष नसाइ।२९।(३)

इस प्रकार अपने गुण-दोषों को कहकर और सबको सिर नवा करके रामचन्द्रजी का निर्मल यश वर्णन करता हूँ, जिसे सुनने से कलियुग के पाप नष्ट हो जाते हैं।

जागबलिक जो कथा सोहाई ❀ भरद्वाज मुनिबरहिं सुनाई
कहिहउँ सोइ संबाद बखानी ❀ सुनहु सकल सज्जन सुखु मानी

याज्ञवल्क्य मुनि ने जो सुहावनी कथा मुनिवर भरद्वाजजी को सुनाई थी, उसी संवाद को मैं बखानकर कहूँगा, सब सज्जन सुख का अनुभव करते हुए उसे सुनें।

संभु कीन्ह यह चरित सोहाना ❀ बहुरि कृपा करि उमहिं सुनावा
सोइ सिव कागभुसुंडिहिं दीन्हा ❀ रामभगत अधिकारी चीन्हा

उस सुहावने रामचरित को पहले शिवजी ने रचा और फिर कृपा करके पार्वती को सुनाया था। वही चरित शिवजी ने, राम का भक्त और अधिकारी पहचानकर कागभुशुण्डि को दिया।

तेहि सन[2] जागबलिक पुनि पावा ❀ तिन्ह पुनि भरद्वाज प्रति गावा
ते श्रोता बकता समसीला ❀ समदरसी जानहिं हरि लीला

फिर कागभुशुण्डि से याज्ञवल्क्य ने पाया और फिर उन्होंने उसे भरद्वाजजी से वर्णन किया। वे दोनों वक्ता और श्रोता समान शील वाले और समदर्शी हैं और हरि की लीलाओं को जानते हैं।

जानहिं तीनि काल निज ग्याना ❀ करतल गत आमलक[3] समाना
औरउ जे हरि भगत सुजाना ❀ कहहिं सुनहिं समुझहिं बिधि नाना

वे अपने ज्ञान से हाथ पर रक्खे हुए आमले के फल के समान तीनों कालों की बातों को जानते हैं। और भी जो चतुर हरिभक्त हैं, वे इस चरित को तरह-तरह से कहते, सुनते और समझते हैं।

---

१. फिर। २. से। ३. आँवला।

दो०—मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा सो सूकरखेत।
समुझी नहिं तसि बालपन तब अति रहेउँ अचेत।३०।

फिर वही कथा मैंने अपने गुरुजी से शूकरक्षेत्र में सुनी थी। परन्तु तब बालकपन के कारण मैं बहुत नादान था, इसी से उसे भली भाँति मैंने समझा नहीं।

श्रोता बकता ग्याननिधि कथा राम कै गूढ़।
किमि समुझौं मैं जीव जड़ कलि मल ग्रसित बिमूढ़।३०।(२)

राम की कथा बड़ी ही गूढ़ है, इसके लिये वक्ता और श्रोता दोनों पूरे ज्ञानी होने चाहियें। मैं कलियुग के पापों में फँसा हुआ महामूढ़, जड़ जीव उसको कैसे समझ सकता था?

तदपि कही गुर बारहिं बारा ❀ समुझि परी कछु मति अनुसारा
भाषाबद्ध करबि[1] मैं सोई ❀ मोरे मन प्रबोध जेहि होई

तो भी गुरुजी ने बार-बार कथा कही, तब अपनी बुद्धि के अनुसार कुछ समझ में आई। उसी को अब मैं भाषा में कहूँगा, जिससे मेरे मन को सन्तोष हो।

जस कछु बुधि बिबेक बल मेरे ❀ तस कहिहौं हियँ हरि के प्रेरे
निज संदेह मोह भ्रम हरनी ❀ करउँ कथा भव सरिता तरनी

जैसा कुछ मुझमें बुद्धि और ज्ञान का बल है, मैं हृदय में हरि की प्रेरणा से उसी के अनुसार कहूंगा। मैं अपने सन्देह, अज्ञान और भ्रम को हरने वाली कथा रचता हूं, जो संसार-रूपी नदी के लिये नाव के समान है।

बुध बिस्राम सकल जन रंजनि ❀ रामकथा कलि कलुष बिभंजनि
रामकथा कलि पन्नग[2] भरनी[3] ❀ पुनि बिबेक पावक कहुँ अरनी[4]

राम-कथा पण्डितों को विश्राम देने वाली, सब मनुष्यों के मन को प्रसन्न करने वाली और कलियुग के पापों को नाश करने वाली है। राम-कथा कलियुग-

---

१. करूँगा। २. साँप। ३. मोरनी। ४. लकड़ी। एक प्रकार का जंगली वृक्ष, जिसे गनियार और अगेथु भी कहते हैं। इसकी सूखी लकड़ी घिसने से तुरन्त आग पैदा होती है, और मसाल की तरह जलती है।

रूपी साँप के लिये मोरनी है, और फिर ज्ञानरूपी अग्नि को प्रज्वलित करने के लिये अरनी (मंथन की जाने वाली) लकड़ी है।

रामकथा कलि कामद गाई[1] ❀ सुजन सजीवन मूरि सोहाई
सोइ बसुधातल सुधा तरंगिनि ❀ भय भञ्जनि भ्रम भेक भुअंगिनि

राम-कथा कलियुग में सब मनोरथों को पूर्ण करने वाली कामधेनु (गौ) और सज्जनों के लिये सुन्दर सञ्जीवनी जड़ी है। पृथ्वी पर यही अमृत की नदी है। यह भय को दूर करने वाली और सन्देहरूपी मेंढकों को खाने के लिये सर्पिणी है।

असुर सेन सम नरक निकंदिनि ❀ साधु बिबुध कुल हित गिरिनंदिनि
संत समाज पयोधि रमा सी ❀ बिस्व भार भर अचल छमा सी

यह राम-कथा राक्षसों की सेना के समान जो नरक हैं उनको नाश करने वाली है और साधु और देवकुल का कल्याण चाहने वाली गंगा तथा पार्वती दुर्गा है। यह सन्त-समाज रूपी क्षीरसागर के लिये लक्ष्मी है और सम्पूर्ण विश्व का भार उठाने में अचल पृथ्वी के समान है।

जम गन मुँह मसि[2] जग जमुना सी ❀ जीवन मुकुति हेतु जनु कासी
रामहिं प्रिय पावन तुलसी सी ❀ तुलसिदास हित हिय हुलसी सी

यमदूतों के मुख पर कालिख लगाने के लिये यह संसार में यमुना के समान है। जीवों को मुक्ति देने के लिये तो मानो साक्षात् काशी है। रामचन्द्रजी को पवित्र तुलसी के समान प्रिय है। तुलसीदास के लिये हुलसी (तुलसीदासजी की माता) के समान जी से हित करने वाली है।

सिव प्रिय मेकल सैल[3] सुता सी ❀ सकल सिद्धि सुख संपति रासी
सदगुन सुरगन अंब अदिति सी ❀ रघुबर भगति प्रेम परिमिति सी

यह रामकथा शिवजी को नर्मदा के समान प्यारी है। यह सब सिद्धियों, सुख और सम्पत्ति की राशि है। सद्गुणरूपी देवताओं के लिये यह माता अदिति के समान है; और रामचन्द्रजी की भक्ति और प्रेम की सीमा-सी है।

दो०: रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु[4]।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर बिहारु ॥३१॥

---

१. गाय। २. स्याही। ३. विन्ध्याचल पर्वत। ४. सुन्दर।

तुलसीदासजी कहते हैं कि रामकथा मन्दाकिनी नदी है और चित्त सुन्दर चित्रकूट है। उसमें सुन्दर स्नेह ही वन है, जिसमें सीतारामजी विहार करते हैं। [रूपक अलङ्कार]

रामचरित चिंतामनु चारू ❀ संत सुमति तिय सुभग सिंगारू
जग मंगल गुनग्राम राम के ❀ दानि मुकुति धन धरम धाम के

रामचन्द्रजी का चरित्र सुन्दर चिन्तामणि है और सन्तों की सुबुद्धि-रूपी स्त्री का सुन्दर शृङ्गार है। रामचन्द्रजी के गुण-समूह जगत् का कल्याण करने वाले और मोक्ष, धन, धर्म तथा परमधाम के देने वाले हैं।

सदगुर ग्यान बिराग जोग के ❀ बिबुध बैद भव भीम[1] रोग के
जननि जनक सिय राम पेम के ❀ बीज सकल ब्रत धरम नेम के

ज्ञान, वैराग्य और योग के लिये रामचरित सद्‌गुरु और संसाररूपी भयंकर रोग के लिये देव-वैद्य अश्विनीकुमार है। यह सीताराम के प्रेम के उत्पन्न करने के लिये माता-पिता और सारे व्रत, धर्म और नियमों के बीज हैं।

समन पाप संताप सोक के ❀ प्रिय पालक परलोक लोक के
सचिव सुभट भूपति बिचार के ❀ कुंभज लोभ उदधि अपार के

पाप, सन्ताप और शोक को नाश करने वाले और इस लोक तथा परलोक के प्यारे पालक हैं। विचाररूपी राजा के वीर मन्त्री और लोभ-रूपी अपार समुद्र के सोखने के लिये अगस्त्य मुनि हैं।

काम कोह कलि मल करि[2] गन के ❀ केहरि सावक[3] जन मन बन के
अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के ❀ कामद घन दारिद दवारि के

भक्तों के मनरूपी वन में काम, क्रोध और कलियुग के पापरूपी हाथियों को मारने के लिये ये सिंह के बच्चे हैं। महादेवजी के बहुत ही प्रिय और पूज्य अतिथि और दरिद्रतारूपी वन की अग्नि के लिये कामना पूर्ण करने वाले मेघ हैं।

मंत्र महा मनि बिषय ब्याल[4] के ❀ मेटत कठिन कुअंक भाल के
हरन मोह तम दिनकर कर[5] से ❀ सेवक सालि[6] पाल जलधर से

विषयरूपी साँप के लिये मन्त्र और महामणि हैं। ये ललाट पर लिखे हुए

---

१. भयंकर। २. हाथी। ३. बच्चा। ४ साँप। ५. किरण। ६. धान।

कठिनता से मिटने वाले बुरे लेखों (मंद प्रारब्ध) को मिटा देने वाले हैं। अज्ञान-रूपी अन्धकार के दूर करने को सूर्य की किरणों के समान और सेवकरूपी धानों को पालने वाले मेघ के समान हैं।

अभिमत दानि देवतरु बर से ❀ सेवत सुलभ सुखद हरिहर से
सुकबि सरद नभ मन उडगन से ❀ राम भगत जन जीवन धन से

मनोवाञ्छित फल देने में श्रेष्ठ कल्पवृक्ष के समान हैं। और सेवा करने में हरिहर के समान सहज सुख देने वाले हैं। सुकविरूपी शरद् ऋतु के मनरूपी आकाश में तारागण के समान हैं और राम के भक्तों के तो ये जीवनधन (सर्वस्व) ही हैं।

सकल सुकृत फल भूरि भोग से ❀ जग हित निरुपधि साधु लोग से
सेवक मन मानस मराल से ❀ पावन गंग तरंग माल से

सम्पूर्ण पुण्यों के फल-स्वरूप महान् सुख-भोग के समान हैं। निःस्वार्थ भाव से छल-रहित जगत् का हित करने के लिये साधु-सन्तों के समान हैं। भक्तों के मनरूपी मानसरोवर में हंस के समान और पवित्र करने में गंगा की तरंग-माला के समान हैं।

दो०- कुपथ कुतरक कुचालि कलि कपट दंभ पाखंड।
दहन राम गुन ग्राम जिमि इंधन अनल प्रचंड॥३२॥(१)

रामचन्द्र के गुणों के समूह कुमार्ग, कुतर्क, कुचाल, कलि, कपट, दम्भ और पाखण्ड के लिये वैसे ही हैं, जैसे ईंधन के लिये प्रचंड अग्नि।

रामचरित राकेस[1] कर सरिस सुखद सब काहु।
सज्जन कुमुद चकोर चित हित बिसेषि बड़ लाहु॥३२॥(२)

रामचन्द्रजी का चरित पूर्णिमा के चन्द्रमा की किरणों के समान सभी को सुख देने वाला है। परन्तु सज्जनरूपी कुमुद और चकोरों के चित्त को विशेष हितकारी और बहुत लाभदायक है।

कीन्हि प्रस्न जेहि भाँति भवानी ❀ जेहि बिधि संकर कहा बखानी
सो सब हेतु कहब मैं गाई ❀ कथा प्रबंध बिचित्र बनाई

---

१. पूर्णिमा का चन्द्रमा।

जिस भाँति पार्वती ने (शिवजी से) प्रश्न किया और जिस भाँति शिवजी ने विस्तार के साथ उसका उत्तर दिया, वह सब कारण मैं विचित्र कथा की रचना करके और गाकर कहूँगा।

जेहि यह कथा सुनी नहिं होई ❀ जनि आचरज करइ सुनि सोई
कथा अलौकिक सुनहिं जे ग्यानी ❀ नहिं आचरजु करहिं अस जानी

जिसने यह कथा पहले कभी न सुनी हो, वह इसे सुनकर आश्चर्य न करे। जो ज्ञानी इस विचित्र कथा को सुनते हैं, वे यह जानकर आश्चर्य नहीं करते कि—

रामकथा कै मिति जग नाहीं ❀ असि प्रतीति तिन्ह के मन माहीं
नाना भाँति राम अवतारा ❀ रामायन सत कोटि अपारा

संसार में रामकथा की सीमा नहीं है। उनके मन में ऐसा विश्वास रहता है। रामचन्द्रजी के अवतार नाना प्रकार के हुए हैं और सौ करोड़ तथा अपार रामायण हैं।

कलपभेद हरिचरित सोहाए ❀ भाँति अनेक मुनीसन्ह गाए
करिअ न संसय अस उर आनी ❀ सुनिअ कथा सादर रति मानी

मुनीश्वरों ने रामचन्द्रजी का सुन्दर चरित कल्प-भेद के अनुसार अनेकों प्रकार से गाया है। हृदय में ऐसा विचार कर सन्देह न कीजिये और इस कथा को आदरपूर्वक प्रेम से सुनिये।

दो० राम अनंत अनंत गुन अमित कथा बिस्तार।
सुनि आचरजु न मानिहहिं जिन्हके बिमल बिचार ३३

रामचन्द्रजी अनन्त हैं, उनके गुण भी अनन्त हैं और उनके गुणों की कथा का विस्तार भी अपार है। अतएव जिनके विचार शुद्ध हैं, वे इस कथा को सुनकर आश्चर्य नहीं मानेंगे।

एहि बिधि सब संसय करि दूरी ❀ सिर धरि गुर पद पंकज धूरी
पुनि सबहीं बिनवउँ कर जोरी ❀ करत कथा जेहि लाग न खोरी

इस भाँति सब सन्देहों को दूर करके और गुरुजी महाराज के चरण-कमलों की धूलि को सिर पर धारण करके मैं फिर हाथ जोड़कर सबकी विनती करता हूँ कि जिसमें कथा की रचना में कोई दोष न छू जाय।

सादर सिवहिं नाइ अब माथा ❀ बरनउँ बिसद राम गुन गाथा
संवत सोरह से इकतीसा ❀ करउँ कथा हरिपद धरि सीसा

अब मैं शिवजी को आदरसहित सिर नवाकर रामचन्द्रजी के गुणों की विमल कथा कहता हूँ। श्रीहरि के चरणों पर सिर रखकर संवत् १६३१ में मैं इस कथा का आरम्भ करता हूँ।

नौमी भौमबार मधुमासा[1] ❀ अवधपुरी यह चरित प्रकासा
जेहि दिन राम जनम श्रुति गावहिं ❀ तीरथ सकल तहाँ चलि आवहिं

चैत्रमास की नवमी तिथि मंगलवार को यह चरित अयोध्याजी में प्रकाशित हुआ। जिस दिन रामचन्द्रजी का जन्म होता है, उस दिन वेद कहते हैं कि सारे तीर्थ वहाँ (अयोध्याजी में) चले आते हैं।

असुर नाग खग नर मुनि देवा ❀ आइ करहिं रघुनायक सेवा
जनम महोत्सव रचहिं सुजाना ❀ करहिं राम कल[2] कीरति गाना

उस दिन असुर, नाग, पक्षी, मनुष्य, मुनि और देवता सब अयोध्याजी में आकर रघुनाथजी की सेवा करते हैं। बुद्धिमान् लोग उस दिन जन्म का महोत्सव मनाते हैं, और रामचन्द्रजी की सुन्दर कीर्ति का गान करते हैं।

दो० मज्जहिं सज्जन बृन्द बहु पावन सरजू नीर।
जपहिं राम धरि ध्यान उर सुन्दर स्याम सरीर।३४।

सज्जनों के बहुत से समूह रामनवमी के दिन सरयू के पवित्र जल में स्नान करते हैं और सुन्दर श्यामशरीर रामचन्द्र जी का हृदय में ध्यान करके उनके नाम का जप करते हैं।

दरस परस मज्जन अरु पाना ❀ हरइ पाप कह बेद पुराना
नदी पुनीत अमित महिमा अति ❀ कहि न सकइ सारदा बिमल मति

वेद और पुराण कहते हैं कि सरयू का दर्शन, स्पर्श, स्नान और जल-पान पापों को हरता है। यह नदी बड़ी ही पवित्र है। इसकी महिमा अनन्त है, जिसे विमल बुद्धिवाली सरस्वती भी नहीं कह सकती।

राम धामदा पुरी सुहावनि ❀ लोक समस्त बिदित अति पावनि
चारि खानि जग जीव अपारा ❀ अवध तजे तनु नहिं संसारा

---

१. चैत्रमास। २. सुन्दर।

यह शोभायमान अयोध्यापुरी रामचन्द्रजी के धाम (बैकुण्ठ) की देने वाली, समस्त लोकों में प्रसिद्ध और अति पवित्र है। जगत् में अंडज, स्वेदज, उद्भिज और जरायुज चार खानि के जो अनन्त जीव हैं, उनमें से जो अयोध्या में शरीर-त्याग करते हैं वे फिर संसार में नहीं आते।

सब बिधि पुरी मनोहर जानी ❀ सकल सिद्धिप्रद मंगलखानी
बिमल कथा कर कीन्ह अरंभा ❀ सुनत नसाहिं काम मद दंभा

इस अयोध्यापुरी को सब भाँति से मनोहर, सब सिद्धियों की देने वाली और कल्याण की खान समझकर इस निर्मल कथा का मैंने आरम्भ किया है, जिसके सुनने से काम, मद और दम्भ दूर हो जाते हैं।

रामचरितमानस एहि नामा ❀ सुनत स्रवन पाइअ बिस्रामा
मन करि बिषय अनल बन जरई ❀ होइ सुखी जौं एहि सर परई

इसका नाम रामचरितमानस है, कानों से जिसके सुनने से शान्ति मिलती है। मनरूपी हाथी विषयरूपी दावानल में जल रहा है। यदि वह इस रामचरितमानसरूपी सरोवर में आ पड़े, तो सुखी हो जाय।

रामचरितमानस मुनि भावन ❀ बिरचेउ संभु सुहावन पावन
त्रिबिध दोष दुख दारिद दावन[1] ❀ कुलि[2] कुचालि कलि कलुष नसावन

मुनियों को प्रिय, पवित्र और सुहावने इस रामचरितमानस को शिवजी ने रचा है। यह तीनों प्रकार के दोषों, दुःखों और दरिद्रता को तथा सब बुराइयों और कलियुग के पापों को नष्ट करने वाला है।

रचि महेस निज मानस राखा ❀ पाइ सुसमउ सिवा[3] सन भाखा
तातें रामचरितमानस बर ❀ धरेउ नाम हियँ हेरि हरषि हर
कहउँ कथा सोइ सुखद सुहाई ❀ सादर सुनहु सुजन मन लाई

इसको रचकर शिवजी ने अपने मन में रक्खा था और सुअवसर पाकर उन्होंने पार्वती से कहा। इसी से शिवजी ने खूब सोच-समझकर और प्रसन्न होकर इसका सुन्दर नाम "रामचरितमानस" रक्खा। उसी सुखदायक और सुन्दर राम-कथा को मैं कहता हूँ। हे सज्जनो! आदरपूर्वक मन लगाकर इसे सुनिये।

---

१. नष्ट करने वाला। २. कुल, समस्त। ३. पार्वती।

दो०- जस मानस जेहि बिधि भयेउ जग प्रचार जेहि हेतु।
अब सोइ कहौं प्रसंग सब सुमिरि उमा बृषकेतु[1]॥३५॥

यह रामचरितमानस जैसा है, जिस प्रकार बना है और जिस कारण से जगत् में इसका प्रचार हुआ, वही सब कथा मैं शिवजी और पार्वतीजी को स्मरण करके कहता हूँ।

संभु प्रसाद सुमति हिअँ हुलसी ❀ रामचरितमानस कबि तुलसी
करइ मनोहर मति अनुहारी ❀ सुजन सुचित सुनि लेहु सुधारी

शिवजी की कृपा से मेरे हृदय में सुन्दर बुद्धि का विकास हुआ जिससे यह तुलसीदास इस रामचरितमानस का कवि हुआ। अपनी बुद्धि के अनुसार तो वह इसे मनोहर ही बनाता है, पर फिर भी हे सज्जनो ! उसे सावधानी से सुनकर सुधार लीजिये।

सुमति भूमि थल हृदय अगाधू ❀ बेद पुरान उदधि घन साधू
बरषहिं राम सुजस बर बारी ❀ मधुर मनोहर मंगलकारी

सुन्दर (सात्विकी) बुद्धि धरती है, हृदय उसमें गहरा स्थान है, वेद-पुराण समुद्र हैं और साधु-सन्त मेघ हैं। वे मेघ रामचन्द्रजी के सुयशरूपी सुन्दर, मधुर, मनोहर और कल्याणकारी जल की वर्षा करते हैं।

लीला सगुन जो कहहिं बखानी ❀ सोइ स्वच्छता करइ मल हानी
प्रेम भगति जो बरनि न जाई ❀ सोइ मधुरता सुसीतलताई

सगुण लीला का जो विस्तार से वर्णन करते हैं, वही जल की निर्मलता है, जो मल को नाश करने वाली है। और जिस प्रेमभक्ति का वर्णन नहीं किया जा सकता, वही जल की मिठास और सुन्दर शीतलता है।

सो जल सुकृत सालि हित होई ❀ राम भगत जन जीवन सोई
मेधा महिगत सो जल पावन ❀ सकिलि श्रवन मग चलेउ सुहावन
भरेउ सुमानस सुथल थिराना ❀ सुखद सीत रुचि चारु चिराना

वही जल सत्कर्मरूपी धान के लिये हितकारी है और रामचन्द्रजी के भक्तों का तो जीवनाधार ही है। वह पवित्र जल बुद्धिरूपी पृथ्वी पर गिरा और

१. शिव।

सुन्दर कानरूपी मार्ग से चला और मानस (हृदय) रूपी श्रेष्ठ स्थान में भरकर थिराया। वही पुराना होकर सुन्दर, रुचि बढ़ाने वाला, शीतल और सुख देने वाला हुआ।

दो॰ सुठि सुंदर संवाद बर बिरचे बुद्धि बिचारि।
तेइ एहि पावन सुभग सर घाट मनोहर चारि॥३६॥

इस कथा में बुद्धि से विचारकर जो चार अत्यन्त सुन्दर और उत्तम संवाद (अर्थात् शिव-पार्वती, कागभुशुण्ड और गरुड़, याज्ञवल्क्य-भरद्वाज, तुलसीदास और श्रोतागण) रचे गये हैं, वही इस सुन्दर और पवित्र सरोवर के चार मनोहर घाट हैं।

सप्त प्रबंध सुभग सोपाना[1] ❀ ग्यान नयन निरखत मन माना
रघुपति महिमा अगुन अबाधा ❀ बरनब सोइ बर बारि अगाधा

सातों प्रबन्ध (काण्ड) ही सात सीढ़ियाँ हैं, जिनको ज्ञानरूपी नेत्रों से देखते ही मन प्रसन्न हो जाता है। रामचन्द्रजी की निर्गुण और एकरस महिमा, जिसका वर्णन किया जायगा, वही इस सुन्दर जल की अथाह गहराई है।

राम सीअ जस सलिल सुधा सम ❀ उपमा बीचि[2] बिलास मनोरम
पुरइनि[3] सघन चारु चौपाई ❀ जुगुति मंजु मनि सीप सुहाई

रामचन्द्रजी और सीताजी का यश ही अमृत के समान जल है। इसमें जो उपमा दी गई है, वही तरंगों का मनोहर विलास है। सुन्दर चौपाइयाँ ही इसमें घनी फैली हुई पुरइन (कमलपत्र) हैं और कविता की युक्तियाँ सुन्दर मणि (मोती) उत्पन्न करने वाली सुहावनी सीपियाँ हैं।

छंद सोरठा सुन्दर दोहा ❀ सोइ बहुरंग कमल कुल सोहा
अरथ अनूप सुभाव सुभासा ❀ सोइ पराग मकरंद सुबासा

छन्द, सोरठा और सुन्दर दोहे ही रंग-बिरंगे कमलों के समूह शोभित हैं। अनुपम अर्थ, सुन्दर भाव और अच्छी भाषा ही (क्रमशः) फूलों की धूलि, पुष्प-रस और सुगन्ध है।

सुकृत पुंज मंजुल अलि माला ❀ ग्यान बिराग बिचार मराला
धुनि अवरेब कबित गुन जाती ❀ मीन मनोहर ते बहु भाँती

१. सीढ़ी। २. लहर। ३. कमल के पत्ते।

सत्कर्मों (पुण्यों) के समूह ही सुन्दर भौरों के झुण्ड हैं। ज्ञान, वैराग्य और विचार हंस हैं। कविता की ध्वनि, वक्रोक्ति, गुण और जाति ही अनेकों प्रकार की मनोहर मछलियाँ हैं।

अरथ धरम कामादिक चारी ❀ कहब ग्यान बिग्यान बिचारी
नव रस जप तप जोग बिरागा ❀ ते सब जलचर चारु तड़ागा[1]

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चारों और ज्ञान, विज्ञान का विचार-पूर्वक कहना काव्य के नवरस; जप, तप, योग और वैराग्य के प्रसंग ये सब इस सुन्दर सरोवर के जलचर जीव हैं।

सुकृति साधु नाम गुन गाना ❀ ते बिचित्र जल-बिहँग समाना
संत सभा चहुँ दिसि अँवराई ❀ श्रद्धा रितु बसंत सम गाई

पुण्यात्मा और साधुजनों और राम-नाम के गुणों का गान ही जल में विहार करने वाले विचित्र पक्षी हैं। सन्तों की सभा ही सरोवर के चारों ओर लगी हुई अमराई (आम की वाटिकायें) हैं और श्रद्धा वसन्त-ऋतु के समान कही गई है।

भगति निरूपन बिबिध बिधाना ❀ छमा दया दम लता बिताना
सम जम नियम फूल फल ग्याना ❀ हरि पद रति रस बेद बखाना
औरउ कथा अनेक प्रसंगा ❀ तेइ सुक पिक बहु बरन बिहंगा

अनेक प्रकार से भक्ति का निरूपण, क्षमा, दया और इन्द्रिय-निग्रह ये लता-मंडप हैं। समदर्शिता यम (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह) और नियम (शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान) ही उनके फूल हैं, ज्ञान फल है। और भगवान के चरणों में प्रेम ही रस है, ऐसा वेद कहते हैं। इस (रामचरितमानस) में और भी जो अन्य कथायें और प्रसंग हैं, वे ही इसमें तोते और कोकिल आदि रंग-बिरंग के पक्षी हैं।

दो० **पुलक बाटिका बाग बन सुख सुबिहंग बिहारु।**
माली सुमन सनेह जल सींचत लोचन चारु ॥३७॥

कथा के सुनने से जो रोमाञ्च हो आता है, वही बाटिका, बाग और वन

---

१. तालाब।

है और जो सुख होता है, वही सुन्दर पक्षियों का विहार है। सुन्दर मन माली है, वह स्नेहरूपी जल से सुन्दर नेत्रों द्वारा उन्हें सींचता है। [द्वितीय उल्लेख अलंकार]

जे गावहिं यह चरित सँभारे ❀ तेइ एहि ताल चतुर रखवारे
सदा सुनहिं सादर नर नारी ❀ तेइ सुर बर मानस अधिकारी

जो लोग इस चरित को सावधानी से गाते हैं, वे ही इस तालाब के चतुर रखवाले हैं। जो स्त्री-पुरुष इसको आदर-पूर्वक सदा सुनते हैं वे ही इस सुन्दर मानसरोवर के अधिकारी श्रेष्ठ देवता हैं।

अति खल जे बिषई बक कागा ❀ एहि सर निकट न जाहिं अभागा
संबुक भेक सेवार समाना ❀ इहाँ न बिषय कथा रस नाना

जो अत्यन्त दुष्ट और लम्पट हैं, वेही बगुले और कौवे हैं। वे अभागे इस (रामचरितमानस) सरोवर के पास नहीं जाते। क्योंकि यहाँ घोंघे, मेंढक और सेवार के समान विषय-रस की नाना कथायें नहीं हैं।

तेहि कारन आवत हियँ हारे ❀ कामी काक बलाक बिचारे
आवत एहि सर अति कठिनाई ❀ राम कृपा बिनु आइ न जाई

इसलिये बेचारे कौवे और बगुले-रूपी विषयी लम्पट लोग यहाँ आते हुये हृदय में हार मान जाते हैं। इस सरोवर तक आने में बड़ी कठिनाइयाँ हैं। रामचन्द्रजी की कृपा के बिना यहाँ आया नहीं जाता।

कठिन कुसंग कुपंथ कराला ❀ तिन्हके बचन बाघ हरि ब्याला[1]
गृह कारज नाना जंजाला ❀ तेइ अति दुर्गम सैल बिसाला
बन बहु बिषम मोह मद माना ❀ नदी कुतर्क भयंकर नाना

कठिन कुसंग ही भयानक बुरा रास्ता है और उन (कुसंगियों) के वचन ही बाघ, सिंह और साँप हैं। घर के काम-काज और गृहस्थी की भाँति-भाँति की उलझनें ही बड़े-बड़े अगम पर्वत हैं। मोह, मद और मान ही बहुत-से गहन वन हैं और तरह-तरह के कुतर्क ही भयंकर नदियाँ हैं।

दो० जे श्रद्धा संबल[2] रहित नहिं संतन्ह कर साथ।
तिन्ह कहँ मानस अगम अति जिनहिं न प्रिय रघुनाथ॥

---

१. साँप। २. राह-खर्च।

जिनके पास श्रद्धारूपी पाथेय (राह-खर्च) नहीं है और न सन्तों का साथ है, और जिनको रघुनाथजी प्रिय नहीं हैं, उनके लिये यह "मानस" अत्यंत ही अगम्य है।

जौं करि कष्ट जाइ पुनि कोई ❀ जातहि नींद जुड़ाई होई
जड़ता जाड़ बिषम उर लागा ❀ गयहुँ न मज्जन पाव अभागा

यदि कोई मनुष्य कष्ट उठाकर वहाँ तक पहुँच भी जाय, तो वहाँ जाते ही उसे नींदरूपी जूड़ी घेर लेती है। उसके हृदय में मूर्खतारूपी कड़ा जाड़ा ऐसा लगता है कि वहाँ पहुँचने पर भी वह अभागा स्नान नहीं कर पाता।

करि न जाइ सर मज्जन पाना ❀ फिरि आवइ समेत अभिमाना
जौं बहोरि कोउ पूछन आवा ❀ सर निंदा करि ताहि बुझावा

उससे उस सरोवर में न तो स्नान ही किया जाता है और न उसका जल ही पिया जाता है। वह अभिमान-सहित लौट आता है। फिर यदि कोई उससे वहाँ का कुछ हाल पूछने आता है, तो वह सरोवर की निन्दा करके उसे समझाता है।

सकल बिघ्न ब्यापहिं नहिं तेही ❀ राम सुकृपा बिलोकहिं जेही
सोइ सादर सर मज्जनु करई ❀ महा घोर त्रय ताप न जरई

ये सारे विघ्न उसे नहीं व्यापते, जिसे रामचन्द्रजी सुन्दर कृपा की दृष्टि से देखते हैं। वही आदरपूर्वक इस सरोवर में स्नान करता है और महा भयंकर तीनों प्रकार के (दैहिक, दैविक और भौतिक) तापों से नहीं जलता।

ते नर यह सर तजहिं न काऊ ❀ जिन्हके राम चरन भल भाऊ
जो नहाइ चह एहि सर भाई ❀ सो सतसंग करौ मन लाई

वे मनुष्य इस सरोवर को कभी नहीं छोड़ते, जिनके हृदय में रामचन्द्रजी के चरणों में सुन्दर प्रेम है। हे भाई ! जो कोई इस सरोवर में स्नान करना चाहे, वह मन लगाकर सत्संग करे।

अस मानस मानस चष[1] चाही ❀ भइ कबि बुद्धि बिमल अवगाही
भयेउ हृदयँ आनंद उछाहू ❀ उमगेउ प्रेम प्रमोद प्रबाहू

ऐसे मानसरोवर को हृदय के नेत्रों से देखकर और उसमें स्नान करके कवि

---

१. आँख।

की बुद्धि निर्मल हो गई। उसके हृदय में आनन्द और उत्साह भर गया और प्रेम और आनन्द का प्रवाह उमड़ आया।

चली सुभग कबिता सरिता सो ❀ राम बिमल जस जल भरिता सो
सरजू नाम सुमंगल मूला ❀ लोक बेद मत मंजुल कूला[1]
नदी पुनीत सुमानस नंदिनि ❀ कलि मल त्रिन तरु मूल निकंदिनि

उससे सुन्दर कवितारूपी नदी बह निकली, जिसमें रामचन्द्रजी का विमल यशरूपी जल भरा हुआ है। उस (कवितारूपी नदी) का नाम सरयू है, जो सारे सुन्दर मंगलों की जड़ है। लोकमत और वेदमत ही उसके दो सुन्दर किनारे हैं। यह मानसरोवर की कन्या सरयू नदी बड़ी ही पवित्र और कलि के पापरूपी तृणों और वृक्षों को निर्मूल करने वाली है।

दो०— श्रोता त्रिबिध समाज पुर ग्राम नगर दुहुँ कूल।
संत सभा अनुपम अवध सकल सुमंगल मूल ।३९॥

तीनों प्रकार के श्रोताओं का समाज ही सरयू नदी के दोनों किनारों पर बसे हुए पुर, गाँव और नगर हैं। सब मंगलों की जड़ संतों की सभा ही अनुपम अयोध्या है।

रामभगति सुरसरितहि जाई ❀ मिली सुकीरति सरजु सुहाई
सानुज राम समर जसु पावन ❀ मिलेउ महानदु सोन सुहावन

सुन्दर कीर्तिरूपी सुहावनी सरयू राम-भक्तिरूपी गंगा में जा मिली है। छोटे भाई लक्ष्मण-सहित श्रीरामजी के पवित्र युद्ध का यशरूपी महानद सोन उसमें आ मिला है।

जुग बिच भगति देवधुनि[2] धारा ❀ सोहति सहित सुबिरति बिचारा
त्रिबिध ताप त्रासक तिमुहानी ❀ राम सरूप सिंधु समुहानी

दोनों के बीच में भक्तिरूपी गङ्गा की धारा ज्ञान और वैराग्य सहित सुहावनी लगती है। इस प्रकार तीनों तापों को भयभीत करने वाली तीन मुंह वाली नदी रामस्वरूप सागर से मिलने के लिये जा रही है।

मानस मूल मिली सुरसरिही ❀ सुनत सुजन मन पावन करिही
बिच बिच कथा बिचित्र बिभागा ❀ जनु सरि तीर तीर बनु बागा

१. तट। २. गंगाजी।

यह सरयू नदी, जिसका मूल मानस अर्थात् रामचरित है (राम-भक्ति-रूपी) गङ्गाजी में जा मिली। सुनने वाले सज्जनों के मन को यह (कथा) पवित्र कर देती है। बीच-बीच में जो भिन्न-भिन्न प्रकार की अद्‌भुत कथायें हैं, वे ही मानों नदी-किनारे के बन और बाग हैं।

उमा महेस विवाह बराती ❀ ते जलचर अगनित बहु भाँती
रघुबर जनम अनंद बधाई ❀ भँवर तरंग मनोहरताई

शिव-पार्वती के विवाह के बराती इस नदी में भाँति-भाँति के असंख्य जल-चर जीव हैं। रामचन्द्रजी के जन्म की आनन्द बधाई ही इस नदी के भँवर और लहरों की मनोहरता है।

दो॰ बालचरित चहुँ बंधु के बनज[1] बिपुल बहुरंग।
नृप रानी परिजन सुकृत मधुकर बारि बिहंग ।४०।

चारों भाइयों के जो बाल-चरित हैं, वे ही इसमें रंग-बिरंग के बहुत-से कमल हैं। राजा दशरथ, उनकी रानियों और अन्यान्य कुटुम्बी लोगों के सत्कर्म ही भ्रमर और जल-पक्षी हैं।

सीय स्वयंबर कथा सुहाई ❀ सरित सुहावनि सो छबि छाई
नदी नाव पटु प्रस्न अनेका ❀ केवट कुसल उतर[2] सबिबेका

इसमें सीताजी के स्वयंवर की जो सुन्दर कथा है, वही इस सुहावनी नदी में शोभा छा रही है। अनेक प्रकार के विवेकपूर्ण प्रश्न ही इस नदी की नावें हैं और उनके विवेकमय उत्तर ही उन (नावों) के चतुर केवट हैं।

सुनि अनुकथन परसपर होई ❀ पथिक समाज सोह सरि सोई
घोर धार भृगुनाथ रिसानी ❀ घाट सुबद्ध राम बर बानी

इस कथा को सुनकर पीछे जो आपस में चर्चा होती हैं, वही मानो इस नदी के किनारे चलने वाले यात्रियों का समूह सोहता है। परशुरामजी का क्रोध इस नदी की भयानक धारा है और रामचन्द्रजी के श्रेष्ठ वचन ही सुन्दर बँधे हुए (पक्के) घाट हैं।

सानुज[3] राम बिबाह उछाहू ❀ सो सुभ उमंग सुखद सब काहू
कहत सुनत हरषहिं पुलकाहीं ❀ ते सुकृती मन मुदित नहाहीं

---

१. कमल। २. उत्तर, जवाब। ३. छोटे भाई सहित।

भाइयों-सहित रामचन्द्रजी के विवाह का उत्साह ही इस (कथा-नदी) की कल्याण-कारिणी बाढ़ है, जो सबको सुख देने वाली है। इसके कहने-सुनने में जो लोग पुलकायमान और आनन्दित होते हैं, वे ही पुण्यात्मा पुरुष प्रसन्न मन से स्नान करते हैं।

रामतिलक हित मंगल साजा ❋ परब जोग जनु जुरे समाजा
काई कुमति केकई केरी ❋ परी जासु फल बिपति घनेरी

रामचन्द्रजी के राज-तिलक के लिये जो मंगल-साज सजाया गया, वही इस नदी पर पर्व के दिन यात्रियों की भीड़-भाड़ है। कैकेयी की कुबुद्धि ही इस नदी में काई है, जिसके फल से घोर विपत्ति आ पड़ी।

दो० **समन अमित उतपात सब भरत चरित जप जाग।**
कलिअघ खल अवगुन कथन ते जल मल बक काग।

अनगिनत उत्पातों को शान्त करने के लिये भरत का चरित्र नदी-तट पर किया जाने वाला जप-यज्ञ है, कलियुग के पापों और दुष्टों के दोषों के जो वर्णन हैं, वे ही इस नदी के जल के कीचड़, बगुले और कौए हैं।

कीरति सरित छहूँ रितु रूरी[1] ❋ समय सुहावनि पावनि भूरी[2]
हिम हिमसैलसुता सिव ब्याहू ❋ सिसिर सुखद प्रभु जनम उछाहू

यह कीर्ति-रूपिणी नदी छहों ऋतुओं में सुन्दर और सभी समयों पर परम सुहावनी और अत्यन्त पवित्र है। इसमें शिव-पार्वतीजी का विवाह हेमंत-ऋतु है और रामचन्द्रजी का जन्मोत्सव सुख देने वाला शिशिर-ऋतु है।

बरनब राम बिबाह समाजू ❋ सो मुद मंगलमय रितुराजू
ग्रीषम दुसह राम बन गवनू ❋ पंथ कथा खर[3] आतप पवनू

इसमें रामचन्द्रजी के विवाह-समाज का वर्णन आनन्द-मंगलमय ऋतुराज बसन्त है। रामचन्द्रजी का बन-गमन ही असह्य ग्रीष्म-ऋतु है और मार्ग की कथा ही कड़ी धूप और लू है।

बरषा घोर निसाचर रारी[4] ❋ सुरकुल सालि सुमंगलकारी
राम राज सुख बिनय बड़ाई ❋ बिसद सुखद सोइ सरद सोहाई

राक्षसों के साथ घोर युद्ध ही वर्षा-ऋतु है, जो देवताओं के कुलरूपी धान

१. सुन्दर। २. बहुत। ३. कड़ी। ४. युद्ध।

के लिये सुन्दर कल्याण करने वाली है। रामचन्द्रजी के राज्य में जो सुख, सुनीति और प्रशंसा है वही सुख देने वाली निर्मल शरद-ऋतु है।

सती सिरोमनि सिय गुन गाथा ❀ सोइ गुन अमल अनूपम पाथा
भरत सुभाउ सुसीतलताई ❀ सदा एक रस बरनि न जाई

सती-शिरोमणि सीताजी के गुणों की जो कथा है, वही इसके जल का निर्मल और अनुपम गुण है। भरतजी का स्वभाव इस नदी की सुन्दर शीतलता है, जो सदा एक-सी रहती है और जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

दो० **अवलोकनि[1] बोलनि मिलनि प्रीति परसपर हास।**
भायप भलि चहुँ बंधु की जल माधुरी सुबास ॥४२॥

चारों ओर भाइयों का परस्पर देखना, बोलना, मिलना, परस्पर स्नेह करना, हँसना और सुन्दर भाईपन इस जल की मिठास और सुगन्ध है।

आरति बिनय दीनता मोरी ❀ लघुता ललित सुबारि न खोरी
अदभुत सलिल सुनत गुनकारी ❀ आस पिआस मनोमल हारी

मेरी आर्ति, विनती और दीनता ही इस सुन्दर स्वच्छ जल का हलकापन है; पर अच्छे जल का हल्का होना कोई दोष नहीं है। यह जल बड़ा ही अनोखा है कि सुनते ही गुण करता है और आशारूपी प्यास और मन के मैल को दूर कर देता है।

राम सुप्रेमहि पोषत पानी ❀ हरत सकल कलि कलुष गलानी
भव श्रम सोषक तोषक तोषा ❀ समन दुरित दुख दारिद दोषा

यह जल रामचन्द्रजी के सुन्दर प्रेम को पुष्ट करता है और कलियुग के सब पापों को और उनसे उत्पन्न ग्लानि को हर लेता है। यह जल संसार की थकावट को सोख लेता है, सन्तोष को भी संतुष्ट करता है और पाप, दुःख दरिद्रता और दोषों को नष्ट करता है।

काम कोह मद मोह नसावन ❀ बिमल बिबेक बिराग बढ़ावन
सादर मज्जन पान किए तें ❀ मिटहिं पाप परिताप हिए तें

यह जल काम, क्रोध, मद और मोह को नष्ट करने वाला और निर्मल,

---

१. देखना।

ज्ञान और वैराग्य का बढ़ाने वाला है। इसमें आदर-सहित स्नान करने और इसे पीने से हृदय के सारे पाप और दुःख मिट जाते हैं।

जिन्ह एहि बारि न मानस धोए ❀ ते कायर कलिकाल बिगोए[1]
त्रिषित निरखि रबिकर भव बारी ❀ फिरिहहिं मृग जिमि जीव दुखारी

जिन्होंने इस जल से अपना हृदय नहीं धोया, वे कायर कलिकाल द्वारा ठगे गये या बिगाड़े गये। जैसे प्यासा हिरन सूर्य की किरणों के पड़ने से रेत पर जल का भ्रम (मरीचिका) देखकर दौड़ता है, वैसे ही वे कलियुग से ठगे हुए मनुष्य भी (संसारी विषयों के पीछे भटक कर) दुःखी होंगे।

दो० मति अनुहारि सुबारि गुन गन गनि मन अन्हवाइ।
सुमिरि भवानी संकरहि कह कबि कथा सुहाइ ॥४३॥(१)

अपनी बुद्धि के अनुसार सुन्दर जल के गुणों को गिनाकर इस सुन्दर जल में अपने मन को स्नान कराकर और पार्वती-महादेवजी को स्मरण करके कवि (तुलसीदास) सुन्दर कथा कहता है।

अब रघुपति पद पंकरुह[2] हिअ धरि पाइ प्रसाद।
कहौं जुगल मुनिबर्य कर मिलन सुभग संबाद ॥४३॥(२)

मैं अब रामचन्द्रजी के चरण-कमलों को हृदय में धारण कर और उनका प्रसाद पाकर दोनों मुनिवरों के मिलने का सुन्दर संवाद वर्णन करता हूँ।

भरद्वाज मुनि बसहिं प्रयागा ❀ तिन्हहिं राम पद अति अनुरागा
तापस सम दम दया निधाना ❀ परमारथ पथ परम सुजाना

भरद्वाज मुनि प्रयाग में बसते हैं। रामचन्द्रजी के चरणों में उनका बहुत ही प्रेम है। वे तपस्वी, शान्त, जितेन्द्रिय, दया के निधान और परमार्थ के मार्ग में बड़े ही चतुर हैं।

माघ मकरगत रबि जब होई ❀ तीरथपतिहि आव सब कोई
देव दनुज किन्नर नर स्त्रेनी ❀ सादर मज्जहिं सकल त्रिबेनी

माघ के महीने में जब सूर्य मकर-राशि में आते हैं, तब सब कोई तीर्थराज (प्रयाग) में आते हैं। देव, दैत्य, किन्नर और मनुष्यों के झुण्ड सभी आदर पूर्वक त्रिवेणी में स्नान करते हैं।

---

१. बिगाड़ दिया, ठगे गये। २. कमल।

पूजहिं माधव पद जलजाता[1] ❀ परसि अखयबटु हरषहिं गाता
भरद्वाज आश्रम अति पावन ❀ परम रम्य मुनिवर मन भावन

वेणी-माधवजी के चरण-कमलों की पूजा करते हैं और अक्षयवट को छूकर उनके शरीर पुलकित होते हैं। भरद्वाज मुनि का आश्रम बहुत ही पवित्र परम रमणीय और श्रेष्ठ मुनियों के मन को भाने वाला है।

तहाँ होइ मुनि रिषय समाजा ❀ जाहिं जे मज्जन तीरथराजा
मज्जहिं प्रात समेत उछाहा ❀ कहहिं परसपर हरि गुन गाहा

प्रयाग में जो स्नान करने जाते हैं, भरद्वाजजी के आश्रम में उन ऋषि-मुनियों का जमाव होता है। प्रातःकाल सब उत्साह-सहित स्नान करते हैं और फिर आपस में भगवान् के गुणों की कथायें कहते हैं।

दो॰ ब्रह्म निरूपन धर्म बिधि बरनहिं तत्त्व बिभाग।
कहहिं भगति भगवंत कै संजुत ग्यान बिराग ।४४।

ब्रह्म का विचार, धर्म का विधान और तत्वों के विभाग का वर्णन करते और ज्ञान और वैराग्य से संयुक्त भगवद्-भक्ति की चर्चा करते हैं।

एहि प्रकार भरि माघ नहाहीं ❀ पुनि सब निज निज आस्रम जाहीं
प्रति संबत अति होइ अनंदा ❀ मकर मज्जि[2] गवनहिं मुनिबृन्दा

इस प्रकार वे माघ के महीने भर स्नान करते हैं और फिर अपने-अपने आश्रमों को चले जाते हैं। इसी तरह वहाँ हर साल बहुत ही आनन्द होता है। मकरभर स्नान करके मुनि-गण चले जाते हैं।

एक बार भरि मकर नहाए ❀ सब मुनीस आस्रमन्ह सिधाए
जागबलिक मुनि परम बिबेकी ❀ भरद्वाज राखे पद टेकी

एक बार माघभर स्नान करके सब मुनीश्वर अपने-अपने आश्रमों को लौट गये; परन्तु परम ज्ञानी याज्ञवल्क्य मुनि के चरण पकड़कर भरद्वाजजी ने उन्हें रोक लिया।

सादर चरन सरोज[3] पखारे ❀ अति पुनीत आसन बैठारे
करि पूजा मुनि सुजसु बखानी ❀ बोले अति पुनीत मृदु बानी

---

१. कमल। २. नहाकर। ३. कमल।

भरद्वाजजी ने आदर-सहित उनके चरण-कमल धोये और बहुत पवित्र आसन पर उन्हें बैठाया। पूजा करके मुनि के यश का वर्णन किया और फिर अत्यंत पवित्र और कोमल वाणी से बोले—

नाथ एक संसउ बड़ मोरें ❀ करगत बेदतत्त्व सबु तोरें
कहत सो मोहिं लागत भय लाजा ❀ जौं न कहौं बड़ होइ अकाजा

हे नाथ! मेरे हृदय में एक बड़ा सन्देह है, वेदों का सब तत्व आपके हाथों में है। उस सन्देह को कहते हुये मुझे भय और लज्जा मालूम होती है। पर न कहूँ तो भी बड़ी हानि होगी।

दो॰ संत कहहिं अस नीति प्रभु श्रुति पुरान मुनि गाव।
होइ न बिमल बिबेक उर गुर सन किए दुराव[१] ।४५।

हे प्रभो! सन्तजन ऐसी नीति कहते हैं और वेद-पुराण तथा मुनि भी यही बतलाते हैं कि गुरु के साथ छिपाव रखने से हृदय में निर्मल ज्ञान नहीं होता।

अस बिचारि प्रगटउँ निज मोहू ❀ हरहु नाथ करि जन पर छोहू
राम नाम कर अमित प्रभावा ❀ संत पुरान उपनिषद गावा

यही सोचकर मैं अपना अज्ञान प्रकट करता हूँ। हे नाथ! आप इस दास पर कृपा करके इस सन्देह को दूर कीजिये। संत, पुराण और उपनिषद् ने राम-नाम के असीम प्रभाव का गान किया है।

संतत[२] जपत संभु अबिनासी ❀ सिव भगवान ग्यान गुन रासी
आकर चारि जीव जग अहहीं ❀ कासी मरत परम पद लहहीं

जिसको नित्य कल्याण-स्वरूप, अविनाशी और ज्ञान और गुणों की राशि भगवान् शंकर जपते हैं। संसार में जीवों की चार जातियाँ हैं। काशी में मर कर सब परम पद को प्राप्त करते हैं।

सोपि राम महिमा मुनिराया ❀ सिव उपदेसु करत करि दाया
रामु कवन प्रभु पूछउँ तोहीं ❀ कहिअ बुझाइ कृपानिधि मोहीं

हे मुनिराज! सो यह भी राम (नाम) ही की महिमा है; शिवजी दया करके जिसका उपदेश करते हैं। हे प्रभो! मैं आपसे पूछता हूँ कि वे राम कौन हैं? हे कृपासागर! मुझे समझा कर कहिये।

---

१. छिपाव। २. सदा, नित्य।

एक राम अवधेस कुमारा ❀ तिन्ह कर चरित विदित संसारा
नारि बिरह दुखु लहेउ अपारा ❀ भयउ रोषु रन रावनु मारा

एक राम तो अवध के राजा दशरथजी के पुत्र हैं। उनका चरित सारे जगत् में विख्यात है। उन्होंने स्त्री के वियोग में अपार दुःख पाया था और क्रोध आने पर युद्ध में रावण को मार डाला था।

दो० प्रभु सोइ राम कि अपर कोउ जाहि जपत त्रिपुरारि[1]।
सत्यधाम सर्वज्ञ तुम्ह कहहु बिबेकु बिचारि ॥४६॥

हे प्रभो! वही राम हैं या और कोई दूसरे हैं, जिनको शिवजी जपते हैं? आप सत्य के धाम और सब जानने वाले हैं, अपने ज्ञान से विचार कर कहिये।

जैसे मिटइ मोर भ्रम भारी ❀ कहहु सो कथा नाथ बिस्तारी
जागबलिक बोले मुसुकाई ❀ तुम्हहिं बिदित रघुपति प्रभुताई

हे नाथ! जिस तरह मेरा भारी भ्रम मिट जाय, आप वही कथा विस्तार से कहिये। इस पर याज्ञवल्क्यजी मुस्कुराकर बोले—तुम रामचन्द्रजी की प्रभुता को जानते हो।

राम भगत तुम्ह मन क्रम बानी ❀ चतुराई तुम्हारि मैं जानी
चाहहु सुनइ रानगुन गूढ़ा ❀ कीन्हिहु प्रस्न मनहुँ अति मूढ़ा

तुम मन, कर्म और वाणी से राम के भक्त हो। मैं तुम्हारी चतुराई जानता हूँ। तुम राम के रहस्यमय गुणों को सुनना चाहते हो। इसी से तुमने इस तरह से पूछा है, मानो बड़े अनजान हो।

तात सुनहु सादर मन लाई ❀ कहउँ राम कै कथा सुहाई
महा मोह महिषेसु बिसाला ❀ राम कथा कालिका कराला

हे तात! तुम आदरपूर्वक मन लगाकर सुनो। मैं राम की सुहावनी कथा कहता हूँ। बड़ा भारी अज्ञान विशाल महिषासुर है, राम की कथा भयंकर काली जी हैं।

रामकथा ससि किरन समाना ❀ सन्त चकोर करहिं जेहि पाना
ऐसेइ संसय कीन्ह भवानी ❀ महादेव तब कहा बखानी

---

१. शिव।

राम की कथा चन्द्रमा की किरणों के समान है, जिसे सन्तरूपी चकोर पान करते हैं। ऐसा ही सन्देह पार्वती जी ने भी किया था। तब महादेवजी ने उनसे विस्तारपूर्वक कहा था।

दो॰— कहउँ सो मति अनुहारि अब उमा सम्भु सम्वाद।
भयेउ समय जेहि हेतु जेहि सुनु मुनि मिटिहि विषाद।

मैं अब अपनी बुद्धि के अनुसार उमा और शिवजी का संवाद कहता हूँ। वह जिस समय और जिस हेतु से हुआ, हे मुनि! उसे सुनो, तुम्हारा विषाद नष्ट हो जायगा।

एक बार त्रेता जुग माहीं ❀ संभु गए कुंभज ऋषि पाहीं
संग सती जगजननि भवानी ❀ पूजे रिषि अखिलेस्वर जानी

एक बार त्रेता युग में शिवजी अगस्त्य ऋषि के पास गये थे। उनके साथ जगत्-जननी सतीजी भी थीं। ऋषि ने उनको सारे जगत् का ईश्वर जानकर उन का पूजन किया।

रामकथा मुनिबर्ज बखानी ❀ सुनी महेस परम सुखु मानी
रिषि पूछी हरिभगति सुहाई ❀ कही संभु अधिकारी पाई

मुनिवर अगस्त्य ने राम-कथा विस्तार से कही, जिसे शिवजी ने बहुत सुख मानकर सुना। फिर ऋषिजी ने शिवजी से सुन्दर हरि-भक्ति पूछी और शिवजी ने उनको अधिकारी पाकर (भक्ति की सब बातें) कहीं।

कहत सुनत रघुपति गुन गाथा ❀ कछु दिन तहाँ रहे गिरिनाथा[1]
मुनि सन बिदा माँगि त्रिपुरारी ❀ चले भवन संग दच्छकुमारी

रामचन्द्रजी के गुणों की कथा कहते-सुनते शिवजी कुछ दिनों तक वहाँ रहे। फिर मुनि से विदा माँगकर शिवजी दक्ष की कन्या भवानी के साथ घर (कैलाश) को चले।

तेहि अवसर भंजन महिभारा ❀ हरि रघुबंस लीन्ह अवतारा
पिता बचन तजि राजु उदासी ❀ दंडक बन बिचरत अबिनासी

उन्हीं दिनों पृथ्वी का भार उतारने के लिये विष्णु भगवान् ने रघुकुल में

---

१. शिव।

अवतार लिया था। वे अविनाशी भगवान पिता के वचन से राजपाट छोड़कर, तपस्वी वेश में दण्डक-वन में विचर रहे थे।

सो० हृदयँ बिचारत जात हर केहि बिधि दरसनु होइ।
गुप्त रूप अवतरेउ प्रभु गयें[1] जान सब कोइ ।४८। (१)

शिवजी अपने मन में विचारते जाते थे कि रामचन्द्रजी के दर्शन मुझे किस प्रकार हों। प्रभु ने गुप्त रूप से अवतार लिया है, मेरे जाने से सब कोई उन्हें जान जायँगे।

सो० संकर उर अति छोभु सती न जानइ मरमु सोइ।
तुलसी दरसन लोभु मन डरु लोचन लालची ॥४८॥[2]

महादेवजी के मन में बड़ी खलबली मच गई थी, परन्तु सतीजी इस भेद को न जानती थीं। तुलसीदास कहते हैं कि शङ्करजी राम के समीप जाने से मन में डरते थे; पर दर्शन के लोभ से उनके नेत्र ललचा रहे थे।

रावन मरन मनुज कर जाँचा ❀ प्रभु बिधि बचनु कीन्ह चह साँचा
जौं नहिं जाउँ रहइ पछितावा ❀ करत बिचारु न बनत बनावा

रावण ने (ब्रह्मा से) अपनी मृत्यु मनुष्य के हाथ से माँगी थी। ब्रह्मा की बात को प्रभु सत्य किया चाहते हैं। जो नहीं जाता हूँ, तो जी में पछतावा बना रहेगा। इस तरह शिवजी विचार करते थे, पर कोई बात उनके मन में ठीक बैठती न थी।

एहि बिधि भये सोच बस ईसा ❀ तेही समय जाइ दससीसा
लीन्ह नीच मारीचहिं संगा ❀ भयउ तुरत सोइ कपट कुरंगा

इस प्रकार महादेवजी चिन्ता के वश में हुए। उसी समय रावण ने जाकर नीच मारीच को साथ लिया और वह तुरन्त कपट-मृग बन गया।

करि छलु मूढ़ हरी बैदेही ❀ प्रभु प्रभाउ तस बिदित न तेही
मृग बधि बंधु सहित हरि आये ❀ आश्रमु देखि नयन जल छाये

उस मूर्ख ने छल करके सीताजी को हर लिया। वह रामचन्द्रजी की वास्तविक महिमा को नहीं जानता था। मृग को मारकर रामचन्द्रजी भाई-सहित आश्रम में आये। वहाँ सीताजी को न देखकर उनकी आँखों में आँसू भर आये।

---

१. जाने से। २. शिवजी।

बिरह बिकल नर इव¹ रघुराई ❀ खोजत बिपिन फिरत दोउ भाई
कबहूँ जोग बियोग न जाकें ❀ देखा प्रगट बिरह दुखु ताकें

रामचन्द्रजी मनुष्यों की भाँति विरह से व्याकुल हैं। दोनों भाई वन में सीता को ढूँढ़ते फिरने लगे। जिनको कभी संयोग-वियोग नहीं होता, उनमें विरह का दुख प्रत्यक्ष देखा गया।

दो० अति बिचित्र रघुपति चरित जानहिं परम सुजान।
जे मतिमंद बिमोह बस हृदयँ धरहिं कछु आन²॥४९॥

रामचन्द्रजी का चरित बड़ा ही विलक्षण है। इसे बड़े ज्ञानी ही जानते हैं। जो मन्दबुद्धि हैं, वे अज्ञान के वश में मन में कुछ और ही समझ बैठते हैं।

संभु समय तेहि रामहिं देखा ❀ उपजा हियँ अति हरषु बिसेखा
भरि लोचन छबिसिंधु निहारी ❀ कुसमय जानि न कीन्ह चिन्हारी³

शिवजी ने उस समय रामचन्द्रजी को देखा और उनके मन में बहुत बड़ा आनन्द उत्पन्न हुआ। उन शोभा के समुद्र (रामचन्द्रजी) को शिवजी ने नेत्र भरकर देखा। पर मौक़ा ठीक न समझकर उन्होंने उनसे परिचय नहीं किया।

जय सच्चिदानन्द जग पावन ❀ अस कहि चलेउ मनोज नसावन
चले जात सिव सती समेता ❀ पुनि पुनि पुलकत कृपानिकेता

"जगत् को पवित्र करने वाले सच्चिदानन्द की जय हो" ऐसा कहकर कामदेव का नाश करने वाले (शिवजी) चल पड़े। कृपा-निधान शिवजी बार-बार आनन्द से पुलकित होते हुए सतीजी के साथ चले जा रहे थे।

सती सो दसा संभु कै देखी ❀ उर उपजा संदेहु बिसेखी
सङ्कर जगतबंद्य जगदीसा ❀ सुर नर मुनि सब नावत सीसा

सतीजी ने महादेवजी की वह दशा देखी तो उनके मन में बड़ा सन्देह हुआ। (वे मन ही मन कहने लगीं) सारा जगत् तो शिवजी की वन्दना करता है, वे जगत् के ईश्वर हैं, उनको देवता, मनुष्य, मुनि सब सिर नवाते हैं।

तिन्ह नृपसुतहिं कीन्ह परनामा ❀ कहि सच्चिदानंद परधामा
भये मगन छबि तासु बिलोकी⁴ ❀ अजहुँ प्रीति उर रहति न रोकी

---

१. समान। २. अन्य, दूसरा। ३. परिचय। ४. देखकर।

उन्होंने एक राजपुत्र को सच्चिदानन्द और परमधाम कहकर प्रणाम किया और उसकी छवि देखकर वे इतने मगन हुये कि अब तक उनके हृदय में प्रीति रोकने से भी नहीं रुकती।

दो॰ ब्रह्म जो ब्यापक बिरज[1] अज अकल अनीह अभेद।
सो कि देह धरि होइ नर जाहि न जानत बेद ॥५०॥

जो ब्रह्म सब में व्याप्त, माया-रहित, अजन्मा, अगोचर, इच्छा और भेद से रहित है और जिसे वेद भी नहीं जानते, वह क्या देह धारण करके मनुष्य हो सकता है ?

बिष्नु जो सुर हित नरतनु धारी ❀ सोउ सर्बग्य जथा त्रिपुरारी
खोजइ सो कि अग्य इव नारी ❀ ग्यानधाम श्रीपति असुरारी

जो विष्णु भगवान् देवताओं के हित के लिये मनुष्य-शरीर धारण करते हैं, वे भी शिवजी के समान सर्वज्ञ हैं। वे ज्ञान के भण्डार, लक्ष्मीपति और असुरों के शत्रु विष्णु, अज्ञानी की तरह स्त्री को कैसे खोजेंगे ?

संभु गिरा पुनि मृषा[2] न होई ❀ सिव सर्बग्य जान सब कोई
अस संसय मन भयउ अपारा ❀ होइ न हृदय प्रबोध प्रचारा

फिर शिवजी के वचन भी झूठे नहीं हो सकते। सब कोई जानते हैं कि शिवजी सर्वज्ञ हैं। ऐसी अपार शङ्का सती के हृदय में उठी। किसी तरह भी उनके हृदय में ज्ञान का प्रसार नहीं होता था।

जद्यपि प्रगट न कहेउ भवानी ❀ हर अंतरजामी सब जानी
सुनहु सती तव नारि सुभाऊ ❀ संसय अस न धरिय उर काऊ[3]

यद्यपि भवानी ने प्रकट नहीं कहा, पर अन्तर्यामी शिवजी सब जान गये। वे बोले—हे सती! सुनो, तुम्हारा स्वभाव स्त्री का है। ऐसा सन्देह मन में कभी न रखना चाहिये।

जासु कथा कुम्भज रिषि गाई ❀ भगति जासु मैं मुनिहिं सुनाई
सोइ मम इष्टदेव रघुबीरा ❀ सेवत जाहि सदा मुनि धीरा

जिनकी कथा का गान कुम्भज (अगस्त्य) ऋषि ने किया और जिनकी

१. माया-रहित। २. मिथ्या। ३. कभी।

भक्ति मैंने मुनि को सुनाई, ये वही मेरे इष्टदेव रामचन्द्रजी हैं, जिनकी सेवा ज्ञानी मुनि सदा किया करते हैं।

छंद—मुनि धीर जोगी सिद्ध संतत बिमल मन जेहि ध्यावहीं।
कहि नेति निगम[1] पुरान आगम[2] जासु कीरति गावहीं।
सोइ रामु ब्यापक ब्रह्म भुवन निकाय पति माया धनी।
अवतरेउ अपने भगत हित निज तंत्र नित रघुकुल मनी।

ज्ञानी मुनि, योगी और सिद्ध निरन्तर शुद्धचित्त से जिनका ध्यान करते हैं; वेद, पुराण और शास्त्र 'नेति-नेति' कहकर जिनकी कीर्त्ति गाते हैं; उन्हीं सर्वव्यापक, समस्त ब्रह्माण्डों के स्वामी, माया-पति, नित्य परम स्वतंत्र, ब्रह्मरूप रघुकुल में मणि-स्वरूप भगवान् रामचन्द्रजी ने अपने भक्तों के हित के लिये, अपनी इच्छा से अवतार लिया है।

सो०—लाग न उर उपदेसु जदपि कहेउ सिव बार बहु।
बोले बिहँसि महेसु हरि माया बलु जानि जिय ॥५१॥

यद्यपि शिवजी ने अनेक बार कहा, तो भी सतीजी के हृदय में उनका उपदेश नहीं बैठा। तब शिवजी मन में भगवान् की माया का बल जानकर मुस्कराते हुये बोले—

जौं तुम्हरे मन अति संदेहू ❀ तौ किन जाइ परीछा लेहू
तब लगि बैठ अहौं[3] बट छाँहीं ❀ जब लगि तुम्ह ऐहहु मोहिं पाहीं[4]

जो तुम्हारे मन में बहुत सन्देह है, तो तुम जाकर परीक्षा क्यों नहीं लेतीं; जब तक तुम मेरे पास लौट न आओ तबतक मैं इसी बड़ की छाँह में बैठा हूँ।

जैसे जाइ मोह भ्रम भारी ❀ करेहु सो जतन बिबेकु बिचारी
चलीं सती सिव आयसु पाई ❀ करइ बिचारु करउँ का भाई

जिस प्रकार तुम्हारा अज्ञान से उत्पन्न यह भारी भ्रम दूर हो, तुम वही यत्न सोच-समझ कर करना। शिवजी की आज्ञा पाकर सती (रामचन्द्रजी की परीक्षा लेने के लिये) चलीं और मन में सोचने लगीं—भाई! क्या करूँ?

१. वेद। २. शास्त्र। ३. हूँ। ४. पास।

इहाँ संभु अस मन अनुमाना ❀ दच्छसुता कहुँ नहिं कल्याना
मोरेहु कहे न संसय जाहीं ❀ बिधि बिपरीत भलाई नाहीं

इधर शिवजी ने मन में ऐसा अनुमान किया कि दक्ष की पुत्री सती का कुशल नहीं है। जब मेरे समझाने से भी सन्देह दूर नहीं होता, तब तो विधाता ही उलटे हैं। अब सती का कुशल नहीं है।

होइहि सोइ जो राम रचि राखा ❀ को करि तरक बढ़ावइ साखा
अस कहि लगे जपन हरिनामा ❀ गईं सती जहँ प्रभु सुखधामा

जो कुछ राम ने रच रक्खा है, वही होगा। तर्क-वितर्क करके कौन बात बढ़ाये। ऐसा कहकर शिवजी भगवान् का नाम जपने लगे और सती वहाँ गईं, जहाँ सुख के धाम प्रभु रामचन्द्रजी थे।

दो॰ पुनि पुनि हृदय बिचारु करि धरि सीता कर रूप।
आगे होइ चलि पंथ तेहि जेहि आवत नरभूप ।५२॥

सती बार-बार मन में विचार कर और सीताजी का रूप धारण करके उस राह में आगे होकर चलीं, जिस राह से मनुष्यों के राजा रामचन्द्रजी आ रहे थे।

लछिमन दीख उमा कृत बेषा ❀ चकित भये भ्रम हृदयँ बिसेषा
कहि न सकत कछु अति गंभीरा ❀ प्रभु प्रभाउ जानत मतिधीरा

सती के बनावटी रूप को लक्ष्मणजी ने देखा, जिससे उनके हृदय में बड़ा भ्रम हो गया और वे चकित हुये। वे बहुत गम्भीर हो गये; कुछ कह नहीं सकते थे; क्योंकि धीर बुद्धि लक्ष्मण रामचन्द्रजी के प्रभाव को जानते थे।

सती कपटु जानेउ सुरस्वामी ❀ सबदरसी सब अंतरजामी
सुमिरत जाहि मिटइ अग्याना ❀ सोइ सरबग्य राम भगवाना

सती के कपट को देवताओं के स्वामी रामचन्द्रजी जान गये; क्योंकि वे सब कुछ देखने वाले और सबके हृदय की बात जानने वाले हैं। जिनके स्मरण-मात्र से अज्ञान का नाश हो जाता है; वही सर्वज्ञ भगवान् रामचन्द्रजी हैं।

सती कीन्ह चह तहहुँ दुराऊ[1] ❀ देखहु नारि सुभाउ प्रभाऊ
निज माया बलु हृदयँ बखानी ❀ बोले बिहँसि राम मृदु बानी

---

१. छिपाव।

स्त्री के स्वभाव का प्रभाव तो देखो कि सती ने वहाँ उन सर्वज्ञ के सामने भी छिपाव करना चाहा। अपनी माया के बल को हृदय में बखानकर, हँसकर, कोमल वाणी से रामचन्द्रजी बोले—

जोरि पानि[1] प्रभु कीन्ह प्रनामू ❁ पिता समेत लीन्ह निज नामू
कहेउ बहोरि कहाँ बृषकेतू ❁ बिपिन अकेलि फिरहु केहि हेतू

पहले प्रभु रामचन्द्रजी ने हाथ जोड़कर सती को प्रणाम किया और पिता सहित अपना नाम लिया। फिर कहा कि शिवजी कहाँ हैं? आप यहाँ वन में अकेली किस लिये फिर रही हो?

दो० राम बचन मृदु गूढ़ सुनि उपजा अति संकोचु।
सती सभीत[2] महेस पहिं चलीं हृदयँ बड़ सोचु।५३।

रामचन्द्रजी के कोमल और गूढ़ वचन सुनकर सती को बड़ा संकोच हुआ। वे डरती हुई शिवजी के पास चलीं, उनके हृदय में बड़ी चिंता हो गई।

मैं संकर कर कहा न माना ❁ निज अग्यानु राम पर आना
जाइ उतरु अब देहउँ काहा ❁ उर उपजा अति दारुन दाहा

मैंने शङ्करजी का कहना नहीं माना और अपनी नासमझी रामचन्द्रजी पर प्रकट की। अब जाकर मैं शिवजी को क्या उत्तर दूंगी? यह सोचकर सतीजी के हृदय में भयानक जलन उत्पन्न हुई।

जाना राम सती दुखु पावा ❁ निज प्रभाउ कछु प्रगटि जनावा
सती दीख कौतुक मग जाता ❁ आगे राम सहित श्री भ्राता

रामचन्द्रजी ने जान लिया कि सतीजी को दुःख हुआ। तब उन्होंने अपना कुछ प्रभाव प्रकट करके दिखाया। सती ने मार्ग में जाते समय यह कौतुक देखा कि रामचन्द्रजी लक्ष्मण और सीता-सहित आगे चले जा रहे हैं।

फिरि चितवा पाछें प्रभु देखा ❁ सहित बंधु सिय सुन्दर वेषा
जहँ चितवहिं तहँ प्रभु आसीना[3] ❁ सेवहिं सिद्ध मुनीस प्रवीना

उन्होंने पीछे की ओर फिरकर देखा, तो भाई लक्ष्मण और सीताजी के साथ रामचन्द्रजी को सुन्दर वेष में पाया। वे जिधर देखती हैं, उधर ही रामचन्द्रजी विराजमान हैं और प्रवीण सिद्ध मुनि उनकी सेवा कर रहे हैं।

---

१. हाथ। २. डर सहित। ३. बैठे हुये, विराजमान।

देखे सिव विधि बिष्नु अनेका ❀ अमित प्रभाउ एक तें एका
बंदत चरन करत प्रभु सेवा ❀ बिबिध बेष देखे सब देवा

सती ने अनेक शिव, ब्रह्मा और विष्णु भी देखे, जो एक से एक बढ़कर असीम प्रभाव वाले थे। उन्होंने देखा कि तरह-तरह के वेष धारण करके सभी देवता रामचन्द्रजी की चरण-वन्दना और सेवा कर रहे हैं।

दो० सती बिधात्री[1] इंदिरा[2] देखी अमित अनूप।
जेहि जेहि बेष अजादि[3] सुर तेहि तेहि तन अनुरूप ५४

उन्होंने बहुत-सी सती, सरस्वती और लक्ष्मी देखीं, जो अनुपम थीं। जिस-जिस वेष में ब्रह्मादि देवता थे, उन्हीं के अनुकूल वेष में वे भी थीं।

देखे जहँ तहँ रघुपति जेते ❀ सक्तिन्ह सहित सकल सुर तेते
जीव चराचर जो संसारा ❀ देखे सकल अनेक प्रकारा

सती ने जहाँ-तहाँ जितने रामचन्द्र देखे, उन्हीं के साथ शक्तियों के सहित उतने ही सारे देवताओं को भी देखा। संसार में जितने चराचर जीव हैं, वे भी वहाँ अनेक प्रकार के देखे।

पूजहिं प्रभुहिं देव बहु बेखा ❀ राम रूप दूसर नहिं देखा
अवलोके रघुपति बहुतेरे ❀ सीता सहित न बेष घनेरे

अनेक वेष धारण किये हुए देवता रामचन्द्रजी का पूजन कर रहे हैं। परन्तु रामचन्द्रजी का दूसरा रूप कहीं नहीं देखा। सीता-सहित रामचन्द्रजी भी बहुत-से देखे, पर उनके वेष अनेक नहीं थे।

सोइ रघुबर सोइ लछिमनु सीता ❀ देखि सती अति भई सभीता
हृदय कंप तन सुधि कछु नाहीं ❀ नयन मूंदि बैठी मग माहीं

वही रामचन्द्रजी, वही लक्ष्मणजी और वही सीताजी। ऐसा देखकर सती बहुत डर गईं। उनका हृदय काँपने लगा और तन की सारी सुध-बुध जाती रही। वे आँख मूंदकर मार्ग में बैठ गईं।

बहुरि बिलोकेउ नयन उघारी ❀ कछु न दीख तहँ दच्छकुमारी
पुनि पुनि नाइ राम पद सीसा ❀ चलीं तहाँ जहँ रहे गिरीसा[4]

---

१. सरस्वती। २. लक्ष्मी। ३. ब्रह्मा आदि। ४. शिवजी।

फिर आँख खोलकर देखा, तो दक्ष-कुमारी सती को वहाँ कुछ भी न देख पड़ा। वे बारम्बार रामचन्द्रजी के चरणों को सिर नवाकर वहाँ चलीं, जहाँ शिवजी थे।

दो०—गईं समीप महेस तब हँसि पूछी कुसलात।
लीन्हि परीक्षा कवन बिधि कहहु सत्य सब बात॥५५॥

जब पास पहुँचीं, तब शिवजी ने उनसे हँसकर कुशल-प्रश्न पूछा और कहा—तुमने किस तरह परीक्षा ली, सत्य-सत्य सब बातें कहो।

सतीं समुझि रघुबीर प्रभाऊ ❀ भय बस सिव सन कीन्ह दुराऊ
कछु न परीछा लीन्हि गोसाईं ❀ कीन्ह प्रनामु तुम्हारिहि नाईं

सती ने रामचन्द्रजी के प्रभाव को समझकर डर के मारे महादेवजी से छिपाव किया और कहा—स्वामिन्! मैंने कुछ भी परीक्षा नहीं ली। आपही की तरह मैंने भी उन्हें प्रणाम किया।

जो तुम्ह कहा सो मृषा न होई ❀ मोरे मन प्रतीति अस सोई
तब संकर देखेउ धरि ध्याना ❀ सती जो कीन्ह चरित सबु जाना

आपने जो कहा वह झूठ नहीं हो सकता, मेरे मन में ऐसा विश्वास होता है। तब शिवजी ने ध्यान करके देखा और सती ने जो चरित किया था, सब जान लिया।

बहुरि राममायहि सिरु नावा ❀ प्रेरि[1] सतिहि जेहि झूँठ कहावा
हरि इच्छा भावी बलवाना ❀ हृदय बिचारत संभु सुजाना

फिर उन्होंने रामचन्द्रजी की माया को प्रणाम किया, जिसने प्रेरणा करके सती के मुंह से झूठ कहला दिया। सुजान महादेवजी ने अपने जी में विचार किया कि हरि की इच्छारूपी भावी बड़ी प्रबल है। अर्थात् भगवान् जो चाहते हैं, वही होता है और जो होनहार होता है, वह होकर रहता है।

सती कीन्ह सीता कर बेषा ❀ सिव उर भयउ बिषाद बिसेषा
जौं अब करउँ सती सन प्रीती ❀ मिटइ भगति पथ होइ अनीती

सती ने सीता का वेष धारण किया, यह जानकर शिवजी के हृदय में

१. प्रेरणा करके।

बड़ा खेद हुआ। उन्होंने सोचा, जो अब मैं सती से प्रीति करता हूँ, तो भक्ति-मार्ग मिटता है और बड़ा अनर्थ होता है।

दो०-परम पुनीत न जाइ तजि किऐं प्रेम बड़ पाप।
प्रगटि न कहत महेसु कछु हृदयँ अधिक संताप॥५६॥

सती परम पवित्र हैं, इसलिये इनको छोड़ा भी नहीं जा सकता और प्रेम करने में भी बड़ा पाप है। प्रकट रूप से महादेवजी कुछ नहीं कहते हैं; पर उनके हृदय में बड़ा दुःख है।

तब संकर प्रभु पद सिरु नावा ❁ सुमिरत रामु हृदयँ अस आवा
एहिं तन सतिहि भेंट मोहि नाहीं ❁ सिव संकल्पु[1] कीन्ह मन माहीं

तब शिवजी ने प्रभु रामचन्द्रजी के चरणों में सिर नवाया और उनको स्मरण करते ही मन में यह आया कि सती के अपने इस शरीर से मेरी भेंट नहीं हो सकती। शिवजी ने अपने मन में यह सङ्कल्प कर लिया।

अस बिचारि संकर मतिधीरा ❁ चले भवन सुमिरत रघुबीरा
चलत गगन[2] भइ गिरा[3] सुहाई ❁ जय महेस भलि भगति दृढ़ाई

ऐसा विचार कर स्थिरबुद्धि शिवजी रामचन्द्रजी का स्मरण करते हुये अपने स्थान (कैलाश) को चले। चलते समय सुन्दर आकाशवाणी हुई—हे शंकर, आपकी जय हो। आपने भक्ति की अच्छी दृढ़ता की।

अस पन तुम्ह बिनु करइ को आना[4] ❁ राम भगत समरथ भगवाना
सुनि नभगिरा सती उर सोचा ❁ पूछा सिवहिं समेत सकोचा

आपके बिना ऐसी कठिन प्रतिज्ञा कौन कर सकता है? आप रामचन्द्रजी के भक्त हैं, समर्थ हैं और भगवान् हैं। इस आकाशवाणी को सुनकर सती के मन में चिन्ता हुई और उन्होंने सकुचाते हुए शिवजी से पूछा—

कीन्ह कवन पन[5] कहहु कृपाला ❁ सत्यधाम प्रभु दीनदयाला
जदपि सती पूछा बहु भाँती ❁ तदपि न कहेउ त्रिपुर आराती[6]

"हे कृपालु! कहिए, आपने कौन-सी प्रतिज्ञा की है? हे प्रभो! आप सत्य के धाम और दीनदयालु हैं।" यद्यपि सती ने बहुत तरह से पूछा, पर त्रिपुरारि शिवजी ने कुछ नहीं कहा।

---

१. दृढ़ निश्चय। २. आकाश। ३. वाणी। ४. अन्य। ५. प्रतिज्ञा। ६. शत्रु।

दो०- सती हृदय अनुमान किय सब जानेउ सर्बग्य ।
कीन्ह कपट मैं संभु सन नारि सहज जड़ अग्य ॥५७॥(१)

सती ने अपने हृदय में अनुमान किया कि सर्वज्ञ शिवजी सब जान गये । मैंने शिवजी से छल किया । स्त्री स्वभाव ही से मूर्ख और नासमझ होती है ।

सो०- जलु पय[1] सरिस बिकाइ देखहु प्रीति कि रीति भलि ।
बिलग होइ रसु जाइ कपट खटाई परत पुनि ॥५७॥(२)

प्रीति की सुन्दर रीति देखिये कि (दूध के साथ मिलकर) पानी दूध के समान-भाव बिकता है; पर कपटरूपी खटाई पड़ते ही दूध, पानी दोनों अलग हो जाते हैं और स्वाद जाता रहता है । [दृष्टान्त अलंकार]

हृदय सोच समुझत निज करनी ❀ चिंता अमित जाइ नहिं बरनी
कृपासिंधु सिव परम अगाधा ❀ प्रगट न कहेउ मोर अपराधा

अपनी करतूत को याद करके सती के मन में इतना सोच और इतनी अधिक चिन्ता हुई, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता । वे समझ गईं कि शिवजी महाराज बड़े ही गम्भीर और कृपा के सागर हैं, इससे मेरा अपराध उन्होंने प्रगट रूप में नहीं कहा ।

संकर रुख अवलोकि भवानी ❀ प्रभु मोहि तजेउ हृदयँ अकुलानी
निज अघ[2] समुझि न कछु कहि जाई ❀ तपइ अवाँ इव उर अधिकाई

सती ने शंकरजी का रुख देखकर समझ लिया कि स्वामी ने मुझे छोड़ दिया । वे मन में बहुत व्याकुल हुईं । अपना अपराध समझकर उनसे कुछ कहते नहीं बनता । कुम्हार के आवे के समान उनका हृदय बहुत जलने लगा ।

सतिहि ससोच जानि बृषकेतू ❀ कही कथा सुंदर सुख हेतू[3]
बरनत पंथ बिबिध इतिहासा ❀ बिस्वनाथ पहुँचे कैलासा

सती को चिन्तित जानकर शिवजी ने उनको सुख देने के लिये सुन्दर कथायें कहीं । इस प्रकार मार्ग में अनेक प्रकार के इतिहास कहते-कहते शिवजी कैलाश जा पहुँचे ।

---

१. दूध । २. पाप । ३. लिये ।

तहँ पुनि संभु समुझि पन आपन ❀ बैठे बट तर करि कमलासन
संकर सहज सरूपु सँभारा ❀ लागि समाधि अखंड अपारा

वहाँ फिर अपने प्रण को स्मरण करके शिवजी बरगद के पेड़ के नीचे पद्मासन लगाकर बैठ गये। महादेवजी ने अपना स्वाभाविक स्वरूप सँभाला। उनकी अखण्ड और अपार समाधि लग गई।

दो॰ सती बसहिं कैलास तब अधिक सोचु मन माहिं।
मरमु न कोऊ जान कछु जुग सम दिवस सिराहिं[1]।५८।

तब सती कैलाश पर रहने लगीं। उनके मन में बड़ा दुःख था। इसका रहस्य कोई कुछ भी नहीं जानता था। एक-एक दिन युग के समान बीतने लगा।

नित नव सोचु सती उर भारा ❀ कब जैहउँ दुख सागर पारा
मैं जो कीन्ह रघुपति अपमाना ❀ पुनि पति बचनु मृषा करि जाना

सती के जी में दिन-दिन नया और भारी सोच हो रहा था कि इस शोक-सागर से कब पार जाऊँगी। मैंने जो रामचन्द्रजी का अपमान किया और फिर पति के वचन को झूठ माना,

सो फलु मोहि बिधाता दीन्हा ❀ जो कछु उचित रहा सोइ कीन्हा
अब बिधि अस बूझिअ[2] नहिं तोहीं ❀ संकर बिमुख जिआवसि मोहीं

उसका फल मुझे विधाता ने दिया और जो उचित था वही किया। पर हे विधाता! अब तुझे यह उचित नहीं है कि शंकर के प्रतिकूल होने पर भी मुझे जीवित रखता है।

कहि न जाइ कछु हृदय गलानी ❀ मन महुँ रामहिं सुमिरि सयानी
जौं प्रभु दीनदयालु कहावा ❀ आरति हरन बेद जसु गावा

उनके हृदय की ग्लानि कुछ कही नहीं जाती। बुद्धिमती सती ने मन में रामचन्द्रजी का स्मरण किया और कहा—हे प्रभो! यदि आप दीनदयालु कहलाते हैं और यदि वेद ने दुःख मेटने वाला कहकर आपका यश गाया है—

तौ मैं बिनय करउँ कर जोरी ❀ छूटउ बेगि[3] देह यह मोरी
जौं मोरें सिव चरन सनेहू ❀ मन क्रम बचन सत्य ब्रतु एहू

१. बीतते हैं। २. चाहिये। ३. शीघ्र, जल्दी।

तो मैं हाथ जोड़कर विनती करती हूँ कि मेरा यह शरीर जल्दी छूट जाय। यदि मेरा शिवजी के चरणों में प्रेम है और मन, वचन, कर्म से मेरा पातिव्रत सच्चा है—

दो० तौ सबदरसी सुनिअ प्रभु करौ सो बेगि उपाइ।
होइ मरनु जेहि बिनहिं स्रम दुसहु बिपत्ति बिहाइ[1]॥५९॥

तो हे सर्वदर्शी प्रभो ! सुनिये और जल्दी उपाय कीजिये, जिससे मेरा मरण हो और बिना ही परिश्रम यह असह्य विपत्ति छूट जाय।

एहि बिधि दुखित प्रजेसकुमारी ❀ अकथनीय दारुन दुखु भारी
बीते सम्बत सहस सतासी ❀ तजी समाधि सम्भु अबिनासी

इस तरह राजा दक्ष की पुत्री सती बहुत दुःखी थीं। उनको बड़ा कठिन दुःख था, उसका वर्णन नहीं हो सकता। सत्तासी हज़ार वर्ष बीत गये, तब अविनाशी महादेवजी ने अपनी समाधि खोली।

रामनाम सिव सुमिरन लागे ❀ जानेउ सती जगतपति जागे
जाइ सम्भु पद बंदनु कीन्हा ❀ सन्मुख सङ्कर आसन दीन्हा

शिवजी रामनाम का स्मरण करने लगे, तब सती ने जाना कि अब जगत् के स्वामी जागे। उन्होंने जाकर शिवजी के चरणों में प्रणाम किया। शिवजी ने उनको बैठने के लिये सामने आसन दिया।

लगे कहन हरि कथा रसाला ❀ दच्छ प्रजेस भये तेहि काला
देखा बिधि बिचारि सब लायक ❀ दच्छहिं कीन्ह प्रजापति नायक

शिवजी भगवान् हरि की रसीली कथायें कहने लगे। उसी समय (सतीजी के पिता) दक्ष प्रजापति हुए थे। ब्रह्मा ने सब तरह से योग्य समझकर दक्ष को प्रजापतियों का नायक बना दिया।

बड़ अधिकार दच्छ जब पावा ❀ अति अभिमान हृदय तब आवा
नहिं कोउ अस जनमा जग माहीं ❀ प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं

जब दक्ष ने इतना बड़ा अधिकार पाया, तब उनके मन में अत्यन्त अभिमान आ गया। संसार में ऐसा कोई नहीं जन्मा है, जिसे प्रभुता पाकर मद न हो।
[अर्थान्तरन्यास अलंकार]

---

१. छूट जाय।

दो०—दच्छ लिये मुनि बोलि सब करन लगे बड़ जाग[1]।
नेवते सादर सकल सुर जे पावत मख भाग ॥६०॥

दक्ष ने सब मुनियों को बुला भेजा और वे बड़ा यज्ञ करने लगे। जो देवता यज्ञ में भाग पाते हैं, उन्होंने उन सबको आदर-सहित निमंत्रित किया।

किन्नर नाग सिद्ध गंधर्बा ❀ बधुन्ह समेत चले सुर सर्बा
बिष्नु बिरंचि महेसु बिहाई ❀ चले सकल सुर जान बनाई

(दक्ष का निमंत्रण पाकर) किन्नर, नाग, सिद्ध, गन्धर्व और सब देवता अपनी-अपनी स्त्रियों-सहित चले। विष्णु, ब्रह्मा और शिवजी को छोड़कर शेष सब देवता अपना-अपना विमान सजाकर चले।

सती बिलोके ब्योम[2] बिमाना ❀ जात चले सुंदर बिधि नाना
सुर सुंदरी करहिं कल गाना ❀ सुनत स्रवन छूटहिं मुनि ध्याना

सती ने देखा कि आकाश में अनेक प्रकार के सुन्दर विमान चले जा रहे हैं। देवों की सुन्दरियाँ (विमानों में बैठी हुई) मधुर गीत गाती जाती हैं, जिन को सुनकर मुनियों का भी ध्यान छूट जाता है।

पूछेउ तब सिव कहेउ बखानी ❀ पिता जग्य सुनि कछु हरषानी
जौं महेस मोहि आयसु देहीं ❀ कछु दिन जाइ रहौं मिस एहीं

सती ने जब पूछा, तब शिवजी ने उनके जाने का कारण बताया। पिता के यज्ञ की बात सुनकर सती को कुछ हर्ष हुआ। (वे मन में कहने लगीं कि) यदि शिवजी मुझे जाने की आज्ञा दें, तो इसी बहाने से मैं कुछ दिन पिता के घर जाकर रहूँ।

पति परित्याग हृदयँ दुखु भारी ❀ कहइ न निज अपराध बिचारी
बोलीं सती मनोहर बानी ❀ भय संकोच प्रेम रस सानी

पति द्वारा त्यागी जाने का उनके हृदय में बड़ा दुःख था; पर अपना अपराध समझकर वे कुछ कहती न थीं। वे भय, संकोच और प्रेमरस से सनी हुई मनोहर वाणी बोलीं—

---

१. यज्ञ। २. आकाश।

दो० पिता भवन उत्सव परम जौं प्रभु आयसु होइ।
तौ मैं जाउँ कृपायतन सादर देखन सोइ ॥६१॥

मेरे पिता के यहाँ बहुत बड़ा उत्सव है। हे प्रभो! हे कृपानिधान! यदि आपकी आज्ञा हो, तो मैं आदर-सहित उसे देखने जाऊँ।

कहेहु नीक मोरेहुँ मन भावा ❀ यह अनुचित नहिं नेवत पठावा
दच्छ सकल निज सुता बोलाईं ❀ हमरे बयर तुम्हउ बिसराईं

शिवजी ने कहा—तुमने बात तो अच्छी कही, मुझे भी पसंद आई पर अनुचित तो यह है कि उन्होंने नेवता नहीं भेजा। दक्ष ने अपनी सब बेटियाँ बुलाई हैं; परन्तु हमारे साथ बैर होने से उसने तुमको भी भुला दिया।

ब्रह्म सभा हम सन दुखु माना ❀ तेहि ते अजहुँ करहिं अपमाना
जौं बिनु बोलें जाहु भवानी ❀ रहै न सीलु सनेहु न कानी[1]

एक बार ब्रह्मा की सभा में हमसे अप्रसन्न हो गये थे। उसी से वे अब तक हमारा अपमान करते हैं। हे सती! जो बिना बुलाये जाओगी, तो न शील और स्नेह ही रहेगा और न मर्यादा ही रहेगी।

जदपि मित्र प्रभु पितु गुर गेहा ❀ जाइअ बिनु बोलेहु न सँदेहा
तदपि बिरोध मान जहँ कोई ❀ तहाँ गये कल्यानु न होई

यद्यपि इसमें सन्देह नहीं कि मित्र, स्वामी, पिता और गुरु के घर बिना बुलाये भी जाना चाहिये। तो भी जहाँ कोई विरोध मानता हो, उसके घर जाने से भलाई नहीं होती।

भाँति अनेक संभु समुझावा ❀ भावी बस न ग्यानु उर आवा
कह प्रभु जाहु जो बिनहिं बोलाएँ ❀ नहिं भलि बात हमारे भाएँ[2]

शिवजी ने बहुत तरह से समझाया; पर होनहार-वश सती के हृदय में बोध न हुआ। फिर शिवजी ने कहा—यदि बिना बुलाये जाओगी, तो हमारी समझ में अच्छी बात न होगी।

दो० कहि देखा हर जतन बहु रहइ न दच्छकुमारि।
दिये मुख्य गन[3] सङ्ग तब बिदा कीन्ह त्रिपुरारि ॥६२॥

१. मर्यादा। २. समझ में। ३. गण, सेवक।

जब शिवजी ने बहुत उपाय करके देखा कि सती नहीं रुकतीं, तब उन्होंने अपने मुख्य सेवकों को साथ करके उनको विदा किया। [परिकरांकुर अलंकार]

पिता भवन जब गईं भवानी ❀ दच्छ त्रास[1] काहु न सनमानी
सादर भलेहि मिली एक माता ❀ भगिनी मिलीं बहुत मुसुकाता

जब सती पिता के घर पहुँचीं, तब दक्ष के डर से किसी ने उनका सत्कार नहीं किया। केवल एक माता भले ही आदर से मिली। बहनें बहुत मुसकुराती हुई मिलीं।

दच्छ न कछु पूछी कुसलाता ❀ सतिहि बिलोकि जरे सब गाता
सती जाइ देखउ तब जागा ❀ कतहुँ न दीख संभु कर भागा

दक्ष ने तो उनकी कुछ कुशल तक न पूछी; उलटे सती को देखकर उनका सारा शरीर जल उठा। तब सती ने जाकर यज्ञ देखा तो वहाँ कहीं शिवजी का भाग दिखाई न दिया।

तब चित चढ़ेउ जो सङ्कर कहेऊ ❀ प्रभु अपमान समुझि उर दहेऊ
पाछिल दुख न हृदय अस ब्यापा ❀ जस यह भयउ महा परितापा

तब शिवजी ने जो कहा था, वह उनकी समझ में आया। स्वामी का अपमान देखकर सती का हृदय जल उठा। पिछला अर्थात् पति के त्याग का दुःख उनके हृदय में उतना नहीं व्यापा, जितना भारी दुःख सती को यह हुआ।

जद्यपि जग दारुन[2] दुख नाना ❀ सब तें कठिन जाति अपमाना
समुझि सो सतिहि भयउ अति क्रोधा ❀ बहु बिधि जननी कीन्ह प्रबोधा

यद्यपि जगत् में अनेक प्रकार के कठिन दुःख हैं, तथापि स्वजाति से अपमानित होना सबसे बढ़कर कठिन है। यह समझकर सती को बड़ा क्रोध आया। माता ने उन्हें बहुत तरह से समझाया-बुझाया। [अर्थान्तरन्यास अलंकार]

दो० **सिव अपमान न जाइ सहि हृदय न होइ प्रबोध।**
सकल सभहिं हठि हटकि[3] तब बोलीं बचन सक्रोध ६३

शिवजी का अपमान उनसे सहा नहीं जाता है इससे उनके हृदय को सन्तोष भी नहीं है; तब सारी सभा को हठ से डाँट कर क्रोध भरे वचन बोलीं—

१. डर। २. कठिन। ३. डाँटकर।

सुनहु सभासद सकल मुनिन्दा ❀ कही सुनी जिन्ह सङ्कर निंदा
सो फल तुरत लहब सब काहू ❀ भली भाँति पछिताव पिताहू

हे सभासदो और सब मुनीश्वरो ! सुनो। जिन लोगों ने यहाँ शिवजी की निन्दा कही या सुनी है, उन सबको उसका फल तुरंत ही मिलेगा और मेरे पिता दक्ष भी ख़ूब पछतायँगे।

संत संभु श्रीपति अपबादा ❀ सुनिअ जहाँ तहँ असि मरजादा
काटिअ तासु जीभ जो बसाई[1] ❀ स्रवन मूंदि न त चलिअ पराई[2]

जहाँ संत, शिवजी और लक्ष्मीपति (विष्णु भगवान्) की निन्दा सुनी जाय, वहाँ ऐसी मर्यादा है कि वश चले, तो उस निन्दक की जीभ काट ले और नहीं तो अपने कान बन्द करके वहाँ से भाग जाय।

जगदातमा महेसु पुरारी ❀ जगत जनक सबके हितकारी
पिता मंदमति निंदत तेही ❀ दच्छ सुक्र[1] संभव[2] यह देही

त्रिपुर दैत्य के शत्रु भगवान् शिवजी सारे जगत् की आत्मा हैं। वे सबके उत्पन्न करने वाले और हितकारी हैं। मेरा मूर्ख पिता उनकी निन्दा करता है और मेरा यह शरीर दक्ष ही के वीर्य से उत्पन्न हुआ है।

तजिहउँ तुरत देह तेहि हेतू ❀ उर धरि चंद्रमौलि बृषकेतू
अस कहि जोग अगिनि तनु जारा ❀ भयउ सकल मष हाहाकारा

इसलिये चन्द्रमा को मस्तक पर धारण करने वाले और वृषकेतु शिवजी को हृदय में धारण करके मैं इस शरीर को तुरन्त त्याग दूंगी। ऐसा कहकर योग की अग्नि में सती ने अपना शरीर भस्म कर डाला। (यह देखकर) सारी यज्ञशाला में हाहाकार मच गया।

दो॰ सती मरनु सुनि संभु गन लगे करन मष खीस।
जग्य बिधंस बिलोकि भृगु रच्छा कीन्हि मुनीस॥६४॥

सती का मरण सुनकर शिवजी के गण यज्ञ को विध्वंस करने लगे। यज्ञ को विध्वंस होते देखकर मुनीश्वर भृगुजी ने उसकी रक्षा की।

समाचार जब संकर पाये ❀ बीरभद्रु करि कोप पठाये
जग्य बिधंस जाइ तिन्ह कीन्हा ❀ सकल सुरन्ह बिधिवत फल दीन्हा

१. वश चले। २. भाग। १. वीर्य। २. उत्पन्न।

जब यह समाचार शिवजी को मिला, तब उन्होंने कोप करके वीरभद्र को भेजा। उन्होंने वहाँ जाकर यज्ञ विध्वंस कर डाला और सारे देवताओं को यथोचित फल (दंड) दिया।

भइ जग विदित दच्छ गति सोई ❀ जसि कछु संभु विमुख कै होई
यह इतिहास सकल जग जाना ❀ तातें मैं संछेप बखाना

दक्ष की संसार-प्रसिद्ध वही गति हुई, जो शिव-द्रोही की हुआ करती है। इस इतिहास को सारा संसार जानता है, इसलिये मैंने संक्षेप में वर्णन किया।

सती मरत हरि सन बरु माँगा ❀ जनम जनम सिवपद अनुरागा
तेहि कारन हिमगिरि गृह जाई ❀ जनमी पारबती तनु पाई

मरते समय सती ने भगवान् हरि से यह वर माँगा कि हरएक जन्म में शिवजी के चरणों ही में मेरा अनुराग रहे। इसी कारण हिमवान् के घर जाकर पार्वती का शरीर धारण करके उन्होंने जन्म लिया।

जब तें उमा सैल गृह जाई[1] ❀ सकल सिद्धि संपति तहँ छाई
जहँ तहँ मुनिन्ह सुआस्रम कीन्हे ❀ उचित बास हिम भूधर दीन्हे

जब से उमा हिमवान् के घर जन्मीं तब से वहाँ सारी सिद्धियाँ और सम्पत्तियाँ छा गईं। मुनियों ने जहाँ-तहाँ अच्छे-अच्छे आश्रम बना लिये और हिमवान् ने उन्हें उचित स्थान दिये।

दो०— सदा सुमन फल सहित सब द्रुम नव नाना जाति।
प्रगटीं सुन्दर सैल पर मनि आकर[2] बहु भाँति॥६५॥

पर्वत पर भाँति-भाँति के सब नवीन वृक्ष सदा फल-फूल-सहित हो गये और मणियों की बहुत तरह की सुन्दर खानें प्रकट हो गईं।

सरिता सब पुनीत जलु बहहीं ❀ खग मृग मधुप सुखी सब रहहीं
सहज बयरु सब जीवन्ह त्यागा ❀ गिरि पर सकल करहिं अनुरागा

सारी नदियों में पवित्र जल बहता है और पक्षी, पशु, भौंरे सभी सुखी रहते हैं। सब जीवों ने अपना स्वाभाविक बैर छोड़ दिया। पर्वत पर सब जीव परस्पर प्रेम करते हैं।

---

१. पैदा हुई, जन्मी। २. खान।

सोह सैल गिरिजा गृह आएँ ❀ जिमि जन राम भगति के पाएँ
नित नूतन मंगल गृह तासू ❀ ब्रह्मादिक गावहिं जसु जासू

घर में पार्वती के आ जाने से वह पर्वत ऐसा शोभायमान हुआ, जैसा राम की भक्ति पाकर भक्त शोभायमान होता है। उस पर्वतराज के घर में नित्य नये-नये मंगल-उत्सव होते हैं, जिसका यश ब्रह्मा आदिक गाते हैं।

नारद समाचार सब पाए ❀ कौतुकहीं गिरि गेह सिधाए
सैलराज बड़ आदर कीन्हा ❀ पद पखारि[1] बर आसनु दीन्हा

जब नारद मुनि ने (पार्वती के जन्म के) सब समाचार सुने, तब वे योंही प्रसन्नता से हिमवान् के घर आये। पर्वतराज ने उनका बड़ा आदर किया और पाँव धोकर उनको उत्तम आसन दिया।

नारि सहित मुनि पद सिरु नावा ❀ चरन सलिल सबु भवनु सिंचावा
निज सौभाग्य बहुत गिरि बरना ❀ सुता बोलि मेली[2] मुनि चरना

हिमवान् ने अपनी स्त्री-सहित मुनि के चरणों में शिर नवाया और उनके चरणों का जल सारे घर में छिड़काया। हिमवान् ने अपने सौभाग्य को बहुत सराहा और पुत्री को बुलाकर मुनि के चरणों पर डाल दिया।

दो०— त्रिकालग्य सर्बग्य तुम्ह गति सर्बत्र तुम्हारि।
कहहु सुता के दोष गुन मुनिबर हृदयँ बिचारि॥६६॥

हिमवान् ने कहा—हे मुनिवर, आप त्रिकालदर्शी और सर्वज्ञ हैं और आपकी सब जगह पहुँच है। इसलिये आप हृदय में विचार कर कन्या के दोष-गुण कहिये।

कह मुनि बिहँसि गूढ़ मृदु बानी ❀ सुता तुम्हारि सकल गुन खानी
सुंदर सहज सुसील सयानी ❀ नाम उमा अंबिका भवानी

नारद मुनि ने हँसकर रहस्य-युक्त और कोमल वाणी से कहा—तुम्हारी पुत्री सब गुणों की खान है। यह स्वभाव ही से सुन्दर, सुशील और चतुर है। 'उमा', 'अम्बिका' और 'भवानी' इसके नाम हैं।

सब लच्छन संपन्न कुमारी ❀ होइहि संतत पिअहि पिआरी
सदा अचल एहि कर अहिवाता ❀ एहितें जसु पइहहिं पितु माता

---

१. धोकर। २. डाल दिया।

कन्या सब लक्षणों से सम्पन्न है। यह अपने पति को सदा प्यारी होगी। इसका सुहाग सदा अचल रहेगा और इससे इसके माता-पिता यश पायेंगे।

होइहि पूज्य सकल जग माहीं ❁ एहि सेवत कछु दुर्लभ नाहीं
एहि कर नाम सुमिरि संसारा ❁ तिय चढ़िहहिं पतिब्रत असिधारा

यह सारे जगत् में पूज्य होगी और इसकी सेवा करने से कुछ भी दुर्लभ न होगा। संसार में स्त्रियाँ इसका नाम स्मरण करके पातिव्रत-धर्म रूपी तलवार की धार पर चढ़ जायँगी।

सैल सुलच्छनि सुता तुम्हारी ❁ सुनहु जे अब अवगुन दुइचारी
अगुन अमान मातु पितु हीना ❁ उदासीन सब संसय छीना[1]

हे पर्वतराज! तुम्हारी पुत्री सुन्दर लक्षणों वाली है। अब उसमें दो-चार अवगुण हैं, उन्हें भी सुन लो। गुणहीन, मानहीन, माता-पिता-विहीन, उदासीन समस्त सन्देहों से रहित (लापरवाह),

दो० जोगी जटिल अकाम मन नगन अमंगल बेष।
अस स्वामी एहि कहँ मिलिहि परी हस्त असि रेख॥६७

योगी, जटाधारी, निष्काम-हृदय, नङ्गा और अमंगल वेष वाला पति इसको मिलेगा, इसके हाथ में ऐसी ही रेखा पड़ी है।

सुनि मुनि गिरा सत्य जियँ जानी ❁ दुख दंपतिहिं उमा हरषानी
नारदहूँ यह भेदु न जाना ❁ दसा एक समुझब बिलगाना

मुनि की वाणी सुनकर और उसको हृदय में सत्य जानकर पार्वती के माता-पिता दोनों को दुःख हुआ; परन्तु पार्वती प्रसन्न हुई। नारदमुनि ने भी यह भेद नहीं जाना; क्योंकि सबकी बाहरी दशा एक-सी होने पर भी भीतर की समझ भिन्न-भिन्न थी।

सकल सखी गिरिजा गिरि मैना ❁ पुलक सरीर भरे जल नैना
होइ न मृषा देवरिषि भाखा ❁ उमा सो बचनु हृदय धरि राखा

सारी सखियाँ, पार्वती, पर्वतराज हिमवान् और मैना सभी के शरीर पुलकित हो गये और आँखों में जल भर आये। देवर्षि नारद ने जो कहा है, वह झूठ नहीं हो सकता; यह बात पार्वती ने हृदय में धारण कर ली।

---

१. क्षीण, रहित।

उपजेउ सिव पद कमल सनेहू ❀ मिलन कठिन मन भा सन्देहू
जानि कुअवसरु प्रीति दुराई ❀ सखी उछँग[1] बैठि पुनि जाई

उन्हें शिवजी के चरण-कमलों में स्नेह उत्पन्न हो आया; परंतु मन में यह सन्देह हुआ कि उनका मिलना कठिन है। अवसर ठीक न जानकर पार्वती ने वह प्रीति छिपा ली और फिर वे सखी की गोद में जाकर बैठ गईं।

झूठि न होइ देवरिषि बानी ❀ सोचहिं दंपति सखी सयानी
उर धरि धीर कहइ गिरिराऊ ❀ कहहु नाथ का करिअ उपाऊ

देवर्षि नारद की वाणी झूठी न होगी, हिमवान् और उसकी स्त्री मैना और पार्वती की चतुर सखियाँ चिन्ता करने लगीं। हृदय में धीरज धरकर हिमवान् ने कहा—हे नाथ! कहिये, क्या उपाय किया जाय?

दो॰ कह मुनीस हिमवंत सुनु जो बिधि लिखा लिलार[2]।
देव दनुज नर नाग मुनि कोउ न मेटनिहार ॥६८॥

मुनीश्वर नारदजी ने कहा—हे हिमवान्, सुनो। जो बात ब्रह्मा ने माथे में लिख दी है, देवता, दानव, मनुष्य, नाग और मुनि कोई भी उसको मिटा नहीं सकता।

तदपि एक मैं कहउँ उपाई ❀ होइ करइ जौं दैउ सहाई
जस बर मैं बरनेउँ तुम्ह पाहीं ❀ मिलिहि उमहिं तस संसय नाहीं

तो भी मैं एक उपाय बताता हूँ। जो प्रारब्ध सहायता करे, तो वह सिद्ध हो सकता है। जैसा मैंने तुम्हारे सामने कहा, वैसा ही वर उमा को मिलेगा, इसमें सन्देह नहीं है।

जे जे बर के दोष बखाने ❀ ते सब सिव पहिं मैं अनुमाने
जौं बिबाहु संकर सन होई ❀ दोषउ गुन सम कह सब कोई

मैंने वर के जो-जो दोष बताये हैं, मैं अनुमान से कहता हूँ, वे सभी शिवजी में हैं। यदि शिवजी के साथ विवाह हो जाय, तो दोषों को भी सब लोग गुणों के समान ही कहेंगे।

जौं अहि सेज सयन हरि करहीं ❀ बुध कछु तिनकर दोषु न धरहीं
भानु कृसानु सर्ब रस खाहीं ❀ तिन्ह कहँ मंद[3] कहत कोउ नाहीं

१. गोद। २. मस्तक, ललाट। ३. बुरा।

जैसे विष्णु भगवान् शेषनाग की शय्या पर सोते हैं, तो भी पण्डित लोग उनको कुछ दोष नहीं लगाते। सूर्य और अग्नि अच्छे-बुरे सभी रसों को खाते हैं; पर उन्हें कोई बुरा नहीं कहता।

सुभ अरु असुभ सलिल सब बहई ❀ सुरसरि कोउ अपुनीत न कहई
समरथ कहुँ नहिं दोष गोसाईं ❀ रबि पावक सुरसरि की नाईं

गंगाजी में पवित्र और अपवित्र सब जल बहता है; पर कोई उन्हें अपवित्र नहीं कहता। हे हिमवान्! सूर्य, अग्नि और गङ्गाजी की तरह समर्थ को कुछ दोष नहीं लगता।

दो०— जौं अस हिसिषा[1] करहिं नर जड़ बिबेक अभिमान।
परहिं कल्प भरि नरक महुँ जीव कि ईस समान॥६९॥

जो मूर्ख मनुष्य ज्ञान के अभिमान से ऐसी बराबरी अर्थात् सूर्य, अग्नि और गङ्गा की समता करते हैं, वे कल्पभर के लिये नरक में पड़ते हैं। भला, कहीं जीव भी ईश्वर के समान हो सकता है?

सुरसरि जल कृत बारुनि जाना ❀ कबहुँ न सन्त करहिं तेहि पाना
सुरसरि मिलें सो पावन जैसे ❀ ईस अनीसहि[2] अंतरु तैसे

गंगाजल से भी बनाई हुई मदिरा को जानकर संतजन कभी उसका पान नहीं करते। पर वही मदिरा गङ्गाजी में मिल जाने से जैसे पवित्र हो जाती है, ईश्वर और जीव में भी वैसा ही भेद है।

सम्भु सहज समरथ भगवाना ❀ एहि बिबाहँ सब बिधि कल्याना
दुराराध्य पै अहहिं महेसू ❀ आसुतोष पुनि किएँ कलेसू

भगवान् महादेवजी स्वभाव ही से समर्थ हैं। इसलिये इस विवाह में सब तरह का कल्याण है। परन्तु महादेवजी की आराधना बड़ी कठिन है; पर क्लेश करने से (तप से) वे बहुत जल्दी संतुष्ट हो जाते हैं।

जौं तपु करइ कुमारि तुम्हारी ❀ भाविउ मेटि सकहिं त्रिपुरारी
जद्यपि बर अनेक जग माहीं ❀ एहि कहँ सिव तजि दूसर नाहीं

जो तुम्हारी पुत्री (उनकी प्राप्ति के लिये) तप करे, तो शिवजी होनहार

---

१. होड़, बराबरी। २. जीव।

को भी मिटा सकते हैं। यद्यपि संसार में वर अनेक हैं, पर इसके लिये शिवजी को छोड़कर दूसरा वर नहीं है।

बर दायक प्रनतारति भञ्जन ❀ कृपा सिन्धु सेवक मन रंजन
इच्छित फल बिनु सिव अवराधें ❀ लहिअ न कोटि जोग जप साधें

शिवजी वर देने वाले, शरणागतों के दुःख-नाशक, दया-सागर और सेवकों के मन को प्रसन्न करने वाले हैं। शिवजी की आराधना किये बिना करोड़ों योग और जप करने पर भी वाञ्छित फल नहीं मिलता।

दो० अस कहि नारद सुमिरि हरि गिरिजहिं दीन्ह असीस।
होइहि यह कल्यान अब संसय तजहु गिरीस ।७०॥

ऐसा कहकर और भगवान का स्मरण करके नारदजी ने पार्वती को आशीर्वाद दिया और कहा—हे हिमवान्, तुम सन्देह दूर करो, अब इसका कल्याण होगा।

कहि अस ब्रह्म भवन मुनि गयऊ ❀ आगिल चरित सुनहु जस भयऊ
पतिहि एकांत पाइ कह मैना ❀ नाथ न मैं समुझे मुनि बैना

यों कहकर मुनि ब्रह्मलोक को चले गये। अब जो कुछ चरित्र आगे हुआ, उसे सुनो। पति को एकान्त में पाकर मैना ने कहा—नाथ, मैंने मुनि की बात नहीं समझी।

जौं घरु बरु कुलु होइ अनूपा ❀ करिअ बिबाहु सुता अनुरूपा
न त कन्या बरु रहउ कुँआरी ❀ कंत उमा मम प्रान पिआरी

जो हमारी कन्या के अनुकूल घर, वर और कुल उत्तम हो तो विवाह कीजिये। नहीं तो कन्या चाहे कुमारी ही रहे। हे स्वामिन्, पार्वती मुझको प्राण के समान प्यारी है।

जौं न मिलिहि बरु गिरिजहि जोगू ❀ गिरि जड़ सहज कहिहि सब लोगू
सोइ बिचारि पति करहु बिबाहू ❀ जेहि न बहोरि[1] होइ उर दाहू

यदि पार्वती के योग्य वर न मिला, तो सब लोग कहेंगे कि पर्वत स्वभाव ही से जड़ (मूर्ख) होता है। हे नाथ! इस बात को विचारकर ही विवाह कीजिए, जिसमें फिर पीछे हृदय में संताप न हो।

---

१. फिर।

अस कहि परी चरन धरि सीसा ❀ बोले सहित सनेह गिरीसा
बरु पावक प्रगटइ ससि माहीं ❀ नारद बचनु अन्यथा नाहीं

यों कहकर पार्वती की माता ने पति के चरणों पर सिर रख दिया। तब हिमवान् ने स्नेह से कहा—चाहे चन्द्रमा में अग्नि प्रकट हो, पर नारदजी के वचन झूठे नहीं हो सकते।

दो०— प्रिया सोच परिहरहु सब सुमिरहु श्रीभगवान।
पारबतिहि निरमयेउ[1] जेहि सोइ करिहि कल्यान।७१।

हे प्रिये! तुम सब चिन्ता छोड़कर श्रीभगवान् का स्मरण करो। जिन्होंने पार्वती को रचा है, वे ही कल्याण करेंगे।

अब जौं तुम्हहि सुता पर नेहू ❀ तौ अस जाइ सिखावनु देहू
करइ सो तपु जेहि मिलहिं महेसू ❀ आन उपाय न मिटिहि कलेसू

अब जो तुम्हें अपनी पुत्री पर स्नेह है, तो जाकर उसको ऐसी शिक्षा दो कि वह ऐसा तप करे, जिससे शिवजी मिलें। दूसरे उपाय से दुःख दूर नहीं होगा।

नारद बचन सगर्भ सहेतू ❀ सुन्दर सब गुन निधि बृषकेतू
अस बिचारि तुम तजहु असंका ❀ सबहिं भाँति संकरु अकलंका

नारदजी के वचन रहस्य से युक्त और कारण-सहित हैं। शिवजी समस्त सुन्दर गुणों की खान हैं। यह विचारकर तुम मिथ्या भय को दूर करो। शिवजी सब तरह से निष्कलङ्क हैं।

सुनि पति बचन हरषि मन माहीं ❀ गई तुरत उठि गिरिजा पाहीं[2]
उमहि बिलोकि नयन भरि बारी ❀ सहित सनेह गोद बैठारी

पति के वचन सुनकर, मन में प्रसन्न होकर, मैना उठकर तुरन्त पार्वती के पास गईं। पार्वती को देखकर और आँखों में आँसू भरकर, प्यार के साथ उन्होंने उसे गोद में बिठा लिया।

बारहिं बार लेति उर लाई ❀ गदगद कंठ न कछु कहि जाई
जगत मातु सर्बग्य भवानी ❀ मातु सुखद बोलीं मृदु बानी

१. रचा। २. पास।

वह बार बार उसे गले से लगाने लगीं। अधिक प्रेम से उनका गला भर आया, उनसे कुछ कहा नहीं जाता। सब कुछ जानने वाली जगत् की माता भवानी (अपनी) माता को सुख देने के लिये कोमल वाणी से बोलीं—

दो० **सुनहि मातु मैं दीख अस सपन सुनावउँ तोहिं।**
सुन्दर गौर सुबिप्रबर अस उपदेसेउ मोहिं॥७२॥

माँ, सुन! मैं तुझे सुनाती हूँ। मैंने ऐसा स्वप्न देखा है कि मुझे एक सुन्दर गौरवर्ण ब्राह्मण ने ऐसा उपदेश दिया :—

करहि जाइ तपु सैलकुमारी ❀ नारद कहा सो सत्य बिचारी
मातु पितहि पुनि यह मत भावा ❀ तपु सुखप्रद दुख दोष नसावा

"हे पार्वती! जाकर तप कर। नारदजी ने जो कहा है, उसे सत्य समझ। फिर यह बात तेरे माता-पिता को भी अच्छी लगी है। तप सुख देने वाला, दुःख और दोष को मिटाने वाला है।

तपबल रचइ प्रपंचु बिधाता ❀ तपबल बिष्नु सकल जग त्राता
तपबल संभु करहिं संघारा ❀ तपबल सेषु धरइ महि भारा

तप ही के बल से ब्रह्मा संसार को रचते हैं और तप ही के बल से विष्णु सारे जगत् का पालन करते हैं। तप ही के बल से शंभु जगत् का संहार करते हैं और तप ही के बल से शेषजी पृथ्वी का भार धारण करते हैं।

तप अधार सब सृष्टि भवानी ❀ करहि जाइ तपु अस जिय जानी
सुनत बचन बिसमित महतारी ❀ सपन सुनायउ गिरिहि हँकारी[1]

हे भवानी! सारी सृष्टि तप ही के सहारे है। ऐसा जी में जानकर तू जा कर तप कर"। यह बात सुनकर पार्वती की माता को बड़ा अचरज हुआ। उसने हिमवान् को बुलाकर वह स्वप्न सुनाया।

मातु पितहि बहु बिधि समुझाई ❀ चली उमा तप हित हरषाई
प्रिय परिवार पिता अरु माता ❀ भए बिकल मुख आव न बाता

माता-पिता को बहुत तरह से समझाकर पार्वती तप करने के लिये हर्ष के साथ चलीं। प्यारे कुटुम्बीजन, माता और पिता सब बहुत विकल हो गये। किसी के मुंह से बात नहीं निकलती।

---

१. बुलाकर।

दो॰ वेदसिरा मुनि आइ तब सबहिं कहा समुझाइ।
पारबती महिमा सुनत रहे प्रबोधहि पाइ ॥७३॥

तब वेदशिरा मुनि ने आकर सबको समझाकर कहा। पार्वती की महिमा सुनकर सबको समाधान हो गया।

उर धरि उमा प्रानपति चरना ❀ जाइ बिपिन लागीं तपु करना
अति सुकुमार न तनु तप जोगू ❀ पति पद सुमिरि तजेउ सब भोगू

प्राणपति शिवजी के चरणों को हृदय में धारण करके पार्वती वन में जाकर तप करने लगीं। पार्वती का बहुत सुकुमार शरीर तप के योग्य नहीं था; पर तो भी पति के चरणों का स्मरण करके उन्होंने सब भोगों को तज दिया।

नित नव चरन उपज अनुरागा ❀ बिसरी देह तपहि मन लागा
संबत सहस मूल फल खाए ❀ सागु खाइ सत बरष गवाँए

उनके हृदय में पति के चरणों में नित्य नया प्रेम उत्पन्न होने लगा और तप में ऐसा मन लगा कि देह की सारी सुध बिसर गई। एक हज़ार बरस तक उन्होंने मूल और फल खाये और फिर सौ बरस साग-पात खाकर बिताये।

कछु दिन भोजनु बारि बतासा ❀ किए कठिन कछु दिन उपबासा
बेल पाति महि परै सुखाई ❀ तीनि सहस संबत सोइ खाई

कुछ दिन जल और वायु का भोजन किया और फिर कुछ दिन कठिन उपवास किया। बेल-पत्र जो धरती पर गिरकर सूख जाते थे, तीन हज़ार वर्ष तक उन्हीं को खाया।

पुनि परिहरे सुखानेउ परना[1] ❀ उमहि नामु तब भयउ अपरना
देखि उमहिं तप खीन सरीरा ❀ ब्रह्मगिरा भइ गगन गँभीरा

फिर सूखे पत्ते भी छोड़ दिये, तभी से पार्वती का नाम अपर्णा हुआ। तप से उमा का शरीर क्षीण देखकर आकाश से गम्भीर ब्रह्म-वाणी हुई।

दो॰ भयउ मनोरथ सुफल तव सुनु गिरिराज कुमारि।
परिहरु दुसह कलेस सब अब मिलिहहिं त्रिपुरारि ।७४।

"हे पर्वतराज की पुत्री! सुन। तेरा मनोरथ सफल हुआ। तू अब सब

१. पत्ता।

असह्य क्लेशों को त्याग दे। अब तुझे शिवजी मिलेंगे।

अस तपु काहुँ न कीन्ह भवानी ❀ भए अनेक धीर मुनि ग्यानी
अब उर धरहु ब्रह्म बर बानी ❀ सत्य सदा संतत सुचि जानी

हे भवानी ! धीर मुनि और ज्ञानी बहुत हुए, पर ऐसा (कठोर) तप किसी ने नहीं किया। अब तू श्रेष्ठ ब्रह्मा की वाणी को सदा सत्य और निरन्तर पवित्र समझकर अपने हृदय में रख।

आवहिं पिता बुलावन जबहीं ❀ हठ परिहरि घर जायहु तबहीं
मिलहिं तुम्हहिं जब सप्त रिषीसा ❀ जानेहु तब प्रमान बागीसा

जब तुम्हारे पिता तुम्हें बुलाने आयें, तब तुम हठ छोड़कर घर चली जाना। और जब तुमको सप्तर्षि मिलें, तब तुम मेरी वाणी को सत्य समझना।"

सुनत गिरा बिधि गगन बखानी ❀ पुलक गात गिरिजा हरषानी
उमा चरित सुंदर मैं गावा ❀ सुनहु संभु कर चरित सुहावा

आकाश से कही हुई ब्रह्मा की वाणी को सुनते ही पार्वती के रोम खड़े हो गये और वे बहुत प्रसन्न हुईं। याज्ञवल्क्यजी भरद्वाजजी से कहने लगे—मैंने पार्वती का सुन्दर चरित सुना दिया, अब शिवजी का सुहावना चरित सुनो।

जब तें सती जाइ तनु त्यागा ❀ तब तें सिव मन भयउ बिरागा
जपहिं सदा रघुनायक नामा ❀ जहँ तहँ सुनहिं राम गुन ग्रामा

जब से सती ने जाकर शरीर छोड़ा, तब से शिवजी के मन में वैराग्य हो गया। वे सदा राम-नाम जपने लगे और जहाँ-तहाँ रामचन्द्रजी के गुणों के वर्णन सुनने लगे।

दो० चिदानंद सुखधाम सिव बिगत मोह मद काम।
बिचरहिं महि धरि हृदय हरि सकल लोक अभिराम।७५

चिदानन्द, सुख के धाम, मोह, मद और काम से रहित, सारे लोकों को आनन्द देनेवाले भगवान् को हृदय में धरकर शिवजी पृथ्वी पर विचरने लगे।

कतहुँ मुनिन्ह उपदेसहिं ग्याना ❀ कतहुँ[1] राम गुन करहिं बखाना
जदपि अकाम तदपि भगवाना ❀ भगत बिरह दुख दुखित सुजाना

१. कहीं।

वे कहीं मुनियों को ज्ञान का उपदेश देते और कहीं रामचन्द्रजी के गुणों का वर्णन करते थे। यद्यपि भगवान् शिवजी कामना-रहित हैं, पर तो भी भक्त (पार्वती) के विरह-दुःख से दुःखित हैं।

एहि बिधि गयउ काल बहु बीती ❀ नित नव होइ राम पद प्रीती
नेमु प्रेमु संकर कर देखा ❀ अबिचल हृदयँ भगति कै रेखा

इस प्रकार बहुत समय बीत गया। रामचन्द्रजी के चरणों की नित्य-नई प्रीति होने लगी। जब रामचन्द्रजी ने शिवजी का नेम, प्रेम और उनके हृदय में भक्ति की अटल छाप देखी

प्रगटे राम कृतग्य कृपाला ❀ रूप सील निधि तेज बिसाला
बहु प्रकार संकरहिं सराहा ❀ तुम्ह बिनु अस ब्रतु को निरबाहा

तब वे कृपालु और उपकार को मानने वाले, रूप और शील के भण्डार और महान् तेजस्वी रामचन्द्रजी प्रकट हुए। उन्होंने बहुत तरह से शिवजी की बड़ाई की और कहा—तुम्हारे बिना ऐसा व्रत कौन निबाह सकता है?

बहु बिधि राम सिवहिं समुझावा ❀ पारबती कर जनमु सुनावा
अति पुनीत गिरिजा कै करनी ❀ बिस्तर[1] सहित कृपानिधि बरनी

रामचन्द्रजी ने बहुत तरह से शिवजी को समझाया और पार्वती का जन्म सुनाया। कृपानिधि रामचन्द्रजी ने पार्वती की अति पवित्र करनी का वर्णन विस्तारपूर्वक किया।

दो॰ अब बिनती मम सुनहु सिव जौं मो पर निज नेहु।
जाइ बिबाहहु सैलजहिं यह मोहिं माँगे देहु ॥७६॥

उन्होंने शिवजी से कहा—हे शिव! यदि मुझ पर आपका स्नेह है, तो आप अब मेरी विनती सुनें। आप मुझे यही माँगे दीजिये कि जाकर पार्वती के साथ ब्याह कर लें।

कह सिव जदपि उचित अस नाहीं ❀ नाथ बचन पुनि मेटि न जाहीं
सिर धरि आयसु करिअ तुम्हारा ❀ परम धरमु यह नाथ हमारा

शिवजी ने कहा—यद्यपि ऐसा उचित नहीं है, तो भी प्रभु की बात टाली

1. विस्तार।

नहीं जा सकती। आपकी आज्ञा को शिरोधार्य करके पालन करूँ, हे नाथ! मेरा यही परमधर्म है।

मातु पिता गुर प्रभु कै बानी ❀ बिनहिं बिचार करिअ सुभ जानी
तुम्ह सब भाँति परम हितकारी ❀ अग्या सिर पर नाथ तुम्हारी

माता, पिता, गुरु और स्वामी की बात को बिना किसी हिचक के शुभ जानकर करना (मानना) चाहिये। आप तो सब तरह से मेरे परम हितकारी हैं। हे नाथ! आपकी आज्ञा मेरे सिर पर है।

प्रभु तोषेउ सुनि सङ्कर बचना ❀ भगति बिबेक धरम जुत रचना
कह प्रभु हर तुम्हार पन रहेऊ ❀ अब उर राखेहु जो हम कहेऊ

शिवजी की भक्ति, ज्ञान और धर्मयुक्त वचन-रचना सुनकर रामचन्द्रजी बहुत संतुष्ट हुए। प्रभु ने कहा—हे हर! आपका प्रण पूरा हो गया। अब हमने जो कहा है, उसे हृदय में रखना।

अंतरधान भए अस भाखी ❀ संकर सोइ मूरति उर राखी
तबहिं सप्तरिषि[1] सिव पहिं आए ❀ बोले प्रभु अति बचन सुहाए

यों कहकर रामचन्द्रजी अन्तर्द्धान हो गये। शिवजी ने उनकी वही मूर्ति अपने हृदय में रखली। उसी समय सप्तर्षि शिवजी के पास आये और शिवजी ने उनसे अति सुन्दर वचन कहे।

दो॰ पारबती पहिं जाइ तुम्ह प्रेम परिच्छा लेहु।
गिरिहिं प्रेरि पठयेहु भवन दूरि करेहु संदेहु ॥७७॥

आप लोग पार्वती के पास जाकर उनके प्रेम की परीक्षा लीजिये और हिमाचल से कह-सुनकर पार्वती को घर भिजवाइये और उनके सन्देह को दूर कीजिये।

तब रिषि तुरत गौरि पहँ गयऊ ❀ देखि दसा मुनि बिस्मय भयऊ
रिषिन्ह गौरि देखी तहँ कैसी ❀ मूरतिवंत तपस्या जैसी

तब वे ऋषि तुरंत ही पार्वती के पास गये। पार्वती की दशा देखकर उनके मन में बड़ा आश्चर्य हुआ। ऋषियों ने वहाँ पार्वती को कैसा देखा, मानो मूर्तिमान तपस्या ही हो।

---

१. सप्तर्षि—कश्यप, अत्रि, वशिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम और यमदग्नि।

बोले मुनि सुनु सैलकुमारी ❀ करहु कवन कारन तपु भारी
केहि अवराधहु का तुम्ह चहहू ❀ हम सन सत्य मरमु किन कहहू

मुनि बोले—हे शैलकुमारी सुनो, किस लिये तुम इतना बड़ा तप कर रही हो ? तुम किसकी आराधना कर रही हो ? और क्या चाहती हो ? तुम हमसे अपना भेद सत्य-सत्य क्यों नहीं कहती हो ?

सुनत रिषिन्ह के बचन भवानी ❀ बोली गूढ़ मनोहर बानी
कहत बचन मनु अति सकुचाई ❀ हँसिहहु सुनि हमारि जड़ताई

ऋषियों के वचन सुनकर भवानी मन को हरने वाली मर्मभरी वाणी बोलीं—बात कहते हुए मन बहुत सकुचाता है, आप लोग मेरी मूर्खता की बातें सुनकर हँसेंगे।

मनु हठ परा न सुनइ सिखावा ❀ चहत बारि पर भीति उठावा
नारद कहा सत्य सोइ जाना ❀ बिनु पंखन हम चहहिं उड़ाना
देखहु मुनि अबिबेक हमारा ❀ चाहिअ सदा सिवहिं भरतारा

मन ने हठ पकड़ लिया है। वह उपदेश नहीं सुनता। पानी पर वह दीवार खड़ी करना चाहता है। नारद जी ने जो कहा है, उसको सत्य मानकर मैं बिना पंख के उड़ना चाहती हूँ। हे मुनियो ! मेरा अज्ञान तो देखिये कि मैं सदा शिव ही को पति बनाना चाहती हूँ। [ललित अलंकार]

दो॰ सुनत बचन बिहँसे रिषय गिरिसंभव तव देह।
नारद कर उपदेसु सुनि कहहु बसेउ को गेह ॥७८॥

पार्वती की बात सुनकर ऋषि लोग हँसे और बोले—हो तो तुम पर्वत की पुत्री ही। भला, कहो तो नारद का उपदेश सुनकर कौन घर में बसा या किसका घर बसा है ?

दच्छसुतन्ह उपदेसिन्हि जाई ❀ तिन फिरि भवन न देखा आई
चित्रकेतु कर घरु उन घाला ❀ कनककसिपु कर पुनि अस हाला

नारद जी ने दक्ष के पुत्रों को उपदेश दिया था, सो उन्होंने लौटकर घर देखा ही नहीं। उन्हींने चित्रकेतु का घर चौपट किया और हिरण्यकशिपु का भी यही हाल हुआ।

नारद सिख जे सुनहिं नर नारी ❀ अवसि होहिं तजि भवन भिखारी
मन कपटी तन सज्जन चीन्हा ❀ आपु सरिस सब ही चह कीन्हा

जो स्त्री-पुरुष नारद की सीख सुनते हैं, वे घर-बार छोड़कर अवश्य ही भिखारी हो जाते हैं। उनका मन तो कपटी है; पर शरीर पर सज्जनों के-से चिन्ह हैं। वे अपने समान सभी को (आवारा) बनाना चाहते हैं।

[व्याज-स्तुति अलंकार]

तेहि के बचन मानि बिस्वासा ❀ तुम्ह चाहहु पति सहज उदासा
निर्गुन निलज कुबेष कपाली ❀ अकुल अगेह दिगंबर ब्याली

उनके वचनों पर विश्वास करके तुम ऐसा पति चाहती हो, जो स्वभाव ही से उदासीन, गुणहीन, निर्लज्ज, बुरे वेष वाला, कपालों की माला पहनने वाला, कुलहीन, घर-द्वार-हीन, नंगा और साँपों को लपेटे रखने वाला है।

कहहु कवन सुख अस बरु पाएँ ❀ भल भूलिहु ठग के बौराएँ
पंच कहे सिव सती बिबाही ❀ पुनि अवडेरि[1] मरायेन्हि ताही

ऐसे वर के मिलने से कहो, तुमको क्या सुख होगा? तुम ठग (नारद) के बहकाने में ख़ूब भूलीं। पहले पंचों के कहने से शिव ने सती के साथ व्याह किया था; पर फिर उसे त्याग कर मरवा डाला।

दो०—अब सुख सोवत सोचु नहिं भीख माँगि भव खाहिं।
सहज एकाकिन्ह के भवन कबहुँ कि नारि खटाहिं[2] ॥७६॥

अब शिव सुख से सोते हैं; उनको कोई चिन्ता नहीं रही। भीख माँगकर खाते हैं। भला, ऐसे जन्म से अकेले के घर में भी कभी स्त्रियाँ टिक सकती हैं।

[व्याज-स्तुति अलंकार]

अजहूँ मानहु कहा हमारा ❀ हम तुम्ह कहँ बर नीक बिचारा
अति सुन्दर सुचि सुखद सुसीला ❀ गावहिं बेद जासु जस लीला

अब भी हमारा कहा मानो। हमने तुम्हारे लिये अच्छा वर विचारा है। वह बहुत ही सुन्दर, पवित्र, सुखदाई और सुशील है, जिसके यश की लीला वेद गाते हैं।

---

१. त्यागकर। २. टिक सकती हैं।

दूषन रहित सकल गुन रासी ❀ श्रीपति पुर बैकुण्ठ निवासी
अस बर तुम्हहिं मिलाउब आनी ❀ सुनत बिहँसि कह बचन भवानी

वह दोषों से रहित और सारे गुणों की राशि, लक्ष्मी का स्वामी और बैकुण्ठपुरी का रहने वाला है। ऐसे बर को लाकर हम तुमसे मिलादेंगे। यह सुनकर भवानी हँसकर बोलीं—

सत्य कहेहु गिरिभव तनु एहा ❀ हठ न छूट छूटै बरु देहा
कनकउ पुनि पषान तें होई ❀ जारेहुँ सहजु न परिहर सोई

आपने यह सच ही कहा है कि मेरा यह शरीर पर्वत से उत्पन्न हुआ है। इसलिये हठ तो नहीं छूटेगा, देह भले ही छूट जाय। सोना भी तो पत्थर से उत्पन्न होता है; पर वह तपाने पर भी अपना स्वभाव नहीं छोड़ता।

नारद बचन न मैं परिहरऊँ ❀ बसउ भवन उजरउ नहिं डरऊँ
गुर के बचन प्रतीति न जेही ❀ सपनेहु सुगम न सुख सिधि तेही

मैं नारद मुनि के वचनों को नहीं छोड़ूंगी, चाहे घर बसे, या उजड़े, मैं इससे नहीं डरती। जिसको गुरु के वचनों पर विश्वास नहीं है, उसको सुख और सिद्धि स्वप्न में भी सुगम नहीं होती।

दो॰ महादेव अवगुन भवन बिष्णु सकल गुन धाम।
जेहि कर मनु रम जाहि सन तेहि तेही सन काम॥८०॥

माना कि महादेवजी अवगुणों के घर हैं और विष्णु भगवान् सारे गुणों की खान हैं। पर जिसका मन जिसमें रम गया है, उसको तो उसी से काम है।

जौ तुम्ह मिलतेहु प्रथम मुनीसा ❀ सुनतिउँ सिख तुम्हारि धरि सीसा
अब मैं जनमु संभु हित हारा ❀ को गुन दूषन करै बिचारा

हे मुनीश्वरो! जो आप पहले मिलते, तो मैं आपका उपदेश सिर चढ़ाकर सुनती। अब तो मैं अपना जन्म शिवजी के लिये हार चुकी। गुण-दोषों का विचार अब कौन करे?

जौ तुम्हरे हठ हृदयँ बिसेषी ❀ रहि न जाइ बिनु किए बरेषी[1]
तौ कौतुकिअन्ह आलसु नाहीं ❀ बर कन्या अनेक जग माहीं

---

१. बर रच्छा (बरच्छा), विवाह की बातचीत।

यदि आपके हृदय में बहुत ही हठ है और विवाह की बातचीत किये बिना रहा नहीं जाता, तो संसार में कन्या और बर बहुत हैं। खेलवाड़ करने वालों को आलस्य भी नहीं होता।

जनम कोटि लगि रगरि हमारी ❁ बरौं संभु न तु रहौं कुआँरी
तजौं न नारद कर उपदेसू ❁ आपु कहहिं सत बार महेसू

मेरा तो करोड़ जन्मों तक यही हठ है कि, "या तो शम्भु को बरूँगी और नहीं तो कुमारी रहूँगी।" स्वयं शिवजी सौ बार कहें, तो भी नारदजी के उपदेश को न छोड़ूंगी।

मैं पा परौं कहै जगदम्बा ❁ तुम्ह गृह गवनहु भयउ बिलंबा
देखि प्रेम बोले मुनि ग्यानी ❁ जय जय जगदम्बिके भवानी

जगन्माता (पार्वती) ने कहा—मैं आपके पाँव पड़ती हूँ। आप अपने घर जाइये, बहुत देर हो गई। (भवानी का शिवजी में ऐसा) प्रेम देखकर ज्ञानी मुनि बोले—हे भवानी ! हे जगन्माता ! आपकी जय हो ! जय हो !!

दो० तुम्ह माया भगवान सिव सकल जगत पितु मातु।
नाइ चरन सिरु मुनि चले पुनि पुनि हरषतु गातु।८१।

आप माया हैं और शिवजी भगवान् हैं। दोनों समस्त जगत् के माता-पिता हो। (इतना कह) पार्वती के चरणों में सिर नवाकर बारम्बार पुलकित होते हुये मुनि चल दिये।

जाइ मुनिन्ह हिमवंत पठाए ❁ करि बिनती गिरिजहिं गृह ल्याए
बहुरि सप्तरिषि सिव पहिं जाई ❁ कथा उमा कै सकल सुनाई

मुनियों ने जाकर हिमवान् को भेजा और वे विनती करके पार्वती को घर ले आये। फिर उन सात ऋषियों ने शिवजी के पास जाकर उमा की सारी कथा कह सुनाई।

भए मगन सिव सुनत सनेहा ❁ हरषि सप्तरिषि गवने गेहा
मनु थिरु करि तब संभु सुजाना ❁ लगे करन रघुनायक ध्याना

पार्वती की प्रीति सुनकर शिवजी बहुत प्रसन्न हुए। सप्तर्षि हर्षित होकर अपने घर चले गये। तब सुजान शिवजी मन को स्थिर करके रघुनाथजी का ध्यान करने लगे।

तारकु असुर भयउ तेहि काला ❀ भुज प्रताप बल तेज बिसाला
तेइ सब लोक लोकपति जीते ❀ भए देव सुख संपति रीते[1]

उन्हीं दिनों तारक नाम का एक असुर हुआ, जिसके भुजाओं का बल, प्रताप और तेज बहुत बड़ा था। उसने सब लोक और लोकपालों को जीत लिया और सारे देवता सुख-सम्पत्ति से रहित हो गये।

अजर अमर सो जीति न जाई ❀ हारे सुर करि बिबिध लराई
तब बिरंचि सन जाइ पुकारे ❀ देखे बिधि सब देव दुखारे

वह अजर-अमर था। किसी से जीता नहीं जाता था। देवता उसके साथ बहुत-सी लड़ाइयाँ लड़कर हार गये। तब सब देवताओं ने ब्रह्मा के पास जाकर पुकार मचाई। ब्रह्मा ने देखा कि सब देवता बहुत दुखी हैं।

दो॰ सब सन कहा बुझाइ बिधि दनुज निधन तब होइ।
संभु सुक्र संभूत सुत एहि जीतै रन सोइ ॥८२॥

ब्रह्मा ने सबको समझाकर कहा—इस दैत्य की मृत्यु तब होगी, जब शिवजी के वीर्य से पुत्र उत्पन्न हो; वही इसे युद्ध में जीतेगा।

मोर कहा सुनि करहु उपाई ❀ होइहि ईस्वर करिहि सहाई
सती जो तजी दच्छ मख देहा ❀ जनमी जाइ हिमाचल गेहा

मेरी बात सुनकर उपाय करो। ईश्वर सहायता करेगा, तो काम बन जायेगा। सती ने जो दक्ष के यज्ञ में शरीर छोड़ा था, वह हिमाचल के घर जाकर जन्मी है।

तेइ तपु कीन्ह सम्भु पति लागी ❀ सिव समाधि बैठे सब त्यागी
जदपि अहइ असमंजस भारी ❀ तदपि बात एक सुनहु हमारी

उसने शिवजी को पति बनाने के लिये तप किया है; पर शिवजी सब छोड़-छाड़कर समाधि लगा बैठे हैं। यद्यपि है तो बड़े असमंजस की बात तथापि मेरी एक बात सुनो।

पठवहु काम जाइ सिव पाहीं ❀ करइ छोभु संकर मन माहीं
तब हम जाइ सिवहिं सिर नाई ❀ करवाउब बिबाह बरिआई

तुम जाकर कामदेव को शिवजी के पास भेजो। वह जाकर उनके मन में

---

१. रहित, खाली।

क्षोभ पैदा करे। तब हम जाकर शिवजी के चरणों पर सिर रखकर ज़बरदस्ती उनका विवाह करा देंगे।

एहि बिधि भलेहिं देवहित होई ❀ मत अति नीक कहइ सब कोई
अस्तुति सुरन्ह कीन्हि अति हेतू ❀ प्रगटेउ बिषमबान झखकेतू

इस तरह से भले ही देवताओं का कल्याण हो सकता है। सबने कहा—यह सम्मति तो बहुत अच्छी है। फिर देवों ने बड़े प्रेम से स्तुति की। तब पाँच बाण धारण करने वाला और मछली के चिन्हयुक्त ध्वजा वाला कामदेव प्रकट हुआ।

दो॰ सुरन्ह कही निज बिपति सब सुनि मन कीन्ह बिचार।
संभु बिरोध न कुसल मोहिं बिहँसि कहेउ अस मार[1]।८३

देवताओं ने कामदेव से अपनी सारी विपत्ति कह सुनाई। सुनकर कामदेव ने मन में विचार किया और फिर हँसकर कहा—शिवजी के साथ विरोध करने में मेरी कुशल नहीं है।

तदपि करब मैं काजु तुम्हारा ❀ स्रुति कह परम धरम उपकारा
पर हित लागि तजइ जो देही ❀ संतत[2] संत प्रसंसहिं तेही

तो भी मैं तुम्हारा काम तो करूँगा; क्योंकि वेदों ने कहा है—परोपकार परमधर्म है। जो दूसरे के हित के लिये अपना शरीर छोड़ता है, सज्जन सदा उसकी बड़ाई करते हैं।

अस कहि चलेउ सबहिं सिरु नाई ❀ सुमन धनुष कर सहित सहाई
चलत मार अस हृदय बिचारा ❀ सिव बिरोध ध्रुव[3] मरनु हमारा

इतना कह और सबको सिर नवाकर कामदेव अपना पुष्प का धनुष हाथ में लेकर अपने सहायक वसन्त के साथ चला। चलते समय कामदेव ने अपने मन में यह सोचा कि शिवजी के साथ विरोध करने में मेरा मरण निश्चित है।

तब आपन प्रभाउ बिस्तारा ❀ निज बस कीन्ह सकल संसारा
कोपेउ जबहिं बारिचर केतू ❀ छन महुँ मिटे सकल स्रुतिसेतू

तब उसने अपना प्रभाव फैलाया और सारे संसार को अपने वश में कर लिया। जिस समय उस मछली के चिह्न की ध्वजावाले कामदेव ने कोप किया,

---

१. कामदेव। २. सदा। ३. निश्चय।

उस समय एक क्षणभर में वेदों की सारी मर्यादा जाती रही।

ब्रह्मचर्ज व्रत संजम नाना ❀ धीरज धरम ग्यान बिग्याना
सदाचार जप जोग बिरागा ❀ सभय बिबेक कटकु सबु भागा

ब्रह्मचर्य, व्रत, नाना प्रकार के संयम, धीरज, धर्म, ज्ञान, विज्ञान, सदाचार, जप, योग, वैराग्य आदि विवेक की सारी सेना डरकर भाग गई।

छन्द—भागेउ बिबेकु सहाइ सहित सो सुभट संजुग महि मुरे।
सदग्रंथ पर्बत कंदरन्हि महुँ जाइ तेहि अवसर दुरे॥
होनिहार का करतार को रखवार जग खरभरु परा।
दुइ माथ केहि रतिनाथ जेहि कहुँ कोपि कर धनु सरु धरा॥

विवेक अपने सहायकों-सहित भाग गया। उसके योद्धा रण-भूमि से पीठ दिखा गये। उस समय अच्छे-अच्छे ग्रन्थ पर्वतों की गुफाओं में जा छिपे। सारे जगत् में खलबली मच गई और सब कोई कहने लगे—हे विधाता! अब क्या होने वाला है? हमारी रक्षा कौन करेगा? ऐसा दो सिर वाला वह कौन है, जिसके लिये कामदेव ने कोप करके हाथ में धनुष-बाण उठाया है?

दो०— जे सजीव जग चर अचर नारि पुरुष अस नाम।
ते निज निज मरजाद तजि भए सकल बस काम॥८४॥

संसार में जितने प्रकार के चर, अचर जीव थे और जिनकी स्त्री-पुरुष संज्ञा थी, वे सब अपनी-अपनी मर्यादा छोड़कर काम के वश हो गये।

सबके हृदय मदन अभिलाखा ❀ लता निहारि नवहिं तरु साखा
नदी उमगि अम्बुधि कहुँ धाई ❀ सङ्गम करहिं तलाव तलाई

सबके हृदय में काम की इच्छा हो गई। लता (बेल) को देखकर वृक्षों की डालियाँ झुकने लगीं। नदियाँ उमड़कर समुद्र की ओर दौड़ीं और ताल-तलैयाँ भी आपस में संगम करने (मिलने-जुलने) लगीं।

जहँ असि दसा जड़न कै बरनी ❀ को कहि सकइ सचेतन्ह करनी
पसु पच्छी नभ जल थल चारी ❀ भए कामबस समय बिसारी

जब जड़ (वृक्ष, नदी आदि) की यह दशा कही गई है, तब चेतन जीवों की करनी कौन कह सकता है? आकाश, जल और थल पर रहने वाले सारे

पशु-पत्ती समय को भुलाकर काम के वश में हो गये।

मदन अन्ध ब्याकुल सब लोका ❀ निसि दिन नहिं अवलोकहिं कोका
देव दनुज नर किन्नर ब्याला ❀ प्रेत पिसाच भूत बेताला

सब लोग कामांध होकर व्याकुल हो गये। चकवा और चकई रात-दिन नहीं देखते। देव, दैत्य, मनुज, किन्नर, साँप, प्रेत, पिशाच, भूत, बेताल—

इन्ह कै दसा न कहेउँ बखानी ❀ सदा काम के चेरे जानी
सिद्ध बिरक्त महा मुनि जोगी ❀ तेपि[1] कामबस भये बियोगी

मैंने इनकी दशा का वर्णन इसलिये नहीं किया कि इनको तो सदा कामदेव का गुलाम ही जानना चाहिये। सिद्ध, विरक्त, महामुनि और योगी भी काम के वश में हो गये और विरही बन गये।

छन्द—भए कामबस जोगीस तापस पामरन्ह की को कहै।
देखहिं चराचर नारिमय जे ब्रह्ममय देखत रहे॥
अबला बिलोकहिं पुरुषमय जगु पुरुष सब अबलामयं।
दुइ दण्ड भरि ब्रह्मांड भीतर काम कृत कौतुक अयं[2]॥

जब योगीश्वर और तपस्वी ही काम के वश हो गये, तब अधमों की कौन कहे? जो सब चराचर को ब्रह्ममय देखते थे, वे अब सबको स्त्रीमय देखने लगे। स्त्रियाँ सारे संसार को पुरुषमय देखने लगीं और पुरुष सबको स्त्रीमय देखने लगे। दो घड़ी तक सारे ब्रह्माण्ड में कामदेव का रचा हुआ यह तमाशा रहा।

सो०—धरा न काहू धीर सबके मन मनसिज हरे।
जे राखे रघुबीर ते उबरे तेहि काल महुँ॥८५॥

किसी ने भी हृदय में धैर्य नहीं रक्खा। सबके मन कामदेव ने हर लिये। हाँ, जिनकी रघुनाथजी ने रक्षा की, वे ही उस समय बचे रहे।

उभय घरी अस कौतुक भयऊ ❀ जब लगि काम संभु पहँ गयऊ
सिवहिं बिलोकि ससंकेउ मारू ❀ भयउ जथाथिति सब संसारू

दो घड़ी तक यह तमाशा हुआ, जबतक कामदेव शिवजी के पास गया।

१. वे भी। २. यह, ऐसा।

शिवजी को देखकर कामदेव डरा और सारा संसार फिर जैसा का तैसा स्थिर हो गया।

भए तुरत जग जीव सुखारे ❁ जिमि मद उतरि गएँ मतवारे
रुद्रहिं देखि मदन भय माना ❁ दुराधर्ष दुर्गम भगवाना

तुरन्त जग के सब जीव सुखी हो गये, जैसे मतवाले मद उतर जाने पर सुखी हो जाते हैं। रुद्र को देखकर कामदेव भयभीत हो गया; क्योंकि शिवजी बड़े ही दुराधर्ष (अपराजेय) और दुर्गम हैं।

फिरत लाज कछु कहि नहिं जाई ❁ मरन ठानि मन रचेसि उपाई
प्रगटेसि तुरत रुचिर रितुराजा ❁ कुसुमित नव तरु राज बिराजा

लौट जाने में लज्जा है, कुछ कहा नहीं जाता (क्या करे, क्या न करे ?) (अन्त में) मनमें मरने का निश्चय करके उसने उपाय रचा। तुरंत ही उसने सुन्दर ऋतुराज वसंत को प्रकट किया। नये फूले हुए वृक्षों की पाँतें सुशोभित हो गईं।

बन उपवन बापिका तड़ागा ❁ परम सुभग सब दिसा बिभागा
जहँ तहँ जनु उमगत अनुरागा ❁ देखि मुएहु मन मनसिज जागा

बन, उपवन, बावली, सरोवर और सब दिशायें बड़ी ही सुन्दर हो गयीं। जहाँ-तहाँ मानो प्रेम उमड़ रहा है, जिसे देखकर मरे मन में भी कामदेव जाग उठा।

छन्द—जागइ मनोभव मुएहु मन बन सुभगता न परै कही।
सीतल सुगंध सुमंद मारुत मदन अनल सखा सही।
बिकसे सरन्हि बहु कंज गुंजत पुंज मंजुल मधुकरा।
कलहंस पिक सुक सरस रव करि गान नाचहिं अपछरा॥

मरे हुए मन में भी कामदेव जागने लगा। बन की शोभा कही नहीं जा सकती। कामरूपी अग्नि का सच्चा मित्र शीतल, मन्द और सुगन्धित पवन चलने लगा। सरोवरों में अनेक प्रकार के कमल खिल गये, जिन पर सुन्दर भौंरों के झुण्ड के झुण्ड गुञ्जार करने लगे। राजहंस, कोयल और तोते रसीली बोली बोलने लगे और अप्सरायें गा-गा कर नाचने लगीं।

दो०— सकल कला करि कोटि बिधि हारेउ सेन समेत।
चली न अचल समाधि सिव कोपेउ हृदय-निकेत ८६

कामदेव अपनी सेना समेत करोड़ों तरह की सब कलायें (उपाय) करके हार गया, पर शिवजी की अचल समाधि न डिगी। तब कामदेव कुपित हो उठा।

देखि रसाल बिटप बर साखा ❀ तेहि पर चढ़ेउ मदन मन माखा
सुमन चाप निज सर सन्धाने ❀ अति रिसि ताकि स्रवन लगि ताने

आम के वृक्ष की एक सुन्दर डाली देखकर कामदेव खिसियाकर उस पर चढ़ गया। उसने फूलों के धनुष पर अपने बाण चढ़ाये और अत्यन्त क्रोध से ताककर उन्हें कान तक तान लिया।

छाँड़ेउ बिषम बान उर लागे ❀ छूटि समाधि सम्भु तब जागे
भयउ ईस मन छोभु बिसेखी ❀ नयन उघारि सकल दिसि देखी

(कामदेव ने) तीक्ष्ण पाँच बाण मारे, वे शिवजी के हृदय में लगे, तब उनकी समाधि भंग हुई और वे जाग पड़े। शिवजी के मन में बहुत क्षोभ हुआ। उन्होंने आँखें खोलकर सब ओर देखा। [द्वितीय विभावना अलंकार]

सौरभ[1] पल्लव मदन[2] बिलोका ❀ भयउ कोप कंपेउ त्रय लोका
तब सिव तीसर नयन उघारा ❀ चितवत काम भयउ जरि छारा

उन्होंने आम के पत्तों में कामदेव को देखा और देखते ही क्रोध हुआ, जिससे तीनों लोक काँप उठे। तब शिवजी ने तीसरा नेत्र खोला और देखते ही कामदेव जलकर भस्म हो गया।

हाहाकार भयउ जग भारी ❀ डरपे सुर भए असुर सुखारी
समुझि कामसुख सोचहिं भोगी ❀ भए अकंटक साधक जोगी

जगत् में बड़ा हाहाकार मच गया। देवता डर गये और दैत्य सुखी हुए। भोगी लोग कामदेव के सुख को याद करके चिन्ता करने लगे और साधक योगी बेखटके हो गये।

छन्द-जोगी अकंटक भए पति गति सुनति रति मुरुछित भई।
रोदति बदति बहु भाँति करुना करति संकर पहिं गई॥

१. आम। २. कामदेव।

अति प्रेम करि बिनती बिबिध बिधि जोरि कर सनमुख रही
प्रभु आसुतोष कृपाल सिव अबला निरखि बोले सही॥

योगी अकंटक हो गये, कामदेव की स्त्री रति अपने पति की यह दशा सुनते ही मूर्च्छित हो गई। वह रोती-चिल्लाती, विलाप करती और अनेक प्रकार से करुणा करती शिवजी के पास गई। बड़े ही प्रेम से हाथ जोड़ और अनेक प्रकार से विनती करके वह सामने खड़ी हो गई। शीघ्र प्रसन्न होने वाले, कृपालु शिवजी स्त्री को देखकर सत्य वचन बोले—

दो०—**अब तें रति तव नाथ कर होइहि नाम अनंग।**
बिनु बपु[1] ब्यापिहि सबहि पुनि सुनु निज मिलन प्रसंग।

हे रति! अब से तेरे पति का नाम अनंग होगा। यह बिना शरीर ही के सबको व्यापेगा। अब तू अपने स्वामी से मिलने की बात सुन।

जब जदुबंस कृष्न अवतारा ❀ होइहि हरन महा महिभारा
कृष्नतनय होइहि पति तोरा ❀ बचन अन्यथा होइ न मोरा

जब पृथ्वी के बढ़े हुए भार को हरने के लिये यदुवंश में श्रीकृष्णजी का अवतार होगा, तब उनका पुत्र (प्रद्युम्न) तेरा पति होगा। मेरा वचन मिथ्या नहीं हो सकता।

रति गवनी सुनि संकर बानी ❀ कथा अपर अब कहौं बखानी
देवन्ह समाचार सब पाए ❀ ब्रह्मादिक बैकुंठ सिधाए

शिवजी की बात सुनकर रति चली गई। अब आगे की कथा कहता हूँ। जब यह समाचार सब देवताओं को मालूम हुआ, तब ब्रह्मा आदि देवगण बैकुण्ठ को गये।

सब सुर बिष्नु बिरंचि समेता ❀ गए जहाँ सिव कृपानिकेता
पृथक पृथक तिन्ह कीन्ह प्रसंसा ❀ भए प्रसन्न चंद्र अवतंसा

तब वहाँ से विष्णु और ब्रह्मा-सहित सब देवगण वहाँ गये, जहाँ कृपा के घर शिवजी थे। उन्होंने शिवजी की अलग-अलग स्तुति की। चन्द्रशेखर शिवजी प्रसन्न हुए।

---

१. शरीर।

बोले कृपासिंधु बृषकेतू ❀ कहहु अमर[1] आए केहि हेतू
कह बिधि तुम्ह प्रभु अंतरजामी ❀ तदपि भगति बस बिनवौं स्वामी

कृपासागर शिवजी कहने लगे—हे देवताओ ! कहो, किसलिये आये हो ? ब्रह्माजी बोले—हे प्रभु ! आप अन्तर्यामी हैं, तथापि हे स्वामी ! भक्तिवश मैं आपसे विनती करता हूँ।

दो० सकल सुरन्ह के हृदय अस संकर परम उछाहु।
निज नयनन्हि देखा चहहिं नाथ तुम्हार बिबाहु ॥८८॥

हे शंकर ! सब देवताओं के मन में ऐसा उत्साह है कि हे नाथ ! वे अपनी आँखों से आपका विवाह देखना चाहते हैं।

यह उत्सव देखिअ भरि लोचन ❀ सोइ कछु करहु मदन मद मोचन
काम जारि रति कहुँ बर दीन्हा ❀ कृपासिंधु यह अति भल कीन्हा

हे कामदेव के मद को चूर करने वाले ! आप ऐसा कीजिये, जिससे हम लोग इस उत्सव को आँख भरकर देख लें। हे कृपासागर ! कामदेव को भस्म करके आपने रति को जो वरदान दिया, सो बहुत ही अच्छा किया।

सासति[2] करि पुनि करहिं पसाऊ ❀ नाथ प्रभुन्ह कर सहज सुभाऊ
पारबती तपु कीन्ह अपारा ❀ करहु तासु अब अंगीकारा

हे नाथ ! श्रेष्ठ स्वामियों का सहज स्वभाव ही है कि पहले दण्ड देकर फिर वे कृपा किया करते हैं। पार्वती ने अपार तप किया है; अब उन्हें अंगीकार कीजिये।

सुनि बिधि बिनय समुझि प्रभु बानी ❀ ऐसइ होउ कहा सुखु मानी
तब देवन्ह दुंदुभी बजाई ❀ बरषि सुमन जय जय सुर साईं[3]

ब्रह्मा की बात सुनकर और प्रभु (रामचन्द्रजी के वचनों को) याद करके शिवजी ने सुख से कहा—ऐसा ही हो। इतना सुनते ही देवताओं ने नगाड़े बजाये और फूलों की वर्षा करके वे कहने लगे—हे देवताओं के स्वामी ! तुम्हारी जय हो, जय हो।

अवसरु जानि सप्तरिषि आए ❀ तुरतहि बिधि गिरिभवन पठाए
प्रथम गए जहँ रहीं भवानी ❀ बोले मधुर बचन छल सानी

---

१. देवता। २. नाराज़। ३. स्वामी।

उचित अवसर जानकर सप्तर्षि आये और ब्रह्मा ने तुरन्त ही उन्हें हिमाचल के घर भेजा। वे पहले वहाँ गये, जहाँ पार्वती थीं। वे उनसे छल से भरे हुये (दिल्लगी के) मीठे वचन बोले—

दो॰ कहा हमार न सुनेहु तब नारद के उपदेस।
अब भा झूठ तुम्हार पन जारेउ काम महेस ॥८९॥

नारद की बातों में आकर तुमने उस समय हमारी बात नहीं सुनी। अब तो तुम्हारा प्रण झूठा हो गया, क्योंकि शिवजी ने काम को जला डाला।

सुनि बोली मुसकाइ भवानी ❀ उचित कहेहु मुनिबर बिग्यानी
तुम्हरे जान काम अब जारा ❀ अब लगि सम्भु रहे सबिकारा

यह सुनकर पार्वती मुस्कराकर बोलीं—हे विज्ञानी मुनीवरो ! आपने ठीक ही कहा। आपकी समझ में शिवजी ने कामदेव को अब जलाया है और अब तक वे सविकार (कामी) रहे।

हमरे जान सदा सिव जोगी ❀ अज अनवद्य अकाम अभोगी
जौं मैं सिव सेयउँ अस जानी ❀ प्रीति समेत करम मन बानी

पर हमारी समझ से तो शिवजी सदा से योगी, अजन्मा, निन्दा-रहित, कामहीन और भोग-हीन हैं और यदि मैंने यही समझकर मन, वचन और कर्म से प्रेम-सहित शिवजी की सेवा की है,

तौ हमार पन सुनहु मुनीसा ❀ करिहहिं सत्य कृपानिधि ईसा
तुम्ह जो कहा हर जारेउ मारा ❀ सो अति बड़ अबिबेक तुम्हारा

तो हे मुनीश्वरो ! सुनिये, कृपासागर शिवजी हमारी प्रतिज्ञा को सत्य करेंगे। आपने जो यह कहा कि शिवजी ने कामदेव को भस्म कर दिया, यह आपका बड़ा भारी अविवेक है।

तात अनल[1] कर सहज सुभाऊ ❀ हिम तेहि निकट जाइ नहिं काऊ
गए समीप सो अवसि नसाई ❀ असि मनमथ[2] महेस की नाई

हे तात ! अग्नि का तो यह सहज स्वभाव ही है कि पाला उसके पास कभी जा ही नहीं सकता; और जाने पर तो वह अवश्य ही नष्ट हो जायगा। जिस प्रकार कामदेव महादेवजी के पास जाकर नष्ट हुआ।

---

१. आग। २. कामदेव।

दो०— हिय हरषे मुनि बचन सुनि देखि प्रीति बिस्वास।
चले भवानिहिं नाइ सिर गए हिमाचल पास ॥९०॥

पार्वती की बात सुनकर और उनका प्रेम तथा विश्वास देखकर मुनि हृदय में बड़े प्रसन्न हुये। फिर वे भवानी को प्रणाम करके चले गये और हिमाचल के पास गये।

सब प्रसंग गिरिपतिहिं सुनावा ❁ मदन[1] दहन सुनि अति दुखु पावा
बहुरि कहेउ रति कर बरदाना ❁ सुनि हिमवंत बहुत सुखु माना

मुनियों ने हिमाचल को सब हाल कह सुनाया। कामदेव के भस्म होने की बात सुनकर हिमाचल बहुत दुःखी हुये। फिर मुनियों ने रति के वरदान की बात कही। उसे सुनकर हिमवन्त ने बहुत सुख माना।

हृदयँ बिचारि सम्भु प्रभुताई ❁ सादर मुनिबर लिए बोलाई
सुदिन सुनखत सुघरी सोचाई ❁ बेगि बेद बिधि लगन धराई

शिवजी की प्रभुता को मन में सोचकर हिमाचल ने मुनियों को आदर-सहित बुला लिया और उनसे शुभ दिन, शुभ नक्षत्र और शुभ घड़ी सोधवाकर जल्दी वेद-रीति से लग्न निश्चय करा लिया।

पत्री सप्तरिषिन्ह सोइ दीन्ही ❁ गहि पद बिनय हिमाचल कीन्ही
जाइ बिधिहि तिन्ह दीन्ह सो पाती ❁ बाँचत प्रीति न हृदय समाती

फिर हिमाचल ने वह लग्न-पत्रिका ऋषियों को दे दी और उनके पाँव पकड़कर विनती की। वह लग्न-पत्रिका उन्होंने ले जाकर ब्रह्मा को दी। उसको पढ़ते समय उनके हृदय में प्रेम समाता न था।

लगन बाँचि अज सबहिं सुनाई ❁ हरषे मुनि मुनि सुर समुदाई
सुमन बृष्टि नभ बाजन बाजे ❁ मंगल कलस दसहुँ दिसि साजे

ब्रह्मा ने सबको लग्न पढ़कर सुनाया, तो उसे सुनकर मुनि तथा देवगण बहुत ही हर्षित हुये। आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी, बाजे बजने लगे और दशों दिशाओं में मंगल कलश सजा दिये गये।

---

१. कामदेव।

दो॰ लगे सँवारन सकल सुर बाहन बिबिध बिमान।
होहिं सगुन मंगल सुभग करहिं अपछरा[1] गान॥९१॥

सब देवता अपने भाँति-भाँति के वाहन (सवारी) और विमान सँवारने लगे, शुभ और सुख देने वाले शकुन होने लगे और अप्सरायें गाने लगीं।

सिवहिं संभु गन करहिं सिंगारा ❁ जटा मुकुट अहि मौरु संवारा
कुंडल कंकन पहिरे ब्याला ❁ तन बिभूति पट केहरि छाला

शिवजी के गण शिवजी का शृङ्गार करने लगे। जटाओं का मुकुट बना कर उस पर साँपों का मौर सजाया गया। शिवजी ने साँपों के कुण्डल और कंकन पहने। शरीर पर विभूति लगाई और वस्त्र के स्थान पर बाघम्बर लपेट लिया।

ससि ललाट सुन्दर सिर गंगा ❁ नयन तीनि उपवीत[2] भुजंगा
गरल कंठ उर नर सिर माला ❁ असिव बेष सिव धाम कृपाला

शिवजी के सुन्दर माथे पर चन्द्रमा, सिर पर गंगाजी, तीन नेत्र, साँपों का जनेऊ, कण्ठ में विष और छाती पर मुण्डों की माला। शिवजी का वेष अशुभ होने पर भी वे कल्याण के घर और कृपालु हैं।

कर त्रिसूल अरु डँवरू बिराजा ❁ चले बसह चढ़ि बाजहिं बाजा
देखि सिवहिं सुरत्रिय मुसुकाहीं ❁ बर लायक दुलहिनि जग नाहीं

एक हाथ में त्रिशूल और दूसरे में डमरू शोभायमान हुआ। वे बैल पर चढ़कर चले। बाजे बज रहे हैं। शिवजी को देखकर देवताओं की स्त्रियाँ मुस्कुराती हैं (और कहती हैं) कि इस वर के योग्य दुलहिन संसार में नहीं है।

बिष्नु बिरंचि आदि सुर ब्राता ❁ चढ़ि चढ़ि बाहन चले बराता
सुर समाज सब भाँति अनूपा ❁ नहिं बरात दूलह अनुरूपा

विष्णु और ब्रह्मा आदि सब देवताओं के समूह अपने-अपने वाहनों पर चढ़कर बरात में चले। देवताओं का समाज सब प्रकार से अनुपम था; पर बरात दूलह के योग्य न थी।

दो॰ बिष्नु कहा अस बिहँसि तब बोलि सकल दिसिराज।
बिलग बिलग होइ चलहु सब निज निज सहित समाज

---

१. अप्सरा। २. जनेऊ।

तब विष्णु ने सब दिग्पालों को बुलाकर हँसकर कहा—सब लोग अलग-अलग होकर अपने-अपने दल के साथ चलो।

बर अनुहारि बरात न भाई ❀ हँसी करैहहु पर पुर जाई
बिष्नु बचन सुनि सुर मुसुकाने ❀ निज निज सेन सहित बिलगाने

भाई, हम लोगों की यह बरात वर के योग्य नहीं है। पराये गाँव में जा कर क्या हँसी कराओगे? विष्णु की बात सुनकर सब देवगण मुस्कुराये और अपनी-अपनी सेना-सहित अलग-अलग हो गये।

मन ही मन महेस मुसुकाहीं ❀ हरि के ब्यंग बचन नहिं जाहीं
अति प्रिय बचन सुनत प्रिय केरे ❀ भृंगिहिं प्रेरि सकल गन टेरे

शिवजी मन ही मन मुस्कुराते हैं कि हरि की व्यंग्य की बातें (दिल्लगी) नहीं छूटतीं। अपने प्यारे के बहुत मधुर वचन सुनकर उन्होंने भृङ्गी को भेजकर अपने सब गणों को बुलवा लिया।

सिव अनुसासन सुनि सब आए ❀ प्रभु पद जलज सीस तिन्ह नाए
नाना बाहन नाना बेषा ❀ बिहँसे सिव समाज निज देखा

शिवजी की आज्ञा सुनते ही सब चले आये और आकर उन्होंने प्रभु के चरण-कमलों में सिर नवाया। उनकी तरह-तरह की सवारियाँ और तरह-तरह के वेष थे। शिवजी अपने समाज को देखकर हँसे।

कोउ मुख हीन बिपुल[1] मुख काहू ❀ बिनु पद कर कोउ बहु पद बाहू
बिपुल नयन कोउ नयन बिहीना ❀ रिष्ट पुष्ट कोउ अति तन खीना

कोई बिना मुख का है और किसी के बहुत-से मुख हैं, कोई बिना हाथ-पाँव का है और किसी के बहुत-से हाथ-पाँव हैं। किसी के बहुत-सी आँखें हैं और किसी के आँखें हैं ही नहीं। कोई बहुत मोटा-ताज़ा है तो कोई बहुत ही दुबला-पतला।

छंद-तन खीन कोउ अति पीन पावन कोउ अपावन गति धरें
भूषन कराल कपाल कर सब सद्य सोनित तन भरें
खर[2] स्वान[3] सुअर सृगाल[4] मुख गन बेष अगनित को गनै
बहु जिनिस[5] प्रेत पिसाच जोगि जमात बरनत नहि बनै

---

१. बहुत। २. गधा। ३. कुत्ता। ४. सियार। ५. जाति, क़िस्म।

कोई बहुत दुबला और कोई ख़ूब मोटा, कोई पवित्र, कोई अपवित्र दशा धारण किये हुये है। भयंकर गहने पहने, हाथ में कपाल लिये और सब के सब शरीर में ताज़ा ख़ून लपेटे हुये हैं। किसी का मुंह गधे का-सा, किसी का कुत्ते का-सा, किसी का सुअर का-सा और किसी का सियार का-सा है। उनके असंख्य वेषों को कौन गिने? बहुत प्रकार के प्रेत, पिशाच और योगियों की जमाते हैं, उनका वर्णन करते नहीं बनता।

सो० नाचहिं गावहिं गीत परम तरंगी भूत सब।
देखत अति बिपरीत बोलहिं बचन बिचित्र बिधि॥९३

सब भूत, प्रेत बड़े मौजी हैं। वे नाचते हैं और गीत गाते हैं। देखने में बहुत ही बेढंगे-से जान पड़ते हैं और विचित्र ढंग से बोलते हैं।

जस दूलह तस बनी बराता ❀ कौतुक बिबिध होहिं मग जाता
इहाँ हिमाचल रचेउ बिताना ❀ अति बिचित्र नहिं जाइ बखाना

जैसा दूलह है, वैसी ही बरात बनी है। मार्ग में चलते हुये तरह-तरह के तमाशे होते जाते हैं। इधर हिमाचल ने ऐसा विचित्र मण्डप बनवाया कि जिस का वर्णन नहीं हो सकता।

सैल सकल जहँ लगि जग माहीं ❀ लघु बिसाल नहिं बरनि सिराहीं
बन सागर सब नदी तलावा ❀ हिमगिरि सब कहुँ नेवति पठावा

जगत् में जितने पहाड़ थे, क्या बड़े और क्या छोटे, जिनका वर्णन करके पार नहीं मिलता, तथा जितने बन, समुद्र, नदियाँ और तालाब थे सबको हिमाचल ने न्योता भेजा।

कामरूप सुन्दर तनु धारी ❀ सहित समाज सोह बर नारी
आए सकल हिमाचल गेहा ❀ गावहिं मंगल सहित सनेहा

वे सब अपनी-अपनी इच्छानुसार रूप धारण करने वाले सुन्दर शरीर धारण किये हुए, सुन्दरी स्त्रियों तथा समाजों के साथ सुशोभित हिमाचल के घर आये। सब स्नेह-सहित मङ्गल गीत गाते हैं।

प्रथमहिं गिरि बहु गृह सँवराए ❀ जथाजोग जहँ तहँ सब छाए
पुर सोभा अवलोकि सुहाई ❀ लागइ लघु बिरंचि निपुनाई

हिमाचल ने पहले ही से बहुत-से घरों को सजवा रक्खा था। उन्हीं में वे

जहाँ-तहाँ यथायोग्य उतर गये। उस पुर की सुन्दर शोभा देखकर ब्रह्मा की रचना-चातुरी भी तुच्छ लगती थी।

छंद—लघु लागि बिधि की निपुनता अवलोकि पुर सोभा सही।
बन बाग कूप तड़ाग सरिता सुभग सब सक को कही॥
मंगल बिपुल तोरन पताका केतु गृह गृह सोहहीं।
बनिता पुरुष सुन्दर चतुर छबि देखि मुनि मन मोहहीं॥

पुर की सुन्दर शोभा देखकर ब्रह्मा की रचना सचमुच तुच्छ लग रही है। वन, बाग, कुएँ, तालाब, नदियाँ सब सुन्दर हैं; उनका वर्णन कौन कर सकता है? घर-घर बहुत-से मंगल-सूचक बन्दनवार और अनेक ध्वजा-पताका शोभित हो रहे हैं। वहाँ के सुन्दर और चतुर स्त्री-पुरुषों की छवि देखकर मुनियों के भी मन मोहित होते हैं।

दो॰ जगदम्बा जहँ अवतरी सो पुर बरनि कि जाइ।
रिद्धि सिद्धि संपत्ति सुख नित नूतन अधिकाइ॥९४॥

जिस पुर में स्वयं जगदम्बा (पार्वती) ने जन्म लिया है, क्या उसकी शोभा का वर्णन किया जा सकता है? वहाँ नित्य नई-नई ऋद्धि-सिद्धि और संपदा बढ़ती जाती हैं।

नगर निकट बरात सुनि आई ❀ पुर खरभरु सोभा अधिकाई
करि बनाव सजि बाहन नाना ❀ चले लेन सादर अगवाना[1]

जब बरात नगर के पास पहुँची, सुनकर नगर में चहल-पहल मच गई जिससे बड़ी शोभा और बढ़ गई। (पुरवासी लोग) अपनी-अपनी अनेक सवारियों को सजाकर आदर-सहित बरात को लेने के लिये चले।

हियँ हरषे सुर सेन निहारी ❀ हरिहि देखि अति भए सुखारी
सिव समाज जब देखन लागे ❀ बिडरि[2] चले बाहन सब भागे

देवताओं के समाज को देखकर सब लोग प्रसन्न हुए और विष्णु भगवान् को देखकर तो बहुत ही सुखी हुए। किन्तु जब वे शिवजी की मंडली को देखने लगे, तब उनकी सवारियों के हाथी, घोड़े आदि डरकर भाग चले।

---

१. आगे चलकर लेने के लिये। २. डर कर।

धरि धीरज तहँ रहे सयाने ❁ बालक सब लइ जीव पराने
गए भवन पूछहिं पितु माता ❁ कहहिं बचन भय कंपित गाता

कुछ बड़ी उम्र के समझदार लोग वहाँ धीरज धरकर खड़े रहे और लड़के तो अपना प्राण लेकर भाग गये। वे घर पहुँचे, तब उनके माता-पिता पूछते हैं और वे भय से काँपते हुये शरीर से ऐसा वचन कहते हैं।

कहिअ कहा कहि जाइ न बाता ❁ जम कर धारि किधौं बरिआता
बर बौराह बरद असवारा ❁ ब्याल कपाल बिभूषन छारा

क्या कहें, कोई बात कही नहीं जाती। यह बरात है या यमराज की सेना? दूल्हा पागल है; बैल पर बैठा हुआ है; साँप, कपाल और राख ही उसके गहने हैं।

छंद—तन छार ब्याल कपाल भूषन नगन जटिल भयंकरा।
सँग भूत प्रेत पिसाच जोगिनि बिकट मुख रजनीचरा॥
जो जिअत रहिहि बरात देखत पुन्य बड़ तेहि कर सही।
देखिहि सो उमा बिबाह घर घर बात अस लरिकन्ह कही॥

दूल्हे के शरीर पर राख लगी हुई है, साँप और कपाल के गहने हैं, वह बिलकुल नंगा, जटाधारी और डरावना है। उसके साथ भयंकर मुँहवाले भूत, प्रेत, पिशाच, योगिनी और राक्षस हैं। जो बरात को देखकर जीता बच रहेगा, सचमुच उसके बड़े ही पुण्य हैं, और वही पार्वती का विवाह देखेगा। लड़कों ने घर-घर यही बात कही।

दो०—समुझि महेस समाज सब जननि जनक मुसुकाहिं।
बाल बुझाए बिबिध बिधि निडर होहु डर नाहिं॥९५॥

महादेवजी का समाज समझकर माता-पिता मुस्कुराते हैं। उन्होंने लड़कों को बहुत तरह से समझाया कि निर्भय होओ; कोई डर नहीं है।

लइ अगवान बरातहि आए ❁ दिए सबहि जनवास सुहाए
मैना सुभ आरती सँवारी ❁ संग सुमंगल गावहिं नारी

अगवान लोग बरात को साथ लिवा लाये और उन्होंने सबको सुन्दर जनवासे में ठहरा दिया। मैना (पार्वती की माता) ने शुभ आरती सजाई और उनके साथ की स्त्रियाँ उत्तम मंगल गीत गाने लगीं।

कंचन थार सोह बर पानी ❀ परिछन[1] चली हरहिं हरषानी
बिकट बेष रुद्रहिं जब देखा ❀ अबलन उर भय भयउ बिसेषा

सुन्दर हाथों में सोने का थाल शोभायमान है, इस प्रकार मैना प्रसन्नता से शिवजी का परछन करने (आरती उतारने) चलीं। जब महादेवजी को भयङ्कर वेष में देखा, तब स्त्रियों के मन में बड़ा भारी भय उत्पन्न हो गया।

भागि भवन पैठीं अति त्रासा ❀ गए महेस जहाँ जनवासा
मैना हृदय भयउ दुख भारी ❀ लीन्ही बोलि गिरीसकुमारी

वे बड़े ही डर के मारे भागकर घर में घुस गईं। और शिवजी जहाँ जनवासा था, वहाँ चले गये। मैना (पार्वती की माता) के मन में भारी दुःख हुआ। उन्होंने पार्वती को बुलाया।

अधिक सनेहँ गोद बैठारी ❀ स्याम सरोज नयन भरि बारी
जेहिं बिधि तुमहिं रूप अस दीन्हा ❀ तेहि जड़ बरु बाउर कस कीन्हा

बहुत स्नेह से पार्वती को गोद में बैठाकर और नील-कमल के समान नेत्रों में आँसू भरकर वह कहने लगीं—जिस ब्रह्मा ने तुमको ऐसा सुन्दर रूप दिया है, उस मूर्ख ने तुम्हारे लिये बावला वर कैसे बनाया ?

छंद—कस कीन्ह बर बौराह बिधि जेहि तुम्हहिं सुंदरता दई।
जो फलु चहिअ सुरतरुहिं सो बरबस[2] बबूरहिं लागई॥
तुम्ह सहित गिरि ते गिरौं पावक जरौं जलनिधि महुँ परौं।
घरु जाउ अपजस होउ जग जीवत बिबाहु न हौं करौं॥

जिस ब्रह्मा ने तुम्हें सुन्दरता दी है, उसने तुम्हारे लिये ऐसा बावला वर कैसे बनाया ? जो फल कल्पवृक्ष में लगना चाहिये, वह ज़बरदस्ती बबूल में लग रहा है। मैं तुम्हें लेकर पहाड़ पर से गिरूँगी, आग में जलूँगी या समुद्र में कूद पड़ूँगी। घर उजड़े, चाहे संसार में अपयश हो, पर मैं जीते-जी तुम्हारा विवाह इस वर से न करूँगी। [ललित अलंकार]

दो०—भईं बिकल अबला सकल दुखित देखि गिरिनारि।
करि बिलापु रोदति बदति सुता सनेहु सँभारि॥९६॥

१. वर की आरती उतारना। २. ज़बरदस्ती।

हिमाचल की स्त्री (मैना) को दुःखी देखकर सारी स्त्रियाँ व्याकुल हो गईं। मैना अपनी पुत्री के स्नेह को याद करके विलाप करती, रोती और कहती थीं—

नारद कर मैं काह बिगारा ❀ भवन मोर जिन्ह बसत उजारा
अस उपदेस उमहिं जिन्ह दीन्हा ❀ बौरे[1] बरहिं लागि तपु[2] कीन्हा

मैंने नारद का क्या बिगाड़ा था, जिन्होंने मेरा बसता हुआ घर उजाड़ दिया और जिन्होंने पार्वती को ऐसा उपदेश दिया कि जिससे उसने इस बावले वर के लिये तप किया।

साँचेहु उन्ह कें मोह न माया ❀ उदासीन धनु धामु न जाया
पर घर घालक लाज न भीरा ❀ बाँझ कि जान प्रसव कै पीरा

सचमुच उनको न किसी का मोह है, न माया; न उनके धन है, न घर है और न स्त्री ही है। वे सबसे उदासीन हैं। वे पराये का घर उजाड़ने वाले हैं। उन्हें न किसी की लाज है, न डर है। भला, बाँझ स्त्री प्रसव की पीड़ा को क्या जाने ?

जननिहिं बिकल बिलोकि भवानी ❀ बोली जुत[3] बिबेक मृदु बानी
अस बिचारि सोचहि मति माता ❀ सो न टरइ जो रचइ बिधाता

माता को विकल देखकर पार्वती विवेकयुक्त कोमल वाणी बोलीं—हे माता ! विधाता जो रच देता है, वह टलता नहीं; ऐसा सोचकर तुम शोक मत करो।

करम लिखा जौं बाउर नाहू ❀ तो कत[4] दोष लगाइअ काहू
तुम्ह सन मिटिहि कि बिधि के अंका ❀ मातु ब्यर्थ जनि लेहु कलंका

जो मेरे प्रारब्ध में बावला ही पति लिखा है, तो किसी को दोष क्यों लगाया जाय ? हे माता ! क्या विधाता के अंक तुमसे मिट सकते हैं ? वृथा कलंक मत लो।

छंद—जनि लेहु मातु कलंक करुना परिहरहु अवसर नहीं।
दुख सुख जो लिखा लिलार हमरे जाब जहँ पाउब तहीं॥
सुनि उमा बचन बिनीत कोमल सकल अबला सोचहीं।
बहु भाँति बिधिहि लगाइ दूषन नयन बारि बिमोचहीं॥

---

१. बावले। २. के लिये। ३. युक्त, सहित। ४. क्यों ?

हे माता ! कलंक मत लो, रोना छोड़ो । यह अवसर (शोक करने का) नहीं है । जो दुःख-सुख मेरे करम में लिखा है, उसे मैं जहाँ जाऊँगी, वहीं पाऊँगी । पार्वती के ऐसे नम्र और कोमल वचन सुनकर सब स्त्रियाँ सोच करने लगीं और बहुत तरह से ब्रह्मा को दोष दे-देकर आँखों से आँसू गिराने लगीं । [प्रथम असंगति अलंकार]

दो० तेहि अवसर नारद सहित अरु रिषि सप्त समेत ।
समाचार सुनि तुहिनगिरि गवने तुरित निकेत ॥९७॥

इस समाचार को सुनकर हिमाचल उसी समय नारद जी को और सप्त-ऋषियों को साथ लेकर अपने घर गये ।

तब नारद सबही समुझावा ❀ पूरब कथा प्रसंगु सुनावा
मैना सत्य सुनहु मम बानी ❀ जगदम्बा तव सुता भवानी

तब नारद जी ने सबको समझाया और पूर्वजन्म की कथा का प्रसंग सुनाया । उन्होंने कहा—हे मैना ! तुम मेरी सच्ची बात सुनो । तुम्हारी यह पुत्री साक्षात् जगदम्बा भवानी हैं ।

अजा अनादि सक्ति अविनासिनि ❀ सदा सम्भु अरधंग निवासिनि
जग सम्भव पालन लय कारिनि ❀ निज इच्छा लीला बपु धारिनि

ये कभी जन्म नहीं लेतीं, इनका कभी आरम्भ भी नहीं । ये कभी नाश न होने वाली शक्ति हैं । ये सदा शिवजी के अर्धाङ्ग में रहती हैं । येही जगत् को पैदा करतीं, पालन करतीं और उसका संहार करती हैं । यह अपनी ही इच्छा से लीला-शरीर धारण करती हैं ।

जनमी प्रथम दच्छ गृह जाई ❀ नाम सती सुन्दर तनु पाई
तहँउ सती संकरहि बिबाहीं ❀ कथा प्रसिद्ध सकल जग माहीं

पहले ये दक्ष के घर पैदा हुई थीं । तब इनका नाम सती था और इन्होंने बहुत सुन्दर शरीर पाया था । वहाँ भी सती शिवजी ही को व्याही गई थीं । यह कथा सारे जगत् में प्रसिद्ध है ।

एक बार आवत सिव संगा ❀ देखेउ रघुकुल कमल पतंगा
भयउ मोहु सिव कहा न कीन्हा ❀ भ्रम बस बेष सीय कर लीन्हा

एक बार इन्होंने शिवजी के साथ आते हुये रघुकुलरूपी कमल के सूर्य

रामचन्द्रजी को देखा, इन्हें मोह हो गया और भ्रम में पड़कर सीताजी का वेष धारण कर लिया।

छन्द—सिय बेषु सती जो कीन्ह तेहि अपराध संकर परिहरीं
हर बिरहँ जाइ बहोरि पितु के जग्य जोगानल जरीं
अब जनमि तुम्हरे भवन निज पति लागि दारुन तपु किया
अस जानि संसय तजहु गिरिजा सर्बदा संकर प्रिया

सती ने सीता का वेष धारण किया, इसी अपराध से शिवजी ने उन्हें त्याग दिया। शिवजी के वियोग में ये अपने पिता के यज्ञ में जाकर वहीं योगाग्नि से भस्म हो गई थीं। अब इन्होंने तुम्हारे घर में जन्म लेकर अपने पति के लिये कठिन तप किया है। ऐसा जानकर सन्देह छोड़ दो। पार्वती जी सदा ही शिवजी की प्रिया हैं।

दो०—सुनि नारद के बचन तब सब कर मिटा बिषाद।
छन महँ ब्यापेउ सकल पुर घर घर यह संबाद।९८॥

तब नारद के वचन सुनकर सबका दुःख मिट गया और क्षणभर ही में यह समाचार सारे नगर में घर-घर फैल गया।

तब मैना हिमवन्त अनंदे ❀ पुनि पुनि पारवती पद बंदे
नारि पुरुष सिसु जुवा सयाने ❀ नगर लोग सब अति हरषाने

तब मना और हिमाचल बहुत आनन्दित हुये और उन्होंने बार-बार पार्वती के चरणों की वंदना की। स्त्री, पुरुष, बालक, युवा, वृद्ध और नगर के सभी लोग बहुत प्रसन्न हुये।

लगे होन पुर मंगल गाना ❀ सजे सबहि हाटक[1] घट नाना
भाँति अनेक भई जेवनारा ❀ सूपसास्त्र जस कछु व्यवहारा

नगर में आनन्द-मङ्गल के गीत गाये जाने लगे और सबने सुवर्ण के तरह-तरह के कलश सजाये। पाकशास्त्र में जैसा विधान है, उसके अनुसार अनेक भाँति की ज्योनार हुई (रसोई बनी)।

---

१. सोना।

सो जेवनार कि जाइ बखानी ❀ बसहिं भवन जेहि मातु भवानी
सादर बोले सकल बराती ❀ बिष्नु बिरंचि देव सब जाती

भला, जिस घर में स्वयं माता भवानी रहती हों, क्या वहाँ की ज्योनार का वर्णन किया जा सकता है ? हिमाचल ने आदरपूर्वक सब बरातियों को—विष्णु, ब्रह्मा और सब जाति के देवताओं को बुलाया।

बिबिध पाँति बैठी जेवनारा ❀ लगे परोसन निपुन सुआरा
नारिबृन्द सुर जेंवत जानी ❀ लगीं देन गारी मृदु बानी

भोजन करने वालों की बहुत सी पंगतें बैठीं। चतुर रसोइये परोसने लगे। स्त्रियों की मंडलियाँ देवताओं को भोजन करते हुये जानकर कोमल वाणी से गालियाँ देने लगीं।

छन्द—गारी मधुर सुर[1] देहिं सुन्दरि ब्यंग बचन सुनावहीं
भोजन करहिं सुर अति बिलंब बिनोद सुनि सचु पावहीं
जेवँत जो बढ्यो अनंद सो मुख कोटिहू न परै कह्यो।
अँचवाइ दीन्हे पान गवने बास जहँ जाको रह्यो॥

सब सुन्दरी स्त्रियाँ मीठे स्वर में गालियाँ देने लगीं और तरह-तरह के व्यंग्य से भरे वचन सुनाने लगीं। देवगण धीरे-धीरे बड़ी देर तक भोजन करते हैं और विनोद सुनकर सुख अनुभव करते हैं। जेवनार के समय जो आनन्द बढ़ा, वह करोड़ों मुंह से भी नहीं कहा जा सकता। (भोजन कर चुकने पर) सबके हाथ-मुंह धुलवाकर पान दिये गये। फिर सब लोग जो जहाँ ठहरे थे, वहाँ चले गये। [अनुज्ञा अलंकार]

दो०—बहुरि मुनिन्ह हिमवंत कहँ लगन सुनाई आइ।
समय बिलोकि बिबाह कर पठए देव बोलाइ ९९

फिर मुनियों ने लौटकर हिमाचल को लगन (लग्न-पत्रिका) सुनाई और विवाह का समय देखकर देवताओं को बुलौआ भेजा।

बोलि सकल सुर सादर लीन्हे ❀ सबहिं जथोचित आसन दीन्हे
बेदी बेद बिधान सँवारी ❀ सुभग सुमंगल गावहिं नारी

---

१. स्वर।

सब देवताओं को आदर-सहित बुलवा लिया और सबको यथायोग्य आसन दिये। वेद की रीति से वेदी सजाई गई और सुन्दर स्त्रियाँ श्रेष्ठ, मंगल गीत गाने लगीं।

सिंहासनु अति दिब्य सुहावा ❀ जाइ न बरनि बिचित्र बनावा
बैठे सिव बिप्रन्ह सिरु नाई ❀ हृदयँ सुमिरि निज प्रभु रघुराई

वेदी पर दिव्य सुहावना सिंहासन था, जो ऐसा विचित्र बना था कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। ब्राह्मणों को प्रणाम करके और हृदय में अपने स्वामी रामचन्द्रजी को स्मरण करके शिवजी उस पर बैठ गये।

बहुरि मुनीसन्ह उमा बोलाई ❀ करि सिंगारु सखी लेइ आई
देखत रूपु सकल सुर मोहे ❀ बरनै छबि अस जग कबि को[1] है

फिर मुनियों ने पार्वती को बुलवाया। सखियाँ उनका शृङ्गार करके लिवा लाईं। पार्वती के रूप को देखकर सारे देवता मोहित हो गये। संसार में ऐसा कवि कौन है, जो उस सुन्दरता का वर्णन कर सके?

जगदम्बिका जानि भव बामा ❀ सुरन्ह मनहिं मन कीन्ह प्रनामा
सुन्दरता मरजाद भवानी ❀ जाइ न कोटिहुँ बदन बखानी

पार्वती को जगदम्बा और शिवजी की पत्नी समझकर देवताओं ने उन्हें मन ही मन प्रणाम किया। भवानी सुन्दरता की सीमा हैं। उनकी सुन्दरता करोड़ों मुँखों से भी नहीं कही जा सकती।

छंद–कोटिहुँ बदन नहिं बनै बरनत जग जननि सोभा महा।
सकुचहिं कहत श्रुति सेष सारद मंद मति तुलसी कहा॥
छबि खानि मातु भवानि गवनी मध्य मंडप सिव जहाँ।
अवलोकि सकइ न सकुचि पति पद कमल मन मधुकर[2] तहाँ

जगत् की जननी पार्वती की महान् शोभा का वर्णन करोड़ मुँह से भी नहीं किया जा सकता। वेद, शेषजी और सरस्वती तक उसे कहते हुए संकोच करते हैं, तब मंद-बुद्धि तुलसी किस गिनती में है? शोभा की खान माता भवानी शिवजी के पास मण्डप में गईं। वे लज्जा के मारे पति के पद-कमलों को देख नहीं सकीं, पर उनका मनरूपी भौंरा वहाँ (लुब्ध हो गया) था।

---

१. कौन। २. भौंरा।

दो० मुनि अनुसासन गनपतिहिं पूजेउ संभु भवानि।
कोउ सुनि संसय करै जनि सुर अनादि जिय जानि॥

मुनियों की आज्ञा से शिवजी और पार्वतीजी ने गणेशजी का पूजन किया। मन में देवताओं को अनादि समझकर कोई इस बात को सुनकर शङ्का न करे (कि पिता ने पुत्र का पूजन उसके जन्म से पहले ही कैसे कर लिया।)

जसि बिबाह कै बिधि श्रुति गाई ❀ महा मुनिन्ह सो सब करवाई
गहि गिरीस कुस कन्या पानी[1] ❀ भवहिं समरपी जानि भवानी

वेद में विवाह की जैसी रीति कही गई है, वह सब यहाँ मुनियों ने करवाई। हिमाचल ने अपने हाथ में कुश लेकर और कन्या का हाथ पकड़कर भवानी जानकर उन्हें शिवजी को समर्पण किया।

पानि ग्रहन जब कीन्ह महेसा ❀ हिय हरषे तब सकल सुरेसा
बेद मंत्र मुनिबर उच्चरहीं ❀ जय जय जय संकर सुर करहीं

जब शिवजी ने पार्वती का पाणि-ग्रहण किया, तब इन्द्रादि सब देवता मन में बड़े ही प्रसन्न हुए। मुनिवर वेद-मन्त्रों का पाठ करने लगे और देवगण शिवजी का जय-जयकार करने लगे।

बाजहिं बाजन बिबिध बिधाना ❀ सुमन बृष्टि नभ भै बिधि नाना
हर गिरिजा कर भयउ बिबाहू ❀ सकल भुवन भरि रहा उछाहू

तरह-तरह के बाजे बजने लगे और आकाश से नाना प्रकार के फूलों की वर्षा हुई। शिव-पार्वती का विवाह हो गया। सारे ब्रह्माण्ड में आनन्द भर गया।

दासी दास तुरँग रथ नागा ❀ धेनु बसन मनि बस्तु बिभागा
अन्न कनक भाजन भरि जाना[2] ❀ दाइज दीन्ह न जाइ बखाना

हिमाचल ने दास, दासी, घोड़े, रथ, हाथी, गायें, वस्त्र, मणि, अनेक प्रकार की चीज़ें सुवर्ण के बर्तनों में अन्न भरकर, गाड़ियों में लदवाकर दहेज में दिया, जिनका वर्णन नहीं हो सकता।

छन्द—दाइज दियो बहु भाँति पुनि कर जोरि हिमभूधर कह्यो
का देउँ पूरनकाम संकर चरन पंकज गहि रह्यो॥

१. हाथ। २. सवारी।

सिव कृपासागर ससुर कर संतोषु सब भाँतिहि कियो।
पुनि गहे पद पाथोज मैना प्रेम परिपूरन हियो ॥

बहुत प्रकार के दहेज देकर, फिर हाथ जोड़कर हिमाचल ने कहा—हे शङ्कर ! आप पूर्ण-काम हैं, मैं आपको क्या दे सकता हूँ ? यह कहकर उन्होंने शिवजी के पाँव पकड़ लिये। तब कृपा-सागर शिवजी ने अपने ससुर का सभी प्रकार से समाधान किया। फिर प्रेम-पूर्ण हृदय से मैना ने शिवजी के चरण-कमल पकड़े (और कहा)—

दो०— **नाथ उमा मम प्रान सम गृहकिंकरी[1] करेहु ।**
छमेहु सकल अपराध अब होइ प्रसन्न बरु देहु ।१०१।

हे नाथ ! यह उमा मुझे मेरे प्राणों के समान (प्यारी) है। आप इसे अपने घर की टहलुनी बनाइये। इसके समस्त अपराधों को क्षमा करते रहियेगा। प्रसन्न होकर मुझे यही वर दीजिए।

बहु बिधि संभु सासु समुझाई ❀ गवनी भवन चरन सिरु नाई
जननी उमा बोलि तब लीन्ही ❀ लै उछङ्ग[2] सुंदर सिख दीन्ही

शिवजी ने बहुत तरह से अपनी सास को समझाया। वह शिवजी के चरणों में प्रणाम करके घर गईं। फिर माता ने पार्वती को बुलाया और गोद में बैठाकर सुन्दर सीख दी।

करेहु सदा संकर पद पूजा ❀ नारि धरम पति देव न दूजा
बचन कहत भरि लोचन बारी ❀ बहुरि लाइ उर लीन्हि कुमारी

हे पुत्री ! तू सदा शिवजी के चरणों की सेवा करना। नारियों का यही धर्म है। उनके लिए पति के सिवा कोई दूसरा देवता नहीं है। इस प्रकार की बातें कहते-कहते आँखों में आँसू भर आये। उन्होंने कन्या को फिर अपनी छाती से लगा लिया।

कत[3] बिधि सृजी नारि जग माहीं ❀ पराधीन सपनेहु सुख नाहीं
भै अति प्रेम बिकल महतारी ❀ धीरज कीन्ह कुसमउ बिचारी

(उन्होंने फिर कहा), ब्रह्मा ने संसार में नारी को क्यों पैदा किया ? पराधीन को तो सपने में भी सुख नहीं मिलता। उस समय पार्वती की

---

१. घर की दासी। २. गोद। ३. क्यों ?

माता प्रेम में अत्यन्त विकल हो गईं, परन्तु कुसमय जानकर उन्होंने धीरज धरा।

पुनि पुनि मिलति परति गहि चरना ❀ परम प्रेम कछु जाइ न बरना
सब नारिन्ह मिलि भेंटि भवानी ❀ जाइ जननि उर पुनि लपटानी

मैना बार-बार पार्वती को भेंटती हैं और उनके चरणों पर पड़ती हैं। अतिशय प्रीति है। कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता। पार्वती सब स्त्रियों से मिल-भेंटकर फिर अपनी माता की छाती से जा लगीं।

छन्द—जननी बहुरि मिलि चलीं उचित असीस सब काहू दईं
फिरि फिरि बिलोकति मातु तन तब सखी लेइ सिव पहिं गईं
जाचक सकल संतोषि संकर उमा सहित भवन चले
सब अमर हरषे सुमन बरषि निसान नभ बाजे भले

फिर माता से मिलकर पार्वती चलीं। सब स्त्रियों ने उन्हें योग्य आशीर्वाद दिये। पार्वती जी फिर-फिरकर माता को देखती थीं। तब सखियाँ उन्हें शिवजी के पास ले गईं। महादेवजी सब मँगतों को संतुष्ट कर पार्वती के साथ घर (कैलाश) को चले। सब देवगण प्रसन्न होकर फूलों की वर्षा करने लगे और आकाश में सुन्दर नगाड़े बजाने लगे।

दो॰ चले संग हिमवंतु तब पहुँचावन अति हेतु।
बिबिध भाँति परितोषु करि बिदा कीन्ह बृषकेतु।१०२

तब हिमाचल अत्यन्त प्रेम से शिवजी को पहुँचाने के लिये साथ चले। शिवजी ने बहुत तरह से उन्हें समझा-बुझाकर विदा किया।

तुरत भवन आए गिरिराई ❀ सकल सैल सर लिए बोलाई
आदर दान बिनय बहु माना ❀ सब कर बिदा कीन्ह हिमवाना

पर्वतराज हिमाचल तुरंत घर आये और उन्होंने सब पर्वतों और सरोवरों को बुलाया। हिमवान् ने आदर, दान, विनय और बहुत सम्मानपूर्वक सब को विदा किया।

---

१. पास।

जबहिं संभु कैलासहि आए ❀ सुर सब निज निज लोक सिधाए
जगत मातु पितु संभु भवानी ❀ तेहि सिंगारु न कहउँ बखानी

जब शिवजी कैलाश पर्वत पर पहुँचे, तब सब देवगण अपने-अपने लोकों को चले गये। (तुलसीदासजी कहते हैं कि) पार्वती और महादेवजी जगत् के माता और पिता हैं, इसलिये मैं उनके शृङ्गार का वर्णन नहीं करता।

करहिं बिबिध बिधि भोग बिलासा ❀ गनन्ह समेत बसहिं कैलासा
हर गिरिजा बिहार नित नएऊ ❀ एहि बिधि बिपुल काल चलि गएऊ

शिव और पार्वती तरह-तरह के भोग-विलास करते हुये अपने गणों के साथ कैलाश पर रहने लगे। शिव और पार्वती नित्य नये विहार करते थे। इस प्रकार बहुत समय बीत गया।

तब जनमेउ षटबदन कुमारा ❀ तारकु असुर समर जेहि मारा
आगम निगम प्रसिद्ध पुराना ❀ षन्मुख जनमु सकल जगु जाना

तब छः मुँह वाले (स्वामिकार्तिक) पुत्र का जन्म हुआ, जिन्होंने लड़ाई में तारक नामक असुर को मारा। वेद, शास्त्र और पुराणों में उनके जन्म की कथा प्रसिद्ध है और उस कथा को सारा जगत् जानता है।

छंद—जगु जान षन्मुख जनमु करमु प्रतापु पुरुषारथु महा।
तेहि हेतु मैं बृषकेतु सुत कर चरित संछेपहि कहा॥
यह उमा संभु बिबाहु जे नर नारि कहहिं जे गावहीं।
कल्यान काज बिबाह मंगल सर्बदा सुखु पावहीं॥

स्वामिकार्तिक के जन्म, कर्म, प्रताप और महा पुरुषार्थ को सारा जगत् जानता है। इसलिये मैंने शिवजी के पुत्र "स्वामिकार्तिक" का चरित्र संक्षेप ही में कहा है। शिव-पार्वती के विवाह की इस कथा को जो स्त्री-पुरुष कहेंगे और गायेंगे, वे सब कल्याण के कामों और विवाहोत्सवों में सदा सुख पायेंगे।

दो०—चरित सिंधु गिरिजा रमन बेद न पावहिं पारु।
बरनै तुलसीदासु किमि अति मतिमंद गवाँरु॥१०३॥

गिरिजापति महादेवजी का चरित्र सागर के समान (अपार) है। उसका

पार वेद भी नहीं पाते। तब अत्यन्त मन्दबुद्धि और गँवार तुलसीदास उसका वर्णन कैसे कर सकता है ?

संभु चरित सुनि सरस सुहावा ❀ भरद्वाज मुनि अति सुखु पावा
बहु लालसा कथा पर बाढ़ी ❀ नयनन्हि नीरु रोमावलि ठाढ़ी

महादेवजी के रसीले और सुहावने चरित्र को सुनकर भरद्वाजजी ने बड़ा ही सुख पाया। उनके मन में कथा सुनने की लालसा बहुत बढ़ गई और आँखों में जल भर आया तथा रोमावली खड़ी हो गई।

प्रेम बिबस मुख आव न बानी ❀ दसा देखि हरषे मुनि ग्यानी
अहो धन्य तव जनम मुनीसा ❀ तुम्हहिं प्रान सम प्रिय गौरीसा

वे प्रेम में मुग्ध हो गये। उनके मुख से वाणी तक न निकली। उनकी यह दशा देखकर ज्ञानी मुनि याज्ञवल्क्य बहुत हर्षित हुये। (उन्होंने कहा—) हे मुनीश ! तुम्हारा जन्म धन्य है; तुमको शिवजी प्राण के समान प्रिय हैं।

सिव पद कमल जिन्हहिं रति नाहीं ❀ रामहिं ते सपनेहुँ न सुहाहीं
बिनु छल बिस्वनाथ पद नेहू ❀ राम भगत कर लच्छन एहू

शिवजी के चरण-कमलों में जिनको प्रीति नहीं है, वे रामचन्द्रजी को स्वप्न में भी अच्छे नहीं लगते। राम-भक्त का लक्षण यही है कि उसका विश्वनाथ शिवजी के चरणों में निष्कपट प्रेम हो।

सिव सम को रघुपति ब्रतधारी ❀ बिनु अघ तजी सती असि नारी
पनु करि रघुपति भगति दृढ़ाई ❀ को सिव सम रामहिं प्रिय भाई

शिवजी के समान रामचन्द्रजी (की भक्ति) का व्रत धारण करने वाला और कौन है ? जिन्होंने बिना ही पाप के सती-जैसी स्त्री को त्याग दिया। उन्होंने प्रण करके रामचन्द्रजी की भक्ति की दृढ़ता प्रकट की। हे भाई ! रामचन्द्रजी को शिवजी के समान दूसरा कौन प्यारा है ?

दो० प्रथमहिं मैं कहि सिव चरित बूझा[1] मरमु तुम्हार।
सुचि सेवक तुम्ह राम के रहित समस्त बिकार॥१०४॥

मैंने पहले शिवजी का चरित्र वर्णन करके तुम्हारा भेद समझ लिया। तुम रामचन्द्रजी के पवित्र सेवक हो और सब दोषों से रहित हो।

---

१. समझ लिया।

मैं जाना तुम्हार गुन सीला ❀ कहउँ सुनहु अब रघुपति लीला
सुनु मुनि आजु समागम तोरें ❀ कहि न जाइ जस सुखु मन मोरें

(याज्ञवल्क्यजी भरद्वाजजी से कहते हैं कि) मैंने तुम्हारा गुण और शील जान लिया। अब मैं रामचन्द्रजी की लीला कहता हूँ, सुनो। हे मुनि! सुनो, तुम्हारे मिलने से आज मेरे मन में जो आनन्द हुआ है, वह कहा नहीं जा सकता।

राम चरित अति अमित मुनीसा ❀ कहि न सकहिं सत कोटि अहीसा[1]
तदपि जथास्रुत कहउँ बखानी ❀ सुमिरि गिरापति प्रभु धनुपानी

हे मुनीश्वर! रामचरित्र अतिशय अपार है। उसको सौ करोड़ शेषजी भी नहीं कह सकते। तो भी जैसा मैंने सुना है, वैसा वाणी के पति (प्रेरक) और हाथ में धनुष-बाण लिये हुए श्रीरामचन्द्रजी को स्मरण करके कहता हूँ।

सारद दारु[2] नारि सम स्वामी ❀ राम सूत्रधर अंतरजामी
जेहि पर कृपा करहिं जनु जानी ❀ कबि उर अजिर[3] नचावहिं बानी

हे मुनीश! सरस्वती जी कठपुतली के समान और स्वामी अन्तर्यामी रामचन्द्रजी (तागा पकड़कर कठपुतली को नचाने वाले) सूत्रधार हैं। अपना भक्त जानकर जिस कवि पर वे कृपा करते हैं, उसके हृदय-रूपी आँगन में सरस्वती को वे नचाया करते हैं।

प्रनवउँ सोइ कृपाल रघुनाथा ❀ बरनउँ बिसद तासु गुन गाथा
परम रम्य गिरिबर कैलासू ❀ सदा जहाँ सिव उमा निवासू

उन्हीं कृपालु रघुनाथजी को मैं प्रणाम करता हूँ और उन्हीं के निर्मल गुणों की कथा कहता हूँ। गिरिश्रेष्ठ कैलाश बहुत ही रमणीय है, जहाँ शिव-पार्वती सदा निवास करते हैं।

दो॰ सिद्ध तपोधन जोगिजन सुर किन्नर मुनि बृन्द।
बसहिं तहाँ सुकृती सकल सेवहिं सिव सुख कंद।१०५।

उस पर्वत पर सिद्ध, तपस्वी, योगी, देव, किन्नर, मुनियों के समूह और पुण्यात्मा लोग रहते हैं और सब सुखों के मूल श्रीमहादेवजी की सेवा करते हैं।

---

१. शेषनाग। २. काठ। ३. आँगन।

हरि हर बिमुख धरम रति नाहीं ❀ ते नर तहँ सपनेहुँ नहिं जाहीं
तेहि गिरि पर बट बिटप बिसाला ❀ नित नूतन सुन्दर सब काला

जो भगवान् विष्णु और महादेवजी से विमुख हैं और जिनकी धर्म में श्रद्धा नहीं है, वे लोग स्वप्न में भी वहाँ नहीं जा सकते। उस पर्वत पर बरगद का एक बड़ा वृक्ष है, जो सदा नया और सुन्दर रहता है।

त्रिबिध समीर सुसीतलि छाया ❀ सिव बिस्राम बिटप स्रुति गाया
एक बार तेहि तर प्रभु गयऊ ❀ तरु बिलोकि उर अति सुखु भयऊ

वहाँ तीन प्रकार का शीतल, मंद और सुगन्धित पवन चला करता है। उसकी छाया बड़ी ही शीतल है। वेदों ने गाया है कि वह वृक्ष शिवजी के विश्राम करने के लिये है। एक बार प्रभु (शिवजी) उस वृक्ष के नीचे गये, उसे देखकर उनके हृदय में बहुत आनन्द हुआ।

निज कर डासि[1] नाग रिपु छाला ❀ बैठे सहजहिं सम्भु कृपाला
कुंद इंदु दर[2] गौर सरीरा ❀ भुज प्रलंब परिधन मुनि चीरा

अपने हाथ से बाघम्बर बिछाकर कृपालु शिवजी स्वाभाविक रीति से उस पर बैठ गये। उनका शरीर कुन्द के फूल, चन्द्रमा और शङ्ख के समान गौर था। भुजायें लम्बी थीं और वे मुनियों का वस्त्र (वल्कल) धारण किये हुये थे।

तरुन अरुन अम्बुज सम चरना ❀ नख दुति भगत हृदय तम हरना
भुजँग भूति भूषन त्रिपुरारी ❀ आननु सरद चंद छबि हारी

उनके चरण नए लाल कमल के समान थे और उनके नखों की ज्योति भक्तों के हृदय का अन्धकार दूर करने वाली थी। साँप और भस्म ही उनके भूषण थे। उन त्रिपुरासुर के शत्रु शिवजी का मुख शरत्काल के चन्द्रमा की छबि को फीका करने वाला था।

दो०— जटा मुकुट सुरसरित सिर लोचन नलिन बिसाल।
नीलकंठ लावन्य निधि सोह बाल बिधु भाल ॥१०६॥

उनके सिर पर जटाओं का मुकुट और गंगाजी थीं। उनके बड़े-बड़े नेत्र कमल के समान थे। उनके गले में नीला चिन्ह था और वे सुन्दरता के भण्डार थे। उनके मस्तक पर द्वितीया का चन्द्रमा शोभायमान था।

---

१. बिछाकर। २. शंख।

बैठे सोह कामरिपु कैसे ❀ धरे सरीरु सांत रस जैसे
पारबती भल अवसरु जानी ❀ गईं सम्भु पहिं मातु भवानी

कामदेव के शत्रु शिवजी महाराज वहाँ बैठे हुए ऐसे शोभित हो रहे थे कि मानो शांत-रस ही शरीर धारण करके बैठा हो। सुअवसर समझकर माता पार्वती उनके पास गईं।

जानि प्रिया आदरु अति कीन्हा ❀ बाम भाग आसनु हर दीन्हा
बैठीं सिव समीप हरषाई ❀ पूरब जन्म कथा चितु आई

अपनी प्यारी (अर्धाङ्गिनी) जानकर शिवजी ने उनका बहुत आदर किया और बैठने को अपनी बाईं ओर आसन दिया। पार्वतीजी प्रसन्न होकर शिवजी के पास बैठ गईं। उनके मन में पिछले जन्म की कथा याद आ गई।

पति हियँ हेतु अधिक अनुमानी ❀ बिहँसि उमा बोलीं प्रिय बानी
कथा जो सकल लोक हितकारी ❀ सोइ पूछन चह सैलकुमारी

स्वामी के हृदय में अपने ऊपर बहुत प्रेम समझकर पार्वतीजी हँसकर मीठे वचन बोलीं। जो कथा सब लोगों का हित करने वाली है, उसे ही पार्वती पूछना चाहती हैं।

बिस्वनाथ मम नाथ पुरारी ❀ त्रिभुवन महिमा बिदित तुम्हारी
चर अरु अचर नाग नर देवा ❀ सकल करहिं पद पंकज सेवा

हे मेरे नाथ! हे विश्वनाथ! हे त्रिपुरारी! आपकी महिमा तीनों लोकों में विख्यात है। चर, अचर, नाग, मनुष्य और देवता सब आपके चरणकमलों की सेवा करते हैं।

दो॰ प्रभु समरथ सर्बग्य सिव सकल कला गुन धाम।
जोग ग्यान बैराग्य निधि प्रनत कलपतरु नाम।१०७।

हे प्रभो! आप समर्थ हैं, सर्वज्ञ हैं, शिव हैं, सब कला और गुणों के धाम हैं और योग, ज्ञान तथा वैराग्य के भण्डार हैं। आपका नाम शरणागतों के लिये कल्पवृक्ष के समान है।

जौं मोपर प्रसन्न सुखरासी ❀ जानिअ सत्य मोहि निज दासी
तौं प्रभु हरहु मोर अग्याना ❀ कहि रघुनाथ कथा बिधि नाना

१. पास।



हे सुख के राशि ! जो आप मुझ पर प्रसन्न हैं और जो सचमुच मुझे अपनी दासी जानते हैं तो हे स्वामी ! आप रामचन्द्रजी की नाना प्रकार की कथा कहकर मेरा अज्ञान दूर कीजिये।

जासु भवन सुरतरु तर[1] होई ❁ सहि कि दरिद्र जनित दुख सोई
ससि भूषन अस हृदय बिचारी ❁ हरहु नाथ मम मति भ्रम भारी

जिसका घर कल्प-वृक्ष के नीचे हो, भला, वह दरिद्रता से उत्पन्न दुःख को क्यों सहेगा ? हे चन्द्रभूषण ! हे नाथ ! यही बात मन में विचारकर मेरी बुद्धि के भारी भ्रम को दूर कीजिये।

प्रभु जे मुनि परमारथ बादी ❁ कहहिं राम कहुँ ब्रह्म अनादी
सेष सारदा बेद पुराना ❁ सकल करहिं रघुपति गुन गाना

हे प्रभु ! परमार्थ तत्व के ज्ञाता और वक्ता मुनि रामचन्द्रजी को अनादि ब्रह्म कहते हैं। और शेष, सरस्वती, वेद, और पुराण सब रामचन्द्रजी का गुण गाते हैं।

तुम्ह पुनि राम राम दिन राती ❁ सादर जपहु अनंग अराती
राम सो अवध नृपति सुत सोई ❁ की अज अगुन अलख गति कोई

हे कामदेव के शत्रु ! आप भी दिन-रात आदरपूर्वक राम-राम जपा करते हैं। क्या राम वही हैं, जो अयोध्या के राजा के पुत्र हैं ? या कोई और अजन्मा, निर्गुण और अगोचर है ?

दो०— जौं नृप तनय तो ब्रह्म किमि नारि बिरहँ मति भोरि।
देखि चरित महिमा सुनत भ्रमति बुद्धि अति मोरि।

यदि वे राजा के पुत्र हैं तो ब्रह्म कैसे ? जिनकी मति स्त्री के विरह में बावली हो गई थी उनके चरित देखकर और महिमा सुनकर, मेरी बुद्धि अत्यन्त भ्रम में पड़ रही है।

जौं अनीह ब्यापक बिभु कोऊ ❁ कहहु बुझाइ नाथ मोहिं सोऊ
अग्य जानि रिस[2] उर जनि धरहू ❁ जेहि बिधि मोह मिटइ सोइ करहू

जो इच्छारहित, व्यापक, समर्थ ब्रह्म कोई और है, तो हे नाथ ! उसे भी मुझे समझाकर कहिये। मुझे नादान समझकर आप मन में क्रोध न लाइयेगा।

१. नीचे, तले। २. क्रोध।

जिस तरह मेरा अज्ञान दूर हो, वही कीजिये।

मैं बन दीख राम प्रभुताई ❀ अति भय बिकल न तुम्हहिं सुनाई
तदपि मलिन मन बोधु न आवा ❀ सो फलु भली भाँति हम पावा

मैंने (पिछले जन्म में) बन में रामचन्द्रजी की प्रभुता देखी है। अत्यन्त भयभीत होने से मैंने वह बात आपको नहीं सुनाई थी। तो भी मेरे मलिन मन को ज्ञान न हुआ। उसका फल मैंने अच्छी तरह पा लिया।

अजहूँ कछु संसउ मन मोरे ❀ करहु कृपा बिनवउँ कर जोरे
प्रभु तब मोहिं बहु भाँति प्रबोधा ❀ नाथ सो समुझि करहु जनि क्रोधा

हे नाथ ! मेरे मन में अब भी कुछ सन्देह है। आप कृपा कीजिए, मैं हाथ जोड़कर विनती करती हूँ। हे प्रभु, आपने उस समय मुझे बहुत तरह से समझाया था। हे नाथ ! उसे याद करके क्रोध न कीजिएगा।

तब कर अस बिमोह अब नाहीं ❀ राम कथा पर रुचि मन माहीं
कहहु पुनीत राम गुन गाथा ❀ भुजँगराज भूषन सुरनाथा

अब मुझे पहले जैसा मोह नहीं है। अब तो मेरे मन में रामकथा सुनने की रुचि है। हे शेषनाग को भूषण रूप में धारण करने वाले ! हे देवों के नाथ (शिवजी) ! आप रामचन्द्रजी के गुणों की पवित्र कथा कहिए।

दो० **बंदउँ पद धरि धरनि सिरु बिनय करउँ कर जोरि।**
बरनहु रघुबर बिसद जसु स्रुति सिद्धांत निचोरि।१०९

मैं धरती में सिर रखकर आपके चरणों को प्रणाम करती हूँ और हाथ जोड़कर विनती करती हूँ। आप वेदों के सिद्धान्त को निचोड़कर रामचन्द्रजी का निर्मल यश वर्णन कीजिए।

जदपि जोषिता[१] नहिं अधिकारी ❀ दासी मन क्रम बचन तुम्हारी
गूढ़उ तत्व न साधु दुरावहिं[२] ❀ आरत अधिकारी जहँ पावहिं

यद्यपि स्त्री होने के कारण मैं उसे सुनने की अधिकारिणी नहीं हूँ, तथापि मैं मन, कर्म और वचन से आपकी दासी हूँ। साधुजन आर्त्त (सुनने को आतुर) अधिकारी पाते हैं, तो गूढ़ तत्व भी नहीं छिपाते।

---

१. स्त्री। २. छिपाते हैं।

अति आरति पूछउँ सुरराया ❀ रघुपति कथा कहहु करि दाया
प्रथम सो कारन कहहु बिचारी ❀ निर्गुन ब्रह्म सगुन बपु धारी

हे देवताओं के स्वामी ! मैं बड़ी दीनता से पूछती हूँ, आप दया करके रामचन्द्रजी की कथा कहिये। पहले तो वह कारण विचारकर बतलाइये जिससे निर्गुण ब्रह्म सगुण रूप धारण करता है।

पुनि प्रभु कहहु राम अवतारा ❀ बाल चरित पुनि कहहु उदारा
कहहु जथा जानकी बिबाहीं ❀ राज तजा सो दूषन काहीं[1]

फिर हे नाथ ! आप रामचन्द्रजी के अवतार की कथा कहिये; फिर उनका उदार बाल-चरित्र कहिये; फिर जैसे जानकी से विवाह किया, वह कहिये और फिर यह बतलाइये कि उन्होंने राज्य छोड़ा तो किस दोष से ?

बन बसि कीन्हे चरित अपारा ❀ कहहु नाथ जिमि रावन मारा
राज बैठि कीन्ही बहु लीला ❀ सकल कहहु संकर सुख सीला

हे नाथ ! फिर उन्होंने बन में बसकर जो अपार चरित किये तथा जिस तरह रावण को मारा, वह कहिये। हे सुख-स्वरूप शंकर ! आप उन सब अनेक लीलाओं की सब कथा भी कहिये जो उन्होंने राज्य-सिंहासन पर बैठकर की थीं।

दो० बहुरि कहहु करुनायतन कीन्ह जो अचरज राम।
प्रजा सहित रघुबंस मनि किमि गवने निज धाम।११०

हे दयानिधे ! फिर रामचन्द्रजी ने जो अद्भुत काम किये और रघुकुल-भूषण (रामचन्द्रजी) प्रजा सहित अपने धाम (बैकुण्ठ) को कैसे गये ? यह भी कहिये।

पुनि प्रभु कहहु सो तत्व बखानी ❀ जेहि बिग्यान मगन मुनि ग्यानी
भगति ग्यान बिग्यान बिरागा ❀ पुनि सब बरनहु सहित बिभागा

हे प्रभु ! फिर आप उस तत्व को समझाकर कहिये, जिसमें ज्ञानी और मुनिजन सदा मग्न रहते हैं। फिर आप भक्ति, ज्ञान, विज्ञान और वैराग्य को विभागों सहित कहिये।

औरउ राम रहस्य अनेका ❀ कहहु नाथ अति बिमल बिबेका
जो प्रभु मैं पूछा नहिं होई ❀ सोउ दयाल राखहु जनि गोई[2]

---

१. क्या ? २. छिपा।

इसके सिवा रामचन्द्रजी के और भी जो छिपे हुये अनेक चरित्र हों, उनका भी वर्णन कीजिये। आप अतिशय निर्मल ज्ञान वाले हैं। हे दयालु ! जो बात मैंने न पूछी हो, आप उसे भी गुप्त न रखियेगा।

तुम्ह त्रिभुवन गुर बेद बखाना ❀ आन जीव पाँवर का जाना
प्रस्न उमा कै सहज सुहाई ❀ छल बिहीन सुनि सिव मन भाई

वेदों ने आपको तीनों लोकों का गुरु कहा है। दूसरे पामर जीव उस रहस्य को क्या जानें? पार्वती के सहज, सुन्दर और छलरहित (सरल) प्रश्न शिवजी के मन को बहुत अच्छे लगे।

हरि हिअँ रामचरित सब आए ❀ प्रेम पुलक लोचन जल छाए
श्रीरघुनाथ रूप उर आवा ❀ परमानंद अमित सुख पावा

महादेवजी के हृदय में सब रामचरितों का स्मरण हो आया। प्रेम के मारे उनकी रोमावली खड़ी हो गई और आँखों में जल भर आया। श्रीरामचन्द्रजी का रूप उनके हृदय में आ गया, जिससे उन्होंने बड़ा ही आनन्द और अनन्त सुख पाया।

दो०— मगन ध्यानरस दंड जुग[1] पुनि मन बाहेर कीन्ह।
रघुपति चरित महेस तब हरषित बरनै लीन्ह ॥१११॥

शिवजी दो घड़ी तक ध्यान के रस में मग्न रहे; फिर उन्होंने मन को (ध्यान से) बाहर किया। और तब वे प्रसन्न होकर रामचन्द्रजी का चरित वर्णन करने लगे।

झूठउ सत्य जाहि बिनु जानें ❀ जिमि भुजंग[2] बिनु रजु[3] पहिचानें
जेहि जानें जग जाइ हेराई ❀ जागें जथा सपन भ्रम जाई

जिसके बिना जाने झूठ भी सच मालूम होने लगता है, जैसे बिना पहचाने रस्सी में साँप का भ्रम हो जाता है। और जिसके जानने पर संसार इस तरह लोप हो जाता है, जैसे जागने पर स्वप्न का भ्रम जाता रहता है।

बंदउँ बाल रूप सोइ रामू ❀ सब सिधि सुलभ जपत जिसु[4] नामू
मंगल भवन अमंगल हारी ❀ द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी

मैं उन्हीं रामचन्द्रजी के बालरूप की वन्दना करता हूँ, जिनका नाम

१. दो। २. साँप। ३. रस्सी। ४. जिसका।

जपने से सब सिद्धियाँ सहज ही प्राप्त हो जाती हैं। मंगल के घर, अमंगल के हरने वाले और दशरथ के आँगन में खेलने वाले रामचन्द्रजी मुझ पर कृपा करें।

करि प्रनाम रामहिं त्रिपुरारी ❀ हरषि सुधा सम गिरा उचारी
धन्य धन्य गिरिराज कुमारी ❀ तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी

शिवजी रामचन्द्रजी को प्रणाम करके, हर्षित होकर अमृत के समान (मधुर) वाणी बोले—हे गिरिराज-कुमारी पार्वती! तुम धन्य हो! धन्य हो! तुम्हारे समान कोई उपकारी नहीं है।

पूछेहु रघुपति कथा प्रसंगा ❀ सकल लोक जग पावनि गंगा
तुम्ह रघुबीर चरन अनुरागी ❀ कीन्हिहु प्रस्न जगत हित लागी

जो तुमने रामचन्द्रजी की कथा का प्रसङ्ग पूछा है, जो कथा जगत् में सब लोगों को पवित्र करने के लिये गंगा है। तुमने जगत् के हित के लिये प्रश्न पूछे हैं। तुम रामचन्द्रजी के चरणों में प्रीति रखने वाली हो।

दो०— राम कृपा तें पारबति सपनेहु तव मन माहिं।
सोक मोह संदेह भ्रम मम बिचार कछु नाहिं।११२।

हे पार्वती! मेरे विचार में तो राम की कृपा से स्वप्न में भी तुम्हारे हृदय में शोक, मोह, सन्देह, भ्रम कुछ भी नहीं है।

तदपि असंका[1] कीन्हिहु सोई ❀ कहत सुनत सब कर हित होई
जिन हरि कथा सुनी नहिं काना ❀ स्रवन रंध्र अहि[2] भवन समाना

पर तो भी तुमने आशंका (संदेह) इसलिये की है कि इस प्रसंग के कहने और सुनने से सबका कल्याण होगा। जिन्होंने अपने कानों से भगवान् की कथा नहीं सुनी, उनके कानों के छेद साँप के बिल के समान हैं।

नयनन्हि संत दरस नहिं देखा ❀ लोचन मोर पंख कर लेखा
ते सिर कटु तुम्बरि सम तूला[3] ❀ जे न नमत हरि गुर पद मूला

जिन्होंने अपनी आँखों से सन्तों के दर्शन नहीं किये, उनकी आँखें मोर के पंखों पर की आँखों की गिनती में हैं। वे सिर कड़वी तुम्बी के समान हैं, जो हरि और गुरु के चरणों में नहीं झुकते।

---

१. आशंका, संदेह। २. साँप। ३. तुल्य, बराबर।

जिन्ह हरि भगति हृदय नहिं आनी ❀ जीवत सव समान तेइ प्रानी
जो नहिं करइ राम गुन गाना ❀ जीह सो दादुर जीह समाना

जिन्होंने अपने हृदय में ईश्वर की भक्ति को स्थान नहीं दिया, वे प्राणी जीते हुए ही मुर्दे के समान हैं। जो जीभ रामचन्द्रजी के गुणों का गान नहीं करती, वह मेढक की जीभ के समान है।

कुलिस कठोर निठुर सोइ छाती ❀ सुनि हरिचरित न जो हरषाती
गिरिजा सुनहु राम कै लीला ❀ सुर हित दनुज[1] बिमोहन सीला

वह हृदय बज्र के समान कड़ा और निर्दय है, जो हरि-चरित को सुनकर हर्षित नहीं होता। हे पार्वती! रामचन्द्रजी की लीला सुनो, जो देवताओं का कल्याण करने वाली और राक्षसों को मोहित करने वाली है।

दो॰ रामकथा सुरधेनु सम सेवत सब सुख दानि।
सत समाज सुरलोक सब को न सुनै अस जानि।११२

रामचन्द्रजी की कथा कामधेनु के समान है, सेवा करने से सब सुखों को देने वाली है और सत्पुरुषों के समाज ही देवताओं के लोक हैं, ऐसा जानकर इसे कौन न सुनेगा?

रामकथा सुन्दर कर तारी[2] ❀ संसय बिहँग उड़ावनि हारी
रामकथा कलि बिटप कुठारी[3] ❀ सादर सुनु गिरिराज कुमारी

रामचन्द्रजी की कथा हाथ की सुन्दर ताली है, जो सन्देहरूपी पक्षियों को उड़ा देती है। रामकथा कलियुगरूपी वृक्ष को काटने के लिये कुल्हाड़ी है। हे पार्वती! तुम इसे आदरपूर्वक सुनो। [परंपरित रूपक]

राम नाम गुन चरित सुहाए ❀ जनम करम अगनित स्रुति गाए
जथा अनन्त राम भगवाना ❀ तथा कथा कीरति गुन नाना

वेदों ने रामचन्द्रजी के नाम, गुण, चरित, जन्म और कर्म अनगिनत गाए हैं। जिस तरह भगवान् रामचन्द्रजी अनन्त हैं, उसी तरह उनकी कथा, उनकी कीर्त्ति और उनके गुण भी अनन्त हैं।

तदपि जथास्रुत जसि[4] मति मोरी ❀ कहिहउँ देखि प्रीति अति तोरी
उमा प्रस्न तव सहज सुहाई ❀ सुखद संत संमत मोहि भाई

१. दैत्य। २. ताली। ३. कुल्हाड़ी। ४. जैसी।

तो भी तुम्हारी अत्यन्त प्रीति देखकर जैसा मैंने सुना है और जैसी मेरी बुद्धि है, उसके अनुसार कथा कहूँगा। हे पार्वती ! तुम्हारा प्रश्न स्वाभाविक ही अच्छा सुखदायक और सन्त-सम्मत है और मुझे भी अच्छा लगा है।

एक बात नहिं मोहिं सुहानी ❀ जदपि मोहबस कहेहु भवानी
तुम्ह जो कहा राम कोउ आना ❀ जेहि श्रुति गाव धरहिं मुनि ध्याना

पर हे पार्वती ! एक बात मुझे अच्छी नहीं लगी, यद्यपि वह तुमने मोह के वश होकर ही कही है। तुमने जो कहा कि वे राम कोई और हैं, जिन्हें वेद गाते और मुनिजन जिनका ध्यान करते हैं।

दो०— कहहिं सुनहिं अस अधम नर ग्रसे जे मोह पिसाच।
पाषंडी हरि पद बिमुख जानहिं झूठ न साँच॥११४॥

जिनको मोहरूपी पिशाच ने घेर रक्खा है, जो पाखण्डी हैं, जो भगवान् के चरणों से विमुख हैं और जो सत्य-असत्य कुछ भी नहीं जानते, ऐसे अधम मनुष्य ही इस तरह कहते-सुनते हैं।

अग्य अकोबिद अंध अभागी ❀ काई बिषय मुकुर मन लागी
लम्पट कपटी कुटिल बिसेषी ❀ सपनेहु संत सभा नहिं देखी

जो अज्ञानी, मूर्ख, अन्धे, भाग्यहीन हैं और जिनके मनरूपी दर्पण पर विषयरूपी काई लग रही है, जो व्यभिचारी, छली और बड़े ही दुष्ट हैं और जिन्होंने कभी स्वप्न में भी सन्तों की सभा नहीं देखी

कहहिं ते बेद असंमत बानी ❀ जिन्हके सूझ लाभु नहिं हानी
मुकुर मलिन अरु नयन बिहीना ❀ राम रूप देखहिं किमि दीना

जिन्हें अपने लाभ और हानि का ज्ञान नहीं, वेही वेदों के विरुद्ध बातें कहा करते हैं। एक तो मैला दर्पण और दूसरे आँखों से रहित, भला, वे बेचारे राम का रूप कैसे देख सकते हैं ?

जिन्हके अगुन न सगुन बिबेका ❀ जल्पहिं कल्पित बचन अनेका
हरि माया बस जगत भ्रमाहीं ❀ तिन्हहिं कहत कछु अघटित नाहीं

जिनको निर्गुण और सगुण का कुछ भी ज्ञान नहीं, जो मनमानी गप्पें हाँका करते हैं, जो श्री हरि की माया के वश में होकर जगत् में भ्रमते फिरते हैं, उनके लिये कुछ भी कह डालना असम्भव नहीं है।

बातुल भूत बिबस मतवारे ❀ ते नहिं बोलहिं बचन बिचारे
जिन्ह कृत महा मोह मद पाना ❀ तिन्ह कर कहा करिअ नहिं काना

जिन्हें वायु का रोग (सन्निपात) हो गया हो, भूत लगा हो, और जो नशे में चूर हों, ऐसे लोग विचारकर वचन नहीं बोलते। जिन्होंने महा-मोहरूपी मदिरा पी रक्खी है, ऐसों के कहने पर कान न देना चाहिये।

सो०— अस निज हृदय बिचारि तजु संसय भजु राम पद।
सुनु गिरिराज कुमारि भ्रम तम रबि कर बचन मम॥

ऐसा अपने हृदय में विचारकर सन्देह को छोड़ो और रामचन्द्रजी के चरणों को भजो। हे पार्वती! मेरे वचन सन्देहरूपी अंधकार को नाश करने के लिये सूर्य की किरणों के समान हैं। मेरे वचनों को सुनो।

सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा ❀ गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा
अगुन अरूप अलख अज जोई ❀ भगत प्रेम बस सगुन सो होई

सगुण और निर्गुण में कुछ भी भेद नहीं है, मुनि, पुराण, पण्डित और वेद सभी ऐसा गाते हैं। जो निर्गुण (ब्रह्म) अरूप (निराकार), अलख और अजन्मा है, वही भक्तों के प्रेम-वश सगुण हो जाता है।

जो गुन रहित सगुन सोइ कैसें ❀ जलु हिम उपल बिलग नहिं जैसें
जासु नाम भ्रम तिमिर पतंगा[1] ❀ तेहि किमि कहिअ बिमोह प्रसंगा

जो निर्गुण है, वही सगुण कैसे हो सकता है? (यह वैसे ही है) जैसे जल और ओला भिन्न नहीं। जिसका नाम भ्रमरूपी अन्धकार के लिये सूर्य के समान है, उसके लिये मोह का प्रसङ्ग भी कैसे कहा जा सकता है?

राम सच्चिदानंद दिनेसा ❀ नहिं तहँ मोह निसा लवलेसा
सहज प्रकासरूप भगवाना ❀ नहिं तहँ पुनि बिग्यान बिहाना[2]

रामचन्द्रजी सच्चिदानन्दस्वरूप सूर्य हैं। वहाँ मोहरूपी रात्रि का लेशमात्र भी नहीं है। भगवान् स्वभाव ही से प्रकाशरूप हैं, इसलिये वहाँ विज्ञानरूपी प्रातःकाल होता ही नहीं। (जब रात नहीं, तब प्रातःकाल कैसा?)

हरष बिषाद ग्यान अग्याना ❀ जीव धरम अहमिति अभिमाना
राम ब्रह्म ब्यापक जग जाना ❀ परमानंद परेस पुराना

१. सूर्य। २. सवेरा।

हर्ष और शोक, ज्ञान और अज्ञान, अहंकार और अभिमान ये सब जीव के धर्म हैं। रामचन्द्रजी तो व्यापक ब्रह्म, परम आनन्द-स्वरूप, सबके स्वामी और पुराण-पुरुष हैं। इसे सारा जगत् जानता है।

दो॰ पुरुष प्रसिद्ध प्रकास निधि प्रगट परावर नाथ।
रघुकुल मनि मम स्वामि सोइ कहि सिव नायउ माथ

जो प्रसिद्ध (पुराण) पुरुष हैं, प्रकाश के भंडार हैं, सब रूपों में प्रकट हैं, कुल जड़-चेतन के स्वामी हैं, वे ही रघुकुलमणि श्रीरामचन्द्रजी मेरे स्वामी हैं, ऐसा कहकर शिवजी ने उनको मस्तक नवाया।

निज भ्रम नहिं समुझहिं अग्यानी ❀ प्रभु पर मोह धरहिं जड़ प्रानी
जथा गगन घन पटल निहारी ❀ झाँपेउ भानु कहहिं कुबिचारी

अज्ञानी मनुष्य अपने भ्रम को नहीं समझते और वे मूर्ख प्रभु रामचन्द्रजी पर मोह का आरोप करते हैं। जैसे आकाश में बादलों का पर्दा देखकर अज्ञानी लोग कहते हैं कि सूर्य को बादलों ने छिपा लिया।

चितव जो लोचन अंगुलि लाएँ ❀ प्रगट जुगल ससि तेहिके भाएँ[1]
उमा रामबिषयक अस मोहा ❀ नभ तम धूम धूरि जिमि सोहा

जो मनुष्य अपनी आँख के आगे उँगली लगाकर देखता है, उसके लिये तो दो चन्द्रमा स्पष्ट दिखाई देते हैं। हे पार्वती! रामचन्द्रजी के विषय में मोह की बात ऐसी ही है जैसे आकाश में अंधकार, धुएँ और धूल का सोहना। अर्थात् आकाश जैसे निर्मल है, उसी तरह रामचन्द्रजी भी हैं। [उदाहरण अलंकार]

बिषय करन सुर जीव समेता ❀ सकल एक तें एक सचेता
सब कर परम प्रकासक जोई ❀ राम अनादि अवधपति सोई

विषयों से इन्द्रियाँ, इन्द्रियों से उनके देवता, देवताओं से जीवात्मा, ये सब एक की सहायता से एक चेतन हैं। इन सबका जो परम प्रकाशक है, अर्थात् जिससे यह सब चीज़ें चेतन होती हैं, वही अनादि ब्रह्म अयोध्यानरेश रामचन्द्रजी हैं।

जगत प्रकास्य प्रकासक रामू ❀ मायाधीस ग्यान गुन धामू
जासु सत्यता तें जड़ माया ❀ भास सत्य इव मोह सहाया

---

१. लिये।

जगत् प्रकाश्य है और रामचन्द्रजी प्रकाशक हैं। वे माया के स्वामी और ज्ञान तथा गुणों के धाम हैं। जिनकी सत्ता से, मोह की सहायता पाकर जड़ (अचेतन) माया भी सत्य सी भासित होती है।

दो०-रजत[1] सीप महुँ भास जिमि जथा भानु कर बारि।
जदपि मृषा तिहुँ काल सोइ भ्रम न सकइ कोउ टारि॥

जैसे सीप में चाँदी की और सूर्य की किरणों में पानी की प्रतीति होती है। यद्यपि यह प्रतीति तीनों कालों में झूठी है, पर इस भ्रम को कोई नहीं टाल सकता।

एहि बिधि जग हरि आस्रित रहई ❀ जदपि असत्य देत दुखु अहई
जौं सपने सिर काटइ कोई ❀ बिनु जागें न दूरि दुख होई

इस तरह यह संसार भगवान् के आश्रित है। यद्यपि जगत् असत्य है, तो भी दुःख तो देता ही है; जिस तरह स्वप्न में कोई सिर काट ले, तो बिना जागे वह दुःख दूर नहीं होता।

जासु कृपाँ अस भ्रम मिटि जाई ❀ गिरिजा सोइ कृपालु रघुराई
आदि अन्त कोउ जासु न पावा ❀ मति अनुमानि निगम अस गावा

हे पार्वती! जिनकी कृपा से इस तरह का भ्रम मिट जाता है, वही कृपालु रामचन्द्रजी हैं। जिनका आदि और अन्त किसी ने नहीं पाया, वेदों ने अपनी बुद्धि से अनुमान करके (इस प्रकार) गाया है।

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना ❀ कर बिनु करम करइ बिधि नाना
आनन रहित सकल रस भोगी ❀ बिनु बानी बकता बड़ जोगी

वह ब्रह्म पाँवों के बिना ही चलता है, कानों के बिना ही सुनता है, हाथों के बिना ही तरह-तरह के काम करता है, मुंह के बिना ही वह सारे रसों का भोग करता है और वाणी के बिना ही बड़ा योग्य वक्ता तथा योगी है।

तन बिनु परस नयन बिनु देखा ❀ ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेखा
असि सब भाँति अलौकिक करनी ❀ महिमा जासु जाइ नहिं बरनी

वह शरीर के बिना ही छूता है और आँखों के बिना ही देखता है। वह नाक के बिना ही सब गंध सूँघ लेता है। इस तरह उस ब्रह्म की करनी सभी

---

१. चाँदी।

प्रकार से अलौकिक है। उसकी महिमा कही नहीं जा सकती।

दो०— जेहि इमि गावहिं बेद बुध जाहि धरहिं मुनि ध्यान।
सोइ दसरथ सुत भगत हित कोसलपति भगवान ११८

जिसको वेद और पंडित इस तरह गाते हैं और मुनि जिसका ध्यान धरते हैं, वही दशरथ के पुत्र भक्तों के हितकारी अयोध्या के स्वामी भगवान रामचन्द्रजी हैं।

कासीं मरतु जंतु अवलोकी ❀ जासु नाम बल करउँ बिसोकी
सोइ प्रभु मोर चराचर स्वामी ❀ रघुबर सब उर अंतरजामी

हे पार्वती! जिसके नाम के बल से काशी में मरते हुए प्राणी को देखकर मैं उसे शोक-रहित कर देता हूँ (अर्थात् मुक्त कर देता हूँ), वही रघुवर (रामचन्द्रजी) सबके हृदय में रहने वाले जड़-चेतन के स्वामी मेरे प्रभु हैं।

बिबसहुँ जासु नाम नर कहहीं ❀ जनम अनेक रचित अघ दहहीं
सादर सुमिरन जे नर करहीं ❀ भव बारिधि गोपद इव तरहीं

विवश होकर (बिना इच्छा के) भी जिनका नाम लेने से मनुष्यों के अनेक जन्मों के किये हुए पाप जल जाते हैं। फिर जो मनुष्य आदर-पूर्वक उन का स्मरण करते हैं, वे तो संसाररूपी समुद्र को गाय के खुर से बने गड्ढे के समान पार कर जाते हैं।

राम सो परमातमा भवानी ❀ तहँ भ्रम अति अबिहित तव बानी
अस संसय आनत उर माहीं ❀ ग्यान बिराग सकल गुन जाहीं

हे पार्वती! वही परमात्मा रामचन्द्रजी हैं। उनमें भ्रम है, तुम्हारा ऐसा कहना बहुत ही अनुचित है। इस तरह का सन्देह मन में लाते ही (मनुष्य के) ज्ञान-वैराग्य आदि सारे गुण चले जाते हैं।

सुनि सिव के भ्रम भंजन बचना ❀ मिटि गै सब कुतरक कै रचना
भइ रघुपति पद प्रीति प्रतीती ❀ दारुन असंभावना बीती

शिवजी के भ्रम-नाशक वचनों को सुनकर (पार्वती के) सारे कुतर्कों की रचना मिट गई। उनके चित्त में रामचन्द्रजी के चरणों में प्रेम और विश्वास हो गया और कठिन मिथ्या कल्पना जाती रही।

दो० पुनि पुनि प्रभुपद कमल गहि जोरि पंकरुह[1] पानि।
बोलीं गिरिजा बचन बर मनहुँ प्रेमरस सानि॥११९॥

बार-बार स्वामी के चरण-कमलों को पकड़कर और अपने कमल ऐसे हाथ जोड़कर, पार्वती मानो प्रेम-रस में सानकर सुन्दर वचन बोलीं—

ससि कर सम सुनि गिरा तुम्हारी ❀ मिटा मोह सरदातप भारी
तुम्ह कृपाल सबु संसउ हरेऊ ❀ राम स्वरूप जानि मोहिं परेऊ

चन्द्रमा की किरणों के समान शीतल आपके वचन सुनकर मेरा अज्ञान रूपी भारी ताप शरद-ऋतु की धूप के समान मिट गया। हे कृपालु! आपने मेरे सारे सन्देह हर लिये; अब रामचन्द्रजी का यथार्थ स्वरूप मेरी समझ में आ गया।

नाथ कृपा अब गयेउ बिषादा ❀ सुखी भइउँ प्रभु चरन प्रसादा
अब मोहि आपनि किंकरि जानी ❀ जदपि सहज जड़ नारि अयानी

हे नाथ! आपकी कृपा से अब मेरा विषाद जाता रहा और आपके चरणों के अनुग्रह से मैं सुखी हो गई। यद्यपि मैं स्त्री होने के कारण स्वभाव ही से मूर्ख और ज्ञान-हीन हूँ, पर अब आप मुझे अपनी दासी जानकर—

प्रथम जो मैं पूछा सोइ कहहू ❀ जौं मोपर प्रसन्न प्रभु अहहू
राम ब्रह्म चिन्मय अबिनासी ❀ सर्ब रहित सब उर पुर बासी

हे प्रभो! जो आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तो जो बात मैंने पहले आपसे पूछी थी, उसे कहिये। रामचन्द्रजी ब्रह्म हैं, ज्ञानस्वरूप हैं, अविनाशी हैं, सबसे अलग और सबके हृदय-रूपी नगरी में बसते हैं।

नाथ धरेउ नर तनु केहि हेतू ❀ मोहि समुझाइ कहहु बृषकेतू
उमा बचन सुनि परम बिनीता ❀ राम कथा पर प्रीति पुनीता

हे वृषभकेतु! आप यह समझाकर कहिये कि उन्होंने मनुष्य का शरीर किस कारण से धारण किया? पार्वती के अत्यन्त नम्र वचन सुनकर और रामचन्द्रजी की कथा में उनका विशुद्ध प्रेम देखकर—

दो० हिय हरषे कामारि तब संकर सहज सुजान।
बहु बिधि उमहि प्रसंसि पुनि बोले कृपानिधान।१२०।

---

१. कमल।

कामदेव के शत्रु, स्वभाव ही से सुजान, कृपा-निधान शिवजी मन में बहुत ही प्रसन्न हुए और पार्वती की बहुत प्रकार से बड़ाई करके फिर बोले—

सो० सुनु सुभ कथा भवानि रामचरितमानस बिमल।
कहा भुसुण्डि बखानि सुना बिहग नायक गरुड़।१२०

हे पार्वती! निर्मल रामचरित-मानस की उस पवित्र कथा को सुनो, जिसे कागभुशुण्डि ने विस्तार से कहा और पक्षिराज गरुड़जी ने सुना था।

सो संबाद उदार जेहि बिधि भा[1] आगे कहब।
सुनहु राम अवतार चरित परम सुन्दर अनघ॥१२०॥ (३)

वह उत्तम सम्वाद जिस प्रकार हुआ, उसे मैं आगे कहूँगा। अभी तुम रामचन्द्रजी के अवतार का परम सुन्दर और पाप-रहित चरित सुनो।

हरि गुन नाम अपार कथा रूप अगनित अमित।
मैं निज मति अनुसार कहउँ उमा सादर सुनहु।१२०। (४)

हरि के गुण और नाम अपार हैं, उनकी कथा के रूप भी अगणित और असीम हैं। हे पार्वती! मैं अपनी बुद्धि के अनुसार कहता हूँ, आदर-पूर्वक सुनो।

सुनु गिरिजा हरि चरित सुहाए ❀ बिपुल बिसद निगमागम गाए
हरि अवतार हेतु जेहि होई ❀ इदमित्थं[2] कहि जाइ न सोई

हे पार्वती! सुनो, वेद और शास्त्रों ने भगवान् के सुन्दर, विस्तृत और निर्मल चरित का गान किया है। हरि का अवतार जिस कारण से होता है, वह कारण 'बस यही है' ऐसा नहीं कहा जा सकता। (क्योंकि अनेक कारण एकत्र होते हैं, तब अवतार होता है।)

राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी ❀ मत हमार अस सुनहि सयानी
तदपि संत मुनि बेद पुराना ❀ जस कछु कहहिं स्वमति अनुमाना

हे सयानी! सुनो, हमारा मत तो यह है कि बुद्धि, मन और वाणी से रामचन्द्रजी की तर्कना नहीं की जा सकती। पर तो भी सन्तजन, मुनि, वेद और पुराणों ने अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार जैसा कुछ कहा है,

---

१. हुआ। २. बस यही है।

तस मैं सुमुखि सुनावौं तोही ❀ समुझि परइ जस कारन मोही
जब जब होइ धरम कै हानी ❀ बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी

और जो कुछ कारण मेरी समझ में आता है, हे सुमुखि! वैसा मैं तुमको सुनाता हूँ। जब-जब धर्म की हानि होती है और नीच अभिमानी राक्षस बढ़ जाते हैं,

करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी ❀ सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा ❀ हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा

जब वे ऐसा अन्याय करते हैं कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता; ब्राह्मण, गाय, देवता और पृथ्वी दुःखी हो जाते हैं; तब-तब कृपानिधि भगवान् नाना प्रकार के शरीर धारण करके सज्जनों की पीड़ा हरते हैं।

दो॰ असुर मारि थापहिं सुरन्ह राखहिं निज स्रुति सेतु।
जग बिस्तारहिं बिसद जस राम जनम कर हेतु॥१२१॥

वे असुरों को मारकर देवों की स्थापना और अपने वेदों की मर्यादा की रक्षा करते हैं और संसार में अपना निर्मल यश फैलाते हैं। रामचन्द्रजी के अवतार का यही कारण है।

सोइ जस गाइ भगत भव तरहीं ❀ कृपासिंधु जन हित तनु धरहीं
राम जनम कै हेतु अनेका ❀ परम बिचित्र एक तें एका

उसी यश को गाकर भक्तजन भवसागर से तर जाते हैं। कृपासागर भगवान् भक्तों के हित के लिए शरीर धारण करते हैं। रामचन्द्रजी के जन्म लेने के अनेक कारण हैं जो एक से एक बढ़कर अद्भुत हैं।

जनम एक दुइ कहउँ बखानी ❀ सावधान सुनु सुमति भवानी
द्वारपाल हरि के प्रिय दोऊ ❀ जय अरु बिजय जान सब कोऊ

हे सुन्दर बुद्धिवाली भवानी! तुम सावधान होकर सुनो, मैं उनके दो-एक जन्मों का विस्तार से वर्णन करता हूँ। विष्णु के जय और विजय नाम के दो प्यारे द्वारपाल हैं, जिनको सब कोई जानते हैं।

बिप्र स्राप तें दूनउ भाई ❀ तामस असुर देह तिन्ह पाई
कनककसिपु अरु हाटकलोचन ❀ जगत बिदित सुरपति मद मोचन

उन दोनों भाइयों ने ब्राह्मण के शाप से असुरों का तामसी शरीर पाया।

एक का नाम हिरण्यकशिपु और दूसरे का हिरण्याक्ष था। ये देवताओं के राजा इन्द्र के गर्व को छुड़ाने वाले सारे जगत् में प्रसिद्ध हैं।

बिजई समर बीर बिख्याता ❁ धरि बराह[1] बपु[2] एक निपाता
होइ नरहरि दूसर पुनि मारा ❁ जन प्रहलाद सुजस बिस्तारा

वे युद्ध के जीतने वाले और बड़े विख्यात शूरवीर थे। भगवान् ने वाराह का रूप धारण करके उनमें से एक (हिरण्याक्ष) को मारा; फिर नरसिंह रूप धारण करके दूसरे (हिरण्यकशिपु) का वध किया और अपने भक्त प्रह्लाद का सुयश फैलाया।

दो॰ भए निसाचर जाइ तेइ महाबीर बलवान।
कुम्भकरन रावन सुभट सुर बिजयी जग जान।१२२।

वे ही दोनों जाकर बलवान और महावीर राक्षस हुए। देवताओं को जीतने वाले बड़े योद्धा रावण और कुम्भकर्ण को सारा जगत् जानता है।

मुकुत न भए हते भगवाना ❁ तीनि जनम द्विज बचन प्रवाना[3]
एक बार तिन्हके हित लागी ❁ धरेउ सरीर भगत अनुरागी

यद्यपि भगवान् ने उन्हें मारा, पर तो भी वे मुक्त न हुए, क्योंकि ब्राह्मण के वचन (शाप) का प्रमाण तीन जन्म के लिये था। एक बार उनके कल्याण के लिए भक्तों पर प्रेम करने वाले भगवान् ने फिर अवतार लिया।

कस्यप अदिति तहाँ पितु माता ❁ दसरथ कौसिल्या बिख्याता
एक कलप एहि बिधि अवतारा ❁ चरित पवित्र किए संसारा

वहीं (उस अवतार में) उनके पिता और माता कश्यप और अदिति थे, जो दशरथ और कौशल्या के नाम से प्रसिद्ध थे। एक कल्प में इस तरह अवतार लेकर उन्होंने संसार में पवित्र लीलायें कीं।

एक कलप सुर देखि दुखारे ❁ समर जलंधर सन सब हारे
सम्भु कीन्ह संग्राम अपारा ❁ दनुज महाबल मरइ न मारा
परम सती असुराधिप नारी ❁ तेहि बल ताहि न जितहिं पुरारी

एक कल्प में जलन्धर दैत्य से सब देवता युद्ध में हार गये। उनको दुःखी देखकर शिवजी ने उस दैत्य से बड़ा ही घोर युद्ध किया; पर वह महाबली दैत्य

१. शूकर। २. शरीर। ३. प्रमाण।

मारे नहीं मरा। उस दैत्यराज की स्त्री बड़ी ही पतिव्रता थी। उसके प्रताप ही से शिवजी उस दैत्य को जीत न सके।

दो० छल करि टारेउ तासु ब्रत प्रभु सुर कारज कीन्ह।
जब तेहिं जानेउ मरम तब स्राप कोप करि दीन्ह।१२३

प्रभु ने छल से उस दैत्य की स्त्री का व्रत भंग कर देवताओं का काम किया। जब उस स्त्री ने यह भेद जाना, तब उसने क्रोध करके शाप दिया।

तासु साप हरि दीन्ह प्रवाना ❋ कौतुक निधि कृपाल भगवाना
तहाँ जलंधर रावन भयऊ ❋ रन हति राम परम पद दयऊ

बड़े ही कौतुकी और दयालु भगवान् ने उस स्त्री का शाप स्वीकार किया। तब वह दैत्य (जलन्धर) रावण बना, जिसे रामचन्द्रजी ने लड़ाई में मार कर परमपद दिया।

एक जनम कर कारन एहा ❋ जेहि लगि राम धरी नर देहा
प्रति अवतार कथा प्रभु केरी[1] ❋ सुनु मुनि बरनी कबिन्ह घनेरी

एक जन्म का कारण यही था, जिससे रामचन्द्रजी ने मनुष्य-देह धारण किया। हे भरद्वाज मुनि! सुनिये, भगवान् के हरएक अवतार की कथा का वर्णन कवियों ने विस्तार से किया है।

नारद स्राप दीन्ह एक बारा ❋ कलप एक तेहि लगि अवतारा
गिरिजा चकित भईं सुनि बानी ❋ नारद बिष्नुभगत मुनि ग्यानी

एक बार नारदमुनि ने शाप दिया, इसलिए एक कल्प में उसके लिए अवतार हुआ। यह बात सुनकर पार्वती बड़ी चकित हुईं (और बोलीं कि) नारद तो विष्णु-भक्त और ज्ञानी हैं।

कारन कवन स्राप मुनि दीन्हा ❋ का अपराध रमापति कीन्हा
यह प्रसंग मोहि कहहु पुरारी ❋ मुनि मन मोह आचरज भारी

मुनि ने भगवान् को किस कारण से शाप दिया? लक्ष्मीकांत ने उनका क्या अपराध किया था? हे त्रिपुरारि! यह कथा मुझसे कहिये। आश्चर्य की बात है कि मुनि नारद के मन को भी मोह हुआ।

---

१. की।

दो०— बोले बिहँसि महेस तब ग्यानी मूढ़ न कोइ।
जेहि जस रघुपति करहिं जब सो तस तेहि छन होइ॥

शिवजी ने तब हँसकर कहा—न कोई ज्ञानी है, न मूर्ख। जब भगवान् रामचन्द्रजी जिसको जैसा करते हैं, वह उसी क्षण वैसा ही हो जाता है।

सो०— कहउँ राम गुन गाथ भरद्वाज सादर सुनहु।
भव भंजन रघुनाथ भजु तुलसी तजि मान मद॥१२४

हे भरद्वाज! मैं रामचन्द्रजी की गुण-गाथा कहता हूँ, तुम आदर से सुनो। तुलसीदासजी कहते हैं—मान और मद को छोड़कर आवागमन का नाश करने वाले रघुनाथजी को भजो।

हिमगिरि गुहा एक अति पावनि ❀ बह समीप सुरसरी सुहावनि
आस्रम परम पुनीत सुहावा ❀ देखि देवरिषि मन अति भावा

हिमालय पर्वत पर एक बड़ी पवित्र गुफा थी। उसके पास ही सुन्दर गङ्गाजी बहती थीं। उस परम पवित्र और सुन्दर आश्रम को नारदमुनि ने देखा और वह उनके मन को बहुत सुहावना लगा।

निरखि सैल सरि बिपिन बिभागा ❀ भयउ रमापति पद अनुरागा
सुमिरत हरिहि साप गति बाधी[1] ❀ सहज बिमल मन लागि समाधी

पर्वत, नदी और बन-प्रदेश को देखकर नारदजी को भगवान् के चरणों में प्रेम उत्पन्न हुआ। भगवान् को स्मरण करते ही नारदमुनि का वह शाप जिसे दक्ष प्रजापति ने दिया था कि तुम एक स्थान पर नहीं टिक सकोगे, रुक गया और स्वभाव ही से निर्मल मन में समाधि लग गयी।

मुनि गति देखि सुरेस डेराना ❀ कामहिं बोलि कीन्ह सनमाना
सहित सहाय जाहु मम हेतू ❀ चलेउ हरषि हिय जलचर केतू

नारदमुनि की गति (समाधि) देखकर देवराज इन्द्र डरा। उसने कामदेव को बुलाकर उसका आदर किया (और कहा कि) मेरी भलाई के लिये तुम अपने सहायकों-सहित (समाधि भङ्ग करने को) जाओ। (इन्द्र की आज्ञा पाते ही) कामदेव मन में प्रसन्न होकर चला।

---

१. बँध गई, रुक गई।

सुनासीर[1] मन महुँ अति त्रासा ❀ चहत देवरिषि मम पुर बासा
जे कामी लोलुप जग माहीं ❀ कुटिल काक इव सबहिं डेराहीं

इन्द्र के मन में यह बड़ा डर था कि देवर्षि नारद मेरे लोक (अमरावती) का निवास (राज्य) चाहते हैं। जो लोग संसार में कामी और लोभी होते हैं, वे कुटिल कौवे की तरह सबसे डरते हैं।

दो॰ सूख हाड़ लै भाग सठ स्वान निरखि मृगराज।
छीनि लेइ जनि जान जड़[2] तिमि[3] सुरपतिहि न लाज॥

जैसे सिंह को देखकर मूर्ख कुत्ता सूखा हाड़ लेकर भागे और वह मूर्ख यह समझे कि कहीं उस हाड़ को वह सिंह छीन न ले, वैसे ही इन्द्र को (नारदजी मेरा इन्द्रलोक छीन लेंगे ऐसा सोचते हुए) लज्जा नहीं आई।

तेहि आस्रमहि मदन जब गयऊ ❀ निज माया बसंत निरमयऊ
कुसुमित बिबिध बिटप बहुरंगा ❀ कूजहिं कोकिल गुंजहिं भृङ्गा

जब कामदेव उस आश्रम में गया, तब उसने अपनी माया से वहाँ वसन्त-ऋतु को उत्पन्न किया। तरह-तरह के वृक्षों पर रंग-बिरंगे फूल खिल गये और उन पर कोयलें कूकने लगीं और भौंरे गुञ्जारने लगे।

चली सुहावनि त्रिबिध बयारी ❀ काम कृसानु बढ़ावनिहारी
रंभादिक सुरनारि नबीना ❀ सकल असमसर कला प्रबीना

काम की आग को बढ़ाने वाली त्रिविध अर्थात् शीतल, मन्द और सुगन्धित सुहावनी हवा चलने लगी। देवताओं की रम्भा आदि सब नवयौवना स्त्रियाँ, जो कामदेव की कलाओं में निपुण थीं,

करहिं गान बहु तान तरंगा ❀ बहु बिधि क्रीड़हिं पानि पतंगा[4]
देखि सहाय मदन हरषाना ❀ कीन्हेसि पुनि प्रपंच बिधि नाना

तरह-तरह की तानों की तरंग में वे गाने लगीं और हाथ में गेंद लेकर तरह-तरह की क्रीड़ायें करने लगीं। इस तरह सहायकों को देखकर कामदेव बहुत प्रसन्न हुआ और फिर उसने बहुत प्रकार के मायाजाल रचे।

काम कला कछु मुनिहि न ब्यापी ❀ निज भय डरेउ मनोभव पापी
सीम कि चाँपि[5] सकइ कोउ तासू ❀ बड़ रखवार रमापति जासू

१. इन्द्र। २. मूर्ख। ३. वैसे। ४. गेंद। ५. दबा।

पर कामदेव की कोई कला मुनि पर प्रभाव न डाल सकी, तब पापी कामदेव अपने ही लिये भयभीत हो गया। जिसके बड़े रक्षक लक्ष्मीपति भगवान् हैं, भला, उसकी मर्यादा को कोई दबा सकता है?

दो० सहित सहाय सभीत अति मानि हारि मन मैन[1]।
गहेसि जाइ मुनि चरन तब कहि सुठि आरत बैन[2]॥१२६॥

फिर अपने सहायकों-समेत कामदेव ने बहुत डरकर और मन में हार मानकर मुनि के चरणों को जा पकड़ा और वह नम्र और आर्त्त वचन बोलने लगा।

भयउ न नारद मन कछु रोषा ❀ कहि प्रिय बचन काम परितोषा
नाइ चरन सिरु आयसु पाई ❀ गयउ मदन तब सहित सहाई

पर नारद मुनि के मन में कुछ भी क्रोध न आया। उन्होंने प्यार के वचन कहकर कामदेव का समाधान किया। फिर मुनि के चरणों में सिर नवाकर और आज्ञा पाकर कामदेव अपने सहायकों-सहित चला गया।

मुनि सुसीलता आपनि करनी ❀ सुरपति सभा जाइ सब बरनी
सुनि सबके मन अचरज आवा ❀ मुनिहि प्रसंसि हरिहि सिरु नावा

इन्द्र की सभा में जाकर उसने मुनि की सुशीलता और अपनी करतूत सब कही। जिसे सुनकर सबके मन में अचरज हुआ और उन्होंने नारदजी की बड़ाई करके भगवान् को प्रणाम किया।

तब नारद गवने सिव पाहीं ❀ जिता काम अहमिति मन माहीं
मार चरित संकरहि सुनाए ❀ अति प्रिय जानि महेस सिखाए

तब नारदजी शिवजी के पास गये, मुनि के मन में अहङ्कार हो गया कि उन्होंने कामदेव को जीत लिया। उन्होंने कामदेव की सारी लीला शिवजी को सुना दी। शिवजी ने उनको बहुत प्रिय समझकर समझाया—

बार बार बिनवउँ मुनि तोही ❀ जिमि यह कथा सुनायहु मोही
तिमि जनि हरिहि सुनायहु कबहूँ ❀ चलेहु प्रसंग दुरायहु[3] तबहूँ

हे मुनि! मैं बार-बार विनती करता हूँ कि जिस तरह यह कथा तुमने मुझे सुनाई है, उसी तरह विष्णु को कभी मत सुनाना। जो चर्चा चले भी, तो इसको छिपा जाना।

---

१. कामदेव। २. वचन। ३. छिपाना।

दो॰ संभु दीन्ह उपदेस हित नहिं नारदहि सुहान ।
भरद्वाज कौतुक सुनहु हरि इच्छा बलवान ॥१२७॥

यद्यपि शिवजी ने भले के लिये यह उपदेश दिया, पर नारद मुनि को वह अच्छा न लगा। (याज्ञवल्क्यजी कहते हैं कि) हे भरद्वाज! अब कौतुक (तमाशे की रोचक बात) सुनो। हरि की इच्छा बड़ी बलवती है।

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई ❋ करै अन्यथा अस नहिं कोई
संभु बचन मुनि मन नहिं भाए ❋ तब बिरंचि के लोक सिधाए

रामचन्द्रजी जो किया चाहते हैं, वही होता है। ऐसा कोई नहीं, जो उसके विरुद्ध कर सके। शिवजी के वाक्य नारदजी को न सुहाये; फिर वे वहाँ से ब्रह्मलोक को चले गये।

एक बार करतल बर बीना ❋ गावत हरि गुन गान प्रबीना
छीर सिंधु गवने मुनिनाथा ❋ जहँ बस श्रीनिवास श्रुतिमाथा

एक बार गान-विद्या में निपुण नारदमुनि हाथ में सुन्दर वीणा लिये हुए, हरि-गुण गाते क्षीरसागर को गये, जहाँ वेदों के मस्तक-स्वरूप श्रीनिवास भगवान् रहते हैं।

हरषि मिलेउ उठि रमानिकेता ❋ बैठे आसन रिषिहि समेता
बोले बिहँसि चराचर राया ❋ बहुते दिनन्ह कीन्हि मुनि दाया

लक्ष्मीनिवास भगवान् उठकर बड़े आनन्द से उनसे मिले और ऋषि के साथ आसन पर बैठ गये। चराचर के स्वामी भगवान् हँसकर बोले—हे मुनि! आज आपने बहुत दिनों पर दया की।

काम चरित नारद सब भाखे ❋ जद्यपि प्रथम बरजि सिवँ राखे
अति प्रचंड रघुपति कै माया ❋ जेहि न मोह अस को जग जाया

यद्यपि शिवजी ने पहले ही मना कर रक्खा था, पर तो भी नारदजी ने कामदेव का सारा चरित्र भगवान् को कह सुनाया। रघुनाथजी की माया बड़ी ही प्रबल है। जगत् में ऐसा कौन जन्मा है, जिसे वह मोहित न कर दे।

दो॰ रूख बदन करि बचन मृदु बोले श्रीभगवान ।
तुम्हरे सुमिरन तें मिटहिं मोह मार मद मान ।१२८॥

भगवान् ने मुँह रूखा बनाकर कोमल वचन कहा—हे मुनिराज ! आपका स्मरण करने से मोह, कामदेव, मद और अभिमान दूर हो जाते हैं; (फिर आपके लिये तो कहना ही क्या ?)

सुनु मुनि मोह होइ मन ताकें ❀ ग्यान बिराग हृदय नहिं जाकें
ब्रह्मचरज ब्रत रत मतिधीरा ❀ तुम्हहि कि करइ मनोभव[1] पीरा

हे मुनि ! सुनिये, जिसके हृदय में ज्ञान-वैराग्य नहीं है, मोह उसके मन में होता है। आप तो ब्रह्मचर्य-व्रत में तत्पर और बड़े धीर-बुद्धि हैं। भला, कहीं आपको भी कामदेव सता सकता है ?

नारद कहेउ सहित अभिमाना ❀ कृपा तुम्हारि सकल भगवाना
करुनानिधि मन दीख बिचारी ❀ उर अंकुरेउ गरब तरु भारी

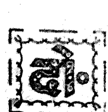
नारदजी ने अभिमान के साथ कहा—हे भगवान् ! यह सब आपकी कृपा है। करुणा-निधान भगवान् ने मन में विचार करके देखा कि इनके मन में अभिमानरूपी भारी वृक्ष का अंकुर उग आया है।

बेगि सो मैं डारिहउँ उखारी ❀ पन हमार सेवक हितकारी
मुनि कर हित मम कौतुक होई ❀ अवसि उपाय करबि मैं सोई

अब मैं इसे जल्दी ही उखाड़ फेंकूँगा; क्योंकि भक्तों का हित करना हमारा प्रण है। इससे मुनि का कल्याण और मेरा खेल होगा। मैं अवश्य वही उपाय करूँगा।

तब नारद हरिपद सिरु नाई ❀ चले हृदय अहमिति अधिकाई
श्रीपति निज माया तब प्रेरी ❀ सुनहु कठिन करनी तेहि केरी

तब नारदमुनि भगवान् के चरणों में सिर नवाकर चले। उनके मन में अभिमान और भी बढ़ गया। फिर भगवान् ने अपनी माया को प्रेरित किया। अब उसकी कठिन करतूत सुनो।



बिरचेउ मग महुँ नगर तेहि सत जोजन बिस्तार।
श्रीनिवास-पुर तें अधिक रचना बिबिध प्रकार॥१२९॥

उसने रास्ते में सौ योजन (चार सौ कोस) का एक बहुत ही सुन्दर नगर रचा। उस नगर की भाँति-भाँति की रचनाएँ लक्ष्मी-निवास (भगवान् के)

---

१. कामदेव।

नगर (बैकुण्ठ) से भी अधिक सुन्दर थीं।

बसहिं नगर सुंदर नर नारी ❀ जनु बहु मनसिज[1] रति तनुधारी
तेहि पुर बसइ सीलनिधि राजा ❀ अगनित हय गय सेन समाजा

उस नगर में ऐसे सुन्दर नर-नारी बसते थे, मानो अनेक कामदेव और (उसकी स्त्री) रति ही ने शरीर धारण कर रक्खे हों। उस नगर में शीलनिधि नामक राजा रहता था। उसके यहाँ घोड़े, हाथी और सेना के समूह अनगिनत थे।

सत सुरेस सम बिभव बिलासा ❀ रूप तेज बल नीति निवासा
बिस्वमोहनी तासु कुमारी ❀ श्री बिमोह जिसु रूप निहारी

उसका वैभव और विलास सौ इन्द्रों के समान था। रूप, तेज, बल और नीति का वह घर था। उसके विश्वमोहिनी नाम की एक कन्या थी, जिसका रूप देखकर लक्ष्मी भी मोहित हो जायँ।

सोइ हरि माया सब गुन खानी ❀ सोभा तासु कि जाइ बखानी
करइ स्वयंबर सो नृपबाला ❀ आए तहँ अगनित महिपाला

वह सब गुणों की खान भगवान् की माया थी। उसकी शोभा का वर्णन कैसे किया जा सकता है? वह राजकन्या स्वयम्वर करना चाहती थी, इससे वहाँ अनगिनत राजा आये हुये थे।

मुनि कौतुकी नगर तेहिं गयऊ ❀ पुरबासिन्ह सब पूछत भयऊ
सुनि सब चरित भूप गृहँ आए ❀ करि पूजा नृप मुनि बैठाए

मनमौजी नारदजी उस नगर में गये और नगर-निवासियों से उन्होंने सब हाल पूछा। सब समाचार सुनकर (मुनि) राजा के महल में आये। राजा ने सत्कार करके उन्हें आसन पर बैठाया।

दो०— आनि[2] देखाई नारदहि भूपति राजकुमारि।
कहहु नाथ गुन दोष सब एहि के हृदयँ बिचारि।१३०।

राजा ने राजकुमारी को लाकर नारदजी को दिखलाया और पूछा—हे नाथ! आप अपने हृदय में विचार कर इसके सब गुण-दोष कहिये।

देखि रूप मुनि बिरति बिसारी ❀ बड़ी बार[3] लगि रहे निहारी
लच्छन तासु बिलोकि भुलाने ❀ हृदयँ हरष नहिं प्रगट बखाने

---

१. कामदेव। २. लाकर। ३. देर।

उसके रूप को देखते ही मुनि वैराग्य भूल गये और बड़ी देर तक उसे देखते ही रहे। उसके लक्षण देखकर मुनि अपने आप को भूल गये और हृदय में हर्षित हुए पर उसे प्रगट न होने दिया।

जो एहि बरइ अमर सोइ होई ❀ समर भूमि तेहि जीत न कोई
सेवहिं सकल चराचर ताही ❀ बरइ सीलनिधि कन्या जाही

(वे मन में कहने लगे कि) जो इसे ब्याहेगा, वह अमर होगा और कोई उसे युद्ध में जीत न सकेगा। यह शीलनिधि की कन्या जिसको बरेगी, सारा चराचर जगत् उसकी सेवा करेगा।

लच्छन सब बिचारि उर राखे ❀ कछुक बनाइ भूप सन भाखे
सुता सुलच्छन कहि नृप पाहीं ❀ नारद चले सोच मन माहीं

सब लक्षणों को विचारकर मुनि ने अपने हृदय में रक्खा और राजा से कुछ और अपनी ओर से बनाकर कह दिया। नारदमुनि राजा को यह कहकर चल दिये कि तुम्हारी पुत्री सुलक्षणा (अच्छे लक्षणों वाली) है। पर वे मन में यह सोचते हुये चले—

करउँ जाइ सोइ जतन बिचारी ❀ जेहि प्रकार मोहिं बरइ कुमारी
जप तप कछु न होइ तेहि काला ❀ हे बिधि मिलइ कवन बिधि बाला

मैं जाकर सोच-विचार करके ऐसा उपाय करूँ, जिससे (यह) कन्या मुझे ही बरे। इस समय जप-तप तो कुछ भी नहीं हो सकता। हे विधाता! मुझे यह कन्या किस तरह मिलेगी ?

दो०— एहि अवसर चाहिअ परम सोभा रूप बिसाल।
जो बिलोकि रीझै कुअँरि तब मेलइ जयमाल १३१

इस मौके पर तो बड़ी भारी शोभा और विशाल रूप चाहिये, जिसे देखकर कुमारी मोहित हो और जयमाल मेरे गले में डाल दे।

हरि सन[1] मागउँ सुन्दरताई ❀ होइहि जात गहरु अति भाई
मोरें हित हरि सम नहिं कोऊ ❀ एहि अवसर सहाय सोइ होऊ

भगवान् से सुन्दरता माँगूँ ? पर भाई! उनके पास जाने में बहुत देर लग

१. से।

जायगी। पर मेरे तो हरि के समान दूसरा कोई हितैषी भी नहीं। इस समय वे ही मेरे सहायक हों।

बहु बिधि बिनय कीन्हि तेहि काला ❀ प्रगटेउ प्रभु कौतुकी कृपाला
प्रभु बिलोकि मुनि नयन जुड़ाने ❀ होइहि काजु हिएँ हरषाने

उस समय नारदजी ने भगवान् की बहुत विनती की। कौतुकी और कृपालु प्रभु वहीं प्रकट हो गये। स्वामी को देखकर नारदजी के नेत्र शीतल हो गये और वे मन में बड़े ही प्रसन्न हुए कि अब काम बन ही जायगा।

अति आरत कहि कथा सुनाई ❀ करहु कृपा करि होहु सहाई
आपन रूप देहु प्रभु मोही ❀ आन भाँति नहिं पावउँ ओही

नारदजी ने बड़ी ही दीनता से सब कथा कह सुनाई और कहा—हे नाथ! अब कृपा करके मेरी सहायता कीजिये। हे प्रभो! आप अपना रूप मुझको दीजिए; और किसी तरह मैं उस (राजकन्या) को नहीं पा सकता।

जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा ❀ करहु सो बेगि[1] दास मैं तोरा
निज माया बल देखि बिसाला ❀ हियँ हँसि बोले दीनदयाला

हे नाथ! जिस तरह से मेरा कल्याण हो, आप वही काम जल्दी कीजिए। मैं आपका दास हूँ। अपनी माया का विशाल बल देखकर दीनदयालु भगवान् हृदय में हँसकर बोले—

दो॰ जेहि बिधि होइहि परम हित नारद सुनहु तुम्हार।
सोइ हम करब न आन[2] कछु बचन न मृषा हमार १३२

हे नारद! सुनो, जिस तरह आपका परम कल्याण होगा, हम वही करेंगे, दूसरा कुछ नहीं। हमारा वचन असत्य नहीं होता।

कुपथ माँग रुज[3] ब्याकुल रोगी ❀ बैद न देइ सुनहु मुनि जोगी
एहि बिधि हित तुम्हार मैं ठयऊ ❀ कहि अस अंतरहित प्रभु भयऊ

हे योगी मुनि! सुनो। जिस तरह रोगी रोग से व्याकुल होकर कुपथ्य माँगे तो वैद्य उसे नहीं देता; उसी तरह मैंने भी तुम्हारा हित करने की ठान ली है। ऐसा कहकर भगवान् अन्तर्द्धान हो गये।

---

१. जल्द। २. अन्य। ३. रोग।

माया बिबस भये मुनि मूढ़ा ❀ समुझी नहिं हरि गिरा निगूढ़ा[1]
गवने तुरत तहाँ रिषिराई ❀ जहाँ स्वयंबर भूमि बनाई

भगवान् की माया के वश हुये मुनि ऐसे मूढ़ हो गये कि वे भगवान् की अगूढ़ (स्पष्ट) वाणी को भी न समझ सके। नारदजी तत्काल वहाँ गये, जहाँ स्वयंवर की भूमि बनाई गई थी।

निज निज आसन बैठे राजा ❀ बहु बनाव करि सहित समाजा
मुनि मन हरष रूप अति मोरें ❀ मोहि तजि आनहि बरिहि न भोरें

ख़ूब सज-धज कर राजा लोग समाज-सहित अपने-अपने आसन पर बैठे थे। नारद मुनि के मन में बड़ा हर्ष था कि मेरा रूप बहुत ही सुन्दर है। कन्या भूलकर भी मेरे सिवा दूसरे को न बरेगी।

मुनि हित कारन कृपानिधाना ❀ दीन्ह कुरूप न जाइ बखाना
सो चरित्र लखि काहुँ न पावा ❀ नारद जानि सबहिं सिर नावा

मुनि के कल्याण के लिये कृपानिधान ने उनको ऐसा कुरूप बना दिया था, जिसका वर्णन नहीं हो सकता; पर उस रहस्य को किसी ने देखा नहीं। सबने उन्हें नारद ही जानकर प्रणाम किया।

दो० रहे तहाँ दुइ रुद्र गन ते जानहिं सब भेउ[2]।
बिप्र बेष देखत फिरहिं परम कौतुकी तेउ[3] ॥१३३॥

वहाँ दो शिवजी के गण भी थे। वे सब रहस्य जानते थे। वे ब्राह्मण के वेष में वहाँ का सब कौतुक देखते फिरते थे। वे भी बड़े मौजी थे।

जेहि समाज बैठे मुनि जाई ❀ हृदय रूप अहमिति अधिकाई
तहँ बैठे महेस गन दोऊ ❀ बिप्र बेष गति लखइ न कोऊ

जिस समाज (पंक्ति) में नारदजी हृदय में अपने रूप का बड़ा घमण्ड लेकर जा बैठे थे, वहीं पर शिवजी के वे दोनों गण भी बैठ गये। ब्राह्मण के वेष में होने से कोई उनकी चाल को न जान सका।

करहिं कूटि नारदहिं सुनाई ❀ नीकि दीन्हि हरि सुन्दरताई
रीझिहि राजकुअँरि छबि देखी ❀ इन्हहिं बरिहि हरि जानि बिसेषी

नारदजी को सुना-सुनाकर, वे व्यंग्य वचन कहते थे—भगवान् ने इनको

१. स्पष्ट। २. भेद, रहस्य। ३. वे भी।

अच्छी सुन्दरता दी है। इनकी शोभा देखकर राजकुमारी रीझ ही जायगी और इन्हीं को हरि (वानर) जानकर ख़ास तौर से बरेगी।

मुनिहि मोह मन हाथ पराएँ ❀ हँसहिं संभु गन अति सचु[1] पाएँ
जदपि सुनहिं मुनि अटपटि बानी ❀ समुझि न परइ बुद्धि भ्रम सानी

नारद मुनि को मोह हो रहा था और उनका मन दूसरे के हाथ (माया के वश) में था। शिवजी के गण ख़ूब मज़ा ले-लेकर हँसते थे। यद्यपि मुनि उनकी ऊटपटाँग बातें सुनते थे; पर तो भी वे उनकी समझ में नहीं आती थीं, क्योंकि उनकी बुद्धि भ्रम में सनी हुई थी।

काहु न लखा सो चरित बिसेषा ❀ सो सरूप नृपकन्याँ देखा
मर्कट[2] बदन भयंकर देही ❀ देखत हृदयँ क्रोध भा तेही

इस विशेष चरित को और किसी ने नहीं देखा। केवल उस राजकन्या ने वह रूप देखा। मुनि का मुँह बन्दर का-सा और सारा शरीर डरावना था। उसे देखते ही कन्या के हृदय में क्रोध उत्पन्न हो गया।

दो०— सखी संग लै कुअँरि तब चलि जनु राजमराल।
देखत फिरइ महीप सब कर सरोज जयमाल।१३४।

सखियों को साथ लेकर राजकुमारी इस तरह चली जैसे राज-हंसिनी चल रही हो। वह सब राजाओं को देखती फिरती थी। उसके कमल ऐसे हाथों में जयमाला थी।

जेहि दिसि बैठे नारद फूली ❀ सो दिसि तेहि न बिलोकी भूली
पुनि पुनि मुनि उकसहिं अकुलाहीं ❀ देखि दसा हरगन मुसुकाहीं

जिस ओर नारद (रूप के) गर्व में फूले बैठे थे, उस ओर उसने भूल कर भी नहीं ताका। नारदमुनि बार-बार उचकते और छटपटाते थे। उनकी दशा को देखकर शिवजी के गण मुस्कराते थे।

धरि नृप तनु तहँ गयउ कृपाला ❀ कुअँरि हरषि मेलेउ जयमाला
दुलहिन लै गे[3] लच्छिनिवासा ❀ नृप समाज सब भयउ निरासा

कृपालु भगवान् राजा का शरीर धारण करके वहाँ जा पहुँचे। राजकुमारी ने प्रसन्न होकर उनके गले में जयमाला डाल दी। लक्ष्मीनिवास भगवान्

१. रस ले-लेकर। २. बन्दर। ३. गये।

दुलहिन को ले गये। सारी राज-मंडली निराशा हुई।

मुनि अति बिकल मोहमति नाँठी ❀ मनि गिरि गई छूटि जनु गाँठी
तब हर गन बोले मुसुकाई ❀ निज मुख मुकुर बिलोकहु जाई

मुनि बहुत विकल थे; मोह ने उनकी बुद्धि को जकड़ लिया था। मानो गाँठ खुल जाने से मणि गिर गई हो। तब शिवजी के गणों ने मुस्कराकर कहा—जाकर दर्पण में अपना मुँह तो देखिये।

अस कहि दोउ भागे भय भारी ❀ बदन दीख मुनि बारि[1] निहारी
बेषु बिलोकि क्रोध अति बाढ़ा ❀ तिन्हहिं सराप दीन्ह अति गाढ़ा

ऐसा कहकर वे दोनों बहुत भयभीत होकर भाग खड़े हुये। मुनि ने पानी में झाँककर अपना मुँह देखा। अपना वेष देखकर उन्हें बहुत क्रोध बढ़ा। उन गणों को उन्होंने बड़ा कठोर शाप दिया।

दो०— होहु निसाचर जाइ तुम्ह कपटी पापी दोउ।
हँसेहु हमहिं सो लेहु फल बहुरि हँसेहु मुनि कोउ।१३५

तुम दोनों कपटी और पापी जाकर राक्षस हो जाओ। मेरी हँसी की, उसका फल लो। अब फिर किसी मुनि की हँसी करना।

पुनि जल दीख रूप निज पावा ❀ तदपि हृदयँ संतोष न आवा
फरकत अधर[2] कोप मन माहीं ❀ सपदि चले कमलापति पाहीं

मुनि ने फिर जल में देखा, तो उन्हें अपना असली रूप प्राप्त हो गया। इतने पर भी उन्हें संतोष नहीं हुआ। उनके होंठ फड़क रहे थे और मन में क्रोध (भरा) था। तुरंत ही वे कमलापति भगवान् के पास चले।

देहउँ साप कि मरिहउँ जाई ❀ जगत मोरि उपहास कराई
बीचहि पंथ मिले दनुजारी ❀ संग रमा सोइ राजकुमारी

मन में सोचते जाते थे—जाकर या तो शाप दूंगा या प्राण दे दूंगा। उन्होंने जगत् में मेरी हँसी करा दी। बीच रास्ते ही में उन्हें दैत्यों के शत्रु विष्णु भगवान् मिले। साथ में लक्ष्मी और वही राजकुमारी थीं।

बोले मधुर बचन सुरसाईं ❀ मुनि कहँ चले बिकल की नाईं
सुनत बचन उपजा अति क्रोधा ❀ मायाबस न रहा मन बोधा

१. पानी। २. ओंठ।

देवताओं के स्वामी भगवान् ने मीठे वचनों से कहा—हे मुनि! व्याकुल की तरह कहाँ चले? उनका वचन सुनते ही नारद को बड़ा क्रोध आया। माया के वश में होने के कारण मन में चेत नहीं था।

पर संपदा सकहु नहिं देखी ❀ तुम्हरे इरिषा कपट बिसेखी
मथत सिंधु रुद्रहि बौराएहु ❀ सुरन्ह प्रेरि विष पान कराएहु

मुनि ने कहा—तुम दूसरों का ऐश्वर्य नहीं देख सकते; तुम में ईर्ष्या और कपट अधिक है। सिंधु मथने के समय तुमने शिवजी को बावला बना दिया; और देवताओं को प्रेरित करके उन्हें विष-पान कराया।

दो०— असुर सुरा बिष संकरहि आपु रमा मनि चारु।
स्वारथ साधक कुटिल तुम्ह सदा कपट ब्यवहारु १३६

असुरों को शराब और शिवजी को विष देकर तुमने स्वयं लक्ष्मी और सुन्दर कौस्तुभ-मणि हथिया ली। तुम बड़े धूर्त और मतलबी हो। तुम सदा कपट का व्यवहार करते हो।

परम स्वतंत्र न सिर पर कोई ❀ भावइ मनहिं करहु तुम्ह सोई
भलेहि मंद मंदेहि भल करहू ❀ बिसमउ हरष न हिअँ कछु धरहू

तुम बड़े स्वाधीन हो; सिर पर तो कोई है नहीं, इससे जब जो जी को भाता है, वही करते हो। भले को बुरा और बुरे को भला कर देते हो। हृदय में न तुम्हें विस्मय होता है, न हर्ष।

डहँकि डहँकि[1] परिचेहु सब काहू ❀ अति असंक मन सदा उछाहू
करम सुभासुभ तुम्हहिं न बाधा ❀ अब लगि तुम्हहिं न काहूँ साधा

सबको ठग-ठगकर परक गये हो; किसी का डर तो है नहीं, इससे (ठगने के काम में) मन में सदा उत्साह रहता है। शुभ और अशुभ कर्मों की भी तुम्हें कोई रुकावट नहीं है। अबतक तुमको किसी ने ठीक नहीं किया था।

भले भवन अब बायन[2] दीन्हा ❀ पावहुगे फल आपन कीन्हा
बंचेहु मोहि जवनि धरि देहा ❀ सोइ तनु धरहु श्राप मम एहा

अब तुमने अच्छे घर में बैना दिया है। अब तुम अपने किये का फल पाओगे। जो शरीर धारण करके तुमने मुझे छला है, वही शरीर धारण करो, यह मेरा शाप है।

१. ठग-ठगकर, २. विवाहादि का मिष्ठान्न।

कपि आकृति तुम्ह कीन्हि हमारी ❀ करिहहिं कीस सहाय तुम्हारी
मम अपकार कीन्ह तुम्ह भारी ❀ नारि बिरहँ तुम्ह होब[1] दुखारी

तुमने मेरी आकृति बंदर की कर दी थी, वही बंदर तुम्हारी सहायता करेंगे। तुमने मेरा बड़ा अपकार किया है; तुम भी स्त्री के वियोग में दुःखी होगे।

दो॰ स्राप सीस धरि हरषि हिअँ प्रभु बहु बिनती कीन्हि।
निज माया कै प्रबलता करषि[2] कृपानिधि लीन्हि।१३७

शाप को सिर पर चढ़ाकर, हृदय में हर्षित होकर प्रभु ने नारदजी से बहुत विनती की और कृपा के भंडार भगवान् ने अपनी माया की प्रबलता खींच ली।

जब हरि माया दूरि निवारी ❀ नहिं तहँ रमा न राजकुमारी
तब मुनि अति सभीत हरि चरना ❀ गहे पाहि प्रनतारति हरना

जब भगवान् ने माया दूर कर ली, तब न वहाँ लक्ष्मी थी, न राजकुमारी। तब मुनि ने भयभीत होकर प्रभु का चरण पकड़ लिया और कहा—हे शरण में आये हुए का दुःख हरने वाले! मेरी रक्षा करो।

मृषा होउ मम स्राप कृपाला ❀ मम इच्छा कह दीनदयाला
मैं दुर्बचन कहे बहुतेरे ❀ कह मुनि पाप मिटिहि किमि मेरे

हे कृपा करने वाले! मेरा शाप मिथ्या हो जाय। तब दीनों पर दया करने वाले भगवान् ने कहा—यह तो मेरी इच्छा से हुआ है। मुनि ने कहा—मैंने आपको बहुत बुरे वचन कहे। मेरे पाप कैसे मिटेंगे?

भजहु जाय संकर सत नामा ❀ होइहि हृदय तुरत बिस्रामा
कोउ नहिं सिव समान प्रिय मोरें ❀ असि परतीति तजहु जनि भोरें

भगवान् ने कहा—जाकर शंकरजी के शत नाम का जप करो। तब तुरंत ही हृदय में शांति होगी। शिव के समान मुझे कोई प्रिय नहीं है। इस विश्वास को भूलकर भी न छोड़ना।

जेहि पर कृपा न करहिं पुरारी ❀ सो न पाव मुनि भगति हमारी
अस उर धरि महि बिचरहु जाई ❀ अब न तुम्हहि माया निअराई

शिवजी जिस पर कृपा नहीं करते, वह हे मुनि! मेरी भक्ति नहीं पाता।

---

१. होगे। २. खींच।

ऐसा हृदय में धारण करके जाकर पृथ्वी पर विचरो। अब मेरी माया तुम्हारे निकट नहीं आयेगी।

दो० **बहु बिधि मुनिहि प्रबोधि प्रभु तब भए अंतरधान।**
सत्यलोक नारद चले करत राम गुन गान।१३८।

प्रभु बहुत प्रकार से मुनि को ढाढ़स देकर तब अंतर्द्धान हुये और नारदजी रामचन्द्रजी के गुणों का गान करते हुये सत्यलोक की ओर चले।

हर गन मुनिहि जात पथ देखी ❁ बिगत मोह मन हर्ष बिसेषी
अति सभीत नारद पहिं आए ❁ गहि पद आरत बचन सुनाये

शिव के गणों ने मुनि को मार्ग में जाते हुये देखा कि वे मोह से रहित हैं और उनके मन में हर्ष बहुत है। वे बहुत डरे हुये नारदजी के पास आये और उनके चरण पकड़कर उन्होंने बड़ी नम्रता के वचन कहे—

हर गन हम न विप्र मुनिराया ❁ बड़ अपराध कीन्ह फलु पाया
स्राप अनुग्रह करहु कृपाला ❁ बोले नारद दीनदयाला

हे मुनिराज! हम ब्राह्मण नहीं हैं, शिव के गण हैं। हमने बड़ा अपराध किया और उसका फल पा लिया। अब हे कृपालु! आप शाप को दूर कर दीजिये। दीनों पर दया करने वाले नारदजी ने कहा—

निसिचर जाइ होहु तुम्ह दोऊ ❁ बैभव बिपुल तेज बल होऊ
भुज बल बिस्व जितब तुम्ह जहिआ ❁ धरिहहिं बिष्नु मनुज तनु तहिआ

तुम दोनों जाकर राक्षस होओ; तुमको बहुत ऐश्वर्य, तेज और बल प्राप्त हो। तुम जब अपनी भुजाओं के बल से संसार को जीत लोगे, तब भगवान् विष्णु मनुष्य का शरीर धारण करेंगे।

समर मरन हरि हाथ तुम्हारा ❁ होइहहु मुकुत न पुनि संसारा
चले जुगल मुनि पद सिरु नाई ❁ भए निसाचर कालहि पाई

विष्णु भगवान् के हाथ से युद्ध में तुम्हारी मृत्यु होगी। तब तुम मुक्त हो जाओगे और संसार में फिर जन्म नहीं लोगे। वे दोनों मुनि के चरणों में सिर नवाकर चले और समय पाकर राक्षस हुये।

दो॰ एक कल्प एहि हेतु प्रभु लीन्ह मनुज अवतार।
सुर रंजन सज्जन सुखद हरि भंजन भुवि भार।१३९

देवताओं को प्रसन्न करने वाले, सज्जनों को सुख देने वाले और पृथ्वी के भार को नष्ट करने वाले भगवान् ने एक कल्प में तो इसी कारण से मनुष्य का अवतार लिया था।

एहि बिधि जनम करम हरि केरे[1] ❀ सुन्दर सुखद बिचित्र घनेरे
कलप कलप प्रति प्रभु अवतरहीं ❀ चारु चरित नाना बिधि करहीं

इस प्रकार भगवान् के अनेकों सुन्दर, सुख देने वाले और बहुत विचित्र जन्म और कर्म हैं। प्रत्येक कल्प में भगवान् अवतार लेते हैं और अनेक प्रकार की सुन्दर लीलायें करते हैं।

तब तब कथा मुनीसन्ह गाई ❀ परम पुनीत प्रबंध बनाई
बिबिध प्रसंग अनूप बखाने ❀ करहिं न सुनि आचरजु सयाने

तब-तब मुनिवरों ने बहुत पवित्र प्रबंध बनाकर कथा का गान किया है और भाँति-भाँति के अनोखे प्रसंगों का वर्णन किया है, जिसको सुनकर समझदार लोग आश्चर्य नहीं करते।

हरि अनंत हरि कथा अनंता ❀ कहहिं सुनहिं बहु बिधि सब संता
रामचंद्र के चरित सुहाए ❀ कलप कोटि लगि जाहिं न गाए

क्योंकि भगवान् अनंत हैं। उनकी कथा भी अनन्त है और सन्त लोग उसे बहुत प्रकार से कहते और सुनते भी हैं। रामचन्द्र के सुन्दर चरित्र करोड़ कल्पों में भी गाये नहीं जा सकते।

यह प्रसंग मैं कहा भवानी ❀ हरिमायाँ मोहहिं मुनि ग्यानी
प्रभु कौतुकी प्रनत हितकारी ❀ सेवत सुलभ सकल दुख हारी

शिवजी पार्वतीजी से कहते हैं—हे पार्वती ! मैंने यह प्रसंग यह दिखाने के लिये कहा कि ज्ञानी मुनि भी भगवान् की माया से मोहित हो जाते हैं। भगवान् बड़े ही कौतुकी हैं और शरणागत का हित करने वाले हैं। सेवा करने में बहुत सुलभ और सब दुःखों के हरने वाले हैं।

---

१. के।

सो० सुर नर मुनि कोउ नाहिं जेहि न मोह माया प्रबल।
अस बिचारि मन माहिं भजिअ महामाया पतिहिं ॥

देवता, मनुष्य और मुनियों में ऐसा कोई नहीं है, जिसे भगवान् की प्रबल माया न मोह ले। ऐसा मन में विचारकर महामाया के पति विष्णु भगवान् को भजना चाहिये।

अपर[1] हेतु सुनु सैलकुमारी ❀ कहौं बिचित्र कथा बिस्तारी
जेहि कारन अज अगुन अरूपा ❀ ब्रह्म भयेउ कौसलपुर भूपा

हे पर्वत की कन्या पार्वती ! भगवान् के अवतार का दूसरा कारण सुनो। मैं उनकी अनोखी कथा को विस्तार करके कहता हूँ। जिस कारण से जन्म-रहित, निर्गुण और रूप-रहित अनुपम ब्रह्म अयोध्यापुरी के राजा हुये।

जो प्रभु बिपिन फिरत तुम्ह देखा ❀ बन्धु समेत धरे मुनिबेषा
जासु चरित अवलोकि भवानी ❀ सती सरीर रहिहु बौरानी

हे पार्वती ! जिस प्रभु को तुमने भाई के साथ मुनि के वेष में बन में फिरते हुये देखा था, जिसका चरित देखकर, सती के शरीर में तुम ऐसी बावली बन गई थी कि—

अजहुँ न छाया मिटति तुम्हारी ❀ तासु चरित सुनु भ्रम रुज हारी
लीला कीन्हि जो तेहि अवतारा ❀ सो सब कहिहौं मति अनुसारा

आज भी उस बावलेपन की छाया नहीं मिटती। उसी का चरित्र सुनो, जो भ्रम रूपी रोग का हरण करने वाला है। उस अवतार में भगवान् ने जो लीलायें की हैं अपनी बुद्धि के अनुसार मैं वे सब कहूँगा।

भरद्वाज सुनि संकर बानी ❀ सकुचि सप्रेम उमा मुसुकानी
लगे बहुरि बरनै बृषकेतू ❀ सो अवतार भयेउ जेहि हेतू

याज्ञवल्क्य ने कहा—हे भरद्वाज ! शंकरजी के वचन सुनकर, सकुचाकर, पार्वती प्रेम-सहित मुस्कुराईं। शिवजी फिर जिस कारण से भगवान् का वह अवतार हुआ था, उसका वर्णन करने लगे।

दो० सो मैं तुम्ह सन कहउँ सबु सुनु मुनीस मन लाइ।
राम कथा कलिमल हरनि मंगल करनि सुहाइ ॥१४१॥

१. दूसरा।

हे मुनियों में श्रेष्ठ भरद्वाज! मैं वह सब कथा तुमसे कहता हूँ। सुनो, राम की कथा कलियुग के पापों को हरने वाली, कल्याण करने वाली और बड़ी सुन्दर है।

स्वायंभू मनु अरु सतरूपा ❁ जिन्हते भइ नरसृष्टि अनूपा
दंपति धरम आचरन नीका ❁ अजहुँ गाव श्रुति जिन्ह कै लीका

स्वायंभुव मनु थे, और शतरूपा उनकी स्त्री थीं, जिनसे यह मनुष्यों की अद्भुत सृष्टि हुई। उनके पति-पत्नी धर्म और आचरण पवित्र थे। आज भी वेद उनकी कीर्त्ति का गान करते हैं।

नृप उत्तानपाद सुत तासू ❁ ध्रुव हरिभगत भयेउ सुत जासू
लघु सुत नाम प्रियब्रत ताही ❁ बेद पुरान प्रसंसहिं जाही

उनका पुत्र उत्तानपाद था, जिसका पुत्र हरिभक्त ध्रुव हुआ। उसके छोटे पुत्र का नाम प्रियव्रत था, जिसकी प्रशंसा वेद और पुराण करते हैं।

देवहूति पुनि तासु कुमारी ❁ जो मुनि कर्दम कै प्रिय नारी
आदि देव प्रभु दीनदयाला ❁ जठर धरेउ जेहि कपिल कृपाला

उसकी कन्या का नाम देवहूती था। वह कर्दम मुनि की प्यारी स्त्री थीं। आदिदेव और दीनों पर दया करने वाले प्रभु को जिन्होंने कृपालु कपिल के नाम से गर्भ में धारण किया।

सांख्य सास्त्र जिन्ह प्रगट बखाना ❁ तत्व बिचार निपुन भगवाना
तेहि मनु राज कीन्ह बहु काला ❁ प्रभु आयसु सब बिधि प्रतिपाला

जिन्होंने सांख्य-शास्त्र का प्रकट रूप में वर्णन किया वे कपिल भगवान् तत्व के विचार में बड़े योग्य थे। उन स्वायंभुव मनु ने बहुत समय तक राज किया और सब प्रकार से भगवान् की आज्ञा का पालन किया।

सो०— होइ न बिषय बिराग भवन बसत भा चौथपनु।
हृदयँ बहुत दुख लाग जनम गयेउ हरिभगति बिनु॥

विषयों से विरक्ति तो होती नहीं; घर-गृहस्थी में रहते हुये चौथापन (बुढ़ापा) आ गया। यह सोचकर उनके हृदय को बड़ा दुःख हुआ कि भगवान् की भक्ति बिना जन्म ही व्यर्थ गया।

बरबस राज सुतहिं तब दीन्हा ❁ नारि समेत गवन बन कीन्हा
तीरथबर नैमिष बिख्याता ❁ अति पुनीत साधक सिधि दाता

तब मनुजी ने पुत्र को ज़बरदस्ती राज देकर स्वयं स्त्री-सहित वन को प्रस्थान किया। तीर्थों में श्रेष्ठ नैमिषारण्य प्रसिद्ध है। वह बहुत ही पवित्र और साधकों को सिद्धि देने वाला है।

बसहिं तहाँ मुनि सिद्ध समाजा ❁ तहँ हिअँ हरषि चलेउ मनु राजा
पन्थ जात सोहहिं मतिधीरा ❁ ग्यान भगति जनु धरे सरीरा

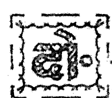
वहाँ मुनियों और सिद्धों के समूह बसते हैं। राजा मनु हर्षित होकर वहीं चले। वे धीर-बुद्धि वाले राजा-रानी पथ में जाते हुये ऐसे शोभित हो रहे थे, जैसे ज्ञान और भक्ति शरीर धारण किये जा रहे हों।

पहुँचे जाइ धेनुमति तीरा ❁ हरषि नहाने निरमल नीरा
आए मिलन सिद्ध मुनि ग्यानी ❁ धरम धुरन्धर नृप रिषि जानी

चलते-चलते वे गोमती के किनारे जा पहुँचे। निर्मल जल में उन्होंने हर्षित होकर स्नान किया। उनको धर्म की धुरी धारण करने वाला और राजाओं में ऋषि के समान जानकर सिद्ध और ज्ञानी मुनि लोग मिलने आये।

जहँ जहँ तीरथ रहे सुहाए ❁ मुनिन्ह सकल सादर करवाए
कृस सरीर मुनि पट परिधाना ❁ सत समाज नित सुनहिं पुराना

जहाँ-जहाँ सुन्दर तीर्थ थे, मुनियों ने आदरपूर्वक सभी तीर्थ राजा-रानी को करा दिये। राजा-रानी का शरीर दुर्बल हो गया था; वे मुनियों के वस्त्र (वल्कल) पहने हुये थे और संत-महात्माओं के समाज में रोज़ पुराण सुनते थे।



द्वादस अच्छर मंत्र पुनि जपहिं सहित अनुराग।
बासुदेव पद पङ्करुह[1] दम्पति मन अति लाग ॥१४३॥

वे फिर द्वादशाक्षर मंत्र (ओं नमो भगवते वासुदेवाय) का प्रेम-सहित जाप करते थे। भगवान् वासुदेव के चरण-कमलों में राजा-रानी का मन बहुत ही लग गया।

करहिं अहार साक फल कंदा ❁ सुमिरहिं ब्रह्म सच्चिदानंदा
पुनि हरि हेतु करन तप लागे ❁ बारि अधार मूल फल त्यागे

१. कमल।

वे शाक, फूल और कंद का आहार करते थे और सच्चिदानन्द ब्रह्म को सुमिरते थे। फिर भगवान् के लिये वे तप करने लगे और मूल और फल को भी त्यागकर केवल जल के आधार पर रहने लगे।

उर अभिलाष निरन्तर होई ❀ देखिअ नयन परम प्रभु सोई
अगुन अखण्ड अनन्त अनादी ❀ जेहि चिंतहिं परमारथवादी

हृदय में सदा यह अभिलाषा होती रहती थी कि हम कैसे उस परमप्रभु को आँखों से देखें, जो निर्गुण, पूर्ण, अंत-रहित और आदि-रहित है और जिसका चिंतन परमार्थवादी लोग किया करते हैं।

नेति नेति जेहि बेद निरूपा ❀ चिदानंद निरुपाधि अनूपा
संभु बिरञ्चि बिष्णु भगवाना ❀ उपजहिं जासु अंस तें नाना

जिसे वेद 'नेति-नेति' (इतना ही नहीं, इतना ही नहीं) कहकर निरूपण किया करते हैं। जो चिदानन्द, उपाधिहीन और अनुपम है। जिसके अंश से अनेकों शम्भु, ब्रह्मा और भगवान् विष्णु जन्म लेते हैं।

ऐसेउ प्रभु सेवक बस अहई[1] ❀ भगत हेतु लीला तनु गहई
जौं यह बचन सत्य स्रुति भाषा ❀ तौ हमार पूजिहि अभिलाषा

ऐसे महान् प्रभु भी सेवक के वश में हैं और भक्तों के लिये लीला का शरीर धारण करते हैं। यदि वेद का कहा हुआ यह वचन सत्य है तो हमारी अभिलाषा भी पूरी होगी।

दो०— एहि बिधि बीते बरष षट सहस बारि[2] आहार।
संबत सप्त सहस्र पुनि रहे समीर अधार ॥१४४॥

इस तरह जल का आहार करके तप करते हुये छः हज़ार वर्ष बीत गये। फिर सात हज़ार वर्ष वे वायु के आधार पर रहे।

बरष सहस दस त्यागेउ सोऊ ❀ ठाढ़े रहे एक पग दोऊ
बिधि हरि हर तप देखि अपारा ❀ मनु समीप आए बहु बारा

दस हज़ार वर्षों तक उन्होंने जल और वायु का आधार भी छोड़ दिया। दोनों एक पग से खड़े रहे। ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी उनका अपार तप देखकर बहुत बार उनके पास आये।

---

१. है। २. पानी।

माँगहु बर बहु भाँति लोभाये ❀ परम धीर नहिं चलहिं चलाये
अस्थिमात्र होइ रहे समीरा ❀ तदपि मनाग[1] मनहिं नहिं पीरा

उन्होंने बहुत तरह से ललचाया और कहा कि कुछ वर माँगो; पर वे बड़े धैर्य्यवान् थे, विचलित नहीं हुये। यद्यपि उनका शरीर हड्डियों का केवल ढाँचा-मात्र रह गया था, पर उनके मन को ज़रा भी पीड़ा नहीं थी।

प्रभु सर्बग्य दास निज जानी ❀ गति अनन्य तापस नृप रानी
माँगु माँगु बर भै नभ बानी ❀ परम गँभीर कृपामृत सानी

सर्वज्ञ प्रभु ने तपस्वी राजा-रानी को अपना दास जाना और प्रभु के सिवा उनकी दूसरी कोई गति भी नहीं थी। तब बहुत गंभीर और कृपारूपी अमृत में सनी हुई आकाश-वाणी हुई—वर माँगो, वर माँगो।

मृतक जिआवनि गिरा सुहाई ❀ स्रवन रंध्र होइ उर जब आई
हृष्ट पुष्ट तन भये सुहाए ❀ मानहुँ अबहिं भवन तें आये

वह मरे हुए को भी जिलाने वाली सुन्दर वाणी जब कानों के छेदों से होकर हृदय में आई, तब राजा-रानी के शरीर ऐसे सुन्दर और हृष्ट-पुष्ट (स्वस्थ) हो गये, मानो अभी घर से आये हैं।

दो॰ स्रवन सुधा सम बचन सुनि पुलक प्रफुल्लित गात।
बोले मनु करि दण्डवत प्रेम न हृदय समात।१४५।

कानों में अमृत के समान लगने वाले वचन सुनकर पुलकित और प्रफुल्लित शरीर होकर मनु दंडवत करके बोले, उनका प्रेम हृदय में समाता नहीं था।

सुनु सेवक सुरतरु सुरधेनू ❀ बिधि हरि हर बंदित पद रेनू
सेवत सुलभ सकल सुखदायक ❀ प्रनतपाल सचराचर नायक

जो सेवकों के लिये कल्पवृक्ष और कामधेनु हैं, जिनके पैरों की धूल ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी से वंदित है, जो सेवा करने में सुलभ तथा सब सुखों के देने वाले हैं, जो दीनों के पालने वाले और जड़-चेतन के स्वामी हैं, वे भगवान् सुनिये।

जौं अनाथ हित हम पर नेहू ❀ तौ प्रसन्न होइ यह बर देहू
जो सरूप बस सिव मन माहीं ❀ जेहि कारन मुनि जतन कराहीं[2]

१. ज़रा। २. करते हैं।

हे अनाथों का कल्याण करने वाले ! यदि मुझ पर आपका स्नेह हो, तो प्रसन्न होकर यह वर दीजिये कि आपका जो स्वरूप शिवजी के मन में बसता है और जिसकी प्राप्ति के लिये मुनि उपाय करते रहते हैं,

जो भुसुण्डि मन मानस हंसा ❁ सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा
देखहिं हम सो रूप भरि लोचन ❁ कृपा करहु प्रनतारति मोचन

जो कागभुशुण्डि के मनरूपी मानसरोवर का हंस है, तथा वेद ने सगुण और निर्गुण बताकर जिसकी प्रशंसा की है, हम उसी रूप को आँख भरकर देखें। हे शरणागत के दुःख मिटाने वाले ! कृपा कीजिये।

दम्पति बचन परम प्रिय लागे ❁ मृदुल बिनीत प्रेमरस पागे
भगत बछल[1] प्रभु कृपानिधाना ❁ बिस्वबास प्रगटे भगवाना

कोमल, विनय-युक्त और प्रेमरस में पगे हुए राजा-रानी के वचन भगवान् को बहुत ही प्रिय लगे। भक्तों के प्रिय, कृपा के घर, सम्पूर्ण विश्व के निवास-स्थान प्रभु, भगवान् प्रकट हुये।

दो० नील सरोरुह नील मनि नील नीरधर स्याम।
लाजहिं तनु सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम॥

नीले कमल, नील मणि और नीले बादल के समान श्याम वर्ण वाले भगवान् के शरीर की शोभा देखकर कई सौ करोड़ कामदेव भी लज्जित होते हैं।

सरद मयंक बदन छबि सींवा ❁ चारु कपोल चिबुक दर ग्रीवा
अधर अरुन रद सुन्दर नासा ❁ बिधुकर निकर बिनिंदक हासा

उनका मुख शरद-ऋतु के चन्द्रमा के समान छवि की सीमा-स्वरूप था। उनके गाल और ठुड्डी बहुत सुन्दर थे। गरदन शंख की तरह थी। लाल ओंठ, दाँत और नाक सुन्दर थे। उनका हास्य चन्द्रमा की किरणों के समूह को तिरस्कार करने वाला था।

नव अम्बुज अम्बक[2] छबि नीकी ❁ चितवनि ललित भावती जी की
भृकुटि मनोज चाप छबि हारी ❁ तिलक ललाट पटल दुतिकारी

नये कमल के समान आँखों की शोभा बड़ी अच्छी थी। मनोहर चितवन जी को बहुत प्यारी लगती थी। भौंहें कामदेव के धनुष की शोभा को हरण करने

---

१. वत्सल। २. आँख।

वाली थीं; माथे पर प्रकाशमय तिलक था।

कुण्डल मकर मुकुट सिर भ्राजा ❀ कुटिल केस जनु मधुप समाजा
उर श्रीबत्स रुचिर बनमाला ❀ पदिक हार भूषन मनिजाला

मकर के आकार के कुण्डल और मुकुट से सिर शोभित था। केश घुँघराले थे, मानों भौंरों का समूह। छाती पर कौस्तुभ-मणि और सुन्दर वनमाला तथा पद-चिन्ह और मणियों के हार का भूषण था।

केहरि कंधर चारु जनेऊ ❀ बाहु बिभूषन सुन्दर तेऊ
करि[1] कर[2] सरिस सुभग भुजदंडा ❀ कटि निषंग कर सर कोदंडा

सिंह ऐसे कंधों पर सुन्दर जनेऊ था। बाहों में जो गहने थे, वे भी सुन्दर थे। हाथी की सूँड के समान सुन्दर भुज-दंड थे। कमर में तरकस और हाथ में बाण और धनुष थे।

दो० **तड़ित बिनिंदक पीत पट उदर रेख बर तीनि।**
नाभि मनोहर लेति जनु जमुन भवँर छबि छीनि॥

उनका पीताम्बर बिजली को लजाने वाला था। उनके पेट पर तीन सुन्दर रेखायें थीं। नाभी ऐसी मनोहर थी, मानो यमुना के भौंर (जल-चक्र) की शोभा को छीने लेती थी।

पद राजीव बरनि नहिं जाहीं ❀ मुनि मन मधुप बसहिं जिन्ह माहीं
बाम भाग सोभति अनुकूला ❀ आदिसक्ति छबिनिधि जगमूला

कमल ऐसे चरणों का तो वर्णन ही नहीं किया जा सकता है, जिनमें मुनियों के मनरूपी भौंरे बसते हैं। उनके बायें भाग में सदा अनुकूल, शोभा की खान और जगत् की मूल आदिशक्ति श्रीलक्ष्मीजी शोभित हैं। [यह सम्पूर्ण प्रसंग उपमा और प्रतीप अलंकार]।

जासु अंस उपजहिं गुन खानी ❀ अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी
भृकुटि बिलास जासु जग होई ❀ राम बाम दिसि सीता सोई

जिनके अंश से गुणों की खान अनगिनत लक्ष्मी, पार्वती और ब्रह्माणी जन्म लेती हैं; जिनके भ्रू-संचालन से जग की सृष्टि होती है, वही राम के बाईं ओर स्थित सीता हैं।

---

१. हाथी। २. हाथ, सूँड।

छबि समुद्र हरि रूप बिलोकी ❀ एकटक रहे नयन पट¹ रोकी
चितवहिं सादर रूप अनूपा ❀ तृप्ति न मानहिं मनु सतरूपा

शोभा के समुद्र भगवान् का रूप देखकर, राजा-रानी पलकें भाँजना रोककर, एकटक देखते रहे। अनुपम रूप को वे आदर-सहित देख रहे थे। वे मनु और सतरूपा अघाते नहीं थे।

हरष बिबस तनु दसा भुलानी ❀ परे दंड इव गहि पद पानी
सिर परसे प्रभु निज कर कंजा² ❀ तुरत उठाए करुनापुंजा

हर्ष के वश में हो जाने से उनको अपने शरीर की सुधि भूल गई। वे हाथों से भगवान् के चरण पकड़कर दंड की तरह भूमि पर पड़ गये। कृपा की राशि प्रभु ने अपने कर-कमलों से उनका सिर छुआ और उन्हें तुरन्त ही उठाया।

दो॰ बोले कृपानिधान पुनि अति प्रसन्न मोहिं जानि।
माँगहु बर जोइ भाव मन महादानि अनुमानि।१४८।

फिर कृपा के घर भगवान् बोले—मुझे बहुत ही प्रसन्न जानकर और महादानी समझकर, जो मन को भाये, वह वर माँग लो।

सुनि प्रभु बचन जोरि जुग पानी ❀ धरि धीरजु बोले मृदु बानी
नाथ देखि पद कमल तुम्हारे ❀ अब पूरे सब काम हमारे

प्रभु के वचन सुनकर, दोनों हाथ जोड़कर और धैर्य धरकर राजा ने मीठे वचन कहे—हे नाथ! आपके कमल ऐसे चरणों को देखकर अब हमारी सब मनोकामनायें पूरी हो गईं।

एक लालसा बड़ि उर माहीं ❀ सुगम अगम कहि जाति सो नाहीं
तुम्हहिं देत अति सुगम गोसाईं ❀ अगम लाग मोहि निज कृपनाईं

फिर भी मन में एक बड़ी लालसा है। वह सहज भी है और कठिन भी। इसी से उसे कहते नहीं बनता। हे स्वामी! आप तो उसे बड़ी सुगमता से दे सकते हैं पर मेरी कृपणता से वह मुझे अगम लग रही है।

जथा दरिद्र बिबुधतरु पाई ❀ बहु संपति माँगत सकुचाई
तासु प्रभाउ जान नहिं सोई ❀ तथा हृदयँ मम संसय होई

जैसे कोई दरिद्र कल्पवृक्ष को पाकर भी बहुत सम्पत्ति माँगने में संकोच

१. पलक। २. कमल।

करे; क्योंकि वह उसके प्रभाव को नहीं जानता। उसी प्रकार मेरे हृदय में संशय हो रहा है।

सो तुम्ह जानहु अंतरजामी ❁ पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी
सकुच बिहाइ माँगु नृप मोही[1] ❁ मोरें नहिं अदेय कछु तोही

उसे हे मन की बात जानने वाले स्वामी! आप सब जानते हैं। अब मेरा मनोरथ पूरा कीजिये। भगवान् ने कहा—हे राजा! संकोच छोड़कर मुझसे माँगो या मुझे ही माँग लो। मेरे पास ऐसी कोई वस्तु नहीं जो तुम्हें न दूँ।

[मोही में श्लेष अलंकार]

दो०—दानि सिरोमनि कृपानिधि नाथ कहउँ सतभाउ।
चाहउँ तुम्हहिं समान सुत प्रभु सन कवन दुराउ।१४९

राजा ने कहा—हे दानियों के शिरोमणि! कृपा के भण्डार! नाथ! मैं अपने मन का सच्चा भाव कहता हूँ कि आपके जैसा पुत्र चाहता हूँ। स्वामी से भला क्या छिपाऊँ?

देखि प्रीति सुनि बचन अमोले ❁ एवमस्तु करुनानिधि बोले
आपु सरिस खोजौं कहँ जाई ❁ नृप तव तनय होब मैं आई

राजा की प्रीति देखकर और उनके अमूल्य वचन सुनकर दया के भण्डार भगवान् बोले—ऐसा ही हो। मैं अपने समान दूसरा कहाँ जाकर खोजूँ? हे राजन्! मैं स्वयं आकर तुम्हारा पुत्र होऊँगा।

सतरूपहिं बिलोकि कर जोरें ❁ देबि माँगु बरु जो रुचि तोरें
जो बरु नाथ चतुर नृप माँगा ❁ सोइ कृपाल मोहि अति प्रिय लागा

शतरूपा को हाथ जोड़े हुए देखकर भगवान् ने कहा—हे देवि! तुम्हारी जो इच्छा हो, वर माँगो। शतरूपा ने कहा—हे कृपालु स्वामी! चतुर राजा ने जो वर माँगा, वह मुझे बहुत ही प्रिय लगा है।

प्रभु परंतु सुठि होति ढिठाई ❁ जदपि भगत हित तुम्हहिं सुहाई
तुम्ह ब्रह्मादि जनक जग स्वामी ❁ ब्रह्म सकल उर अंतरजामी

तो भी हे स्वामी! बहुत धृष्टता हो रही है; यद्यपि भक्तों का कल्याण आपको प्रिय लगता है और आप ब्रह्मा आदि के उत्पन्न करने वाले, जगत् के

---

१. मुझे या मुझ से।

स्वामी, सबके हृदय के अन्तर की बात जानने वाले ब्रह्म हैं।

अस समुझत मन संसय होई ❀ कहा जो प्रभु प्रवान पुनि सोई
जेहि निज भगत नाथ तव अहहीं ❀ जो सुख पावहिं जो गति लहहीं

ऐसा समझने पर मन में संशय हो रहा है; फिर भी प्रभु ने जो कुछ कहा, वही प्रमाण है। मैं तो यह माँगती हूँ कि हे नाथ! जो आपके भक्त हैं, वे जो सुख पाते हैं, जिस गति को प्राप्त होते हैं—

दो०— सोइ सुख सोइ गति सोइ भगति सोइ निज चरन सनेहु।
सोइ बिबेक सोइ रहनि प्रभु हमहि कृपा करि देहु॥

हे प्रभु! वही सुख, वही गति, वही भक्ति, वही आपके चरणों में प्रेम, वही विवेक, वही रहन-सहन कृपा करके हमें दीजिये।

सुनि मृदु गूढ़ रुचिर बर रचना ❀ कृपासिंधु बोले मृदु बचना
जो कछु रुचि तुम्हरे मन माहीं ❀ मैं सो दीन्ह सब संसय नाहीं

रानी की कोमल, गूढ़ और मनोहर वाक्य-रचना सुनकर दया के सागर भगवान् मीठे वचन बोले—तुम्हारे मन में जो कुछ इच्छा है, मैंने सब दिया, इसमें संशय नहीं समझना।

मातु बिबेक अलौकिक तोरें ❀ कबहुँ न मिटिहि अनुग्रह मोरें
बंदि चरन मनु कहेउ बहोरी ❀ अवर एक बिनती प्रभु मोरी

हे माता! मेरी कृपा से तुम्हारा अलौकिक ज्ञान नष्ट न होगा। तब मनु ने भगवान् के चरणों की वन्दना करके कहा—हे प्रभु! मेरी एक विनती और है।

सुत बिषइक तव पद रति होऊ ❀ मोहि बड़ मूढ़ कहै किन कोऊ
मनिबिनुफनि[1] जिमिजलबिनुमीना ❀ मम जीवन तिमि तुम्हहिं अधीना

आपके चरणों में मेरी वैसी ही प्रीति हो, जैसी पुत्र के लिये पिता की होती है, चाहे मुझे कोई बड़ा भारी मूर्ख ही क्यों न कहे। मणि के बिना साँप की और जल के बिना मछली की जो दशा होती है, वैसे ही मेरा जीवन आपके अधीन रहे।

अस बरु माँगि चरन गहि रहेऊ ❀ एवमस्तु करुनानिधि कहेऊ
अब तुम्ह मम अनुसासन[2] मानी ❀ बसहु जाइ सुरपति रजधानी

१. साँप। २. आज्ञा, आदेश।

ऐसा वर माँगकर राजा भगवान् के चरण पकड़े रह गये। करुणा के भण्डार भगवान् ने कहा—एवमस्तु, अर्थात् ऐसा ही हो। अब तुम मेरा आदेश मानकर इन्द्र की राजधानी (अमरावती) में जाकर बसो।

सो० **तहँ करि भोग बिलास तात गए कछु काल पुनि।**
होइहहु अवध भुआल तब मैं होब तुम्हार सुत॥१५१॥

हे तात! वहाँ ख़ूब भोग-विलास करके, कुछ समय बीत जाने पर, तुम अवध के राजा होगे, तब मैं तुम्हारा पुत्र होऊँगा।

इच्छामय नरबेष सवाँरे ❁ होइहउँ प्रगट निकेत तुम्हारे
अंसन्ह सहित देह धरि ताता ❁ करिहउँ चरित भगत सुख दाता

इच्छानिर्मित मनुष्य-रूप धारण किये हुये मैं तुम्हारे घर प्रकट होऊँगा। हे तात! मैं अपने अंशों सहित देह धारण करके भक्तों को सुख देने वाले चरित्र करूँगा।

जेहि सुनि सादर नर बड़भागी ❁ भव तरिहहिं ममता मद त्यागी
आदिसक्ति जेहिं जग उपजाया ❁ सोउ अवतरिहि मोरि यह माया

जिन चरित्रों को बड़े भाग्यशाली मनुष्य आदर-सहित सुनकर ममता और अभिमान त्यागकर भवसागर से तर जायेंगे। आदि-शक्ति यह मेरी माया भी, जिसने संसार को उत्पन्न किया है, अवतार लेगी।

पुरउब मैं अभिलाष तुम्हारा ❁ सत्य सत्य पन सत्य हमारा
पुनि पुनि अस कहि कृपानिधाना ❁ अंतरधान भए भगवाना

मैं तुम्हारी अभिलाषा पूरी करूँगा। मेरा प्रण सत्य है, सत्य है, सत्य है। कृपा के घर भगवान् बार-बार ऐसा कहकर अन्तर्द्धान हो गये।

दंपति उर धरि भगति कृपाला ❁ तेहि आस्रम निबसे[1] कछु काला
समय पाइ तन तजि अनयासा[2] ❁ जाइ कीन्ह अमरावति बासा

स्त्री-पुरुष (राजा-रानी) भक्तों पर कृपा करने वाले भगवान् की भक्ति को हृदय में धारण करके उस आश्रम में कुछ समय तक रहे। समय पाकर, सहज ही में शरीर छोड़कर, उन्होंने अमरावती में जाकर वास किया।

---

१. बसे। २. सहज में।

दो० यह इतिहास पुनीत अति उमहि कही बृषकेतु।
भरद्वाज सुनु अपर पुनि राम जनम कर हेतु॥१५२॥

(याज्ञवल्क्यजी कहते हैं) हे भरद्वाज ! सुनो। इस अत्यन्त पवित्र इतिहास को शिवजी ने पार्वती से कहा था। अब राम के अवतार लेने का दूसरा कारण सुनो।

सुनु मुनि कथा पुनीत पुरानी ❀ जो गिरिजा प्रति संभु बखानी
बिस्व बिदित एक कैकय देसू ❀ सत्यकेतु तहँ बसइ नरेसू

हे मुनि ! वह प्राचीन और पवित्र कथा सुनो, जो शिवजी ने पार्वती से कही थी। संसार में प्रसिद्ध एक कैकय देश है। वहाँ सत्यकेतु नाम का राजा रहता था।

धरम धुरंधर नीति निधाना ❀ तेज प्रताप सील[1] बलवाना
तेहि कें भए जुगल सुत बीरा ❀ सब गुन धाम महा रनधीरा

वह धर्म की धुरी को धारण करने वाला, नीति की खान, तेजस्वी, प्रतापी और बलवान् था। उसके दो वीर पुत्र हुये, जो सब गुणों के भंडार और बड़े ही रणधीर थे।

राज धनी जो जेठ सुत आही ❀ नाम प्रतापभानु अस ताही
अपर सुतहि अरिमर्दन नामा ❀ भुजबल अतुल अचल संग्रामा

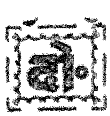
राज्य का उत्तराधिकारी जो जेठा पुत्र था, उसका नाम प्रतापभानु था। दूसरे पुत्र का नाम अरिमर्दन था, जिसकी भुजाओं में अपरम्पार बल था और जो रण में अटल था।

भाइहि भाइहि परम समीती[2] ❀ सकल दोष छल बरजित प्रीती
जेठे सुतहि राज नृप दीन्हा ❀ हरिहित आपु गवन बन कीन्हा

भाई-भाई में बड़ी एकता और सब प्रकार के दोषों और छलों से रहित (सच्ची) प्रीति थी। राजा ने जेठे पुत्र को राज्य देकर भगवान् की भक्ति के लिये वन में गमन किया।

---

१. वाला। २. मेल।



जब प्रतापरबि भयेउ नृप फिरी दोहाई देस।
प्रजा पाल अति बेद बिधि कतहुँ नहीं अघ लेस।१५३।

जब प्रतापभानु राजा हुआ, देश में उसकी दोहाई फिर गई। वह वेद में वर्णित विधि से प्रजा का पालन करने वाला था और पाप का कहीं लेश भी उसके राज्य में नहीं था।

नृप हितकारक सचिव सयाना ❀ नाम धरमरुचि सुक्र समाना
सचिव सयान बंधु बलबीरा ❀ आपु प्रताप पुञ्ज रन धीरा

राजा का कल्याण करने वाला उसका एक चतुर मन्त्री था, जिसका नाम धर्मरुचि था और जो शुक्र के समान नीतिज्ञ था। एक तो चतुर मन्त्री, दूसरे बली और वीर भाई, तीसरे स्वयं भी बड़ा प्रतापी और रणधीर था।

सेन संग चतुरंग अपारा ❀ अमित सुभट सब समर जुझारा
सेन बिलोकि राउ हरषाना ❀ अरु बाजे गहगहे निसाना

तथा साथ में अपार चतुरङ्गिणी सेना थी, जिसमें युद्ध में जूझने वाले असंख्य योद्धागण थे। इस प्रकार अपनी सेना को देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और घमाघम उसका डङ्का बजने लगा।

बिजय हेतु कटकई[1] बनाई ❀ सुदिन साधि नृप चलेउ बजाई
जहँ तहँ परी अनेक लराई ❀ जीते सकल भूप बरिआई

दिग्विजय के लिये सेना सजाकर, वह राजा सुदिन शोधवाकर और डङ्का बजाकर चला। जहाँ-तहाँ अनेक युद्ध हुये; पर उसने सब राजाओं को ज़बरदस्ती जीत लिया।

सप्त दीप भुजबल बस कीन्हे ❀ लेइ लेइ दण्ड छाँड़ि नृप दीन्हे
सकल अवनि मंडल तेहि काला ❀ एक प्रतापभानु महिपाला

अपनी भुजाओं के बल से उसने सातों द्वीपों को वश में कर लिया और राजाओं से अर्थ-दंड ले-लेकर उन्हें छोड़ दिया। सारी पृथ्वी पर उस समय एक प्रतापभानु ही एकमात्र (चक्रवर्ती) राजा था।

---

१. सेना।

दो० यह इतिहास पुनीत अति उमहि कही बृषकेतु।
भरद्वाज सुनु अपर पुनि राम जनम कर हेतु॥१५२॥

(याज्ञवल्क्यजी कहते हैं) हे भरद्वाज ! सुनो। इस अत्यन्त पवित्र इतिहास को शिवजी ने पार्वती से कहा था। अब राम के अवतार लेने का दूसरा कारण सुनो।

सुनु मुनि कथा पुनीत पुरानी ❀ जो गिरिजा प्रति संभु बखानी
बिस्व बिदित एक कैकय देसू ❀ सत्यकेतु तहँ बसइ नरेसू

हे मुनि ! वह प्राचीन और पवित्र कथा सुनो, जो शिवजी ने पार्वती से कही थी। संसार में प्रसिद्ध एक कैकय देश है। वहाँ सत्यकेतु नाम का राजा रहता था।

धरम धुरंधर नीति निधाना ❀ तेज प्रताप सील[1] बलवाना
तेहि कें भए जुगल सुत बीरा ❀ सब गुन धाम महा रनधीरा

वह धर्म की धुरी को धारण करने वाला, नीति की खान, तेजस्वी, प्रतापी और बलवान् था। उसके दो वीर पुत्र हुये, जो सब गुणों के भंडार और बड़े ही रणधीर थे।

राज धनी जो जेठ सुत आही ❀ नाम प्रतापभानु अस ताही
अपर सुतहि अरिमर्दन नामा ❀ भुजबल अतुल अचल संग्रामा

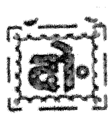
राज्य का उत्तराधिकारी जो जेठा पुत्र था, उसका नाम प्रतापभानु था। दूसरे पुत्र का नाम अरिमर्दन था, जिसकी भुजाओं में अपरम्पार बल था और जो रण में अटल था।

भाइहि भाइहि परम समीती[2] ❀ सकल दोष छल बरजित प्रीती
जेठे सुतहि राज नृप दीन्हा ❀ हरिहित आपु गवन बन कीन्हा

भाई-भाई में बड़ी एकता और सब प्रकार के दोषों और छलों से रहित (सच्ची) प्रीति थी। राजा ने जेठे पुत्र को राज्य देकर भगवान् की भक्ति के लिये वन में गमन किया।

---

१. वाला। २. मेल।



जब प्रतापरबि भयेउ नृप फिरी दोहाई देस।
प्रजा पाल अति बेद बिधि कतहुँ नहीं अघ लेस।१५३।

जब प्रतापभानु राजा हुआ, देश में उसकी दोहाई फिर गई। वह वेद में वर्णित विधि से प्रजा का पालन करने वाला था और पाप का कहीं लेश भी उसके राज्य में नहीं था।

नृप हितकारक सचिव सयाना ❀ नाम धरमरुचि सुक्र समाना
सचिव सयान बंधु बलबीरा ❀ आपु प्रताप पुञ्ज रन धीरा

राजा का कल्याण करने वाला उसका एक चतुर मन्त्री था, जिसका नाम धर्मरुचि था और जो शुक्र के समान नीतिज्ञ था। एक तो चतुर मन्त्री, दूसरे बली और वीर भाई, तीसरे स्वयं भी बड़ा प्रतापी और रणधीर था।

सेन संग चतुरंग अपारा ❀ अमित सुभट सब समर जुझारा
सेन बिलोकि राउ हरषाना ❀ अरु बाजे गहगहे निसाना

तथा साथ में अपार चतुरङ्गिणी सेना थी, जिसमें युद्ध में जूझने वाले असंख्य योद्धागण थे। इस प्रकार अपनी सेना को देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और घमाघम उसका डङ्का बजने लगा।

बिजय हेतु कटकई[1] बनाई ❀ सुदिन साधि नृप चलेउ बजाई
जहँ तहँ परी अनेक लराई ❀ जीते सकल भूप बरिआई

दिग्विजय के लिये सेना सजाकर, वह राजा सुदिन शोधवाकर और डङ्का बजाकर चला। जहाँ-तहाँ अनेक युद्ध हुये; पर उसने सब राजाओं को ज़बरदस्ती जीत लिया।

सप्त दीप भुजबल बस कीन्हे ❀ लेइ लेइ दण्ड छाँड़ि नृप दीन्हे
सकल अवनि मंडल तेहि काला ❀ एक प्रतापभानु महिपाला

अपनी भुजाओं के बल से उसने सातों द्वीपों को वश में कर लिया और राजाओं से अर्थ-दंड ले-लेकर उन्हें छोड़ दिया। सारी पृथ्वी पर उस समय एक प्रतापभानु ही एकमात्र (चक्रवर्ती) राजा था।

---

१. सेना।

दो० स्ववस बिस्व करि बाहुबल निज पुर कीन्ह प्रबेसु।
अरथ धरम कामादि सुख सेवइ समयँ नरेसु ॥१५४॥

उसने अपनी बाहुओं के बल से संसार को अपने वश में करके, अपने नगर में प्रवेश किया। राजा अर्थ, धर्म और काम आदि सुखों का समयानुसार सेवन करता था।

भूप प्रतापभानु बल पाई ❀ कामधेनु भै[1] भूमि सुहाई
सब दुख बरजित प्रजा सुखारी ❀ धरमसील सुन्दर नर नारी

राजा प्रतापभानु का बल पाकर भूमि सुन्दर कामधेनु हो गई। प्रजा सब दुःखों से रहित और सुखी थी और सब स्त्री-पुरुष सुन्दर और धर्मयुक्त थे।

सचिव धरमरुचि हरि पद प्रीती ❀ नृप हित हेतु सिखव नित नीती
गुर सुर संत पितर महिदेवा[2] ❀ करइ सदा नृप सब कै सेवा

धर्मरुचि मन्त्री के हृदय में भगवान् के चरणों में बड़ी प्रीति थी। वह सदा राजा को उनके कल्याण के लिये राजनीति सिखलाता रहता था। राजा गुरु, देवता, संत, पितर और ब्राह्मणों की सदा सेवा करता रहता था।

भूप धरम जे बेद बखाने ❀ सकल करइ सादर सुख माने
दिन प्रति देइ बिबिध बिधि दाना ❀ सुनइ सास्त्र बर बेद पुराना

वेद में राजाओं के लिये जो धर्म वर्णित है, राजा सबका पालन आदर-पूर्वक और सदा सुख मानकर किया करता था। प्रतिदिन अनेक प्रकार के दान देता था और उत्तम शास्त्र, वेद और पुराण सुनता था।

नाना बापी कूप तड़ागा ❀ सुमन बाटिका सुन्दर बागा
बिप्र भवन सुर भवन सुहाए ❀ सब तीरथन्ह बिचित्र बनाए

उसने बहुत-सी बावड़ियाँ, कुएँ, तालाब, फुलवाड़ियाँ, सुन्दर बाग, ब्राह्मणों के लिये घर, देवताओं के भाँति-भाँति के सुन्दर मन्दिर सब तीर्थों में बनवाये थे।

दो० जहँ लगि कहे पुरान स्रुति एक एक सब जाग।
बार सहस्र सहस्र नृप किए सहित अनुराग ॥१५५॥

---

१. हुई। २. ब्राह्मण।

वेद और पुराणों में जितने प्रकार के यज्ञ कहे गये हैं, राजा ने प्रत्येक प्रकार के यज्ञ को हज़ार-हज़ार बार प्रेम-सहित किया।

हृदयँ न कछु फल अनुसन्धाना[1] ❀ भूप बिबेकी परम सुजाना
करइ जे धरम करम मन बानी ❀ बासुदेव अरपित नृप ग्यानी

हृदय में किसी फल की कामना नहीं थी। बुद्धिमान् राजा बड़ा ही ज्ञानवान् था। वह ज्ञानी राजा कर्म, मन और वाणी से जो कुछ भी धर्म करता था, सब भगवान् वासुदेव को अर्पित करके करता था।

चढ़ि बर बाजि बार एक राजा ❀ मृगया कर सब साजि समाजा
बिंध्याचल गँभीर बन गयऊ ❀ मृग पुनीत बहु मारत भयऊ

एक बार वह राजा एक अच्छे घोड़े पर चढ़कर शिकार के लिये सब तैयारी करके विन्ध्याचल के घने बन में गया और वहाँ उसने बहुत-से अच्छे-अच्छे हिरन मारे।

फिरत बिपिन नृप दीख बराहू ❀ जनु बन दुरेउ ससिहि ग्रसि राहू
बड़ बिधु नहिं समात मुख माहीं ❀ मनहुँ क्रोधबस उगिलत नाहीं

बन में फिरते हुए राजा ने एक सुअर देखा। (दाँतों के कारण वह ऐसा मालूम होता था) जैसे राहु चन्द्रमा को मुंह में पकड़कर वन में छिपा हुआ है। चन्द्रमा बड़ा होने से उसके मुंह में समाता नहीं और वह भी क्रोध के वश में उसे उगलता नहीं।

कोल[2] कराल दसन छबि गाई ❀ तनु बिसाल पीवर अधिकाई
घुरघुरात हय आरौ[3] पाएँ ❀ चकित बिलोकत कान उठाएँ

यह तो सुअर के भयानक दाँतों की शोभा कही गई। उसका शरीर भी विशाल और मोटा था। घोड़े की आहट पाकर वह घुरघुराता हुआ कान उठाकर चौकन्ना होकर देख रहा था।

दो॰ **नील महीधर सिखर सम देखि बिसाल बराहु।**
चपरि चलेउ हय सुटुकि नृप हाँकि न होइ निबाहु॥

नीले पर्वत की चोटी के समान बड़े डील-डौल वाले सुअर को देखकर

---

१. कामना। २. सुअर। ३. आहट।

राजा ने घोड़े को चाबुक से मारकर तेज़ी से चलाया। क्योंकि केवल हाँकने से काम नहीं चल सकता था।

आवत देखि अधिक रव बाजी[1] ❀ चलेउ बराह मरुत[2] गति भाजी
तुरत कीन्ह नृप सर संधाना ❀ महि मिलि गयेउ बिलोकत बाना

अधिक शब्द करते हुए घोड़े को निकट आता देखकर सुअर हवा की गति से भाग चला। राजा ने तुरन्त ही धनुष पर बाण चढ़ाया। सुअर बाण देखते ही पृथ्वी से सट गया।

तकि तकि तीर महीस चलावा ❀ करि छल सुअर सरीर बचावा
प्रगटत दुरत जाइ मृग भागा ❀ रिस बस भूप चलेउ सँग लागा

राजा ने ताक-ताककर तीर चलाए; पर सुअर चालाकी से शरीर बचा लेता था। इस प्रकार प्रकट होते और छिपते हुये वह पशु भागा जाता था। राजा भी क्रोध के वश में उसके साथ लगा हुआ चला जाता था।

गयेउ दूरि घन गहन[3] बराहू ❀ जहँ नाहिंन गज बाजि निबाहू
अति अकेल बन बिपुल कलेसू ❀ तदपि न मृग मग तजै नरेसू

सुअर दूर जाकर ऐसे घने जङ्गल में चला गया, जहाँ हाथी, घोड़े का निबाह नहीं। बिल्कुल अकेला होने पर भी, बन के बहुत कष्टों में भी राजा ने उस पशु का पीछा नहीं छोड़ा।

कोल बिलोकि भूप बड़ धीरा ❀ भागि पैठि गिरि गुहा गँभीरा
अगम देखि नृप अति पछिताई ❀ फिरेउ महाबन परेउ भुलाई

बड़े धैर्य वाले राजा को देखकर, सुअर भागकर पहाड़ की गम्भीर गुफा में जा घुसा। उसमें जाना कठिन देखकर राजा बहुत पछताकर लौटा; पर उस बड़े बन में वह रास्ता भूल गया।

दो०— खेद खिन्न छुद्धित[4] तृषित[5] राजा बाजि समेत।
खोजत ब्याकुल सरित सर जल बिनु भयेउ अचेत॥

पश्चात्ताप से दुःखी राजा घोड़े-सहित भूख और प्यास से विकल होकर नदी और तालाब खोजते हुये पानी बिना बेहाल हो गया।

---

१. घोड़ा। २. वायु। ३. वन। ४. भूखा। ५. प्यासा।

फिरत बिपिन आस्रम एक देखा ❀ तहँ बस नृपति कपट मुनि बेषा
जासु देस नृप लीन्ह छड़ाई ❀ समर सेन तजि गयेउ पराई

बन में फिरते हुये उसने एक आश्रम देखा; वहाँ एक राजा कपटी मुनि के भेस में रहता था, जिसका देश राजा प्रतापभानु ने छीन लिया था और जो सेना को छोड़कर युद्ध से भाग गया था।

समय प्रतापभानु कर जानी ❀ आपन अति असमय अनुमानी
गयेउ न गृह मन बहुत गलानी ❀ मिला न राजहि नृप अभिमानी

प्रतापभानु का समय अनुकूल जानकर और अपना समय प्रतिकूल अनुमानकर वह घर नहीं गया। उसके मन में बड़ी ग्लानि हुई। राजा स्वात्माभिमानी था, इससे वह राजा प्रतापभानु से मिला भी नहीं।

रिस उर मारि रंक[1] जिमि राजा ❀ बिपिन बसइ तापस के साजा
तासु समीप गवन नृप कीन्हा ❀ यह प्रतापरबि तेहि तब चीन्हा

मन में क्रोध को मारकर वह राजा तपस्वी के भेस में ग़रीब की तरह बन में बसता था। राजा प्रतापभानु उसी के पास गया। उसने तत्काल पहचान लिया कि यह प्रतापभानु है।

राउ तृषित नहिं सो पहिचाना ❀ देखि सुबेष महामुनि जाना
उतरि तुरँग तें कीन्ह प्रनामा ❀ परम चतुर न कहेउ निज नामा

राजा प्यासा था। उसने उसे नहीं पहचाना। सुन्दर वेष में देखकर राजा ने उसे महामुनि समझा। घोड़े से उतरकर उसने उसे प्रणाम किया। परन्तु बड़ा चतुर होने के कारण प्रतापभानु ने उसे अपना नाम नहीं बतलाया।

दो० भूपति तृषित बिलोकि तेहि सरबरु दीन्ह देखाइ।
मज्जन[2] पान समेत हय कीन्ह नृपति हरषाइ ॥१५८॥

राजा को प्यासा देखकर उसने उसे तालाब दिखला दिया, जिसमें घोड़े-सहित राजा ने हर्षित होकर स्नान और जल-पान किया।

गै स्रम सकल सुखी नृप भयऊ ❀ निज आस्रम तापस लै गयऊ
आसन दीन्ह अस्त रबि जानी ❀ पुनि तापस बोलेउ मृदु बानी

---

१. ग़रीब। २. स्नान।

सब थकावट मिट गई; राजा सुखी हुआ। तपस्वी उसे अपने आश्रम में ले गया। उसने उसे बैठने के लिये आसन दिया। फिर सूर्यास्त का समय जानकर मधुर वाणी से कहा—

को तुम्ह कस बन फिरहु अकेलें ❀ सुंदर जुवा जीव परहेलें
चक्रवर्त्ति के लच्छन तोरें ❀ देखत दया लागि अति मोरें

तुम कौन हो? सुन्दर युवक होकर जीवन की परवा न करके, बन में अकेले क्यों फिरते हो? तुम्हारे लक्षण तो चक्रवर्ती के हैं। तुमको देखकर मुझे बड़ी दया आती है।

नाम प्रतापभानु अवनीसा[1] ❀ तासु सचिव मैं सुनहु मुनीसा
फिरत अहेरे परेउँ भुलाई ❀ बड़े भाग देखेउँ पद आई

राजा ने कहा—हे मुनियों में श्रेष्ठ! सुनो, प्रतापभानु नाम का एक राजा है, मैं उसका मन्त्री हूँ। शिकार में फिरते हुये राह भूल गया हूँ; बड़े भाग्य से यहाँ आकर मैंने आपके चरणों के दर्शन किये।

हम कहँ दुरलभ दरस तुम्हारा ❀ जानत हौं कछु भल होनिहारा
कह मुनि तात भयेउ अँधियारा ❀ जोजन सत्तरि नगर तुम्हारा

हमें तो आपका दर्शन दुर्लभ है; जान पड़ता है कुछ भला होने वाला है। मुनि ने कहा—हे तात! अँधेरा हो गया; तुम्हारा नगर यहाँ से सत्तर योजन पर है।

दो०— निसा घोर गंभीर बन पंथ न सुनहु सुजान।
बसहु आजु अस जानि तुम्ह जायेहु होत बिहान[2]।१५९

अँधेरी रात है; जंगल घना है; कोई रास्ता नहीं है; हे बुद्धिमान्! यह समझकर सुनो, आज यहीं ठहर जाओ, कल सवेरा होते ही चले जाना।

तुलसी जसि भवितव्यता[3] तैसी मिलइ सहाइ।
आपु न आवै ताहि पहिं ताहि तहाँ लै जाइ।१५९। (२)

तुलसीदास कहते हैं—जैसा होनहार होता है, वैसी ही सहायता मिल जाती है। भावी स्वयं पास नहीं आती; मनुष्य ही को वहाँ (घटना-स्थल पर) पहुँचा देती है।

---

१. राजा। २. सवेरा। ३. होनहार।

भलेहिं नाथ आयसु धरि सीसा ❀ बाँधि तुरँग तरु बैठ महीसा
नृप बहु भाँति प्रसंसेउ ताही ❀ चरन बंदि निज भाग्य सराही

'हे स्वामी! बहुत अच्छा' ऐसा कहकर और उसकी आज्ञा सिर चढ़ाकर, घोड़े को वृक्ष से बाँधकर, राजा बैठ गया। राजा ने मुनि की प्रशंसा बहुत प्रकार से की और उसके चरणों की वन्दना करके अपने भाग्य की सराहना की।

पुनि बोलेउ मृदु गिरा सुहाई ❀ जानि पिता प्रभु करउँ ढिठाई
मोहि मुनीस सुत सेवक जानी ❀ नाथ नाम निज कहहु बखानी

फिर उसने सुन्दर कोमल वाणी से कहा—हे प्रभो! आपको पिता जानकर मैं ढिठाई करता हूँ। हे मुनीश! मुझे अपना पुत्र और सेवक जानकर हे नाथ! अपना नाम (धाम) विस्तार से बताइये।

तेहि न जान नृप नृपहि सो जाना ❀ भूप सुहृद सो कपट सयाना
बैरी पुनि छत्री पुनि राजा ❀ छल बल कीन्ह चहइ निज काजा

राजा उसको नहीं जानता था। पर वह राजा को जानता था। राजा तो शुद्ध हृदय वाला था और वह चतुर कपटी था। एक तो बैरी, फिर क्षत्रिय, फिर राजा; वह छल-बल से अपना काम बनाना चाहता था।

समुझि राजसुख दुखित अराती[1] ❀ अवाँ अनल इव सुलगइ छाती
सरल बचन नृप के सुनि काना ❀ बयर सँभारि[2] हृदय हरषाना

वह शत्रु अपने राज्य-सुख को स्मरण करके दुःखी था; उसकी छाती आवे की आग की तरह (भीतर ही भीतर) सुलग रही थी। राजा के सरल वचन कान से सुनकर, अपने बैर को यादकर, वह हृदय में प्रसन्न हुआ।

दो०— कपट बोरि बानी मृदुल बोलेउ जुगुति समेत।
नाम हमार भिखारि अब निर्धन रहित निकेत।१६०

वह कपट में डुबोकर युक्ति-पूर्वक कोमल वाणी बोला—मेरा नाम तो अब भिखारी है, क्योंकि मैं घरबार-विहीन और निर्धन हूँ।

कह नृप जे बिग्यान निधाना ❀ तुम्ह सारिखे[3] गलित अभिमाना
सदा अपनपौ रहहिं दुराएँ ❀ सब बिधि कुसल कुबेष बनाएँ

१. शत्रु। २. याद करके। ३. समान।

राजा ने कहा—जो आपके सदृश विज्ञान के निधान और सर्वथा अभिमान से रहित होते हैं, वे अपने स्वरूप को सदा छिपाये रहते हैं। क्योंकि कुवेष बनाकर रहने ही में सब तरह का कल्याण है।

तेहि तें कहहिं संत स्रुति टेरें ❀ परम अकिंचन प्रिय हरि केरें
तुम्ह सम अधन भिखारि अगेहा ❀ होत बिरंचि सिवहि संदेहा

इसी से तो वेद और संत पुकारकर कहते हैं कि परम अकिंचन ही भगवान् को प्रिय होते हैं। आपके समान निर्धन, भिखारी और गृहहीन को देखकर मुझे ब्रह्मा और शिव का संदेह होता है। अर्थात् कहीं आप ब्रह्मा या शिव तो नहीं हो?

जोऽसि सोऽसि तव चरन नमामी ❀ मो पर कृपा करिअ अब स्वामी
सहज प्रीति भूपति कै देखी ❀ आपु बिषय बिस्वास बिसेषी

आप जो हों, सो हों, आपके चरणों को नमस्कार करता हूँ। हे स्वामी! मुझ पर अब कृपा कीजिये। मुनि ने अपने ऊपर राजा की स्वाभाविक प्रीति और अपने सम्बन्ध में उसका अधिक विश्वास देखकर—

सब प्रकार राजहि अपनाई ❀ बोलेउ अधिक सनेह जनाई
सुनु सतिभाउ कहउँ महिपाला ❀ इहाँ बसत बीते बहु काला

सब प्रकार से राजा को अपने वश में करके, अधिक स्नेह प्रकट करते हुये कहा—हे राजन्! मैं तुमसे सच कहता हूँ, सुनो, यहाँ रहते हुए मुझे बहुत समय बीत गया।

दो०— अब लगि मोहि न मिलेउ कोउ मैं न जनावउँ काहु।
लोकमान्यता अनल सम कर तप कानन दाहु।१६१

अब तक न तो कोई मुझसे मिला और न मैं स्वयं किसी पर अपने को प्रकट करता हूँ; क्योंकि लोक में प्रतिष्ठा आग के समान है, जो तप-रूपी बन को जला देती है।

सो०— तुलसी देखि सुबेषु भूलहिं मूढ़ न चतुर नर।
सुन्दर केकिहि पेखु बचन सुधा सम असन[1] आहि।

तुलसीदासजी कहते हैं—सुन्दर वेष देखकर मूढ़ ही नहीं, चतुर मनुष्य

---

१. आहार।

भी धोखा खा जाते हैं। सुन्दर मोर को देखो, उसका वचन तो अमृत के समान और आहार साँप का।

तातें गुपुत रहउँ जग माहीं ❁ हरि तजि किमपि प्रयोजन नाहीं
प्रभु जानत सब बिनहि जनाएँ ❁ कहहु कवन सिधि लोक रिझाएँ

इसी से मैं जगत् में छिपकर रहता हूँ। भगवान् को छोड़कर और किसी से कुछ भी प्रयोजन नहीं रखता। प्रभु तो बिना जनाये ही सब जानते हैं। फिर बताओ, संसार को रिझाने से क्या सिद्धि मिलेगी?

तुम्ह सुचि सुमति परम प्रिय मोरें ❁ प्रीति प्रतीत मोहि पर तोरें
अब जौं तात दुरावउँ तोहीं ❁ दारुन दोष घटइ अति मोहीं

तुम पवित्र और सुन्दर बुद्धि वाले हो, इससे मुझे बहुत ही प्यारे हो और तुम्हारी भी मुझ पर प्रीति और विश्वास है। हे तात! अब यदि तुमसे कुछ छिपाऊँ, तो मुझे बहुत ही भयानक दोष लगेगा।

जिमि जिमि तापसु कथइ उदासा ❁ तिमि तिमि नृपहि उपज बिस्वासा
देखा स्वबस करम मन बानी ❁ तब बोला तापस बगध्यानी

वह तपस्वी जैसे-जैसे उदासीनता की बातें कहता था, वैसे-वैसे राजा का विश्वास उस पर उत्पन्न होता जाता था। जब उस बगुले की तरह ध्यान लगाने वाले (कपटी) मुनि ने राजा को कर्म, मन और वाणी से अपने वश में जाना, तब वह बोला—

नाम हमार एकतनु भाई ❁ सुनि नृप बोलेउ पुनि सिरु नाई
कहहु नाम कर अरथ बखानी ❁ मोहि सेवक अति आपन जानी

हे भाई! मेरा नाम एकतनु है। यह सुनकर राजा ने फिर सिर नवाकर कहा—मुझे अपना अत्यन्त अनुरागी सेवक जानकर अब अपने नाम का अर्थ मुझे समझाकर कहिये।

दो॰ आदि सृष्टि उपजी जबहिं तब उतपति भै मोरि।
नाम एकतनु हेतु तेहि देह न धरी बहोरि[1]।१६२।

(मुनि ने कहा—) जब सबसे पहले सृष्टि हुई थी, तभी मेरी उत्पत्ति हुई थी। तब से मैंने फिर दूसरी देह नहीं धारण की, इसी से मेरा नाम एकतनु है।

१. फिर।

राजा ने कहा—जो आपके सदृश विज्ञान के निधान और सर्वथा अभिमान से रहित होते हैं, वे अपने स्वरूप को सदा छिपाये रहते हैं। क्योंकि कुवेष बनाकर रहने ही में सब तरह का कल्याण है।

तेहि तें कहहिं संत स्रुति टेरें ❀ परम अकिंचन प्रिय हरि केरें
तुम्ह सम अधन भिखारि अगेहा ❀ होत बिरंचि सिवहि संदेहा

इसी से तो वेद और संत पुकारकर कहते हैं कि परम अकिंचन ही भगवान् को प्रिय होते हैं। आपके समान निर्धन, भिखारी और गृहहीन को देखकर मुझे ब्रह्मा और शिव का संदेह होता है। अर्थात् कहीं आप ब्रह्मा या शिव तो नहीं हो?

जोऽसि सोऽसि तव चरन नमामी ❀ मो पर कृपा करिअ अब स्वामी
सहज प्रीति भूपति कै देखी ❀ आपु बिषय बिस्वास बिसेषी

आप जो हों, सो हों, आपके चरणों को नमस्कार करता हूँ। हे स्वामी! मुझ पर अब कृपा कीजिये। मुनि ने अपने ऊपर राजा की स्वाभाविक प्रीति और अपने सम्बन्ध में उसका अधिक विश्वास देखकर—

सब प्रकार राजहि अपनाई ❀ बोलेउ अधिक सनेह जनाई
सुनु सतिभाउ कहउँ महिपाला ❀ इहाँ बसत बीते बहु काला

सब प्रकार से राजा को अपने वश में करके, अधिक स्नेह प्रकट करते हुये कहा—हे राजन्! मैं तुमसे सच कहता हूँ, सुनो, यहाँ रहते हुए मुझे बहुत समय बीत गया।

दो०— अब लगि मोहि न मिलेउ कोउ मैं न जनावउँ काहु।
लोकमान्यता अनल सम कर तप कानन दाहु।१६१

अब तक न तो कोई मुझसे मिला और न मैं स्वयं किसी पर अपने को प्रकट करता हूँ; क्योंकि लोक में प्रतिष्ठा आग के समान है, जो तप-रूपी बन को जला देती है।

सो०— तुलसी देखि सुबेषु भूलहिं मूढ़ न चतुर नर।
सुन्दर केकिहि पेखु बचन सुधा सम असन[1] अहि।

तुलसीदासजी कहते हैं—सुन्दर वेष देखकर मूढ़ ही नहीं, चतुर मनुष्य

---

१. आहार।

भी धोखा खा जाते हैं। सुन्दर मोर को देखो, उसका वचन तो अमृत के समान और आहार साँप का।

तातें गुपुत रहउँ जग माहीं ❀ हरि तजि किमपि प्रयोजन नाहीं
प्रभु जानत सब बिनहि जनाएँ ❀ कहहु कवन सिधि लोक रिझाएँ

इसी से मैं जगत् में छिपकर रहता हूँ। भगवान् को छोड़कर और किसी से कुछ भी प्रयोजन नहीं रखता। प्रभु तो बिना जनाये ही सब जानते हैं। फिर बताओ, संसार को रिझाने से क्या सिद्धि मिलेगी ?

तुम्ह सुचि सुमति परम प्रिय मोरें ❀ प्रीति प्रतीत मोहि पर तोरें
अब जौं तात दुरावउँ तोहीं ❀ दारुन दोष घटइ अति मोहीं

तुम पवित्र और सुन्दर बुद्धि वाले हो, इससे मुझे बहुत ही प्यारे हो और तुम्हारी भी मुझ पर प्रीति और विश्वास है। हे तात ! अब यदि तुमसे कुछ छिपाऊँ, तो मुझे बहुत ही भयानक दोष लगेगा।

जिमि जिमि तापसु कथइ उदासा ❀ तिमि तिमि नृपहि उपज बिस्वासा
देखा स्वबस करम मन बानी ❀ तब बोला तापस बगध्यानी

वह तपस्वी जैसे-जैसे उदासीनता की बातें कहता था, वैसे-वैसे राजा का विश्वास उस पर उत्पन्न होता जाता था। जब उस बगुले की तरह ध्यान लगाने वाले (कपटी) मुनि ने राजा को कर्म, मन और वाणी से अपने वश में जाना, तब वह बोला—

नाम हमार एकतनु भाई ❀ सुनि नृप बोलेउ पुनि सिरु नाई
कहहु नाम कर अरथ बखानी ❀ मोंहि सेवक अति आपन जानी

हे भाई ! मेरा नाम एकतनु है। यह सुनकर राजा ने फिर सिर नवाकर कहा—मुझे अपना अत्यन्त अनुरागी सेवक जानकर अब अपने नाम का अर्थ मुझे समझाकर कहिये।

दो०— आदि सृष्टि उपजी जबहिं तब उतपति भै मोरि।
नाम एकतनु हेतु तेहि देह न धरी बहोरि[1] ।१६२।

(मुनि ने कहा—) जब सबसे पहले सृष्टि हुई थी, तभी मेरी उत्पत्ति हुई थी। तब से मैंने फिर दूसरी देह नहीं धारण की, इसी से मेरा नाम एकतनु है।

---

१. फिर।

जनि आचरजु करहु मन माहीं ❀ सुत तप तें दुर्लभ कछु नाहीं
तपबल तें जग सृजइ बिधाता ❀ तपबल बिष्नु भए परित्राता[1]

हे पुत्र ! मन में आश्चर्य मत करो । तप से कुछ भी दुर्लभ नहीं है । तप ही के बल से ब्रह्मा जगत् को रचते हैं; तप ही के बल से विष्णु संसार का पालन करते हैं ।

तपबल संभु करहिं संघारा ❀ तप तें अगम न कछु संसारा
भयेउ नृपहि सुनि अति अनुरागा ❀ कथा पुरातन कहइ सो लागा

तप ही के बल से शिव संसार का संहार करते हैं; संसार में कोई वस्तु नहीं जो तप से न मिल सके । यह सुनकर राजा को बड़ा प्रेम हुआ । वह (कपटी मुनि) फिर पुरानी कथा कहने लगा ।

करम धरम इतिहास अनेका ❀ करइ निरूपन बिरत बिबेका
उद्भव पालन प्रलय कहानी ❀ कहेसि अमित आचरज बखानी

उसने बहुत-से कर्म, धर्म और अनेक प्रकार के इतिहास कह सुनाये तथा वैराग्य और निवृत्ति-मार्ग की व्याख्या करने लगा । संसार की उत्पत्ति, स्थिति और नाश की कथा उसने बहुत विस्तार से कही ।

सुनि महीप तापस बस भयऊ ❀ आपन नाम कहन तब लयऊ
कह तापस नृप जानउँ तोही ❀ कीन्हेहु कपट लाग भल मोही

राजा यह सुनकर उस मुनि के वश में हो गया और तब वह उसे अपना नाम बताने लगा । मुनि ने कहा—हे राजन् ! मैं तुमको जानता हूँ । तुमने छल किया, वह मुझे बहुत प्रिय लगा ।

सो० सुनु महीस असि[2] नीति जहँ तहँ नाम न कहहिं नृप ।
मोहि तोहि पर अति प्रीति सोइ चतुरता बिचारि तव ॥

हे राजन् ! सुनो, ऐसी नीति है कि राजा लोग जहाँ-तहाँ अपना नाम नहीं बतलाया करते । तुम्हारी वही चतुराई समझकर तुम पर मेरी बड़ी प्रीति हो गई ।

नाम तुम्हार प्रताप दिनेसा ❀ सत्यकेतु तव पिता नरेसा
गुर प्रसाद सब जानिअ राजा ❀ कहिअ न आपन जानि अकाजा

१. रक्षक, पालक । २. ऐसी ।

तुम्हारा नाम तो प्रतापभानु है। महाराज सत्यकेतु तुम्हारे पिता थे। हे राजन्! गुरु की कृपा से मैं सब जानता हूँ। पर अपनी हानि समझकर किसी से कहता नहीं।

देखि तात तव सहज सुधाई[1] ❀ प्रीति प्रतीति नीति निपुनाई
उपजि परी ममता मन मोरें ❀ कहउँ कथा निज पूछे तोरें

हे तात! तुम्हारी स्वाभाविक सरलता, प्रीति, विश्वास और नीति-निपुणता देखकर मेरे मन में तुम्हारे लिये बड़ी प्रीति पैदा हो गई है; अब तुम्हारे पूछने पर मैं अपनी कथा कहता हूँ।

अब प्रसन्न मैं संसय नाहीं ❀ माँगु जो भूप भाव मन माहीं
सुनि सुबचन भूपति हरषाना ❀ गहि पद बिनय कीन्ह बिधि नाना

अब मैं प्रसन्न हूँ, इसमें सन्देह नहीं। हे राजा! मन में जो अच्छा लगे माँग लो। सुन्दर वचन सुनकर राजा प्रसन्न हुआ और उसके पैर पकड़कर उसने बहुत प्रकार से विनय किया।

कृपासिंधु मुनि दरसन तोरें ❀ चारि पदारथ करतल मोरें
प्रभुहिं तथापि प्रसन्न बिलोकी ❀ माँगि अगम बरु होउँ असोकी

हे कृपा के समुद्र मुनि! आपका दर्शन करने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चारों फल मेरे हाथ में आ गये। तो भी स्वामी को प्रसन्न देखकर मैं यह दुर्लभ वर माँगकर क्यों न शोक-रहित हो जाऊँ?

दो॰ जरा[2] मरन दुख रहित तनु समर जितै जनि कोउ।
एकछत्र रिपुहीन महि राज कल्प सत होउ ॥१६४॥

मेरा शरीर वृद्धावस्था और मरण के दुःख से रहित हो जाय। मुझे युद्ध में कोई न जीत सके; और शत्रुओं से हीन पृथ्वी पर सौ कल्प तक मेरा एकछत्र राज हो।

कह तापस नृप ऐसेइ होऊ ❀ कारन एक कठिन सुनु सोऊ
कालउ तुअ पद नाइहि सीसा ❀ एक बिप्रकुल छाँड़ि महीसा

मुनि ने कहा—हे राजन्! ऐसा ही होगा। पर एक कारण कठिन है, उसे

---

१. सीधापन। २. वृद्धावस्था।

भी सुनो। हे पृथ्वीपति ! काल भी तुम्हारे चरणों पर सिर नवायेगा, केवल एक ब्राह्मण का कुल नहीं।

तपबल बिप्र सदा बरिआरा ❁ तिन्ह के कोप न कोउ रखवारा
जौं बिप्रन्ह बस करहु नरेसा ❁ तौं तुम्ह बस बिधि बिष्नु महेसा

तप के बल से ब्राह्मण सदा प्रबल रहते हैं। उनके कोप करने पर कोई रक्षा करने वाला नहीं। हे राजन् ! तुम यदि ब्राह्मणों को वश में कर लो, तो तुम्हारे वश में ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी हो जायँगे।

चल न ब्रह्मकुल सन बरिआई ❁ सत्य कहउँ दोउ भुजा उठाई
बिप्रस्राप बिनु सुनु महिपाला ❁ तोर नास नहिं कवनेहुँ काला

ब्राह्मण-कुल से ज़ोर ज़बरदस्ती नहीं चल सकती। मैं दोनों भुजा उठाकर सत्य कहता हूँ। हे राजन् ! सुनो। ब्राह्मण का शाप न होगा, तो तुम्हारा नाश किसी काल में भी नहीं होगा।

हरषेउ राउ बचन सुनि तासू ❁ नाथ न होइ मोर अब नासू
तव प्रसाद प्रभु कृपानिधाना ❁ मो कहुँ सर्ब काल कल्याना

राजा उसके वचन सुनकर प्रसन्न हुआ और कहने लगा—हे स्वामी ! मेरा अब नाश नहीं होगा। हे कृपा के घर ! आपके प्रसाद से मेरा सब समय कल्याण होगा।

दो० एवमस्तु कहि कपट मुनि बोला कुटिल बहोरि।
मिलब हमार भुलाब निज कहहु त हमहिं न खोरि[1]॥

वह दुष्ट कपट-मुनि एवमस्तु (ऐसा ही हो) कहकर फिर बोला—तुम मेरे मिलने और अपनी राह भूल जाने की बात किसी से कहोगे, तो (तुम जानो) मेरा दोष नहीं।

तातें मैं तोहि बरजउँ राजा ❁ कहें कथा तव परम अकाजा
छठें स्रवन यह परत कहानी ❁ नास तुम्हार सत्य मम बानी

इसी से हे राजन् ! मैं तुमको रोकता हूँ कि इस प्रसंग की कथा किसी दूसरे को कहने से तुम्हारा बड़ा अकाज होगा। यदि यह कथा छठे कान में पहुँचेगी, तो तुम्हारा नाश होगा—मेरी यह वाणी सत्य है।

---

१. दोष, अपराध।

यह प्रगटे अथवा द्विज स्रापा ❀ नास तोर सुनु भानुप्रतापा
आन उपाय निधन तव नाहीं ❀ जौं हरि हर कोपहिं मन माहीं

हे भानुप्रताप ! सुनो, यह बात प्रकट होने पर अथवा ब्राह्मण के शाप से तुम्हारा नाश होगा, दूसरे और किसी उपाय से तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी। विष्णु और शिव भी मन में कोपें, तब भी।

सत्य नाथ पद गहि नृप भाषा ❀ द्विज गुर कोप कहहु को राखा
राखइ गुर जौं कोप बिधाता ❀ गुर बिरोध नहिं कोउ जगत्राता

राजा ने मुनि का पैर पकड़कर कहा—हे स्वामी ! सत्य ही है। ब्राह्मण और गुरु के कोप से कहिये, कौन रक्षा कर सकता है ? यदि ब्रह्मा कोप करे, तो गुरु बचा सकते हैं; पर गुरु के विरोध से संसार में कोई बचाने वाला नहीं है।

जौं न चलब हम कहे तुम्हारें ❀ होउ नास नहिं सोच हमारें
एकहि डर डरपत मन मोरा ❀ प्रभु महिदेव स्राप अति घोरा

यदि आपके कहने पर मैं नहीं चलूँगा, तो नाश हो ही जायगा; इसकी चिन्ता मुझे नहीं। मेरा मन तो हे स्वामी ! एक ही डर से डरता है कि ब्राह्मण का शाप बड़ा भयानक होता है।

दो॰ होहिं बिप्र बस कवन बिधि कहहु कृपा करि सोउ।
तुम्ह तजि दीनदयाल निज हितू[1] न देखउँ कोउ १६६

अब कृपा करके यह भी बताइये कि किस युक्ति से ब्राह्मण वश में हो सकते हैं। हे दीनदयाल ! आपको छोड़कर मैं और किसी को अपना हितू नहीं देखता हूँ।

सुनु नृप बिबिध जतन जग माहीं ❀ कष्टसाध्य पुनि होहिं कि नाहीं
अहइ एक अति सुगम उपाई ❀ तहाँ परन्तु एक कठिनाई

मुनि ने कहा—हे राजन् ! सुनो। संसार में तरह-तरह के उपाय हैं; पर वे मुश्किल से होने वाले हैं। फिर भी (संदेह है कि) वे हो सकते हैं या नहीं। हाँ, एक उपाय बहुत सहज है; परन्तु उसमें भी एक कठिनाई है।

मम आधीन जुगुति[2] नृप सोई ❀ मोर जाब तव नगर न होई
आजु लगे अरु जब तें भयऊँ ❀ काहू के गृह ग्राम न गयऊँ

१. हितैषी। २. युक्ति, तरकीब।

वह युक्ति मेरे वश में है; पर हे राजन्! मेरा जाना तुम्हारे नगर में हो नहीं सकता। जब से हुआ हूँ, तब से आज तक मैं किसी के न घर गया हूँ, न गाँव में।

जौं न जाउँ तव होइ अकाजू ❁ बना आइ असमंजस आजू
सुनि महीस बोलेउ मृदु बानी ❁ नाथ निगम असि नीति बखानी

पर, यदि न जाऊँ, तो तुम्हारा काम बिगड़ता है। आज यह बड़ी दुविधा आ पड़ी है। राजा यह सुनकर कोमल वाणी से बोला—हे नाथ! शास्त्र में ऐसी नीति कही है—

बड़े सनेह लघुन्ह पर करहीं ❁ गिरि निज सिरन्हि सदा तृन धरहीं
जलधि अगाध मौलि[1] बह फेनू ❁ संतत[2] धरनि धरत सिर रेनू

बड़े लोग छोटों पर स्नेह करते हैं। पर्वत अपनी चोटी पर सदा तृण को धारण किये रहते हैं। अथाह समुद्र के सिर पर फेन बहता रहता है, पृथ्वी अपने सिर पर सदा धूलि धारण किये रहती है।

दो०— अस कहि गहे नरेस पद स्वामी होहु कृपाल।
मोहि लागि दुख सहिअ प्रभु सज्जन दीनदयाल॥१६७॥

ऐसा कहकर राजा ने मुनि के पैर पकड़ लिये और कहा—हे स्वामी! कृपा कीजिये। आप सज्जन हैं, दीनों पर दया करने वाले हैं, मेरे लिये दुःख सहिये।

जानि नृपहि आपन आधीना ❁ बोला तापस कपट प्रबीना
सत्य कहउँ भूपति सुनु तोही ❁ जग नाहिंन दुर्लभ कछु मोही

राजा को अपने वश में जानकर कपट में प्रवीण तपस्वी बोला—हे राजन्! सुनो, मैं तुमसे सत्य कहता हूँ, संसार में मुझे कुछ भी दुर्लभ नहीं है।

अवसि काज मैं करिहउँ तोरा ❁ मन तन बचन भगत तैं मोरा
जोग जुगुति तप मंत्र प्रभाऊ ❁ फलइ तबहिं जब करिअ दुराऊ

मैं तुम्हारा काम अवश्य ही करूँगा; क्योंकि तुम मन, वचन और कर्म से मेरे भक्त हो; पर योग, युक्ति, तप और मन्त्र का प्रभाव तभी फल देता है, जब वे छिपाकर किये जाते हैं।

---

१. सिर। २. सदा।

जौं नरेस मैं करौं रसोई ❀ तुम्ह परुसहु मोहि जान न कोई
अन्न सो जोइ जोइ भोजन करई ❀ सोइ सोइ तव आयसु अनुसरई

हे राजन्! मैं यदि रसोई बनाऊँ और तुम उसे परोसो, पर मुझे कोई जानने न पाये, तो उस अन्न को जो-जो खायगा, वह तुम्हारा आज्ञाकारी बन जायगा।

पुनि तिन्हके गृह जेंवइ जोऊ ❀ तव बस होइ भूप सुनु सोऊ
जाइ उपाय रचहु नृप एहू ❀ संबत भरि संकलप करेहू

यही नहीं उनके घर भी जो कोई भोजन करेगा, हे राजन्! सुनो, वह भी तुम्हारे वश में हो जायगा। हे राजन्! जाकर ऐसा उपाय ठीक करो और एक वर्ष तक (भोजन कराने का) संकल्प कर लो।

दो० नित नूतन[1] द्विज सहस सत बरेउ सहित परिवार।
मैं तुम्हरे संकलप लगि दिनहिं करबि जेवनार।१६८।

नित्य नये एक लाख ब्राह्मणों को परिवार-सहित वरण करना। मैं तुम्हारे संकल्प तक प्रति दिन भोजन बना दिया करूँगा।

एहि बिधि भूप कष्ट अति थोरें ❀ होइहहिं सकल बिप्र बस तोरें
करिहहिं बिप्र होम मख[2] सेवा ❀ तेहि प्रसंग सहजेहिं बस देवा

इस प्रकार हे राजन्! थोड़े ही कष्ट से सब ब्राह्मण तुम्हारे वश में हो जायँगे। ब्राह्मण लोग हवन और यज्ञ से देवताओं की सेवा करेंगे, तब उस प्रसंग से देवगण भी सहज ही में वश में हो जायँगे।

और एक तोहिं कहउँ लखाऊ[3] ❀ मैं एहि बेष न आउब काऊ
तुम्हरे उपरोहित कहुँ राया ❀ हरि आनब मैं करि निज माया

मैं एक पहचान और भी तुमको बता देता हूँ कि मैं इस वेष में कभी न आऊँगा। हे राजन्! मैं तुम्हारे पुरोहित को अपनी माया करके उठा लाऊँगा।

तपबल तेहि करि आपु समाना ❀ रखिहउँ इहाँ बरष परवाना[4]
मैं धरि तासु बेषु सुनु राजा ❀ सब बिधि तोर सवाँरब काजा

तप के बल से उसे अपने समान करके एक वर्ष तक उसे यहाँ रक्खूँगा।

---

१. नया। २. यज्ञ। ३. पहचान। ४. परिमाण, तक।

वह युक्ति मेरे वश में है; पर हे राजन्! मेरा जाना तुम्हारे नगर में हो नहीं सकता। जब से हुआ हूँ, तब से आज तक मैं किसी के न घर गया हूँ, न गाँव में।

जौं न जाउँ तव होइ अकाजू ❀ बना आइ असमंजस आजू
सुनि महीस बोलेउ मृदु बानी ❀ नाथ निगम असि नीति बखानी

पर, यदि न जाऊँ, तो तुम्हारा काम बिगड़ता है। आज यह बड़ी दुविधा आ पड़ी है। राजा यह सुनकर कोमल वाणी से बोला—हे नाथ! शास्त्र में ऐसी नीति कही है—

बड़े सनेह लघुन्ह पर करहीं ❀ गिरि निज सिरन्हि सदा तृन धरहीं
जलधि अगाध मौलि[1] बह फेनू ❀ संतत[2] धरनि धरत सिर रेनू

बड़े लोग छोटों पर स्नेह करते हैं। पर्वत अपनी चोटी पर सदा तृण को धारण किये रहते हैं। अथाह समुद्र के सिर पर फेन बहता रहता है, पृथ्वी अपने सिर पर सदा धूलि धारण किये रहती है।

दो०— अस कहि गहे नरेस पद स्वामी होहु कृपाल।
मोहि लागि दुख सहिअ प्रभु सज्जन दीनदयाल।१६७

ऐसा कहकर राजा ने मुनि के पैर पकड़ लिये और कहा—हे स्वामी! कृपा कीजिये। आप सज्जन हैं, दीनों पर दया करने वाले हैं, मेरे लिये दुःख सहिये।

जानि नृपहि आपन आधीना ❀ बोला तापस कपट प्रवीना
सत्य कहउँ भूपति सुनु तोहीं ❀ जग नाहिंन दुर्लभ कछु मोहीं

राजा को अपने वश में जानकर कपट में प्रवीण तपस्वी बोला—हे राजन्! सुनो, मैं तुमसे सत्य कहता हूँ, संसार में मुझे कुछ भी दुर्लभ नहीं है।

अवसि काज मैं करिहउँ तोरा ❀ मन तन बचन भगत तैं मोरा
जोग जुगुति तप मंत्र प्रभाऊ ❀ फलइ तबहिं जब करिअ दुराऊ

मैं तुम्हारा काम अवश्य ही करूँगा; क्योंकि तुम मन, वचन और कर्म से मेरे भक्त हो; पर योग, युक्ति, तप और मन्त्र का प्रभाव तभी फल देता है, जब वे छिपाकर किये जाते हैं।

---

१. सिर। २. सदा।

जौं नरेस मैं करौं रसोई ❀ तुम्ह परुसहु मोहि जान न कोई
अन्न सो जोइ जोइ भोजन करई ❀ सोइ सोइ तव आयसु अनुसरई

हे राजन्! मैं यदि रसोई बनाऊँ और तुम उसे परोसो, पर मुझे कोई जानने न पाये, तो उस अन्न को जो-जो खायगा, वह तुम्हारा आज्ञाकारी बन जायगा।

पुनि तिन्हके गृह जेंवइ जोऊ ❀ तव बस होइ भूप सुनु सोऊ
जाइ उपाय रचहु नृप एहू ❀ संबत भरि संकलप करेहू

यही नहीं उनके घर भी जो कोई भोजन करेगा, हे राजन्! सुनो, वह भी तुम्हारे वश में हो जायगा। हे राजन्! जाकर ऐसा उपाय ठीक करो और एक वर्ष तक (भोजन कराने का) संकल्प कर लो।

दो॰ नित नूतन[1] द्विज सहस सत बरेउ सहित परिवार।
मैं तुम्हरे संकलप लगि दिनहिं करबि जेवनार।१६८।

नित्य नये एक लाख ब्राह्मणों को परिवार-सहित वरण करना। मैं तुम्हारे संकल्प तक प्रति दिन भोजन बना दिया करूँगा।

एहि बिधि भूप कष्ट अति थोरें ❀ होइहहिं सकल बिप्र बस तोरें
करिहहिं बिप्र होम मख[2] सेवा ❀ तेहि प्रसंग सहजेहिं बस देवा

इस प्रकार हे राजन्! थोड़े ही कष्ट से सब ब्राह्मण तुम्हारे वश में हो जायँगे। ब्राह्मण लोग हवन और यज्ञ से देवताओं की सेवा करेंगे, तब उस प्रसंग से देवगण भी सहज ही में वश में हो जायँगे।

और एक तोहिं कहउँ लखाऊ[3] ❀ मैं एहि बेष न आउब काऊ
तुम्हरे उपरोहित कहुँ राया ❀ हरि आनब मैं करि निज माया

मैं एक पहचान और भी तुमको बता देता हूँ कि मैं इस वेष में कभी न आऊँगा। हे राजन्! मैं तुम्हारे पुरोहित को अपनी माया करके उठा लाऊँगा।

तपबल तेहि करि आपु समाना ❀ रखिहउँ इहाँ बरष परवाना[4]
मैं धरि तासु बेषु सुनु राजा ❀ सब बिधि तोर सवाँरब काजा

तप के बल से उसे अपने समान करके एक वर्ष तक उसे यहाँ रक्खूँगा।

---

१. नया। २. यज्ञ। ३. पहचान। ४. परिमाण, तक।

वह युक्ति मेरे वश में है; पर हे राजन् ! मेरा जाना तुम्हारे नगर में हो नहीं सकता। जब से हुआ हूँ, तब से आज तक मैं किसी के न घर गया हूँ, न गाँव में।

जौं न जाउँ तव होइ अकाजू ❀ बना आइ असमंजस आजू
सुनि महीस बोलेउ मृदु बानी ❀ नाथ निगम असि नीति बखानी

पर, यदि न जाऊँ, तो तुम्हारा काम बिगड़ता है। आज यह बड़ी दुविधा आ पड़ी है। राजा यह सुनकर कोमल वाणी से बोला—हे नाथ! शास्त्र में ऐसी नीति कही है—

बड़े सनेह लघुन्ह पर करहीं ❀ गिरि निज सिरन्हि सदा तृन धरहीं
जलधि अगाध मौलि[1] बह फेनू ❀ संतत[2] धरनि धरत सिर रेनू

बड़े लोग छोटों पर स्नेह करते हैं। पर्वत अपनी चोटी पर सदा तृण को धारण किये रहते हैं। अथाह समुद्र के सिर पर फेन बहता रहता है, पृथ्वी अपने सिर पर सदा धूलि धारण किये रहती है।

दो० असि कहि गहे नरेस पद स्वामी होहु कृपाल।
मोहि लागि दुख सहिअ प्रभु सज्जन दीनदयाल।१६७

ऐसा कहकर राजा ने मुनि के पैर पकड़ लिये और कहा—हे स्वामी! कृपा कीजिये। आप सज्जन हैं, दीनों पर दया करने वाले हैं, मेरे लिये दुःख सहिये।

जानि नृपहि आपन आधीना ❀ बोला तापस कपट प्रबीना
सत्य कहउँ भूपति सुनु तोहीं ❀ जग नाहिंन दुर्लभ कछु मोहीं

राजा को अपने वश में जानकर कपट में प्रवीण तपस्वी बोला—हे राजन्! सुनो, मैं तुमसे सत्य कहता हूँ, संसार में मुझे कुछ भी दुर्लभ नहीं है।

अवसि काज मैं करिहउँ तोरा ❀ मन तन बचन भगत तैं मोरा
जोग जुगुति तप मंत्र प्रभाऊ ❀ फलइ तबहिं जब करिअ दुराऊ

मैं तुम्हारा काम अवश्य ही करूँगा; क्योंकि तुम मन, वचन और कर्म से मेरे भक्त हो; पर योग, युक्ति, तप और मन्त्र का प्रभाव तभी फल देता है, जब वे छिपाकर किये जाते हैं।

---

१. सिर। २. सदा।

जौं नरेस मैं करौं रसोई ❀ तुम्ह परुसहु मोहि जान न कोई
अन्न सो जोइ जोइ भोजन करई ❀ सोइ सोइ तव आयसु अनुसरई

हे राजन् ! मैं यदि रसोई बनाऊँ और तुम उसे परोसो, पर मुझे कोई जानने न पाये, तो उस अन्न को जो-जो खायगा, वह तुम्हारा आज्ञाकारी बन जायगा।

पुनि तिन्हके गृह जेंवइ जोऊ ❀ तव बस होइ भूप सुनु सोऊ
जाइ उपाय रचहु नृप एहू ❀ संबत भरि संकलप करेहू

यही नहीं उनके घर भी जो कोई भोजन करेगा, हे राजन् ! सुनो, वह भी तुम्हारे वश में हो जायगा। हे राजन् ! जाकर ऐसा उपाय ठीक करो और एक वर्ष तक (भोजन कराने का) संकल्प कर लो।

दो० नित नूतन[1] द्विज सहस सत बरेउ सहित परिवार।
मैं तुम्हरे संकल्प लगि दिनहिं करबि जेवनार।१६८।

नित्य नये एक लाख ब्राह्मणों को परिवार-सहित वरण करना। मैं तुम्हारे संकल्प तक प्रति दिन भोजन बना दिया करूँगा।

एहि बिधि भूप कष्ट अति थोरें ❀ होइहहिं सकल बिप्र बस तोरें
करिहहिं बिप्र होम मख[2] सेवा ❀ तेहि प्रसंग सहजेहिं बस देवा

इस प्रकार हे राजन् ! थोड़े ही कष्ट से सब ब्राह्मण तुम्हारे वश में हो जायँगे। ब्राह्मण लोग हवन और यज्ञ से देवताओं की सेवा करेंगे, तब उस प्रसंग से देवगण भी सहज ही में वश में हो जायँगे।

और एक तोहिं कहउँ लखाऊ[3] ❀ मैं एहि बेष न आउब काऊ
तुम्हरे उपरोहित कहुँ राया ❀ हरि आनब मैं करि निज माया

मैं एक पहचान और भी तुमको बता देता हूँ कि मैं इस वेष में कभी न आऊँगा। हे राजन् ! मैं तुम्हारे पुरोहित को अपनी माया करके उठा लाऊँगा।

तपबल तेहि करि आपु समाना ❀ रखिहउँ इहाँ बरष परवाना[4]
मैं धरि तासु बेषु सुनु राजा ❀ सब बिधि तोर सवाँरब काजा

तप के बल से उसे अपने समान करके एक वर्ष तक उसे यहाँ रक्खूँगा।

१. नया। २. यज्ञ। ३. पहचान। ४. परिमाण, तक।

हे राजन्! सुनो, मैं उसका वेष धारण करके सब प्रकार से तुम्हारा काम सिद्ध करूँगा।

गइ निसि बहुत सयन अब कीजे ❀ मोहि तोहि भूप भेंट दिन तीजे
मैं तपबल तोहि तुरँग समेता ❀ पहुँचैहउँ सोवतहिं निकेता

अब हे राजन्! रात बहुत बीत गई, अब सो जाओ; मुझ से तुम्हारी मुलाकात आज से तीसरे दिन होगी। मैं तप के बल से तुमको घोड़े-सहित सोते ही में घर पहुँचा दूंगा।

दो॰ मैं आउब सोइ वेष धरि पहिचानेउ तब मोहि।
जब एकांत बुलाइ सब कथा सुनावउँ तोहि।१६९।

मैं वही (पुरोहित का) वेष धरकर आऊँगा। जब मैं एकांत में तुमको बुलाकर सब कथा सुनाऊँ, तब तुम मुझे पहचान लेना।

सयन कीन्ह नृप आयसु मानी ❀ आसन जाइ बैठ छल ग्यानी
स्रमित भूप निद्रा अति आई ❀ सो किमि सोव सोच अधिकाई

राजा ने आज्ञा मानकर शयन किया और वह कपटी मुनि आसन पर जा बैठा। राजा थका था, उसे ख़ूब नींद आगई। पर वह मुनि कैसे सोता? उसे तो चिंता अधिक हो रही थी।

कालकेतु निसिचर तहँ आवा ❀ जेहि सूकर होइ नृपहिं भुलावा
परम मित्र तापस नृप केरा ❀ जानै सो अति कपट घनेरा

उसी समय वहाँ कालकेतु नाम का राक्षस आया, जिसने सुअर बनकर राजा को बहकाया था। वह तपस्वी राजा का बड़ा मित्र था, और छल-प्रपञ्च ख़ूब जानता था।

तेहिके सत सुत अरु दस भाई ❀ खल अति अजय देव दुखदाई
प्रथमहिं भूप समर सब मारे ❀ बिप्र सन्त सुर देखि दुखारे

उसके सौ पुत्र और दस भाई थे, जो बड़े ही दुष्ट, किसी से न जीते जाने वाले और देवताओं को दुःख देने वाले थे। राजा (प्रतापभानु) ने ब्राह्मणों, संतों और देवताओं को दुःखी देखकर उन सबको युद्ध में पहले ही मार डाला था।

तेहि खल पाछिल बयरु सँभारा ❀ तापस नृप मिलि मंत्र बिचारा
जेहि रिपुछय सोइ रचेन्हि उपाऊ ❀ भावीबस न जान कछु राऊ

उस दुष्ट ने वही पिछला बैर याद करके, तपस्वी राजा से मिलकर सलाह की और जिस प्रकार शत्रु का नाश हो, वही उपाय रचा। भावी-वश राजा (प्रतापभानु) कुछ समझ न सका।

दो० रिपु तेजसी अकेल अपि लघु करि गनिअ न ताहु।
अजहुँ देत दुख रबि ससिहि सिर अवसेषित[1] राहु।१७०

तेजस्वी शत्रु अकेला हो, तो उसे छोटा न समझना चाहिये। राहु का सिर ही शेष है, पर आज तक वह सूर्य-चन्द्रमा को दुःख दिया करता है।

तापस नृप निज सखहि निहारी ❀ हरषि मिलेउ उठि भयेउ सुखारी
मित्रहि कहि सब कथा सुनाई ❀ जातुधान[2] बोला सुख पाई

तपस्वी राजा अपने मित्र को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ, उठकर मिला और सुखी हुआ। उसने मित्र को सब कथा कह सुनाई। तब राक्षस आनन्दित होकर बोला—

अब साधेउँ रिपु सुनहु नरेसा ❀ जौं तुम्ह कीन्ह मोर उपदेसा
परिहरि सोचु रहहु तुम्ह सोई ❀ बिनु औषध बिआधि बिधि खोई

हे राजन्! सुनो, तूने मेरे कहने के अनुसार इतना काम कर लिया है, तो मैंने अब शत्रु को निशाने पर ले लिया है। तुम चिन्ता छोड़कर जाकर सो रहो। विधाता ने बिना दवा ही के रोग को नष्ट कर दिया।

कुल समेत रिपु मूल बहाई ❀ चौथे दिवस मिलब मैं आई
तापस नृपहि बहुत परितोषी ❀ चला महाकपटी अति रोषी

कुल सहित शत्रु को जड़-मूल से खोद-बहाकर, मैं चौथे दिन तुमसे आ मिलूँगा। वह महाछली और महाक्रोधी राक्षस तपस्वी राजा को बहुत ढाढ़स देकर चला गया।

भानुप्रतापहि बाजि समेता ❀ पहुँचाएसि छन माँझ निकेता
नृपहि नारि पहिं सैन कराई ❀ हय गृह बाँधेसि बाजि बनाई[3]

उसने राजा भानुप्रताप को घोड़े-सहित क्षणभर में उसके घर पहुँचा दिया। राजा को रानी के पास सुलाकर घोड़े को घुड़साल में ठीक तरह से बाँध दिया।

---

१. बचा हुआ। २. राक्षस। ३. अच्छी तरह से।

दो॰ राजा के उपरोहितहि हरि लै गयेउ बहोरि।
लै राखेसि गिरि खोह महँ माया करि मति भोरि ।१७१

फिर वह राजा के पुरोहित को उठा ले गया, और माया के प्रभाव से उसकी बुद्धि को भ्रम में डालकर उसने उसे पहाड़ की खोह में ले जाकर रक्खा।

आपु बिरचि उपरोहित रूपा ❁ परेउ जाइ तेहि सेज अनूपा
जागेउ नृप अनभएँ बिहाना ❁ देखि भवन अति अचरजु माना

वह आप पुरोहित का रूप बनाकर उसकी सुन्दर सेज पर जा लेटा। राजा सवेरा होने के पहले ही जागा और अपना घर देखकर उसने बड़ा ही आश्चर्य माना।

मुनि महिमा मन महुँ अनुमानी ❁ उठेउ गवहिं[1] जेहि जान न रानी
कानन गयेउ बाजि चढ़ि तेही ❁ पुर नर नारि न जानेउ केही

मन में मुनि की महिमा का अनुमान करके वह धीरे से उठा, जिससे रानी न जाने। वह उसी घोड़े पर चढ़कर बन को चला गया। नगर के किसी पुरुष या स्त्री ने नहीं जाना।

गयें जाम जुग भूपति आवा ❁ घर घर उत्सव बाजु बधावा
उपरोहितहि देख जब राजा ❁ चकित बिलोक सुमिरि सोइ काजा

दोपहर बीत जाने पर राजा आया। घर-घर में उत्सव होने लगा और बधावा बजने लगा। जब राजा ने पुरोहित को देखा, तब वह आश्चर्य से देखने लगा और उसे वही कार्य स्मरण हो आया।

जुग सम नृपहि गये दिन तीनी ❁ कपटी मुनि पद रहि मति लीनी
समय जानि उपरोहित आवा ❁ नृपहि मते सब कहि समुझावा

तीन दिन राजा को युग के समान बीते। उसकी बुद्धि कपटी मुनि के चरणों में लगी रही। निश्चित समय जानकर पुरोहित आया और राजा के साथ की हुई गुप्त सलाह के अनुसार उसने अपने विचार उसे सब समझाकर कह दिये।

दो॰ नृप हरषेउ पहिचानि गुरु भ्रम बस रहा न चेत।
बरे तुरत सत सहस बर बिप्र कुटुम्ब समेत ।१७२।

---

१. धीरे से, चुपके से।

राजा गुरु को पहचानकर आनन्दित हुआ। भ्रमवश उसे ज्ञान न रहा। उसने उसी समय सौ हजार (एक लाख) ब्राह्मणों को कुटुम्ब-सहित वरण किया (न्योता दिया)।

उपरोहित जेवनार बनाई ❀ छ रस चारि बिधि जसि स्रुति गाई
मायामय तेहि कीन्ह रसोई ❀ बिंजन बहु गनि सकइ न कोई

पुरोहित ने छः रस और चार प्रकार के भोजन—जैसा वेदों में वर्णन है, बनाये। उसने मायामयी रसोई तैयार की और इतने व्यञ्जन बनाये, जिन्हें कोई गिन नहीं सकता।

बिबिध मृगन्ह कर आमिष राँधा ❀ तेहि महुँ बिप्र माँसु खल साँधा
भोजन कहुँ सब बिप्र बोलाए ❀ पग पखारि सादर बैठाए

अनेक प्रकार के पशुओं का मांस पकाया और उसमें उस दुष्ट ने ब्राह्मण का मांस मिला दिया। भोजन के लिये सब ब्राह्मणों को बुलाया और उनके चरण धोकर उन्हें आदर-सहित बैठाया।

परुसन जबहिं लाग महिपाला ❀ भइ अकासबानी तेहि काला
बिप्रबृन्द उठि उठि गृह जाहू ❀ है बड़ि हानि अन्न जनि खाहू

जब राजा परोसने लगा, तब उसी समय (कालकेतु कृत) आकाशवाणी हुई। हे ब्राह्मणो! उठ-उठकर अपने घर जाओ; यह अन्न मत खाओ। इसके खाने से बड़ी हानि है।

भयेउ रसोईं भूसुर[1] मासू ❀ सब द्विज उठे मानि बिस्वासू
भूप बिकल मति मोह भुलानी ❀ भावीबस न आव मुख बानी

ब्राह्मणों के मांस से यह रसोई हुई है। सब ब्राह्मण आकाश-वाणी का विश्वास मानकर उठ खड़े हुये। राजा व्याकुल हो गया। उसकी बुद्धि मोह में भूल गई थी। होनहार-वश उसके मुँह से एक बात भी नहीं निकली।

दो० बोले बिप्र सकोप तब नहिं कछु कीन्ह बिचार।
जाइ निसाचर होहु नृप मूढ़ सहित परिवार ॥१७३॥

तब ब्राह्मण क्रोध-सहित बिना कुछ विचार किये बोले—हे मूर्ख राजा! तू जाकर परिवार-सहित राक्षस हो।

---

१. ब्राह्मण।

छत्रबन्धु तैं बिप्र बोलाई ❀ घालै लिये सहित समुदाई
ईश्वर राखा धरम हमारा ❀ जैहसि[1] तैं समेत परिवारा

रे नीच क्षत्रिय! तूने तो परिवार-सहित ब्राह्मणों को बुलाकर उन्हें नष्ट करना चाहा था। ईश्वर ही ने हमारा धर्म रख लिया। तू परिवार-सहित नष्ट होगा।

संबत मध्य नास तव होऊ ❀ जलदाता न रहिहि कुल कोऊ
नृप सुनि स्राप बिकल अति त्रासा ❀ भै बहोरि बर गिरा अकासा

एक वर्ष के भीतर तेरा नाश हो जाय, तेरे कुल में कोई पानी देने वाला तक न रहेगा। शाप सुनकर भय के मारे राजा अत्यन्त व्याकुल हो गया। फिर आकाश में सुन्दर आकाशवाणी हुई।

बिप्रहु स्राप बिचारि न दीन्हा ❀ नहिं अपराध भूप कछु कीन्हा
चकित बिप्र सब सुनि नभबानी ❀ भूप गयेउ जहँ भोजन खानी

हे ब्राह्मणो! तुमने विचारकर शाप नहीं दिया। राजा ने कुछ अपराध नहीं किया। आकाशवाणी सुनकर सब ब्राह्मण चकित हो गये। तब राजा वहाँ गया, जहाँ भोजन बना था।

तहँ न असन नहिं बिप्र सुआरा[2] ❀ फिरेउ राउ मन सोच अपारा
सब प्रसंग महिसुरन्ह सुनाई ❀ त्रसित परेउ अवनी अकुलाई

वहाँ न तो भोजन था, न रसोइया ब्राह्मण ही था। राजा लौटा। उसके मन में अपार चिन्ता थी। उसने सब कथा ब्राह्मणों को सुनाई और भयभीत और व्याकुल होकर वह पृथ्वी पर गिर पड़ा।

दो० भूपति भावी मिटइ नहिं जदपि न दूषन तोर।
किये अन्यथा होइ नहिं बिप्र स्राप अति घोर ॥१७४॥

हे राजन्! यद्यपि तुम्हारा दोष नहीं, पर होनहार नहीं मिट सकता। ब्राह्मण का शाप बहुत ही भयानक होता है। यह किसी प्रयत्न से भी टाले नहीं टल सकता।

अस कहि सब महिदेव सिधाये ❀ समाचार पुरलोगन्ह पाए
सोचहिं दूषन दैवहि देहीं ❀ बिरचत हंस काग किय जेही

---

१. जायगा। २. रसोइया।

ऐसा कहकर सब ब्राह्मण चले गये। नगर-निवासियों ने जब यह समाचार पाया, तब वे चिन्ता करने और भाग्य को दोष देने लगे, जिसने हंस बनाते-बनाते कौआ कर दिया।

उपरोहितहिं भवन पहुँचाई ❀ असुर तापसहिं खबरि जनाई
तेहि खल जहँ तहँ पत्र पठाए ❀ सजि सजि सेन भूप सब आए

राक्षस कालकेतु ने पुरोहित को उसके घर पहुँचाकर मुनि को ख़बर दी। उस दुष्ट ने जहाँ-तहाँ पत्र भेजे, जिससे (बैरी) राजा लोग सेना सजा-सजाकर दौड़े।

घेरेन्हि नगर निसान[1] बजाई ❀ बिबिध भाँति नित होइ लराई
जूझे सकल सुभट करि करनी ❀ बंधु समेत परेउ नृप धरनी

उन्होंने डंका बजाकर नगर को घेर लिया। रोज़ अनेक तरह से लड़ाइयाँ होने लगीं। सब योद्धा लोग वीरता दिखलाकर काम आये। राजा भी भाई-समेत धरती पर गिर पड़ा अर्थात् मारा गया।

सत्यकेतु कुल कोउ नहिं बाँचा ❀ बिप्र स्राप किमि होइ असाँचा[2]
रिपु जिति सब नृप नगर बसाई ❀ निज पुर गवने जय जसु पाई

सत्यकेतु के कुल में कोई नहीं बचा। ब्राह्मणों का शाप मिथ्या कैसे हो सकता था? शत्रु को जीतकर, नगर को बसाकर, सब राजा लोग विजय और यश पाकर अपने-अपने नगर को चले गये।

दो०— **भरद्वाज सुनु जाहि जब होइ बिधाता बाम।**
धूरि मेरु सम जनक जम ताहि ब्याल सम दाम॥१७५॥

(याज्ञवल्क्य कहते हैं) हे भरद्वाज! सुनो, ब्रह्मा जब जिसके विपरीत होते हैं, तब उसे धूल सुमेरु पर्वत के समान, पिता यम के समान और रस्सी साँप के समान हो जाती है।

काल पाइ मुनि सुनु सोइ राजा ❀ भयेउ निसाचर सहित समाजा
दस सिर ताहि बीस भुजदंडा ❀ रावन नाम बीर बरिबंडा

हे मुनि! सुनो, वही राजा समय पाकर परिवार-सहित राक्षस हुआ। उसके दस सिर और बीस भुजायें थीं। रावण उसका नाम हुआ और वह बड़ा ही शूरवीर हुआ।

---

१. डंका। २. मिथ्या, झूठ।

भूप अनुज अरिमर्दन नामा ❀ भयेउ सो कुम्भकरन बलधामा
सचिव जो रहा धरमरुचि जासू ❀ भयेउ बिमात्र[1] बंधु लघु तासू

राजा का छोटा भाई जो अरिमर्दन नाम का था, वही बड़ा बलवान् कुम्भकर्ण हुआ। राजा का मन्त्री जो धर्मरुचि था, वह रावण का सौतेला छोटा भाई हुआ।

नाम बिभीषन जेहि जगु जाना ❀ विष्नु भगत बिग्यान निधाना
रहे जे सुत सेवक नृप केरे ❀ भये निसाचर घोर घनेरे

उसका नाम विभीषण हुआ; संसार उसे जानता है। वह विष्णु का भक्त और ज्ञान-विज्ञान का भंडार था। और जो राजा के पुत्र और सेवक थे, वे सभी बड़े भयानक राक्षस हुये।

कामरूप खल जिनिस अनेका ❀ कुटिल भयंकर बिगत बिबेका
कृपा रहित हिंसक सब पापी ❀ बरनि न जाइ बिस्व परितापी

वे अनेकों जाति के, स्वेच्छापूर्वक मनमाना रूप धारण करने वाले, दुष्ट, प्रपंची, भयानक, विवेक से हीन, कृपा से रहित, हिंसक, पापी और संसार भर को दुःख देने वाले हुये। उनका वर्णन नहीं हो सकता।

दो० उपजे जदपि पुलस्त्य कुल पावन अमल अनूप।
तदपि महीसुर स्राप बस भए सकल अघ रूप ॥१७६॥

यद्यपि वे पुलस्त्य ऋषि के पवित्र, निर्मल और अनुपम कुल में उत्पन्न हुये, तो भी ब्राह्मणों के शाप के कारण वे सब पाप के रूप ही हुये।

कीन्ह बिबिध तप तीनिहुँ भाई ❀ परम उग्र[2] नहिं बरनि सो जाई
गयेउ निकट तप देखि बिधाता ❀ माँगहु बर प्रसन्न मैं ताता

तीनों भाइयों ने अनेक प्रकार के तप किये। बड़ा कठोर तप, जिसका वर्णन नहीं हो सकता। उनका तप देखकर विधाता उनके निकट गये और बोले—हे तात! मैं प्रसन्न हूँ, वर माँगो।

करि बिनती पद गहि दससीसा ❀ बोलेउ बचन सुनहु जगदीसा
हम काहूके मरहिं न मारे ❀ बानर मनुज जाति दुइ बारे[3]

रावण ने विनय करके और पैर पकड़कर कहा—हे जगत् के स्वामी!

---

१. सौतेला। २. कठोर। ३. छोड़कर, बचाकर।

सुनो, बानर और मनुष्य दो जातियों को छोड़कर हम और किसी के मारे न मरें (यह वर दो)।

एवमस्तु तुम्ह बड़ तप कीन्हा ❀ मैं ब्रह्मा मिलि तेहि बर दीन्हा
पुनि प्रभु कुम्भकरन पहिं गयेउ ❀ तेहि बिलोकि मन बिसमय भयेउ

ब्रह्मा ने कहा—ऐसा ही हो, तुमने बड़ा तप किया है। (शिवजी कहते हैं) मैंने और ब्रह्मा ने मिलकर उसे वर दिया। फिर ब्रह्मा कुम्भकर्ण के पास गये। उसे देखकर उनके मन में बड़ा आश्चर्य हुआ।

जौं एहि खल नित करब अहारू ❀ होइहि सब उजारि संसारू
सारद प्रेरि तासु मति फेरी ❀ माँगेसि नींद मास षट केरी

जो यह दुष्ट नित्य आहार करेगा, तो सारा संसार ही उजाड़ हो जायगा। ब्रह्मा ने सरस्वती को प्रेरणा करके उसकी बुद्धि को फेर दिया। उसने छः महीने की नींद माँग ली।

दो॰ गए बिभीषन पास पुनि कहेउ पुत्र बर माँगु।
तेहि माँगेउ भगवंत पद कमल अमल अनुरागु।१७७

ब्रह्मा फिर विभीषण के पास गये और बोले—हे पुत्र! वर माँगो। उसने भगवान् के कमल ऐसे चरणों में निर्मल (निष्काम और अनन्य) प्रेम माँगा।

तिन्हहिं देइ बर ब्रह्म सिधाए ❀ हरषित ते अपने गृह आए
मय तनुजा[1] मन्दोदरि नामा ❀ परम सुन्दरी नारि ललामा

उनको वर देकर ब्रह्मा चले गये। वे (तीनों भाई) भी आनंदित होकर अपने घर आये। मय दानव की मंदोदरी नाम की कन्या अत्यन्त रूपवती और सुन्दरी स्त्रियों में शिरोमणि थी।

सोइ मय दीन्ह रावनहि आनी ❀ होइहि जातुधानपति जानी
हरषित भयेउ नारि भलि पाई ❀ पुनि दोउ बंधु बिआहेसि जाई

मय ने उसे लाकर रावण को दिया। वह जानता था कि यह राक्षसों का राजा होगा। अच्छी स्त्री पाकर रावण प्रसन्न हुआ और फिर जाकर उसने दोनों भाइयों का भी विवाह कर दिया।

---

१. पुत्री।

गिरि त्रिकूट एक सिंधु मँझारी[1] ❀ बिधि निर्मित दुर्गम अति भारी
सोइ मय दानव बहुरि सँवारा ❀ कनक रचित मनि भवन अपारा

समुद्र के मध्य में त्रिकूट नाम के पर्वत पर ब्रह्मा का बनाया हुआ एक बड़ा भारी किला था। उसी को मय दानव ने फिर सजा दिया। उसमें सोने के बने हुये और मणियों से जड़े हुये अगणित महल थे।

भोगावति जसि अहि कुल बासा ❀ अमरावति जसि सक्र[2] निवासा
तिन्हतें अधिक रम्य अति बंका ❀ जग बिख्यात नाम तेहि लंका

जैसे नागों के कुल के रहने की पुरी भोगावती और इन्द्र के रहने की पुरी अमरावती है, उनसे भी अधिक सुन्दर और बाँकी नगरी वह थी। संसार में उसका नाम लंका प्रसिद्ध हुआ।



खाईं सिंधु गँभीर अति चारिहु दिसि फिरि आव।
कनक कोट मनि खचित दृढ़ बरनि न जाइ बनाव १७८

समुद्र गहरी खाईं की तरह जिसे चारों ओर से घेरे हुये है; जिसका मणियों से जड़ा हुआ सोने का मज़बूत परकोटा है, जिसकी सुन्दरता का वर्णन नहीं किया जा सकता।

हरि प्रेरित जेहि कलप जोइ जातुधान पति होइ।
सूर प्रतापी अतुल बल दल समेत बस सोइ।१७८।(२)

भगवान् की प्रेरणा से जिस कल्प में जो राक्षसों का राजा होता है, वही शूर, प्रतापी, अतुलित बल वाला अपने दल-सहित उस पुरी में बसता है।

रहे तहाँ निसिचर भट भारे ❀ ते सब सुरन्ह समर संघारे
अब तहँ रहहिं सक्र के प्रेरे ❀ रच्छक कोटि जच्छपति[3] केरे

पहले वहाँ बड़े-बड़े योद्धा राक्षस रहते थे। देवताओं ने उन सब को युद्ध में मार डाला। अब इन्द्र की प्रेरणा से कुबेर के एक करोड़ पहरेदार (यक्ष) वहाँ रहते हैं।

दसमुख कतहुँ खबरि असि पाई ❀ सेन साजि गढ़ घेरेसि जाई
देखि बिकट भट बड़ि कटकाई ❀ जच्छ जीव लै गए पराई

१. मध्य में। २. इन्द्र। ३. कुबेर।

रावण ने कहीं ऐसी ख़बर पाई। सेना लेकर उसने क़िले को जा घेरा। उस बड़े विकट योद्धा और उसकी बड़ी सेना को देखकर यक्ष अपना प्राण लेकर भाग गये।

फिरि सब नगर दसानन देखा ❀ गयेउ सोच सुख भयेउ बिसेषा
सुन्दर सहज अगम अनुमानी ❀ कीन्हि तहाँ रावन रजधानी

फिर रावण ने सारा नगर देखा। उसकी चिंता दूर हुई और उसे बहुत ही सुख हुआ। उस पुर को सुन्दर और सहज में प्राप्त तथा शत्रुओं के लिये अगम अनुमान करके रावण ने उसे अपनी राजधानी बनाया।

जेहि जस जोग बाँटि गृह दीन्हे ❀ सुखी सकल रजनीचर कीन्हे
एक बार कुबेर पर धावा ❀ पुष्पक जान[1] जीति लेइ आवा

जो जिस योग्य था, उसे वैसा ही घर बाँटकर रावण ने सब राक्षसों को सुखी किया। एक बार वह कुबेर पर चढ़ दौड़ा और उससे पुष्पक विमान जीत कर ले आया।

दो॰ कौतुकहीं कैलास पुनि लीन्हेसि जाइ उठाइ।
मनहुँ तौलि निज बाहु बल चला बहुत सुख पाइ।१७९

फिर उसने जाकर खेल ही खेल में एक बार कैलाश पर्वत को उठा लिया। मानो अपनी भुजाओं का बल तौलकर, बहुत सुख पाकर, वह वहाँ से चला आया।

सुख संपति सुत सेन सहाई ❀ जय प्रताप बल बुद्धि बड़ाई
नित नूतन सब बाढ़त जाई ❀ जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई

सुख, सम्पत्ति, पुत्र, सेना, सहायक, जय, प्रताप, बल, बुद्धि और बड़ाई ये सब उसके नित्य नवीन वैसे ही बढ़ते जाते थे, जैसे प्रत्येक लाभ पर लोभ बढ़ता है।

अतिबल कुम्भकरन अस भ्राता ❀ जेहि कहुँ नहिं प्रतिभट जग जाता
करइ पान सोवइ षट मासा ❀ जागत होइ तिहूँ पुर त्रासा

महाबली कुम्भकर्ण जैसा उसका भाई था, जिसके जोड़ का योद्धा संसार में पैदा ही नहीं हुआ। वह शराब पीकर छः महीने सोया करता था। उसके

---

१ यान, विमान।

जागने पर तीनों लोकों में तहलका मच जाता था।

जौं दिन प्रति अहार कर सोई ❀ बिस्व बेगि सब चौपट होई
समर धीर नहिं जाइ बखाना ❀ तेहि सम अमित बीर बलवाना

यदि वह प्रतिदिन आहार करता, तो सारा विश्व शीघ्र ही चौपट हो जाता। वह युद्ध में ऐसा धीर था, जिसका बखान नहीं किया जा सकता। उसी के समान वहाँ असंख्य वीर और बलवान थे।

बारिदनाद जेठ सुत तासू ❀ भट महुँ प्रथम लीक[1] जग जासू
जेहि न होइ रन सनमुख कोई ❀ सुरपुर नितहिं परावन[2] होई

रावण का जो पुत्र मेघनाद था, उसकी गिनती संसार के योद्धाओं में पहले होती थी। रण में उसके सामने कोई खड़ा नहीं हो सकता था। देवलोक में (उसके भय से) रोज़ ही भगदड़ मची रहती थी।

दो॰ कुमुख अकंपन कुलिसरद धूमकेतु अतिकाय।
एक एक जग जीति सक ऐसे सुभट निकाय।१८०।

दुर्मुख, अकम्पन, बज्रदन्त, धूमकेतु और अतिकाय आदि ये ऐसे योद्धा थे कि अकेले ही सारे जगत् को जीत सकते थे। ऐसे वीर वहाँ भरे हुये थे।

कामरूप जानहिं सब माया ❀ सपनेहुँ जिन्ह कें धरम न दाया
दसमुख बैठ सभाँ एक बारा ❀ देखि अमित आपन परिवारा

सब राक्षस मनमाना रूप बना सकते थे। वे सब (आसुरी) माया जानते थे। उनके दया-धर्म स्वप्न में भी नहीं था। एक बार रावण सभा में बैठा था। अपना असंख्य परिवार देखकर कि—

सुत समूह जन परिजन नाती ❀ गनै को पार निसाचर जाती
सेन बिलोकि सहज अभिमानी ❀ बोला बचन क्रोध मद सानी

पुत्रों का समूह, कुटुम्बी, सम्बन्धी और नाती इतने हैं कि सब राक्षसों की गिनती कौन कर सकता है? स्वभाव ही से वह अभिमानी रावण अपनी सेना देखकर क्रोध और अहंकार में सनी हुई वाणी बोला—

---

१. रेखा, नंबर। २. भागना।

सुनहु सकल रजनीचर जूथा[1] ❀ हमरे बैरी बिबुध बरूथा[2]
ते सनमुख नहिं करहिं लराई ❀ देखि सबल रिपु जाहिं पराई

हे सब राक्षसों के समूह! सुनो। देवतागण हमारे शत्रु हैं। वे सामने आकर युद्ध नहीं करते। बलवान शत्रु को देखकर भाग जाते हैं।

तिन्हकर मरन एक बिधि होई ❀ कहउँ बुझाइ सुनहु अब सोई
द्विज भोजन मख[3] होम सराधा[4] ❀ सब कै जाइ करहु तुम्ह बाधा

उनका मरण एक ही उपाय से हो सकता है। मैं समझाकर कहता हूँ। अब उसे सुनो। उनके ब्रह्मभोज, यज्ञ, हवन और श्राद्ध में तुम लोग जाकर बाधा डालो।

दो॰ छुधा हीन बल हीन सुर सहजहिं मिलिहहिं आइ।
तब मारिहउँ कि छाड़िहउँ भली भाँति अपनाइ।१८१

भूख से दुर्बल और बल से हीन देवता तब सहज ही में आ मिलेंगे। तब मैं उन्हें अच्छी तरह वश में करके मारूँगा या छोड़ दूँगा।

मेघनाद कहुँ पुनि हँकरावा[5] ❀ दीन्ही सिख बलु बयरु बढ़ावा
जे सुर समर धीर बलवाना ❀ जिन्हके लरिबे कर अभिमाना

उसने फिर मेघनाद को बुलवाया और सिखा-पढ़ाकर देवताओं के प्रति उसके बैर-भाव को ओजना दी। फिर कहा—हे पुत्र! जो देवता युद्ध में धीर और बलवान हैं और जिन्हें लड़ने का अभिमान है—

तिन्हहिं जीति रन आनेसु बाँधी ❀ उठि सुत पितु अनुसासन काँधी[6]
एहि बिधि सबही अग्या दीन्ही ❀ आपुन चलेउ गदा कर लीन्ही

उनको युद्ध में जीतकर बाँध लाना। पुत्र ने उठकर पिता के आदेश को शिरोधार्य किया। इस तरह उसने सबको आज्ञा दी और स्वयं भी हाथ में गदा लेकर चला।

चलत दसानन डोलति अवनी[7] ❀ गर्जत गर्भ स्रवहिं सुर रवनी
रावन आवत सुनेउ सकोहा ❀ देवन्ह तके मेरु गिरि खोहा

रावण के चलने से पृथ्वी डगमगाती थी। उसकी गर्जना से देवताओं की

१. समूह। २. समूह। ३. यज्ञ। ४. श्राद्ध। ५. बुलवाया। ६. कंधा दिया, माना। ७. पृथ्वी।

स्त्रियों का गर्भ गिर जाता था। रावण को क्रोध-सहित आता हुआ सुनकर देवताओं ने सुमेरु पर्वत की गुफाओं और खोहों की राह ली।

दिगपालन्ह के लोक सुहाए ❀ सूने सकल दसानन पाए
पुनि पुनि सिंघनाद करि भारी ❀ देइ देवतन्ह गारि प्रचारी

रावण ने दिग्पालों के सारे सुन्दर लोकों को सूना पाया। वह बार-बार भारी सिंहनाद करके देवताओं को ललकार-ललकारकर गालियाँ देता था।

रन मद मत्त फिरइ जग धावा ❀ प्रतिभट खोजत कतहुँ न पावा
रबि ससि पवन बरुन धनधारी ❀ अगिनि काल जम सब अधिकारी

युद्ध के मद में मतवाला होकर वह संसार में दौड़ता फिरा। खोजने पर भी कहीं उसे बराबर का कोई वीर नहीं मिला। सूर्य, चन्द्रमा, वायु, वरुण, कुबेर, अग्नि, काल और यम आदि सब अधिकारी—

किन्नर सिद्ध मनुज सुर नागा ❀ हठि सबही के पंथहि लागा
ब्रह्मसृष्टि जहँ लगि तनुधारी ❀ दसमुख बसबर्ती नर नारी
आयसु करहिं सकल भयभीता ❀ नवहिं आइ नित चरन बिनीता

किन्नर, सिद्ध, मनुष्य, देवता और नाग इन सभी के पीछे वह हठ करके पड़ गया। ब्रह्मा की सृष्टि में जहाँ तक स्त्री-पुरुष शरीरधारी थे, वे सभी रावण के आधीन हो गए थे। सब डर के मारे उसकी आज्ञा का पालन करते थे और नित्य आकर नम्रतापूर्वक उसके चरणों में सिर नवाते थे।

दो॰ भुजबल बिस्व बस्य करि राखेसि कोउ न स्वतंत्र।
मंडलीक मनि रावन राज करै निज मंत्र ॥१८२ (१)॥

भुजाओं के बल से विश्व को वश में करके उसने किसी को स्वतंत्र नहीं रहने दिया। चक्रवर्त्तियों का शिरोमणि रावण इच्छानुसार राज्य करने लगा।

देव जच्छ गंधर्ब नर किन्नर नाग कुमारि।
जीति बरीं निज बाहु बल बहु सुन्दर बर नारि ॥१८२(२)॥

देवता, यक्ष, गन्धर्व, नर, किन्नर और नाग की कन्याओं और अनेक सुन्दरी और श्रेष्ठ स्त्रियों को उसने अपनी भुजाओं के बल से जीतकर विवाह लिया।

इंद्रजीत सन जो कछु कहेऊ ❀ सो सब जनु पहिलेहु करि रहेऊ
प्रथमहिं जिन्ह कहुँ आयसु दीन्हा ❀ तिन्ह कर चरित सुनहु जो कीन्हा

मेघनाद से उसने जो कुछ कहा, उसे उसने मानों पहले ही से कर रक्खा था। जिनको उसने पहले ही आज्ञा दी थी, उन्होंने जो करतूतें कीं, उन्हें सुनो।

देखत भीमरूप सब पापी ❀ निसिचर निकर देव परितापी[1]
करहिं उपद्रव असुर निकाया ❀ नाना रूप धरहिं करि माया

सब राक्षसों के समूह देखने में भयावने, पापी और देवताओं को कष्ट देने वाले थे। वे राक्षसों के समूह उपद्रव करते थे और माया से तरह-तरह के रूप धरते थे।

जेहि बिधि होइ धरम निर्मूला ❀ सो सब करहिं बेद प्रतिकूला
जेहि जेहि देस धेनु द्विज पावहिं ❀ नगर गाउँ पुर आगि लगावहिं

जिस प्रकार धर्म की जड़ कटे, वे वही सब वेद के विरुद्ध काम करते थे। जिस-जिस स्थान में वे गायों और ब्राह्मणों को पाते थे, उसी नगर, गाँव और पुर में आग लगा देते थे।

सुभ आचरन कतहुँ नहिं होई ❀ देव बिप्र गुरु मान न कोई
नहिं हरि भगति जग्य जप दाना ❀ सपनेहुँ सुनिअ न बेद पुराना

कहीं भी शुभ आचरण नहीं हो रहा था। देवता, ब्राह्मण और गुरु को कोई नहीं मानता था। न हरि-भक्ति थी, न यज्ञ, जाप और दान था। वेद और पुराण तो स्वप्न में भी सुनने को नहीं मिलते थे।

छंद—जप जोग बिरागा तप मख भागा स्रवन सुनइ दससीसा।
आपुन उठि धावइ रहै न पावइ धरि सब घालइ खीसा॥
अस भ्रष्ट अचारा भा संसारा धरम सुनिअ नहिं काना।
तेहि बहु बिधि त्रासइ देस निकासइ जो कह बेद पुराना॥

जप, योग, वैराग्य, तप, यज्ञ में भाग पाने की बात रावण कहीं कानों से सुनता, तो स्वयं उठ दौड़ता, कोई रहने नहीं पाता और सबको पकड़कर नष्ट-भ्रष्ट कर डालता था। संसार में ऐसा भ्रष्ट आचार फैल गया कि धर्म तो कहीं

१. कष्ट देने वाले।

कान से भी नहीं सुनाई पड़ता था। जो वेद और पुराण कहते थे, उनको वह सब तरह से भय दिखलाता और देश से निकाल देता था।

सो० बरनि न जाइ अनीति घोर निसाचर जो करहिं।
हिंसा पर अति प्रीति तिन्हके पापहिं कवनि मिति॥

राक्षस लोग जो भयानक अत्याचार करते थे, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। जिनकी हिंसा ही पर प्रीति है, उनके पापों का क्या ठिकाना है?

बाढ़े खल बहु चोर जुआरा ❀ जे लंपट परधन परदारा
मानहिं मातु पिता नहिं देवा ❀ साधुन्ह सन करवावहिं सेवा

दुष्ट, चोर, जुआरी और पराया धन और पराई स्त्री पर मन चलाने वाले लंपट खूब बढ़ गये। लोग माता, पिता और देवता को नहीं मानते थे और साधुओं से अपनी सेवा करवाते थे।

जिन्हके यह आचरन भवानी ❀ ते जानहु निसिचर सब प्रानी
अतिसय देखि धरम कै ग्लानी ❀ परम सभीत धरा अकुलानी

हे पार्वती! जिनके आचरण ऐसे हैं, उन सब प्राणियों को राक्षस ही समझना। इस प्रकार धर्म के प्रति लोगों की अतिशय ग्लानि देखकर धरती अत्यन्त भयभीत और व्याकुल हो गई।

गिरि सरि सिंधु भार नहिं मोही ❀ जस मोहि गरुअ[1] एक परद्रोही
सकल धरम देखइ बिपरीता ❀ कहि न सकइ रावन भयभीता

(पृथ्वी सोचने लगी)—पर्वत, नदी और समुद्र का भार मुझे उतना भारी नहीं जान पड़ता, जितना भारी मुझे एक परद्रोही लगता है। सब लोग धर्म के विरुद्ध काम होता देखते हैं, पर कोई रावण के डर के मारे कुछ बोल नहीं सकता।

धेनु[2] रूप धरि हृदयँ बिचारी ❀ गई तहाँ जहँ सुर मुनि झारी[3]
निज संताप सुनाएसि रोई ❀ काहू तें कछु काज न होई

हृदय में सोच-विचारकर, गाय का रूप धरकर, धरती वहाँ गई, जहाँ देवताओं और मुनियों का समूह (छिपा) था। उसने रोकर उनको अपना दुःख सुनाया; पर किसी से कुछ काम होता नहीं दिखाई पड़ा।

---

१. भारी। २. गाय। ३. समूह।

छंद—सुर मुनि गंधर्बा मिलि करि सर्बा गे बिरंचि के लोका।
सँग गो तनुधारी भूमि बिचारी परम बिकल भय सोका।
ब्रह्मा सब जाना मन अनुमाना मोर कछू न बसाई।
जा करि तैं दासी सो अबिनासी हमरेउ तोर सहाई॥

तब देवता, मुनि और गंधर्व सब मिलकर ब्रह्मा के लोक को गये। साथ में गाय का शरीर धारण किये हुये, भय और शोक से व्याकुल बेचारी धरती भी थी। ब्रह्मा सब जान गये। उन्होंने मन में अनुमान किया कि इसमें मेरा कुछ भी वश नहीं चलने का। तब उन्होंने धरती से कहा—जिसकी तू दासी है, वही अविनाशी हम दोनों का सहायक है।

सो॰ धरनि धरहि मन धीर कह बिरंचि हरि पद सुमिरु।
जानत जन की पीर प्रभु भंजहिं दारुन बिपति।१८४।

ब्रह्मा ने कहा—हे धरती! मन में धीरज धरो। हरि के चरणों को स्मरण करो। प्रभु अपने भक्तों की पीड़ा को जानते हैं। वे तुम्हारी कठिन विपत्ति को नष्ट करेंगे।

बैठे सुर सब करहिं बिचारा ❀ कहँ पाइअ प्रभु करिअ पुकारा
पुर बैकुंठ जान कह कोई ❀ कोउ कह पयनिधि बस प्रभु सोई

सब देवता बैठकर विचार करने लगे कि भगवान् को कहाँ पायें और अपनी पुकार (फ़र्याद) सुनायें। कोई बैकुण्ठपुरी जाने को कहता था, कोई कहता था प्रभु तो क्षीर-समुद्र में बसते हैं।

जाके हृदयँ भगति जसि प्रीती ❀ प्रभु तहँ प्रगट सदा तेहि रीती
तेहि समाज गिरिजा मैं रहेऊँ ❀ अवसर पाइ बचन इक कहेऊँ

जिसके हृदय में जैसी भक्ति और जैसी प्रीति होती है, प्रभु वहाँ सदा उसी के अनुसार प्रकट होते हैं। हे पार्वती उस समाज में मैं भी था। अवसर पाकर मैंने एक बात कही—

हरि व्यापक सर्बत्र समाना ❀ प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना
देस काल दिसि बिदिसहु माहीं ❀ कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं

मैं तो यह जानता हूँ कि भगवान् सर्वत्र समान रूप से व्यापक हैं। वे

कान से भी नहीं सुनाई पड़ता था। जो वेद और पुराण कहते थे, उनको वह सब तरह से भय दिखलाता और देश से निकाल देता था।

सो॰ बरनि न जाइ अनीति घोर निसाचर जो करहिं।
हिंसा पर अति प्रीति तिन्हके पापहिं कवनि मिति॥

राक्षस लोग जो भयानक अत्याचार करते थे, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। जिनकी हिंसा ही पर प्रीति है, उनके पापों का क्या ठिकाना है?

बाढ़े खल बहु चोर जुआरा ❀ जे लंपट परधन परदारा
मानहिं मातु पिता नहिं देवा ❀ साधुन्ह सन करवावहिं सेवा

दुष्ट, चोर, जुआरी और पराया धन और पराई स्त्री पर मन चलाने वाले लंपट खूब बढ़ गये। लोग माता, पिता और देवता को नहीं मानते थे और साधुओं से अपनी सेवा करवाते थे।

जिन्हके यह आचरन भवानी ❀ ते जानहु निसिचर सब प्रानी
अतिसय देखि धरम कै ग्लानी ❀ परम सभीत धरा अकुलानी

हे पार्वती! जिनके आचरण ऐसे हैं, उन सब प्राणियों को राक्षस ही समझना। इस प्रकार धर्म के प्रति लोगों की अतिशय ग्लानि देखकर धरती अत्यन्त भयभीत और व्याकुल हो गई।

गिरि सरि सिंधु भार नहिं मोही ❀ जस मोहि गरुअ[1] एक परद्रोही
सकल धरम देखइ बिपरीता ❀ कहि न सकइ रावन भयभीता

(पृथ्वी सोचने लगी)—पर्वत, नदी और समुद्र का भार मुझे उतना भारी नहीं जान पड़ता, जितना भारी मुझे एक परद्रोही लगता है। सब लोग धर्म के विरुद्ध काम होता देखते हैं, पर कोई रावण के डर के मारे कुछ बोल नहीं सकता।

धेनु[2] रूप धरि हृदयँ बिचारी ❀ गई तहाँ जहँ सुर मुनि झारी[3]
निज संताप सुनाएसि रोई ❀ काहू तें कछु काज न होई

हृदय में सोच-विचारकर, गाय का रूप धरकर, धरती वहाँ गई, जहाँ देवताओं और मुनियों का समूह (छिपा) था। उसने रोकर उनको अपना दुःख सुनाया; पर किसी से कुछ काम होता नहीं दिखाई पड़ा।

---

१. भारी। २. गाय। ३. समूह।

छंद—सुर मुनि गंधर्बा मिलि करि सर्बा गे बिरंचि के लोका।
सँग गो तनुधारी भूमि बिचारी परम बिकल भय सोका।
ब्रह्मा सब जाना मन अनुमाना मोर कछू न बसाई।
जा करि तैं दासी सो अबिनासी हमरेउ तोर सहाई॥

तब देवता, मुनि और गंधर्व सब मिलकर ब्रह्मा के लोक को गये। साथ में गाय का शरीर धारण किये हुये, भय और शोक से व्याकुल बेचारी धरती भी थी। ब्रह्मा सब जान गये। उन्होंने मन में अनुमान किया कि इसमें मेरा कुछ भी वश नहीं चलने का। तब उन्होंने धरती से कहा—जिसकी तू दासी है, वही अविनाशी हम दोनों का सहायक है।

सो०—धरनि धरहि मन धीर कह बिरंचि हरि पद सुमिरु।
जानत जन की पीर प्रभु भंजहिं दारुन बिपति।१८४।

ब्रह्मा ने कहा—हे धरती! मन में धीरज धरो। हरि के चरणों को स्मरण करो। प्रभु अपने भक्तों की पीड़ा को जानते हैं। वे तुम्हारी कठिन विपत्ति को नष्ट करेंगे।

बैठे सुर सब करहिं बिचारा ❀ कहँ पाइअ प्रभु करिअ पुकारा
पुर बैकुंठ जान कह कोई ❀ कोउ कह पयनिधि बस प्रभु सोई

सब देवता बैठकर विचार करने लगे कि भगवान् को कहाँ पायें और अपनी पुकार (फ़र्याद) सुनायें। कोई बैकुण्ठपुरी जाने को कहता था, कोई कहता था प्रभु तो क्षीर-समुद्र में बसते हैं।

जाके हृदयँ भगति जसि प्रीती ❀ प्रभु तहँ प्रगट सदा तेहि रीती
तेहि समाज गिरिजा मैं रहेऊँ ❀ अवसर पाइ बचन इक कहेऊँ

जिसके हृदय में जैसी भक्ति और जैसी प्रीति होती है, प्रभु वहाँ सदा उसी के अनुसार प्रकट होते हैं। हे पार्वती उस समाज में मैं भी था। अवसर पाकर मैंने एक बात कही—

हरि ब्यापक सर्बत्र समाना ❀ प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना
देस काल दिसि बिदिसहु माहीं ❀ कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं

मैं तो यह जानता हूँ कि भगवान् सर्वत्र समान रूप से व्यापक हैं। वे

प्रेम से प्रकट होते हैं। देश-काल, दिशा, विदिशा में बताओ वह स्थान कहाँ है, जहाँ प्रभु नहीं हैं ?

अग जगमय सब रहित बिरागी ❀ प्रेम तें प्रभु प्रगटइ जिमि आगी
मोर बचन सबके मन माना ❀ साधु साधु करि ब्रह्म बखाना

वे चर-अचर सब में हैं; पर सब से अलग हैं और किसी में अनुरक्त नहीं हैं। वे प्रेम से प्रकट होते हैं, जैसे आग। मेरी बात सबको प्रिय लगी। ब्रह्मा ने शाबाश-शाबाश कहकर मेरी बड़ाई की।

दो० सुनि बिरंचि मन हरष तन पुलकि नयन बह नीर।
अस्तुति करत सुजोरि कर सावधान मतिधीर १८५

मेरी बात सुनकर ब्रह्मा का मन आनन्दित हुआ, तन पुलकित हुआ, नेत्रों से नीर बहने लगा। वे धीर-बुद्धि ब्रह्मा सावधान होकर, हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे।

छंद—जय जय सुरनायक जन सुखदायक प्रनतपाल भगवंता
गो द्विज हितकारी जय असुरारी सिंधुसुता प्रिय कंता
पालन सुर धरनी अदभुत करनी मरम न जानइ कोई
जो सहज कृपाला दीनदयाला करहु अनुग्रह सोई

हे देवताओं के स्वामी! सेवकों को सुख देने वाले! शरणागत को पालने वाले भगवान्! आपकी जय हो, जय हो। हे गौ, ब्राह्मण का हित करने वाले! असुरों के शत्रु! समुद्र की कन्या लक्ष्मी के प्यारे पति! आपकी जय हो। हे देवता और पृथ्वी को पालने वाले! आपकी लीला अद्भुत है; कोई आपका भेद नहीं जानता। जो स्वभाव ही से कृपालु और दीनों पर दया करने वाले हैं, वही हम पर कृपा करें।

जय जय अबिनासी सब घट बासी ब्यापक परमानन्दा।
अबिगत गोतीतं चरित पुनीतं मायारहित मुकुन्दा॥
जेहि लागि[1] बिरागी अति अनुरागी बिगत मोह मुनिबृन्दा।
निसि बासर ध्यावहिं गुन गन गावहिं जयति सच्चिदानन्दा॥

१. लिये।

हे अविनाशी ! सब के हृदय में बसने वाले (अन्तर्यामी), सर्वव्यापक, परम आनन्द-स्वरूप, अजेय, इन्द्रियों से परे, पवित्र-चरित्र, माया से रहित, मुकुन्द (मोक्षदाता) ! आपकी जय हो। संसार से विरक्त, अति अनुरागी, मोह से रहित, मुनिवृन्द भी जिनका रात-दिन ध्यान करते हैं, और जिनके गुणों के समूह का गान करते हैं, उन सच्चिदानन्द की जय हो।

जेहि सृष्टि उपाई त्रिविध बनाई संग सहाय न दूजा।
सो करउ अघारी[1] चिंत हमारी जानिअ भगति न पूजा॥
जो भव भय भंजन मुनि मन रंजन गंजन बिपति बरूथा।
मन बच क्रम बानी छाँड़ि सयानी सरन सकल सुर जूथा॥

जिन्होंने अकेले, बिना किसी दूसरे की सहायता के, तीन प्रकार की सृष्टि उत्पन्न की, पापों के शत्रु भगवान् हमारी सुधि लें। हम न भक्ति जानते हैं और न पूजा। जो संसार के भय का नाश करने वाले, मुनियों के मन को आनन्द देने वाले, और विपत्तियों के समूह को नष्ट करने वाले हैं, हम सब देवताओं के समूह मन, वचन और कर्म से, चतुराई करने की बान छोड़कर उनकी शरण आये हैं।

सारद स्रुति सेषा रिषय असेषा[2] जा कहुँ कोउ नहिं जाना।
जेहि दीन पिआरे बेद पुकारे द्रवउ सो स्रीभगवाना॥
भव बारिधि मंदर[3] सब बिधि सुन्दर गुन मंदिर सुख पुञ्जा।
मुनि सिद्ध सकल सुर परम भयातुर नमत नाथ पद कंजा॥

सरस्वती, वेद, शेष और सम्पूर्ण ऋषि, कोई भी जिनको नहीं जानते, जिन्हें दीन प्रिय हैं। ऐसा वेद पुकारकर कहते हैं, वे ही श्री भगवान् हम पर दया करें। हे संसाररूपी समुद्र में (मन्दराचल) पर्वत के समान, सब प्रकार से सुन्दर, गुणों के घर, सुखों की राशि, नाथ ! आपके कमल ऐसे चरणों में मुनि, सिद्ध और सब देवता भय से बहुत विकल होकर नमस्कार करते हैं।

जानि सभय सुर भूमि सुनि बचन समेत सनेह।
गगन गिरा गंभीर भइ हरनि सोक संदेह॥१८६॥

१. पापों के शत्रु। २. समस्त। ३. पहाड़।

देवताओं और पृथ्वी को भयभीत जानकर और उनके स्नेह-युक्त वचन सुनकर शोक और संदेह को हरने वाली गंभीर आकाशवाणी हुई।

जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा ❁ तुम्हहि लागि धरिहउँ नर बेसा
अंसन्ह सहित मनुज अवतारा ❁ लेइहउँ दिनकर बंस उदारा

हे मुनि, सिद्ध और देवताओं के स्वामियो! डरो मत। तुम्हारे लिये मैं मनुष्य का वेष धारण करूँगा और उदार सूर्य-वंश में मैं अंशों-सहित मनुष्य का अवतार लूँगा।

कस्यप अदिति महातप कीन्हा ❁ तिन्ह कहुँ मैं पूरब बर दीन्हा
ते दसरथ कौसल्या रूपा ❁ कोसलपुरीं प्रगट नर भूपा

कस्यप और अदिति ने बड़ा भारी तप किया था। मैंने पहले उनको वर दिया था। वे ही दशरथ और कौशल्या के रूप में मनुष्यों के राजा होकर अयोध्यापुरी में प्रकट हुये हैं।

तिन्हके गृह अवतरिहउँ जाई ❁ रघुकुल तिलक सो चारिउ भाई
नारद बचन सत्य सब करिहउँ ❁ परम सक्ति समेत अवतरिहउँ

उन्हीं के घर में जाकर हम चार भाइयों के रूप में जन्म लेंगे; क्योंकि वे रघुकुल में सब से श्रेष्ठ हैं। नारद के सब वचन मैं सत्य करूँगा और अपनी परमशक्ति के सहित अवतार लूँगा।

हरिहउँ सकल भूमि गरुआई ❁ निर्भय होहु देव समुदाई
गगन ब्रह्मबानी सुनि काना ❁ तुरत फिरे सुर हृदय जुड़ाना
तब ब्रह्माँ धरनिहि समुझावा ❁ अभय भई भरोस जियँ आवा

मैं पृथ्वी का सब भार हर लूँगा। हे देवताओं के समूह! निर्भय होओ। आकाश में भगवान् (ब्रह्म) की वाणी कान से सुनकर देवता तुरन्त ही लौट गये। उनका हृदय शीतल हो गया। तब ब्रह्मा ने धरती को समझाया। वह भी निर्भय हुई और उसके जी में भरोसा आ गया।

दो०— निज लोकहि बिरंचि गे देवन्ह इहइ सिखाइ।
बानर तनु धरि धरि महि हरि पद सेवहु जाइ॥१८७॥

ब्रह्मा देवताओं को यह सिखाकर कि बानर का शरीर धरकर पृथ्वी पर जाकर भगवान् के चरणों की सेवा करो, अपने लोक को चले गये।

गए देव सब निज निज धामा ❀ भूमि सहित मन कहुँ बिस्रामा
जो कछु आयसु ब्रह्माँ दीन्हा ❀ हरषे देव बिलम्ब न कीन्हा

सब देवता अपने-अपने लोक को चले गये। धरती सहित सबके मन को शान्ति मिली। ब्रह्मा ने जो आज्ञा दी थी, उससे देवता बहुत आनन्दित हुये और उन्होंने (करने में) देरी नहीं की।

बनचर देह धरी छिति माहीं ❀ अतुलित बल प्रताप तिन्ह पाहीं
गिरि तरु नख आयुध सब बीरा ❀ हरि मारग चितवहिं मतिधीरा

पृथ्वी पर उन्होंने बानर का शरीर धारण किया। उनमें अपार बल और प्रताप था। पर्वत, वृक्ष और नख ही उन सब वीरों के शस्त्र थे। वे धीर बुद्धि वाले भगवान् के आने की राह देखने लगे।

गिरि कानन जहँ तहँ भरि पूरी ❀ रहे निज निज अनीक[१] रुचि रूरी[२]
यह सब रुचिर चरित मैं भाखा ❀ अब सो सुनहु जो बीचहिं राखा

पर्वत और जङ्गल जहाँ-जहाँ थे, वहाँ वे बानर अपनी-अपनी सुन्दर सेना बनाकर अच्छी तरह रहने लगे। यह सब सुन्दर चरित्र मैंने कहा। अब उसे सुनो, जिसे बीच में रख लिया था।

अवधपुरी रघुकुल मनि राऊ ❀ बेद बिदित तेहि दसरथ नाऊँ
धरम धुरंधर गुननिधि ग्यानी ❀ हृदयँ भगति मति सारँगपानी

अवधपुरी में रघु के कुल में मणि के समान राजा दशरथ हुये, जिनका नाम वेदों में विख्यात है। वे बड़े धर्मात्मा, गुणों के भण्डार और ज्ञानी थे और विष्णु भगवान् के लिये हृदय में भक्ति और बुद्धि रखने वाले थे।

दो० कौसल्यादि नारि प्रिय सब आचरन पुनीत।
पति अनुकूल प्रेम दृढ़ हरि पद कमल बिनीत।१८८।

कौशल्या आदि उनकी प्यारी रानियों का आचरण बड़ा पवित्र था। वे पति के अनुकूल थीं और भगवान् के कमल ऐसे चरणों में उनका दृढ़ प्रेम था और वे बड़ी विनीत थीं।

एक बार भूपति मन माहीं ❀ भइ गलानि मोरें सुत नाहीं
गुर गृह गयेउ तुरत महिपाला ❀ चरन लागि करि बिनय बिसाला

१. सेना। २. सुन्दर।

एक बार राजा के मन में बड़ी ग्लानि हुई कि मेरे पुत्र नहीं हैं। राजा तुरन्त ही गुरु के घर गये। चरण छूकर, बड़ी विनय करके—

निज दुख सुख सब गुरहि सुनायेउ ❀ कहि बसिष्ठ बहुबिधि समुझायेउ
धरहु धीर होइहहिं सुत चारी ❀ त्रिभुवन बिदित भगत भय हारी

राजा ने अपना सब दुःख-सुख गुरु को सुनाया। वशिष्ठ ने उन्हें बहुत प्रकार से समझाया और कहा—धीरज धरो, तुम्हारे चार पुत्र होंगे। वे तीनों लोकों में प्रसिद्ध और भक्तों के भय को हरने वाले होंगे।

सृङ्गी रिषिहि बसिष्ठ बोलावा ❀ पुत्रकाम सुभ जग्य करावा
भगति सहित मुनि आहुति दीन्हे ❀ प्रगटे अगिनि चरू[1] कर लीन्हे

वशिष्ठ ने शृंगी ऋषि को बुलाया और उनसे शुभ पुत्रकामेष्ठि यज्ञ कराया। मुनि ने भक्ति-सहित आहुतियाँ दीं। तब अग्निदेव हाथ में चरु लिये हुये प्रकट हुये।

जो बसिष्ठ कछु हृदयँ बिचारा ❀ सकल काज भा सिद्ध तुम्हारा
यह हबि बाँटि देहु नृप जाई ❀ जथा जोग जेहि भाग बनाई

(अग्निदेव ने राजा दशरथ से कहा—) वशिष्ठ ने हृदय में जो कुछ विचारा था, तुम्हारा वह सब काम सिद्ध हो गया। अब हे राजा! इस हव्य को ले जाकर जिसको जैसा उचित हो, वैसा भाग बनाकर बाँट दो।

दो॰ तब अदृस्य पावक भए सकल सभहि समुझाइ।
परमानंद मगन नृप हरष न हृदय समाइ ॥१८९॥

तब अग्निदेव सारी सभा को समझाकर अंतर्द्धान हो गये। राजा परम आनंद में मग्न हो गये। उनका हर्ष हृदय में नहीं समा रहा था।

तबहि राय प्रिय नारि बोलाई ❀ कौसल्यादि तहाँ चलि आई
अरध भाग कौसल्यहि दीन्हा ❀ उभय[2] भाग आधे कर कीन्हा

तब राजा ने अपनी प्यारी रानियों को बुलाया। कौशल्या आदि रानियाँ वहाँ आ गईं। राजा ने द्रव्य का आधा भाग कौशल्या को दिया; फिर शेष आधे के दो भाग किये।

---

१. हविष्यान्न, खीर। २. दो।

कैकेई कहँ नृप सो दयऊ ❀ रहेउ सो उभय भाग पुनि भयऊ
कौसल्या कैकेई हाथ धरि ❀ दीन्ह सुमित्रहि मन प्रसन्न करि

उस आधे के आधे भाग को राजा ने कैकेयी को दिया। शेष जो बचा, उसके भी दो भाग किये गए और राजा ने उनको कौशल्या और कैकेयी के हाथ पर धरकर (उनकी अनुमति लेकर) उनका मन प्रसन्न करके, सुमित्रा को दिया।

एहि बिधि गर्भसहित सब नारी ❀ भईं हृदयँ हरषित सुख भारी
जा दिन तें हरि गर्भहिं आए ❀ सकल लोक सुख संपति छाए

इस प्रकार सब स्त्रियाँ गर्भवती हुईं। वे हृदय में बहुत आनंदित हुईं। उन्हें बड़ा सुख मिला। जिस दिन से भगवान् गर्भ में आये, सारे लोकों में सुख और सम्पत्ति छा गये।

मंदिर महुँ सब राजहिं रानीं ❀ सोभा सील तेज की खानीं
सुख जुत कछुक काल चलि गयऊ ❀ जेहि प्रभु प्रगट सो अवसर भयऊ

सब शोभा, शील और तेज की खान रानियाँ रनवास में विराजती थीं। इस प्रकार कुछ समय सुख-सहित बीत गया और प्रभु के प्रकट होने का अवसर आ गया।

दो० जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भए अनुकूल।
चर अरु अचर हरषजुत राम जनम सुखमूल।१९०।

योग, लग्न, ग्रह, वार और तिथि सब अनुकूल हो गये। चर और अचर सब आनंदमय हो गये; क्योंकि राम का जन्म सुख का मूल है।

नौमी तिथि मधु मास पुनीता ❀ सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता
मध्य दिवस अति सीत न घामा ❀ पावन काल लोक बिस्रामा

चैत्र का पवित्र महीना था; नवमी तिथि थी। शुक्ल-पक्ष और भगवान् का प्रिय अभिजित मुहूर्त था। दोपहर का समय था। न बहुत सरदी थी न धूप। वह पवित्र समय सब लोकों को शान्ति देने वाला था।

सीतल मंद सुरभि बह बाऊ ❀ हरषित सुर संतन्ह मन चाऊ
बन कुसुमित गिरि गन मनिआरा[1] ❀ स्रवहिं सकल सरिताऽमृतधारा

शीतल, मंद और सुगंधित पवन बह रहा था। देवता आनंदित थे और

१. मणियों से जगमगाते हुये।

संतों के मन में बड़ा चाव था। बन फूले हुये थे। पर्वतों के समूह मणियों से जगमगा रहे थे; और नदियाँ अमृत की धारा बहा रही थीं।

सो अवसर बिरंचि जब जाना ❁ चले सकल सुर साजि बिमाना
गगन बिमल संकुल सुर जूथा ❁ गावहिं गुन गंधर्ब बरूथा

ब्रह्मा ने ऐसा अवसर जब जाना, तब वे और सारे देवता विमान सजा-सजाकर चले। निर्मल आकाश देवताओं के समूहों से भर गया। गंधर्वगण गुण गाने लगे।

बरषहिं सुमन सुअंजलि साजी ❁ गहगहि गगन दुन्दुभी बाजी
अस्तुति करहिं नाग मुनि देवा ❁ बहु बिधि लावहिं निज निज सेवा

और सुंदर अंजलि भर-भरकर फूलों की वर्षा करने लगे। आकाश में घमा-घम नगाड़े बजने लगे। नाग, मुनि और देवता स्तुति करने लगे और बहुत प्रकार से अपनी-अपनी सेवायें भेंट (उपहार) करने लगे।

दो० **सुर समूह बिनती करी पहुँचे निज निज धाम।**
जगनिवास प्रभु प्रगट भे अखिल लोक बिस्राम १९१

देवगण विनती करके अपने-अपने धाम को चले गये। समस्त लोकों को शान्ति देने वाले जग के आधार प्रभु प्रकट हुये।

छंद–भए प्रगट कृपाला परम दयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मनहारी अदभुत रूप बिचारी॥
लोचन अभिरामा तनु घनस्यामा निज आयुध भुज चारी।
भूषन बनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी॥

परम दयालु और कौशल्या के हितकारी कृपालु (राम) प्रकट हुये। मुनियों के मन को हरने वाला उनका अद्भुत रूप देखकर माता आनन्दित हो गई। नेत्रों को आनन्द देने वाला मेघ की तरह श्याम शरीर, चारों भुजाओं में (शंख, चक्र, गदा, पद्म) शस्त्र धारण किये हुये, गले में पाँव तक लम्बी माला, विशाल नेत्र, शोभा के समुद्र तथा खर राक्षस के शत्रु को देखकर,

कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता।
माया गुन ग्यानातीत अमाना बेद पुरान भनंता॥

करुना सुखसागर सब गुन आगर जेहि गावहिं श्रुति संता।
सो मम हित लागी जन अनुरागी भयउ प्रगट श्रीकंता॥

दोनों हाथ जोड़कर माता कहने लगी—हे अनन्त! मैं किस तरह तुम्हारी स्तुति करूँ? वेदों और पुराणों ने तुमको माया, गुण और ज्ञान से परे और सीमा-रहित बताया है। वेद और संतजन करुणा और सुखों का समुद्र, सब गुणों का धाम बताकर जिनका गान करते हैं, वही भक्तों के प्रेमी, लक्ष्मी-कान्त मेरे कल्याण के लिये प्रकट हुये हैं।

ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै॥
उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै॥

वेद जिसके रोम-रोम में माया से निर्मित अनेकों ब्रह्माण्ड बतलाते हैं, वह मेरे गर्भ में रहे, इस हँसी की बात के सुनने पर धीर पुरुषों की बुद्धि भी स्थिर नहीं रह सकती। जब माता को ज्ञान हुआ, तब प्रभु मुसकुराये। वह बहुत प्रकार के चरित करना चाहते हैं। अतः उन्होंने पिछले जन्म की सुन्दर कथा कहकर समझाया, जिससे वह पुत्र का प्रेम प्राप्त करे।

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजै सिसु लीला अति प्रियसीला यह सुख परम अनूपा॥
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा॥

माता की बुद्धि बदल गई, तब वह फिर बोली—हे पुत्र! यह रूप छोड़-कर अत्यन्त प्रिय बाल-लीला करो। (मेरे लिये) यह सुख परम अनुपम है। यह वचन सुनकर देवताओं के स्वामी सुजान राम ने बालक होकर रोना शुरू किया। (तुलसीदास कहते हैं) जो जन इस चरित्र का गान करते हैं, वे भगवान् का पद पाते हैं और फिर संसाररूपी कूप में नहीं गिरते।

दो० बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो[1] पार ॥१९२

ब्राह्मण, गाय, देवता और सन्तों के लिये भगवान् ने मनुष्य का अवतार लिया। वे माया, गुण और इन्द्रियों से परे हैं। उन्होंने अपनी इच्छामात्र से शरीर धारण किया है।

सुनि सिसु रुदन परम प्रिय बानी ❀ संभ्रम चलि आईं सब रानी
हरषित जहँ तहँ धाईं दासी ❀ आनँद मगन सकल पुरबासी

बालक के रोने की परम प्यारी ध्वनि सुनकर सब रानियाँ उतावली से वहाँ चली आईं। दासियाँ हर्षित होकर जहाँ-तहाँ दौड़ीं। समस्त नगर-निवासी आनन्द में मग्न हो गये। [अक्रमातिशयोक्ति अलंकार]

दसरथ पुत्र जनम सुनि काना ❀ मानहुँ ब्रह्मानंद समाना
परम प्रेम मन पुलक सरीरा ❀ चाहत उठन करत मति धीरा

राजा दशरथ कानों से पुत्र का जन्म सुनकर मानो ब्रह्मानन्द में समा गये। उनके मन में बड़ा प्रेम उमड़ आया। शरीर रोमाञ्चित हो आया। बुद्धि को धीरज देकर वे उठना चाहते हैं।

जाकर नाम सुनत सुभ होई ❀ मोरें गृह आवा प्रभु सोई
परमानंद पूरि मन राजा ❀ कहा बुलाइ बजावहु बाजा

(यह सोचकर कि) जिसका नाम सुनने मात्र से कल्याण होता है, वही प्रभु मेरे घर आये हैं राजा का मन परम आनन्द से पूर्ण हो गया। उन्होंने (बाजे वालों को) बुलाकर कहा कि बाजा बजाओ।

गुरु बसिष्ठ कहँ गयेउ हँकारा ❀ आए द्विजन्ह सहित नृप द्वारा
अनुपम बालक देखेन्हि जाई ❀ रूप रासि गुन कहि न सिराई

गुरु वशिष्ठ के पास बुलावा गया। वे ब्राह्मणों को साथ लिये हुये राजद्वार पर आये। उन्होंने जाकर अद्भुत बालक को देखा, जो रूप की राशि है और जिसके गुण कहने से चुकते नहीं।

दो० तब नंदीमुख स्राद्ध करि जातकरम सब कीन्ह।
हाटक[2] धेनु बसन मनि नृप बिप्रन्ह कहँ दीन्ह १९३॥

१. इंद्रियाँ। २. सोना।

तब राजा ने नान्दीमुख श्राद्ध करके सब जातकर्म आदि किये और ब्राह्मणों को सोना, गाय, वस्त्र और मणियों का दान दिया।

ध्वज पताक तोरन[1] पुर छावा ❀ कहि न जाइ जेहि भाँति बनावा
सुमन बृष्टि अकास तें होई ❀ ब्रह्मानंद मगन सब लोई

ध्वजा, पताका और बन्दनवार से नगर छा गया। जैसा सजाया गया, उसका वर्णन ही नहीं हो सकता। आकाश से फूलों की वर्षा हो रही है। सब लोग ब्रह्मानन्द में मग्न हैं।

बृन्द बृन्द मिलि चलीं लोगाईं ❀ सहज सिंगार किएँ उठि धाईं
कनक कलस मंगल भरि थारा ❀ गावत पैठहिं भूप दुआरा

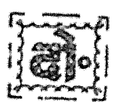
स्त्रियाँ झुण्ड की झुण्ड मिलकर चलीं। जो जैसा सिङ्गार किये थी, वैसी ही उठकर दौड़ी। सोने का कलश लेकर और थालों में मङ्गल द्रव्य भरकर गाती हुई वे राजा की ड्योढ़ी में प्रवेश करती हैं।

करि आरति नेवछावरि करहीं ❀ बार बार सिसु चरनन्हि परहीं
मागध सूत बंदि गन गायक ❀ पावन गुन गावहिं रघुनायक

वे बालक की आरती करके निछावर करती हैं और बारबार बालक के चरणों पर गिरती हैं। मागध, सूत, बन्दीजन और गवैये रामचन्द्रजी के पवित्र गुणों का गान करते हैं।

सरबस दान दीन्ह सब काहू ❀ जेहिं पावा राखा नहिं ताहू
मृगमद चंदन कुंकुम कीचा ❀ मची सकल बीथिन्ह बिच बीचा

सब किसी ने हर्ष के मारे अपना सर्वस्व दान कर दिया। जिसने पाया उसने भी नहीं रक्खा (लुटा दिया)। गली-गली में बीच-बीच में कस्तूरी चन्दन और केसर की कीच मच गई। [पहली चौपाई में अत्युक्ति अलंकार]



गृह गृह बाज बधाव सुभ प्रगटे सुखमाकंद।
हरषवंत सब जहँ तहँ नगर नारि नर बृन्द।१९४।

घर-घर में मंगलमय बधावा बजने लगा। शोभा के मूल भगवान् प्रकट हुये हैं। नगर के स्त्री-पुरुषों के झुण्ड के झुण्ड जहाँ-तहाँ आनन्दमग्न हो रहे हैं।

---

1. बन्दनवार।

कैकय सुता सुमित्रा दोऊ ❁ सुन्दर सुत जनमत भइँ ओऊ[1]
वह सुख संपति समय समाजा ❁ कहि न सकइँ सारद अहिराजा

कैकेयी और सुमित्रा इन दोनों ने भी सुन्दर पुत्रों को जन्म दिया। उस सुख, सम्पत्ति, समय और समाज का वर्णन सरस्वती और शेष भी नहीं कर सकते।

अवधपुरी सोहइ एहि भाँती ❁ प्रभुहि मिलन आई जनु राती
देखि भानु जनु मन सकुचानी ❁ तदपि बनी[2] संध्या अनुमानी

अवधपुरी इस प्रकार शोभित हुई, मानो रात्रि प्रभु से मिलने के लिये आई थी पर सूर्य को देखकर मानो मन में सकुचा गई। फिर भी ऐसा जान पड़ता है कि वह (संकोच के मारे) संध्या बन गई है।

अगर धूप बहु जनु अँधियारी ❁ उड़इ अबीर मनहुँ अरुनारी
मंदिर मनि समूह जनु तारा ❁ नृप गृह कलस सो इंदु उदारा

अगर की धूप का बहुत-सा धुवाँ मानो (संध्या का) अन्धकार है और जो अबीर उड़ रहा है, वह ललाई है। महलों में जो मणियों के समूह हैं, वे मानो तारागण हैं, और राजा के महल का जो कलश है, वही मानो दिव्य चन्द्रमा है।

भवन वेद धुनि अति मृदु बानी ❁ जनु खग मुखर समय जनु सानी
कौतुक देखि पतंग भुलाना ❁ एक मास तेइ जात न जाना

राजभवन में जो अति कोमल वाणी से वेदध्वनि हो रही है, वह मानो पक्षियों की चहचहाहट है, जो (सन्ध्या के) समय में सनी हुई है। यह कौतुक देखकर सूर्य भी भूल गया। एक महीना बीत गया और उसे पता न चला।

दो॰ मास दिवस कर दिवस भा मरम न जानइ कोइ।
रथ समेत रबि थाकेउ निसा कवन बिधि होइ॥१९५॥

एक महीने का एक दिन हुआ। कोई इस मर्म को नहीं जानता। सूर्य अपने रथ-सहित वहीं रुक गया, तो रात किस प्रकार होती?

[यहाँ 'मास दिवस' का अर्थ बारह दिन भी हो सकता है। पुत्र-जन्म पर

१. वे भी। २. बन गई।

बारह दिन तक उत्सव मनाया जाता है। सो बारह दिनों तक ऐसी चहल-पहल रही कि पता ही न चला, कब रात हुई, कब दिन।]

यह रहस्य काहू नहिं जाना ❀ दिनमनि[1] चले करत गुन गाना
देखि महोत्सव सुर मुनि नागा ❀ चले भवन बरनत निज भागा

यह रहस्य किसी ने नहीं जाना। सूर्य रामचन्द्रजी का गुण-गान करते हुये चले। यह महोत्सव देखकर देवता, मुनि और नाग अपना भाग्य सराहते हुये अपने-अपने घर चले।

औरउ एक कहउँ निज चोरी ❀ सुनु गिरिजा अति दृढ़ मति तोरी
काकभुसुण्डि संग हम दोऊ ❀ मनुज रूप जानइ नहिं कोऊ

हे पार्वती! तुम्हारी बुद्धि बहुत दृढ़ है, सुनो। मैं अपनी एक और चोरी भी कहता हूँ। काकभुशुण्डि और मैं, दोनों मनुष्यरूप में वहाँ साथ-साथ थे, पर इस बात को कोई जान नहीं सका।

परमानंद प्रेम सुख फूले ❀ बीथिन्ह फिरहिं मगन मन भूले
यह सुभ चरित जान पै सोई ❀ कृपा राम कै जापर होई

परम आनन्द और प्रेम के सुख में फूले हुये हम दोनों मन में मगन होकर गलियों में भूले हुये फिरते थे। यह शुभ चरित्र वही जान सकता है, जिस पर राम की कृपा हो।

तेहि अवसर जो जेहि बिधि आवा ❀ दीन्ह भूप जो जेहि मन भावा
गज रथ तुरँग हेम गो हीरा ❀ दीन्हे नृप नाना बिधि चीरा[2]

उस अवसर पर जो जिस प्रकार आया, और जिसके मन को जो अच्छा लगा, राजा ने उसे वही दिया। राजा ने हाथी, रथ, घोड़ा, सोना, गाय, हीरा और भाँति-भाँति के वस्त्र दिये।

दो०— मन संतोष सबन्हिके जहँ तहँ देहिं असीस।
सकल तनय चिरजीवहु तुलसिदास के ईस ॥१९६॥

राजा ने सबके मन को संतुष्ट किया। सब लोग जहाँ-तहाँ आशीर्वाद दे रहे थे कि सब पुत्रो! चिरंजीव हो; वे तुलसीदास के स्वामी हैं।

---

१. सूर्य। २. वस्त्र।

कछुक दिवस बीते एहि भाँती ❀ जात न जानिअ दिन अरु राती
नामकरन कर अवसरु जानी ❀ भूप बोलि पठए मुनि ग्यानी

इस प्रकार कुछ दिन बीत गये। दिन और रात का जाना मालूम न होता था। नामकरण का अवसर जानकर राजा ने ज्ञानी वशिष्ठ मुनि को बुला भेजा।

करि पूजा भूपति अस भाषा ❀ धरिअ नाम जो मुनि गुनि राखा
इन्हके नाम अनेक अनूपा ❀ मैं नृप कहब स्वमति अनुरूपा

मुनि का सत्कार करके राजा ने ऐसा कहा—हे मुनि! आपने मन में जो विचार रक्खे हों, वह नाम रखिये। मुनि ने कहा—इनके नाम अनेक और अनुपम हैं। हे राजा! मैं अपनी बुद्धि के अनुसार कहूँगा।

जो आनंद सिंधु सुखरासी ❀ सीकर[1] तें त्रैलोक सुपासी
सो सुखधाम राम अस नामा ❀ अखिल लोक दायक बिस्रामा

ये जो आनन्द के समुद्र और सुख की राशि हैं और जिन आनन्द-सिन्धु के एक बूँद से तीनों लोक सुखी होते हैं, उन सुख के धाम का नाम राम है, जो सम्पूर्ण लोकों को शान्ति देने वाले हैं।

बिस्व भरन पोषन कर जोई ❀ ताकर नाम भरत अस होई
जाके सुमिरन तें रिपु नासा ❀ नाम सत्रुहन बेद प्रकासा

जो संसार का भरण-पोषण करता है, उसका नाम भरत होगा। जिसे स्मरण करने से शत्रु का नाश होता है, उनका नाम वेदों में प्रसिद्ध 'शत्रुघ्न' है।

दो॰ लच्छन[2] धाम राम प्रिय सकल जगत आधार।
गुरु बसिष्ठ तेहि राखयउ लछिमन नाम उदार।१९७

जो शुभ लक्षणों के धाम श्रीराम के प्यारे और सारे जगत् के आधार हैं, उनका श्रेष्ठ नाम गुरु वशिष्ठ ने लक्ष्मण रक्खा।

धरे नाम गुर हृदयँ बिचारी ❀ बेद तत्त्व नृप तव सुत चारी
मुनि धन जन सरबस सिव प्राना ❀ बाल केलि रस तेहिं सुख माना

गुरु ने हृदय में विचारकर ये नाम रक्खे। और कहा—हे राजन्! तुम्हारे चारों पुत्र वेद के तत्त्वरूप हैं। जो मुनियों के धन, भक्तों के सर्वस्व और शिवजी

---

१. बूँद। २. लक्षण।

के प्राण हैं। वे बाल-लीला के रस में सुख मान रहे हैं।

बारेहि[1] तें निज हित पति जानी ❀ लछिमन राम चरन रति मानी
भरत शत्रुहन दूनउ भाई ❀ प्रभु सेवक जसि प्रीति बड़ाई

बचपन ही से रामचन्द्र को अपना परम हितैषी स्वामी जानकर लक्ष्मण ने उनके चरणों में प्रीति लगाई। भरत और शत्रुघ्न दोनों भाइयों में स्वामी और सेवक की जैसी प्रीति की प्रशंसा है, वैसी प्रीति हुई।

स्याम गौर सुन्दर दोउ जोरी ❀ निरखहिं छबि जननी तृन तोरी
चारिउ सील रूप गुन धामा ❀ तदपि अधिक सुखसागर रामा

श्याम और गोरे शरीर वाली दोनों सुन्दर जोड़ियों की शोभा मातायें तृण तोड़कर (जिसमें दीठ न लग जाय) देखती हैं। यों तो चारों ही पुत्र शील, रूप और गुण के धाम हैं, पर तो भी सुख के समुद्र रामचन्द्रजी सबसे अधिक थे।

हृदयँ अनुग्रह इंदु[2] प्रकासा ❀ सूचत किरन मनोहर हासा
कबहुँ उछंग कबहुँ बर पलना ❀ मातु दुलारइ कहि प्रिय ललना

उनके हृदय में कृपा-रूपी चन्द्रमा प्रकाशित है। उनका मनोहर हास्य उसकी किरणों को सूचित करता है। कभी गोद में, कभी सुन्दर हिंडोले पर बैठाकर माता प्यारे और लाल कहकर दुलार करती हैं।

दो० ब्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुन बिगत बिनोद।
सो अज प्रेम भगति बस कौसल्या के गोद॥१९८॥

जो सर्वव्यापक, निरंजन, निर्गुण और हर्ष-विषाद से रहित अजन्मा ब्रह्म हैं, वह प्रेम और भक्ति के वश कौशल्या की गोद में खेल रहे हैं।

काम कोटि छबि स्याम सरीरा ❀ नील कंज बारिद गंभीरा
अरुन चरन पंकज नख जोती ❀ कमल दलन्हि बैठे जनु मोती

उनके श्याम शरीर की शोभा करोड़ों कामदेवों के समान, नीले कमल के समान और जल से भरे हुये मेघ के समान है। लाल-लाल चरण-कमलों के नख की ज्योति ऐसी मालूम होती है, जैसे कमल के पत्तों पर मोती बैठे हों।

रेख कुलिस ध्वज अंकुस सोहै ❀ नूपुर धुनि सुनि मुनि मन मोहै
कटि किंकिनी उदर त्रय रेखा ❀ नाभि गँभीर जान जिन्ह देखा

१. बचपन से। २. चन्द्रमा।

उनके पाँवों के तलवों में बज्र, ध्वजा और अंकुश की रेखायें शोभायमान हैं। नूपुर की ध्वनि सुनकर मुनियों का भी मन मोहित हो जाता है। कमर में करधनी और पेट में तीन रेखायें हैं। नाभि की गम्भीरता को तो वही जानता है, जिसने उसे देखा है।

भुज बिसाल भूषन जुत भूरी[1] ❀ हियँ हरि नख अति सोभा रूरी
उर मनिहार पदिक[2] की सोभा ❀ बिप्र चरन देखत मन लोभा

बहुत से गहनों से युक्त उनकी भुजायें बड़ी विशाल हैं। हृदय पर बाघ का नख बहुत शोभा दे रहा है। छाती पर चौकी से युक्त मणियों का हार सुशोभित है, और ब्राह्मण (भृगु) के चरणों की छाप देखते ही मन लुभा जाता है।

कंबु कंठ अति चिबुक सुहाई ❀ आनन अमित मदन[3] छबि छाई
दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे ❀ नासा तिलक को बरनै पारे

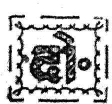
कंठ शंख के समान और ठुड्डी बहुत ही सुन्दर है। मुँह पर असंख्य कामदेवों की छटा छायी हुई है। मुँह में दो-दो दाँत हैं, लाल-लाल ओंठ हैं। नाक और तिलक का तो वर्णन ही कौन कर सकता है?

सुन्दर स्रवन सुचारु कपोला ❀ अति प्रिय मधुर तोतरे बोला
चिक्कन कच कुञ्चित गभुआरे ❀ बहु प्रकार रचि मातु सँवारे

सुन्दर कान और बहुत ही सुन्दर गाल हैं। मधुर तोतली बोली बहुत ही प्रिय लगती है। चिकने, घुँघराले और घने बाल हैं, जिनको माता ने बहुत प्रकार से सँवार दिया है।

पीत झगुलिआ तनु पहिराई ❀ जानु पानि[4] बिचरनि मोहि भाई
रूप सकहिं नहिं कहि स्रुति सेषा ❀ सो जानहिं सपनेहु जिन्ह देखा

शरीर पर पीली झँगुली पहनाई हुई है। घुटनों और हाथों के बल उनका चलना मुझे बहुत ही अच्छा लगता है। वेद और शेष भी उनके रूप का वर्णन नहीं कर सकते। वही जान सकता है, जिसने कभी स्वप्न में भी देखा हो।



सुख संदोह मोहपर ग्यान गिरा गोतीत।
दम्पति परम प्रेम बस कर सिसु चरित पुनीत।१९९

१. बहुत। २. चौकी, जो हार में लगी होती है। ३. कामदेव। ४. हाथों और घुटनों के बल।

सुख के समूह, मोह से परे, ज्ञान, वाणी, और इन्द्रियों से अतीत होने पर भी वे भगवान् स्त्री-पुरुष (राजा-रानी) के परम प्रेम के वश होकर पवित्र बाल-लीला करते हैं।

एहि बिधि राम जगत पितु माता ❀ कोसलपुर बासिन्ह सुखदाता
जिन्ह रघुनाथ चरन रति मानी ❀ तिन्ह की यह गति प्रगट भवानी

इस प्रकार जगत् के पिता-माता रामचन्द्रजी कोशलपुर-निवासियों को सुख देते हैं। जिन्होंने रामचन्द्रजी के चरणों में प्रीति जोड़ रक्खी है, हे भवानी! उनकी यह प्रत्यक्ष गति है (कि भगवान् उनके प्रेमवश बाल-लीला करके उन्हें आनंद दे रहे हैं।)

रघुपति बिमुख जतन कर कोरी[1] ❀ कवन सकइ भव बन्धन छोरी
जीव चराचर बस कै राखे ❀ सो माया प्रभु सों भय भाखे

रामचन्द्र से विमुख रहकर मनुष्य चाहे करोड़ों उपाय करे, परंतु उसका संसार का बन्धन कौन खोल सकता है? जिस माया ने चराचर जीवों को वश में कर रक्खा है, वह भी भगवान् से भय खाती है।

भृकुटि बिलास नचावइ ताही ❀ अस प्रभु छाँड़ि भजिअ कछु काही
मन क्रम बचन छाँड़ि चतुराई ❀ भजत कृपा करिहहिं रघुराई

भगवान् उस माया को भौंह के इशारे पर नचाते हैं। ऐसे प्रभु को छोड़-कर कहो, किसको भजा जाय? मन, कर्म और वचन से चतुराई छोड़कर भजते ही रामचन्द्र कृपा करेंगे।

एहि बिधि सिसु बिनोद प्रभु कीन्हा ❀ सकल नगरबासिन्ह सुख दीन्हा
लेइ उछंग कबहुँक हलरावै ❀ कबहूँ पालने घालि झुलावै

इस प्रकार से प्रभु ने बाल-क्रीड़ा की और सब नगर-निवासियों को सुख दिया। माता कभी उन्हें गोद में लेकर हिलाती-डुलाती थीं, और कभी हिंडोले में डालकर झुलाती थीं।

दो० प्रेम मगन कौसल्या निसि दिन जात न जान।
सुत सनेह बस माता बालचरित कर गान ॥२००॥

कौशल्या प्रेम में मग्न थीं। रात और दिन बीतना वे नहीं जानती थीं।

---

१. करोड़ों।

उनके पाँवों के तलवों में बज्र, ध्वजा और अंकुश की रेखायें शोभायमान हैं। नूपुर की ध्वनि सुनकर मुनियों का भी मन मोहित हो जाता है। कमर में करधनी और पेट में तीन रेखायें हैं। नाभि की गम्भीरता को तो वही जानता है, जिसने उसे देखा है।

भुज बिसाल भूषन जुत भूरी[1] ❀ हियँ हरि नख अति सोभा रूरी
उर मनिहार पदिक[2] की सोभा ❀ बिप्र चरन देखत मन लोभा

बहुत से गहनों से युक्त उनकी भुजायें बड़ी विशाल हैं। हृदय पर बाघ का नख बहुत शोभा दे रहा है। छाती पर चौकी से युक्त मणियों का हार सुशोभित है, और ब्राह्मण (भृगु) के चरणों की छाप देखते ही मन लुभा जाता है।

कंबु कंठ अति चिबुक सुहाई ❀ आनन अमित मदन[3] छबि छाई
दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे ❀ नासा तिलक को बरनै पारे

कंठ शंख के समान और ठुड्डी बहुत ही सुन्दर है। मुँह पर असंख्य कामदेवों की छटा छायी हुई है। मुँह में दो-दो दाँत हैं, लाल-लाल ओंठ हैं। नाक और तिलक का तो वर्णन ही कौन कर सकता है ?

सुन्दर स्रवन सुचारु कपोला ❀ अति प्रिय मधुर तोतरे बोला
चिक्कन कच कुञ्चित गभुआरे ❀ बहु प्रकार रचि मातु सँवारे

सुन्दर कान और बहुत ही सुन्दर गाल हैं। मधुर तोतली बोली बहुत ही प्रिय लगती है। चिकने, घुँघराले और घने बाल हैं, जिनको माता ने बहुत प्रकार से सँवार दिया है।

पीत झगुलिआ तनु पहिराई ❀ जानु पानि[4] बिचरनि मोहि भाई
रूप सकहिं नहिं कहि स्रुति सेषा ❀ सो जानइ सपनेहु जिन्ह देखा

शरीर पर पीली झँगुली पहनाई हुई है। घुटनों और हाथों के बल उनका चलना मुझे बहुत ही अच्छा लगता है। वेद और शेष भी उनके रूप का वर्णन नहीं कर सकते। वही जान सकता है, जिसने कभी स्वप्न में भी देखा हो।

दो० सुख संदोह मोहपर ग्यान गिरा गोतीत।
दम्पति परम प्रेम बस कर सिसु चरित पुनीत।१९९

---

१. बहुत। २. चौकी, जो हार में लगी होती है। ३. कामदेव। ४. हाथों और घुटनों के बल।

सुख के समूह, मोह से परे, ज्ञान, वाणी, और इन्द्रियों से अतीत होने पर भी वे भगवान् स्त्री-पुरुष (राजा-रानी) के परम प्रेम के वश होकर पवित्र बाल-लीला करते हैं।

एहि बिधि राम जगत पितु माता ❀ कोसलपुर बासिन्ह सुखदाता
जिन्ह रघुनाथ चरन रति मानी ❀ तिन्ह की यह गति प्रगट भवानी

इस प्रकार जगत् के पिता-माता रामचन्द्रजी कोशलपुर-निवासियों को सुख देते हैं। जिन्होंने रामचन्द्रजी के चरणों में प्रीति जोड़ रक्खी है, हे भवानी ! उनकी यह प्रत्यक्ष गति है (कि भगवान् उनके प्रेमवश बाल-लीला करके उन्हें आनंद दे रहे हैं।)

रघुपति बिमुख जतन कर कोरी[1] ❀ कवन सकइ भव बन्धन छोरी
जीव चराचर बस कै राखे ❀ सो माया प्रभु सों भय भाखे

रामचन्द्र से विमुख रहकर मनुष्य चाहे करोड़ों उपाय करे, परंतु उसका संसार का बन्धन कौन खोल सकता है ? जिस माया ने चराचर जीवों को वश में कर रक्खा है, वह भी भगवान् से भय खाती है।

भृकुटि बिलास नचावइ ताही ❀ अस प्रभु छाँड़ि भजिअ कहु काही
मन क्रम बचन छाँड़ि चतुराई ❀ भजत कृपा करिहहिं रघुराई

भगवान् उस माया को भौंह के इशारे पर नचाते हैं। ऐसे प्रभु को छोड़-कर कहो, किसको भजा जाय ? मन, कर्म और वचन से चतुराई छोड़कर भजते ही रामचन्द्र कृपा करेंगे।

एहि बिधि सिसु बिनोद प्रभु कीन्हा ❀ सकल नगरबासिन्ह सुख दीन्हा
लेइ उछंग कबहुँक हलरावै ❀ कबहूँ पालने घालि झुलावै

इस प्रकार से प्रभु ने बाल-क्रीड़ा की और सब नगर-निवासियों को सुख दिया। माता कभी उन्हें गोद में लेकर हिलाती-डुलाती थीं, और कभी हिंडोले में डालकर झुलाती थीं।

दो०— प्रेम मगन कौसल्या निसि दिन जात न जान।
सुत सनेह बस माता बालचरित कर गान ॥२००॥

कौशल्या प्रेम में मग्न थीं। रात और दिन बीतना वे नहीं जानती थीं।

---

१. करोड़ों।

पुत्र-प्रेम के वश में कौशल्या उनकी बाल-लीलाओं का गान किया करती थीं।

एक बार जननी अन्हवाए ❀ करि सिंगार पलनाँ पौढ़ाए
निज कुल इष्ट देव भगवाना ❀ पूजा हेतु कीन्ह अस्नाना

एक बार माता ने रामचन्द्रजी को नहला-धुलाकर, शृङ्गार करके, हिंडोले पर पौढ़ा दिया। फिर अपने कुल के इष्ट-देव भगवान् की पूजा के लिये स्नान किया।

करि पूजा नैवेद्य चढ़ावा ❀ आपु गई जहँ पाक बनावा
बहुरि मातु तहँवाँ चलि आई ❀ भोजन करत देखि सुत जाई

पूजा करके नैवेध चढ़ाया। फिर स्वयं वहाँ गईं, जहाँ रसोई बनाई गई थी। फिर माता वहीं (पूजा के स्थान में) लौट आईं और फिर वहाँ जाने पर पुत्र को भोजन करते देखा।

गै जननी सिसु पहँ भयभीता ❀ देखा बाल तहाँ पुनि सूता
बहुरि आइ देखा सुत सोई ❀ हृदय कंप मन धीर न होई

माता भयभीत होकर पुत्र के पास गई, तो वहाँ बालक को सोया हुआ देखा। फिर लौटकर देखती हैं, तो वही पुत्र वहाँ (भोजन कर रहा) है। उनका हृदय काँपने लगा और मन में धैर्य न रहा।

इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा ❀ मतिभ्रम मोरि कि आन बिसेषा
देखि राम जननी अकुलानी ❀ प्रभु हँसि दीन्ह मधुर मुसुकानी

(माता सोचने लगी—) यहाँ और वहाँ मैंने दो बालक देखे। यह मेरी बुद्धि का भ्रम है या और कोई विशेष कारण है। प्रभु राम ने माता को घबड़ाई हुई देखकर मधुर मुसकान से हँस दिया।

दो॰ देखरावा निज मातहीं अदभुत रूप अखंड।
रोम रोम प्रति लागहीं कोटि कोटि ब्रह्मंड ।२०१

तब उन्होंने माता को अपना अखंड अद्भुत रूप दिखलाया। एक-एक रोम में करोड़ों ब्रह्मांड लगे थे।

अगनित रबि ससि सिव चतुरानन ❀ बहु गिरि सरित सिंधु महि कानन
काल करम गुन ग्यान सुभाऊ ❀ सोउ देखा जो सुना न काऊ

अगणित सूर्य, चन्द्रमा, शिव, ब्रह्मा, बहुत-से पर्वत, नदियाँ, समुद्र, पृथ्वी,

बन, काल, कर्म, गुण, ज्ञान और स्वभाव आदि के साथ वह भी देखा, जिसे कभी किसी ने सुना भी नहीं था।

देखी माया सब बिधि गाढ़ी ❀ अति सभीत जोरे कर ठाढ़ी
देखा जीव नचावइ जाही ❀ देखी भगति जो छोरइ ताही

सब प्रकार से बलवती माया को देखा जो अत्यन्त भयभीत होकर (भगवान् के सामने) हाथ जोड़े खड़ी है। जीव को भी देखा, जिसे वह माया नचाती है और भक्ति को भी देखा, जो उस जीव को माया से छुड़ा देती है।

तन पुलकित मुख बचन न आवा ❀ नयन मूँदि चरनन्हि सिरु नावा
बिसमय वंति देखि महतारी ❀ भए बहुरि सिसु रूप खरारी

माता का शरीर पुलकित हो आया। मुख से वचन नहीं निकला। आँखें मूँदकर उसने रामचन्द्रजी के चरणों में सिर नवाया। माता को आश्चर्यचकित देखकर खर राक्षस के शत्रु भगवान् फिर बाल-रूप हो गये।

अस्तुति करि न जाइ भय माना ❀ जगत पिता मैं सुत करि जाना
हरि जननी बहु बिधि समुझाई ❀ यह जनि कतहुँ कहसि सुनु माई

माता से स्तुति भी नहीं की जाती। उसे भय लगा कि जगत् के पिता को मैंने पुत्र करके जाना। भगवान् ने माता को बहुत प्रकार से समझाया और कहा—हे माँ! यह बात कहीं पर कहना नहीं।

दो० बार बार कौसल्या बिनय करइ कर जोरि।
अब जनि कबहूँ ब्यापही प्रभु मोहिं माया तोरि।२०२

कौशल्या बार-बार हाथ जोड़कर विनय करती है कि हे प्रभु! तुम्हारी माया अब मुझे कभी न व्यापे।

बालचरित हरि बहु बिधि कीन्हा ❀ अति आनँद दासन्ह कहँ दीन्हा
कछुक काल बीते सब भाई ❀ बड़े भए परिजन सुखदाई

भगवान् ने बहुत प्रकार से बाल-लीलाएँ कीं; और दासों को बहुत सुख दिया। कुछ समय बीतने पर कुटुम्बियों को सुख देने वाले चारों भाई बड़े हुये।

चूड़ाकरन कीन्ह गुरु जाई ❀ बिप्रन्ह पुनि दछिना बहु पाई
परम मनोहर चरित अपारा ❀ करत फिरत चारिउ सुकुमारा

तब गुरु ने आकर चूड़ाकर्म-संस्कार किया। ब्राह्मणों ने फिर बहुत-सी

दक्षिणा पाई। चारों सुन्दर राजकुमार बड़े मनोहर और अपार चरित करते फिरते हैं।

मन क्रम बचन अगोचर जोई ❀ दसरथ अजिर बिचर प्रभु सोई
भोजन करत बोल जब राजा ❀ नहिं आवत तजि बाल समाजा

जो मन, कर्म और वचन तथा इन्द्रियों से परे हैं, वही प्रभु दशरथ के आँगन में विचरण कर रहे हैं। भोजन करते समय जब राजा बुलाते हैं, तब वे अपने बाल-सखाओं का समाज छोड़कर नहीं आते।

कौसल्या जब बोलन जाई ❀ ठुमुकि ठुमुकि प्रभु चलहिं पराई
निगम नेति सिव अंत न पावा ❀ ताहि धरै जननी हठि धावा
धूसर धूरि भरें तनु आए ❀ भूपति बिहँसि गोद बैठाए

कौशल्या जब बुलाने जाती हैं, तब प्रभु ठुमक-ठुमक भाग चलते हैं। जिसको वेद 'नेति' (इतना ही नहीं) कहते हैं, और शिवजी ने जिसका अन्त नहीं पाया, माता उसे हठपूर्वक पकड़ने दौड़ती हैं। वे शरीर में धूल लपेटे हुये आये और राजा ने हँसकर उन्हें गोद में बैठा लिया।

दो॰ भोजन करत चपल चित इत उत अवसरु पाइ।
भाजि चले किलकात मुख दधि ओदन[1] लपटाइ २०३

भोजन करते हुये, चंचल चित्त से, मुख में दही और भात लगाये किलकारी मारते हुये वे इधर-उधर अवसर पाकर भाग चलते हैं।

बालचरित अति सरल सुहाए ❀ सारद सेष संभु स्रुति गाए
जिन्ह कर मन इन्ह सन नहिं राता ❀ ते जन बंचित किए बिधाता

रामजी की बहुत ही सरल, सुन्दर और भोली बाल-लीलाओं का सरस्वती, शेष, शिवजी और वेदों ने गान किया है। जिनका मन इन चरित्रों में अनुरक्त नहीं हुआ, ब्रह्मा ने उन मनुष्यों को सुख से वंचित कर दिया है।

भए कुमार जबहिं सब भ्राता ❀ दीन्ह जनेऊ गुर पितु माता
गुर गृहँ गए पढ़न रघुराई ❀ अलप काल बिद्या सब आई

सब भाई जब कुमारावस्था के हुये, तब गुरु, पिता और माता ने उनका यज्ञोपवीत-संस्कार कर दिया। रामचन्द्रजी गुरु के घर में विद्या पढ़ने के लिये गये और थोड़े ही समय में उन्हें सब विद्यायें आ गईं।

---

१. भात।

जाकी सहज स्वास स्रुति चारी ❀ सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी
बिद्या बिनय निपुन गुन सीला ❀ खेलहिं खेल सकल नृपलीला

चारों वेद जिनकी स्वाभाविक साँस हैं, वे भगवान् पढ़ें, यह बड़े कौतूहल की बात है। वे विद्या, विनय, गुण और शील में बड़े निपुण हैं, और सब राजाओं की लीलाओं ही के खेल हैं।

करतल बान धनुष अति सोहा ❀ देखत रूप चराचर मोहा
जिन्ह बीथिन्ह बिहरहिं सब भाई ❀ थकित होहिं सब लोग लुगाई

हाथों में बाण और धनुष बहुत ही शोभा देते हैं। उनका रूप देखते ही चराचर मोहित हो जाते हैं। वे सब भाई जिन गलियों में खेलते हैं, उनको देख कर उन गलियों के सब स्त्री-पुरुष आनन्द से शिथिल हो जाते हैं।

दो० **कोसलपुर बासी नर नारि बृद्ध अरु बाल।**
प्रानहुँ तें प्रिय लागहिं सब कहँ राम कृपाल॥२०४॥

अयोध्या के निवासी पुरुष-स्त्री, वृद्ध और बालक सबको कृपालु राम प्राणों से भी अधिक प्यारे लगते हैं।

बंधु सखा सँग लेहिं बुलाई ❀ बन मृगया[1] नित खेलहिं जाई
पावन मृग मारहिं जिय जानी ❀ दिन प्रति नृपहिं देखावहिं आनी

रामचन्द्रजी भाइयों और इष्ट-मित्रों को साथ बुला लेते हैं और नित्य बन में जाकर शिकार खेलते हैं। मन में पवित्र समझ करके मृगों को मारते हैं और प्रतिदिन राजा को लाकर दिखलाते हैं।

जे मृग राम बान के मारे ❀ ते तनु तजि सुरलोक सिधारे
अनुज सखा सँग भोजन करहीं ❀ मातु पिता अग्या[2] अनुसरहीं

जो मृग रामचन्द्रजी के बाणों से मारे जाते थे, वे शरीर छोड़कर देवलोक को चले जाते थे। रामचन्द्रजी अपने छोटे भाइयों और सखाओं के साथ भोजन करते हैं और माता-पिता की आज्ञा का पालन करते हैं।

जेहि बिधि सुखी होंहि पुर लोगा ❀ करहिं कृपानिधि सोइ संजोगा
बेद पुरान सुनहिं मन लाई ❀ आपु कहहिं अनुजन्ह समुझाई

जिस प्रकार नगर के लोग सुखी हों; कृपा के भण्डार रामचन्द्रजी वैसा

१. शिकार। २. आज्ञा।

ही संयोग उपस्थित करते हैं। वे मन लगाकर वेद और पुराण सुनते हैं और फिर स्वयं छोटे भाइयों को सब समझाकर कहते हैं।

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा ❀ मातु पिता गुरु नावहिं माथा
आयसु माँगि करहिं पुर काजा ❀ देखि चरित हरषइ मन राजा

रामचन्द्रजी प्रात:काल उठकर माता-पिता और गुरु को मस्तक नवाते हैं और आज्ञा लेकर नगर का काम करते हैं। उनके चरित्र देख-देखकर राजा मन में हर्षित होते हैं।

दो॰ ब्यापक अकल अनीह अज निर्गुन नाम न रूप।
भगत हेतु नाना बिधि करत चरित्र अनूप ॥२०५॥

जो सर्वव्यापक, अखंड, इच्छारहित, अजन्मा, निराकार और जिसका न नाम है न रूप, वही भगवान् भक्त के लिये तरह-तरह के अनुपम चरित्र करते हैं।

यह सब चरित कहा मैं गाई ❀ आगिलि कथा सुनहु मन लाई
बिस्वामित्र महामुनि ग्यानी ❀ बसहिं बिपिन सुभ आस्रम जानी

यह सब चरित्र मैं (तुलसीदास) ने गाकर कहा। अब आगे की कथा मन लगाकर सुनो। बड़े ज्ञानी मुनि विश्वामित्र बन में शुभ आश्रम जानकर बसते थे।

जहँ जप जग्य जोग मुनि करहीं ❀ अति मारीच सुबाहुहि डरहीं
देखत जग्य निसाचर धावहिं ❀ करहिं उपद्रव मुनि दुख पावहिं

वहाँ वे मुनि जप, यज्ञ और योग-साधन करते थे, परन्तु मारीच और सुबाहु से बहुत डरते थे। यज्ञ देखते ही राक्षस दौड़ पड़ते थे और उपद्रव मचाते थे, जिससे मुनि दुःख पाते थे।

गाधितनय मन चिंता ब्यापी ❀ हरि बिनु मरहिं न निसिचर पापी
तब मुनिबर मन कीन्ह बिचारा ❀ प्रभु अवतरेउ हरन महि भारा

गाधि के पुत्र विश्वामित्र के मन में चिन्ता समाई कि ये पापी राक्षस भगवान् के मारे बिना न मरेंगे। तब श्रेष्ठ मुनि ने मन में विचार किया कि पृथ्वी का भार हरने के लिये भगवान् ने तो अवतार लिया है।

एहूँ मिस देखौं पद जाई ❀ करि बिनती आनउँ दोउ भाई
ग्यान बिराग सकल गुन अयना ❀ सो प्रभु मैं देखब भरि नयना

इसी बहाने चलकर उनके चरणों का दर्शन भी करूँ और विनय करके दोनों भाइयों को ले भी आऊँ। अहा ! ज्ञान, वैराग्य और सब गुणों के घर जो प्रभु भगवान् हैं, उनको मैं आँख भरकर देखूँगा भी।

दो० **बहु बिधि करत मनोरथ जात लागि नहिं बार।**
करि मज्जन सरजू जल गए भूप दरबार ॥२०६॥

बहुत प्रकार से मनोरथ करते हुये जाने में देर नहीं लगी। सरयू के जल में स्नान करके वे राजा के दरबार में पहुँचे।

मुनि आगमन सुना जब राजा ❀ मिलन गयउ लेइ बिप्र समाजा
करि दण्डवत मुनिहिं सनमानी ❀ निज आसन बैठारेन्हि आनी[1]

राजा ने जब मुनि का आना सुना, तब वे ब्राह्मणों का समाज साथ लेकर मिलने गये, और दंडवत् करके, मुनि का सत्कार करके, उन्हें लाकर राजा ने अपने आसन पर बैठाया।

चरन पखारि कीन्हि अति पूजा ❀ मो सम आजु धन्य नहिं दूजा
बिबिध भाँति भोजन करवावा ❀ मुनिबर हृदय हरष अति पावा

चरणों को धोकर बहुत पूजा की और कहा—आज मेरे समान धन्य दूसरा नहीं है। फिर तरह-तरह के भोजन करवाये, जिससे श्रेष्ठ मुनि ने हृदय में बड़ा हर्ष प्राप्त किया।

पुनि चरनन्हि मेले[2] सुत चारी ❀ राम देखि मुनि देह बिसारी
भए मगन देखत मुख सोभा ❀ जनु चकोर पूरन ससि लोभा

फिर राजा ने मुनि के चरणों पर चारों पुत्रों को लाकर डाला। रामचन्द्रजी को देखकर मुनि ने अपनी देह की सुधि भुला दी। रामचन्द्रजी के मुख की शोभा देखते हुये वे ऐसे मग्न हो गये, जैसे चकोर पूर्ण चन्द्रमा को देखकर लुभा गया हो।

तब मन हरषि बचन कह राऊ ❀ मुनि अस कृपा न कीन्हेहु काऊ
केहि कारन आगमन तुम्हारा ❀ कहहु सो करत न लावउँ बारा

तब मन में हर्षित होकर राजा ने वचन कहा—हे मुनि ! ऐसी कृपा और

१. लाकर। २. गिराया, डाला।

कभी आपने नहीं की। आज किस कारण से आपका आना हुआ? कहिये, मैं उसे पूरा करने में देरी नहीं लगाऊँगा।

असुर समूह सतावहिं मोही ❁ मैं जाचन आयउँ नृप तोही
अनुज समेत देहु रघुनाथा ❁ निसिचर बध मैं होब सनाथा[1]

मुनि ने कहा—हे राजन्! राक्षसों का समूह मुझे दुःख देता है। इसी लिये मैं तुमसे कुछ माँगने आया हूँ। छोटे भाई-सहित रामचन्द्रजी को मुझे दो। राक्षसों का वध होने पर मैं सनाथ हो जाऊँगा।

दो० देहु भूप मन हरषित तजहु मोह अग्यान।
धर्म सुजस प्रभु तुम कौं इन्ह कहँ अति कल्यान॥

हे राजन्! प्रसन्न मन से दो। मोह और अज्ञान छोड़ दो। हे स्वामी! तुमको धर्म और सुयश प्राप्त होगा और इनका परम कल्याण होगा।

सुनि राजा अति अप्रिय बानी ❁ हृदय कंप मुख दुति कुम्हिलानी
चौथेपन पायउँ सुत चारी ❁ बिप्र बचन नहिं कहेहु बिचारी

इस अत्यन्त अप्रिय वाणी को सुनकर राजा का हृदय काँप उठा और उनके मुख की कांति फीकी पड़ गई। उन्होंने कहा—हे ब्राह्मण! मैंने चौथेपन में चार पुत्र पाये हैं, आपने विचारकर वचन नहीं कहा।

माँगहु भूमि धेनु धन कोसा ❁ सरबस देउँ आजु सह रोसा[2]
देह प्रान तें प्रिय कछु नाहीं ❁ सोउ मुनि देउँ निमिष एक माहीं

हे मुनि! आप पृथ्वी, गाय, धन और खजाना माँग लीजिये। मैं आज बड़े हर्ष के साथ अपना सर्वस्व दे दूंगा। देह और प्राण से अधिक प्यारा कुछ भी नहीं होता, मैं उसे भी एक पल में दे दूंगा।

सब सुत प्रिय मोहि प्रान की नाईं ❁ राम देत नहिं बनइ गुसाईं
कहँ निसिचर अति घोर कठोरा ❁ कहँ सुंदर सुत परम किसोरा

मुझे सभी पुत्र प्राण की तरह प्यारे हैं; तो भी हे महाराज! राम को देते नहीं बनता। कहाँ अत्यन्त भयानक और क्रूर राक्षस और कहाँ बिलकुल सुकुमार मेरे सुन्दर पुत्र।

---

१. सुरक्षित। २. हर्ष।

सुनि नृप गिरा प्रेम रस सानी ❀ हृदयँ हरष माना मुनि ग्यानी
तब बसिष्ठ बहु बिधि समुझावा ❀ नृप संदेह नास कहँ पावा

प्रेम के रस में सनी हुई राजा की वाणी सुनकर, ज्ञानी मुनि ने हृदय में बड़ा हर्ष माना। तब वशिष्ठ ने बहुत प्रकार से राजा को समझाया, जिससे राजा का संदेह नाश को प्राप्त हुआ।

अति आदर दोउ तनय बोलाए ❀ हृदयँ लाइ बहु भाँति सिखाए
मेरे प्राननाथ सुत दोऊ ❀ तुम्ह मुनि पिता आन नहिं कोऊ

राजा ने बहुत आदर के साथ दोनों पुत्रों को बुलाया और हृदय से लगा कर बहुत तरह से उन्हें शिक्षा दी। फिर कहा—दोनों पुत्र मेरे प्राणों के स्वामी हैं, हे मुनि! आप इनके पिता हैं, दूसरे कोई नहीं।

दो॰ सौंपे भूपति रिषिहि सुत बहु बिधि देइ असीस।
जननी भवन गए प्रभु चले नाइ पद सीस॥२०८॥(१)

राजा ने बहुत प्रकार से आशीर्वाद देकर ऋषि को अपने पुत्र सौंपे। फिर प्रभु माता के घर में गये और उनके चरणों में सिर नवाकर चले।

सो॰ पुरुषसिंह दोउ बीर हरषि चले मुनि भय हरन।
कृपासिंधु मतिधीर अखिल बिस्व कारन करन २०८(२)

पुरुषों में सिंह रूप दोनों भाई मुनि का भय हरने के लिये हर्षित होकर चले। वे कृपा के समुद्र, धीर-बुद्धि और सम्पूर्ण जगत् के कारण के भी कारण हैं।

अरुन नयन उर बाहु बिसाला ❀ नील जलज तनु स्याम तमाला
कटि पट पीत कसे बर भाथा ❀ रुचिर चाप सायक दुहुँ हाथा

उनके नेत्र लाल हैं; छाती चौड़ी और भुजायें विशाल हैं; शरीर नीले कमल और तमाल वृक्ष की तरह श्याम है, कमर से पीताम्बर और सुन्दर तरकस कसे हैं। उनके दोनों हाथों में सुन्दर धनुष और बाण हैं।

स्याम गौर सुन्दर दोउ भाई ❀ बिस्वामित्र महानिधि पाई
प्रभु ब्रह्मन्यदेव[1] मैं जाना ❀ मोहि निति[2] पिता तजेउ भगवाना

१. ब्राह्मणों के भक्त। २. लिये।

कभी आपने नहीं की। आज किस कारण से आपका आना हुआ? कहिये, मैं उसे पूरा करने में देरी नहीं लगाऊँगा।

असुर समूह सतावहिं मोही ❁ मैं जाचन आयउँ नृप तोही
अनुज समेत देहु रघुनाथा ❁ निसिचर बध मैं होब सनाथा[1]

मुनि ने कहा—हे राजन्! राक्षसों का समूह मुझे दुःख देता है। इसी लिये मैं तुमसे कुछ माँगने आया हूँ। छोटे भाई-सहित रामचन्द्रजी को मुझे दो। राक्षसों का वध होने पर मैं सनाथ हो जाऊँगा।

दो॰ देहु भूप मन हरषित तजहु मोह अग्यान।
धर्म सुजस प्रभु तुम कौं इन्ह कहँ अति कल्यान॥

हे राजन्! प्रसन्न मन से दो। मोह और अज्ञान छोड़ दो। हे स्वामी! तुमको धर्म और सुयश प्राप्त होगा और इनका परम कल्याण होगा।

सुनि राजा अति अप्रिय बानी ❁ हृदय कंप मुख दुति कुम्हिलानी
चौथेपन पायउँ सुत चारी ❁ बिप्र बचन नहिं कहेहु बिचारी

इस अत्यन्त अप्रिय वाणी को सुनकर राजा का हृदय काँप उठा और उनके मुख की कांति फीकी पड़ गई। उन्होंने कहा—हे ब्राह्मण! मैंने चौथेपन में चार पुत्र पाये हैं, आपने विचारकर वचन नहीं कहा।

माँगहु भूमि धेनु धन कोसा ❁ सरबस देउँ आजु सह रोसा[2]
देह प्रान तें प्रिय कछु नाहीं ❁ सोउ मुनि देउँ निमिष एक माहीं

हे मुनि! आप पृथ्वी, गाय, धन और खजाना माँग लीजिये। मैं आज बड़े हर्ष के साथ अपना सर्वस्व दे दूंगा। देह और प्राण से अधिक प्यारा कुछ भी नहीं होता, मैं उसे भी एक पल में दे दूंगा।

सब सुत प्रिय मोहि प्रान की नाईं ❁ राम देत नहिं बनइ गुसाईं
कहँ निसिचर अति घोर कठोरा ❁ कहँ सुंदर सुत परम किसोरा

मुझे सभी पुत्र प्राण की तरह प्यारे हैं; तो भी हे महाराज! राम को देते नहीं बनता। कहाँ अत्यन्त भयानक और क्रूर राक्षस और कहाँ बिलकुल सुकुमार मेरे सुन्दर पुत्र।

---

१. सुरक्षित। २. हर्ष।

सुनि नृप गिरा प्रेम रस सानी ❀ हृदयँ हरष माना मुनि ग्यानी
तब बसिष्ठ बहु बिधि समुझावा ❀ नृप संदेह नास कहँ पावा

प्रेम के रस में सनी हुई राजा की वाणी सुनकर, ज्ञानी मुनि ने हृदय में बड़ा हर्ष माना। तब वशिष्ठ ने बहुत प्रकार से राजा को समझाया, जिससे राजा का संदेह नाश को प्राप्त हुआ।

अति आदर दोउ तनय बोलाए ❀ हृदयँ लाइ बहु भाँति सिखाए
मेरे प्राननाथ सुत दोऊ ❀ तुम्ह मुनि पिता आन नहिं कोऊ

राजा ने बहुत आदर के साथ दोनों पुत्रों को बुलाया और हृदय से लगा कर बहुत तरह से उन्हें शिक्षा दी। फिर कहा—दोनों पुत्र मेरे प्राणों के स्वामी हैं, हे मुनि! आप इनके पिता हैं, दूसरे कोई नहीं।

दो० **सौंपे भूपति रिषिहि सुत बहु बिधि देइ असीस।**
जननी भवन गए प्रभु चले नाइ पद सीस॥२०८॥(१)

राजा ने बहुत प्रकार से आशीर्वाद देकर ऋषि को अपने पुत्र सौंपे। फिर प्रभु माता के घर में गये और उनके चरणों में सिर नवाकर चले।

सो० **पुरुषसिंह दोउ बीर हरषि चले मुनि भय हरन।**
कृपासिंधु मतिधीर अखिल बिस्व कारन करन २०८(२)

पुरुषों में सिंह रूप दोनों भाई मुनि का भय हरने के लिये हर्षित होकर चले। वे कृपा के समुद्र, धीर-बुद्धि और सम्पूर्ण जगत् के कारण के भी कारण हैं।

अरुन नयन उर बाहु बिसाला ❀ नील जलज तनु स्याम तमाला
कटि पट पीत कसे बर भाथा ❀ रुचिर चाप सायक दुहुँ हाथा

उनके नेत्र लाल हैं; छाती चौड़ी और भुजायें विशाल हैं; शरीर नीले कमल और तमाल वृक्ष की तरह श्याम है, कमर से पीताम्बर और सुन्दर तरकस कसे हैं। उनके दोनों हाथों में सुन्दर धनुष और बाण हैं।

स्याम गौर सुन्दर दोउ भाई ❀ बिस्वामित्र महानिधि पाई
प्रभु ब्रह्मन्यदेव[1] मैं जाना ❀ मोहि निति[2] पिता तजेउ भगवाना

१. ब्राह्मणों के भक्त। २. लिये।

श्याम और गौर वर्ण के दोनों भाई सुन्दर हैं। विश्वामित्र ने बड़ा भारी ख़जाना पा लिया। वे सोचने लगे—मैं जान गया कि प्रभु ब्रह्मण्यदेव हैं, मेरे लिये भगवान् ने अपने पिता को भी छोड़ दिया है।

चले जात मुनि दीन्हि देखाई ❀ सुनि ताड़का क्रोध करि धाई
एकहि बान प्रान हरि लीन्हा ❀ दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा

राह में चलते जाते हुये मुनि ने ताड़का को दिखला दिया। वह इनके शब्द सुनते ही क्रोध करके दौड़ी। राम ने एक ही बाण से उसका प्राण हर लिया और उसे दीन जानकर अपना पद (अपना दिव्य स्वरूप) दिया।

तब रिषि निज नाथहि जिय चीन्ही ❀ विद्यानिधि कहुँ विद्या दीन्ही
जातें लाग न छुधा पिपासा ❀ अतुलित बल तनु तेज प्रकासा

तब ऋषि ने मन में अपने स्वामी को पहचाना और विद्या के भण्डार को उन्होंने ऐसी विद्या प्रदान की, जिससे भूख-प्यास न लगे और शरीर में अतुलित बल और तेज का प्रकाश हो।

दो० **आयुध सर्ब समर्पि कै प्रभु निज आस्रम आनि।**
कंद मूल फल भोजन दीन्ह भगत हित जानि॥२०६॥

सब अस्त्र-शस्त्र समर्पण करके मुनि रामचन्द्रजी को अपने आश्रम में ले आये। और उन्हें भक्तों का हितकारी जानकर कंद, मूल और फल का भोजन दिया।

प्रात कहा मुनि सन रघुराई ❀ निर्भय जग्य करहु तुम्ह जाई
होम करन लागे मुनि झारी ❀ आपु रहे मख की रखवारी

सवेरे राम ने मुनि से कहा—आप जाकर निर्भय होकर यज्ञ कीजिये। यह सुनकर सब मुनि हवन करने लगे। स्वयं यज्ञ की रखवाली पर रहे।

सुनि मारीच निसाचर कोही[1] ❀ लै सहाय धावा मुनि द्रोही
बिनु फर बान राम तेहि मारा ❀ सत जोजन गा[2] सागर पारा

यह समाचार पाकर मुनियों का शत्रु क्रोधी राक्षस मारीच अपने सहायकों को लेकर दौड़ा। राम ने बिना फल वाला बाण उसे मारा। वह समुद्र के पार सौ योजन पर जा गिरा।

---

१. क्रोधी। २. गया।

पावक सर सुबाहु पुनि मारा ❀ अनुज निसाचर कटक सँघारा
मारि असुर द्विज निर्भयकारी ❀ अस्तुति करहिं देव मुनि झारी

फिर राम ने सुबाहु को अग्नि-बाण से मारा। छोटे भाई लक्ष्मण ने राक्षसों की सेना का संहार कर डाला। इस प्रकार राम ने राक्षसों को मारकर ब्राह्मणों को निर्भय कर दिया, तब समस्त देवता और मुनि स्तुति करने लगे।

तहँ पुनि कछुक दिवस रघुराया ❀ रहे कीन्हि बिप्रन्ह पर दाया
भगति हेतु बहु कथा पुराना ❀ कहे बिप्र जद्यपि प्रभु जाना

रामचन्द्रजी ने वहाँ कुछ दिनों तक और रहकर ब्राह्मणों पर दया की। भक्ति के कारण ब्राह्मणों ने बहुत-सी कथायें और पुराण कहे, यद्यपि भगवान् सब जानते थे।

तब मुनि सादर कहा बुझाई ❀ चरित एक प्रभु देखिअ जाई
धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा ❀ हरषि चले मुनिवर के साथा

तब मुनि ने आदर-सहित समझाकर कहा कि हे प्रभो! चलकर एक चरित्र देखना चाहिये। धनुष-यज्ञ की बात सुनकर रघुकुल के स्वामी रामचन्द्र श्रेष्ठ मुनि के साथ प्रसन्न होकर चले।

आस्रम एक दीख मग माहीं ❀ खग मृग जीव जंतु तहँ नाहीं
पूछा मुनिहिं सिला प्रभु देखी ❀ सकल कथा मुनि कही बिसेषी

राह में एक आश्रम दिखाई पड़ा। पर वहाँ पशु-पक्षी, जीव-जन्तु कोई भी नहीं था। पत्थर की एक शिला को देखकर प्रभु ने पूछा, तब मुनि ने विस्तार-सहित सब कथा कही।

दो०- गौतमनारी सापबस उपल[1] देह धरि धीर।
चरन कमल रज चाहती कृपा करहु रघुबीर ॥२१०॥

हे राम! गौतम मुनि की स्त्री अहल्या शाप के वश में पत्थर का शरीर धारण किये हुए बड़े धीरज से आपके कमलरूपी चरणों की धूलि चाहती है। इस पर कृपा कीजिये।

छंद—परसत पद पावन सोक नसावन प्रगट भई तपपुञ्ज सही
देखत रघुनायक जन सुखदायक सनमुख होइ कर जोरि रही

१. पत्थर।

अति प्रेम अधीरा पुलक सरीरा मुख नहिं आवइ बचन कही
अतिसय बड़भागी चरनन्हि लागी जुगल नयन जलधार बही

राम के पवित्र और शोक को नाश करने वाले चरणों के छूते ही सचमुच वह तपोमूर्ति अहल्या प्रकट हो गई। भक्तों को सुख देने वाले रामचन्द्रजी को देखकर, वह हाथ जोड़कर सामने खड़ी हो गई। अत्यन्त प्रेम के कारण वह अधीर हो गई; उसको रोमाञ्च हो आया; उसके मुख से बात नहीं निकलती थी। वह अत्यन्त बड़भागिनी अहल्या भगवान् के चरणों में लिपट गई और उसके दोनों नेत्रों से जल की धारा बहने लगी।

धीरज मन कीन्हा प्रभु कहँ चीन्हा रघुपति कृपाँ भगति पाई।
अति निर्मल बानी अस्तुति ठानी ग्यान गम्य जय रघुराई॥
मैं नारि अपावन प्रभु जगपावन रावन रिपु जन सुखदाई।
राजीव बिलोचन भव भय मोचन पाहि पाहि सरनहि आई॥

फिर उसने मन को ठिकाने किया; प्रभु को पहचाना और रामचन्द्रजी की कृपा से भक्ति प्राप्त की। अति निर्मल वाणी से उसने स्तुति प्रारम्भ की—हे ज्ञान से जानने योग्य रामचन्द्रजी! आपकी जय हो। मैं (सहज ही) अपवित्र स्त्री हूँ; आप संसार को पवित्र करने वाले, भक्तों को सुख देने वाले और रावण (संसार को रुलाने वाले) के शत्रु हैं। हे कमल ऐसे नेत्र वाले, संसार (जन्म-मरण) के भय से छुड़ाने वाले! मैं शरण आई हूँ, रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये।

मुनि साप जो दीन्हा अति भल कीन्हा परम अनुग्रह मैं माना।
देखेउँ भरि लोचन हरि भव मोचन इहइ लाभ संकर जाना॥
बिनती प्रभु मोरी मैं मतिभोरी नाथ न मागौं बर आना।
पद कमल परागा रस अनुरागा मम मन मधुप करै पाना॥

मुनि ने जो मुझे शाप दिया, वह बहुत ही अच्छा किया, मैं उसे उनकी बड़ी कृपा मानती हूँ। जिसके कारण संसार के दुःख को मिटाने वाले हरि (आप) को मैंने आँख भरकर देखा इस लाभ को शिवजी जानते हैं। हे प्रभो! मैं बड़ी भोली-भाली बुद्धि की हूँ, मेरी एक विनती है, मैं दूसरा वर नहीं माँगती।

केवल यही चाहती हूँ कि मेरा मनरूपी भौंरा आपके चरण-कमलों के पराग का प्रेमरूपी रस पान करता रहे।

जेहि पद सुरसरिता परम पुनीता प्रगट भई सिव सीस धरी।
सोई पद पंकज जेहि पूजत अज मम सिर धरेउ कृपाल हरी॥
एहि भाँति सिधारी गौतम नारी बार बार हरि चरन परी।
जो अति मन भावा सो बरु पावा गइ पति लोक अनंद भरी॥

जिन चरणों से परम पवित्र (देव-नदी) गङ्गाजी प्रकट हुईं, जिन्हें शिवजी ने सिर पर धारण किया, वही चरण-कमल, जिसे ब्रह्मा पूजते हैं, कृपालु भगवान् (आप) ने मेरे सिर पर रक्खा। इस प्रकार स्तुति करके, बार-बार भगवान् के चरणों में गिरकर गौतम की स्त्री अहल्या, जो मन को बहुत ही अच्छा लगा, वह वर पाकर, आनन्द में भरी हुई, पति के लोक को चली गई।

दो० असि प्रभु दीनबंधु हरि कारन रहित दयाल।
तुलसिदास सठ ताहि भजु छाँड़ि कपट जंजाल॥२११

प्रभु (रामचन्द्रजी) ऐसे दीनबन्धु और बिना ही कारण दया करने वाले हैं। तुलसीदास कहते हैं, हे शठ (मन)! तू कपट का जंजाल छोड़कर उन्हीं का भजन कर।

चले राम लछिमन मुनि संगा ❀ गए जहाँ जग पावनि गंगा
गाधिसूनु सब कथा सुनाई ❀ जेहि प्रकार सुरसरि महि आई

राम और लक्ष्मण मुनि के साथ चले। वे वहाँ गये, जहाँ जगत् को पवित्र करने वाली गङ्गाजी थीं। महाराज गाधि के पुत्र विश्वामित्र ने वह सब कथा कह सुनाई, जिस प्रकार गङ्गाजी पृथ्वी पर आईं।

तब प्रभु रिसिन्ह समेत नहाए ❀ बिबिध दान महिदेवन्हि पाए
हरषि चले मुनि बृन्द सहाया ❀ बेगि बिदेह नगर निअराया[1]

तब प्रभु ने ऋषियों सहित (गंगाजी में) स्नान किया। ब्राह्मणों ने भाँति-भाँति के दान पाये। फिर मुनियों के समूह के साथ वे प्रसन्न होकर चले और शीघ्र ही राजा जनक के नगर के निकट पहुँच गये।

१. निकट आया।

पुर रम्यता राम जब देखी ❀ हरषे अनुज समेत बिसेषी
बापी कूप सरित सर नाना ❀ सलिल सुधा सम मनि सोपाना[1]

राम ने जब जनकपुर की शोभा देखी, तब वे छोटे भाई लक्ष्मण-सहित बहुत प्रसन्न हुये। अनेक बावड़ी, कुयें, नदी, तालाब वहाँ हैं, जिनका जल अमृत के समान है और जिनकी सीढ़ियाँ मणियों की हैं।

गुञ्जत मंजु मत्त रस भृङ्गा[2] ❀ कूजत कल बहु बरन विहंगा
बरन बरन बिकसे बनजाता[3] ❀ त्रिबिध समीर सदा सुखदाता

मकरंद रस में मतवाले सुन्दर भौंरे गूंज रहे हैं। भाँति-भाँति के रंग के सुन्दर पक्षी मधुर शब्द कर रहे हैं। रंग-रंग के कमल खिले हैं; सदा सुख देने वाला शीतल, मन्द और सुगन्धित पवन बह रहा है।

दो॰ सुमन बाटिका बाग बन बिपुल बिहंग निवास।
फूलत फलत सुपल्लवत सोहत पुर चहुँ पास॥२१२॥

फुलवाड़ी, बाग और बन जिनमें अनन्त पक्षियों का निवास है, फूलते-फलते हैं और सुन्दर पत्तों से लदे हुये, नगर के चारों ओर शोभा दे रहे हैं।

बनइ न बरनत नगर निकाई ❀ जहाँ जाइ मन तहइँ लोभाई
चारु बजारु बिचित्र अँबारी ❀ मनिमय बिधि जनु स्वकर सँवारी

नगर की सुन्दरता का वर्णन करते नहीं बनता। मन जहाँ जाता है, वहीं लुभा जाता है। सुन्दर बाज़ार है, मणियों से बने हुये विचित्र छज्जे हैं, मानो ब्रह्मा ने अपने हाथों से उन्हें सँवारा है।

धनिक बनिक बर धनद समाना ❀ बैठे सकल बस्तु लै नाना
चौहट सुन्दर गली सुहाई ❀ संतत रहहिं सुगंध सिंचाई

कुबेर के समान श्रेष्ठ धनी व्यापारी सब प्रकार की अनेक वस्तुयें लेकर बैठे हैं। सुन्दर चौराहे, शोभायमान गलियाँ सदा सुगन्ध से सिंची रहती हैं।

मङ्गलमय मन्दिर सब केरे ❀ चित्रित जनु रतिनाथ चितेरे
पुर नर नारि सुभग सुचि संता ❀ धरमसील ग्यानी गुनवन्ता

सबके घर कल्याणमय हैं। सब चित्रित हैं, मानो कामदेवरूपी चित्रकार

---

१. सीढ़ी। २. भौंरा। ३. कमल।

ने उन्हें चित्रित किया है। नगर के पुरुष-स्त्री सुन्दर, पवित्र, साधु-स्वभाव वाले, धर्मात्मा, ज्ञानी और गुणी हैं।

अति अनूप जहँ जनक निवासू ❀ बिथकहिं[1] बिबुध बिलोकि बिलासू
होत चकित चित कोट बिलोकी ❀ सकल भुवन सोभा जनु रोकी

जहाँ जनक का अत्यन्त अनुपम निवास-स्थान है, वहाँ के भोग-विलास को देखकर देवता भी थकित हो जाते हैं, कोट को देखकर चित्त चकित हो जाता है। ऐसा जान पड़ता है, मानो उसने सब भुवनों की शोभा को रोक रक्खा है।

दो॰ धवल धाम मनि पुरट[2] पट सुघटित नाना भाँति।
सिय निवास सुन्दर सदन सोभा किमि कहि जाति॥

उज्ज्वल महलों में मणि-जटित सोने की जरी के पर्दे लगे हैं, जो अनेक प्रकार से सुन्दर रीति से बने हैं। सीता के रहने के सुन्दर महल की शोभा का वर्णन किया ही कैसे जा सकता है।

सुभग द्वार सब कुलिस कपाटा ❀ भूप भीर नट मागध भाटा
बनी बिसाल बाजि गज साला ❀ हय गज रथ संकुल सब काला

राजभवन के सब द्वार सुन्दर हैं, जिनमें बज्र के-से मज़बूत किवाड़े लगे हैं। वहाँ (मातहत) राजाओं, नटों, मागधों और भाटों की भीड़ लगी रहती है। घोड़ों और हाथियों के लिये बड़ी-बड़ी घुड़सालें और फीलखाने बने हुए हैं, जो घोड़े, हाथी और रथों से सब समय भरे रहते हैं।

सूर सचिव सेनप बहुतेरे ❀ नृप गृह सरिस सदन सब केरे
पुर बाहिर सर सरित समीपा ❀ उतरे जहँ तहँ बिपुल महीपा

बहुत से योद्धा, मन्त्री और सेनापति हैं। उन सब के घर भी राजमहल ही सरीखे हैं। पुर के बाहर तालाब और नदियों के निकट जहाँ-तहाँ बहुत-से राजा लोग उतरे हुये (डेरा डाले) हैं।

देखि अनूप एक अँबराई ❀ सब सुपास[3] सब भाँति सुहाई
कौसिक कहेउ मोर मनु माना ❀ इहाँ रहिअ रघुबीर सुजाना

आमों का एक अनुपम बाग़, जहाँ सब प्रकार के सुभीते थे और जो सब

---

१. थक जाते हैं, स्तम्भित होते हैं। २. सोना। ३. सुभीता।

पुर रम्यता राम जब देखी ❀ हरषे अनुज समेत बिसेषी
बापी कूप सरित सर नाना ❀ सलिल सुधा सम मनि सोपाना¹

राम ने जब जनकपुर की शोभा देखी, तब वे छोटे भाई लक्ष्मण-सहित बहुत प्रसन्न हुये। अनेक बावड़ी, कुयें, नदी, तालाब वहाँ हैं, जिनका जल अमृत के समान है और जिनकी सीढ़ियाँ मणियों की हैं।

गुञ्जत मंजु मत्त रस भृङ्गा² ❀ कूजत कल बहु बरन बिहंगा
बरन बरन बिकसे बनजाता³ ❀ त्रिबिध समीर सदा सुखदाता

मकरंद रस में मतवाले सुन्दर भौंरे गूँज रहे हैं। भाँति-भाँति के रंग के सुन्दर पक्षी मधुर शब्द कर रहे हैं। रंग-रंग के कमल खिले हैं; सदा सुख देने वाला शीतल, मन्द और सुगन्धित पवन बह रहा है।

दो०— सुमन बाटिका बाग बन बिपुल बिहंग निवास।
फूलत फलत सुपल्लवत सोहत पुर चहुँ पास॥२१२॥

फुलवाड़ी, बाग और बन जिनमें अनन्त पक्षियों का निवास है, फूलते-फलते हैं और सुन्दर पत्तों से लदे हुये, नगर के चारों ओर शोभा दे रहे हैं।

बनइ न बरनत नगर निकाई ❀ जहाँ जाइ मन तहइँ लोभाई
चारु बजारु बिचित्र अँबारी ❀ मनिमय बिधि जनु स्वकर सँवारी

नगर की सुन्दरता का वर्णन करते नहीं बनता। मन जहाँ जाता है, वहीं लुभा जाता है। सुन्दर बाज़ार है, मणियों से बने हुये विचित्र छज्जे हैं, मानो ब्रह्मा ने अपने हाथों से उन्हें सँवारा है।

धनिक बनिक बर धनद समाना ❀ बैठे सकल बस्तु लै नाना
चौहट सुन्दर गली सुहाई ❀ संतत रहहिं सुगंध सिंचाई

कुबेर के समान श्रेष्ठ धनी व्यापारी सब प्रकार की अनेक वस्तुयें लेकर बैठे हैं। सुन्दर चौराहे, शोभायमान गलियाँ सदा सुगन्ध से सिंची रहती हैं।

मङ्गलमय मन्दिर सब केरे ❀ चित्रित जनु रतिनाथ चितेरे
पुर नर नारि सुभग सुचि संता ❀ धरमसील ग्यानी गुनवन्ता

सबके घर कल्याणमय हैं। सब चित्रित हैं, मानो कामदेवरूपी चित्रकार

१. सीढ़ी। २. भौंरा। ३. कमल।

ने उन्हें चित्रित किया है। नगर के पुरुष-स्त्री सुन्दर, पवित्र, साधु-स्वभाव वाले, धर्मात्मा, ज्ञानी और गुणी हैं।

अति अनूप जहँ जनक निवासू ❀ बिथकहिं[1] बिबुध बिलोकि बिलासू
होत चकित चित कोट बिलोकी ❀ सकल भुवन सोभा जनु रोकी

जहाँ जनक का अत्यन्त अनुपम निवास-स्थान है, वहाँ के भोग-विलास को देखकर देवता भी थकित हो जाते हैं, कोट को देखकर चित्त चकित हो जाता है। ऐसा जान पड़ता है, मानो उसने सब भुवनों की शोभा को रोक रक्खा है।

दो॰ धवल धाम मनि पुरट[2] पट सुघटित नाना भाँति।
सिय निवास सुन्दर सदन सोभा किमि कहि जाति॥

उज्ज्वल महलों में मणि-जटित सोने की जरी के पर्दे लगे हैं, जो अनेक प्रकार से सुन्दर रीति से बने हैं। सीता के रहने के सुन्दर महल की शोभा का वर्णन किया ही कैसे जा सकता है।

सुभग द्वार सब कुलिस कपाटा ❀ भूप भीर नट मागध भाटा
बनी बिसाल बाजि गज साला ❀ हय गज रथ संकुल सब काला

राजभवन के सब द्वार सुन्दर हैं, जिनमें बज्र के-से मज़बूत किवाड़े लगे हैं। वहाँ (मातहत) राजाओं, नटों, मागधों और भाटों की भीड़ लगी रहती है। घोड़ों और हाथियों के लिये बड़ी-बड़ी घुड़सालें और फीलखाने बने हुए हैं, जो घोड़े, हाथी और रथों से सब समय भरे रहते हैं।

सूर सचिव सेनप बहुतेरे ❀ नृप गृह सरिस सदन सब केरे
पुर बाहिर सर सरित समीपा ❀ उतरे जहँ तहँ बिपुल महीपा

बहुत से योद्धा, मन्त्री और सेनापति हैं। उन सब के घर भी राजमहल ही सरीखे हैं। पुर के बाहर तालाब और नदियों के निकट जहाँ-तहाँ बहुत-से राजा लोग उतरे हुये (डेरा डाले) हैं।

देखि अनूप एक अँवराई ❀ सब सुपास[3] सब भाँति सुहाई
कौसिक कहेउ मोर मनु माना ❀ इहाँ रहिअ रघुबीर सुजाना

आमों का एक अनुपम बाग़, जहाँ सब प्रकार के सुभीते थे और जो सब

---

१. थक जाते हैं, स्तम्भित होते हैं। २. सोना। ३. सुभीता।

तरह से सुहावना था, देखकर विश्वामित्र ने कहा—हे सुजान रामचन्द्र ! मेरा मन कहता है कि यहीं रहा जाय।

भलेहिं नाथ कहि कृपानिकेता ❀ उतरे तहँ मुनि बृन्द समेता
बिस्वामित्र महामुनि आए ❀ समाचार मिथिलापति पाए

कृपा के धाम राम 'बहुत अच्छा' कहकर, वहीं मुनियों के समूह के साथ ठहर गये। मिथिलापति जनक ने जब यह समाचार पाया कि मुनियों में श्रेष्ठ विश्वामित्र आये हैं,

दो०—संग सचिव सुचि भूरि भट भूसुर बर गुर ग्याति।
चले मिलन मुनिनायकहि मुदित राउ एहि भाँति २१४

तब विश्वासपात्र मन्त्री, बहुत-से योद्धा, श्रेष्ठ ब्राह्मण, गुरु (शतानन्द) और सजातीय लोगों को साथ लेकर इस प्रकार आनन्दित राजा मुनियों के स्वामी विश्वामित्र को मिलने चले।

कीन्ह प्रनाम चरन धरि माथा ❀ दीन्हि असीस मुदित मुनि नाथा
बिप्रबृन्द सब सादर बंदे ❀ जानि भाग्य बड़ राउ अनंदे

राजा ने मुनि के चरणों पर मस्तक रखकर प्रणाम किया। मुनियों के स्वामी विश्वामित्र ने प्रसन्न होकर आशीर्वाद दिया। राजा ने सब ब्राह्मणों को भी आदर-सहित प्रणाम किया और अपना बड़ा भाग्य जानकर आनन्दित हुये।

कुसल प्रस्न कहि बारहिं बारा ❀ बिस्वामित्र नृपहि बैठारा
तेहि अवसर आए दोउ भाई ❀ गए रहे देखन फुलवाई

बार-बार कुशल-प्रश्न करके विश्वामित्र ने राजा को बैठाया। उसी समय दोनों भाई आ गये, जो फुलवाड़ी देखने चले गये थे।

स्याम गौर मृदु बयस[1] किसोरा ❀ लोचन सुखद बिस्व चित चोरा
उठे सकल जब रघुपति आए ❀ बिस्वामित्र निकट बैठाए

सुकुमार किशोर अवस्था वाले श्याम और गौर वर्ण के दोनों कुमार नेत्रों को सुख देने वाले और सारे विश्व के चित्त के चुराने वाले हैं। राम जब आये, तब सब उठकर खड़े हो गये। विश्वामित्र ने उन्हें अपने पास बैठा लिया।

---

१. उम्र।

भए सब सुखी देखि दोउ भ्राता ❀ बारि बिलोचन पुलकित गाता
मूरति मधुर मनोहर देखी ❀ भयेउ बिदेहु बिदेहु बिसेषी

दोनों भाइयों को देखकर सभी सुखी हुये। सब के नेत्रों में (हर्ष के) आँसू आ गये और शरीर रोमाञ्चित हो उठे। राम की मधुर और मनोहर मूर्ति देखकर विदेह (जनक) सचमुच विदेह (देह की सुध-बुध से रहित) हो गये।

दो॰ प्रेम मगन मनु जानि नृप करि बिबेक धरि धीर।
बोलेउ मुनि पद नाइ सिरु गदगद गिरा गँभीर।२१५।

मन को प्रेम में मग्न जानकर राजा जनक सावधान होकर, धैर्य धारण करके, मुनि के चरणों में सिर नवाकर गद्‌गद् और गम्भीर वाणी बोले—

कहहु नाथ सुन्दर दोउ बालक ❀ मुनि कुल तिलक कि नृप कुल पालक
ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा ❀ उभय[1] बेष धरि की सोइ आवा

हे नाथ! बताइये, ये दोनों सुन्दर बालक मुनि के कुल के तिलक हैं, या किसी राज-वंश के पालक? अथवा वेदों ने जिस ब्रह्म को 'नेति' कहकर गान किया है, कहीं वही तो युगल रूप धरकर नहीं आया?

सहज बिराग रूप मन मोरा ❀ थकित होत जिमि चंद चकोरा
तातें प्रभु पूछउँ सतिभाऊ ❀ कहहु नाथ जनि करहु दुराऊ

स्वभाव ही से वैराग्य रूप मेरा मन (इन्हें देखकर) इस तरह मुग्ध हो रहा है, जैसे चन्द्रमा को देखकर चकोर। इसलिये हे स्वामी! मैं आपसे सत्यभाव से पूछता हूँ, बताइये, छिपाव न कीजिये।

इन्हहिं बिलोकत अति अनुरागा ❀ बरबस ब्रह्मसुखहि मन त्यागा
कह मुनि बिहँसि कहेहु नृप नीका ❀ बचन तुम्हार न होइ अलीका

इनको देखते हुये अत्यन्त प्रेम के वश होकर मेरे मन ने आग्रह करके ब्रह्म-सुख को छोड़ दिया है। मुनि ने हँसकर कहा—हे राजा! आपने ठीक ही कहा। आपका वचन मिथ्या नहीं हो सकता।

ये प्रिय सबहिं जहाँ लगि प्रानी ❀ मन मुसुकाहिं रामु सुनि बानी
रघुकुल मनि दसरथ के जाए ❀ मम हित लागि[2] नरेस पठाए

जगत् में जहाँ तक प्राणी हैं, ये सभी को प्रिय हैं। राम मुनि की बात सुन

१. दो। २. लिये।



तरह से सुहावना था, देखकर विश्वामित्र ने कहा—हे सुजान रामचन्द्र! मेरा मन कहता है कि यहीं रहा जाय।

भलेहिं नाथ कहि कृपानिकेता ❀ उतरे तहँ मुनि बृन्द समेता
बिस्वामित्र महामुनि आए ❀ समाचार मिथिलापति पाए

कृपा के धाम राम 'बहुत अच्छा' कहकर, वहीं मुनियों के समूह के साथ ठहर गये। मिथिलापति जनक ने जब यह समाचार पाया कि मुनियों में श्रेष्ठ विश्वामित्र आये हैं,

दो०- संग सचिव सुचि भूरि भट भूसुर बर गुर ग्याति।
चले मिलन मुनिनायकहि मुदित राउ एहि भाँति॥२१४॥

तब विश्वासपात्र मन्त्री, बहुत-से योद्धा, श्रेष्ठ ब्राह्मण, गुरु (शतानन्द) और सजातीय लोगों को साथ लेकर इस प्रकार आनन्दित राजा मुनियों के स्वामी विश्वामित्र को मिलने चले।

कीन्ह प्रनाम चरन धरि माथा ❀ दीन्हि असीस मुदित मुनि नाथा
बिप्रबृन्द सब सादर बंदे ❀ जानि भाग्य बड़ राउ अनंदे

राजा ने मुनि के चरणों पर मस्तक रखकर प्रणाम किया। मुनियों के स्वामी विश्वामित्र ने प्रसन्न होकर आशीर्वाद दिया। राजा ने सब ब्राह्मणों को भी आदर-सहित प्रणाम किया और अपना बड़ा भाग्य जानकर आनन्दित हुये।

कुसल प्रस्न कहि बारहिं बारा ❀ बिस्वामित्र नृपहि बैठारा
तेहि अवसर आए दोउ भाई ❀ गए रहे देखन फुलवाई

बार-बार कुशल-प्रश्न करके विश्वामित्र ने राजा को बैठाया। उसी समय दोनों भाई आ गये, जो फुलवाड़ी देखने चले गये थे।

स्याम गौर मृदु बयस[1] किसोरा ❀ लोचन सुखद बिस्व चित चोरा
उठे सकल जब रघुपति आए ❀ बिस्वामित्र निकट बैठाए

सुकुमार किशोर अवस्था वाले श्याम और गौर वर्ण के दोनों कुमार नेत्रों को सुख देने वाले और सारे विश्व के चित्त के चुराने वाले हैं। राम जब आये, तब सब उठकर खड़े हो गये। विश्वामित्र ने उन्हें अपने पास बैठा लिया।

---

१. उम्र।

भए सब सुखी देखि दोउ भ्राता ❁ बारि बिलोचन पुलकित गाता
मूरति मधुर मनोहर देखी ❁ भयेउ बिदेहु बिदेहु बिसेषी

दोनों भाइयों को देखकर सभी सुखी हुये। सब के नेत्रों में (हर्ष के) आँसू आ गये और शरीर रोमाञ्चित हो उठे। राम की मधुर और मनोहर मूर्ति देखकर विदेह (जनक) सचमुच विदेह (देह की सुध-बुध से रहित) हो गये।

दो० प्रेम मगन मनु जानि नृप करि बिबेक धरि धीर।
बोलेउ मुनि पद नाइ सिरु गदगद गिरा गँभीर।२१५।

मन को प्रेम में मग्न जानकर राजा जनक सावधान होकर, धैर्य धारण करके, मुनि के चरणों में सिर नवाकर गद्‌गद् और गम्भीर वाणी बोले—

कहहु नाथ सुन्दर दोउ बालक ❁ मुनि कुल तिलक कि नृप कुल पालक
ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा ❁ उभय[1] बेष धरि की सोइ आवा

हे नाथ! बताइये, ये दोनों सुन्दर बालक मुनि के कुल के तिलक हैं, या किसी राज-वंश के पालक? अथवा वेदों ने जिस ब्रह्म को 'नेति' कहकर गान किया है, कहीं वही तो युगल रूप धरकर नहीं आया?

सहज बिराग रूप मन मोरा ❁ थकित होत जिमि चंद चकोरा
तातें प्रभु पूछउँ सतिभाऊ ❁ कहहु नाथ जनि करहु दुराऊ

स्वभाव ही से वैराग्य रूप मेरा मन (इन्हें देखकर) इस तरह मुग्ध हो रहा है, जैसे चन्द्रमा को देखकर चकोर। इसलिये हे स्वामी! मैं आपसे सत्यभाव से पूछता हूँ, बताइये, छिपाव न कीजिये।

इन्हहिं बिलोकत अति अनुरागा ❁ बरबस ब्रह्मसुखहि मन त्यागा
कह मुनि बिहँसि कहेहु नृप नीका ❁ बचन तुम्हार न होइ अलीका

इनको देखते हुये अत्यन्त प्रेम के वश होकर मेरे मन ने आग्रह करके ब्रह्म-सुख को छोड़ दिया है। मुनि ने हँसकर कहा—हे राजा! आपने ठीक ही कहा। आपका वचन मिथ्या नहीं हो सकता।

ये प्रिय सबहिं जहाँ लगि प्रानी ❁ मन मुसुकाहिं रामु सुनि बानी
रघुकुल मनि दसरथ के जाए ❁ मम हित लागि[2] नरेस पठाए

जगत् में जहाँ तक प्राणी हैं, ये सभी को प्रिय हैं। राम मुनि की बात सुन

१. दो। २. लिये।

कर मन-ही-मन मुसकुराते हैं। मुनि ने कहा—ये रघुकुल के शिरोमणि महाराज दशरथ के पुत्र हैं। मेरे हित के लिये राजा ने इन्हें मेरे साथ भेजा है।

दो०— रामु लखनु दोउ बंधु बर रूप सील बल धाम।
मख राखेउ सबु साखि[1] जगु जिते असुर संग्राम।२१६

ये दोनों श्रेष्ठ भाई राम और लक्ष्मण रूप, शील और बल के धाम हैं। सारा जगत् साक्षी है कि इन्होंने असुरों को युद्ध में जीता और मेरे यज्ञ की रक्षा की है।

मुनि तव चरन देखि कह राऊ ❀ कहि न सकउँ निज पुन्य प्रभाऊ
सुन्दर स्याम गौर दोउ भ्राता ❀ आनँदहू के आनँद दाता

राजा जनक ने कहा—हे मुनि! आपके चरणों को देखकर मैं अपना पुण्य-प्रभाव कह नहीं सकता। ये श्याम और गौर वर्ण के दोनों भाई आनन्द को भी आनन्द देने वाले हैं।

इन्ह कै प्रीति परसपर पावनि ❀ कहि न जाइ मन भाव सुहावनि
सुनहु नाथ कह मुदित बिदेहू ❀ ब्रह्म जीव इव सहज सनेहू

इनकी आपस की सुहावनी पवित्र प्रीति मन को ऐसी भाती है कि उसका वर्णन नहीं हो सकता। विदेह (जनक) आनंदित होकर कहते हैं—हे नाथ! सुनो, ब्रह्म और जीव की तरह इनमें स्वाभाविक प्रेम है।

पुनि पुनि प्रभुहि चितव नरनाहू ❀ पुलक गात उर अधिक उछाहू
मुनिहिं प्रसंसि नाइ पद सीसू ❀ चलेउ लिवाइ नगर अवनीसू

राजा बारबार प्रभु को देखते हैं। उनका शरीर रोमाञ्चित हो रहा है। और हृदय में बड़ा उत्साह है। फिर मुनि की प्रशंसा करके और उनके चरणों में सिर नवाकर राजा उनको नगर में लिवा चले।

सुन्दर सदन सुखद सब काला ❀ तहाँ बासु लै दीन्ह भुआला
करि पूजा सब बिधि सेवकाई ❀ गयउ राउ गृह बिदा कराई

एक सुन्दर महल, जो सब ऋतुओं में सुख देने वाला था, वहाँ राजा ने उनको ले जाकर ठहराया। उनका सत्कार और सब प्रकार से सेवा करके राजा विदा माँग कर अपने महल को गये।

---

१. साक्षी।

दो० रिषय संग रघुबंस मनि करि भोजनु बिस्रामु।
बैठे प्रभु भ्राता सहित दिवसु रहा भरि जामु॥२१७॥

ऋषि विश्वामित्र के साथ रघुकुल के शिरोमणि प्रभु रामचन्द्रजी भोजन और विश्राम करके भाई-सहित बैठे। उस समय पहर भर दिन शेष रह गया था।

लषन हृदय लालसा बिसेषी ❀ जाइ जनकपुर आइअ देखी
प्रभु भय बहुरि मुनिहि सकुचाहीं ❀ प्रगट न कहहिं मनहिं मुसुकाहीं

लक्ष्मण के हृदय में विशेष लालसा है कि जाकर जनकपुर देख आना चाहिये। एक तो प्रभु रामचन्द्र का भय है, दूसरे वे मुनि से भी सकुचाते हैं। प्रकट में कुछ नहीं कहते हैं, मन-ही-मन मुसकुरा रहे हैं।

राम अनुज मन की गति जानी ❀ भगत बछलता हियँ हुलसानी
परम बिनीत सकुचि मुसुकाई ❀ बोले गुर अनुसासन पाई

राम ने छोटे भाई (लक्ष्मण) के मन की दशा जान ली, तब उनके हृदय में भक्त-वत्सलता उमड़ आई। तब गुरु का आदेश पाकर अत्यन्त विनम्र राम सकुचाते हुये मुसकुराकर बोले—

नाथ लषनु पुर देखन चहहीं ❀ प्रभु सकोच डर प्रगट न कहहीं
जौं राउर आयसु मैं पावौं ❀ नगर देखाइ तुरत लै आवौं

हे नाथ! लक्ष्मण जनकपुर देखना चाहते हैं। किन्तु आपके डर और संकोच के कारण प्रकट नहीं कहते हैं। यदि आपकी आज्ञा पाऊँ, तो मैं इनको नगर दिखलाकर तुरन्त ही वापस ले आऊँ।

सुनि मुनीस कह बचन सप्रीती ❀ कस न राम तुम्ह राखहु नीती
धरम सेतु पालक तुम्ह ताता ❀ प्रेम बिबस सेवक सुख दाता

यह सुनकर मुनिवर ने प्रेम-सहित वचन कहा—हे राम! तुम नीति की रक्षा कैसे न करोगे। हे तात! तुम धर्म की मर्यादा का पालन करने वाले और प्रेम के वशीभूत होकर सेवकों को सुख देने वाले हो।

दो० जाइ देखि आवहु नगरु सुख निधान दोउ भाइ॥
करहु सुफल सबके नयन सुन्दर बदन देखाइ॥२१८॥

कर मन-ही-मन मुसकुराते हैं। मुनि ने कहा—ये रघुकुल के शिरोमणि महाराज दशरथ के पुत्र हैं। मेरे हित के लिये राजा ने इन्हें मेरे साथ भेजा है।

दो० **रामु लखनु दोउ बंधु बर रूप सील बल धाम।**
मख राखेउ सबु साखि^१ जगु जिते असुर संग्राम।२१६

ये दोनों श्रेष्ठ भाई राम और लक्ष्मण रूप, शील और बल के धाम हैं। सारा जगत् साक्षी है कि इन्होंने असुरों को युद्ध में जीता और मेरे यज्ञ की रक्षा की है।

मुनि तव चरन देखि कह राऊ ❀ कहि न सकउँ निज पुन्य प्रभाऊ
सुन्दर स्याम गौर दोउ भ्राता ❀ आनँदहू के आनँद दाता

राजा जनक ने कहा—हे मुनि! आपके चरणों को देखकर मैं अपना पुण्य-प्रभाव कह नहीं सकता। ये श्याम और गौर वर्ण के दोनों भाई आनन्द को भी आनन्द देने वाले हैं।

इन्ह कै प्रीति परसपर पावनि ❀ कहि न जाइ मन भाव सुहावनि
सुनहु नाथ कह मुदित बिदेहू ❀ ब्रह्म जीव इव सहज सनेहू

इनकी आपस की सुहावनी पवित्र प्रीति मन को ऐसी भाती है कि उसका वर्णन नहीं हो सकता। विदेह (जनक) आनंदित होकर कहते हैं—हे नाथ! सुनो, ब्रह्म और जीव की तरह इनमें स्वाभाविक प्रेम है।

पुनि पुनि प्रभुहि चितव नरनाहू ❀ पुलक गात उर अधिक उछाहू
मुनिहिं प्रसंसि नाइ पद सीसू ❀ चलेउ लिवाइ नगर अवनीसू

राजा बारबार प्रभु को देखते हैं। उनका शरीर रोमाञ्चित हो रहा है। और हृदय में बड़ा उत्साह है। फिर मुनि की प्रशंसा करके और उनके चरणों में सिर नवाकर राजा उनको नगर में लिवा चले।

सुन्दर सदन सुखद सब काला ❀ तहाँ बासु लै दीन्ह भुआला
करि पूजा सब बिधि सेवकाई ❀ गयउ राउ गृह बिदा कराई

एक सुन्दर महल, जो सब ऋतुओं में सुख देने वाला था, वहाँ राजा ने उनको ले जाकर ठहराया। उनका सत्कार और सब प्रकार से सेवा करके राजा विदा माँग कर अपने महल को गये।

---

१. साक्षी।

दो॰ रिषय संग रघुबंस मनि करि भोजनु बिस्रामु।
बैठे प्रभु भ्राता सहित दिवसु रहा भरि जामु॥२१७॥

ऋषि विश्वामित्र के साथ रघुकुल के शिरोमणि प्रभु रामचन्द्रजी भोजन और विश्राम करके भाई-सहित बैठे। उस समय पहर भर दिन शेष रह गया था।

लषन हृदय लालसा बिसेषी ❀ जाइ जनकपुर आइअ देखी
प्रभु भय बहुरि मुनिहि सकुचाहीं ❀ प्रगट न कहहिं मनहिं मुसुकाहीं

लक्ष्मण के हृदय में विशेष लालसा है कि जाकर जनकपुर देख आना चाहिये। एक तो प्रभु रामचन्द्र का भय है, दूसरे वे मुनि से भी सकुचाते हैं। प्रकट में कुछ नहीं कहते हैं, मन-ही-मन मुसकुरा रहे हैं।

राम अनुज मन की गति जानी ❀ भगत बछलता हियँ हुलसानी
परम बिनीत सकुचि मुसुकाई ❀ बोले गुर अनुसासन पाई

राम ने छोटे भाई (लक्ष्मण) के मन की दशा जान ली, तब उनके हृदय में भक्त-वत्सलता उमड़ आई। तब गुरु का आदेश पाकर अत्यन्त विनम्र राम सकुचाते हुये मुसकुराकर बोले—

नाथ लषनु पुर देखन चहहीं ❀ प्रभु सकोच डर प्रगट न कहहीं
जौं राउर आयसु मैं पावौं ❀ नगर देखाइ तुरत लै आवौं

हे नाथ! लक्ष्मण जनकपुर देखना चाहते हैं। किन्तु आपके डर और संकोच के कारण प्रकट नहीं कहते हैं। यदि आपकी आज्ञा पाऊँ, तो मैं इनको नगर दिखलाकर तुरन्त ही वापस ले आऊँ।

सुनि मुनीस कह बचन सप्रीती ❀ कस न राम तुम्ह राखहु नीती
धरम सेतु पालक तुम्ह ताता ❀ प्रेम बिबस सेवक सुख दाता

यह सुनकर मुनिवर ने प्रेम-सहित वचन कहा—हे राम! तुम नीति की रक्षा कैसे न करोगे। हे तात! तुम धर्म की मर्यादा का पालन करने वाले और प्रेम के वशीभूत होकर सेवकों को सुख देने वाले हो।

दो॰ जाइ देखि आवहु नगरु सुख निधान दोउ भाइ॥
करहु सुफल सबके नयन सुन्दर बदन देखाइ॥२१८॥

सुख के निधान तुम दोनों भाई जाकर नगर देख आओ। अपने सुन्दर मुख दिखलाकर समस्त नगर-निवासियों के नेत्रों को सफल करो।

मुनि पद कमल बंदि दोउ भ्राता ❀ चले लोक लोचन सुखदाता
बालक बृन्द देखि अति सोभा ❀ लगे संग लोचन मनु लोभा

सब लोगों के नेत्रों को सुख देने वाले दोनों भाई मुनि के कमल ऐसे चरणों की वन्दना करके चले। बालकों के समूह अत्यन्त शोभा देखकर साथ लग गये। उनके नेत्र और मन लुभाये हुये हैं।

पीत बसन परिकर कटि भाथा ❀ चारु चाप सर सोहत हाथा
तन अनुहरत सुचंदन खोरी ❀ स्यामल गौर मनोहर जोरी

दोनों भाइयों के वस्त्र पीले हैं; कमर में फेंटा और तरकस बँधा है और हाथों में सुन्दर धनुष-बाण सुशोभित हैं। सुन्दर चन्दन की खौर (श्याम और गौर वर्ण के) शरीरों के अनुकूल है। श्याम और गोरे की जोड़ी मनोहर है।

केहरि कंधर बाहु बिसाला ❀ उर अति रुचिर नाग[1] मनि माला
सुभग सोन[2] सरसीरुह लोचन ❀ बदन मयंक ताप त्रय मोचन

सिंह के समान कंधा है, विशाल भुजायें हैं, छाती पर बहुत सुन्दर गज-मुक्ता की माला है, सुन्दर लाल-कमल ऐसे नेत्र हैं, तापों का हरण करने वाले चन्द्रमा के समान उनके मुख हैं।

काननि्ह कनक फूल छबि देहीं ❀ चितवत चितहि चोरि जनु लेहीं
चितवनि चारु भृकुटि बर बाँकी ❀ तिलक रेख सोभा जनु चाकी[3]

कानों में सोने के कर्णफूल शोभा देते हैं। देखते ही चित्त को वे मानो चुरा लेते हैं। उनकी चितवन मनोहर और भौंहें उत्तम और बांकी हैं। माथे पर तिलक की रेखाओं की शोभा मानो बिजली है।

दो०— रुचिर चौतनीं सुभग सिर मेचक[4] कुञ्चित केस।
नख सिख सुन्दर बंधु दोउ सोभा सकल सुदेस॥२१९॥

सिर पर सुन्दर चौकोनी टोपियाँ दिये हैं; बाल काले और घुँघराले हैं। दोनों भाई नख से लेकर शिखा तक सुन्दर हैं और उनके शरीर के सब सुन्दर

---

१. हाथी। २. लाल। ३. बिजली, अवधी बोली में चाकी और चिर्री बिजली के पर्यायवाची हैं। ४. काला।

अङ्गों में शोभा जहाँ जैसी चाहिये, वहाँ वैसी ही है।

देखन नगर भूप सुत आए ❀ समाचार पुरबासिन्ह पाए
धाए धाम काम सब त्यागी ❀ मनहुँ रंक निधि लूटन लागी

नगर देखने के लिये दो राजकुमार आये हैं; यह समाचार जब पुरवासियों ने पाया तब वे घर का सब काम-काज छोड़कर ऐसे दौड़े, मानो ग़रीब लोग ख़जाना लूटने दौड़े हैं।

निरखि सहज सुन्दर दोउ भाई ❀ होहिं सुखी लोचन फल पाई
जुवती भवन झरोखन्हि लागीं ❀ निरखहिं राम रूप अनुरागीं

स्वभाव ही से सुन्दर दोनों भाइयों को देखकर वे लोग आँखों का फल पाकर सुखी हो रहे हैं। युवती स्त्रियाँ घर के झरोखों से लगी हुई प्रेम-सहित राम के रूप को देख रही हैं।

कहहिं परसपर बचन सप्रीती ❀ सखि इन्ह कोटि काम छबि जीती
सुर नर असुर नाग मुनि माहीं ❀ सोभा असि कहुँ सुनि अति नाहीं

वे आपस में बड़े प्रेम से बातें कर रही हैं—हे सखि! इन्होंने करोड़ों कामदेवों की छवि को जीत लिया है। सुर, नर, असुर, नाग और मुनियों में ऐसी शोभा तो कहीं सुनाई नहीं पड़ती।

बिष्नु चारि भुज बिधि मुख चारी ❀ बिकट बेष मुख पंच पुरारी
अपर देव अस कोउ न आही ❀ यह छबि सखी पटतरिअ जाही

विष्णु के चार हाथ हैं, ब्रह्मा के चार मुख हैं; शिवजी का वेष भयानक और उनके पाँच मुख हैं। हे सखी! दूसरा और कोई देवता नहीं, जिससे इस शोभा की तुलना की जाय।

दो० बय किसोर सुखमा सदन स्याम गौर सुख धाम।
अंग अंग पर बारिअहि कोटि कोटि सत काम।२२०।

इनकी किशोर अवस्था है, ये सौन्दर्य के घर, श्याम और गौर वर्ण के सुख के धाम हैं। इनके अङ्ग-अङ्ग पर सैकड़ों-करोड़ों कामदेवों को निछावर कर देना चाहिये।

कहहु सखी अस को तनु धारी ❀ जो न मोह यह रूप निहारी
कोउ सप्रेम बोली मृदु बानी ❀ जो मैं सुना सो सुनहु सयानी

हे सखी ! ऐसा शरीरधारी कौन होगा, जो यह रूप देखकर मोहित न हो जाय ? तब कोई दूसरी सखी प्रेम-सहित कोमल वाणी से बोली—हे सयानी ! मैंने जो सुना है, उसे सुनो ।

ए दोऊ दसरथ के ढोटा ❀ बाल मरालन्हि के कल[1] जोटा[2]
मुनि कौसिक मख के रखवारे ❀ जिन्ह रन अजिर निसाचर मारे

ये दोनों राजकुमार महाराज दशरथ के पुत्र हैं । बाल राजहंसों के सुन्दर जोड़े हैं । ये विश्वामित्र मुनि के यज्ञ के रखवाले हैं । इन्होंने रण के मैदान में राक्षसों को मारा है ।

स्याम गात कल कंज बिलोचन ❀ जो मारीच सुभुज मद मोचन
कौसल्या सुत सो सुखखानी ❀ नाम राम धनु सायक पानी

श्याम शरीर वाले, जिनके सुन्दर कमल-जैसे नेत्र हैं, जो मारीच और सुबाहु के मद को चूर करने वाले और सुख की खान हैं और जो हाथ में धनुष-बाण लिये हुए हैं, वे रानी कौशल्या के पुत्र हैं, उनका नाम राम है ।

गौर किसोर बेष बर काछें ❀ कर सर चाप राम के पाछें
लछिमनु नाम राम लघु भ्राता ❀ सुनु सखि तासु सुमित्रा माता

जिनका रंग गोरा और अवस्था किशोर है; जो सुन्दर वेष बनाये, हाथ में धनुष बाण लिये राम के पीछे हैं, वे राम के छोटे भाई हैं; उनका नाम लक्ष्मण है । हे सखी ! सुनो, उनकी माता सुमित्रा हैं ।

दो॰ बिप्र काजु करि बंधु दोउ मग मुनि बधू उधारि।
आये देखन चाप मख सुनि हरषीं सब नारि ।२२१।

ब्राह्मण विश्वामित्र का काम करके और रास्ते में मुनि (गौतम) की स्त्री (अहल्या) का उद्धार करके दोनों भाई यहाँ धनुष-यज्ञ देखने आये हैं । यह सुनकर सब स्त्रियाँ प्रसन्न हुईं ।

देखि राम छबि कोउ एक कहई ❀ जोगु जानकिहि एह बरु अहई
जौं सखि इन्हहिं देख नरनाहू ❀ पन परिहरि हठि करइ बिबाहू

कोई एक अन्य सखी राम की छवि देखकर कहने लगी—यह वर जानकी के योग्य है । हे सखी ! यदि कहीं राजा इन्हें देख ले, तो प्रतिज्ञा छोड़कर

---
१. सुन्दर । २. जोड़ा ।

वह आग्रहपूर्वक इन्हीं से विवाह कर देगा।

कोउ कह ए भूपति पहिचाने ❀ मुनि समेत सादर सनमाने
सखि परंतु पन राउ न तजई ❀ बिधि बस हठि अबिबेकहि भजई

किसी ने कहा—राजा ने इन्हें पहचान लिया है। उन्होंने मुनि के सहित इनका आदरपूर्वक सम्मान किया है। हे सखी! पर राजा प्रण नहीं छोड़ेगा। वह होनहार के वश में हठ करके अविवेक ही को महत्व देगा।

कोउ कह जौं भल अहइ बिधाता ❀ सब कहँ सुनिअ उचित फल दाता
तौ जानकिहि मिलिहि बरु एहू ❀ नाहिंन आलि इहाँ संदेहू

कोई कहती है—यदि विधाता भले हैं और सुना जाता है कि वह सबको उचित फल देते हैं, तो जानकी को यही वर मिलेगा। हे सखी! इसमें संदेह नहीं है।

जौं बिधि बस अस बनै सँजोगू ❀ तौ कृतकृत्य[1] होइँ सब लोगू
सखि हमरे आरति अति तातें ❀ कबहुँक ए आवहिं एहि नाते

यदि दैवयोग से ऐसा संयोग बन जाय तो हम सब लोग कृतार्थ हो जायँ। हे सखी! मेरे तो इसी से इतनी आतुरता हो रही है कि ये इसी नाते कभी यहाँ आयेंगे।

दो०— नाहिं त हम कहुँ सुनहु सखि इन्ह कर दरसन दूरि।
एह संघटु तब होइ जब पुन्य पुराकृत भूरि।२२२।

नहीं तो हे सखी! सुनो, हमें इनके दर्शन दुर्लभ हैं। यह संयोग तभी हो सकता है, जब हमारे पूर्व जन्मों के पुण्य अधिक हों।

बोली अपर कहेहु सखि नीका ❀ एहि बिआह अति हित सबही का
कोउ कह संकर चाप कठोरा ❀ ए स्यामल मृदु गात किसोरा

दूसरी ने कहा—हे सखी! तुमने बहुत अच्छा कहा। इस विवाह से सभी का परम हित है। किसी ने कहा—शिवजी का धनुष कठोर है, ये साँवले राजकुमार अभी कोमल शरीर के बालक हैं।

सबु असमंजस अहइ सयानी ❀ यह सुनि अपर कहइ मृदु बानी
सखि इन्ह कहँ कोउ कोउ अस कहहीं ❀ बड़ प्रभाउ देखत लघु अहहीं

१. कृतार्थ।

यह सुनकर दूसरी सखी कोमल वाणी से कहने लगी—हे सयानी! सब असमंजस ही है, पर इनके संबन्ध में कोई-कोई ऐसा कहते हैं कि ये देखने ही में छोटे हैं; इनका प्रभाव बहुत बड़ा है।

परसि जासु पद पंकज धूरी ❀ तरी अहल्या कृत अघ भूरी
सो कि रहिहि बिनु सिवधनु तोरें ❀ यह प्रतीति परिहरिअ न भोरें

जिनके कमल ऐसे चरणों की धूल छूकर अहल्या तर गई, जिसने बड़ा भारी पाप किया था, वे क्या शिवजी का धनुष बिना तोड़े रहेंगे? इस विश्वास को भूलकर भी न छोड़ना चाहिये।

जेहि बिरंचि रचि सीय सँवारी ❀ तेहि स्यामल बरु रचेउ बिचारी
तासु बचन सुनि सब हरषानी ❀ ऐसइ होउ कहहिं मृदु बानी

जिस विधाता ने सीता को सँवारकर रचा है, उसी ने विचारकर साँवला वर भी रच रक्खा है। उसके वचन सुनकर सब हर्षित हुईं। सब कोमल वाणी से कहने लगीं—ऐसा ही हो।

दो० **हिय हरषहिं बरषहिं सुमन सुमुखि सुलोचनि ब्रन्द।**
जाहिं जहाँ जहँ बंधु दोउ तहँ तहँ परमानंद॥२२३॥

सुन्दर मुख और सुन्दर नेत्रों वाली स्त्रियाँ समूह-की-समूह हृदय में हर्षित होकर फूल बरसा रही हैं। जहाँ-जहाँ दोनों भाई जाते हैं, वहाँ-वहाँ परम आनन्द छा जाता है।

पुर पूरब दिसि गे दोउ भाई ❀ जहँ धनु मख हित भूमि बनाई
अति बिस्तार चारु गच[1] ढारी ❀ बिमल बेदिका रुचिर सँवारी

दोनों भाई नगर के पूरब ओर गये, जहाँ धनुष-यज्ञ के लिये (रंग) भूमि बनाई गई थी। बहुत लम्बा-चौड़ा सुन्दर ढाला हुआ पक्का आँगन था, जिस पर सुन्दर और पवित्र वेदी सँवारी हुई थी।

चहुँ दिसि कंचन मंच बिसाला ❀ रचे जहाँ बैठहिं महिपाला
तेहि पाछें समीप चहुँ पासा ❀ अपर[2] मञ्च मण्डली बिलासा

चारों ओर सोने के बड़े-बड़े मञ्च बने थे, जिनपर राजा लोग बैठेंगे। उसके पीछे समीप ही चारों ओर दूसरे मञ्चों का घेरा सुशोभित था।

---

१. फर्श। २. दूसरी।

कछुक ऊँचि सब भाँति सुहाई ❀ बैठहिं नगर लोग जहँ जाई
तिन्हके निकट बिसाल सुहाए ❀ धवल धाम बहु बरन बनाए

वह कुछ ऊँचा था और सब प्रकार से सुन्दर था, जहाँ जाकर नगर के लोग बैठेंगे। उन्हीं के पास बड़े-बड़े सफ़ेद सुन्दर घर अनेक रंगों के बनाये गये हैं।

जहँ बैठे देखहिं सब नारी ❀ जथाजोगु निज कुल अनुहारी[1]
पुर बालक कहि कहि मृदु बचना ❀ सादर प्रभुहि देखावहिं रचना

जहाँ अपने-अपने कुल के अनुसार सब स्त्रियाँ बैठकर देखेंगी। नगर के बालक कोमल वचन कह-कहकर आदरपूर्वक प्रभु को यज्ञशाला की रचना दिखलाते हैं।

दो॰ सब सिसु एहि मिसु प्रेमबस परसि मनोहर गात।
तनु पुलकहिं अति हरषु हियँ देखि देखि दोउ भ्रात॥

इसी बहाने प्रेम के वश होकर राम के सुन्दर शरीर को छूकर सब बच्चों का शरीर पुलकित हो रहा है और दोनों भाइयों को देखकर उनके हृदय में अत्यन्त हर्ष हो रहा है।

सिसु सब राम प्रेम बस जाने ❀ प्रीति समेत निकेत बखाने
निज निज रुचि सब लेहिं बोलाई ❀ सहित सनेह जाहिं दोउ भाई

सब बालकों को राम ने प्रेम के वश में जानकर प्रीति-सहित यज्ञभूमि के स्थानों की प्रशंसा की। वे सब अपनी-अपनी रुचि के अनुसार उन्हें बुला लेते हैं और दोनों भाई स्नेह के साथ उनके पास चले जाते हैं।

राम देखावहिं अनुजहि रचना ❀ कहि मृदु मधुर मनोहर बचना
लव निमेष महँ भुवननिकाया ❀ रचै जासु अनुसासन माया

कोमल और मधुर वचन कहकर राम अपने छोटे भाई लक्ष्मण को यज्ञ-भूमि की रचना दिखलाते हैं। जिसकी आज्ञा पाकर माया क्षणभर में ब्रह्मांडों के समूह रच डालती है।

भगति हेतु सोइ दीनदयाला ❀ चितवत चकित धनुष मख साला
कौतुक देखि चले गुरु पाहीं ❀ जानि बिलंब त्रास मन माहीं

---

१. अनुसार।

वही दीनों पर दया करने वाले राम भक्ति के कारण चकित होकर धनुष-यज्ञशाला देख रहे हैं। इस प्रकार सब कौतुक देखकर वे गुरु के पास चले। देर हुई जानकर उनके मन में डर था।

जासु त्रास डर कहुँ डर होई ❀ भजन प्रभाउ देखावत सोई
कहि बातें मृदु मधुर सुहाई ❀ किए बिदा बालक बरिआई

जिसके भय से डर को भी डर लगता है, वही प्रभु भजन का प्रभाव दिखला रहे हैं। उन्होंने कोमल, मधुर और सुन्दर बातें कहकर बालकों को ज़बरदस्ती विदा किया।

दो॰ सभय सप्रेम बिनीत अति सकुच सहित दोउ भाइ।
गुर पद पंकज नाइ सिर बैठे आयसु पाइ ॥२२५॥

भय, प्रेम और संकोच-सहित दोनों अत्यन्त विनयी भाई गुरु के कमल ऐसे चरणों पर सिर नवाकर, आज्ञा पाकर बैठे।

निसि प्रवेस मुनि आयसु दीन्हा ❀ सबही संध्याबंदनु कीन्हा
कहत कथा इतिहास पुरानी ❀ रुचिर रजनि जुग जाम[1] सिरानी

रात्रि का प्रवेश होते हो मुनि ने आज्ञा दी, तब सबने संध्या-वंदन किया। पुरानी कथा और इतिहास कहते-कहते सुन्दर रात्रि दो पहर बीत गई।

मुनिवर सैन कीन्ह तब जाई ❀ लगे चरन चापन दोउ भाई
जिन्ह के चरन सरोरुह लागी ❀ करत बिबिध जप जोग बिरागी

तब श्रेष्ठ मुनि ने जाकर शयन किया। दोनों भाई उनके पैर दाबने लगे। जिनके कमल ऐसे चरणों के लिये विरक्त लोग भाँति-भाँति के जप और योग करते हैं,

तेइ दोउ बंधु प्रेम जनु जीते ❀ गुर पद कमल पलोटत प्रीते[2]
बार बार मुनि अग्या दीन्ही ❀ रघुबर जाइ सैन तब कीन्ही

उन्हीं दोनों भाइयों को मानो प्रेम ने जीत लिया है। वे प्रीति-सहित गुरु के कमल ऐसे पदों को दबा रहे हैं। मुनि ने बार-बार आज्ञा दी, तब रामचन्द्रजी ने जाकर शयन किया।

---

१. पहर। २. प्रीतिपूर्वक।

चापत चरन लषनु उर लाएँ ❀ सभय सप्रेम परम सचुपाए
पुनि पुनि प्रभु कह सोवहु ताता ❀ पौढ़े धरि उर पद जलजाता

राम के चरणों को हृदय से लगाकर भय और प्रेम-सहित बहुत आनन्दित होकर लक्ष्मण उसे दबा रहे हैं। प्रभु राम ने फिर-फिर कहा—हे तात! अब सो जाओ। तब वे राम के कमल ऐसे चरणों को हृदय में धरकर लेट रहे।

दो॰ उठे लषनु निसि बिगत सुनि अरुन सिखा धुनि कान।
गुर तें पहिलेहि जगतपति जागे रामु सुजान ॥२२६॥

रात बीतने पर, मुर्गे का शब्द कानों से सुनकर लक्ष्मण उठे। जगत् के स्वामी सुजान राम भी गुरु से पहले ही जाग गये।

सकल सौच करि जाइ नहाए ❀ नित्य निबाहि मुनिहि सिर नाए
समय जानि गुरु आयसु पाई ❀ लेन प्रसून चले दोउ भाई

सब शौच आदि प्रातः कृत्य करके वे जाकर नहाये। और नित्यकर्म पूरा करके उन्होंने मुनि को मस्तक नवाया। पूजा का समय जानकर, गुरु की आज्ञा पाकर दोनों भाई फूल लेने चले।

भूप बागु बर देखेउ जाई ❀ जहँ बसन्त रितु रही लोभाई
लागे बिटप मनोहर नाना ❀ बरन बरन बर बेलि बिताना

उन्होंने जाकर राजा जनक का उत्तम बाग देखा, जहाँ वसंत-ऋतु लुभा रही है। उसमें भाँति-भाँति के मनोहर वृक्ष लगे हैं। रंग-बिरंगी उत्तम लताओं के अनेक रूपों के चँदोवे बने हैं।

नव पल्लव फल सुमन सुहाए ❀ निज सम्पति सुर रूख लजाए
चातक कोकिल कीर चकोरा ❀ कूजत बिहँग नटत[3] कल मोरा

वृक्ष नये पत्ते, फल और फूल से सुशोभित हैं और अपने विभव से वे कल्पवृक्ष को लज्जित कर रहे हैं। पपीहा, कोयल, सुआ, चकोर आदि पक्षी कलरव कर रहे हैं और सुन्दर मोर नाच रहे हैं।

मध्य बाग सरु सोह सुहावा ❀ मनि सोपान बिचित्र बनावा
बिमल सलिल सरसिज बहुरंगा ❀ जल खग कूजत गुंजत भृङ्गा

१. दुर्गा। २. कल्पवृक्ष। ३. नाचते हैं।

बाग के मध्य में सुहावना सरोवर शोभित है। जिसमें सीढ़ियाँ मणियों की हैं और अद्भुत दृश्य है। जल निर्मल है, और उसमें अनेक रंग के कमल हैं। जल के पक्षी कलरव कर रहे हैं और भौंरे गुञ्जार कर रहे हैं।

दो॰ बागु तड़ाग बिलोकि प्रभु हरषे बंधु समेत।
परम रम्य आरामु[1] यह जो रामहिं सुख देत।२२७।

बाग और सरोवर को देखकर प्रभु रामचन्द्रजी भाई-सहित हर्षित हुये। वह बाग वास्तव में बहुत ही रमणीय है, जो राम को भी सुख दे रहा है।

चहुँ दिसि चितइ पूछि मालीगन ❀ लगे लेन दल फूल मुदितमन
तेहि अवसर सीता तहँ आई ❀ गिरिजा पूजन जननि पठाई

चारों ओर दृष्टि दौड़ाकर और मालियों से पूछकर वे प्रसन्न मन से पत्र-पुष्प लेने लगे। उसी समय सीता वहाँ आईं। माता ने उन्हें पार्वतीजी की पूजा करने के लिये भेजा था।

संग सखीं सब सुभग सयानी ❀ गावहिं गीत मनोहर बानी
सर समीप गिरिजा गृह सोहा ❀ बरनि न जाइ देखि मन मोहा

साथ में सब सुन्दरी और सयानी सखियाँ मनोहर वाणी से गीत गा रही हैं। सरोवर के निकट पार्वतीजी का मन्दिर सुशोभित है। उसका वर्णन नहीं किया जा सकता; देखकर मन मोहित हो जाता है।

मज्जनु करि सर सखिन्ह समेता ❀ गई मुदित मन गौरि[2] निकेता
पूजा कीन्हि अधिक अनुरागा ❀ निज अनुरूप सुभग बरु माँगा

सखियों-सहित सरोवर में स्नान करके सीता प्रसन्न मन से पार्वतीजी के मन्दिर में गईं। बड़े प्रेम से उन्होंने पूजन किया और अपने योग्य सुन्दर वर माँगा।

एक सखी सिय संगु बिहाई ❀ गई रही देखन फुलवाई
तेइ दोउ बंधु बिलोके जाई ❀ प्रेम बिबस सीता पहिं आई

एक सखी सीता का साथ छोड़कर फुलवाड़ी देखने चली गई थी। उसने वहाँ जाकर दोनों भाइयों को देखा और वह प्रेम से विह्वल होकर सीता के पास आई।

---

१. बाग। २. पार्वती।

दो०— तासु दसा देखी सखिन्ह पुलक गात जलु नैन ।
कहु कारनु निज हरष कर पूछहिं सब मृदु बैन ॥२२८॥

सखियों ने उसकी दशा देखी कि उसका शरीर पुलकित है और नेत्रों में जल भरा है। सब कोमल वचनों से पूछने लगीं कि अपनी प्रसन्नता का कारण बता।

देखन बागु कुँअर दुइ आए ❀ बय किसोर सब भाँति सुहाए
स्याम गौर किमि कहौं बखानी ❀ गिरा अनयन नयन बिनु बानी

उसने कहा—दो राजकुमार बाग देखने आये हैं। वे किशोर अवस्था के हैं और सब प्रकार से सुन्दर हैं। वे साँवले और गोरे रंग के हैं। मैं उनकी सुन्दरता को कैसे बखान कर कहूँ ? मेरी वाणी के तो नेत्र नहीं और नेत्रों के वाणी नहीं।

सुनि हरषीं सब सखी सयानी ❀ सिय हियँ अति उतकंठा जानी
एक कहइ नृप सुत तेइ आली ❀ सुने जे मुनि सँग आए काली

सब सयानी सखियाँ यह सुनकर और सीता के हृदय में बड़ी उत्कण्ठा जानकर प्रसन्न हुईं। तब एक सखी कहने लगी—हे सखी ! ये वेही राजकुमार हैं, जो सुना है कि कल विश्वामित्र मुनि के साथ आये हैं।

जिन्ह निज रूप मोहनी डारी ❀ कीन्हे स्वबस नगर नर नारी
बरनत छबि जहँ तहँ सब लोगू ❀ अवसि देखिअहिं देखन जोगू

जिन्होंने अपने रूप की मोहिनी डालकर नगर के स्त्री-पुरुषों को अपने वश में कर लिया। जहाँ-तहाँ सब लोग उन्हीं की शोभा का बखान कर रहे हैं। वे देखने योग्य हैं, अवश्य उन्हें देखना चाहिये।

तासु बचन अति सियहि सुहाने ❀ दरस लागि लोचन अकुलाने
चली अग्र[1] करि प्रिय सखि सोई ❀ प्रीति पुरातन लखइ न कोई

उसके वचन सीता को अत्यन्त ही प्रिय लगे, और दर्शन के लिये उनके नेत्र अकुला उठे। उसी प्यारी सखी को आगे करके सीता चलीं। पुरातन प्रीति को कोई देख नहीं रहा है।

---

१. आगे।

दो० सुमिरि सीय नारद बचन उपजी प्रीति पुनीत ।
चकित बिलोकति सकल दिसि जनु सिसु मृगी सभीत

नारदजी के वचनों का स्मरण करके सीता के हृदय में पवित्र प्रीति उत्पन्न हुई । वह चकित होकर सब ओर इस तरह देखती हैं, जैसे डरी हुई मृगछौनी देखती है । [उक्तविषया वस्तुत्प्रेक्षा अलंकार]

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि ❀ कहत लषन मन राम हृदय गुनि
मानहुँ मदन दुंदुभी दीन्ही ❀ मनसा[1] बिस्व बिजय कहँ कीन्ही

कंकण, करधनी और पाज़ेब की झनकार सुनकर राम हृदय में विचारकर लक्ष्मण से कह रहे हैं—मानो कामदेव ने डंका बजाया है और विश्व को जीतने का इरादा किया है ।

अस कहि फिरि चितए तेहि ओरा ❀ सिय मुख ससि भए नयन चकोरा
भए बिलोचन चारु अचंचल ❀ मनहुँ सकुचि निमि[2] तजे दृगंचल

ऐसा कहकर राम ने फिर उस ओर देखा । सीता के मुखरूपी चंद्रमा के लिये राम के नेत्र चकोर हो गये । सुन्दर नेत्र स्थिर हो गये । मानो निमि ने सकुचाकर पलकें छोड़ दीं । (लड़की-दामाद का मिलन-प्रसंग देखना उचित न जानकर महाराज जनक के पूर्वज निमि पलकों पर से उतर गये। ऐसा माना जाता है कि सबकी पलकों पर निमि का निवास है ।)

देखि सीय सोभा सुखु पावा ❀ हृदय सराहत बचनु न आवा
जनु बिरंचि सब निज निपुनाई ❀ बिरचि बिस्व कहँ प्रगटि देखाई

सीता की शोभा देखकर राम ने बड़ा सुख पाया । मन ही मन वे उसकी सराहना करते हैं, किन्तु मुख से वचन नहीं निकलते । मानो ब्रह्मा ने अपनी सारी निपुणता को मूर्तिमान् कर संसार को प्रकट करके दिखा दिया है ।

सुन्दरता कहुँ सुन्दर करई ❀ छबि गृह दीप सिखा जनु बरई[3]
सब उपमा कबि रहे जुठारी ❀ केहि पटतरउँ बिदेह कुमारी

(यह शोभा) सुन्दरता को भी सुन्दर करने वाली है । मानो शोभा के घर में दीप की शिखा जल रही हो । (तुलसीदास कहते हैं) सारी उपमाओं को तो कवियों ने जूठा कर दिया है । मैं जनक की पुत्री की उपमा किससे दूं ?

---

१. मन्शा, इरादा । २. जनक महाराज के पूर्वज । ३. जल रही है ।

दो० सिय सोभा हियँ बरनि प्रभु आपनि दसा बिचारि।
बोले सुचि मन अनुज सन बचन समय अनुहारि।२३०

प्रभु रामचन्द्रजी हृदय में सीता की शोभा को वर्णन करके और अपनी दशा को विचारकर पवित्र मन से अपने छोटे भाई से समय के अनुसार वचन बोले—

तात जनक तनया यह सोई ❀ धनुष जग्य जेहि कारन होई
पूजन गौरि सखीं लइ आईं ❀ करत प्रकास फिरइ फुलवाईं

हे तात ! यह वही जनक की कन्या है, जिसके लिये धनुष-यज्ञ हो रहा है। सखियाँ पार्वतीजी की पूजा के लिये इसे ले आई हैं। यह फुलवाड़ी में प्रकाश करती हुई फिर रही है।

जासु बिलोकि अलौकिक सोभा ❀ सहज पुनीत मोर मनु छोभा
सो सब कारन जान बिधाता ❀ फरकहिं सुभग अंग सुनु भ्राता

जिसका अलौकिक सौन्दर्य देखकर स्वभाव ही से पवित्र मेरा मन क्षुब्ध हो गया है। उस सब कारण को विधाता ही जानते हैं। किन्तु हे भाई ! सुनो, मेरा सुन्दर (दाहिना) अंग फड़क रहा है।

रघुबंसिन्ह कर सहज सुभाऊ ❀ मन कुपंथ पगु धरइ न काऊ
मोहि अतिसय प्रतीति मन केरी ❀ जेहिं सपनेहु पर नारि न हेरी

रघु के वंश वालों का यह सहज (वंशगत) स्वभाव होता है कि उनका मन कभी बुरे रास्ते पर पैर नहीं रखता। मुझे तो अपने मन का अत्यन्त ही विश्वास है कि उसने स्वप्न में भी पराई स्त्री की इच्छा नहीं की।

जिन्ह कै लहहिं न रिपु रन पीठी ❀ नहिं पावहिं परतिय मन डीठी
मंगन लहहिं न जिन्ह कै नाहीं ❀ ते नरबर थोरे जग माहीं

रण में शत्रु जिनकी पीठ नहीं देख पाते, पराई स्त्रियाँ जिनके मन और दृष्टि को नहीं खींच पातीं और भिक्षुक जिनकी 'नाहीं' नहीं पाते, ऐसे श्रेष्ठ पुरुष संसार में थोड़े हैं।

दो० करत बतकही अनुज सन मन सिय रूप लोभान।
मुख सरोज मकरंद छबि करइ मधुप इव पान ॥२३१॥

राम छोटे भाई से बातें कर रहे हैं, पर सीता के रूप में लुभाया हुआ उनका मन सीता के कमल ऐसे मुख की मकरंदरूपी छवि को भौंरे की तरह पी रहा है।

चितवति चकित चहूँ दिसि सीता ❀ कहँ गए नृप किसोर मन चिंता
जहँ बिलोकि मृग सावक नयनी ❀ जनु तहँ बरिस कमल सित स्रेनी[1]

सीता चारों ओर चकित होकर देख रही हैं। उनके मन में चिन्ता है कि राजपुत्र कहाँ गये। वह मृग के बच्चे की-सी आँख वाली सीता जहाँ दृष्टि डालती हैं वहाँ मानो सफ़ेद कमलों की पंक्ति बरस पड़ती है। [अनुक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार]

लता ओट तब सखिन लखाए ❀ स्यामल गौर किसोर सुहाए
देखि रूप लोचन ललचाने ❀ हरषे जनु निज निधि पहिचाने

तब सखियों ने लता की आड़ में साँवले और गोरे सुन्दर कुमारों को दिखलाया। उनके रूप को देखकर नेत्र ललचा उठे। ऐसे हर्षित हुये, मानो उन्होंने अपना ख़जाना ही पहचान लिया।

थके नयन रघुपति छबि देखें ❀ पलकन्हिहूँ परिहरीं निमेषें
अधिक सनेह देह भै भोरी ❀ सरद ससिहि जनु चितव चकोरी

रामचन्द्रजी की छवि देखकर नेत्र निश्चल हो गये। पलकों ने भी गिरना छोड़ दिया। अधिक स्नेह से देह की सुध-बुध जाती रही। मानो शरद-ऋतु के चन्द्रमा को चकोरी देख रही हो।

लोचन मग रामहिं उर आनी ❀ दीन्हे पलक कपाट सयानी
जब सिय सखिन्ह प्रेमबस जानीं ❀ कहि न सकहिं कछु मन सकुचानीं

नेत्र के मार्ग से राम को हृदय में लाकर सयानी सीता ने पलकों के कपाट बन्द कर लिये। जब सखियों ने सीता को प्रेम के वश में जाना, तब वे मन में सकुचा गईं; कुछ कह नहीं सकती थीं।

दो०— लताभवन तें प्रगट भे तेहि अवसर दोउ भाइ।
निकसे जनु जुग बिमल बिधु जलद पटल बिलगाइ॥

उसी समय दोनों भाई लता-कुंज में से प्रकट हुये। मानो दो निर्मल

---

१. पाँती, कतार।

चन्द्रमा बादलों के पर्दे को हटाकर निकले हों।

सोभा सींवँ सुभग दोउ बीरा ❀ नील पीत जलजाभ सरीरा
मोरपंख सिर सोहत नीके ❀ गुच्छे बीच बिच कुसुम कली के

दोनों सुन्दर भाई शोभा की सीमा हैं। उनके शरीर नीले और पीले कमल की आभा वाले हैं। सिर पर सुन्दर मोर-पंख सुशोभित है। उनके बीच-बीच में फूलों की कलियों के गुच्छे लगे हैं।

भाल तिलक स्रमबिंदु सुहाये ❀ स्रवन सुभग भूषन छबि छाये
बिकट भृकुटि कच घूंघरवारे ❀ नव सरोज लोचन रतनारे

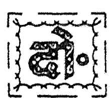
माथे पर तिलक और पसीने की बूँदें सुशोभित हैं। कानों में सुन्दर भूषण शोभा दे रहे हैं। भौंहें टेढ़ी और बाल घुँघराले हैं। नेत्र नवीन कमल के समान रतनारे हैं।

चारु चिबुक नासिका कपोला ❀ हास बिलास लेत मनु मोला
मुख छबि कहि न जाइ मोहि पाहीं ❀ जो बिलोकि बहु काम लजाहीं

ठुड्डी, नाक और गाल बड़े सुन्दर हैं। और हँसने का माधुर्य तो मानो मन को खरीद ही तो रहा है। (तुलसीदास कहते हैं—) मुझसे उनके मुख की छवि का वर्णन नहीं हो सकता, जिसे देखकर बहुत-से कामदेव लजा जाते हैं।

उर मनि माल कंबु कल ग्रीवाँ ❀ काम कलभ कर भुज बल सीवाँ
सुमन समेत बाम कर दोना ❀ साँवर कुँवर सखी सुठि लोना

छाती पर मणियों की माला है। गला शंख की तरह सुन्दर है। कामदेव के हाथी के बच्चे के सूँड़ की तरह बलवान् भुजायें हैं। बायें हाथ में फूलों-सहित दोना है। हे सखी ! साँवला कुमार तो बहुत ही सलोना है।



केहरि कटि पट पीत धर सुखमा सील निधान।
देखि भानुकुल भूषनहि बिसरा[1] सखिन्ह अपान[2] २३३

सिंह की-सी (पतली-लचीली) कमर वाले पीताम्बर धारण किये हुये सुन्दरता और शील के घर सूर्यकुल के भूषण रामचन्द्रजी को देखकर सखियों को अपनी सुध भूल गई।

१. भूल गया। २. अपनापन।



धरि धीरजु एक आलि सयानी ❀ सीता सन बोली गहि पानी
बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू ❀ भूप किसोर देखि किन लेहू

एक चतुर सखी धीरज धरकर, सीता का हाथ पकड़कर बोली—पार्वतीजी का ध्यान फिर कर लेना। राजकुमार को देख क्यों नहीं लेती ?

सकुचि सीय तब नयन उघारे ❀ सनमुख दोउ रघुसिंह निहारे
नख सिख देखि राम कै सोभा ❀ सुमिरि पिता पनु मनु अति छोभा

तब सीता ने सकुचाकर नेत्र खोले और उन्होंने रघुकुल के दोनों सिंहों को सामने देखा। सिर से पैर तक राम की शोभा देखकर और फिर पिता का प्रण याद करके उनका मन बहुत क्षुब्ध हो गया।

परबस सखिन्ह लखी जब सीता ❀ भयउ गहरु सब कहहिं सभीता
पुनि आउब एहि बरियाँ काली ❀ अस कहि मन बिहँसी एक आली

जब सखियों ने सीता को पर-वश (प्रेम के वश) देखा, तब सब भयभीत होकर कहने लगीं—बड़ी देर हो रही है, कल इसी समय फिर आयेंगी। ऐसा कहकर एक सखी मन में हँसी।

गूढ़ गिरा सुनि सिय सकुचानी ❀ भयउ बिलंबु मातु भय मानी
धरि बड़ि धीर रामु उर आने ❀ फिरी अपनपउ पितुबस जाने

सखी की मर्म-भरी वाणी सुनकर सीता सकुचा गईं। देर हो गई, यह सोचकर उन्हें माता का भय लगा। बहुत धीरज धरकर, राम को हृदय में ले आकर और अपने को पिता के वश में जानकर वे लौट चलीं।

दो॰ देखन मिस[1] मृग बिहँग तरु फिरइ बहोरि बहोरि।
निरखि निरखि रघुबीर छबि बाढ़इ प्रीति न थोरि॥

सीता मृग, पक्षी और वृक्षों को देखने के बहाने बार-बार घूम लेती हैं। राम की छवि देख-देखकर उनकी प्रीति कम नहीं बढ़ रही है।

जानि कठिन सिव चाप बिसूरति ❀ चली राखि उर स्यामल मूरति
प्रभु जब जात जानकी जानी ❀ सुख सनेह सोभा गुन खानी

शिवजी के धनुष को कठोर जानकर बिसूरती (मन में विलाप करती) हुई हृदय में राम की साँवली मूर्ति को रखकर चलीं। प्रभु राम ने जब सुख,

---

१. बहाना।

स्नेह, शोभा और गुणों की खान जानकी को जाती हुई जाना,

परम प्रेममय मृदु मसि कीन्हीं ❀ चारु चित्त भीतीं लिखि लीन्हीं
गई भवानी भवन बहोरी ❀ बन्दि चरन बोली कर जोरी

तब परम प्रेम की कोमल स्याही बनाकर उनके स्वरूप को सुन्दर चित्तरूपी भीत पर चित्रित कर लिया। सीता फिर पार्वतीजी के मन्दिर में गईं और उनके चरणों की वन्दना करके हाथ जोड़कर बोलीं—

जय जय गिरिवर राज किसोरी ❀ जय महेस मुख चन्द चकोरी
जय गजबदन षड़ानन माता ❀ जगत जननि दामिनि दुति गाता

हे पर्वतराज हिमाचल की कन्या पार्वतीजी! आपकी जय हो, जय हो! हे शिवजी के चन्द्रमा ऐसे मुख की चकोरी! आपकी जय हो! हे हाथी ऐसे मुख वाले गणेश और छः मुंह वाले स्वामि कार्तिक की माता! हे जगत् की माता! विद्युत की-सी प्रभा-युक्त शरीर वाली, आपकी जय हो!

नहिं तव आदि मध्य अवगाना ❀ अमित प्रभाव बेद नहिं जाना
भव[1] भव[2] बिभव पराभव कारिनि ❀ बिस्व बिमोहनि स्वबस बिहारिनि

हे पार्वतीजी! आपका न आदि है, न मध्य है और न अन्त है। आपके अमित प्रभाव को वेद भी नहीं जानते। आप संसार को उत्पन्न, पालन और नाश करने वाली हैं। आप संसार को मोहित करने वाली और स्वतन्त्र रूप से विहार करने वाली हैं।

दो०— पतिदेवता सुतीय महुँ मातु प्रथम तव रेख।
महिमा अमित न सकहिं कहि सहस सारदा सेख॥

पति को इष्टदेव मानने वाली श्रेष्ठ स्त्रियों में, हे माता! आपकी प्रथम गणना है। आपकी अपार महिमा को हजारों सरस्वती और शेष भी नहीं कह सकते।

सेवत तोहिं सुलभ फल चारी ❀ बरदायिनी पुरारि पियारी
देबि पूजि पद कमल तुम्हारे ❀ सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे

हे वर देने वाली, हे त्रिपुर के शत्रु शिवजी की प्रिय पत्नी पार्वतीजी! आपकी सेवा करने से चारों फल सुलभ हो जाते हैं। हे देवि! आपके कमल ऐसे

१. संसार। २. उत्पन्न।

चरणों की पूजा करके देवता, मनुष्य और मुनि सभी सुखी हो जाते हैं।

मोर मनोरथु जानहु नीकें ❀ बसहु सदा उर पुर सबही कें
कीन्हेउँ प्रगट न कारन तेहीं ❀ अस कहि चरन गहे बैदेहीं

मेरे मनोरथ को आप भली-भाँति जानती हैं; क्योंकि आप सदा सबके हृदय-रूपी नगर में निवास करती हैं। इसी से मैंने उसको प्रकट नहीं किया। ऐसा कहकर सीता ने पार्वतीजी के चरण पकड़ लिये।

बिनय प्रेम बस भई भवानी ❀ खसी माल मूरति मुसुकानी
सादर सियँ प्रसाद सिर धरेऊ ❀ बोली गौरि हरषु हियँ भरेऊ

पार्वतीजी सीता के विनय और प्रेम के वश में हो गईं। उनके गले की माला सरक पड़ी और मूर्त्ति मुसकुराई। सीता ने आदर-सहित प्रसाद (माला) को सिर पर धारण किया। तब पार्वती का हृदय हर्ष से भर गया और वे बोलीं—
[सूक्ष्म अलंकार]

सुनु सिय सत्य असीस हमारी ❀ पूजिहि मन कामना तुम्हारी
नारद बचन सदा सुचि साँचा ❀ सो बरु मिलिहि जाहिं मनु राँचा

हे सीता! मेरी सच्ची आसीस सुनो—तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी। नारदजी का वचन सदा पवित्र और सत्य होता है। जिसमें तुम्हारा मन लगा है, तुमको वही वर मिलेगा।

छंद—मन जाहिं राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुन्दर साँवरो
करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो ॥
एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषीं अली।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मंदिर चली ॥

जिसमें तुम्हारा मन अनुरक्त होगया है, वही स्वभाव ही से सुन्दर साँवला वर तुमको मिलेगा। वह करुणा के घर और सुजान हैं। तुम्हारे शील और स्नेह को जानते हैं। इस प्रकार पार्वती का आशीर्वाद सुनकर सीता सखियों समेत हृदय में आनन्दित हुईं। तुलसीदासजी कहते हैं—सीता पार्वती को बार-बार पूजकर प्रसन्न मन से राजभवन को गईं।

सो० जानि गौरि अनकूल सिय हिय हरषु न जात कहि।
मंजुल मङ्गल मूल बाम अंग फरकन लगे ॥२३६॥

पार्वती को अनुकूल जानकर सीता के हृदय को जो हर्ष हुआ, वह कहा नहीं जा सकता। सुन्दर कल्याण के मूल उनके बायें अंग फड़कने लगे।

हृदय सराहत सीय लोनाई[1] ❀ गुर समीप गवने दोउ भाई
राम कहा सब कौसिक[2] पाहीं ❀ सरल सुभाव छुआ छल नाहीं

हृदय में सीता के सौन्दर्य की प्रशंसा करते हुये दोनों भाई गुरु के पास गये। राम ने विश्वामित्र से सब कुछ कह दिया। क्योंकि उनका स्वभाव सरल है; छल उसे छू भी नहीं गया है।

सुमन पाइ मुनि पूजा कीन्ही ❀ पुनि असीस दुहु भाइन्ह दीन्ही
सुफल मनोरथ होहिं तुम्हारे ❀ राम लषनु सुनि भये सुखारे

फूल पाकर मुनि ने पूजा की। फिर दोनों भाइयों को आशीर्वाद दिया—तुम्हारे मनोरथ सफल हों! यह सुनकर राम-लक्ष्मण सुखी हुये।

करि भोजन मुनिवर बिग्यानी ❀ लगे कहन कछु कथा पुरानी
बिगत दिवस गुर आयसु पाई ❀ संध्या करन चले दोउ भाई

श्रेष्ठ विज्ञानी मुनि विश्वामित्र भोजन करके कुछ प्राचीन कथायें कहने लगे। दिन बीत जाने पर, गुरु की आज्ञा पाकर दोनों भाई संध्या करने चले।

प्राची दिसि ससि उगेउ सुहावा ❀ सिय मुख सरिस देखि सुखु पावा
बहुरि बिचारु कीन्ह मन माहीं ❀ सीय बदन सम हिमकर नाहीं

पूर्व दिशा में सुन्दर चन्द्रमा उदय हुआ। उसे सीता के मुख के समान देखकर राम ने सुख पाया। फिर उन्होंने मन में विचार किया कि सीता के मुख के समान चन्द्रमा नहीं है।

दो० जनम सिन्धु पुनि बन्धु बिष दिन मलीन सकलंक।
सिय मुख समता पाव किमि चन्द बापुरो रंक।२३७।

एक तो उसका जन्म (खारे) समुद्र से हुआ, दूसरे विष उसका भाई; तीसरे वह दिन में मलिन रहता है, चौथे कलङ्क (काले धब्बे) वाला है। भला,

---

१. लावण्य, सुन्दरता। २. विश्वामित्र।

वह ग़रीब बेचारा चन्द्रमा सीता के मुख की बराबरी कैसे पा सकता है ?

घटइ बढ़इ बिरहिनि दुखदाई ❀ ग्रसइ राहु निज सन्धिहिं पाई
कोक सोकप्रद पंकज द्रोही ❀ अवगुन बहुत चन्द्रमा तोही

फिर वह घटता-बढ़ता है और विरहिणियों को दुख देता है; अपनी संधि में पाकर राहु उसे ग्रस लेता है। वह चकवे को शोक देने वाला और कमल का द्रोही भी है। हे चन्द्रमा! तुममें बहुत से अवगुण हैं। [आक्षेपालङ्कार]

बैदेही मुख पटतर दीन्हे ❀ होइ दोषु बड़ अनुचित कीन्हे
सिय मुख छबि बिधु ब्याज[1] बखानी ❀ गुरु पहँ चले निसा बड़ि जानी

सीता के मुख से तेरी उपमा देने में बड़ा अनुचित करने का दोष लगेगा, चन्द्रमा के बहाने सीता के मुख की छवि का वर्णन करके, रात अधिक हुई जान कर, वे गुरु के पास चले।

करि मुनि चरन सरोज प्रनामा ❀ आयसु पाइ कीन्ह बिस्रामा
बिगत निसा रघुनायक जागे ❀ बन्धु बिलोकि कहन अस लागे

मुनि के कमल ऐसे चरणों को प्रणाम करके, आज्ञा पाकर उन्होंने विश्राम किया। रात बीतने पर रामचन्द्रजी जागे और भाई को देखकर ऐसा कहने लगे—

उयउ अरुन अवलोकहु ताता ❀ पंकज कोक लोक सुखदाता
बोले लषन जोरि जुग पानी ❀ प्रभु प्रभाव सूचक मृदु बानी

हे तात! देखो, सूर्य उदय हुआ है, जो कमल, चक्रवाक और समस्त संसार को सुख देने वाला है। लक्ष्मण दोनों हाथ जोड़कर प्रभु (रामचन्द्र) के प्रभाव को सूचित करने वाली कोमल वाणी बोले—

दो०— अरुनोदयँ सकुचे कुमुद उडुगन जोति मलीन।
जिमि तुम्हार आगमन सुनि भये नृपति बलहीन २३८

जिस प्रकार सूर्य के उदय होने से कुईं सकुचा गई, तारागणों की ज्योति फीकी पड़ गई; इसी प्रकार आपका आना सुनकर सब राजा बलहीन हो गये हैं।

नृप सब नखत करहिं उँजियारी ❀ टारि न सकहिं चाप तम भारी
कमल कोक मधुकर खग नाना ❀ हरषे सकल निसा अवसाना

सब राजा लोग तारों की तरह टिमटिमा रहे हैं, पर वे धनुष रूपी भारी

---

१. बहाना।

अन्धकार को नहीं टाल सकते। रात बीती हुई जानकर जैसे कमल, चक्रवाक, भौंरा और तरह-तरह के पक्षी हर्षित हो रहे हैं—

ऐसेहिं प्रभु सब भगत तुम्हारे ❁ होइहहिं टूटे धनुष सुखारे
उयउ भानु बिनु स्रम तम नासा ❁ दुरे नखत जग तेजु प्रकासा

हे प्रभो! इसी प्रकार आपके सब भक्त धनुष टूटने पर सुखी होंगे। सूर्य उदय हुआ; अन्धकार बिना परिश्रम ही के नष्ट हो गया; तारे छिप गये, संसार में तेज का प्रकाश हो गया।

रबि निज उदय ब्याज रघुराया ❁ प्रभु प्रतापु सब नृपन्ह दिखाया
तव भुज बल महिमा उदघाटी[1] ❁ प्रगटी धनु बिघटन परिपाटी

हे रामचन्द्र! सूर्य ने अपने उदय के बहाने सब राजाओं को प्रभु (आप) का प्रताप दिखलाया है। आपकी भुजाओं के बल की महिमा को खोलकर दिखाने के लिये ही धनुष तोड़ने की प्रथा प्रकट हुई है।

बंधु बचन सुनि प्रभु मुसुकाने ❁ होइ सुचि सहज पुनीत नहाने
नित्य क्रिया करि गुरु पहँ आये ❁ चरन सरोज सुभग सिर नाये

भाई का वचन सुनकर प्रभु रामचन्द्रजी मुसकुराये। फिर स्वभाव ही से पवित्र राम ने शौच से निवृत्त होकर स्नान किया। नित्य-कर्म करके वे गुरु के पास आये। और उन्होंने गुरु के सुन्दर चरण-कमलों में सिर नवाया।

सतानंद तब जनक बोलाये ❁ कौशिक मुनि पहिं तुरत पठाये
जनक बिनय तिन आनि सुनाई ❁ हरषे बोलि लिये दोउ भाई

तब जनक ने शतानन्द को बुलाया और उन्हें तुरन्त ही विश्वामित्र मुनि के पास भेजा। उन्होंने आकर जनक का निवेदन कह सुनाया। विश्वामित्र आनन्दित हुये और उन्होंने दोनों भाइयों को बुलाया।

दो० सतानन्द पद बन्दि प्रभु बैठे गुरु पहिं जाइ।
चलहु तात मुनि कहेउ तब पठवा जनक बोलाइ।२३९

शतानन्द के पद की वन्दना करके प्रभु रामचन्द्रजी गुरु के पास जा बैठे। तब मुनि ने कहा—हे तात! चलो, जनक ने बुला भेजा है।

१. खोलकर।

सीय स्वयंबरु देखिय जाई ❀ ईस काहि धौं[1] देइ बड़ाई
लषन कहा जस भाजन सोई ❀ नाथ कृपा तव जापर होई

चलकर सीता का स्वयंवर देखना चाहिये। देखें, ईश्वर किसे बड़ाई देते हैं। लक्ष्मण ने कहा—हे नाथ! जिस पर आपकी कृपा होगी, वही यश का पात्र होगा।

हरषे मुनि सब सुनि बर बानी ❀ दीन्हि असीस सबहिं सुख मानी
पुनि मुनिबृन्द समेत कृपाला ❀ देखन चले धनुष मख साला

इस श्रेष्ठ वाणी को सुनकर सब मुनि आनन्दित हुये। सब ने सुख मानकर आशीर्वाद दिया। तब कृपालु रामचंद्रजी मुनियों के समूह-सहित धनुष-यज्ञ का स्थान देखने चले।

रंग भूमि आये दोउ भाई ❀ असि सुधि सब पुरबासिन्ह पाई
चले सकल गृह काज बिसारी ❀ बाल जुबान जरठ नर नारी

जब दोनों भाई रङ्गभूमि में आये और नगर के सब निवासियों ने ऐसी ख़बर पाई, तब वे बालक, जवान और बूढ़े सभी स्त्री-पुरुष घर का काम-काज छोड़कर दौड़ पड़े।

देखी जनक भीर भइ भारी ❀ सुचि सेवक सब लिये हँकारी
तुरत सकल लोगन्ह पहिं जाहू ❀ आसन उचित देहु सब काहू

जब जनक ने देखा कि बड़ी भीड़ हो गई है, तब उन्होंने सब कुशल सेवकों को बुलवा लिया और कहा—तुम लोग जल्दी ही सब लोगों के पास जाओ और सबको यथायोग्य आसन दो।

दो॰ कहि मृदु बचन बिनीत तिन्ह बैठारे नर नारि।
उत्तम मध्यम नीच लघु निज निज थल अनुहारि॥

उन सेवकों ने कोमल और नम्र वचन कहकर उत्तम, मध्यम, नीच और लघु सब श्रेणी के पुरुष-स्त्रियों को अपने-अपने योग्य स्थान पर बैठाया।

राजकुँअर तेहि अवसर आये ❀ मनहुँ मनोहरता छबि छाये
गुन सागर नागर बर बीरा ❀ सुन्दर स्यामल गौर सरीरा

उसी अवसर में राजकुमार आये। मानो सौन्दर्य ही का शरीर शोभित है।

---

१. न जाने।

सुन्दर साँवले और गोरे शरीर वाले वे दोनों गुण के समुद्र, सुसभ्य और बड़े वीर थे।

राज समाज बिराजत रूरे ❀ उडुगन महुँ जनु जुग बिधु पूरे
जिन्ह कें रही भावना जैसी ❀ प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी

वे राज-समाज में ऐसे सुशोभित हो रहे हैं, जैसे तारागणों के समूह में दो पूर्ण चन्द्रमा हों। जिनकी जैसी भावना थी, प्रभु की मूर्त्ति को उन्होंने वैसी ही देखा।

देखहिं भूप महा रनधीरा ❀ मनहुँ बीर रस धरे सरीरा
डरे कुटिल नृप प्रभुहि निहारी ❀ मनहुँ भयानक मूरति भारी

राजा लोग उन्हें महा रणधीर देख रहे हैं। मानो वीर-रस स्वयं शरीर धारण किये हुये है। दुष्ट राजा प्रभु को देखकर डर गये। मानो बड़ी भयानक मूर्त्ति हो।

रहे असुर छल छोनिप[1] बेषा ❀ तिन्ह प्रभु प्रगट काल सम देखा
पुरबासिन्ह देखे दोउ भाई ❀ नरभूषन लोचन सुखदाई

छल से जो राक्षस वहाँ राजाओं के वेष में बैठे थे, उन्होंने प्रभु को प्रत्यक्ष काल के समान देखा। नगर-निवासियों ने दोनों भाइयों को मनुष्यों के भूषण रूप और नेत्रों को सुख देने वाला देखा।

दो०— नारि बिलोकहिं हरषि हिय निज निज रुचि अनुरूप।
जनु सोहत शृंगार धरि मूरति परम अनूप ॥२४१॥

स्त्रियाँ हृदय में हर्षित होकर अपनी-अपनी रुचि के अनुसार देख रही हैं। मानो शृङ्गार रस ही परम अनुपम मूर्त्ति धरकर सुशोभित हो रहा है।

बिदुषन्ह[2] प्रभु बिराटमय दीसा ❀ बहु मुख कर पग लोचन सीसा
जनक जाति अवलोकहिं कैसें ❀ सजन सगे प्रिय लागहिं जैसें

विद्वानों को प्रभु विराट रूप में दिखाई दिये, जिसके बहुत-से मुख, हाथ, पैर, नेत्र और शिर हैं। जनक के सजातीय (कुटुम्बी) लोग प्रभु को किस प्रकार देखते हैं, जैसे सगे सजन (सम्बन्धी) प्रिय लगते हैं।

---

१. राजा। २. विद्वानों को।

सहित बिदेह बिलोकहिं रानी ❀ सिसु सम प्रीति न जाति बखानी
जोगिन्ह परम तत्त्वमय भासा ❀ सांत सुद्ध सम सहज प्रकासा

जनक-सहित रानियाँ प्रभु को शिशु के समान देख रही हैं। उनकी प्रीति का बखान नहीं हो सकता। योगियों को वे शान्त, शुद्ध, सम और स्वतः प्रकाशमान परम तत्त्व के रूप में दिखाई पड़े।

हरि भगतन्ह देखे दोउ भ्राता ❀ इष्टदेव इव सब सुख दाता
रामहिं चितव भाव जेहि सीया ❀ सो सनेहु सुखु नहिं कथनीया

हरि-भक्तों ने दोनों भाइयों को सब सुखों के देने वाले इष्टदेव के समान देखा। सीता राम को जिस भाव से देख रही हैं, वह स्नेह और सुख तो कहने ही में नहीं आता।

उर अनुभवति न कहि सक सोऊ ❀ कवन प्रकार कहइ कबि कोऊ
जेहि बिधि रहा जाहि जस भाऊ ❀ तेहिं तस देखेउ कोसलराऊ

उस स्नेह और सुख को वे मन ही मन अनुभव कर रही हैं, पर वे भी उसे कह नहीं सकतीं। फिर भला, कवि उसे किस प्रकार कहे? इस प्रकार जिसका जैसा भाव था, उसने रामचन्द्रजी को वैसा ही देखा। [प्रथम उल्लेख अलंकार]

दो० राजत राज समाज महँ कोसलराज किसोर।
सुन्दर स्यामल गौर तनु बिस्व बिलोचन चोर २४२

सुन्दर साँवले और गोरे शरीर वाले तथा विश्व-भर की आँखों को चुराने वाले अयोध्या के राजकुमार इस प्रकार राजसभा में सुशोभित हो रहे हैं।

सहज मनोहर मूरति दोऊ ❀ कोटि काम उपमा लघु सोऊ
सरद चन्द निन्दक मुख नीके ❀ नीरज नयन भावते[1] जी के

दोनों मूर्त्तियाँ स्वभाव ही से मनोहर हैं। उनके लिये करोड़ों कामदेव की उपमा भी तुच्छ है। उनके सुन्दर मुँह शरद-ऋतु के चन्द्रमा का भी उपहास करने वाले हैं। और कमल ऐसे नेत्र जी के प्यारे हैं।

चितवनि चारु मार मनु हरनी ❀ भावति हृदय जाति नहिं बरनी
कल कपोल स्रुति कुण्डल लोला[2] ❀ चिबुक अधर सुन्दर मृदु बोला

राम की सुन्दर चितवन कामदेव के मन को भी हरने वाली है। वह हृदय

१. प्यारे। २. चंचल।

को बहुत ही प्रिय लगती है। उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। सुन्दर गाल हैं, कानों में चञ्चल कुण्डल हैं। ठुड्डी और ओंठ सुन्दर हैं। वाणी कोमल है।

कुमुद बन्धु कर निन्दक हाँसा ❀ भृकुटी बिकट मनोहर नासा
भाल बिसाल तिलक झलकाहीं ❀ कच[1] बिलोकि अलि अवलि लजाहीं

हँसी चन्द्रमा की किरणों का उपहास करने वाली है। भौंहें टेढ़ी और नासिका मनोहर है। चौड़े माथे पर तिलक झलक रहा है। बालों को देखकर भौंरों की पंक्तियाँ भी लजा जाती हैं।

पीत चौतनी सिरन्हि सुहाई ❀ कुसुम कली बिच बीच बनाई
रेखा रुचिर कम्बु कल ग्रीवाँ ❀ जनु त्रिभुवन सुषमा की सीवाँ

पीले रंग की चौकोनी टोपी सिरों पर सुशोभित हैं। उसमें बीच-बीच में फूल की कलियाँ काढ़ी हुई हैं। शंख के समान सुन्दर गले में सुन्दर तीन रेखायें हैं। जो मानो तीनों भुवनों की सुन्दरता की सीमा ही हैं।

दो०— कुञ्जर मनि कंठा कलित उरन्हि तुलसिका माल।
वृषभ कंध केहरि ठवनि बल निधि बाहुबिसाल।२४३।

छाती पर गजमुक्ताओं के सुन्दर कंठे और तुलसी की मालायें हैं। उनके कंधे बैलों के कंधों की तरह और ऐंड़ (खड़े होने की शान) सिंह के समान है, वे बल के भंडार हैं, और उनकी भुजायें लम्बी हैं।

कटि तूनीर पीत पट बाँधे ❀ कर सर धनुष बाम बर काँधे
पीत जग्य उपबीत सोहाए ❀ नख सिख मंजु महाछबि छाए

कमर में वे तरकस और पीताम्बर बाँधे हैं। हाथों में बाण और बाँयें सुन्दर कंधों पर श्रेष्ठ धनुष तथा पीले यज्ञोपवीत शोभायमान हैं। नख से लेकर शिखा तक उनके सारे अंग सुन्दर हैं और उन पर बड़ी छवि छाई हुई है।

देखि लोग सब भये सुखारे ❀ एकटक लोचन टरत न टारे
हरषे जनकु देखि दोऊ भाई ❀ मुनि पद कमल गहे तब जाई

उनको देखकर सब लोग सुखी हुये। एकटक देखते हुये नेत्र टालने से भी नहीं टलते हैं। जनक दोनों भाइयों को देखकर हर्षित हुये। और उन्होंने जाकर मुनि के कमल ऐसे चरण पकड़ लिये।

---

१. बाल।

करि बिनती निज कथा सुनाई ❁ रंगअवनि सब मुनिहि देखाई
जहँ जहँ जाहिं कुअँर बर दोऊ ❁ तहँ तहँ चकित चितव सब कोऊ

विनती करके उन्होंने अपनी कथा कह सुनाई और मुनि को सारी रंगभूमि दिखलाई। मुनि के साथ जहाँ-जहाँ दोनों श्रेष्ठ राजकुमार जाते हैं, वहाँ-वहाँ सब लोग आश्चर्य-चकित होकर देखने लगते हैं।

निज निज रुख रामहिं सब देखा ❁ कोउ न जान कछु मरमु बिसेखा
भलि रचना मुनि नृप सन कहेऊ ❁ राजा मुदित महासुख लहेऊ

सबने राम को अपनी ही ओर रुख (मुख) किये हुये देखा, परंतु इसके विशेष रहस्य कोई न जान सका। मुनि ने राजा से कहा—रचना अच्छी है। सुनकर राजा ने हर्षित होकर अत्यन्त सुख पाया।

दो॰ सब मंचन्ह तें मंचु एक सुन्दर बिसद बिसाल।
मुनि समेत दोउ बंधु तहँ बैठारे महिपाल ॥२४४॥

सब मञ्चों से एक मञ्च अधिक सुन्दर, लम्बा-चौड़ा और बड़ा था। स्वयं राजा ने मुनि-सहित दोनों भाइयों को वहाँ ले जाकर बैठाया।

प्रभुहि देखि सब नृप हियँ हारे ❁ जनु राकेस उदय भयें तारे
अस प्रतीति सबके मन माहीं ❁ राम चाप तोरब सक[1] नाहीं

प्रभु रामचन्द्रजी को देखकर सब राजा हृदय में ऐसे हार मान गये, जैसे पूर्ण चन्द्रमा के उदय होने पर तारे (प्रभाहीन) हो जाते हैं। सबके मन में ऐसा विश्वास हो गया कि राम धनुष को तोड़ेंगे, इसमें संदेह नहीं।

बिनु भंजेहु भव धनुष बिसाला ❁ मेलिहि सीय राम उर माला
अस बिचारि गवनहु घर भाई ❁ जसु प्रतापु बलु तेजु गँवाई

और शिवजी के विशाल धनुष को बिना तोड़े भी सीता राम ही के गले में जयमाला डाल देंगी। हे भाई ! ऐसा समझकर यश, प्रताप, बल और तेज गँवाकर चलो, अपने-अपने घर चलें।

बिहँसे अपर भूप सुनि बानी ❁ जे अबिबेक अंध अभिमानी
तोरेहुँ धनुष ब्याहु अवगाहा ❁ बिनु तोरें को कुअँरि बिआहा

दूसरे राजा जो अविवेक से अंधे हो रहे थे और अभिमानी थे, यह बात

१. शक, संदेह।

सुनकर बहुत हँसे। उन्होंने कहा—धनुष तोड़ने पर भी विवाह होना अथाह (कठिन) है। फिर बिना तोड़े कौन राजकुमारी को ब्याह सकता है।

एक बार कालउ किन होऊ ❀ सिय हित समर जितब हम सोऊ
यह सुनि अपर भूप मुसुकाने ❀ धरमसील हरिभगत सयाने

एक बार तो काल ही क्यों न हो, सीता के लिये हम उसे भी युद्ध में जीतेंगे। यह सुनकर दूसरे राजा, जो धर्मात्मा, हरि-भक्त और सयाने थे, मुसकुराये।

सो०— सीय बिआहबि राम गरब दूरि करि नृपन्ह के।
जीति को सक संग्राम दसरथ के रन बाँकुरे॥२३५॥

उन्होंने कहा—राजाओं के गर्व को दूर करके राम सीता को ब्याहेंगे। महाराज दशरथ के रण में बाँके वीरों को युद्ध में कौन जीत सकता है?

बृथा मरहु जनि गाल बजाई ❀ मन मोदकन्हि[1] कि भूख बुताई
सिख हमार सुनि परम पुनीता ❀ जगदम्बा जानहु जियँ सीता

गाल बजाकर (बकबक करके) व्यर्थ ही मत मरो। मन के लड्डुओं से भी कहीं भूख बुझती है? हमारी परम पवित्र सीख को सुनकर जी में सीता को जगत् की माता समझो।

जगत पिता रघुपतिहि बिचारी ❀ भरि लोचन छबि लेहु निहारी
सुन्दर सुखद सकल गुनरासी ❀ ए दोउ बंधु संभु उर बासी

तथा रामचन्द्रजी को जगत् का पिता विचारकर, आँखें भरकर उनकी शोभा देख लो। सुन्दर सुख देने वाले और सब गुणों की राशि ये दोनों भाई शिवजी के हृदय में बसने वाले हैं।

सुधा समुद्र समीप बिहाई ❀ मृग जलु निरखि मरहु कत धाई
करहु जाइ जा कहँ जोइ भावा ❀ हम तौ आजु जनम फल पावा

समीप आये हुये अमृत के समुद्र को छोड़कर तुम मृगजल देखकर दौड़-कर क्यों मरते हो? फिर भाई जिसे जो अच्छा लगे, वही जाकर वह करे; हमने तो आज जन्म लेने का फल पा लिया।

अस कहि भले भूप अनुरागे ❀ रूप अनूप बिलोकन लागे
देखहिं सुर नभ चढ़े बिमाना ❀ बरषहिं सुमन करहिं कल गाना

---

१. लड्डू।

ऐसा कहकर अच्छे राजा प्रेम-मग्न हो गये और राम का अनुपम रूप देखने लगे। देवता आकाश में विमानों पर चढ़े हुये दर्शन कर रहे हैं, फूल बरसा रहे हैं और सुन्दर गान कर रहे हैं।

दो०—जानि सुअवसरु सीय तब पठई जनक बोलाइ।
चतुर सखीं सुन्दर सकल सादर चलीं लवाइ ॥२४६॥

तब सुअवसर जानकर जनक ने सीता को बुला भेजा। सब चतुर और सुन्दर सखियाँ आदर-सहित उन्हें लिवा चलीं।

सिय सोभा नहिं जाइ बखानी ❀ जगदंबिका रूप गुन खानी
उपमा सकल मोहि लघु लागीं ❀ प्राकृत नारि अंग अनुरागीं

सीता की शोभा का वर्णन नहीं हो सकता। वे जगत् की माता और रूप और गुणों की खान हैं। मुझे उनके लिये सब उपमायें तुच्छ लगती हैं, क्योंकि वे लौकिक स्त्रियों के अङ्गों से अनुराग रखने वाली हैं।

सिय बरनिअ तेइ उपमा देई ❀ कुकबि कहाइ अजसु को लेई
जौं पटतरिअ तीय महँ सीया ❀ जग असि जुबति कहाँ कमनीया

सीता के वर्णन में उन्हीं उपमाओं को देकर कौन कुकवि कहलाये और अपयश ले। यदि साधारण स्त्रियों से सीता की तुलना की जाय, तो संसार में ऐसी सुन्दर युवती हैं ही कहाँ ? [काव्यलिङ्ग अलङ्कार]

गिरा मुखर तनु अरध भवानी ❀ रति अति दुखित अतनु पति जानी
बिष बारुनी[1] बंधु प्रिय जेही ❀ कहिअ रमा सम किमि बैदेही

सरस्वती तो बकवादिनी हैं, पार्वती अर्द्धाङ्गिनी हैं, कामदेव की स्त्री रति पति को बिना शरीर का जानकर बहुत दुःखित रहती है। और जिसे विष और शराब ऐसे भाई प्रिय हैं, उन लक्ष्मी के समान सीता को कैसे कह सकते हैं ?

जौं छबि सुधा पयोनिधि होई ❀ परम रूप मय कच्छप सोई
सोभा रजु मंदरु सिंगारू ❀ मथइ पानि पंकज निज मारू

यदि छविरूपी अमृत का समुद्र हो, अत्यन्त रूप ही कच्छप हो, शोभा-रूपी रस्सी और शृङ्गार पर्वत हो और स्वयं कामदेव अपने कर-कमल से मथे—

१. शराब।

दो०— एहि बिधि उपजै लच्छि[1] जब सुंदरता सुख मूल।
तदपि सकोच समेत कबि कहहिं सीय सम तूल[2]।२४७

इस प्रकार से जब सुन्दरता और सुख की मूल लक्ष्मी उत्पन्न हो, तो भी उसे संकोच के साथ कवि लोग सीता के समान कहेंगे। [दूसरा उल्लेख अलंकार]

चलीं संग लै सखी सयानी ❀ गावत गीत मनोहर बानी
सोह नवल तनु सुंदर सारी ❀ जगत जननि अतुलित छबि भारी

सयानी सखियाँ सीता को साथ लेकर मनोहर वाणी से गीत गाती हुई चलीं। सीता के नवल शरीर पर सुन्दर साड़ी सुशोभित है। जगत्-जननी की महान् छवि अतुलनीय है।

भूषन सकल सुदेस सुहाए ❀ अंग अंग रचि सखिन्ह बनाए
रंगभूमि जब सिय पगु धारी ❀ देखि रूप मोहे नर नारी

सब आभूषण अपने-अपने स्थान पर शोभित हैं। सखियों ने अंग-अंग में भली-भाँति सजाकर पहनाया है। जब सीता ने रंगभूमि में पैर रक्खा, तब उनका रूप देखकर स्त्री-पुरुष सभी मोहित हो गये।

हरषि सुरन्ह दुंदुभी बजाई ❀ बरषि प्रसून अपछरा गाई
पानि सरोज सोह जयमाला ❀ अवचट चितए सकल भुआला

देवताओं ने हर्षित होकर नगाड़े बजाये और फूल बरसाकर अप्सरायें गाने लगीं। सीता के कमल ऐसे हाथों में जयमाला शोभित है। सब राजा चकित होकर अचानक उनकी ओर देखने लगे।

सीय चकित चित रामहि चाहा ❀ भये मोहबस सब नरनाहा
मुनि समीप देखे दोउ भाई ❀ लगे ललकि लोचन निधि पाई

सीता का चकित चित्त तो राम को चाहता है। सब राजा लोग मोह के वश हो गये। सीता ने मुनि के पास दोनों भाइयों को देखा, तो उनके नेत्र अपना खजाना पाकर ललककर वहीं जा लगे।

दो०— गुर जन लाज समाज बड़ देखि सीय सकुचानि।
लगी बिलोकन सखीन्ह तन रघुबीरहिं उर आनि।२४८

१. लक्ष्मी। २. तुल्य।

गुरुजनों की लाज से और बड़े समाज को देखकर सीता सकुचा गईं। वे रामचन्द्रजी को हृदय में लाकर सखियों की ओर देखने लगीं।

राम रूपु अरु सिय छबि देखें ❀ नर नारिन्ह परिहरीं निमेषें[1]
सोचहिं सकल कहत सकुचाहीं ❀ बिधि सन बिनय करहिं मन माहीं

राम का रूप और सीता की छवि देखकर स्त्री-पुरुषों ने पलक भाँजना छोड़ दिया। सब मन ही मन सोचते हैं, पर कहते हुये सकुचाते हैं। मन में वे ब्रह्मा से विनय करते हैं—

हरु बिधि बेगि जनक जड़ताई ❀ मति हमार असि देहि सुहाई
बिनु बिचार पनु तजि नरनाहू ❀ सीय राम कर करै बिआहू

हे ब्रह्मा! शीघ्र ही जनक की जड़ता को हर लो और हमारी ऐसी सुहावनी बुद्धि उन्हें दो कि बिना ही विचार किये, प्रण छोड़कर, वे सीता का विवाह राम से कर दें।

जगु भल कहिहि भाव सब काहू ❀ हठ कीन्हे अन्तहुँ उर दाहू
एहिं लालसा मगन सब लोगू ❀ बरु साँवरो जानकी जोगू

संसार उन्हें अच्छा कहेगा, क्योंकि सबको अच्छा लग रहा है। हठ करने से अन्त में हृदय में जलन ही होगी। सब लोग इसी लालसा में मग्न हो रहे हैं कि जानकी के योग्य वर यह साँवला ही है।

तब बंदीजन जनक बोलाए ❀ बिरदावली कहत चलि आये
कह नृपु जाइ कहहु पन मोरा ❀ चले भाँट हियँ हरष न थोरा

तब राजा जनक ने बन्दीजनों (भाटों) को बुलाया। वे वंश की कीर्ति गाते हुये चले आये। राजा ने कहा—जाकर मेरा प्रण कहो। भाट चले। उनके हृदय में कम आनन्द नहीं था।

दो० बोले बंदी[2] बचन बर सुनहु सकल महिपाल।
पन बिदेह कर कहहिं हम भुजा उठाइ बिसाल।२४९

भाटों ने श्रेष्ठ वचन कहा—हे सब राजागण! सुनिये। हम अपनी विशाल भुजा उठाकर महाराज जनक का प्रण कहते हैं।

---

१ पलक गिराना। २. भाट।

नृप भुजबल बिधु सिव धनु राहू ❀ गरुअ कठोर बिदित सब काहू
रावन बान महाभट भारे ❀ देखि सरासन गवहिं सिधारे

राजाओं की भुजाओं का बल चन्द्रमा है, शिवजी का धनुष राहु है; बड़ा भारी है, कठोर है यह सबको मालूम है। रावण और बाणासुर बड़े भारी योद्धा भी इस धनुष को देखकर चुपके-से चलते बने।

सोइ पुरारि कोदण्ड[1] कठोरा ❀ राज समाज आजु जोइ तोरा
त्रिभुवन जय समेत बैदेही ❀ बिनहिं बिचार बरइ हठि तेही

शिवजी के उसी कठोर धनुष को आज राजसभा में जो तोड़ेगा, तीनों लोकों की विजय के साथ ही सीता उसको बिना किसी विचार के, हठपूर्वक वरण करेंगी।

सुनि पन सकल भूप अभिलाषे ❀ भट मानी अतिसय मन माषे
परिकर बाँधि उठे अकुलाई ❀ चले इष्टदेवन्ह सिरु नाई

प्रण सुनकर सब राजा ललचा उठे। जो अभिमानी योद्धा थे, वे मन में बहुत ही जोश में आये। सब कमर कसकर, अकुलाकर उठे और अपने इष्टदेवों को प्रणाम करके चले।

तमकि ताकि तकि सिव धनु धरहीं ❀ उठइ न कोटि भाँति बल करहीं
जिन्ह के कछु बिचार मन माहीं ❀ चाप समीप महीप न जाहीं

वे किचकिचाकर और दृष्टि जमाकर शिवजी के धनुष को पकड़ते हैं; पर करोड़ों भाँति से ज़ोर लगाने पर भी वह उठता नहीं है। जिन राजाओं के मन में कुछ विवेक है, वे धनुष के पास ही नहीं जाते।

दो० तमकि धरहिं धनु मूढ़ नृप उठइ न चलहिं लजाइ।
मनहुँ पाइ भट बाहु बल अधिक अधिक गरुआइ।२५०

मूढ़ राजा किचकिचाकर धनुष को पकड़ते हैं, परंतु जब वह नहीं उठता तो लजाकर चले जाते हैं। मानो वीरों की भुजाओं का बल पाकर वह धनुष और भी भारी हो जाता है।

भूप सहस दस एकहि बारा ❀ लगे उठावन टरइ न टारा
डगइ न संभु सरासन कैसें ❀ कामी बचन सती मनु जैसें

---

१. धनुष।

तब दस हज़ार राजा एक ही बार धनुष को उठाने लगे, तौ भी वह टालने से नहीं टलता। शंभु का वह धनुष इस प्रकार नहीं डिगता था, जैसे कामी पुरुष के वचन से सती का मन नहीं चलायमान होता।

सब नृप भये जोगु उपहासी ❀ जैसें बिनु बिराग संन्यासी
कीरति बिजय बीरता भारी ❀ चले चाप कर बरबस हारी

सब राजा उपहास के योग्य हो गये, जैसे वैराग्य के बिना संन्यासी हँसी के योग्य हो जाता है। कीर्ति, विजय, बड़ी वीरता इन सबको वे धनुष के हाथों बरबस हारकर चले गये।

स्रीहत भये हारि हियँ राजा ❀ बैठे निज निज जाइ समाजा
नृपन्ह बिलोकि जनकु अकुलाने ❀ बोले बचन रोष जनु साने

राजा लोग हृदय में हार मानकर श्रीहीन हो गये, और अपने-अपने समाज में जा बैठे। राजाओं को देखकर जनक अकुला उठे और क्रोध में सने हुये-से वचन बोले—

दीप दीप के भूपति नाना ❀ आये सुनि हम जो पन ठाना
देव दनुज धरि मनुज सरीरा ❀ बिपुल बीर आये रनधीरा

मैंने जो प्रण ठाना था, उसे सुनकर द्वीप-द्वीप के अनेकों राजा आये। देवता और राक्षस भी मनुष्य का शरीर धारण करके तथा और भी बहुत-से रणधीर वीर आये।

दो०— कुँअरि मनोहर बिजय बड़ि कीरति अति कमनीय।
पावनिहार बिरंचि जनु रचेउ न धनु दमनीय॥२५१॥

मन को हरने वाली कन्या, बड़ी विजय और अत्यन्त सुन्दर कीर्ति को पाने वाला, धनुष को तोड़ने वाला मानो ब्रह्मा ने किसी को रचा ही नहीं।

कहहु काहि यह लाभु न भावा ❀ काहुँ न संकर चाप चढ़ावा
रहउ चढ़ाउब तोरब भाई ❀ तिलु भरि भूमि न सकेउ छुड़ाई

कहिये, यह लाभ किसे नहीं रुचता था? किसी ने भी शिवजी का धनुष नहीं चढ़ाया। अरे भाई! चढ़ाना और तोड़ना तो अलग रहा, कोई तिल भर भूमि भी छुड़ा न सका।

अब जनि कोउ माषइ भट मानी ❀ बीर बिहीन मही मैं जानी
तजहु आस निज निज गृह जाहू ❀ लिखा न बिधि बैदेहि बिबाहू

अब कोई वीरता का अभिमानी बुरा न माने। मैंने पृथ्वी को बिना वीर की जान लिया। अब आशा छोड़कर अपने-अपने घर जाओ; ब्रह्मा ने सीता का विवाह लिखा ही नहीं।

सुकृत जाइ जौं पन परिहरऊँ ❀ कुअँरि कुआँरि रहइ का करऊँ
जौ जनतेउँ बिनु भट[1] भुइँ भाई ❀ तौ पन करि होतेउँ न हँसाई

प्रण छोड़ता हूँ, तो पुण्य जाता है; कन्या कुमारी रहे, तो अब क्या करूँ ? यदि मैं जानता कि पृथ्वी बिना वीर की है, तो प्रण करके उपहास का पात्र न बनता।

जनक बचन सुनि सब नर नारी ❀ देखि जानकिहि भये दुखारी
माषे लखन कुटिल भइँ भौंहें ❀ रदपट[2] फरकत नयन रिसौंहें

जनकजी की बात सुनकर सब स्त्री-पुरुष जानकी की ओर देखकर खिन्न हुये। परन्तु लक्ष्मण जोश में आये, उनकी भौंहें टेढ़ी हो गईं। ओंठ फड़कने लगे और नेत्र क्रोधित हो गये।

दो० कहि न सकत रघुबीर डर लगे बचन जनु बान।
नाइ राम पद कमल सिरु बोले गिरा प्रमान ॥२५२॥

राम के डर से कुछ कह नहीं सकते हैं, पर जनक के वचन उन्हें बाण की तरह लगे। फिर भी राम के कमल ऐसे चरणों में सिर नवाकर वे ज़ोरदार वचन बोले—

रघुबंसिन्ह महँ जहँ कोउ होई ❀ तेहिं समाज अस कहइ न कोई
कही जनक जसि अनुचित बानी ❀ बिद्यमान रघुकुलमनि जानी

रघुवंशियों में जहाँ कहीं कोई होता है, उस समाज में ऐसा कोई कह नहीं सकता—जैसे अनुचित वचन रघुकुल के शिरोमणि राम को मौजूद जानते हुये भी जनकजी ने कहे हैं।

सुनहु भानुकुल पंकज भानू ❀ कहउँ सुभाव न कछु अभिमानू
जौं तुम्हारि अनुसासन पावौं ❀ कंदुक इव ब्रह्मांड उठावौं

१. वीर। २. ओंठ।

हे सूर्य-कुलरूपी कमल के सूर्य ! सुनिये। मैं स्वभाव ही से कहता हूँ, कुछ अभिमान करके नहीं; यदि आपकी आज्ञा पाऊँ, तो मैं ब्रह्मांड को गेंद की तरह उठा लूँ।

काँचे घट जिमि डारौं फोरी ❀ सकउँ मेरु मूलक[1] इव तोरी
तव प्रताप महिमा भगवाना ❀ का बापुरो पिनाक पुराना

और उसे कच्चे घड़े की तरह फोड़ डालूँ। मैं सुमेरु पर्वत को मूली की तरह तोड़ सकता हूँ। हे भगवान् ! आपके प्रताप की महिमा से यह बेचारा पुराना धनुष क्या है ?

नाथ जानि अस आयसु होऊ ❀ कौतुक करौं बिलोकिअ सोऊ
कमल नाल जिमि चाप चढ़ावौं ❀ जोजन सत प्रमान लै धावौं

ऐसा जानकर हे नाथ ! आज्ञा हो, तो कुछ खेल करूँ। उसे भी देखिये। धनुष को कमल की डंडी की तरह चढ़ाकर उसे सौ योजन तक लेकर दौड़ूँ।

दो॰ तोरौं छत्रक दण्ड जिमि तव प्रताप बल नाथ।
जौं न करौं प्रभु पद सपथ कर न धरौं धनु भाथ।२५३

हे नाथ ! आपके प्रताप के बल से धनुष को कुकर-मुत्ते की डंठल की तरह तोड़ दूं। यदि ऐसा न करूँ, तो प्रभु के चरणों की शपथ है, फिर मैं धनुष और तरकस को कभी हाथ में भी न लूँगा।

लषन सकोप बचन जब बोले ❀ डगमगानि महि दिग्गज डोले
सकल लोक सब भूप डेराने ❀ सिय हियँ हरष जनकु सकुचाने

जब लक्ष्मण क्रोध-सहित वचन बोले, तब पृथ्वी डगमगा उठी और दिशाओं के हाथी काँप उठे। सब लोकों के सब राजा लोग डर गये; सीता के हृदय में आनन्द आ गया और जनक भी लजा गये। [प्रथम व्याघात अलंकार]

गुर रघुपति सब मुनि मन माहीं ❀ मुदित भये पुनि पुनि पुलकाहीं
सयनहिं रघुपति लषनु निवारे ❀ प्रेम समेत निकट बैठारे

गुरु विश्वामित्रजी राम और सब मुनि मन में हर्षित हुये और बार-बार पुलकित होने लगे। राम ने इशारे से लक्ष्मण को रोका और प्रेम-सहित उनको पास बैठा लिया।

---

१. मूली।

बिस्वामित्र समय सुभ जानी ❀ बोले अति सनेह मय बानी
उठहु राम भंजहु भव चापा ❀ मेटहु तात जनक परितापा

विश्वामित्र अच्छा समय जानकर बहुत स्नेह से युक्त वाणी बोले—हे राम ! उठो, शिव का धनुष तोड़ो और हे तात ! जनक का दुःख मिटाओ।

सुनि गुरु बचन चरन सिरु नावा ❀ हरष बिषाद न कछु उर आवा
ठाढ़ भये उठि सहज सुभायें ❀ ठवनि जुआ मृगराजु[1] लजायें

गुरु के वचन सुनकर राम ने उनके चरणों में सिर नवाया। उनके मन में न हर्ष हुआ न विषाद। सहज स्वभाव ही से वे उठकर खड़े हो गये। उनकी ऐंड (खड़े होने की शान) से जवान सिंह भी लज्जित हो जाय।

दो०· उदित उदय गिरि मंच पर रघुबर बाल पतंग।
बिकसे संत सरोज सब हरषे लोचन भृङ्ग ॥२५४॥

मंचरूपी उदयाचल पर रामरूपी बाल-सूर्य को उदित देखकर सब संतरूपी कमल विकसित हुये और नेत्ररूपी भौंरे हर्षित हो गये। [रूपक अलंकार]

नृपन्ह केरि आसा निसि नासी ❀ बचन नखत अवली न प्रकासी
मानी महिप कुमुद सकुचाने ❀ कपटी भूप उलूक लुकाने

राजाओं की आशारूपी रात नष्ट हो गई। उनके वचनरूपी तारों के समूह का चमकना भी बंद हो गया। अभिमानी राजारूपी कुमुद मुँद गये और कपटी राजारूपी उल्लू छिप गये।

भये बिसोक कोक मुनि देवा ❀ बरषहिं सुमन जनावहिं सेवा
गुर पद बन्दि सहित अनुरागा ❀ राम मुनिन्ह सन आयसु माँगा

मुनि और देवतारूपी चकवे शोकरहित हो गये। देवता फूल बरसा रहे हैं और अपना सेवा-भाव प्रकट कर रहे हैं। प्रेम-सहित गुरु के चरणों की वन्दना करके राम ने मुनियों से आज्ञा माँगी। [ऊपर के दोहे से 'भये बिसोक कोक मुनि देवा' तक साङ्ग रूपक।]

सहजहि चले सकल जग स्वामी ❀ मत्त मंजु बर कुञ्जर गामी
चलत राम सब पुर नर नारी ❀ पुलक पूरि तन भए सुखारी

सारे संसार के स्वामी और सुन्दर मतवाले श्रेष्ठ हाथी की तरह चलने वाले

---

१. सिंह।

राम अपनी स्वाभाविक गति से चले। राम के चलते समय जनकपुर के सब स्त्री-पुरुषों के शरीर पुलकायमान हो गये और वे सुखी हुये।

बंदि पितर सब सुकृत सँभारे ❀ जौं कछु पुन्य प्रभाउ हमारे
तौं सिव धनु मृनाल[1] की नाईं[2] ❀ तोरहिं रामु गनेस गोसाईं

उन्होंने पितरों की वन्दना की और सब पुण्यों का स्मरण किया कि जो हमारे पुण्यों का कुछ भी प्रभाव हो, तो हे गणेश गोसाईं! राम शिवजी के धनुष को कमल के नाल की तरह तोड़ डालें।

दो॰ रामहिं प्रेम समेत लखि सखिन्ह समीप बोलाइ।
सीता मातु सनेह बस बचन कहै बिलखाइ।२५५।

राम को प्रेम-सहित देखकर और सखियों को समीप बुलाकर सीता की माता स्नेह के वश होकर, विलाप करती हुई-सी, कहने लगीं—

सखि सब कौतुक देखनिहारे ❀ जेउ कहावत हितू हमारे
कोउ न बुझाइ कहइ गुर पाहीं ❀ ए बालक असि हठ भलि नाहीं

हे सखि! ये जो हमारे हितू कहलाते हैं, वे भी सब तमाशा देखने वाले ही हैं। कोई भी इनके गुरु (विश्वामित्रजी) को समझाकर नहीं कहता कि ये (राम) बालक हैं, इनके लिये ऐसा हठ अच्छा नहीं।

रावन बान[3] छुआ नहिं चापा ❀ हारे सकल भूप करि दापा
सो धनु राजकुँअर कर देहीं ❀ बाल मराल कि मंदर लेहीं

रावण और बाणासुर ने जिस धनुष को छुआ तक नहीं और सब राजा रोष दिखाकर हार गये, वही धनुष राजकुमार के हाथ में दिया जा रहा है। हंस का बच्चा भी कहीं मंदराचल को उठा सकता है? [वक्रोक्ति अलंकार]

भूप सयानप सकल सिरानी ❀ सखि बिधि गति कछु जाति न जानी
बोली चतुर सखी मृदु बानी ❀ तेजवंत लघु गनिअ न रानी

और राजा का तो सारा सयानापन समाप्त हो गया है। हे सखी! ब्रह्मा की गति कुछ जानी नहीं जा सकती। तब दूसरी सखी कोमल वाणी से बोली—हे रानी! तेजस्वी को छोटा नहीं गिनना चाहिये।

---

१. कमल की डंडी। २. तरह। ३. बाणासुर।

कहँ कुम्भज[1] कहँ सिंधु अपारा ❀ सोखेउ सुजसु सकल संसारा
रबि मंडल देखत लघु लागा ❀ उदय तासु त्रिभुवन तम भागा

कहाँ घड़े से उत्पन्न होने वाले छोटे-से मुनि अगस्त्य और कहाँ अपार समुद्र; किन्तु अगस्त्य ने उसे सोख लिया; जिसका सुयश सारे संसार में फैला हुआ है। सूर्यमंडल देखने में तो छोटा लगता है, पर उसके उदय होते ही तीनों लोकों का अन्धकार भाग जाता है।

दो॰ मंत्र परम लघु जासु बस बिधि हरि हर सुर सर्ब।
महामत्त गजराज कहुँ बस कर अंकुस खर्ब[2] ॥२५६॥

मन्त्र बहुत छोटा होता है, पर उसके वश में ब्रह्मा, विष्णु, शिव और सभी देवता हैं। इसी तरह बड़े मतवाले हाथी को छोटा-सा अंकुश वश में कर लेता है। [प्रमाण अलङ्कार]

काम कुसुम धनु सायक लीन्हे ❀ सकल भुवन अपने बस कीन्हे
देबि तजिअ संसय अस जानी ❀ भंजब धनुषु राम सुनु रानी

कामदेव ने फूलों ही का धनुष-बाण लेकर समस्त लोकों को अपने वश में कर रक्खा है। हे देवी ! ऐसा जानकर सन्देह छोड़ दीजिये। हे रानी ! सुनिये, राम धनुष को अवश्य ही तोड़ेंगे। [भ्रान्त्यापन्हुति अलङ्कार]

सखी बचन सुनि भइ परतीती ❀ मिटा बिषाद बढ़ी अति प्रीती
तब रामहिं बिलोकि बैदेही ❀ सभय हृदय बिनवति जेहि तेही

सखी की बात सुनकर रानी को विश्वास हो गया, खेद मिट गया और राम में अत्यन्त प्रीति बढ़ गई। उस समय राम को देखकर सीता भयभीत हृदय से जिस-तिस (देवता) से विनती कर रही हैं।

मनहीं मन मनाव अकुलानी ❀ होहु प्रसन्न महेस भवानी
करहु सुफल आपनि सेवकाई ❀ करि हितु हरहु चाप गरुआई

व्याकुल होकर सीता मन ही मन (देवताओं को) मना रही हैं—हे शिव-पार्वती ! मुझ पर प्रसन्न होइये और मैंने जो आपकी सेवा की है, उसका सुन्दर फल दीजिये। मुझ पर स्नेह करके धनुष के भारीपन को हर लीजिये।

---

१. अगस्त्य मुनि। २. छोटा।

गननायक बर दायक देवा ❀ आजु लगें कीन्हिउँ तुअ सेवा
बार बार बिनती सुनि मोरी ❀ करहु चाप गरुता अति थोरी

हे गणों के नायक वर देने वाले देवता गणेशजी ! आज ही के लिये मैंने आपकी सेवा की है। बार-बार मेरी विनती सुनकर धनुष का भारीपन बहुत ही कम कर दीजिये।

दो॰ देखि देखि रघुबीर तन सुर मनाव धरि धीर।
भरे बिलोचन प्रेम जल पुलकावली सरीर ॥२५७॥

रामचन्द्रजी की ओर बार-बार देखकर सीता धीरज धरकर देवताओं को मना रही हैं। उनके नेत्रों में प्रेम के आँसू भरे हैं और शरीर में रोमांच हो आया है।

नीकें निरखि नयन भरि सोभा ❀ पितु पनु सुमिरि बहुरि मनु छोभा
अहह तात दारुनि हठ ठानी ❀ समुझत नहिं कछु लाभु न हानी

अच्छी तरह आँख भरकर राम की शोभा को देखकर, फिर पिता के प्रण का स्मरण करके सीता का मन क्षुब्ध हो उठा। अहो ! पिताजी ने बड़ा ही कठिन हठ ठाना है। वे लाभ-हानि कुछ भी नहीं समझ रहे हैं।

सचिव सभय सिख देइ न कोई ❀ बुध समाज बड़ अनुचित होई
कहँ धनु कुलिसहु चाहि[1] कठोरा ❀ कहँ स्यामल मृदुगात किसोरा

मन्त्रि डरते हैं, इससे कोई उन्हें सीख भी नहीं देता; बुद्धिमानों के समाज में यह बहुत ही अनुचित काम हो रहा है। कहाँ तो बज्र से भी बढ़कर कठोर धनुष है और कहाँ ये साँवले सुकुमार किशोर।

बिधि केहि भाँति धरउँ उर धीरा ❀ सिरिस सुमन कन बेधिअ हीरा
सकल सभा कै मति भै भोरी ❀ अब मोहिं संभु चाप गति तोरी

हे ब्रह्मा ! हृदय में किस भाँति धीरज धरूँ ? सिरस के फूल के कण से कहीं हीरा छेदा जाता है ? सारी सभा की बुद्धि भोली (बावली) हो गई है। हे शिवजी के धनुष ! अब तो मुझे तुम्हारा ही भरोसा है।

निज जड़ता लोगन्ह पर डारी ❀ होहु हरुअ[2] रघुपतिहि निहारी
अति परिताप सीय मन माहीं ❀ लव निमेष जुग सय सम जाहीं

१. अपेक्षा। २. हलका।

तुम अपनी जड़ता लोगों पर डालकर, रामचन्द्रजी को देखकर हलके हो जाओ। इस प्रकार सीता के मन में बड़ा ही संताप हो रहा है। पलक भाँजने का एक लव भी सौ युगों के समान बीत रहा है।

दो० प्रभुहि चितइ पुनि चितव महि राजत लोचन लोल[1]।
खेलत मनसिज मीन जुग जनु बिधु मंडल डोल॥

प्रभु रामचन्द्रजी को देखकर फिर पृथ्वी की ओर देखती हुई सीता के चंचल नेत्र इस प्रकार शोभित हो रहे हैं, जैसे चन्द्र-मंडलरूपी डोल में कामदेव की दो मछलियाँ खेल रही हों। [अनुक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षालंकार]

गिरा अलिनि[2] मुख पंकज रोकी ❀ प्रगट न लाज निसा अवलोकी
लोचन जलु रह लोचन कोना ❀ जैसें परम कृपन कर सोना

वाणीरूपी भौंरी सीता के कमलरूपी मुख में बन्द है, जो लाजरूपी रात्रि को देखकर प्रकट नहीं होती है। सीता के नेत्रों का जल नेत्रों के कोने में ही रह रहा है, जैसे बड़े भारी कंजूस का सोना (कोने में ही गड़ा रह जाता है)। [उदाहरण अलंकार]

सकुची ब्याकुलता बड़ि जानी ❀ धरि धीरजु प्रतीति उर आनी
तन मन बचन मोर पन साँचा ❀ रघुपति पद सरोज चितु राँचा

सीता अपनी बढ़ी हुई व्याकुलता जानकर सकुचा गईं। फिर धीरज धरकर वे हृदय में विश्वास ले आईं कि यदि तन, मन और वचन से मेरा प्रण सच्चा है और रामचन्द्रजी के कमल ऐसे चरणों में मेरा चित्त सचमुच अनुरक्त है,

तौ भगवानु सकल उर बासी ❀ करिहहिं मोहि रघुबर कै दासी
जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू ❀ सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू

तो सबके हृदय में बसने वाले भगवान् मुझे रघुश्रेष्ठ राम की दासी बनायेंगे। जिसका जिस पर सच्चा स्नेह होता है, वह उसे अवश्य ही मिलता है, इसमें सन्देह नहीं है।

प्रभु तन चितइ प्रेमपन ठाना ❀ कृपानिधान राम सबु जाना
सियहि बिलोकि तकेउ धनु कैसें ❀ चितव गरुड़ लघु ब्यालहि जैसें

प्रभु की ओर देखकर सीता ने प्रेम का प्रण ठान लिया। कृपा के भण्डार

---

१. चंचल। २. भौंरी।

राम ने सब जान लिया। सीता को देखकर उन्होंने धनुष की ओर कैसे ताका, जैसे गरुड़ छोटे साँप की ओर देखता है।

दो० लषन लखेउ रघुबंस मनि ताकेउ हर कोदंडु।
पुलकि गात बोले बचन चरन चापि[1] ब्रह्मांडु।२५९

लक्ष्मण ने देखा कि रघुवंश के शिरोमणि रामचन्द्रजी ने शिवजी के धनुष की ओर ताका है, तो वे पुलकित होकर ब्रह्मांड को पैरों से दबाकर वचन बोले—

दिसि कुंजरहु कमठ अहि कोला ❀ धरहु धरनि धरि धीर न डोला
राम चहहिं संकर धनु तोरा ❀ होहु सजग सुनि आयसु मोरा

हे दिग्गजो! हे कच्छप! हे शेष! हे वाराह! धीरज धरकर पृथ्वी को थामे रहो, जिससे यह हिले नहीं। क्योंकि राम शिवजी का धनुष तोड़ना चाहते हैं; मेरी आज्ञा सुनकर सब सावधान हो जाओ।

चाप समीप रामु जब आए ❀ नर नारिन्ह सुर सुकृत मनाए
सब कर संसउ अरु अग्यानू ❀ मंद महीपन्ह कर अभिमानू

राम जब धनुष के पास आये, तब सब पुरुष-स्त्रियों ने देवताओं और अपने-अपने पुण्यों को मनाया। सब का संदेह और अज्ञान, नीच राजाओं का अभिमान,

भृगुपति केरि गरब गरुआई ❀ सुर मुनिबरन्ह केरि कदराई
सिय कर सोच जनक पछितावा ❀ रानिन्ह कर दारुन दुख दावा

परशुराम के गर्व की गुरुता, देवताओं और बड़े-बड़े मुनियों की कातरता, सीता का सोच, जनक का पश्चात्ताप, रानियों के दारुण दुःख का दावानल,

संभु चाप बड़ बोहितु[2] पाई ❀ चढ़े जाइ सब संगु बनाई
राम बाहु बल सिंधु अपारू ❀ चहत पारु नहिं कोउ कनहारू[3]

ये सब शिवजी के धनुषरूपी बड़े जहाज़ को पाकर, सब संग बनाकर उस पर जा चढ़े। ये राम की भुजाओं के बल के अपार समुद्र के पार जाना चाहते हैं, पर कोई केवट नहीं है। [प्रथम तुल्ययोगिता अलंकार]

दो० राम बिलोके लोग सब चित्र लिखे से देखि।
चितई सीय कृपायतन जानी बिकल बिसेखि।२६०

१. दबाकर। २. जहाज। ३. केवट, कर्णधार।

राम ने सब लोगों की ओर देखा, तो वे चित्र में लिखे हुये-से दिखाई पड़े। फिर कृपा के घर राम ने सीता की ओर देखा और उन्हें विशेष व्याकुल जाना।

देखी बिपुल बिकल बैदेही ❀ निमिष बिहात[1] कलप सम तेही
तृषित बारि बिनु जो तनु त्यागा ❀ मुए करइ का सुधा तड़ागा

सीता को राम ने बहुत ही विकल देखा; उनका एक-एक पल कल्प के समान बीत रहा था। यदि प्यासा आदमी पानी के बिना शरीर छोड़ दे, तो उसके मर जाने पर अमृत का तालाब भी क्या करेगा?

का बरषा जब कृषि सुखानें ❀ समय चुकें पुनि का पछितानें
अस जिय जानि जानकी देखी ❀ प्रभु पुलके लखि प्रीति बिसेषी

खेती के सूख जाने पर वर्षा किस काम की? समय बीत जाने पर फिर पछताने से क्या लाभ? जी में ऐसा जानकर राम ने जानकी की ओर देखा और उनकी विशेष प्रीति देखकर वे पुलकित हो गये।

गुरहि प्रनाम मनहिं मन कीन्हा ❀ अति लाघवँ[2] उठाइ धनु लीन्हा
दमकेउ दामिनि जिमि जब लयेऊ ❀ पुनि धनु नभ मंडल सम भयेऊ

मन ही मन उन्होंने गुरु को प्रणाम किया, और बड़ी फुरती से धनुष को उठा लिया। जब उन्होंने धनुष को हाथ में लिया, तब मानो बिजली-सी चमकी और फिर धनुष आकाश-मंडल की तरह मंडलाकार हो गया।

लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़ें ❀ काहुँ न लखा देख सबु ठाढ़ें
तेहि छन राम मध्य धनु तोरा ❀ भरेउ भुवन धुनि घोर कठोरा

लेते हुये, चढ़ाते हुये और ज़ोर से खींचते हुये किसी ने नहीं देखा; सबने उनको केवल खड़ा देखा। उसी क्षण में राम ने धनुष को बीच से तोड़ डाला। घोर कठोर ध्वनि से सब लोक भर गये।

छंद—भरे भुवन घोर कठोर रव रबि बाजि तजि मारग चले।
चिक्करहिं दिग्गज डोल महि अहि कोल कूरम कलमले॥
सुर असुर मुनि कर कान दीन्हें सकल बिकल बिचारहीं।
कोदन्ड खन्डेउ राम तुलसी जयति बचन उचारहीं॥

---

१. बीतता है। २. जल्दी।

घोर कठोर शब्द से सब लोक भर गये; सूर्य के घोड़े मार्ग छोड़कर चलने लगे; दिशाओं के हाथी चिग्घाड़ करने लगे; पृथ्वी डोल उठी; शेष, वाराह और कच्छप चलायमान हो गये; देवता, राक्षस और मुनियों ने कानों पर हाथ दे लिये, सब व्याकुल होकर विचारने लगे। तुलसीदासजी कहते हैं—राम ने धनुष को तोड़ डाला, तब सब रामचन्द्रजी की जय बोलने लगे।

सो० **संकर चापु जहाजु सागरु रघुबर बाहुबलु।**
बूड़ सो सकल समाजु चढ़ा जो प्रथमहिं मोह बस॥

शिवजी का धनुष जहाज है और रामचन्द्रजी की भुजाओं का बल समुद्र है, वह सारा समाज, जो मोहवश पहले इस जहाज पर चढ़ा था, डूब गया।

प्रभु दोउ चाप खंड महि डारे ❀ देखि लोग सब भये सुखारे
कौसिकरूप पयोनिधि पावन ❀ प्रेम बारि अवगाहु सुहावन

प्रभु ने धनुष के दोनों टुकड़ों को पृथ्वी पर फेंक दिया। यह देखकर सब लोग सुखी हुये। विश्वामित्ररूपी पवित्र समुद्र जिसमें प्रेमरूपी सुन्दर अथाह जल भरा है

राम रूप राकेस निहारी ❀ बढ़त बीचि[1] पुलकावलि भारी
बाजे नभ गहगहे निसाना ❀ देवबधू नाचहिं करि गाना

राम रूपी पूर्ण चन्द्र को देखकर पुलकावली रूपी भारी लहरें बढ़ने लगीं। आकाश में गहगह शब्द करके बड़े ज़ोर से नगाड़े बज उठे और देवताओं की स्त्रियाँ गान करके नाचने लगीं।

ब्रह्मादिक सुर सिद्ध मुनीसा ❀ प्रभुहिं प्रसंसहिं देहिं असीसा
बरिसहिं सुमन रंग बहु माला ❀ गावहिं किन्नर गीत रसाला

ब्रह्मा आदि देवता, सिद्ध और मुनीश्वर लोग प्रभु की प्रशंसा कर रहे हैं और आशीर्वाद दे रहे हैं। वे रंग-बिरंगे फूल और मालायें बरसा रहे हैं। किन्नर लोग रसीले गीत गा रहे हैं।

रही भुवन भरि जय जय बानी ❀ धनुष भङ्ग धुनि जात न जानी
मुदित कहहिं जहँ तहँ नरनारी ❀ भंजेउ[2] राम संभु धनु भारी

---

१. लहर। २. तोड़ा।

'जय-जय की ध्वनि' सारे ब्रह्मांड में ऐसी भर गई जिसमें धनुष के टूटने की ध्वनि जान ही नहीं पड़ती। जहाँ-तहाँ पुरुष-स्त्री प्रसन्न होकर कह रहे हैं कि राम ने शिवजी के भारी धनुष को तोड़ डाला।

दो० बन्दी मागध सूतगन बिरुद बदहिं मतिधीर।
करहिं निछावरि लोग सब हय गय धन मनि चीर २६२

गम्भीर मति वाले बन्दीजन, मागध और सूत लोग सुयश का बखान कर रहे हैं और सब लोग घोड़े, हाथी, धन, मणि और वस्त्र न्योछावर कर रहे हैं।

झाँझ मृदंग संख सहनाई ❁ भेरि ढोल दुंदुभी सुहाई
बाजहिं बहु बाजने सुहाये ❁ जहँ तहँ जुबतिन्ह मंगल गाये

झाँझ, मृदंग, शंख, शहनाई, भेरी, ढोल और सुहावने नगाड़े आदि बहुत प्रकार के सुन्दर बाजे बज रहे हैं। जहाँ-तहाँ युवतियाँ मंगल के गीत गा रही हैं।

सखिन्ह सहित हरषीं अति रानी ❁ सूखत धान परा जनु पानी
जनक लहेउ सुखु सोच बिहाई ❁ पैरत थके थाह जनु पाई

सखियों-सहित रानी अत्यंत हर्षित हुई। मानो सूखते हुये धान पर पानी पड़ गया हो। जनक ने सुख पाया; उनकी चिन्ता दूर हुई। मानो तैरते-तैरते थके पुरुष ने थाह पा ली।

स्रीहत भए भूप धनु टूटे ❁ जैसे दिवस दीप छबि छूटे
सीय सुखहि बरनिअ केहि भाँती ❁ जनु चातकी पाइ जलु स्वाती

धनुष टूटने पर राजा लोग ऐसे श्रीहीन हो गये, जैसे दिन में दीपक की शोभा जाती रहती है। सीता का सुख किस प्रकार वर्णन किया जाय, जैसे चातकी स्वाती का जल पा गई हो।

रामहिं लषनु बिलोकत कैसें ❁ ससिहि चकोर किसोरकु जैसें
सतानंद तब आयसु दीन्हा ❁ सीता गमनु राम पहिं कीन्हा

राम को लक्ष्मण किस प्रकार देख रहे हैं, जैसे चन्द्रमा को चकोर का बच्चा देख रहा हो। तब शतानन्दजी ने आज्ञा दी और सीता राम के पास गईं।

दो० संग सखीं सुन्दर सकल गावहिं मंगलचार।
गवनी बाल मराल गति सुखमा अंग अपार २६३

सीता के साथ में सुन्दर सखियाँ मंगल गीत गा रही हैं। सीता हंस के बच्चे की गति से चलीं। उनके अंगों में अपार शोभा है।

सखिन्ह मध्य सिय सोहति कैसें ❀ छबिगन मध्य महाछबि जैसें
कर सरोज जयमाल सुहाई ❀ बिस्व बिजय सोभा जेहिं छाई

सखियों के बीच में सीता किस प्रकार शोभित हो रही हैं, जैसे बहुत सी छवियों के बीच में महाछवि। कमल ऐसे हाथों में जयमाला शोभा दे रही हैं, जिसमें विश्व के विजय की शोभा छाई हुई है।

तन सकोचु मन परम उछाहू ❀ गूढ़ प्रेम लखि परइ न काहू
जाइ समीप राम छबि देखी ❀ रहि जनु कुऋँरि चित्र अवरेखी

सीता के शरीर में संकोच है पर मन में परम उत्साह है। उनका यह गूढ़ प्रेम किसी को जान नहीं पड़ रहा है। राम के पास जाकर, राम की शोभा देख कर, राजकुमारी चित्र में लिखी हुई-सी रह गई।

चतुर सखीं लखि कहा बुझाई ❀ पहिरावहु जयमाल सुहाई
सुनत जुगल कर माल उठाई ❀ प्रेम बिबस पहिराइ न जाई

चतुर सखी ने यह दशा देखकर समझाकर कहा—सुन्दर जयमाला पहनाओ। यह सुनकर सीता ने दोनों हाथों से जयमाला उठाई, पर प्रेम की विवशता से पहराई नहीं जाती।

सोहत जनु जुग जलज सनाला ❀ ससिहि सभीत देत जयमाला
गावहिं छबि अवलोकि सहेली ❀ सियँ जयमाल राम उर मेली

मानो मृणाल-सहित दो कमल चन्द्रमा को भय के साथ जयमाला दे रहे हैं। इस छबि को देखकर सखियाँ गाने लगीं। इतने में सीता ने राम के गले में जयमाला डाल दी।

सो० रघुबर उर जयमाल देखि देव बरिसहिं सुमन।
सकुचे सकल भुआल जनु बिलोकि रबि कुमुद गन॥

राम के गले में जयमाला देखकर देवता फूल बरसाने लगे। सब राजा लोग ऐसे लजा गये, जैसे सूर्य को देखकर कुमुदों का समूह सिकुड़ गया हो।

पुर अरु ब्योम बाजने बाजे ❀ खल भए मलिन साधु सब राजे
सुर किन्नर नर नाग मुनीसा ❀ जय जय जय कहि देहिं असीसा

नगर और आकाश में बाजे बजने लगे। दुष्ट लोग उदास हो गये और सब सज्जन प्रसन्न हो गये। देवता, किन्नर, नर, नाग और मुनीश्वर जय-जयकार करके आशीर्वाद दे रहे हैं।

नाचहिं गावहिं बिबुध बधूटी ❀ बार बार कुसुमाञ्जलि छूटी
जहँ तहँ बिप्र बेद धुनि करहीं ❀ बंदी बिरिदावलि उच्चरहीं

देवताओं की स्त्रियाँ नाचती गाती हैं। बारम्बार अँजुली में भर-भरकर फूल छोड़े जा रहे हैं। जहाँ-तहाँ ब्राह्मण वेद-ध्वनि कर रहे हैं और भाट लोग विरदावली (कुल-कीर्ति) बखान रहे हैं।

महि पाताल नाक जसु ब्यापा ❀ राम बरी सिय भंजेउ चापा
करहिं आरती पुर नर नारी ❀ देहिं निछावरि बित्त बिसारी

पृथ्वी, पाताल और स्वर्ग तीनों लोकों में यश फैल गया कि राम ने धनुष तोड़ दिया और सीता को वरण कर लिया। नगर के पुरुष-स्त्री आरती कर रहे हैं और अपनी पूँजी (हैसियत) को भुलाकर अर्थात् सामर्थ्य से अधिक न्योछावर कर रहे हैं।

सोहति सीय राम कै जोरी ❀ छबि सिंगारु मनहुँ एक ठोरी
सखीं कहहिं प्रभु पद गहु सीता ❀ करति न चरन परस अति भीता

सीता राम की जोड़ी ऐसी सोहती है, जैसे छवि और शृङ्गार-रस एकत्र हो गये हों। सखियाँ कह रही हैं—सीता! स्वामी के पैर छुओ। सीता बहुत डरी हुई हैं और चरण नहीं छूतीं।

दो० गौतम तिय गति सुरति करि नहिं परसति पग पानि।
मन बिहँसे रघुबंसमनि प्रीति अलौकिक जानि।२६५

गौतम की स्त्री अहल्या की गति का स्मरण करके सीता राम का चरण हाथ से नहीं छू रही हैं। तब रघुकुल के शिरोमणि रामचन्द्रजी सीता की अलौकिक प्रीति जानकर मन में हँसे।

तब सिय देखि भूप अभिलाषे ❀ कूर कपूत मूढ़ मन माषे
उठि उठि पहिरि सनाह अभागे ❀ जहँ तहँ गाल बजावन लागे

तब सीता को देखकर कुछ राजा लोग ललचा उठे। वे दुष्ट, कपूत और मूढ़ राजा बहुत उत्तेजित हुये। वे अभागे उठ-उठकर, कवच पहनकर, जहाँ-तहाँ गाल बजाने लगे।

लेहु छड़ाय सीय कह कोऊ ❀ धरि बाँधहु नृप बालक दोऊ
तोरें धनुष चाड़ नहिं सरई ❀ जीवत हमहिं कुअँरि को बरई

कोई कहता है अरे, कोई सीता को छीन लो और दोनों राजपुत्रों को पकड़कर बाँध लो। केवल धनुष तोड़ने ही से काम न सरेगा। हमारे जीते-जी राजकुमारी को कौन वरण कर सकता है ?

जौं बिदेहु कछु करै सहाई ❀ जीतहु समर सहित दोउ भाई
साधु भूप बोले सुनि बानी ❀ राज समाजहिं लाज लजानी

यदि जनक कुछ सहायता करें, तो उसे भी दोनों भाइयों-सहित युद्ध में जीत लो। यह वचन सुनकर सज्जन राजा बोले—इस राजसमाज को देखकर तो लज्जा को भी लज्जा आती है।

बलु प्रतापु बीरता बड़ाई ❀ नाक पिनाकहि संग सिधाई
सोइ सूरता कि अब कहुँ पाई ❀ असि बुधि तौ बिधि मुँह मसि लाई

अरे, तुम्हारा बल, प्रताप, वीरता, बड़ाई और नाक (प्रतिष्ठा) तो धनुष के साथ ही चली गई। वही वीरता है कि अब कहीं से और मिली है ? ऐसी ही बुद्धि है, तभी तो ब्रह्मा ने मुँह में कालिख पोत दिया। [लोकोक्ति अलंकार]

दो० देखहु रामहिं नयन भरि तजि इरिषा मदु कोहु।
लषन रोषु पावकु प्रबल जानि सलभ जनि होहु॥२६६

ईर्ष्या, अहंकार और क्रोध को छोड़कर राम को आँख भरकर देखो। जान-बूझकर लक्ष्मण की क्रोधरूपी प्रबल अग्नि में पतंगे मत बनो।

बैनतेय बलि जिमि चह कागू ❀ जिमि सस चहै नाग[1] अरि भागू
जिमि चह कुसल अकारन कोही ❀ सुख संपदा चहै सिव द्रोही

जैसे गरुड़ का भाग कौआ चाहे, हाथी का अंश खरहा चाहे, बिना कारण ही क्रोध करने वाला कुशल चाहे, शिव से द्रोह करने वाला सुख और वैभव चाहे,

लोभी लोलुप कीरति चहई ❀ अकलंकता कि कामी लहई
हरिपद बिमुख परम गति चाहा ❀ तस तुम्हार लालचु नरनाहा

लोभी और चंचल आदमी कीर्त्ति चाहे; कामी कलंक से बचना चाहे और

१- हाथी।

भगवान् के चरणों से विमुख रहने वाला परम गति चाहे, हे राजाओ ! तुम्हारा लोभ उसी तरह व्यर्थ है।

कोलाहलु सुनि सीय सकानी ❀ सखीं लेवाइ गईं जहँ रानी
राम सुभायँ चले गुरु पाहीं ❀ सिय सनेहु बरनत मन माहीं

हल्ला सुनकर सीता डर गईं; तब सखियाँ उन्हें वहाँ ले गईं, जहाँ रानी थीं। राम मन में सीता के प्रेम का बखान करते हुये स्वाभाविक चाल से गुरु के पास चले।

रानिन्ह सहित सोचबस सीया ❀ अब धौं बिधिहि काह करनीया
भूप बचन सुनि इत उत तकहीं ❀ लषनु राम डर बोलि न सकहीं

रानियों-सहित सीता चिंता के वश में हैं कि न जाने ब्रह्मा अब क्या करने वाले हैं। राजाओं के वचन सुनकर लक्ष्मण इधर-उधर ताकते हैं किंतु राम के डर से कुछ बोल नहीं सकते।

दो० **अरुन नयन भृकुटी कुटिल चितवत नृपन्ह सकोप।**
मनहुँ मत्त गज गन निरखि सिंघ किसोरहिं चोप।२६७

लक्ष्मण के नेत्र लाल और भौंहें टेढ़ी हो गईं, वे राजाओं को क्रोध से देखने लगे। मानो मतवाले हाथियों का झुण्ड देखकर सिंह के बच्चे को जोश आया हो।

खरभरु देखि बिकल पुरनारीं ❀ सब मिलि देहिं महीपन्ह गारीं
तेहि अवसर सुनि सिवधनु भङ्गा ❀ आये भृगुकुल कमल पतंगा

खलबली देखकर नगर की स्त्रियाँ व्याकुल हो गईं। सब मिलकर राजाओं को गालियाँ देने लगीं। उसी मौके पर शिवजी के धनुष का टूटना सुनकर भृगुकुल रूपी कमल के सूर्य परशुराम आये।

देखि महीप सकल सकुचाने ❀ बाज झपट जनु लवा लुकाने
गौर सरीर भूति भलि भ्राजा ❀ भाल बिसाल त्रिपुंड बिराजा

उन्हें देखकर सब राजा सकुचा गये, जैसे बाज के झपटने पर बटेर लुक गये हों। परशुराम के गोरे शरीर पर विभूति ख़ूब सज रही है। विशाल ललाट पर त्रिपुण्ड (तिलक) शोभित है।

सीस जटा ससि बदनु सुहावा ❀ रिस बस कछुक अरुन होइ आवा
भृकुटी कुटिल नयन रिस राते ❀ सहजहुँ चितवत मनहुँ रिसाते

सिर पर जटा है; मुख चन्द्रमा की तरह सुन्दर है, पर क्रोध के मारे कुछ लाल हो आया है। भौंहें टेढ़ी और नेत्र क्रोध से लाल हैं। साधारण रीति से देखते हैं तो भी ऐसा जान पड़ता है मानो क्रोध कर रहे हैं।

बृषभ कंध उर बाहु बिसाला ❀ चारु जनेउ माल मृगछाला
कटि मुनि बसन तून दुइ बाँधें ❀ धनु सर कर कुठारु कल काँधें

बैल की तरह उनके कंधे हैं, छाती और भुजायें विशाल हैं। सुन्दर यज्ञोपवीत और माला पहने और मृगचर्म लिये हैं। कमर में वल्कल और दो तरकस बँधे हुये हैं, हाथ में धनुष-बाण और सुन्दर कंधे पर फरसा लिये हुये हैं।

दो० सांत बेष करनी कठिन बरनि न जाइ सरूप।
धरि मुनि तनु जनु बीर रसु आयेउ जहँ सब भूप।२६८

वेश तो शांत, पर कर्म भयानक; उनके स्वरूप का वर्णन किया ही नहीं जा सकता। मानो वीर-रस ही मुनि का शरीर धारण करके जहाँ सब राजा लोग हैं, आ गया हो।

देखत भृगुपति बेषु कराला ❀ उठे सकल भय बिकल भुआला
पितु समेत कहि निज निज नामा ❀ लगे करन सब दंड प्रनामा

परशुराम का भयानक वेष देखकर सब राजा लोग भय से व्याकुल होकर उठ खड़े हुये, और पिता-सहित अपना नाम बता-बताकर वे सब दंडवत् प्रणाम करने लगे।

जेहि सुभायँ चितवहिं हितु जानी ❀ सो जानइ जनु आइ[1] खुटानी
जनक बहोरि आइ सिरु नावा ❀ सीय बोलाइ प्रनाम करावा

परशुराम हित जानकर सहज भी जिसकी ओर देख लेते हैं, वह समझता है मानो उसकी आयु ही क्षीण हो गई। फिर जनक ने आकर सिर नवाया और सीता को बुलाकर प्रणाम कराया।

आसिष दीन्हि सखीं हरषानी ❀ निज समाज लै गईं सयानी
बिस्वामित्रु मिले पुनि आई ❀ पद सरोज मेले दोउ भाई

१. आयु, उम्र।

परशुराम ने सीता को आशीर्वाद दिया। सखियाँ प्रसन्न हुईं। वे सयानी सखियाँ सीता को अपनी मण्डली में ले गईं। फिर विश्वामित्र आकर मिले और दोनों भाइयों को परशुराम के चरण-कमलों पर गिराया।

रामु लषनु दसरथ के ढोटा ❀ दीन्हि असीस देखि भल जोटा[1]
रामहिं चितइ रहे भरि लोचन ❀ रूप अपार मार मद मोचन

विश्वामित्र ने कहा—ये राम और लक्ष्मण राजा दशरथ के पुत्र हैं। उनकी सुन्दर जोड़ी देखकर परशुराम ने आशीर्वाद दिया। राम को वे नेत्र भरकर देखते रहे। राम का रूप अपार और कामदेव के घमंड को चूर करने वाला था।

दो॰ बहुरि बिलोकि बिदेह सन कहहु काह अति भीर।
पूँछत जानि अजान जिमि ब्यापेउ कोपु सरीर।२६९

फिर जनक की ओर देखकर परशुराम ने कहा—कहो, इतनी बड़ी भीड़ कैसी ? वे जानते हुये भी अनजान की तरह पूछते हैं। उनके सारे शरीर में क्रोध छा गया है।

समाचार कहि जनक सुनाये ❀ जेहि कारन महीप सब आये
सुनत बचन फिरि अनत[2] निहारे ❀ देखे चाप खंड महि डारे

जिस कारण सब राजा आये थे, जनक ने सब समाचार उन्हें कह सुनाये। जनक के वचन सुनकर परशुराम ने फिरकर दूसरी ओर देखा तो, धनुष के टुकड़े पृथ्वी पर पड़े हुये दिखाई दिये।

अति रिस बोले बचन कठोरा ❀ कहु जड़ जनक धनुष कइ तोरा
बेगि देखाउ मूढ़ न त आजू ❀ उलटउँ महि जहँ लहिं तव राजू

अत्यंत क्रोध में भरकर वे कठोर वचन बोले—अरे, मूढ़ जनक ! बता, धनुष किसने तोड़ा ? उसे शीघ्र दिखा, नहीं तो ऐ मूढ़ ! आज मैं जहाँ तक तेरा राज्य है, वहाँ तक की पृथ्वी उलट दूँगा।

अति डरु उतर देत नृपु नाहीं ❀ कुटिल भूप हरषे मन माहीं
सुर मुनि नाग नगर नर नारी ❀ सोचहिं सकल त्रास उर भारी

राजा जनक अत्यंत डर के मारे उत्तर नहीं देते। यह देखकर दुष्ट राजा मन में बड़े प्रसन्न हुये। देवता, मुनि, नाग और नगर के पुरुष-स्त्री सभी चिन्ता

---

१. जोड़ा। २. अन्यत्र, दूसरी जगह।

करने लगे। सब के हृदय में बड़ा भय है।

मन पछिताति सीय महतारी ❀ बिधि अब सँवरी बात बिगारी
भृगुपति कर सुभाउ सुनि सीता ❀ अरध निमेष कलप सम बीता

सीता की माता मन में पछता रही हैं कि हाय! विधाता ने अब बनी-बनाई बात बिगाड़ दी। सीता ने परशुराम का स्वभाव सुना, तब तो उनको आधा क्षण भी एक कल्प के समान बीतने लगा।

दो॰ सभय बिलोके लोग सब जानि जानकी भीरु।
हृदयँ न हरषु बिषादु कछु बोले श्रीरघुबीरु ॥२७०॥

तब रामचन्द्रजी सब लोगों को भयभीत और सीता को डरी हुई जानकर बोले। उनके हृदय में न कुछ हर्ष था, न विषाद।

नाथ संभु धनु भंजनिहारा ❀ होइहि केउ एक दास तुम्हारा
आयसु काह कहिअ किन मोही ❀ सुनि रिसाइ बोले मुनि कोही

राम ने कहा—हे नाथ! शिव के धनुष का तोड़ने वाला आपका ही कोई एक दास होगा। क्या आज्ञा है, मुझसे कहिये न? यह सुनकर क्रोधी मुनि चिढ़कर बोले—

सेवक सो जो करइ सेवकाई ❀ अरि करनी करि करिअ लराई
सुनहु राम जेहिं सिव धनु तोरा ❀ सहसबाहु सम सो रिपु मोरा

सेवक वह है, जो सेवा का काम करे। शत्रु का काम करके तो लड़ाई ही करनी चाहिये। हे राम! सुनो, जिसने यह शिव का धनुष तोड़ा है, वह सहस्त्र-बाहु के समान मेरा शत्रु है।

सो बिलगाउ[1] बिहाइ[2] समाजा ❀ न तु मारे जहहिं सब राजा
सुनि मुनिबचन लषन मुसुकाने ❀ बोले परसुधरहिं अपमाने

वह इस समाज को छोड़कर अलग खड़ा हो, नहीं तो (उसके साथ) सभी राजा मारे जायँगे। मुनि का वचन सुनकर लक्ष्मण मुसकुराये और परशुराम का अपमान करते हुये बोले—

बहु धनुहीं तोरीं लरिकाईं ❀ कबहुँ न असि रिस कीन्हि गोसाईं
एहि धनु पर ममता केहि हेतू ❀ सुनि रिसाइ कह भृगुकुल केतू

१. अलग हो। २. छोड़कर।

मैंने तो लड़कपन में बहुत-सी धनुहियाँ तोड़ फेंकी थीं। आपने कभी ऐसा क्रोध नहीं किया। इसी धनुष पर इतना मोह किस कारण से है? यह सुनकर भृगुवंश के ध्वजा-स्वरूप परशुराम चिढ़कर कहने लगे—

दो०— रे नृप बालक काल बस बोलत तोहि न सँभार।
धनुहि सम त्रिपुरारि धनु बिदित सकल संसार।२७१

अरे राजपुत्र! काल के वश होने से तुझे बोलने में कुछ भी होश नहीं है। सारे संसार में विख्यात शिव का यह धनुष क्या धनुही के समान है?

लषन कहा हँसि हमरें जाना ❀ सुनहु देव सब धनुष समाना
का छति लाभु जून[1] धनु तोरें ❀ देखा राम नयन के भोरें

लक्ष्मण ने हँसकर कहा—हे देव! सुनिये। हमारी समझ में तो सभी धनुष समान हैं। पुराने धनुष के तोड़ने में क्या हानि-लाभ? राम ने इसे नये के धोखे से देखा था।

छुअत टूट रघुपतिहु न दोषू ❀ मुनि बिनु काज करिअ कत रोषू
बोले चितइ परसु की ओरा ❀ रे सठ सुनेसि सुभाउ न मोरा

यह तो छूते ही टूट गया; राम का इसमें कोई दोष नहीं। हे मुनि! आप बिना ही कारण क्रोध क्यों करते हैं? परशुराम अपने फरसे की ओर देखकर बोले—अरे दुष्ट! तूने मेरा स्वभाव नहीं सुना?

बालक बोलि बधउँ नहिं तोही ❀ केवल मुनि जड़ जानहि मोही
बालब्रह्मचारी अति कोही ❀ बिस्व बिदित छत्रिय कुल द्रोही

तुझे बालक जानकर नहीं मारता हूँ। अरे मूर्ख! क्या तू मुझे निरा मुनि ही समझता है? मैं बाल-ब्रह्मचारी हूँ। बड़ा क्रोधी हूँ। क्षत्रियों के वंश का शत्रु तो विश्व-भर में विख्यात हूँ।

भुज बल भूमि भूप बिनु कीन्ही ❀ बिपुल बार महिदेवन्ह दीन्ही
सहसबाहु भुज छेदनिहारा ❀ परसु बिलोकि महीप कुमारा

अपनी भुजाओं के बल से मैंने पृथ्वी को राजाओं से रहित कर दिया और कितनी ही बार उसे ब्राह्मणों को दे डाला। सहस्रबाहु की भुजाओं को काटने वाले मेरे इस फरसे को ऐ राजा के लड़के! देख।

---

१. पुराना, सड़ा हुआ।

दो०— मातु पितहि जनि सोच बस करसि महीस किसोर।
गरभन के अरभक[1] दलन परसु मोर अति घोर ॥

अरे राजा के बालक ! तू अपने माता-पिता को सोच के वश न कर । मेरा फरसा गर्भ के भीतर के बच्चे का भी नाश करने वाला बड़ा भयानक है ।

बिहँसि लषनु बोले मृदु बानी ❀ अहो मुनीसु महा भट मानी
पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू ❀ चहत उड़ावनि फूँकि पहारू

लक्ष्मण हँसकर कोमल वाणी से बोले—अहो, मुनीश्वर तो अपने को बड़ा भारी योद्धा समझते हैं। बार-बार मुझे फरसा दिखला रहे हैं। फूँक से पहाड़ उड़ाना चाहते हैं।

इहाँ कुम्हड़ बतिया कोउ नाहीं ❀ जे तरजनी देखि मरि जाहीं
देखि कुठारु सरासन बाना ❀ मैं कछु कहा सहित अभिमाना

यहाँ कोई कुम्हड़े की बतिया (छोटा कच्चा फल) नहीं है, जो तर्जनी उँगली को देखते ही मर जाते हैं। फरसा और धनुष-बाण देखकर ही मैंने कुछ अभिमान-सहित कहा था ।

भृगुकुल समुझि जनेउ बिलोकी ❀ जो कछु कहहु सहउँ रिस रोकी
सुर महिसुर हरिजन अरु गाई ❀ हमरें कुल इन्ह पर न सुराई

आपको भृगुवंशी समझकर और आपका यज्ञोपवीत देखकर, जो कुछ आप कहते हैं, उसे मैं क्रोध को रोककर सब सह लेता हूँ। देवता, ब्राह्मण, भगवान् के भक्त और गौ इन पर हमारे कुल में वीरता नहीं दिखाई जाती ।

बधे पाप अपकीरति हारे ❀ मारतहू पा[2] परिअ तुम्हारे
कोटि कुलिस सम बचन तुम्हारा ❀ ब्यर्थ धरहु धनु बान कुठारा

क्योंकि इनको मारने में पाप लगता है, और इनसे हारने में अपकीर्त्ति होती है। इससे आप मारें तो भी आपके पैर ही पड़ना चाहिये। करोड़ों बज्र के समान तो आपका वचन ही है। आप तो व्यर्थ ही धनुष-बाण और फरसा धारण करते हैं।

दो०— जो बिलोकि अनुचित कहेउँ छमहु महामुनि धीर।
सुनि सरोष भृगुबंसमनि बोले गिरा गँभीर ॥२७३॥

---

१. गर्भ के भीतर का बच्चा । २. पाँव ।

इन्हें (धनुष-बाण आदि को) देखकर मैंने कुछ अनुचित कहा हो, तो हे धैर्यवान् महामुनि ! उसे क्षमा कीजिये। यह सुनकर भृगुवंश के शिरोमणि परशुराम क्रोध के साथ गम्भीर वाणी बोले—

कौसिक सुनहु मंद यह बालक ❀ कुटिल काल बस निज कुल घालक
भानु बंस राकेस कलंकू ❀ निपट निरंकुस अबुध असंकू

हे विश्वामित्र ! सुनो। यह बालक बड़ा ही कुबुद्धि है। यह दुष्ट मृत्यु के वश होकर अपने कुल का नाश करने वाला हो रहा है। यह सूर्य-वंशरूपी पूर्ण-चंद्र का कलंक है। बिल्कुल उद्दण्ड, मूर्ख और निडर है।

काल कवलु[1] होइहि छन माहीं ❀ कहउँ पुकारि खोरि मोहि नाहीं
तुम्ह हटकहु जौं चहहु उबारा ❀ कहि प्रतापु बलु रोषु हमारा

अभी क्षणभर में यह मृत्यु का ग्रास हो जायगा। मैं पुकारकर कहे देता हूँ, फिर मुझे दोष न देना। यदि तुम इसे बचाना चाहते हो, तो मेरा प्रताप, बल और क्रोध बतलाकर इसे रोको।

लषन कहेउ मुनि सुजसु तुम्हारा ❀ तुम्हहिं अछत को बरनै पारा
अपने मुँह तुम्ह आपन करनी ❀ बार अनेक भाँति बहु बरनी

लक्ष्मण ने कहा—हे मुनि ! आपका सुयश आपके मौजूद रहते दूसरा और कौन वर्णन कर सकता है ? आपने अपने ही मुँह से अपनी करनी का बखान अनेक बार और बहुत प्रकार से किया है।

नहिं संतोषु तौ पुनि कछु कहहू ❀ जनि रिसि रोकि दुसह दुख सहहू
बीरब्रती तुम्ह धीर अछोभा ❀ गारी देत न पावहु सोभा

इतने पर भी तृप्ति न हुई हो, तो फिर कुछ और कह डालिये। क्रोध को रोककर असहनीय दुःख न सहिये। आप वीरों के व्रत वाले, धीर और शान्त पुरुष हैं, गाली देते आप शोभा न पायेंगे।

दो०— सूर समर करनी करहिं कहि न जनावहिं आपु।
बिद्यमान[2] रिपु पाइ रन कायर कथहिं प्रतापु ॥२७४॥

शूरवीर तो युद्ध में कुछ करके दिखलाते हैं, वे कहकर अपने को नहीं जनाते। शत्रु को युद्ध में उपस्थित पाकर कायर ही अपने प्रताप की डींग मारा करते हैं।

---

१. कौर, ग्रास। २. उपस्थित, मौजूद।

तुम्ह तौ कालु हाँक जनु लावा ❀ बार बार मोहिं लागि बोलावा
सुनत लषन के बचन कठोरा ❀ परसु सुधारि धरेउ कर घोरा

आप तो मालूम होता है काल को हाँक देकर उसे बार-बार मेरे लिये बुलाते हैं। लक्ष्मण के कठोर वचन सुनकर परशुराम ने भयानक फरसे को सँभालकर हाथ में ले लिया।

अब जनि देइ दोसु मोहि लोगू ❀ कटुबादी बालकु बध जोगू
बाल बिलोकि बहुत मैं बाँचा ❀ अब यह मरनहार भा साँचा

और कहा—अब लोग मुझे दोष न दें। यह अप्रिय बोलने वाला बालक बध किये जाने ही योग्य है। इसे बालक देखकर मैंने बहुत बचाया; पर अब यह सचमुच मरने पर आ गया है।

कौसिक कहा छमिअ अपराधू ❀ बाल दोष गुन गनहिं न साधू
कर कुठार मैं अकरुन कोही ❀ आगें अपराधी गुरुद्रोही

विश्वामित्र ने कहा—अपराध क्षमा कीजिये। बालकों के दोष और गुण को साधुजन नहीं गिनते। (परशुराम ने कहा—) एक तो मेरे हाथ में फरसा है, दूसरे मैं दयारहित क्रोधी हूँ, तीसरे यह गुरु-द्रोही अपराधी सामने है।

उतर देत छाड़उँ बिनु मारें ❀ केवल कौसिक सील तुम्हारें
न तु एहि काटि कुठार कठोरें ❀ गुरहि उरिन होतेउँ स्रम थोरें

यह उत्तर दे रहा है फिर भी इसे बिना मारे मैं छोड़ता हूँ, यह हे विश्वामित्र! केवल तुम्हारे शील (मुलाहिजे) से। नहीं तो इसे इस कठोर फरसे से काट कर थोड़े ही परिश्रम से गुरु (के ऋण) से उऋण हो जाता।

दो०— गाधिसूनु कह हृदय हँसि मुनिहि हरिअरइ सूझ।
अयमय[1] खाँड न ऊखमय अजहुँ न बूझ अबूझ॥२७५॥

विश्वामित्र ने हृदय में हँसकर कहा—मुनि को हरा ही हरा सूझ रहा है। किंतु यह फौलाद की बनी खाँड (खाँडा, खड्ग) है, ऊख की खाँड नहीं है। मुनि अब भी नासमझ बने हुये हैं। इनको सूझ नहीं रहा है।

कहेउ लषन मुनि सीलु तुम्हारा ❀ को नहिं जान बिदित संसारा
माता पितहि उरिन भये नीकें ❀ गुर रिनु रहा सोचु बड़ जीकें

१. लोह।

लक्ष्मण ने कहा—हे मुनि ! आपके शील को कौन नहीं जानता ? वह संसार भर में विख्यात है। आप माता और पिता से तो अच्छी तरह उऋण हो ही गये थे। गुरु का ऋण शेष था, जी में उसकी बड़ी चिंता है।

सो जनु हमरेहि माथे काढ़ा ❀ दिन चलि गयेउ ब्याज बड़ बाढ़ा
अब आनिअ ब्यवहारिआ बोली ❀ तुरत देउँ मैं थैली खोली

उसे मानो मेरे ही मत्थे मढ़ा है। बहुत दिन हो गये; इससे ब्याज भी बहुत बढ़ गया होगा। अब किसी हिसाब करने वाले को बुला लाइये; मैं तुरन्त ही थैली खोलकर दे दूं।

सुनि कटु बचन कुठार सुधारा ❀ हाय हाय सब सभा पुकारा
भृगुबर परसु देखावहु मोही ❀ बिप्र बिचारि बचउ नृप द्रोही

लक्ष्मण के कड़ुवे वचन सुनकर परशुराम ने फरसा उठाया। सारी सभा हाय! हाय! करके पुकार उठी। लक्ष्मण ने कहा—हे भृगुश्रेष्ठ ! आप मुझे फरसा दिखाते हैं, पर हे राजाओं के शत्रु ! आप अभी तक ब्राह्मण समझे जाकर बच रहे हैं।

मिले न कबहुँ सुभट रन गाढ़े ❀ द्विज देवता घरहीं के बाढ़े
अनुचित कहि सब लोग पुकारे ❀ रघुपति सैनहिं[1] लषनु नेवारे

आपको कभी युद्ध में वीर योद्धा नहीं मिले। ब्राह्मण और देवता घर ही में बड़े हैं। (यह सुनकर) सब लोग पुकार उठे—अनुचित है, अनुचित है। तब राम ने लक्ष्मण को इशारे से रोका।

दो० लषन उतर आहुति सरिस भृगुबर कोप कृसानु।
बढ़त देखि जल सम बचन बोले रघुकुल भानु।२७६॥

लक्ष्मण का उत्तर आहुति के समान था और परशुराम का क्रोध अग्नि के समान। उसे बढ़ते देखकर सूर्यकुल के सूर्य रामचन्द्र जल के समान (शीतल) वचन बोले—

नाथ करहु बालक पर छोहू ❀ सूध दूधमुख करिअ न कोहू
जौं पै प्रभु प्रभाउ कछु जाना ❀ तौ कि बराबरि करत अयाना

हे नाथ ! बालक पर कृपा कीजिये। इस सीधे और दुधमुँहे बच्चे पर क्रोध

१. इशारे से।

न कीजिये। यदि यह आपका प्रभाव कुछ भी जानता, तो क्या यह बेसमझ आपकी बराबरी करता ?

जौं लरिका कछु अचगरि करहीं ❀ गुरु पितु मातु मोद मन भरहीं
करिअ कृपा सिसु सेवक जानी ❀ तुम्ह सम सील धीर मुनि ज्ञानी

यदि बालक कुछ अनुचित करते हैं, तो भी गुरु, पिता और माता मन में आनन्द से भर जाते हैं। इससे इसे छोटा बच्चा और सेवक जानकर कृपा कीजिये। आप तो समदर्शी, सुशील और ज्ञानी मुनि हैं।

राम बचन सुनि कछुक जुड़ाने ❀ कहि कछु लषनु बहुरि मुसुकाने
हँसत देखि नखसिख रिस ब्यापी ❀ राम तोर भ्राता बड़ पापी

राम के वचन सुनकर वे कुछ ठंडे पड़े। इतने में लक्ष्मण कुछ कहकर फिर मुसकुरा दिये। उनको हँसता देखकर परशुराम के सिर से पैर तक क्रोध व्याप्त हो गया। (उन्होंने कहा—) हे राम ! तेरा भाई बड़ा पापी है।

गौर सरीर स्याम मन माहीं ❀ कालकूट मुख पयमुख नाहीं
सहज टेढ़ अनुहरइ न तोही ❀ नीचु मीचु सम देख न मोही

यह शरीर से गोरा है पर मन में काला है। यह दुधमुँहा नहीं, हलाहल मुँह वाला है। स्वभाव ही से यह कुटिल है, तेरा अनुसरण नहीं करता। यह नीच मुझे मृत्यु के समान नहीं देखता।

दो॰ लषन कहेउ हँसि सुनहु मुनि क्रोध पाप कर मूल।
जेहि बस जन अनुचित करहिं चरहिं बिस्व प्रतिकूल॥

लक्ष्मण ने हँसकर कहा—हे मुनि! सुनिये। क्रोध पाप का मूल है, जिसके वश में होकर मनुष्य अनुचित कर्म करते हैं और विश्व-भर के प्रतिकूल चलते हैं।

मैं तुम्हार अनुचर मुनिराया ❀ परिहरि कोपु करिअ अब दाया
टूट चाप नहिं जुरिहि रिसाने ❀ बैठिअ होइहिं पाय[1] पिराने

हे मुनिराज ! मैं आपका सेवक हूँ। अब क्रोध त्यागकर दया कीजिये। टूटा हुआ धनुष अब क्रोध करने से नहीं जुड़ेगा। बैठ जाइये, खड़े-खड़े पाँव दुखने लगे होंगे।

---

१. पैर।

जौं अति प्रिय तौ करिअ उपाई ❀ जोरिय कोउ बड़ गुनी बोलाई
बोलत लषनहिं जनकु डेराहीं ❀ मष्ट[1] करहु अनुचित भल नाहीं

यदि (धनुष) अधिक प्रिय हो, तो उपाय किया जाय और किसी बड़े गुणी को बुलवाकर जुड़वा दिया जाय। लक्ष्मण के बोलने से जनक डरते हैं। और कहते हैं—बस, चुप रहिये; अनुचित बोलना अच्छा नहीं।

थर थर काँपहिं पुर नर नारी ❀ छोट कुमार खोट बड़ भारी
भृगुपति सुनि सुनि निरभय बानी ❀ रिस तन जरइ होइ बल हानी

जनकपुर के स्त्री-पुरुष थर-थर काँप रहे हैं (और कहते हैं कि) छोटा कुमार बड़ा ही खोटा है। लक्ष्मण की निर्भय वाणी सुन-सुनकर परशुराम का शरीर क्रोध से जला जा रहा है; और उनके बल का ह्रास हो रहा है।

बोले रामहिं देइ निहोरा[2] ❀ बचउँ बिचारि बंधु लघु तोरा
मन मलीन तनु सुंदर कैसें ❀ बिष रस भरा कनक घटु जैसें

राम पर एहसान जताकर वे बोले—तेरा छोटा भाई समझकर मैं इसे बचा रहा हूँ। यह मन का तो मैला है और शरीर कैसा सुन्दर है, जैसे विष के रस से भरा हुआ सोने का घड़ा।

दो० सुनि लछिमन बिहँसे बहुरि नयन तरेरे राम।
गुर समीप गवने सकुचि परिहरि बानी बाम[3] ॥२७८॥

यह सुनकर लक्ष्मण फिर हँसे। तब राम ने कड़ी नज़र से उनकी ओर देखा, जिससे लक्ष्मण सकुचाकर, विपरीत बोलना छोड़कर, गुरु के पास चले गये।

अति बिनीत मृदु सीतलि बानी ❀ बोले रामु जोरि जुग पानी
सुनहु नाथ तुम्ह सहज सुजाना ❀ बालक बचनु करिअ नहिं काना

राम दोनों हाथ जोड़कर बहुत नम्रता से कोमल और शीतल वाणी बोले—हे नाथ! सुनिये। आप तो स्वभाव ही से सुजान हैं। आप बालक के वचन पर कान न दीजिये।

बररै बालकु एकु सुभाऊ ❀ इन्हहिं न संत बिदूषहिं काऊ
तेहिं नाहीं कछु काज बिगारा ❀ अपराधी मैं नाथ तुम्हारा

१. चुप। २. एहसान। ३. विपरीत।

बर्र और बालक का एक स्वभाव है, संतजन इनको कभी दोष नहीं लगाते। उसने (लक्ष्मण ने), कुछ काम नहीं बिगाड़ा है; हे नाथ ! आपका अपराधी तो मैं हूँ।

कृपा कोपु बँधब गोसाईं ❀ मो पर करिअ दास की नाईं
कहिअ बेगि जेहि बिधि रिस जाई ❀ मुनि नायक सोइ करौं उपाई

हे स्वामी ! मुझे दास की तरह समझकर कृपा, क्रोध, वध और बन्धन जो कुछ करना हो, मुझ पर कीजिये। जिस तरह क्रोध जाय, वह उपाय शीघ्र बताइये। हे मुनिराज ! मैं वही उपाय करूँ।

कह मुनि राम जाय रिस कैसें ❀ अजहुँ अनुज तव चितव अनैसें
एहि के कंठ कुठारु न दीन्हा ❀ तौ मैं काह कोपु करि कीन्हा

मुनि ने कहा—हे राम ! क्रोध कैसे शान्त हो, अब भी तेरा छोटा भाई टेढ़ा ही ताक रहा है। इसके कंठ पर मैंने फरसा न चलाया तो, मैंने क्रोध करके किया ही क्या ?

दो० गर्भ स्रवहिं अवनिप रवनि सुनि कुठार गति घोर।
परसु अछत[1] देखउँ जिअत बैरी भूप किसोर ॥२७९॥

मेरे फरसे की भयानक करनी सुनकर राजाओं की स्त्रियाँ गर्भ गिरा देती हैं। उसी फरसे के रहते हुये मैं इस शत्रु राजपुत्र को जीता हुआ देख रहा हूँ।

बहइ न हाथु दहइ रिस छाती ❀ भा कुठार कुण्ठित नृपघाती
भयेउ बाम बिधि फिरेउ सुभाऊ ❀ मोरे हृदय कृपा कसि काऊ

हाथ नहीं चलता, छाती क्रोध से जल रही है, राजाओं का वध करने वाला यह फरसा कुण्ठित हो गया। विधाता विपरीत हो गया, इससे मेरा स्वभाव बदल गया, नहीं तो मेरे हृदय में किसी के लिये कृपा कैसी ?

आजु दया दुखु दुसह सहावा ❀ सुनि सौमित्रि[2] बहुरि सिर नावा
बाउ कृपा मूरति अनुकूला ❀ बोलत बचन झरत जनु फूला

आज दया मुझसे यह कठिनता से सहने योग्य दुःख सहा रही है। यह सुनकर लक्ष्मण ने फिर प्रणाम किया, और कहा—वाह वा ! आपकी कृपा की मूर्त्ति बहुत सुन्दर है, वचन बोलते हैं, तो मालूम होता है कि फूल झड़ रहे हैं।

---

१. होते हुये। २. लक्ष्मण।

जौं पै कृपा जरहिं मुनि गाता ❀ क्रोध भए तनु राखु बिधाता
देखु जनक हठि बालक एहू ❀ कीन्ह चहत जड़ जमपुर गेहू

हे मुनि ! यदि कृपा करने से आपका शरीर जला जा रहा है, तो क्रोध होने पर तो ब्रह्मा ही आपके शरीर की रक्षा करें। परशुराम ने कहा—जनक ! देखो, यह मूर्ख बालक हठ करके यमपुर घर करना चाहता है।

बेगि करहुँ किन आँखिन्ह ओटा ❀ देखत छोट खोट नृपढोटा
बिहँसे लषन कहा मुनि पाहीं ❀ मूँदे आँखि कतहुँ कोउ नाहीं

इसे शीघ्र ही आँखों की ओझल क्यों नहीं करते ? यह राजपुत्र देखने ही में छोटा है पर है बड़ा खोटा। लक्ष्मण हँसे और उन्होंने मुनि से कहा—आँख मूँद लीजिये, तो कहीं कोई नहीं।

दो०- परसुराम तब राम प्रति बोले उर अति क्रोधु।
संभु सरासनु तोरि सठ करसि हमार प्रबोधु ॥२८०॥

तब हृदय में अत्यन्त क्रोध भरे हुये परशुराम राम से बोले—अरे शठ ! तू शिव का धनुष तोड़कर उलटा मुझी को ज्ञान सिखाता है।

बंधु कहइ कटु संमत तोरें ❀ तू छल बिनय करसि कर जोरें
करु परितोषु मोर संग्रामा ❀ नाहिं त छाड़ु कहाउब रामा

तेरी ही सम्मति से तेरा भाई कटु वचन बोलता है और तू छल से हाथ जोड़कर विनय करता है। या तो युद्ध करके मुझे संतुष्ट कर, नहीं तो राम कहलाना छोड़ दे।

छलु तजि करहि समरु सिवद्रोही ❀ बंधु सहित न त मारउँ तोही
भृगुपति बकहिं कुठार उठाएँ ❀ मन मुसुकाहिं रामु सिर नाएँ

अरे शिव-द्रोही ! या तो छल छोड़कर युद्ध कर, नहीं तो भाई-सहित मैं तुझे मार डालूँगा। इस प्रकार परशुराम फरसा उठाये बक-झक रहे हैं और राम सिर झुकाये मन ही मन मुसकुरा रहे हैं।

गुनह[1] लषन कर हम पर रोषू ❀ कतहुँ सुधाइहु ते बड़ दोषू
टेढ़ जानि संका सब काहू ❀ बक्र चंद्रमहि ग्रसइ न राहू

राम मन ही मन सोचने लगे—अपराध तो लक्ष्मण का है और क्रोध मुझ

१. गुनाह, अपराध।

पर करते हैं। कहीं-कहीं सीधेपन में भी बड़ा दोष होता है। टेढ़ा जानकर सभी को डर लगता है। जैसे टेढ़े चन्द्रमा को राहु नहीं ग्रसता।

राम कहेउ रिस तजिअ मुनीसा ❀ कर कुठारु आगें यह सीसा
जेहि रिस जाइ करिअ सोइ स्वामी ❀ मोहि जानिअ आपन अनुगामी

राम ने कहा—हे मुनीश्वर! क्रोध छोड़िये। आपके हाथ में फरसा है और मेरा यह सिर आगे है। जिस प्रकार आपका क्रोध जाय, हे स्वामी! वही कीजिये। मुझे आप अपना दास समझिये।

दो०— प्रभु सेवकहिं समरु कस तजहु बिप्रबर रोसु।
बेष बिलोकें कहेसि कछु बालकहू नहिं दोसु।२८१।

स्वामी और सेवक में युद्ध कैसा? हे ब्राह्मण-श्रेष्ठ! क्रोध छोड़िये। आपका वीर-वेष देखकर ही बालक (लक्ष्मण) ने कुछ कह डाला। उसका भी कुछ दोष नहीं।

देखि कुठार बान धनु धारी ❀ भै लरिकहि रिस बीरु बिचारी
नाम जान पै तुम्हहि न चीन्हा ❀ बंस सुभाव उतरु तेइ दीन्हा

आपको फरसा, बाण और धनुष धारण किये देखकर और वीर समझकर बालक को क्रोध आ गया। वह आपका नाम तो जानता था, पर उसने आपको पहचाना नहीं; अपने वंश के स्वभाव के अनुसार उसने उत्तर दिया।

जौं तुम्ह औतेहु मुनि की नाईं ❀ पद रज सिर सिसु धरत गोसाईं
छमहु चूक अनजानत केरी ❀ चहिअ बिप्र उर कृपा घनेरी

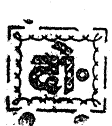
यदि आप मुनि की तरह आते, तो हे स्वामी! वह बालक आपके चरणों की धूल सिर पर रखता। अनजाने की भूल को क्षमा कर दीजिये। ब्राह्मण के हृदय में बहुत अधिक दया होनी चाहिये।

हमहिं तुम्हहिं सरबरि कसि नाथा ❀ कहहु न कहाँ चरन कहँ माथा
राम मात्र लघु नाम हमारा ❀ परसु सहित बड़ नाम तोहारा

हे नाथ! हममें और आपमें बराबरी कैसी? कहिये न, कहाँ चरण और कहाँ मस्तक? कहाँ मेरा राम मात्र एक छोटा-सा नाम, और कहाँ आपका परशु-सहित बड़ा नाम।

देव एकु गुनु धनुष हमारें ❀ नव गुन परम पुनीत तुम्हारें
सब प्रकार हम तुम्ह सन हारे ❀ छमहु बिप्र अपराध हमारे

हे देव ! हमारे तो एक ही गुण धनुष है और आपके पास परम पवित्र नौ गुण[1] हैं। हम तो सब प्रकार से आपसे हारे हुये हैं। हे ब्राह्मण ! हमारे अपराधों को क्षमा कीजिये।



बार बार मुनि बिप्रबर कहा राम सन राम।
बोले भृगुपति सरुष हँसि तहूँ बन्धु सम बाम।२८२।

राम ने बार-बार परशुराम को 'मुनि' और 'विप्रवर' कहा। तब परशुराम क्रोध की हँसी हँसकर बोले—तू भी अपने भाई के समान ही कुटिल है।

निपटहिं द्विजकरि जानहि मोही ❀ मैं जस बिप्र सुनावउँ तोही
चाप स्रुवा सर आहुति जानू ❀ कोप मोर अति घोर कृसानू

तू मुझे निरा ब्राह्मण ही समझता है ? मैं जैसा ब्राह्मण हूँ, तुझे सुनाता हूँ। तू मेरे धनुष को श्रुवा, बाण को आहुति और मेरे क्रोध को अत्यंत भयानक अग्नि जान।

समिध सेन चतुरंग सुहाई ❀ महा महीप भये पसु आई
मैं यहि परसु काटि बलि दीन्हे ❀ समरजग्य जग कोटिन्ह कीन्हे

चतुरंगिणी सेना सुन्दर यज्ञ की लकड़ियाँ हैं। और बड़े-बड़े राजा लोग उसमें आकर बलि के पशु हुये, जिनको मैंने इसी फरसे से काटकर बलि दिया है। मैंने संसार में ऐसे करोड़ों रण-यज्ञ किये हैं।

मोर प्रभाउ बिदित नहिं तोरें ❀ बोलसि निदरि बिप्र के भोरें
भंजेउ चापु दापु बड़ बाढ़ा ❀ अहमिति मनहुँ जीति जगु ठाढ़ा

तुझे मेरा प्रभाव नहीं मालूम है, इसीसे तू ब्राह्मण के धोखे में मेरा निरादर करके बोलता है। धनुष तोड़ डाला, इससे तेरा घमंड बहुत बढ़ गया है। अहङ्कार ऐसा है, मानो संसार को जीतकर खड़ा है।

राम कहा मुनि कहहु बिचारी ❀ रिस अति बड़ि लघु चूक हमारी
छुवतहिं टूट पिनाक पुराना ❀ मैं केहि हेतु करौं अभिमाना

---

१. नौ गुण—शम, दम, तप, शौच, क्षमा, सरलता, ज्ञान, विज्ञान और आस्तिकता।

राम ने कहा—हे मुनि! विचार करके बोलिये। आपका क्रोध बहुत बड़ा है और मेरी भूल बहुत छोटी है। पुराना धनुष था छूते ही टूट गया; भला मैं किस लिये अभिमान करूँ ?

दो॰ जौं हम निदरहिं बिप्र बदि सत्य सुनहु भृगुनाथ।
तौ अस को जग सुभट जेहि भय बस नावहिं माथ॥

हे भृगुवंश के स्वामी! यह सच समझिये कि यदि हम ब्राह्मण कहकर निरादर करें, तो सत्य जानिये कि संसार में ऐसा कौन योद्धा है, जिसे हम डर के मारे मस्तक नवायें ?

देव दनुज भूपति भट नाना ❀ समबल अधिक होउ बलवाना
जौं रन हमहिं पचारै कोऊ ❀ लरहिं सुखेन कालु किन होऊ

देवता, राक्षस और राजा या और भी अनेक योद्धा लोग, वे चाहे बराबर बल वाले हों, चाहे अधिक बलवान्, कोई भी हमें युद्ध में ललकारे, तो वे काल ही क्यों न हों, हम उनसे सुख से लड़ते हैं।

छत्रिय तनु धरि समर सकाना ❀ कुल कलंकु तेहि पाँवर जाना
कहउँ सुभाउ न कुलहि प्रसंसी ❀ कालहु डरहिं न रन रघुबंसी

क्षत्रिय का शरीर धरकर जो युद्ध में डर गया, उसे कुल का कलंक और अधम जानना चाहिये। मैं स्वभाव ही से कहता हूँ, कुल की प्रशंसा करके नहीं, कि रघुवंशी लोग रण में काल से भी नहीं डरते।

बिप्रबंस कै असि प्रभुताई ❀ अभय होइ जो तुम्हहिं डेराई
सुनि मृदु बचन गूढ़ रघुपति के ❀ उघरे पटल[1] परसुधर मति[2] के

ब्राह्मण-वंश की ऐसी प्रभुता है कि जो आपसे डरता है, वह सबसे निर्भय हो जाता है। रामचन्द्र के कोमल और रहस्य-पूर्ण वचन सुनकर परशुराम की बुद्धि के परदे खुल गये।

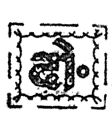
राम रमापति कर धनु लेहू ❀ खैंचहु मिटइ मोर संदेहू
देत चापु आपुहि चढ़ि गयऊ ❀ परसुराम मन बिसमय भयऊ

परशुराम ने कहा—हे राम! विष्णु का यह धनुष हाथ में लो। इसे चढ़ा दो, जिससे मेरा संदेह मिट जाय। जैसे ही परशुराम ने धनुष दिया, वैसे ही

---

१. परदा। २. बुद्धि।

वह आप ही चढ़ गया, तब परशुराम के मन में बड़ा आश्चर्य हुआ।



जाना राम प्रभाउ तब पुलक प्रफुल्लित गात।
जोरि पानि बोले बचन हृदयँ न प्रेमु समात ॥२८४

तब उन्होंने राम का प्रभाव समझा। उनका शरीर पुलकित और प्रफुल्लित हो गया। वे हाथ जोड़कर वचन बोले। प्रेम उनके हृदय में अँटता नहीं था।

जय रघुबंस बनज[1] बन भानू ❀ गहन[2] दनुज कुल दहन कृसानू
जय सुर बिप्र धेनु हितकारी ❀ जय मद मोह कोह भ्रम हारी

हे रघुकुलरूपी कमल-बन के सूर्य! आपकी जय हो! हे राक्षसों के कुल-रूपी घने बन को भस्म करने वाले अग्नि! आपकी जय हो! हे देवता, ब्राह्मण और गौ के हित करने वाले! आपकी जय हो! हे मद, मोह, क्रोध, और प्रेम के हरण करने वाले! आपकी जय हो!

बिनय सील करुना गुन सागर ❀ जयति बचन रचना अति नागर[3]
सेवक सुखद सुभग सब अंगा ❀ जय सरीर छबि कोटि अनंगा

हे विनम्र, शील और गुणों के समुद्र और वचन की रचना में बड़े निपुण! आपकी जय हो! हे सेवक को सुख देने वाले, सब अङ्गों में सुन्दर और शरीर में करोड़ों कामदेव की शोभा धारण करने वाले! आपकी जय हो!

करउँ काह मुख एक प्रसंसा ❀ जय महेस मन मानस हंसा
अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता ❀ छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता

मैं एक मुख से आपकी क्या प्रशंसा करूँ? हे शिवजी के मनरूपी मान-सरोवर के हंस! आपकी जय हो! मैंने अनजान में आपको बहुत-से अनुचित वचन कहे। हे क्षमा के मन्दिर! आप दोनों भाई मुझे क्षमा कीजिये।

कहि जय जय जय रघुकुल केतू ❀ भृगुपति गये बनहिं तप हेतू
अपभयँ[4] कुटिल महीप डेराने ❀ जहँ तहँ कायर गवहिं पराने

रघुकुल के पताका-स्वरूप रामचन्द्रजी की जय हो, जय हो, जय हो! ऐसा कहकर परशुराम तप के लिये बन को चले गये। दुष्ट राजा लोग अकारण ही बहुत डर गये थे, वे डरपोक चुपके से इधर-उधर खिसक गये।

---

१. कमल। २. जंगल। ३. चतुर, निपुण। ४. कल्पित भय।

दो० देवन्ह दीन्हीं दुंदुभी प्रभु पर बरषहिं फूल ।
हरषे पुर नर नारि सब मिटा मोह मय सूल ॥२८५॥

देवताओं ने नगाड़े बजाये। वे प्रभु के ऊपर फूल बरसाने लगे। जनकपुर के पुरुष-स्त्री सब हर्षित हो गये और अज्ञान से उत्पन्न उनकी पीड़ा मिट गई।

अति गहगहे बाजने बाजे ❀ सबहिं मनोहर मंगल साजे
जूथ जूथ मिलि सुमुखि सुनयनीं ❀ करहिं गान कल कोकिल बयनीं

बड़े ज़ोर से बाजे बजने लगे। सबने मनोहर मंगल साज साजे। सुन्दर मुँह वाली, सुन्दर नेत्रों वाली और कोयल के समान मधुर बोलने वाली स्त्रियाँ झुण्ड की झुण्ड मिलकर सुन्दर गान करने लगीं।

सुखु बिदेह कर बरनि न जाई ❀ जनम दरिद्र मनहुँ निधि[1] पाई
बिगत त्रास भइ सीय सुखारी ❀ जनु बिधु उदयँ चकोर कुमारी

जनक के सुख का वर्णन नहीं किया जा सकता। मानो जन्म से दरिद्र ने खज़ाना पा लिया हो। सीता का भय जाता रहा। वे ऐसी सुखी हुईं, जैसे चन्द्रमा के उदय होने से चकोर की कन्या सुखी होती है।

जनक कीन्ह कौसिकहि प्रनामा ❀ प्रभु प्रसाद धनु भंजेउ रामा
मोहि कृतकृत्य कीन्ह दुहुँ भाई ❀ अब जो उचित सो कहिअ गोसाईं

जनक ने विश्वामित्र को प्रणाम किया (और कहा—) आप ही की कृपा से राम ने धनुष तोड़ा है। दोनों भाइयों ने मुझे कृतार्थ कर दिया। हे स्वामी! अब जो उचित हो, सो कहिये।

कह मुनि सुनु नरनाथ प्रबीना ❀ रहा बिबाहु चाप आधीना
टूटतहीं धनु भयेउ बिबाहू ❀ सुर नर नाग बिदित सब काहू

मुनि ने कहा—हे बुद्धिमान राजा! सुनो। विवाह का होना तो धनुष के अधीन था। धनुष के टूटते ही विवाह हो गया। देवता, नर और नाग सबको यह मालूम है।

दो० तदपि जाइ तुम्ह करहु अब जथा बंस ब्यवहारु ।
बूझि बिप्र कुल बृद्ध गुरु बेद बिदित आचारु ॥२८६॥

---

१. खजाना।

तथापि तुम जाकर अपने कुल की जैसी रीति हो, ब्राह्मणों, कुल के बूढ़ों और गुरुओं से पूछकर और वेदों में वर्णित जैसा आचार हो वैसा करो।

दूत अवधपुर पठवहु जाई ❀ आनहिं[1] नृप दसरथहि बोलाई
मुदित राउ कहि भलेहि कृपाला ❀ पठए दूत बोलि तेहि काला

जाकर अयोध्या को दूत भेजो। वे राजा दशरथ को बुला लावे। राजा ने आनन्दित होकर कहा—हे कृपालु! बहुत अच्छा। उन्होंने उसी समय दूतों को बुलाकर भेज दिया।

बहुरि महाजन सकल बोलाए ❀ आइ सबन्हि सादर सिरु नाए
हाट बाट मन्दिर सुरबासा ❀ नगर सवाँरहु चारिहुँ पासा

फिर जनक ने सब महाजनों को बुलाया। सबने आकर राजा को आदर-सहित सिर नवाया। राजा ने कहा—बाज़ार, रास्ते, घर, देवस्थान और सारे नगर को चारों ओर से सजाओ।

हरषि चले निज निज गृह आये ❀ पुनि परिचारक[2] बोलि पठाये
रचहु बिचित्र बितान बनाई ❀ सिर धरि बचन चले सचुपाई

महाजन लोग हर्षित होकर चले और अपने-अपने घर आये। फिर राजा ने नौकरों को बुला भेजा, और कहा—सुन्दर मंडप बनाकर तैयार करो। यह सुनकर, वे राजा का वचन सिर पर धरकर और सुख पाकर चले।

पठये बोलि गुनी[3] तिन्ह नाना ❀ जे बितान बिधि कुसल सुजाना
बिधिहि बंदि तिन्ह कीन्ह अरंभा ❀ बिरचे कनक कदलि के खंभा

उन्होंने अनेक कारीगरों को बुला भेजा, जो मंडप छाने में बड़े कुशल और चतुर थे। उन्होंने ब्रह्मा की वन्दना करके कार्य आरम्भ किया और पहले उन्होंने सोने के केले के खम्भे बनाये।



हरित मनिन्ह के पत्र फल पदुम राग के फूल।
रचना देखि बिचित्र अति मन बिरंचि कर भूल २८७

हरे मणियों के पत्र और फल और पद्मराग (माणिक) मणियों के फूल बनाये। मंडप की अति विचित्र रचना देखकर ब्रह्मा का मन भी चकित हो गया।

---

१. लावें। २. नौकर-चाकर। ३. कारीगर।

बेनु[1] हरित मनि मय सब कीन्हे ❀ सरल सपरब[2] परहिं नहिं चीन्हे
कनक कलित अहिबेलि बनाई ❀ लखि नहिं परइ सपर्न[3] सुहाई

बाँस हरे मणियों (पन्ने) से सीधे और गाँठों से युक्त ऐसे बनाये जो पहचाने नहीं जाते थे। सोने की सुन्दर नागबेलि (पान की लता) बनाई, जो पत्तों सहित ऐसी सुन्दर लगती थी कि पहचानी नहीं जाती थी।

तेहि के रचि पचि बंध बनाए ❀ बिच बिच मुकुता दाम सुहाये
मानिक मरकत कुलिस पिरोजा ❀ चीरि कोरि पचि[4] रचे सरोजा

उसी नागबेलि के रचकर और पच्चीकारी करके बन्धन (बाँधने की रस्सी) बनाये, जिनके बीच-बीच में मोतियों की सुन्दर झालरें हैं। माणिक्य, नीलम, हीरा और फ़ीरोजे को चीर करके, कोर करके और पच्चीकारी करके, उन्होंने (लाल, नीले, सफेद और फ़ीरोज़ी रंग के) कमल बनाये।

किए भृङ्ग बहुरंग बिहंगा ❀ गुञ्जहिं कूजहिं पवन प्रसंगा
सुर प्रतिमा खंभन्हि गढ़ि काढ़ीं ❀ मंगल द्रब्य लिएँ सब ठाढ़ीं
चौकें भाँति अनेक पुराईं ❀ सिंधुर मनिमय सहज सुहाई

भौंरे और बहुत रंगों के पक्षी बनाये, जो हवा लगने पर गूँजते और कूजते थे। खंभों पर देवताओं की मूर्त्तियाँ गढ़कर निकालीं, जो सब मंगल द्रव्य लिये खड़ी थीं। सहज सुहावने गजमुक्ताओं के अनेकों तरह के चौके उन्होंने पुराये।

दो॰ सौरभ पल्लव सुभग सुठि किए नीलमनि कोरि।
हेम बौर मरकत घवरि लसत पाटमय डोरि॥२८८

नीलमणि को कोरकर उन्होंने आम के सुन्दर पत्ते बनाये। सोने के बौर और रेशम की डोरी में बँधे हुये पन्ने के बने फलों के गुच्छे सुशोभित हैं।

रचे रुचिर बर बंदनिवारे ❀ मनहुँ मनोभवँ फंद सँवारे
मंगल कलस अनेक बनाए ❀ ध्वज पताक पट चँवर सुहाए

उन्होंने ऐसे सुन्दर और उत्तम बन्दनवार बनाये, मानो कामदेव ने फन्दे सजाये हों। अनेकों मंगल-कलश, ध्वजा, पताका, परदे और सुन्दर चँवर बनाये।

---

१. बाँस। २. गाँठदार। ३. पत्ते सहित। ४. पच्चीकारी करके।

दीप मनोहर मनिमय नाना ❀ जाइ न बरनि बिचित्र बिताना
जेहि मंडप दुलहिनि बैदेही ❀ सो बरनै असि मति कबि केही

मंडप में मणियों के अनेकों सुन्दर दीपक हैं। उस विचित्र मण्डप का तो वर्णन ही नहीं हो सकता। जिस मण्डप में सीता दुलहिन होंगी, उसका वर्णन करने की बुद्धि किस कवि में हो सकती है?

दूलह राम रूप गुन सागर ❀ सो बितान तिहुँ लोक उजागर[1]
जनक भवन कै सोभा जैसी ❀ गृह गृह प्रति पुर देखिअ तैसी

जिसमें रूप और गुणों के समुद्र राम दूल्हा होंगे, उस मंडप को तीनों लोकों में प्रसिद्ध होना ही चाहिये। जनक के महल की जैसी शोभा है, वैसी ही शोभा नगर के प्रत्येक घर की दिखाई देती है।

जेइ तिरहुति तेहि समय निहारी ❀ तेहि लघु लाग भुवन दस चारी
जो सम्पदा नीच गृह सोहा ❀ सो बिलोकि सुरनायक मोहा

उस समय जिसने तिरहुत को देखा था, उसे चौदहों भुवन छोटे जान पड़े। जनकपुर में नीच के घर भी उस समय जो सम्पदा सुशोभित थी, उसे देखकर इन्द्र भी मोहित हो जाता था।

दो० बसइ नगर जेहिं लच्छि करि कपट नारि बर बेषु।
तेहि पुर कै सोभा कहत सकुचहिं सारद सेषु।२८९।

जिस नगर में साक्षात् लक्ष्मी कपट से स्त्री का सुन्दर वेष बनाकर बसती हैं, उस पुर की शोभा का बखान करने में सरस्वती और शेष भी सकुचाते हैं।

पहुँचे दूत राम पुर पावन ❀ हरषे नगर बिलोकि सुहावन
भूप द्वार तिन्ह खबरि जनाई ❀ दसरथ नृप सुनि लिए बोलाई

जनक के दूत पवित्र राम की पवित्र पुरी अयोध्या में पहुँचे। सुन्दर नगर देखकर वे हर्षित हुये। उन्होंने राजद्वार पर जाकर ख़बर भेजी; राजा दशरथ ने सुनकर उन्हें बुला लिया।

करि प्रनामु तिन्ह पाती[2] दीन्ही ❀ मुदित महीप आपु उठि लीन्ही
बारि बिलोचन बाँचत पाती ❀ पुलक गात आई भरि छाती

उन्होंने प्रणाम करके चिट्ठी दी। प्रसन्न होकर राजा ने स्वयं उठकर उसे

१. प्रसिद्ध। २. चिट्ठी।

लिया। चिट्ठी बाँचते समय उनके नेत्रों में आँसू आ गये; शरीर में रोमाञ्च हो आया, और छाती भर आई।

रामु लषनु उर कर बर चीठी ❀ रहि गए कहत न खाटी मीठी
पुनि धरि धीर पत्रिका बाँची ❀ हरषी सभा बात सुनि साँची

हृदय में राम और लक्ष्मण, और हाथ में वह सुन्दर चिट्ठी है, राजा उसे लिये ही रह गये, कह न सके कि वह खट्टी है या मीठी। फिर धीरज धरकर उन्होंने चिट्ठी बाँची। सारी सभा सच्ची बात सुनकर हर्षित हो गई।

खेलत रहे तहाँ सुधि पाई ❀ आए भरत सहित हित[1] भाई
पूछत अति सनेह सकुचाई ❀ तात कहाँ तें पाती आई

भरत अपने मित्रों और भाई शत्रुघ्न के साथ जहाँ खेलते थे, वहीं समाचार पाकर वे आ गये। वे बहुत प्रेम से सकुचाते हुये पूछते हैं—पिताजी! चिट्ठी कहाँ से आई है?

दो०— कुसल प्रानप्रिय बंधु दोउ अहहिं कहहु केहि देस।
सुनि सनेह साने बचन बाँची बहुरि नरेस ॥२९०॥

हमारे प्राणों से प्यारे दोनों भाई कुशल से तो हैं? और वे किस देश में हैं? स्नेह से सने हुये ये वचन सुनकर राजा ने फिर से चिट्ठी बाँची।

सुनि पाती पुलके दोउ भ्राता ❀ अधिक सनेहु समात न गाता
प्रीति पुनीत भरत कै देखी ❀ सकल सभाँ सुखु लहेउ बिसेखी

चिट्ठी सुनकर दोनों भाई पुलकित हो गये। स्नेह इतना अधिक हो गया कि वह उनके शरीर में समाता नहीं। भरत का पवित्र प्रेम देखकर सारी सभा ने विशेष सुख पाया।

तब नृप दूत निकट बैठारे ❀ मधुर मनोहर बचन उचारे
भैआ कहहु कुसल दोउ बारे[2] ❀ तुम्ह नीकें निज नयन निहारे

तब राजा ने दूतों को पास बैठाया और मन को हरने वाले मीठे वचन बोले—हे भैया! कहो, दोनों बच्चे कुशल से तो हैं? तुमने अपनी आँखों से उन्हें अच्छी तरह देखा है न?

---

१. मित्र। २. बच्चे।

स्यामल गौर धरे धनु भाथा[1] ❀ बय किसोर कौसिक मुनि साथा
पहिचानहु तुम्ह कहहु सुभाऊ ❀ प्रेम बिबस पुनि पुनि कह राऊ

वे साँवले और गोरे शरीर के हैं, हाथों में धनुष और तरकस लिये रहते हैं, किशोर अवस्था है, विश्वामित्र मुनि के साथ हैं। तुम उनको पहचानते हो तो उनका स्वभाव बताओ। राजा प्रेम के वश बार-बार यही कह रहे हैं।

जा दिन तें मुनि गए लेवाई ❀ तब तें आजु साँचि सुधि पाई
कहहु बिदेह कवन बिधि जाने ❀ सुनि प्रिय बचन दूत मुसुकाने

जिस दिन से मुनि उन्हें लिवा ले गये, तब से आज ही हमने सच्ची खुशी पाई है। कहो तो, महाराज जनक ने उनको किस प्रकार पहचाना? यह प्रिय बचन सुनकर दूत मुसकुराये।

दो॰ सुनहु महीपति मुकुट मनि तुम्ह सम धन्य न कोउ।
रामु लषनु जिन्हके तनय बिस्व बिभूषन दोउ ॥२९१॥

दूतों ने कहा—हे राजाओं के मुकुट-मणि, महाराज! सुनिये। आपके समान धन्य और कोई नहीं है, जिनके राम-लक्ष्मण जैसे पुत्र हैं, जो विश्व के भूषण हैं।

पूछन जोगु न तनय तुम्हारे ❀ पुरुषसिंघ तिहुँ पुर उँजियारे
जिन्ह के जस प्रताप कें आगे ❀ ससि मलीन रबि सीतल लागे

आपके पुत्र पूछने योग्य नहीं हैं वे पुरुषों में सिंह के समान और तीनों लोकों के प्रकाश-स्वरूप हैं। जिनके यश के आगे चन्द्रमा मलिन और प्रताप के आगे सूर्य शीतल लगता है।

तिन्ह कहँ कहिअ नाथ किमि चीन्हे ❀ देखिअ रबि कि दीप कर लीन्हे
सीय स्वयम्बर भूप अनेका ❀ सिमिटे[2] सुभट एक तें एका

हे नाथ! उनके लिये आप कहते हैं कि उन्हें कैसे पहचाना? क्या सूर्य को हाथ में दीपक लेकर देखा जाता है? सीता के स्वयंवर में अनेकों राजा और एक से एक बढ़कर वीर योद्धा एकत्र हुये थे।

संभु सरासनु काहु न टारा ❀ हारे सकल बीर बरिआरा
तीनि लोक महँ जे भट मानी ❀ सभ कै सकति संभु धनु भानी[3]

१. तरकस। २. एकत्र हुये। ३. तोड़ दी, कह दी।

शिवजी के धनुष को कोई भी हटा न सका। सब बली योद्धा हार गये। तीनों लोकों में प्रसिद्ध जो अभिमानी वीर थे, सबकी शक्ति शिवजी के धनुष ने तोड़ दी, या बता दी।

सकइ उठाइ सरासुर मेरू ❀ सोउ हिय हारि गयउ करि फेरू
जेइ कौतुक सिव सैलु उठावा ❀ सोउ तेहि सभाँ पराभव पावा

बाणासुर, जो सुमेरु को भी उठा सकता था, वह भी हृदय में हारकर परिक्रमा करके चला गया। और जिसने खेलवाड़ की तरह कैलाश को उठा लिया था, वह रावण भी उस सभा में पराजय को प्राप्त हुआ।

दो० तहाँ राम रघुबंसमनि सुनिअ महा महिपाल।
भंजेउ चाप प्रयास बिनु जिमि गज पंकज नाल॥२६२

हे महाराज! सुनिये, वहाँ रघुवंश-मणि रामचन्द्रजी ने बिना प्रयास ही के शिव के धनुष को वैसे ही तोड़ डाला, जैसे हाथी कमल की डंडी को तोड़ डालता है।

सुनि सरोष भृगुनायकु आये ❀ बहुत भाँति तिन्ह आँखि देखाये
देखि राम बलु निज धनु दीन्हा ❀ करि बहु बिनय गवनु बन कीन्हा

धनुष टूटने का समाचार पाकर क्रोध में भरे परशुराम आये और उन्होंने बहुत प्रकार से आँखें दिखलाईं। अन्त में उन्होंने भी राम का बल देखकर अपना धनुष दे दिया और बहुत प्रकार से विनती करके बन को गमन किया।

राजन राम अतुल बल जैसें ❀ तेज निधान लषन पुनि तैसें
कंपहिं भूप बिलोकत जाकें ❀ जिमि गज हरि किसोर के ताकें

हे राजन्! जैसे रामजी अतुलित बली हैं, वैसे ही तेजस्वी लक्ष्मणजी भी हैं। उनके देखने मात्र से राजा लोग काँप उठते थे, जैसे हाथी सिंह के बच्चे के ताकने से काँप उठते हैं।

देव देखि तव बालक दोऊ ❀ अब न आँखि तर आवत कोऊ
दूत बचन रचना प्रिय लागी ❀ प्रेम प्रताप बीर रस पागी

हे देव! आपके दोनों बालकों को देखने के बाद अब आँखों के नीचे कोई आता ही नहीं; अर्थात् दृष्टि में कोई चढ़ता ही नहीं। प्रेम, प्रताप और वीर-रस में पगी हुई दूतों की वचन-रचना राजा को बहुत ही प्रिय लगी।

सभा समेत राउ अनुरागे ❀ दूतन्ह देन निछावरि लागे
कहि अनीति ते मूँदहिं काना ❀ धरमु बिचारि सबहिं सुखु माना

सभा-सहित राजा प्रेम में मग्न हो गये और दूतों को निछावर देने लगे। दूत 'यह उचित नहीं' ऐसा कहकर हाथों से कान मूँदने लगे। उनके धर्म का विचार करके (उनका धर्मयुक्त व्यवहार देखकर) सभी ने सुख माना।

दो०– तब उठि भूप बसिष्ठ कहँ दीन्हि पत्रिका जाइ।
कथा सुनाई गुरहि सब सादर दूत बोलाइ॥२९३॥

तब राजा ने उठकर वशिष्ठ को जाकर चिट्ठी दी। और आदर-सहित दूतों को बुलाकर उन्होंने सारी कथा गुरुजी को कह सुनाई।

सुनि बोले गुर अति सुखु पाई ❀ पुन्य पुरुष कहुँ महि सुख छाई
जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं ❀ जद्यपि ताहि कामना नाहीं

सुनकर और बहुत सुख पाकर गुरु बोले—पुण्यात्मा पुरुषों के लिये पृथ्वी सुखों से छाई हुई है। जैसे नदी समुद्र के पास जाती है, यद्यपि समुद्र को नदी की कामना नहीं होती

तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाये ❀ धरमसील पहिं जाहिं सुभाये
तुम्ह गुर बिप्र धेनु सुर सेबी ❀ तसि पुनीत कौसल्या देबी

वैसे ही सुख और सम्पत्ति बिना बुलाये ही, स्वभावतः, धर्मात्मा पुरुष के पास जाते हैं। तुम गुरु, ब्राह्मण, गौ और देवता की सेवा करने वाले हो, वैसी ही पवित्र कौशल्या देवी भी हैं।

सुकृती तुम्ह समान जग माहीं ❀ भयउ न है कोउ होनेउ नाहीं
तुम्ह तें अधिक पुन्य बड़ काकें ❀ राजन राम सरिस सुत जाकें

तुम्हारे समान पुण्यात्मा संसार में न कोई हुआ, न है और न होने वाला है। हे राजन्! तुमसे अधिक और किसका पुण्य होगा, जिसके राम-सरीखे पुत्र हैं ?

बीर बिनीत धरम ब्रत धारी ❀ गुन सागर बर बालक चारी
तुम्ह कहुँ सर्ब काल कल्याना ❀ सजहु बरात बजाउ निसाना

तुम्हारे चारों बालक वीर, विनम्र, धर्म के व्रत को धारण करने वाले और

गुणों के सुन्दर समुद्र हैं। तुम्हें तो सभी समय कल्याणमय है। अतएव डंका बजवाकर बरात सजाओ।

दो०— चलहु बेगि सुनि गुर बचन भलेहि नाथ सिरु नाइ।
भूपति गवने भवन तब दूतन्ह बासु देवाइ ॥२९४॥

और 'जल्दी चलो' ऐसे गुरु के वचन सुनकर, 'हे नाथ! बहुत अच्छा' कहकर और सिर नवाकर तथा दूतों को डेरा दिलवाकर राजा महल में गये।

राजा सबु रनिवास बोलाई ❁ जनक पत्रिका बाँचि सुनाई
सुनि संदेसु सकल हरषानीं ❁ अपर कथा सब भूप बखानीं

राजा ने सारे रनिवास को बुलाया, और जनक की चिट्ठी बाँचकर सुना दी। समाचार सुनकर सब रानियाँ हर्षित हुईं। राजा ने फिर दूसरी बातें (जो दूतों से सुनी थीं) विस्तार के साथ बताईं।

प्रेम प्रफुल्लित राजहिं रानी ❁ मनहुँ सिखिनि सुनि बारिद बानी
मुदित असीस देहिं गुरनारीं ❁ अति आनंद मगन महतारीं

प्रेम में प्रफुल्लित रानियाँ ऐसी शोभायमान लगती हैं, जैसे मोरनी बादलों की गरज सुनकर (प्रफुल्लित होती है)। गुरु-पत्नी या बड़ी-बूढ़ी स्त्रियाँ प्रसन्न होकर आशीर्वाद दे रही हैं। मातायें अत्यन्त आनन्द में मग्न हैं।

लेहिं परसपर अति प्रिय पाती ❁ हृदयँ लगाइ जुड़ावहिं छाती
राम लषन कै कीरति करनी ❁ बारहिं बार भूपबर बरनी

उस अत्यन्त प्यारी चिट्ठी को आपस में लेकर सब हृदय से लगाकर छाती शीतल करती हैं। राजाओं में श्रेष्ठ राजा दशरथ ने राम-लक्ष्मण की कीर्त्ति-कथा का बारम्बार वर्णन किया।

मुनि प्रसादु कहि द्वार सिधाये ❁ रानिन्ह तब महिदेव बोलाये
दिये दान आनन्द समेता ❁ चले बिप्रबर आसिष देता

राजा 'यह सब मुनि की कृपा है' कहकर बाहर चले गये। तब रानियों ने ब्राह्मणों को बुलाया, और आनन्द-सहित उन्हें दान दिये। श्रेष्ठ ब्राह्मण आशीर्वाद देते हुये चले।

सो०— जाचक लिये हँकारि दीन्हि निछावरि कोटि बिधि।
चिरजीवहु सुत चारि चक्रबर्ति दसरत्थ के ॥२९५॥

तब उन्होंने भिक्षुकों को बुलवा लिया और उन्हें करोड़ों प्रकार की निछावरें दीं। (उन्होंने आशीर्वाद दिये—) चक्रवर्ती राजा दशरथ के चारों पुत्र चिरंजीवि हों।

कहत चले पहिरें पट नाना ❁ हरषि हने गहगहे निसाना
समाचार सब लोगन्हि पाये ❁ लागे घर घर होन बधाये

वे यह कहते हुये और अनेक प्रकार के सुन्दर वस्त्र पहन-पहनकर चले। आनन्दित होकर नगाड़े वालों ने नगाड़ों पर ज़ोर से चोटें लगाईं। जब यह सब समाचार लोगों ने पाया, तब घर-घर बधावे होने लगे।

भुवन चारि दस भरा उछाहू ❁ जनक सुता रघुबीर बिआहू
सुनि सुभ कथा लोग अनुरागे ❁ मग गृह गलीं सँवारन लागे

चौदहों भुवनों में उत्साह भर उठा कि जनकजी की कन्या से रामचन्द्रजी का विवाह होगा। यह शुभ समाचार पाकर लोग प्रेम-मग्न हो गये, और रास्ते, घर और गलियाँ सजाने लगे।

जद्यपि अवध सदैव सुहावनि ❁ राम पुरी मंगलमय पावनि
तदपि प्रीति कै रीति सुहाई ❁ मंगल रचना रची बनाई

यद्यपि अयोध्या सदा सुहावनी है, क्योंकि वह राम की कल्याणमयी और पवित्र पुरी है, तो भी प्रीति की सुहावनी रीति के अनुसार मंगल-रचना से वह सजाई गई।

ध्वज पताक पट चामर चारू ❁ छावा परम बिचित्र बजारू
कनक कलस तोरन मनिजाला ❁ हरद दूब दधि अच्छत माला

ध्वजा, पताका, परदे और सुन्दर चँवरों से सारा बाज़ार बहुत सुन्दर छाया हुआ है। सोने के घड़े, तोरण, मणियों के समूह, हलदी, दूब, दही, अक्षत और मालाओं से—

दो० मंगल मय निज निज भवन लोगन्ह रचे बनाइ।
बीथी सींचीं चतुरसम[1] चौकें चारु पुराइ ॥२९६॥

लोगों ने अपने-अपने घरों को सजाकर मंगलमय बना दिया और गलियों को चतुरसम से सींचा और (द्वारों पर) सुन्दर चौक पुराये।

---

१. चन्दन चार भाग, केसर तीन भाग, कस्तूरी दो भाग और कपूर तीन भाग से बना हुआ एक सुगन्धित द्रव, अरगजा।

जहँ तहँ जूथ जूथ मिलि भामिनि ❀ सजि नवसप्त[1] सकल दुति दामिनि
बिधुबदनी मृग सावक लोचनि ❀ निज सरूप रति मान बिमोचनि

बिजली की-सी कान्ति वाली, चन्द्र-मुखी, हरिण के बच्चे के-से नेत्रों वाली और अपने सुन्दर रूप से कामदेव की स्त्री रति के अभिमान को छुड़ाने वाली सुहागिन स्त्रियाँ सोलहों शृङ्गार सजकर, जहाँ-तहाँ झुण्ड की झुण्ड मिलकर—

गावहिं मंगल मंजुल बानी ❀ सुनि कल रव कलकंठि[2] लजानी
भूप भवन किमि जाइ बखाना ❀ बिस्व बिमोहन रचेउ बिताना

मनोहर वाणी से मंगल-गीत गा रही हैं। जिनके सुन्दर स्वर को सुनकर कोयलें भी लजा जाती हैं। राजा के महल का वर्णन कैसे हो सकता है, जहाँ विश्व को मोहने वाला मंडप छाया हुआ है।

मंगल द्रब्य मनोहर नाना ❀ राजत बाजत बिपुल निसाना
कतहुँ बिरद बन्दी उच्चरहीं ❀ कतहुँ बेदधुनि भूसुर करहीं

नाना प्रकार के मनोहर मंगल-द्रव्य शोभित हो रहे हैं और बहुत-से नगाड़े बज रहे हैं। कहीं बन्दीजन विरुदावली गा रहे हैं और कहीं ब्राह्मण वेद-ध्वनि कर रहे हैं।

गावहिं सुन्दरि मंगल गीता ❀ लेइ लेइ नामु रामु अरु सीता
बहुत उछाहु भवनु अति थोरा ❀ मानहुँ उमगि चला चहुँ ओरा

सुन्दरी स्त्रियाँ राम और सीता का नाम ले-लेकर मंगल-गीत गा रही हैं। उत्साह बहुत है, महल अत्यंत ही छोटा है; इससे मानो आनन्द चारों ओर उमड़ चला है।

दो॰ सोभा दसरथ भवन कइ को कबि बरनै पार।
जहाँ सकल सुर सीस मनि राम लीन्ह अवतार।२९७

दशरथ के महल की शोभा का वर्णन कौन कवि कर सकता है? जहाँ सब देवताओं के शिरोमणि रामचन्द्रजी ने अवतार लिया है।

भूप भरत पुनि लिये बोलाई ❀ हय गय स्यंदन[3] साजहु जाई
चलहु बेगि रघुबीर बराता ❀ सुनत पुलक पूरे दोउ भ्राता

१. सोलह। २. कोयल। ३. रथ।

फिर राजा ने भरत को बुला लिया। (और कहा कि) जाकर घोड़े, हाथी और रथ सजाओ। रामचन्द्र की बरात में जल्दी चलो। यह सुनते ही दोनों भाई आनन्द से पूर्ण हो गये।

भरत सकल साहनी[1] बोलाये ❀ आयसु दीन्ह मुदित उठि धाये
रचि रुचि जीन तुरग तिन्ह साजे ❀ बरन बरन बर बाजि बिराजे

भरत ने घुड़साल के सब अध्यक्षों को बुलाया और उनको आज्ञा दी। वे प्रसन्न होकर उठ दौड़े। उन्होंने रुचि के साथ ज़ीन कसकर घोड़े सजाये। रंग-रंग के उत्तम घोड़े शोभित हो गये।

सुभग सकल सुठि चंचल करनी ❀ अय[2] इव जरत धरत पग धरनी
नाना जाति न जाहिं बखाने ❀ निदरि पवनु जनु चहत उड़ाने

सब घोड़े बड़े ही सुन्दर और चञ्चल चाल वाले हैं। वे धरती पर ऐसे पैर रखते हैं जैसे जलते हुये लोहे पर रखते हों। अनेकों जातियों के घोड़े हैं जिनका वर्णन नहीं हो सकता। वे मानो हवा का निरादर करके उड़ना चाहते हैं।

तिन्ह सब छयल भये असवारा ❀ भरत सरिस बय राजकुमारा
सब सुंदर सब भूषनधारी ❀ कर सर चाप तून कटि भारी

उन घोड़ों पर भरत के समान आयु वाले सब छैल-छबीले राजकुमार सवार हुये। ये सभी सुन्दर हैं और सभी आभूषण धारण किये हुये हैं। उनके हाथों में बाण और धनुष हैं, और कमर में भारी तरकस बँधे हैं।

दो० छरे छबीले छयल सब सूर सुजान नबीन।
जुग पदचर असवार प्रति जे असि कला प्रबीन।२९८

सभी चुने हुये छैल छबीले, बहादुर, चतुर और नवयुवक हैं। प्रत्येक सवार के साथ दो पैदल सिपाही हैं, जो तलवार चलाने की कला में बड़े निपुण हैं।

बाँधे बिरद बीर रन गाढ़े ❀ निकसि भए पुर बाहर ठाढ़े
फेरहिं चतुर तुरग गति नाना ❀ हरषहिं सुनि सुनि पनव निसाना

बड़े-बड़े युद्धों में पाई हुई कीर्ति से प्रशंसित वे वीर नगर से निकलकर बाहर जा खड़े हुये। वे चतुर अपने घोड़ों को तरह-तरह की चालों से फेर रहे हैं और भेरी और नगाड़े की आवाज़ सुन-सुनकर आनन्दित हो रहे हैं।

---

१. घुड़साल का अध्यक्ष। २. लोहा।

रथ सारथिन्ह बिचित्र बनाए ❀ ध्वज पताक मनि भूपन लाए
चवँर चारु किंकिनि धुनि करही ❀ भानु जानु सोभा अपहरहीं

सारथियों ने ध्वजा, पताका, मणि और आभूषणों को लगाकर रथों को अद्भुत बना लिया है। उनमें सुन्दर चँवर लगे हैं और घंटियाँ बोल रही हैं। वे रथ इतने सुन्दर हैं कि सूर्य के रथ की सुन्दरता को भी छीने ले रहे हैं।

साँवकरन अगनित हय होते ❀ ते तिन्ह रथन्ह सारथिन्ह जोते
सुन्दर सकल अलंकृत सोहे ❀ जिन्हहि बिलोकत मुनि मन मोहे

श्यामकर्ण घोड़े अगणित थे। सारथियों ने वे उन रथों में जोत दिये जो सभी देखने में सुन्दर और गहनों से सजाये हुये शोभायमान हैं, जिनको देखकर मुनियों के मन भी मोहित हो जाते हैं।

जे जल चलहिं थलहि की नाईं ❀ टाप न बूड़ बेग अधिकाईं
अस्त्र सस्त्र सबु साज बनाई ❀ रथी सारथिन्ह लिए बोलाई

वे घोड़े जल पर भी स्थल के समान चलते हैं। वेग की अधिकता से उनके टाप पानी में डूबते नहीं। अस्त्र-शस्त्र से सब साज बनाकर सारथियों ने रथियों को बुला लिया।

दो० चढ़ि चढ़ि रथ बाहर नगर लागी जुरन[1] बरात।
होत सगुन सुन्दर सबन्हि जो जेहि कारज जात २९९

रथों पर चढ़-चढ़कर बरात नगर के बाहर जुटने लगी। जो जिस काम के लिये जाता है, सभी को सुन्दर सगुन होते हैं।

कलित करिबरन्हि परीं अँवारी ❀ कहि न जाइ जेहि भाँति सँवारी
चले मत्त गज घंट बिराजी ❀ मनहुँ सुभग सावनु घन राजी[2]

सुन्दर हाथियों पर अम्बारियाँ पड़ी हैं। वे जिस तरह सजाई गई हैं, वह कहा नहीं जा सकता। मतवाले हाथी घंटे बजाते हुये चले। मानों सावन के सुन्दर बादलों की पंक्ति हो।

बाहन अपर अनेक बिधाना ❀ सिबिका[3] सुभग सुखासन जाना
तिन्ह चढ़ि चले बिप्र बर बृन्दा ❀ जनु तनु धरे सकल स्रुति छन्दा

और भी अनेकों प्रकार की सवारियाँ हैं, जैसे—सुन्दर पालकियाँ और

---

१. जमा होने। २. पंक्ति। ३. पालकी।

बैठने में सुखदायक तामझाम और रथ आदि। श्रेष्ठ ब्राह्मणों के समूह उन पर चढ़कर चले, मानो वेदों के सब छन्द ही शरीर धारण किये हुये हों।

मागध सूत बंदि गुन गायक ❀ चले जान चढ़ि जो जेहि लायक
बेसर[1] ऊँट बृषभ बहु जाती ❀ चले बस्तु भरि अगनित भाँती

मागध, सूत और बन्दीजन (भाट) जो गुण-गान करने वाले हैं, वे सब जो जिस योग्य थे, वैसी सवारी पर चढ़कर चले। बहुत जातियों के खच्चर, ऊँट और बैल बहुत प्रकार की वस्तुयें लाद-लादकर चले।

कोटिन्ह काँवरि चले कहारा ❀ बिबिध बस्तु को बरनै पारा
चले सकल सेवक समुदाई ❀ निज निज साजु समाजु बनाई

कहार करोड़ों काँवरें लेकर चले। उनमें तरह-तरह की इतनी चीज़ें हैं, जिनका वर्णन कौन कर सकता है। सब सेवकों के समूह अपना-अपना साज-समाज बनाकर चले।

दो० सब के उर निर्भर[2] हरषु पूरति पुलक सरीर।
कबहिं देखिब नयन भरि राम लषन दोउ बीर ३००।

सबके हृदयों में अपार हर्ष उमड़ रहा है और शरीर पुलकायमान हैं। (सब सोच रहे हैं कि) कब हम राम-लक्ष्मण दोनों भाइयों को आँख भरकर देखेंगे।

गरजहिं गज घंटा धुनि घोरा ❀ रथ रव बाजि हिंस चहुँ ओरा
निदरि घनहिं घुम्मरहिं निसाना ❀ निज पराइ कछु सुनिअ न काना

हाथी चिंघाड़ रहे हैं। उनके घन्टों की बड़ी प्रचंड ध्वनि हो रही है। चारों ओर रथों की घरघराहट है और घोड़े हिनहिना रहे हैं। नगाड़े बादलों की गरज का तिरस्कार करके गम्भीर ध्वनि से बज रहे हैं। किसी को अपनी-परायी कोई बात कानों से सुनाई नहीं दे रही है।

महा भीर भूपति के द्वारे ❀ रज होइ जाइ पषान[3] पबारे
चढ़ी अटारिन्ह देखहिं नारी ❀ लिएँ आरतीं मंगल थारी

राजा दशरथ के द्वार पर इतनी बड़ी भीड़ हो रही है कि वहाँ पत्थर फैंका जाय तो वह भी पिसकर धूल हो जाय। स्त्रियाँ मंगल-थालों में आरती लिये हुये अटारियों पर चढ़ी हुई देख रही हैं।

---

१. खच्चर। २. अच्छी तरह भरा हुआ। ३. पत्थर।

गावहिं गीत मनोहर नाना ❀ अति आनंदु न जाइ बखाना
तब सुमंत्र दुइ स्यंदन साजी ❀ जोते रबि हय निंदक बाजी

वे नाना प्रकार के मनोहर गीत गा रही हैं। उनके अत्यन्त आनन्द का बखान नहीं हो सकता। तब सुमन्त्र ने दो रथ सजाकर, उनमें सूर्य के घोड़ों का भी तिरस्कार करने वाले घोड़े जोते।

दोउ रथ रुचिर भूप पहिं आने ❀ नहिं सारद पहि जाहिं बखाने
राज समाजु एक रथ साजा ❀ दूसर तेज पुंज अति भ्राजा

दोनों सुन्दर रथों को वे राजा दशरथ के पास ले आये। (वे इतने सुन्दर थे कि) उनका बखान सरस्वती से भी नहीं हो सकता। एक रथ राजसी ठाठ से सजाया गया और दूसरा बहुत ही दिव्य और अत्यन्त शोभायमान था।

दो० तेहि रथ रुचिर बसिष्ठ कहुँ हरषि चढ़ाइ नरेसु।
आपु चढ़े स्यंदन सुमिरि हर गुर गौरि गनेसु॥३०१॥

उस सुन्दर रथ पर वशिष्ठजी को आनन्दपूर्वक चढ़ाकर फिर राजा दशरथ स्वयं शिव, गुरु, पार्वती और गणेशजी को स्मरण करके दूसरे रथ पर सवार हुये।

सहित बसिष्ठ सोह नृप कैसें ❀ सुर गुर संग पुरंदर जैसें
करि कुल रीति बेद बिधि राऊ ❀ देखि सबहि सब भाँति बनाऊ

वशिष्ठ के साथ राजा कैसे शोभित हो रहे हैं, जैसे देवताओं के गुरु वृहस्पति के साथ इन्द्र हों। वेद की विधि से और कुल की रीति के अनुसार कार्य करके तथा सब प्रकार से सब को सब प्रकार से सजे हुये देखकर,

सुमिरि रामु गुर आयसु पाई ❀ चले महीपति संख बजाई
हरषे बिबुध[1] बिलोकि बराता ❀ बरषहिं सुमन सुमंगल दाता

राम को स्मरण करके और गुरु की आज्ञा पाकर, राजा दशरथ शंख बजाकर चले। देवता बरात देखकर हर्षित हुये और सुन्दर मङ्गलदायक फूलों की वर्षा करने लगे।

भयेउ कोलाहल हय गय गाजे ❀ ब्योम बरात बाजने बाजे
सुर नर नारि सुमंगल गाई ❀ सरस राग बाजहिं सहनाई

१. देवता।

बड़ा शोर मच गया। घोड़े और हाथी गरजने लगे। आकाश और बरात दोनों स्थानों में बाजे बजने लगे। देवताओं और मनुष्यों की स्त्रियाँ मंगल-गीत गाने लगीं और सरस राग से शहनाई बजने लगी।

घंट घंटि धुनि बरनि न जाई ❀ सरव[1] करहिं पायक[2] फहराई
करहिं बिदूषक कौतुक नाना ❀ हास कुसल कल गान सुजाना

घन्टे-घन्टियों की ध्वनि का वर्णन नहीं हो सकता। पैदल चलने वाले सिपाही या नट आदि झण्डियाँ फहराकर कसरत दिखाते हुये चल रहे हैं। हँसी करने में निपुण और सुन्दर गाने में चतुर विदूषक (भाँड़) तरह-तरह के तमाशे करते थे।

दो॰ तुरग नचावहिं कुँअर बर अकनि मृदङ्ग निसान।
नागर नट चितवहिं चकित डिगहिं न ताल बँधान॥

सुन्दर राजकुमार मृदङ्ग और नगाड़े के शब्द सुनकर उन्हीं के अनुसार घोड़ों को ऐसा नचा रहे हैं कि वे ताल के बन्धन से ज़रा भी नहीं डिगते। होशियार नट चकित होकर यह देख रहे हैं।

बनइ न बरनत बनी बराता ❀ होहिं सगुन सुन्दर सुभदाता
चारा चाषु बाम दिसि लेई ❀ मनहुँ सकल मंगल कहि देई

बरात ऐसी बनी है कि उसका वर्णन करते नहीं बनता। सुन्दर कल्याणप्रद शकुन हो रहे हैं। नीलकंठ पक्षी बाईं ओर चारा ले रहा है, वह मानो सम्पूर्ण मंगलों की सूचना दे रहा है।

दाहिन काग सुखेत सुहावा ❀ नकुल दरसु सब काहूँ पावा
सानुकूल बह त्रिबिध बयारी ❀ सघट सबाल आव बर नारी

दाहिनी ओर कौआ सुन्दर खेत में शोभा पा रहा है। नेवले का दर्शन भी सब किसी ने पाया। शीतल, मंद और सुगन्ध पवन अनुकूल दिशा में बह रहा है। सौभाग्यवती स्त्रियाँ भरे हुये घड़े और गोद में बालक लिये आ रही हैं।

लोवा[3] फिरि फिरि दरसु देखावा ❀ सुरभी सनमुख सिसुहि पियावा
मृगमाला फिरि दाहिनि आई ❀ मंगल गन जनु दीन्हि देखाई

१. श्रम, कसरत। २. पैदल चलने वाले। ३. लोमड़ी।

लोमड़ी (फिर-फिरकर) बार-बार दिखाई दे जाती है। गायें सामने खड़ी बछड़ों को दूध पिलाती हैं। हरिनों की टोली बाईं ओर से घूमकर दाहिनी ओर को आई, मानो सभी मंगलों का समूह दिखाई दिया।

छेमकरी[1] कह छेम बिसेषी ❀ स्यामा बाम सुतरु पर देखी
सनमुख आयउ दधि अरु मीना ❀ कर पुस्तक दुइ बिप्र प्रबीना

क्षेमकरी (सफ़ेद सिर वाली चील, सगुन चिड़िया) विशेष रूप से क्षेम (कल्याण) की बात कह रही है। श्यामा बाईं ओर सुन्दर पेड़ पर दिखाई पड़ी। दही, मछली और दो विद्वान् ब्राह्मण हाथ में पुस्तक लिये हुये सामने आये।

दो० मंगलमय कल्यानमय अभिमत फल दातार।
जनु सब साँचे होन हित भए सगुन एक बार ॥३०३॥

सभी मङ्गलमय, कल्याणमय और मनोवाञ्छित फल देने वाले शकुन मानो सच्चे होने के लिये एक ही साथ हो गये।

मंगल सगुन सुगम सब ताकें ❀ सगुन ब्रह्म सुंदर सुत जाकें
राम सरिस बरु दुलहिनि सीता ❀ समधी दसरथु जनकु पुनीता

स्वयं सगुण ब्रह्म जिसके सुन्दर पुत्र हैं, उसके लिये सब मंगल-सूचक सगुन सुलभ हैं। जहाँ रामचन्द्रजी सरीखे दूल्हा और सीता सरीखी दुलहिन हैं, दशरथ और जनक सरीखे पवित्र समधी हैं।

सुनि अस ब्याह सगुन सब नाँचे ❀ अब कीन्हे बिरंचि हम साँचे
एहि बिधि कीन्ह बरात पयाना ❀ हय गय गाजहिं हने निसाना

ऐसा ब्याह सुनकर मानो सभी शकुन नाच उठे और कहने लगे—अब ब्रह्मा जी ने हमको सच्चा कर दिया। इस तरह बरात ने प्रस्थान किया। नगाड़ों पर चोट पड़ते ही घोड़े-हाथी ज़ोर से बोलने लगते हैं।

आवत जानि भानु कुल केतू ❀ सरितन्हि जनक बँधाए सेतू
बीच बीच बर बास बनाए ❀ सुर पुर सरिस संपदा छाए

सूर्य-वंश के पताका-स्वरूप दशरथजी को आता हुआ जानकर जनकजी ने नदियों पर पुल बनवा दिये। बीच-बीच में (पड़ाव के लिये) सुन्दर घर बनवा दिये, जिनमें देवलोक के समान सम्पदा छाई है।

---

१. सफेद सिर वाली चील।

असन सयन बर बसन सुहाए ❀ पावहिं सब निज निज मन भाए
नित नूतन सुख लखि अनुकूले ❀ सकल बरातिन्ह मंदिर भूले

बरात के सब लोग अपने-अपने मन की पसन्द के अनुसार उत्तम भोजन, बिस्तर और सुन्दर वस्त्र पाते हैं। अपनी रुचि के अनुकूल नित्य नये सुखों को देखकर सब बरातियों को अपने-अपने घर भूल गये।

दो॰ आवत जानि बरात बर सुनि गहगहे निसान।
सजि गज रथ पदचर तुरग लेन चले अगवान॥३०४

बड़े ज़ोर से बजते हुये नगाड़ों की आवाज़ सुनकर, श्रेष्ठ बरात को आती हुई जानकर अगवानी करने वाले हाथी, रथ, पैदल और घोड़े सजाकर बरात लेने चले।

कनक कलस भरि कोपर[1] थारा ❀ भाजन ललित अनेक प्रकारा
भरे सुधा सम सब पकवाने ❀ भाँति भाँति नहिं जाहिं बखाने

सोने के कलश, परात, थाल आदि अनेक प्रकार के सुन्दर बर्तनों में जिन में अमृत के समान सब पकवान भरे हुये हैं, जो विविध प्रकार के हैं, जिनका वर्णन नहीं हो सकता,

फल अनेक बर बस्तु सुहाई ❀ हरषि भेंट हित भूप पठाई
भूषन बसन महा मनि नाना ❀ खग मृग हय गय बहुबिधि जाना[2]

उत्तम फल तथा और भी अनेकों सुन्दर चीज़ें राजा ने हर्षित होकर भेंट के लिये भेजीं। गहने, वस्त्र, तरह-तरह के जवाहिरात, पक्षी, पशु, घोड़े, हाथी और कई तरह की सवारियाँ—

मंगल सगुन सुगंध सुहाये ❀ बहुत भाँति महिपाल पठाये
दधि चिउरा उपहार अपारा ❀ भरि भरि काँवरि चले कहारा

सुहावने मंगल द्रव्य, सगुन की चीज़ें और बहुत प्रकार के सुगन्धित पदार्थ राजा ने भेजे। दही, चिउड़ा और अगणित उपहार की चीज़ें बहँगियों में भर-भरकर कहार ले चले।

अगवानन्ह जब दीखि बराता ❀ उर आनंदु पुलक भर गाता
देखि बनाव सहित अगवाना ❀ मुदित बरातिन्ह हने निसाना

१. परात। २. सवारी।

अगवानी करने वालों ने जब बरात देखी, तब उनके हृदय आनन्दित और शरीर पुलकायमान हो गये। अगवानियों को सजधज के साथ देखकर बरातियों ने भी प्रसन्न होकर नगाड़े बजाये।

दो०— हरषि परसपर मिलन हित कछुक चले बगमेल[1]।
जनु आनंद समुद्र दुइ मिलत बिहाइ सुबेल ।३०५।

बराती तथा अगवानियों में से कुछ आपस में मिलने के लिये हर्ष के मारे सरपट दौड़ चले। मानो आनंद के दो समुद्र अपनी मर्यादा को छोड़कर मिलते हों।

बरषि सुमन सुर सुंदरि गावहिं ❁ मुदित देव दुंदुभी बजावहिं
बस्तु सकल राखीं नृप आगे ❁ बिनय कीन्हि तिन्ह अति अनुरागे

देवताओं की सुन्दरियाँ फूल बरसाकर गीत गा रही हैं और देवता आनन्दित होकर नगाड़े बजा रहे हैं। अगवानियों ने सब चीजें दशरथजी के आगे रख दीं और अत्यंत प्रेम से विनती की।

प्रेम समेत राय सबु लीन्हा ❁ भइ बकसीस[2] जाचकन्हि दीन्हा
करि पूजा मान्यता बड़ाई ❁ जनवासे कहँ चले लेवाई

राजा दशरथ ने प्रेम के साथ सब वस्तुएँ ले लीं। फिर बख्शीशें हुईं और वे याचकों को दे दी गईं। फिर पूजा करके, आदर-सत्कार और बड़ाई करके, अगवान लोग सबको जनवासे की ओर लिवा ले चले।

बसन बिचित्र पाँवड़े परहीं ❁ देखि धनदु धन मदु परिहरहीं
अति सुंदर दीन्हेउ जनवासा ❁ जहँ सब कहुँ सब भाँति सुपासा

विलक्षण वस्त्रों के पाँवड़े पड़ रहे हैं, जिन्हें देखकर कुबेर भी अपने धन का अभिमान छोड़ देते हैं। बड़ा सुन्दर जनवासा दिया गया, जहाँ सबको सब प्रकार का सुभीता था।

जानी सियँ बरात पुर आई ❁ कछु निज महिमा प्रगटि जनाई
हृदयँ सुमिरि सब सिद्धि बोलाईं ❁ भूप पहुनई करन पठाईं

जब सीता ने जाना कि नगर में बरात आ गई है, तब उन्होंने अपनी कुछ महिमा प्रकट करके दिखलाई। हृदय में स्मरण कर सब सिद्धियों को बुलाया

---

१. सरपट, बाग तुड़ाकर। २. बख्शीश, इनाम।

और उन्हें राजा दशरथ का अतिथि-सत्कार करने को भेजा।

दो० सिधि सब सिय आयसु अकनि[1] गईं जहाँ जनवास।
लियें संपदा सकल सुख सुरपुर भोग बिलास।।३०६।।

सीता की आज्ञा सुनकर सब सिद्धियाँ, जहाँ जनवासा था, वहाँ इन्द्रपुरी के सारे भोग-विलास और सब सुख और सम्पदा लिये हुए गईं।

निज निज बास बिलोकि बराती ❀ सुरसुख सकल सुलभ सब भाँती
बिभव भेद कछु कोउ न जाना ❀ सकल जनक कर करहिं बखाना

बरातियों ने अपने-अपने ठहरने के स्थान देखे। जहाँ देवताओं के सब सुखों को सब प्रकार से सुलभ पाया। इस ऐश्वर्य का कुछ भी भेद किसी ने जान नहीं पाया। सब जनकजी की प्रशंसा कर रहे हैं।

सिय महिमा रघुनायक जानी ❀ हरषे हृदयँ हेतु पहिचानी
पितु आगमन सुनत दोउ भाई ❀ हृदयँ न अति आनंदु अमाई[2]

राम ने सीता की महिमा जानी। वे सीता के प्रेम को पहचानकर हृदय में आनन्दित हुये। पिता (दशरथजी) के आने का समाचार सुनते ही दोनों भाइयों के हृदय में महान् आनंद समाता ही नहीं था।

सकुचन्ह कहि न सकत गुरु पाहीं ❀ पितु दरसन लालचु मन माहीं
बिस्वामित्र बिनय बड़ि देखी ❀ उपजा उर संतोष बिसेषी

संकोचवश वे गुरु से कह नहीं सकते थे, पर मन में पिता के दर्शनों की लालसा थी। विश्वामित्र ने उनकी बड़ी नम्रता देखी, तो उनके हृदय में बड़ा संतोष उत्पन्न हुआ।

हरषि बंधु दोउ हृदयँ लगाये ❀ पुलक अंग अंबक[3] जल छाये
चले जहाँ दसरथु जनवासे ❀ मनहुँ सरोबर तकेउ पियासे

हर्षित होकर उन्होंने दोनों भाइयों को हृदय से लगा लिया। उनका शरीर पुलकित हो गया और आँखों में आँसू आ गये। वे वहाँ चले, जहाँ दशरथजी का जनवासा था। मानो सरोवर प्यासे की ओर चला।

दो० भूप बिलोके जबहिं मुनि आवत सुतन्ह समेत।
उठेउ हरषि सुख सिंधु महुँ चले थाह सी लेत।।३०७।।

---

१. सुनकर। २. भरना, समाना। ३. आँख।

जब राजा दशरथ ने पुत्रों के साथ मुनि को आते देखा, तब वे हर्षित होकर उठे और सुख के समुद्र में थाह-सी लेते हुये चले।

मुनिहिं दंडवत कीन्ह महीसा ❀ बार बार पद रज धरि सीसा
कौसिक राउ लिये उर लाई ❀ कहि असीस पूछी कुसलाई

पृथ्वीपति दशरथजी ने मुनि के पैरों की धूलि को बार-बार सिर चढ़ाकर दण्डवत् प्रणाम किया। विश्वामित्रजी ने राजा को उठाकर हृदय से लगा लिया और आशीर्वाद देकर कुशल-क्षेम पूछा।

पुनि दंडवत करत दोउ भाई ❀ देखि नृपति उर सुखु न समाई
सुत हिय लाइ दुसह दुखु मेटे ❀ मृतक सरीर प्रान जनु भेंटे

फिर दोनों भाइयों को दंडवत्-प्रणाम करते देखकर राजा के हृदय में सुख नहीं समाता था। पुत्रों को उठाकर हृदय से लगाकर उन्होंने असहनीय दुःख को मिटाया। मानो मृतक शरीर को प्राण मिल गये।

पुनि बसिष्ठ पद सिर तिन्ह नाये ❀ प्रेम मुदित मुनिवर उर लाये
बिप्र बृन्द बंदे दुहुँ भाई ❀ मनभावती असीसें पाई

फिर उन्होंने वशिष्ठजी के चरणों पर सिर नवाया। मुनि ने प्रेम में आनन्दित होकर उनको उठाकर हृदय से लगा लिया। दोनों भाइयों ने सब ब्राह्मणों की वन्दना की और मनभाये आशीर्वाद पाये।

भरत सहानुज कीन्ह प्रनामा ❀ लिये उठाइ लाइ उर रामा
हरषे लषन देखि दोउ भ्राता ❀ मिले प्रेम परिपूरित गाता

भरत ने अपने छोटे भाई शत्रुघ्न सहित राम को प्रणाम किया। राम ने उन्हें उठाकर छाती से लगा लिया। लक्ष्मण दोनों भाइयों को देखकर हर्षित हुये, और प्रेम से भरे हुये शरीर से वे उनसे मिले।

दो॰ पुरजन परिजन जातिजन जाचक मंत्री मीत।
मिले जथाबिधि सबहिं प्रभु परम कृपालु बिनीत॥

फिर परम कृपालु और विनयी राम अयोध्या निवासियों, कुटुम्बियों, जाति के लोगों, याचकों, मन्त्रियों और मित्रों, इन सबसे यथायोग्य मिले।

रामहिं देखि बरात जुड़ानी ❀ प्रीति कि रीति न जाति बखानी
नृप समीप सोहहिं सुत चारी ❀ जनु धन धरमादिक तनुधारी

राम को देखकर बरात शीतल हुई। प्रीति की रीति का बखान नहीं हो सकता। राजा के पास चारों पुत्र ऐसी शोभा पा रहे हैं, जैसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष शरीर धारण किये हुये हों।

सुतन्ह समेत दसरथहि देखी ❀ मुदित नगर नर नारि बिसेषी
सुमन बरिसि सुर हनहिं निसाना ❀ नाक[1] नटीं[2] नाचहिं करि गाना

पुत्रों के साथ दशरथजी को देखकर नगर के पुरुष-स्त्री बहुत प्रसन्न हो रहे हैं। देवता फूलों की वर्षा करके नगाड़े बजाते हैं और स्वर्ग की अप्सरायें गा-गा कर नाच रही हैं।

सतानंद अरु बिप्र सचिव गन ❀ मागध सूत बिदुष[3] बन्दीजन
सहित बरात राउ सनमाना ❀ आयसु माँगि फिरे अगवाना

अगवानी में आये हुए शतानन्दजी, अन्य ब्राह्मण, मन्त्रीगण, मागध, सूत, विद्वान् और भाटों ने बरात-सहित राजा दशरथ का आदर-सत्कार किया। फिर आज्ञा लेकर वे वापस लौटे।

प्रथम बरात लगन तें आई ❀ तातें पुर प्रमोद अधिकाई
ब्रह्मानंद लोग सब लहहीं ❀ बढ़इ दिवस निसि बिधि सन लहहीं

बरात लग्न के समय से पहले ही आ गई है, इससे जनकपुर में अधिक आनन्द छा रहा है। सब लोग ब्रह्म-सुख का अनुभव कर रहे हैं और ब्रह्मा से मनाते हैं कि दिन और रात बड़े हो जायँ।

दो॰ रामु सीय सोभा अवधि सुकृत अवधि[4] दोउ राज।
जहँ तहँ पुरजन कहहिं अस मिलि नर नारि समाज॥

राम और सीता तो सुन्दरता की सीमा हैं और दोनों राजा पुण्य की सीमा हैं; ऐसा जनकपुरवासी पुरुष-स्त्री जहाँ-तहाँ झुण्ड के झुण्ड मिलकर यही कह रहे हैं।

जनक सुकृत मूरति बैदेही ❀ दसरथ सुकृत रामु धरि देही
इन्ह सम काहुँ न सिव अवराधे ❀ काहुँ न इन्ह समान फल लाधे[5]

सीता जनकजी के पुण्य की साक्षात् मूर्ति हैं और दशरथ के पुण्य ने राम का शरीर धारण किया है। इन दोनों राजाओं के समान शिव की आराधना और

---

१. स्वर्ग। २. अप्सरा। ३. विद्वज्जन। ४. सीमा, हद। ५. पाया (गुजराती)।

किसी ने नहीं की और न इनके समान किसी ने फल ही पाये।

इन्ह सम कोउ न भयउ जग माहीं ❀ है नहिं कतहूँ होनेउ नाहीं
हम सब सकल सुकृत कै रासी ❀ भये जन जनमि जनकपुर बासी

इनके समान जगत् में न कोई हुआ, न कहीं है, और न होने वाला है। हम सब भी समस्त पुण्यों की राशि हैं, जो जगत् में जन्म लेकर जनकपुर के निवासी हुये।

जिन्ह जानकी राम छबि देखी ❀ को सुकृती हम सरिस बिसेषी
पुनि देखब रघुबीर बिआहू ❀ लेब भली बिधि लोचन लाहू

और जिन्होंने जानकी और राम की शोभा देखी है, भला, बताओ तो हमारे सरीखा विशेष पुण्यात्मा और कौन है? और अब हम राम का विवाह देखेंगे और भली-भाँति नेत्रों का लाभ लेंगे।

कहहिं परसपर कोकिल बयनीं ❀ एहि बिआहँ बड़ लाभु सुनयनीं
बड़ें भाग बिधि बात बनाई ❀ नयन अतिथि होइहहिं दोउ भाई

कोयल के समान मधुर बोलने वाली स्त्रियाँ आपस में कहती हैं कि हे सुन्दर नेत्रों वाली! इस विवाह में बड़े लाभ हैं। बड़े भाग्य से ब्रह्मा ने बात बना दी है कि ये दोनों भाई हमारे नेत्रों के अतिथि हुआ करेंगे।

दो० बारहिं बार सनेह बस जनक बोलाउब सीय।
लेन आइहहिं बंधु दोउ कोटि काम कमनीय॥३१०॥

जनकजी बार-बार स्नेह के वश होकर सीता को बुलायेंगे। फिर करोड़ों कामदेव के समान सुन्दर दोनों भाई सीता को विदा कराने आया करेंगे।

बिबिध भाँति होइहि पहुनाई ❀ प्रिय न काहि अस सासुर माई
तब तब राम लषनहिं निहारी ❀ होइहहिं सब पुर लोग सुखारी

तब अनेकों प्रकार से उनकी पहुनाई होगी। हे सखी! ऐसी ससुराल किसे प्यारी न होगी? तब-तब राम लक्ष्मण को देखकर हम सब नगर-निवासी सुखी होंगे।

सखि जस राम लषन कर जोटा ❀ तैसेइ भूप संग दुइ ढोटा
स्याम गौर सब अंग सुहाये ❀ ते सब कहहिं देखि जे आये

हे सखि! राम-लक्ष्मण का जैसा जोड़ा है, वैसे ही दो कुमार राजा के

साथ और भी हैं। एक श्याम और दूसरा गौर वर्ण का है। उनके भी सब अंग बहुत सुन्दर हैं। यह वे सब लोग कहते हैं, जो उन्हें देख आये हैं।

कहा एक मैं आजु निहारे ❀ जनु बिरंचि निज हाथ सँवारे
भरतु राम ही की अनुहारी ❀ सहसा लखि न सकहिं नर नारी

एक ने कहा—मैंने आज ही उन्हें देखा है, इतने सुन्दर हैं मानो ब्रह्मा ने उन्हें अपने ही हाथों से सँवारा है। भरत तो राम ही की शकल-सूरत के हैं। स्त्री-पुरुष उन्हें यकायक पहचान नहीं सकते।

लषनु सत्रुसूदनु एक रूपा ❀ नख सिख तें सब अङ्ग अनूपा
मन भावहिं मुख बरनि न जाहीं ❀ उपमा कहुँ त्रिभुवन कोउ नाहीं

लक्ष्मण और शत्रुघ्न दोनों एक रूप हैं। दोनों के सब अंग नख से लेकर शिखा तक अनुपम हैं। मन को प्यारे लगते हैं, पर मुख से वर्णन नहीं हो सकता। उनकी उपमा के लिये तीनों लोकों में कोई नहीं।

छंद—उपमा न कोउ कह दासतुलसी कतहुँ कवि कोबिद कहैं।
बल बिनय बिद्या सील सोभा सिंधु इन्ह से एइ अहैं॥
पुर नारि सकल पसारि अंचल बिधिहिं बचन सुनावहीं।
ब्याहिअहुँ चारिउ भाइ एहि पुर हम सुमङ्गल गावहीं॥

तुलसीदास कहते हैं कि कवि और कोविद कहते हैं कि इनकी उपमा का (पुरुष) कहीं कोई नहीं है। बल, विनय, विद्या, शील और शोभा के समुद्र इनके समान ये ही हैं। जनकपुर की सब स्त्रियाँ आँचल फैलाकर ब्रह्मा को यह वचन सुनाती हैं कि इन चारों भाइयों का विवाह इसी नगर में करना, जिससे हम सुन्दर मंगल गायें।

सो०—कहहिं परसपर नारि बारि बिलोचन पुलक तन।
सखि सब करब पुरारि पुन्य पयोनिधि भूप दोउ।३११।

स्त्रियाँ आँखों में आँसू (प्रेमाश्रु) भरकर पुलकित शरीर से आपस में कहती हैं कि हे सखी! दोनों राजा पुण्य के समुद्र हैं, शिवजी सब मनोरथ पूर्ण करेंगे।

एहि बिधि सकल मनोरथ करहीं ❀ आनँद उमगि उमगि उर भरहीं
जे नृप सीय स्वयंबर आए ❀ देखि बंधु सब तिन्ह सुख पाये

इस प्रकार सब मनोरथ कर रही हैं और हृदय को उत्साहपूर्वक आनन्द से भर रही हैं। सीता के स्वयंवर में जो राजा आये थे, उन्होंने भी उन चारों भाइयों को देखकर सुख पाया।

कहत राम जसु बिसद बिसाला ❀ निज निज भवन गए महिपाला
गए बीति कछु दिन एहि भाँती ❀ प्रमुदित पुरजन सकल बराती

राजा लोग राम का सुन्दर और महान् यश कहते हुये अपने-अपने घर गये। इस प्रकार कुछ दिन बीत गये। जनकपुर के लोग और बराती सभी बड़े आनन्दित हैं।

मंगल मूल लगन दिनु आवा ❀ हिम ऋतु अगहनु मासु सुहावा
ग्रह तिथि नखतु जोगु बर बारू[1] ❀ लगन सोधि बिधि कीन्ह बिचारू

अब कल्याण का मूल विवाह का दिन आ गया। हेमन्त ऋतु में सुहावना अगहन का महीना था। ग्रह, तिथि, नक्षत्र, योग और वार श्रेष्ठ थे। ब्रह्मा ने लग्न शोधकर इस पर विचार किया।

पठै दीन्हि नारद सन सोई ❀ गनी जनक के गनकन्ह[2] जोई
सुनी सकल लोगन यह बाता ❀ कहहिं जोतिषी आहिं[3] बिधाता

और उसे नारदजी के हाथ भेज दिया। जनकजी के ज्योतिषियों ने भी वही गणना कर रक्खी थी। सब लोगों ने यह बात सुनी, तब वे कहने लगे—यहाँ के ज्योतिषी भी ब्रह्मा ही हैं।

दो० धेनुधूरि बेला बिमल सकल सुमङ्गल मूल।
बिप्रन्ह कहेउ बिदेह सन जानि सगुन अनुकूल।३१२।

सभी सुन्दर मंगलों की मूल गोधूलि की पवित्र बेला आ गई, और शकुन अनुकूल होने लगे। तब ब्राह्मणों ने जनकजी को बताया।

उपरोहितहि कहेउ नरनाहा ❀ अब बिलंब कर कारनु काहा
सतानंद तब सचिव बोलाये ❀ मंगल सकल साजि सब ल्याये

तब राजा जनक ने पुरोहित शतानंदजी से कहा—अब देरी का क्या कारण है? तब शतानन्दजी ने मन्त्री को बुलाया। मन्त्री सब मंगल का सामान सजाकर ले आये।

१. वार, दिन। २. ज्योतिषियों ने। ३. हैं।

सङ्ग निसान पनव बहु बाजे ❀ मङ्गल कलस सगुन सुभ साजे
सुभग सुआसिनि[1] गावहिं गीता ❀ करहिं बेद धुनि बिप्र पुनीता

शंख, नगाड़े, भेरी और बहुत-से बाजे बजने लगे तथा मंगल घट आदि शुभ शकुन की वस्तुयें सजाई गईं। सुन्दर सुहागिन स्त्रियाँ गीत गा रही हैं और पवित्र ब्राह्मण वेद की ध्वनि कर रहे हैं।

लेन चले सादर एहि भाँती ❀ गए जहाँ जनवास बराती
कोसलपति कर देखि समाजू ❀ अति लघु लाग तिन्हहिं सुरराजू

सब लोग इस प्रकार आदरपूर्वक बरात को लेने चले और वहाँ गये, जहाँ बरातियों का जनवासा था। वहाँ अयोध्या-नरेश का ठाट-बाट देखकर उनको इन्द्र बहुत छोटा लगने लगा।

भयेउ समउ अब धारिअ पाऊ ❀ यह सुनि परा निसानहिं घाऊ
गुरहि पूछि करि कुल बिधि राजा ❀ चले सङ्ग मुनि साधु समाजा

उन्होंने निवेदन किया—समय हो गया, अब पधारिये। यह सुनते ही नगाड़ों पर चोट पड़ी। गुरु वशिष्ठ से पूछकर और कुल के सब लोकाचार करके राजा दशरथ मुनियों और साधुओं के समाज को साथ लेकर चले।

दो॰ भाग्य बिभव अवधेस कर देखि देव ब्रह्मादि।
लगे सराहन सहस मुख जानि जनम निज बादि[2] ॥

अवध-नरेश दशरथ का भाग्य और ऐश्वर्य देखकर और अपना जन्म व्यर्थ जानकर, ब्रह्मा आदि देवता हज़ारों मुखों से उसकी सराहना करने लगे।

सुरन्ह सुमङ्गल अवसरु जाना ❀ बरषहिं सुमन बजाइ निसाना
सिव ब्रह्मादिक बिबुध बरूथा ❀ चढ़े बिमानन्हि नाना जूथा

देवगण सुन्दर मंगल का अवसर जानकर नगाड़े बजाकर फूल बरसा रहे हैं। शिव, ब्रह्मा आदि देवगण अनेक टोलियों में विमानों पर चढ़े हुये,

प्रेम पुलक तन हृदय उछाहू ❀ चले बिलोकन राम बिआहू
देखि जनकपुरु सुर अनुरागे ❀ निज निज लोक सबहिं लघु लागे

प्रेम से पुलकित शरीर हो और हृदय में बड़ा उत्साह भरकर राम का विवाह

---

१. सौभाग्यवती। २. व्यर्थ।

देखने चले। जनकपुर को देखकर देवता इतने अनुरक्त हो गये कि उन्हें अपने-अपने लोक बहुत तुच्छ लगने लगे।

चितवहिं चकित बिचित्र बिताना ❀ रचना सकल अलौकिक नाना
नगर नारि नर रूप निधाना ❀ सुघर सुधरम सुसील सुजाना

अद्भुत मंडप को तथा नाना प्रकार की अलौकिक रचनाओं को वे चकित होकर देख रहे हैं। नगर के स्त्री-पुरुष रूप के भंडार, सुघर और धर्मात्मा, सुशील और विचारवान हैं।

तिन्हहिं देखि सब सुर सुरनारी ❀ भए नखत जनु बिधु उँजियारी
बिधिहि भयेउ आचरजु बिसेषी ❀ निज करनी कछु कतहुँ न देखी

उन्हें देखकर सब देवता और उनकी स्त्रियाँ चन्द्रमा के प्रकाश में नक्षत्र की तरह फीके हो गये। ब्रह्मा को विशेष आश्चर्य हुआ क्योंकि वहाँ उन्होंने अपनी कोई रचना तो कहीं देखी ही नहीं।

दो०
सिव समुझाए देव सब जनि आचरज भुलाहु।
हृदय बिचारहु धीर धरि सिय रघुबीर बिआहु॥३१४॥

तब शिवजी ने सब देवताओं को समझाया कि तुम लोग आश्चर्य में मत भूलो और धीरज धरकर हृदय में विचार करो कि यह सीताराम का विवाह है।

जिन्ह कर नामु लेत जग माहीं ❀ सकल अमंगल मूल नसाहीं
करतल होहिं पदारथ चारी ❀ तेइ सिय रामु कहेउ कामारी

जिनका नाम लेते ही संसार में सब अमङ्गलों का मूल नष्ट हो जाता है और चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) मुट्ठी में आ जाते हैं, वही सीता और राम हैं। काम के शत्रु शिवजी ने ऐसा कहा।

एहि बिधि संभु सुरन्ह समुझावा ❀ पुनि आगें बर बसह[1] चलावा
देवन्ह देखे दसरथु जाता ❀ महामोद मन पुलकित गाता

इस प्रकार शिवजी ने देवताओं को समझाया और फिर अपने श्रेष्ठ बैल नंदीश्वर को आगे हाँक दिया। देवताओं ने देखा कि मन में बड़े ही प्रसन्न और पुलकित शरीर से दशरथ जी जा रहे हैं।

---

१. बैल।

साधु समाजु संग महिदेवा ❀ जनु तनु धरे करहिं सुख सेवा
सोहत साथ सुभग सुत चारी ❀ जनु अपबरग[1] सकल तनु धारी

उनके साथ में साधुओं और ब्राह्मणों की मंडली ऐसी शोभा दे रही है, मानो सुख शरीर धारण करके उनकी सेवा कर रहे हैं। चारों सुन्दर पुत्र साथ में ऐसे शोभित हैं, मानो सम्पूर्ण मोक्ष (सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सायुज्य) शरीर धारण किये हुये हो।

मरकत कनक बरन बर जोरी ❀ देखि सुरन्ह भै प्रीति न थोरी
पुनि रामहिं बिलोकि हिय हरषे ❀ नृपहि सराहि सुमन तिन्ह बरषे

नीलमणि और सुवर्ण के रङ्ग की सुन्दर जोड़ियों को देखकर देवताओं को कम प्रीति नहीं हुई (अर्थात् बहुत ही प्रीति हुई)। फिर राम को देखकर वे हृदय में हर्षित हुये। उन्होंने राजा की सराहना करके फूल बरसाये।

दो०- राम रूपु नख सिख सुभग बारहिं बार निहारि।
पुलक गात लोचन सजल उमा समेत पुरारि।३१५।

नख से शिखा तक राम का सुन्दर रूप बार-बार देखकर पार्वती-सहित शिवजी का शरीर पुलकित हो गया और नेत्र जल से भर गये।

केकि कंठ दुति स्यामल अंगा ❀ तड़ित बिनिंदक बसन सुरंगा
ब्याह बिभूषन बिबिध बनाए ❀ मंगलमय सब भाँति सुहाए

राम का मोर के कंठ की कान्ति वाला साँवला शरीर है। बिजली का अत्यंत उपहास करने वाला सुन्दर (पीले) रंग का उनका वस्त्र है। विवाह के तरह-तरह के मंगलमय और सब प्रकार से सुन्दर गहने शरीर पर सजाये हुये हैं।

सरद बिमल बिधु बदन सुहावन ❀ नयन नवल राजीव लजावन
सकल अलौकिक सुन्दरताई ❀ कहि न जाइ मन ही मन भाई

राम का मुख शरद् पूर्णिमा के निर्मल चन्द्रमा की तरह सुहावना है। नेत्र नवीन कमल को लजाने वाले हैं। सारी सुन्दरता अलौकिक है। वह कही नहीं जा सकती। मन ही मन प्रिय लगती है।

बंधु मनोहर सोहहिं संगा ❀ जात नचावत चपल तुरंगा
राजकुँअर बर बाजि देखावहिं ❀ बंस प्रसंसक[2] बिरिद सुनावहिं

---

१. स्वर्ग। २. बंदीजन, भाट।

मनोहर भाई साथ में सुशोभित हैं, जो चंचल घोड़ों को नचाते हुये चले जा रहे हैं। राजकुमार श्रेष्ठ घोड़ों को दिखला रहे हैं। और बंदीजन विरुदावली सुना रहे हैं।

जेहि तुरंग पर रामु बिराजे ❀ गति बिलोकि खग नायकु लाजे
कहि न जाइ सब भाँति सुहावा ❀ बाजि बेषु जनु काम बनावा

जिस घोड़े पर राम विराजमान हैं, उसकी चाल देखकर गरुड़ भी लजा जाते हैं। वह सब प्रकार से सुहावना है, उसका वर्णन नहीं हो सकता। मानो कामदेव ही ने घोड़े का वेष धारण कर लिया हो।

छंद—जनु बाजि बेषु बनाइ मनसिजु राम हित अति सोहई।
आपने बय बल रूप गुन गति सकल भुवन बिमोहई॥
जगमगत जीन जराव जोति सुमोति मनि मानिक लगे।
किंकिनि ललाम लगामु ललित बिलोकि सुर नर मुनि ठगे॥

मानो राम के लिये कामदेव घोड़े का वेष बनाकर बहुत शोभित हो रहा है। वह अपनी आयु, बल, रूप, गुण और गति से सब लोकों को मोहित कर रहा है। उस पर जड़ाऊ ज़ीन जगमगा रहा है, जिसमें सुन्दर चमक वाले मोती, मणि और माणिक्य लगे हैं। उसकी सुन्दर घंटियों वाली ललित लगाम देखकर देवता, मनुष्य और मुनि सभी ठगे जाते हैं।

दो०—प्रभु मनसहिं लयलीन मनु चलत बाजि छबि पाव।
भूषित उड़गन तड़ित घनु जनु बर बरहि[1] नचाव ३१६

प्रभु के मन से मन मिलाये चलता हुआ घोड़ा बड़ी शोभा पा रहा है। मानो तारागण तथा बिजली से अलंकृत मेघ सुन्दर मोर को नचा रहा हो।

जेहि बर बाजि रामु असवारा ❀ तेहि सारदउ न बरनै पारा
संकरु राम रूप अनुरागे ❀ नयन पंचदस अति प्रिय लागे

जिस श्रेष्ठ घोड़े पर राम सवार हैं, उसका वर्णन सरस्वती भी नहीं कर सकतीं। शिवजी राम के रूप में ऐसे अनुरक्त हुये कि उन्हें अपने पन्द्रह नेत्र बहुत ही प्यारे लगने लगे।

---

१. मोर।

हरि हित सहित रामु जब जोहे ❀ रमा समेत रमापति मोहे
निरखि रामछबि बिधि हरषाने ❀ आठै नयन जानि पछिताने

विष्णु ने जब प्रेम-सहित राम को देखा, तब वे लक्ष्मीपति लक्ष्मी-सहित मोहित हो गये। राम की शोभा देखकर ब्रह्मा बड़े प्रसन्न हुये, पर अपने आठ ही नेत्र जानकर पछताने लगे।

सुर सेनप उर बहुत उछाहू ❀ बिधि तें डेवढ़ सु लोचन लाहू
रामहिं चितव सुरेस सुजाना ❀ गौतम स्रापु परम हित माना

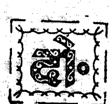
देवताओं के सेनापति स्वामिकार्तिक के हृदय में बड़ा उत्साह है, क्योंकि उन्हें ब्रह्मा से ड्योढ़े अर्थात् बारह नेत्रों का सुन्दर लाभ मिल रहा है। सुजान इन्द्र राम को देख रहा है और गौतम मुनि के शाप को अपने लिये हितकर मान रहा है।

देव सकल सुरपतिहिं सिहाहीं ❀ आजु पुरंदर[1] सम कोउ नाहीं
मुदित देवगन रामहिं देखी ❀ नृप समाज दुहुँ हरष बिसेषी

सब देवता इन्द्र से ईर्ष्या कर रहे हैं (और कहते हैं कि) आज इन्द्र के समान भाग्यवान् दूसरा कोई नहीं है। देवगण राम को देखकर प्रसन्न हैं। दोनों राजाओं के समाज में विशेष हर्ष छा रहा है।

छंद—अति हरषु राज समाजु दुहुँ दिसि दुन्दुभी बाजहिं घनी।
बरषहिं सुमन सुर हरषि कहि जय जयति जय रघुकुलमनी
एहि भाँति जानि बरात आवत बाजने बहु बाजहीं।
रानी सुआसिनि बोलि परिछन हेतु मंगल साजहीं॥

दोनों ओर से राज-समाज में अत्यन्त हर्ष है और बड़े ज़ोर से नगाड़े बज रहे हैं। देवता हर्षित होकर और रघुकुल के शिरोमणि राम की 'जय हो, जय हो, जय हो', कहकर फूल बरसा रहे हैं। इस प्रकार बरात को आती हुई जानकर बहुत प्रकार के बाजे बजने लगे। रानी सुहागिन स्त्रियों को बुलाकर परछन के लिये मंगल द्रव्य सजाने लगीं।



सजि आरती अनेक बिधि मंगल सकल सँवारि।
चलीं मुदित परिछन करन गजगामिनि बर नारि॥

१. इन्द्र।

अनेक प्रकार से आरती सजाकर और सब मंगल द्रव्यों को ठीक-ठीक रखकर हाथी की-सी चाल चलने वाली उत्तम स्त्रियाँ परछने के लिये प्रसन्न होकर चलीं ।

बिधुबदनी सब सब मृगलोचनि ❁ सब निज तन छबि रति मदु मोचनि
पहिरे बरन बरन बर चीरा ❁ सकल बिभूषन सजें सरीरा

सब स्त्रियाँ चन्द्रमा के समान मुँह वाली, सभी मृग की-सी आँखों वाली और सभी अपने शरीर की शोभा से रति के अभिमान को मिटाने वाली हैं। वे अनेक रंगों की सुन्दर साड़ियाँ पहने हैं और शरीर पर सब गहने सजाये हुये हैं ।

सकल सुमंगल अंग बनाए ❁ करहिं गान कलकंठ लजाए
कंकन किंकिनि नूपुर बाजहिं ❁ चालि बिलोकि काम गज लाजहिं

सब अंगों को सुन्दर मंगलमय पदार्थों से सजाये हुये वे कोयल को लजाती हुई गान कर रही हैं। कंगन, करधनी और पाजेब बज रहे हैं। स्त्रियों की चाल देखकर कामदेव का हाथी भी लजा जाता है ।

बाजहिं बाजन बिबिध प्रकारा ❁ नभ अरु नगर सुमंगल चारा
सची[1] सारदा रमा[2] भवानी ❁ जे सुरतिय सुचि सहज सयानी

अनेक प्रकार के बाजे बज रहे हैं। आकाश और नगर दोनों स्थानों में सुन्दर मंगलाचार हो रहे हैं। इंद्राणी, सरस्वती, लक्ष्मी, पार्वती और जो स्वभाव ही से पवित्र और सयानी देवांगनायें थीं,

कपट नारि बर बेष बनाई ❁ मिलीं सकल रनिवासहिं जाई
करहिं गान कल मंगल बानी ❁ हरष बिबस सब काहुँ न जानी

वे सब स्त्री का कपट-वेष बनाकर रनवास में जा मिलीं और मनोहर वाणी से मंगल गीत गाने लगीं। सब हर्ष में बेसुध हैं, किसी ने उन्हें पहचाना नहीं।

छंद—को जान केहि आनंद बस सब ब्रह्मु बर परिछन चली ।
कल गान मधुर निसान बरषहिं सुमन सुर सोभा भली॥
आनंद कंदु बिलोकि दूलह सकल हिय हरषित भई ।
अंभोज[3] अंबक अंबु उमगि सुअंग पुलकावलि छई॥

---

१. इन्द्राणी । २. लक्ष्मी । ३. कमल ।

कौन किसे जाने-पहचाने ? सब आनन्द के वश में ब्रह्मरूपी दूल्हे को परछने चलीं। मनोहर गान हो रहा है, मधुर-मधुर नगाड़े बज रहे हैं, देवता फूल बरसा रहे हैं; बड़ी अच्छी शोभा है। आनन्द के मूल दूलह को देखकर सब स्त्रियाँ हृदय में हर्षित हुईं। कमल ऐसे नेत्रों में आँसू उमड़ आये और सबके सुन्दर अंगों में रोमाञ्च हो आया।

दो० **जो सुखु भा[1] सिय मातु मन देखि राम बर बेषु।**
सो न सकहिं कहि कलप सत सहस सारदा सेषु ।३१८।

राम का सुन्दर रूप देखकर सीता की माता के मन में जो सुख हुआ, उसे सौ हज़ार कल्पों में भी हज़ारों सरस्वती और शेष नहीं कह सकते।

नयन नीरु हठि मंगल जानी ❀ परिछन करहिं मुदित मन रानी
बेद बिहित अरु कुल आचारू ❀ कीन्ह भली बिधि सब ब्यवहारू

मंगल अवसर जानकर नेत्रों के जल को रोके हुये रानी प्रसन्न मन से परछन कर रही हैं। वेदों में वर्णित तथा कुल में होने वाले सभी आचार और व्यवहार रानी ने भली भाँति किये।

पंच सबद धुनि मंगल गाना ❀ पट पाँवड़े परहिं बिधि नाना
करि आरती अरघु तिन्ह दीन्हा ❀ राम गवनु मंडप तब कीन्हा

पाँच प्रकार के बाजों के शब्द (तंत्री, ताल, झाँझ, नगाड़ा और तुरही) और पाँच प्रकार की ध्वनियाँ (वेदध्वनि, वन्दिध्वनि, जयध्वनि, शंखध्वनि और हुलूध्वनि) और मंगल-गान हो रहे हैं। अनेक तरह के वस्त्रों के पाँवड़े पड़ रहे हैं। रानी ने आरती करके अर्घ्य दिया, तब राम ने मंडप में गमन किया।

दसरथु सहित समाज बिराजे ❀ बिभव बिलोकि लोकपति लाजे
समयँ समयँ सुर बरषहिं फूला ❀ सांति पढ़हिं महिसुर अनुकूला

महाराज दशरथ अपनी मंडली-सहित विराजमान हुये। उनके ऐश्वर्य को देखकर लोकों के स्वामी भी लजा गये। समय-समय पर देवता फूल बरसा रहे हैं, और ब्राह्मण लोग शान्ति पाठ कर रहे हैं।

नभ अरु नगर कोलाहल होई ❀ आपनि पर कछु सुनइ न कोई
एहि बिधि रामु मंडपहिं आए ❀ अरघु देइ आसन बैठाए

---

१. हुआ।

आकाश और नगर में कोलाहल हो रहा है। कोई अपनी परायी कुछ नहीं सुनता। इस प्रकार राम मंडप में आये और अर्घ्य देकर आसन पर बैठाये गये।

छंद–बैठारि आसन आरती करि निरखि बरु सुख पावहीं।
मनि बसन भूषन भूरि बारहिं नारि मंगल गावहीं॥
ब्रह्मादि सुर बर बिप्र बेष बनाइ कौतुक देखहीं।
अवलोकि रघु कुल कमल रबि छबि सुफल जीवन लेखहीं॥

राम को आसन पर बैठाकर, आरती करके और दूलह को देखकर स्त्रियाँ सुख पा रही हैं। वे ढेर के ढेर मणि, वस्त्र और गहने निछावर करके मङ्गल गा रही हैं। ब्रह्मा आदि श्रेष्ठ देवता ब्राह्मण का वेष बनाकर कौतुक देख रहे हैं। वे रघुकुलरूपी कमल के सूर्य की छवि देखकर अपना जीवन सफल समझ रहे हैं।

दो०–नाऊ बारी भाट नट राम निछावरि पाइ।
मुदित असीसहिं नाइ सिर हरषु न हृदयँ समाइ ३१९

नाई, बारी, भाट और नट राम की निछावर पाकर, प्रसन्न होकर, सिर नवाकर आशीर्वाद देते हैं, हर्ष उनके हृदय में समाता नहीं है।

मिले जनकु दसरथु अति प्रीती ❀ करि बैदिक लौकिक सब रीती
मिलत महा दोउ राज बिराजे ❀ उपमा खोजि खोजि कबि लाजे

वेदों में वर्णित और लोक में प्रचलित दोनों रीतियाँ पूरी करके जनकजी और दशरथजी बड़े प्रेम से मिले। दोनों महाराज मिलते हुये ऐसे शोभित हुये कि कवि उनके लिये उपमा खोज-खोजकर लजा गये।

लही न कतहुँ हारि हियँ मानी ❀ इन्ह सम एइ उपमा उर आनी
सामध देखि देव अनुरागे ❀ सुमन बरषि जसु गावन लागे

जब कहीं उपमा न मिली, तब हृदय में हार मानकर उन्होंने यह उपमा निश्चित की कि इनके समान ये ही हैं। समधियों का मिलाप या परस्पर सम्बन्ध देखकर देवता अनुरक्त हो गये। वे फूल बरसाकर उनका यश गाने लगे।

जगु बिरंचि उपजावा जब तें ❀ देखे सुने ब्याह बहु तब तें
सकल भाँति सम साजु समाजू ❀ सम समधी देखे हम आजू

वे कहने लगे—जब से ब्रह्मा ने जगत् को उत्पन्न किया, तब से हमने

बहुत-से विवाह देखे और सुने; पर सब प्रकार से समान साज-समाज और बराबरी में पूरे समधी हमने आज ही देखे।

देव गिरा सुनि सुंदरि साँची ❀ प्रीति अलौकिक दुहुँ दिसि माँची
देत पाँवड़े अरघु सुहाए ❀ सादर जनकु मंडपहिं ल्याए

देवताओं की सुन्दर और सच्ची वाणी सुनकर दोनों ओर अलौकिक प्रीति छा गई। सुन्दर पाँवड़े और अर्घ्य देते हुये जनकजी दशरथजी को आदर-सहित मंडप में ले आये।

छंद—मंडपु बिलोकि बिचित्र रचनाँ रुचिरताँ मुनि मन हरे।
निज पानि जनक सुजान सब कहुँ आनि सिंघासन धरे॥
कुल इष्ट सरिस बसिष्ठ पूजे बिनय करि आसिष लही।
कौसिकहिं पूजत परम प्रीति कि रीति तौ न परै कही॥

मंडप की विचित्र रचना देखकर उसकी सुन्दरता मुनि के मन को भी हरण कर लेती है। बुद्धिमान जनक ने अपने हाथों से ला-लाकर सबके लिये सिंहासन रक्खा। उन्होंने अपने कुल-देवता के समान वशिष्ठजी की पूजा की और विनय करके आशीर्वाद प्राप्त किया। विश्वामित्रजी की पूजा करते समय तो परम प्रीति की रीति का वर्णन ही नहीं किया जा सकता।

दो०—बामदेव आदिक रिषय पूजे मुदित महीस।
दिए दिब्य आसन सबहि सब सन लही असीस ३२०

राजा ने प्रसन्न मन से वामदेव आदि ऋषियों की पूजा की। सबको उन्होंने दिव्य आसन दिये और सबसे आशीर्वाद प्राप्त किया।

बहुरि कीन्हि कोसलपति पूजा ❀ जानि ईस सम भाव न दूजा
कीन्हि जोरि कर बिनय बड़ाई ❀ कहि निज भाग्य बिभव बहुताई

फिर उन्होंने कोसलाधीश राजा दशरथ की पूजा उन्हें ईश (शंकर) के समान जानकर ही की; और कोई दूसरा भाव नहीं था। हाथ जोड़कर उन्होंने विनती की और उनके सम्बन्ध से अपने भाग्य और ऐश्वर्य की वृद्धि की सराहना की।

पूजे भूपति सकल बराती ❀ समधी सम सादर सब भाँती
आसन उचित दिए सब काहू ❀ कहौं काह मुख एक उछाहू

राजा जनक ने सब बरातियों का पूजन सबको समधी (दशरथ) के समान मानकर सब प्रकार से आदरपूर्वक किया। सबको उन्होंने उचित आसन दिये। मैं एक मुख से उस उत्साह का वर्णन क्या करूँ ?

सकल बरात जनक सनमानी ❀ दान मान बिनती बर बानी
बिधि हरि हर दिसिपति दिनराऊ ❀ जे जानहिं रघुबीर प्रभाऊ

जनकजी ने दान, मान-सम्मान, विनय और मधुर वाणी से सारी बरात का सम्मान किया। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, दिग्पाल और सूर्य जो रामचन्द्रजी का प्रभाव जानते हैं,

कपट बिप्र बर बेषु बनाएँ ❀ कौतुक देखहिं अति सचु पाएँ
पूजे जनक देव सम जानें ❀ दिए सुआसन बिनु पहिचानें

वे श्रेष्ठ ब्राह्मण का कपट-वेष बनाये हुये बहुत ही सुख पाते हुये सब कौतुक देख रहे थे। जनकजी ने उनको देव तुल्य जाना, उनका सत्कार किया और बिना पहचाने ही उन्हें सुन्दर आसन दिये।

छन्द—पहिचान को केहि जान सबहि अपान सुधि भोरी भई।
आनंद कंदु बिलोकि दूलहु उभय दिसि आनँदमई॥
सुर लखे राम सुजान पूजे मानसिक आसन दए।
अवलोकि सीलु सुभाउ प्रभु को बिबुध मन प्रमुदित भए॥

कौन किसे पहचाने ? सबको अपनी ही सुध भूली हुई है। आनन्द के मूल दूलह को देखकर दोनों ओर आनन्द छाया हुआ है। बुद्धिमान् राम ने देवताओं को पहचान लिया और उनका मानसिक सत्कार करके उन्हें मानसिक आसन दिये। प्रभु का शील-स्वभाव देखकर देवगण मन में बहुत आनन्दित हुये।

दो०— रामचंद्र मुख चंद्र छबि लोचन चारु चकोर।
करत पान सादर सकल प्रेमु प्रमोदु न थोर॥३२१॥

रामचन्द्र के मुखरूपी चन्द्रमा की छवि को सभी सुन्दर चकोररूपी लोचन आदरपूर्वक पान कर रहे हैं। प्रेम और आनन्द अधिक है।

समउ बिलोकि बसिष्ठ बुलाए ❀ सादर सतानंदु सुनि आए
बेगि कुअँरि अब आनहु जाई ❀ चले मुदित मुनि आयसु पाई

समय देखकर वशिष्ठजी ने शतानन्दजी को आदरपूर्वक बुलाया। बुलाहट सुनकर आदर-सहित शतानन्दजी आये। वशिष्ठजी ने कहा—राजकुमारी को शीघ्र ले आइये। मुनि की आज्ञा पाकर शतानन्दजी प्रसन्न होकर चले।

रानी सुनि उपरोहित बानी ❀ प्रमुदित सखिन्ह समेत सयानी
बिप्रबधू कुलबृद्ध बोलाई ❀ करि कुलरीति सुमंगल गाई

बुद्धिमती रानी पुरोहित की वाणी सुनकर सखियों-समेत प्रमुदित हुईं। उन्होंने ब्राह्मणों की स्त्रियों और कुल की वृद्धा स्त्रियों को बुलाया। उन्होंने कुल के रीति-रस्म पूरे करके सुन्दर मङ्गल-गीत गाये।

नारि बेष जे सुर बर बामा ❀ सकल सुभायँ सुन्दरी स्यामा
तिन्हहिं देखि सुख पावहिं नारीं ❀ बिनु पहिचानि प्रान तें प्यारीं

सुराङ्गनायें, जो मनुष्य की स्त्रियों के वेष में हैं, सभी स्वभाव ही से सुन्दरी और श्यामा (षोड़श वर्षीया) हैं। उनको देखकर रनिवास की स्त्रियाँ बहुत ही सुख पाती हैं और बिना पहचान ही के वे प्राणों से भी प्यारी हो रही हैं।

बार बार सनमानहिं रानी ❀ उमा रमा सारद सम जानी
सीय सँवारि समाज बनाई ❀ मुदित मंडपहिं चलीं लिवाई

रानी बार-बार उनका सम्मान उन्हें पार्वती, लक्ष्मी और सरस्वती के समान जानकर करती हैं। रनिवास की स्त्रियाँ और सखियाँ सीता का शृङ्गार करके, मंडली बनाकर, आनन्दित होकर, उन्हें मंडप की ओर लिवा ले चलीं।

छंद—चलि ल्याइ सीतहि सखीं सादर सजि सुमंगल भामिनीं।
नवसप्त साजें सुन्दरी सब मत्त कुंजर गामिनीं॥
कल गान सुनि मुनि ध्यान त्यागहिं काम कोकिल लाजहीं
मंजीर[1] नूपुर कलित कंकन ताल गति बर बाजहीं॥

सुन्दर मङ्गल का साज सजकर स्त्रियाँ आदर-सहित सीता को लिवा चलीं। सभी सोलहों शृङ्गार से सुसज्जित मतवाले हाथी की सी चाल वाली हैं। उनके मनोहर गान को सुनकर मुनि लोग ध्यान छोड़ देते हैं और कामदेव के कोकिल

---

१. पाजेब।

भी लजा जाते हैं। पाजेब, पैंजनी और सुन्दर कंकण ताल की गति के अनुसार बड़े सुन्दर बज रहे हैं।

दो०- सोहति बनिता बृन्द महुँ सहज सुहावनि सीय।
छबि ललना गन मध्य जनु सुखमा तिय कमनीय॥

स्वभाव ही से सुन्दरी सीता स्त्रियों के समूह में इस प्रकार शोभित हो रही हैं, जैसे छविरूपी ललनाओं के समूह के बीच शोभारूपी सुन्दर स्त्री सुशोभित हो।

सिय सुंदरता बरनि न जाई ❀ लघु मति बहुत मनोहरताई
आवत दीख बरातिन्ह सीता ❀ रूप रासि सब भाँति पुनीता

सीता की सुन्दरता का वर्णन नहीं हो सकता। मेरी बुद्धि छोटी है और सुन्दरता बहुत बड़ी। रूप की राशि और सब प्रकार से पवित्र सीता को जब बरातियों ने आते देखा,

सबहिं मनहिं मन किए प्रनामा ❀ देखि राम भए पूरन कामा
हरषे दसरथ सुतन्ह समेताँ ❀ कहि न जाइ उर आनँद जेताँ

तब सबने मन ही मन उन्हें प्रणाम किया और राम को देखकर तो सभी कृतार्थ हो गये। राजा दशरथ पुत्रों-सहित हर्षित हुये। उनके हृदय में जितना आनन्द था, वह कहा नहीं जा सकता।

सुर प्रनामु करि बरिसहिं फूला ❀ मुनि असीस धुनि मंगल मूला
गान निसान कोलाहलु भारी ❀ प्रेम प्रमोद मगन नर नारी

देवता प्रणाम करके फूल बरसा रहे हैं। कल्याण के मूल मुनियों के आशीर्वादों की ध्वनियों तथा गानों और नगाड़ों के शब्द से बड़ा कोलाहल हो रहा है। पुरुष-स्त्री सभी प्रेम और आनन्द में मग्न हैं।

एहि बिधि सीय मंडपहिं आई ❀ प्रमुदित सांति पढ़हिं मुनिराई
तेहि अवसर कर बिधि ब्यवहारू ❀ दुहुँ कुलगुर सब कीन्ह अचारू

इस प्रकार सीता मण्डप में आई। मुनिराज बहुत ही आनन्दित होकर शान्ति-पाठ पढ़ रहे हैं। उस अवसर की सब रीति, व्यवहार और कुलाचार दोनों कुल-गुरुओं ने किया।

छंद–आचार करि गुरु गौरि गनपति मुदित बिप्र पुजावहीं।
सुर प्रगटि पूजा लेहिं देहिं असीस अति सुखु पावहीं॥

मधुपर्क मङ्गल द्रव्य जो जेहि समय मुनि मन महुँ चहैं।
भरे कनक कोपर कलस सो तब लिएहिं परिचारक रहैं॥

कुलाचार करके गुरुजी प्रसन्न होकर, गणेशजी, गौरी और ब्राह्मणों की पूजा करा रहे हैं। देवता प्रकट होकर पूजा ग्रहण करते हैं, आशीर्वाद देते हैं और अत्यन्त सुख पा रहे हैं। मुनि मन में मधुपर्क आदि जो-जो मंगल-द्रव्य चाहते हैं, उनको सेवकगण उसी समय सोने की परातों और कलशों में भरकर लिये तैयार रहते हैं।

कुल रीति प्रीति समेत रबि कहि देत सबु सादर किए।
एहि भाँति देव पुजाइ सीतहि सुभग सिंघासनु दिए॥
सिय राम अवलोकनि परसपर प्रेमु काहु न लखि परै।
मन बुद्धि बर बानी अगोचर प्रगट कबि कैसे करै॥

सूर्यदेव प्रेम-सहित अपने कुल की रीतियाँ बता देते हैं; मुनि ने उन सब को आदर और प्रीति-सहित करा दिया। इस प्रकार देवताओं की पूजा करा के उन्होंने सीताजी को सुन्दर सिंहासन दिया। सीता राम का आपस में एक दूसरे को देखना तथा उनका परस्पर का प्रेम किसी को देख नहीं पड़ रहा है। भला, जो बात मन, बुद्धि और वाणी से भी परे है, उसे कवि कैसे कहे ?

दो॰ होम समय तनु धरि अनलु अति सुख आहुति लेहिं।
बिप्र बेष धरि बेद सब कहि बिबाह बिधि देहिं।३२३।

हवन के समय अग्निदेव शरीर धारण करके बड़े ही सुख से स्वयं आहुति ले लेते हैं। और सारे वेद ब्राह्मण का वेष धारण करके विवाह की विधियाँ बताये देते हैं।

जनक पाट महिषी जग जानी ❀ सीय मातु किमि जाइ बखानी
सुजसु सुकृतु सुखु सुन्दरताई ❀ सब समेटि बिधि रची बनाई

जनकजी की जगविख्यात पटरानी और सीता की माता का बखान तो कैसे हो सकता है ? सुयश, पुण्य, सुख और सुन्दरता सबको बटोरकर ब्रह्मा ने उनकी रचना की है।

समउ जानि मुनिबरन्ह बोलाईं ❀ सुनत सुआसिनि सादर ल्याईं
जनक बाम दिसि सोह सुनयना ❀ हिमगिरि संग बनी[1] जनु मयना

समय जानकर श्रेष्ठ मुनियों ने उनको बुलवाया। यह सुनते ही सुहागिन स्त्रियाँ उन्हें आदर-पूर्वक ले आईं। सुनयना (जनकजी की पटरानी) जनकजी की बाईं ओर ऐसी सुशोभित हुईं, मानो हिमांचल के साथ मैना दुलहिन शोभित हों।

कनक कलस मनि कोपर रूरे ❀ सुचि सुगंध मंगल जल पूरे
निज कर मुदित रायँ अरु रानी ❀ धरे राम के आगें आनी

सोने के कलश और मणियों की सुन्दर परातें, जो पवित्र और सुगंधित मङ्गल-जल से भरे हैं, राजा और रानी ने प्रसन्न होकर अपने हाथों से आकर राम के आगे रक्खीं।

पढ़हिं बेद मुनि मंगल बानी ❀ गगन सुमन झरि अवसरु जानी
बर बिलोकि दंपति अनुरागे ❀ पाय पुनीत पखारन लागे

मुनि कल्याणमयी वाणी से वेद पढ़ रहे हैं; सुअवसर जानकर आकाश से फूलों की झड़ी लग गई है। दूलह को देखकर राजा-रानी प्रेम-मग्न हो गये और उनके पवित्र चरणों को पखारने लगे।

छंद—लागे पखारन्ह पाय पंकज प्रेम तनु पुलकावली।
नभ नगर गान निसान जय धुनि उमगि जनु चहुँ दिसि चली
जे पद सरोज मनोज अरि उर सर सदैव बिराजहीं।
जे सकृत[2] सुमिरत बिमलता मन सकल कलि मल भाजहीं

वे राम के कमल ऐसे चरणों को पखारने लगे। प्रेम से उनका शरीर पुलकित हो आया है। आकाश और नगर दोनों में होने वाले गान, नगाड़े और जय-जयकार की ध्वनि मानो चारों दिशाओं में उमड़ चली। जो कमल ऐसे चरण कामदेव के शत्रु शिवजी के हृदय-रूपी सरोवर में सदा विराजते हैं, जिन का एक बार भी स्मरण करने से मन में निर्मलता आती है और कलियुग के सारे पाप भाग जाते हैं,

---

१. दुलहिन (मारवाड़ी)। २. एक बार।

जे परसि मुनि बनिता लही गति रही जो पातकमई ।
मकरंदु जिन्ह को संभु सिर सुचिता अवधि सुर बरनई ॥
करि मधुप मुनि मन जोगि जन जे सेइ अभिमत गति लहैं ।
ते पद पखारत भाग्य भाजन जनकु जय जय सब कहैं ॥

जिसे स्पर्श करके गौतम मुनि की स्त्री अहल्या ने परम गति पाई, जो पापमयी थी; जिन चरण-कमलों का मकरंद रस (गंगाजी) शिवजी सिर पर धरते हैं, जिसे देवता पवित्रता की सीमा बताते हैं, मुनि और योगीजन अपने मन को जिन चरण-कमलों का भौंरा बनाकर तथा सेवन कर मनोवाञ्छित गति प्राप्त करते हैं, उन्हीं चरणों को भाग्य के पात्र जनक जी धो रहे हैं, यह देखकर सब 'जय-जयकार' कर रहे हैं ।

बर कुअँरि करतल जोरि साखोच्चारु[1] दोउ कुलगुर करैं ।
भयो पानिगहन बिलोकि बिधि सुर मनुज मुनि आनँद भरैं
सुखमूल दूलह देखि दम्पति पुलक तनु हुलस्यौ हियो ।
करि लोक बेद बिधानु कन्या दानु नृप भूषन कियो ॥

दोनों कुलों के गुरु वर और कन्या की हथेलियों को मिलाकर शाखोच्चार करने लगे । पाणि-ग्रहण की विधि पूर्ण हुई देखकर ब्रह्मादि देवता, मनुष्य और मुनि आनन्द में भर गये । सुख के मूल दूलह को देखकर राजा-रानी का शरीर पुलकित हो गया और हृदय आनन्द से उमड़ आया । राजाओं के अलङ्कार-स्वरूप महाराज जनकजी ने लोक और वेद की विधि करके कन्यादान किया ।

हिमवंत जिमि गिरिजा महेसहि हरिहि श्री[2] सागर दई ।
तिमि जनक रामहि सिय समरपी बिस्व कल कीरति नई ॥
क्यों करै बिनय बिदेहु कियो बिदेह मूरति साँवरी ।
करि होम बिधिवत गाँठि जोरी होन लागी भाँवरी ॥

हिमाचल ने जैसे शिवजी को पार्वती दी थी और समुद्र ने विष्णु को लक्ष्मी दी थी, उसी प्रकार जनकजी ने राम को सीता समर्पित की । इससे संसार में

१. वंशावली वर्णन । २. लक्ष्मी ।

सुन्दर नवीन कीर्ति छा गई। विदेह (जनक) कैसे विनय करें ? साँवली मूर्ति (राम) ने उन्हें विदेह (देह की सुध-बुध से रहित) कर दिया था। विधिपूर्वक हवन करके गठजोड़ी की गई और भाँवरें होने लगीं।

दो॰ जय धुनि बंदी बेद धुनि मंगल गान निसान।
सुनि हरषहिं बरषहिं बिबुध सुर तरु सुमन सुजान॥

जय की ध्वनि, बन्दी-ध्वनि और वेद-ध्वनि, मङ्गल-गान और नगाड़े की ध्वनि सुनकर चतुर देवगण हर्षित हो रहे हैं, और कल्पवृक्ष के फूल बरसा रहे हैं।

कुअँरु कुअँरि कल भावँरि देहीं ❁ नयन लाभु सबु सादर लेहीं
जाइ न बरनि मनोहर जोरी ❁ जो उपमा कछु कहउँ सो थोरी

वर और कन्या सुन्दर भाँवर दे रहे हैं। सब दर्शक आदरपूर्वक नेत्रों का लाभ ले रहे हैं। उस मनोहर जोड़ी का वर्णन नहीं किया जा सकता; जो कुछ उपमा कहूँगा, सब थोड़ी ही होगी।

राम सीय सुंदर प्रतिछाहीं[1] ❁ जगमगाति मनि खम्भन्ह माहीं
मनहुँ मदन रति धरि बहु रूपा ❁ देखत राम बिआहु अनूपा

राम और सीता का सुन्दर प्रतिबिम्ब मणि के खम्भों में जगमगा रहा है। मानो कामदेव और रति बहुत-से रूप धारण करके राम का अनुपम विवाह देख रहे हैं।

दरस लालसा सकुच न थोरी ❁ प्रगटत दुरत[2] बहोरि बहोरी
भए मगन सब देखनिहारे ❁ जनक समान अपान[3] बिसारे

उनको दर्शन की लालसा भी बहुत है और संकोच भी कम नहीं है। इससे वे बार-बार प्रकट होते और छिपते हैं। सब देखने वाले आनन्द-विभोर हो गये और जनक की तरह सब ने अपनी सुध-बुध भुला दी।

प्रमुदित मुनिन्ह भाँवरीं फेरी ❁ नेग[4] सहित सब रीति निबेरी
राम सीय सिर सेंदुर देहीं ❁ सोभा कहि न जात बिधि केहीं

हर्ष पूर्वक मुनियों ने भाँवरें फिराईं और नेग दे-दिलाकर विवाह की सब रीतियाँ निपटा दीं। राम सीता के सिर में सिंदूर दे रहे हैं, वह शोभा किसी प्रकार भी कही नहीं जा सकती।

---

१. परछाईं। २. छिपते। ३. अपनी सुध-बुध। ४. बंधा हुआ हक़।

अरुन पराग जलजु भरि नीकें ❀ ससिहि भूष अहि लोभ अमी कें
बहुरि बसिष्ठ दीन्ह अनुसासन ❀ बर दुलहिनि बैठे एक आसन

मानो कमल को लाल पराग से अच्छी तरह भरकर अमृत पाने के लोभ से सर्प चन्द्रमा को भूषित कर रहा है। फिर वशिष्ठजी ने आदेश दिया, तब दूलह और दुलहिन एक आसन पर बैठे।

छन्द—बैठे बरासन रामु जानकि मुदित मन दसरथु भए।
तनु पुलक पुनि पुनि देखि अपनें सुकृत सुरतरु फल नये॥
भरि भुवन रहा उछाहु राम बिबाहु भा सबहीं कहा।
केहि भाँति बरनि सिरात रसना एक एहु मंगलु महा॥

राम और सीता श्रेष्ठ आसन पर बैठे, उन्हें देखकर दशरथजी मन में बहुत आनन्दित हुये। अपने पुण्यरूपी कल्पवृक्ष में नये फल देखकर उनका शरीर बार-बार पुलकायमान हो रहा है। उत्साह सारे भुवनों में भर गया। सबने कहा कि राम का विवाह हो गया। जीभ तो एक है, और यह मंगल महान् है। भला, वह किस प्रकार वर्णन करने पर चुक सकता है ?

तब जनक पाइ बसिष्ठ आयसु ब्याह साज सँवारि कै।
मांडवी स्रुतकीरति उरमिला कुंअरि लईं हँकारि कै॥
कुसकेतु कन्या प्रथम जो गुन सील सुख सोभामई।
सब रीति प्रीति समेत करि सो ब्याहि नृप भरतहि दई॥

तब जनकजी ने वशिष्ठजी की आज्ञा पाकर विवाह का साज-सजाकर मांडवी, श्रुतिकीर्ति और उर्मिला नाम की राजकुमारियों को बुलवा लिया। कुशध्वज की बड़ी कन्या मांडवी को, जो गुण, शील, सुख और शोभा की रूप ही थी, राजा जनक ने प्रीति-सहित सब रीतियाँ करके भरत को ब्याह दिया।

जानकी लघु भगिनी सकल सुन्दरि सिरोमनि जानि कै।
सो जनक दीन्ही ब्याहि लषनहि सकल बिधि सनमानि कै॥

जेहि नाम श्रुतकीरति सुलोचनि सुमुखि सब गुन आगरी।
सो दई रिपुसूदनहि भूपति रूप सील उजागरी॥

सीता की छोटी बहन उर्मिला को सब सुन्दरियों की शिरोमणि जानकर उस कन्या को सब प्रकार से सम्मान करके जनकजी ने लक्ष्मण को ब्याह दिया। जिसका नाम श्रुतिकीर्ति है और जो सुन्दर नेत्रों वाली, सुन्दर मुख वाली, सब गुणों में निपुण और रूप और सुशीलता में विख्यात है, उसे राजा ने शत्रुघ्न को ब्याह दिया।

अनुरूप बर दुलहिनि परसपर लखि सकुचि हियँ हरषहीं।
सब मुदित सुन्दरता सराहहिं सुमन सुर गन बरषहीं॥
सुंदरी सुंदर बरन्ह सह सब एक मंडप राजहीं।
जनु जीव उर चारिउ अवस्था[1] बिभुन[2] सहित बिराजहीं॥

दूलह और दुलहिन एक दूसरे के अनुरूप हैं। वे आपस में एक दूसरे को देखकर सकुचाते और हृदय में हर्षित हो रहे हैं। सब दर्शक प्रसन्न होकर उनकी सुन्दरता की सराहना करते हैं और देवगण फूल बरसाते हैं। सब सुन्दरी दुलहिनें सुन्दर दुलहों के साथ एक ही मण्डप में शोभा पा रही हैं। मानो हृदय में जीव की चारों अवस्थाएँ अपने चारों स्वामियों-सहित विराजमान हों।

दो० **मुदित अवधपति सकल सुत बधुन्ह समेत निहारि।**
जनु पाये महिपाल मनि क्रियन्ह[3] सहित फल चारि[4]॥

अयोध्या के राजा दशरथजी बहुओं-सहित अपने सब पुत्रों को देखकर ऐसे आनंदित हैं, मानो राजाओं के शिरोमणि दशरथजी क्रियाओं-सहित चारों फल पा गये।

जसि रघुबीर ब्याह बिधि बरनी ❀ सकल कुअँर ब्याहे तेहि करनी
कहि न जाइ कछु दाइज भूरी ❀ रहा कनक मनि मंडप पूरी

---

१. चार अवस्था—जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीय।
२. चार अवस्थाओं के स्वामी—विश्व, तैजस, प्राज्ञ, ब्रह्म।
३. चार क्रियायें—यज्ञ-क्रिया, श्रद्धा-क्रिया, योग-क्रिया, ज्ञान-क्रिया।
४. चार फल—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष।

राम के विवाह की विधि जिस प्रकार वर्णन की गई, उसी विधि से सब राजकुमार विवाहे गये। दहेज इतना अधिक दिया गया कि वह कहा नहीं जा सकता। सारा मण्डप सोने और मणियों से भर गया था।

कंबल बसन बिचित्र पटोरे ❁ भाँति भाँति बहु मोल न थोरे
गज रथ तुरग दास अरु दासी ❁ धेनु अलंकृत कामदुहा सी

कम्बल, वस्त्र और तरह-तरह के अद्भुत रेशमी कपड़े जो बड़े कीमती थे और संख्या में भी कम नहीं थे, तथा हाथी, रथ, घोड़े, दास, दासी और भूषणों से सजी हुई कामधेनु-सी गायें,

बस्तु अनेक करिअ किमि लेखा ❁ कहि न जाइ जानहिं जिन्ह देखा
लोकपाल अवलोकि सिहाने ❁ लीन्ह अवधपति सबु सुखु माने

(आदि) अनेकों वस्तुओं की गिनती कैसे की जाय? कुछ कहा नहीं जा सकता। जिन्होंने देखा है, वही जानते हैं। उन्हें देखकर लोकपाल भी सिहा रहे हैं। राजा दशरथ ने सबको सुखपूर्वक स्वीकार किया।

दीन्ह जाचकन्हि जो जेहि भावा ❁ उबरा सो जनवासहिं आवा
तब कर जोरि जनक मृदु बानी ❁ बोले सब बरात सनमानी

राजा दशरथ ने दहेज की चीज़ें याचकों को, जो जिसे पसन्द आईं, बाँट दीं। जो बच गई, वह जनवासे में आई। तब जनकजी हाथ जोड़कर सारी जनवास को सम्मान करते हुये कोमल वाणी से बोले—

छंद—सनमानि सकल बरात आदर दान बिनय बड़ाइ कै।
प्रमुदित महा मुनि बृन्द बंदे पूजि प्रेम लड़ाइ[1] कै॥
सिरु नाइ देव मनाइ सब सन कहत कर संपुट किएँ।
सुर साधु चाहत भाउ सिंधु कि तोष जल अंजलि दिएँ॥

आदर, दान, विनय और बड़ाई से सारी बरात का सम्मान करके राजा ने हर्ष-सहित प्रेम उँड़ेलकर बड़े-बड़े मुनियों के समूह की पूजा और वन्दना की। सिर नवाकर, देवताओं को मनाकर, राजा हाथ जोड़कर सब से कहने लगे— देवता और साधु तो भाव ही चाहते हैं, पर क्या जल की एक अंजलि से कहीं समुद्र संतुष्ट हो सकता है?

१. उँड़ेलकर।

कर जोरि जनक बहोरि बंधु समेत कोसलराय सों।
बोले मनोहर बयन सानि सनेह सील सुभाय[1] सों॥
समबंध राजन रावरें हम बड़े अब सब बिधि भए।
एहि राज साज समेत सेवक जानिबे बिनु गथ लए॥

फिर जनक जी अपने भाई-सहित हाथ जोड़कर दशरथजी से स्नेह, शील और प्रेम में सानकर मधुर वाणी बोले—हे राजन्! आपके साथ सम्बन्ध करके अब हम सब प्रकार से बड़े हो गये। आप इस राज-पाट सहित हम दोनों को बिना दाम लिये हुये अपना सेवक ही समझिये।

ए दारिका परिचारिका करि पालबीं करुना नई।
अपराधु छमिबो बोलि पठए बहुत हौं ढीठ्यो कई॥
पुनि भानुकुल भूषन सकल सनमान निधि समधी किये।
कहि जात नहिं बिनती परसपर प्रेम परिपूरन हिये॥

इन कन्याओं को टहलनी की तरह मानकर, नई-नई दया करके पालन करना। मैंने आपको बुला भेजा, यह बड़ी ढिठाई हुई, इस अपराध को क्षमा कीजियेगा। फिर सूर्यकुल के शिरोमणि दशरथजी ने समधी (जनकजी) को सम्पूर्ण सम्मान का भण्डार कर दिया। उनकी परस्पर की विनय का वर्णन नहीं हो सकता। दोनों के हृदय प्रेम से परिपूर्ण हैं।

बृंदारका[2] गन सुमन बरषहिं राउ जनवासेहि चले।
दुन्दुभी जय धुनि बेद धुनि नभ नगर कौतूहल भले॥
तब सखीं मङ्गल गान करत मुनीस आयसु पाइ कै।
दूलह दुलहिनिन्ह सहित सुन्दरि चलीं कोहबर[3] ल्याइ कै।

देवगण फूल बरसा रहे हैं। राजा जनवासे को चले। नगाड़े की ध्वनि, जय-जयकार और वेद की ध्वनि से आकाश और नगर दोनों में ख़ूब कोलाहल हो रहा था। तब मुनिराज शतानन्द जी की आज्ञा पाकर सब सुन्दरी सखियाँ

---

१. सुन्दर भाव। २. देवता। ३. विवाह के पश्चात् वर-वधू के प्रथम मिलन का घर।

मङ्गल गीत गाती हुईं दुलहों और दुलहिनियों सहित सबको लिवाकर कोहबर को चलीं।

दो०—पुनि पुनि रामहिं चितव सिय सकुचति मन सकुचै न
हरत मनोहर मीन छबि प्रेम पिआसे नैन ॥३२६॥

सीता राम को बार-बार देखती हैं और सकुचा जाती हैं, पर मन नहीं सकुचाता। प्रेम के प्यासे उनके नेत्र सुन्दर मछलियों की शोभा को हर रहे हैं।

स्याम सरीरु सुभायँ सुहावन ❀ सोभा कोटि मनोज लजावन
जावक जुत पद कमल सुहाए ❀ मुनि मन मधुप रहत जिन्ह छाए

राम का साँवला शरीर स्वभाव ही से सुन्दर है। उनकी शोभा करोड़ों कामदेवों को लजाने वाली है। महावर से युक्त दोनों कमल ऐसे चरण सुहावने लगते हैं जिन पर मुनियों के मन रूपी भौंरे सदा मँडराया करते हैं।

पीत पुनीत मनोहर धोती ❀ हरत बाल रबि दामिनि जोती[1]
कल किंकिनि कटिसूत्र मनोहर ❀ बाहु बिसाल बिभूषन सुंदर

पीले रंग की सुन्दर पवित्र धोती प्रातः काल के सूर्य और बिजली की चमक को हर रही है। कमर में सुन्दर तगड़ी और कटिसूत्र है। उनकी विशाल भुजाओं में सुन्दर गहने हैं।

पीत जनेउ महा छबि देई ❀ कर मुद्रिका चोरि चितु लेई
सोहत ब्याह साज सब साजे ❀ उर आयत[2] भूषण उर राजे

पीला जनेऊ बड़ी छवि दे रहा है। हाथ की अँगूठी चित्त को चुराये ले रही है। ब्याह के सब साज सजे हुये वे शोभा पा रहे हैं। चौड़ी छाती है, उस पर गले के सुन्दर गहने सुशोभित हैं।

पियर[3] उपरना[4] काँखा सोती ❀ दुहुँ आँचरन्हि लगे मनि मोती
नयन कमल कल कुंडल काना ❀ बदनु सकल सौन्दर्जनिधाना

पीले रंग के दुपट्टे को (जनेऊ की तरह) काँखासोती डाले हैं। उसके दोनों छोरों पर मणि और मोती लगे हैं। कमल के समान उनके नेत्र हैं, कानों में सुन्दर कुण्डल हैं और मुख तो सारी सुन्दरता का ख़ज़ाना ही है।

---

१. ज्योति। २. चौड़ी। ३. पीला। ४. दुपट्टा।

सुन्दर भृकुटि मनोहर नासा ❀ भाल तिलकु रुचिरता निवासा
सोहत मौरु मनोहर माथे ❀ मङ्गलमय मुकुता मनि गाथे

भौंहें सुन्दर और नाक मनोहर है। माथे पर तिलक तो सुन्दरता का घर ही है। मोती और रत्नों से गुँथा हुआ कल्याणमय मनोहर मौर मस्तक पर शोभित है।

छंद—माथे महा मनि मौर मंजुल अङ्ग सब चित चोरहीं।
पुर नारि सुर सुन्दरीं बरहिं बिलोकि सब तिन तोरहीं॥
मुनि बसन भूषन बारि आरति करहिं मंगल गावहीं।
सुर सुमन बरिसहिं सूत मागध बन्दि सुजसु सुनावहीं॥

सुन्दर मौर में बहुमूल्य मणियाँ गुँथी हुई हैं। सारा अंग चित्त को चुराये लेता है। नगर की स्त्रियाँ और देवताओं की सब सुन्दरियाँ दूलह को देखकर तिनके तोड़ रही हैं। वे मणि, वस्त्र और आभूषण न्योछावर करके आरती उतार रही हैं। देवता फूल बरसा रहे हैं और सूत, मागध और बन्दीजन सुयश सुना रहे हैं।

कोहबरहि आने कुँअर कँअरि सुआसिनिन्ह सुख पाइकै।
अति प्रीति लौकिक रीति लागीं करन मङ्गल गाइ कै॥
लहकौरि[1] गौरि सिखाव रामहिं सीय सन सारद कहैं।
रनिवासु हास बिलास रसबस जनम को फल सब लहैं॥

सुहागिनी स्त्रियाँ सुख पाकर राजकुमारों और राजकुमारियों को कोहबर में ले आकर बड़ी प्रीति से मंगल-गीत गा-गाकर लौकिक रीति करने लगीं। राम को पार्वतीजी तथा सीता को सरस्वती लहकौर (परस्पर ग्रास देना) सिखाती हैं। रनिवास हास-विलास के आनन्द में मग्न है। सभी जन्म का परम फल प्राप्त कर रही हैं।

निज पानि मनि महुँ देखि प्रतिमूरति सुरूपनिधान की।
चालति न भुजबल्ली बिलोकनि बिरह भय बस जानकी॥

१. वर-वधू का परस्पर ग्रास देना।

कौतुक बिनोद प्रमोदु प्रेमु न जाइ कहि जानहिं अली ।
बर कुँअरि सुन्दरि सकल सखी लिवाइ जनवासेहिं चली ॥

अपने हाथ की मणियों में सुन्दर रूप के भंडार (रामचन्द्रजी) की परछाहीं देखती हुई जानकी दर्शन में वियोग होने के भय से बाहुरूपी लता को और दृष्टि को हिलाती-डुलाती नहीं हैं। उस समय के खेल, हँसी-दिल्लगी, हर्ष और प्रेम का वर्णन नहीं हो सकता, उसे सखियाँ ही जानती हैं। इसके बाद वर-वधुओं को सब सुन्दर सखियाँ जनवासे को लिवाकर चलीं।

तेहि समय सुनिअ असीस जहँ तहँ नगर नभ आनंदु महा।
चिरजिअहु जोरी चारु चारिउ मुदित मन सबहीं कहा॥
जोगीन्द्र सिद्ध मुनीस देव बिलोकि प्रभु दुन्दुभि हनी।
चले हरषि बरषि प्रसून निज निज लोक जय जय जय भनी॥

उस समय नगर और आकाश में जहाँ सुनिये वहीं आशीर्वाद की ध्वनि सुनाई दे रही है और बड़ा आनन्द छा रहा है। सभी ने प्रसन्न मन से कहा कि चारों सुन्दर जोड़ियाँ चिरंजीवी हों। योगीश्वर, सिद्ध, मुनिराज और देवताओं ने प्रभु रामचन्द्रजी को देखकर नगाड़े बजाये और हर्षित हो और फूलों की वर्षा करके तथा बारम्बार 'जय हो, जय हो, जय हो', कहते हुये अपने-अपने लोक को चले।

दो॰ **सहित बधूटिन्ह कुँअर सब तब आये पितु पास।**
सोभा मङ्गल मोद भरि उमगेउ जनु जनवास।३२७।

तब सब कुँवर बहुओं-सहित पिता के पास आये। ऐसा जान पड़ता है, मानो शोभा, मंगल और आनन्द से भरकर जनवासा उमड़ पड़ा हो।

पुनि जेवनार भई बहु भाँती ❋ पठये जनक बोलाइ बराती
परत पाँवड़े बसन अनूपा ❋ सुतन्ह समेत गवन किय भूपा

फिर बहुत प्रकार का व्यञ्जन तैयार हुआ। जनक ने बरातियों को बुला भेजा। पुत्रों-सहित राजा दशरथजी ने गमन किया। अनुपम वस्त्रों के पाँवड़े पड़ते थे।

सादर सब के पाय पखारे ❀ जथाजोग पीढ़न बैठारे
धोये जनक अवधपति चरना ❀ सील सनेह जाइ नहिं बरना

आदर के साथ सब के पाँव धोये और सब को यथायोग्य पीढ़ों पर बैठाया। तब जनकजी ने अयोध्या-नरेश दशरथजी के चरण धोये। उनके शील और स्नेह का वर्णन नहीं हो सकता।

बहुरि राम पद पङ्कज धोये ❀ जे हर हृदय कमल महुँ गोये
तीनिउ भाइ राम सम जानी ❀ धोये जनक चरन निज पानी

फिर जनक ने रामचन्द्रजी के चरण-कमलों को धोया, जो शिवजी के हृदय-कमल में छिपे रहते हैं। तीनों भाइयों को राम ही के समान जानकर जनकजी ने अपने हाथों से उनके भी चरण धोये।

आसन उचित सबहि नृप दीन्हे ❀ बोलि सूपकारक सब लीन्हे
सादर लगे परन पनवारे[1] ❀ कनक कील मनि पान[2] सँवारे

राजा जनक ने सभी को उचित आसन दिये और फिर सब परोसनेवालों को बुला लिया। आदर के साथ पत्तलें पड़ने लगीं, जो मणियों के पत्तों से सोने के कील लगाकर बनाई गई थीं।

दो० सूपोदन सुरभी सरपि सुन्दर स्वादु पुनीत।
छन महँ सब के परसि गे चतुर सुआर बिनीत ।३२८।

चतुर और विनीत रसोइये सुन्दर स्वादिष्ट और स्वच्छ दाल, भात और गाय का घी, सबके सामने क्षण भर में परस गये।

पँच कौर[2] करि जेवन लागे ❀ गारि गान सुनि अति अनुरागे
भाँति अनेक परे पकवाने ❀ सुधा सरिस नहिं जाहिं बखाने

पाँचों प्राणों के लिये पाँच ग्रास निकालकर वे भोजन करने लगे। गाली का गाना सुनकर तो वे मुग्ध हो गये। अनेकों तरह के पकवान परसे गये जो अमृत के समान मीठे थे और जिनका बखान नहीं हो सकता।

---

१. पत्तल। २. पत्ता।

२. पाँच प्राणों के लिये पाँच ग्रास : प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा और समानाय स्वाहा कहकर।

परसन लगे सुआर सुजाना ❀ बिञ्जन बिबिध नाम को जाना
चारि भाँति भोजन[1] स्रुति गाई ❀ एक एक बिधि बरनि न जाई

चतुर रसोइये नाना प्रकार के व्यंजन परोसने लगे। उनका नाम कौन जानता है ? वेदों ने चार प्रकार के भोजन कहे हैं, उनमें एक-एक ही के प्रकार का वर्णन नहीं किया जा सकता।

छरस[2] रुचिर बिञ्जन बहु जाती ❀ एक एक रस अगनित भाँती
जेंवत देहिं मधुर धुनि गारी ❀ लइ लइ नाम पुरुष अरु नारी

छओं रसों के बहुत प्रकार के सुन्दर व्यञ्जन हैं। एक-एक रस के अनगिनती प्रकार के बने हैं। भोजन करते समय पुरुषों और स्त्रियों के नाम ले-लेकर जनकपुर की स्त्रियाँ मधुर ध्वनि से गाली देने लगीं।

समय सुहावनि गारि बिराजा ❀ हँसत राउ सुनि सहित समाजा
एहि बिधि सबही भोजन कीन्हा ❀ आदर सहित आचमन लीन्हा

समय पर गालियाँ भी सुहावनी लगती हैं। उसे सुनकर समाज-सहित राजा दशरथ हँसते हैं। इस तरह सभी ने भोजन किया और आदर-पूर्वक आचमन लिया।

दो० देइ पान पूजे जनक दसरथु सहित समाज।
जनवासे गवने मुदित सकल भूप सिरताज ।३२९।

जनकजी ने पान देकर समाज-सहित दशरथ जी का पूजन किया। सब राजाओं के शिरोमणि अयोध्यानरेश प्रसन्न होकर जनवासे को चले।

नित नूतन मङ्गल पुर माहीं ❀ निमिष सरिस दिन जामिनि जाहीं
बड़े भोर भूपति मनि जागे ❀ जाचक गुन गन गावन लागे

जनकपुर में नित्य नये मङ्गल हो रहे हैं। दिन और रात पल के समान बीत जाते हैं। बड़े सवेरे राजाओं के मणि (दशरथजी) जागे और याचक लोग उनके गुणों का गान करने लगे।

देखि कुँअर बर बधुन्ह समेता ❀ किमि कहि जात मोद मन जेता
प्रातक्रिया करि गे गुरु पाहीं ❀ महा प्रमोद प्रेम मन माहीं

---

१. चर्व्य, चोष्य, लेह्य, पेय।
२. खट्टा, मीठा, कडुआ, कसैला, तीता और नमकीन।

श्रेष्ठ कुँवरों को बधुओं सहित देखकर उनके मन में जितना आनन्द है, वह किस प्रकार कहा जा सकता है ? प्रातःक्रिया करके वे गुरु वशिष्ठ जी के पास गये। उनके मन में अतिशय आनंद और प्रेम भरा है।

करि प्रनामु पूजा कर जोरी ❁ बोले गिरा अमिअँ जनु बोरी
तुम्हरी कृपा सुनहु मुनिराजा ❁ भयउँ आजु मैं पूरन काजा

हाथ जोड़कर, प्रणाम और पूजन करके और फिर मानो अमृत में डुबोई हुई हो, ऐसी वाणी बोले—हे मुनिराज ! सुनिये, आपकी कृपा से आज मैं सफल मनोरथ हो गया।

अब सब बिप्र बोलाइ गोसाईं ❁ देहु धेनु सब भाँति बनाईं
सुनि गुर करि महिपाल बड़ाई ❁ पुनि पठये मुनि बृन्द बोलाई

अब हे स्वामिन् ! सब ब्राह्मणों को बुलाकर उनको सब तरह से सजी हुई गायें दीजिये। यह सुनकर गुरुजी ने राजा की प्रशंसा करके फिर मुनि-गणों को बुलवा भेजा।

दो॰ बामदेव अरु देवरिषि बालमीकि जाबालि।
आये मुनिबर निकर तब कौसिकादि तपसालि ३३०

वामदेव, नारद, वाल्मीकि, जाबालि और विश्वामित्र आदि तपस्वी मुनीश्वरों के समूह के समूह आये।

दंड प्रनाम सबहि नृप कीन्हे ❁ पूजि सप्रेम बरासन दीन्हे
चारि लच्छ बर धेनु मँगाई ❁ काम सुरभि सम सील सुहाई

राजा ने सब को दंड-प्रणाम किया और प्रेम से पूजन करके उन्हें उत्तम आसन दिये। चार लाख श्रेष्ठ गायें जो कामधेनु के समान अच्छे स्वभाव वाली और सुन्दर थीं, राजा ने मँगवाईं।

सब बिधि सकल अलंकृत कीन्हीं ❁ मुदित महिप महिदेवन्ह दीन्हीं
करत बिनय बहु बिधि नरनाहू ❁ लहेउँ आजु जग जीवन लाहू

उन सब को सब प्रकार से विभूषित करके राजा ने प्रसन्न होकर ब्राह्मणों को गायें दीं। राजा बहुत तरह से विनती कर रहे हैं कि आज ही मैंने संसार में जीने का लाभ पाया।

पाइ असीस महीसु अनन्दा ❀ लिये बोलि पुनि जाचक बृन्दा
कनक बसन मनि हय गय स्यन्दन ❀ दिये बूझि रुचि रबिकुल नन्दन

ब्राह्मणों से आशीर्वाद पाकर राजा आनन्दित हुये। फिर उन्होंने याचक-वृन्द को बुलवा लिया और सबको उनकी रुचि पूछकर सोना, वस्त्र, मणि, घोड़ा, हाथी और रथ सूर्यकुल को आनंदित करने वाले दशरथजी ने दिये।

चले पढ़त गावत गुन गाथा ❀ जय जय जय दिनकर कुल नाथा
एहि बिधि राम बिबाह उछाहू ❀ सकइ न बरनि सहस मुख जाहू

वे सब विरद पढ़ते और गुणों की गाथा गाते हुये और सूर्यकुल के स्वामी की 'जय हो, जय हो, जय हो' कहते हुये चले। इस प्रकार राम के विवाह का उत्सव हुआ, जिसे जिन्हें सहस्र मुख हैं वे शेष भी नहीं कह सकते।

दो॰ बार बार कौसिक चरन सीसु नाइ कह राउ।
यह सबसुख मुनिराज तव कृपा कटाच्छ पसाउ ३३१

राजा बार-बार विश्वामित्रजी के चरणों में सिर नवाकर कहते हैं—हे मुनिराज! यह सब सुख आप ही के कृपा-कटाक्ष का प्रसाद है।

जनक सनेह सील करतूती ❀ नृप सब राति सराहत बीती❀
दिन उठि बिदा अवधपति माँगा ❀ राखहिं जनक सहित अनुरागा

जनकजी के स्नेह, शील और करनी की सराहना करने में राजा की सारी रात बीत जाती है। सवेरे उठकर रोज़ अयोध्यानरेश बिदा माँगते हैं; पर जनकजी उन्हें प्रेम से रख लेते हैं।

नित नूतन आदरु अधिकाई ❀ दिन प्रति सहस भाँति पहुनाई
नित नव नगर अनन्द उछाहू ❀ दसरथ गवनु सोहाइ न काहू

आदर नित्य नया बढ़ता जाता है। प्रतिदिन सहस्रों प्रकार से मेहमानी होती है। नगर में नित्य ही नवीन आनन्द और उत्साह रहता है, दशरथजी का जाना किसी को नहीं सुहाता।

बहुत दिवस बीते एहि भाँती ❀ जनु सनेह रजु[1] बँधे बराती
कौसिक सतानन्द तब जाई ❀ कहा बिदेह नृपहि समुझाई

❀ पाठान्तर—नृप सब भाँति सराह बिभूति।
१. रस्सी।

इस प्रकार बहुत दिन बीत गये, मानो बराती स्नेह की रस्सी से बँध गये हैं। तब विश्वामित्रजी और शतानन्दजी ने जाकर राजा जनक को समझाकर कहा—

अब दसरथ कहँ आयसु देहू ❀ जद्यपि छाड़ि न सकहु सनेहू
भलेहिं नाथ कहि सचिव बोलाये ❀ कहि जयजीव सीस तिन्ह नाये

यद्यपि आप स्नेह-वश उन्हें नहीं छोड़ सकते, तो भी अब दशरथजी को आज्ञा दीजिए। 'हे नाथ! बहुत अच्छा' कहकर जनकजी ने मन्त्रियों को बुलवाया। वे आये और 'जयजीव' कहकर उन्होंने मस्तक नवाया।

दो॰ अवधनाथु चाहत चलन भीतर करहु जनाउ।
भये प्रेम बस सचिव सुनि बिप्र सभासद राउ॥३३२

जनकजी ने कहा—अयोध्यानाथ चलना चाहते हैं, भीतर (रनिवास में) खबर कर दो। यह सुनकर मन्त्री, ब्राह्मण, सभासद और राजा जनक सभी प्रेम के वश हो गये।

पुर बासी सुनि चलिहि बराता ❀ पूछत बिकल परसपर बाता
सत्य गवन सुनि सब बिलखाने ❀ मनहुँ साँझ सरसिज सकुचाने

पुरवासियों ने सुना कि बरात जायगी, वे व्याकुल होकर एक दूसरे से बात पूछने लगे। जाना सत्य है, यह सुनकर सब ऐसे विकल हो गये, जैसे संध्या के समय कमल सकुचा गये हों।

जहँ जहँ आवत बसे बराती ❀ तहँ तहँ सिद्ध[1] चला बहु भाँती
बिबिध भाँति मेवा पकवाना ❀ भोजन साजु न जाइ बखाना

आते समय जहाँ-तहाँ बराती टिके थे, वहाँ-वहाँ बहुत प्रकार की रसद-सामग्री रवाना हुई। अनेकों प्रकार के मेवे, पकवान और भोजन का सामान जो बखाना नहीं जा सकता।

भरि भरि बसहँ अपार कहारा ❀ पठये जनक अनेक सुआरा
तुरग लाख रथ सहस पचीसा ❀ सकल सँवारे नख अरु सीसा

अगणित बैलों और कहारों पर लाद-लादकर भेजा गया तथा अनेकों

१. सीधा, भोजन की सामग्री।

रसोई बनाने वालों को जनकजी ने भेजा। एक लाख घोड़े और पचीस हज़ार रथ सिर से पैर तक सजाये हुए,

मत्त सहस दस सिन्धुर साजे ❀ जिन्हहिं देखि दिसि कुंजर लाजे
कनक बसन मनि भरि भरि जाना ❀ महिषी धेनु बस्तु बिधि नाना

दस हज़ार सजे हुये मतवाले हाथी, जिन्हें देखकर दिशाओं के हाथी भी लजा जाते हैं, तथा गाड़ियों में भर-भरकर सोना, वस्त्र और रत्न और भैंस, गाय तथा और भी नाना प्रकार की चीज़ें दीं।

दो० **दाइज अमित न सकिय कहि दीन्ह बिदेह बहोरि[1]।**
जो अवलोकत लोकपति लोक सम्पदा थोरि॥३३३

जनकजी ने फिर से अपरिमित दहेज दिया जो कहा नहीं जा सकता, और जिसे देखकर लोकपालों को अपने-अपने लोकों की सम्पदा थोड़ी प्रतीत होती थी।

सब समाजु एहि भाँति बनाई ❀ जनक अवधपुर दीन्ह पठाई
चलिहि बरात सुनत सब रानी ❀ बिकल मीन गन जनु लघु पानी

इस प्रकार सब सामान सजाकर सबको जनकजी ने अयोध्यापुरी को भेज दिया। बरात जायगी, यह बात सुनते ही सब रानियाँ विकल हो गईं, जैसे थोड़े जल में मछलियाँ अकुला रही हों।

पुनि पुनि सीय गोद करि लेहीं ❀ देइ असीस सिखावन देहीं
होयेहु सन्तत पियहि पियारी ❀ चिर अहिबात असीस हमारी

रानियाँ बार-बार सीता को गोद में ले लेती हैं और आशीर्वाद देकर सिखावन देती हैं—तुम सदा अपने पति की प्यारी होना, तुम्हारा सोहाग अचल हो—हमारा यही आशीर्वाद है।

सासु ससुर गुरु सेवा करहू ❀ पति रुख लखि आयसु अनुसरहू
अति सनेह बस सखीं सयानीं ❀ नारि धरम सिखवहिं मृदु बानीं

सास, ससुर और गुरु की सेवा करना, पति का रुख देखकर, उनकी आज्ञा का पालन करना। सयानी सखियाँ अत्यन्त स्नेह के वश कोमल वाणी से स्त्री-धर्म सिखलाती हैं।

---

१. फिर।

सादर सकल कुँअरि समुझाई ❀ रानिन्ह बार बार उर लाई
बहुरि बहुरि भेंटहिं महतारी ❀ कहहिं बिरंचि रचीं कत नारी

आदर के साथ सब पुत्रियों को समझाकर रानियों ने बार-बार उन्हें हृदय से लगाया। मातायें फिर-फिर भेंटती और कहती हैं कि ब्रह्मा ने स्त्री-जाति को क्यों रचा ?

दो० तेहि अवसर भाइन्ह सहित रामु भानु कुल केतु।
चले जनक मन्दिर मुदित बिदा करावन हेतु ।३३४।

उसी समय सूर्यवंश के पताका-स्वरूप रामचन्द्रजी भाइयों-सहित प्रसन्न होकर विदा कराने के लिए जनकजी के महल को चले।

चारिउ भाइ सुभायँ सुहाये ❀ नगर नारि नर देखन धाये
कोउ कह चलन चहत हहिं राजू ❀ कीन्ह बिदेह बिदा कर साजू

चारों भाई स्वभाव ही से सुन्दर हैं। नगर के स्त्री-पुरुष उन्हें देखने को दौड़े। कोई कहता है—आज ये जाना चाहते हैं, विदेह ने विदा की तैयारी करा दी है।

लेहु नयन भरि रूप निहारी ❀ प्रिय पाहुने भूप सुत चारी
को जानइ केहिं सुकृत सयानी ❀ नयन अतिथि कीन्हे बिधि आनी

आँख भरकर इनका रूप देख लो, राजा के चारों पुत्र प्यारे मेहमान हैं। हे सयानी ! कौन जानता है, किस पुण्य से ब्रह्मा ने इन्हें यहाँ लाकर हमारे नेत्रों का अतिथि किया है ?

मरनसीलु जिमि पाव पियूषा ❀ सुर तरु लहइ जनम कर भूखा
पाव नारकी हरिपदु जैसें ❀ इन्ह कर दरसनु हम कहँ तैसें

मरने वाला प्राणी जिस तरह अमृत पा जाय और जन्म का भूखा कल्पवृक्ष पा जाय और जैसे नरक में रहने वाला भगवान् के परम पद को प्राप्त हो जाय, वैसे ही हमको इनके दर्शन हैं।

निरखि राम सोभा उर धरहू ❀ निज मन फनि[1] मूरति मनि करहू
एहि बिधि सबहि नयन फल देता ❀ गये कुँअर सब राज निकेता

रामचन्द्रजी की शोभा को निरखकर हृदय में धर लो। अपने मनरूपी साँप

१. साँप।

के लिये इनकी मूर्त्ति को मणि बना लो। इस प्रकार सब को नेत्रों का फल देते हुये सब कुँवर राजमहल में गये।

दो०— रूप सिन्धु सब बन्धु लखि हरषि उठेउ रनिवासु।
करहिं निछावरि आरती महा मुदित मन सासु।३३५।

रूप के समुद्र सब भाइयों को देखकर रनिवास हर्षित हो उठा। सासुयें अत्यन्त हर्षित मन से आरती और न्योछावर करती हैं।

देखि राम छवि अति अनुरागीं ❀ प्रेम बिबस पुनि पुनि पद लागीं
रही न लाज प्रीति उर छाई ❀ सहज सनेहु बरनि किमि जाई

रामचन्द्रजी की छवि देखकर वे प्रेम में अत्यन्त मग्न हो गईं और वे प्रीति के वश बार-बार चरणों में लग रही हैं। हृदय में प्रीति छा गई है, इससे लज्जा नहीं रह गई। उनके स्वाभाविक स्नेह का वर्णन किस तरह किया जा सकता है?

भाइन्ह सहित उबटि[1] अन्हवाये ❀ छरस असन अति हेतु जेंवाये
बोले रामु सुअवसर जानी ❀ सील सनेह सकुचमय बानी

उन्होंने भाइयों-सहित रामचन्द्रजी को उबटन करके स्नान कराया और बड़ी प्रीति से षट्‌रस भोजन कराया। सुअवसर जानकर रामचन्द्रजी शील, स्नेह और संकोच-भरी वाणी बोले—

राउ अवधपुर चहत सिधाये ❀ बिदा होन हम इहाँ पठाये
मातु मुदित मन आयसु देहू ❀ बालक जानि करब नित नेहू

महाराज अयोध्यापुरी को चलना चाहते हैं, उन्होंने हमें विदा होने के लिये यहाँ भेजा है। हे माता! प्रसन्न मन से आज्ञा दीजिये और मुझे पुत्र जान कर सदा स्नेह बनाये रखना।

सुनत बचन बिलखेउ रनिवासू ❀ बोलि न सकहिं प्रेम बस सासू
हृदय लगाइ कुँअरि सब लीन्हीं ❀ पतिन्ह सौंपि बिनती अति कीन्हीं

इन वचनों को सुनते ही रनिवास उदास हो गया। सासुयें प्रेम-वश बोल नहीं सकती हैं। उन्होंने सब पुत्रियों को हृदय से लगा लिया और उनके पतियों को सौंपकर बहुत विनती की।

---

१. उबटन लगाकर।

छंद-करि बिनय सिय रामहिं समरपी जोरि कर पुनि पुनि कहै
बलि जाउँ तात सुजान तुम्ह कहँ बिदित गति सब की अहै
परिवार पुरजन मोहि राजहि प्रान प्रिय सिय जानिबी[1]
तुलसी सुसील सनेह लखि निज किङ्करी करि मानिबी[2]

विनती करके उन्होंने सीता को रामचन्द्रजी को समर्पित किया और हाथ जोड़कर बार-बार कहा—हे तात ! हे सुजान ! बलि जाती हूँ, तुमको सब की गति मालूम है। कुटुम्बियों, नगर-निवासियों, मुझको और राजा को सीता प्राणों के समान प्रिय हैं ऐसा जानना। तुलसीदास कहते हैं—इसके शील और स्नेह को देखकर इसे अपनी करके मानना।

सो०—तुम्ह परिपूरन काम जान[3] सिरोमनि भाव प्रिय।
जन गुन गाहक राम दोष दलन करुनायतन ३३६

तुम पूर्णकाम हो, ज्ञानियों के शिरोमणि हो और भाव-प्रिय हो (तुमको प्रेम प्यारा है) हे राम ! तुम भक्तों के गुणों को ग्रहण करने वाले, दोषों को नाश करने वाले और दया के घर हो।

अस कहि रही चरन गहि रानी ❀ प्रेम पङ्क जनु गिरा समानी
सुनि सनेह सानी बर बानी ❀ बहु बिधि राम सासु सनमानी

ऐसा कहकर रानी पाँव पकड़कर चुप रह गईं। मानो उनकी वाणी प्रेम-रूपी दलदल में समा गई हो। स्नेह से सनी हुई श्रेष्ठ वाणी सुनकर रामचन्द्रजी ने सास का बहुत तरह से सम्मान किया।

राम बिदा माँगत कर जोरी ❀ कीन्ह प्रनामु बहोरि बहोरी
पाइ असीस बहुरि सिरु नाई ❀ भाइन्ह सहित चले रघुराई

रामचन्द्रजी ने हाथ जोड़कर विदा माँगते हुये बार-बार प्रणाम किया। आशीर्वाद पाकर फिर मस्तक नवाया और भाइयों-सहित रघुनाथजी चले।

मञ्जु मधुर मूरति उर आनी ❀ भईं सनेह सिथिल सब रानी
पुनि धीरज धरि कुअँरि हँकारीं ❀ बार बार भेंटहिं महतारीं

रामचन्द्रजी की सुन्दर मधुर मूर्त्ति को हृदय में लाकर सब रानियाँ स्नेह

१. जानना। २. मानना। ३. ज्ञानी।

से शिथिल हो गईं। फिर धीरज धारण करके पुत्रियों को बुला मातायें उन्हें बारम्बार भेंटने लगीं।

पहुँचावहिं फिरि मिलहिं बहोरी ❁ बढ़ी परसपर प्रीति न थोरी
पुनि पुनि मिलति सखिन्ह बिलगाई[1] ❁ बाल बच्छ जिमि धेनु लवाई[2]

पहुँचाती हैं, फिर लौटकर मिलती हैं, दोनों ओर परस्पर बड़ी प्रीति बढ़ी। सीता सखियों से बार-बार अलग होकर मिलती हैं। जैसे हाल की ब्याई हुई गाय अपने बालक बछड़े से मिलती है।

दो० प्रेम बिबस नरनारि सब सखिन्ह सहित रनिवासु।
मानहुँ कीन्ह बिदेहपुर करुनाँ बिरहँ निवासु॥३३७॥

सब स्त्री-पुरुष और सखियों-सहित रनिवास प्रेम से बेसुध हो गईं। मानो जनकपुर में करुणा और विरह ने डेरा डाला हो।

सुक सारिका जानकी ज्याये ❁ कनक पिञ्जरन्हि राखि पढ़ाये
ब्याकुल कहहिं कहाँ बैदेही ❁ सुनि धीरजु परिहरइ न केही

जानकी ने तोता और मैना जिलाया था, उन्हें सोने के पींजड़ों में रखकर पढ़ाया था। वे व्याकुल होकर कह रहे हैं—सीता कहाँ हैं? उनके ऐसे वचनों को सुनकर कौन धीरज नहीं छोड़ देगा?

भये बिकल खग मृग एहि भाँती ❁ मनुज दसा कैसें कहि जाती
बन्धु समेत जनकु तब आये ❁ प्रेम उमगि लोचन जल छाये

जब पक्षी और पशु इस तरह विकल हो गये, तब मनुष्यों की दशा कैसे कही जा सकती है? उसी समय भाई-सहित जनकजी वहाँ आये। प्रेम से उमड़ कर जल उनकी आँखों में भर आया।

सीय बिलोकि धीरता भागी ❁ रहे कहावत परम बिरागी
लीन्हि राय उर लाइ जानकी ❁ मिटी महा मरजाद ज्ञान की

वे तो बड़े विरक्त कहलाते थे, पर सीताजी को देखकर उनका भी धैर्य जाता रहा। राजा ने जानकीजी को हृदय से लगा लिया। प्रेम के कारण ज्ञान की महान् मर्यादा मिट गई।

---

१. अलग लेजाकर। २. हाल की ब्याई हुई।

समुझावत सब सचिव सयाने ❀ कीन्ह बिचार अनवसर जाने
बारहि बार सुता उर लाईं ❀ सजि सुन्दर पालकी मँगाईं

सब बुद्धिमान् मन्त्री उन्हें समझाते हैं। तब राजा ने विचार किया कि विषाद करने का यह अवसर नहीं है। बारम्बार पुत्रियों को हृदय से लगाकर उन्होंने सुन्दर, सजी हुई पालकियाँ मंगवाईं।

दो॰ प्रेम बिबस परिवारु सब जानि सुलगन नरेस।
कुँअरि चढ़ाईं पालकिन्ह सुमिरे सिद्धि गनेस॥३३८॥

सारा परिवार प्रेम में बेसुध है। राजा ने अच्छी साइत जानकर सिद्धि-सहित गणेशजी का स्मरण करके कन्याओं को पालकियों पर चढ़ाया।

बहु बिधि भूप सुता समझाईं ❀ नारि धरम कुल रीति सिखाईं
दासी दास दिये बहुतेरे ❀ सुचि सेवक जे प्रिय सिय केरे

राजा ने पुत्रियों को बहुत तरह से समझाया और उन्हें स्त्री-धर्म और कुल की रीति सिखाई। बहुत से दास और दासियाँ दीं, जो सीताजी के प्रिय और विश्वासपात्र सेवक थे।

सीय चलत ब्याकुल पुरबासी ❀ होहिं सगुन सुभ मङ्गल रासी
भूसुर सचिव समेत समाजा ❀ संग चले पहुँचावन राजा

सीता के चलते समय नगर-निवासी व्याकुल हो गये। मङ्गल की राशि शुभ शकुन हो रहे हैं। ब्राह्मण और मन्त्रि-मण्डल सहित राजा जनकजी उन्हें पहुँचाने के लिये साथ चले।

समय बिलोकि बाजने बाजे ❀ रथ गज बाजि बरातिन्ह साजे
दसरथ बिप्र बोलि सब लीन्हे ❀ दान मान परिपूरन कीन्हे

समय देखकर बाजे बजने लगे। बरातियों ने रथ, हाथी और घोड़े सजाये। दशरथजी ने सब ब्राह्मणों को बुलवा लिया और उन्हें दान और सम्मान से परिपूर्ण कर दिया।

चरन सरोज धूरि धरि सीसा ❀ मुदित महीपति पाइ असीसा
सुमिरि गजाननु कीन्ह पयाना ❀ मंगल मूल सगुन भये नाना

ब्राह्मणों के चरण-कमलों की धूलि सिर पर रखकर और आशीर्वाद पाकर

राजा आनन्दित हुए। गणेशजी का स्मरण करके उन्होंने प्रस्थान किया। नाना प्रकार के मंगलों के मूल अनेकों शकुन हुये।

दो०- सुर प्रसून बरषहिं हरषि करहिं अपछरा गान।
चले अवधपति अवधपुर मुदित बजाइ निसान॥३३९

देवता प्रसन्न होकर फूल बरसा रहे हैं और अप्सरायें गान कर रही हैं। अयोध्यानरेश आनन्द-पूर्वक नगाड़े बजाकर अयोध्यापुरी को चले।

नृप करि बिनय महाजन फेरे ❀ सादर सकल माँगने[1] टेरे
भूषन बसन बाजि गज दीन्हे ❀ प्रेम पोषि ठाढ़े सब कीन्हे

राजा दशरथजी ने विनती करके प्रतिष्ठित जनों को लौटाया और आदर-पूर्वक सब मङ्गनों को बुलवाया। उन्हें गहने, कपड़े, घोड़े, हाथी दिये और प्रेम से सबको पोषण करके खड़ा किया।

बार बार बिरिदावलि भाखी ❀ फिरे सकल रामहिं उर राखी
बहुरि बहुरि कोसलपति कहहीं ❀ जनक प्रेम बस फिरन न चहहीं

वे सब बारम्बार वंश की कीर्ति का बखान कर और रामचन्द्रजी को हृदय में रखकर लौटे। अयोध्या-नरेश फिर-फिर लौटने को कहते हैं, पर प्रेम के अधीन हुए जनकजी लौटना नहीं चाहते।

पुनि कह भूपति बचन सुहाये ❀ फिरिअ महीप दूरि बड़ि आये
राउ बहोरि उतरि भये ठाढ़े ❀ प्रेम प्रबाह बिलोचन बाढ़े

फिर राजा दशरथ ने सुहावने वचन कहे—हे राजन्! बहुत दूर आ गये, अब लौटिये। फिर अयोध्या-नरेश रथ से उतरकर भूमि पर खड़े हो गये। उनकी आँखों में प्रेम का प्रवाह बढ़ आया।

तब बिदेह बोले कर जोरी ❀ बचन सनेह सुधा जनु बोरी[2]
करउँ कवन बिधि बिनय बनाई ❀ महाराज मोहि दीन्हि बड़ाई

तब जनकजी हाथ जोड़कर मानो स्नेहरूपी अमृत में डुबोकर वचन बोले—हे महाराज! मैं किस तरह बनाकर विनती करूँ? आपने मुझे बड़ी बड़ाई दी है।

१. मंगन, मँगते। २. डुबोकर।

दो० कोसलपति समधी सजन सनमाने सब भाँति ।
मिलनि परसपर बिनय अति प्रीति न हृदय समाति ॥

अयोध्यानाथ दशरथजी ने अपने प्रियजन समधी का सब तरह से सम्मान किया । उनकी आपस में मिलने की नम्रता और अत्यन्त प्रीति हृदय में समाती नहीं थी ।

मुनि मंडलिहि जनक सिरु नावा ❀ आसिरबादु सबहि सन पावा
सादर पुनि भेंटे जामाता ❀ रूप सील गुन निधि सब भ्राता

जनकजी ने मुनि-मण्डली को सिर नवाया और सभी से आशीर्वाद पाया। फिर आदर के साथ वे सब दामादों से मिले । सभी भाई रूप, शील और गुणों के निधान थे ।

जोरि पङ्करुह पानि सुहाये ❀ बोले बचन प्रेम जनु जाये[1]
राम करउँ केहि भाँति प्रसंसा ❀ मुनि महेस मन मानस हंसा

सुन्दर कमल के समान हाथों को जोड़कर वे ऐसे वचन बोले, जो मानो प्रेम से ही जन्मे हों । हे राम ! मैं आपकी प्रशंसा किस प्रकार से करूँ ? आप मुनियों और शिवजी के मनरूपी मानसरोवर के हंस हैं ।

करहिं जोग जोगी जेहि लागी ❀ कोह मोह ममता मद त्यागी
ब्यापक ब्रह्मु अलखु अबिनासी ❀ चिदानन्दु निरगुन गुन रासी

योगी लोग जिनके लिये क्रोध, मोह, ममता और मद त्यागकर योग-साधन करते हैं, जो सब में व्यापक, ब्रह्म, अव्यक्त, नाश-रहित, चिदानन्द, निर्गुण और गुणों की राशि हैं ।

मन समेत जेहि जान न बानी ❀ तरकि न सकहिं सकल अनुमानी
महिमा निगम नेति कहि कहई ❀ जो तिहुँ काल एकरस अहई[2]

मन-सहित वाणी जिनको नहीं जानती और जिनकी तर्कना नहीं कर सकते, केवल अनुमान ही कर सकते हैं, जिनकी महिमा को वेद 'नेति' (इतना ही नहीं) कहकर बतलाते हैं, जो तीनों कालों में एकरस रहते हैं,

दो० नयन बिषय मो कहँ भयउ सो समस्त सुखमूल ।
सबइ सुलभु जग जीव कहँ भये ईसु अनुकूल ॥३४१॥

१. पैदा किये, जन्माये । २. है, रहता है ।

वे ही सम्पूर्ण सुखों के मूल (आप) मेरे नेत्रों के विषय हुए। सच है, ईश्वर के अनुकूल होने पर संसार में जीवों को सब कुछ सुलभ हो जाता है।

सबहिं भाँति मोहि दीन्हि बड़ाई ❀ निज जन जानि लीन्ह अपनाई
होहिं सहस दस सारद सेषा ❀ करहिं कलप कोटिक भरि लेखा

आपने मुझे सभी प्रकार से बड़ाई दी और अपना जन जानकर अपना लिया। यदि दस हज़ार सरस्वती और शेष हों और करोड़ों कल्पों तक गणना करते रहें,

मोर भाग्य राउर[1] गुन गाथा ❀ कहि न सिराहिं सुनहु रघुनाथा
मैं कछु कहहुँ एकु बल मोरें ❀ तुम्ह रीझहु सनेहु सुठि थोरें

तो भी हे रघुनाथ ! मेरा सौभाग्य और आपके गुणों की कथा वे कहकर समाप्त नहीं कर सकते। मैं जो कुछ कह रहा हूँ, वह अपने इस एक ही बल पर कि आप बहुत थोड़े भी सच्चे प्रेम से प्रसन्न हो जाते हैं।

बार बार माँगउँ कर जोरें ❀ मन परिहरइ चरन जनि भोरें[2]
सुनि बर बचन प्रेम जनु पोषे ❀ पूरनकाम रामु परितोषे

मैं बार-बार हाथ जोड़कर यह माँगता हूँ कि मेरा मन आपके चरणों को भूलकर भी न छोड़े। जनकजी के श्रेष्ठ वचन जो मानो प्रेम से पोषित थे, सुनकर पूर्णकाम रामचन्द्रजी सन्तुष्ट हुए।

करि बर बिनय ससुर सनमाने ❀ पितु कौसिक बसिष्ठ सम जाने
बिनती बहुरि भरत सन कीन्ही ❀ मिलि सप्रेम पुनि आसिष दीन्ही

रामचन्द्रजी ने सुन्दर विनती करके ससुर को सम्मानित किया और उन्हें पिता दशरथजी, गुरु विश्वामित्रजी और कुलगुरु वशिष्ठजी के समान जाना। जनकजी ने भरत से विनती और प्रीति-पूर्वक मिलकर फिर उन्हें आशीर्वाद दिया।

दो० मिले लखन रिपुसूदनहि दीन्ह असीस महीस।
भये परसपर प्रेम बस फिरि फिरि नावहिं सीस।३४२

फिर लक्ष्मण और शत्रुघ्न से मिलकर राजा ने उन्हें आशीर्वाद दिया। वे परस्पर प्रेम के वश होकर बार-बार सिर नवाने लगे।

---

१. आपके। २. भूलकर भी।

बार बार करि बिनय बड़ाई ❀ रघुपति चले सङ्ग सब भाई
जनक गहे कौसिक पद जाई ❀ चरन रेनु सिर नयनन्हि लाई

बार-बार (जनकजी की) विनती और बड़ाई करके रामचन्द्रजी सब भाइयों के साथ चले। जनकजी ने जाकर विश्वामित्र जी के चरण पकड़ लिये, और उनके चरणों की धूलि को सिर और नेत्रों से लगाया।

सुनु मुनीस बर दरसन तोरें ❀ अगम न कछु प्रतीति मन मोरें
जो सुखु सुजसु लोकपति चहहीं ❀ करत मनोरथ सकुचत अहहीं

हे मुनीश्वर सुनिये, आप के दर्शन से कुछ भी दुर्लभ नहीं, मेरे मन में ऐसा विश्वास है। जो सुख और सुयश लोकपाल चाहते हैं और असंभव जानकर जिसके लिये मनोरथ करते हुए वे सकुचाते हैं,

सो सुखु सुजसु सुलभ मोहि स्वामी ❀ सब सिधि तव दरसन अनुगामी
कीन्ह बिनय पुनि पुनि सिर नाई ❀ फिरे महीस आसिषा पाई

हे स्वामी! मुझे वही सुख और सुयश सुलभ हो गया; क्योंकि सारी सिद्धियाँ आपके दर्शनों के पीछे चलने वाली हैं। बार-बार विनती करके, सिर नवाकर और उनसे आशीर्वाद पाकर राजा लौटे।

चली बरात निसान बजाई ❀ मुदित छोट बड़ सब समुदाई
रामहिं निरखि ग्राम नर नारी ❀ पाइ नयन फलु होहिं सुखारी

नगाड़े बजाकर बरात चली। छोटे-बड़े सभी समूहों के लोग प्रसन्न हैं। रास्ते के गाँवों के स्त्री-पुरुष राम को देखकर और नेत्रों का फल पाकर सुखी होते हैं।

दो० बीच बीच बर बास करि मग लोगन्ह सुखु देत।
अवध समीप पुनीत दिन पहुँची आइ जनेत[1] ।३४३

बीच-बीच में सुन्दर पड़ाव करती हुई, रास्ते के लोगों को सुख देती हुई वह बरात पवित्र दिन में अयोध्यापुरी के समीप आ पहुँची।

हने निसान पनव बर बाजे ❀ भेरि सङ्ख धुनि हय गय गाजे
झाँझ बीन डिंडिमी[2] सुहाई ❀ सरस राग बाजहिं सहनाई

नगाड़ों पर चोटें पड़ने लगीं, सुन्दर ढोल बजने लगे; भेरी और शङ्ख बजने

१. बरात। २. डफली।

लगे; हाथी और घोड़े गरज रहे हैं। झाँझ, वीणा, सुहावनी डफलियाँ तथा रसीले राग से शहनाइयाँ बज रही हैं।

पुर जन आवत अकनि बराता ❀ मुदित सकल पुलकावलि गाता
निज निज सुन्दर सदन सँवारे ❀ हाट बाट चौहट पुर द्वारे

पुरजनों ने बरात का आना सुना, तब सब आनन्दित हो गये और सबके शरीर पुलकायमान हो गये। सबने अपने-अपने घरों, बाज़ारों, गलियों, चौराहों, नगर के द्वारों को सुन्दर सजा लिया।

गली सकल अरगजा[1] सिंचाई ❀ जहँ तहँ चौकें चारु पुराई
बना बजारु न जाइ बखाना ❀ तोरन केतु पताक बिताना

सारी गलियाँ अर्गजे से सिंचाई गईं, जहाँ-तहाँ सुन्दर चौक पुराये गये। बन्दनवारों, ध्वजा-पताकाओं और मण्डपों से बाज़ार ऐसा सजाया गया कि बखाना नहीं जा सकता।

सकल पूगफल[2] कदलि रसाला ❀ रोपे बकुल[3] कदम्ब तमाला
लगे सुभग तरु परसत धरनी ❀ मनिमय आलबाल[4] कल करनी

फल-सहित सुपारी, केला, आम, मौलसरी, कदम्ब और तमाल के पेड़ लगाये गये। वे लगे हुये सुन्दर वृक्ष धरती को छू रहे हैं। उनके थाले मणियों के हैं और अच्छी कारीगरी से बनाये गये हैं।

दो० बिबिध भाँति मङ्गल कलस गृह गृह रचे सँवारि।
सुर ब्रह्मादि सिहाहिं सब रघुबर पुरी निहारि॥३४४॥

अनेक प्रकार के मङ्गल-कलश घर-घर सजाकर बनाये गये। ब्रह्मा आदि सब देवता राम की नगरी (अयोध्यापुरी) को देखकर सिहाते हैं।

भूप भवनु तेहि अवसर सोहा ❀ रचना देखि मदन मनु मोहा
मङ्गल सगुन मनोहरताई ❀ रिधि सिधि सुख सम्पदा सुहाई

उस समय राजमहल ऐसा शोभित था कि उसकी सजावट देखकर कामदेव का मन भी मोहित हो जाता है। मङ्गल-शकुन, सुन्दरता, ऋद्धि, सिद्धि, सुख और सुन्दर संपत्ति—

---

१. सुगन्धित द्रव्य। २. सुपारी। ३. मौलसिरी। ४. थाले।

जनु उछाह सब सहज सुहाये ❀ तनु धरि धरि दसरथ गृहँ आये
देखन हेतु राम बैदेही ❀ कहहु लालसा होइ न केही

मानो सहज सुन्दर उत्साह से शरीर धर-धरकर दशरथ के घर में आये हुये हैं। रामचन्द्रजी और सीता को देखने के लिये कहो, किसे लालसा न होगी ?

जूथ जूथ मिलि चलीं सुआसिनि ❀ निज छबि निदरहिं मदन बिलासिनि
सकल सुमङ्गल सजे आरती ❀ गावहिं जनु बहु भेष भारती[1]

सुहागिनी स्त्रियाँ झुण्ड की झुण्ड मिलकर चलीं, जो अपनी छवि से कामदेव की स्त्री रति का भी निरादर कर रही हैं। सभी सुन्दर मंगल-द्रव्य और आरती सजाये हुये गान कर रही हैं, मानो सरस्वती ही बहुत-से रूप धारण किये गा रही हों।

भूपति भवन कोलाहल होई ❀ जाइ न बरनि समउ सुखु सोई
कौसल्यादि राम महतारीं ❀ प्रेम बिबस तनु दसा बिसारीं

राजमहल में (उत्सव का) हल्ला हो रहा है। उस समय का और सुख का वर्णन नहीं किया जा सकता। कौशल्या आदि रामचन्द्रजी की मातायें प्रेम के वश होकर शरीर की सुधि भूल गई हैं।

दो० **दिये दान बिप्रन्ह बिपुल पूजि गनेस पुरारि।**
प्रमुदित परम दरिद्र जनु पाइ पदारथ चारि ॥३४५

गणेशजी तथा शिवजी का पूजन करके उन्होंने ब्राह्मणों को बहुत-सा दान दिया। वे ऐसी प्रसन्न मालूम होती हैं मानो परम दरिद्री चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) पा गया हो।

मोद प्रमोद बिबस सब माता ❀ चलहिं न चरन सिथिल भये गाता
राम दरस हित अति अनुरागीं ❀ परिछन साजु सजन सब लागीं

सब मातायें सुख और आनन्द में विमुग्ध हो रही हैं। उनके शरीर शिथिल हो गये हैं, और पैर आगे नहीं उठते। रामचन्द्रजी के दर्शनों के लिए वे अत्यन्त उत्सुकता से परछन का सब सामान सजाने लगीं।

बिबिध बिधान बाजने बाजे ❀ मंगल मुदित सुमित्राँ साजे
हरद दूब दधि पल्लव फूला ❀ पान पूगफल मंगल मूला

---

१. सरस्वती।

अनेक प्रकार के बाजे बज रहे थे। सुमित्रा ने प्रसन्नता से मङ्गल के साज सजाये। हल्दी, दूब, दही, पत्ते, फूल, पान और सुपारी आदि मङ्गल की मूल वस्तुएँ,

अच्छत अंकुर रोचन लाजा ❀ मंजुल मंजरि तुलसि बिराजा
छुहे[1] पुरट[2] घट सहज सुहाये ❀ मदन सकुन[3] जनु नीड़[4] बनाये

अक्षत (चावल), अँखुए, गोरोचन, लावा और तुलसी की सुन्दर मंजरियाँ सुशोभित हैं। नाना रंगों से चित्रित किये हुए सहज सुहावने सुवर्ण के कलश ऐसे मालूम होते थे, मानो कामदेवरूपी पक्षी ने घोंसले बनाये हों।

सगुन सुगन्ध न जाइ बखानी ❀ मंगल सकल सजहिं सब रानी
रची आरती बहुत बिधाना ❀ मुदित करहिं कल मंगल गाना

सगुन की सुगन्धित वस्तुएँ बखानी नहीं जा सकतीं। सब रानियाँ मङ्गल साज सज रही हैं। बहुत तरह की आरती रचकर प्रसन्नता से वे सुन्दर मङ्गल-गान कर रही हैं।

दो० कनक थार भरि मंगलन्हि कमल करन्हि लिये मातु।
चलीं मुदित परिछन करन पुलक पल्लवित गातु।३४६।

सुवर्ण के थालों को माङ्गलिक वस्तुओं से भरकर अपने कमल के समान हाथों में लिये हुये मातायें आनंदित होकर परछन करने चलीं। उनका शरीर पुलकित हो रहा है।

धूप धूम नभु मेचक भयऊ ❀ सावन घन घमंड जनु ठयऊ
सुरतरु सुमन माल सुर बरषहिं ❀ मनहुँ बलाक अवलि मनु करषहिं

धूप के धुएँ से आकाश काला हो गया है। मानो सावन के मेघ उमड़कर छा गये हों। देवता कल्पवृक्ष के फूलों की मालायें बरसा रहे हैं; वह मानो बगुलों की पाँत है जो मन को अपनी ओर खींच रही है।

मंजुल मनिमय बन्दनिवारे ❀ मनहुँ पाकरिपु[5] चाप सँवारे
प्रगटहिं दुरहिं अटन्हि पर भामिनि ❀ चारु चपल जनु दमकहिं दामिनि

सुन्दर मणियों के बन्दनवार ऐसे मालूम होते हैं, मानो इन्द्र-धनुष सजाये हों। अटारियों पर सुन्दर और चपल स्त्रियाँ प्रकट होती और छिप जाती हैं, मानो बिजलियाँ चमक रही हों।

१. चित्रित। २. सोना। ३. पक्षी। ४. घोंसला। ५. इन्द्र।

दुन्दुभि धुनि घन गरजनि घोरा ❀ जाचक चातक दादुर मोरा
सुर सुगन्ध सुचि बरषहिं बारी ❀ सुखी सकल ससि¹ पुर नर नारी

नगारे की ध्वनि ही बादलों का घोर गर्जन है और मंगन लोग पपीहा, मेंढक और मोर हैं। देवता शुद्ध सुगन्धित जल बरसा रहे हैं, जिससे खेतीरूपी नगर के सब स्त्री-पुरुष सुखी हो रहे हैं।

समउ जानि गुर आयसु दीन्हा ❀ पुर प्रवेसु रघुकुल मनि कीन्हा
सुमिरि सम्भु गिरिजा गनराजा ❀ मुदित महीपति सहित समाजा

प्रवेश का मुहूर्त्त जानकर गुरुजी ने आज्ञा दी, तब रघुकुल-मणि महाराज दशरथ ने नगर में प्रवेश किया। शिव, पार्वती और गणेशजी का स्मरण करके महाराज समाज-सहित आनंदित हो रहे हैं।

दो० होहिं सगुन बरषहिं सुमन सुर दुन्दुभी बजाइ।
बिबुध बधू नाचहिं मुदित मंजुल मङ्गल गाइ ।३४७।

शकुन हो रहे हैं, देवता दुन्दुभी बजा-बजाकर फूल बरसा रहे हैं। देवताओं की स्त्रियाँ प्रसन्न होकर सुन्दर मंगल-गीत गा-गाकर नाच रही हैं।

मागध सूत बन्दि नट नागर ❀ गावहिं जस तिहुँ लोक उजागर
जय धुनि बिमल बेद बर बानी ❀ दस दिसि सुनिय सुमंगल सानी

मागध, सूत, बन्दीजन और चतुर नर तीनों लोकों में उजागर रामचन्द्रजी का यश गा रहे हैं। जय-ध्वनि तथा सुन्दर मंगल से सनी हुई वेद की निर्मल श्रेष्ठ वाणी दसों दिशाओं में सुनाई पड़ रही है।

बिपुल बाजने बाजन लागे ❀ नभ सुर नगर लोग अनुरागे
बने बराती बरनि न जाहीं ❀ महा मुदित मन सुख न समाहीं

बहुत-से बाजे बजने लगे। आकाश में देवता और नगर में लोग प्रेम में मस्त हैं। बराती ऐसे बने-ठने हैं कि उनका वर्णन नहीं हो सकता; परम आनंदित हैं; सुख उनके मन में समाता नहीं है।

पुरबासिन्ह तब राउ जोहारे ❀ देखत रामहिं भये सुखारे
करहिं निछावरि मनिगन चीरा ❀ बारि बिलोचन पुलक सरीरा

तब पुरवासियों ने राजा को प्रणाम किया। रामचन्द्रजी को देखते ही वे

१. शस्य, खेती।

सुखी हो गये। वे मणियाँ और वस्त्र निछावर कर रहे हैं। उनकी आँखों में जल भरा है और शरीर पुलकित हैं।

आरति करहिं मुदित पुर नारी ❁ हरषहिं निरखि कुँअर बर चारी
सिबिका[1] सुभग ओहार[2] उघारी ❁ देखि दुलहिनिन्ह होहिं सुखारी

नगर की स्त्रियाँ आनंदित होकर आरती कर रही हैं और चारों श्रेष्ठ कुमारों को देखकर हर्षित हो रही हैं। पालकियों के सुन्दर परदे हटा-हटाकर वे दुलहिनों को देखकर सुखी होती हैं।

दो० एहि बिधि सबही देत सुख आये राजदुआर।
मुदित मातु परिछन करहिं बधुन्ह समेत कुमार ३४८

इस तरह सबको सुख देते हुए राजद्वार पर आये। मातायें प्रसन्न होकर राजकुमारों-सहित बहुओं का परछन कर रही हैं।

करहिं आरती बारहिं बारा ❁ प्रेम प्रमोदु कहइ को पारा
भूषन मनि पट नाना जाती ❁ करहिं निछावरि अगनित भाँती

वे बार-बार आरती कर रही हैं। उस प्रेम और आनन्द को कहकर कौन पार पा सकता है? गहने, मणि, अनेक तरह के वस्त्र और असंख्य प्रकार की चीज़ें वे निछावर कर रही हैं।

बधुन्ह समेत देखि सुत चारी ❁ परमानन्द मगन महतारी
पुनि पुनि सीय राम छबि देखी ❁ मुदित सफल जग जीवन लेखी

पतोहुओं-सहित चारों पुत्रों को देखकर मातायें परम आनन्द में डूब गईं। बार-बार सीता और राम की छवि देखकर वे संसार में अपने जीवन को सफल मानकर आनंदित हो रही हैं।

सखीं सीय मुख पुनि पुनि चाही ❁ गान करहिं निज सुकृत सराही
बरषहिं सुमन छनहिं छन देवा ❁ नाचहिं गावहिं लावहिं सेवा

सखियाँ बार-बार सीता का मुख देखकर अपने-अपने पुण्यों की सराहना करती हुई गान कर रही हैं। देवता क्षण-क्षण में फूल बरसाते, नाचते और गाते हैं और अपनी-अपनी सेवायें समर्पण कर रहे हैं।

---

१. पालकी। २. पालकी का परदा।

देखि मनोहर चारिउ जोरीं ❀ सारद उपमा सकल ढँढोरीं[1]
देत न बनइ निपट लघु लागीं ❀ एकटक रहीं रूप अनुरागीं

चारों मनोहर जोड़ियों को देखकर सरस्वती ने सारी उपमाओं को ढूंढ़ डाला; पर कोई उपमा देते न बनी, क्योंकि उन्हें सभी बिलकुल तुच्छ जान पड़ीं। तब वह भी रूप में अनुरक्त होकर टकटकी लगाकर देखती रह गईं।

दो॰ निगम[2] नीति कुल रीति करि अरघ पाँवड़े देत।
बधुन्ह सहित सुत परिछि सब चलीं लेवाइ निकेत॥

वेदों की विधि और कुल की रीति करके अर्घ्य तथा पाँवड़े देते हुए बधुओं समेत सब पुत्रों को परछन करके मातायें महल में लिवा चलीं।

चारि सिंघासन सहज सुहाये ❀ जनु मनोज निज हाथ बनाये
तिन्ह पर कुँअरि कुँअर बैठारे ❀ सादर पाय पुनीत पखारे

चार सिंहासन, जो सहज सुहावने थे मानो वे कामदेव ने अपने हाथ से बनाए थे, उन पर राजकुमारियों और राजकुमारों को बैठाकर, आदर के साथ उनके पवित्र चरण धोये।

धूप दीप नैबेद बेदबिधि ❀ पूजे बर दुलहिनि मङ्गल निधि
बारहिं बार आरती करहीं ❀ ब्यजन चारु चामर सिर ढरहीं

धूप, दीप और नैवेद्य द्वारा वेद की विधि से मङ्गल-राशि दूलह और दुलहिनों की पूजा की। मातायें बारम्बार आरती कर रही हैं। वर-वधुओं के सिर पर सुन्दर पंखे तथा चँवर ढल रहे हैं।

बस्तु अनेक निछावरि होहीं ❀ भरी प्रमोद मातु सब सोहीं
पावा परम तत्व जनु जोगीं ❀ अमृत लहेउ जनु सन्तत रोगीं

अनेक वस्तुयें निछावर हो रही हैं। आनन्द से भरी हुई सभी मातायें ऐसी शोभा पा रही हैं, मानो योगी ने परम तत्व को प्राप्त कर लिया और सदा के रोगी ने अमृत पा लिया।

जनम रङ्क[3] जनु पारस पावा ❀ अन्धहि लोचन लाभु सुहावा
मूक बदन जनु सारद छाई ❀ मानहुँ समर सूर जय पाई

१. ढूँढ़ डाली। २. वेद। ३. गरीब, दरिद्र।

जन्म का दरिद्री मानो पारस-मणि पा गया हो और अन्धे को सुन्दर नेत्रों का लाभ हुआ हो। गूँगे के मुख में मानो सरस्वती आ बिराजी हों, और मानो शूरवीर ने युद्ध में विजय प्राप्त की हो।

दो॰ एहि सुख तें सत कोटि गुन पावहिं मातु अनन्द।
भाइन्ह सहित बिआहि घर आये रघुकुल चन्द ॥३५०

इस प्रकार के सुखों से सौ करोड़ गुना बढ़कर आनन्द माताएँ पा रही हैं। इस प्रकार रघुकुल के चन्द्रमा (राम) विवाह करके भाइयों-सहित घर आये हैं।

लोकरीति जननी करहिं बर दुलहिनि सकुचाहिं।
मोदु बिनोदु बिलोकि बड़ राम मनहिं मुसुकाहिं ॥३५०(२)॥

मातायें लोक-रीति करती हैं और दूलह-दुलहिनें लजाते हैं। उस आनन्द और विनोद को देखकर रामचन्द्रजी मन ही मन मुस्करा रहे हैं।

देव पितर पूजे बिधि नीकी ❀ पूजीं सकल बासना जी की
सबहि बन्दि माँगहिं बरदाना ❀ भाइन्ह सहित राम कल्याना

देवता और पितरों का भली-भाँति पूजन किया गया। मन की सभी वासनायें पूरी हुईं। सबकी वन्दना करके मातायें भाइयों-सहित रामचन्द्रजी के कल्याण का वरदान माँगती हैं।

अन्तरहित सुर आसिष देहीं ❀ मुदित मातु अञ्चल भरि लेहीं
भूपति बोलि बराती लीन्हे ❀ जान[1] बसन मनि भूषन दीन्हे

देवता अन्तरिक्ष से आशीर्वाद दे रहे हैं और मातायें आनन्दित हो आँचल भरकर ले रही हैं। तत्पश्चात् राजा ने बरातियों को बुलवा लिया और उन्हें सवारियाँ, वस्त्र, मणि और गहने दिये।

आयसु पाइ राखि उर रामहिं ❀ मुदित गये सब निज निज धामहिं
पुर नर नारि सकल पहिराये ❀ घर घर बाजन लगे बधाये

आज्ञा पाकर रामचन्द्रजी को हृदय में रखकर वे सब प्रसन्नता-पूर्वक अपने-अपने घर गये। राजा ने नगर के समस्त स्त्री-पुरुषों को कपड़े और गहने पहनाये। घर-घर आनन्द के बधावे बजने लगे।

---

१. यान, सवारी।

जाचक जन जाचहिं जोइ जोई ❀ प्रमुदित राउ देहिं सोइ सोई
सेवक सकल बजनियाँ नाना ❀ पूरन किये दान सनमाना

याचक लोग जो-जो माँगते हैं, राजा प्रसन्न होकर उन्हें वही-वही देते हैं। सारे सेवकों और बाजे वालों को राजा ने नाना प्रकार के दान और सम्मान से सन्तुष्ट किया।

दो०—देहिं असीस जोहारि सब गावहिं गुन गन गाथ।
तब गुरु भूसुर सहित गृह गवन कीन्ह नरनाथ ३५१

सब प्रणाम करके आशीर्वाद देते हैं और गुण समूहों की कथा गाते हैं। तब गुरु और ब्राह्मणों-सहित राजा दशरथजी ने महल में प्रवेश किया।

जो बसिष्ठ अनुसासन दीन्हीं ❀ लोक बेद बिधि सादर कीन्हीं
भूसुर भीर देखि सब रानी ❀ सादर उठीं भाग्य बड़ जानी

वशिष्ठजी ने जो आज्ञा दी, राजा ने उसे लोक और वेद की विधि के अनुसार आदर-पूर्वक किया। ब्राह्मणों की भीड़ देखकर सब रानियाँ अपना बड़ा भाग्य समझकर आदर के साथ उठ खड़ी हुईं।

पाय पखारि सकल अन्हवाये ❀ पूजि भली बिधि भूप जेंवाये
आदर दान प्रेम परिपोषे ❀ देत असीस चले मन तोषे

चरण धोकर उन्होंने सबको स्नान कराया और राजा ने उनका भली-भाँति पूजन करके उन्हें भोजन कराया। उन्हें आदर, दान और प्रेम से परिपुष्ट किया। वे संतुष्ट मन से आशीर्वाद देते हुए चले।

बहु बिधि कीन्हि गाधिसुत पूजा ❀ नाथ मोहि सम धन्य न दूजा
कीन्हि प्रसंसा भूपति भूरी[1] ❀ रानिन्ह सहित लीन्हि पग धूरी

राजा ने विश्वामित्रजी की बहुत तरह से पूजा की और कहा—हे नाथ! मेरे समान धन्य दूसरा कोई नहीं है। राजा ने उनकी बड़ी बड़ाई की और रानियों-सहित उनके पाँव की धूलि को ग्रहण किया।

भीतर भवन दीन्ह बर बासू ❀ मन जोगवत रह नृप रनिवासू
पूजे गुर पद कमल बहोरी ❀ कीन्ह बिनय उर प्रीति न थोरी

उनको महल के भीतर ठहरने को उत्तम स्थान दिया। राजा तथा रनिवास

१. बहुत।

उनका मन सदा सँभालते रहते थे। फिर राजा ने गुरु वशिष्ठजी के चरण-कमलों की पूजा और विनती की। हृदय में उनके लिये कम प्रीति नहीं थी।

दो०— बधुन्ह समेत कुमार सब रानिन्ह सहित महीसु।
पुनि पुनि बन्दत गुरु चरन देत असीस मुनीसु ॥३५२॥

बहुओं-सहित सब राजकुमार और रानियों-समेत राजा बार-बार गुरु के चरणों की वन्दना करते हैं और मुनिराज आशीर्वाद देते हैं।

बिनय कीन्हि उर अति अनुरागे ❀ सुत सम्पदा राखि सब आगे
नेगु माँगि मुनिनायक लीन्हा ❀ आसिरबादु बहुत बिधि दीन्हा

अत्यन्त प्रेम-पूर्ण हृदय से पुत्रों और सारी सम्पत्ति को सामने रखकर राजा ने उन्हें (स्वीकार कर लेने के लिये) विनती की। परंतु मुनिराज ने (पुरोहित के नाते) अपना नेग माँग लिया और बहुत तरह से उन्हें आशीर्वाद दिया।

उर धरि रामहिं सीय समेता ❀ हरषि कीन्ह गुर गवन निकेता
बिप्र बधू सब भूप बोलाईं ❀ चैल[1] चारु भूषन पहिराईं

हृदय में सीता-सहित रामचन्द्रजी को रखकर गुरु प्रसन्नता से अपने स्थान को गये। राजा ने सब ब्राह्मणियों को बुलवाया और उन्हें सुन्दर वस्त्र और आभूषण पहनाये।

बहुरि बोलाइ सुआसिनि लीन्हीं ❀ रुचि बिचारि पहिरावनि दीन्हीं
नेगी नेग जोग सब लेहीं ❀ रुचि अनुरूप भूपमनि देहीं

फिर उन्होंने सुहागिनी स्त्रियों (नगर भर की सौभाग्यवती बहनों, बेटियों, भानजी आदि) को बुलवा लिया। उनकी रुचि समझकर उन्हें पहिरावनी दी। नेगी लोग सब अपना-अपना नेग-जोग लेते और राजाओं के मणि (दशरथजी) उनकी इच्छा के अनुसार देते हैं।

प्रिय पाहुने पूज्य जे जाने ❀ भूपति भली भाँति सनमाने
देव देखि रघुबीर बिबाहू ❀ बरषि प्रसून प्रसंसि उछाहू

जिन महमानों को प्रिय और पूजनीय जाना, उनका राजा ने अच्छी तरह सम्मान किया। देवगण रघुनाथजी का विवाह देखकर फूल बरसाकर, उत्सव की प्रशंसा करके,

---

१. वस्त्र।

दो० चले निसान बजाइ सुर निज निज पुर सुख पाइ।
कहत परसपर राम जस प्रेम न हृदयँ समाइ।३५३।

नगाड़े बजाकर और सुख पाकर देवता अपने-अपने लोकों को चले। आपस में राम का यश कहते जाते हैं। उनके हृदय में प्रेम समाता नहीं है।

सब बिधि सबहि समदि नर नाहू ❀ रहा हृदयँ भरि पूरि उछाहू
जहँ रनिवास तहाँ पगु धारे ❀ सहित बधूटिन्ह कुँअर निहारे

सब प्रकार से सबका प्रेम-पूर्वक भली-भाँति आदर-सत्कार कर लेने पर राजा दशरथ के हृदय में पूर्ण उत्साह (आनंद) भर गया। फिर जहाँ रनिवास था, वे वहाँ पधारे और बहुओं-समेत उन्होंने कुँवरों को देखा।

लिये गोद करि मोद समेता ❀ को कहि सकइ भयउ सुख जेता[1]
बधू सप्रेम गोद बैठारी ❀ बार बार हिय हरषि दुलारी

आनंद-सहित उन्होंने पुत्रों को गोद में ले लिया। उस समय उन्हें जितना सुख हुआ, वह कौन कह सकता है ? फिर पतोहुओं को प्रीति के साथ गोदी में बैठाकर, बार-बार हृदय में हर्षित होकर उन्होंने उनका दुलार किया।

देखि समाजु मुदित रनिवासू ❀ सब के उर अनन्द कियो बासू
कहेउ भूप जिमि भयउ बिबाहू ❀ सुनि सुनि हरषु होइ सब काहू

यह समाज (समारोह) देखकर रनिवास प्रसन्न हो गया। सबके हृदय में आनन्द ने निवास कर लिया। तब राजा ने जिस तरह विवाह हुआ था, वह सब कहा। उसे सुन-सुनकर सब को हर्ष हो रहा है।

जनक राज गुन सीलु बड़ाई ❀ प्रीति रीति सम्पदा सुहाई
बहु बिधि भूप भाट जिमि बरनी ❀ रानीं सब प्रमुदित सुनि करनी

राजा जनकजी के गुण, शील, बड़प्पन, प्रीति की रीति और सुन्दर सम्पत्ति का वर्णन राजा ने भाट की तरह बहुत प्रकार से किया। जनकजी की करनी सुनकर सब रानियाँ बहुत प्रसन्न हुईं।

दो० सुतन्ह समेत नहाइ नृप बोलि बिप्र गुर ज्ञाति[2]।
भोजन कीन्ह अनेक बिधि घरी पञ्च गइ राति।३५४।

---

१. जितना। २. जाति, बिरादरी।

पुत्रों-सहित स्नान करके राजा ने ब्राह्मण, गुरु और कुटुम्बियों को बुलाकर अनेक प्रकार के भोजन किये। इस प्रकार पाँच घड़ी रात बीत गई।

मङ्गल गान करहिं बर भामिनि ❀ भइ सुखमूल मनोहर जामिनि
अँचइ पान सब काहूँ पाये ❀ स्रग सुगन्ध भूषित छबि छाये

सुन्दर स्त्रियाँ मङ्गल-गान कर रही हैं। वह रात्रि मनोहारिणी और सुख की मूल हो गई। सबने आचमन करके पान खाये और फूलों की माला, सुगन्धित द्रव्य (इत्र आदि) से विभूषित होकर वे शोभा से छा गये।

रामहिं देखि रजायसु पाई ❀ निज निज भवन चले सिर नाई
प्रेमु प्रमोदु बिनोदु बड़ाई ❀ समउ समाजु मनोहरताई

रामचन्द्रजी को देखकर, आज्ञा पाकर और सिर नवाकर वे अपने-अपने घर को चले। उस समय के प्रेम, आनन्द, विनोद, बड़ाई, समय, समाज और मनोहरता को,

कहि न सकहिं सत सारद सेसू ❀ बेद बिरञ्चि महेस गनेसू
सो मैं कहउँ कवन बिधि बरनी ❀ भूमिनाग[1] सिर धरइ कि धरनी

सैंकड़ों सरस्वती, शेष, वेद, ब्रह्मा, शिव और गणेशजी भी नहीं कह सकते। उसको मैं किस तरह बखानकर कह सकता हूँ ? कहीं केंचुआ भी धरती को सिर पर ले सकता है ?

नृप सब भाँति सबहिं सनमानी ❀ कहि मृदु बचन बोलाईं रानी
बधू लरिकिनी पर घर आईं ❀ राखेहु नयन पलक की नाईं[2]

राजा ने सबका सब प्रकार से सम्मान करके, कोमल वचन कहकर रानियों को बुलाया और कहा—बहुएं अभी बच्ची हैं, पराये घर आई हैं; इनको नेत्र और पलक की भाँति रखना।

दो०—**लरिका स्रमित उनीद बस सयन करावहु जाइ।**
अस कहि गे बिस्राम गृहँ राम चरन चितु लाइ।३५५।

लड़के थके हुए नींद के वश हो रहे हैं, इन्हें ले जाकर शयन कराओ। ऐसा कहकर राजा राम के चरणों में मन लगाकर विश्राम-भवन में चले गये।

---

१. केंचुवा। २. तरह।

भूप बचन सुनि सहज सुहाये ❀ जटित कनक मनि पलँग डसाये
सुभग सुरभि पय फेन समाना ❀ कोमल कलित सुपेतीं नाना

स्वभाव ही से राजा के सुहावने वचन सुनकर रानियों ने मणियों से जड़े सुवर्ण के पलङ्ग बिछवाए। गाय के दूध के फेन के समान सुन्दर कोमल नाना प्रकार की सुपेतियाँ (पतली और मुलायम रजाइयाँ), तथा

उपबरहन[1] बर बरनि न जाहीं ❀ स्रग[2] सुगन्ध मनि मन्दिर माहीं
रतन दीप सुठि चारु चँदोवा ❀ कहत न बनइ जान जेहि जोवा

उत्तम तकियों का वर्णन नहीं किया जा सकता। मणियों के मन्दिर में फूलों की मालायें और सुगन्ध द्रव्य सजे हैं। रत्न के दीपकों और सुन्दर चँदोवे की शोभा कहते नहीं बनती। जिसने देखा है, वही जान सकता है।

सेज रुचिर रचि रामु उठाये ❀ प्रेम समेत पलँग पौढ़ाये
अग्या पुनि पुनि भाइन्ह दीन्ही ❀ निज निज सेज सयन तिन्ह कीन्ही

सुन्दर सेज सजाकर राम को उठाया गया और प्रीति के साथ पलँग पर पौढ़ाया गया। रामचन्द्रजी ने बार-बार भाइयों को आज्ञा दी, तब वे भी अपनी-अपनी पलँगों पर सोये।

देखि स्याम मृदु मञ्जुल गाता ❀ कहहिं सप्रेम बचन सब माता
मारग जात भयावनि भारी ❀ केहि बिधि तात ताड़का मारी

रामचन्द्रजी के सुन्दर श्यामल कोमल अंगों को देखकर सब मातायें प्रेम से वचन कह रही हैं—हे तात! मार्ग में जाते हुए तुमने बड़ी भयावनी ताड़का राक्षसी को कैसे मारा?

दो० घोर निसाचर बिकट भट समर गनहिं नहिं काहु।
मारे सहित सहाय किमि खल मारीच सुबाहु।३५६।

भयङ्कर राक्षस, जो विकट योद्धा थे और जो युद्ध में किसी को कुछ गिनते ही नहीं, उन दुष्ट मारीच और सुबाहु को उनके सहायकों-सहित तुमने कैसे मारा?

मुनि प्रसाद बलि तात तुम्हारी ❀ ईस अनेक करवरें[3] टारी
मख रखवारी करि दोउ भाई ❀ गुर प्रसाद सब बिद्या पाई

---

१. तकिया। २. माला। ३. बलायें, मुसीबतें।

हे तात! मैं तुम्हारी बलि जाती हूँ; मुनि की कृपा से ईश्वर ने बहुत-सी बलाओं को टाल दिया। दोनों भाइयों ने यज्ञ की रखवाली करके गुरुजी के प्रसाद से सब विद्यायें प्राप्त कीं।

मुनि तिय तरी लगत पग धूरी ❀ कीरति रही भुवन भरि पूरी
कमठ पीठि पबि कूट कठोरा ❀ नृप समाज महुँ सिव धनु तोरा

तुम्हारे चरणों की धूलि लगने से मुनि की स्त्री अहल्या तर गई। यह कीर्ति विश्व-भर में पूर्ण रीति से भर रही है। कछुए की पीठ, बज्र और पर्वत से भी कठोर शिवजी के धनुष को राज-समाज में तुमने तोड़ दिया,

बिस्व बिजय जसु जानकि पाई ❀ आये भवन ब्याहि सब भाई
सकल अमानुष करम तुम्हारे ❀ केवल कौसिक कृपाँ सुधारे

विश्व-विजय करने की कीर्त्ति और जानकी को तुमने पाया और सब भाइयों को ब्याहकर घर आये। तुम्हारे सभी कर्म मनुष्य की शक्ति के बाहर के हैं। केवल विश्वामित्रजी की कृपा ने यह सब किया है।

आजु सुफल जग जनमु हमारा ❀ देखि तात बिधु बदन तुम्हारा
जे दिन गये तुम्हहिं बिनु देखें ❀ ते बिरञ्चि जनि पारहिं[1] लेखें

हे पुत्र! तुम्हारा चन्द्र-मुख देखकर आज हमारा संसार में जन्म लेना सफल हुआ। जो दिन तुमको बिना देखे बीते हैं, ब्रह्मा उनको गिनती में न लायें, (हमारी आयु में न जोड़ें)।

दो०- राम प्रतोषीं मातु सब कहि बिनीत बर बैन।
सुमिरि सम्भु गुर बिप्र पद किये नींद बस नैन॥३५७

रामचन्द्रजी ने विनययुक्त श्रेष्ठ वचन कहकर सब माताओं को सन्तुष्ट किया। फिर शिव, गुरु और ब्राह्मण के चरणों का स्मरण कर नेत्रों को नींद के वश किया।

नींदहु बदन सोह सुठि लोना[2] ❀ मनहुँ साँझ सरसीरुह सोना[3]
घर घर करहिं जागरन नारीं ❀ देहिं परसपर मङ्गल गारीं

नींद में भी उनका लावण्यमय मुख ऐसा सुन्दर लगता है, मानो सन्ध्या

---

१. डालें, लायें। २. सुन्दर। ३. लाल।

के समय लाल कमल। घर-घर में स्त्रियाँ जागरण कर रही हैं और एक दूसरी को मंगलमयी गालियाँ दे रही हैं।

पुरी बिराजति राजति रजनी ❀ रानीं कहहिं बिलोकहु सजनी
सुन्दर बधुन्ह सासु लेइ सोई ❀ फनिकन्ह जनु सिर मनि उर गोई

रानी कहती हैं—हे सजनी! देखो, रात कैसी शोभा दे रही है; उसमें अयोध्यापुरी बहुत ही सुहावनी लगती है। सुन्दर बहुओं को लेकर सासुयें सोई हैं। मानो सर्पों ने अपने सिर की मणियों को हृदय में छिपा लिया है।

प्रात पुनीत काल प्रभु जागे ❀ अरुनचूड़[1] बर बोलन लागे
बन्दि मागधन्हि गुनगन गाये ❀ पुरजन द्वार जोहारन आये

सवेरे पवित्र ब्राह्म-मुहूर्त में प्रभु जागे। मुर्गे सुन्दर बोलने लगे। बन्दीजन और मागध गुणावली गाने लगे तथा नगर के लोग फाटक पर प्रणाम करने को आये।

बन्दि बिप्र सुर गुर पितु माता ❀ पाइ असीस मुदित सब भ्राता
जननिन्ह सादर बदन निहारे ❀ भूपति सङ्ग द्वार पगु धारे

ब्राह्मणों, देवताओं, गुरु, पिता और माताओं को प्रणाम कर आशीर्वाद पाकर सब भाई प्रसन्न हुए। माताओं ने आदर से उनके मुख देखे। फिर वे राजा के साथ दरवाजे पर पधारे।

दो०— कीन्हि सौच सब सहज सुचि सरित पुनीत नहाइ।
प्रातक्रिया करि तात पहिं आये चारिउ भाइ॥३५८॥

स्वभाव ही से पवित्र चारों भाइयों ने सब शौच से निवृत्त होकर पवित्र नदी (सरयू) में स्नान किया और प्रातः क्रिया करके वे पिता के पास आये।

भूप बिलोकि लिये उर लाई ❀ बैठे हरषि रजायसु पाई
देखि रामु सब सभा जुड़ानी ❀ लोचन लाभ अवधि अनुमानी

राजा ने उन्हें देखते ही हृदय से लगा लिया। वे पिता की आज्ञा पाकर प्रसन्न होकर बैठ गये। रामचन्द्रजी को देखकर और नेत्रों के लाभ की बस यही सीमा है, ऐसा अनुमान कर सारी सभा शीतल हो गई।

---

१. मुर्गा।

पुनि बसिष्टु मुनि कौसिकु आये ❀ सुभग आसनन्हि मुनि बैठाये
सुतन्ह समेत पूजि पद लागे ❀ निरखि राम दोउ गुर अनुरागे

फिर वशिष्ठ और विश्वामित्र ऋषि आये। राजा ने उन्हें सुन्दर आसनों पर बैठाया। पुत्रों-समेत राजा ने उनकी पूजा करके उनके पाँव छुए। दोनों गुरु राम को देखकर प्रेम में मुग्ध हो गये।

कहहिं बसिष्ठु धरम इतिहासा ❀ सुनहिं महीपु सहित रनिवासा
मुनि मन अगम गाधिसुत करनी ❀ मुदित बसिष्ठ बिपुल बिधि बरनी

वशिष्ठजी धार्मिक इतिहास कह रहे हैं और महाराज रनिवास-सहित सुन रहे हैं। विश्वामित्रजी के कृत्य को, जो मुनियों के मन को भी अगम्य है, वशिष्ठजी ने आनन्दित होकर बहुत प्रकार से वर्णन किया।

बोले बामदेव सब साँची ❀ कीरति कलित[1] लोक तिहुँ माँची
सुनि आनंद भयउ सब काहू ❀ राम लखन उर अधिक उछाहू

वामदेवजी ने कहा—हाँ, ये सब बातें सत्य हैं, विश्वामित्रजी की सुन्दर कीर्ति तीनों लोकों में छाई हुई है। यह सुनकर सभी को आनन्द हुआ। राम-लक्ष्मण के हृदय में विशेष आनन्द आया।

दो॰ मंगल मोद उछाह नित जाहिं दवस एहि भाँति।
उमगी अवध अनंद भरि अधिक अधिक अधिकाति॥

नित्य ही मंगल, आनन्द और उत्सव होते हैं। इस तरह आनन्द में दिन बीतते जाते हैं। अयोध्यापुरी आनन्द से भरकर उमड़ पड़ी। आनन्द की अधिकता अधिक-अधिक बढ़ती ही जा रही है।

सुदिन सोधि कल कंकन छोरे ❀ मंगल मोद बिनोद न थोरे
नित नव सुखु सुर देखि सिहाहीं ❀ अवध जनम जाचहिं बिधि पाहीं

अच्छा दिन (शुभ मुहूर्त्त) शोधकर सुन्दर कङ्कण खोले गये। तब भी मंगल, आनन्द और विनोद कम नहीं हुये। ऐसे नित्य नये सुखों को देख-देख कर देवगण सिहाते हैं और ब्रह्मा से अयोध्या में जन्म पाने के लिये प्रार्थना करते हैं।

---

१. सुन्दर।

बिस्वामित्रु चलन नित चहहीं ❀ राम सनेह बिनय बस रहहीं
दिन दिन सयगुन भूपति भाऊ ❀ देखि सराह महा मुनिराऊ

विश्वामित्रजी नित्य ही चलना चाहते हैं, पर राम के स्नेह और विनय-वश रह जाते हैं। दिन पर दिन राजा का सौगुना भाव देखकर महामुनि विश्वामित्रजी उनकी सराहना करते हैं।

माँगत बिदा राउ अनुरागे ❀ सुतन्ह समेत ठाढ़ भये आगे
नाथ सकल संपदा तुम्हारी ❀ मैं सेवकु समेत सुत नारी

अन्त में जब मुनि ने विदा माँगी, तब राजा दशरथ प्रेम में मुग्ध हो गये और पुत्रों को साथ लेकर आगे खड़े हो गये। वे बोले—हे नाथ! यह सारी सम्पदा आप ही की है; मैं स्त्री और पुत्रों-सहित आपका सेवक हूँ।

करबि[1] सदा लरिकन्ह पर छोहू ❀ दरसनु देत रहब मुनि मोहू
अस कहि राउ सहित सुत रानी ❀ परेउ चरन मुख आव न बानी

हे मुनि! लड़कों पर सदा स्नेह करते रहियेगा और मुझे भी दर्शन देते रहियेगा। ऐसा कहकर पुत्रों और रानियों-समेत राजा दशरथ विश्वामित्रजी के चरणों पर गिर पड़े। (प्रेम के मारे) उनके मुँह से बात नहीं निकलती थी।

दीन्हि असीस बिप्र बहु भाँती ❀ चले न प्रीति रीति कहि जाती
राम सप्रेम सङ्ग सब भाई ❀ आयसु पाइ फिरे पहुँचाई

ब्राह्मण विश्वामित्रजी ने बहुत प्रकार से आशीर्वाद दिये और वे चल पड़े। उस समय की प्रीति की रीति कही नहीं जा सकती। रामचन्द्रजी भाइयों को साथ लेकर प्रेम के साथ उनको पहुँचाने गये और आज्ञा पाकर लौट आये।

दो॰ राम रूप भूपति भगति ब्याह उछाह अनन्द।
जात सराहत मनहिं मन मुदित गाधि कुल चन्द

गाधि कुल के चन्द्रमा विश्वामित्रजी बड़े हर्ष के साथ रामचन्द्रजी के रूप, महाराज दशरथ की भक्ति और चारों भाइयों के उत्सव और आनन्द को मन ही मन सराहते जाते हैं।

बामदेव रघुकुल गुर ज्ञानी ❀ बहुरि गाधिसुत कथा बखानी
सुनि मुनि सुजस मनहिं मन राऊ ❀ बरनत आपन पुण्य प्रभाऊ

१. करना, कीजियेगा।

वामदेव और रघुकुल के गुरु ज्ञानी वशिष्ठजी ने फिर विश्वामित्रजी की कथा बखानकर कही। उनकी सुन्दर कीर्त्ति सुनकर महाराज मन ही मन अपने पुण्य का प्रभाव बखान करने लगे।

बहुरे लोग रजायसु भयऊ ❀ सुतन्ह समेत नृपति गृहँ गयऊ
जहँ तहँ राम ब्याहु सबु गावा ❀ सुजस पुनीत लोक तिहुँ छावा

आज्ञा हुई तब सब लोग अपने-अपने घरों को लौटे। राजा दशरथ भी पुत्रों-समेत महल में गये। जहाँ-तहाँ सब रामचन्द्रजी के विवाहोत्सव की कथायें गा रहे हैं। रामचन्द्रजी का पवित्र सुयश तीनों लोकों में छा गया है।

आये ब्याहि रामु घर जब तें ❀ बसे अनन्द अवध सब तब तें
प्रभु बिबाहँ जस भयउ उछाहू ❀ सकहिं न बरनि गिरा अहिनाहू[1]

जब से रामचन्द्रजी विवाह करके घर आये, तब से सब प्रकार के आनन्द अयोध्या में आकर बस गये। प्रभु के विवाह में जैसा समारोह हुआ, उसे सरस्वती और शेषजी भी नहीं कह सकते।

कबि कुल जीवनु पावनि जानी ❀ राम सीय जसु मंगल खानी
तेहि तें मैं कछु कहा बखानी ❀ करन पुनीत हेतु निज बानी

सीताराम के यश को कविकुल के जीवन को पवित्र करने वाला और मंगलों की खान जानकर इससे अपनी वाणी को पवित्र करने के लिये मैंने कुछ थोड़ा-सा बखानकर कहा है।

छंद–निज गिरा पावनि करन कारन राम जसु तुलसी कह्यो।
रघुबीर चरित अपार बारिधि पार कबि कौनें लह्यो॥
उपबीत ब्याह उछाह मंगल सुनि जे सादर गावहीं।
बैदेहि राम प्रसाद तें जन सर्बदा सुखु पावहीं॥

अपनी वाणी को पवित्र करने के लिये तुलसी ने राम का यश कहा है। रघुनाथजी का चरित्र अपार समुद्र है, किस कवि ने उसका पार पाया है? जो लोग यज्ञोपवीत, विवाह के मंगलमय उत्सवों को आदर के साथ सुनकर गायेंगे, वे सीता और रामजी की कृपा से सदा सुख पायेंगे।

---

१. शेष नाग।

सो॰ सिय रघुबीर बिबाहु जे सप्रेम गावहिं सुनहिं ।
तिन कहुँ सदा उछाहु मंगलायतन[1] राम जसु ।३६१।

सीता और रामचन्द्रजी के विवाह को जो प्रेम के साथ गायेंगे और सुनेंगे, उनको सदा आनन्द है, क्योंकि राम का यश मंगल का धाम है।

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने
प्रथमः सोपानः समाप्तः

कलियुग के समस्त पापों को विध्वंस करने वाले श्रीमद्रामचरितमानस का यह पहला सोपान समाप्त हुआ।

(बाल-कांड समाप्त)



१. मंगलों का धाम।

श्रीगणेशाय नमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

रा म च रि त मा न स

द्वितीय सोपान

अयोध्या-कांड

श्लोकाः

यस्यांके च बिभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके ।
भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि ब्यालराट् ॥
सोऽयं भूतिविभूषणः सुरवरः सर्वाधिपः सर्वदा ।
शर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः श्रीशङ्करः पातु माम् ॥१॥

जिनकी गोद में हिमाचल-कन्या पार्वतीजी, मस्तक पर गङ्गाजी, ललाट पर द्वितीया का चन्द्रमा, कंठ में हलाहल विष और छाती पर सर्पराज शेष सुशोभित हैं, वे भस्म से विभूषित, देवताओं में श्रेष्ठ, सदा सब के स्वामी, कल्याणरूप, सर्वव्यापक और चन्द्रमा के समान कान्ति वाले श्रीशिवजी मेरी रक्षा करें !

प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवासदुःखतः ।
मुखाम्बुजश्री रघुनन्दनस्य मे सदाऽस्तु सा मञ्जुलमङ्गलप्रदा

रघुकुल को आनंद देने वाले श्रीरामचन्द्रजी के मुखरूपी कमल की जो शोभा राज्याभिषेक (की बात) से न तो प्रसन्नता को प्राप्त हुई और न वनवास के दुःख से मलिन ही हुई, वह मेरे लिये सदा सुन्दर मङ्गल की देने वाली हो।

नीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्गं सीतासमारोपितवामभागम् ।
पाणौ महासायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम् ॥३॥

नीले कमल के समान श्याम और कोमल जिनके अंग हैं, श्री सीताजी जिनके वाम भाग में विराजमान हैं और जिनके हाथों में अमोघ बाण और सुंदर धनुष हैं, उन रघुवंश के स्वामी श्रीरामचन्द्रजी को मैं नमस्कार करता हूँ।

दो॰ श्रीगुरु चरन सरोज रज निज मनु मुकुरु[1] सुधारि।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु जो दायकु फल चारि॥

श्रीगुरुजी के चरण-कमलों की रज से अपने मनरूपी दर्पण को साफ़ करके मैं रामचन्द्रजी के उस निर्मल यश का वर्णन करता हूँ, जो चारों फलों (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) का देने वाला है।

जब तें रामु ब्याहि घर आए ❀ नित नव मङ्गल मोद बधाए
भुवन चारिदस भूधर भारी ❀ सुकृत मेघ बरषहिं सुख बारी

जब से रामचन्द्रजी विवाह करके घर आये, तब से नित्य नये मङ्गल हो रहे हैं और आनन्द के बधावे बज रहे हैं। चौदहों लोकरूपी बड़े-भारी पर्वतों पर पुण्यरूपी मेघ सुखरूपी जल बरसा रहे हैं।

रिधि सिधि संपति नदी सुहाई ❀ उमगि अवध अम्बुधि कहँ आई
मनि गन पुर नर नारि सुजाती ❀ सुचि अमोल सुंदर सब भाँती

ऋद्धि-सिद्धि और सम्पत्तिरूपी सुन्दर नदियाँ उमड़-उमड़कर अयोध्यारूपी समुद्र में आ मिलीं। नगर के स्त्री-पुरुष ही अच्छी जाति के मणियों के समूह हैं, जो सब प्रकार से पवित्र, अमोल और सुन्दर हैं।

कहि न जाइ कछु नगर बिभूती ❀ जनु एतनिअ बिरंचि करतूती
सब बिधि सब पुर लोग सुखारी ❀ रामचन्द मुख चंदु निहारी[2]

नगर का वैभव (ऐश्वर्य) कुछ कहा नहीं जाता। ऐसा जान पड़ता है कि मानो ब्रह्मा की कारीगरी बस इतनी ही है। श्रीरामचन्द्रजी के मुखरूपी चन्द्रमा को देखकर सब नगर-निवासी सब तरह से सुखी हैं।

मुदित मातु सब सखीं सहेली ❀ फलित बिलोकि मनोरथ बेली[3]
राम रूपु गुन सीलु सुभाऊ ❀ प्रमुदित होइ देखि सुनि राऊ

सब मातायें और सखी-सहेलियाँ अपनी मनोरथरूपी लता को फली हुई देखकर आनन्दित हैं। श्रीरामचन्द्रजी के रूप, गुण, शील और स्वभाव को देख

१. दर्पण। २. देखकर। ३. लता।

और सुनकर राजा दशरथ बहुत ही आनन्दित होते हैं।

दो० **सब के उर अभिलाषु अस कहहिं मनाइ महेसु।**
आपु अछत जुबराज पद रामहिं देउ नरेसु ॥१॥

सभी लोगों के हृदयों में ऐसी अभिलाषा है और वे महादेवजी को मनाकर कहते हैं कि राजा अपने जीतेजी रामचन्द्रजी को युवराज-पद दें।

एक समय सब सहित समाजा ❀ राजसभाँ रघुराजु बिराजा
सकल सुकृत मूरति नरनाहू ❀ राम सुजसु सुनि अतिहि उछाहू

एक समय रघुकुल के राजा दशरथजी अपने सारे समाज सहित राजसभा में विराजमान थे। महाराज सम्पूर्ण पुण्यों की मूर्त्ति हैं, उनको रामचन्द्रजी की सुकीर्त्ति सुनकर अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है।

नृप सब रहहिं कृपा अभिलाषे ❀ लोकप करहिं प्रीति रुख राखें
त्रिभुवन तीनि काल जग माहीं ❀ भूरि भाग दसरथ सम नाहीं

सब राजा लोग महाराज दशरथ की कृपा की लालसा रखते हैं और लोकपालगण उनके रुख को देखते हुये प्रीति करते हैं। तीनों भुवनों (पृथ्वी, आकाश, पाताल) में और (भूत, भविष्य, वर्तमान) तीनों कालों में दशरथजी के समान भाग्यवान् और कोई नहीं है।

मङ्गल मूल रामु सुत जासू ❀ जो कछु कहिय थोर सबु तासू
राय सुभायँ मुकुरु कर लीन्हा ❀ बदनु[1] बिलोकि मुकुट सम कीन्हा

मंगलों के मूल रामचन्द्रजी जिनके पुत्र हैं, उनके लिये जो कुछ कहा जाय, सभी थोड़ा है। महाराज ने स्वाभाविक ही हाथ में दर्पण ले लिया और उसमें अपना मुंह देखकर मुकुट को सीधा किया।

स्रवन समीप भए सित[2] केसा ❀ मनहुँ जरठपनु अस उपदेसा
नृप जुबराजु राम कहुँ देहू ❀ जीवन जनम लाहु किन लेहू

कानों के पास बाल सफ़ेद हो गये हैं। मानो बुढ़ापा ऐसा उपदेश दे रहा है कि हे राजन्! रामचन्द्रजी को युवराज-पद देकर अपने जीवन और जन्म का लाभ क्यों नहीं लेते?

---

१. मुख। २. सफेद।

दो॰—यह बिचारु उर आनि नृप सुदिन सुअवसरु पाइ।
प्रेम पुलकि तन मुदित मन गुरहिं सुनायेउ जाइ॥२॥

हृदय में इस विचार को लाकर शुभ दिन और सुन्दर समय पाकर, प्रेम से पुलकित शरीर हो आनंदित मन से राजा दशरथ ने उसे गुरु वशिष्ठजी को जा सुनाया।

कहइ भुआल सुनिअ मुनिनायक ❁ भए राम सब बिधि सब लायक
सेवक सचिव सकल पुरबासी ❁ जे हमरे अरि मित्र उदासी

राजा ने कहा—हे मुनिराज! सुनिए। अब रामचन्द्र सब तरह से सब लायक हो गये हैं। सेवक, मंत्री, सब नगर-निवासी और जो हमारे शत्रु-मित्र या उदासीन (तटस्थ) हैं,

सबहिं राम प्रिय जेहि बिधि मोही ❁ प्रभु असीस जनु तनु धरि सोही
बिप्र सहित परिवार गोसाईं ❁ करहिं छोहु सब रौरिहिं[1] नाईं

सभी को रामचन्द्र वैसे ही प्यारे हैं, जैसे मुझको हैं। आपका आशीर्वाद ही मानो शरीर धारण करके शोभित हो रहा है। हे स्वामी! सभी ब्राह्मण कुटुम्ब-समेत आपही के समान उन पर प्रेम करते हैं।

जे गुरु चरन रेनु सिर धरहीं ❁ ते जनु सकल बिभव बस करहीं
मोहि सम यहु अनुभयउ न दूजें ❁ सबु पायउँ रज पावनि पूजें

जो लोग गुरु के चरणों की रज को मस्तक पर धारण करते हैं, वे मानो सम्पूर्ण ऐश्वर्य को अपने वश में कर लेते हैं। मेरे समान और किसी ने इसका अनुभव नहीं किया। मैंने आपके पवित्र चरण-रज की पूजा करके सब कुछ पा लिया।

अब अभिलाषु एकु मन मोरें ❁ पूजिहि नाथ अनुग्रह तोरें
मुनि प्रसन्न लखि सहज सनेहू ❁ कहेउ नरेस रजायसु देहू

हे नाथ! अब मेरे मन में एक ही अभिलाषा है। वह भी आप ही के अनुग्रह से पूरी होगी। महाराज का स्वाभाविक प्रेम देखकर मुनि ने प्रसन्न होकर कहा—राजन्! आज्ञा दीजिये, क्या अभिलाषा है?

१. आपही की।

दो०— राजन राउर नामु जसु सब अभिमत दातार[1]।
फल अनुगामी महिप मनि मन अभिलाषु तुम्हार ॥३

हे राजन् ! आपका नाम और यश सारे मनोरथों को पूरा करने वाला है। हे राजाओं में मणि ! आपके मन की अभिलाषा फल के पीछे-पीछे चलती है। अर्थात् इच्छा करने से पहले ही फल प्राप्त हो जाता है। [अत्यंतातिशयोक्ति अलंकार]

सब बिधि गुरु प्रसन्न जियँ जानी ❀ बोलेउ राउ रहँसि[2] मृदु बानी
नाथ रामु करिअहि जुबराजू ❀ कहिअ कृपा करि करिय समाजू

अपने जी में गुरुजी को सब तरह से प्रसन्न जानकर, आनन्द में भरकर, कोमल वाणी से राजा ने कहा—हे नाथ ! रामचन्द्र को युवराज कीजिये। कृपा करके आज्ञा दीजिये, तो तैयारी की जाय।

मोहि अछत यहु होइ उछाहू ❀ लहहिं लोग सब लोचन लाहू
प्रभु प्रसाद सिव सबइ निबाहीं ❀ एह लालसा एक मन माहीं

मेरे जीतेजी यह आनन्द-उत्सव हो जाय और सब लोग अपने नेत्रों का लाभ पायें। आपकी कृपा से शिवजी ने और तो सब निबाह दिया; बस, अब यही एक लालसा मन में और रह गई है।

पुनि न सोच तनु रहउ कि जाऊ ❀ जेहिं न होय पाछें पछिताऊ
सुनि मुनि दसरथ बचन सुहाये ❀ मङ्गल मोद मूल मन भाये

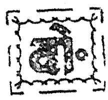
फिर सोच नहीं, शरीर रहे या चला जाय; और जिससे फिर पीछे पछतावा न हो। दशरथजी के आनन्द और मंगल के मूल सुन्दर वचन मुनि को बहुत प्रिय लगे।

सुनु नृप जासु बिमुख पछिताहीं ❀ जासु भजन बिनु जरनि न जाहीं
भयउ तुम्हार तनय सोइ स्वामी ❀ रामु पुनीत प्रेम अनुगामी

(गुरुजी ने कहा—) हे राजन् ! सुनिये, जिससे विमुख होकर लोग पछताते हैं और जिसके भजन बिना जी की जलन नहीं जाती, जो पवित्र प्रेम के पीछे चलने वाले हैं, वे ही स्वामी राम आपके पुत्र हुये हैं।

---

१. देने वाला। २. आनन्दित होकर।



बेगि बिलम्बु न करिअ नृप साजिअ सबुइ समाजु।
सुदिनु सुमङ्गलु तबहिं जब रामु होहिं जुबराजु ॥४॥

हे राजन् ! अब देर न कीजिये। जल्दी ही सब तैयारी कीजिए। शुभ दिन और सुन्दर मङ्गलाचार तभी है जब रामचन्द्र युवराज हो जायँ।

मुदित महीपति मन्दिर आये ❀ सेवक सचिव सुमन्त्रु बोलाये
कहि जयजीव सीस तिन्ह नाये ❀ भूप सुमङ्गल बचन सुनाये

राजा आनन्दित होकर महल में आये और उन्होंने सेवकों तथा मन्त्री सुमंत्र को बुलवाया। उन्होंने 'जयजीव' कहकर सिर नवाये। फिर राजा ने उत्तम मंगलमय वचन उन्हें सुनाये।

प्रमुदित मोहि कहेउ गुर आजू ❀ रामहिं राय देहु जुबराजू
जौं पाँचहि[1] मत लागइ नीका ❀ करहु हरषि हिय रामहिं टीका[2]

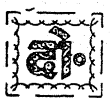
हे मंत्री ! आज गुरुजी ने प्रसन्न-चित्त से मुझे आज्ञा दी है कि हे राजन् ! आप रामचन्द्रजी को युवराज-पद दें। जो यह मत पंचों को अच्छा लगे, तो प्रसन्न हृदय से आप लोग रामचन्द्र का राजतिलक कीजिये।

मन्त्री मुदित सुनत प्रिय बानी ❀ अभिमत बिरवँ[3] परेउ जनु पानी
बिनती सचिव करहिं कर जोरी ❀ जिअहु जगतपति बरिस करोरी[4]

इस प्रिय वाणी को सुनकर मन्त्री ऐसे आनन्दित हुए, मानो मनोरथरूपी पौधे पर जल पड़ गया हो। मन्त्री लोग हाथ जोड़कर विनती करते हैं कि हे जगत्पति ! आप करोड़ों वर्ष जियें।

जग मङ्गल भल काजु बिचारा ❀ बेगिअ नाथ न लाइअ बारा[5]
नृपहिं मोदु सुनि सचिव सुभाखा ❀ बढ़त बौंड़[6] जनु लही सुसाखा

आपने जगत् का कल्याण करने वाला भला काम सोचा है। हे नाथ ! जल्दी कीजिये, देर न लगाइये। मंत्रियों की सुन्दर वाणी सुनकर राजा को ऐसा आनन्द हुआ मानो बढ़ती हुई लता सुन्दर टहनियों से सज्जित हो गई।



कहेउ भूप मुनिराज कर जोइ जोइ आयसु होइ।
राम राज अभिषेक हित बेगि करहु सोइ सोइ ॥५॥

---

१. पंचों को। २. राजतिलक। ३. पौधा। ४. करोड़। ५. देरी। ६. लता, बेल।

राजा ने कहा—रामचन्द्र के राज्याभिषेक के लिये मुनिराज वशिष्ठजी की जो-जो आज्ञा हो, आप लोग वही सब तुरंत करें।

हरषि मुनीस कहेउ मृदु बानी ❀ आनहु सकल सुतीरथ पानी
औषध मूल फूल फल पाना ❀ कहे नाम गनि मङ्गल नाना

मुनि ने प्रसन्न होकर कोमल वाणी से कहा कि सब श्रेष्ठ तीर्थों का जल ले आओ। फिर उन्होंने नाम गिनाकर मंगलमय अनेक औषधियाँ, मूल, फूल, फल और पत्र आदि वस्तुओं के नाम गिनकर बताये।

चामर चरम बसन बहु भाँती ❀ रोम पाट[1] पट अगनित जाती
मनिगन मंगल वस्तु अनेका ❀ जो जग जोगु भूप अभिषेका

चँवर, मृगचर्म, बहुत तरह के वस्त्र, अगणित किस्मों के ऊनी और रेशमी कपड़े, मणियाँ तथा और भी बहुत-सी मंगल की चीज़ें, संसार में जो-जो चीज़ें राज्याभिषेक के योग्य होती हैं, (उन सबको इकट्ठा करने की उन्होंने आज्ञा दी।)

बेद बिदित कहि सकल बिधाना ❀ कहेउ रचहु पुर बिबिध बिताना
सफल रसाल पूगफल केरा ❀ रोपहु बीथिन्ह पुर चहुँ फेरा

मुनि ने वेदों में कहा हुआ सब विधान बताकर कहा—नगर में बहुत-से मण्डप बनवाओ। फलों-समेत आम, सुपारी और केले के पेड़ नगर की गलियों में चारों ओर रोप दो (लगाओ)।

रचहु मंजु मनि चौकइ चारू ❀ कहहु बनावन बेगि बजारू
पूजहु गनपति गुर कुल देवा ❀ सब बिधि करहु भूमिसुर[2] सेवा

सुन्दर मणियों के मनोहर चौक पुरवाओ और बाज़ार को जल्दी सजाने के लिये कह दो। श्रीगणेशजी, गुरु और कुलदेवता की पूजा करो और ब्राह्मणों की सब प्रकार से सेवा करो।

दो॰ ध्वज पताक तोरन कलस सजहु तुरग रथ नाग।
सिर धरि मुनिबर बचन सबु निज निज काजहिं लाग।

ध्वजा, पताका, बन्दनवार, कलश, घोड़े, रथ और हाथी सबको सजाओ। मुनिवर की आज्ञा को शिरोधार्य करके सब लोग अपने-अपने काम में लग गये।

---

१. रेशम। २. ब्राह्मण।

जो मुनीस जेहि आयसु दीन्हा ❀ सो तेहिं काजु प्रथम जनु कीन्हा
बिप्र साधु सुर पूजत राजा ❀ करत राम हित मङ्गल काजा

मुनि ने जिसको जिस काम के करने की आज्ञा दी, उसने वह काम (इतनी जल्दी किया कि) मानो वह पहले ही कर रक्खा था। राजा ब्राह्मण, साधु और देवताओं को पूज रहे हैं और रामचन्द्र के हित के लिये मंगल-कार्य कर रहे हैं।

सुनत राम अभिषेक सुहावा ❀ बाज गहागह अवध बधावा
राम सीय तन सगुन जनाए ❀ फरकहिं मङ्गल अङ्ग सुहाए

रामचन्द्रजी के राज्याभिषेक की सुहावनी खबर सुनते ही सारी अयोध्या भर में धूम-धाम से बधावे बजने लगे। रामचन्द्र और सीता के शरीर में भी शुभ शकुन प्रकट हुये। उनके सुन्दर मंगल अंग फड़कने लगे।

पुलकि सप्रेम परसपर कहहीं ❀ भरत आगमनु सूचक अहहीं
भए बहुत दिन अति अवसेरी[1] ❀ सगुन प्रतीति भेंट प्रिय केरी

पुलकायमान होकर वे दोनों प्रेम सहित आपस में कहने लगे—ये सब शकुन भरत के आने की सूचना देने वाले हैं। उनको (मामा के घर) गये बहुत दिन हो गये; मिलने की बड़ी उत्कंठा है। इसलिये इन शकुनों से प्रिय के मिलने का विश्वास हो रहा है।

भरत सरिस प्रिय को जग माहीं ❀ इहइ सगुन फलु दूसर नाहीं
रामहिं बन्धु सोच दिन राती ❀ अंडन्हि कमठ हृदउ जेहि भाँती

जगत् में भरत के समान हमें कौन प्यारा है? शकुनों का यही फल है, दूसरा नहीं। रामचन्द्रजी को अपने भाई भरत का रात-दिन ऐसा सोच रहता है, जैसा कछुए के हृदय को अंडों की चिंता रहती है। (कहा जाता है कि कछुआ अपने अंडों को दूर रखकर हृदय की तरंगों से सेता है।)

दो॰ एहि अवसर मंगलु परम सुनि रहँसेउ[2] रनिवासु।
सोभत लखि बिधु बढ़त जनु बारिधि बीचि[3] बिलासु ७

इस अवसर पर इस परम मंगल समाचार को सुनकर सारा रनिवास इस तरह हर्षित हो उठा, जैसे चन्द्रमा को देखकर समुद्र में लहरों का विलास

१. चिंता, उत्कंठा, प्रतीक्षा। २. हर्षित हुआ। ३. लहर।

(आनन्द) सुशोभित होता है। [उक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार]

प्रथम जाइ जिन्ह बचन सुनाए ❀ भूषन बसन भूरि तिन्ह पाए
प्रेम पुलकि तन मन अनुरागीं ❀ मङ्गल कलस सजन सब लागीं

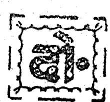
जिन्होंने रनिवास में जाकर यह समाचार सबसे पहले सुनाये, उन्होंने बहुत-से भूषण और वस्त्र पाये। रानियों का शरीर प्रेम से पुलकित हो उठा, उनका मन प्रेम-मग्न हो गया, वे सब मंगल-कलश सजाने लगीं।

चौकइँ चारु सुमित्रा पूरीं ❀ मनिमय बिबिध भाँति अति रूरी
आनँद मगन राम महतारी ❀ दिये दान बहु बिप्र हँकारी

सुमित्रा ने अनेकों तरह की मनोहर मणियों की अत्यंत सुन्दर चौकें पूरीं। रामचन्द्र की माता कौशल्या आनन्द में मग्न हैं, उन्होंने ब्राह्मणों को बुलाकर बहुत दान दिये।

पूजीं ग्राम देबि सुर नागा ❀ कहेउ बहोरि देन बलि भागा
जेहि बिधि होइ राम कल्यानू ❀ देहु दया करि सो बरदानू
गावहिं मंगल कोकिल बयनी ❀ बिधुबदनी मृग सावक नयनी

फिर गाँव के देवी-देवताओं और नागों की पूजा की और (फिर कार्य सिद्ध हो जाने पर) बलि भेंट चढ़ाने की मनौती मानी। (उनसे प्रार्थना की कि) जिस प्रकार से रामचन्द्रजी का कल्याण हो, वही वर दया करके दीजिये। कोकिल की-सी रसीली वाणी वाली, चन्द्रमा के समान मुँह वाली और मृग के बच्चे के-से नेत्र वाली स्त्रियाँ मंगल गीत गाने लगीं।


राम राज अभिषेक सुनि हियँ हरषे नर नारि।
लगे सुमङ्गल सजन सब बिधि अनुकूल बिचारि।८।

रामचन्द्र का राज्याभिषेक सुनकर सभी स्त्री-पुरुष हृदय में बहुत प्रसन्न हुए और विधि को अनुकूल समझकर सुन्दर मंगल के साज सजाने लगे।

तब नरनाहँ बसिष्ठु बोलाए ❀ राम धाम सिख देन पठाये
गुरु आगमनु सुनत रघुनाथा ❀ द्वार आइ पद नायउ माथा

तब राजा ने वशिष्ठजी को बुलाया और शिक्षा (समयोचित उपदेश) देने के लिए उन्हें रामचन्द्रजी के महल में भेजा। गुरु का आगमन सुनते ही रामचन्द्रजी ने दरवाजे पर आकर उनके चरणों में मस्तक नवाया।

सादर अरघ देइ घर आने ❀ सोरह भाँति[1] पूजि सनमाने
गहे चरन सिय सहित बहोरी ❀ बोले रामु कमल कर जोरी

आदर-पूर्वक अर्घ्य देकर उन्हें घर में लिवा लाये और सोलह भाँति की (षोडशोपचार) पूजा करके उनका सम्मान किया। फिर सीता-समेत रामचन्द्रजी ने उनके चरण छुए और कमल के समान दोनों हाथ जोड़कर रामजी बोले—

सेवक सदन स्वामि आगमनू ❀ मङ्गल मूल अमंगल दमनू
तदपि उचित जनु बोलि सप्रीती ❀ पठइ अकाज नाथ असि नीती

सेवक के घर स्वामी का पधारना मंगलों का मूल और अमंगलों का नाश करने वाला होता है। तो भी हे नाथ! उचित तो यह है कि यदि कुछ कार्य हो तो प्रेम-पूर्वक दास ही को कार्य के लिये बुला भेजते। ऐसी ही नीति है।

प्रभुता तजि प्रभु कीन्ह सनेहू ❀ भयउ पुनीत आजु यहु गेहू
आयसु होइ सो करौं गोसाईं ❀ सेवकु लहै स्वामि सेवकाई

परंतु प्रभु आपने प्रभुता (मालिकी का अभिमान) छोड़कर स्वयं पधारकर मुझ पर स्नेह किया, इससे आज यह घर पवित्र हो गया। हे गुसाईं! जो आज्ञा हो, मैं करूँ, सेवक को स्वामी की सेवा मिले।

दो॰ सुनि सनेह साने बचन मुनि रघुबरहि प्रसंस।
राम कस न तुम्ह कहहु अस हंस[2] बंस अवतंस[3] ॥९॥

ऐसे प्रेम में सने हुए वचनों को सुनकर वशिष्ठजी ने रामचन्द्रजी की प्रशंसा की और कहा—हे राम! तुम सूर्य के वंश में भूषण रूप हो। भला, तुम ऐसी बात क्यों न कहो। [सम अलंकार]

बरनि राम गुन सीलु सुभाऊ ❀ बोले प्रेम पुलकि मुनिराऊ
भूप सजेउ अभिषेक समाजू ❀ चाहत देन तुम्हहिं जुबराजू

मुनिराज वशिष्ठजी रामचन्द्रजी के गुण, शील और स्वभाव का बखान कर, प्रेम से पुलकित होकर बोले—हे रामचन्द्र! राजा ने राज्याभिषेक की तैयारी की है। वे तुमको युवराज-पद देना चाहते हैं।

---

१. पूजन के १६ अंग—आवाहन, आसन, अर्घ्यपाद्य, आचमन, मधुपर्क, स्नान, वस्त्राभरण, यज्ञोपवीत, गंध, चंदन, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, तांबूल, परिक्रमा और वन्दना।

२. सूर्य। ३. शिरोमणि, भूषण।

राम करहु सब संजम आजू ❀ जौं बिधि कुसल निबाहइ काजू
गुर सिख देइ राय पहिं गयउ ❀ राम हृदयँ अस बिसमउ भयउ

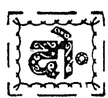
(इसलिए) हे राम ! आज तुम सब संयम (उपवास, हवन, ब्रह्मचर्यादि का पालन) करो, जिससे विधाता कुशल-पूर्वक इस काम को निबाह दें। गुरुजी शिक्षा देकर राजा (दशरथ) के पास चले गये, रामचन्द्रजी के हृदय में इस बात का विचार पैदा हुआ कि—

जनमें एक सङ्ग सब भाई ❀ भोजन सयन केलि लरिकाई
करनबेध उपवीत बिआहा ❀ संग संग सब भए उछाहा

हम सब भाई एक ही साथ जन्मे, सबके भोजन, शयन, खेल-कूद, लड़कपन, कर्णवेध (कान छिदना), यज्ञोपवीत और विवाह आदि उत्सव सब साथ ही साथ हुए।

बिमल बंस यहु अनुचित एकू ❀ बन्धु बिहाइ बड़ेहिं अभिषेकू
प्रभु सप्रेम पछितानि सुहाई ❀ हरउ भगत मन कै कुटिलाई

पर इस निर्मल वंश में एक यही बात अनुचित है कि और सब भाइयों को छोड़कर एक बड़े ही का राज्याभिषेक होता है। (तुलसीदासजी कहते हैं कि) प्रभु (रामचन्द्रजी) का यह सुन्दर प्रेमपूर्ण पछतावा भक्तों के मन की कुटिलता को हरण करे।


तेहि अवसर आए लषन मगन प्रेम आनंद।
सनमाने प्रिय बचन कहि रघुकुल कैरव चन्द ॥१०॥

उसी समय प्रेम और आनन्द में मग्न लक्ष्मणजी आये। रघुकुल रूपी कुमुद के खिलाने वाले चन्द्रमा रामचन्द्रजी ने प्रिय वचन कहकर उनका सम्मान किया।

बाजहिं बाजन बिबिध बिधाना ❀ पुर प्रमोदु नहिं जाइ बखाना
भरत आगमनु सकल मनावहिं ❀ आवहिं बेगि नयन फलु पावहिं

नाना प्रकार के बाजे बज रहे हैं। अयोध्यापुरी के अतिशय आनंद का वर्णन नहीं हो सकता। सब लोग भरतजी का आना मना रहे हैं, और कह रहे हैं कि वे भी जल्दी आ जायँ और नेत्रों का फल प्राप्त कर लें।

हाट बाट घर गली अथाई ❀ कहहिं परसपर लोग लुगाई
कालि लगन भलि केतिक बारा ❀ पूजिहि बिधि अभिलाषु हमारा

बाज़ार, रास्ते, घर और गली तथा अथाइयों (बैठकों) में जहाँ-तहाँ स्त्री-पुरुष इकट्ठे होकर आपस में कह रहे हैं कि कल ही तो वह शुभ लग्न है, अब देरी ही क्या है ? विधाता हमारी इच्छा पूरी करेंगे ।

कनक सिंघासन सीय समेता ❀ बैठहिं रामु होइ चित चेता¹
सकल कहहिं कब होइहि काली ❀ बिघन मनावहिं देव कुचाली

जब सीता-सहित रामचन्द्रजी सुवर्ण के सिंहासन पर बिराजेंगे और हमारी मनोकामना पूरी होगी । सब यही कह रहे हैं कि कल कब होगी; पर कुचाली (षड्यन्त्री) देवता विघ्न मना रहे हैं ।

तिन्हहिं सुहाइ न अवध बधावा ❀ चोरहिं चंदिनि राति न भावा
सारद बोलि बिनय सुर करहीं ❀ बारहिं बार पाँय लै परहीं

उन (कुचक्री) देवताओं को अवध के बधावे नहीं सुहा रहे हैं, जैसे चोर को चाँदनी रात अच्छी नहीं लगती । सरस्वती को बुलाकर देवता विनय कर रहे हैं और बार-बार पैरों पड़ते हैं । [पहली पंक्ति में प्रतिवस्तूपमा तथा दृष्टांत अलंकार]

दो० बिपति हमारि बिलोकि बड़ि मातु करिअ सोइ आजु ।
रामु जाहिं बन राजु तजि होइ सकल सुरकाजु ॥११॥

हे माता ! हमारी बड़ी विपत्ति को देखकर आज वही कीजिए, जिसमें रामचन्द्र राज्य को छोड़कर बन को चले जायँ और देवताओं के सब कार्य सिद्ध हों ।

सुनि सुर बिनय ठाढ़ि पछिताती ❀ भइउँ सरोज बिपिन हिम राती
देखि देव पुनि कहहिं निहोरी ❀ मातु तोहि नहिं थोरिउ खोरी

देवताओं की विनती सुनकर सरस्वती खड़ी-खड़ी पछता रही हैं कि हाय ! मैं कमल-वन के लिये पाले की रात हुई । देवता उनको इस प्रकार पछताते देखकर, खुशामद करके फिर बोले—हे माता ! इसमें आपको ज़रा भी दोष न लगेगा । [पहली पंक्ति में ललित अलंकार]

---

१. सोचा हुआ ।

बिसमय हरष रहित रघुराऊ ❀ तुम्ह जानहु सब राम प्रभाऊ
जीव करम बस सुख दुख भागी ❀ जाइअ अवध देवहित लागी

आप तो रामचन्द्रजी के प्रभाव को जानती ही हैं, वे विषाद और हर्ष से रहित हैं। जीव अपने कर्म-वश ही सुख-दुख का भागी होता है। अतएव आप देवताओं के हित के लिए अयोध्या जाइये।

बार बार गहि चरन सँकोची ❀ चली बिचारि बिबुध मति पोची[1]
ऊँच निवासु नीचि करतूती ❀ देखि न सकहिं पराइ बिभूती

देवताओं ने बार-बार पाँव पकड़कर सरस्वती को संकोच में डाल दिया। तब वह यह विचारकर चली कि देवताओं की बुद्धि ओछी है। इनका निवास तो ऊँचा है; पर इनकी करनी नीच है। ये दूसरों का ऐश्वर्य नहीं देख सकते। [विषम अलंकार]

आगिल काजु बिचारि बहोरी ❀ करिहहिं चाह कुसल कबि मोरी
हरषि हृदय दसरथपुर आई ❀ जनु ग्रह दसा दुसह दुखदाई

पर भविष्य के काम को विचारकर चतुर कवि मेरी चाह करेंगे। सरस्वती (ऐसा सोचकर) दशरथजी की पुरी (अयोध्या) में आई। मानो वह असहनीय दुख देने वाली कोई ग्रह-दशा हो।

दो० नामु मन्थरा मन्दमति चेरी कैकेइ केरि।
अजस पेटारा ताहि करि गई गिरा[2] मति फेरि।१२।

कैकेयी की एक मंद-बुद्धि दासी थी, जिसका नाम मन्थरा था। उसे अपयश की पिटारी बनाकर सरस्वती उसकी बुद्धि को फेर कर चली गई।

दीख मंथरा नगरु बनावा ❀ मंजुल मङ्गल बाज बधावा
पूछेसि लोगन्ह काह उछाहू ❀ राम तिलकु सुनि भा उर दाहू

मन्थरा ने देखा कि नगर सजाया हुआ है, सुन्दर मंगलाचार हो रहे हैं और बधावे बज रहे हैं। उसने लोगों से पूछा कि कैसा उत्सव है ? रामचन्द्रजी के राज-तिलक की बात सुनते ही उसका हृदय जल उठा।

करइ बिचारु कुबुद्धि कुजाती ❀ होइ अकाजु कवनि बिधि राती
देखि लागि मधु कुटिल किराती[3] ❀ जिमि गँव तकइ लेउँ केहि भाँती

१. ओछी। २. सरस्वती। ३. भीलनी।

वह दुर्बुद्धि नीच जाति वाली मन्थरा विचार करने लगी कि रात ही रात में यह काम कैसे बिगड़े ? जैसे कोई कुटिल भीलनी शहद का छत्ता लगा देखकर घात लगाती है कि इसको किस तरह से ले लूँ ? [उदाहरण अलंकार]

भरत मातु पहिं गइ बिलखानी ❀ का अनमनि[1] हसि[2] कह हँसि रानी
ऊतरु देइ न लेइ उसासू ❀ नारि चरित करि ढारइ आँसू

वह बिलखती हुई भरतजी की माता कैकेयी के पास गई। उसको देखकर कैकेयी ने हँसकर कहा—तू उदास क्यों है ? मन्थरा कुछ जवाब नहीं देती, केवल लम्बी साँस ले रही है और स्त्री-चरित करके आँखों से आँसू ढरका रही है।

हँसि कह रानि गालु बड़ तोरें ❀ दीन्ह लषन सिख अस मन मोरें
तबहुँ न बोल चेरि बड़ि पापिनि ❀ छाँड़इ स्वास कारि जनु साँपिनि

रानी कैकेयी हँसकर कहने लगी कि तेरे बड़े गाल हैं (तू बड़ी मुँहज़ोर है)। मेरा मन कहता है कि लक्ष्मण ने तुझे कुछ सीख दी है। इतने पर भी महापापिनी मन्थरा कुछ नहीं बोलती। वह ऐसी लम्बी साँसें छोड़ रही है मानो काली नागिन हो।

दो० सभय रानि कह कहसि किन कुसल रामु महीपालु।
लषनु भरतु रिपुदमनु सुनि भा कुबरी उर सालु॥१३॥

रानी कैकेयी ने डरकर कहा—अरी ! कहती क्यों नहीं ? रामचन्द्र, राजा, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न कुशल से तो हैं ? यह सुनकर कुबरी मन्थरा के हृदय में बड़ी ही पीड़ा हुई।

कत सिख देइ हमहिं कोउ माई ❀ गालु करब केहि कर बलु पाई
रामहिं छाँड़ि कुसल केहि आजू ❀ जिनहि जनेसु देइ जुबराजू

वह बोली—हे माता ! हमें कोई क्या सीख देगा ? और मैं किसका बल पाकर मुँहजोरी करूँगी ? रामचन्द्र को छोड़कर और किसकी कुशल है, जिन्हें राजा युवराज-पद दे रहे हैं।

भयउ कौसिलहि बिधि अति दाहिन ❀ देखत गरब रहत उर नाहिन
देखहु कस न जाइ सब सोभा ❀ जो अवलोकि मोर मनु छोभा

आज विधाता कौशल्या के बहुत ही अनुकूल हुये हैं। उनको देखकर आज

१. उदास, बेचैन। २. है।

किसी के हृदय में गर्व रह नहीं जाता। तुम स्वयं जाकर सब शोभा क्यों नहीं देख लेतीं; जिसे देखकर मेरा मन खिन्न हुआ है।

पूतु बिदेस न सोचु तुम्हारें ❀ जानति हहु[1] बस नाहु हमारें
नींद बहुत प्रिय सेज तुराई ❀ लखहु न भूप कपट चतुराई

तुम्हारा पुत्र परदेश में है, तुम्हें कुछ सोच नहीं। तुम जानती हो कि स्वामी हमारे वश में है। तुम्हें तो तोशक-तकिये के सहारे पड़े-पड़े नींद लेना ही प्रिय लगता है। राजा की कपट-भरी चतुराई कुछ नहीं देखतीं ?

सुनि प्रिय बचन मलिन मनु जानी ❀ झुकी रानि अब रहु अरगानी[2]
पुनि अस कबहुँ कहसि घरफोरी[3] ❀ तब धरि जीभ कढ़ावउँ तोरी

मन्थरा के प्रिय वचन सुनकर और उसे मन की मैली जानकर रानी कैकेयी झुककर बोलीं—बस, अब चुप रह, घर फोड़ी कहीं की ! फिर ऐसा कभी कहा, तो तेरी जीभ पकड़कर खिंचवा लूँगी।

दो०— काने खोरे[3] कूबरे कुटिल कुचाली जानि।
तिय बिसेषि पुनि चेरि कहि भरत मातु मुसुकानि ॥१४

काने, लँगड़े, कुबड़े ये बड़े कुटिल और कुचाली होते ही हैं, और उसमें भी स्त्री और खासकर दासी। ऐसा कहकर भरतजी की माता कैकेयी मुसकुराईं।

प्रियबादिनि सिष दीन्हिउँ तोही ❀ सपनेहु तो पर कोपु न मोही
सुदिनु सुमङ्गल दायकु सोई ❀ तोर कहा फुर जेहि दिन होई

हे प्रिय बोलने वाली मन्थरा ! मैंने तुझको यह सीख दी। मुझे तेरे ऊपर स्वप्न में भी क्रोध नहीं है। सुन्दर मंगलदायक शुभ दिन वही होगा, जिस दिन तेरा कहा (रामचन्द्र का राजतिलक) सच्चा हो जायगा।

जेठ स्वामि सेवक लघु भाई ❀ एह दिनकर कुल रीति सुहाई
राम तिलकु जौं साँचेहु काली ❀ देउँ माँगु मन भावत आली

बड़ा भाई स्वामी और छोटा भाई सेवक होता है। सूर्यवंश की यह सुहावनी रीति है। जो सचमुच ही कल रामचन्द्र का तिलक है, तो हे सखी ! अपनी मनचाही चीज़ मुझसे माँग ले, मैं दूँगी।

---

१. हो। २. चुप। घर में फूट डालने वाली। ३. लंगड़ा, पंगुल।

कौसल्या सम सब महतारी ❀ रामहिं सहज सुभायँ पियारी
मो पर करहिं सनेहु बिसेषी ❀ मैं करि प्रीति परीछा देखी

राम को सहज स्वभाव ही से सब मातायें कौसल्या के समान ही प्यारी हैं। मुझ पर तो वे विशेष रूप से प्रेम करते हैं। मैंने उनकी प्रीति की परीक्षा करके देख लिया है।

जौं बिधि जनमु देइ करि छोहू[1] ❀ होहुँ राम सिय पूत पतोहू
प्रान तें अधिक रामु प्रिय मोरें ❀ तिन्ह के तिलक छोभु कस तोरें

जो विधाता कृपा कर मुझे फिर जन्म दें, तो राम मेरे पुत्र और सीता बहू हों। राम मुझे प्राणों से भी अधिक प्रिय हैं। उनके तिलक से तुझे दुःख क्यों हुआ ?

दो॰ भरत सपथ तोहि सत्य कहु परिहरि कपट दुराउ।
हरष समय बिसमउ करसि कारन मोहि सुनाउ।१५।

तुझको भरत की सौगन्ध है, तू छल-कपट छोड़कर सच-सच कह। तू हर्ष के समय में बिषाद कर रही है, इसका कारण मुझे सुना।

एकहिं बार आस सब पूजी ❀ अब कछु कहब जीभ करि दूजी
फोरै जोगु कपारु अभागा ❀ भलेउ कहत दुख रउरेहि[2] लागा

(मन्थरा ने कहा—) एक ही बार कहने से सारी आशायें पूरी हो गईं। अब क्या दूसरी ज़ीभ लगाकर कुछ कहूँगी। मेरा अभागा कपाल तो फोड़ने ही के योग्य है। हित की बात कहने पर भी आपको दुःख होता है।

कहहिं झूठि फुरि बात बनाई ❀ ते प्रिय तुम्हहिं करुइ[3] मैं माई
हमहुँ कहबि अब ठकुर सोहाती[4] ❀ नाहिं त मौन रहब दिनु राती

जो झूठी सच्ची बातें बनाकर कहते हैं, हे माता ! वे ही तुम्हें प्रिय हैं और मैं तो कड़वी लगती हूँ। अब मैं भी ठकुर-सोहाती (मुँह-देखी) कहा करूँगी, नहीं तो दिन-रात चुप रहा करूँगी।

करि कुरूप बिधि परबस कीन्हा ❀ बवा सो लुनिअ लहिअ जो दीन्हा
कोउ नृप होउ हमहि का हानी ❀ चेरि छाँड़ि अब होब कि रानी

१. कृपा। २. आपको। ३. कड़वी। ४. मुँहदेखी।

विधाता ने कुरूप बनाकर मुझे परवश कर दिया। जो बोया है, सो काटती हूँ, जो दिया है, सो पाती हूँ। कोई भी राजा हो, हमारी क्या हानि है? दासी छोड़कर क्या अब मैं रानी होऊँगी?

जारै[1] जोगु सुभाउ हमारा ❀ अनभल देखि न जाइ तुम्हारा
ता तें कछुक बात अनुसारी ❀ छमिअ देबि बड़ि चूक हमारी

हमारा स्वभाव तो जलाने ही लायक है। तुम्हारा अहित नहीं देखा जाता, इसलिए कुछ बात चलाई थी। किन्तु हे देवि! क्षमा करो, हमारी बड़ी भूल हुई।

दो॰ गूढ़ कपट प्रिय बचन सुनि तीय अधरबुधि रानि।
सुर माया बस बैरिनिहि सुहृद जानि पतिआनि।१६।

ओठों पर बुद्धि रखने वाली (क्षणिक बुद्धि) रानी कैकेयी ने मंथरा के कपट-भरे हुए रहस्य-युक्त प्रिय वचनों को सुनकर देवताओं की माया के वश में हो उस बैरिन को अपनी सुहृद जानकर उसका विश्वास कर लिया।

सादर पुनि पुनि पूँछति ओही ❀ सबरी गान मृगी जनु मोही
तसि मति फिरी अहइ जसि भाबी ❀ रहसी चेरि घात जनु फाबी

कैकेयी आदर के साथ बारम्बार उसे पूछ रही हैं; मानो भीलनी के गान से हिरनी मोहित हो गई हो। जैसा होनहार है, वैसी ही बुद्धि भी पलट गई है। दासी अपना दाँव लगा जानकर हर्षित हो गई।

तुम्ह पूँछहु मैं कहत डेराऊँ ❀ धरेउ मोर घरफोरी नाऊँ
सजि प्रतीति बहुबिधि गढ़ि छोली ❀ अवध साढ़साती[2] तब बोली

तुम पूछती हो, किन्तु मैं कहते डरती हूँ; क्योंकि तुमने मेरा नाम घरफोड़ी रख लिया है। ख़ूब विश्वास जमाकर, बहुत तरह से गढ़-छोलकर तब वह अयोध्या की साढ़साती (शनि की साढ़े सात वर्ष की दशा) बोली—

प्रिय सिय रामु कहा तुम्ह रानी ❀ रामहि तुम्ह प्रिय सो फुरि[3] बानी
रहा प्रथम अब ते दिन बीते ❀ समउ फिरें रिपु होहिं पिरीते[4]

हे रानी! तुमने जो कहा कि मुझे सीताराम प्रिय हैं और राम को तुम प्रिय हो, यह बात सच्ची है। परन्तु यह बात पहले थी, अब वे दिन बीत गये।

---

१. जलाने। २. शनि की साढ़े सात वर्ष की दशा। ३. सत्य। ४. मित्र।

समय पलटता है, तो मित्र भी शत्रु हो जाते हैं।

भानु कमल कुल पोषनि हारा ❀ बिनु जर[1] जारि करइ सोइ छारा
जरि तुम्हारि चह सवति उखारी ❀ रूँधहु करि उपाउ बर बारी[2]

देखिये, सूर्य कमल के कुल का पालन करने वाला है। पर बिना पानी के वही सूर्य उन्हीं कमलों को जलाकर भस्म कर देता है। (वैसे ही) तुम्हारी जड़ तुम्हारी सौत (कौशल्या) उखाड़ना चाहती है। अतः उपायरूपी मज़बूत बाड़ लगाकर उसे रूँध दो।

दो०— तुम्हहिं न सोचु सोहाग बल निज बस जानहु राउ।
मन मलीन मुहँ मीठ नृपु राउर सरल सुभाउ ॥१७॥

तुम्हें अपने सुहाग के बल पर कुछ सोच नहीं है। राजा को अपने वश में जानती हो। पर राजा मन के मैले और मुँह के मीठे हैं और तुम्हारा सीधा स्वभाव है।

चतुर गँभीर राम महतारी ❀ बीचु[3] पाइ निज बात सँवारी
पठये भरतु भूप ननिअउरें ❀ राम मातु मत जानब रउरें

राम की माता कौशल्या बड़ी चतुर और गम्भीर हैं। उन्होंने मौका पाकर अपनी बात बना ली। राजा ने जो भरत को ननिहाल भेज दिया है, उसमें राम की माता ही की सलाह समझना।

सेवहिं सकल सवति मोहि नीकें ❀ गरबित भरत मातु बल पी कें
सालु[4] तुम्हार कौसिलहि माई ❀ कपट चतुर नहिं होइ जनाई

कौशल्या समझती हैं कि सब सौतें तो मेरी अच्छी तरह टहल करती हैं, एक भरत की माँ पति के बल पर घमंड में रहती है। हे माई! कौशल्या को तुम्हीं खटक रही हो। वे चतुर हैं, उनका कपट जानने में नहीं आता।

राजहिं तुम्ह पर प्रेम बिसेषी ❀ सवति सुभाउ सकइ नहिं देखी
रचि प्रपंचु भूपहि अपनाई ❀ राम तिलक हित[5] लगन धराई

राजा का तुम पर विशेष प्रेम है। सौत का स्वभाव है, वे इसे देख नहीं सकतीं। इसलिये कौशल्या ने प्रपंच (जाल) रचकर, राजा को अपने वश में करके, राम के राजतिलक का लग्न निश्चय करा लिया।

---

१. जड़। २. बाड़, घेरा। ३. मौका। ४. काँटा, खटकने वाली वस्तु। ५. लिये, वास्ते।

यहु कुल उचित राम कहुँ टीका ❀ सबहि सुहाइ मोहिं सुठि नीका
आगिलि बात समुझि डर मोही ❀ देउ दैउ फिरि सो फलु ओही[1]

इस कुल की रीति से राम का तिलक हो, यह तो उचित ही है। यह बात सभी को सुहाती है, और मुझे तो और भी अच्छी लगती है। पर मुझे तो आगे की बात विचारकर डर लगता है। दैव उलटकर इसका फल उसी कौशल्या को दें।

दो० **रचि पचि कोटिक कुटिलपन कीन्हेसि कपट प्रबोधु।**
कहिसि कथा सत सवति कै जेहि बिधि बाढ़ बिरोधु॥१८

इस तरह करोड़ों कुटिलपन की बातें बनाकर मन्थरा ने कैकेयी को बहुत-सी छल-कपट की पट्टी पढ़ाई। और सैकड़ों सौतों की कहानियाँ सुनाईं, जिनसे विरोध बढ़े।

भाबी बस प्रतीति उर आई ❀ पूँछ रानि पुनि सपथ देवाई
का पूछहु तुम्ह अबहुँ न जाना ❀ निज हित अनहित पसु पहिचाना

होनहार-वश कैकेयी के मन में विश्वास हो आया। रानी फिर सौगन्ध दिलाकर पूछने लगी। (मन्थरा ने कहा—) रानी! क्या पूछती हो? तुमने अब भी नहीं समझा? अपने हित और अनहित (भले-बुरे) को तो पशु भी पहचान लेते हैं।

भयेउ पाखु दिनु सजत समाजू ❀ तुम्ह पाई सुधि मोहि सन आजू
खाइअ पहिरिअ राज तुम्हारें ❀ सत्य कहे नहिं दोषु हमारें

अरे! तैयारियाँ होते-होते पन्द्रह दिन हो गये और तुमने मुझसे आज खबर पाई है? मैं तुम्हारे राज में खाती हूँ, पहनती हूँ, इसलिए सच कहने में मुझे कोई दोष नहीं है।

जौं असत्य कछु कहब बनाई ❀ तौ बिधि देइहि हमहिं सजाई
रामहि तिलक कालि जौ भयऊ ❀ तुम्ह कहुँ बिपति बीजु बिधि बयऊ

यदि मैं कुछ बात बनाकर झूठ बोलती होऊँगी, तो विधाता मुझे दंड देंगे। यदि कल राम को राजतिलक हो गया तो (समझ रखना कि) तुम्हारे लिए ब्रह्मा ने विपत्ति का बीज बो दिया।

---

१. उसी को।

रेख खँचाइ कहहुँ बल भाखी ❀ भामिनि भइहु दूध कइ माखी
जौं सुत सहित करहु सेवकाई ❀ तौ घर रहहु न आन उपाई

मैं लकीर खींचकर बलपूर्वक कहती हूँ कि हे भामिनी ! तुम तो अब दूध की मक्खी हो गई। यदि पुत्र-सहित (सौत की) सेवकाई करो, तो घर में रहो; नहीं तो दूसरा उपाय नहीं।

दो० कद्रू बिनतहि दीन्ह दुखु तुम्हहिं कौसिला देब।
भरतु बन्दिगृह सेइहहिं लषनु राम के नेब[1] ॥१६॥

कद्रू ने बिनता को दुःख दिया, तुम्हें कौशल्या देगी। भरत तो जेलखाने में पड़ेंगे और लक्ष्मण राम के नायब (सहकारी) होंगे।

कैकय सुता सुनत कटु बानी ❀ कहि न सकइ कछु सहमि सुखानी
तन पसेउ[2] कदली जिमि काँपी ❀ कुबरीं दसन जीभ तब चाँपी[3]

कैकेयी मन्थरा की कड़वी वाणी सुन भय से सूख गई। कुछ कह नहीं सकती। उसके शरीर में पसीना हो आया और वह केले की तरह काँपने लगी। तब कुबरी मन्थरा ने अपनी जीभ दाँतों तले दबा ली।

कहि कहि कोटिक कपट कहानी ❀ धीरजु धरहु प्रबोधिसि रानी
कीन्हिसि कठिन पढ़ाइ कुपाठू ❀ जिमि न नवइ फिरि उकठि कुकाठू

फिर कपट की करोड़ों कहानियाँ कह-कहकर उसने रानी को ख़ूब समझाया कि धीरज धरो। उसने कैकेयी को कपट का पाठ पढ़ाकर ऐसा पक्का कर दिया, जिस तरह कुकाठ (बबूल, बहेड़ा आदि) उकठ (सूखकर ऐंठ) जाने पर फिर नहीं नवते।

फिरा करमु प्रिय लागि कुचाली ❀ बकिहि सराहइ मानि मराली
सुनु मंथरा बात फुरि तोरी ❀ दहिनि आँखि नित फरकइ मोरी

कैकेयी का भाग्य पलट गया, उसे कुचाल प्यारी लगी। वह बगुली को हंसिनी मानकर उसकी सराहना करने लगी। (कैकेयी बोली—) मन्थरा ! सुन, तेरी बात सच है। मेरी दाहिनी आँख नित्य फड़का करती है।

दिन प्रति देखउँ राति कुसपने ❀ कहउँ न तोहि मोह बस अपने
काह करउँ सखि सूध सुभाऊ ❀ दाहिन बाम न जानउँ काऊ

१. नायब, सहकारी। २. पसीना। ३. दबाली।

मैं रोज रात को बुरे स्वप्न देखती हूँ। मोह-वश तुझसे नहीं कहती। सखी ! क्या करूँ, मेरा तो सीधा स्वभाव है। कौन दायाँ (अनुकूल) है, कौन बायाँ (प्रतिकूल), मैं कुछ नहीं जानती।

दो०— अपनें चलत न आजु लगि अनभल काहुक कीन्ह।
केहिं अघ एकहि बार मोहि दैअँ दुसह दुखु दीन्ह २०

अपनी भरसक आजतक मैंने कभी किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा। फिर न जाने किस पाप से मुझे दैव ने एक साथ ही यह दुःसह दुःख दिया।

नैहर जनमु भरब बरु जाई ❀ जियत न करबि सवति सेवकाई
अरि बस दैउ जियावत जाही ❀ मरनु नीक तेहि जीवन चाही[1]

भले ही मैं नैहर में जाकर वहीं जीवन बिता दूँगी, पर जीते जी सौत की चाकरी न करूँगी। दैव जिसको शत्रु के वश में रखकर जिलाता है, उसके लिये तो जीने की अपेक्षा मरना ही अच्छा है।

दीन बचन कह बहु बिधि रानी ❀ सुनि कुबरीं तियमाया ठानी
अस कस कहहु मानि मन ऊना[2] ❀ सुखु सोहागु तुम्ह कहुँ दिन दूना

रानी ने बहुत तरह से दीन वचन कहे। सुनकर कुबरी ने त्रिया-चरित्र फैलाया। कुबरी बोली—रानी ! तुम मन को छोटा करके ऐसा क्यों कह रही हो ? तुम्हारा सुख और सुहाग दिन-दिन दूना होगा।

जेहि राउर अति अनभल ताका ❀ सोइ पाइहि एहु फलु परिपाका
जब तें कुमत सुना मैं स्वामिनि ❀ भूख न बासर नींद न जामिनि

जिसने तुम्हारा बुरा चाहा है वही अन्त में इसका फल पायेगी। हे स्वामिनि ! मैंने जब से यह खोटी सलाह सुनी है, तब से मुझे न तो दिन में भूख लगती है और न रात में नींद ही आती है।

पूँछेउँ गुनिन्ह रेख तिन्ह खाँची ❀ भरत भुआल होहिं एह साँची
भामिनि करहु त कहौं उपाऊ ❀ हैं तुम्हरीं सेवा बस राऊ

मैंने ज्योतिषियों से पूछा तो उन्होंने रेखा खींचकर (गणित करके) कहा कि भरत राजा होंगे, यह सत्य है। हे भामिनि ! तुम करो, तो उपाय तो मैं बता दूँ; राजा तुम्हारी सेवा के वश में हैं ही।

---

१. अपेक्षा। २. छोटा, ग्लानि।

दो०— परउँ कूप तुअ बचन पर सकउँ पूत पति त्यागि ।
कहसि मोर दुखु देखि बड़ कस न करब हित लागि ॥

कैकेयी ने कहा—मैं तेरे कहने पर कुएँ में भी गिर सकती हूँ, पति और पुत्र को भी त्याग सकती हूँ । अरी ! जब तू मेरा बड़ा भारी दुःख देखकर कहती है, तो भला, मैं अपने हित के लिये उसे क्यों न करूँगी ?

कुबरीं करि कुबलि कैकेई ❀ कपट छुरी उर पाहन टेई
लखइ न रानि निकट दुखु कैसें ❀ चरइ हरित तिन[1] बलि पसु जैसें

कुबरी ने कैकेयी को कुबलि का पशु बनाकर अपनी कपटरूपी छुरी को हृदयरूपी पत्थर पर टेया (धार को तेज़ किया)। रानी कैकेयी अपने पास के दुख को ऐसे नहीं देखती, जैसे बलिदान दिया जाने वाला पशु हरी-हरी घास चरता है (वह अपने निकट मरण को नहीं जानता)। (कुबलि इसलिये कहा कि मादा पशु की बलि नहीं दी जाती)।

सुनत बात मृदु अंत कठोरी ❀ देति मनहुँ मधु माहुर घोरी
कहइ चेरि सुधि अहइ कि नाहीं ❀ स्वामिनि कहिहु कथा मोहि पाहीं

मन्थरा की बातें सुनने में तो कोमल हैं, पर परिणाम में कठोर हैं । मानो वह शहद में घोलकर विष पिलार ही है। दासी मन्थरा कहती है—हे मालकिन ! तुमने जो कथा मुझसे कही थी, उसकी याद है कि नहीं ?

दुइ बरदान भूप सन थाती ❀ माँगहु आजु जुड़ावहु छाती
सुतहि राजु रामहि बनबासू ❀ देहु लेहु सब सवति हुलासू

तुम्हारे दो वरदान राजा के पास धरोहर हैं। आज उन्हें माँगकर छाती ठण्डी कर लो। पुत्र को राज्य और राम को वनवास दो और सौत का सारा आनन्द तुम ले लो।

भूपति राम सपथ जब करई ❀ तब माँगेहु जेहिं बचनु न टरई
होइ अकाजु आजु निसि बीतें ❀ बचनु मोर प्रिय मानेहु जी तें

जब राजा रामचन्द्र की सौगन्ध खा लें, तब वर माँगना, जिससे वे अपने वचन को टाल न सकें। आज की रात बीत गई, तो काम बिगड़ जायगा। मेरे वचन को जी-जान से प्यारा समझना।

---

१. तृण, घास।

दो० बड़ कुघातु करि पातकिनि कहेसि कोपगृहँ[1] जाहु।
काजु सँवारेहु सजग सबु सहसा जनि पतिआहु।२२।

पापिनी मन्थरा ने बड़ी बुरी घात लगाकर कहा—कोप-भवन में जाओ। होशियारी से सब काम बना लेना, एकदम विश्वास न कर लेना।

कुबरिहि रानि प्रानप्रिय जानी ❀ बार बार बड़ि बुद्धि बखानी
तोहि सम हित न मोर संसारा ❀ बहे जात कइ भइसि[2] अधारा

रानी ने कुबरी को प्राणों के समान प्रिय समझा और बार-बार उसकी बुद्धि की सराहना की। (वह बोली—) संसार में तेरे बराबर मेरा हितकारी कोई दूसरा नहीं है। मुझे बही जाती हुई को तू सहारा मिल गई।

जौं बिधि पुरव[3] मनोरथ काली ❀ करौं तोहि चख पूतरि आली
बहु बिधि चेरिहि आदरु देई ❀ कोप भवन गवनी कैकेई

हे सखी! जो विधाता कल मेरा मनोरथ पूर्ण कर दें, तो मैं तुझे अपनी आँख की पुतली बनाऊँगी। इस प्रकार दासी को बहुत तरह से आदर देकर कैकेयी कोप-भवन में चली गई।

बिपति बीजु बरषा रितु चेरी ❀ भुइँ भइ कुमति कैकई केरी
पाइ कपट जलु अंकुर जामा ❀ बर दोउ दल दुख फल परिनामा

विपत्ति बीज है, दासी वर्षा-ऋतु है, कैकेयी की कुबुद्धि ज़मीन है, उसमें कपट-रूपी जल पाकर अंकुर फूट निकला। दोनों वरदान अंकुर के दो पत्ते हैं। अंत में दुख-रूपी फल फलेगा। [सांगरूपक अलंकार]

कोप समाजु साजि सबु सोई ❀ राजु करत निज कुमति बिगोई
राउर[4] नगर कोलाहलु होई ❀ यह कुचालि कछु जान न कोई

कोप का सब साज सजाकर कैकेयी कोप-भवन में जा सोई। राज्य कर रही थी, पर अपनी दुष्ट बुद्धि से नष्ट हो गई। राजमहल और नगर में धूम-धाम मच रही है, इस कुचाल को कोई कुछ नहीं जानता।

दो० प्रमुदित पुर नर नारि सब सजहिं सुमङ्गलचार।
एक प्रबिसहिं एक निर्गमहिं भीर भूप दरबार॥२३॥

---

१. प्राचीन काल में राजभवनों में एक कोप-गृह भी होता था, जिसमें कुटुम्ब के जिस व्यक्ति को कुछ नाराज़ी होती थी, तो वह जा बैठता था। २. हुई। ३. पूरा करें। ४. राजा का महल।

नगर के नर-नारी बड़े प्रसन्न हैं। सब शुभ मङ्गलाचार के साज सज रहे हैं। राजा के दरबार में बड़ी भीड़ हो रही है; कोई भीतर जाता है, कोई बाहर निकलता है।

बाल सखा सुनि हिअँ हरषाहीं ❀ मिलि दस पाँच राम पहिं जाहीं
प्रभु आदरहिं प्रेमु पहिचानी ❀ पूँछहिं कुसल खेम मृदु बानी

रामचन्द्रजी के बाल-सखा राजतिलक का समाचार सुनकर हृदय में प्रसन्न होते और दस-पाँच मिलकर उनके पास जाते हैं। उनके प्रेम को पहचान कर प्रभु रामचन्द्रजी उनका आदर करते हैं और कोमल वाणी से उनका कुशल-क्षेम पूछते हैं।

फिरहिं भवन प्रिय आयसु पाई ❀ करत परसपर राम बड़ाई
को रघुबीर सरिस संसारा ❀ सीलु सनेहु निबाहनिहारा

अपने प्रिय सखा रामचन्द्रजी की आज्ञा पाकर वे आपस में उनकी (रामचन्द्र की) बड़ाई करते हुए अपने घर को लौटते हैं और कहते हैं—संसार में रामचन्द्र के समान शील और स्नेह को निबाहने वाला कौन है ?

जेहिं जेहिं जोनि करम बस भ्रमहीं ❀ तहँ तहँ ईसु देउ यह हमहीं
सेवक हम स्वामी सियनाहू ❀ होउ नात यह ओर निबाहू

कर्म के वश जिस-जिस योनि में हम भ्रमते फिरें, वहाँ-वहाँ भगवान् हमें यह दें कि हम तो सेवक हों और सीतापति रामचन्द्रजी हमारे स्वामी हों, और यह नाता अन्त तक निभ जाय।

अस अभिलाषु नगर सब काहू ❀ कैकयसुता हृदयँ अति दाहू
को न कुसंगति पाइ नसाई ❀ रहइ न नीच मतें चतुराई

नगर में सब लोगों की ऐसी ही अभिलाषा है। पर कैकेयी के हृदय में बड़ा दाह हो रहा है। बुरी संगति पाकर कौन नष्ट नहीं होता ? नीच की मति से चलने से चतुराई नहीं रह जाती।

दो०— साँझ समय सानंद नृपु गयेउ कैकई गेहँ।
गवनु निठुरता निकट किय जनु धरि देह सनेहँ २४।

सन्ध्या के समय राजा दशरथ आनन्द के साथ कैकेयी के महल में गये। मानो साक्षात् स्नेह ही शरीर धारण करके निष्ठुरता के पास गया हो।

कोप भवन सुनि सकुचेउ राऊ ❀ भय बस अगहुड़[1] परइ न पाऊ
सुरपति बसइ बाँहबल जाकें ❀ नरपति सकल रहहिं रुख ताकें

कोप भवन का नाम सुनते ही राजा सहम गये। डर के मारे उनके पाँव आगे नहीं पड़ते। जिनकी भुजाओं के बल पर देवराज इन्द्र बसता है, सम्पूर्ण राजा लोग जिनका रुख देखते रहते हैं,

सो सुनि तिय रिस गयेउ सुखाई ❀ देखहु काम प्रताप बड़ाई
सूल कुलिस असि अँगवनिहारे ❀ ते रतिनाथ सुमन सर मारे

वह स्त्री का क्रोध सुनकर सूख गये। कामदेव का प्रताप और उसकी महिमा तो देखिए! जो त्रिशूल, वज्र और तलवार की चोट सहने वाले हैं उनको रतिनाथ (कामदेव) ने फूल के बाणों से मारा। [विकस्वर अलंकार]

सभय नरेसु प्रिया पहिं गयऊ ❀ देखि दसा दुखु दारुन भयऊ
भूमि सयन पटु मोट पुराना ❀ दिये डारि तन भूषन नाना

डरते-डरते राजा अपनी प्यारी कैकेयी के पास गये। उसकी दशा देखकर उन्हें घोर कष्ट हुआ। कैकेयी ज़मीन पर पड़ी है। मोटा और पुराना कपड़ा पहने है, शरीर के नाना प्रकार के आभूषणों को उतारकर फैंक दिया है।

कुमतिहि कसि कुबेषता फाबी ❀ अनअहिबातु[2] सूच जनु भाबी
जाइ निकट नृपु कह मृदु बानी ❀ प्रानप्रिया केहि हेतु रिसानी

कुबुद्धि वाली (कैकेयी) को वह बुरा वेष कैसा फब रहा है, मानो उसका भविष्य (होनहार) उसके विधवापन की सूचना दे रहा है। राजा उसके पास जाकर कोमल वाणी से कहने लगे—हे प्राणप्यारी! तुम किसलिये रूठी हो?

छंद—केहि हेतु रानि रिसानि परसत पानि पतिहि नेवारई।
मानहु सरोष भुअंग भामिनि बिषम भाँति निहारई॥
दोउ बासना रसना दसन बर मरम ठाहरु[3] देखई।
तुलसी नृपति भवितब्यता बस काम कौतुक लेखई॥

हे रानी! किसलिए रूठी हो? (यह कहकर) राजा उसे हाथ से छूते हैं तो वह उनके हाथ को (झटककर) हटा देती है और इस तरह टेढ़ी दृष्टि से

१. आगे की ओर। २. विधवापन। ३. ठौर, स्थान।

देख रही है, मानो क्रोध में भरी हुई नागिनी है। दोनों वरदान माँगने की इच्छा ही उस नागिन की दो जीभें हैं, और दोनों वरदान दाँत हैं। वह (काटने के लिये) मर्मस्थान देख रही है। तुलसीदास कहते हैं कि राजा दशरथ होनहार के वश में होकर इसे कामदेव की क्रीड़ा ही समझ रहे हैं। [अप्रस्तुत प्रशंसा अलङ्कार]

सो०— बार बार कह राउ सुमुखि सुलोचनि पिकबचनि।
कारन मोहि सुनाउ गजगामिनि निज कोप कर॥२५॥

राजा बार-बार कह रहे हैं—हे सुन्दर मुँह वाली! हे सुन्दर नेत्र वाली! हे कोकिला के समान स्वर वाली! हे हाथी की-सी चाल वाली! मुझे अपने क्रोध का कारण तो सुना।

अनहित तोर प्रिया केइँ कीन्हा ❀ केहि दुइ सिर केहि जम चह लीन्हा
कहु केहि रंकहि करउँ नरेसू ❀ कहु केहि नृपहि निकासउँ देसू

हे प्रिये! किसने तेरा अनिष्ट किया? किसके दो सिर हैं? यमराज किसको लेना चाहते हैं? तू कह, मैं किस कंगाल को राजा कर दूं? या किस राजा को देश से निकाल दूं?

सकउँ तोर अरि अमरउ मारी ❀ काह कीट बपुरे[1] नर नारी
जानसि मोर सुभाउ बरोरू[2] ❀ मनु तव आनन चन्द चकोरू

यदि तेरा शत्रु अमर (देवता) भी हो, तो मैं उसे भी मार सकता हूँ। बेचारे कीड़े-मकोड़े-सरीखे स्त्री-पुरुषों की तो बात ही क्या? हे सुन्दर जाँघ वाली! तू तो मेरा स्वभाव जानती ही है कि मेरा मन तेरे मुखरूपी चन्द्रमा का चकोर है।

प्रिया प्रान सुत सरबसु मोरें ❀ परिजन प्रजा सकल बस तोरें
जौं कछु कहउँ कपटु करि तोही ❀ भामिनि राम सपथ सत मोही

हे प्रिये! मेरे प्राण, मेरे पुत्र और मेरा सर्वस्व तथा मेरे कुटुम्बी और समस्त प्रजा तेरे अधीन हैं। यदि मैं इसमें कुछ कपट करके बतलाता होऊँ, तो हे भामिनी! मुझे सौ बार राम की सौगन्ध है।

बिहँसि माँगु मन भावति बाता ❀ भूषन सजहि मनोहर गाता
घरी कुघरी समुझि जिअँ देखू ❀ बेगि प्रिया परिहरहि कुबेषू

१. बेचारे। २. सुन्दर जंघा वाली।

जो बात तेरे मन को रुचती हो, उसे प्रसन्नतापूर्वक माँग ले और अपने सुन्दर शरीर को गहनों से सजा। हे प्यारी! समय-कुसमय का तो जी में कुछ विचार कर देख और हे प्रिये! जल्दी इस बुरे वेष को त्याग दे।

दो०— यह सुनि मन गुनि सपथ बड़ि बिहँसि उठी मतिमन्द।
भूषन सजति बिलोकि मृगु मनहुँ किरातिनि[1] फन्द॥

यह सुनकर और मन में राम की बड़ी सौगन्ध को विचारकर वह मन्द-बुद्धि कैकेयी हँसकर उठी और गहने पहनने लगी, मानो कोई भीलनी मृग को देखकर उसको फँसाने के लिये फन्दा तैयार कर रही हो।

पुनि कह राउ सुहृद जिअँ जानी ❀ प्रेम पुलकि मृदु मंजुल बानी
भामिनि भयेउ तोर मनभावा ❀ घर घर नगर अनन्द बधावा

राजा दशरथ अपने जी में उसे सुहृद् जानकर और प्रेम से प्रफुल्लित होकर कोमल और सुन्दर वाणी से फिर कहने लगे—हे भामिनि! तेरी मनचाही हो गई; नगर में घर-घर आनन्द के बधावे बज रहे हैं।

रामहिं देउँ कालि जुबराजू ❀ सजहि सुलोचनि मंगल साजू
दलकि[2] उठेउ सुनि हृदउ कठोरू ❀ जनु छुइ गयउ पाक बरतोरू[3]

हे अच्छे नेत्र वाली! मैं कल ही राम को युवराज-पद दे रहा हूँ। इसलिए तू मङ्गल-साज सजा। यह सुनते ही उसका कठोर हृदय दलक उठा। मानो पका हुआ बालतोड़ (फोड़ा) छू गया हो।

ऐसिउ पीर बिहँसि तेहिं गोई ❀ चोर नारि जिमि प्रगटि न रोई
लखहिं न भूप कपट चतुराई ❀ कोटि कुटिल मनि गुरू पढ़ाई

ऐसी भारी पीड़ा को भी उसने हँसकर ऐसा छिपा लिया, जिस तरह चोर की स्त्री प्रकट होकर नहीं रोती। राजा उसकी कपट-भरी हुई चतुराई को नहीं देख रहे हैं; क्योंकि वह करोड़ों कुटिलों की शिरोमणि गुरु (मन्थरा) की पढ़ाई हुई है। [काव्यलिङ्ग अलंकार]

जद्यपि नीति निपुन नरनाहू ❀ नारि चरित जलनिधि अवगाहू
कपट सनेहु बढ़ाइ बहोरी ❀ बोली बिहँसि नयन मुहुँ मोरी

यद्यपि राजा नीति में दक्ष है, परन्तु स्त्री-चरित्र अथाह समुद्र है। फिर वह

---

१. भीलनी। २. हिल गया, दहल गया। ३. बाल टूटने से जो फोड़ा हो जाता है।

कपट का प्रेम बढ़ाकर, हँसकर और आँखें और मुँह मटकाकर बोली—

दो०— माँगु माँगु पै कहहु पिय कबहुँ न देहु न लेहु।
देन कहेहु बरदान दुइ तेउ पावत सन्देहु ॥२७॥

हे प्रियतम! आप माँग-माँग तो कहा करते हैं; पर देते-लेते कभी कुछ भी नहीं। आपने मुझे दो वरदान देने को कहा था, उनके भी मिलने में मुझे सन्देह है।

जानेउँ मरमु राउ हँसि कहई ❀ तुम्हहि कोहाब परम प्रिय अहई
थाती राखि न माँगिहु काऊ ❀ बिसरि गयउ मोहि भोर सुभाऊ

राजा ने हँसकर कहा कि मैं तुम्हारा मतलब अब समझा। मान करना तुमको बहुत प्रिय लगता है। तुमने (उन दोनों वरों को) धरोहर रखकर फिर कभी माँगा ही नहीं, और मेरा स्वभाव भूलने का है; मैं भूल गया।

झूठेहुँ हमहिं दोषु जनि देहू ❀ दुइ कै चारि माँगि मकु[1] लेहू
रघुकुल रीति सदा चलि आई ❀ प्रान जाहुँ बरु[2] बचनु न जाई

मुझे झूठा दोष मत दो। चाहे दो के बदले चार माँग लो। रघु के कुल में सदा से यह रीति चली आई है कि प्राण भले ही चले जायँ, पर वचन नहीं जाता।

नहिं असत्य सम पातक पुंजा ❀ गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा
सत्यमूल सब सुकृत सुहाये ❀ बेद पुरान बिदित मनु गाये

असत्य के बराबर पापों का समूह भी नहीं है। भला, करोड़ों घुँघुचियाँ मिलकर भी कहीं पहाड़ के बराबर हो सकती हैं? सत्य ही समस्त सुकृतों की जड़ है। यह बात वेदों और पुराणों में प्रसिद्ध है और मनु ने भी यही कहा है।

तेहि पर राम सपथ करि आई ❀ सुकृत सनेह अवधि रघुराई
बात दृढ़ाइ कुमति हँसि बोली ❀ कुमत कुबिहँग[3] कुलह[4] जनु खोली

इस पर भी राम की सौगन्ध कर चुका हूँ। राम मेरे पुण्य और स्नेह की सीमा हैं। इस तरह बात को पक्की कराके दुष्ट बुद्धि वाली कैकेयी हँसकर बोली। मानो उसने विचाररूपी दुष्ट पक्षी (बाज़) का कुलह खोल दिया।

---

१. चाहे। २. भले ही, चाहे। ३. दुष्ट पक्षी (बाज़)। ४. टोपी।

दो० भूप मनोरथ सुभग बनु सुख सुबिहंग समाजु।
भिल्लिनि जिमि छाँड़न चहति बचनु भयंकर बाजु॥

राजा का मनोरथ सुन्दर वन है और उनका सुख सुन्दर चिड़ियों का झुंड है। उस पर (कैकेयीरूपी) भीलनी अपने वचनरूपी भयङ्कर बाज को छोड़ना चाहती है।

सुनहु प्रानप्रिय भावत जी का ❀ देहु एक बर भरतहि टीका
माँगउँ दूसर बर कर जोरी ❀ पुरवहु नाथ मनोरथ मोरी

(कैकेयी कहती है—) हे प्राण-प्यारे! सुनिये, मेरे मन को भाता हुआ एक वर तो भरत को राजतिलक दीजिये। और हे नाथ! दूसरा वर भी मैं हाथ जोड़कर माँगती हूँ। मेरा मनोरथ पूरा कीजिये।

तापस बेस बिसेषि उदासी ❀ चौदह बरिस रामु बनवासी
सुनि मृदु बचन भूप हियँ सोकू ❀ ससि कर छुअत बिकल जिमि कोकू

(वह मनोरथ यह है कि) तपस्वी का वेष धरकर, विशेष राजविलासादि से उदासीन होकर, चौदह बरस तक राम बन में बसें। कैकेयी के कोमल वचन सुनकर राजा के हृदय में ऐसा शोक हुआ जैसे चन्द्रमा की किरणों के छूने से चकवा पक्षी विकल हो जाता है।

गयेउ सहमि नहिं कछु कहि आवा ❀ जनु सचान[1] बन झपटेउ लावा[2]
बिबरन[3] भयेउ निपट नरपालू ❀ दामिनि हनेउ मनहु तरु तालू

राजा सहम गये; उनसे कुछ कहते न बना। मानो बाज़ बन में बटेर पर झपटा हो। राजा का रंग बिलकुल उड़ गया। मानो ताड़ के पेड़ को बिजली ने मारा हो।

माथें हाथ मूँदि दोउ लोचन ❀ तनु धरि सोचु लाग जनु सोचन
मोर मनोरथु सुरतरु फूला ❀ फरत करिनि जिमि हतेउ समूला
अवध उजारि कीन्हि कैकेयीं ❀ दीन्हिसि अचल बिपति कै नेईं

राजा माथे पर हाथ रखकर, दोनों आँखें बन्द कर, इस तरह सोच करने लगे, मानो सोच ही शरीर धारणकर सोच कर रहा हो। (वे सोचने लगे—) हाय, मेरा मनोरथ रूपी कल्पवृक्ष फूल चुका था, फल लगते ही मानो हथिनी

---

१. बाज़। २. बटेर। ३. बदरंग।

(कैकेयी) ने उसे जड़-मूल से उखाड़ फेंका। कैकेयी ने अयोध्या को उजाड़ दिया और अटल विपत्ति की अचल नींव डाल दी।

दो० कवनें अवसर का भयउ गयउँ नारि बिस्वास।
जोग सिद्धि फल समय जिमि जतिहि[1] अबिद्या नास।

हाय! क्या होने को था और क्या हो गया? स्त्री का विश्वास करके मैं वैसे ही मारा गया, जैसे योग-सिद्धि का फल मिलने के समय योगी को अविद्या नष्ट कर देती है।

एहि बिधि राउ मनहिं मन झाँखा ❀ देखि कुभाँति कुमति मनु माँखा
भरतु कि राउर पूत न होहीं ❀ आनेहु मोल बेसाहि कि मोहीं

राजा इस तरह मन ही मन झींक रहे हैं। उनका बुरा हाल देखकर दुष्ट-बुद्धि कैकेयी मन में बुरी तरह से क्रोधित हुई और बोली—भरत क्या आपके पुत्र नहीं हैं? क्या आप मुझे दाम देकर ख़रीद लाये हैं?

जो सुनि सरु अस लाग तुम्हारें ❀ काहे न बोलेहु बचनु सँभारे
देहु उतरु अनु[2] करहु कि नाहीं ❀ सत्यसंध तुम्ह रघुकुल माहीं

जो मेरी बात सुनते ही आपको बाण-सा लगा, तो आप पहले ही सोच-समझकर क्यों नहीं बोले? या तो 'हाँ' कीजिये, या नाहीं कर दीजिये। आप रघु के वंश में सत्य प्रतिज्ञा वाले प्रसिद्ध हैं।

देन कहेहु अब जनि बरु देहू ❀ तजहु सत्य जग अपजसु लेहू
सत्य सराहि कहेहु बरु देना ❀ जानेहु लेइहि माँगि चबेना

आप ही ने वर देने को कहा था; अब भले ही न दीजिये। सत्य को त्याग दीजिये और जगत् में अपयश लीजिये। सत्य की बड़ी बड़ाई करके वर देने को कहा था, आपने समझा होगा कि यह चबैना माँग लेगी।

सिबि दधीचि बलि जो कछु भाषा ❀ तनु धनु तजेउ बचन पनु राखा
अति कटु बचन कहत कैकेई ❀ मानहु लोन जरे पर देई

राजा शिवि, दधीचि और बलि ने जो कुछ कहा, अपना शरीर और धन त्यागकर भी उन्होंने अपने वचन की प्रतिज्ञा को निबाहा। कैकेयी अत्यन्त कड़वे वचन कह रही है; मानो जले हुए पर नमक छिड़क रही हो।

---

१. योगी। २. नहीं तो।

दो०—धरम धुरंधर धीर धरि नयन उघारे रायँ।
सिर धुनि लीन्हि उसास असि[1] मारेसि मोहि कुठायँ[2]॥

धर्म की धुरी को धारण करने वाले महाराज ने धीरज धरकर नेत्र खोले और सिर धुनकर तथा लम्बी साँस लेकर कहा कि इसने मुझे बड़े कुठौर मारा है।

आगें दीखि जरत रिस भारी ❀ मनहुँ रोष तरवारि उघारी
मूठि कुबुद्धि धार निठुराई ❀ धरी कूबरी सान बनाई

प्रचंड क्रोध से जलती हुई कैकेयी सामने इस प्रकार दिखाई दी, मानो क्रोधरूपी तलवार म्यान से बाहर खड़ी हो। कुबुद्धि उसकी मूठ है, निष्ठुरता धार है, और वह कूबरी (मन्थरा) रूपी सान पर धरकर तेज़ की हुई है।

लखी महीप कराल कठोरा ❀ सत्य कि जीवनु लेइहि मोरा
बोले राउ कठिन करि छाती ❀ बानी सबिनय तासु सोहाती

राजा ने देखा कि वह (तलवार) बड़ी ही भयानक और कठोर है। और वह सत्य को या जीवन को ले लेगी। राजा कड़ी छाती करके, बहुत ही नम्रता के साथ कैकेयी को सुहाती हुई वाणी बोले—

प्रिया बचन कस कहसि कुभाँती ❀ भीरु प्रतीति प्रीति करि हाँती[3]
मोरें भरतु रामु दुइ आँखी ❀ सत्य कहउँ करि संकरु साखी

हे प्रिये! हे भीरु! विश्वास और प्रीति को नष्ट करके ऐसी बुरी तरह वचन क्यों कह रही हो? मैं शङ्करजी की साक्षी देकर सत्य कहता हूँ कि भरत और रामचन्द्र दोनों मेरी आँखें हैं।

अवसि दूतु मैं पठउब प्राता ❀ ऐहहिं बेगि सुनत दोउ भ्राता
सुदिन सोधि सबु साजु सजाई ❀ देउँ भरत कहुँ राजु बजाई

मैं सवेरे अवश्य दूत भेजूँगा। दोनों भाई (भरत-शत्रुघ्न) सुनते ही जल्दी चले आयेंगे। अच्छा दिन देखकर, सब तैयारी कर डंका बजाकर बड़ी धूमधाम से मैं भरत को राज्य दे दूंगा।

दो०—लोभु न रामहिं राजु कर बहुत भरत पर प्रीति।
मैं बड़ छोट बिचारि जियँ करत रहेउँ नृपनीति॥३१

१. ऐसी। २. कुठौर, मर्मस्थान पर। ३. नष्ट।

राम को राज्य का लोभ नहीं है और भरत पर तो उनकी बड़ी ही प्रीति है। मैं ही अपने जी में बड़े-छोटे का विचार करके राजनीति का पालन कर रहा था।

राम सपथ सत कहउँ सुभाऊ ❀ राममातु कछु कहेउ न काऊ
मैं सबु कीन्ह तोहि बिनु पूँछें ❀ तेहि तें परेउ मनोरथ छूँछें[1]

मैं राम की सौ बार सौगन्ध खाकर स्वभाव ही से (सत्य) कहता हूँ कि राम की माता (कौशल्या) ने इस विषय में मुझसे कभी कुछ नहीं कहा। अवश्य ही मैंने सब काम तुमसे बिना पूछे किया, इसी से मेरा मनोरथ खाली गया।

रिस परिहरु अब मंगल साजू ❀ कछु दिन गयें भरत जुबराजू
एकहि बात मोहि दुखु लागा ❀ बर दूसर असमंजस माँगा

अब क्रोध को दूरकर मङ्गल साज सजा, कुछ ही दिनों बाद भरत युवराज हो जायँगे। एक ही बात से मुझे दुःख लगा, जो तुमने दूसरा वर बड़ी अड़चन का माँगा।

अजहूँ हृदय जरत तेहि आँचा ❀ रिस परिहास कि साँचेहु साँचा
कहु तजि रोषु राम अपराधू ❀ सबु कोउ कहइ राम सुठि साधू

उसकी आँच से अब भी मेरा हृदय जल रहा है। यह क्रोध की दिल्लगी है या सचमुच सत्य है? क्रोध को त्याग कर राम का अपराध तो बता। सब तो कहते हैं कि राम तो बड़े ही सज्जन और साधु हैं।

तुहूँ सराहसि करसि सनेहू ❀ अब सुनि मोहि भयेउ सन्देहू
जासु सुभाउ अरिहि अनुकूला ❀ सो किमि करिहि मातु प्रतिकूला

तू भी राम की बड़ाई करती और उन पर स्नेह किया करती है। पर अब यह सुनकर मुझे सन्देह हो गया है। जिसका स्वभाव शत्रु को भी अनुकूल है, वह माता के प्रतिकूल आचरण कैसे कर सकता है?

दो०– प्रिया हास रिस परिहरहि माँगु बिचारि बिबेकु।
जेहि देखौं अब नयन भरि भरत राज अभिषेकु॥३२॥

हे प्रिये! हँसी और क्रोध को दूर कर; सोच-विचारकर समझदारी से वर

---

१. खाली।

माँग; जिससे अब मैं आँख भरकर भरत का राज्याभिषेक देखूँ।

जिअइ मीन बरु बारि बिहीना ❀ मनि बिनु फनिकु¹ जिअइ दुख दीना
कहउँ सुभाउ न छलु मन माहीं ❀ जीवन मोर राम बिनु नाहीं

मछली चाहे पानी के बिना जीती रहे; मणि के बिना सर्प दुःख से दीन होकर चाहे जीता रहे; मैं अपना सहज स्वभाव कहता हूँ, मन में किसी तरह का छल नहीं है कि मेरा जीवन राम के बिना नहीं है।

समुझि देखु जिय प्रिया प्रबीना ❀ जीवनु राम दरस आधीना
सुनि मृदु बचन कुमति अस जरई ❀ मनहुँ अनल आहुति घृत परई

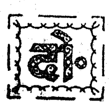
हे चतुर प्रिये! जी में समझकर देख, मेरा जीवन राम के दर्शन के अधीन है। राजा के ऐसे कोमल वचनों को सुनकर वह दुष्ट बुद्धि कैकेयी अत्यन्त जल रही है। मानो अग्नि में घी की आहुतियाँ पड़ रही हैं।

कहइ करहु किन कोटि उपाया ❀ इहाँ न लागिहिं राउरि माया
देहु कि लेहु अजसु करि नाहीं ❀ मोहिं न बहुत प्रपंच सोहाहीं

कैकेयी कहती है—आप करोड़ों उपाय क्यों न करें, यहाँ आपकी चाल-बाज़ी न चलेगी। (मैंने जो माँगा) उसे दीजिये या नाहीं करके अपयश लीजिये। बहुत प्रपञ्च मुझे अच्छे नहीं लगते।

रामु साधु तुम्ह साधु सयाने ❀ राम मातु भलि सब पहिचाने
जस कौसिलाँ मोर भल ताका ❀ तस फलु उन्हहिं देउँ करि साका

राम साधु हैं, आप सयाने साधु हैं, और राम की माता भी भली हैं, मैंने सबको पहचान लिया है। कौशल्या ने जैसा मेरा भला चाहा है, वैसा ही मैं भी उनको फल चखाऊँगी, जो बहुत दिन याद रहेगा।



होत प्रात मुनिबेष धरि जौं न रामु बन जाहिं।
मोर मरनु राउर अजसु नृप समुझिअ मन माहिं॥

हे राजन्! जो प्रातःकाल होते ही राम मुनि का वेष धारणकर वन को नहीं जाते, तो मन में समझ लीजिये मेरा मरना होगा और आपका अपयश।

अस कहि कुटिल भई उठि ठाढ़ी ❀ मानहुँ रोष तरंगिनि बाढ़ी
पाप पहार प्रगट भइ सोई ❀ भरी क्रोध जल जाइ न जोई

---

१. साँप।

दुष्ट (कैकेयी) ऐसा कहकर उठ खड़ी हुई। मानो क्रोध की नदी उमड़ी हो। वह नदी पापरूपी पहाड़ से प्रकट हुई है और क्रोधरूपी जल से भरी है (वह ऐसी भयानक है कि) देखी नहीं जाती।

दोउ बर कूल कठिन हठ धारा ❁ भवँर कूबरी बचन प्रचारा
ढाहत भूप रूप तरु मूला ❁ चली बिपति बारिधि अनुकूला

दोनों वरदान उस नदी के दो किनारे हैं; कैकेयी का कठिन हठ ही उसकी धारा है और मन्थरा के वचनों की प्रेरणा ही भँवर है। राजारूपी वृक्ष को जड़-मूल से ढहाती हुई वह विपत्तिरूपी समुद्र की ओर चली है। [रूपक अलंकार]

लखी नरेस बात सब साँची ❁ तिय मिसु मीचु सीस पर नाची
गहि पद बिनय कीन्ह बैठारी ❁ जनि दिनकर कुल होसि कुठारी

राजा ने देखा कि बात वास्तव में सच्ची है, स्त्री के बहाने मेरी मृत्यु सिर पर नाच रही है। कैकेयी के पाँव पकड़कर, उसको बिठाकर उन्होंने प्रार्थना की कि तू सूर्यकुल की कुल्हाड़ी मत बन।

माँगु माथ अबहीं देउँ तोही ❁ राम बिरह जनि मारसि मोही
राखु राम कहुँ जेहि तेहि भाँती ❁ नाहिं त जरिहि जनम भरि छाती

तू मेरा मस्तक माँग ले, मैं तुझे अभी दे दूँ। पर राम के विरह में मुझे मत मार। जिस तरह बने, उसी तरह राम को रख, नहीं तो जन्म भर तेरी छाती जलेगी।

दो॰ देखी ब्याधि असाधि नृप परेउ धरनि धुनि माथ।
कहत परम आरत बचन राम राम रघुनाथ ॥३४॥

राजा ने देखा कि रोग असाध्य है, तब वे अत्यन्त आर्त्तवाणी से राम ! राम ! रघुनाथ ! कहते हुए सिर पीटकर ज़मीन पर गिर पड़े।

ब्याकुल राउ सिथिल सब गाता ❁ करिनि कलपतरु मनहुँ निपाता
कंठु सूख मुख आव न बानी ❁ जनु पाठीनु दीन बिनु पानी

राजा व्याकुल हो गये। उनके सब अङ्ग ढीले पड़ गये। मानो हथिनी ने कल्पवृक्ष को उखाड़ फेंका हो। कंठ सूख गया। मुँह से बात नहीं निकलती। जैसे बिना पानी के मछली (पहिना) दीन और दुखी हो।

पुनि कह कटु कठोर कैकेई ❀ मनहुँ घाय महुँ माहुर देई
जौं अंतहुं अस करतब रहेऊ ❀ माँगु माँगु तुम्ह केहिं बल कहेऊ

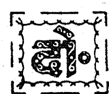
कैकेयी फिर कड़वे और कठोर वचन बोली। मानो घाव में ज़हर भर रही हो। जो अन्त में यही करना था, तो आपने किस बल पर माँग-माँग कहा ?

दुइ कि होइ एक समय भुआला ❀ हँसब ठठाइ फुलाउब गाला
दानि कहाउब अरु कृपनाई ❀ होइ कि खेम कुसल रौताई

हे राजा ! ठहाका मारकर हँसना और गाल फुलाना ये दोनों काम कहीं एक साथ हो सकते हैं ? दानी भी कहाना और कंजूसी भी करना ! रजपूती में कुशल-क्षेम कहाँ ?

छाँड़हु बचनु कि धीरज धरहू ❀ जनि अबला जिमि करुना करहू
तनु तिय तनय धामु धनु धरनी ❀ सत्यसंध कहँ तृन सम बरनी

या तो वचन (प्रतिज्ञा) छोड़ दीजिये या धीरज धरिये। स्त्री के समान विलाप मत कीजिये। शरीर, स्त्री, पुत्र, घर, धन और पृथ्वी सब सत्य प्रतिज्ञा वाले के लिये तिनके के बराबर कहे गये हैं। [विकल्प अलंकार]



मरम बचन सुनि राउ कह कहु कछु दोष न तोर।
लागेउ तोहि पिसाच जिमि कालु कहावत मोर॥३५

कैकेयी के मर्म-भेदी वचन सुनकर राजा (दशरथ) ने कहा कि तू कुछ भी कह, तेरा कुछ भी दोष नहीं है। तुझे तो मानो पिशाच लगा हुआ है, जो मेरा काल है।

चहत न भरत भूपतहि भोरें ❀ बिधि बस कुमति बसी जिय तोरें
सो सबु मोर पाप परिनामू ❀ भयेउ कुठाहर जेहिं बिधि बामू

भरत तो भूलकर भी राज-पद नहीं चाहता। पर होनहार-वश तेरे ही जी में कुबुद्धि बस गई है। यह सब मेरे पापों का परिणाम है जिससे कुसमय में विधाता विपरीत हो गया।

सुबस बसिहि फिरि अवध सुहाई ❀ सब गुन धाम राम प्रभुताई
करिहहिं भाइ सकल सेवकाई ❀ होइहि तिहुँ पुर राम बड़ाई

सुन्दर अयोध्या फिर सुख, शान्ति से बसेगी और सकल गुणों के धाम

राम की प्रभुता भी हो जायगी; सब भाई राम की सेवा करेंगे और तीनों लोकों में राम की बड़ाई होगी।

तोर कलंकु मोर पछिताऊ ❀ मुयेहुँ न मिटिहि न जाइहि काऊ
अब तोहि नीक लाग करु सोई ❀ लोचन ओट[1] बैठु मुहुँ गोई

पर तेरा कलंक और मेरा पछतावा तो कभी मरने पर भी नहीं मिटेगा, और न कभी जायगा। अब तुझे जो अच्छा लगे, वह कर। मुँह छिपाकर मेरी आँखों की ओट (आड़) जा बैठ।

जब लगि जिअहुँ कहहुँ कर जोरी ❀ तब लगि जनु कछु कहसि बहोरी[2]
फिर पछितैहसि अंत अभागी ❀ मारसि गाइ नहारू[3] लागी

मैं हाथ जोड़कर कहता हूँ कि जब तक मैं जीता रहूँ तब तक फिर कुछ न कहना। अरी अभागिनी! तू अन्त में फिर पछतायेगी, जो तू ताँत के लिए गौ को मारती है। अथवा सिंह के बच्चे के लिये गौ को मारती है। (नहारू नाम सिंह के बच्चे का भी है। नहरुआ एक रोग भी होता है जो कहा जाता है कि गाय के खून से धोने से जाता है।)

दो०—परेउ राउ कहि कोटि बिधि काहे करसि निदानु।
कपट सयानि न कहति कछु जागति मनहुँ मसानु[4]॥

राजा करोड़ों तरह से कहकर कि 'तू क्यों सर्वनाश करती है?' पृथ्वी पर गिर पड़े। पर कपट करने में चतुर कैकेयी कुछ बोलती नहीं। मानो (मौन होकर) मसान जगा रही है।

राम राम रट बिकल भुआलू ❀ जनु बिनु पंख बिहंग बेहालू
हृदयँ मनाव भोरु जनि होई ❀ रामहिं जाइ कहइ जनि कोई

राजा दशरथ राम-राम रटते हुए ऐसे व्याकुल हैं कि जैसे बिना पंख के पक्षी बेहाल हो। वे अपने हृदय में मनाते हैं कि सवेरा न हो और कोई जाकर यह खबर रामचन्द्र से न कह दे।

उदय करहु जनि रबि रघुकुल गुर ❀ अवध बिलोकि सूल होइहि उर
भूप प्रीति कैकइ कठिनाई ❀ उभय अवधि बिधि रची बनाई

हे रघुकुल के गुरु सूर्य भगवान्! आप अपना उदय न करें; क्योंकि

१. आड़। २. फिर। ३. ताँत। ४. प्रेतमंत्र सिद्ध करने के लिये श्मशान में जागा जाता है।

अयोध्या की दशा देखकर आपके हृदय में बड़ी वेदना होगी। राजा की प्रीति और कैकेयी की कठोरता इन दोनों को ब्रह्मा ने हद तक रचकर बनाया है।

बिलपत नृपहि भयेउ भिनुसारा ❀ बीना बेनु संख धुनि द्वारा
पढ़हिं भाट गुन गावहिं गायक ❀ सुनत नृपहिं जनु लागहिं सायक

विलाप करते-करते राजा को सवेरा हो गया। राजद्वार पर वीणा, वेणु और शंख की ध्वनि होने लगी। भाट लोग यश वर्णन कर रहे हैं और गवैये गुण गा रहे हैं। सुनकर राजा को वे बाण जैसे लगते हैं।

मंगल सकल सुहाहिं न कैसें ❀ सहगामिनिहिं बिभूषन जैसें
तेहि निसि नींद परी नहिं काहू ❀ राम दरस लालसा उछाहू

वे सब मङ्गल साज राजा को कैसे नहीं सोहाते हैं, जैसे पति के साथ सती होने वाली स्त्री को गहने। रामचन्द्र के दर्शन की लालसा और उत्साह के कारण उस रात में किसी को नींद नहीं आई।



द्वार भीर सेवक सचिव कहहिं उदित रबि देखि।
जागउ अजहुँ न अवधपति कारनु कवनु बिसेषि ३७

राजद्वार पर मन्त्री और सेवकों की भीड़ लगी है। वे सब सूर्योदय हुआ देखकर कहते हैं कि आज अवधपति (दशरथ) अभी नहीं जागे, इसका कौन-सा विशेष कारण है ?

पछिले पहर भूप नित जागा ❀ आजु हमहिं बड़ अचरजु लागा
जाहु सुमंत्र जगावहु जाई ❀ कीजिअ काजु रजायसु पाई

राजा नित्य ही रात के पिछले पहर में जागा करते हैं। किन्तु आज हमें बड़ा आश्चर्य हो रहा है। हे सुमन्त्र ! तुम जाओ और जाकर राजा को जगाओ। उनकी आज्ञा पाकर काम-काज किया जाय।

गए सुमंत्रु तब राउर[1] माहीं ❀ देखि भयावन जात डेराहीं
धाइ खाइ जनु जाइ न हेरा ❀ मानहुँ बिपति बिषाद बसेरा

तब सुमन्त्र राजमहल में गये। पर महल की डरावनी हालत देखकर वे जाते हुए डर रहे हैं। महल मानो दौड़कर काट खायगा। उसकी ओर देखा भी नहीं जाता। मानो विपत्ति और विषाद ने वहाँ डेरा डाल रक्खा है।

---

१. राजमहल।

पूछे कोउ न ऊतरु देई ❀ गए जेहिं भवन भूप कैकेई
कहि जयजीव बैठ सिरु नाई ❀ देखि भूप गति गयउ सुखाई

पूछने पर कोई जवाब नहीं देता; वे उस महल में गये, जहाँ राजा और कैकेयी थे। 'जयजीव' कहकर, सिर नवाकर वे बैठ गये और राजा की हालत देखकर तो वे सूख ही गये।

सोच बिकल बिबरन महि परेऊ ❀ मानहुँ कमल मूलु परिहरेऊ
सचिव सभीत सकइ नहिं पूँछी ❀ बोली असुभ भरी सुभ छूँछी

राजा सोच के मारे बेहाल हैं; चेहरे का रंग उड़ गया है; ज़मीन पर ऐसे पड़े हैं मानो कमल जड़ छोड़कर पड़ा हो। मंत्री मारे डर के कुछ पूछ नहीं सकते, तब अशुभ से भरी हुई और शुभ से खाली कैकेयी बोली—

दो० परी न राजहिं नींद निसि हेतु जान जगदीसु।
राम राम रटि भोरु[1] किय कहइ न मरमु महीसु।३८

राजा को रात भर नींद नहीं आई। इसका कारण जगदीश्वर ही जानें। इन्होंने राम-राम रटकर सवेरा कर दिया; परन्तु इसका कोई मर्म नहीं बतलाते।

आनहु रामहिं बेगि बोलाई ❀ समाचार तब पूँछेहु आई
चलेउ सुमंत्रु राय रुख जानी ❀ लखी कुचालि कीन्हि कछु रानी

तुम जल्दी राम को बुला लाओ। तब आकर समाचार पूछना। राजा का रुख जानकर सुमन्त्र चले और समझ गये कि रानी ने अवश्य कुछ कुचाल की है।

सोच बिकल मग परइ न पाऊ ❀ रामहिं बोलि कहिहि का[2] राऊ
उर धरि धीरजु गयेउ दुआरें ❀ पूँछहिं सकल देखि मनु मारे

रामचन्द्र को बुलाकर राजा क्या कहेंगे, इसी सोच में बेचैन सुमन्त्र का पाँव आगे को नहीं पड़ता। किसी तरह हृदय में धीरज धरकर वह राजद्वार पर गये। उसको मन मारे हुए (उदास) देखकर सब पूछने लगे—

समाधानु करि सो सबही का ❀ गयउ जहाँ दिनकर कुल टीका
राम सुमंत्रहि आवत देखा ❀ आदरु कीन्ह पिता सम लेखा

१. सवेरा। २. क्या?

उन सब लोगों का समाधान करके सुमन्त्र वहाँ गये, जहाँ सूर्यकुल-तिलक श्रीरामचन्द्र थे। रामचन्द्र ने सुमन्त्र को आते देखा, तो पिता के समान समझकर उनका आदर किया।

निरखि बदनु कहि भूप रजाई[1] ❀ रघुकुल दीपहिं चलेउ लेवाई
राम कुभाँति सचिव सँग जाहीं ❀ देखि लोग जहँ तहँ बिलखाहीं

रामचन्द्र का श्रीमुख देखकर और राजा की आज्ञा सुनाकर वह रघुकुल के दीपक रामचन्द्र को लिवा चले। रामचन्द्र बुरी तरह से (पैदल, बिना चँवर, छत्र आदि के) मन्त्री के साथ जा रहे हैं, यह देखकर लोग जहाँ-तहाँ विषाद करने लगे।

दो० जाइ दीख रघुबंस मनि नरपति निपट कुसाजु।
सहमि[2] परेउ लखि सिंघिनिहि मनहुँ बृद्ध गजराजु॥

रघुवंशमणि रामचन्द्र ने जाकर राजा को बिलकुल बुरी हालत में पड़े देखा। मानो सिंहिनी को देखकर कोई बूढ़ा हाथी सहमकर गिर पड़ा हो।

सूखहिं अधर जरइ सब अंगू ❀ मनहुँ दीन मनि हीन भुअंगू
सरुष समीप देखि कैकेई ❀ मानहु मीचु[3] घरीं गनि लेई

राजा के ओंठ सूख रहे हैं। सब शरीर जल रहा है। मानो बिना मणि के साँप दुःखी हो रहा हो। पास ही क्रोध से भरी हुई कैकेयी को देखा। मानो मृत्यु ही बैठी (राजा के जीवन की अंतिम) घड़ियाँ गिन रही हो।

करुनामय मृदु राम सुभाऊ ❀ प्रथम दीख दुखु सुना न काऊ
तदपि धीर धरि समउ बिचारी ❀ पूँछी मधुर बचन महतारी

रामचन्द्रजी का स्वभाव करुणामय और कोमल है। अपने जीवन में उन्होंने पहली बार दुःख देखा, और सुना तो कभी नहीं था। तो भी समय का विचार करके, हृदय में धीरज धरकर उन्होंने मीठे वचनों से माता कैकेयी से पूछा—

मोहि कहु मातु तात दुख कारन ❀ करिअ जतन जेहिं होइ निबारन
सुनहु राम सब कारन एहू ❀ राजहि तुम्ह पर बहुत सनेहू

हे माता! मुझे पिताजी के दुःख का कारण कहो जिसमें वही यत्न किया जाय, जिससे दुःख दूर हो। (कैकेयी ने कहा—) हे राम! सुनो, सारा कारण

१. राजाज्ञा। २. डरकर। ३. मृत्यु।

यही है कि राजा का तुम पर बहुत ही स्नेह है।

देन कहेन्हि मोहिं दुइ बरदाना ❀ माँगेउँ जो कछु मोहिं सुहाना
सो सुनि भयेउ भूप उर सोचू ❀ छाँड़ि न सकहिं तुम्हार सँकोचू

इन्होंने मुझे दो वरदान देने को कहा था। मुझे जो कुछ अच्छा लगा, वही माँगा। उसे सुनकर राजा के हृदय में सोच हो गया; क्योंकि ये तुम्हारा संकोच नहीं छोड़ सकते।

दो०— सुत सनेहु इत बचनु उत संकट परेउ नरेसु।
सकहु त आयसु धरहु सिर मेटहु कठिन कलेसु।४०।

इधर तो पुत्र का स्नेह और उधर वचन (प्रतिज्ञा); राजा इसी धर्म-संकट में पड़े हैं। यदि तुम कर सकते हो, तो राजा की आज्ञा सिर चढ़ाओ और इनके कठिन क्लेश को मिटाओ।

निधरक[1] बैठि कहइ कटु बानी ❀ सुनत कठिनता अति अकुलानी
जीभ कमान बचन सर नाना ❀ मनहुँ महिप मृदु लच्छ[2] समाना

रानी बेधड़क बैठकर ऐसी कड़वी वाणी कह रही है, जिसको सुनकर स्वयं कठोरता भी बहुत घबरा उठी। रानी की जीभ मानो धनुष है; वचन बहुत से तीर हैं, और महाराज कोमल निशाने के समान हैं।

जनु कठोरपनु धरे सरीरू ❀ सिखइ धनुष बिद्या बर बीरू
सबु प्रसंगु रघुपतिहि सुनाई ❀ बैठि मनहुँ तनु धरि निठुराई

मानो कठोरपन शूरवीर का शरीर धारण कर धनुष-विद्या सीख रहा है। रामचन्द्र को सब हाल सुनाकर वह इस तरह बैठी है, मानो निठुरता ही शरीर धारण किये हुये हो।

मन मुसुकाइ भानुकुल भानू ❀ रामु सहज आनन्द निधानू
बोले बचन बिगत सब दूषन ❀ मृदु मंजुल जनु बाग बिभूषन

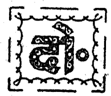
स्वभाव ही से आनन्द के धाम, सूर्यकुल के सूर्य रामचन्द्र मन में मुसकराकर ऐसे कोमल सुन्दर और सब दोषों से रहित वचन बोले, मानो वे वाणी के भूषण ही थे।

---

१. बेखटके। २. लक्ष्य, निशाना।

सुनु जननी सोइ सुतु बड़ भागी ❀ जो पितु मातु बचन अनुरागी
तनय मातु पितु तोषनि हारा ❀ दुर्लभ जननि सकल संसारा

हे माता ! सुन, वही पुत्र बड़भागी है जो पिता और माता के वचनों का पालन करने वाला हो। माता-पिता को सन्तुष्ट करने वाला पुत्र, हे माता ! सारे संसार में दुर्लभ है।

 मुनिगन मिलनु बिसेषि बन सबहि भाँति हित मोर।
तेहि महँ पितु आयसु बहुरि संमत जननी तोर ॥४१॥

वन में ज़्यादा करके मुनियों से भेंट होगी, जिसमें मेरा तो सभी प्रकार से कल्याण है। फिर उसमें भी पिताजी की आज्ञा और हे जननी ! तुम्हारी भी सम्मति है।

[द्वितीय समुच्चय अलङ्कार]

भरतु प्रान प्रिय पावहिं राजू ❀ बिधि सब बिधि मोहिं सनमुख आजू
जौं न जाउँ बन ऐसेहु काजा ❀ प्रथम गनिअ मोहि मूढ़ समाजा

मेरे प्राणप्रिय भरत राज्य पावेंगे। आज तो सभी प्रकार से विधाता मेरे अनुकूल हैं। जो ऐसे काम में भी मैं वन को न जाऊँ तो मूर्खों के समाज में सबसे पहले मैं ही गिना जाऊँगा।

सेवहिं अरँडु कलपतरु त्यागी ❀ परिहरि अमृत लेहिं बिषु माँगी
तेउ न पाइ अस समउ चुकाहीं ❀ देखु बिचारि मातु मन माहीं

जो कल्पवृक्ष को छोड़कर रेंड की सेवा करते हैं और अमृत को छोड़कर विष माँग लेते हैं, वे भी हे माता ! मन में विचार करके देखो, ऐसा अवसर पाकर कभी न चूकेंगे।

अंब एक दुखु मोहिं बिसेषी ❀ निपट बिकल नरनायकु देखी
थोरिहि बात पितहि दुख भारी ❀ होति प्रतीति न मोहिं महतारी

हे माता ! मुझे एक बात का विशेष रूप से दुःख है, जो मैं राजा को बिलकुल व्याकुल देख रहा हूँ। ज़रा-सी बात के लिए पिताजी को इतना भारी दुःख हो, इससे हे माता ! मुझे इस बात पर विश्वास नहीं होता।

राउ धीर गुन उदधि अगाधू ❀ भा मोहि तें कछु बड़ अपराधू
जा ते मोहि न कहत कछु राऊ ❀ मोरि सपथ तोहि कह सतिभाऊ

राजा तो धैर्यवान् और गुणों के अथाह समुद्र हैं। अवश्य ही मुझसे कोई

बड़ा अपराध हो गया है। इसी से महाराज मुझसे कुछ नहीं कहते। हे माता ! तुझे मेरी सौगन्ध है, तू सच-सच कह।

दो०—सहज सरल रघुबर बचन कुमति कुटिल करि जान।
चलइ जोंक जल बक्रगति जद्यपि सलिलु समान ॥४२

रामचन्द्रजी के स्वभाव से ही सीधे वचनों को कुबुद्धि कैकेयी टेढ़ा समझ रही है। जिस तरह पानी समान होने पर भी जोंक उसमें टेढ़ी ही चाल से चलती है।

रहसी रानि राम रुख पाई ❁ बोली कपट सनेहु जनाई
सपथ तुम्हार भरत कै आना ❁ हेतु न दूसर मैं कछु जाना

रानी (कैकेयी) रामचन्द्र का रुख पाकर हर्षित हो गई और कपट-पूर्ण स्नेह जनाकर बोली—हे पुत्र ! तुम्हारी और भरत की सौगन्ध है, मैं और दूसरा कुछ भी कारण नहीं जानती।

तुम्ह अपराधु जोगु नहिं ताता ❁ जननी जनक बन्धु सुखदाता
राम सत्य सबु जो कछु कहहू ❁ तुम्ह पितु मातु बचन रत अहहू

हे पुत्र ! तुम अपराध के योग्य नहीं हो। तुम तो माता-पिता और भाइयों को सुख देने वाले हो। हे राम ! तुम जो कुछ कह रहे हो, सब सत्य है। तुम पिता और माता के वचनों के पालन में तत्पर हो।

पितहिं बुझाइ कहहु बलि सोई ❁ चौथे पन जेहिं अजसु न होई
तुम्ह सम सुअन सुकृति जेहिं दीन्हे ❁ उचित न तासु निरादरु कीन्हे

हे पुत्र ! मैं बलि जाती हूँ, तुम पिता को समझाकर वही बात कहो कि जिसमें चौथेपन (बुढ़ापे) में इनका अपयश न हो। जिस पुण्य ने इनको तुम जैसे पुत्र दिये, उसका निरादर करना उचित नहीं है।

लागहिं कुमुख बचन सुभ कैसे ❁ मगहँ गयादिक तीरथ जैसे
रामहिं मातु बचन सब भाए ❁ जिमि सुरसरि गत सलिल सुहाये

कैकेयी के बुरे मुख में ये शुभ वचन कैसे लगते हैं जैसे मगध देश में गया आदि तीर्थ। माता (कैकेयी) के सब वचन रामचन्द्रजी को ऐसे अच्छे लगे, जिस तरह गंगाजी में मिलकर सभी प्रकार के जल शुभ और सुन्दर हो जाते हैं।

दो०—गइ मुरुछा रामहि सुमिरि नृप फिरि करवट लीन्ह।
सचिव राम आगमन कहि बिनय समय सम कीन्ह॥

इतने में राजा की मूर्छा दूर हुई और उन्होंने रामचन्द्र को याद करके फिर करवट बदली। मन्त्री ने रामचन्द्र के आने की खबर देकर समयानुसार विनती की।

अवनिप अकनि रामु पगु धारे ❀ धरि धीरजु तब नयन उघारे
सचिवँ सँभारि राउ बैठारे ❀ चरनु परत नृप रामु निहारे

राजा ने सुना कि राम पधारे हैं, तब उन्होंने धीरज धरके आँखें खोल दीं। मन्त्री ने सँभालकर राजा को बैठा दिया। राजा ने रामचन्द्रजी को अपने चरणों में पड़ते हुए देखा।

लिये सनेह बिकल उर लाई ❀ गै मनि मनहुँ फनिक फिरि पाई
रामहि चितइ रहेउ नरनाहू ❀ चला बिलोचन बारि प्रबाहू

स्नेह से विकल राजा ने रामचन्द्रजी को हृदय से लगा लिया, मानो साँप ने अपनी खोई हुई मणि फिर पा ली है। महाराज (दशरथ) राम को देखते ही रह गये। उनके नेत्रों से जल की धारा बह चली।

सोक बिबस कछु कहइ न पारा ❀ हृदयँ लगावत बारहिं बारा
बिधिहि मनाव राउ मन माहीं ❀ जेहिं रघुनाथ न कानन जाहीं

शोक से विवश हुए राजा कुछ कह नहीं सकते। वे बार-बार रामचन्द्रजी को हृदय से लगाते हैं और मन ही मन विधाता से मनाते हैं कि जिससे रामचन्द्रजी वन को न जायँ।

सुमिरि महेसहि कहइ निहोरी ❀ बिनती सुनहु सदासिव मोरी
आसुतोष तुम्ह अवढर दानी ❀ आरति हरहु दीन जनु जानी

राजा महादेवजी का स्मरण करके उनसे निहोरा करते हुये कहते हैं—हे सदाशिव! आप मेरी विनती सुनिये। आप शीघ्र प्रसन्न होने वाले हैं; मुँह माँगा दे देने वाले हैं। मुझे अपना दीन जन जानकर मेरे दुःख को दूर कीजिये।

दो०—तुम्ह प्रेरक सब के हृदयँ सो मति रामहिं देहु।
बचनु मोर तजि रहहिं घर परिहरि सीलु सनेहु।४४।

हे शिव ! आप सबके हृदय-प्रेरक हैं। आप रामचन्द्र को ऐसी बुद्धि दीजिये कि वे मेरे वचन को त्यागकर शील और स्नेह को छोड़कर घर ही रहें।

अजसु होउ जग सुजसु नसाऊ ❀ नरक परौं बरु सुरपुर जाऊँ
सब दुख दुसह सहावहु मोहीं ❀ लोचन ओट रामु जनि होहीं

संसार में चाहे मेरी अपकीर्त्ति हो, सुयश का नाश हो, मैं नरक में गिरूँ या स्वर्ग चला जाय, और भी न सहने योग्य सभी प्रकार के दुःख मुझसे सहन करा लीजिये, पर रामचन्द्र मेरी आँखों की ओट न हों।

अस मन गुनइ राउ नहिं बोला ❀ पीपर पात सरिस मनु डोला
रघुपति पितहि प्रेम बस जानी ❀ पुनि कछु कहिहि मातु अनुमानी

राजा मन ही मन इस तरह सोच रहे हैं, कुछ बोलते नहीं हैं। उनका मन पीपल के पत्ते की तरह काँप रहा है। रामचन्द्रजी ने पिता को प्रेम के वश में जानकर और माता फिर कुछ कहेगी (तो पिता जी को कष्ट होगा) ऐसा अनुमान करके—

देस काल अवसर अनुसारी ❀ बोले बचन बिनीत बिचारी
तात कहौं कछु करौं ढिठाई ❀ अनुचित छमब जानि लरिकाई

देश, काल और अवसर को विचारकर नम्रता से वचन बोले—हे पिताजी ! मैं कुछ कहता हूँ, यह ढिठाई करता हूँ; इस अनौचित्य को मेरा लड़कपन समझकर क्षमा कीजियेगा।

अति लघु बात लागि दुखु पावा ❀ काहुँ न मोहि कहि प्रथम जनावा
देखि गोसाँइहि पूछेउँ माता ❀ सुनि प्रसंगु भए सीतल गाता

आपने इस ज़रा-सी बात के लिये इतना भारी दुःख सहा ! मुझे किसी ने पहले ही कहकर यह बात क्यों नहीं जनाई ? हे गुसाईं ! आपको इस दशा में देखकर मैंने माता से पूछा। उनसे सारा प्रसंग सुनकर मेरे अंग शीतल हो गये।

दो०

मंगल समय सनेह बस सोच परिहरिअ तात।
आयसु देइअ हरषि हियँ कहि पुलके प्रभु गात ॥४५॥

हे पिताजी ! इस मंगल के समय में स्नेह-वश होकर सोच करना छोड़ दीजिये और हृदय में प्रसन्न होकर मुझे आज्ञा दीजिये। यह कहकर रामचन्द्रजी का शरीर पुलकित हो गया।

धन्य जनमु जगतीतल तासू ❀ पितहि प्रमोदु चरित सुनि जासू
चारि पदारथ करतल ताकें ❀ प्रिय पितु मातु प्रान सम जाकें

इस पृथ्वी तल पर उसका जन्म धन्य है जिसके चरित्र सुनकर पिता को परम आनन्द हो। चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) उसकी मुट्ठी में रहते हैं जिसको माता-पिता प्राणों के समान प्रिय हैं।

आयसु पालि जनम फलु पाई ❀ ऐहउँ बेगिहि होउ रजाई
बिदा मातु सन आवउँ माँगी ❀ चलिहउँ बनहि बहुरि पग लागी

आपकी आज्ञा का पालन कर और जन्म का फल पाकर मैं जल्दी ही लौट आऊँगा। आज्ञा दीजिये। मैं माता से विदा माँग आता हूँ। (वहाँ से लौटकर) आपके चरणों को फिर छूकर मैं वन को जाऊँगा।

अस कहि रामु गवनु तब कीन्हा ❀ भूप सोक बस उतरु न दीन्हा
नगर ब्यापि गइ बात सुतीछी ❀ छुअत चढ़ी जनु सब तन बीछी

ऐसा कहकर रामचन्द्रजी वहाँ से चल दिये। राजा ने शोक-वश कोई उत्तर नहीं दिया। यह अत्यन्त तीखी बात नगर भर में ऐसी जल्दी फैल गई कि जैसे डंक मारते ही बिच्छू का विष सारे शरीर में चढ़ गया हो।

सुनि भए बिकल सकल नर नारी ❀ बेलि बिटप जिमि देखि दवारी
जो जहँ सुनइ धुनइ सिर सोई ❀ बड़ बिषादु नहिं धीरजु होई

इस बात के सुनते ही स्त्री-पुरुष ऐसे व्याकुल हो गये जैसे वन में आग लगी देखकर वृक्ष और उन पर की लताएँ (मुर्झा जाती हैं)। जो जहाँ सुनता है, वह वहीं सिर धुनने लगता है। बड़ा दुःख है। किसी को धीरज नहीं बँधता।

दो० मुख सुखाहिं लोचन स्रवहिं सोकु न हृदयँ समाइ।
मनहुँ करुन रस कटकई उतरी अवध बजाइ ।४६।

सबके मुँह सूखे जाते हैं, आँखों से आँसू बहते हैं, शोक हृदय में नहीं समाता। मानो करुण-रस की सेना डंका बजाकर अयोध्या में उतर आई है।

मिलेहिं[1] माँझ बिधि बात बिगारी ❀ जहँ तहँ देहिं कैकइहि गारी
एहि पापिनहि बूझि का परेऊ ❀ छाइ भवन पर पावकु धरेऊ

१. मील (संस्कृत) पलक भाँजना।

पलक भाँजते भर में विधाता ने (बनी बनाई) बात बिगाड़ दी। लोग जहाँ-तहाँ कैकेयी को गाली दे रहे हैं। इस पापिनी को क्या सूझ पड़ा, जो इसने छाये हुये घर पर आग लगा दी।

निज कर नयन काढ़ि चह दीखा ❀ डारि सुधा बिषु चाहत चीखा
कुटिल कठोर कुबुद्धि अभागी ❀ भइ रघुबंस बेनु बन आगी

यह अपने हाथ से अपनी आँखों को निकालकर देखना चाहती है। और अमृत फेंककर, विष चखना चाहती है। यह कठोर, दुष्ट-बुद्धि, अभागिनी कैकेयी रघुवंश-रूपी बाँस के बन के लिए आग हो गई।

पालव बैठि पेड़ु एहिं काटा ❀ सुख महुँ सोक ठाटु धरि ठाटा
सदा रामु एहि प्रान समाना ❀ कारन कवन कुटिल पनु ठाना

इसने पल्लव पर बैठकर पेड़ को काट डाला और सुख में इसने शोक का ठाट ठट दिया। इसे तो रामचन्द्र सदा प्राणों के समान प्रिय थे; फिर किस कारण से इसने यह दुष्टता की?

सत्य कहहिं कबि नारि सुभाऊ ❀ सब बिधि अगहु अगाध दुराऊ
निज प्रतिबिंबु बरुकु[1] गहि जाई ❀ जानि न जाइ नारि गति भाई

कवि सत्य ही कहते हैं—स्त्री का स्वभाव सब प्रकार से पकड़ में न आने योग्य अथाह और भेद भरा होता है। अपनी परछाहीं भले ही पकड़ी जाय; पर भाई! स्त्रियों की गति जानी नहीं जाती।

दो०— **काह न पावकु जारि सक का न समुद्र समाइ।**
का न करै अबला प्रबल केहि जग कालु न खाइ॥४७

आग क्या नहीं जला सकती? समुद्र में क्या नहीं समा सकता? अबला कहाने वाली प्रबला स्त्री क्या नहीं कर सकती? और जगत् में काल किसे नहीं खाता?

का सुनाइ बिधि काह सुनावा ❀ का देखाइ चह काह देखावा
एक कहहिं भल भूप न कीन्हा ❀ बरु बिचारि नहिं कुमतिहि दीन्हा

विधाता ने क्या सुनाकर क्या सुना दिया और क्या दिखाकर अब वह क्या दिखाना चाहता है? कोई कहते हैं कि राजा नेअच्छा नहीं किया। इस

१. चाहे।

कुबुद्धि कैकेयी को विचारकर वर नहीं दिया।

जो हठि भयेउ सकल दुख भाजनु ❀ अबला बिबस ग्यानु गुनु गा[1]जनु
एक धरम परमिति पहिचाने ❀ नृपहि दोसु नहिं देहिं सयाने

जो हठ करके स्वयं सम्पूर्ण दुःखों के पात्र हो गये। स्त्री के वश में होने के कारण राजा का ज्ञान और गुण जाता रहा। कोई-कोई जो धर्म की मर्यादा को जानते हैं, और सयाने हैं, वे चतुर राजा को दोष नहीं देते।

सिबि दधीचि हरिचंद कहानी ❀ एक एक सन कहहिं बखानी
एक भरत कर संमत कहहीं ❀ एक उदास भायँ सुनि रहहीं

शिवि, दधीचि और हरिश्चन्द्र की कथा वे आपस में एक-दूसरे से बखान कर कहते हैं। कोई इसमें भरत की सम्मति बताते हैं और कोई-कोई सुनकर उदासीन रह जाते हैं।

कान मूँदि कर रद गहि जीहा ❀ एक कहहिं यह बात अलीहा[2]
सुकृत जाहिं अस कहत तुम्हारे ❀ रामु भरत कहुँ प्रान पियारे

कोई हाथों से कान मूँदकर और जीभ को दाँतों तले दबाकर कहते हैं— यह बात झूठ है। ऐसी बात कहने से तुम्हारे पुण्य नष्ट हो जायँगे। भरत को तो रामचन्द्र प्राणों के समान प्रिय हैं।

दो०—चंदु चवइ[3] बरु अनल कन सुधा होइ बिष तूल।
सपनेहुँ कबहुँ न करहिं किछु भरतु राम प्रतिकूल॥४८

चन्द्रमा चाहे आग की चिनगारियाँ बरसाने लगे और अमृत विष के समान हो जाय, परन्तु भरतजी स्वप्न में भी रामचन्द्रजी के विरुद्ध कुछ नहीं करेंगे। [प्रौढ़ोक्ति अलंकार]

एक बिधातहि दूषनु देहीं ❀ सुधा देखाइ दीन्ह बिषु जेहीं
खरभरु नगर सोचु सब काहू ❀ दुसह दाहु उर मिटा उछाहू

कोई विधाता को दोष देते हैं कि जिसने अमृत दिखाकर विष दे दिया। नगर भर में खलबली मच गई। सब कोई सोच में पड़ गये, हृदय में असहनीय जलन पैदा हो गई, उत्साह मिट गया। [ललित अलंकार]

---

१. गया। २. झूठ। ३. बरसाये।

विप्रबधू कुलमान्य जठेरी ❀ जे प्रिय परम कैकई केरी[1]
लगीं देन सिख सीलु सराही ❀ बचन बानसम लागहिं ताही

ब्राह्मणों की स्त्रियाँ, कुल की पूज्य बड़ी-बूढ़ी स्त्रियाँ, जो कैकेयी को परम प्रिय थीं, वे उसके शील की प्रशंसा कर उसे समझाने लगीं। पर उसे उनके वचन बाण के समान लगते थे।

भरतु न मोहि प्रिय राम समाना ❀ सदा कहहु यहु सबु जगु जाना
करहु राम पर सहज सनेहू ❀ केहि अपराध आजु बनु देहू

(वे स्त्रियाँ कहती हैं) तुम सदा कहा करती थीं कि रामचन्द्र के समान मुझे भरत भी प्यारे नहीं हैं, इसे सारा जगत् जानता है। रामचन्द्रजी पर तो तुम स्वभाव ही से स्नेह करती थीं। फिर आज किस अपराध से उन्हें वन देती हो।

कबहुँ न कियेहु सवति आरेसू[2] ❀ प्रीति प्रतीति जान सबु देसू
कौसल्याँ अब काह बिगारा ❀ तुम्ह जेहि लागि बज्र पुर पारा[3]

तुमने कभी सौतियाडाह नहीं किया। सारा देश तुम्हारी प्रीति और विश्वास को जानता है। अब कौशल्या ने तुम्हारा क्या बिगाड़ दिया है, जिसके कारण तुमने नगर पर वज्र गिरा दिया ?

दो० सीय कि पिय संगु परिहरिहि लषनु कि रहिहहिं धाम।
राजु कि भूँजब[4] भरत पुर नृपु कि जिइहि बिनु राम॥

क्या सीता पति (रामचन्द्र) का सङ्ग छोड़ देंगी ? क्या रामचन्द्र के बिना लक्ष्मणजी घर रह जायँगे ? क्या भरतजी रामचन्द्र के बिना अयोध्यापुरी का राज्य भोग सकेंगे ? क्या राजा (दशरथ) रामचन्द्र के बिना जीते रहेंगे ?

अस बिचारि उर छाड़हु कोहू ❀ सोक कलंक कोठि जनि होहू
भरतहि अवसि देहु जुबराजू ❀ कानन काह राम कर काजू

हृदय में ऐसा विचारकर क्रोध को छोड़ दो और शोक तथा कलङ्क की कोठी मत बनो। भरत को अवश्य युवराज-पद दे दो; पर रामचन्द्रजी का वन में क्या काम है ?

नाहिंन रामु राज के भूखे ❀ धरम धुरीन बिषय रस रूखे
गुरु गृह बसहुँ रामु तजि गेहू ❀ नृप सन अस बरु दूसर लेहू

१. की। २. डाह। ३. डाला, गिराया। ४. भोगेंगे।

रामचन्द्रजी राज्य के भूखे नहीं हैं। वे धर्म की धुरी धारण करने में समर्थ और भोग-विलासादि के रस से सूखे हैं। तुम राजा से दूसरा यह वर लो कि रामचन्द्र घर छोड़कर गुरु के घर में जा बसें।

जौं नहिं लगिहहु[1] कहें हमारे ❀ नहिं लागिहि कछु हाथ तुम्हारे
जौं परिहास कीन्हि कछु होई ❀ तौ कहि प्रगट जनावहु सोई

जो तुम हमारे कहने पर न चलोगी तो तुम्हारे हाथ कुछ भी न लगेगा। जो तुमने कुछ हँसी की हो तो उसे स्पष्ट प्रकट में कहकर जना दो।

राम सरिस सुत कानन जोगू ❀ काह कहिहि सुनि तुम्ह कहुँ लोगू
उठहु बेगि सोइ करहु उपाई ❀ जेहि बिधि सोकु कलंकु नसाई

राम जैसा पुत्र क्या वन के योग्य है? इस बात को सुनकर लोग तुम्हें क्या कहेंगे? जल्दी उठो और वही उपाय करो, जिससे शोक और कलंक का नाश हो।

छंद—जेहि भाँति सोकु कलंकु जाइ उपाय करि कुल पालही।
हठि फेरु रामहिं जात बन जनि बात दूसरि चालही॥
जिमि भानु बिनु दिनु प्रान बिनु तनु चंदु बिनु जिमि जामिनी[2]।
तिमि अवध तुलसीदास प्रभु बिनु समुझि धौं जिय भामिनी॥

जिस तरह सोच और कलंक मिटे, वही उपाय करके कुल की रक्षा करो। बन जाते हुये राम को हठ करके लौटा लो। दूसरी बात न चलाना। तुलसीदासजी कहते हैं—हे रानी! तुम अपने जी में अच्छी तरह समझ लो, जैसे सूर्य के बिना दिन, प्राण के बिना शरीर और चन्द्रमा के बिना रात, वैसे ही रामचन्द्रजी के बिना अयोध्या हो जायगी।

सो०— सखिन्ह सिखावनु दीन्ह सुनत मधुर परिनाम हित।
तेइँ कछु कान न कीन्ह कुटिल प्रबोधी कूबरी॥५०॥

सखियों ने कैकेयी को ऐसी सीख दी जो सुनने में मीठी और परिणाम में हितकारी थी। पर दुष्ट कूबरी की सिखाई-पढ़ाई कैकेयी ने इस पर ज़रा भी कान न दिया।

---

१. चलोगी। २. रात।

उतरु न देइ दुसह रिस रूखी ❀ मृगिन्ह चितव जनु बाघिनि भूखी
ब्याधि असाधि जानि तिन्ह त्यागी ❀ चलीं कहत मतिमंद अभागी

वह असहनीय क्रोध में नीरस हुई कैकेयी उन सखियों के वचनों का कुछ भी उत्तर नहीं देती और इस तरह देखती है, जैसे भूखी बाघिन हरिणियों को देख रही हो। तब सखियों ने रोग को असाध्य समझकर उसे छोड़ दिया और उसे मन्दबुद्धि, अभागिनी कहती हुई वे वहाँ से चली गईं।

राजु करत यह दैअँ बिगोई ❀ कीन्हेसि अस जस करइ न कोई
एहि बिधि बिलपहिं पुर नर नारीं ❀ देहिं कुचालिहि कोटिक गारीं

उन्होंने कहा—राज्य करते हुए इस कैकेयी को दैव ने नष्ट कर दिया। इसने जैसा कुछ किया, वैसा कोई भी नहीं करेगा। नगर के सब नर-नारी इस तरह विलाप करते और उस कुचाल चलने वाली कैकेयी को करोड़ों गालियाँ दे रहे हैं।

जरहिं विषम जर लेहिं उसासा ❀ कवनि राम बिनु जीवन आसा
बिपुल बियोग प्रजा अकुलानी ❀ जनु जलचर गन सूखत पानी

लोग विषमज्वर से जल रहे हैं और लम्बी साँसें लेते हुये वे कहते हैं कि रामचन्द्र के बिना जीने की कौन आशा है। बड़े वियोग से प्रजा ऐसी व्याकुल हुई, जैसे पानी सूखने के समय जलचर जीवों का समूह व्याकुल हो।

अति बिसाद बस लोग लोगाईं ❀ गये मातु पहिं राम गोसाईं
मुख प्रसन्न चित चौगुन चाऊ ❀ मिटा सोचु जनि राखइ राऊ

स्त्री-पुरुष सभी महादुःख में हैं। (उधर) रामचन्द्रजी माता (कौशल्या) के पास गये। उनका मुख प्रसन्न है और मन में चौगुना चाव है। यह सोच मिट गया है कि दशरथजी (वन जाने से) कहीं रख न लें।

दो०— नव गयंदु रघुबीर मनु राजु अलान[1] समान।
छूट जानि बन गवनु सुनि उर अनंदु अधिकान ॥५१

श्रीरामचन्द्रजी का मन नये पकड़े हुये हाथी के समान है और राजतिलक उस हाथी के बाँधने की जंजीर के समान है। बन जाना सुनकर, अपने को फन्दे से छूटा जानकर, उनके हृदय में आनन्द अधिक हो गया। [पूर्णोपमा अलंकार]

१. हाथी के बाँधने की जंजीर।

रघुकुल तिलक जोरि दोउ हाथा ❀ मुदित मातु पद नायउ माथा
दीन्हि असीस लाइ उर लीन्हे ❀ भूषन बसन निछावरि कीन्हे

रघुकुल-तिलक रामचन्द्रजी ने दोनों हाथ जोड़कर आनन्द के साथ माता-जी के चरणों में सिर नवाया। माता ने आशीर्वाद दिया, हृदय से लगा लिया और बहुत-से वस्त्र और गहने न्यौछावर किये।

बार बार मुख चुंबति माता ❀ नयन नेह जलु पुलकित गाता
गोद राखि पुनि हृदयँ लगाये ❀ स्रवत प्रेमरस पयद[1] सुहाये

माता बार-बार रामचन्द्रजी का मुख चूम रही हैं। नेत्रों में प्रेम का जल भर आया है और अङ्ग पुलकित हो गये हैं। राम को अपनी गोद में बैठाकर फिर हृदय से लगाया। स्तन प्रेमरस (दूध) बहाते हुये सुन्दर लग रहे हैं।

प्रेमु प्रमोदु न कछु कहि जाई ❀ रंक धनद[2] पदवी जनु पाई
सादर सुंदर बदनु निहारी ❀ बोली मधुर बचन महतारी

उस समय का प्रेम और आनन्द कुछ कहा नहीं जा सकता। मानो कंगाल ने कुबेर का पद पा लिया है। बड़े आदर के साथ सुन्दर मुख देखकर, माता (कौशल्या) मीठे वचन बोलीं—

कहहु तात जननी बलिहारी ❀ कबहिं लगन मुद मंगलकारी
सुकृत सील मुख सीवँ सुहाई ❀ जनम लाभ कै अवधि अघाई

हे पुत्र! माता बलैया लेती है, कहो, वह आनन्द और मंगल करने वाला लग्न कब है, जो मेरे पुण्यशील तथा सुखों की सुन्दर सीमा है और जन्म लेने के लाभ की पूर्णकाम अवधि है।

दो०— जेहि चाहत नर नारि सब अति आरत एहि भाँति।
जिमि चातक चातकि तृषित बृष्टि सरद रितु स्वाति॥

जिस (लग्न) को सभी स्त्री-पुरुष अत्यन्त उत्सुकता से इस तरह चाहते हैं जिस तरह प्यासे चातक और चातकी शरद-ऋतु में स्वाति नक्षत्र की वर्षा को चाहते हैं।

तात जाउँ बलि बेगि नहाहू ❀ जो मन भाव मधुर कछु खाहू
पितु समीप तब जायहु भैआ ❀ भइ बड़ि बार जाइ बलि मैया

---

१. स्तन। २. कुबेर।

हे तात ! मैं बलैया लेती हूँ । तुम जल्दी नहा लो और जो मन भावे कुछ मिठाई खा लो । भैया ! तब पिता के पास जाना । बहुत देर हो गई है । माता बलैया लेती है ।

मातु बचन सुनि अति अनुकूला ❀ जनु सनेह सुरतरु के फूला
सुख मकरंद भरे स्रियमूला[1] ❀ निरखि राम मनु भवँरु न भूला

माता के अत्यन्त अनुकूल वचन जो मानो स्नेह-रूपी कल्पवृक्ष के फूल हैं, जो सुखरूपी मकरंद (पुष्परस) से भरे और (राजलक्ष्मी) के मूल हैं, सुनकर और उसको देखकर रामचन्द्र का मनरूपी भ्रमर नहीं भूला ।

धरम धुरीन धरम गति जानी ❀ कहेउ मातु सन अति मृदु बानी
पिताँ दीन्ह मोहि कानन राजू ❀ जहँ सब भाँति मोर बड़ काजू

धर्म-धुरन्धर रामचन्द्रजी ने धर्म की गति को जानकर माता से अति कोमल वाणी से कहा—हे माता ! पिताजी ने मुझे वन का राज्य दिया है जहाँ सभी तरह से मेरा बड़ा काम बनने वाला है ।

आयसु देहि मुदित मन माता ❀ जेहिं मुद मंगल कानन जाता
जनि सनेह बस डरपसि भोरें ❀ आनँदु अंब अनुग्रह तोरें

हे माता ! तू प्रसन्न मन से मुझे आशीर्वाद दे जिससे वन जाते हुए आनन्द-मङ्गल हो । हे माता ! मेरे स्नेह-वश भूलकर भी डरना नहीं, क्योंकि तेरी कृपा से आनन्द ही होगा ।

दो०— बरष चारि दस बिपिन बसि करि पितु बचन प्रमान ।
आइ पाय पुनि देखिहउँ मन जनि करसि मलान[2] ५३

चौदह वर्ष वन में बसकर, पिताजी के वचन को प्रमाणित कर, फिर लौटकर तुम्हारे चरणों का दर्शन करूँगा । हे माता ! तू मन को दुःखी मत कर ।

बचन बिनीत मधुर रघुबर के ❀ सर सम लगे मातु उर करके
सहमि सूखि सुनि सीतल बानी ❀ जिमि जवास परें पावस पानी

रघुकुल में श्रेठ रामचन्द्रजी के नम्र और कोमल वचन माता को बाण-जैसे लगे और हृदय में करकने लगे । उस शीतल वाणी को सुनकर कौशल्या सहमकर वैसे ही सूख गईं जैसे बरसात का पानी पड़ने से जवासा सूख जाता है ।

---

१. श्रीमूल, लक्ष्मी या सौन्दर्य की जड़ । २. म्लान, दुःखी ।

कहि न जाइ कछु हृदय बिषादू ❀ मनहुँ मृगी सुनि केहरि नादू
नयन सजल तन थर थर काँपी ❀ माँजहि खाइ मीन जनु मापी

हृदय का दुःख कुछ कहा नहीं जाता। मानो हिरनी ने सिंह की गर्जना सुनी हो। नेत्रों में जल भर आया, शरीर थर-थर काँपने लगा। मानो मछली माँजा (पहली वर्षा का फेन) खाकर विकल हो गई हो।

धरि धीरजु सुत बदनु निहारी ❀ गदगद बचन कहति महतारी
तात पितहि तुम्ह प्रान पियारे ❀ देखि मुदित नित चरित तुम्हारे

धीरज धरकर, पुत्र का मुख देखकर माता गद्गद् वचन से कहने लगीं—हे पुत्र! तुम तो पिता को प्राणों के समान प्रिय थे। तुम्हारे चरित्रों को देखकर वे नित्य प्रसन्न होते थे।

राजु देन कहँ सुभ दिन साधा[1] ❀ कहेउ जान बन केहिं अपराधा
तात सुनावहु मोहि निदानू ❀ को दिनकर कुल भयउ कृसानू

तुमको राज्य देने के लिए उन्होंने शुभ दिन शोधवाया था। अब किस अपराध से वन जाने को कहा—हे तात! मुझे इसका कारण सुनाओ। सूर्यवंश के लिए अग्नि कौन बन गया?

दो० **निरखि राम रुख सचिव सुत कारनु कहेउ बुझाइ।**
सुनि प्रसंगु रहि मूक जिमि दसा बरनि नहिं जाइ।५४।

तब रामचन्द्र का रुख देखकर मन्त्री के पुत्र ने सब कारण समझाकर कहा—उस प्रसंग को सुनकर वह गूँगी जैसी (चुप) रह गईं। उनकी दशा का वर्णन नहीं किया जा सकता।

राखि न सकइ न कहि सक जाहू ❀ दुहूँ भाँति उर दारुन दाहू
लिखत सुधाकर गा लिखि राहू ❀ बिधि गति बाम सदा सब काहू

न घर ही रख सकती हैं, न वन ही जाने को कह सकती हैं। दोनों ही प्रकार से उनके हृदय में बड़ा भारी संताप होरहा है। विधाता की चाल सदा सबके लिए टेढ़ी ही होती है। लिखने लगे चन्द्रमा और लिखा गया राहु। [ललित अलंकार]

धरम सनेह उभयँ[2] मति घेरी ❀ भइ गति साँप छुछुन्दरि केरी
राखउँ सुतहि करउँ अनुरोधू ❀ धरमु जाइ अरु बंधु बिरोधू

---

१. शोधवाया। २. दोनों।

धर्म और स्नेह दोनों ने बुद्धि को घेर लिया। कौशल्या की दशा साँप और छछूँदर की सी हो गई। (वे सोचने लगीं कि) यदि मैं अनुरोध करके पुत्र को रख लूँ तो धर्म जाता है और भाइयों में विरोध होता है।

कहउँ जान बन तौ बड़ि हानी ❀ संकट सोच बिबस भइ रानी
बहुरि समुझि तिय धरमु सयानी ❀ रामु भरतु दोउ सुत सम जानी

और यदि वन जाने को कहती हूँ तो बड़ी हानि होती है। इस तरह धर्म-संकट में पड़कर रानी सोच के वश हो गईं। फिर बुद्धिमती रानी (कौशल्या) स्त्री-धर्म (पातिव्रत-धर्म) को समझकर और रामचन्द्र तथा भरत दोनों पुत्रों को समान जानकर—

सरल सुभाउ राम महतारी ❀ बोली बचन धीर धरि भारी
तात जाउँ बलि कीन्हेहु नीका ❀ पितु आयसु सब धरम क टीका

सरल स्वभाव वाली रामचन्द्रजी की माता बड़ा धीरज धरकर वचन बोलीं—हे तात ! मैं तुम्हारी बलैया लेती हूँ। तुमने अच्छा किया। पिता की आज्ञा का पालन करना ही सब धर्मों का शिरोमणि धर्म है।

दो० राजु देन कहि दीन्ह बनु मोहि न सो दुख लेसु।
तुम्ह बिनु भरतहि भूपतिहि प्रजहि प्रचंड कलेसु ।५५।

तुमको राज्य देने के लिए कहा था और दे दिया वन। इस बात का मुझे लेशमात्र भी दुःख नहीं। पर तुम्हारे बिना भरत को, महाराज को और प्रजा को बड़ा भारी क्लेश होगा। [व्यक्ताक्षेप अलंकार]

जौं केवल पितु आयसु ताता ❀ तौ जनि जाहु जानि बड़ि माता
जौं पितु मातु कहेउ बन जाना ❀ तौ कानन सत अवध समाना

हे तात ! जो केवल पिता ही की आज्ञा हो, तो माता को पिता से बड़ी जानकर वन को मत जाओ। किन्तु यदि पिता और माता दोनों ने वन जाने को कहा हो, तो (तुम्हारे लिए) वन सैंकड़ों अयोध्या के समान है।

पितु बनदेव मातु बनदेवी ❀ खग मृग चरन सरोरुह सेवी
अंतहुँ उचित नृपहि बनबासू ❀ बय बिलोकि हियँ होइ हराँसू

वन के देवता तुम्हारे पिता होंगे और वन-देवियाँ माता होंगी, वन के पशु-पक्षी तुम्हारे चरण-कमलों के सेवक होंगे। राजा के लिए अन्त में अर्थात्

वृद्धावस्था में वनवास करना उचित ही है। पर तुम्हारी अवस्था देखकर हृदय में दुःख होता है।

बड़भागी बनु अवध अभागी ❀ जो रघुबंस तिलक तुम्ह त्यागी
जौं सुत कहौं संग मोहिं लेहू ❀ तुम्हरे हृदयँ होइ संदेहू

हे रघुकुल के तिलक! वन भाग्यवान है और यह अयोध्या अभागिनी है जिसे तुम छोड़ दोगे। हे पुत्र! यदि मैं कहूँ कि मुझे भी साथ ले चलो तो तुम्हारे मन में सन्देह होगा।

पूत परम प्रिय तुम्ह सबहीं के ❀ प्रान प्रान के जीवन जी के
ते तुम्ह कहहु मातु बन जाऊँ ❀ मैं सुनि बचन बैठि पछिताऊँ

हे पुत्र! तुम सभी के बहुत ही प्यारे हो। प्राणों के प्राण और हृदय के जीवन हो। वही तुम कहते हो कि माता! मैं वन को जाऊँ। मैं तुम्हारे वचनों को सुनकर बैठकर पछताती हूँ।

दो०— यह बिचारि नहिं करउँ हठ झूठ सनेहु बढ़ाइ।
मानि मातु कर नात बलि सुरति[1] बिसरि जनि जाइ॥

यह सोचकर झूठा (बनावटी) स्नेह बढ़ाकर मैं हठ नहीं करती। हे पुत्र! मैं बलैया लेती हूँ, माता के नाते को मानते हुए मेरी सुध न भूलना।

देव पितर सब तुम्हहिं गुसाईं ❀ राखहु पलक नयन की नाईं
अवधि अंबु प्रिय परिजन मीना ❀ तुम्ह करुनाकर धरम धुरीना

हे पुत्र! देव और पितर सब इस प्रकार तुम्हारी रक्षा करें, जैसे पलकें आँखों की रक्षा करती हैं। तुम्हारे वनवास की अवधि (१४ वर्ष) तो जल है और तुम्हारे प्यारे और कुटुम्बी लोग मछली हैं। तुम दया की खान और धर्म के धुरन्धर हो।

अस बिचारि सोइ करहु उपाई ❀ सबहिं जिअत जेहिं भेंटहु आई
जाहु सुखेन[2] बनहिं बलि जाऊँ ❀ करि अनाथ जन परिजन गाऊँ

ऐसा विचारकर वही उपाय करना कि सबके जीते जी तुम आ मिलो। बेटा! मैं बलैया लेती हूँ, तुम प्रजा, कुटुम्बी जन और गाँव को अनाथ करके सुखपूर्वक वन को जाओ।

---

१. सुध, याद। २. सुख से।

सब कर आजु सुकृत फल बीता ❀ भयेउ कराल कालु बिपरीता
बहु बिधि बिलपि चरन लपटानी ❀ परम अभागिनि आपुहि जानी

आज सभी के पुण्यों का फल पूरा हो गया। भयङ्कर काल हमारे विपरीत हो गया। इस प्रकार बहुत विलाप करके और अपने को अभागिनी जानकर कौशल्या रामचन्द्रजी के चरणों में लिपट गईं।

दारुन दुसह दाहु उर ब्यापा ❀ बरनि न जाहिं बिलाप कलापा
राम उठाइ मातु उर लाई ❀ कहि मृदु बचन बहुरि समुझाई

उस समय उनके हृदय में कठिन और असह्य संताप छा गया। उस समय के बहुविध विलाप का वर्णन नहीं किया जा सकता। रामचन्द्रजी ने माता को उठाकर हृदय से लगा लिया और फिर कोमल वचन कहकर उन्हें समझाया।

दो० समाचार तेहि समय सुनि सीय उठी अकुलाइ।
जाइ सासु पद कमल जुग बंदि बैठि सिरु नाइ ॥५७॥

उसी समय यह समाचार सुनकर सीताजी व्याकुल हो उठीं और तुरन्त ही जाकर सास के दोनों चरणों की वन्दना कर सिर नीचा करके बैठ गईं।

दीन्हि असीस सासु मृदु बानी ❀ अति सुकुमारि देखि अकुलानी
बैठि नमित मुख सोचति सीता ❀ रूप रासि पति प्रेम पुनीता

सास ने कोमल वचनों में आशीर्वाद दिया और वे उन्हें अत्यन्त सुकुमारी देखकर बड़ी व्याकुल हुईं। रूप की राशि और पति के साथ पवित्र प्रेम करने वाली सीता नीचा मुख किये बैठी सोच रही हैं।

चलन चहत बन जीवन नाथू ❀ केहि सुकृती सन होइहि साथू
की तनु प्रान कि केवल प्राना ❀ बिधि करतबु कछु जाइ न जाना

प्राणनाथ वन को चलना चाहते हैं। किस पुण्य के प्रभाव से साथ होगा। या तो शरीर और प्राण दोनों साथ जायँगे या केवल प्राण ही से इनका साथ होगा। विधाता क्या करना चाहता है, यह कुछ जाना नहीं जाता।

चारु चरन नख लेखति धरनी ❀ नूपुर मुखर मधुर कबि बरनी
मनहुँ प्रेम बस बिनती करहीं ❀ हमहिं सीय पद जनि परिहरहीं

सीता अपने सुन्दर चरणों के नखों से धरती को कुरेद रही हैं। उस समय

नूपुरों का जो मधुर शब्द हो रहा है, उसका वर्णन कवि इस प्रकार करते हैं कि मानो प्रेम के वश होकर नूपुर प्रार्थना कर रहे हैं कि सीता के चरण हमें न त्यागें। [असिद्ध विषया फलोत्प्रेक्षा अलंकार]

मंजु बिलोचन मोचति[1] बारी ❀ बोली देखि राम महतारी
तात सुनहु सिय अति सुकुमारी ❀ सासु ससुर परिजनहिं पिआरी

सीता सुन्दर नेत्रों से आँसू बहा रही है, यह देखकर राम की माता कौशल्या बोलीं—हे तात ! सुनो, सीता बड़ी सुकुमारी है और सास-ससुर तथा कुटुम्बी सभी को प्यारी है।

दो०— पिता जनक भूपाल मनि ससुर भानुकुल भानु ।
पति रबि कुल कैरव बिपिन बिधु गुन रूप निधानु ॥

इसके पिता राजा जनक राजाओं के मुकुट-मणि हैं। ससुर सूर्यकुल के सूर्य हैं। और पति सूर्यकुलरूपी कुमुदिनी के वन के चन्द्रमा, गुणों तथा रूप के भंडार हैं।

मैं पुनि पुत्रबधू प्रिय पाई ❀ रूप रासि गुन सील सुहाई
नयन पुतरि करि प्रीति बढ़ाई ❀ राखेउँ प्रान जानकिहिं लाई

फिर मैंने रूप की राशि, सुन्दर गुण और अच्छे स्वभाव वाली सुन्दर प्यारी पुत्रबधू (बहू) पाई है। मैंने इसे आँखों की पुतली बनाकर प्रेम बढ़ाया, और अपने प्राणों को इसमें लगा रक्खा।

कलपबेलि जिमि बहु बिधि लाली[2] ❀ सींचि सनेह सलिल प्रतिपाली
फूलत फलत भयेउ बिधि बामा ❀ जानि न जाइ काह[3] परिनामा

मैंने कल्पवृक्ष की लता के समान इसका बड़े लाड़-चाव से प्यार किया है और स्नेहरूपी जल से सींचकर पाला है। अब इस लता के फूलने-फलने के समय विधाता प्रतिकूल हो गया। इसका परिणाम क्या होगा, कुछ जाना नहीं जाता।

पलँग पीठ[4] तजि गोद हिंडोरा ❀ सियँ न दीन्ह पगु अवनि कठोरा
जिअन मूरि जिमि जोगवत[5] रहऊँ ❀ दीप बाति नहिं टारन कहऊँ

सीता ने पलंग की पीठ, गोद और हिंडोले को छोड़कर कड़ी ज़मीन पर

---

१. बहाती है। २. लाड़-चाव से प्यार किया। ३. क्या ? ४. आसन। ५. सावधानी से रक्षा करना।

कभी पैर नहीं रक्खा। मैं इसे संजीवनी जड़ी के समान सँभाल-सँभालकर रखती रही हूँ। कभी दीये की बत्ती हटाने को भी नहीं कहती।

सोइ सिय चलन चहति बन साथा ❀ आयसु काह होइ रघुनाथा
चंद किरन रस रसिक चकोरी ❀ रबि रुख नयन सकै किमि जोरी

हे रघुनाथ! वही सीता अब तुम्हारे साथ वन जाना चाहती है। इसे क्या आज्ञा होती है? चन्द्रमा की किरणों का रस चाहने वाली चकोरी भला कहीं सूर्य की ओर आँख मिला सकती है?

दो० **करि केहरि निसिचर चरहिं दुष्ट जंतु बन भूरि।**
बिष बाटिकाँ कि सोह सुत सुभग सजीवनि मूरि।५९

हाथी, सिंह, राक्षस आदि अनेक दुष्ट जीव-जन्तु वन में फिरा करते हैं। हे पुत्र! क्या विष की बगीची में सुन्दर संजीवनी बूटी शोभा पा सकती है?

बन हित कोल किरात किसोरी ❀ रचीं बिरंचि बिषय सुख भोरी
पाहन[1] कृमि[2] जिमि कठिन सुभाऊ ❀ तिन्हहि कलेसु न कानन काऊ

वन के लिए ब्रह्मा ने विषय-सुख को न जानने वाली कोल और भीलों की लड़कियों को बनाया है। जिनका पत्थर के कीड़े का-सा कड़ा स्वभाव है, उन्हें वन में कभी क्लेश नहीं होता।

कै तापस तिय कानन जोगू ❀ जिन्ह तप हेतु तजा सब भोगू
सिय बन बसिहि तात केहि भाँती ❀ चित्र लिखित कपि देखि डेराती

या तपस्वियों की स्त्रियाँ वन में रहने के योग्य हैं, जिन्होंने तपस्या के लिए सब भोग-विलास छोड़ दिये हैं। हे पुत्र! सीता वन में किस तरह रह सकेगी, जो तस्वीर के बन्दर को भी देखकर डरती है। [काव्यलिङ्ग अलंकार]

सुरसर सुभग बनज बन चारी ❀ डाबर[3] जोगु कि हंसकुमारी
अस बिचारि जस आयसु होई ❀ मैं सिख देउँ जानकिहि सोई

देव-सरोवर के सुन्दर कमलों के वन में विचरने वाली हंसिनी क्या गढ़ैया के योग्य है? ऐसा विचारकर जैसी तुम्हारी आज्ञा हो, मैं जानकी को वैसी ही शिक्षा दूँ।

---

१. पत्थर। २. कीड़ा। ३. कीचड़ से भरी हुई तलैया।

जौं सिय भवन रहै कह अंबा ❀ मोहि कहँ होइ बहुत अवलंबा
सुनि रघुबीर मातु प्रिय बानी ❀ सील सनेह सुधा जनु सानी

माता कहती हैं—यदि सीता घर रह जाय तो मुझे बड़ा भारी सहारा हो जाय। रामचन्द्रजी ने माता की प्रिय वाणी सुनकर, जो मानो शील और स्नेह के अमृत से सनी हुई थी—

दो॰ कहि प्रिय बचन बिबेकमय कीन्हि मातु परितोष।
लगे प्रबोधन जानकिहि प्रगटि बिपिन गुन दोष।६०।

विवेक से भरे हुए प्रिय वचन कहकर माता को सन्तुष्ट किया। फिर वन के गुण-दोष प्रकट करके वे सीता को समझाने लगे।

मातु समीप कहत सकुचाहीं ❀ बोले समउ समुझि मन माहीं
राजकुमारि सिखावनु सुनहू ❀ आन भाँति जियँ जनि कछु गुनहू

माता के समीप सीता से कुछ कहने में रामचन्द्रजी संकोच करते हैं; पर मन में समय (आपत्काल) को समझकर वे बोले—हे राजकुमारी ! मेरी सिखावन सुनो। मन में कुछ और बात न समझ लेना।

आपन मोर नीक जौं चहहू ❀ बचनु हमार मानि गृह रहहू
आयसु मोर सासु सेवकाई ❀ सब बिधि भामिनि भवन भलाई

जो अपना और मेरा भला चाहती हो, तो मेरा वचन मानकर घर रहो। हे भामिनी ! घर रहने में मेरी आज्ञा का पालन होगा और सास की सेवा होगी; अतएव सभी तरह से भलाई है।

एहि तें अधिक धरमु नहिं दूजा ❀ सादर सासु ससुर पद पूजा
जब जब मातु करिहि सुधि मोरी ❀ होइहि प्रेम बिकल मति भोरी

आदर के साथ सास और ससुर के चरणों की पूजा करने से बढ़कर दूसरा कोई धर्म नहीं है। जब-जब माता मुझे याद करेंगी और प्रेम में विकल होकर सुध-बुध खो बैठेंगी—

तब तब तुम्ह कहि कथा पुरानी ❀ सुंदरि समुझायेहु मृदु बानी
कहउँ सुभायँ सपथ सत मोही ❀ सुमुखि मातु हित राखउँ तोही

हे सुन्दरी ! तब-तब तुम पुरानी कथाओं को कह-कहकर कोमल वाणी से इन्हें समझाना। हे सुन्दर मुँहवाली ! मैं सैकड़ों शपथ खाकर ठीक-ठीक कहता

हूँ कि मैं तुम्हें केवल माता के लिए ही घर पर रखता हूँ।

दो० — गुरु स्रुति संमत धरम फलु पाइअ बिनहिं कलेस।
हठबस सब संकट सहे गालव नहुष नरेस ।६१।

गुरु और वेद से समर्थित धर्म का फल तुमको बिना कष्ट ही के मिल जाता है। हठ के वश होकर गालव मुनि और राजा नहुष, सब ने संकट ही सहे।

मैं पुनि करि प्रवान पितु बानी ❀ बेगि फिरब सुनु सुमुखि सयानी
दिवस जात नहिं लागिहि बारा ❀ सुंदरि सिखवनु सुनहु हमारा

हे सुमुखि ! हे सयानी ! सुनो, मैं पिता के वचन को सत्य करके जल्दी ही लौटूँगा। दिन जाते देर नहीं लगती। हे सुन्दरी ! हमारा कहना मानो।

जौं हठ करहु प्रेमबस बामा ❀ तौ तुम्ह दुखु पाउब परिनामा
काननु कठिन भयंकर भारी ❀ घोर घामु हिम बारि बयारी

हे वामा ! जो प्रेम के वश में पड़कर हठ करोगी, तो तुम परिणाम में दुःख पाओगी। वन बड़ा कठिन और डरावना है। वहाँ बड़ी तेज़ धूप पड़ती है। बड़ी सर्दी पड़ती है, बड़ी वर्षा होती है और खूब तेज़ हवा चलती है।

कुस कंटक मग काँकर नाना ❀ चलब पयादेहिं बिनु पदत्राना[1]
चरन कमल मृदु मंजु तुम्हारे ❀ मारग अगम भूमिधर[2] भारे

रास्ते में कुश, काँटे और तरह-तरह के कंकड़ पड़े रहते हैं, उन पर बिना जूते के पैदल ही चलना होगा। तुम्हारे चरण-कमल कोमल और सुन्दर हैं, और रास्ते में बड़े-बड़े भारी और बीहड़ पहाड़ हैं।

कंदर खोह नदी नद नारे ❀ अगम अगाध न जाहिं निहारे
भालु बाघ बृक केहरि नागा ❀ करहिं नाद सुनि धीरजु भागा

गुफाएँ, खोह, नदी, नद और नाले ऐसे अगम और गहरे हैं कि उनकी ओर देखा तक नहीं जाता। रीछ, बाघ, भेड़िये, सिंह और हाथी ऐसे ज़ोर से चिल्लाते हैं कि उन्हें सुनकर धीरज भाग जाता है।

दो० — भूमि सयन बलकल[3] बसन असनु[4] कंद फल मूल।
ते कि सदा सब दिन मिलहिं सबुइ समय अनुकूल॥

१. जूता। २. पहाड़। ३. छाल का बना हुआ कपड़ा। ४. आहार।

धरती पर सोना, पेड़ों की छाल के कपड़े पहनना और कन्द, मूल, फल का भोजन करना होगा। और ये भी क्या सदा सब दिन मिलते हैं? नहीं, समय-समय पर।

नर अहार रजनीचर चरहीं ❀ कपट बेष बिधि कोटिक करहीं
लागइ अति पहार कर पानी ❀ बिपिन बिपति नहिं जाइ बखानी

मनुष्यों को खाने वाले राक्षस फिरते रहते हैं। वे करोड़ों तरह के कपट वेष धर लेते हैं। पहाड़ का पानी बहुत ही लगता है। वन की विपत्ति कहते नहीं बनती।

ब्याल कराल बिहँग बन घोरा ❀ निसिचर निकर नारि नर चोरा
डरपहिं धीर गहन[1] सुधि आयें ❀ मृगलोचनि तुम्ह भीरु सुभायें

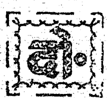
वन में बड़े डरावने साँप, भयंकर पक्षी और राक्षसों के झुण्ड रहते हैं, जो स्त्री-पुरुष दोनों के चोर होते हैं। वन की याद आने से बड़े-बड़े धीर भी डर जाते हैं। फिर हे मृगलोचनि! तुम तो स्वभाव ही से डरपोक हो।

हंस गवनि तुम्ह नहिं बन जोगू ❀ सुनि अपजसु मोहिं देइहिं लोगू
मानस सलिल सुधाँ प्रतिपाली ❀ जिअइ कि लवन पयोधि मराली

हे हंस की तरह चलने वाली! तुम वन के योग्य नहीं हो। (तुम्हारा वन जाना) सुनकर लोग मुझे अपयश देंगे। मानसरोवर के अमृत के समान जल से पाली हुई हंसिनी कहीं खारे समुद्र में जी सकती है?

नव रसाल बन बिहरनसीला ❀ सोह कि कोकिल बिपिन करीला
रहहु भवन अस हृदयँ बिचारी ❀ चंदबदनि दुखु कानन भारी

नये आमों के वन में विहार करने वाली कोयल क्या करील के जंगल में शोभा पाती है? हे चन्द्रवदनि! हृदय में ऐसा विचारकर तुम घर ही पर रहो। वन में भारी कष्ट है।



सहज सुहृद गुर स्वामि सिख जो न करइ सिर मानि।
सो पछिताइ अघाइ[2] उर अवसि होइ हित हानि॥

स्वाभाविक ही हित चाहने वाले गुरु और स्वामी की सीख को जो माथे

१. बन। २. भरपेट।

चढ़ाकर नहीं मानता, वह हृदय में भरपेट पछताता है और उसके हित की हानि अवश्य होती है।

सुनि मृदु बचन मनोहर पिय के ❀ लोचन ललित भरे जल सिय के
सीतल सिख दाहक भइ कैसें ❀ चकइहि सरद चंद निसि जैसें

प्रियतम के कोमल तथा मनोहर वचनों को सुनकर सीता के सुन्दर नेत्र जल से भर आये। रामचन्द्रजी की शीतल सीख सीता को इस तरह जलाने वाली हुई, जैसे चकवी को शरद् ऋतु की चाँदनी रात होती है। [विषम अलंकार]

उतरु न आव बिकल बैदेही ❀ तजन चहत सुचि स्वामि सनेही
बरबस रोकि बिलोचन बारी ❀ धरि धीरजु उर अवनि कुमारी

जानकी व्याकुल हैं। उनसे कुछ उत्तर देते नहीं बनता। (सोचने लगीं कि) पवित्र और प्रेमी मेरे स्वामी मुझे छोड़ जाना चाहते हैं। वे पृथ्वी की कन्या सीता नेत्रों के जल को ज़बरदस्ती रोककर और हृदय में धीरज धरकर—

लागि सासु पग कह कर जोरी ❀ छमबि देवि बड़ि अविनय[1] मोरी
दीन्हि प्रानपति मोहि सिख सोई ❀ जेहि बिधि मोर परम हित होई
मैं पुनि समुझि दीखि मन माहीं ❀ पिय बियोगु सम दुखु जग नाहीं

सास के पाँवों को पकड़कर, हाथ जोड़कर बोलीं—हे देवि! मेरी इस बड़ी भारी ढिठाई को क्षमा कीजिये। प्राणनाथ ने मुझे वही सीख दी है जिससे मेरा परम हित हो। परन्तु फिर मन में समझकर देखा कि संसार में पति के वियोग के समान कोई दूसरा दुःख नहीं है।

दो०— प्राननाथ करुनायतन सुंदर सुखद सुजान।
तुम्ह बिनु रघुकुल कुमुद बिधु सुरपुर नरक समान॥

हे प्राणनाथ! हे दया के घर! हे सुन्दर! हे सुख देने वाले! हे सुजान! हे रघुकुलरूपी कुमुद के चन्द्र! आपके बिना स्वर्ग भी मेरे लिये नरक के समान है।

मातु पिता भगिनी प्रिय भाई ❀ प्रिय परिवारु सुहृद समुदाई
सासु ससुर गुर सजन सहाई ❀ सुत सुन्दर सुसील सुखदाई

माता, पिता, बहन, प्यारा भाई, प्यारा कुटुम्ब, मित्रों का समुदाय, सास,

---

१. ढिठाई।

ससुर, गुरु, स्वजन, सहायक और सुन्दर, सुशील और सुख देने वाला पुत्र—

जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते ❀ पिय बिनु तियहि तरनिहुं[1] तें ताते[2]
तनु धनु धामु धरनि पुर राजू ❀ पति बिहीन सबु सोक समाजू

हे नाथ ! जहाँ तक स्नेह और नाते हैं, पति के बिना स्त्री को वे सब सूर्य से भी अधिक तपाने वाले हैं। शरीर, धन, घर, पृथ्वी, पुर और राज्य पति के बिना स्त्री के लिए सब शोक का समाज (समूह) है।

भोग रोगसम भूषन भारू ❀ जम जातना[3] सरिस संसारू
प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माहीं ❀ मो कहँ सुखद कतहुं कछु नाहीं

भोग रोग के समान हैं और गहने भार-रूप हैं, संसार यमराज की यातना (नरक की पीड़ा) के समान है। हे प्राणनाथ ! जगत् में आपके बिना मुझे सुख देने वाला कहीं कुछ भी नहीं है। [लेश अलंकार]

जिय बिनु देह नदी बिनु बारी ❀ तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी
नाथ सकल सुख साथ तुम्हारें ❀ सरद बिमल बिधु बदनु निहारें

हे नाथ ! जैसे बिना जीव के शरीर और बिना पानी के नदी, उसी तरह बिना पुरुष के स्त्री है। हे नाथ ! आपका शरद्-ऋतु के निर्मल चन्द्रमा के समान मुख देखकर आपके साथ मुझे सब सुख प्राप्त होंगे।

दो०— खग मृग परिजन नगरु बनु बलकल बिमल दुकूल।
नाथ साथ सुर सदन सम परनसाल[4] सुखमूल ॥६५॥

हे नाथ ! वन के पशु और पक्षी ही मेरे कुटुम्बी, जंगल ही शहर, पेड़ों की छाल ही रेशमी वस्त्र और आपके साथ पत्तों की झोंपड़ी ही स्वर्ग के समान सुखों की मूल होगी।

बनदेबी बनदेव उदारा ❀ करिहहिं सासु ससुर सम सारा
कुस किसलय साथरी सुहाई ❀ प्रभु संग मंजु मनोज तुराई

उदार हृदय के वन-देवी और वन-देवता ही सास-ससुर के समान मेरी सार-सँभार करेंगे। और स्वामी के साथ कुश और नरम पत्तों का सुन्दर बिछौना कामदेव की सुन्दर तोशक के समान होगा। [पूर्णोपमा अलंकार]

---

१. सूर्य से भी। २. गरम, जलाने वाले। ३. नरक की पीड़ा। ४. झोपड़ा।

कंद मूल फल अमिअ अहारू ❀ अवध सौंध[1] सत सरिस पहारू
छिनु छिनु प्रभु पद कमल बिलोकी ❀ रहिहौं मुदित दिवस जिमि कोकी

कन्द, मूल और फल ही अमृत के समान आहार होंगे और वन के पहाड़ ही अयोध्या के सैकड़ों राजमहलों के समान होंगे। क्षण-क्षण में प्रभु के चरण-कमलों को देख-देखकर मैं ऐसी आनन्दित रहूँगी, जैसी दिन में चकवी रहती है।

बन दुख नाथ कहे बहुतेरे ❀ भय बिषाद परिताप घनेरे
प्रभु बियोग लवलेस समाना ❀ सब मिलि होहिं न कृपानिधाना

हे नाथ! आपने वन के बहुतेरे दुःख और बहुत से भय, क्लेश और सन्ताप कहे, परन्तु हे कृपानिधान! वे सब मिलकर प्रभु के वियोग के एक लव-लेश के बराबर भी नहीं हो सकते। [चतुर्थ प्रदीप अलंकार]

अस जियँ जानि सुजान सिरोमनि ❀ लेइअ संग मोहिं छाँड़िअ जनि
बिनती बहुत करौं का स्वामी ❀ करुनामय उर अंतरयामी

हे सुजान-शिरोमणि! ऐसा जी में जानकर मुझे साथ ले लीजिये, यहाँ न छोड़िये। हे स्वामी! मैं अधिक क्या विनती करूँ? आप दयामय हैं और सबके भीतर की जानने वाले हैं।

दो॰ राखिअ अवध जो अवधि[2] लगि रहत न जनिअहिं प्रान
दीनबंधु सुन्दर सुखद सील सनेह निधान ॥६६॥

हे दीनबन्धु! हे सुन्दर! हे सुखदायक! हे शील और प्रेम के भंडार! यदि अवधि (चौदह वर्ष) तक मुझे अयोध्या में रखते हैं तो मेरे प्राण नहीं रहेंगे, यह जान लीजिये।

मोहिं मग चलत न होइहि हारी ❀ छिनु छिनु चरन सरोज निहारी
सबहिं भाँति पिय सेवा करिहौं ❀ मारग जनित सकल स्रम हरिहौं

क्षण-क्षण में आपके कमल ऐसे चरणों को देखते रहने से मुझे मार्ग चलने में थकावट न होगी। हे प्रियतम! मैं सभी प्रकार से आपकी सेवा करूँगी और रास्ता चलने की सारी थकावट को दूर कर दूँगी।

पाय पखारि बैठि तरु छाहीं ❀ करिहउँ बाउ मुदित मन माहीं
स्रम कन सहित स्याम तनु देखें ❀ कहँ दुख समउ प्रानपति पेखें

१. महल। २. हद, सीमा, समय।

आपके पाँव धोकर, पेड़ों की छाया में बैठकर, प्रसन्न मन से हवा करूँगी। पसीने की बूँदों-सहित श्याम शरीर को देखकर प्राणपति का दर्शन करते हुये मेरे लिये दुःख का समय ही कहाँ रहेगा ?

सम महि तृन तरु पल्लव डासी[1] ❀ पाय पलोटिहि सब निसि दासी
बार बार मृदु मूरति जोही ❀ लागिहि ताति[2] बयारि न मोही

समतल भूमि पर घास और वृक्षों के पत्ते बिछाकर यह दासी रात भर आपके चरण दबाया करेगी। बारम्बार आपकी कोमल मूर्ति को देखकर मुझको गरम हवा भी न लगेगी।

को प्रभु सँग मोहि चितवनिहारा ❀ सिंघबधुहि जिमि ससक सिआरा
मैं सुकुमारि नाथ बन जोगू ❀ तुम्हहिं उचित तप मो[3] कहुँ भोगू

प्रभु के साथ मेरी ओर देखने वाला कौन है ? जैसे सिंह की स्त्री को खरगोश और सियार नहीं देख सकते। मैं सुकुमारी हूँ ? और नाथ बन जाने के योग्य हैं ? आपको तो तपस्या उचित है ? और मुझे भोग-विलास ?

दो॰ ऐसेउ बचन कठोर सुनि जौं न हृदउ बिलगान।
तौ प्रभु बिषम बियोग दुखु सहिहहिं पाँवर प्रान।६७।

ऐसे कठोर वचनों को सुनकर भी जब मेरा हृदय नहीं फटा तो, जान पड़ता है ये नीच प्राण प्रभु के वियोग के भीषण दुःख को सहेंगे। [सम्भावना अलंकार]

अस कहि सीय बिकल भइ भारी ❀ बचन बियोगु न सकी सँभारी
देखि दसा रघुपति जियँ जाना ❀ हठि राखें नहिं राखिहि प्राना

ऐसा कहकर सीताजी बहुत ही व्याकुल हो गईं। वे वचन के वियोग को भी न सम्हाल सकीं। उनकी दशा देखकर रामचन्द्रजी ने अपने जी में जान लिया कि यदि हम हठ करके इन्हें यहाँ छोड़ जायँगे तो ये प्राणों को न रक्खेंगी।

कहेउ कृपाल भानुकुल नाथा ❀ परिहरि सोचु चलहु बन साथा
नहिं बिषाद कर अवसरु आजू ❀ बेगि[4] करहु बन गवन समाजू

तब दयालु, सूर्यकुल के स्वामी रामचन्द्रजी ने कहा कि सोच छोड़कर मेरे साथ वन को चलो। आज दुःख का अवसर नहीं है। जल्दी वन चलने की तैयारी करो।

---

१. बिछाकर। २. गरम। ३. मुझे। ४. जल्द।

कहि प्रिय बचन प्रिया समुझाई ❀ लगे मातु पद आसिष पाई
बेगि प्रजा दुख मेटब आई ❀ जननी निठुर बिसरि जनि जाई

रामचन्द्रजी ने प्रिय वचन कहकर सीता को समझाया। फिर वे माता के पाँव पड़े और उन्होंने उनका आशीर्वाद पाया। माता ने कहा—बेटा! जल्दी लौटकर प्रजा के दुःख को मिटाना और इस निठुर माता को भूल न जाना।

फिरिहि दसा बिधि बहुरि कि मोरी ❀ देखिहउँ नयन मनोहर जोरी
सुदिन सुघरी तात कब होइहि ❀ जननी जिअत बदन बिधु जोइहि

हे विधाता! क्या मेरी दशा भी फिर पलटेगी? क्या मैं इस मनोहर जोड़ी (राम-सीता) को अपनी आँखों से फिर देख पाऊँगी? हे पुत्र! वह सुन्दर दिन और शुभ घड़ी कब होगी, जब तुम्हारी माता जीते-जी तुम्हारे मुखचन्द्र को फिर देखेगी?

दो० बहुरि बच्छ कहि लालु कहि रघुपति रघुबर तात।
कबहिं बोलाइ लगाइ हियँ हरषि निरषिहउँ गात।६८।

हे पुत्र! वत्स कहकर, लाल कहकर, रघुपति कहकर, रघुवर कहकर मैं फिर कब तुम्हें बुलाकर हृदय से लगाकर, प्रसन्न होकर तुम्हारा शरीर देखूँगी?

लखि सनेह कातरि[1] महतारी ❀ बचनु न आव बिकल भइ भारी
राम प्रबोधु कीन्ह बिधि नाना ❀ समउ सनेहु न जाइ बखाना

यह देखकर कि माता स्नेह के मारे अधीर हो गई हैं और ऐसी विकल हो गई हैं कि मुँह से वचन नहीं निकलते हैं, रामचन्द्रजी ने अनेक प्रकार से उन्हें समझाया। वह समय और स्नेह वर्णन नहीं किया जा सकता।

तब जानकी सासु पग लागीं ❀ सुनिअ माय मैं परम अभागी
सेवा समय दैअँ बन दीन्हा ❀ मोर मनोरथु सफल न कीन्हा

तब जानकीजी सास के पाँवों में पड़ीं और बोलीं—हे माता! सुनिए, मैं बड़ी ही अभागिनी हूँ। आपकी सेवा करने के समय दैव ने मुझे वनवास दे दिया। मेरा मनोरथ सफल न किया।

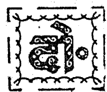
तजब छोभु जनि छाँड़िअ छोहू ❀ करम कठिन कछु दोसु न मोहू
सुनि सिय बचन सासु अकुलानी ❀ दसा कवन बिधि कहौं बखानी

1. अधीर।

आप क्षोभ को त्याग दीजिये, पर प्रेम को न छोड़ियेगा। कर्म की गति बड़ी कठिन है। मेरा कुछ दोष नहीं है। सीता के वचन सुनकर सास व्याकुल हो गईं। उनकी उस समय की दशा को मैं किस तरह कहूँ?

बारहिं बार लाइ उर लीन्हीं ❁ धरि धीरजु सिख आसिष दीन्हीं
अचल होउ अहिबातु[1] तुम्हारा ❁ जब लगि गंग जमुन जल धारा

(कौशल्या ने सीता को) बार-बार हृदय से लगाया और धीरज धरकर शिक्षा और आशीर्वाद दिये। (उन्होंने कहा) जब तक गङ्गा और यमुना में जल की धारा है, तब तक तुम्हारा सुहाग अचल रहे।



सीतहि सासु असीस सिख दीन्हि अनेक प्रकार।
चली नाइ पद पदुम सिरु अति हित बारहिं बार॥६९

सीता को सास ने आशीर्वाद और अनेकों प्रकार की शिक्षाएँ दीं। सीता बड़े प्रेम से सास के चरण-कमलों में सिर नवाकर चलीं।

समाचार जब लछिमन पाए ❁ ब्याकुल बिलख बदन उठि धाए
कंप पुलक तन नयन सनीरा ❁ गहे चरन अति प्रेम अधीरा

जब लक्ष्मण ने यह समाचार पाया, तब वे व्याकुल होकर, उदास मुँह किये दौड़े हुए आये। उनका शरीर काँप रहा है। रोमाञ्च हो रहा है, नेत्र आँसुओं से भरे हैं, प्रेम से अत्यन्त अधीर होकर उन्होंने (रामचन्द्रजी के) चरण पकड़ लिये।

कहि न सकत कछु चितवत ठाढ़े ❁ मीनु दीनु जनु जल तें काढ़े
सोचु हृदयँ बिधि का होनिहारा ❁ सब सुखु सुकृत सिरान हमारा

लक्ष्मण कुछ कह नहीं सकते हैं, खड़े-खड़े देख रहे हैं। वे इस तरह दीन हो रहे हैं जैसे पानी से निकालने पर मछली दीन हो रही है। हृदय में यह सोच है कि हे विधाता! क्या होने वाला है? हमारा सब सुख और पुण्य क्या पूरा हो चुका?

मो कहुँ काह कहब रघुनाथा ❁ रखिहहिं भवन कि लेइहहिं साथा
राम बिलोकि बंधु कर जोरें ❁ देह गेह सब सन तृनु[2] तोरें

मुझे रामचन्द्रजी क्या कहेंगे? घर पर रक्खेंगे या साथ ले चलेंगे?

---

१. सुहाग। २. नाता।

रामचन्द्रजी ने भाई लक्ष्मण को हाथ जोड़े हुए और घर-बार सभी से नाता तोड़े हुए देखा।

बोले बचनु राम नय नागर ❀ सील सनेह सरल सुख सागर
तात प्रेम बस जनि कदराहू ❀ समुझि हृदयँ परिनाम उछाहू

नीति में निपुण और शील, स्नेह, सरलता और सुख के समुद्र रामचन्द्रजी वचन बोले। हे प्यारे भाई! परिणाम में होने वाले आनन्द को हृदय में समझ-कर तुम प्रेम-वश अधीर मत होओ।

दो०— मातु पिता गुरु स्वामि सिख सिर धरि करहिं सुभायँ।
लहेउ लाभ तिन्ह जन्म कर नतरु[1] जनमु जग जायँ।

जो लोग माता, पिता, गुरु और स्वामी की शिक्षा को स्वाभाविक ही सिर चढ़ाते और पालन करते हैं, उन्होंने ही जन्म लेने का लाभ पाया है। नहीं तो जगत् में जन्म लेना ही व्यर्थ है।

अस जियँ जानि सुनहु सिख भाई ❀ करहु मातु पितु पद सेवकाई
भवन भरत रिपुसूदनु नाहीं ❀ राउ बृद्ध मम दुख मन माहीं

हे भाई! ऐसा जी में जानकर मेरी सीख सुनो। माता-पिता के चरणों की सेवा करो। भरत और शत्रुघ्न घर पर नहीं हैं। महाराज वृद्ध हैं, और उनके मन में मेरा दुःख है।

मैं बन जाउँ तुम्हहिं लेइ साथा ❀ होइ सबहि बिधि अवध अनाथा
गुरु पितु मातु प्रजा परिवारू ❀ सब कहँ परइ दुसह दुख भारू

यदि मैं तुमको साथ लेकर बन को जाऊँ तो अयोध्या सभी प्रकार से अनाथ हो जायगी। गुरु, पिता, माता, प्रजा और कुटुम्ब सभी पर न सहने योग्य दुःख का भार आ पड़ेगा।

रहहु करहु सब कर परितोषू ❀ नतरु तात होइहि बड़ दोषू
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी ❀ सो नृप अवसि नरक अधिकारी

तुम यहीं रहो और सबको धैर्य दो। नहीं तो हे तात! बड़ा दोष होगा। जिसके राज्य में प्यारी प्रजा दुःखी रहती है, वह राजा अवश्य ही नरक का अधिकारी होता है।

---

१. नहीं तो।

रहहु तात असि नीति बिचारी ❀ सुनत लषनु भए ब्याकुल भारी
सिअरे बचन सूखि गए कैसे ❀ परसत तुहिन[1] तामरस[2] जैसे

हे भाई ! ऐसी नीति विचारकर तुम घर ही रहो। यह सुनते ही लक्ष्मण बहुत ही व्याकुल हो गये। शीतल वचनों से वे कैसे सूख गये, जैसे पाले के छूने से कमल सूख जाता है।

दो० उतरु न आवत प्रेम बस गहे चरन अकुलाइ।
नाथ दासु मैं स्वामि तुम्ह तजहु त काह बसाइ[3] ७१

प्रेम-वश लक्ष्मण से कुछ जवाब नहीं देते बनता। उन्होंने घबड़ाकर रामचन्द्र के चरण पकड़ लिये और कहा—हे नाथ ! मैं तो दास हूँ और आप स्वामी हैं, जो आप मुझे छोड़ ही दें, तो मेरा क्या वश है। [द्वितीय व्याघात अलंकार]

दीन्हि मोहि सिख नीकि गोसाँई ❀ लागि अगम अपनी कदराईं
नर बर धीर धरम धुर धारी ❀ निगम[4] नीति कहुँ ते अधिकारी

हे स्वामी ! आपने तो मुझे अच्छी ही सीख दी है, पर मेरी कायरता से वह मुझे अगम लगती है। जो धीर, धर्म की धुरी धारण करने वाले, श्रेष्ठ पुरुष होते हैं, वे ही शास्त्र और नीति के अधिकारी होते हैं।

मैं सिसु प्रभु सनेहँ प्रतिपाला ❀ मंदरु मेरु कि लेइ मराला
गुर पितु मातु न जानउँ काहू ❀ कहउँ सुभाय नाथ पतियाहू

मैं तो प्रभु के स्नेह में पला हुआ बच्चा हूँ। भला, कहीं हंस भी मंदराचल या सुमेरु पर्वत को उठा सकते हैं ? हे नाथ ! मैं हृदय की बात कहता हूँ, आप विश्वास कीजिये, मैं (आपको छोड़कर) गुरु, पिता, माता किसी को नहीं जानता।

जहँ लगि जगत सनेह सगाई ❀ प्रीति प्रतीति निगम निजु गाई
मोरें सबइ एक तुम्ह स्वामी ❀ दीनबंधु उर अंतरजामी

जगत् में जहाँ तक स्नेह के नाते, प्रीति और विश्वास हैं, जिनको स्वयं वेद ने गाया है, हे स्वामी ! हे दीनबंधु ! हे सबके अन्तर्यामी ! आप ही मेरे सब कुछ हैं। [तुल्ययोगिता अलंकार]

---

१. पाला। २. कमल। ३. वश। ४. वेद।

धरम नीति उपदेसिअ ताही ❀ कीरति भूति[1] सुगति प्रिय जाही
मन क्रम बचन चरन रत होई ❀ कृपासिंधु परिहरिअ कि सोई

हे नाथ ! धर्म और नीति का उपदेश तो उसको करना चाहिये, जिसे कीर्ति, ऐश्वर्य या सद्‌गति प्यारी हो। हे कृपासागर ! जो मन, वचन और कर्म से आपके चरणों में अनुरक्त हो, क्या वह भी त्यागने के योग्य है ?

दो० करुनासिंधु सुबंधु के सुनि मृदु बचन बिनीत ।
समुझाए उर लाइ प्रभु जानि सनेहँ सभीत ॥२७॥

दया के समुद्र रामचन्द्रजी ने अच्छे भाई लक्ष्मण के कोमल और नम्रतायुक्त वचन सुनकर और उन्हें स्नेह के कारण डरे हुए जानकर, हृदय से लगाकर समझाया।

माँगहु बिदा मातु सन जाई ❀ आवहु बेगि चलहु बन भाई
मुदित भए सुनि रघुबर बानी ❀ भयउ लाभ बड़ गइ बड़ि हानी

(उन्होंने कहा) हे भाई ! जाकर माता से विदा माँग आओ, और जल्दी वन को चलो। रामचन्द्रजी की वाणी सुनकर लक्ष्मण आनंदित हो गये। बड़ी हानि दूर हो गई, और बड़ा लाभ हुआ।

हरषित हृदयँ मातु पहिं आए ❀ मनहुँ अंध फिरि लोचन पाए
जाइ जननि पग नायउ माथा ❀ मनु रघुनन्दन जानकि साथा

वे प्रसन्न हृदय से माता (सुमित्रा) के पास आये। मानो अन्धा फिर से आँखें पा गया। उन्होंने जाकर माता के चरणों में मस्तक नवाया; पर उनका मन तो राम और जानकी के साथ था।

पूँछी मातु मलिन मन देखी ❀ लषन कही सब कथा बिसेषी
गई सहमि सुनि बचन कठोरा ❀ मृगी देखि दव[2] जनु चहुँ ओरा

माता ने उदास मन देखकर उसका कारण पूछा। तब लक्ष्मण ने पूरा हाल विस्तार से कह सुनाया। सुमित्रा कठोर वचनों को सुनकर ऐसी भयभीत हो गई, जैसे हरिणी चारों ओर वन में आग लगी हुई देखकर सहम जाय।

लषन लखेउ भा अनरथ आजू ❀ एहिं सनेह बस करब अकाजू
माँगत बिदा सभय सकुचाहीं ❀ जाइ संग बिधि कहिहि कि नाहीं

१. विभूति, ऐश्वर्य। २. वन की आग।

लक्ष्मण ने देखा कि आज अनर्थ हुआ। यह स्नेह-वश काम बिगाड़ देगी। वे विदा माँगने में डरते हुए सकुचाते हैं (और मन में कहते हैं कि) हे विधाता! माता साथ जाने की आज्ञा देंगी या नहीं। [संदेह अलंकार]

दो० समुझि सुमित्राँ राम सिय रूप सुसीलु सुभाउ।
नृप सनेहु लखि धुनेउ सिरु पापिनि दीन्ह कुदाउ॥

सुमित्रा ने राम और सीता के रूप और सुन्दर शील-स्वभाव को समझकर और उन पर (दशरथ) का प्रेम देखकर अपना सिर धुना, और कहा कि पापिनी (कैकेयी) ने बुरा घात लगाया।

धीरजु धरेउ कुअवसर जानी ❀ सहज सुहृद बोली मृदुबानी
तात तुम्हारि मातु बैदेही ❀ पिता रामु सब भाँति सनेही

सुमित्रा ने कुसमय जानकर धीरज धरा और स्वभाव ही से हित चाहने वाली सुमित्रा कोमल वाणी से बोलीं—हे पुत्र! जानकी तुम्हारी माता हैं और सब प्रकार से स्नेह करने वाले राम तुम्हारे पिता हैं।

अवध तहाँ जहँ राम निवासू ❀ तहँइ दिवसु जहँ भानु प्रकासू
जौं पै सीय रामु बन जाहीं ❀ अवध तुम्हार काजु कछु नाहीं

जहाँ राम का निवास हो, वहीं अयोध्या है। जहाँ सूर्य का प्रकाश हो, वहीं दिन है। यदि निश्चय ही सीता-राम वन को जाते हैं तो अयोध्या में तुम्हारा कुछ भी काम नहीं है।

गुर पितु मातु बंधु सुर साईं ❀ सेइअहिं सकल प्रान की नाईं
रामु प्रान प्रिय जीवन जी के ❀ स्वारथ रहित सखा सबही के

गुरु, पिता, माता, बन्धु, देवता और स्वामी इन सब की सेवा प्राण के समान करनी चाहिये। फिर राम तो सभी के प्राण-प्यारे हैं, हृदय के भी जीवन हैं और सभी के स्वार्थ-रहित सखा हैं।

पूजनीय प्रिय परम जहाँ तें ❀ सब मानिअहिं राम के नातें
अस जियँ जानि संग बन जाहू ❀ लेहु तात जग जीवन लाहू[1]

जगत् में जहाँ तक पूज्य और परम प्रिय लोग हैं, वे सब राम ही के नाते से मानने योग्य हैं। हृदय में ऐसा जानकर उनके साथ वन जाओ, और हे पुत्र! जगत् में जीने का लाभ उठाओ।

---

१. लाभ।

दो॰ भूरि भाग भाजनु भयेहु मोहि समेत बलि जाउँ।
जौं तुम्हरें मन छाँड़ि छलु कीन्ह राम पद ठाउँ[1] ॥७४॥

हे पुत्र ! मैं तुम्हारी बलैया लेती हूँ, मेरे समेत तुम बड़े ही सौभाग्य के पात्र हुए, जो तुम्हारे चित्त ने छल छोड़कर राम के चरणों में स्थान प्राप्त किया।

पुत्रवती जुबती जग सोई ❀ रघुपति भगतु जासु सुतु होई
नतरु बाँझ भलि बादि[2] बिआनी[3] ❀ राम बिमुख सुत तें हित जानी

जगत् में वही युवती स्त्री पुत्रवती है जिसका पुत्र राम का भक्त हो। नहीं तो बाँझ ही अच्छी है। पशु की तरह उसका ब्याना (पुत्र प्रसव करना) व्यर्थ ही है, जो राम के विरोधी पुत्र से अपना हित समझती है। [अर्थान्तरन्यास अलङ्कार]

तुम्हरेहिं भाग रामु बन जाहीं ❀ दूसर हेतु तात कछु नाहीं
सकल सुकृत कर बड़ फलु एहू ❀ राम सीय पद सहज सनेहू

हे पुत्र ! राम तुम्हारे ही भाग्य से बन को जा रहे हैं और दूसरा कोई कारण नहीं है। राम-सीता के चरणों में स्वाभाविक प्रेम होना ही सम्पूर्ण पुण्यों का सबसे बड़ा फल है।

रागु रोषु इरिषा मदु मोहू ❀ जनि सपनेहुँ इन्ह के बस होहू
सकल प्रकार बिकार बिहाई ❀ मन क्रम बचन करेहु सेवकाई

हे पुत्र ! राग, रोष, ईर्ष्या, मद और मोह के वश में स्वप्न में भी मत होना। सब प्रकार के विकारों को छोड़कर मन, कर्म और वचन से राम और सीता की सेवा करना।

तुम्ह कहुँ बन सब भाँति सुपासू ❀ सँग पितु मातु राम सिय जासू
जेहिं न रामु बन लहहिं कलेसू ❀ सुत सोइ करेहु इहइ उपदेसू

हे पुत्र ! तुमको बन में सब प्रकार से सुख है, जिसके साथ पिता और माता राम और सीता हैं। हे पुत्र ! जिससे बन में राम क्लेश न पावें, तुम वही करना। मेरा यही उपदेश है।

छंद—उपदेसु एहु जेहिं तात तुम्ह तें राम सिय सुख पावहीं।
पितु मातु प्रिय परिवार पुर सुख सुरति बन बिसरावहीं ॥

१. स्थान। २. व्यर्थ। ३. प्रसव किया, बियाना शब्द पशुओं के लिये प्रयोग में आता है।

तुलसी सुतहि सिख देइ आयसु दीन्ह पुनि आसिष दई।
रति होउ अबिरल अमल सिय रघुबीर पद नित नित नई॥

हे पुत्र! मेरा यही उपदेश है कि तुम्हारे जाने से राम और सीता सुख पावें और पिता, माता, प्रिय कुटुम्ब तथा अयोध्यापुरी के सुखों की याद वन में भूल जायँ। तुलसीदासजी कहते हैं कि सुमित्रा ने इस तरह पुत्र को उपदेश देकर, वन जाने की आज्ञा दी और फिर यह आशीर्वाद दिया कि सीता-राम के चरणों में तुम्हारा शुद्ध और प्रगाढ़ प्रेम नित्य-नित्य नया हो।

सो०—मातु चरन सिरु नाइ चले तुरत संकित हृदयँ।
बागुर[1] बिषम तोराइ मनहुँ भाग मृगु भाग बस॥७५॥

माता के चरणों में सिर नवाकर लक्ष्मण डरते हुए तुरन्त इस तरह चल दिये जैसे भाग्यवश कोई मृग कठोर जाल को तोड़कर भागा हो। [वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार]

गए लषनु जहँ जानकिनाथू ॐ भे मन मुदित पाइ प्रिय साथू
बंदि राम सिय चरन सुहाए ॐ चले संग नृप मंदिर आए

लक्ष्मण वहाँ गये, जहाँ जानकीनाथ रामचन्द्रजी थे। वे प्यारे भाई का साथ पाकर मन में बड़े ही प्रसन्न हुए। राम और सीता के सुन्दर चरणों की वन्दना करके वे उनके साथ चले और राजा के महल में पहुँचे।

कहहिं परसपर पुर नर नारी ॐ भलि बनाइ बिधि बात बिगारी
तन कृस मन दुखु बदन मलीने ॐ बिकल मनहुँ माखी मधु छीने

नगर के स्त्री-पुरुष आपस में कह रहे हैं कि विधाता ने बात बनाकर खूब बिगाड़ी। सभी के शरीर दुबले, मन दुःखी और मुख उदास हो रहे हैं। वे ऐसे विकल हैं जसे शहद छिन जाने पर मधु-मक्खियाँ व्याकुल हों।

कर मीजहिं सिरु धुनि पछिताहीं ॐ जनु बिनु पंख बिहँग अकुलाहीं
भै बड़ि भीर भूप दरबारा ॐ बरनि न जाइ बिषादु अपारा

वे हाथ मल रहे हैं और सिर धुनकर पछता रहे हैं। मानो बिना पंख के पक्षी व्याकुल हो रहे हैं। राजा के दरबार में बड़ी भीड़ हो रही है। अपार दुःख का वर्णन नहीं किया जा सकता।

---

१. जाल, फंदा।

सचिवँ उठाइ राउ बैठारे ❀ कहि प्रिय बचन रामु पगु धारे
सिय समेत दोउ तनय निहारी ❀ ब्याकुल भयेउ भूमिपति भारी

'रामचन्द्र आ गये' ऐसा प्रिय वचन कहकर मन्त्री ने राजा (दशरथ) को उठाकर बैठाया। राजा सीता-सहित दोनों पुत्रों को (बन जाने को तैयार) देखकर बहुत व्याकुल हुए।

दो० सीय सहित सुत सुभग दोउ देखि देखि अकुलाइ।
बारहि बार सनेह बस राउ लेइ उर लाइ ॥७६॥

सीता-सहित दोनों पुत्रों को देख-देखकर राजा अकुला रहे हैं और स्नेह-वश बारम्बार उन्हें हृदय से लगा रहे हैं।

सकइ न बोलि बिकल नरनाहू ❀ सोक जनित उर दारुन दाहू
नाइ सीसु पद अति अनुरागा ❀ उठि रघुबीर बिदा तब माँगा

राजा विकल हैं, बोल नहीं सकते। हृदय में शोक से उत्पन्न हुआ भयानक संताप है। तब रामचन्द्रजी ने बड़े प्रेम से उनके चरणों में सिर नवाकर और उठकर विदा माँगी।

पितु असीसु आयसु मोहि दीजै ❀ हरष समय बिसमउ कत कीजै
तात किएँ प्रिय प्रेम प्रमादू ❀ जसु जग जाइ होइ अपवादू[1]

हे पिता! मुझे आशीर्वाद और (वन जाने की) आज्ञा दीजिये। हर्ष के समय विषाद किसलिए कर रहे हैं? हे तात! प्रियजन के प्रेमवश प्रमाद (असावधानता) करने से जगत् में यश जाता रहेगा और निन्दा होगी।

सुनि सनेह बस उठि नरनाहाँ ❀ बैठारे रघुपति गहि बाहाँ
सुनहु तात तुम्ह कहुँ मुनि कहहीं ❀ रामु चराचर नायक अहहीं[2]

यह सुनकर स्नेह-वश राजा ने उठकर रामचन्द्र को बाँह पकड़कर बैठा लिया (और कहा)—हे पुत्र! सुनो, तुमको मुनि लोग कहते हैं कि राम तो चराचर के स्वामी हैं।

सुभ अरु असुभ करम अनुहारी[3] ❀ ईसु देइ फलु हृदयँ बिचारी
करइ जो करम पाव फल सोई ❀ निगम नीति अस कह सबु कोई

---

१. निन्दा। २. हैं। ३. अनुसार।

शुभ और अशुभ कर्मों के अनुसार ईश्वर हृदय में विचारकर फल देते हैं। जो कर्म करता है वही उसका फल पाता है। वेद और नीति तथा और सब भी ऐसा ही कहते हैं। [विधि अलंकार]

दो० **औरु करै अपराध कोउ और पाव फल भोगु।**
अति बिचित्र भगवंत गति को जग जानै जोगु।७७।

अपराध तो कोई और ही करे और उसके फल का भोग कोई और ही पावे, ईश्वर की यह बड़ी ही विचित्र लीला है। इसको जानने योग्य जगत् में कौन है ?

राय राम राखन हित लागी ❀ बहुत उपाय किये छलु त्यागी
लखी राम रुख रहत न जाने ❀ धरम धुरंधर धीर सयाने

राजा ने रामचन्द्रजी को रख लेने के लिए निश्छल भाव से बहुत से उपाय किये; पर जब धर्म के धुरन्धर, धीर और बुद्धिमान् राम का रुख देखकर जाना कि ये न रहेंगे,

तब नृप सीय लाइ उर लीन्ही ❀ अति हित बहुत भाँति सिख दीन्ही
कहि बन के दुख दुसह सुनाये ❀ सासु ससुर पितु सुख समुझाये

तब राजा ने सीता को हृदय से लगा लिया और बड़े प्रेम से बहुत प्रकार की सीख दी। वन के कठिन दुःख कहकर सुनाए। फिर सास, ससुर तथा पिता के सुखों को भी समझाया।

सिय मनु राम चरन अनुरागा ❀ घरु न सुगमु बनु बिषमु न लागा
औरउ सबहिं सीय समुझाई ❀ कहि कहि बिपिन बिपति अधिकाई

सीता का मन रामचन्द्र के चरणों में अनुरक्त था, इसीलिए उन्हें घर अच्छा नहीं लगा, और न वन भयानक लगा। फिर दूसरों ने भी वन में विपत्तियों की अधिकता बता-बताकर सीता को समझाया।

सचिव नारि गुर नारि सयानी ❀ सहित सनेह कहहिं मृदु बानी
तुम्ह कहुँ तौ न दीन्ह बनवासू ❀ करहु जो कहहिं ससुर गुर सासू

मंत्री (सुमंत्र) की पत्नी और गुरु (वशिष्ठजी) की स्त्री तथा और भी चतुर स्त्रियाँ स्नेह के साथ कोमल वाणी से कहती हैं—तुमको तो वनवास दिया नहीं है, इसलिए ससुर, गुरु और सास जो कहें तुम तो वही करो।

दो॰ सिख सीतलि हित मधुर मृदु सुनि सीतहि न सोहानि।
सरद चंद चंदिनि लगत जनु चकई अकुलानि।७८।

सीता को वह शीतल, हितकारी, मधुर और कोमल सिखावन सुनकर अच्छा नहीं लगा। जैसे शरद्काल के चन्द्र की चाँदनी लगने से चकई व्याकुल हो रही है।

सीय सकुच बस उतरु न देई * सो सुनि तमकि[1] उठी कैकेई
मुनि पट भूषन भाजन आनी * आगे धरि बोली मृदु बानी

सीता संकोच के मारे उत्तर नहीं देतीं; यह सुनकर कैकेयी झल्लाकर उठी। उसने मुनियों के वस्त्र, भूषण (माला, मेखला आदि) और बर्त्तन (कमंडलु आदि) लाकर आगे रख दिये और कोमल वाणी से कहा।

नृपहिं प्रानप्रिय तुम्ह रघुबीरा * सील सनेह न छाड़िहि भीरा[2]
सुकृत सुजसु परलोक नसाऊ * तुम्हहिं जान बन कहिहि न काऊ

हे रघुवीर ! राजा को तुम प्राणों के समान प्रिय हो। शील और स्नेह तो घेरे ही रहेंगे। पुण्य, सुन्दर यश और परलोक चाहे बिगड़ जाय, पर वन जाने के लिए तुमको वे कभी न कहेंगे।

अस बिचारि सोइ करहु जो भावा * राम जननि सिख सुनि सुखु पावा
भूपहि बचन बान सम लागे * करहिं न प्रान पयान अभागे

ऐसा विचारकर जो तुम्हें अच्छा लगे, वही करो। माता की यह सीख सुनकर रामचन्द्रजी ने बड़ा ही सुख पाया। परन्तु राजा को वे वचन बाण के समान लगे। (वे कहने लगे) हाय ! अभागे प्राण अब भी नहीं निकलते।

लोग बिकल मुरुछित नरनाहू * काह करिअ कछु सूझ न काहू
रामु तुरत मुनि बेषु बनाई * चले जनक जननिहिं सिरु नाई

लोग बेचैन हैं। राजा बेहोश हैं। किसी को कुछ नहीं सूझ पड़ता कि क्या करें ? रामचन्द्रजी तत्काल मुनि का वेष बनाकर और पिता-माता को सिर नवाकर चल दिये।

दो॰ सजि बन साजु समाजु सब बनिता बंधु समेत।
बंदि बिप्र गुर चरन प्रभु चले करि सबहिं अचेत।७९।

---

१. झुँझला। २. भीड़।

वन का सब साज-सामान सजकर रामचन्द्रजी स्त्री और भाई-सहित, ब्राह्मणों और गुरु के चरणों की वन्दना कर, सबको अचेत करके चले।

निकसि बसिष्ठ द्वार भए ठाढ़े ❁ देखे लोग बिरह दव डाढ़े
कहि प्रिय बचन सकल समुझाए ❁ बिप्र बृन्द रघुबीर बोलाए

राजमहल से निकलकर रामचन्द्रजी गुरु वशिष्ठजी के द्वार पर जा खड़े हुए और उन्होंने देखा कि सब लोग विरह की आग में जल रहे हैं। उन्होंने प्रिय वचन कहकर सबको समझाया। फिर ब्राह्मणों की मंडली को बुलाया।

गुर सन कहि बरषासन दीन्हे ❁ आदर दान बिनय बस कीन्हे
जाचक दान मान संतोषे ❁ मीत पुनीत प्रेम परितोषे

गुरुजी से कहकर उन (ब्राह्मणों) को उन्होंने वर्षासन (वर्षों के लिए भोजन) दिया और आदर, दान तथा विनय से उन्हें वश में कर लिया। फिर याचकों को दान और मान से तथा मित्रों को पवित्र प्रेम से सन्तुष्ट किया।

दासी दास बोलाइ बहोरी ❁ गुरहिं सौंपि बोले कर जोरी
सब कै सार[1] सँभार गोसाईं ❁ करबि जनक जननी की नाईं

फिर दास-दासियों को बुलाकर उनको गुरुजी को सौंपकर और हाथ जोड़कर वे बोले—हे गुसाईं! आप इन सबकी देख-रेख माता-पिता के समान करते रहियेगा।

बारहिं बार जोरि जुग पानी ❁ कहत रामु सब सन मृदु बानी
सोइ सब भाँति मोर हितकारी ❁ जेहि तें रहइ भुआल सुखारी

रामचन्द्रजी बारम्बार दोनों हाथ जोड़कर, सबसे कोमल वचन कहने लगे कि मेरा सब तरह से हितकारी मित्र वही होगा, जिससे महाराज सुखी रहें।

दो० मातु सकल मोरे बिरह जेहिं न होहिं दुख दीन।
सोइ उपाय तुम्ह करेहु सब पुर जन परम प्रबीन ॥८०॥

हे परम चतुर पुरवासी सज्जनो! आप लोग सब वही उपाय करियेगा, जिसमें मेरी सभी मातायें मेरे विरह के दुःख से कातर न हों।

एहि बिधि राम सबहिं समुझावा ❁ गुर पद पदुम हरषि सिरु नावा
गनपति गौरि गिरीसु मनाई ❁ चले असीस पाइ रघुराई

---

१. देख-रेख।

इस तरह राम ने सबको समझाया और हर्षित होकर गुरुजी के चरण-कमलों में प्रणाम किया; फिर गणपति, पार्वती और महादेव को मनाकर तथा आशीर्वाद पाकर राम चले।

राम चलत अति भयेउ बिषादू ❀ सुनि न जाइ पुर आरत नादू
कुसगुन लंक अवध अति सोकू ❀ हरष बिषाद बिबस सुरलोकू

राम के चलने पर बड़ा भारी शोक हुआ। नगर का हाहाकार सुना नहीं जाता। उस समय लंका में अपशकुन होने लगे, अयोध्या में अत्यन्त शोक छा गया और देवता लोग हर्ष और विषाद दोनों के वश में हो गये। [प्रथम समुच्चय अलङ्कार]

गइ मुरुछा तब भूपति जागे ❀ बोलि सुमंत्रु कहन अस लागे
रामु चले बन प्रान न जाहीं ❀ केहि सुख लागि रहत तन माहीं

मूर्च्छा दूर हुई, तब राजा जागे और सुमन्त्र को बुलाकर ऐसा कहने लगे—राम तो वन को चले गये, पर मेरे प्राण नहीं जा रहे हैं। ये किस सुख के लिए शरीर में ठहरे हुए हैं?

एहि तें कवन ब्यथा बलवाना ❀ जो दुखु पाइ तजिहि तनु प्राना
पुनि धरि धीर कहइ नरनाहू ❀ लै रथु संग सखा तुम्ह जाहू

इससे भी अधिक बलवती और कौन-सी पीड़ा होगी, जिस दुःख को पाकर प्राण शरीर को छोड़ेंगे? फिर धीरज धरकर राजा ने कहा—हे सखा! तुम रथ लेकर राम के साथ जाओ।

दो॰ सुठि सुकुमार कुमार दोउ जनकसुता सुकुमारि।
रथ चढ़ाइ देखराइ बनु फिरेहु गएँ दिन चारि।८१।

अत्यन्त सुकुमार दोनों कुमारों को और सुकुमारी जानकी को रथ में चढ़ाकर, बन दिखलाकर चार दिन के बाद लौट आना।

जौं नहिं फिरहिं धीर दोउ भाई ❀ सत्यसंध दृढ़ब्रत रघुराई
तौ तुम्ह बिनय करेहु कर जोरी ❀ फेरिअ प्रभु मिथिलेस किसोरी

यदि धैर्यवान् दोनों भाई न लौटें; क्योंकि राम सत्य प्रतिज्ञा वाले और दृढ़ नियम वाले हैं, तो तुम हाथ जोड़कर प्रार्थना करना कि हे स्वामी! श्रीजनक-सुता सीताजी को तो लौटा दीजिये।

जब सिय कानन देखि डेराई ❀ कहेहु मोरि सिख अवसरु पाई
सासु ससुर अस कहेउ सँदेसू ❀ पुत्रि फिरिअ बन बहुत कलेसू

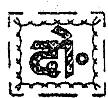
जब सीता बन को देखकर डरें, तब अवसर पाकर मेरी सीख उनसे कहना कि तुम्हारे सास और ससुर ने यह सन्देशा कहा है कि हे पुत्री! तुम लौट चलो; वन में बड़े क्लेश हैं।

पितुगृह कबहुँ कबहुँ ससुरारी ❀ रहेहु जहाँ रुचि होइ तुम्हारी
एहि बिधि करेहु उपाय कदंबा[1] ❀ फिरइ त होइ प्रान अवलंबा

कभी पिता के घर, कभी ससुर के घर जहाँ तुम्हारी इच्छा हो, वहीं रहना, इस तरह तुम बहुत से उपाय करना। जो सीता लौट आयेंगी तो मेरे प्राणों को सहारा हो जायगा।

नाहिं त मोर मरनु परिनामा ❀ कछु न बसाइ भएँ बिधि बामा
अस कहि मुरुछि परा महिराऊ ❀ राम लषनु सिय आनि देखाऊ

नहीं तो अन्त में मेरा मरना तो निश्चित ही है। विधाता के विपरीत होने पर कुछ बस नहीं चलता। इतना कहकर, फिर यह कहते-कहते राजा मूर्छित हो गये कि राम, लक्ष्मण और सीता को लाकर दिखाओ।


पाइ रजायसु नाइ सिरु रथु अति बेग[2] बनाइ।
गयेउ जहाँ बाहेर नगर सीय सहित दोउ भाइ॥८२॥

राजा की आज्ञा पाकर, सिर नवाकर और बड़ी जल्दी रथ तैयार कर सुमंत्र नगर के बाहर वहाँ गये, जहाँ सीता-समेत दोनों भाई थे।

तब सुमंत्र नृप बचन सुनाए ❀ करि बिनती रथ रामु चढ़ाए
चढ़ि रथ सीय सहित दोउ भाई ❀ चले हृदयँ अवधहि सिरु नाई

तब सुमन्त्र ने राजा के वचन रामचन्द्रजी को सुना दिये और प्रार्थना करके उनको रथ पर चढ़ाया। सीता समेत दोनों भाई रथ पर चढ़कर हृदय में अयोध्या को प्रणाम करके चले।

चलत रामु लखि अवध अनाथा ❀ बिकल लोग सब लागे साथा
कृपासिंधु बहुबिधि समुझावहिं ❀ फिरहिं प्रेमबस पुनि फिरि आवहिं

रामचन्द्रजी के चलते ही अयोध्या को अनाथ देखकर सब लोग व्याकुल

---

१. समूह। २. शीघ्रता से।

होकर उनके साथ हो लिये। कृपा के समुद्र राम बहुत तरह से उनको समझाते हैं, तो वे (अयोध्या की ओर) लौट जाते हैं; पर प्रेम-वश फिर लौट आते हैं।

लागति अवध भयावनि भारी ❀ मानहुँ काल राति अँधिआरी
घोर जंतु सम पुर नर नारी ❀ डरपहिं एकहि एक निहारी

अयोध्या बड़ी डरावनी लग रही है। मानो काल-रात्रि की अन्धेरी छाई हो। नगर के स्त्री-पुरुष डरावने जन्तुओं के समान एक-दूसरे को देख-देखकर डर रहे हैं।

घर मसान परिजन जनु भूता ❀ सुत हित मीत मनहुँ जमदूता
बागन्ह बिटप बेलि कुम्हिलाहीं ❀ सरित सरोवर देखि न जाहीं

घर मानो श्मशान हैं, कुटुम्बी लोग मानो भूत हैं और पुत्र, हितैषी और मित्र मानो यमराज के दूत हैं। बगीचों में वृक्ष और बेलें कुम्हला रही हैं। नदी और तालाबों की ओर तो देखा भी नहीं जाता। [अतिशयोक्ति अलङ्कार]

दो० हय गय कोटिन्ह केलि मृग पुर पसु चातक मोर।
पिक[1] रथांग[2] सुक[3] सारिका[4] सारस हंस चकोर ॥८३

करोड़ों घोड़े, हाथी, पाले हुए हिरन, नगर के पशु, पपीहे, मोर, कोयल, चकवे, तोते, मैना, सारस, हंस और चकोर।

राम बियोग बिकल सब ठाढ़े ❀ जहँ तहँ मनहुँ चित्र लिखि काढ़े
नगरु सकल बनु गहवर[5] भारी ❀ खग मृग बिपुल सकल नर नारी

सब राम के वियोग में विह्वल जहाँ के तहाँ खड़े हैं। मानो चित्र में चित्रित किये गये हैं। सारा नगर ही मानो बड़ा घना बन है और उसके निवासी सब स्त्री-पुरुष ही बन के बहुत-से पशु-पक्षी हैं।

बिधि कैकेइ किरातिनि कीन्ही ❀ जेहिं दव दुसह दसहुँ दिसि दीन्ही
सहि न सके रघुबर बिरहागी ❀ चले लोग सब ब्याकुल भागी

विधाता ने कैकेयी को भीलनी बनाया, जिसने दसों दिशाओं में भयानक आग लगा दी। रामचन्द्रजी के विरह की अग्नि को लोग न सह सके और सब व्याकुल होकर भाग चले। [परम्परित रूपक]

---

१. कोयल। २. चक्रवाक। ३. तोता। ४. मैना। ५. घना।

सबहिं बिचारु कीन्ह मन माहीं ❀ राम लषन सिय बिनु सुखु नाहीं
जहाँ रामु तहँ सबुइ समाजू ❀ बिनु रघुबीर अवध नहिं काजू

सबने मन में विचार कर लिया कि राम, लक्ष्मण और सीता के बिना सुख नहीं। इसलिये जहाँ राम रहेंगे, वहीं सारा समाज रहेगा। रामचन्द्र के बिना अयोध्या में कुछ काम नहीं है।

चले साथ अस मंत्रु दृढ़ाई ❀ सुर दुर्लभ सुख सदन बिहाई[1]
राम चरन पंकज प्रिय जिन्हहीं ❀ बिषय भोग बस करहिं कि तिन्हहीं

ऐसा विचार पक्का करके, देवताओं को भी दुर्लभ सुखों से पूर्ण घरों को छोड़कर सब लोग रामचन्द्रजी के साथ चल पड़े। जिनको रामचन्द्रजी के चरण-कमल प्यारे हैं, क्या कभी उन्हें विषय-भोग वश में कर सकते हैं ?

दो॰ बालक बृद्ध बिहाइ गृहँ लगे लोग सब साथ।
तमसा तीर निवासु किय प्रथम दिवसु रघुनाथ॥८४

बालकों और बुड्ढों को घरों में छोड़कर शेष सब लोग साथ हो लिये। पहले दिन श्रीरघुनाथजी ने तमसा नदी के किनारे निवास किया।

रघुपति प्रजा प्रेम बस देखी ❀ सदय हृदय दुखु भयेउ बिसेषी
करुनामय रघुनाथ गोसाईं ❀ बेग[2] पाइअहिं पीर पराई

राम ने प्रजा को प्रेम-वश देखा। उनके दयालु हृदय में बड़ा दुःख हुआ। प्रभु रघुनाथजी परम दयालु हैं। परायी पीड़ा को वे तुरन्त पा जाते हैं।

कहि सप्रेम मृदु बचन सुहाये ❀ बहु बिधि राम लोग समुझाये
किए धरम उपदेस घनेरे ❀ लोग प्रेम बस फिरहिं न फेरे

रामचन्द्रजी ने प्रेम के साथ कोमल और सुहावने वचन कहकर बहुत प्रकार से लोगों को समझाया और बहुत-से धर्म-सम्बन्धी उपदेश दिये; परन्तु लोग प्रेम-वश लौटाने से लौटते नहीं।

सीलु सनेहु छाँड़ि नहिं जाई ❀ असमंजस बस भे[3] रघुराई
लोग सोग श्रम बस गये सोई ❀ कछुक देवमायाँ मति मोई

शील और स्नेह छोड़े नहीं जाते। रामचन्द्रजी बड़ी दुविधा में पड़ गये। शोक और परिश्रम (थकावट) से थके हुये लोग सो गये और कुछ देवताओं की

१. छोड़कर। २. जल्दी। ३. हुये।

माया से भी उनकी बुद्धि मोहित हो गई।

जबहिं जाम[1] जुग[2] जामिनि[3] बीती ❀ राम सचिव सन कहेउ सप्रीती
खोज मारि रथ हाँकहु ताता ❀ आन उपायँ बनिहि नहिं बाता

जब दो पहर रात बीत गई, तब रामचन्द्रजी ने प्रेमपूर्वक मंत्री से कहा—हे तात! रथ के पहिये का निशान मारकर रथ को हाँकिये, और किसी उपाय से बात नहीं बनेगी।

दो॰ राम लषन सिय जानु चढ़ि संभु चरन सिरु नाइ।
सचिवँ चलायेउ तुरत रथु इत उत खोज दुराइ।८५।

फिर राम, लक्ष्मण और सीता शिवजी के चरणों में सिर नवाकर रथ पर सवार हुए। मन्त्री ने तुरन्त ही रथ के चिह्नों को इधर-उधर छिपाकर उसे चला दिया।

जागे सकल लोग भएँ भोरू[4] ❀ गे रघुनाथ भयेउ अति सोरू
रथ कर खोज कतहुँ नहिं पावहिं ❀ राम राम कहि चहुँ दिसि धावहिं

सवेरा होते ही सब लोग जागे, तो बड़ा शोर मचा कि रघुनाथजी चले गये। वे सब रथ का खोज कहीं नहीं पाते और हा राम, हा राम कहते हुए चारों ओर दौड़ते हैं।

मनहुँ बारि निधि[5] बूड़ जहाजू ❀ भयेउ बिकल बड़ बनिक समाजू
एकहिं एक देहिं उपदेसू ❀ तजे राम हम जानि कलेसू

मानो समुद्र में जहाज़ डूब गया हो और व्यापारियों का समूह बहुत घबरा उठा हो। वे एक दूसरे से कहने लगे कि रामचन्द्रजी ने हम लोगों को क्लेश होगा, यह जानकर छोड़ दिया।

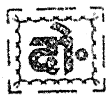
निंदहिं आपु सराहहिं मीना ❀ धिग जीवनु रघुबीर बिहीना
जौं पै प्रिय बियोगु बिधि कीन्हा ❀ तौ कस मरनु न माँगें दीन्हा

वे सब लोग अपनी निन्दा करते हैं और मछलियों की सराहना करते हैं। (वे कहते हैं—) रामचन्द्रजी के बिना हमारे जीने को धिक्कार है। विधाता ने यदि प्यारे का वियोग ही रचा, तो फिर उसने माँगने पर मृत्यु क्यों नहीं दी।

एहि बिधि करत प्रलाप कलापा ❀ आये अवध भरे परितापा
बिषम बियोगु न जाइ बखाना ❀ अवधि आस सब राखहिं प्राना

१. पहर। २. दो। ३. रात। ४. सवेरा। ५. समुद्र।

इस प्रकार रोते-कलपते, संताप से भरे हुये वे लोग अयोध्या में आये। उन लोगों का विषम वियोग कहते नहीं बनता। सब लोग वनवास से लौट आने की (चौदह वर्ष) अवधि की आशा ही से प्राणों को रख रहे हैं।



राम दरस हित नेम ब्रत लगे करन नर नारि।
मनहुँ कोक कोकी कमल दीन बिहीन तमारि[1]।८६।

सब स्त्री-पुरुष रामचन्द्रजी के दर्शन के लिये नियम और व्रत करने लगे, और ऐसे दीन हो गये कि जैसे चकवा, चकवी और कमल सूर्य के बिना हो जाते हैं।

सीता सचिव सहित दोउ भाई ❀ सृङ्गबेरपुर पहुँचे जाई
उतरे राम देवसरि[2] देखी ❀ कीन्ह दंडवत हरषु बिसेषी

सीता और मन्त्री-सहित दोनों भाई (राम-लक्ष्मण) शृङ्गबेरपुर जा पहुँचे। राम वहाँ गङ्गा को देखकर रथ से उतर पड़े और उन्होंने बड़े हर्ष से गङ्गाजी को दण्डवत् प्रणाम किया।

लषन सचिवँ सियँ किए प्रनामा ❀ सबहिं सहित सुखु पायउ रामा
गंग सकल मुद मङ्गल मूला ❀ सब सुख करनि हरनि सब सूला

फिर लक्ष्मण, मन्त्री और सीता ने भी प्रणाम किया। सबके साथ रामचन्द्रजी ने सुख पाया। गङ्गाजी सम्पूर्ण आनन्द-मङ्गलों की मूल हैं और सब सुखों की करने वाली तथा सब पीड़ाओं को हरने वाली हैं।

कहि कहि कोटिक कथा प्रसङ्गा ❀ रामु बिलोकहिं गङ्ग तरङ्गा
सचिवहि अनुजहि प्रियहि सुनाई ❀ बिबुध[3] नदी महिमा अधिकाई

रामचन्द्रजी अनेक प्रकार की कथायें कहते हुए गङ्गा की तरङ्गों को देख रहे हैं। उन्होंने मंत्री, लक्ष्मण और सीता को देवनदी श्री गङ्गाजी की महिमा सुनाई।

मज्जनु कीन्ह पंथ स्रम गयेऊ ❀ सुचि जलु पिअत मुदित मन भयेऊ
सुमिरत जाहि मिटइ स्रम भारू ❀ तेहि स्रम यह लौकिक ब्यवहारू

फिर सबने स्नान किया, जिससे रास्ते की थकावट दूर हो गई और पवित्र जल पीते ही मन प्रसन्न हो गया। जिन (श्रीराम) के स्मरण-मात्र से (जन्म और

---

१. सूर्य। २. गंगाजी। ३. देवता।

मरण के) सारे श्रम मिट जाते हैं, उनके लिए श्रम का होना और मिटना यह सब लौकिक व्यवहार है ।

दो० सुद्ध सच्चिदानन्दमय कंद भानु कुल केतु ।
चरित करत नर अनुहरत संसृति[1] सागर सेतु ॥८७॥

शुद्ध सत्-चित् आनन्दकन्द-स्वरूप और सूर्यवंश के ध्वजारूप भगवान् रामचन्द्रजी मनुष्यों के सदृश ऐसे चरित्र करते हैं, जो संसाररूपी सागर के लिये पुल के समान हैं ।

यह सुधि गुह निषादु जब पाई ❁ मुदित लिये प्रिय बन्धु बोलाई
लिए फल मूल भेंट भरि भारा[2] ❁ मिलन चलेउ हियँ हरषु अपारा

जब निषादराज ने यह खबर पाई, तब आनन्दित होकर उसने अपने प्रियजनों और भाई-बन्धुओं को बुला लिया और भेंट देने के लिए फल और मूल बहँगियों में भरकर मिलने चला । उसके मन में हर्ष का पार नहीं था ।

करि दंडवत भेंट धरि आगें ❁ प्रभुहिं बिलोकत अति अनुरागें
सहज सनेह बिबस रघुराई ❁ पूँछी कुसल निकट बैठाई

दण्डवत् करके और भेंट सामने रखकर वह बड़े प्रेम से प्रभु (रामचन्द्रजी) को देखने लगा । स्वाभाविक स्नेह के वश होकर रघुनाथजी ने उसको अपने पास बैठाकर कुशल पूछी ।

नाथ कुसल पद पंकज देखें ❁ भयेउँ भाग भाजन जन लेखें
देव धरनि धनु धाम तुम्हारा ❁ मैं जनु नीचु सहित परिवारा

(गुह ने उत्तर दिया—) हे नाथ ! आपके चरण-कमलों के दर्शन ही से कुशल है । मैं आज भाग्यवान् पुरुषों की गिनती में आ गया । हे देव ! यह पृथ्वी, धन और घर सब आपका है । मैं तो परिवार-सहित आपका एक नीच दास हूँ ।

कृपा करिअ पुर धारिअ पाऊ[3] ❁ थापिअ जनु सबु लोगु सिहाऊ
कहेहु सत्य सबु सखा सुजाना ❁ मोहि दीन्ह पितु आयसु आना

कृपा कीजिये और पुर (शृङ्गवेरपुर) में पधारिये और इस दास की प्रतिष्ठा बढ़ाइये, जिससे सब लोग मेरे भाग्य की बड़ाई करें । (रामचन्द्रजी ने कहा—)

१. संसार । २. बहँगी । ३. पाँव ।

हे सुजान सखा! तुमने जो कुछ कहा, सत्य है, पर पिताजी ने मुझे और ही आज्ञा दी है। [उत्माक्षेप अलंकार]

दो० **बरष चारि दस बासु बन मुनि ब्रत बेषु अहारु।**
ग्राम बासु नहिं उचित सुनि गुहहि भयउ दुखु भारु॥

मुनियों का व्रत और वेष धारण कर और मुनियों के योग्य आहार खाकर मुझे चौदह वर्ष तक बन में बसना है। गाँव के भीतर बसना उचित नहीं है। यह सुनकर गुह को भारी दुःख हुआ।

राम लषन सिय रूप निहारी ❁ कहहिं सप्रेम ग्राम नर नारी
ते पितु मातु कहहु सखि कैसे ❁ जिन्ह पठये बन बालक ऐसे

राम, लक्ष्मण और सीता के रूप को देखकर गाँव के नर-नारी प्रेम के साथ चर्चा करते हैं—हे सखि! वे माता-पिता कैसे हैं, जिन्होंने ऐसे बालकों को बन भेज दिया है।

एक कहहिं भल भूपति कीन्हा ❁ लोयन[1] लाहु हमहिं बिधि दीन्हा
तब निषादपति उर अनुमाना ❁ तरु सिंसुपा[2] मनोहर जाना

कोई कहते हैं—राजा ने अच्छा ही किया, इसी बहाने ब्रह्मा ने हमें भी नेत्रों का लाभ दे दिया। तब निषादों के राजा गुह ने हृदय में अनुमान किया, तो अशोक के एक पेड़ को (निवास के योग्य) मनोहर समझा।

लै रघुनाथहिं ठाउँ देखावा ❁ कहेउ राम सब भाँति सुहावा
पुरजन करि जोहारु घर आए ❁ रघुबर संध्या करन सिधाए

उसने रामचन्द्रजी को साथ ले जाकर वह स्थान दिखाया। रामचन्द्रजी ने देखकर कहा कि यह सब प्रकार से सुन्दर है। पुरवासी लोग जोहार (वन्दना) करके अपने-अपने घर गये, और रामचन्द्रजी सन्ध्या करने चले गये।

गुह सँवारि साँथरी डसाई ❁ कुस किसलय मय मृदुल सुहाई
सुचि फल मूल मधुर मृदु जानी ❁ दोना भरि भरि राखेसि पानी

गुह ने कुश और कोमल पत्तों का नरम और मनोहर बिछौना तैयार करके बिछा दिया और पवित्र, मीठे और कोमल फल-मूल देख-देखकर और पानी लाकर दोनों में भर-भरकर रख दिये।

---

१. लोचन, आँख। २. अशोक वृक्ष।

दो०— सिय सुमंत्र भ्राता सहित कंद मूल फल खाइ।
सयन कीन्ह रघुबंसमनि पाय पलोटत भाइ॥८९॥

सीता, सुमन्त्र और भाई लक्ष्मण-सहित कन्द-मूल और फल खाकर रघुकुल के मणि रामचन्द्रजी सो गये और भाई उनके चरण दबाने लगे।

उठे लषनु प्रभु सोवत जानी ❀ कहि सचिवहि सोवन मृदु बानी
कछुक दूरि सजि बान सरासन[1] ❀ जागन लगे बैठि बीरासन

प्रभु रामचन्द्रजी को सोता जानकर लक्ष्मण उठे और कोमल वाणी से मन्त्री को सोने के लिए कहकर, वहाँ से कुछ दूर पर, धनुष-बाण लेकर वे वीरासन से बैठकर जागने लगे।

गुहँ बोलाइ पाहरू[2] प्रतीती ❀ ठावँ ठावँ राखे अति प्रीती
आपु लषन पहिं बैठेउ जाई ❀ कटि भाथी[3] सर चाप चढ़ाई

गुह ने विश्वासी पहरेदारों को बुलाकर बड़ी प्रीति से उन्हें जगह-जगह नियुक्त कर दिया। और स्वयं कमर में तरकस बाँधकर धनुष में बाण चढ़ाकर लक्ष्मण के निकट जा बैठा।

सोवत प्रभुहि निहारि निषादू ❀ भयेउ प्रेम बस हृदयँ बिषादू
तनु पुलकित जलु लोचन बहई ❀ बचन सप्रेम लषन सन कहई

प्रभु को धरती ही पर सोते हुए देखकर निषाद को प्रेम-वश बड़ा शोक हुआ। उसका शरीर पुलकित हो गया। नेत्रों से आँसू बहने लगे और वह प्रेम-सहित लक्ष्मण से वचन कहने लगा।

भूपति भवन सुभायँ सुहावा ❀ सुरपति सदनु न पटतर[4] पावा
मनिमय रचित चारु चौबारे ❀ जनु रतिपति निज हाथ सँवारे

महाराज दशरथजी का राजमहल तो स्वभाव ही से ऐसा सुन्दर है, जिसकी समता इन्द्र-भवन नहीं कर सकता। मणियों के रचे उसके सुन्दर चौबारे ऐसे सुन्दर हैं, मानो उन्हें कामदेव ने अपने ही हाथों सँवारा है।

दो०— सुचि सुबिचित्र सुभोगमय सुमन सुगन्ध सुबास।
पलँग मंजु मनि दीप जहँ सब बिधि सकल सुपास।९०।

---

१. धनुष। २. पहरेदार। ३. तरकस। ४. समता।

जो राजभवन पवित्र, बड़ा ही विचित्र, सुन्दर भोग-पदार्थों से युक्त और फूलों की सुगन्ध से सुवासित है, जहाँ सुन्दर पलंग और मणियों के दीपक हैं और सब प्रकार का पूरा आराम है—

बिबिध बसन उपधान[1] तुराई ❁ छीर फेन मृदु बिसद सुहाई
तहँ सिय रामु सयन निसि करहीं ❁ निज छबि रति मनोज मदु हरहीं

जहाँ अनेकों वस्त्र, तकिये और गद्दे हैं जो दूध के फेन के समान नरम और स्वच्छ सफेद और सुहावने हैं, वहाँ सीता और रामचन्द्रजी रात को सोते हैं और अपनी शोभा से रति और कामदेव के गर्व को हरण करते हैं। [पंचम प्रतीप अलंकार]

ते सिय रामु साथरीं सोये ❁ स्रमित बसन बिनु जाहिं न जोये
मातु पिता परिजन पुरबासी ❁ सखा सुसील दास अरु दासी

वही सीता और राम आज घास के बिछौने पर थके हुए उघाड़े सोये हैं। वे देखे नहीं जाते। माता, पिता, कुटुम्बी, नगर-निवासी, मित्र, अच्छे शील-स्वभाव के दास और दासियाँ—

जोगवहिं जिन्हहिं प्रान की नाईं ❁ महि सोवत तेइ राम गोसाईं
पिता जनक जग बिदित प्रभाऊ ❁ ससुर सुरेस[2] सखा रघुराऊ

सब जिनकी अपने प्राणों की तरह सँभाल करते थे, वही समर्थ रामचन्द्रजी आज पृथ्वी पर सो रहे हैं। जिनके पिता जनकजी हैं जिनका प्रभाव जगत् में विख्यात है, जिनके ससुर इन्द्र के मित्र रघुराज दशरथजी हैं—

रामचन्द्र पति सो बैदेही ❁ सोवति महि बिधि बाम न केही
सिय रघुबीर कि कानन जोगू ❁ करम प्रधान सत्य कह लोगू

जिनके पति रामचन्द्रजी हैं, वही जानकीजी आज धरती पर सो रही हैं। विधाता किसके विपरीत नहीं होता ? भला, सीता और रामचन्द्रजी बन के योग्य हैं ? लोग सच कहते हैं कि कर्म (भाग्य) ही प्रधान है।

दो०— कैकय नन्दिनि मन्दमति कठिन कुटिलपनु कीन्ह।
जेहि रघुनन्दन जानकिहिं सुख अवसर दुखु दीन्ह ९१

केकयराज की कन्या मन्दबुद्धि कैकेयी ने बड़ी ही कुटिलता की, जिसने

१. तकिया। २. इन्द्र।

रामचन्द्रजी और जानकीजी को सुख के समय दुःख दिया।

भइ दिनकर कुल बिटप कुठारी[1] ❀ कुमत कीन्ह सब बिस्व दुखारी
भयेउ बिषाद निषादहिं भारी ❀ राम सीय महि सयन निहारी

वह सूर्य-वंशरूपी वृक्ष के लिए कुल्हाड़ी हो गई। उस कुबुद्धि ने सारे संसार को दुखी कर दिया। राम, सीता को धरती पर सोते हुए देखकर गुह निषाद को बड़ा भारी दुख हुआ।

बोले लषन मधुर मृदु बानी ❀ ग्यान बिराग भगति रस सानी
काहु न कोउ सुख दुख कर दाता ❀ निज कृत करम भोगु सबु भ्राता

उस समय लक्ष्मण ज्ञान, वैराग्य और भक्ति के रस से सनी हुई मीठी और कोमल वाणी बोले—हे भाई! कोई किसी को सुख या दुःख का देने वाला नहीं है। सब अपने ही किये हुए कर्मों का फल भोगते हैं।

जोग बियोग भोग भल मंदा ❀ हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा
जनमु मरनु जहँ लगि जग जालू ❀ संपति बिपति करम अरु कालू

मिलना, बिछुड़ना, अच्छे और बुरे भोग, शत्रु, मित्र और उदासीन ये सभी भ्रम के फंदे हैं। जन्म-मरण, सम्पत्ति-विपत्ति, कर्म और काल—जहाँ तक जगत् के जंजाल हैं—

धरनि धामु धनु पुर परिवारू ❀ सरगु नरकु जहँ लगि ब्यवहारू
देखिअ सुनिअ गुनिअ मन माहीं ❀ मोह मूल परमारथु नाहीं

धरती, घर, धन, नगर, कुटुम्ब, स्वर्ग, नरक आदि का जहाँ तक व्यवहार है, जो देखे, सुने और मन में विचारे जाते हैं, सबका मूल मोह है। ये परमार्थ नहीं हैं। [कारक दीपक अलंकार]

दो० सपने होइ भिखारि नृपु रंकु[2] नाकपति[3] होइ।
जागें लाभु न हानि कछु तिमि प्रपंच जियँ जोइ ९२

जैसे स्वप्न में कोई राजा भिखारी हो जाय या कोई कंगाल स्वर्ग का स्वामी (इन्द्र) हो जाय, तो जागने पर उसे भिखारी या इन्द्र होने की न कुछ हानि है न लाभ। वैसे ही इस दृश्य प्रपंच को हृदय से देखना चाहिये।

---

१. कुल्हाड़ी। २. कंगाल। ३. स्वर्ग का स्वामी, इन्द्र।

अस बिचारि नहिं कीजिअ रोसू ❀ काहुहि बादि न देइअ दोसू
मोह निसा सबु सोवनिहारा ❀ देखिअ सपन अनेक प्रकारा

ऐसा विचार करके क्रोध नहीं करना चाहिये और न किसी को व्यर्थ दोष ही देना चाहिये। सब लोग मोहरूपी रात में सो रहे हैं और उसी में अनेक प्रकार के स्वप्न देख रहे हैं।

एहि जग जामिनि जागहिं जोगी ❀ परमारथी प्रपंच बियोगी
जानिअ तबहिं जीव जग जागा ❀ जब सब बिषय बिलास बिरागा

इस जगतरूपी रात्रि में योगी लोग जागते हैं, जो परमार्थी और मायामय जगत् से विरक्त हैं। इस जगत् में जीव को जागा हुआ तभी जानना चाहिये, जब सभी भोग-विलासों से उसको वैराग्य हो जाय। [सम्भावना अलङ्कार]

होइ बिबेकु मोह भ्रम भागा ❀ तब रघुनाथ चरन अनुरागा
सखा परम परमारथु एहू ❀ मन क्रम बचन राम पद नेहू

जब विवेक उत्पन्न हो और मोह से उत्पन्न हुआ भ्रम चला जाय, तब रामचन्द्र के चरणों में प्रेम होता है। हे सखा! मन, वचन और कर्म से रामचन्द्रजी के चरणों में स्नेह होना ही बड़ा परमार्थ है।

राम ब्रह्म परमारथ रूपा ❀ अबिगत अलख अनादि अनूपा
सकल बिकार रहित गतभेदा ❀ कहि नित नेति निरूपहिं बेदा

रामचन्द्रजी परमार्थ-स्वरूप ब्रह्म हैं। वे जानने में न आने वाले, न दिखाई पड़ने वाले, आदि-रहित और अनुपम हैं। वे सभी विकारों से अलग और भेद से रहित हैं। वेद सदा नेति (इतना ही नहीं) कहकर उनकी व्याख्या करते हैं।

दो॰ भगत भूमि भूसर सुरभि[1] सुर हित लागि कृपाल।
करत चरित धरि मनुज तन सुनत मिटहिं जग जाल॥

वही कृपालु रामचन्द्रजी भक्त, पृथ्वी, ब्राह्मण, गौ और देवताओं के हित के लिए मनुष्य का शरीर धारण करके लीलायें करते हैं, जिनको सुनने से जगत् के जंजाल जाते हैं।

सखा समुझि अस परिहरि मोहू ❀ सिय रघुबीर चरन रत होहू
कहत राम गुन भा भिनुसारा[2] ❀ जागे जग मंगल दातारा[3]

१. गौ। २. सबेरा। ३. देने वाले।

हे सखा ! ऐसा समझकर, मोह को त्यागकर, सीताराम के चरणों में प्रेम करो। इस तरह रामचन्द्रजी के गुण कहते-कहते सबेरा हो गया और जगत् को कल्याण देने वाले रामचन्द्रजी जाग उठे।

सकल सौच करि राम नहावा ❀ सुचि सुजान बट छीर[1] मँगावा
अनुज सहित सिर जटा बनाये ❀ देखि सुमंत्र नयन जल छाये

सब शौच-कार्य करके पवित्र और सुजान रामचन्द्रजी ने स्नान किया; फिर बड़ का दूध मँगाया और छोटे भाई (लक्ष्मण) सहित उस दूध से सिर पर जटाएँ बनाईं। यह देखकर सुमन्त्र की आँखों में जल भर आया।

हृदयँ दाहु अति बदन मलीना ❀ कह कर जोरि बचन अति दीना
नाथ कहेउ अस कौसलनाथा ❀ लै रथ जाहु राम कें साथा

उस समय सुमन्त्र के हृदय में अत्यन्त जलन थी। मुँह उदास हो गया था। वे हाथ जोड़कर बड़ी दीनता से कहने लगे—हे नाथ ! मुझे कौशलनाथ (दशरथजी) ने ऐसी आज्ञा दी है कि तुम रथ लेकर रामचन्द्रजी के साथ जाओ।

बनु देखाइ सुरसरि अन्हवाई ❀ आनेहु फेरि बेगि दोउ भाई
लषनु राम सिय आनेहु फेरी ❀ संसय सकल सँकोच निबेरी[2]

वन दिखाकर, गङ्गाजी का स्नान कराकर दोनों भाइयों को तुरन्त लौटा लाना। सब संशय और संकोच दूर करके लक्ष्मण, राम और सीता को फिरा लाना।

दो०— नृप अस कहेउ गोसाइँ जस कहइ करौं बलि सोइ।
करि बिनती पायन्ह परेउ दीन्ह बाल जिमि रोइ॥९४

महाराज ने ऐसा कहा था, अब प्रभु जैसा कहें, वही करूँ। इस तरह विनती करके सुमन्त्र रामचन्द्रजी के चरणों में गिर पड़े और उन्होंने बालक की तरह रो दिया।

तात कृपा करि कीजिअ सोई ❀ जातें अवध अनाथ न होई
मंत्रिहि राम उठाइ प्रबोधा ❀ तात धरम मतु तुम्ह सब सोधा

और बोले—हे तात ! आप कृपाकर वही कीजिये, जिससे अयोध्या अनाथ न हो। रामचन्द्रजी ने मन्त्री को उठाकर धैर्य बंधाया और कहा कि हे तात ! आपने तो धर्म के सभी सिद्धांतों को छान डाला है।

---

१. दूध। २. दूर करके।

सिबि दधीच हरिचंद नरेसा ❀ सहे धरम हित कोटि कलेसा
रंतिदेव बलि भूप सुजाना ❀ धरमु धरेउ सहि संकट नाना

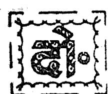
शिवि, दधीचि और हरिश्चन्द्र ने धर्म के लिए करोड़ों कष्ट सहे थे। बुद्धिमान् रंतिदेव और राजा बलि भी तरह-तरह के कष्ट सहकर भी धर्म को पकड़े रहे।

धरमु न दूसर सत्य समाना ❀ आगम निगम पुरान बखाना
मैं सोइ धरमु सुलभ करि पावा ❀ तजें तिहूँ पुर अपजसु छावा

वेद, शास्त्र और पुराणों में कहा गया है कि सत्य के समान दूसरा धर्म नहीं है। मैंने उसी धर्म को सहज ही पा लिया है। उसको छोड़ने से तीनों लोकों में अपयश छा जायगा।

संभावित[1] कहुँ अपजस लाहू ❀ मरन कोटि सम दारुन दाहू
तुम्ह सन तात बहुत का कहऊँ ❀ दिए उतरु फिर पातक लहऊँ

प्रतिष्ठित पुरुष को अपयश मिलना करोड़ों मृत्यु के समान भीषण दाह है। हे तात! मैं आप से ज्यादा क्या कहूँ? उत्तर देने में भी तो पाप का भागी होता हूँ।



पितु पद गहि कहि कोटि नति बिनय करब कर जोरि।
चिंता कवनिहुँ बात कै तात करिअ जनि मोरि॥९५॥

आप जाकर पिताजी के चरण पकड़कर करोड़ों नम्रता के साथ हाथ जोड़ कर विनती कीजियेगा कि हे पिताजी आप मेरी किसी बात की चिन्ता न करें।

तुम्ह पुनि पितु सम अति हित मोरे ❀ बिनती करउँ तात कर जोरे
सब बिधि सोइ करतब्य तुम्हारें ❀ दुख न पाव पितु सोच हमारें

आप भी पिता के समान मेरे बड़े हितैषी हैं। हे तात! मैं हाथ जोड़कर आपसे विनती करता हूँ कि आपका सब तरह से यही कर्त्तव्य है, जिसमें पिताजी हम लोगों के सोच में दुःख न पायें।

सुनि रघुनाथ सचिव संबादू ❀ भयेउ सपरिजन बिकल निषादू
पुनि कछु लषन कही कटु बानी ❀ प्रभु बरजे बड़ अनुचित जानी

इस तरह रघुनाथजी और सुमन्त्र मन्त्री का सम्वाद सुनकर गुह निषाद

१. प्रतिष्ठित पुरुष।

अपने कुटुम्बियों-समेत व्याकुल होगया। फिर लक्ष्मण ने कुछ कड़वी बात कही। तब प्रभु रामचन्द्रजी ने बहुत ही अनुचित जानकर उनको मना किया।

सकुचि राम निज सपथ देवाई ❀ लषन सँदेसु कहिअ जनि जाई
कह सुमंत्र पुनि भूप सँदेसू ❀ सहिन सकिहि सिय बिपिन कलेसू

रामचन्द्रजी ने संकोच में पड़कर, अपनी सौगन्ध दिलाकर सुमन्त्र से कहा कि आप जाकर लक्ष्मण का संदेश न कह दीजियेगा। सुमन्त्र ने फिर राजा का संदेशा सुनाया कि सीता वन के दुःखों को न सह सकेंगी।

जेहि बिधि अवध आव फिरि सीया ❀ सोइ रघुबरहिं तुम्हहिं करनीया
नतरु निपट अवलंब बिहीना ❀ मैं न जिअब जिमि जल बिनु मीना

जिस तरह सीता अयोध्या को लौट आयें, तुमको और रामचन्द्र को वही उपाय करना चाहिये। नहीं तो बिलकुल बिना सहारे का मैं वैसे ही न जीऊँगा, जैसे बिना पानी के मछली।

दो० मइकें ससुरें सकल सुख जबहिं जहाँ मनु मान।
तहँ तब रहिहि सुखेन सिय जब लग बिपति बिहान[1]॥

सीता के मायके और ससुराल में सब सुख है। जब जहाँ जी चाहे, जब तक विपत्ति दूर न हो सीता वहीं सुख से रहे।

बिनती भूप कीन्ह जेहि भाँती ❀ आरति प्रीति न सो कहि जाती
पितु सँदेसु सुनि कृपानिधाना ❀ सियहिं दीन्हि सिख कोटि बिधाना

राजा ने जिस तरह विनती की है, वह दीनता और प्रीति कही नहीं जा सकती। कृपा के भंडार रामचन्द्रजी ने पिता का संदेश सुनकर सीता को करोड़ों तरह से सीख दी।

सासु ससुर गुर प्रिय परिबारू ❀ फिरहु त सब कर मिटै खंभारू
सुनि पति बचन कहति बैदेही ❀ सुनहु प्रानपति परम सनेही

हे प्रिये! जो तुम घर लौट जाओ, तो सास, ससुर, गुरु, प्रियजन और कुटुम्बी सबकी चिंता मिट जाय। पति के वचन सुनकर जानकी कहती हैं—हे प्राणपति! हे परम स्नेही! सुनिये—

---

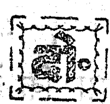
१. अन्त।

प्रभु करुनामय परम बिबेकी ❀ तनु तजि रहति छाँह किमि छेंकी[1]
प्रभा जाइ कहँ भानु बिहाई[2] ❀ कहँ चन्द्रिका चंदु तजि जाई

हे स्वामी ! आप तो परम विचारवान और दयामय हैं। (ज़रा सोचिये तो कि) छाया शरीर को छोड़कर अलग कैसे रुकी रह सकती है ? सूर्य की प्रभा सूर्य को छोड़कर कहाँ जा सकती है ? और चाँदनी चन्द्रमा को छोड़कर कहाँ जा सकती है ? [अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार]

पतिहि प्रेममय बिनय सुनाई ❀ कहति सचिव सन गिरा सुहाई
तुम्ह पितु ससुर सरिसि हितकारी ❀ उतरु देउँ फिरि अनुचित भारी

सीता पति को इस तरह प्रेम-भरी विनती सुनाकर फिर सुमन्त्र मन्त्री से सुहावनी वाणी कहने लगीं—आप मेरे पिता और ससुर के समान हित करने वाले हैं, आपको मैं बदले में फिर उत्तर देती हूँ, यह बहुत ही अनुचित है।



आरति बस सनमुख भइउँ बिलगु न मानब तात।
आरजसुत पदकमल बिनु बादि[3] जहाँ लगि नात।९७

हे तात ! मैं आर्त्त होकर ही आपके सम्मुख हुई हूँ। आप बुरा न मानियेगा। आर्यपुत्र (रामचन्द्रजी) के चरण-कमलों के बिना जगत् में जहाँ तक नाते हैं, वे सभी मेरे लिये व्यर्थ हैं।

पितु बैभव बिलासु मैं डीठा ❀ नृप मनि मुकुट मिलित पद पीठा
सुख निधान अस पितु गृह मोरें ❀ पिय बिहीन मन भाव न भोरें

मैंने पिताजी के ऐश्वर्य की छटा देखी है, जिनके चरण रखने की चौकी से बड़े-बड़े राजाओं के मुकुट मिलते हैं। ऐसे पिता का घर भी, जो सब प्रकार के सुखों का भंडार है, पति के बिना मेरे मन में भूलकर भी नहीं भाता।

ससुर चक्कवइ[4] कोसलराऊ ❀ भुवन चारिदस प्रगट प्रभाऊ
आगें होइ जेहि सुरपति लेई ❀ अरध सिंहासन आसनु देई

मेरे ससुर चक्रवर्ती सम्राट् हैं, जिनका प्रभाव चौदहों लोकों में प्रकट है। इन्द्र भी आकर जिनका स्वागत करता है और अपने आधे सिंहासन पर बैठने का स्थान देता है।

---

१. रोकी हुई। २. छोड़कर। ३. व्यर्थ। ४. चक्रवर्ती।

ससुर एतादस[1] अवध निवासू ❀ प्रिय परिवारु मातु सम सासू
बिनु रघुपति पद पदुम परागा ❀ मोहि कोउ सपनेहु सुखद न लागा

ऐसे ससुर, अयोध्या का निवास, प्यारे कुटुम्बीजन और माता के समान सासुयें, ये कोई भी रामचन्द्रजी के चरण-कमलों की रज के बिना मुझे स्वप्न में भी सुखदायक नहीं लगते।

अगम पंथ बन भूमि पहारा ❀ करि केहरि सर सरित अपारा
कोल किरात कुरंग बिहंगा ❀ मोहि सब सुखद प्रानपति सङ्गा

दुर्गम रास्ते, जंगल की धरती, पहाड़, हाथी, सिंह, अथाह तालाब और नदियाँ, कोल, भील, हिरन और पक्षी, ये सब प्राणपति के साथ रहते हुए मुझे सुख देने वाले होंगे। [अनुज्ञा अलङ्कार]

दो॰ सासु ससुर सन मोरि हुँति[2] बिनय करबि परि पायँ।
मोर सोचु जनि करिअ कछु मैं बन सुखी सुभायँ॥९८

सास और ससुर के पाँव पकड़कर, मेरी ओर से विनती कीजियेगा कि वे मेरा कुछ भी सोच न करें, मैं वन में स्वभाव ही से सुखी हूँ।

प्राननाथ प्रिय देवर साथा ❀ बीर धुरीन धरें धनु भाथा
नहिं मग स्रमु भ्रमु दुख मन मोरें ❀ मोहि लगि सोच करिअ जनि भोरे

वीरों में अग्रगण्य तथा धनुष-बाण और तरकस धारण किये मेरे प्राणनाथ और प्यारे देवर साथ हैं, इसलिए मुझे न रास्ते चलने में थकावट है, न कुछ भ्रम है, और न मन में दुःख है। आप मेरे लिए भूलकर भी सोच न करें।

सुनि सुमन्त्रु सिय सीतलि बानी ❀ भयेउ बिकल जनु फनि[3] मनि हानी
नयन सूझ नहिं सुनइ न काना ❀ कहि न सकइ कछु अति अकुलाना

सुमन्त्र सीता की शीतल वाणी सुनकर विह्वल हो गये। जैसे मणि खो जाने पर साँप को आँखों से न दिखाई देता है और न कानों से कुछ सुनाई देता है। वे बहुत व्याकुल हो गये और कुछ कह नहीं सकते।

राम प्रबोधु कीन्ह बहु भाँती ❀ तदपि होति नहिं सीतलि छाती
जतन अनेक साथ हित कीन्हे ❀ उचित उतर रघुनन्दन दीन्हे

---

१. इस प्रकार के, ऐसे। २ ओर से। ३. साँप।

रामचन्द्रजी ने उनको बहुत प्रकार से समझाया, तो भी उनकी छाती ठण्डी न हुई। साथ चलने के लिए मन्त्री ने अनेकों यत्न किये, पर रामचन्द्रजी उनकी सब बातों का यथोचित उत्तर देते गये।

मेटि जाइ नहिं राम रजाई[1] ❀ कठिन करम गति कछु न बसाई
राम लषन सिय पद सिरु नाई ❀ फिरेउ बनिक जिमि मूर गँवाई

रामचन्द्रजी की आज्ञा मेटी नहीं जा सकती। कर्म की गति कठिन है, उस पर किसी का कुछ वश नहीं। राम, लक्ष्मण और सीता के चरणों में सिर नवाकर सुमन्त्र इस तरह लौटे, जैसे कोई व्यापारी अपना मूलधन (पूँजी) गँवाकर लौटे।

दो०— रथु हाँकेउ हय राम तन हेरि हेरि हिहिनाहिं।
देखि निषाद बिषाद बस धुनहिं सीस पछिताहिं।९९।

सुमन्त्र ने रथ को हाँका। घोड़े रामचन्द्रजी की ओर देख-देखकर हिन-हिनाते हैं। यह देखकर निषाद लोग दुःखी हो सिर पीट-पीटकर पछताते हैं।

[द्वितीय उल्लास अलंकार]

जासु बियोग बिकल पशु ऐसें ❀ प्रजा मातु पितु जिइहहिं कैसें
बरबस राम सुमंत्रु पठाये ❀ सुरसरि तीर आपु तब आये

जिसके वियोग में पशु इस प्रकार व्याकुल हैं, उसके वियोग में प्रजा, माता और पिता कैसे जीते रहेंगे? रामचन्द्रजी ने सुमन्त्र को आग्रह करके वापिस भेजा। फिर आप गङ्गाजी के तट पर आये।

माँगी नाव न केवटु आना ❀ कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना
चरन कमल रज कहुँ सबु कहई ❀ मानुष करनि मूरि[2] कछु अहई

रामचन्द्रजी ने केवट से नाव मँगवाई, पर वह नाव नहीं लाया। वह कहने लगा—मैं आपका मर्म जानता हूँ। सब लोग कहते हैं कि तुम्हारे चरण-कमलों की धूल मनुष्य बना देने वाली कोई जड़ी है।

छुअत सिला भइ नारि सुहाई ❀ पाहन तें न काठ कठिनाई
तरनिउँ[3] मुनि घरनी[4] होइ जाई ❀ बाट परइ मोरि नाव उड़ाई

उसके छूते ही पत्थर की शिला सुन्दर स्त्री हो गई। काठ पत्थर से ज़्यादा

१. आज्ञा। २. जड़ी। ३. नाव। ४. स्त्री।

कठोर थोड़े ही होता है। कहीं मेरी नाव भी मुनि की स्त्री हो जायगी तो ? मेरी नाव उड़ जायगी, तो मेरी (जीविका की) राह पड़ (बन्द हो) जायगी।

एहिं प्रतिपालउँ सबु परिवारू ❁ नहिं जानउँ कछु अउर कबारू[1]
जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू ❁ मोहि पद पदुम पखारन कहहू

मैं तो इस नाव ही से अपने सारे परिवार का पालन करता हूँ और कोई दूसरा धंधा नहीं जानता। हे प्रभु ! जो आप ज़रूर ही पार जाना चाहते हैं, तो मुझे पहले अपने चरण-कमल धो लेने की आज्ञा दे दीजिये। [द्वितीय पर्यायोक्ति अलङ्कार]

छंद—पद कमल धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं।
मोहि राम राउरि आन दसरथ सपथ सब साँची कहौं॥
बरु तीर मारहुँ लषनु पै जब लगि न पाय पखारिहौं।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपालु पारु उतारिहौं॥

हे नाथ ! मैं चरण-कमल धोकर ही अपनी नाव पर आपको चढ़ाऊँगा और आपसे कुछ उतराई नहीं चाहता। हे राम ! मुझे आपकी दुहाई और दशरथजी की सौगन्ध है, मैं सब सच्ची कहता हूँ, मुझे लक्ष्मण भले ही तीर मारें, पर मैं जब तक पैर न धो लूँगा, तब तक (तुलसीदास कहते हैं) हे नाथ ! हे दयालु ! मैं पार नहीं उतारूँगा।

सो०— सुनि केवट के बैन प्रेम लपेटे अटपटे।
बिहँसे करुना ऐन चितइ जानकी लषन तन।१००।

केवट के प्रेम में लपेटे हुये अटपटे वचन सुनकर करुणा के घर रामचन्द्रजी जानकी और लक्ष्मण की ओर देखकर हँसे।

कृपासिंधु बोले मुसुकाई ❁ सोइ करु जेहिं तव नाव न जाई
बेगि आनु जल पाय पखारू ❁ होत बिलंबु उतारहि पारू

कृपासागर रामचन्द्रजी तब मुस्कुराकर बोले—अच्छा, वही कर, जिससे तेरी नाव न जाय। जल्दी पानी लाकर पाँव धो और हमको पार उतार दे। देरी हो रही है।

---

१. धंधा।

जासु नाम सुमिरत एक बारा ❀ उतरहिं नर भवसिंधु अपारा
सोइ कृपालु केवटहि निहोरा ❀ जेहि जगु किए तिहुँ पगहुँ तें थोरा

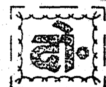
जिनका नाम एक ही बार स्मरण करते ही मनुष्य अपार भवसागर से पार उतर जाते हैं, और जिन्होंने (वामनावतार में) जगत् को तीन पग से भी छोटा कर दिया था, वे ही दयालु रामचन्द्रजी केवट का निहोरा कर रहे हैं।
[विरोधाभास अलङ्कार]

पद नख निरखि देवसरि हरषी ❀ सुनि प्रभु बचन मोह मति करषी
केवट राम रजायसु पावा ❀ पानि कठवता भरि लेइ आवा

रामचन्द्रजी के चरणों के नखों को देखकर गङ्गाजी हर्षित हुईं। किन्तु पहले उनके वचनों को सुनकर उनकी बुद्धि मोह की ओर खिंच गई थी। केवट रामचन्द्रजी की आज्ञा पाकर कठौते में भरकर जल ले आया।

अति आनन्द उमगि अनुरागा ❀ चरन सरोज पखारन लागा
बरषि सुमन सुर सकल सिहाहीं ❀ एहि सम पुन्य पुञ्ज कोउ नाहीं

बड़े आनन्द से प्रेम की उमंग में आकर वह चरण-कमल धोने लगा। सब देवता फूल बरसाकर उसकी प्रशंसा करने लगे कि इसके बराबर पुण्य की राशि कोई नहीं है।


पद पखारि जलु पान करि आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहिं पुनि मुदित गयेउ लेइ पार१०१

चरणों को धोकर और अपने कुटुम्ब-सहित उस चरणोदक को पीकर पहले अपने पितरों को भवसागर के पार कर, फिर आनन्द-पूर्वक रामचन्द्रजी को पार ले गया। [अत्यन्तातिशयोक्ति अलङ्कार]

उतरि ठाढ़ भए सुरसरि रेता[1] ❀ सीय रामु गुह लषन समेता
केवट उतरि दंडवत कीन्हा ❀ प्रभुहि सकुच एहि नहिं कछु दीन्हा

गुह और लक्ष्मण-सहित सीता और रामचन्द्रजी नाव से उतरकर गङ्गाजी की रेत (बालू) में खड़े हो गये। केवट ने उतरकर दण्डवत की। रामचन्द्रजी को संकोच हुआ कि इसको कुछ दिया नहीं।

---

१. बालू।

पिय हिय की सिय जाननिहारी ❀ मनि मुँदरी मन मुदित उतारी
कहेउ कृपाल लेहि उतराई ❀ केवट चरन गहे अकुलाई

पति के हृदय की बात जानने वाली जानकी ने अपनी मणि जड़ी हुई अँगूठी प्रसन्न-चित्त से उतारी। कृपालु रामचन्द्रजी ने केवट से कहा—नाव की उतराई लो। केवट ने व्याकुल होकर चरण पकड़ लिये।

नाथ आजु मैं काह न पावा ❀ मिटे दोष दुख दारिद दावा
बहुत काल मैं कीन्हि मजूरी ❀ आज दीन्हि बिधि बनि भलि भूरी

(केवट ने कहा—) हे नाथ ! आज मैंने क्या नहीं पाया ? मेरे दोष, दुःख और दरिद्रता की आग बुझ गई। मैंने बहुत समय तक मज़दूरी की, विधाता ने आज भली भाँति भरपूर मजदूरी मुझे दे दी।

अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें ❀ दीनदयाल अनुग्रह तोरें
फिरती बार मोहि जोइ देवा[1] ❀ सो प्रसादु मैं सिर धरि लेवा[2]

हे नाथ ! हे दीनदयाल ! आपकी कृपा से अब मुझे कुछ नहीं चाहिये। लौटती बार आप मुझे जो कुछ देंगे, वह प्रसाद मैं माथे चढ़ाकर ले लूँगा।

दो॰ बहुत कीन्ह प्रभु लषन सियँ नहिं कछु केवट लेइ।
बिदा कीन्ह करुनायतन भगति बिमल बरु देइ १०२

प्रभु राम, लक्ष्मण और सीता ने बहुत आग्रह किया, पर केवट ने कुछ न लिया। तब करुणा के धाम रामचन्द्रजी ने उसे निर्मल भक्ति का वरदान देकर विदा किया।

तब मज्जनु करि रघुकुल नाथा ❀ पूजि पारथिव नायउ माथा
सिय सुरसरिहिं कहेउ कर जोरी ❀ मातु मनोरथ पुरउबि मोरी

तब स्नान करके रामचन्द्रजी ने पार्थिव (मिट्टी की बनाई हुई शिव-मूर्त्ति) की पूजा की और उसे प्रणाम किया। सीता ने हाथ जोड़कर गङ्गाजी से कहा—हे माता ! मेरा मनोरथ पूर्ण करना।

पति देवर सँग कुसल बहोरी ❀ आइ करौं जेहिं पूजा तोरी
सुनि सिय बिनय प्रेम रस सानी ❀ भइ तब बिमल बारि बर बानी

जिससे मैं पति और देवर के साथ कुशलपूर्वक लौट आकर तुम्हारी पूजा

१. दीजियेगा। २. लूँगा।

अति आनंद उमगि अनुरागा,
चरन सरोज पखारन लागा ।।

करूँ। सीता की प्रेमरस-भरी हुई विनती सुनकर गङ्गाजी के निर्मल जल में से श्रेष्ठ वाणी हुई—

सुनु रघुबीर प्रिया बैदेही ❀ तव प्रभाउ जग बिदित न केही
लोकप होहिं बिलोकत तोरें ❀ तोहि सेवहिं सब सिधि कर जोरें

हे रघुवीर की प्रियतमा जानकी! सुनो, जगत् में तुम्हारा प्रभाव किसको नहीं मालूम है? तुम्हारे देखते ही लोग लोकपाल हो जाते हैं। सब सिद्धियाँ हाथ जोड़े हुए तुम्हारी सेवा करती हैं।

तुम्ह जो हमहिं बड़ि बिनय सुनाई ❀ कृपा कीन्हि मोहि दीन्हि बड़ाई
तदपि देबि मैं देबि असीसा ❀ सफल होन हित निज बागीसा[1]

तुमने जो मुझको बड़ी विनती सुनाई, यह मुझ पर कृपा की और मुझे बड़ाई दी है। तो भी हे देवि! मैं अपनी वाणी को सफल करने के लिए तुमको आशीर्वाद दूँगी।

दो०— प्राननाथ देवर सहित कुसल कोसला[2] आइ।
पूजिहि सब मनकामना सुजसु रहिहि जग छाइ।१०३।

तुम अपने प्राणनाथ और देवर-सहित कुशलपूर्वक अयोध्या लौटोगी। तुम्हारी मन की सारी कामनाएँ सिद्ध होंगी और जगत्-भर में तुम्हारा यश छा जायगा।

गंग बचन सुनि मङ्गल मूला ❀ मुदित सीय सुरसरि अनुकूला
तब प्रभु गुहहिं कहेउ घर जाहू ❀ सुनत सूख मुखु भा उर दाहू

मंगल के मूल गङ्गाजी के वचन सुनकर और देवनदी को अनुकूल जानकर सीता प्रसन्न हुईं। तब प्रभु (रघुनाथजी) ने गुह से कहा—तुम अब घर जाओ। यह सुनते ही गुह का मुँह सूख गया और हृदय में दाह उत्पन्न हो गया।

दीन बचन गुह कह कर जोरी ❀ बिनय सुनहु रघुकुलमनि मोरी
नाथ साथ रहि पंथु देखाई ❀ करि दिन चारि चरन सेवकाई

गुह हाथ जोड़कर दीन वचन कहने लगा—हे रघुवंश के मणि! मेरी प्रार्थना सुनिये। हे नाथ! मैं आपके साथ रहकर, रास्ता दिखाकर, चार दिन (कुछ) चरणों की सेवा करके,

१. वाणी। २. अयोध्या।

जेहिं बन जाइ रहब रघुराई ❀ परनकुटी मैं करबि सुहाई
तब मोहि कहँ जसि देब रजाई ❀ सोइ करिहउँ रघुबीर दोहाई

हे रामचन्द्रजी ! आप जिस वन में जाकर रहेंगे, वहाँ आपके लिए पत्ते की सुन्दर कुटी बना दूंगा। तब मुझे आप जैसी आज्ञा देंगे, मैं आपकी सौगन्ध खाकर कहता हूँ, वसा ही करूँगा।

सहज सनेह राम लखि तासू ❀ संग लीन्ह गुह हृदयँ हुलासू
पुनि गुहँ ग्याति बोलि सब लीन्हे ❀ करि परितोषु बिदा तब कीन्हे

उसके स्वाभाविक प्रेम को देखकर रामचन्द्रजी ने उसको साथ ले लिया। इससे गुह के हृदय में बड़ा आनन्द हुआ। फिर गुह ने अपनी जाति के सब लोगों को बुला लिया और उनको सन्तुष्ट करके विदा किया।

दो॰ तब गनपति सिव सुमिरि प्रभु नाइ सुरसरिहि माथ।
सखा अनुज सिय सहित बन गवनु कीन्ह रघुनाथ॥

तब गणेशजी और शिवजी को सुमिरकर और गङ्गाजी को प्रणाम करके प्रभु रामचन्द्रजी अपने सखा (गुह), छोटे भाई (लक्ष्मण) और सीता-सहित वन को चले।

तेहि दिन भयउ बिटप तर बासू ❀ लषन सखाँ सब कीन्ह सुपासू[1]
प्रात प्रातकृत करि रघुराई ❀ तीरथराजु दीख प्रभु जाई

उस दिन पेड़ के नीचे निवास हुआ। लक्ष्मण और सखा गुह ने सब सुव्यवस्था की। सवेरे प्रातः-कृत्य करके प्रभु ने जाकर तीर्थों के राजा (प्रयाग) के दर्शन किये।

सचिव सत्य श्रद्धा प्रिय नारी ❀ माधव सरिस मीतु हितकारी
चारि पदारथ भरा भँडारू ❀ पुन्य प्रदेस देस अति चारू

तीर्थराज का मन्त्री सत्य है, श्रद्धा प्यारी स्त्री है, वेणीमाधवजी सरीखे हितकारी मित्र हैं, चार पदार्थों (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) से भंडार भरा है। और पुण्यमय प्रांत ही जिसका सुन्दर देश (राज्य) है।

छेत्रु अगम गढु गाढ़ सुहावा ❀ सपनेहुँ नहिं प्रतिपच्छिन्ह[2] पावा
सेन सकल तीरथ बर बीरा ❀ कलुष अनीक दलन रनधीरा

१. सुभीता, सुव्यवस्था। २. शत्रु।

प्रयाग-क्षेत्र ही अगम, सुन्दर और मज़बूत गढ़ (किला) है, जिसको स्वप्न में भी शत्रु नहीं पा सके। सम्पूर्ण तीर्थ ही जिसके श्रेष्ठ वीर सैनिक हैं, जो पाप की फौज को कुचल डालने वाले और बड़े रणधीर हैं।

संगमु सिंहासन सुठि सोहा ❀ छत्रु अखयबटु मुनि मनु मोहा
चवँर जमुन अरु गंग तरंगा ❀ देखि होहिं दुख दारिद भंगा

गङ्गा-यमुना और सरस्वती का संगम ही जिसका सुन्दर सिंहासन है, मुनियों के मन को मोहित करने वाला अक्षयवट ही जिसका छत्र है, गङ्गा-यमुना की लहरें ही चँवर हैं, जिनको देखकर दुःख और दरिद्रता नष्ट हो जाती है,

दो०
सेवहिं सुकृती साधु सुचि पावहिं सब मन काम।
बंदी बेद पुरान गन कहहिं बिमल गुनग्राम॥१०५॥

पुण्यात्मा, पवित्र साधु उसकी सेवा करते हैं और मनोकामना सफल करते हैं। वेद और पुराणों के समूह ही बन्दीगण हैं, जो उसके शुद्ध गुणगणों का गान करते हैं। [सचिव सत्य से यहाँ तक साङ्गरूपक अलङ्कार]

को कहि सकइ प्रयाग प्रभाऊ ❀ कलुष[1] पुंज कुंजर मृगराऊ
अस तीरथपति देखि सुहावा ❀ सुखसागर रघुबर सुखु पावा

प्रयागराज की महिमा कौन कह सकता है ? जो पापों के समूहरूपी हाथी के लिए सिंह-रूप है। ऐसे सुहावने तीर्थराज का दर्शन कर सुख के समुद्र रामचन्द्रजी ने सुख पाया।

कहि सिय लषनहि सखहि सुनाई ❀ श्रीमुख तीरथराज बड़ाई
करि प्रनामु देखत बन बागा ❀ कहत महातम अति अनुरागा

रामचन्द्रजी अपने श्रीमुख से सीता, लक्ष्मण और सखा को तीर्थराज की महिमा सुनाकर और प्रणाम करके, बन और बगीचों को देखते हुये और बड़े प्रेम से माहात्म्य कहते हुये,

एहि बिधि आइ बिलोकी बेनी ❀ सुमिरत सकल सुमंगल देनी
मुदित नहाइ कीन्हि सिव सेवा ❀ पूजि जथाबिधि तीरथ देवा

इस प्रकार आकर उन्होंने त्रिवेणी का दर्शन किया, जो स्मरण करने ही से सब सुन्दर मंगलों को देने वाली है। फिर प्रसन्नतापूर्वक स्नान करके उन्होंने

१. पाप।

शिवजी की पूजा की, और विधि-पूर्वक तीर्थ के अन्य देवताओं का पूजन किया।

तब प्रभु भरद्वाज पहिं आए ❀ करत दण्डवत मुनि उर लाए
मुनि मन मोद न कछु कहि जाई ❀ ब्रह्मानंद रासि जनु पाई

तब प्रभु (राम) भरद्वाजजी के पास आये। दण्डवत् करते हुए ही उनको मुनि ने हृदय से लगा लिया। मुनि के मन का आनन्द कुछ कहा नहीं जा सकता। मानो उन्हें ब्रह्मानन्द की राशि ही मिल गई।

दो०— दीन्हि असीस मुनीस उर अति अनंदु अस जानि।
लोचन गोचर सुकृत फल मनहुँ किए बिधि आनि॥

मुनीश्वर भरद्वाज ने आशीर्वाद दिया। उनके हृदय में यह जानकर विशेष आनन्द हुआ कि विधाता ने मानो हमारे सारे पुण्यों का फल आँखों के सामने कर दिया।

कुसल प्रस्न करि आसन दीन्हे ❀ पूजि प्रेम परिपूरन कीन्हे
कंद मूल फल अंकुर नीके ❀ दिये आनि मुनि मनहु अमी के

कुशल-प्रश्न पूछकर मुनिराज ने उनको आसन दिये और उनका पूजन करके उन्हें प्रेम से पूर्ण किया, तथा अच्छे-अच्छे अमृत के समान कन्द-मूल, फल और बढ़िया अंकुर लाकर दिये।

सीय लषन जन सहित सुहाए ❀ अति रुचि राम मूल फल खाए
भए बिगतस्रम राम सुखारे ❀ भरद्वाज मृदु बचन उचारे

सीता, लक्ष्मण और गुह-सहित रामचन्द्रजी ने सुन्दर मूल, फल बड़ी रुचि से खाये। जब थकावट दूर होने से रामचन्द्रजी सुखी हो गये, तब भरद्वाज-जी कोमल वचनों से बोले—

आजु सुफल तपु तीरथ त्यागू ❀ आजु सुफल जपु जोग बिरागू
सफल सकल सुभ साधन साजू ❀ राम तुम्हहिं अवलोकत आजू

हे राम! आज आपका दर्शन करते ही मेरा तप, तीर्थ-सेवन और त्याग सफल हो गया। आज मेरा जप, योग और वैराग्य भी सफल हो गया। आज मेरे सम्पूर्ण शुभ साधनों का समुदाय भी सफल हो गया। [तृतीय तुल्य-योगिता अलंकार]

लाभ अवधि सुख अवधि न दूजी ❀ तुम्हरें दरस आस सब पूजी[1]
अब करि कृपा देहु बर एहू ❀ निज पद सरसिज सहज सनेहू

लाभ की सीमा और सुख की सीमा दूसरी नहीं है। आपके दर्शनों से सब आशाएँ पूर्ण हो गईं। अब कृपा कर अपने चरण-कमलों में मेरा स्वाभाविक स्नेह होने का मुझे वरदान दीजिये। [पर्यस्तापन्हुति अलङ्कार]

दो॰ करम बचन मन छाँड़ि छल जब लगि जनु न तुम्हार।
तब लगि सुखु सपनेहुँ नहीं किए कोटि उपचार ॥१०७

कर्म, मन और वचन से छल को छोड़कर जबतक मनुष्य आपका दास नहीं हो जाता, तब तक करोड़ों उपाय करने से भी, वह स्वप्न में भी, सुख नहीं पाता।

सुनि मुनि बचन राम सकुचाने ❀ भाव भगति आनंद अघाने
तब रघुबर मुनि सुजस सुहावा ❀ कोटि भाँति कहि सबहि सुनावा

मुनि के वचन सुनकर राम सकुचा गये। उनकी भाव, भक्ति और आनन्द से तृप्त हो गये। तब रामचन्द्रजी ने भरद्वाज मुनि का सुयश करोड़ों तरह से कहकर सब को सुनाया।

सो बड़ सो सब गुन गन गेहू ❀ जेहि मुनीस तुम्ह आदर देहू
मुनि रघुबीर परसपर नवहीं ❀ बचन अगोचर सुखु अनुभवहीं

हे मुनिराज! जिसको आप आदर दें, वही बड़ा और वही सब गुणों का घर है। इस तरह रामचन्द्रजी और मुनि (भरद्वाजजी) दोनों परस्पर विनम्र हो रहे हैं और ऐसे सुख का अनुभव करते हैं जिसका वर्णन नहीं हो सकता। [अन्योन्य अलङ्कार]

एह सुधि पाइ प्रयाग निवासी ❀ बटु तापस मुनि सिद्ध उदासी
भरद्वाज आश्रम सब आए ❀ देखन दसरथ सुअन सुहाए

उनके आने की खबर पाकर प्रयाग-निवासी ब्रह्मचारी, तपस्वी, मुनि, सिद्ध और उदासी सब दशरथ जी के सुन्दर पुत्रों को देखने के लिये भरद्वाजजी के आश्रम पर आये।

राम प्रनाम कीन्ह सब काहू ❀ मुदित भये लहि लोचन लाहू
देहिं असीस परम सुखु पाई ❀ फिरे सराहत सुन्दरताई

---

१. पूरी हुई।

रामचन्द्रजी ने सबको प्रणाम किया। नेत्रों का लाभ पाकर सब आनंदित हो गये, और परम सुख पाकर आशीर्वाद देने लगे। उनकी सुन्दरता की बड़ाई करते हुए वे लौट गये।

दो० **राम कीन्ह बिश्राम निसि प्रात प्रयाग नहाइ।**
चले सहित सिय लषन जन मुदित मुनिहिं सिरु नाइ॥

रामचन्द्रजी ने रात को वहीं विश्राम किया और सवेरे सीता, लक्ष्मण और गुह-सहित प्रयागराज का स्नान कर और भरद्वाज मुनि को सिर नवाकर वे प्रसन्नतापूर्वक चले।

राम सप्रेम कहेउ मुनि पाहीं ❀ नाथ कहिअ हम केहि मग जाहीं
मुनि मन बिहँसि राम सन कहहीं ❀ सुगम सकल मग तुम्ह कहँ अहहीं

रामचन्द्रजी ने बड़े प्रेम से मुनि से कहा—हे नाथ! बताइये, हम किस मार्ग से जायँ? मुनि मन में हँसकर रामचन्द्रजी से कहते हैं कि आपके लिए सभी मार्ग सुगम हैं।

साथ लागि[1] मुनि सिष्य बोलाये ❀ सुनि मन मुदित पचासक आये
सबन्हि राम पर प्रेम अपारा ❀ सकल कहहि मगु दीख हमारा

उनके साथ के लिए मुनि ने शिष्यों को बुलाया। सुनते ही प्रसन्न-मन से कोई पचास शिष्य आ गये। सभी का रामजी पर अपार प्रेम है। सभी कहते हैं कि रास्ता तो हमारा देखा हुआ है।

मुनि बटु चारि सङ्ग तब दीन्हे ❀ जिन्ह बहु जनम सुकृत सब कीन्हे
करि प्रनामु रिषि आयसु पाई ❀ प्रमुदित हृदयँ चले रघुराई

तब मुनि ने चार ब्रह्मचारियों को साथ कर दिया, जिन्होंने बहुत जन्मों तक सब पुण्य किये थे। रामचन्द्रजी ऋषि को प्रणाम कर, उनकी आज्ञा पाकर हृदय में आनंदित होकर चले।

ग्राम निकट जब निकसहिं जाई ❀ देखहिं दरसु नारि नर धाई
होहिं सनाथ जनम फलु पाई ❀ फिरहिं दुखित मनु संग पठाई

जब रामचन्द्रजी किसी गाँव के पास होकर निकलते हैं, तब स्त्री-पुरुष दौड़-कर उनका दर्शन करते हैं। जन्म का फल पाकर वे कृतार्थ होते हैं और मन को

---

१. लिये।

उन्हीं के साथ भेजकर, दुःखी होकर लौट जाते हैं।



बिदा किए बटु बिनय करि फिरे पाइ मन काम।
उतरि नहाए जमुन जल जो सरीर सम स्याम।१०९।

फिर रामचन्द्रजी ने विनती करके ब्रह्मचारियों को विदा किया। वे भी मनचाही वस्तु (भक्ति) पाकर लौटे। रामचन्द्रजी ने यमुना के पार उतरकर स्नान किया, जिसका जल उनके शरीर के समान श्याम रंग का था।

सुनत तीरबासी नरनारी ❀ धाए निज निज काज बिसारी
लषन राम सिय सुन्दरताई ❀ देखि करहिं निज भाग्य बड़ाई

यमुना के किनारे पर रहने वाले स्त्री-पुरुष उनका आना सुनकर सब अपना-अपना काम भूलकर दौड़े और लक्ष्मण, राम और सीता की सुन्दरता देखकर अपने भाग्य की बड़ाई करने लगे।

अति लालसा बसहिं मन माहीं ❀ नाउँ गाउँ बूझत सकुचाहीं
जे तिन्ह महुँ बयबिरिध सयाने ❀ तिन्ह करि जुगुति रामु पहिचाने

सबके मन में बहुत-सी लालसाएँ भरी हैं, तो भी वे नाम और गाँव पूछने में संकोच करते हैं। उन लोगों में जो अवस्था में बड़े और चतुर थे, उन्होंने युक्ति करके रामचन्द्रजी को पहचाना।

सकल कथा तिन्ह सबहिं सुनाई ❀ बनहिं चले पितु आयसु पाई
सुनि सबिसाद सकल पछिताहीं ❀ रानी रायँ कीन्ह भल नाहीं

उन्होंने सब कथा सब लोगों को कह सुनाई कि पिता की आज्ञा पाकर ये वन को चले हैं। यह सुनकर सब लोग दुःख से पछता रहे हैं कि रानी और राजा ने अच्छा नहीं किया।

क्षेपक❀

तेहि अवसर एक तापसु आवा ❀ तेज पुंज लघु बयस सुहावा
कबि अलखित गति वेषु बिरागी ❀ मन क्रम बचन राम अनुरागी

❀ प्रायः सभी उपलब्ध प्रतियों में तापस के आने की यह कथा मिलती है; पर इससे कथा के प्रवाह और प्रभाव दोनों को बाधा पहुँचती है। यद्यपि इसकी चौपाइयाँ तुलसीदासजी की ही रची हुई जान पड़ती हैं, पर मैं इसे क्षेपक मानता हूँ। यह नहीं समझ पड़ता कि तुलसीदासजी ने इसे यहाँ किस अभिप्राय से प्रविष्ट किया। वे स्वयं भी इसे 'कवि-अलखित' कहते हैं। इस प्रसंग के ले लेने से अयोध्या-काण्ड भर में जो २५ दोहे के बाद एक छंद पड़ता है, वह क्रम भी बिगड़ जाता है। यहाँ २६ दोहे के बाद छंद पड़ता है।

उसी अवसर में वहाँ एक तपस्वी आया, जो बड़ा तेजस्वी, छोटी अवस्था वाला और सुन्दर था। उसकी गति कवि नहीं जानते। वह वैरागी का वेष धारण किये हुए, मन, कर्म और वचन से रामचन्द्रजी का प्रेमी था।

दो॰ सजल नयन तन पुलकि निज इष्टदेव पहिचानि।
परेउ दंड जिमि धरनितल दसा न जाइ बखानि ॥१॥

अपने इष्टदेव रामचन्द्रजी को पहचानकर उसका शरीर पुलकित हो गया और नेत्रों में जल भर आया। वह दंड के समान जमीन पर गिर पड़ा। उसकी दशा कहते नहीं बनती।

राम सप्रेम पुलकि उर लावा ❀ परम रंक जनु पारस पावा
मनहुँ प्रेमु परमारथ दोऊ ❀ मिलत धरे तन कह सब कोऊ

रामचन्द्रजी ने पुलकित होकर उस तपस्वी को हृदय से लगाया। वह ऐसा प्रसन्न हुआ, जैसे कोई महादरिद्री मनुष्य पारस पा गया हो। सब लोग कहने लगे कि मानो प्रेम और परमार्थ दोनों शरीर धारण कर मिल रहे हैं।

बहुरि लषन पायन्ह सोइ लागा ❀ लीन्ह उठाइ उमगि अनुरागा
पुनि सिय चरन धूरि धरि सीसा ❀ जननि जानि सिसु दीन्हि असीसा

फिर वह लक्ष्मण के चरणों में लगा। उन्होंने स्नेह से उमँगकर उसको उठा लिया। फिर उसने सीता के चरणों की धूल अपने सिर पर चढ़ाई। सीता माता ने भी उसको पुत्र जानकर आशीर्वाद दिया।

कीन्ह निषाद दंडवत तेही ❀ मिलेउ मुदित लखि राम सनेही
पिअत नयन पुट रूप पियूखा ❀ मुदित सुअसनु पाइ जिमि भूखा

फिर गुह निषाद ने उसको दण्डवत् की। वह उसको रामचन्द्रजी का स्नेही जानकर प्रसन्न होता हुआ मिला। वह तपस्वी अपने नेत्ररूपी दोने से रामचन्द्रजी के रूप-रूपी अमृत को पीते-पीते ऐसा आनन्दित हुआ, जैसे कोई भूखा आदमी सुन्दर भोजन पाकर प्रसन्न होता है।

ते पितु मातु कहहु सखि कैसे ❀ जिन्ह पठए बन बालक ऐसे
राम लषन सिय रूप निहारी ❀ होहिं सनेह बिकल नर नारी

स्त्रियाँ आपस में कह रही हैं—हे सखी! भला, वे माता-पिता कैसे हैं, जिन्होंने ऐसे बालकों को बन में भेजा। राम, लक्ष्मण और सीता के रूप को देखकर सब स्त्री-पुरुष स्नेह से व्याकुल हो जाते हैं।

दो॰ तब रघुबीर अनेक बिधि सखहि सिखावनु दीन्ह।
राम रजायसु सीस धरि भवन गवनु तेइ कीन्ह ॥११०॥

तब रामचन्द्रजी ने अपने सखा गुह को अनेकों तरह से समझाया। वह रामचन्द्रजी की आज्ञा को सिर चढ़ाकर अपने घर को लौट गया।

पुनि सिय राम लषन कर जोरी ❀ जमुनहिं कीन्ह प्रनामु बहोरी
चले ससीय मुदित दोउ भाई ❀ रबितनुजा कइ करत बड़ाई

फिर सीता, राम और लक्ष्मण ने हाथ जोड़कर यमुनाजी को फिर प्रणाम किया। सीता समेत दोनों भाई सूर्य की कन्या (यमुना) की बड़ाई करते हुए प्रसन्नता-पूर्वक आगे चले।

पथिक अनेक मिलहिं मगु जाता ❀ कहहिं सप्रेम देखि दोउ भ्राता
राज लखन सब अंग तुम्हारें ❀ देखि सोचु अति हृदय हमारें

रास्ते में जाते हुए बहुत-से यात्री मिलते हैं। वे दोनों भाइयों को देखकर प्रेम-पूर्वक कहते हैं कि तुम्हारे सब अंगों में राज-चिह्न देखकर हमारे हृदय में बड़ा सोच होता है।

मारग चलहु पयादेहिं पाएँ ❀ ज्योतिषु झूठ हमारें भाएँ
अगमु पंथु गिरि कानन भारी ❀ तेहि महँ साथ नारि सुकुमारी

तुम लोग पैदल ही रास्ता चल रहे हो, इसलिये हमारी समझ में ज्योतिष-शास्त्र झूठा है। भारी जंगल है, और बड़े-बड़े पहाड़ों का दुर्गम रास्ता है। तिस पर तुम्हारे साथ सुकुमारी स्त्री है। [गम्योत्प्रेक्षा और विषम अलङ्कार]

करि केहरि बन जाइ न जोई ❀ हम सँग चलहिं जो आयसु होई
जाब जहाँ लगि तहँ पहुँचाई ❀ फिरब बहोरि तुम्हहिं सिरु नाई

हाथी और सिंहों से भरा यह जंगल देखा तक नहीं जाता। यदि आज्ञा हो, तो हम साथ चलें। आप जहाँ तक जायँगे, वहाँ तक पहुँचाकर, फिर हम प्रणाम करके लौट आवेंगे।


एहि बिधि पूँछहिं प्रेम बस पुलक गात जलु नैन।
कृपासिंधु फेरहि तिन्हहिं कहि बिनीत मृदु बैन ॥१११

वे यात्री इस तरह प्रेम-वश पुलकित शरीर हो और आँखों में जलभरे हुए पूछते हैं। कृपासागर रामचन्द्रजी उन सबको कोमल विनय-युक्त वचन कह-कहकर लौटा देते हैं।

जे पुर गाँव बसहिं मग माहीं ❀ तिन्हहिं नाग सुर नगर सिहाहीं
केहि सुकृती केहि घरी बसाए ❀ धन्य पुन्यमय परम सुहाए

रास्ते में जो पुरवे और गाँव बसे हैं, नागों के नगर और देवताओं के

नगर उनको सिहाते (ईर्ष्या करते) हैं। और कहते हैं कि किस पुण्यवान् ने किस शुभ घड़ी में उनको बसाया था, जो आज ये धन्य और पुण्यमय तथा परम सुहावने हो रहे हैं।

जहँ जहँ राम चरन चलि जाहीं ❀ तिन्ह समान अमरावति[1] नाहीं
पुन्य पुंज मग निकट निवासी ❀ तिन्हहिं सराहहिं सुरपुर बासी

जहाँ-जहाँ रामचन्द्रजी के चरण चले जाते हैं, उनके समान इन्द्र की पुरी अमरावती भी नहीं। रास्ते के पास के बसने वाले बड़े पुण्यवान् हैं। उनकी बड़ाई स्वर्ग के निवासी (देवता) भी करते हैं,

जे भरि नयन बिलोकहिं रामहिं ❀ सीता लषन सहित घनस्यामहिं
जे सर सरित राम अवगाहहिं[2] ❀ तिन्हहिं देव सर सरित सराहहिं

जो घनश्याम राम को लक्ष्मण, सीता-समेत आँख भरकर देखते हैं। रामचन्द्र जिन तालाब और नदियों में स्नान कर लेते हैं, उनकी बड़ाई देवसरोवर और देवनदियाँ भी करती हैं।

जेहि तरु तर प्रभु बैठहिं जाई ❀ करहिं कलपतरु तासु बड़ाई
परसि राम पद पदुम परागा ❀ मानति भूमि भूरि जिन भागा

प्रभु रामचन्द्रजी जिस वृक्ष के नीचे जा बैठते हैं, उसकी बड़ाई कल्पवृक्ष भी करते हैं। रामचन्द्रजी के चरण-कमलों की धूल को छूकर पृथ्वी अपना बड़ा भाग्य मानती है।

दो॰ छाँह करहिं घन बिबुधगन बरषहिं सुमन सिहाहिं।
देखत गिरि बन बिहँग मृग रामु चले मग जाहिं।११२।

रास्ते में बादल (रामचन्द्रजी के ऊपर) छाया करते हैं और देवता फूल बरसाते और सिहाते हैं। पहाड़, जंगल और पशु-पक्षियों को देखते हुए रामचन्द्रजी रास्ते में चले जा रहे हैं। [समाधि अलंकार]

सीता लषन सहित रघुराई ❀ गाँव निकट जब निकसहिं जाई
सुनि सब बाल बृद्ध नर नारी ❀ चलहिं तुरत गृह काज बिसारी

सीता और लक्ष्मण-समेत रामचन्द्रजी किसी गाँव के पास जा निकलते हैं, तब उनका आना सुनते ही बालक और बूढ़े, स्त्री और पुरुष सब अपने घर

१. इन्द्रपुरी। २. स्नान करते हैं।

और काम-काज को भूलकर तुरन्त दर्शन के लिए चल देते हैं।

राम लषन सिय रूप निहारी ❀ पाइ नयन फलु होहिं सुखारी
सजल बिलोचन पुलक सरीरा ❀ सब भये मगन देखि दोउ बीरा

राम, लक्ष्मण और सीता के रूप को देखकर, अपने नेत्रों का फल पाकर वे सुखी होते हैं। सबके शरीर पुलकित हो गये और नेत्रों में जल भर आया। उन दोनों भाइयों को देखकर वे प्रेमानन्द में मग्न हो गये।

बरनि न जाइ दसा तिन्ह केरी ❀ लहि जनु रंकन्हि सुर मनि ढेरी
एकन्हि एक बोलि सिख देहीं ❀ लोचन लाहु लेहु छन एहीं

उनकी उस समय की दशा का वर्णन करते नहीं बनता। मानो कंगालों ने चिन्तामणि की ढेरी पा ली हो। एक-एक को पुकारकर वे सीख देते हैं, कि भाई ! इसी क्षण नेत्रों का लाभ ले लो।

रामहिं देखि एक अनुरागे ❀ चितवत चले जाहिं सँग लागे
एक नयन मग छबि उर आनी ❀ होहिं सिथिल तन मन बर बानी

कोई रामचन्द्रजी को देखकर ऐसे प्रेम में भर गये कि वे उन्हें देखते-देखते उनके साथ लगे चले जा रहे हैं। कोई नेत्रों के रास्ते उनकी छवि को हृदय में लाकर शरीर, मन और वाणी से शिथिल हो जाते हैं।



एक देखि बट छाँह भलि डासि मृदुल तृन पात।
कहहिं गँवाइअ छिनुक स्रम गवनब अबहिं कि प्रात॥

कोई-कोई बड़ के पेड़ की गहरी छाया देखकर, वहाँ नरम घास और पत्ते बिछाकर कहते हैं कि यहाँ क्षणभर बैठकर थकावट मिटा लीजिये, अभी जाइयेगा या कल सवेरे ?

एक कलस भरि आनहिं पानी ❀ अँचइअ[1] नाथ कहहिं मृदु बानी
सुनि प्रिय बचन प्रीति अति देखी ❀ राम कृपालु सुसील बिसेखी

कोई घड़ा भरकर पानी ले आते हैं और कोमल वाणी से कहते हैं—हे नाथ ! जल पी लीजिये। कृपालु और अत्यन्त सुशील रामचन्द्रजी ने उनके प्रिय वचन सुनकर और उनकी बड़ी प्रीति देखकर,

---

१. आचमन कीजिये, पीजिये।

जानी स्रमित[1] सीय मन माहीं ❀ घरिक बिलंबु कीन्ह बटछाहीं
मुदित नारि नर देखहिं सोभा ❀ रूप अनूप नयन मनु लोभा

और मन में सीता को थकी हुई जानकर घड़ी भर बड़ की छाया में विश्राम किया। स्त्री-पुरुष आनंदित होकर उनकी शोभा देखने लगे। उनके अनुपम रूप ने उनकी आँखों और मन को लुभा लिया।

एकटक सब सोहहिं चहुँ ओरा ❀ रामचन्द्र मुख चंद चकोरा
तरुन तमाल बरन तनु सोहा ❀ देखत कोटि मदन मनु मोहा

सब लोग टकटकी लगाये चारों ओर ऐसे शोभायमान लगते हैं, जैसे रामचन्द्रजी के मुखरूपी चन्द्रमा के चकोर हैं। राम के शरीर का रंग नवीन तमाल के समान सुहावना है, जिसे देखकर करोड़ों कामदेवों के मन मोहित हो जाते हैं।

दामिनि बरन लषनु सुठि नीके ❀ नख सिख सुभग भावते[2] जी के
मुनि पट कटिन्ह कसे तूनीरा ❀ सोहहिं कर कमलनि धनु तीरा

लक्ष्मण का रंग बिजली का-सा और वे नख से चोटी तक सुन्दर हैं और मन को बहुत भाते हैं। दोनों ने मुनियों के वस्त्र धारण किये हुए हैं, कमर में तरकस कसे हुए हैं। उनके कमल के समान हाथों में धनुष-बाण शोभित हो रहे हैं।

दो०— जटा मुकुट सीसनि सुभग उर भुज नयन बिसाल।
सरद परब बिधु बदन बर लसत स्वेद कन जाल॥

उनके सिरों पर सुन्दर जटाओं के मुकुट हैं। वक्षःस्थल (छाती), भुजा और नेत्र विशाल हैं, और शरद्काल के पूर्ण चन्द्रमा के समान श्रीमुखों पर पसीने की बूँदों का समूह शोभित हो रहा है।

बरनि न जाइ मनोहर जोरी ❀ सोभा बहुत थोरि मति मोरी
राम लषन सिय सुन्दरताई ❀ सब चितवहिं चित मन मति लाई

(तुलसीदास कहते हैं—) उस मनोहर जोड़ी का वर्णन नहीं किया जा सकता, क्योंकि शोभा बहुत अधिक और मेरी बुद्धि थोड़ी है। राम, लक्ष्मण और सीता की सुन्दरता को सब लोग मन, चित्त और बुद्धि लगाकर देख रहे हैं।

थके नारि नर प्रेम पिआसे ❀ मनहुँ मृगी मृग देखि दिआ से
सीय समीप ग्रामतिय जाहीं ❀ पूँछत अति सनेहँ सकुचाहीं

१. थकी हुई। २. प्यारे।

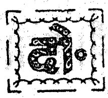
प्रेम के प्यासे स्त्री-पुरुष ऐसे चकित रह गये, जैसे हिरनी और हिरन दीपक को देखकर खड़े हो जाते हैं। गाँवों की स्त्रियाँ सीता के पास जाती हैं, परन्तु अत्यन्त स्नेह के कारण पूछने में सकुचाती हैं।

बार बार सब लागहिं पाएँ ❀ कहहिं बचन मृदु सरल सुभाएँ
राजकुमारि बिनय हम करहीं ❀ तिय सुभाउ कछु पूँछत डरहीं

वे सब बार-बार उनके पाँव लगतीं और सीधे-सादे, सरल और कोमल वचन कहती हैं—हे राजकुमारि ! हम विनती करती हैं और कुछ पूछना चाहती हैं, पर स्त्री-स्वभाव के कारण डर लगता है।

स्वामिनि अबिनय[1] छमबि हमारी ❀ बिलगु न मानब जानि गँवारी
राजकुँअर दोउ सहज सलोने ❀ इन्ह तें लहि दुति मरकत सोने

हे स्वामिनि ! हमारी ढिठाई को क्षमा कीजियेगा और हमको गँवारी जानकर बुरा न मानियेगा। ये दोनों राजकुमार स्वभाव ही से परम सुन्दर हैं। इनसे ही मरकत-मणि और सुवर्ण ने कान्ति पाई है।



स्यामल गौर किसोर बर सुन्दर सुखमा ऐन।
सरद सर्बरीनाथ[2] मुखु सरद सरोरुह नैन ॥११५॥

श्याम और गौर वर्ण है, सुन्दर किशोर अवस्था है, और दोनों ही परम सुन्दर तथा शोभा के धाम हैं। शरद्-ऋतु के चन्द्रमा के-से इनके मुख और शरद्-ऋतु के कमल के समान नेत्र हैं।

कोटि मनोज लजावनिहारे ❀ सुमुखि कहहु को आहिं[3] तुम्हारे
सुनि सनेहमय मंजुल बानी ❀ सकुची सिय मन महुँ मुसुकानी

हे सुन्दर मुँह वाली ! करोड़ों कामदेवों को लज्जित करने वाले ये तुम्हारे कौन हैं ? ऐसी स्नेह से भरी हुई उन स्त्रियों की सुन्दर वाणी सुनकर सीता सकुचाकर मन में मुसकुराईं।

तिनहिं बिलोकि बिलोकति धरनी ❀ दुहुँ सकोच सकुचति बर बरनी
सकुचि सप्रेम बाल मृग नयनी ❀ बोली मधुर बचन पिक बयनी

उत्तम वर्ण वाली सीता उन स्त्रियों को देखकर पृथ्वी की ओर देखती हैं। वे दोनों ओर के संकोच से सकुचा रही हैं। हिरन के बच्चे के समान नेत्र वाली

---

१. ढिठाई। २. चन्द्रमा। ३. कौन हैं ?

और कोकिल की-सी वाणी वाली सीता संकोच करती हुई प्रेम के साथ मधुर वचन बोलीं—

सहज सुभाय सुभग तन गोरे ❀ नामु लषनु लघु देवर मोरे
बहुरि बदनु बिधु अंचल ढाँकी ❀ पिय तन चितइ भौंह करि बाँकी

ये जो स्वभाव ही से सुन्दर और गोरे शरीर के हैं, इनका नाम लक्ष्मण है। ये मेरे छोटे देवर हैं। फिर अपने चन्द्रमुख को आँचल से ढककर और प्रियतम की ओर निहारकर, भौंहे टेढ़ी करके,

खंजन मंजु तिरीछे नैननि ❀ निज पति कहेउ तिन्हहिं सिय सैननि[1]
भईं मुदित सब ग्राम बधूटीं ❀ रंकन्ह राय रासि जनु लूटीं

खंजन पक्षी की-सी सुन्दर आँखों को तिरछा करके सीता ने इशारे से उन्हें (रामचन्द्रजी को) अपना पति कहा। यह जानकर गाँव की सब युवती स्त्रियाँ आनन्दित हुईं। मानो कंगालों ने धन की राशि लूट ली हो। [गूढ़ोत्तर अलङ्कार]

दो॰ **अति सप्रेम सिय पायँ परि बहु बिधि देहिं असीस।**
सदा सोहागिनि होहु तुम्ह जब लगि महि अहि सीस॥

वे बहुत ही प्रेम से सीता के पाँव पड़कर बहुत प्रकार से असीस देती हैं कि जब तक शेषजी के सिर पर पृथ्वी है, तब तक तुम सदा सुहागिनी बनी रहो।

पारबती सम पति प्रिय होहू ❀ देबि न हम पर छाँड़ब छोहू
पुनि पुनि बिनय करिअ कर जोरी ❀ जौं[2] एहि मारग फिरिअ बहोरी

तुम पार्वतीजी के समान अपने पति को प्यारी होओ। और हे देवि! हम पर कृपा न छोड़ना। हम बार-बार हाथ जोड़कर यह विनती करती हैं कि इसी रास्ते से फिर लौटें।

दरसनु देब जानि निज दासी ❀ लखी सीय सब प्रेम पिआसी
मधुर बचन कहि कहि परितोषी ❀ जनु कुमुदिनीं कौमुदी पोषी

और हमें अपनी दासी जानकर दर्शन दें। सीता ने उन सबको प्रेम की प्यासी देखा, और मीठे वचन कहकर उनको सन्तुष्ट किया। मानो चाँदनी ने कुमुदिनियों को प्यार किया।

---

१. इशारे से। २. इससे।

तबहिं लषन रघुबर रुख जानी ❀ पूँछेउ मगु लोगन्हि मृदु बानी
सुनत नारि नर भए दुखारी ❀ पुलकित गात बिलोचन बारी

उसी समय लक्ष्मण ने रामचन्द्रजी का रुख देखकर लोगों से कोमल वाणी से रास्ता पूछा। यह सुनते ही स्त्री-पुरुष दुखी हो गये। उनके शरीर पुलकित हो गये, और आँखों में आँसू आ गये।

मिटा मोदु मन भए मलीने ❀ बिधि निधि दीन्ह लेत जनु छीने
समुझि करम गति धीरजु कीन्हा ❀ सोधि सुगम मगु तिन्ह कहि दीन्हा

उनका आनन्द मिट गया और उनके मन उदास हो गये, मानो विधाता दी हुई सम्पत्ति फिर छीने लेता है। कर्म की गति समझकर उन्होंने धैर्य धरा और अच्छी तरह निर्णय करके उनको सीधा रास्ता बतला दिया।

दो० लषन जानकी सहित तब गवनु कीन्ह रघुनाथ।
फेरे सब प्रिय बचन कहि लिए लाइ मन साथ॥११७

तब सीता और लक्ष्मण समेत श्री रघुनाथजी चले और सब लोगों को प्रिय वचन कहकर उन्होंने लौटा दिया। किन्तु उनके मनों को वे अपने साथ ही लगा ले चले।

फिरत नारि नर अति पछिताहीं ❀ दैअहिं[1] दोषु देहिं मन माहीं
सहित बिषाद परसपर कहहीं ❀ बिधि करतब उलटे सब अहहीं

लौटते हुये वे नर-नारी पछताते हैं और मन ही मन दैव को दोष देते हैं। आपस में बड़े दुःख से कहते हैं कि विधाता के सभी काम उलटे हैं।

निपट निरंकुस निठुर निसंकू ❀ जेहि ससि कीन्ह सरुज[2] सकलंकू
रूख कलपतरु सागरु खारा ❀ तेहि पठए बन राजकुमारा

वह विधाता बिलकुल निरंकुश (स्वतन्त्र), निर्दय और निडर है, जिसने चन्द्रमा को रोगी और कलंकी, कल्पवृक्ष को पेड़ और समुद्र को खारा बनाया। उसी ने इन राजकुमारों को वन में भेजा है। [सम्भव प्रमाण अलंकार]

जौं पै इन्हहिं दीन्ह बनबासू ❀ कीन्ह बादि बिधि भोग बिलासू
ए बिचरहिं मग बिनु पदत्राना ❀ रचे बादि बिधि बाहन नाना

जो विधाता ने इनको बनवास दिया है, तो उसने भोग-विलास व्यर्थ ही

१. दैव को, भाग्य को। २. रोगी।

बनाये। ये बिना जूते के, नंगे पैरों ही, रास्ते में चल रहे हैं, तो विधाता ने अनेकों प्रकार के वाहन (सवारियाँ) व्यर्थ ही रचे।

ए महि परहिं डासि कुस पाता ❁ सुभग सेज कत सृजत[1] विधाता
तरु तर बास इन्हहिं बिधि दीन्हा ❁ धवलधाम रचि रचि श्रमु कीन्हा

जब ये कुश और पत्ते बिछाकर ज़मीन ही पर सो जाते हैं, तब विधाता ने सुन्दर सेज किस लिये बनाये? ब्रह्मा ने अब इनको पेड़ों के नीचे निवास दिया, तब सफेद महलों को बना-बना कर उसने व्यर्थ ही परिश्रम किया।

दो०— जौं[2] ए मुनि पट धर जटिल सुन्दर सुठि सुकुमार।
बिबिध भाँति भूषन बसन बादि किए करतार।११८

जो ये सुन्दर और अत्यन्त सुकुमार होकर मुनियों के-से वस्त्र पहनते और जटा धारण करते हैं, तो कर्त्ता (विधाता) ने तरह-तरह के वस्त्र, भूषण आदि व्यर्थ ही बनाये।

जौं ए कंद मूल फल खाहीं ❁ बादि सुधादि असन जग माहीं
एक कहहिं ये सहज सुहाये ❁ आप प्रगट भये बिधि न बनाये

यदि ये कन्दमूल फल खाते हैं, तो जगत् में अमृत आदि भोजन व्यर्थ ही हैं। कोई कहने लगे—ये स्वभाव ही से सुन्दर हैं, ये अपने-आप ही प्रकट हुए हैं, इन्हें विधि (ब्रह्मा) ने नहीं बनाया है। [हेत्वापन्हुति अलंकार]

जहँ लगि बेद कही बिधि करनी ❁ श्रवन नयन मन गोचर बरनी
देखहु खोजि भुवन दस चारी ❁ कहँ अस पुरुष कहाँ असि नारी

वेदों ने जहाँ तक कानों से सुन पड़ने वाली, आँखों से देख पड़ने वाली और मन से जानने में आने वाली विधाता की करनी बतलाई है, वहाँ तक तुम चौदहों लोकों में ढूँढ़कर देखो, कहाँ ऐसे पुरुष और कहाँ ऐसी स्त्रियाँ हैं।

इन्हहिं देखि बिधि मनु अनुरागा ❁ पटतर जोग बनावइ लागा
कीन्ह बहुत श्रम एक न आये ❁ तेहि इरिषा बन आनि दुराये

इन्हें देखकर ब्रह्मा का मन प्रेम से मुग्ध हो गया, तो वह इन्हीं की उपमा के योग्य दूसरा बनाने लगा। जब बहुत परिश्रम करने पर भी एक भी न बन सका तब ईर्ष्या के मारे उसने इन्हें जंगल में ला छिपाया है। [काव्यलिङ्ग और ललितोत्प्रेक्षा अलंकार]

---

१. बनाता है। २. यदि।

एक कहहिं हम बहुत न जानहिं ❀ आपुहि परम धन्य करि मानहिं
ते पुनि पुन्य पुंज हम लेखे ❀ जे देखहिं देखिहहिं जिन्ह देखे

एक ने कहा—भाई ! हम तो बहुत नहीं जानते, पर अपने को हम अवश्य अत्यन्त धन्य मानते हैं। हमारे लेखे (गिनती में) वे पुण्यवान् हैं, जो इनको अभी देख रहे हैं, और आगे देखेंगे तथा जिन्होंने देख लिया है।

दो०— एहि बिधि कहि कहि बचन प्रिय लेहिं नयन भरि नीर।
किमि चलिहहिं मारग अगम सुठि सुकुमार सरीर ॥

इस तरह प्रिय वचन कह-कहकर सब लोग आँखों में आँसू भर लेते हैं और कहते हैं कि सुन्दर सुकुमार शरीर वाले (राजकुमार) बन के दुर्गम मार्ग में कैसे चलेंगे ?

नारि सनेह बिकल बस होहीं ❀ चकई साँझ समय जनु सोहीं[1]
मृदु पद कमल कठिन मगु जानी ❀ गहबरि हृदयँ कहइँ बर बानी

स्त्रियाँ स्नेह-वश विकल हो जाती हैं; जैसे सन्ध्या के समय चकवी दुःखी हो रही हो। उनके चरण-कमलों को कोमल तथा मार्ग को कठिन जानकर वे व्यथित हृदय से उत्तम वाणी कहती हैं—

परसत मृदुल चरन अरुनारे[2] ❀ सकुचति महि जिमि हृदउ हमारे
जौं जगदीस इन्हहिं बनु दीन्हा ❀ कस न सुमनमय मारगु कीन्हा

इनके कोमल और लाल-लाल चरणों को छूते ही पृथ्वी वैसे ही सकुचा जाती है, जैसे हमारे हृदय सकुचा रहे हैं। जगदीश ने यदि इनको वनवास ही दिया, तो उसने फूलों से भरा हुआ रास्ता क्यों नहीं बनाया ?

जौं माँगा पाइअ बिधि पाहीं ❀ ए रखिअहि सखि आँखिन्ह माहीं
जे नर नारि न अवसर आये ❀ तिन्ह सिय रामु न देखन पाये

हे सखी ! जो ब्रह्मा से मुँहमाँगा वर मिले, तो (हम यही माँगें कि) इनको आँखों ही में रखें। जो स्त्री-पुरुष उस अवसर पर न पहुँच सके, उन्होंने सीता-राम को नहीं देख पाया।

सुनि सुरूप बूझहिं अकुलाई ❀ अब लगि[3] गये कहाँ लगि भाई
समरथ धाइ बिलोकहिं जाई ❀ प्रमुदित फिरहिं जनम फलु पाई

१. वैसी ही, अर्थात् स्त्रियों के समान विकल। २. लाल। ३. तक।

उनकी सुन्दरता को सुनकर वे व्याकुल होकर पूछते हैं कि भाई ! अभी वे कहाँ तक गये होंगे ? समर्थ लोग दौड़े जाकर दर्शन कर लेते हैं और जन्म का फल पाकर, विशेष आनंदित होकर लौटते हैं।

दो०— अबला बालक बृद्ध जन कर मीजहिं पछिताहिं।
होहिं प्रेमबस लोग इमि रामु जहाँ जहँ जाहिं।१२०।

स्त्रियाँ, बच्चे और बूढ़े (दर्शन न पाने से) हाथ मल-मलकर पछताते हैं। इस तरह जहाँ-जहाँ रामचन्द्रजी जाते थे, वहाँ-वहाँ लोग प्रेम के वश में हो जाते हैं।

गाँव गाँव अस होइ अनन्दू ❀ देखि भानु कुल कैरव चन्दू
जे कछु समाचार सुनि पावहिं ❀ ते नृप रानिहिं दोषु लगावहिं

सूर्य-वंशरूपी कुमुदिनी के लिए चन्द्रमा-स्वरूप रामचन्द्रजी का दर्शन कर गाँव-गाँव में ऐसा आनन्द हो रहा है। जो लोग कुछ समाचार सुन पाते हैं, वे राजा-रानी (दशरथ, कैकेयी) को दोष देते हैं।

कहहिं एक अति भल नरनाहू ❀ दीन्ह हमहिं जोइ लोचन लाहू
कहहिं परसपर लोग लोगाई ❀ बातें सरल सनेह सुहाई

कोई कहते हैं कि राजा (दशरथ) बहुत ही अच्छे हैं, जिन्होंने हमें नेत्रों का लाभ दिया। स्त्री-पुरुष आपस में सीधी, स्नेह-भरी सुहावनी बातें कह रहे हैं। [अनुक्ता अलंकार]

ते पितु मातु धन्य जिन्ह जाये ❀ धन्य सो नगरु जहाँ तें आये
धन्य सो देसु सैल बन गाँऊँ ❀ जहँ जहँ जाहिं धन्य सोइ ठाऊँ

वे माता-पिता धन्य हैं, जिन्होंने इन्हें पैदा किया। और वह नगर भी धन्य है, जहाँ से ये आये हैं। वह देश, पर्वत, वन और गाँव धन्य हैं तथा वही स्थान भी धन्य है, जहाँ-जहाँ ये जाते हैं।

सुख पायेउ बिरंचि रचि तेही ❀ ए जेहि के सब भाँति सनेही
राम लखन पथि कथा सुहाई ❀ रही सकल मग कानन छाई

ब्रह्मा ने उसी को रचकर सुख पाया है, जिसके ये (राम-सीता) सब प्रकार के स्नेही हैं। पथिक राम-लक्ष्मण की सुन्दर कथा सारे रास्ते और वन में छा रही है। [अधिक अलंकार]



एहि बिधि रघुकुल कमल रबि मग लोगन्ह सुख देत।
जाहिं चले देखत बिपिन सिय सौमित्रि[1] समेत।१२१।

रघुकुल-कमल-दिवाकर रामचन्द्रजी इस तरह रास्ते के लोगों को सुख देते हुए और सीता-लक्ष्मण-समेत वन को देखते हुए चले जा रहे हैं।

आगे रामु लषन बने पाछें ❀ तापस बेष बिराजत काछें[2]
उभय बीच सिय सोहति कैसें ❀ ब्रह्म जीव बिच माया जैसें

आगे-आगे रामचन्द्रजी, पीछे लक्ष्मण सुशोभित हैं, दोनों तपस्वियों का वेष धारण किये हुए शोभा पा रहे हैं। दोनों के बीच में सीता कैसी शोभती हैं मानो जीव और ब्रह्म के बीच में माया। [उदाहरण अलंकार]

बहुरि कहउँ छबि जसि मन बसई ❀ जनु मधु मदन मध्य रति लसई
उपमा बहुरि कहउँ जिअँ जोही[3] ❀ जनु बुध बिधु बिच रोहिनि सोही

तुलसीदासजी कहते हैं—मैं फिर उस छवि को, जैसी वह मेरे मन में बस रही है, कहता हूँ, मानो बसन्त ऋतु और कामदेव के बीच में रति (कामदेवकी स्त्री) फिर मैं अपने हृदय में खोजकर एक और उपमा कहता हूँ कि मानो बुध और चन्द्रमा के बीच में रोहिणी शोभायमान हो। [उक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार]

प्रभु पद रेख बीच बिच सीता ❀ धरति चरन मग चलति सभीता
सीय राम पद अंक[4] बराएँ[5] ❀ लखन चलहिं मगु दाहिन बाएँ

प्रभु रामचन्द्रजी के चरण-चिन्हों के बीच-बीच में (रामचन्द्रजी के दो पद-चिन्हों के मध्य में) सीता अपना पाँव धरती हुई और डरती हुई चल रही हैं। (डरती इसलिये हैं कि रामचन्द्रजी के पैर पर उनका पैर न पड़ जाय) सीता और रामचन्द्रजी के चरण-चिन्हों को बचा-बचाकर लक्ष्मण दाहिनी या बाईं ओर चल रहे हैं।

राम लखन सिय प्रीति सुहाई ❀ बचन अगोचर किमि कहि जाई
खग मृग मगन देखि छबि होहीं ❀ लिये चोरि चित राम बटोहीं

राम, लक्ष्मण और सीता की सुन्दर प्रीति वचन से अकथनीय है, इसलिए वह कैसे कही जा सकती है? उनकी छवि को देखकर पक्षी और पशु भी मगन

१. सुमित्रा-पुत्र, लक्ष्मण। २. कसे हुये। ३. देखकर, सोचकर।
४. चिन्ह ५. छोड़कर, बचाकर।

हो जाते हैं। पथिकरूपी रामचन्द्रजी ने उनके चित्त चुरा लिये हैं।

दो०- जिन्ह जिन्ह देखे पथिक प्रिय सिय समेत दोउ भाइ।
भव मगु अगमु अनंदु तेइ बिनु स्रम रहे सिराइ[1]॥१२२॥

सीता सहित प्रिय पथिक दोनों भाइयों को जिन्होंने देखा, उन्होंने संसार का अगम मार्ग बिना परिश्रम ही के आनन्द के साथ तय कर लिया।

अजहुँ जासु उर सपनेहुँ काऊ ❀ बसहिं लषन सिय राम बटाऊ[2]
राम धाम पथ पाइहि सोई ❀ जो पथ पाव कबहुँ मुनि कोई

तुलसीदासजी कहते हैं—आज भी जिसके हृदय में, कभी स्वप्न में भी, राम, लक्ष्मण और सीता तीनों बटोही बस जायँ तो वह रामचन्द्रजी के परमधाम के उस मार्ग को पा जायेगा, जिस मार्ग को कोई विरले ही मुनि कभी पाते हैं।

तब रघुबीर स्रमित सिय जानी ❀ देखि निकट बटु सीतल पानी
तहँ बसि कंद मूल फल खाई ❀ प्रात नहाइ चले रघुराई

तब रामचन्द्रजी सीता को थकी हुई जानकर और पास ही एक बड़ का पेड़ और ठंडा पानी देखकर, वहीं ठहर गये, और कन्द-मूल फल खाकर (रात भर वहाँ रहकर) प्रातःकाल स्नान करके फिर आगे चले।

देखत बन सर सैल सुहाये ❀ बालमीकि आस्रम प्रभु आये
रामु दीख मुनि बासु सुहावन ❀ सुन्दर गिरि काननु जलु पावन

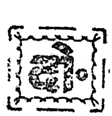
प्रभु रामचन्द्रजी सुहावने बन, तालाब और पर्वतों को देखते हुए वाल्मीकि जी के आश्रम में पहुँचे। रामचन्द्रजी ने देखा कि वाल्मीकिजी का स्थान सुन्दर है, जहाँ सुन्दर पर्वत, बन तथा पवित्र जल है।

सरनि सरोज बिटप बन फूले ❀ गुञ्जत मंजु मधुप[3] रस भूले
खग मृग बिपुल कोलाहल करहीं ❀ बिरहित बैर मुदित मन चरहीं

सरोवरों में कमल और बनों में वृक्ष फूल रहे हैं और उन फूलों के रस में मस्त हुए भौंरे गूँज रहे हैं। बहुत-से पक्षी और पशु कोलाहल कर रहे हैं और बैर से रहित होकर सब प्रसन्न मन से विचर रहे हैं।

---

१. चुक जाना, समाप्त हो जाना, तै होना २. बटोही, मुसाफिर। ३. भौंरा।



सुचि सुंदर आस्रमु निरखि हरखे राजिव[1] नैन।
सुनि रघुबर आगमनु मुनि आगे आयेउ लैन[2]॥१२३॥

पवित्र और सुन्दर आश्रम को देखकर कमल-नयन रामचन्द्रजी प्रसन्न हुये। मुनि वाल्मीकिजी रामचन्द्रजी का आना सुनकर उनको लेने के लिए आगे आये।

मुनि कहँ राम दंडवत कीन्हा ॐ आसिरबादु बिप्रबर दीन्हा
देखि राम छबि नयन जुड़ाने ॐ करि सनमानु आस्रमहिं आने[2]

रामचन्द्रजी ने वाल्मीकि मुनि को दंडवत् प्रणाम किया। द्विज-श्रेष्ठ ने आशीर्वाद दिया। रामचन्द्रजी की छवि देखकर मुनि के नेत्र शीतल हो गये। सम्मानपूर्वक मुनि उन्हें आश्रम में लिवा लाये।

मुनिबर अतिथि प्रानप्रिय पाये ॐ कंद मूल फल मधुर मँगाये
सिय सौमित्रि राम फल खाये ॐ तब मुनि आस्रम[3] दिये सुहाये

मुनिवर वाल्मीकिजी ने प्राणों के समान प्यारा अतिथि पाया। उनके लिये मीठे-मीठे कन्द, मूल और फल मँगवाये। सीता, लक्ष्मण और रामचन्द्र ने उन फलों को खाया। तब मुनि ने उनको सुन्दर स्थान (विश्राम के लिये) बता दिया।

बालमीकि मन आनँदु भारी ॐ मंगल मूरति नयन निहारी
तब कर कमल जोरि रघुराई ॐ बोले बचन स्रवन सुखदाई

मंगल की मूर्त्ति रामचन्द्रजी को आँखों से देखकर वाल्मीकि मुनि के मन में बड़ा ही आनन्द हो रहा है। तब रामचन्द्रजी हस्तकमलों को जोड़कर, कानों को सुख देने वाले मधुर वचन बोले—

तुम्ह त्रिकाल दरसी मुनि नाथा ॐ बिस्व बदर[4] जिमि तुम्हरें हाथा
अस कहि प्रभु सब कथा बखानी ॐ जेहि जेहि भाँति दीन्ह बनु रानी

हे मुनीश्वर! आप त्रिकालदर्शी हैं, सारा विश्व आपको हाथ पर रक्खे हुए बेर के समान है। प्रभु रामचन्द्रजी ने ऐसा कहकर फिर जिस तरह रानी कैकेयी ने वनवास दिया, वह सब कथा कह सुनाई।

---

१. कमल। २. ले आये। ३. विश्राम-स्थान। ४. बेर।

दो॰ तात बचन पुनि मातु हित भाइ भरत अस राउ ।
मो कहुँ दरस तुम्हार प्रभु सबु मम पुन्य प्रभाउ ।१२४।

हे प्रभु ! पिता की आज्ञा, फिर माता का हित और भरत जैसे भाई का राजा होना और फिर मुझे आपके दर्शन होना, ये सब मेरे पुण्यों का प्रभाव है । [द्वितीय समुच्चय अलंकार]

देखि पायँ मुनिराय तुम्हारे ❀ भये सुकृत सब सुफल हमारे
अब जहँ राउर आयसु होई ❀ मुनि उदवेगु[1] न पावइ कोई

हे मुनिराज ! आपके चरणों के दर्शन करके हमारे सारे सुकर्म आज सफल हो गये। अब जहाँ आपकी आज्ञा हो और जहाँ रहने से कोई मुनि कष्ट न पायें,

मुनि तापस जिन्हते दुखु लहहीं ❀ ते नरेस बिनु पावक[2] दहहीं
मंगल मूल बिप्र परितोषू ❀ दहइ कोटि कुल भूसुर रोषू

जिनसे मुनि और तपस्वी लोग दुःख पाते हैं, वे राजा बिना आग ही के जलकर भस्म हो जाते हैं। ब्राह्मणों का प्रसन्न होना सब मंगलों की जड़ है। ब्राह्मणों का क्रोध करोड़ों कुलों को भस्म कर देता है ।

अस जिअँ जानि कहिअ सोइ ठाऊँ ❀ सिय सौमित्रि सहित जहँ जाऊँ
तहँ रचि रुचिर परन तृन साला ❀ बासु करौं कछु काल कृपाला

ऐसा हृदय में समझकर वह स्थान बतलाइये, जहाँ मैं लक्ष्मण और सीता-समेत जाऊँ। हे कृपालु ! वहाँ सुन्दर पत्तों और घास की कुटी बनाकर कुछ समय निवास करूँ ।

सहज सरल सुनि रघुबर बानी ❀ साधु साधु बोले मुनि ज्ञानी
कस न कहहु अस रघुकुल केतू ❀ तुम्ह पालक संतत[3] स्रुतिसेतू

स्वभाव ही से सरल रामचन्द्रजी की वाणी सुनकर ज्ञानी मुनि वाल्मीकि 'धन्य', 'धन्य' बोले—हे रघुकुल के ध्वजारूप रामचन्द्रजी ! आप ऐसा क्यों न कहोगे ? आप सदा ही वेद की मर्यादा का पालन करते हैं ।

छंद–श्रुति सेतु पालक राम तुम्ह जगदीस माया जानकी ।
जो सृजति जगु पालति हरति रुख[4] पाइ कृपानिधान की॥

१. कष्ट । २. आग । ३. सदा । ४. इशारा ।

जो सहससीसु अहीसु महिधरु लषनु सचराचर धनी।
सुर काज धरि नरराज तनु चले दलन खल निसिचर अनी॥

हे राम! आप वेद की मर्यादा के रक्षक जगदीश्वर हैं और जानकीजी माया हैं, जो दया के सागर आपका रुख पाकर जगत् को पैदा करती, पालती और संहार करती हैं। जिनके एक हज़ार मस्तक हैं, जो सर्पों के नायक हैं, और जिन्होंने पृथ्वी को अपने सिर पर उठा रक्खा है, वही चराचर जगत् के स्वामी शेषजी लक्ष्मण हैं। देवताओं की कार्यसिद्धि के लिये आप राजा का शरीर धारण कर दुष्ट राक्षसों की सेना का नाश करने के लिए चले हैं।

सो॰ राम सरूप तुम्हार बचन अगोचर बुद्धिपर।
अबिगत अकथ अपार नेति नेति नित निगम[1] कह॥

हे राम! आपका स्वरूप वाणी से कहने के योग्य नहीं और बुद्धि से परे है। वह अव्यक्त, अवर्णनीय और अपार है। वेद उसको सदा नेति-नेति पुकारते हैं।

जगु पेखन[2] तुम्ह देखनिहारे ❀ बिधि हरि संभु नचावनिहारे
तेउ न जानहिं मरमु तुम्हारा ❀ औरु तुम्हहिं को जाननिहारा

हे राम! जगत् एक नाटक (तमाशा) है, आप उसके देखने वाले हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शङ्कर उस जगत् को नचाने वाले हैं। वे भी आपके मर्म को नहीं जानते, तब और कौन आपको जानने वाला है?

सोइ जानइ जेहि देहु जनाई ❀ जानत तुम्हहिं तुम्हइ होइ जाई
तुम्हरिहि कृपाँ तुम्हहि रघुनंदन ❀ जानहिं भगत भगत उर चंदन[3]

आप जिसको जना देते हैं अर्थात् जिसको आत्मज्ञानवान् कर देते हैं, वही आपको जानता है और आपको जानते ही वह आपका ही स्वरूप बन जाता है। हे भक्तों के हृदय के चन्दन! रघुनन्दन! आप ही की कृपा से भक्त लोग आपको जान पाते हैं।

चिदानंदमय देह तुम्हारी ❀ बिगत बिकार जान अधिकारी
नर तनु धरेहु संत सुर काजा ❀ कहहु करहु जस प्राकृत राजा

तुम्हारा शरीर चिदानंदमय है। वह विकारों से रहित है, इस रहस्य को अधिकारी ही जानते हैं। आपने देवता और सन्तों के कार्य करने के लिए मनुष्य

१. वेद। २. नाटक, स्वाँग। ३. भक्तों के हृदय के लिये चंदन के समान शीतल।

की देह धारण की है, और प्राकृत राजाओं के समान कहते और करते हैं।

राम देखि सुनि चरित तुम्हारे ❀ जड़ मोहहिं बुध होहिं सुखारे
तुम्ह जो कहहु करहु सबु साँचा ❀ जस काछिअ तस चाहिअ नाचा

हे राम! आपके चरित्रों को देख और सुनकर मूर्ख लोग तो मोहित हो जाते हैं और ज्ञानी जन सुखी होते हैं। आप जो कुछ कहते और करते हैं, वह सब सत्य है। क्योंकि जैसी कछनी काछे (स्वाँग करे) वैसा ही नाचना भी तो चाहिये। [प्रथम व्याघात अलंकार]

दो०— पूँछेहु मोहिं कि रहौं कहँ मैं पूँछत सकुचाउँ।
जहँ न होहु तहँ देहु कहि तुम्हहि देखावौं ठाउँ १२८

आप मुझसे पूछते हैं कि मैं कहाँ रहूँ? परंतु मैं इसे पूछते सकुचाता हूँ। आप जहाँ न हो, वह स्थान बता दीजिये, तो मैं आपको स्थान दिखाऊँ। [चित्रोत्तर अलंकार]

सुनि मुनि बचन प्रेम रस साने ❀ सकुचि राम मन महुँ मुसुकाने
बालमीकि हँसि कहहिं बहोरी ❀ बानी मधुर अमिअ रस बोरी

प्रेमरस से सने हुए मुनि के वचन सुनकर रामचन्द्रजी सकुचाकर मन में मुस्कुराये। वाल्मीकिजी फिर हँसकर अमृत-रस में डुबोई हुई वाणी से बोले—

सुनहु राम अब कहउँ निकेता ❀ जहाँ बसहु सिय लषन समेता
जिन्ह के स्रवन समुद्र समाना ❀ कथा तुम्हारि सुभग सरि[1] नाना

हे राम! सुनिये, अब मैं वे स्थान बताता हूँ, जहाँ आप सीता और लक्ष्मण-समेत निवास करिये। जिनके कान आपकी नाना प्रकार की कथारूपी अनेकों नदियों के लिये समुद्र हैं। [निषेधाक्षेप अलंकार]

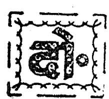
भरहिं निरंतर होहिं न पूरे ❀ तिन्हके हिय तुम्ह कहुँ गृह रूरे[2]
लोचन चातक जिन्ह करि राखे ❀ रहहिं दरस जलधर अभिलाषे

निरंतर भरते रहते हैं, किन्तु कभी पूरे नहीं होते। उनके हृदय आपके लिये सुन्दर घर हैं। और जिन्होंने अपने नेत्रों को चातक बना रक्खा है, जो दर्शन-रूपी मेघ के लिये सदा लालायित रहते हैं, [विशेषोक्ति अलंकार]

---
१. नदी। २. सुन्दर।

निदरहिं सरित सिंधु सर भारी ❀ रूप बिंदु जल होहिं सुखारी
तिन्हके हृदय सदन सुख दायक ❀ बसहु बंधु सिय सह रघुनायक

जो भारी भारी नदियों, समुद्रों और तालाबों का निरादर करते हैं और आपके रूप (दर्शन) के एक बूँद जल से सुखी होते हैं, हे रघुनाथ जी ! उन लोगों के हृदयरूपी सुखदायी भवनों में आप भाई लक्ष्मण और सीता-सहित निवास कीजिये। [दृष्टान्त अलंकार]

 जसु तुम्हार मानस बिमल हंसिनि जीहा[1] जासु।
मुकुताहल गुन गन चुनइ राम बसहु हियँ तासु १२७

हे राम ! आपके यशरूपी मानसरोवर में जिसकी जीभ हंसिनी की तरह आपके गुणगणरूपी मोतियों को चुगती रहती है, आप उसके हृदय में बसिये।

प्रभु प्रसाद सुचि सुभग सुबासा ❀ सादर जासु लहइ नित नासा[2]
तुम्हहिं निबेदित भोजन करहीं ❀ प्रभु प्रसाद पट[3] भूषन धरहीं

जिसकी नासिका प्रभु (आप) के सुन्दर, पवित्र और सुगन्धित प्रसाद को आदर के साथ नित्य ग्रहण करती है और जो आपको अर्पण करके भोजन करते हैं और आपके प्रसाद-रूप वस्त्र और भूषण धारण करते हैं,

सीस नवहिं सुर गुर द्विज देखी ❀ प्रीति सहित करि बिनय बिसेषी
कर नित करहि राम पद पूजा ❀ राम भरोस हृदयँ नहिं दूजा

जिनके मस्तक देवता, गुरु और ब्राह्मणों को देखकर प्रेम के साथ बड़ी नम्रता से झुक जाते हैं, जिनके हाथ नित्य रामचन्द्रजी के चरणों की पूजा करते हैं, जिनके हृदय में रामचन्द्रजी ही का भरोसा है और किसी का नहीं,

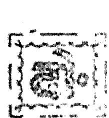
चरन रामतीरथ चलि जाहीं ❀ राम बसहु तिन्ह के मन माहीं
मन्त्रराजु नित जपहिं तुम्हारा ❀ पूजहिं तुम्हहिं सहित परिवारा

जिनके पाँव रामचन्द्रजी के तीर्थों में चले जाते हैं, हे राम ! आप उन ही के हृदय में बसिये। जो आपके मन्त्रराज (राम नाम) को नित्य जपते हैं और जो सकुटुम्ब आपकी पूजा करते हैं,

तरपन होम करहिं बिधि नाना ❀ बिप्र जेवाँइ[4] देहिं बहु दाना
तुम्ह तें अधिक गुरहि जिअँ जानी ❀ सकल भायँ सेवहिं सनमानी

१. जीभ। २. नाक। ३. वस्त्र। ४. भोजन कराके।

जो अनेकों प्रकार के तर्पण और हवन करते हैं, ब्राह्मणों को भोजन कराके बहुत दान देते हैं, जो आपसे भी अधिक गुरु को हृदय में जानकर पूर्ण प्रेम से सन्मान करके उनकी सेवा करते हैं,



सबु करि माँगहिं एकु फलु रामचरन रति होउ।
तिन्ह के मन मंदिर बसहु सिय रघुनंदन दोउ।१२८।

जो इतने सब कर्मों का एक ही फल माँगते हैं कि रामचन्द्रजी के चरणों में हमारी प्रीति हो, उनके मनरूपी मन्दिरों में सीता और लक्ष्मण-सहित आप निवास कीजिये।

काम कोह मद मान न मोहा ❀ लोभ न छोभ न राग न द्रोहा
जिन्ह के कपट दम्भ नहिं माया ❀ तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया

जिनके न काम है, न क्रोध; न मद है, न मोह; न लोभ है, न क्षोभ; न राग है, न द्रोह; न कपट है, न दंभ (छल), और न माया ही है, हे रघुराज! आप उनके हृदय में वास कीजिये।

सब के प्रिय सब के हितकारी ❀ दुख सुख सरिस प्रसंसा गारी
कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी ❀ जागत सोवत सरन तुम्हारी

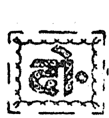
जो सबके प्यारे और सबके हित करने वाले हैं, जिनको दुःख और सुख, और बड़ाई तथा गाली (निन्दा) एक-सी है, जो विचारकर सत्य और प्रिय वचन बोलते हैं, जो जागते-सोते आपकी शरण में रहते हैं,

तुम्हहिं छाँड़ि गति दूसर नाहीं ❀ राम बसहु तिन्ह के मन माहीं
जननी सम जानहिं परनारी ❀ धनु पराव बिष ते बिष भारी

जिनको आपके सिवा दूसरी कोई गति (आश्रय) नहीं है, हे राम! आप उनके मन में निवास कीजिये। जो पराई स्त्री को माता के समान मानते हैं और दूसरे के धन को विष से भी भारी विष समझते हैं,

जे हरषहिं पर संपति देखी ❀ दुखित होहिं पर बिपति बिसेषी
जिन्हहिं राम तुम प्रान पिआरे ❀ तिन्हके मन सुभ सदन तुम्हारे

जो दूसरे की सम्पत्ति देखकर हर्षित होते हैं और दूसरे की विपत्ति देखकर बहुत दुःखी होते हैं। हे राम! जिनको आप प्राण-समान प्रिय हैं, उनके मन आपके रहने योग्य सुन्दर घर हैं।



स्वामि सखा पितु मातु गुर जिन्हके सब तुम तात ।
मन मन्दिर तिन्ह के बसहु सीय सहित दोउ भ्रात ॥

हे तात ! जिनके स्वामी, सखा, पिता, माता और गुरु सब कुछ आप ही हैं, उनके मनरूपी मन्दिर में सीता-सहित दोनों भाई निवास कीजिये।

अवगुन तजि सब के गुन गहहीं[1] ❀ बिप्र धेनु हित संकट सहहीं
नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका ❀ घर तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका

जो अवगुणों को छोड़कर सबके गुणों को ग्रहण करते हैं, ब्राह्मण और गौओं के लिये संकट सहते हैं, जगत् में जिनकी गिनती नीति जानने वालों में है, उनका सुन्दर मन आपका घर है।

गुन तुम्हार समुझइ निज दोसा ❀ जेहि सब भाँति तुम्हार भरोसा
राम भगत धनु लागहिं जेही ❀ तेहि उर बसहु सहित बैदेही

जो आपके गुणों और अपने दोषों को समझता है, जिसे सब प्रकार से आप ही का भरोसा है, और रामचन्द्रजी के भक्त जिसको प्यारे लगते हैं, उसके हृदय में आप सीता-सहित निवास कीजिये।

जाति पाँति प्रिय धरमु बड़ाई ❀ प्रिय परिवार सदन सुखदाई
सब तजि तुम्हहिं रहइ लउ लाई ❀ तेहि के हृदयँ रहहु रघुराई

जाति, पाँति, धन, धर्म, प्रशंसा, प्यारा परिवार और सुख देने वाला घर, सबको छोड़कर जो आप में लव लगाये रहता है, हे रामचन्द्रजी! उसके हृदय में आप रहें।

सरगु नरकु अपबरगु[2] समाना ❀ जहँ तहँ देख धरें धनु बाना
करम बचन मन राउर चेरा[3] ❀ राम करहु तेहि कें उर डेरा

जिसकी दृष्टि में स्वर्ग, नरक और मोक्ष समान हैं, जो सब जगह धनुष-बाणधारी आपको ही देखता है, जो कर्म से, वचन से और मन से आपका दास है, हे राम ! आप उसके हृदय में डेरा कीजिये।



जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेहु।
बसहु निरन्तर तासु मन सो राउर निज गेहु १३०

---

१. ग्रहण करते हैं। २. मोक्ष। ३. दास।

जिसको कभी कुछ भी नहीं चाहिये, और जिसका आपसे स्वाभाविक प्रेम है, आप उसके मन में निरंतर निवास कीजिये, वह आपका अपना घर है।

एहि बिधि मुनि बर भवन देखाये ❀ बचन सप्रेम राम मन भाये
कह मुनि सुनहु भानुकुल नायक ❀ आस्रमु कहउँ समय सुखदायक

इस प्रकार मुनिवर वाल्मीकिजी ने रामचन्द्रजी को घर दिखाये। उनके प्रेमयुक्त वचन रामचन्द्रजी के मन को प्रिय लगे। फिर मुनि ने कहा—हे सूर्य-कुल के स्वामी ! सुनिये, अब मैं इस समय के लिये सुख देने वाला आश्रम कहता हूँ—

चित्रकूट गिरि करहु निवासू ❀ तहँ तुम्हार सब भाँति सुपासू
सैलु सुहावन कानन चारू[1] ❀ करि केहरि मृग बिहँग बिहारू

आप चित्रकूट पर्वत पर जाकर निवास कीजिये, वहाँ आपके लिये सब प्रकार का आराम है। पर्वत सुहावना है और वन भी सुन्दर है। वह हाथी, सिंह, हिरन और पक्षियों का विहार-स्थल है।

नदी पुनीत पुरान बखानी ❀ अत्रिप्रिया[2] निज तप बल आनी
सुरसरि धार नाउँ मंदाकिनि ❀ जो सब पातक पोतक डाकिनि

वहाँ एक पवित्र नदी है, जिसका वर्णन पुराणों में है; जिसको अत्रि ऋषि की स्त्री (अनुसूयाजी) तपस्या के बल से लायी हैं; वह गङ्गाजी की धारा है, उसका नाम मन्दाकिनी है, वह सब पापरूपी बालकों को खा जाने के लिये डाकिनी (डाइन) रूप है।

अत्रि आदि मुनिबर बहु बसहीं ❀ करहिं जोग जप तप तन कसहीं
चलहु सफल स्रम सब कर करहू ❀ राम देहु गौरव गिरिबरहू

अत्रि आदि बहुत-से श्रेष्ठ मुनि वहाँ निवास करते हैं और वे योग, जप और तप करते हुये शरीर को कसते हैं। हे राम ! वहीं चलिये, सबके परिश्रम को सफल कीजिये और पर्वत-श्रेष्ठ चित्रकूट को भी गौरव दीजिये।

दो॰ चित्रकूट महिमा अमित कही महामुनि गाइ।
आइ नहाये सरित बर सिय समेत दोउ भाइ॥१३१॥

महामुनि (वाल्मीकिजी) ने चित्रकूट पर्वत की अपार महिमा बखान कर

१. सुन्दर। २. अनुसूयाजी।

कही। तब सीता-सहित दोनों भाई राम-लक्ष्मण ने आकर उस श्रेष्ठ नदी मन्दाकिनी में स्नान किया।

रघुबर कहेउ लषन भल घाटू ❀ करहु कतहुँ अब ठाहर[1] ठाटू[2]
लषनु दीख पय उतर करारा ❀ चहुँ दिसि फिरेउ धनुष जिमि नारा

रामचन्द्रजी ने कहा—लक्ष्मण! घाट तो अच्छा है, अब कहीं ठहरने की व्यवस्था करो। तब लक्ष्मण ने पयस्विनी नदी के उत्तर किनारे के करारे को देखा, जिसके चारों ओर धनुष के समान एक नाला फिरा हुआ था।

नदी पनच[3] सर सम दम दाना ❀ सकल कलुष कलि साउज[4] नाना
चित्रकूट जनु अचल अहेरी[5] ❀ चुकइ न घात मार मुठभेरी

उस धनुष की प्रत्यञ्चा (डोरी) तो वह नदी है, शम, दम, दान बाण हैं, कलियुग के सब पाप उसके हिंसक पशु (शिकार) हैं, चित्रकूट पर्वत ही मानो अचल शिकारी है, जिसका घात (निशाना) कभी चूकता नहीं, और सामने से मारता है। [साङ्गरूपक अलंकार]

अस कहि लखन ठाँउँ देखरावा ❀ थल बिलोकि रघुबर सुखु पावा
रमेउ राम मनु देवन्ह जाना ❀ चले सहित सुर थपति[6] प्रधाना

ऐसा कहकर लक्ष्मण ने स्थान दिखलाया। स्थान को देखकर रामचन्द्रजी ने बहुत सुख पाया। देवताओं ने जब जाना कि अब रामचन्द्रजी का मन यहाँ रम गया, तब वे देवताओं के प्रधान राजगीर (विश्वकर्मा) को साथ लेकर चले।

कोल किरात बेष सब आए ❀ रचे परन तृन सदन सुहाए
बरनि न जाहिं मंजु दुइ साला ❀ एक ललित लघु एक बिसाला

वे सब कोल-भीलों के वेष में आये और उन्होंने पत्तों और घासों के सुन्दर घर बनाये। दो ऐसी सुन्दर कुटियाँ बनाईं, जिनका वर्णन नहीं हो सकता। उनमें एक बड़ी सुन्दर छोटी-सी और दूसरी बड़ी थी।



लषन जानकी सहित प्रभु राजत रुचिर निकेत।
सोह मदन मुनि बेष जनु रति रितुराज समेत।१३२।

लक्ष्मण और जानकी-सहित प्रभु रामचन्द्रजी सुन्दर घर में ऐसे विराज-

---

१. ठौर, जगह। २. व्यवस्था। ३. प्रत्यंचा, डोरी। ४. शिकार का पशु। ५. शिकारी। ६. स्थपति, राजगीर।

मान हैं, मानो कामदेव मुनि का वेष धारण कर रति और वसन्त ऋतु के साथ शोभित हैं। [उक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार]

अमर नाग किन्नर दिसिपाला ❀ चित्रकूट आए तेहि काला
राम प्रनामु कीन्ह सब काहू ❀ मुदित देव लहि लोचन लाहू

उस समय चित्रकूट में देवता, नाग, किन्नर और दिग्पाल आये और रामचन्द्रजी ने सबको प्रणाम किया। देवता नेत्रों का लाभ पाकर आनन्दित हुए।

बरषि सुमन कह देव समाजू ❀ नाथ सनाथ भए हम आजू
करि बिनती दुख दुसह सुनाए ❀ हरषित निज निज सदन सिधाए

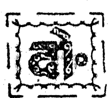
फूलों की वर्षा करके देवगण कहने लगे—हे नाथ! आज हम सनाथ हो गये। फिर उन्होंने विनती करके अपने कठिन दुःख सुनाये और प्रसन्न होकर वे अपने स्थानों को चले गये।

चित्रकूट रघुनंदनु छाए[1] ❀ समाचार सुनि सुनि मुनि आए
आवत देखि मुदित मुनिबृन्दा ❀ कीन्ह दंडवत रघुकुल चंदा

रामचन्द्रजी चित्रकूट में आ बसे हैं यह समाचार सुन-सुनकर बहुत-से मुनि आये। रघुकुल के चन्द्रमा रामचन्द्रजी ने आनंदित मुनियों की मंडली को आते देखकर उनको दण्डवत प्रणाम किया।

मुनि रघुबरहिं लाइ उर लेहीं ❀ सुफल होन हित[2] आसिष देहीं
सिय सौमित्रि राम छबि देखहिं ❀ साधन सकल सफल करि लेखहिं

मुनिगण रामचन्द्रजी को हृदय से लगा लेते हैं और सफल होने के लिए आशीर्वाद देते हैं। वे सीता और लक्ष्मण-सहित रामचन्द्रजी की छवि देखते हैं, और अपने सब साधनों को सफल हुआ समझते हैं।



जथाजोग सनमानि प्रभु बिदा किए मुनिबृन्द।
करहिं जोग जप जाग तप निज आश्रमनि सुछन्द[3]॥

प्रभु रामचन्द्रजी ने सब मुनियों का यथायोग्य सन्मान करके उनको विदा किया। वे सब अपने-अपने आश्रमों में निर्भय होकर योग, जप, यज्ञ और तप करने लगे।

---

१. बसे। २. लिये। ३. स्वच्छन्दता से, निर्भय होकर।

यह सुधि कोल किरातन्ह पाई ❀ हरषे जनु नव निधि घर आई
कंद मूल फल भरि भरि दोना ❀ चले रंक जनु लूटन सोना

यह समाचार जब कोल-भीलों ने पाया, तो वे ऐसे प्रसन्न हुए कि मानो नवों निधियाँ उनके घर ही पर आ गई हों। वे दोनों में कन्द, मूल, फल भर-भरकर ऐसे चले, जैसे दरिद्र सोना लूटने चले हों। [उक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार]

तिन्ह महँ जिन्ह देखे दोउ भ्राता ❀ अपर तिन्हहिं पूँछहिं मगु जाता
कहत सुनत रघुबीर निकाई ❀ आइ सबन्हि देखे रघुराई

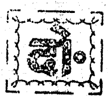
उनमें से जिन्होंने राम, लक्ष्मण दोनों भाइयों को पहले देखा था, उनसे दूसरे लोग रास्ते में जाते हुये पूछते हैं। इस प्रकार आपस में रामचन्द्रजी की सुन्दरता कहते-सुनते सबने आकर रामचन्द्रजी को देखा।

करहिं जोहारु भेंट धरि आगे ❀ प्रभुहिं बिलोकहिं अति अनुरागे
चित्र लिखे जनु जहँ तहँ ठाढ़े ❀ पुलक शरीर नयन जल बाढ़े

सामने भेंट धरकर वे सब जोहार (प्रणाम) करते हैं और बड़े प्रेम के साथ प्रभु रामचन्द्रजी को देखते हैं। वे चित्र में लिखे-से जहाँ के तहाँ ही खड़े हैं, उनके शरीर पुलकित हैं और आँखों में जल की बाढ़ आ रही है।

राम सनेह मगन सब जाने ❀ कहि प्रिय बचन सकल सनमाने
प्रभुहिं जोहारि बहोरि बहोरी ❀ बचन बिनीत कहहिं कर जोरी

राम ने उन सबको प्रेम में मग्न जाना और सबको प्रिय वचन कहकर उनका सन्मान किया। बार-बार वे सब प्रभु रामचन्द्रजी को हाथ जोड़कर प्रणाम करके नम्र वचन कहते हैं—



अब हम नाथ सनाथ सब भए देखि प्रभु पाय।
भाग हमारे आगमनु राउर कोसलराय।१३४।

हे नाथ! अब आप प्रभु के चरणों का दर्शन पाकर हम सब सनाथ हो गये। हे कोशलाधीश! हमारे ही भाग्य से आपका यहाँ आगमन हुआ है।

धन्य भूमि बन पंथ पहारा ❀ जहँ जहँ नाथ पाउ तुम धारा
धन्य बिहँग मृग कानन चारी ❀ सफल जनम भए तुम्हहिं निहारी

हे नाथ! जहाँ-जहाँ आपने अपने चरण रक्खे हैं, वह पृथ्वी, वन, मार्ग

और पहाड़ धन्य हैं, वन में विचरने वाले वे पशु और पक्षी धन्य हैं, जो आपके दर्शन पाकर सफल-जन्म हो गये।

हम सब धन्य सहित परिवारा ❁ दीख दरसु भरि नयन तुम्हारा
कीन्ह बासु भल ठाउँ बिचारी ❁ इहाँ सकल रितु रहब सुखारी

हम सब भी अपने कुटुम्ब-सहित धन्य हैं, जिन्होंने आँख भरकर आपका दर्शन किया। आपने बड़ी अच्छी जगह विचारकर निवास किया है, यहाँ सभी ऋतुओं में आप सुखी रहेंगे।

हम सब भाँति करब सेवकाई ❁ करि केहरि अहि बाघ बराई[1]
बन बेहड़ गिर कंदर खोहा ❁ सब हमार प्रभु पग पग जोहा

हम सब लोग हाथी, सिंह, साँप और बाघों से बचाकर आपकी सब प्रकार से सेवा करेंगे। हे स्वामी! यहाँ के वन, टीले, पहाड़, गुफायें और खोह (दर्रे) सब हमारे पग-पग (बिलकुल) देखे हुये हैं।

जहँ तहँ तुमहिं अहेर खेलाउब ❁ सर निरझर[2] भल ठाउँ देखाउब
हम सेवक परिवार समेता ❁ नाथ न सकुचब आयसु देता

हम आपको जहाँ-तहाँ शिकार खिलावेंगे और तालाब, झरने और और भी अच्छे स्थान दिखावेंगे। हम कुटुम्ब-समेत आपके सेवक हैं। हे नाथ! इसलिये आज्ञा देने में किसी प्रकार का संकोच न कीजियेगा।

दो०—बेद बचन मुनि मन अगम ते प्रभु करुना ऐन।
बचन किरातन्ह के सुनत जिमि पितु बालक बैन॥

जो वेदों के वचन और मुनियों के मन को भी अगम हैं, वे दया के घर प्रभु रामचन्द्रजी उन भीलों के वचन इस तरह सुन रहे हैं, जैसे पिता बालकों के वचन सुनता है।

रामहिं केवल प्रेमु पियारा ❁ जानि लेउ जो जाननिहारा
राम सकल बनचर तब तोषे ❁ कहि मृदु बचन प्रेम परिपोषे

(तुलसीदास कहते हैं—) राम को केवल प्रेम प्यारा है, जो जानने की इच्छा रखता हो, वह जान ले। तब रामचन्द्रजी ने सब वनवासियों को सन्तुष्ट किया और कोमल वचन कहकर सबको प्रेम से पूर्ण किया।

---

१. बचाकर। २. झरना।

बिदा किए सिरु नाइ सिधाए ❀ प्रभु गुन कहत सुनत घर आए
एहि बिधि सिय समेत दोउ भाई ❀ बसहिं बिपिन सुर मुनि सुखदाई

फिर उनको विदा किया। वे सिर नवाकर वहाँ से चले और प्रभु के गुणों को कहते-सुनते हुये अपने-अपने घर आये। इस तरह से देवता और मुनियों को सुख देने वाले रामचन्द्रजी, लक्ष्मण और सीता समेत वन में निवास करने लगे।

जब तें आइ रहे रघुनायकु ❀ तब तें भयउ बन मंगल दायकु
फूलहिं फलहिं बिटप बिधि नाना ❀ मंजु बलित बर बेलि बिताना[1]

जब से रामचन्द्रजी आकर बसे, तब से वह वन मंगलदायक हो गया। अनेकों प्रकार के वृक्ष फूलते और फलते हैं और उन पर सुन्दर लिपटी हुई बेलों के मंडप तने हैं।

सुरतरु सरिस सुभायँ सुहाये ❀ मनहुँ बिबुध बन परिहरि आये
गुंज मंजुतर मधुकर[2] स्रेनी ❀ त्रिबिध बयारि बहइ सुख देनी

वे वृक्ष कल्पवृक्ष के समान स्वाभाविक ही सुन्दर हैं, मानो वे देवताओं के वन (नन्दन-वन) को छोड़कर आये हैं। भौंरों की पंक्तियाँ बहुत ही सुन्दर गुञ्जार करती हैं और सुख देने वाली तीन प्रकार की (मन्द, सुगन्ध और शीतल) हवा चलती रहती है।

दो०— नीलकंठ कलकंठ[3] सुक चातक चक्क[4] चकोर।
भाँति भाँति बोलहिं बिहँग स्रवन[5] सुखद चितचोर॥

नीलकण्ठ, कोयल, तोते, पपीहे, चकवा और चकोर इत्यादि पक्षी कानों को सुख देने वाली और मन को मोहित करने वाली तरह-तरह की बोलियाँ बोला करते हैं।

करि केहरि कपि कोल[6] कुरंगा ❀ बिगत बैर बिचरहिं सब संगा
फिरत अहेर राम छबि देखी ❀ होहिं मुदित मृग बृन्द बिसेषी

हाथी, सिंह, बन्दर, सूअर और हिरन, ये सब बैर-भाव को छोड़कर साथ-साथ घूमते हैं। शिकार के लिये फिरते हुये रामचन्द्रजी की छवि को देखकर पशुओं के झुण्ड अधिक प्रसन्न होते हैं।

---

१. मंडप। २. भौंरा। ३. कोयल। ४. चकवा। ५. कान। ६. सुअर।

बिबुध बिपिन जहँ लगि जग माहीं ❀ देखि रामबनु सकल सिहाहीं
सुरसरि सरसइ[1] दिनकर कन्या[2] ❀ मेकलसुता[3] गोदावरि धन्या

जगत् में जहाँ तक देवताओं के वन हैं, वे सब राम के वन को देखकर सिहाते हैं। गङ्गा, सरस्वती, यमुना, नर्मदा, गोदावरी आदि धन्य नदियाँ,

सब सर सिंधु नदी नद नाना ❀ मन्दाकिनि कर करहिं बखाना
उदय अस्त गिरि अरु कैलासू ❀ मन्दर मेरु सकल सुर बासू

सारे सरोवर, समुद्र, नदी और अनेकों नद सब मन्दाकिनी नदी की बड़ाई करते हैं। उदयाचल, अस्ताचल, कैलाश, मन्दर पर्वत, सुमेरु आदि जितने देवताओं के रहने के स्थान हैं,

सैल हिमाचल आदिक जेते ❀ चित्रकूट जसु गावहिं तेते
बिंध[4] मुदित मन सुख न समाई ❀ श्रम बिनु बिपुल बड़ाई पाई

और हिमालय आदि जितने पर्वत हैं, सभी चित्रकूट का यश गाते हैं। विन्ध्याचल आनंदित है, वह मन में फूला नहीं समाता; क्योंकि उसको बिना परिश्रम ही बहुत बड़ी बड़ाई मिल गई।

दो॰ चित्रकूट के बिहँग मृग बेलि बिटप तृन जाति।
पुन्य पुंज सब धन्य अस कहहिं देव दिन राति ।१३७।

चित्रकूट के पक्षी, पशु, लता, वृक्ष, घास-फूस आदि सभी धन्य हैं और सब पुण्य की राशि हैं; देवता दिन-रात यही कहते हैं। [संबंधातिशयोक्ति अलंकार]

नयनवंत रघुबरहिं बिलोकी ❀ पाइ जनम फल होहिं बिसोकी
परसि चरन रज अचर सुखारी ❀ भए परमपद के अधिकारी

जिनके आँखें हैं, वे जीव रामचन्द्रजी को देखकर, जन्म की सफलता पाकर शोकरहित हो जाते हैं। और अचर (पत्थर, पहाड़, पेड़ आदि) रामचन्द्रजी के चरणों की धूल स्पर्श कर सुखी होते हैं और वे सब परमपद (मोक्ष) के अधिकारी हो गये।

सो बन सैल सुभाय सुहावन ❀ मङ्गलमय अति पावन पावन
महिमा कहिअ कवनि बिधि तासू ❀ सुखसागर जहँ कीन्ह निवासू

वह बन और पर्वत स्वाभाविक ही सुहावना और मंगल-स्वरूप और पवित्रों

१. सरस्वती। २. यमुना। ३. नर्मदा। ४. विन्ध्याचल।

को भी पवित्र करने वाला है। उसकी महिमा का वर्णन किस तरह किया जाय? जहाँ सुख के समुद्र (रामचन्द्रजी) ने निवास किया है।

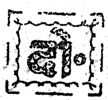
पय पयोधि तजि अवध बिहाई ❀ जहँ सिय लखनु राम रहे आई
कहि न सकहिं सुषमा जसि कानन ❀ जौं सत सहस होंहिं सहसानन

क्षीरसागर को त्यागकर और अयोध्या को छोड़कर जहाँ सीता, लक्ष्मण और रामचन्द्रजी आकर बसे, उस बन की जैसी परम शोभा हुई, जो सौ हज़ार शेषजी हों, तो भी उसको नहीं कह सकते।

सो मैं बरनि कहौं बिधि केहीं ❀ डाबर कमठ कि मंदर लेहीं
सेवहिं लखनु करम मन बानी ❀ जाइ न सीलु सनेहु बखानी

उस शोभा का वर्णन मैं कैसे कर सकता हूँ? भला, कहीं पोखरे का कछुआ मन्दराचल उठा सकता है? लक्ष्मण रामचन्द्रजी की मन, वचन और कर्म से सेवा करते हैं, उनके शील और प्रेम का वर्णन नहीं किया जा सकता।

[प्रतिवस्तूपमा अलङ्कार]



छिनु छिनु लखि सिय राम पद जानि आपु पर नेहु।
करत न सपनेहुँ लखन चितु बंधु मातु पितु गेहु॥१३८॥

क्षण-क्षण में सीता-रामजी के चरणों को देखकर और अपने ऊपर उनका स्नेह जानकर लक्ष्मण स्वप्न में भी भाइयों, माता-पिता और घर की याद नहीं करते।

राम संग सिय रहति सुखारी ❀ पुर परिजन गृह सुरति[1] बिसारी
छिनु छिनु पिय बिधु बदनु निहारी ❀ प्रमुदित मनहुँ चकोर कुमारी

रामचन्द्रजी के साथ सीता अयोध्यापुरी, कुटुम्बीजन और घर की याद भूल कर बड़े सुख से रहती हैं। क्षण-क्षण पर सीता अपने पति रामचन्द्रजी के चन्द्र-मुख को देखकर चकोरी की तरह प्रसन्न रहती हैं।

नाह नेहु नित बढ़त बिलोकी ❀ हरषित रहति दिवस जिमि कोकी[2]
सिय मन राम चरन अनुरागा ❀ अवध सहस सम बन प्रिय लागा

स्वामी का प्रेम अपने ऊपर नित्य बढ़ता हुआ देखकर सीता इस तरह प्रसन्न रहती हैं, जैसे दिन में चकवी। सीता के मन में रामचन्द्रजी के चरणों में

१. याद। २. चकवी।

ऐसा प्रेम है कि बन उन्हें हज़ारों अयोध्या के समान प्रिय लगता है।

परनकुटी प्रिय प्रियतम संगा ❀ प्रिय परिवार कुरंग[1] विहंगा
सासु ससुर सम मुनितिय मुनिवर ❀ असन अमिय सम कंद मूल फर

अत्यन्त प्यारे रामचन्द्रजी के साथ पत्तों की कुटी सीता को प्यारी लगती है और मृग और पक्षी ही प्यारे कुटुम्बियों-जैसे हैं। मुनियों की स्त्रियाँ सास के समान, श्रेष्ठ मुनि ससुर के समान और कन्द, मूल, फलों का आहार उनको अमृत के समान लगता है।

नाथ साथ साँथरी सुहाई ❀ मयन[2] सयन सय[3] सम सुखदाई
लोकप होहिं बिलोकत जासू ❀ तेहि कि मोहि सक बिषय बिलासू

स्वामी के साथ कुशों और पत्तों की सुन्दर शय्या सैकड़ों कामदेव की शय्याओं के समान सुख देने वाली थी। जिनकी दृष्टिमात्र से जीव लोकपाल (इन्द्र आदि) हो जाते हैं, उन्हें क्या भोग-विलास मोहित कर सकते हैं?

दो॰ सुमिरत रामहिं तजहिं जन तृन सम बिषय बिलासु।
रामप्रिया जग जननि सिय कछु न आचरजु तासु॥१३९॥

जिन रामचन्द्रजी के स्मरणमात्र से भक्तजन विषय-सम्बन्धी सुखों को तिनके के समान त्याग देते हैं, उन रामचन्द्रजी की प्रिय पत्नी और जगत् की माता सीता के लिए यह कुछ भी आश्चर्य नहीं। [काव्यर्थापत्ति अलंकार]

सीय लखन जेहि बिधि सुख लहहीं ❀ सोइ रघुनाथ करहिं सोइ कहहीं
कहहिं पुरातन कथा कहानी ❀ सुनहिं लखन सिय अति सुख मानी

सीता और लक्ष्मण को जैसे सुख मिले, रामचन्द्रजी वही करते और वही कहते हैं। रामचन्द्रजी पुरानी कथा और कहानियाँ कहते थे और सीता तथा लक्ष्मण बड़े सुख से सुनते थे।

जब जब रामु अवध सुधि करहीं ❀ तब तब बारि बिलोचन भरहीं
सुमिरि मातु पितु परिजन भाई ❀ भरत सनेह सीलु सेवकाई

जब-जब रामचन्द्रजी अयोध्या की सुध करते हैं, तब-तब उनकी आँखों में आँसू भर आते हैं। माता-पिता, कुटुम्बी और भाइयों तथा भरत के प्रेम, शील और सेवा-भाव को याद करके,

---

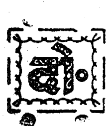
१. हिरन। २. कामदेव। ३. सौ।

कृपासिंधु प्रभु होहिं दुखारी ❀ धीरज धरहिं कुसमउ बिचारी
लखि सिय लषन बिकल होइ जाहीं ❀ जिमि पुरुषहिं अनुसर परिछाहीं

दयासागर प्रभु रामचन्द्रजी बड़े दुःखी हो जाते हैं, पर कुसमय समझकर धीरज धारण कर लेते हैं। रामचन्द्रजी को दुःखी देखकर लक्ष्मण और सीता भी व्याकुल हो जाते हैं, जैसे किसी मनुष्य की परछाहीं उसी की तरह चेष्टा करती है।

प्रिया बंधु गति लखि रघुनंदनु ❀ धीर कृपाल भगत उर चंदनु
लगे कहन कछु कथा पुनीता ❀ सुनि सुख लहहिं लखनु अरु सीता

धीर, दयालु और भक्तों के हृदयों को शीतल करने वाले चन्दनरूप रामचन्द्रजी प्यारी पत्नी (सीता) और भाई लक्ष्मण की दशा देखकर कुछ पवित्र कथायें कहने लगते हैं, जिन्हें सुनकर लक्ष्मण और सीता सुख प्राप्त करते हैं।



रामु लखन सीता सहित सोहत परन निकेत।
जिमि बासव बस अमरपुर सची जयंत समेत॥१४०॥

लक्ष्मण और सीता-सहित रामचन्द्रजी पर्णकुटी में ऐसे सुशोभित हैं, जैसे इन्द्र अमरावतीपुरी में शची (इन्द्राणी) और जयन्त (इन्द्र का पुत्र) समेत बसता है।

जोगवहिं प्रभु सिय लखनहिं कैसें ❀ पलक बिलोचन गोलक जैसें
सेवहिं लषनु सीय रघुबीरहिं ❀ जिमि अबिबेकी पुरुष शरीरहिं

प्रभु रामचन्द्रजी सीता और लक्ष्मण की कैसी सँभाल रखते हैं, जैसे पलकें आँखों के गोलकों को सँभालती हैं। सीता और लक्ष्मण रामचन्द्रजी की सेवा ऐसी करते हैं, जैसे अज्ञानी मनुष्य शरीर की करते हैं।

एहि बिधि प्रभु बन बसहिं सुखारी ❀ खग मृग सुर तापस हितकारी
कहेउँ राम बन गवनु सुहावा ❀ सुनहु सुमन्त्र अवध जिमि आवा

पक्षी, मृग, देवता और तपस्वियों के हितकारी प्रभु रामचन्द्रजी इस तरह सुखपूर्वक वन में बस रहे हैं। तुलसीदासजी कहते हैं—यह सुन्दर रामचन्द्रजी का वन-गमन मैंने कहा। अब जिस तरह सुमन्त्र अयोध्या में आये, वह कथा सुनो।

फिरेउ निषादु प्रभुहि पहुँचाई ❀ सचिव सहित रथ देखेसि आई
मन्त्री बिकल बिलोकि निषादू ❀ कहि न जाइ जस भयउ बिषादू

प्रभु रामचन्द्रजी को पहुँचाकर गुह-निषाद जब लौटा, तब आकर उसने

(सुमन्त्र) मन्त्री-सहित रथ को देखा। मन्त्री को बेचैन देखकर निषाद को जैसा दुःख हुआ, वह कहा नहीं जाता।

राम राम सिय लखन पुकारी ❀ परेउ धरनितल ब्याकुल भारी
देखि दखिन दिसि हय हिहिनाहीं ❀ जनु बिनु पंख बिहँग अकुलाहीं

वह हा राम! हा राम! हा सीते! हा लक्ष्मण! पुकारकर, बहुत व्याकुल होकर धरती पर गिर पड़े। रथ के घोड़े दक्षिण दिशा की ओर देख-देखकर हिन-हिनाते हैं, जैसे बिना पंख के पक्षी व्याकुल हो रहे हों।

दो० नहिं तृन चरहिं न पिअहिं जल मोचहिं लोचन बारि।
ब्याकुल भयउ निषाद सब रघुबर बाजि[1] निहारि॥

वे घोड़े न तो घास चरते हैं, न पानी पीते हैं; केवल आँखों से आँसू बहाते हैं। रामचन्द्रजी के घोड़ों की दशा देखकर सब निषाद व्याकुल हो गये। [प्रत्यनीक अलंकार]

धरि धीरज तब कहइ निषादू ❀ अब सुमन्त्र परिहरहु बिषादू
तुम्ह पंडित परमारथ ग्याता ❀ धरहु धीर लखि बिमुख बिधाता

तब धीरज धरकर निषाद कहने लगा—हे सुमन्त्र! अब विषाद को दूर कीजिये। आप तो पंडित और परमार्थ के जानने वाले हैं। विधाता को प्रतिकूल जानकर धीरज धरिये।

बिबिध कथा कहि कहि मृदु बानी ❀ रथ बैठारेउ बरबस आनी
सोक सिथिल रथु सकै न हाँकी ❀ रघुबर बिरह पीर उर बाँकी[2]

कोमल वाणी से भाँति-भाँति की कथाएँ कह-कहकर निषाद ने ज़बरदस्ती लाकर सुमन्त्र को रथ पर बैठा दिया। पर सुमन्त्र शोक के मारे ऐसे शिथिल हो गये कि रथ को हाँक न सके। उनके हृदय में रामचन्द्रजी के विरह की बड़ी तीव्र वेदना है।

चरफराहिं मग चलहिं न घोरे ❀ बन मृग मनहुँ आनि रथ जोरे
अढुकि[3] परहिं फिरि हेरहिं पीछें ❀ राम बियोग बिकल दुख तीछें

घोड़े तड़फड़ाते हैं और रास्ते पर नहीं चलते। ऐसा मालूम होता है, मानो जंगली पशु या हिरन लाकर रथ में जोत दिये गये हैं। वे ठोकर खाकर गिर

१. घोड़ा। २. तीव्र। ३. ठोकर खाकर।

पड़ते और फिर पीछे की ओर देखने लगते हैं। वे रामचन्द्रजी के वियोग के तीक्ष्ण दुख में दुखी हो रहे हैं।

जो कह राम लखन बैदेही ❀ हिंकरि हिंकरि हित हेरहिं तेही
बाजि बिरह गति कहि किमि जाती ❀ बिनु मनि फनिक बिकल जेहि भाँती

जो कोई राम, लक्ष्मण या जानकी का नाम ले लेता है, घोड़े हिकर-हिकर कर उसकी ओर प्यार से देखने लगते हैं। घोड़ों के विरह की दशा कैसे कही जाय ? वे ऐसे व्याकुल हैं, जैसे बिना मणि के साँप।

दो॰ भयेउ निषाद बिषादबस देखत सचिव तुरङ्ग[1]।
बोलि सुसेवक चारि तब दिए सारथी सङ्ग ॥१४२॥

मन्त्री और घोड़ों की दशा देखकर निषाद दुखी हो गया। तब उसने अपने चार अच्छे सेवकों को बुलाकर सारथी के साथ कर दिया।

गुह सारथिहि फिरेउ पहुँचाई ❀ बिरहु बिषादु बरनि नहिं जाई
चले अवध लेइ रथहि निषादा ❀ होहिं छनहि छन मगन बिषादा

गुह सारथी (सुमंत्र) को कुछ दूर तक पहुँचाकर घर को लौटा। उसके विरह और दुःख का वर्णन नहीं किया जा सकता। वे चारों निषाद रथ लेकर अयोध्या को चले। वे भी क्षण-क्षण में दुख में डूब जाते थे।

सोच सुमंत्र बिकल दुख दीना ❀ धिग जीवन रघुबीर बिहीना
रहिहि न अंतहुँ अधम सरीरू ❀ जसु न लहेउ बिछुरत रघुबीरू

व्याकुल और दुःख से दीन सुमन्त्र सोचते हैं कि रामचन्द्रजी के बिना जीने को धिक्कार है। यह नीच शरीर अन्त में रहने को तो है ही नहीं; फिर रामचन्द्रजी के बिछुड़ते ही छूटकर इसने यश क्यों नहीं पा लिया ?

भए अजस अघ भाजन प्राना ❀ कवन हेतु नहिं करत पयाना[2]
अहह मंद मनु अवसर चूका ❀ अजहुँ न हृदय होत दुइ टूका

हाय ! ये प्राण, निन्दा और पाप के पात्र हो गये। ये किस कारण से कूच नहीं करते ? हाय ! अरे मूर्ख मन ! तू अवसर चूक गया। अब भी तो हृदय के टुकड़े नहीं हो जाते।

---

१. घोड़ा। २. कूच।

मींजि हाथ सिरु धुनि पछिताई ❀ मनहुँ कृपन धन रासि गवाँई
बिरिद बाँधि बर बीरु कहाई ❀ चलेउ समर जनु सुभट पराई

सुमन्त्र हाथ मलकर और सिर पीट-पीटकर ऐसा पछताने लगे जैसे कंजूस ने धन का खज़ाना खो दिया हो, या जैसे कोई वीर का बाना पहनकर और नामी योद्धा कहाकर युद्ध से पीठ दिखाकर भाग चला हो।

दो॰ बिप्र बिबेकी बेदबिद संमत साधु सुजाति।
जिमि धोखें मद पान कर सचिव सोच तेहि भाँति॥

जैसे कोई विवेकशील, वेद का जानने वाला, साधु सम्मत आचरणों वाला और कुलीन ब्राह्मण धोखे से मदिरा पी ले और पीछे पछतावे, उसी तरह मन्त्री सुमन्त पछता रहे हैं।

जिमि कुलीन तिय साधु सयानी ❀ पतिदेवता करम मन बानी
रहै करम बस परिहर नाहू ❀ सचिव हृदयँ तिमि दारुन दाहू

या जिस तरह कोई उत्तम कुल वाली साधु स्वभाव की समझदार और पति को देवता मानने वाली स्त्री भाग्यवश अपने पति को छोड़कर रहे और उसके हृदय में कठिन दाह हो, वैसा ही मंत्री के हृदय में हो रहा है।

लोचन सजल डीठि भइ थोरी ❀ सुनइ न स्रवन बिकल मति भोरी
सूखहिं अधर लागि मुँह लाटी ❀ जिउ न जाइ उर अवधि कपाटी[1]

नेत्रों में आँसू हैं, दृष्टि मंद हो गई है, कानों से सुनाई नहीं पड़ता और बुद्धि बेठिकाने हो रही है। होंठ सूख रहे हैं, मुँह में झाग सूखकर चिपक गये हैं, पर प्राण नहीं निकलते; क्योंकि हृदय में अवधि के किवाड़ लगे हुए हैं।

बिबरन भयेउ न जाइ निहारी ❀ मारेसि मनहुँ पिता महतारी
हानि गलानि बिपुल मन ब्यापी ❀ जमपुर पंथ सोच जिमि पापी

उसके मुख का रंग फीका पड़ गया है, जो देखा भी नहीं जाता। मानो उसने अपने माता-पिता को मार डाला हो। उनके मन में ऐसी हानि और ग्लानि व्याप्त हो रही है, जैसे पापी मनुष्य यमपुर के रास्ते में सोच कर रहा हो।

बचन न आव हृदयँ पछिताई ❀ अवध काह मैं देखब जाई
राम रहित रथ देखिहि जोई ❀ सकुचिहि मोहि बिलोकत सोई

१. किवाड़ी।

उनके मुँह से वचन नहीं निकलते। वे हृदय में पछताते हैं कि मैं अयोध्या में जाकर क्या देखूँगा ? रामचन्द्रजी के बिना रथ को जो देखेंगे, वे मुझे देखने में संकोच करेंगे।

दो०— धाइ पूँछिहहिं मोहि जब बिकल नगर नर नारि।
उतरु देब मैं सबहिं तब हृदय बज्र बैठारि ॥१४४॥

जब नगर के व्याकुल स्त्री-पुरुष दौड़कर मुझसे पूछेंगे, तब मैं उन्हें छाती पर वज्र रखकर सबको उत्तर दूँगा।

पुँछिहहिं दीन दुखित सब माता ❀ कहब काह मैं तिन्हहिं बिधाता
पूँछहि जबहिं लखन महतारी ❀ कहिहहुँ कवन सँदेस सुखारी

जब दीन और दुःखी सब माताएँ पूछेंगी, तब हे विधाता ! मैं उन्हें क्या कहूँगा ? जब लक्ष्मण की माता मुझसे पूछेंगी, तब मैं उन्हें कौन-सा सुखदायी सन्देशा कहूँगा ?

राम जननि जब आइहि धाई ❀ सुमिरि बच्छ जिमि धेनु लवाई[1]
पूँछत उतरु देब मैं तेही ❀ गे बनु राम लखनु बैदेही

रामचन्द्रजी की माता जब दौड़कर आयेंगी जैसे नई ब्याई हुई गाय बछड़े को याद करके दौड़ आती है, और पूछेंगी, तब मैं उन्हें यह उत्तर दूँगा कि राम, लक्ष्मण और सीता वन को चले गये।

जोइ पूँछिहि तेहि ऊतरु देबा[2] ❀ जाइ अवध अब एहु सुखु लेबा
पूँछिहि जबहिं राउ दुख दीना ❀ जिवन जासु रघुनाथ अधीना

जो मुझसे पूछेगा, उसे यही उत्तर देना पड़ेगा। हाय ! अयोध्या में जाकर अब मुझे यही सुख लेना है। जब दुःख से दीन महाराज (दशरथ) मुझसे पूछेंगे, जिनका जीना रामचन्द्रजी के अधीन है,

देहउँ उतरु कवनु मुँह लाई ❀ आयउँ कुसल कुअँर पहुँचाई
सुनत लखन सिय राम सँदेसू ❀ तृन जिमि तनु परिहरिहि नरेसू

तब मैं कौन-सा मुँह लेकर उन्हें उत्तर दूँगा कि मैं राजकुमारों को पहुँचा-कर कुशलपूर्वक लौट आया हूँ ? राम, लक्ष्मण और सीता का समाचार सुनते ही महाराज शरीर को तिनके के समान त्याग देंगे।

---

१. नई ब्याई हुई। २. देना पड़ेगा।

दो०— हृदउ न बिदरेउ पंक[1] जिमि बिछुरत प्रीतमु नीर।
जानत हौं मोहि दीन्ह बिधि यहु जातना सरीर।१४५।

प्रियतमरूपी जल के सूख जाने से जैसे कीचड़ फट जाता है, उसी तरह मेरा हृदय नहीं फटा, तो मैं जानता हूँ कि मुझे विधाता ने यातना भोगने ही को यह शरीर दिया है।

एहि बिधि करत पंथ पछितावा ❀ तमसा तीर तुरत रथु आवा
बिदा किये करि बिनय निषादा ❀ फिरे पाँय परि बिकल बिषादा

इस तरह रास्ते में पछताते हुये सुमन्त्र का रथ तमसा नदी के किनारे आ पहुँचा। तब मन्त्री ने विनय करके उन निषादों को विदा किया। वे दुःख से व्याकुल होते हुये मन्त्री के पाँव पड़कर लौटे।

पैठत नगर सचिव सकुचाई ❀ जनु मारेसि गुरु बाँभन गाई
बैठि बिटप तर दिवसु गँवावा ❀ साँझ समय तब अवसरु पावा

मन्त्री नगर में प्रवेश करते ऐसा सकुचाता है, मानो उसने गुरु, ब्राह्मण और गाय मार डाली हो। फिर एक पेड़ के नीचे बैठकर उसने सारा दिन बिता दिया। जब शाम हुई, तब उसे मौका मिला।

अवध प्रबेस कीन्ह अँधियारें ❀ पैठि भवन रथ राखि दुआरें
जिन्ह जिन्ह समाचार सुनि पाए ❀ भूप द्वार रथु देखन आए

अँधेरा होने पर उसने अयोध्या में प्रवेश किया और दरवाज़े पर रथ खड़ा करके वह राजमहल में गया। जिन-जिन लोगों ने समाचार सुन पाया, वे सभी रथ देखने को राजद्वार पर आये।

रथु पहिचानि बिकल लखि घोरे ❀ गरहिं[2] गात जिमि आतप ओरे[3]
नगर नारि नर ब्याकुल कैसें ❀ निघटत नीर मीन गन जैसें

रथ को पहचानकर और घोड़ों को व्याकुल देखकर उनके शरीर ऐसे गले जा रहे हैं, जैसे घाम में ओले। नगर के स्त्री-पुरुष ऐसे व्याकुल हैं, जैसे पानी के घटने पर मछलियाँ।

दो०— सचिव आगमन सुनत सब बिकल भयउ रनिवासु।
भवनु भयंकर लाग तेहि मानहुँ प्रेत निवासु १४६

१. कीचड़। २ गलते हैं। ३. ओला।

मन्त्री का आना सुनकर सारा रनिवास विकल हो गया। उस समय उनको वह राजमहल ऐसा भयानक लगा, जैसे प्रेतों का निवास-स्थान (श्मशान) हो।

अति आरति सब पूँछहिं रानी ❀ उतरु न आव बिकल भइ बानी
सुनइ न स्रवन नयन नहिं सूझा ❀ कहहु कहाँ नृप जेहि तेहि बूझा

बहुत दुःखित होकर सब रानियाँ पूछती हैं, पर सुमन्त्र को कुछ उत्तर नहीं आता। उसकी वाणी विकल हो गई (रुक गई) है। न उसको कानों से सुनाई पड़ता है और न आँखों से कुछ सूझता है। वह जिससे-तिससे पूछता है—कहो, राजा कहाँ हैं?

दासिन्ह दीख सचिव बिकलाई ❀ कौसल्या गृहँ गईं लेवाई
जाइ सुमंत्र दीख कस राजा ❀ अमिय रहित जनु चंदु बिराजा

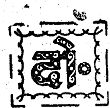
दासियाँ मन्त्री की व्याकुलता देखकर उसे कौशल्या के महल में लिवा ले गईं। सुमन्त्र ने वहाँ जाकर राजा दशरथ को कैसा देखा, मानो बिना अमृत का चन्द्रमा हो।

आसन सयन बिभूषन हीना ❀ परेउ भूमितल निपट मलीना
लेइ उसासु सोच एहि भाँती ❀ सुरपुर तें जनु खँसेउ[1] जजाती

राजा आसन, शय्या और भूषणों से रहित बिलकुल मलिन धरती पर पड़े हुए हैं। वे लम्बी साँसें लेते हैं, और इस तरह सोच करते हैं जैसे ययाति राजा स्वर्ग से गिरकर सोच कर रहे हों।

लेत सोच भरि छिनु छिनु छाती ❀ जनु जरि पंख परेउ संपाती
राम राम कह राम सनेही ❀ पुनि कह राम लखन बैदेही

राजा दशरथ क्षण-क्षण में सोच से छाती भर लेते हैं। उनकी दशा ऐसी हो गई है, मानो सम्पाती (पक्षी) पंखों के जल जाने पर गिर पड़ा हो। राजा बारम्बार राम-राम, हा! प्यारे राम कहकर फिर हा राम, हा लक्ष्मण, हा जानकी ऐसा कहने लगते हैं।



देखि सचिवँ जयजीव[2] कहि कीन्हेउ दण्ड प्रनामु।
सुनत उठेउ ब्याकुल नृपति कहु सुमंत्र कहँ रामु॥

---

१. गिरा। २. प्रणाम का शब्द, जैसे रामराम, जयराम आदि।

मन्त्री ने देखकर 'जयजीव' कहकर दण्डवत् प्रणाम किया। मन्त्री की बोली सुनते ही राजा व्याकुल होकर उठे और बोले—सुमन्त्र ! कहो, राम कहाँ हैं ?

भूप सुमंत्रु लीन्ह उर लाई ❀ बूड़त कछु अधार जनु पाई
सहित सनेह निकट बैठारी ❀ पूँछत राउ नयन भरि बारी

राजा ने सुमन्त्र को हृदय से लगा लिया। मानो पानी में डूबते हुए को कुछ सहारा मिल गया। राजा बड़े स्नेह के साथ मन्त्री को पास बैठाकर, आँखों में आँसू भरकर, पूछने लगे—

राम कुसल कहु सखा सनेही ❀ कहँ रघुनाथ लखन बैदेही
आने फेरि कि बनहिं सिधाये ❀ सुनत सचिव लोचन जल छाये

हे प्यारे सखा ! राम की कुशल कहो। राम, लक्ष्मण और जानकी कहाँ हैं ? उनको लौटा लाये कि वे वन ही को गये ? यह सुनते ही मन्त्री की आँखों में जल भर आया। [संदेह अलंकार]

सोक बिकल पुनि पूँछ नरेसू ❀ कहु सिय राम लखन संदेसू
राम रूप गुन सील सुभाऊ ❀ सुमिरि सुमिरि उर सोचत राऊ

सोच से व्याकुल हो राजा फिर पूछने लगे—सीता, राम और लक्ष्मण का संदेशा तो कहो। रामचन्द्रजी के गुण, शील और स्वभाव को याद करके राजा हृदय में सोच करते हैं।

राज सुनाइ दीन्ह बनबासू ❀ सुनि मन भयेउ न हरषु हराँसू[1]
सो सुत बिछुरत गए न प्राना ❀ को पापी बड़ मोहिं समाना

(वे कहने लगे—) मैंने राज देना सुनाकर वनवास दिया, यह सुनकर भी जिसके मन में हर्ष और विषाद न हुआ, ऐसे पुत्र के बिछुड़ने पर भी जो मेरे प्राण न गये, तो मेरे समान बड़ा पापी कौन है ?

दो०— सखा रामु सिय लखनु जहँ तहाँ मोहि पहुँचाउ।
नाहिं त चाहत चलन अब प्रान कहउँ सतिभाउ॥

हे सखा ! जहाँ राम, जानकी और लक्ष्मण हैं, मुझे भी वहीं पहुँचा दो। नहीं तो अब प्राण चलना चाहते हैं, मैं सत्य कहता हूँ।

१. विषाद।

पुनि पुनि पूछत मंत्रिहि राऊ ❀ प्रियतम सुअन[1] सँदेस सुनाऊ
करहि सखा सोइ बेगि उपाऊ ❀ राम लखन सिय नयन देखाऊ

राजा बार-बार मन्त्री से पूछते हैं—मेरे अत्यन्त प्यारे पुत्रों का संदेशा सुनाओ। हे सखा! तुम तुरंत वही उपाय करो, जिससे राम, लक्ष्मण और सीता को मुझे आँखों से दिखा दो।

सचिव धीर धरि कह मृदु बानी ❀ महाराज तुम्ह पंडित ग्यानी
बीर सुधीर धुरंधर देवा ❀ साधु समाजु सदा तुम्ह सेवा

मन्त्री धीरज धरकर कोमल वाणी से बोला—महाराज! आप पंडित और ज्ञानवान् हैं। हे देव! आप शूरवीर, बड़े धैर्यवान् पुरुषों में श्रेष्ठ हैं; आपने सदा सत्पुरुषों के समाज का सेवन किया है।

जनम मरन सब दुख सुख भोगा ❀ हानि लाभु प्रिय मिलन बियोगा
काल करम बस होहिं गोसाईं ❀ बरबस राति दिवस की नाईं

जन्म, मरण, सब प्रकार के सुख-दुख का भोग, हानि-लाभ, प्यारों का मिलना और बिछुड़ना ये सब हे स्वामी! काल और कर्म के अधीन दिन और रात की तरह बरबस हुआ करते हैं।

सुख हरषहिं जड़ दुख बिलखाहीं ❀ दोउ सम धीर धरहिं मन माहीं
धीरज धरहु बिबेक बिचारी ❀ छाड़िअ सोच सकल हितकारी

मूर्ख लोग सुख में प्रसन्न होते और दुःख में रोते हैं, पर धीर पुरुष सुख और दुःख दोनों में समान धीरज धरते हैं। आप ज्ञान से विचारकर धीरज धरिये और सोच करना छोड़ दीजिये, तो सब का हित हो।

दो०—प्रथम बासु तमसा भयउ दूसर सुरसरि तीर।
न्हाइ रहे जल पान करि सिय समेत दोउ बीर।१४९।

राम का पहला मुकाम तमसा नदी के किनारे और दूसरा गङ्गा-तट पर हुआ। सीता-सहित दोनों भाई स्नान कर, जल पीकर ही रहे।

केवट कीन्हि बहुत सेवकाई ❀ सो जामिनि[2] सिंगरौर गँवाई
होत प्रात बट छीरु मँगावा ❀ जटा मुकुट निज सीस बनावा

केवट (गुह) ने बड़ी सेवा की। वह रात उन्होंने सिंगरौर (शृङ्गबेरपुर)

१. पुत्र। २. रात।

में ही बिताई। दूसरे दिन सवेरा होते ही बड़ का दूध मँगवाया और राम-लक्ष्मण ने उससे अपने सिरों पर जटाओं के मुकुट बनाये।

राम सखाँ तब नाव मँगाई ❀ प्रिया चढ़ाइ चढ़े रघुराई
लखन बान धनु धरे बनाई[1] ❀ आपु चढ़े प्रभु आयसु पाई

तब रामचन्द्रजी के सखा (गुह) ने नाव मँगवाई। उस पर प्रिया (सीता) को चढ़ाकर फिर रामचन्द्रजी चढ़े। फिर लक्ष्मण ने धनुष-बाण सजाकर रक्खे और स्वामी रामचन्द्रजी की आज्ञा पाकर स्वयं चढ़े।

बिकल बिलोकि मोहि रघुबीरा ❀ बोले मधुर बचन धरि धीरा
तात प्रनामु तात सन कहेहू ❀ बार बार पद पङ्कज गहेहू

मुझे विकल देखकर, रामचन्द्रजी धीरज धरकर मधुर वचन बोले—हे तात! पिताजी से मेरा प्रणाम कहना और मेरी ओर से बार-बार उनके चरण-कमल पकड़ना।

करबि पाँय परि बिनय बहोरी ❀ तात करिअ जनि चिंता मोरी
बन मग मङ्गल कुसल हमारें ❀ कृपा अनुग्रह पुन्य तुम्हारें

और फिर पाँव पकड़कर विनती करना—हे पिताजी! आप मेरी चिन्ता न कीजिये, आपकी कृपा, अनुग्रह और पुण्य से वन में और रास्ते में हमारा कुशल-मङ्गल ही होगा।

छंद—तुम्हरें अनुग्रह तात कानन जात सब सुख पाइहौं।
प्रतिपालि आयसु कुसल देखन पायँ पुनि फिरि[2] आइहौं॥
जननी सकल परितोषि परि परि पायँ कर बिनती घनी।
तुलसी करेहु सोइ जतन जेहि कुसली रहहिं कोसल धनी॥

हे पिताजी! आपकी कृपा से मैं वन में जाते हुये सब प्रकार का सुख पाऊँगा। आज्ञा का भली-भाँति पालन करके आपके चरणों का दर्शन करने फिर लौट आऊँगा। सब माताओं के पाँवों पड़-पड़कर उनका समाधान करके और उनसे बहुत विनती करके (तुलसीदास कहते हैं—) तुम वही प्रयत्न करना—जिसमें कोशलाधीश (पिताजी) सकुशल रहें।

१. सजाकर। २. लौट।

सो० गुर सन कहब सँदेस बार बार पद पदुम[1] गहि।
करब सोइ उपदेस जेहिं न सोच मोहि अवधपति॥

गुरु (वशिष्ठजी) के चरण-कमलों को बार-बार पकड़कर सन्देशा कहना कि वे वही उपदेश दें, जिससे अवधपति (पिताजी) मेरा सोच न करें।

पुरजन परिजन सकल निहोरी ❀ तात सुनायेहु बिनती मोरी
सोइ सब भाँति मोर हितकारी ❀ जातें रह नरनाह सुखारी

हे तात ! सब नगर-निवासियों और कुटुम्बीजनों से निहोरा करके मेरी विनती सुनाना कि वही मनुष्य मेरा सब प्रकार से हितकारी है, जिसकी चेष्टा से महाराज सुखी रहें।

कहब सँदेसु भरतु के आएँ ❀ नीति न तजिअ राजपदु पाएँ
पालेहु प्रजहि करम मन बानी ❀ सेएहु मातु सकल सम जानी

भरत के आने पर उनको मेरा सन्देशा कहना कि भाई ! राजा का पद पा जाने पर नीति को न छोड़ देना; कर्म, मन और वाणी से प्रजा का पालन करना और सब माताओं को समान जानकर उनकी सेवा करना।

अउर निबाहेहु भायप भाई ❀ करि पितु मातु सुजन सेवकाई
तात भाँति तेहि राखब राऊ ❀ सोच मोर जेहिं करइ न काऊ

और हे भाइ ! पिता, माता और सुजनों की सेवा करके भाईपने को निबाहना। हे तात ! राजा को उसी तरह से रखना जिससे वे मेरा सोच कभी किसी तरह न करें।

लखन कहे कछु बचन कठोरा ❀ बरजि राम पुनि मोहि निहोरा
बार बार निज सपथ देवाई ❀ कहबि न तात लखन लरिकाई

लक्ष्मण ने कुछ कठोर वचन कहे। पर राम ने उन्हें मना करके फिर मुझ से अनुरोध किया और बार-बार अपनी सौगन्ध दिलाकर कहा—हे तात ! लक्ष्मण का लड़कपन पिताजी से न कहना।

दो० कहि प्रनामु कछु कहन लिय सिय भइ सिथिल सनेह।
थकित बचन लोचन सजल पुलक पल्लवित देह।१५१

प्रणाम कहकर सीता कुछ कहना चाहती थीं कि उनका शरीर स्नेह से

१. कमल।

शिथिल हो गया, वाणी रुक गई, नेत्रों में जल भर आया और शरीर रोमाञ्च से व्याप्त हो गया।

तेहि अवसर रघुबर रुख पाई ❀ केवट पारहिं नाव चलाई
रघुकुल तिलक चले यहि भाँती ❀ देखउँ ठाढ़ कुलिस[1] धरि छाती

उसी समय रामचन्द्रजी का रुख पाकर केवट ने नाव को पार ले जाने के लिये चला दिया। इस तरह रघुवंश के तिलक रामचन्द्रजी चल दिये और मैं छाती पर वज्र रखकर खड़ा-खड़ा देखता रहा।

मैं आपन किमि कहौं कलेसू ❀ जिअत फिरेउँ लेइ राम सँदेसू
अस कहि सचिव बचन रहि गयऊ ❀ हानि गलानि सोच बस भयऊ

मैं अपने क्लेश को कैसे कहूँ, जो जीता ही रामचन्द्रजी का सन्देशा लेकर लौट आया हूँ। ऐसा कहकर मन्त्री की वाणी रुक गई और वह हानि की ग्लानि और सोच के वश में हो गया।

सूत बचन सुनतहि नरनाहू ❀ परेउ धरनि उर दारुन दाहू
तलफत बिषम मोह मन मापा ❀ माँजा मनहुँ मीन कहुँ ब्यापा

नरनाथ (दशरथ) सारथी सुमन्त्र के वचनों को सुनते ही धरती पर गिर पड़े। उनके हृदय में भयानक दाह हुआ। वे तड़पने लगे। महाघोर मोह ने उनके मन को घेर लिया। मानो मछली को माँजा (पहली बरसात का रोग) हो गया हो।

करि बिलाप सब रोवहिं रानी ❀ महा बिपति किमि जाइ बखानी
सुनि बिलाप दुखहू दुखु लागा ❀ धीरजहू कर धीरजु भागा

सब रानियाँ विलाप कर रो रही हैं। उस महान् विपत्ति का वर्णन कैसे किया जाय? उस समय के विलाप को सुनकर दुःख को भी दुःख लगा और धीरज का भी धीरज भाग गया। [अत्युक्ति अलंकार]

दो॰ भयेउ कोलाहल अवध अति सुनि नृप राउर[2] सोर।
बिपुल बिहँग बन परेउ निसि मानहुँ कुलिस कठोर॥

महल के रनिवास में बड़ा भारी शोर सुनकर सारी अयोध्या में बड़ा भारी कुहराम मच गया, मानो पक्षियों के विशाल बन में रात्रि के समय कठोर वज्र गिरा हो।

---

१. वज्र। २. रावले, रनिवास।

प्रान कंठगत भयेउ भुआलू ❀ मनि बिहीन जनु ब्याकुल ब्यालू
इंद्रीं सकल बिकल भईं भारी ❀ जनु सर सरसिज बनु बिनु बारी[1]

राजा (दशरथ) के प्राण कंठ में आगये, जैसे बिना मणि के साँप व्याकुल हो गया हो। उनकी सब इन्द्रियाँ ऐसी विह्वल हो गईं, मानो तालाब में पानी न रहने से कमलों का वन मुरझा गया हो।

कौसिल्याँ नृपु दीख मलाना ❀ रबिकुल रबि अँथएउ जियँ जाना
उर धरि धीर राम महतारी ❀ बोली बचन समय अनुसारी

कौशल्या ने राजा को बहुत दुःखी देखकर अपने हृदय में जान लिया कि सूर्यकुल का सूर्य अब अस्त हो चला। उस समय रामचन्द्रजी की माता कौशल्या हृदय में धीरज धरकर समय के अनुसार वचन बोलीं—

नाथ समुझि मन करिअ बिचारू ❀ राम बियोग पयोधि अपारू
करनधार तुम्ह अवध जहाजू ❀ चढ़ेउ सकल प्रिय पथिक समाजू

हे नाथ ! आप मन में समझकर विचार कीजिए कि रामचन्द्र का वियोग अपार समुद्र है, अयोध्यारूपी जहाज के कर्णधार (खेने वाले) आप हो, उसमें सब प्रियजन यात्रीगण चढ़े हुये हैं।

धीरजु धरिअ त पाइअ पारू ❀ नाहिं त बूड़िहि सबु परिवारू
जौं जियँ धरिअ बिनय पिय मोरी ❀ राम लखन सिय मिलिहिं बहोरी

आप धीरज धरियेगा, तो सब पार पहुँच जायँगे, नहीं तो सारा परिवार डूब जायगा। हे प्रिय स्वामी ! जो मेरी विनती जी में रख लीजिएगा, तो राम, लक्ष्मण, सीता फिर आ मिलेंगे।

दो॰ प्रिया बचन मृदु सुनत नृपु चितयउ आँखि उघारि।
तलफत मीन मलीन जनु सींचत सीतल बारि।१५३॥

प्रिय पत्नी कौशल्या के कोमल वचन सुन राजा ने आँखें खोलकर देखा, मानो कोई तड़पती हुई दुःखी मछली पर ठण्डा पानी छिड़क रहा हो।

धरि धीरज उठि बैठ भुआलू ❀ कहु सुमंत्र कहँ राम कृपालू
कहाँ लखन कहँ रामु सनेही ❀ कहँ प्रिय पुत्रबधू बैदेही

धीरज धरकर राजा उठ बैठे और बोले—सुमन्त्र ! कहो, दयालु राम

१. पानी।

कहाँ हैं ? लछमण कहाँ हैं ? स्नेही राम कहाँ हैं ? और प्यारी बहू जानकी कहाँ हैं ?

बिलपत राउ बिकल बहु भाँती ❀ भइ जुग सरिस सिराति न राती
तापस अंध[1] साप सुधि आई ❀ कौसल्यहि सब कथा सुनाई

राजा व्याकुल होकर बहुत तरह से विलाप करने लगे। वह रात युग के समान बड़ी हो गई, बीतती ही नहीं। राजा को अंधे तपस्वी (श्रवणकुमार के पिता) के शाप की याद आई। उन्होंने सब कथा कौशल्या को कह सुनाई।

भयेउ बिकल बरनत इतिहासा ❀ राम रहित धिग जीवन आसा
सो तनु राखि करबि मैं काहा ❀ जेहिं न प्रेम पनु मोर निबाहा

उस इतिहास का वर्णन करते-करते राजा व्याकुल हो गये और कहने लगे कि राम के बिना जीने की आशा को धिक्कार है। मैं उस शरीर को रखकर क्या करूँगा, जिसने मेरा प्रेम-पण नहीं निबाहा ? [तिरस्कार अलंकार]

हा रघुनंदन प्रान पिरीते ❀ तुम्ह बिनु जिअत बहुत दिन बीते
हा जानकी लखन हा रघुबर ❀ हा पितु हित चित चातक जलधर

हाय ! प्राणों से भी प्यारे रघुनन्दन ! तुम्हारे बिना जीते हुए मुझे बहुत दिन बीत गये। हाय ! जानकी, लछमण ! हाय रघुबर ! हाय ! पिता के चित्त-रूपी चातक के मेघ-स्वरूप !

दो०— राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम।
तनु परिहरि रघुबर बिरहँ राउ गए सुरधाम १५४

राम-राम कहकर, फिर राम कहकर, फिर राम-राम-राम कहकर राजा रामचन्द्रजी के विरह में शरीर को त्यागकर सुरलोक (स्वर्ग) को सिधार गये।

जिअन मरन फल दसरथ पावा ❀ अंड[2] अनेक अमल जस छावा
जियत राम बिधु बदन निहारा ❀ राम बिरह करि मरन सवाँरा

जीने और मरने का फल तो दशरथजी ने ही पाया, जिनका निर्मल यश अनेक ब्रह्माण्डों में छा गया। जीतेजी तो उन्होंने रामचन्द्रजी के मुख-चन्द्र को देखा और राम के विरह को निमित्त बनाकर अपना मरण सुधार लिया। [लेश अलंकार]

---

१. श्रवणकुमार के पिता। २. लोक, ब्रह्मांड।

सोक बिकल सब रोवहिं रानी ❁ रूपु सीलु बलु तेजु बखानी
करहिं बिलाप अनेक प्रकारा ❁ परहिं भूमितल बारहिं बारा

सब रानियाँ सोच से व्याकुल होकर राजा के रूप, शील, बल और तेज की बड़ाई कर रो रही हैं। वे अनेकों प्रकार से विलाप कर रही हैं और बार-बार धरती पर गिर पड़ती हैं।

बिलपहिं बिकल दास अरु दासी ❁ घर घर रुदनु करहिं पुरबासी
अँथएउ[1] आजु भानुकुल भानू ❁ धरम अवधि गुन रूप निधानू

दास-दासीगण (नौकर-चाकर) व्याकुल होकर विलाप कर रहे हैं और नगर-निवासी घर-घर रो रहे हैं। वे कहते हैं—आज धर्म की सीमा, गुण और रूप के भंडार सूर्यवंश के सूर्य अस्त हो गये।

गारी सकल कैकइहि देहीं ❁ नयन बिहीन कीन्ह जग जेहीं
एहि बिधि बिलपत रैनि बिहानी[2] ❁ आये सकल महामुनि ग्यानी

सब कैकेयी को गालियाँ देते हैं, जिसने संसार भर को नेत्र-हीन कर दिया। इस तरह विलाप करते-करते रात बीत गई। सवेरा होने पर सब बड़े-बड़े ज्ञानी मुनि आये।

दो० तब बसिष्ठ मुनि समय सम कहि अनेक इतिहास।
सोक नेवारेउ सबहिं कर निज बिग्यान प्रकास॥१५५

तब वशिष्ठ मुनि ने समयानुसार अनेकों इतिहास कहकर अपने विज्ञान के प्रकाश से सबका शोक निवारण किया।

तेल नाव भरि नृप तनु राखा ❁ दूत बोलाइ बहुरि अस भाखा
धावहु बेगि भरत पहिं जाहू ❁ नृप सुधि कतहुँ कहहु जनि काहू

वशिष्ठ मुनि ने नाव में तेल भरवाकर उसमें राजा दशरथ के शरीर को रखवा दिया। फिर दूतों को बुलवाकर उनसे ऐसा कहा—तुम लोग जल्दी दौड़ कर भरत के पास जाओ। राजा की मृत्यु का समाचार कहीं किसी से न कहना।

एतनेइ कहेउ भरत सन[3] जाई ❁ गुरु बोलाइ पठयउ दोउ भाई
सुनि मुनि आयसु धावन[4] धाये ❁ चले बेगि बर बाजि लजाये

तुम जाकर भरत से इतना ही कहना कि दोनों भाइयों को गुरुजी ने बुला

१. अस्त हुआ। २. बीती। ३. से। ४. दूत।

भेजा है। मुनि की आज्ञा सुनकर धावन (दूत) दौड़ चले। वे ऐसी जल्दी चले कि उत्तम घोड़े भी शर्मिन्दा हो गये।

अनरथु अवध अरम्भेउ जबतें ❀ कुसगुन होहिं भरत कहुँ तबतें
देखहिं राति भयानक सपना ❀ जागि करहिं कटु कोटि कलपना

जब से अयोध्या में अनर्थ होना शुरू हुआ, तभी से भरत को अपशकुन होने लगे। वे रात्रि में भयंकर स्वप्न देखते थे, और जागने पर उन पर करोड़ों तरह की बुरी-बुरी कल्पनायें किया करते थे।

बिप्र जेवाँइ देहिं दिन[1] दाना ❀ सिव अभिषेक करहिं बिधि नाना
माँगहिं हृदयँ महेस मनाई ❀ कुसल मातु पितु परिजन भाई

वे रोज़ ब्राह्मणों को भोजन कराते और ग़रीबों को दान देते थे। कई तरह की विधियों से रुद्राभिषेक करते थे। हृदय में महादेवजी को मनाकर उनसे माता, पिता, कुटुम्बी और भाइयों की कुशलता माँगते थे।

दो० एहि बिधि सोचत भरत मन धावन पहुँचे आइ।
गुरु अनुसासन स्त्रवन सुनि चले गनेस मनाइ।१५६।

इस तरह भरत सोच-विचार में पड़े ही थे कि दूत आ पहुँचे। उनके द्वारा गुरुजी की आज्ञा कानों से सुनते ही वे गणेशजी को मनाकर चल पड़े।

चले समीर बेग हय हाँके ❀ नाँघत सरित सैल बन बाँके[2]
हृदय सोच बड़ कछु न सोहाई ❀ अस जानहिं जिय जाउँ उड़ाई

घोड़ों को हाँकते हुए और नदी, पहाड़ तथा विकट जंगलों को पार करते हुये वे हवा के वेग से चले। उनके हृदय में बड़ा भारी सोच था। कुछ सुहाता न था। वे अपने मन में यह सोचते थे कि उड़कर पहुँच जाऊँ।

एक निमेष बरष सम जाई ❀ एहि बिधि भरत नगर नियराई
असगुन होहिं नगर पैठारा ❀ रटहिं कुभाँति कुखेत करारा[3]

उनको एक-एक निमेष एक वर्ष के बराबर बीत रहा था। इस तरह भरत नगर (अयोध्या) के पास पहुँचे। नगर में प्रवेश करने के समय अपशकुन होने लगे। कौवे बुरी जगह बैठकर बुरी तरह से काँव-काँव करने लगे।

---

१. दीन, ग़रीब। २. विकट। ३ (संस्कृत) करट, काला कौवा।

खर सियार बोलहिं प्रतिकूला ❀ सुनि सुनि होइ भरत मन सूला
श्रीहत सर सरिता बन बागा ❀ नगर बिसेषि भयावनु लागा

गधे और सियार विपरीत बोल रहे हैं। सुन-सुनकर भरत के मन में बड़ी पीड़ा हो रही है। तालाब, नदी, वन, बाग-बगीचे सब निस्तेज हो रहे हैं, और नगर बड़ा ही डरावना लग रहा है।

खग मृग हय गय जाहिं न जोये ❀ राम बियोग कुरोग बिगोये
नगर नारि नर निपट दुखारी ❀ मनहुँ सबन्हि सब संपति हारी

रामचन्द्रजी के वियोगरूपी बुरे रोग से सताये हुए पक्षी, पशु, घोड़े और हाथी ऐसे हो रहे हैं कि देखे नहीं जाते। नगर के स्त्री-पुरुष सब अत्यन्त दुःखी हो रहे हैं, मानो सब अपनी सब सम्पत्ति हार बैठे हों।



पुरजन मिलहिं न कहहिं कछु गँवहिं[1] जोहारहिं जाहिं।
भरत कुसल पूँछि न सकहिं भय बिषाद मन माहिं॥

नगर के लोग मिलते हैं, कुछ कहते नहीं, चुपचाप जुहार (दंडवत्-प्रणाम आदि) करके चले जाते हैं। भरत के मन में बड़ा भय और दुःख है। वे किसी से कुशल-समाचार भी नहीं पूछ सकते।

हाट बाट नहिं जाहिं निहारी ❀ जनु पुर दहुँ दिसि लागि दवारी
आवत सुत सुनि कैकयनंदिनि ❀ हरषी रबिकुल जलरुह चंदिनि

बाज़ार और रास्ते देखे नहीं जाते, मानो नगर में दसों दिशाओं में दावाग्नि लगी है। सूर्यकुलरूपी कमल के लिए चाँदनी-रूपी कैकेयी पुत्र को आते हुये सुनकर बड़ी प्रसन्न हुई।

सजि आरती मुदित उठि धाई ❀ द्वारेहिं भेंटि भवन लेइ आई
भरत दुखित परिवार निहारा ❀ मानहुँ तुहिन[2] बनज[3] बनु मारा

आरती सजाकर वह प्रसन्नता से उठ दौड़ी और द्वार ही पर पुत्रों से मिल कर उन्हें अपने साथ महल में लिवा ले गई। भरत ने सारे परिवार को ऐसा दुःखी देखा, मानो कमलों के बन को पाला मार गया हो।

कैकेई हरषित एहि भाँती ❀ मनहुँ मुदित दव लाइ किराती
सुतहि ससोच देखि मन मारें ❀ पूछति नैहर कुसल हमारें

१. चुपके से। २. पाला। ३. कमल।

कैकेयी इस तरह प्रसन्न दीखती थी, जैसे भीलनी जंगल में आग लगाकर आनन्दित हो। पुत्र को सोच में भरा हुआ और मन मारे देखकर वह पूछने लगी—हमारे नैहर (मायके) में कुशल तो है।

सकल कुसल कहि भरत सुनाई ❀ पूँछी निज कुल कुसल भलाई
कहु कहँ तात कहाँ सब माता ❀ कहँ सिय राम लषन प्रिय भ्राता

भरत ने सब कुशल का समाचार सुनाकर फिर अपने कुल का कुशल-क्षेम पूछा। उन्होंने कहा—कहो, पिताजी कहाँ हैं? सब माताएँ कहाँ हैं? सीता और प्यारे भाई राम और लक्ष्मण कहाँ हैं?

दो० सुनि सुत बचन सनेहमय कपट नीर भरि नैन।
भरत स्रवन मन सूल सम पापिनि बोली बैन १५८॥

पुत्र के स्नेह-भरे वचनों को सुनकर और आँखों में कपट-आँसू भरकर वह पापिनी भरत के कानों में और मन में शूल (काँटे) के समान चुभने वाले वचन बोली—

तात बात मैं सकल सँवारी ❀ भइ मन्थरा सहाय बिचारी
कछुक काज बिधि बीच बिगारेउ ❀ भूपति सुरपति पुर पगु धारेउ

हे पुत्र! मैंने सारी बात बना ली थी, बेचारी मन्थरा सहायक हुई। पर बीच में विधाता ने कुछ थोड़ा-सा काम बिगाड़ दिया। वह यह कि राजा देवलोक-वासी हो गये।

सुनत भरतु भये बिबस बिषादा ❀ जनु सहमेउ करि केहरि नादा[1]
तात तात हा तात पुकारी ❀ परे भूमितल ब्याकुल भारी

भरत इस बात को सुनते ही भय और दुःख से बेहाल हो गये, मानो सिंह की गर्जना सुनकर हाथी सहम गया हो। वे हाय पिता! हाय पिता! पुकारकर ज़मीन पर गिर पड़े और अत्यन्त व्याकुल हुए।

चलत न देखन पायउँ तोही ❀ तात न रामहि सौंपेहु मोही
बहुरि धीर धरि उठे सँभारी ❀ कहु पितु मरन हेतु महतारी

(भरत विलाप करने लगे कि) हे पिता! मैं अन्त काल में आपको देख भी न सका। हा! आप मुझे रामचन्द्रजी को सौंप भी नहीं गये। फिर धीरज

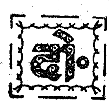
---

१. आवाज, गर्जना।

धरकर वे सम्भलकर उठे और उन्होंने पूछा कि माता! पिताजी के मरने का कारण तो बतलाओ।

सुनि सुत बचन कहति कैकेई ❀ मरमु पाँछि[1] जनु माहुर देई
आदिहु ते सब आपनि करनी ❀ कुटिल कठोर मुदित मन बरनी

पुत्र का वचन सुनकर कैकेयी कहने लगी, मानो मर्मस्थल को पाछकर (चाकू से चीरकर) उसमें ज़हर भर रही है। दुष्ट और कठोर कैकेयी ने बड़े आनन्द के साथ शुरू से आखीर तक अपनी सब करनी सुना दी।



भरतहि बिसरेउ पितु मरन सुनत राम बन गौनु।
हेतु अपनपउ जानि जिअँ थकित रहे धरि मौन॥

रामचन्द्रजी का बन जाना सुनकर भरत को पिता का मरण भूल गया और उस सारे अनर्थ का कारण हृदय में अपने ही को समझकर वे मौन होकर ठकरा गये।

बिकल बिलोकि सुतहि समुझावति ❀ मनहुँ जरे पर लोनु लगावति
तात राउ नहिं सोचइ जोगू ❀ बिढ़इ सुकृत जसु कीन्हेउ भोगू

पुत्र को व्याकुल देखकर कैकेयी समझाने लगी, मानो जले पर नमक लगा रही हो। हे पुत्र! राजा सोच करने योग्य नहीं हैं। उन्होंने पुण्य और यश कमा करके उसका सुख भोग किया था।

जीवत सकल जनम फल पाये ❀ अंत अमरपति सदन सिधाये
अस अनुमानि सोच परिहरहू ❀ सहित समाज राज पुर करहू

जीतेजी जन्म लेने के सभी फल उन्होंने पा लिये और अन्त में वे इन्द्र-लोक (स्वर्ग) को चले गये। ऐसा विचारकर सोच को दूर करो और तुम समाज-सहित नगर का राज्य करो।

सुनि सुठि सहमेउ राजकुमारू ❀ पाकें छत जनु लाग अँगारू
धीरज धरि भरि लेहिं उसासा ❀ पापिनि सबहिं भाँति कुल नासा

इन वचनों को सुनकर राजकुमार भरत बहुत ही सहम गये; मानो पके घाव पर अँगार छू गया। वे धीरज धरकर बड़ी लम्बी साँसें लेते हुए बोले—हे पापिन! तूने सभी तरह से कुल का नाश किया।

---

१. चाकू से चीरकर।

जौं पै कुरुचि रही अति तोही ❀ जनमत काहे न मारेसि मोही
पेड़ काटि तैं पालउ सींचा ❀ मीन जिअन निति बारि उलीचा

हाय ! यदि तेरी ऐसी ही अत्यन्त दुष्ट इच्छा थी, तो तूने मुझे जन्मते ही क्यों न मार डाला ? तूने पेड़ को काटकर पत्ते को सींचा और मछली के जीने के लिये पानी को उलीच डाला। [ललित अलंकार]

दो॰ हंसबंसु[1] दसरथु जनकु राम लखन से भाइ।
जननी तूँ जननी भई बिधि सन कछु न बसाइ॥

सूर्यवंश के समान कुल, दशरथजी सरीखे पिता, राम-लक्ष्मण सरीखे भाई मिले, पर हाय ! हे माता ! तू मेरी जननी हुई ? विधाता से कुछ भी वश नहीं चलता। [प्रथम विषम अलंकार]

जब तैं कुमति कुमत जिअँ ठयऊ ❀ खंड खंड होइ हृदउ न गयऊ
बर माँगत मन भइ नहिं पीरा ❀ गरि[2] न जीह मुँह परेउ न कीरा

अरी कुमति ! जब तेरे जी में ऐसी कुबुद्धि ठनी, तो तेरे हृदय के टुकड़े-टुकड़े क्यों न हो गये ? वरदान माँगते समय तेरे मन में कुछ पीड़ा नहीं हुई ? तेरी जीभ गल नहीं गई ? तेरे मुँह में कीड़े नहीं पड़ गये ?

भूप प्रतीति तोरि किमि कीन्ही ❀ मरन काल बिधि मति हरि लीन्ही
बिधिहु न नारि हृदय गति जानी ❀ सकल कपट अघ अवगुन खानी

राजा ने तेरा विश्वास कैसे कर लिया ? जान पड़ता है, विधाता ने मरते समय उनकी बुद्धि हर ली थी। स्त्री के हृदय की गति को विधाता भी नहीं जान सके। स्त्री का हृदय सभी तरह के कपट, पाप और अवगुणों (दोषों) की खान है। [व्याजनिन्दा अलंकार]

सरल सुसील धरम रत राऊ ❀ सो किमि जानइ तीय सुभाऊ
अस को जीव जंतु जग माहीं ❀ जेहि रघुनाथ प्रानप्रिय नाहीं

राजा तो सीधे, सुशील और धर्मपरायण थे। वे भला स्त्री-स्वभाव को कैसे जान सकते थे ? जगत् में ऐसा जीव-जन्तु कौन है, जिसे रामचन्द्रजी प्राणों के समान प्यारे नहीं हैं ?

---

१. सूर्य। २. गली।

भे¹ अति अहित रामु तेउ तोही ❀ को तूँ अहसि सत्य कहु मोही
जो हसि सो हसि मुँह मसि लाई ❀ आँखि ओट उठि बैठहि जाई

वे ही रामचन्द्रजी तुझे अहित (बैरी) हो गये। तू कौन है? मुझे सच-सच कह। खैर, तू जो है, सो है, अब अपना मुँह काला करके उठ और मेरी आँख की ओट में जा बैठ।



राम बिरोधी हृदय तें प्रगट कीन्ह बिधि मोहिं।
मो समान को पातकी बादि² कहउँ कछु तोहिं।१६१॥

हाय! रामचन्द्रजी के विरोधी तेरे हृदय से विधाता ने मेरा जन्म दिया। मेरे बराबर पापी दूसरा कौन है? मैं व्यर्थ ही तुझे कुछ कहता हूँ। [अर्थापत्ति प्रमाण अलंकार]

सुनि सत्रुघुन मातु कुटिलाई ❀ जरहिं गात रिसि कछु न बसाई
तेहि अवसर कुबरी तहँ आई ❀ बसन बिभूषन बिबिध बनाई

माता की कुटिलता सुनकर शत्रुघ्न के सब अङ्ग क्रोध के मारे जल रहे थे, पर कुछ वश नहीं चलता। उसी मौके पर तरह-तरह के कपड़ों और गहनों से सजकर कूबरी (मन्थरा) वहाँ आई।

लखि रिसि भरेउ लखन लघु भाई ❀ बरत³ अनल घृत आहुति पाई
हुमगि⁴ लात तकि कूबर मारा ❀ परि मुहुँ भरि महि करत पुकारा

उसे (सजी-बजी) देखकर लक्ष्मण के छोटे भाई शत्रुघ्न क्रोध में भर गये; मानो जलती हुई अग्नि को घी की आहुति मिल गई। उछलकर कूबरी के कूबर में ताककर उन्होंने एक लात जमाई, जिससे वह चिल्लाती हुई मुँह के बल ज़मीन पर गिर पड़ी।

कूबर टूटेउ फूट कपारू ❀ दलित दसन⁵ मुख रुधिर प्रचारू
आह दइअ मैं काह नसावा ❀ करत नीक फलु अनइस पावा

उसका कूबर टूट गया, कपाल फूट गया, दांत टूट गये और मुँह से खून बह चला। (वह कहने लगी—) हाय! दैव! मैंने क्या बिगाड़ा? जो अच्छा करते बुरा फल पाया।

---

१. हुये। २. व्यर्थ। ३. जलती हुई। ४. उछलकर। ५. दाँत।

सुनि रिपुहन[1] लखि नख सिख खोटी ❀ लगे घसीटन धरि धरि झोंटी
भरत दयानिधि दीन्हि छड़ाई ❀ कौसल्या पहिं[2] गे दोउ भाई

यह बात सुनकर और उसे नख से चोटी तक दुष्ट जानकर शत्रुघ्न झोटा पकड़-पकड़कर उसे घसीटने लगे। तब दयानिधि भरत ने उसको छुड़ा दिया। और दोनों भाई कौशल्या के पास गये।

दो०- मलिन बसन बिबरन बिकल कृस सरीर दुख भार।
कनक कलप बर बेलि बन मानहुँ हनी तुषार ।१६२।

(कौशल्या) मैले वस्त्र पहने हैं। चेहरे का रङ्ग फीका पड़ा हुआ है। विकल हो रही हैं और दुःख के बोझ से शरीर दुर्बल हो रहा है। ऐसी मालूम हो रही हैं, मानो सोने की सुन्दर कल्पलता को वन में पाला मार गया हो।

भरतहिं देखि मातु उठि धाईं ❀ मुरछित अवनि परी झइँ आई
देखत भरत बिकल भए भारी ❀ परे चरन तन दसा बिसारी

भरत को देखकर माता कौशल्या उठ दौड़ीं। पर चक्कर आ जाने से मूर्छित होकर वे धरती पर गिर पड़ीं। उनकी दशा देख-देख भरत बहुत व्याकुल हुए और अपने शरीर की सुध भुलाकर चरणों में गिर पड़े।

मातु तात कहँ देहि देखाई ❀ कहँ सिय रामु लखनु दोउ भाई
कैकइ कत[3] जनमी जग माँझा ❀ जौं जनमि त[4] भइ काहे न बाँझा

(वे कहने लगे—) हे माता! पिताजी कहां हैं? उन्हें दिखा दे। सीता तथा मेरे दोनों भाई राम और लक्ष्मण कहां हैं? जगत् में कैकेयी क्यों पैदा हुई? यदि पैदा ही हुई तो बांझ ही क्यों न रह गई?

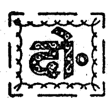
कुल कलंकु जेहिं जनमेउ मोही ❀ अपजस भाजन प्रिय जन द्रोही
को त्रिभुवन मोहि सरिस अभागी ❀ गति असि तोरि मातु जेहि लागी[5]

जिसने कुल के कलंक, अपयश के पात्र और प्रियजनों के द्रोही मुझ जैसे पुत्र को पैदा किया। तीनों लोकों में मेरे समान अभागा कौन है? हे माता! जिसके कारण तेरी यह दशा हुई।

१. शत्रुघ्न। २. पास। ३. क्यों? ४. तो। ५. लिये, कारण से।

पितु सुरपुर बन रघुबर केतू[1] ❀ मैं केवल सब अनरथ हेतू
धिग मोहि भयेउँ बेनु बन आगी ❀ दुसह दाह दुख दूषन भागी

पिताजी स्वर्ग में हैं, राम बन में हैं; केतु (ग्रह) के समान इन सब अनर्थों का कारण केवल मैं ही हूँ। मुझे धिक्कार है! मैं बांसों के बन में आग उत्पन्न हुआ और कठिन दाह, दुःख और दोषों का भागी हुआ।

 मातु भरत के बचन मृदु सुनि पुनि उठी सँभारि।
लिये उठाइ लगाइ उर लोचन मोचति बारि।१६३।

भरत के कोमल वचन सुनकर माता कौशल्या फिर सम्हलकर उठीं। उन्होंने भरत को उठाकर छाती से लगा लिया और वे आंखों से आंसू गिराने लगीं।

सरल सुभाय मायँ हियँ लाए ❀ अति हित मनहुँ राम फिरि आए
भेंटेउ बहुरि लखन लघु भाई ❀ सोकु सनेहु न हृदयँ समाई

सरल स्वभाव वाली माता ने भरत को बड़े प्रेम से छाती से लगा लिया, मानो रामचन्द्रजी ही लौटकर आगये हों। फिर लक्ष्मण के छोटे भाई शत्रुघ्न को हृदय से लगाया। शोक और स्नेह हृदय में समाता नहीं।

देखि सुभाउ कहत सबु कोई ❀ राम मातु अस काहे न होई
माता भरतु गोद बैठारे ❀ आँसु पोंछि मृदु बचन उचारे

कौशल्या का स्वभाव देखकर सब कोई कहने लगे—रामचन्द्रजी की माता का स्वभाव ऐसा क्यों न हो। माता ने भरत को गोद में बैठा लिया और उनके आंसू पोंछकर कोमल वचनों में कहा—

अजहुँ बच्छ[2] बलि धीरज धरहू ❀ कुसमउ समुझि सोक परिहरहू
जनि मानहु हिय हानि गलानी ❀ काल करम गति अघटित जानी

हे वत्स! मैं बलि जाऊँ! तुम अब भी धीरज धरो। बुरा समय जानकर शोक को त्याग दो। काल और कर्म की गति अमिट जानकर हृदय में हानि और ग्लानि मत मानो।

काहुहि दोस देहु जनि ताता ❀ भा मोहि सब बिधि बाम बिधाता
जो एतेहुँ दुख मोहि जिआवा ❀ अजहुँ को जानइ का तेहि भावा

१. केतु (ग्रह), जैसे, उदय केतु सम हित सबही के। २. वत्स, बच्चा।

हे पुत्र! किसी को दोष मत दो। विधाता सब प्रकार से मेरे प्रतिकूल हुआ है, जो इतने दुःख पर भी मुझे जिला रहा है। अब भी कौन जानता है, उसको क्या अच्छा लग रहा है।

दो०— पितु आयसु भूषन बसन तात तजे रघुबीर।
बिसमउ हरषु न हृदयँ कछु पहिरे बलकल चीर॥

हे तात! पिता की आज्ञा से रामचन्द्र ने भूषण और वस्त्र उतार दिये और बल्कल (पेड़ों की छाल के वस्त्र) पहन लिये। न उनके हृदय में विषाद था, न हर्ष।

मुख प्रसन्न मन रंग[1] न रोषू ❀ सब कर सब बिधि करि परितोषू
चले बिपिन सुनि सिय सँग लागी ❀ रहइ न राम चरन अनुरागी

उनका मुख प्रसन्न था; मन में न किसी पर अनुराग ही था, न क्रोध। वे सब तरह से सबको सन्तुष्ट करके बन को चले गये। यह सुनकर सीता भी उनके साथ लग गईं। राम के चरणों में अनुराग रखने वाली वह किसी तरह से न रही।

सुनतहि लखनु चले उठि साथा ❀ रहहिं न जतन किए रघुनाथा
तब रघुपति सबही सिरु नाई ❀ चले संग सिय अरु लघु भाई

सुनते ही लक्ष्मण भी उठकर साथ हो लिये। रघुनाथ ने उन्हें रोकने के बहुत-से यत्न किये, पर वे न रहे। तब रामचन्द्र सबको प्रणाम करके साथ में सीता और लक्ष्मण को लेकर बन को चले गये।

रामु लखनु सिय बनहिं सिधाए ❀ गइउँ न संग न प्रान पठाए
एहु सबु भा इन्ह आँखिन्ह आगें ❀ तउ न तजा तनु जीव अभागें

राम, लक्ष्मण और सीता वन को चले गये, पर मैं न साथ गई और न मैंने अपने प्राण ही उनके साथ भेजे। यह सब इन्हीं आँखों के सामने हुआ। तो भी अभागे जीव ने यह शरीर नहीं छोड़ा। [विशेषोक्ति अलंकार]

मोहि न लाज निज नेहु निहारी ❀ राम सरिस सुत मैं महतारी
जिअइ मरइ भल भूपति जाना ❀ मोर हृदय सत कुलिस समाना

अपने स्नेह की ओर देखकर मुझे लाज नहीं आती; आती है तो इस पर

---

१. अनुराग।

कि राम जैसे पुत्र की मैं माता हूँ। जीना और मरना तो राजा ने खूब जाना। मेरा हृदय तो सैंकड़ों वज्रों के समान कठोर है।

दो०— कौसल्या के बचन सुनि भरत सहित रनिवासु।
ब्याकुल बिलपत राजगृह मानहुँ सोक नेवासु।१६५।

कौशल्या के वचनों को सुनकर भरत-सहित सारा रनिवास व्याकुल होकर विलाप करने लगा। राजभवन मानो शोक का निवास बन गया।

बिलपहिं बिकल भरत दोउ भाई ❀ कौसल्या लिए हृदयँ लगाई
भाँति अनेक भरतु समुझाए ❀ कहि बिबेकमय बचन सुनाए

दोनों भाई (भरत और शत्रुघ्न) विकल होकर विलाप करने लगे। तब कौशल्या ने उनको हृदय से लगा लिया। अनेकों प्रकार से भरत को समझाया और बहुत-सी विवेक से भरी हुई बातें उन्हें सुनाईं।

भरतहु मातु सकल समुझाईं ❀ कहि पुरान स्रुति कथा सुहाईं
छल बिहीन सुचि सरल सुबानी ❀ बोले भरत जोरि जुग पानी[1]

भरत ने भी सब माताओं को पुराण और वेदों की सुन्दर कथायें कहकर समझाया। दोनों हाथ जोड़कर भरत छल-रहित, पवित्र और सीधी सुन्दर वाणी बोले–

जे अघ मातु पिता सुत मारें ❀ गाइ गोठ[2] महिसुर पुर जारें
जे अघ तिय बालक बध कीन्हें ❀ मीत महीपति माहुर[3] दीन्हें

जो पाप माता-पिता और पुत्र के मारने से होते हैं, जो गोशाला और ब्राह्मणों के नगर के जलाने से होते हैं, जो पाप स्त्री और बालक की हत्या करने से होते हैं, जो मित्र और राजा को विष देने से होते हैं,

जे पातक उपपातक अहहीं ❀ करम बचन मन भव[4] कबि कहहीं
ते पातक मोहि होहु बिधाता ❀ जौं एहु होइ मोर मत माता

कर्म, वचन और मन से होने वाले और जो-जो पातक और उपपातक (बड़े-छोटे पाप) कवि लोग कहते हैं, हे विधाता ! जो इस काम (राम-वनवास) में मेरी सम्मति हो, तो हे माता ! वे सब पाप मुझे लगें।

---

१. हाथ। २. गायों के बाँधने का स्थान। ३. जहर। ४. उत्पन्न।

दो०— जे परिहरि हरि हर चरन भजहिं भूतगन घोर ।
तेहि कइ गति मोहि देउ बिधि जौं जननी मत मोर ॥

जो लोग विष्णु भगवान् और शिवजी के चरणों को छोड़कर भयानक भूत-प्रेतों को भजते हैं, हे माता ! यदि इसमें मेरी सम्मति हो तो उनकी गति मुझे विधाता दें ।

बेंचहिं बेदु धरमु दुहि लेहीं ❀ पिसुन पराय पाप कहि देहीं
कपटी कुटिल कलहप्रिय क्रोधी ❀ बेद बिदूषक[1] बिस्व बिरोधी

जो लोग वेदों को बेचते हैं, जो धर्म को दुह लेते हैं, जो चुगलखोर हैं, दूसरों के पापों को कह देते हैं, जो कपटी, दुष्ट, झगड़ालू और क्रोधी हैं तथा वेदों की निन्दा करने वाले और विश्वभर के विरोधी हैं,

लोभी लंपट लोलुप चारा[2] ❀ जे ताकहिं पर धनु पर दारा
पावौं मैं तिन्ह कै गति घोरा ❀ जौं जननी एहु सम्मत मोरा

जो लोभी, लम्पट, लालची और धूर्त्त हैं, जो पराये धन और पराई स्त्री की ताक में रहते हैं, हे माता ! मैं इन सबकी भयानक गति को पाऊँ, जो इस काम में मेरा मत हो ।

जे नहिं साधु संग अनुरागे ❀ परमारथ पथ बिमुख अभागे
जे न भजहिं हरि नर तनु पाई ❀ जिन्हहिं न हरि हर सुजसु सोहाई

जिन्होंने कभी सत्संग में प्रेम नहीं किया, जो अभागे परमार्थ के मार्ग से विमुख हैं, जो मनुष्य-शरीर पाकर भगवान् को नहीं भजते, जिनको हरि-हर का सुयश नहीं सुहाता,

तजि श्रुति पंथु बाम पथ चलहीं ❀ बंचक बिरचि बेष जगु छलहीं
तिन्ह कै गति मोहि संकर देऊ ❀ जननी जौं एहु जानउँ भेऊ[3]

जो वेदमार्ग को छोड़कर वाममार्ग पर चलते हैं और जो ठग हैं और वेष बनाकर संसार को छलते हैं, हे माता ! मुझे शंकरजी उन लोगों की गति दें, यदि मैं इस भेद को जानता भी होऊँ ।

दो०— मातु भरत के बचन सुनि साँचे सरल सुभायँ ।
कहति राम प्रिय तात तुम्ह सदा बचन मन कायँ ॥

१. निन्दक । २. धूर्त्त । ३. भेद ।

माता कौशल्या भरत के स्वाभाविक ही सच्चे और सरल वचनों को सुनकर कहने लगीं—हे पुत्र ! तुम तो सदा ही मन, वचन और शरीर से रामचन्द्र के प्यारे हो।

राम प्रान तें प्रान तुम्हारे ❀ तुम्ह रघुपतिहिं प्रान तें प्यारे
बिधु बिष चवइ[1] स्रवइ[2] हिमु आगी ❀ होइ बारिचर बारि बिरागी

राम तुम्हें प्राणों से भी बढ़कर प्राण हैं और तुम भी राम को प्राणों से भी अधिक प्यारे हो। हे पुत्र ! चन्द्रमा चाहे विष चुआने लगे और पाला आग बरसाने लगे, जलचर जीव जल से विरक्त हो जाय,

भएँ ग्यान बरु मिटइ न मोहू ❀ तुम्ह रामहिं प्रतिकूल न होहू
मत तुम्हार एहु जो जग कहहीं ❀ सो सपनेहुँ सुख सुगति न लहहीं

और ज्ञान होने पर भी चाहे मोह न मिटे, पर तुम रामचन्द्र के प्रतिकूल कभी नहीं हो सकते। जगत् में जो कोई इस विषय में तुम्हारी सम्मति बतलाते हैं, वे स्वप्न में भी सुख और सद्गति नहीं पायेंगे। [विरोधाभास अलंकार]

अस कहि मातु भरतु हियँ लाए ❀ थन पय[3] स्रवहिं नयन जल छाए
करत बिलाप बहुत एहि भाँती ❀ बैठेहि बीति गई सब राती

माता कौशल्या ने ऐसा कहकर भरत को हृदय से लगा लिया। उनके स्तनों से दूध बहने लगा और आँखों में आँसू आगये। इस प्रकार बहुत-सा विलाप करते हुए सारी रात बैठे ही बैठे बीत गई।

बामदेउ बसिष्ठ तब आए ❀ सचिव महाजन सकल बोलाए
मुनि बहु भाँति भरत उपदेसे ❀ कहि परमारथ बचन सुदेसे

तब वामदेवजी और वशिष्ठजी आये। उन्होंने मन्त्रियों को और सब महाजनों को बुलवाया। मुनि वशिष्ठजी ने समयानुकूल बहुत तरह के परमार्थ के वचन कहकर उपदेश दिया।



तात हृदयँ धीरजु धरहु करहु जो अवसर आज।
उठे भरत गुर बचन सुनि करन कहेउ सबु साजु॥१६८

फिर वशिष्ठजी ने कहा—हे तात ! हृदय में धीरज धरो और आज जिस कार्य के करने का अवसर है, उसे करो। गुरुजी के वचन सुनकर भरत उठे और उन्होंने सब तैयारी करने की आज्ञा दी।

१. चुआये। २. बरसाये। ३. दूध।

नृप तनु बेद बिहित अन्हवावा ❀ परम बिचित्र बिमानु बनावा
गहि पग भरत मातु सब राखीं ❀ रहीं राम दरसन अभिलाषी

वेदोक्त विधि से राजा की देह को स्नान कराया गया। बहुत ही विचित्र विमान बनाया गया। भरत ने सब माताओं के पाँव पकड़कर उनको सती होने से रोक लिया। वे भी रामचन्द्रजी के दर्शनों की अभिलाषा से रह गईं।

चंदन अगर भार बहु आए ❀ अमित अनेक सुगंध सुहाए
सरजु तीर रचि चिता बनाई ❀ जनु सुरपुर सोपान[1] सुहाई

चन्दन और अगर के बहुत-से बोझ आये और बहुत-से अन्य सुगन्धित पदार्थ आये। सरयू के किनारे सुन्दर चिता रचकर बनाई गई, मानो स्वर्ग की सीढ़ी हो।

एहि बिधि दाह क्रिया सबु कीन्ही ❀ बिधिवत न्हाइ तिलांजुलि दीन्ही
सोधि सुमृति सब बेद पुराना ❀ कीन्ह भरत दसगात बिधाना[2]

भरत ने इस विधि से सब दाह-क्रिया की और स्नान करके सबने विधिपूर्वक तिलांजलि दी। फिर वेद, स्मृति और पुराण, सबका मत निश्चय करके भरत ने पिता का दशगात्र-विधान किया।

जहँ जस मुनिबर आयसु दीन्हा ❀ तहँ तस सहस भाँति सबु कीन्हा
भए बिसुद्ध दिए सब दाना ❀ धेनु बाजि गज बाहन नाना

मुनि श्रेष्ठ वशिष्ठजी ने जहाँ जैसी आज्ञा दी, वहाँ सब वैसा ही हज़ारों प्रकार से किया। शुद्ध हो जाने पर भरत ने सब दान दिये। गौयें, घोड़े, हाथी आदि अनेक प्रकार की सवारियाँ,

दो॰ सिंघासन भूषन बसन अन्न धरनि धन धाम।
दिए भरत लहि भूमिसुर भे परिपूरन काम॥१६९॥

सिंहासन, भूषण, वस्त्र, अन्न, पृथ्वी, धन, मकान, सब भरत ने दिये। भूदेव ब्राह्मण उन दानों को लेकर परिपूर्णकाम हो गये।

पितु हित[3] भरत कीन्हि जसि करनी ❀ सो मुख लाख जाइ नहिं बरनी
सुदिन सोधि मुनिबर तब आए ❀ सचिव महाजन सकल बोलाए

पिता के निमित्त भरत ने जैसी करनी की, वह लाख मुँह से भी वर्णन

१. सीढ़ी। २. दस दिनों के कार्य। ३. निमित्त।

नहीं की जा सकती। अच्छा दिन सोधकर मुनियों में श्रेष्ठ वशिष्ठजी आये और उन्होंने मन्त्रियों तथा सब महाजनों को बुलाया।

बैठे राजसभाँ सब जाई ❀ पठए बोलि भरत दोउ भाई
भरतु बसिष्ठ निकट बैठारे ❀ नीति धरम मय बचन उचारे

सब लोग राजसभा में जाकर बैठ गये। तब मुनि ने भरत और शत्रुघ्न दोनों भाइयों को बुलवाया। भरत को वशिष्ठजी ने अपने पास बैठा लिया और नीति तथा धर्म के वचन कहे।

प्रथम कथा सब मुनिबर बरनी ❀ कैकइ कुटिल कीन्हि जसि करनी
भूप धरम ब्रत सत्य सराहा ❀ जेहि तनु परिहरि प्रेम निबाहा

पहले तो मुनिवर ने वह सारी कथा कह सुनाई, जिस तरह कैकेयी ने कुटिल करनी की थी। फिर राजा के धर्म और सत्यव्रत की प्रशंसा की, जिन्होंने शरीर त्यागकर प्रेम को निबाहा।

कहत राम गुन सील सुभाऊ ❀ सजल नयन पुलकेउ मुनिराऊ
बहुरि लखन सिय प्रीति बखानी ❀ सोक सनेह मगन मुनि ग्यानी

रामचन्द्रजी के गुण, शील और स्वभाव का वर्णन करते-करते मुनिराज की आँखों में जल भर आया और वे पुलकायमान हो गये। फिर लक्ष्मण और सीता की प्रीति की बड़ाई करते हुये ज्ञानी वशिष्ठ मुनि शोक और स्नेह में मग्न हो गये।

दो०— सुनहु भरत भावी प्रबल बिलखि कहेउ मुनिनाथ।
हानि लाभु जीवनु मरनु जसु अपजसु बिधि हाथ॥

मुनिराज ने दुःखी होकर कहा—हे भरत! सुनो, भावी (होनहार) बड़ी बलवान् है। हानि, लाभ, जीना, मरना, यश और अपयश ये सब विधाता के हाथ हैं।

अस बिचारि केहि देइअ दोसू ❀ ब्यरथ काहि पर कीजिअ रोसू
तात बिचारु करहु मन माहीं ❀ सोच जोग दसरथ नृप नाहीं

ऐसा विचारकर किसको दोष दिया जाय और व्यर्थ किस पर क्रोध किया जाय। हे तात! मन में विचार करो तो राजा दशरथ सोच करने योग्य नहीं हैं।

सोचिअ बिप्र जो बेद बिहीना ❀ तजि निज धरमु बिषय लय लीना
सोचिअ नृपति जो नीति न जाना ❀ जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना

सोच तो उस ब्राह्मण का करना चाहिये, जो वेद नहीं जानता और जो अपने धर्म को छोड़कर विषय-भोग में लीन रहता है। उस राजा का सोच करना चाहिये, जो नीति नहीं जानता और जिसे प्रजा प्राण के समान प्यारी नहीं हैं।

सोचिअ बयस कृपन धनवानू ❀ जो न अतिथि सिव भगति सुजानू
सोचिअ सूद्र बिप्र अवमानी ❀ मुखरु[1] मानप्रिय ग्यान गुमानी

उस वैश्य का सोच करना चाहिये, जो धनवान होकर भी कंजूस है, और जो अतिथि तथा शिवजी की भक्ति में कुशल नहीं है। उस शूद्र का सोच करना चाहिये, जो ब्राह्मणों का अपमान करता है, बहुत बोलने वाला है, प्रतिष्ठा चाहता है और ज्ञान का अभिमानी है।

सोचिअ पुनि पति बंचक नारी ❀ कुटिल कलहप्रिय इच्छाचारी
सोचिअ बटु निज ब्रतु परिहरई ❀ जो नहिं गुर आयसु अनुसरई

फिर उस स्त्री का सोच करना चाहिये, जो पति से छल करती है, कुटिल है, लड़ाकू है, और स्वेच्छाचारिणी है। उस ब्रह्मचारी का सोच करना चाहिये, जो अपने ब्रह्मचर्य व्रत को छोड़ देता है और गुरु की आज्ञा के अनुसार नहीं चलता है।

दो० सोचिअ गृही जो मोह बस करइ करम पथ त्याग।
सोचिअ जती प्रपंच रत बिगत बिबेक बिराग॥१७१

उस गृहस्थ का सोच करना चाहिये, जो मोह के वश होकर कर्म-मार्ग का त्याग कर देता है। उस संन्यासी का सोच करना चाहिये, जो संसार के झगड़ों में फँसा है और ज्ञान-वैराग्य रहित है।

बैखानस[2] सोइ सोचन जोगू ❀ तप बिहाइ जेहि भावइ भोगू
सोचिय पिसुन अकारन क्रोधी ❀ जननि जनक गुर बन्धु बिरोधी

वह वानप्रस्थ सोचने योग्य है, जिसको तपस्या छोड़कर भोग अच्छे लगते हैं। सोच उसका करना चाहिये, जो चुगलखोर है, बिना कारण क्रोध करने वाला है, माता, पिता, गुरु और भाई-बन्दों के साथ विरोध रखने वाला है।

---

१. बकवादी। २. वानप्रस्थ।

सब बिधि सोचिय पर अपकारी ❀ निज तनु पोषक निरदय भारी
सोचनीय सबहीं बिधि सोई ❀ जो न छाँड़ि छल हरि जन होई

उस मनुष्य का सब तरह से सोच करना चाहिये, जो दूसरों का अनिष्ट करता है और अपने ही शरीर का पोषण करता है तथा बड़ा भारी निर्दयी है। वह मनुष्य सब तरह से सोच करने के योग्य है जो छल छोड़कर भगवद्भक्त नहीं होता।

सोचनीय नहिं कोसलराऊ ❀ भुवन चारि दस प्रगट प्रभाऊ
भयउ न अहइ न अब होनिहारा ❀ भूप भरत जस पिता तुम्हारा
बिधि हरि हरु सुरपति दिसिनाथा ❀ बरनहिं सब दसरथ गुन गाथा

कोशलराज (दशरथजी) सोच करने योग्य नहीं हैं, जिनका प्रभाव चौदहों लोकों में प्रकट है। हे भरत! तुम्हारे पिता जैसा राजा न तो कोई हुआ, न है, और न होगा। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र और दिक्पाल, सभी दशरथजी के गुणों की कथायें कहा करते हैं।

दो० कहहु तात केहि भाँति कोउ करिहि बड़ाई तासु।
राम लखन तुम सत्रुहन सरिस सुअन सुचि जासु॥

हे तात! कहो, उनकी बड़ाई कोई किस प्रकार कर सकेगा, जिनके राम, लक्ष्मण, तुम और शत्रुघ्न जैसे पवित्र पुत्र हैं।

सब प्रकार भूपति बड़भागी ❀ बादि बिषादु करिअ तेहि लागी
एह सुनि समुझि सोचु परिहरहू ❀ सिर धरि राज रजायसु करहू

राजा सब प्रकार से बड़भागी थे। उनके लिए विषाद करना व्यर्थ है। यह सुन और समझकर सोच छोड़ दो और राजा की आज्ञा सिर चढ़ाकर उसका पालन करो।

राय राजपदु तुम्ह कहुँ दीन्हा ❀ पिता बचन फुर[1] चाहिअ कीन्हा
तजे रामु जेहिं बचनहिं लागी ❀ तनु परिहरेउ राम बिरहागी

राजा ने राजपद तुमको दिया है। पिता का वचन तुम्हें सत्य करना चाहिये। जिस वचन के लिए राजा ने रामचन्द्र को त्याग दिया और रामचन्द्र के वियोग की अग्नि में अपने शरीर की आहुति दे दी।

---

१. सत्य।

नृपहि बचन प्रिय नहिं प्रिय प्राना ❀ करहु तात पितु बचन प्रवाना[1]
करहु सीस धरि भूप रजाई ❀ हइ तुम्ह कहँ सब भाँति भलाई

राजा को वचन प्यारे थे, प्राण नहीं। इसलिए हे तात! पिता के वचनों को सत्य करो। राजा की आज्ञा सिर चढ़ाकर पालन करो। इसमें तुम्हारी सब तरह भलाई है।

परसुराम पितु अग्याँ राखी ❀ मारी मातु लोग सब साखी
तनय जजातिहि जौबनु दयऊ ❀ पितु अग्याँ अघ अजस न भयऊ

परशुराम ने पिता की आज्ञा रक्खी और माता को मार डाला। सब लोग इस बात के साक्षी हैं। राजा ययाति के पुत्र ने पिता को अपनी जवानी दे दी। पिता की आज्ञा पालन करने से उन्हें न पाप लगा, न अपयश हुआ।

दो॰ अनुचित उचित बिचार तजि जे पालहिं पितु बैन।
ते भाजन सुख सुजस के बसहिं अमरपति ऐन॥

अनुचित और उचित का विचार छोड़कर जो पिता के वचनों का पालन करते हैं, वे सुख और सुयश के पात्र होकर अंत में इन्द्रपुर (स्वर्ग) में निवास करते हैं।

अवसि नरेस बचन फुर करहू ❀ पालहु प्रजा सोकु परिहरहू
सुरपुर नृप पाइहि परितोषू ❀ तुम्ह कहुँ सुकृतु सुजसु नहिं दोषू

तुम राजा के वचन को अवश्य सत्य करो। प्रजा का पालन करो और शोक दूर करो। ऐसा करने से स्वर्ग में राज संतोष पायेंगे और तुमको पुण्य तथा यश मिलेगा। दोष नहीं लगेगा।

बेद बिदित सम्मत सबही का ❀ जेहि पितु देइ सो पावइ टीका
करहु राज परिहरहु गलानी ❀ मानहु मोर बचन हित जानी

वेद में प्रसिद्ध है और सब स्मृति-पुराण आदि का भी मत है कि जिसको पिता दे, वही राजतिलक पाता है। इसलिए तुम राज्य करो, ग्लानि का त्याग करो। मेरे वचन को हित समझकर मान लो।

सुनि सुखु लहब राम बैदेही ❀ अनुचित कहब न पंडित केही
कौसल्यादि सकल महतारीं ❀ तेउ प्रजा सुख होहिं सुखारीं

---

१. प्रमाण, सत्य।

इस बात को सुनकर रामचन्द्र और जानकी सुख पायेंगे और कोई पण्डित अनुचित नहीं कहेगा। कौशल्या आदि तुम्हारी सब माताएँ भी प्रजा के सुख से सुखी होंगी।

मरम तुम्हार राम कर जानिहि ❀ सो सब बिधि तुम्ह सन भल मानिहि
सौंपेहु राजु राम के आयें ❀ सेवा करेहु सनेह सुहायें

जो तुम्हारे और रामचन्द्र के मर्म को जान लेगा, वह सभी तरह से तुम से भला मानेगा। रामचन्द्र के आजाने पर राज उनको सौंप देना और सुन्दर स्नेह से उनकी सेवा करना।



कीजिअ गुर आयसु अवसि कहहिं सचिव कर जोरि।
रघुपति आयें उचित जस तस तब करब बहोरि[1]॥

मन्त्री हाथ जोड़कर कहते हैं—अवश्य ही गुरुजी की आज्ञा का पालन कीजिये। रामचन्द्रजी के लौट आने पर जैसा उचित हो, तब फिर वैसा कीजियेगा।

कौसल्या धरि धीरजु कहई ❀ पूत पथ्य गुर आयसु अहई
सो आदरिअ करिअ हित मानी ❀ तजिअ बिषादु काल गति जानी

कौशल्या धीरज धरकर कह रही हैं—हे पुत्र! गुरुजी की आज्ञा पथ्यरूप है, उसका आदर करना चाहिये और हित मानकर उसका पालन करना चाहिये। काल की गति को जानकर विषाद का त्याग कर देना चाहिये।

बन रघुपति सुरपुर नरनाहू ❀ तुम्ह एहि भाँति तात कदराहू
परिजन प्रजा सचिव सब अंबा ❀ तुम्हही सुत सब कहँ अवलंबा

हे पुत्र! रामचन्द्र तो वन में हैं, महाराज स्वर्ग में हैं और तुम इस तरह कातर हो रहे हो। हे पुत्र! (अब तो) कुटुम्ब, प्रजा, मन्त्री और सब माताओं के एक तुम ही सहारे हो।

लखि बिधि बाम काल कठिनाई ❀ धीरज धरहु मातु बलि जाई
सिर धरि गुर आयसु अनुसरहू ❀ प्रजा पालि परिजन दुख हरहू

विधाता को प्रतिकूल और काल को कठोर देखकर तुम धीरज धरो। माता तुम्हारी बलि जाती है। गुरु की आज्ञा को सिर चढ़ाकर उसी के अनुसार

---

१. फिर।

चलो और प्रजा का पालन कर कुटुम्बियों के दुःख दूर करो।

गुर के बचन सचिव अभिनन्दनु[1] ❀ सुने भरत हिय हित जनु चंदनु
सुनी बहोरि मातु मृदु बानी ❀ सील सनेह सरल रस सानी

भरत ने गुरु के वचन और मन्त्रियों के अनुमोदन को सुना, जो उनके हृदय के लिए मानो चन्दन के समान शीतल था। फिर शील, स्नेह और सरलता के रस में सनी हुई माता की कोमल वाणी सुनी।

छंद–सानी सरल रस मातु बानी सुनि भरत ब्याकुल भए।
लोचन सरोरुह स्रवत सींचत बिरह उर अंकुर नये॥
सो दसा देखत समय तेहि बिसरी सबहि सुधि देह की।
तुलसी सराहत सकल सादर सींव[2] सहज सनेह की॥

सरलता के रस में सनी हुई माता की वाणी सुनकर भरत व्याकुल हो उठे। उनके नेत्र-कमल जल बहाकर उनके हृदय के विरहरूपी नवीन अंकुर सींचने लगे। उनकी वह दशा देखकर सबको अपने शरीर की सुध भूल गई। तुलसीदासजी कहते हैं—उस स्वाभाविक स्नेह की सीमा भरत की सब लोग बड़े आदर से सराहना करते हैं।

सो॰ भरत कमल कर जोरि धीर धुरंधर धीर धरि।
बचन अमिअँ जनु बोरि देत उचित उत्तर सबहिं॥

धैर्य की धुरी को धारण करने वाले भरत धीरज धारणकर, कमल के समान हाथों को जोड़कर, वचनों को मानो अमृत में डुबाकर सबको उचित उत्तर देने लगे।

मोहि उपदेस दीन्ह गुर नीका ❀ प्रजा सचिव संमत सबही का
मातु उचित धरि आयसु दीन्हा ❀ अवसि सीस धरि चाहउँ कीन्हा

गुरुजी ने मुझे सुन्दर उपदेश दिया। प्रजा, मन्त्री आदि सबकी भी राय है। माता ने भी उचित समझकर ही आज्ञा दी है और उसे सिर पर चढ़ाकर मैं अवश्य ही वैसा करना चाहता हूँ।

---

१. अनुमोदन, ताईद। २. सीमा।

गुर पितु मातु स्वामि हित बानी ❀ सुनि मन मुदित करिअ भलि जानी
उचित कि अनुचित किएँ बिचारू ❀ धरमु जाइ सिर पातक भारू

गुरु, पिता, माता, स्वामी और मित्र की वाणी सुनकर, मन में प्रसन्न होकर, उसे अच्छी समझकर करना चाहिये। उचित-अनुचित का विचार करने से धर्म जाता है और सिर पर पाप का भार चढ़ता है।

तुम्ह तौ देहु सरल सिख सोई ❀ जो आचरत[1] मोर भल होई
जद्यपि एह समुझत हउँ नीकें ❀ तदपि होत परितोषु न जी कें

आप तो मुझे वही सीधी सीख देते हो, जिसके आचरण करने में मेरा भला हो। यद्यपि मैं इस बात को भलीभाँति समझता हूँ, तो भी मेरे जी को सन्तोष नहीं होता।

अब तुम्ह बिनय मोरि सुनि लेहू ❀ मोहि अनुहरत[2] सिखावन देहू
उत्तर देउँ छमब अपराधू ❀ दुखित दोष गुन गनहिं न साधू

अब आप लोग मेरी विनती भी सुन लें; फिर मेरी योग्यता के अनुसार मुझे उचित शिक्षा दें। मैं उत्तर दे रहा हूँ, मेरे इस अपराध को क्षमा कीजियेगा। सज्जन लोग दुःखी मनुष्य के दोषों और गुणों को नहीं गिनते।

दो॰ पितु सुरपुर सिय रामु बन करन कहहु मोहि राजु।
एहि तें जानहु मोर हित कै आपन बड़ काजु।१७६।

पिताजी तो स्वर्ग में हैं; सीताराम वन में हैं, और मुझे आप राज्य करने के लिए कह रहे हैं। इसमें आप मेरा कल्याण समझते हैं, या आपका कोई बड़ा कार्य सिद्ध होगा?

हित हमार सियपति सेवकाई ❀ सो हरि लीन्हि मातु कुटिलाई
मैं अनुमानि दीख मन माहीं ❀ आन उपायँ मोर हित नाहीं

मेरा कल्याण तो सीतापति राम की सेवा में है, उसे माता कैकेयी की कुटिलता ने छीन लिया। मैंने अपने मन में अनुमान करके देख लिया है कि और किसी उपाय से मेरा कल्याण नहीं है।

सोक समाजु राज केहि लेखें ❀ लखन राम सिय पद बिनु देखें
बादि बसन बिनु भूषन भारू ❀ बादि बिरति बिनु ब्रह्म बिचारू

१. करने में। २. योग्यता के अनुसार।

लक्ष्मण, रामचन्द्रजी और सीता के चरणों को देखे बिना यह राज्य किस गिनती में है? यह तो शोक का समुदाय है। जैसे कपड़ों के बिना गहनों का बोझ व्यर्थ है। वैराग्य के बिना ब्रह्म-विचार व्यर्थ है।

सरुज[1] सरीर बादि बहु भोगा ❀ बिनु हरि भगति जायँ[2] जप जोगा
जाय जीव बिनु देह सुहाई ❀ बादि मोर सबु बिनु रघुराई

रोगी शरीर के लिये नाना प्रकार के भोग व्यर्थ हैं। भगवद्भक्ति के बिना जप और योग व्यर्थ हैं। जीव के बिना सुन्दर देह व्यर्थ है। इसी तरह रामचन्द्रजी के बिना मेरा सब कुछ व्यर्थ है। [विनोक्ति अलंकार]

जाउँ राम पहिं आयसु देहू ❀ एकहि आँक[3] मोर हित एहू
मोहि नृप करि भल आपन चहहू ❀ सोउ सनेह जड़ता बस कहहू

मुझे आज्ञा दीजिये, मैं रामचन्द्रजी के पास जाऊँ। यही एक बात (अंक) मेरे हित की है। मुझे राजा बनाकर आप जो अपना भला चाहते हैं, यह भी आप स्नेह की जड़ता (मोह) के वश होकर ही कह रहे हैं।

दो॰ कैकेइ सुअन कुटिल मति राम बिमुख गतलाज।
तुम्ह चाहत सुखु मोह बस मोहि से अधम के राज॥

मैं कैकेयी का पुत्र हूँ, मेरी बुद्धि कुटिल है, मैं रामचन्द्र से विमुख और निर्लज्ज हूँ। आप लोग केवल मोहवश मेरे जैसे पापी के राज्य में सुख चाहते हैं।

कहउँ साँचु सब सुनि पतिआहू ❀ चाहिअ धरमसील नरनाहू
मोहि राज हठि देइहहु जबहीं ❀ रसा[4] रसातल जाइहि तबहीं

मैं सत्य कहता हूँ, आप सब सुनकर विश्वास करें, धर्मशील ही को राजा होना चाहिये। आप हठ करके मुझे ज्यों ही राज्य देंगे, त्यों ही पृथ्वी पाताल को चली जायगी।

मोहि समान को पाप निवासू ❀ जेहि लगि सीय राम बनबासू
रायँ राम कहुँ काननु दीन्हा ❀ बिछुरत गमन अमरपुर कीन्हा

मेरे समान पापों का घर और कौन होगा? जिसके लिए सीता-रामका बनवास हुआ है। राजा ने रामचन्द्रजी को वन दिया और उनके बिछुड़ते ही उन्होंने स्वर्ग-यात्रा की।

---

१. रोग-सहित। २. व्यर्थ। ३. अंक, दृढ़ निश्चय। ४. पृथ्वी।

मैं सठु सब अनरथ कर हेतू ❀ बैठ बात सब सुनउँ सचेतू[1]
बिनु रघुबीर बिलोकि अबासू[2] ❀ रहे प्रान सहि जग उपहासू

और मैं दुष्ट जो सब अनर्थों का कारण हूँ, सावधानी के साथ बैठा हुआ सब बातें सुन रहा हूँ। रामचन्द्रजी से रहित घर को देखकर और जगत् की हँसी सहकर भी ये प्राण बने हुये हैं।

राम पुनीत बिषय रस रूखे ❀ लोलुप[3] भूमि भोग के भूखे
कहँ लगि कहउँ हृदय कठिनाई ❀ निदरि कुलिसु जेहिं लही बड़ाई

मेरे प्राण रामचन्द्ररूपी विषय के रस से रूखे हैं; लालची हैं, पृथ्वी का राज्य भोगने के भूखे हैं। मैं अपने हृदय की कठोरता कहाँ तक कहूँ ? इसने वज्र का भी तिरस्कार कर बड़ाई पाई है।

दो० कारन तें कारजु कठिन होइ दोसु नहिं मोर।
कुलिस अस्थि[4] तें उपल[5] तें लोह कराल कठोर॥

कारण से कार्य कठिन होता ही है, इसमें मेरा कुछ दोष नहीं है। हड्डी से वज्र और पत्थर से लोहा ज्यादा भयानक और कठोर होता है [अर्थान्तरन्यास अलङ्कार]

कैकेई भव तनु अनुरागे ❀ पाँवर प्रान अघाइ अभागे
जौं प्रिय बिरहँ प्रान प्रिय लागे ❀ देखब सुनब बहुत अब आगे

कैकेयी से उत्पन्न देह से प्रेम करने वाले ये नीच प्राण भरपेट अभागे हैं। जो प्रिय (रामचन्द्र) के वियोग में भी प्राण मुझे प्रिय लग रहे हैं, तो आगे मैं अभी और भी बहुत कुछ देखूँगा और सुनूँगा।

लखन राम सिय कहुँ बनु दीन्हा ❀ पठइ अमरपुर पति हित कीन्हा
लीन्ह बिधवपन अपजसु आपू ❀ दीन्हेउ प्रजहिं सोक संतापू

कैकेयी ने लक्ष्मण, राम और सीता को तो वन दिया, पति को स्वर्ग भेजकर उनका कल्याण किया। स्वयं विधवापन और अपयश लिया; प्रजा को शोक और संताप दिया।

मोहि दीन्ह सुखु सुजसु सुराजू ❀ कीन्ह कैकेईं सब कर काजू
एहि तें मोर काह अब नीका ❀ तेहि पर देन कहहु तुम्ह टीका

१. सावधानी के साथ। २. घर। ३. लालची। ४. हड्डी। ५. पत्थर।

और मुझे सुख, सुन्दर यश और उत्तम राज्य दिया। कैकेयी ने सभी का तो काम बना दिया। इससे अच्छा अब मेरे लिए और क्या होता? इतने पर भी आप लोग मुझे राजतिलक देने को कह रहे हैं।

कैकइ जठर[1] जनमि जग माहीं ❀ एह मोहि कहँ कछु अनुचित नाहीं
मोरि बात सब बिधिहिं बनाई ❀ प्रजा पाँच कत करहु सहाई

संसार में कैकेयी के पेट से जन्म लेने पर यह मेरे लिए कुछ भी अनुचित नहीं है। मेरी सब बात तो विधाता ही ने बना दी है; फिर उसमें प्रजा और पंच क्यों सहायता कर रहे हैं?

दो० ग्रह ग्रहीत पुनि बात बस तेहि पुनि बीछी मार।
ताहि पिआइअ बारुनी कहहु काह उपचार[2] ॥१७९

जो ग्रह से ग्रसित हो, वातरोग से पीड़ित हो, और फिर उसी को बीछू डंक मार दे; इस पर भी उसको मदिरा पिला दी जाय, तो उसका क्या इलाज है?
[द्वितीय समुच्चय अलंकार]

कैकइ सुअन[3] जोग जग जोई ❀ चतुर बिरंचि दीन्ह मोहि सोई
दसरथ तनय राम लघु भाई ❀ दीन्हि मोहि बिधि बादि बड़ाई

कैकेयी के पुत्र के लिए जगत् में जो-कुछ योग्य था, चतुर विधाता ने मुझे वही दिया है। पर दशरथजी के पुत्र और राम के छोटे भाई होने की बड़ाई विधाता ने मुझे व्यर्थ ही दी।

तुम्ह सब कहहु कढ़ावन टीका ❀ राय रजायसु सब कहँ नीका
उतरु देउँ केहि बिधि केहि केही ❀ कहहु सुखेन[4] जथा रुचि जेही

आप सब लोग भी मुझे टीका कढ़ाने के लिये कह रहे हैं। राजा की आज्ञा है सबको यह अच्छी भी लगती है। मैं किस-किसको किस-किस तरह उत्तर दूं? जिसकी जैसी रुचि हो, वह वैसा खुशी से कहे।

मोहि कुमातु समेत बिहाई ❀ कहहु कहिहि के[5] कीन्ह भलाई
मो बिनु को सचराचर माहीं ❀ जेहि सिय रामु प्रानप्रिय नाहीं

मेरी कुमाता (कैकेयी) समेत मुझे छोड़कर कहो और कौन कहेगा कि यह अच्छा किया गया है? जड़-चेतन संसार में मेरे सिवा और कौन है, जिसे सीताराम प्राणों के समान प्रिय न हों?

१. पेट, गर्भ। २. इलाज। ३. पुत्र। ४. सुख से। ५. कौन।

परम हानि सब कहँ बड़ लाहू ❀ अदिन मोर नहिं दूषन काहू
संसय सील प्रेम बस अहहू ❀ सबुइ उचित सब जो कछु कहहू

जो परम हानि है, उसी में सबको बड़ा लाभ दीख रहा है। मेरे दिन बुरे हैं, किसी का दोष नहीं। आप सब लोग संशयशील और प्रेम के वश में हैं, इसलिये जो-कुछ कहें, वह सब उचित ही है।

दो०—राम मातु सुठि सरल चित मो पर प्रेमु बिसेषि।
कहइ सुभाय सनेह बस मोरि दीनता देखि।१८०।

रामचन्द्रजी की माता सुन्दर सीधे स्वभाव वाली हैं और मुझ पर उनका प्रेम भी अधिक है। इसलिये वे मेरी दीनता देखकर स्वभाव और स्नेह के वश होकर ही ऐसा कह रही हैं।

गुर बिबेक सागर जगु जाना ❀ जिन्हहिं बिस्व कर बदर समाना
मो कहुँ तिलक साज सज सोऊ ❀ भएँ बिधि बिमुख बिमुख सबु कोऊ

संसार जानता है कि गुरु महाराज ज्ञान के समुद्र हैं; जिनके लिये विश्व हथेली पर रखे हुए बेर के समान है, वे भी मेरे लिए राजतिलक की तैयारी कर रहे हैं। विधाता के प्रतिकूल होने पर सभी प्रतिकूल हो जाते हैं। [गूढ़ोक्ति अलंकार]

परिहरि रामु सीय जग माहीं ❀ कोउ न कहिहि मोर मत नाहीं
सो मैं सुनब सहब सुखु मानी ❀ अंतहु कीच तहाँ जहँ पानी

रामचन्द्रजी और सीता को छोड़कर जगत् में और कोई नहीं है, जो यह कह दे कि इसमें मेरी (भरत की) सम्पति नहीं है। मैं उसे सुख मानकर सुनूँगा और सहूँगा। क्योंकि जहाँ पानी होता है, वहाँ अन्त में कीचड़ होता ही है।

डरु न मोहि जग कहिहि कि पोचू ❀ परलोकहु कर नाहिं न सोचू
एकइ उर बस दुसह दवारी[1] ❀ मोहि लगि भे सिय रामु दुखारी

संसार मुझे बुरा कहे, इसका मुझे डर नहीं। परलोक का भी कुछ सोच नहीं है। मेरे हृदय में तो एक ही न सहने योग्य दावानल भभक रहा है कि मेरे कारण सीताराम दुःखी हुए।

जीवन लाहु लखन भल पावा ❀ सबु तजि राम चरन मनु लावा
मोर जनम रघुबर बन लागी ❀ झूठ काह पछिताउँ अभागी

१. दावाग्नि।

जीवन का उत्तम लाभ तो लक्ष्मण ने पाया, जिन्होंने सब कुछ तजकर रामचन्द्रजीके चरणों में मन लगाया। मेरा जन्म तो रामचन्द्रजी के वनवास के लिए ही हुआ है; मैं अभागा झूठ-मूठ क्या पछताऊँ ?

दो॰ आपनि दारुन दीनता कहउँ सबहिं सिरु नाइ।
देखें बिनु रघुनाथ पद जिय कै जरनि न जाइ।१८१।

मैं सबको सिर नवाकर अपनी कठिन दीनता कहता हूँ। श्री रघुनाथजी के चरणों के दर्शन किये बिना मेरे जी की जलन न जायगी।

आन उपाउ मोहि नहिं सूझा ❁ को जिय कै रघुबर बिनु बूझा
एकहि आँक इहइ मन माहीं ❁ प्रातकाल चलिहउँ प्रभु पाहीं

मुझे दूसरा कोई उपाय नहीं सूझता। राम के बिना मेरे जी की बात कौन जान सकता है ? मेरे मन में अब एक यही निश्चय है कि सवेरे ही मैं स्वामी (राम) के पास चल दूँगा।

जद्यपि मैं अनभल अपराधी ❁ भइ मोहि कारन सकल उपाधी[1]
तदपि सरन सनमुख मोहि देखी ❁ छमि सब करिहहिं कृपा बिसेषी

यद्यपि मैं बुरा हूँ, अपराधी हूँ, मेरे ही कारण यह सब उपद्रव हुआ है, तो भी राम मुझे शरण में सन्मुख आया हुआ देखकर सब अपराध क्षमा करके मुझ पर विशेष कृपा करेंगे।

सील सकुच सुठि सरल सुभाऊ ❁ कृपा सनेह सदन रघुराऊ
अरिहु क अनभल कीन्ह न रामा ❁ मैं सिसु सेवक जद्यपि बामा

राम शील, संकोच, अत्यंत सरल स्वभाव, कृपा और स्नेह के घर हैं। राम ने कभी शत्रु का भी अनिष्ट नहीं किया। मैं यद्यपि विपक्षी माना जा रहा हूँ, पर हूँ तो उनका बालक और सेवक ही।

तुम्ह पै पाँच मोर भल मानी ❁ आयसु आसिष देहु सुबानी
जेहिं सुनि बिनय मोहि जनु[2] जानी ❁ आवहिं बहुरि रामु रजधानी

आप पंच लोग भी इसमें मेरा कल्याण मानकर सुन्दर वाणी से आज्ञा और आशीर्वाद दीजिये, जिससे मेरी विनती सुनकर, मुझे अपना दास जानकर, रामचन्द्रजी राजधानी को लौट आएँ।

---

१. उपद्रव। २. दास।

दो॰ जद्यपि जनम कुमातु तें मैं सठु सदा सदोस।
आपन जानि न त्यागिहहिं मोहि रघुबीर भरोस।१८२

यद्यपि कुमाता से मेरा जन्म हुआ है और मैं दुष्ट और सदा दोषों से भरा हुआ हूँ। तो भी मुझे राम का भरोसा है कि वे मुझे अपना जानकर त्यागेंगे नहीं।

भरत बचन सब कहँ प्रिय लागे ❀ राम सनेह सुधाँ जनु पागे
लोग बियोग बिषम बिष दागे ❀ मंत्र सबीज[1] सुनत जनु जागे

भरत के वचन सबको प्यारे लगे, मानो राम के स्नेहरूपी अमृत में पगे हुये थे। लोग राम-वियोगरूपी भीषण विष से जले हुये थे। वे मानो बीज-सहित (सिद्ध) मंत्र को सुनते ही जाग उठे।

मातु सचिव गुर पुर नर नारी ❀ सकल सनेहँ बिकल भए भारी
भरतहिं कहहिं सराहि सराही ❀ राम प्रेम मूरति तनु आही

मातायें, मन्त्री, गुरु, नगर के स्त्री-पुरुष सब स्नेह के कारण बड़े ही विह्वल हो गये। सब लोग भरत को सराह-सराहकर कहने लगे कि भरत राम के प्रेम की साक्षात् मूर्त्ति ही हैं।

तात भरत अस काहें न कहहू ❀ प्रान समान राम प्रिय अहहू
जो पावँरु अपनी जड़ताईं ❀ तुम्हहिं सुगाइ मातु कुटिलाईं

(वे कहने लगे—) हे तात भरत! आप ऐसा क्यों न कहें। आप राम को प्राणों के समान प्यारे हैं। जो नीच अपनी मूर्खता से माता कैकेयी की कुटिलता के लिये आप पर सन्देह करे,

सो सठ कोटिक पुरुष[2] समेता ❀ बसहिं कलप सत नरक निकेता
अहि अघ अवगुन नहिं मनि गहई ❀ हरइ गरल[3] दुख दारिद दहई

वह दुष्ट करोड़ों पुरखों सहित सौ कल्प पर्यन्त नरक के घर में वास करेगा। साँप के पाप और अवगुण को उसकी मणि नहीं ग्रहण करती बल्कि वह उसके विष को हर लेती है और दुःख तथा दरिद्रता को भस्म कर देती है। [अतद्गुण अलंकार]

---

१. तांत्रिकों के मतानुसार एक प्रकार के मंत्र जो बड़े मन्त्रों के मूलतत्व माने जाते हैं, वे बीजमन्त्र कहलाते हैं। २. पुरखा। ३. विष।

दो०- अवसि चलिअ बन रामु जहँ भरत मंत्रु[1] भल कीन्ह।
सोक सिंधु बूड़त सबहि तुम्ह अवलंबनु[2] दीन्ह ॥१८३

हे भरत ! आपने बड़ी अच्छी सलाह विचारी, वन को अवश्य चलिये, जहाँ राम हैं। शोक-समुद्र में डूबते हुये सब लोगों को आपने बड़ा सहारा दिया है।

भा सब कें मन मोदु न थोरा ❀ जनु घन धुनि सुनि चातक मोरा
चलत प्रात लखि निरनउ[3] नीके ❀ भरत प्रानप्रिय भे सबही के

सबके मन में बड़ा भारी आनन्द हुआ, जैसे मेघों की गर्जना सुनकर पपीहा और मोरों को होता है। दूसरे दिन सवेरे ही चलने का सुन्दर निर्णय देखकर भरत सभी के प्राणप्रिय हो गये।

मुनिहि बंदि भरतहि सिरु नाई ❀ चले सकल घर बिदा कराई
धन्य भरत जीवनु जग माहीं ❀ सील सनेह सराहत जाहीं

मुनि (वसिष्ठजी) की वंदना करके और भरत को सिर नवाकर सब लोग विदा माँगकर अपने-अपने घर को चले। जगत में भरत का जीवन धन्य है, इस तरह वे उनके शील और स्नेह की बड़ाई करते जाते हैं।

कहहिं परसपर भा बड़ काजू ❀ सकल चलइ कर साजहिं साजू
जेहि राखहिं रहु घर रखवारी ❀ सो जानइ जनु गरदनि मारी
कोउ कह रहन कहिअ नहिं काहू ❀ को न चहइ जग जीवन लाहू

सब आपस में कहते हैं—यह तो बड़ा अच्छा काम बना। सभी चलने की तैयारी करने लगे। जो किसी को घर की रखवाली के लिये घर रहने को रखते हैं वह समझता कि मेरी गर्दन मार दी गई। कोई-कोई कहते हैं—भाई ! किसी को भी रहने के लिये मत कहो। संसार में जीवन का लाभ कौन नहीं चाहता ?

दो०- जरउ सो संपति सदन सुखु सुहृद मातु पितु भाइ।
सनमुख होत जो राम पद करइ न सहस[4] सहाइ।१८४

वह सम्पत्ति, घर, सुख, मित्र, माता, पिता, भाई सब जल जायँ, जो

१. सलाह। २. सहारा। ३. निर्णय। ४. सहर्ष, खुशी से।

राम के चरणों के सम्मुख होने में सहर्ष सहायता न करें। [तिरस्कार अलंकार]

घर घर साजहिं बाहन नाना ❀ हरषु हृदयँ परभात[1] पयाना[2]
भरत जाइ घर कीन्ह बिचारू ❀ नगरु बाजि गज भवन भँडारू

सब लोग घर-घर अनेकों प्रकार की सवारियाँ सजा रहे हैं। सब के हृदय में आनन्द है कि सवेरे चलना है। भरत ने घर में जाकर विचार किया कि नगर, घोड़े, हाथी, महल, खजाना,

संपति सब रघुपति कै आही ❀ जौं बिनु जतन चलौं तजि ताही
तौ परिनाम न मोरि भलाई ❀ पाप सिरोमनि साइँ दोहाई[3]

और सब सम्पत्ति रामचन्द्रजी की है, उसकी रक्षा का प्रबन्ध किये बिना ऐसी ही छोड़कर चल दूँ, तो अन्त में मेरी भलाई नहीं है। स्वामी से द्रोह करना सब से बड़ा पाप है।

करइ स्वामि हित सेवकु सोई ❀ दूखन कोटि देइ किन कोई
अस बिचारि सुचि सेवक बोले ❀ जे सपनेहुँ निज धरम न डोले

सेवक वही है, जो स्वामी का हित करे, कोई करोड़ों दोष क्यों न दे। भरत ने ऐसा विचारकर ऐसे सेवकों को बुलाया, जो स्वप्न में भी अपने धर्म से विचलित नहीं हुये थे।

कहि सबु मरमु धरमु भल भाषा ❀ जो जेहि लायक सो तेहि राखा
करि सब जतन राखि रखवारे ❀ राम मातु पहिं भरत सिधारे

भरत ने उनको सब मर्म की बातें कहकर धर्म का उत्तम उपदेश दिया और जो जिस योग्य था, उसे उसी काम पर रख दिया। सब प्रबन्ध करके, पहरेदार रखकर, भरत राम की माता के पास आये।

दो०—आरत जननी जानि सब भरत सनेह सुजान।
कहेउ बनावन पालकी सजन सुखासन[4] जान।१८५।

स्नेह को भलीभाँति जानने वाले भरत सब माताओं को आर्त्त (दुखी) जानकर उनके लिए पालकी और सुखपाल सजाने के लिए कहा।

चक्क चक्कि[5] जिमि पुर नर नारी ❀ चहत प्रात उर आरत भारी
जागत सब निसि भयेउ बिहाना ❀ भरत बोलाए सचिव सुजाना

---

१. प्रातःकाल। २. कूच। ३. द्रोह करना। ४. सुखपाल (एक किस्म की पालकी)। ५. चकवा-चकवी।

चकवा-चकवी की तरह पुर के नर-नारी हृदय में अत्यंत आर्त्त होकर प्रातःकाल का होना चाहते हैं। सारी रात जागते-जागते सवेरा हो गया। तब भरत ने चतुर मन्त्रियों को बुलवाया।

कहेउ लेहु सबु तिलक समाजू ❀ बनहिं देब मुनि रामहिं राजू
बेगि चलहु सुनि सचिव जोहारे ❀ तुरत तुरग रथ नाग सँवारे

भरत ने कहा—तिलक का सब सामान ले चलो, वन ही में मुनि वशिष्ठजी रामचन्द्रजी को राज्य देंगे; जल्दी चलो। यह सुनकर मन्त्रियों ने प्रणाम किया और तुरन्त ही घोड़े, रथ और हाथी सजवा दिये।

अरुंधती अरु अगिनि समाऊ ❀ रथ चढ़ि चले प्रथम मुनिराऊ
बिप्र बृन्द चढ़ि बाहन नाना ❀ चले सकल तप तेज निधाना

पहले मुनिराज वशिष्ठजी अरुन्धती और अग्निहोत्र की सब सामग्री-सहित रथ पर सवार होकर चले। फिर तपस्या और तेज के भंडार ब्राह्मणों के समूह तरह-तरह की सवारियों पर चढ़कर चले।

नगर लोग सब सजि सजि जाना ❀ चित्रकूट कहँ कीन्ह पयाना
सिबिका[1] सुभग न जाहिं बखानी ❀ चढ़ि चढ़ि चलत भईं सब रानी

नगर के सब लोग रथों को सजा-सजाकर चित्रकूट को चल पड़े। सुन्दर पालकियों में, जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता, चढ़-चढ़कर सब रानियाँ चलीं।

दो०— सौंपि नगर सुचि सेवकनि सादर सबहिं चलाइ।
सुमिरि राम सिय चरन तब चले भरत दोउ भाइ॥

विश्वासी सेवकों को नगर सौंपकर और आदर के साथ सब को रवाना करके फिर राम-सीता के चरणों को स्मरणकर भरत-शत्रुघ्न दोनों भाई चले।

राम दरस बस सब नर नारी ❀ जनु करि[2] करिनि चलें तकि बारी
बन सिय रामु समुझि मन माहीं ❀ सानुज भरत पयादेहिं[3] जाहीं

सब स्त्री-पुरुष रामचन्द्रजी के दर्शनों के वश में होकर ऐसे चले, जैसे प्यासे हाथी और हथिनी पानी को देखकर जा रहे हों। सीताराम वन में हैं, ऐसा समझकर शत्रुघ्न-सहित भरत पैदल ही चले जा रहे हैं।

---

१. पालकी। २ हाथी। ३. पैदल।

देखि सनेहु लोग अनुरागे ❀ उतरि चले हय गय[1] रथ त्यागे
जाइ समीप राखि निज डोली ❀ राम मातु मृदु बानी बोली

उनके स्नेह को देखकर लोग प्रेम में मग्न हो गये और घोड़े, हाथी, रथों से उतरकर (पैदल) चलने लगे। तब रामचन्द्रजी की माता (कौशल्या) भरत के पास जाकर और अपनी डोली खड़ी करके कोमल वाणी से बोलीं—

तात चढ़हु रथ बलि महतारी ❀ होइहि प्रिय परिवारु दुखारी
तुम्हरे चलत चलिहि सब लोगू ❀ सकल सोक कृस नहिं मग जोगू

हे तात ! माता बलैया लेती है, तुम रथ पर सवार हो लो। नहीं तो सारा प्यारा परिवार दुःखी हो जायेगा। तुम्हारे पैदल चलने से सभी लोग पैदल चलेंगे। शोक के मारे सब दुबले हो रहे हैं, पैदल रास्ता चलने के योग्य नहीं हैं।

सिर धरि बचन चरन सिरु नाई ❀ रथ चढ़ि चलत भए दोउ भाई
तमसा प्रथम दिवस करि बासू ❀ दूसर गोमति तीर निवासू

माता की आज्ञा को सिर चढ़ाकर और उनके चरणों में सिर नवाकर दोनों भाई रथ पर चढ़कर चले। पहले दिन तमसा नदी के किनारे निवासकर, दूसरा मुकाम गोमती के तीर पर किया।

दो० पय अहार फल असन एक निसि भोजन एक लोग।
करत राम हित नेम ब्रत परिहरि भूषन भोग॥१८७॥

कोई तो दूध ही पीते, कोई फलाहार करते, कोई रात्रि में एक ही बार भोजन करते। इस तरह सब लोग भूषण और भोग (आराम) छोड़कर रामचन्द्रजी के लिए नियम और व्रत करते हैं।

सई तीर बसि चले बिहाने ❀ सृंगबेरपुर सब नियराने
समाचार सब सुने निषादा ❀ हृदयँ बिचार करइ सबिषादा

रात भर सई नदी के किनारे बसकर दूसरे दिन सबेरे वहाँ से चले और शृङ्गवेरपुर के पास पहुँचे। निषाद (गुह) ने सब समाचार सुने। दुःखी होकर वह हृदय में विचार करने लगा।

कारन कवन भरतु बन जाहीं ❀ है कछु कपट भाउ मन माहीं
जौं पै जिअँ न होति कुटिलाई ❀ तौ कत लीन्हि संग कटकाई

---

१. गज, हाथी।

क्या कारण है जो भरत बन को जा रहे हैं ? मन में कुछ कपट-भाव ज़रूर है। जो इनके जी में कुटिलता न होती, तो साथ में फौज क्यों ले चले हैं ?

जानहिं सानुज रामहिं मारी ❀ करउँ अकंटक राज सुखारी
भरत न राजनीति उर आनी ❀ तब कलंकु अब जीवन हानी

उन्होंने सोचा है कि छोटे भाई लक्ष्मण-सहित रामचन्द्रजी को मारकर मैं सुख से निष्कंटक राज्य करूँगा। भरत ने हृदय में राजनीति को स्थान नहीं दिया। तब तो कलंक ही लगा था, अब तो जीवन ही का नाश होगा।

सकल सुरासुर जुरहिं जुझारा[1] ❀ रामहिं समर न जीतनिहारा
का आचरजु भरतु अस करहीं ❀ नहिं बिष बेलि अमिअ फल फरहीं

समस्त देवता और दैत्य योद्धा जुट जायँ, तो भी रण में रामचन्द्रजी को जीतने वाला कोई नहीं है। भरत जो ऐसा कर रहे हैं, इसमें आश्चर्य ही क्या है ? विष की लता में अमृत-फल कभी नहीं फलता।

दो॰ अस बिचारि गुहँ ग्याति सन कहेउ सजग सब होहु।
हथबाँसहु[2] बोरहु तरनि[3] कीजिअ घाटारोहु ॥१८८॥

ऐसा विचारकर गुह ने अपनी जाति वालों से कहा कि तुम सब सावधान हो जाओ। हाथ के बाँसों को (जिससे नाव खेई जाती है) और नावों को डुबा दो और घाटों को रोक दो।

होहु सँजोइल रोकहु घाटा ❀ ठाटहु सकल मरै क ठाटा
सनमुख लोह भरत सन लेऊँ ❀ जिअत न सुरसरि उतरन देऊँ

सुसज्जित होकर घाटों को रोक लो और सब लोग मरने के लिये तैयार हो जाओ। मैं भरत से सामने लोहा लूँगा और जीतेजी इन्हें गंगा-पार न उतरने दूँगा।

समर मरन पुनि सुरसरि तीरा ❀ राम काजु छनभंगु सरीरा
भरत भाइ नृपु मैं जन नीचू ❀ बड़े भाग अस पाइअ मीचू[4]

एक तो युद्ध में मरना, फिर गङ्गाजी का तट और फिर रामचन्द्रजी का काम। शरीर तो क्षणभंगुर है। भरत तो रामजी के भाई हैं, राजा हैं और मैं नीच सेवक; बड़े भाग्य से ऐसी मृत्यु मिलती है। [अनुज्ञा अलंकार]

१. वीर, योद्धा। २. हाथ का बाँस, जिससे नाव खेई जाती है। ३. नाव। ४. मृत्यु।

स्वामि काज करिहउँ रन रारी ❀ जस धवलिहउँ भुवन दस चारी
तजउँ प्रान रघुनाथ निहोरें ❀ दुहूँ हाथ मुद मोदक मोरें

मैं स्वामी के काम के लिये रण में लड़ूँगा और चौदहों लोकों को अपने यश से उज्ज्वल कर दूँगा। रामचन्द्रजी के लिए प्राण-त्याग करूँगा। मेरे तो दोनों ही हाथों में आनन्द के लड्डू हैं।

साधु समाज न जाकर लेखा[1] ❀ राम भगत महुँ जासु न रेखा
जायँ जिअत जग सो महि भारू ❀ जननी जौबन बिटप कुठारू

साधुओं के समाज में जिसकी गिनती न हो और रामभक्तों में जिसका स्थान न हो, वह संसार में पृथ्वी का भार होकर व्यर्थ ही जीता है। वह माता के जवानीरूपी वृक्ष के काटने के लिए कुल्हाड़ा-मात्र है।

दो०—बिगत बिषाद निषादपति सबहिं बढ़ाइ उछाहु।
सुमिरि राम माँगेउ तुरत तरकस धनुष सनाहु[2]।१८९।

शोक से रहित निषादों के स्वामी (गुह) ने सबका उत्साह बढ़ाकर रामचन्द्रजी का स्मरण करके तुरन्त ही तरकस, धनुष और कवच माँगा। [समाहित अलंकार]

बेगहु[3] भाइहु सजहु सँजोऊ[4] ❀ सुनि रजाइ कदराइ न कोऊ
भलेहि नाथ सब कहहिं सहरषा ❀ एकहिं एक बढ़ावइ करषा[5]

उसने कहा—हे भाइयो! जल्दी करो और सब तैयारी कर लो। मेरी आज्ञा को सुनकर कोई कायर न बने। सब बड़े आनन्द से बोल उठे—हे स्वामी! बहुत अच्छा, और वे आपस में एक-दूसरे का उत्साह बढ़ाने लगे।

चले निषाद जोहारि जोहारी ❀ सूर सकल रन रूचइ रारी
सुमिरि राम पद पंकज पनहीं[6] ❀ भाथी बाँधि चढ़ाइन्हि धनुहीं

निषाद-राज को प्रणाम करके सब निषाद चले। वे सब बड़े शूरवीर हैं और लड़ाई लड़ना इन्हें बहुत पसन्द है। रामचन्द्रजी के चरण-कमलों की जूतियों को स्मरण करके उन्होंने भाथियाँ (छोटे-छोटे तरकस) बाँधकर धनुहियों (छोटे-छोटे धनुषों) पर डोरी चढ़ाई।

---

१. गिनती। २. कवच। ३. जल्दी करो। ४. तैयारी। ५. उत्कर्ष, उत्साह। ६. जूती।

अँगरी[1] पहिरि कूँड़ि[2] सिर धरहीं ❀ फरसा बाँस सेल[3] सम करहीं
एक कुसल अति ओड़न[4] खाँड़े[5] ❀ कूदहिं गगन मनहुँ छिति छाँड़े

कवच पहनकर सिर पर लोहे का टोप रखा और फरसे, भाले तथा बरछों को वे सुधारने लगे। कोई-कोई तलवार का वार रोकने में अत्यंत कुशल हैं; वे ऐसे जोश में हैं, मानो धरती छोड़कर आकाश में कूदे जा रहे हैं।

निज निज साजु समाजु बनाई ❀ गुह राउतहिं[6] जोहारे जाई
देखि सुभट सब लायक जाने ❀ लै लै नाम सकल सनमाने

अपना-अपना साज और समाज (टोली) तैयारकर उन्होंने पुकारते ही अथवा गुह स्वामी को प्रणाम किया। गुह ने सब सुन्दर वीरों को देखकर और उनको योग्य जानकर सबका नाम ले-लेकर उनका सन्मान किया।

दो॰ भाइहु लावहु धोख[7] जनि आजु काज बड़ मोहि।
सुनि सरोष बोले सुभट बीर अधीर न होहि।१९०।

उसने कहा—हे भाइयो! गाफिल न होना, आज मेरा बड़ा भारी काम है। यह सुनकर सब योद्धा बड़े जोश में भरकर बोले—हे वीर! अधीर मत हो।

राम प्रताप नाथ बल तोरे ❀ करहिं कटक बिनु भट बिनु घोरे
जीवत पाउ न पाछे धरहीं ❀ रुंड मुंड मय मेदिनि करहीं

हे नाथ! रामचन्द्रजी के प्रताप से और आपके बल से हम लोग भरत की सेना को बिना वीर और बिना घोड़े की कर देंगे। हम जीते-जी पाँव पीछे न रक्खेंगे। सारी पृथ्वी को रुण्ड-मुंडों से भर देंगे।

दीख निषादनाथ भल टोलू ❀ कहेउ बजाउ जुझाऊ ढोलू
एतना कहत छींक भइ बाँएं ❀ कहेउ सगुनिअन्ह खेत सुहाये

निषादराज ने वीरों का अच्छा दल देखकर कहा कि जुझाऊ (लड़ाई का) ढोल बजाओ। इतना कहते ही बाईं ओर छींक हुई। शकुन विचारने वालों ने कहा कि खेत सुन्दर है; अर्थात् हमारी जीत होगी।

---

१. कवच। २. लोहे का टोप। ३. बरछा। ४. अड़ने में, रोकने में। ५. तलवार।
६. निषादराज गुह को; अवधी बोली में गुहराना का अर्थ पुकारना भी होता है। ७. धोखा, चूक।

बूढ़ु एकु कह सगुन बिचारी ❀ भरतहि मिलिअ न होइहि रारी
रामहि भरत मनावन जाहीं ❀ सगुन कहइ अस बिग्रहु[1] नाहीं

एक बूढ़े ने शकुन विचारकर कहा—भरत से मिल लीजिये, लड़ाई नहीं होगी। शकुन ऐसा कहता है कि भरत रामचन्द्रजी को मनाने जा रहे हैं; विरोध नहीं है।

सुनि गुह कहइ नीक कह बूढ़ा ❀ सहसा करि पछिताहिं बिमूढ़ा
भरत सुभाउ सीलु बिनु बूझें ❀ बड़ि हित हानि जानि बिनु जूझें

यह सुनकर गुह ने कहा—बुड्ढा ठीक कह रहा है। जल्दी में बिना विचारे काम करके मूर्ख पछताते हैं। भरत का शील-स्वभाव समझे बिना और बिना जाने लड़ने में हित की बहुत बड़ी हानि होगी।

दो॰ गहहु घाट भट सिमिटि सब लेउँ मरम मिलि जाइ।
बूझि मित्र अरि मध्य गति तब तस करिहउँ आइ॥

इसलिए हे वीरो ! तुम सब इकट्ठे होकर सब घाटों को रोक लो। मैं जाकर भरत से मिलकर उनका भेद लेता हूँ। वे मित्र, शत्रु या उदासीन हैं, उनकी गति का पता लेकर फिर जैसा उचित होगा, वैसा आकर करूँगा।

लखब सनेहु सुभायँ सुहाएँ ❀ बैरु प्रीति नहिं दुरइँ[2] दुराएँ
अस कहि भेंट सँजोवन[3] लागे ❀ कंद मूल फल खग मृग माँगे

उनके स्वभाव से मैं उनके स्नेह को पहचान लूँगा। बैर और प्रीति छिपाये से नहीं छिपती। इतना कहकर गुह भेंट का सामान सजाने लगा। उसने कंद, मूल, फल, पक्षी और मृग मँगवाये।

मीन पीन पाठीन[4] पुराने ❀ भरि भरि भार[5] कहारन्ह आने
मिलन साजु सजि मिलन सिधाए ❀ मंगल मूल सगुन सुभ पाए

कहार लोग मोटी और पुरानी पहिना मछलियाँ बहँगियों में भर-भरकर लाये। भेंट का सामान सजाकर मिलने के लिए चले तो मङ्गल-सूचक शुभ शकुन होने लगे।

---

१. विरोध, लड़ाई। २. छिपते हैं। ३. सजाने, तैयार करने। ४. पहिना नाम की मछली।
५. बहँगी।

देखि दूरि तें कहि निज नामू ❀ कीन्ह मुनीसहिं दंड प्रनामू
जानि रामप्रिय दीन्हि असीसा ❀ भरतहिं कहेउ बुझाइ मुनीसा

निषादराज गुह ने मुनिराज (वशिष्ठजी) को देखकर दूर ही से अपना नाम लेते हुए दंडवत् प्रणाम किया। मुनीश्वर वसिष्ठजी ने उसको राम का प्यारा जानकर आशीर्वाद दिया और भरतजी को समझाकर कहा—

राम सखा सुनि स्यंदन त्यागा ❀ चले उतरि उमगत अनुरागा
गाउँ जाति गुह नाउँ सुनाई ❀ कीन्ह जोहारु माथ महि लाई

यह राम का सखा है। इतना सुनते ही भरत ने रथ को त्याग दिया और उतरकर वे प्रेम से उमँगते हुए चले। गुह ने अपना गाँव, जाति और नाम सुनाकर पृथ्वी पर माथा टेककर प्रणाम किया।

दो० करत दंडवत देखि तेहि भरत लीन्ह उर लाइ।
मनहुँ लखन सन भेंट भइ प्रेम न हृदयँ समाइ॥१९२

उसको दण्डवत् करते देख भरत ने उठाकर उसे छाती से लगा लिया। मानो लक्ष्मण से भेंट हो गई हो। उनके हृदय में प्रेम समाता नहीं था।

भेंटत भरतु ताहि अति प्रीती ❀ लोग सिहाहिं प्रेम कै रीती
धन्य धन्य धुनि मंगल मूला ❀ सुर सराहिं तेहि बरिसहिं फूला

भरत गुह को अत्यन्त प्रेम से गले लगा रहे हैं। प्रेम की रीति को सब लोग सिहा रहे हैं। मङ्गल की मूल धन्य-धन्य की ध्वनि करके देवता उसकी बड़ाई करते हुये फूलों की वर्षा कर रहे हैं।

लोक बेद सब भाँतिहिं नीचा ❀ जासु छाँह छुइ लेइअ सींचा
तेहि भरि अंक राम लघु भ्राता ❀ मिलत पुलक परिपूरित गाता

जो लोक और वेद दोनों में सब तरह से नीचा गिना जाता है, जिसकी छाया के छू जाने से भी स्नान करना होता है, उसी निषाद को रामचन्द्रजी के छोटे भाई भरत पूर्ण पुलकित शरीर से, छाती से लगाकर मिल रहे हैं।

राम राम कहि जे जमुहाहीं ❀ तिन्हहिं न पाप पुंज समुहाहीं
एहि तौ राम लाइ उर लीन्हा ❀ कुल समेत जगु पावन कीन्हा

जो लोग राम-राम कहकर जँभाई लेते हैं, पापों के समूह उनके सामने नहीं आते। फिर इस गुह को तो रामचन्द्रजी ने स्वयं हृदय से लगा लिया और इसको

कुल (परिवार) सहित जगत् में पवित्र कर दिया।

करमनास जल सुरसरि परई ❀ तेहि को कहहु सीस नहिं धरई
उलटा नामु जपत जगु जाना ❀ बालमीकि भए ब्रह्म समाना

कर्मनाशा नदी का जल गंगाजी में पड़ जाता है, तो कहिए, उसे कौन सिर पर धारण नहीं करता? सारा जगत् जानता है कि रामनाम का उलटा (मरा, मरा) जपते-जपते वाल्मीकि ब्रह्म के समान हो गये।

दो०— स्वपच[1] सबर[2] खस[3] जमन[4] जड़ पाँवर कोल[5] किरात[6]।
रामु कहत पावन परम होत भुवन बिख्यात।१९३।

मूर्ख और नीच चांडाल, शबर, खस, यवन, कोल और भील इत्यादि सभी रामनाम के कहते ही परम पवित्र होकर त्रिभुवन में प्रसिद्ध हो जाते हैं।

नहिं अचिरिजु जुग जुग चलि आई ❀ केहि न दीन्हि रघुबीर बड़ाई
राम नाम महिमा सुर कहहीं ❀ सुनि सुनि अवध लोग सुखु लहहीं

इसमें कोई आश्चर्य नहीं, युग-युगान्तर से यही रीति चली आ रही है। रामचन्द्रजी ने किसको बड़ाई नहीं दी? इस तरह देवता रामनाम का माहात्म्य वर्णन कर रहे हैं और सुन-सुनकर अयोध्या के लोग सुख पा रहे हैं।

राम सखहिं मिलि भरत सप्रेमा ❀ पूँछी कुसल सुमङ्गल खेमा
देखि भरत कर सीलु सनेहू ❀ भा निषाद तेहि समय बिदेहू[7]

रामचन्द्रजी के सखा गुह से प्रेम के साथ मिलकर भरत ने कुशल-मंगल और क्षेम पूछा। भरत का शील और स्नेह देखकर निषाद उस समय देह की सुध भूल गया।

सकुच सनेहु मोदु मन बाढ़ा ❀ भरतहिं चितवत एकटक ठाढ़ा
धरि धीरजु पद बन्दि बहोरी ❀ बिनय सप्रेम करत कर जोरी

गुह के मन में संकोच, प्रेम और आनन्द इतना बढ़ गया कि वह खड़ा-खड़ा टकटकी लगाये भरत को देखता रहा। फिर धीरज धरकर, भरत के चरणों की वंदना करके, प्रेम के साथ हाथ जोड़कर गुह विनय करने लगा।

कुसल मूल पद पंकज पेखी ❀ मैं तिहुँ काल कुसल निज लेखी
अब प्रभु परम अनुग्रह तोरें ❀ सहित कोटि कुल मंगल मोरें

---

१ से ६ तक जाति-विशेष। ७. बिना देह का, देह की सुध भूला हुआ।

कुशल के मूल आपके चरण-कमलों का दर्शनकर मैंने तीनों कालों में अपना कुशल जान लिया। हे प्रभु! अब आपके परम अनुग्रह से करोड़ों कुलों-समेत मेरा मंगल हो गया।

दो०— समुझि मोरि करतूति कुलु प्रभु महिमा जिअँ जोइ।
जो न भजइ रघुबीर पद जग बिधि बंचित सोइ।१९४।

मेरी करतूत और कुल को समझकर और प्रभु (रामचन्द्रजी) की महिमा को हृदय में देखकर जो रघुवीर रामजी के चरणों का भजन नहीं करता, वह जगत् में विधाता-द्वारा ठगा गया है।

कपटी कायर कुमति कुजाती ❀ लोक बेद बाहेर[1] सब भाँती
राम कीन्ह आपन जबही तें ❀ भयउँ भुवन भूषन तबही तें

मैं कपटी, कायर, कुमति और कुजाति हूँ और लोक-वेद से सब प्रकार बाहर हूँ, अथवा लोक और वेद दोनों में बाहेर (प्रकट) है। पर जबसे रामचन्द्र ने मुझे अपनाया है, तभी से मैं संसार का भूषण हो गया हूँ।

देखि प्रीति सुनि बिनय सुहाई ❀ मिलेउ बहोरि भरत लघु भाई
कहि निषाद निज नाम सुबानी ❀ सादर सकल जोहारी रानी

गुह की प्रीति देखकर और सुन्दर विनय सुनकर फिर भरत के छोटे भाई शत्रुघ्न उससे मिले। फिर गुह ने अपना नाम ले-लेकर मीठी वाणी से सब रानियों को आदरपूर्वक जोहार की।

जानि लखन सम देहिं असीसा ❀ जिअहु सुखी सय लाख बरीसा
निरखि निषादु नगर नर नारी ❀ भए सुखी जनु लखनु निहारी

रानियाँ गुह को लक्ष्मण के समान जानकर आशीर्वाद देने लगीं कि तुम सौ लाख बरसों तक सुख से जिओ। नगर के स्त्री-पुरुष निषाद को देखकर ऐसे सुखी हुए, मानो लक्ष्मण को देख रहे हों।

कहहिं लहेउ एहि जीवन लाहू ❀ भेंटेउ रामभद्र भरि बाहू
सुनि निषाद निज भाग बड़ाई ❀ प्रमुदित मन लइ चलेउ लेवाई

सब कहते हैं—जीवन का लाभ तो इसी ने पाया है, जिसे कल्याणस्वरूप रामचन्द्रजी ने भुजाओं में भरकर भेंटा है। निषाद अपने भाग्य की बड़ाई सुन

---

१. बहिष्कृत, प्रकट (अरबी)।

कर मन में परम आनन्दित होकर सबको अपने साथ लिवा ले चला।

दो० सनकारे[1] सेवक सकल चले स्वामि रुख पाइ।
घर तरु तर सर बाग बन बास[2] बनाएन्हि जाइ ॥१९५

उसने अपने सब सेवकों को इशारे से कह दिया। वे स्वामी गुह का रुख पाकरचले गये और उन्होंने घरों में, वृक्षों के नीचे, तालाबों पर, बगीचों और जंगलों में सबके ठहरने के लिए घर बना दिये।

सृंगबेरपुर भरत दीख जब ❀ भे सनेहँ बस अंग सिथिल तब
सोहत दिएँ निषादहि लागू[3] ❀ जनु तनु धरें बिनय अनुरागू

भरत ने जब शृङ्गवेरपुर को देखा, तब उनके सब अंग स्नेह के वश शिथिल हो गये। वे निषाद के कन्धे पर हाथ रखकर चलते हुये ऐसे सुन्दर लग रहे हैं, मानो विनय और प्रेम शरीर धारण किये हुये हैं।

एहि बिधि भरत सेन सब संगा ❀ दीख जाइ जग पावनि गंगा
रामघाट कहँ कीन्ह प्रनामू ❀ भा मनु मगनु मिले जनु रामू

इस तरह भरत ने सब सेना को साथ लिये हुये जाकर जगत् को पवित्र करने वाली गङ्गाजी के दर्शन किये। रामघाट को प्रणाम किया। उनका मन आनन्द-मग्न हो गया, मानो स्वयं रामचन्द्र मिल गये हों।

करहिं प्रनाम नगर नर नारी ❀ मुदित ब्रह्ममय बारि[4] निहारी
करि मज्जन माँगहि कर जोरी ❀ रामचंद्र पद प्रीति न थोरी

अयोध्या नगर के नर-नारी प्रणाम कर रहे हैं और गंगाजी के ब्रह्म-स्वरूप जल को देखकर आनन्दित हो रहे हैं। गङ्गाजी में स्नानकर, हाथ जोड़कर वे सब यही वर माँग रहे हैं कि रामचन्द्रजी के चरणों में हमारी प्रीति कम न हो।

भरत कहेउ सुरसरि तव रेनू[5] ❀ सकल सुखद सेवक सुरधेनू
जोरि पानि बर माँगउँ एहू ❀ सीय राम पद सहज सनेहू

भरत ने कहा—हे गंगे ! आपकी रज सब सुखों को देने वाली तथा सेवक के लिये कामधेनु है। मैं हाथ जोड़कर आपसे यही वरदान माँगता हूँ कि सीता-राम के चरणों में मेरा स्वाभाविक प्रेम हो।

---

१. इशारे से बताया। २. ठहरने का घर। ३. कन्धे पर हाथ रखकर चलना। ४. जल। ५. रेत बालू।

दो०- एहि बिधि मज्जन भरत करि गुर अनुसासन पाइ।
मातु नहानीं जानि सब डेरा चले लवाइ ॥१९६॥

इस प्रकार भरत स्नानकर और गुरुजी की आज्ञा पाकर तथा यह जानकर कि सब माताओं ने भी स्नान कर लिया है, डेरा उठा ले चले।

जहँ तहँ लोगन्ह डेरा कीन्हा ❀ भरत सोध[1] सबही कर लीन्हा
सुर सेवा करि आयसु पाई ❀ राम मातु पहिं गे दोउ भाई

लोगों ने जहाँ-तहाँ डेरा डाल दिया। भरत ने सबकी सम्हाल की। फिर देव-पूजन करके, गुरु की आज्ञा पाकर, दोनों भाई रामचन्द्रजी की माता के पास गये।

चरन चाँपि कहि कहि मृदु बानी ❀ जननीं सकल भरत सनमानी
भाइहिं सौंपि मातु सेवकाई ❀ आपु निषादहि लीन्ह बोलाई

चरण दबाकर और कोमल वाणी कह-कहकर भरत ने सब माताओं का सन्मान किया। फिर भाई शत्रुघ्न को माताओं की सेवा सौंपकर उन्होंने निषाद को बुला लिया।

चले सखा कर सों कर जोरें ❀ सिथिल सरीर सनेह न थोरें
पूछत सखहिं सो ठाउँ देखाऊ ❀ नेकु नयन मन जरनि जुड़ाऊ

गुह के हाथ से हाथ मिलाये हुए भरत चले। अधिक स्नेह से उनका शरीर शिथिल हो रहा है। भरत सखा (गुह) से पूछते हैं कि मुझे वह स्थान बतलाओ, और नेत्र और मन की जलन को कुछ शांत करो,

जहँ सिय राम लखन निसि सोये ❀ कहत भरे जल लोचन कोये
भरत बचन सुनि भयेउ बिषादू ❀ तुरत तहाँ लै गयउ निषादू

जहाँ सीता, राम और लक्ष्मण रात को सोये थे। ऐसा कहते ही उनकी आँखों के कोयों में जल भर आया। भरत के वचन सुनकर निषाद को बड़ा विषाद हुआ। वह तुरन्त ही उन्हें वहाँ ले गया,

दो०- जहँ सिंसुपा पुनीत[2] तरु रघुबर किय बिस्रामु।
अति सनेहँ सादर भरत कीन्हेउ दंड प्रनामु ।१९७।

१. खोज, खबर। २. पवित्र।

जहाँ पवित्र अशोक के वृक्ष के नीचे रघुनाथजी ने विश्राम किया था। वहाँ भरत ने बड़े आदर और स्नेह से दण्डवत् प्रणाम किया।

कुस साँथरी निहारि सुहाई ❋ कीन्ह प्रनामु प्रदच्छिन जाई
चरन रेख रज आँखिन्ह लाई ❋ बचन न कहत प्रीति अधिकाई

कुशों की सुन्दर साथरी को देखकर और उसकी प्रदक्षिणा करके उन्होंने प्रणाम किया। रामचन्द्रजी के चरणों के चिन्हों की धूल आँखों में लगाई। प्रेम की अधिकता कहते नहीं बनती।

कनक[1] बिन्दु दुइ चारिक देखे ❋ राखे सीस सीय सम लेखे
सजल बिलोचन हृदयँ गलानी ❋ कहत सखा सन बचन सुबानी

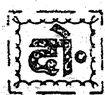
भरत ने दो-चार सुनहरे सितारे (जो सीता के वस्त्रों से गिर पड़े थे) देखे और उनको सीता के समान समझकर सिर पर रख लिया। उनकी आँखों में आँसू हैं और हृदय में ग्लानि भरी है। वे सखा से सुन्दर वाणी में ये वचन बोले—

श्रीहत सीय बिरहँ दुति हीना ❋ जथा अवध नर नारि मलीना
पिता जनक देउँ पटतर केही ❋ करतल भोगु जोगु जग जेही

हाय! ये स्वर्ण के कण या सितारे भी सीता के विरह से ऐसे कान्तिहीन और मलिन हो रहे हैं, जिस तरह राम-वियोग में अयोध्या के नर-नारी शोक में विलीन हो रहे हैं। जिनके पिता राजा जनक हैं, इस संसार में भोग और योग जिनकी मुट्ठी में है, मैं उनको किसकी उपमा दूँ?

ससुर भानुकुल भानु भुआलू ❋ जेहि सिहात अमरावति पालू
प्राणनाथु रघुनाथ गोसाईं ❋ जे बड़ होत सो राम बड़ाईं

सूर्यकुल के सूर्य राजा दशरथ जिनके ससुर हैं, जिनको अमरावती के राजा इन्द्र भी सिहाते थे, और प्रभु रघुनाथजी जिनके प्राणनाथ हैं, जो इतने बड़े हैं कि जो कोई भी बड़ा होता है, वह उनकी दी हुई बड़ाई ही से होता है।



पति देवता सुतीय मनि सीय साँथरी देखि।
बिहरत हृदउ न हहरि हर पबि[2] तें कठिन बिसेषि॥

पतिव्रता स्त्रियों में शिरोमणि, सीता की कुश-शय्या देखकर जो मेरा हृदय

१. सोना। २. वज्र।

हहराकर (दहलकर) फट नहीं जाता, तो यह वज्र से भी अधिक कठोर है।

लालन जोगु लखन लघु लोने[1] ❀ भे न भाइ अस अहहिं न होने
पुरजन प्रिय पितु मातु दुलारे ❀ सिय रघुबीरहिं प्रान पिआरे

मेरे छोटे भाई लक्ष्मण सुन्दर, प्यार करने योग्य हैं। ऐसे भाई तो न किसी के हुए, न हैं, और न होंगे। जो लक्ष्मण अवध के लोगों को प्यारे, माता-पिता के दुलारे और सीता-रामजी के प्राणप्यारे हैं,

मृदु मूरति सुकुमार सुभाऊ ❀ तात बाउ[2] तन लाग न काऊ
ते बन सहहिं बिपति सब भाँती ❀ निदरे कोटि कुलिस एहिं छाती

जिनकी मूर्त्ति कोमल और स्वभाव सुकुमार है; जिनके शरीर में कभी गरम हवा भी नहीं लगी। वे वन में सब तरह की विपत्तियाँ सह रहे हैं। हाय ! इस छाती ने करोड़ों बज्रों का भी निरादर कर दिया।

राम जनमि जगु कीन्ह उजागर ❀ रूप सील सुख सब गुन सागर
पुरजन परिजन गुरु पितु माता ❀ राम सुभाउ सबहिं सुखदाता

रामचन्द्रजी ने जन्म लेकर सारे जगत् को प्रकाशित कर दिया। वे रूप, शील, सुख और सब गुणों के समुद्र हैं। पुरवासी, कुटुम्बी, गुरु, पिता-माता और सभी को रामचन्द्रजी का स्वभाव सुख देने वाला है।

बैरिउ राम बड़ाई करहीं ❀ बोलनि मिलनि बिनय मन हरहीं
सारद कोटि कोटि सत सेषा ❀ करि न सकहिं प्रभु गुन गन लेखा

शत्रु भी रामचन्द्रजी की बड़ाई करते हैं। उनका बोलना, मिलना और विनय करना मन को हर लेता है। करोड़ों सरस्वती और करोड़ों शेष भी रामचन्द्रजी के गुणों के समूह की गिनती नहीं कर सकते।

दो० सुख स्वरूप रघुबंसमनि मंगल मोद निधान।
ते सोवत कुस डारि महि बिधि गति अति बलवान॥

जो रघुकुल के मणि, सुख-स्वरूप, मङ्गल और आनन्द के भण्डार हैं, वे रामचन्द्रजी पृथ्वी पर कुश बिछाकर सोते हैं। विधाता की गति बड़ी ही बलवती है।

---

१. सुन्दर। २. वायु।

राम सुना दुख कान न काऊ ❀ जीवन तरु जिमि जोगवइ राऊ
पलक नयन फनि मनि जेहि भाँती ❀ जोगवहिं जननि सकल दिन राती

रामचन्द्रजी ने कभी कोई दुःख कान से भी नहीं सुना। महाराज स्वयं जीवन वृक्ष की भाँति उनकी सार-संभाल किया करते थे। सब माताएँ भी रात-दिन उनकी ऐसी सार-सँभाल करती थीं, जैसे पलक नेत्रों की और साँप अपनी मणि की करते हैं।

ते अब फिरत बिपिन पद चारी ❀ कंद मूल फल फूल अहारी
धिग कैकेई अमंगल मूला ❀ भइसि प्रान प्रियतम प्रतिकूला

वही रामचन्द्रजी अब पैदल जंगलों में घूमते हैं और कंद-मूल, फल-फूलों का आहार करते हैं। अमंगल की मूल कैकेयी को धिक्कार है, जो अपने प्राण-प्यारे पति के भी प्रतिकूल हो गई।

मैं धिग धिग अघ उदधि अभागी ❀ सब उतपात भयेउ जेहि लागी
कुल कलंकु करि सृजेउ[1] बिधाताँ ❀ साँइ द्रोह मोहि कीन्ह कुमाताँ

मुझ पापों के समुद्र और अभागे को धिक्कार है, धिक्कार है, जिसके कारण ये सब उत्पात हुए। विधाता ने मुझे कुल का कलङ्क पैदा किया और कुमाता ने मुझे स्वामी का द्रोही बना दिया।

सुनि सप्रेम समुझाव निषादू ❀ नाथ करिअ कत बादि बिषादू
राम तुम्हहिं प्रिय तुम्ह प्रिय रामहिं ❀ एह निरजोस दोस बिधि बामहिं

यह सुनकर निषाद (गुह) प्रेम-पूर्वक समझाने लगा। हे नाथ! आप व्यर्थ विषाद किस लिये करते हैं? रामचन्द्रजी आपको प्यारे हैं और आप रामचन्द्रजी को प्यारे हैं। यही निचोड़ है, दोष तो प्रतिकूल विधाता को है।

छंद—बिधि बाम की करनी कठिन जेहि मातु कीन्ही बावरी।
तेहि राति पुनि पुनि करहिं प्रभु सादर सरहना रावरी॥
तुलसी न तुम सो राम प्रीतमु कहतु हौं सौं हैं[2] किये।
परिनाम मङ्गल जानि अपने आनिये धीरजु हिये॥

हे नाथ! प्रतिकूल विधाता की करनी बड़ी कठिन है, जिसने माता कैकेयी

१. बनाया। २. शपथ।

को बावली बना दिया। उस रात को प्रभु रामचन्द्रजी आदर के साथ आपकी बार-बार बड़ी सराहना करते थे। तुलसीदासजी कहते हैं—रामचन्द्रजी को आपके समान अति प्रिय और कोई नहीं है। मैं सौगन्ध खाकर कहता हूँ। परिणाम मंगलमय है, यह जानकर हृदय में धैर्य धारण कीजिये।

सो०— अन्तरजामी रामु सकुच सप्रेम कृपायतन।
चलिअ करिअ बिस्रामु एहि बिचार दृढ़ आनि मन॥

रामचन्द्रजी अन्तर्यामी तथा संकोच, प्रेम और दया के धाम हैं, ऐसा विचार करके और मन में दृढ़ता लाकर चलकर विश्राम कीजिये।

सखा बचन सुनि उर धर धीरा ❀ बास चले सुमिरत रघुबीरा
यह सुधि पाइ नगर नर नारी ❀ चले बिलोकन आरत भारी

सखा के वचन सुनकर, मन में धीरज धरकर रामचन्द्रजी का स्मरण करते हुए भरत डेरे को चले। यह समाचार पाकर नगर अयोध्या के सारे स्त्री-पुरुष बहुत दुखी होकर उस स्थान को देखने चले जहाँ रामजी ठहरे थे।

परदखिना[1] करि करहिं प्रनामा ❀ देहिं कैकइहि खोरि निकामा
भरि भरि बारि बिलोचन लेहीं ❀ बाम बिधातहिं दूषन देहीं

वे उस स्थान की प्रदक्षिणा करके प्रणाम करते हैं और कैकेयी को बहुत दोष देते हैं। वे आँखों में आँसू भर लाते हैं और प्रतिकूल विधाता को दोष देते हैं।

एक सराहहिं भरत सनेहू ❀ कोउ कह नृपति निबाहेउ नेहू
निंदहिं आपु सराहि निषादहिं ❀ को कहि सकै बिमोह बिषादहिं

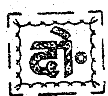
कोई भरत के स्नेह की प्रशंसा करते हैं और कोई कहते हैं कि राजा ने स्नेह को खूब निबाहा। सब अपनी निन्दा करके निषाद को सराहते हैं। उस समय के विमोह और विषाद को कौन कह सकता है?

एहि बिधि राति लोगु सबु जागा ❀ भा भिनुसार गुदारा[2] लागा
गुरहिं सुनावँ चढ़ाइ सुहाईं ❀ नईं नाव सब मातु चढ़ाईं
दंड चारि महँ भा सबु पारा ❀ उतरि भरत तब सबहिं सँभारा

इस तरह रातभर सब लोग जागते रहे। सवेरा होते ही खेवा लगा। पहले

१. परिक्रमा। २. खेवा।

सुन्दर नाव पर गुरुजी को चढ़ाकर फिर नई नाव पर सब माताओं को चढ़ाया। चार घड़ी में सब गंगाजी के पार हो गये। तब भरत ने उतरकर सबको सँभाला।



प्रातक्रिया करि मातु पद बंदि गुरहिं सिरु नाइ।
आगे किये निषाद गन दीन्हेउ कटक चलाइ।२०१।

प्रातःकाल का नित्यकर्म करके, माता के चरणों की वन्दनाकर और गुरु को सिर नवाकर भरत ने निषादगणों को (रास्ता दिखलाने के लिये) आगे करके सेना चला दी।

कियेउ निषादनाथु अगुआई ❀ मातु पालकी सकल चलाई
साथ बोलाइ भाइ लघु दीन्हा ❀ बिप्रन्ह सहित गवनु गुर कीन्हा

निषादों के स्वामी (गुह) को अगुआ करके पीछे सब माताओं की पालकियाँ चलाईं। अपने छोटे भाई शत्रुघ्न को बुलाकर उनके साथ कर दिया। फिर ब्राह्मणों-सहित गुरुजी ने गमन किया।

आपु सुरसरिहिं कीन्ह प्रनामू ❀ सुमिरे लखन सहित सियरामू
गवने भरत पयादेहिं पाये ❀ कोतल संग जाहिं डोरिआये[1]

फिर आप (भरत) ने गङ्गाजी को प्रणाम किया और लक्ष्मण-सहित सीताराम को याद किया। भरत पैदल ही चले। उनके साथ कोतल घोड़े बागडोर से बँधे हुए चले जा रहे हैं।

कहहिं सुसेवक बारहिं बारा ❀ होइअ नाथ अस्व असवारा
राम पयादेहि पायँ सिधाये ❀ हम कहँ रथ गज बाजि बनाये

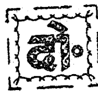
उत्तम सेवक बारंबार कहते हैं कि हे नाथ! आप घोड़े पर सवार हो लें। भरत ने कहा—रामचन्द्र तो पैदल ही गये और हमारे लिये रथ, हाथी और घोड़े बनाये गये हैं।

सिर भर जाउँ उचित अस मोरा ❀ सब तें सेवक धरमु कठोरा
देखि भरत गति सुनि मृदु बानी ❀ सब सेवक गन गरहिं[2] गलानी

मुझे तो उचित है कि सिर के बल चलकर जाऊँ। सेवक का धर्म सबसे कठिन है। भरत की दशा देखकर और उनकी कोमल वाणी सुनकर सब सेवकगण ग्लानि के मारे गले जा रहे हैं।

---

१. डोरी (रस्सी) से बँधे हुये। २. गले जा रहे हैं।



भरत तीसरे पहर कहँ कीन्ह प्रबेसु प्रयाग।
कहत राम सिय राम सिय उमगि उमगि अनुराग॥

प्रेम में उमंग-उमंगकर सीताराम-सीताराम कहते हुए भरत ने तीसरे पहर प्रयाग में प्रवेश किया।

झलका[1] झलकत पायन्ह कैसें ❀ पंकज कोस[2] ओस कन जैसे
भरत पयादेहिं आये आजू ❀ भये दुखित सुनि सकल समाजू

भरत के पाँवों में छाले पड़ गये हैं, वे ऐसे चमकते हैं, जैसे कमल की कली पर ओस की बूँदें हों। आज भरत पैदल ही चलकर आये हैं, यह समाचार सुनकर सारा समाज दुःखी हो गया।

खबरि लीन्ह सब लोग नहाए ❀ कीन्ह प्रनामु त्रिबेनिहिं आए
सबिधि सितासित[3] नीर नहाने ❀ दिए दान महिसुर सनमाने

जब भरत ने यह पता पा लिया कि सब लोगों ने स्नान कर लिया, तब वे भी त्रिवेणी पर आये और उन्होंने प्रणाम किया। उन्होंने विधिपूर्वक (गंगा-यमुना के) श्वेत और श्याम जल में स्नान किया और दान देकर ब्राह्मणों का सन्मान किया।

देखत स्यामल धवल[4] हलोरे ❀ पुलकि सरीर भरत कर जोरे
सकल काम प्रद तीरथराऊ ❀ बेद बिदित जग प्रगट प्रभाऊ

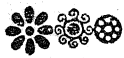
श्याम (यमुना) की और सफेद (गंगा) की लहरें देखकर भरत का शरीर पुलकायमान हो गया और उन्होंने हाथ जोड़कर कहा—हे तीर्थराज! आप सम्पूर्ण कामनाओं के पूर्ण करने वाले हो, आपका प्रभाव वेदों में प्रसिद्ध और संसार में प्रकट है।

माँगउँ भीख त्यागि निज धरमू ❀ आरत काह न करइ कुकरमू
अस जियँ जानि सुजान सुदानी ❀ सफल करहिं जग जाचक बानी

मैं अपने निज धर्म (क्षत्रिय-धर्म) को त्यागकर आपसे भीख माँगता हूँ। महाराज! आर्त मनुष्य कौन-सा कुकर्म नहीं करता? ऐसा जी में जानकर सुजान श्रेष्ठ दानी लोग संसार में माँगने वाले की वाणी को सफल किया करते हैं।

---

१. छाला। २. कली। ३. सफेद और श्याम। ४. सफेद।



अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहउँ निरबान।
जनम जनम रति[1] राम पद यह बरदान न आन॥२०३

मेरी रुचि न अर्थ में है, न धर्म में, न काम में है और न मैं मोक्ष ही चाहता हूँ। प्रत्येक जन्म में सीताराम के चरणों में मेरी प्रीति बनी रहे, बस, यही वरदान माँगता हूँ, दूसरा कुछ नहीं।

जानहुँ राम कुटिल कर मोही ❀ लोग कहउ गुर साहिब द्रोही
सीता राम चरन रति मोरें ❀ अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरें

स्वयं रामचन्द्रजी मुझे भले ही कुटिल समझें और मुझे लोग गुरुद्रोही तथा स्वामिद्रोही भले ही कहें; पर सीतारामजी के चरणों में मेरा प्रेम आपकी कृपा से बढ़ता ही रहे।

जलदु जनम भरि सुरति[2] बिसारउ ❀ जाँचत जलु पबि पाहन डारउ
चातकु रटनि घटें घटि जाई ❀ बढ़ें प्रेम सब भाँति भलाई

बादल चाहे जन्मभर पपीहे की याद भुला दे; जल माँगने पर चाहे बज्र और पत्थर (ओले) ही गिरावे; पर पपीहे की रटन घटने से तो उसकी महिमा ही घट जायगी। उसका तो प्रेम बढ़ने ही से सब प्रकार की भलाई है।

कनकहिं बान[3] चढ़इ जिमि दाहें[4] ❀ तिमि प्रियतम पद नेम निबाहें
भरत बचन सुनि माँझ त्रिबेनी ❀ भइ मृदु बानि सुमङ्गल देनी

जिस तरह तपाने से सोने पर कान्ति (आब) आ जाती है, उसी तरह प्रियतम के चरणों में प्रेम के नियम निबाहने से होता है। भरत के वचन को सुनकर बीच त्रिवेणी में से सुन्दर मंगल देने वाली कोमल वाणी हुई। [प्रथम विशेष अलंकार]

तात भरत तुम्ह सब बिधि साधू ❀ राम चरन अनुराग अगाधू
बादि गलानि करहु मन माहीं ❀ तुम्ह सम रामहिं कोउ प्रिय नाहीं

हे तात ! भरत तुम सब प्रकार से साधु हो। रामचन्द्रजी के चरणों में तुम्हारा प्रेम अथाह है। तुम व्यर्थ ही मन में ग्लानि करते हो। रामचन्द्रजी को तुम्हारे समान कोई प्रिय नहीं है।

---

१. प्रेम। २. सुधि। ३. कान्ति, आब। ४. जलाने से।

दो०—तनु पुलकेउ हियँ हरष सुनि बेनि बचन अनुकूल।
भरत धन्य कहि धन्य सुर हरषित बरषहिं फूल ॥२०४

त्रिवेणीजी के अनुकूल वचनों को सुनकर भरत का शरीर पुलकित हो गया। हृदय में हर्ष छा गया। भरत धन्य हैं, धन्य हैं, ऐसा कहकर प्रसन्न होकर देवता फूल बरसाने लगे।

प्रमुदित तीरथराज निवासी ❀ बैषानस[1] बटु[2] गृही[3] उदासी[4]
कहहिं परसपर मिलि दस पाँचा ❀ भरत सनेह सील सुचि साँचा

तीर्थराज प्रयाग के बसने वाले वानप्रस्थ, ब्रह्मचारी, गृहस्थ, उदासी (संन्यासी) सब बहुत ही आनन्दित हुए और दस-पाँच मिलकर आपस में कहते हैं कि भरत का स्नेह और शील पवित्र और सच्चा है।

सुनत राम गुन ग्राम सुहाए ❀ भरद्वाज मुनिबर पहिं आए
दंड प्रनामु करत मुनि देखे ❀ मूरतिमन्त भाग्य निज लेखे

रामचन्द्रजी के गुणसमूहों को सुनते हुए वे मुनिवर भरद्वाज के समीप आये। मुनि ने भरत को साष्टांग प्रणाम करते देखा और उन्हें अपना मूर्त्तिमान् सौभाग्य समझा।

धाइ उठाइ लाइ उर लीन्हे ❀ दीन्हि असीस कृतारथ कीन्हे
आसनु दीन्ह नाइ सिरु बैठे ❀ चहत सकुच[5] गृहँ जनु भजि पैठे

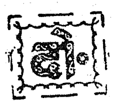
भरद्वाजजी ने दौड़कर भरत को उठाकर हृदय से लगा लिया और आशीर्वाद देकर उन्हें कृतार्थ किया। मुनि ने उन्हें (बैठने के लिए) आसन दिया, वे सिर नवाकर इस तरह बैठे, मानो भागकर संकोच के घर में घुस जाना चाहते हैं। [अनुक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार]

मुनि पूँछब कछु एह बड़ सोचू ❀ बोले रिषि लखि सील सँकोचू
सुनहु भरत हम सब सुधि पाई ❀ बिधि करतब पर किछु न बसाई

भरत के मन में यह बड़ा सोच था कि मुनि कुछ पूछेंगे (तो मैं क्या उत्तर दूँगा)। ऋषि (भरद्वाजजी) भरत के शील और संकोच को देखकर बोले—भरत! सुनो, हम सब खबर पा चुके हैं। विधाता की करनी पर किसी का कुछ वश नहीं चलता। [गूढ़ोत्तर अलंकार]

---

१. वानप्रस्थ। २ विद्यार्थी। ३. गृहस्थ। ४. संन्यासी। ५. लज्जा, संकोच।



तुम्ह गलानि जियँ जनि करहु समुझि मातु करतूति।
तात कैकेइहि दोषु नहिं गई गिरा मति धूति[1]।२०५।

माता (कैकेयी) की करतूत को समझकर तुम अपने जी में कुछ ग्लानि न करो। हे तात! इसमें कैकेयी का कोई दोष नहीं, उसकी बुद्धि को सरस्वती भ्रष्ट कर गई थी।

यहउ कहत भल कहिहि न कोऊ ❀ लोक बेद बुध संमत दोऊ
तात तुम्हार बिमल जसु गाई ❀ पाइहि लोकउ बेदु बड़ाई

ऐसा कहने में भी कोई भला न कहेगा; क्योंकि विद्वानों को लोक और वेद दोनों मान्य हैं। हे तात! तुम्हारे निर्मल यश को गाकर लोक और वेद दोनों बड़ाई पायेंगे।

लोक बेद संमत सबु कहई ❀ जेहि पितु देइ राजु सो लहई
राउ सत्यब्रत तुमहिं बोलाई ❀ देत राजु सुखु धरमु बड़ाई

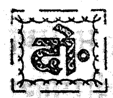
यह बात लोक और वेद दोनों को मान्य है और सब लोग भी ऐसा ही कहते हैं कि पिता जिसको राज दे, वही पाता है। सत्य नियम वाले राजा (दशरथ) तुमको बुलाकर राज्य देते, तो सुख मिलता और धर्म रहता और बड़ाई भी होती।

राम गवनु बन अनरथ मूला ❀ जो सुनि सकल बिस्व भइ सूला
सो भावी बस रानि अयानी ❀ करि कुचालि अंतहु पछितानी

पर रामचन्द्र का वन-गमन अनर्थ का मूल कारण हो गया, जिसको सुनकर सारे संसार को दुःख हुआ। पर वह भी भावी-वश हुआ। बेसमझ रानी (कैकेयी) कुचाल करके अन्त में पछताई।

तहँउँ तुम्हार अलप[2] अपराधू ❀ कहै सो अधम अयान असाधू
करतेहु राजु न तुम्हहिं न दोषू ❀ रामहिं होत सुनत संतोषू

उसमें भी तुम्हारा कोई जरा-सा भी अपराध कहे, तो वह अधम, अज्ञानी और असाधु है। यदि तुम राज्य करते, तो भी कोई दोष न होता। सुनकर रामचन्द्र को भी सन्तोष ही होता।



अब अति कीन्हेहु भरत भल तुम्हहिं उचित मत एहु।
सकल सुमंगल मूल जग रघुबर चरन सनेहु॥२०६॥

१. बिगाड़, भ्रष्ट। २. थोड़ा।

हे भरत, अब तुमने बहुत ही अच्छा किया। तुम्हारे लिए ऐसा ही करना उचित था। रघुनाथजी के चरणों में स्नेह होना ही संसार में सम्पूर्ण सुमंगलों का मूल है।

सो तुम्हार धनु जीवनु प्राना ❀ भूरि भाग को तुम्हहिं समाना
यह तुम्हार आचरजु न ताता ❀ दसरथ सुअन राम प्रिय भ्राता

वह तो तुम्हारा धन और जीवन और प्राण ही हैं, तुम्हारे बराबर बड़भागी दूसरा कौन है? हे तात! तुम्हारे लिए यह कुछ आश्चर्य की बात नहीं है; क्योंकि तुम दशरथ के पुत्र और रामचन्द्र के प्यारे भाई हो।

सुनहु भरत रघुबर मन माहीं ❀ प्रेम पात्रु तुम सम कोउ नाहीं
लषन राम सीतहिं अति प्रीती ❀ निसि सब तुम्हहिं सराहत बीती

हे भरत! सुनो, रामचन्द्र के मन में तुम्हारे समान प्रेमपात्र दूसरा कोई नहीं है। लक्ष्मण, राम और सीता तीनों को उस दिन सारी रात अत्यंत प्रेम के साथ तुम्हारी सराहना करते ही बीती।

जाना मरम नहात प्रयागा ❀ मगन होहिं तुम्हरे अनुरागा
तुम्ह पर अस सनेहु रघुबर कें ❀ सुख जीवन जग जस जड़ नर कें

प्रयागराज में जब वे स्नान कर रहे थे, उस समय मैंने उनका मर्म जाना। वे तुम्हारे प्रेम में मग्न हो रहे थे। तुम पर रामचन्द्र का ऐसा स्नेह है, जैसा मूर्ख मनुष्य को संसार में सुखपूर्वक जीने से होता है।

यह न अधिक रघुबीर बड़ाई ❀ प्रनत कुटुम्ब पाल रघुराई
तुम्ह तौ भरत मोर मत एहू ❀ धरें देह जनु राम सनेहू

इसमें रामचन्द्र की बहुत बड़ाई नहीं है, क्योंकि वे तो शरणागतों के कुटुम्ब-भर के पालने वाले हैं। हे भरत! तुम तो मेरी सम्मति में मानो रामचन्द्र के स्नेह की मूर्ति ही हो।

दो०— तुम कहँ भरत कलंक यह हम सब कहँ उपदेसु।
राम भगति रस सिद्धि हित भा यह समउ गनेस।२०७

हे भरत! तुम्हारे लिये (तुम्हारी समझ में) यह कलंक है; पर हम सबों के लिये उपदेश है। रामभक्तिरूपी रस की सिद्धि के लिये यह समय श्रीगणेश हुआ।

नव[1] बिधु[2] बिमल तात जसु तोरा ❀ रघुबर किङ्कर[3] कुमुद चकोरा
उदित सदा अथइहि[4] कबहूँ ना ❀ घटिहि न जग नभ दिन दिन दूना

हे तात ! तुम्हारा यश निर्मल नवीन चन्द्र है और रामचन्द्र के भक्त कुमुद और चकोर हैं। पर यह चन्द्र सदा उदय रहेगा, कभी अस्त न होगा। जगत्‌रूपी आकाश में यह घटेगा नहीं, वरन् दिन-दिन दूना होता रहेगा। [अधिक अभेद-रूपक अलंकार]

कोक[5] तिलोक प्रीति अति करिही ❀ प्रभु प्रताप रबि छबिहि न हरही
निसि दिन सुखद सदा सब काहू ❀ ग्रसिहि न कैकइ करतबु राहू

त्रैलोक्यरूपी चकवा इस पर अत्यंत प्रेम करेगा। प्रभु रामचन्द्र का प्रताप-रूपी सूर्य इसकी कान्ति को हरण नहीं करेगा। यह चन्द्रमा दिन-रात सदा सभी को सुख देने वाला होगा। इसको कैकेयी का करतूतरूपी राहु ग्रास नहीं करेगा।

पूरन राम सुप्रेम पियूषा ❀ गुरु अपमान दोष नहिं दूषा
राम भगत अब अमियँ अघाहूँ ❀ कीन्हेहु सुलभ सुधा[6] बसुधाहूँ

यह चन्द्रमा रामचन्द्र के सुन्दर प्रेमरूपी अमृत से पूर्ण है। यह गुरु के अपमान-रूपी दोष से दूषित नहीं। अब राम के भक्त इस अमृत से तृप्त हों। तुमने पृथ्वी पर भी अमृत को सुलभ कर दिया है।

भूप भगीरथ सुरसरि आनी ❀ सुमिरत सकल सुमंगल खानी
दसरथ गुन गन बरनि न जाहीं ❀ अधिकु कहा जेहि सम जग नाहीं

राजा भगीरथ गंगाजी को लाये, जिनका स्मरण करना ही सब सुमंगलों की खान है। राजा दशरथ के गुण-समूहों का तो वर्णन ही नहीं किया जा सकता। ज्यादा क्या ! जिनके बराब जगत् में दूसरा कोई नहीं है।

दो॰ जासु सनेह सकोच बस राम प्रगट भये आइ।
जे हर हिय नयननि कबहुँ निरखे नहीं अघाइ।२०८।

जिनके स्नेह और संकोच के वश में होकर भगवान् राम आकर प्रकट हुए। जिन्हें महादेव के हृदय के नेत्र देखते-देखते कभी तृप्त नहीं होते।

कीरति बिधु तुम्ह कीन्हि अनूपा ❀ जहँ बस राम प्रेम मृग रूपा
तात गलानि करहु जियँ जायें[7] ❀ डरहु दरिद्रहि पारस पायें

१. नया। २. चन्द्रमा। ३. दास। ४. अस्त होगा। ५. चकवा। ६. अमृत। ७. व्यर्थ।

तुमने कीर्तिरूपी अनुपम चन्द्रमा को उत्पन्न किया, जिसमें रामचन्द्र का प्रेम मृग के रूप में बस रहा है। इसलिए हे तात! तुम अपने जी में व्यर्थ ही ग्लानि कर रहे हो। पारस पाकर भी तुम दरिद्रता से डरते हो।

सुनहु भरत हम झूठ न कहहीं ❀ उदासीन तापस बन रहहीं
सब साधन कर सुलभ सुहावा ❀ लषन राम सिय दरसनु पावा

हे भरत! सुनो, हम झूठ नहीं कहते। हम उदासीन हैं, तपस्वी हैं और वन में रहते हैं। सब साधनों का उत्तम फल हमको राम, लक्ष्मण और जानकी का दर्शन प्राप्त हुआ।

तेहि फल कर फलु दरस तुम्हारा ❀ सहित प्रयाग सुभाग[1] हमारा
भरत धन्य तुम्ह जग जस जयऊ ❀ कहि अस प्रेम मगन मुनि भयऊ

उस फल ही का फल यह तुम्हारा दर्शन है। प्रयाग-राज-समेत हमारा अहोभाग्य है। हे भरत! तुम धन्य हो, तुमने अपने यश से जगत् को जीत लिया। ऐसा कहकर भरद्वाज मुनि प्रेम में मग्न हो गये।

सुनि मुनि बचन सभासद हरषे ❀ साधु सराहि सुमन सुर बरषे
धन्य धन्य धुनि गगन[2] प्रयागा ❀ सुनि सुनि भरतु मगन अनुरागा

भरद्वाज के वचन सुनकर सभासद प्रसन्न हो गये। साधु-साधु कहकर सराहना करते हुये देवताओं ने उन पर फूल बरसाये। प्रयागराज के आकाश में धन्य है, धन्य है, ऐसा शब्द हुआ, उसे सुन-सुनकर भरत प्रेम में मग्न हो गये।

दो०— पुलक गात हियँ राम सिय सजल सरोरुह[3] नैन।
करि प्रनाम मुनि मण्डलिहिं बोले गदगद बैन॥२०९

भरत के शरीर में रोमावलि खड़ी हो गई। उनके हृदय में सीताराम हैं और उनके कमल के समान नेत्रों में आँसू भरे हैं। वे मुनियों की मंडली को प्रणाम करके गद्गद् कंठ से वचन बोले—

मुनि समाजु अरु तीरथराजू ❀ साँचिहु सपथ अघाइ[4] अकाजू
एहि थल जौं किछु कहिअ बनाई ❀ एहि सम अधिक न अघ अधमाई[5]

मुनियों का समाज है, और फिर तीर्थराज है। यहाँ सच्ची सौगन्ध खाने से भी भरपूर हानि होती है। इस जगह यदि कुछ बात बनाकर कही जाय, तो

१. सौभाग्य। २. आकाश। ३. कमल। ४. भरपूर। ५. नीचता।

इसके समान बड़ा पाप और नीचता दूसरी न होगी।

तुम्ह सर्बग्य कहउँ सतिभाऊ ❀ उर अन्तरजामी रघुराऊ
मोहि न मातु करतब कर सोचू ❀ नहिं दुख जिय जग जानिहि पोचू

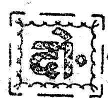
मैं सच्चे भाव से कहता हूँ। आप सर्वज्ञ हैं, हृदय की बात रामचन्द्रजी जानते हैं। मुझे माता (कैकेयी) की करतूत का कुछ भी सोच नहीं है और जगत् मुझे नीच समझे, इसका भी मन में दुःख नहीं है।

नाहिन डरु बिगरिहि परलोकू ❀ पितहु मरन कर मोहि न सोकू
सुकृत[1] सुजस भरि भुवन सुहाये ❀ लछिमन राम सरिस सुत पाये

मेरा परलोक बिगड़ जायगा, इसका भी डर मुझे नहीं है। पिताजी के मरने का भी मुझे शोक नहीं है, क्योंकि उनका सुन्दर पुण्य और सुयश सम्पूर्ण लोक में सुशोभित है, जो उनको राम-लक्ष्मण सरीखे पुत्र मिले।

राम बिरहँ तजि तनु छनभंगू[2] ❀ भूप सोच कर कवन प्रसंगू
राम लखन सिय बिनु पग पनहीं ❀ करि मुनि बेष फिरहिं बन बनहीं

जिन्होंने रामचन्द्रजी के वियोग में क्षणभंगुर शरीर को त्याग दिया, ऐसे राजा के लिये सोच करने का कौन-सा प्रसङ्ग है? परन्तु रामचन्द्रजी, लक्ष्मण और सीता पाँवों में बिना जूती के मुनि-वेष में बन-बन में फिरते हैं।



अजिन[3] बसन फल असन महि सयन डासि[4] कुस पात।
बसि तरु तर नित सहत हिम आतप[5] बरषा बात॥

वे मृगछाला का वस्त्र पहनते हैं, फलों का भोजन करते हैं, ज़मीन पर कुश और पत्ते बिछाकर सोते हैं, और पेड़ों के नीचे निवास करते नित्य सर्दी, गर्मी, वर्षा और हवा सहते हैं।

एहि दुख दाहँ दहइ दिन छाती ❀ भूख न बासर[6] नींद न राती
एहि कुरोग कर औषधु नाहीं ❀ सोधेउँ सकल बिस्व मन माहीं

इसी दुःख की जलन से निरन्तर मेरी छाती जलती है। मुझे न दिन में भूख लगती है, न रात में नींद आती है। मैंने मन ही मन सारे संसार को ढूँढ डाला, पर इस कुरोग की कोई औषधि कहीं नहीं है।

१. पुण्य। २. क्षण में नष्ट होने वाला। ३. मृगचर्म। ४. बिछाकर। ५. धूप। ६. दिन।

मातु कुमत बढ़ई अघ मूला ❀ तेहिं हमार हित कीन्ह बँसूला
कलि कुकाठ कर कीन्ह कुजंत्रू ❀ गाड़ि अवधि पढ़ि कठिन कुमंत्रू

माता का बुरा विचार पापों का मूल बढ़ई है। उसने हमारे हित का बसूला बनाया। उससे पाप-रूपी कुकाठ का कुयन्त्र बनाया और अवधि रूपी कठिन कुमंत्र पढ़कर उसे गाड़ दिया। [परम्परित रूपक अलंकार]

मोहि लगि यहु कुठाटु तेहिं ठाटा ❀ घालेसि सब जगु बारह बाटा[1]
मिटइ कुजोगु राम फिरि आयें ❀ बसइ अवध नहिं आन उपायें

उसने यह सब कुकाठ मेरे लिए रचा और सारे जगत् को तीन-तेरह करके नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। यह कुयोग तो रामचन्द्रजी के लौट आने पर ही मिटेगा, और तभी अयोध्या बस सकती है, दूसरे किसी उपाय से नहीं।

भरत बचन सुनि मुनि सुखु पाइ ❀ सबहिं कीन्ह बहु भाँति बड़ाई
तात करहु जनि सोचु बिसेखी ❀ सब दुख मिटिहिं राम पग देखी

भरत के वचनों को सुनकर मुनि ने सुख पाया और सबने भी उनकी बहुत प्रकार से बड़ाई की। मुनि ने कहा—हे तात! अधिक सोच मत करो। रामचन्द्र के चरणों के दर्शन करते ही सारे दुःख मिट जायँगे।

दो॰ करि प्रबोधु मुनिबर कहेउ अतिथि प्रेम प्रिय होहु।
कंद मूल फल फूल हम देहिं लेहु करि छोहु॥२११

इस प्रकार मुनिराज भरद्वाजजी ने उनका समाधान करते हुये कहा—अब आप सब हमारे प्रिय अतिथि होओ और कृपा करके कंद, मूल, फल, फूल जो कुछ हम दें, स्वीकार कीजिये।

सुनि मुनि बचन भरत हिय सोचू ❀ भयेउ कुअवसर कठिन सँकोचू
जानि गरुइ[2] गुरु गिरा बहोरी ❀ चरन बंदि बोले कर जोरी

मुनि के वचन सुनकर भरत के हृदय में सोच हुआ कि बेमौक़े कठिन संकोच आ पड़ा। फिर गुरु (भरद्वाजजी) की वाणी को आदरणीय समझकर, उनके चरणों की वन्दना कर हाथ जोड़कर वे बोले—

सिर धरि आयसु करिअ तुम्हारा ❀ परम धरम यहु नाथ हमारा
भरत बचन मुनिबर मन भाए ❀ सुचि सेवक सिष[3] निकट बुलाए

१. छिन्न-भिन्न, तितर-बितर। २. आदरणीय। ३. शिष्य।

हे नाथ ! हमारा यह परम धर्म है कि हम आपकी आज्ञा को शिरोधार्य कर उसका पालन करें। भरत के ये वचन मुनिराज के मन में प्रिय लगे। उन्होंने विश्वासी सेवकों और शिष्यों को पास बुलाया।

चाहिअ कीन्हि भरत पहुनाई[1] ❀ कंद मूल फल आनहु जाई
भलेहिं नाथ कहि तिन्ह सिर नाये ❀ प्रमुदित निज निज काज सिधाये

और कहा—भरत की पहुनाई करनी चाहिये; इसलिये जाकर कंद, मूल और फल लाओ। उन्होंने 'हे नाथ ! बहुत अच्छा,' कहकर सिर नवाया और आनन्दित होकर वे अपने-अपने काम को चले गये।

मुनिहि सोच पाहुन बड़ नेवता ❀ तसि पूजा चाहिअ जस देवता
सुनि रिधि सिधि अनमादिक आईं ❀ आयसु होइ सो करहिं गोसाईं

मुनि सोचने लगे कि हमने बहुत बड़े पाहुने को न्योता है। जैसा देवता हो, उसकी वैसी ही पूजा भी होनी चाहिये। यह सुनकर ऋद्धियाँ और अणिमादिक सिद्धियाँ आ गईं। उन्होंने कहा—हे गोसाईं ! जो आपकी आज्ञा हो, सो हम करें।



राम बिरह ब्याकुल भरतु सानुज[2] सहित समाज।
पहुनाई करि हरहु स्रम कहा मुदित मुनिराज॥२१२

मुनिराज ने प्रसन्न होकर कहा—छोटे भाई शत्रुघ्न और समाज-सहित भरत रामचन्द्रजी के विरह में व्याकुल हैं, इनका आतिथ्य-सत्कार करके इनकी थकावट दूर करो।

रिधि[3] सिधि सिर धरि मुनिबर बानी ❀ बड़भागिनि आपुहि अनुमानी
कहहिं परसपर सिधि समुदाई ❀ अतुलित अतिथि राम लघु भाई

ऋद्धि, सिद्धि ने मुनिराज की आज्ञा माथे चढ़ाकर अपने को बड़भागिनी समझा। सब सिद्धियाँ आपस में कहने लगीं—रामचन्द्र के छोटे भाई भरत ऐसे अतिथि हैं, जिनकी तुलना में कोई नहीं आ सकता।

मुनिपद बंदि करिअ सोइ आजू ❀ होइ सुखी सब राज समाजू
अस कहि रचेउ रुचिर गृह नाना ❀ जेहि बिलोकि बिलखाहिं बिमाना

---

१. मेहमानी। २. छोटे भाई सहित। ३. अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व, ये आठ सिद्धियाँ हैं। ऋद्धि समृद्धि को कहते हैं।

मुनि के चरणों की वन्दना करके आज वही करना चाहिये, जिससे सारा राज-समाज सुखी हो। ऐसा कहकर उन्होंने बहुत-से ऐसे सुन्दर घर बनाये, जिन्हें देखकर विमान भी लजा जाते हैं।

भोग बिभूति भूरि[1] भरि राखे ❀ देखत जिन्हहिं अमर[2] अभिलाषे
दासी दास साजु सब लीन्हें ❀ जोगवत रहहिं मनहिं मनु दीन्हें

उन घरों में भोगने के लिए उन्होंने बहुत-सा ऐश्वर्य का सामान भरकर रख दिया, जिन्हें देखकर देवताओं का भी जी ललचा जाता है। दासी-दास सब तरह का सामान लिये हुए, मन से मन मिलाकर उनकी सँभाल करते रहते हैं।

सब समाज सजि सिधि पल माहीं ❀ जे सुख सुरपुर सपनेहुँ नाहीं
प्रथमहिं बास दिए सब केही[3] ❀ सुंदर सुखद जथा रुचि जेही

स्वर्ग में भी, स्वप्न में भी, देखने को जो सुख न मिले, सिद्धियों ने वहाँ पलभर में वे सब सामान सजाकर रख दिये। पहले तो उन्होंने सबको उनकी रुचि के अनुसार सुन्दर सुखदायी निवास-स्थान दिये।

दो० बहुरि सपरिजन भरत कहुँ रिषि अस आयसु दीन्ह।
बिधि बिसमय दायकु बिभव मुनिबर तपबल कीन्ह॥

फिर कुटुम्ब-सहित भरत को वहाँ निवास करने की मुनिवर ने आज्ञा दी। उन्होंने अपनी तपस्या के बल से ऐसा वैभव रच दिया कि जिसको देखकर ब्रह्मा भी चकित हो गये।

मुनि प्रभाउ जब भरत बिलोका ❀ सब लघु लगे लोकपति लोका
सुख समाजु नहिं जाइ बखानी ❀ देखत बिरति[4] बिसारहिं ज्ञानी

जब भरत ने मुनि के प्रभाव को देखा, तब उसके आगे उन्हें इन्द्रादि लोकपालों के लोक भी तुच्छ जान पड़े। वहाँ के सुख की सामग्री का बखान नहीं किया जा सकता, जिसे देखते ही ज्ञानी लोग भी वैराग्य भूल जाते हैं।

आसन सयन सुबसन बिताना ❀ बन बाटिका बिहँग मृग नाना
सुरभि[5] फूल फल अमिअ समाना ❀ बिमल जलासय बिबिध बिधाना

आसन, शय्या, सुन्दर वस्त्र, चँदोवे, वन, बगीचे, तरह-तरह के पक्षी और

१. बहुत। २. देवता। ३. को। ४. त्याग। ५. सुगंधित।

पशु, सुगन्धित फूल और अमृत के समान स्वादिष्ट फल और शुद्ध जल के अनेकों तरह के (कुँवे, तालाब, बावड़ी आदि) जलाशय,

असन पान सुचि अमिअ अमी से ❀ देखि लोग सकुचात जमी[1] से
सुर सुरभी सुरतरु सबही कें ❀ लखि अभिलाषु सुरेस सची कें

अमृत से भी अमृत के समान खाने-पीने के पदार्थ वहाँ थे, जिनको देखकर सब लोग ऐसे सकुचाने लगे, जैसे संयमी मुनि हों। सभी के निवास-स्थानों में अलग-अलग कामधेनु और कल्पवृक्ष हैं, जिन्हें देखकर इन्द्र और इन्द्राणी का भी जी ललचा जाता है।

रितु बसंत बह त्रिबिध बयारी ❀ सब कहँ सुलभ पदारथ चारी
स्रक चंदन बनितादिक भोगा ❀ देखि हरष बिसमय बस लोगा

वसन्त-ऋतु है। शीतल, मन्द, सुगन्ध तीन प्रकार की हवा बह रही है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पदार्थ सबके लिए सुलभ हो गये हैं। माला, चन्दन, स्त्री आदिक भोगों को देखकर सब लोग हर्ष और आश्चर्य के वश हो रहे हैं।

दो० संपति चकई भरत चक मुनि आयस खेलवार[2]।
तेहि निसि आस्रम पिंजराँ राखे भा[3] भिनुसार[4]।२१४।

सम्पत्ति (भोग-विलास की सामग्री) चकई है, भरत चकवा हैं और मुनि की आज्ञा बहेलिया है। जिसने उस रात को आश्रमरूपी पींजरे में इन दोनों को बन्द कर रक्खा और ऐसे ही सवेरा हो गया; अर्थात् जिस तरह चकई-चकवे का एक पींजरे में रखने पर भी रात को संयोग नहीं होता, उसी तरह भोग-विलास की अनेकों सामग्रियों के उपस्थित रहने पर भी भरत ने किसी वस्तु को मन से भी ग्रहण नहीं किया।

कीन्ह निमज्जनु तीरथराजा ❀ नाइ मुनिहिं सिरु सहित समाजा
रिषि आयसु असीस सिर राखी ❀ करि दंडवत बिनय बहु भाषी

प्रातःकाल भरत ने तीर्थराज में स्नान किया और समाज-सहित मुनि को सिर नवाकर और ऋषि की आज्ञा और आशीर्वाद को सिर चढ़ाकर दण्डवत करके बहुत विनती की।

---

१. त्यागी, संयम से रहने वाला। २. बहेलिया। ३. हुआ। ४. सवेरा।

पथ गति कुसल साथ सब लीन्हें ❀ चले चित्रकूटहिं चितु दीन्हें
रामसखा कर दीन्हें लागू[1] ❀ चलत देह धरि जनु अनुरागू

रास्ते को पहचानने में चतुर लोगों को साथ लेकर सब लोग चित्रकूट में मन लगाये चले। भरत रामसखा (गुह) के हाथ में हाथ दिये हुए ऐसे जा रहे हैं, मानो साक्षात् प्रेम ही शरीर धारण किये हुये हो।

नहिं पदत्रान[2] सीस नहिं छाया ❀ प्रेमु नेमु ब्रतु धरमु अमाया
लखन राम सिय पंथ कहानी ❀ पूछत सखहिं कहत मृदुबानी

भरत के पावों में जूते नहीं; सिर पर छाया नहीं। उनका प्रेम, नियम, व्रत और धर्म निष्कपट है। वे सखा (गुह) से लक्ष्मण, रामचन्द्र और सीता के रास्ते की कथा पूछते हैं और वह कोमल वाणी से कहता है।

राम बास थल बिटप बिलोकें ❀ उर अनुराग रहत नहिं रोकें
देखि दसा सुर बरिषहिं फूला ❀ भइ मृदु महि मगु मङ्गल मूला

रामचन्द्र के ठहरने की जगहों और वृक्षों को देखकर उनके हृदय में प्रेम रोके नहीं रुकता। उनकी दशा देखकर देवता फूल बरसाते हैं। पृथ्वी कोमल हो गई है और मार्ग मंगल का मूल हो गया है।

दो० किएँ जाहिं छाया जलद सुखद बहइ बर बात[3] ।
तस मगु भयेउ न राम कहँ जस भा भरतहिं जात ॥

बादल छाया करते जा रहे हैं; सुख देने वाला सुन्दर पवन बह रहा है। भरत के जाने के समय रास्ता जैसा सुखदायी हुआ, वैसा सुखदायी रामचन्द्र को भी नहीं हुआ था। [समाधि अलङ्कार]

जड़ चेतन मग जीव घनेरे ❀ जे चितए प्रभु जिन्ह प्रभु हेरे
ते सब भए परम पद जोगू ❀ भरत दरस मेटा भव रोगू

रास्ते में असंख्य जड़ और चैतन्य जीव थे। उनमें से जिन्होंने रामचन्द्रजी को देखा और जिनको रामचन्द्रजी ने देखा, वे सभी परमपद पाने के अधिकारी हो गये। परन्तु भरत के दर्शन ने उनका जन्म-मरण का रोग ही मिटा दिया।

येह बड़ि बात भरत कइ नाहीं ❀ सुमिरत जिनहिं रामु मन माहीं
बारक राम कहत जग जेऊ ❀ होत तरन तारन नर तेऊ

---
१. हाथ में हाथ दिये। २. जूता। ३. वायु।

भरत के लिए यह कोई बड़ी बात नहीं है, जिनको रामचन्द्रजी स्वयं अपने मन में स्मरण करते रहते हैं। संसार में जो मनुष्य एक बार भी राम-नाम कह लेते हैं, वे भी तरने-तारने वाले हो जाते हैं।

भरतु राम प्रिय पुनि लघु भ्राता ❀ कस न होइ मगु मंगलदाता
सिद्ध साधु मुनिबर अस कहहीं ❀ भरतहिं निरखि हरषि हिय लहहीं

फिर भरत एक तो रामचन्द्रजी के प्यारे, दूसरे उनके छोटे भाई ठहरे; भला, फिर उनके लिये रास्ता सुखदायक क्यों न हो? सिद्ध, साधु और श्रेष्ठ मुनि ऐसा कह रहे हैं और भरत को देखकर मन में प्रसन्न हो रहे हैं।

देखि प्रभाउ सुरेसहि सोचू ❀ जगु भल भलेहि पोच कहुँ पोचू
गुरु सन कहेउ करिअ प्रभु सोई ❀ रामहिं भरतहिं भेंट न होई

भरत के इस प्रेम के प्रभाव को देखकर इन्द्र को चिन्ता हुई। संसार भले के लिए भला और बुरे के लिये बुरा है। इन्द्र ने गुरु वृहस्पतिजी से कहा—गुरु महाराज! अब वही उपाय कीजिये, जिससे रामचन्द्र और भरत की भेंट ही न हो।



राम संकोची प्रेम बस भरत सुप्रेम पयोधि।
बनी बात बिगरन चहति करिअ जतनु छल सोधि[1]॥

रामचन्द्रजी संकोची और प्रेम के वश हो जाने वाले हैं और भरत प्रेम के समुद्र हैं। बनी-बनाई बात बिगड़ना चाहती है। इसलिये कुछ छल ढूँढ़कर इसका उपाय कीजिये।

बचन सुनत सुरगुरु मुसुकाने ❀ सहसनयन[2] बिनु लोचन[3] जाने
कह गुरु बादि छोभु छल छाँड़ू ❀ इहाँ कपट कर होइहि भाँड़ू[4]

इन्द्र के वचन सुनकर देव-गुरु वृहस्पति मुस्कुराये और उन्होंने हज़ार नेत्रों वाले इन्द्र को बिना नेत्र का (अन्धा, मूर्ख) समझा, और कहा—तुम्हारी घबराहट व्यर्थ है। तुम छल छोड़ दो। यहां छल का भंडा फूट जायगा।

मायापति सेवक सन माया ❀ करइ त उलटि परइ सुरराया
तब किछु कीन्ह राम रुख जानी ❀ अब कुचालि करि होइहि हानी

हे देवराज इन्द्र! माया के स्वामी (रामचन्द्र) के सेवक से जो माया

१. ढूँढ़कर। २. इन्द्र। ३. आँख। ४. भंडाफोड़।

करता है, तो वह उलटकर अपने ही ऊपर आ पड़ती है। उस समय तो रामचन्द्र का रुख जानकर कुछ किया था। पर इस समय जो कुचाल चलोगे तो हानि ही होगी।

सुनु सुरेस रघुनाथ सुभाऊ ❀ निज अपराधु रिसाहिं[1] न काऊ
जो अपराधु भगत कर करई ❀ राम रोष पावक[2] सो जरई

हे इन्द्र! रामचन्द्र का स्वभाव सुनो, कि वे अपने प्रति किये गये अपराध से किसी पर क्रोध नहीं करते; पर जो कोई उनके भक्त का अपराध करता है, वह उनकी क्रोधाग्नि में जल जाता है।

लोकहुँ बेद बिदित इतिहासा ❀ येह महिमा जानहिं दुरबासा[3]
भरत सरिस को राम सनेही ❀ जगु जप राम रामु जप जेही

यह इतिहास (कथा) लोक और वेद में प्रकट है और इसकी महिमा दुर्वासा मुनि जानते हैं। भरत के समान रामचन्द्रजी का प्रेमी और कौन होगा? सारा संसार तो राम को जपता है और राम भरत को जपते हैं। [मालादीपक अलंकार]

दो॰ मनहुँ न आनिअ अमरपति रघुबर भगत अकाजु।
अजसु लोक परलोक दुख दिन दिन सोक समाजु॥

इसलिये हे इन्द्र! रामचन्द्र के भक्त का काम बिगाड़ने की बात कभी मन में भी न लाओ। इससे लोक में अपयश और परलोक में दुःख होगा, और दिन-दिन सोच का समूह बढ़ता ही जायगा।

सुनु सुरेस उपदेसु हमारा ❀ रामहिं सेवक परम पिआरा
मानत सुखु सेवक सेवकाई ❀ सेवक बैर बैरु अधिकाई

हे इन्द्र! हमारा उपदेश सुनो। रामचन्द्रजी को भक्त अत्यन्त प्रिय हैं। वे अपने भक्त की सेवा से सुख मानते हैं और भक्त के साथ वैर करने में बड़ा भारी वैर मानते हैं।

जद्यपि सम नहिं राग न रोषू ❀ गहहिं न पाप पूनु[4] गुन दोषू
करम प्रधान बिस्व करि राखा ❀ जो जस करइ सो तस फलु चाखा

यद्यपि रामचन्द्रजी समदर्शी हैं, न उनमें राग है, न रोष है। न वे पाप-

---

१. अप्रसन्न होते हैं। २. अग्नि। ३. एक मुनि। ४. पुण्य।

पुण्य और गुण-दोष ही ग्रहण करते हैं। उन्होंने विश्व में कर्म ही को प्रधान कर रक्खा है। जो जैसा करता है, वह वैसा फल पाता है।

तदपि करहिं सम बिषम बिहारा[1] ❀ भगत अभगत हृदय अनुसारा
अगुन अलेप अमान एकरस ❀ रामु सगुन भए भगत प्रेम बस

तथापि भक्त और अभक्त के हृदय के अनुसार वे सम और विषम व्यवहार करते हैं। गुण-रहित, निर्लेप, मान-रहित और सदा एकरस भगवान् राम भक्त-प्रेम के वश होकर ही सगुण हुए हैं। [विरोधाभास अलंकार]

राम सदा सेवक रुचि राखी ❀ बेद पुरान साधु सुर साखी
अस जियँ जानि तजहु कुटिलाई ❀ करहु भरत पद प्रीति सुहाई

रामचन्द्रजी सदा अपने सेवकों की रुचि रखते आये हैं। इस बात के बेद, पुराण, महात्मा लोग और देवता साक्षी हैं। ऐसा जी में समझकर कुटिलता छोड़ दो और भरत के चरणों में सुहावनी प्रीति करो।

दो० **राम भगत परहित निरत पर दुख दुखी दयाल।**
भगत सिरोमनि भरत तें जनि डरपहु सुरपाल॥

हे इन्द्र! रामचन्द्रजी के भक्त सदा दूसरों के हित में तत्पर रहते हैं। दूसरों का दुःख देखकर वे (भक्त) दुःखी होते और दयालु होते हैं। भरत तो भक्तों के शिरोमणि हैं, इसलिए उनसे बिलकुल मत डरो।

सत्यसंध[2] प्रभु सुर हितकारी ❀ भरत राम आयसु अनुसारी
स्वारथ बिबस बिकल तुम्ह होहू ❀ भरत दोसु नहिं राउर मोहू

प्रभु रामचन्द्रजी सत्यप्रतिज्ञ और देवताओं के हितकर्त्ता हैं और भरत रामचन्द्र की आज्ञा का अनुसरण करने वाले हैं। तुम व्यर्थ ही अपने स्वार्थ के वश होकर घबराते हो। इसमें भरत का कोई दोष नहीं, तुम्हारा ही मोह है।

सुनि सुरबर सुरगुर बर बानी ❀ भा प्रमोदु मन मिटी गलानी
बरषि प्रसून हरषि सुरराऊ ❀ लगे सराहन भरत सुभाऊ

देवगुरु बृहस्पति की वाणी सुनकर इन्द्र के मन में बड़ा हर्ष हुआ और उनकी चिन्ता मिट गई। तब सुरराज प्रसन्न होकर भरत पर फूल बरसाने और उनके स्वभाव की प्रशंसा करने लगे।

---

१. व्यवहार। २. सच्ची प्रतिज्ञा करने वाले।

एहि बिधि भरत चले मग जाहीं ❀ दसा देखि मुनि सिद्ध सिहाहीं
जबहिं राम कहि लेहिं उसासा ❀ उमगत प्रेमु मनहुँ चहुँ पासा

इस प्रकार भरत रास्ते में चले जा रहे हैं। उनकी दशा देखकर मुनि और सिद्ध लोग भी सिहाते हैं। भरत जब राम कहकर लम्बी साँस लेते हैं, तब मानो चारों ओर प्रेम उमड़ पड़ता है।

द्रवहिं बचन सुनि कुलिस पषाना[1] ❀ पुरजन प्रेमु न जाइ बखाना
बीच बास करि जमुनहिं आए ❀ निरखि नीरु लोचन जल छाए

उनके प्रेम-भरे वचनों को सुनकर बज्र और पत्थर भी पिघल जाते हैं। अयोध्यावासियों का प्रेम तो कहते ही नहीं बनता। बीच में मुकाम करके भरत यमुना-तट पर पहुँचे। यमुना के जल को देखकर उनकी आँखों में जल भर आया।

दो॰ रघुबर बरन[2] बिलोकि बर बारि समेत समाज।
होत मगन बारिधि बिरह चढ़े बिबेक जहाज ॥२१९

यमुना का नीला जल रामचन्द्रजी के शरीर के श्याम रंग के समान देखकर समाज-समेत भरत रामचन्द्रजी के विरहरूपी समुद्र में डूबते-डूबते विवेकरूपी जहाज पर चढ़ गये। [प्रथम प्रतीप अलंकार]

जमुन तीर तेहि दिन करि बासू ❀ भयेउ समय सम सबहिं सुपासू
रातिहिं घाट घाट की तरनी[3] ❀ आईं अगनित जाहिं न बरनी

उस दिन यमुना के किनारे निवास किया। समयानुसार सबके लिये सुन्दर व्यवस्था की गई। रात ही रात में घाट-घाट की इतनी नावें वहाँ आगईं, जिनका वर्णन नहीं हो सकता।

प्रात पार भए एकहि खेवाँ ❀ तोषे रामसखा की सेवाँ
चले नहाइ नदिहि सिरु नाई ❀ साथ निषादनाथ दोउ भाई

सवेरे एक ही खेवे में सब लोग पार हो गये और रामचन्द्रजी के सखा गुह की सेवा से सन्तुष्ट हुये। स्नान करके और फिर नदी को नमस्कार करके निषाद-राज और दोनों भाई साथ चले।

१. पत्थर। २. वर्ण, रंग। ३. नाव।

आगें मुनिबर बाहन आछें ❀ राज समाज जाइ सबु पाछें
तेहि पाछें दोउ बंधु पयादें[1] ❀ भूषन बसन बेष सुठि सादें

आगे वशिष्ठजी की अच्छी-अच्छी सवारियाँ हैं। उनके पीछे सारा राज-परिवार जा रहा है। उसके पीछे दोनों भाई सादे भूषण-वस्त्र पहने, मामूली वेष से पैदल चल रहे हैं।

सेवक सुहृद सचिवसुत साथा ❀ सुमिरत लखनु सीय रघुनाथा
जहँ जहँ राम बास बिस्रामा ❀ तहँ तहँ करहिं सप्रेम प्रनामा

सेवक, मित्र और मन्त्री के पुत्र उनके साथ हैं। वे राम, लक्ष्मण और सीता को स्मरण करते जा रहे हैं। जहाँ-जहाँ रामचन्द्रजी ने वास और विश्राम किया था, वहाँ-वहाँ वे प्रेम-सहित प्रणाम करते हैं।



मगबासी[2] नरनारि सुनि धाम काम तजि धाइ।
देखि सरूप सनेह सब मुदित जनम फलु पाइ ॥२२०

रास्ते में बसने वाले स्त्री-पुरुष उनका आना सुनकर घर के काम-काज छोड़कर दौड़ पड़ते हैं और सब लोग उनके रूप और प्रेम को देखकर जन्म लेने का फल पाकर आनन्दित होते हैं।

कहहिं सप्रेम एक एक पाहीं ❀ रामु लखनु सखि होहिं कि नाहीं
बय[3] बपु[4] बरन रूपु सोइ आली ❀ सीलु सनेहु सरिस सम चाली

गाँवों की स्त्रियाँ एक दूसरे से कहती हैं—क्यों सखी ! ये राम-लक्ष्मण हैं कि नहीं ? हे सखी ! इनकी अवस्था, शरीर और रङ्ग-रूप तो वही है, और शील, स्नेह तथा चाल भी उन्हीं के समान है। [सामान्य अलंकार]

बेषु न सो सखि सीय न संगा ❀ आगें अनी[5] चली चतुरङ्गा
नहिं प्रसन्न मुख मानस[6] खेदा ❀ सखि संदेहु होइ एहिं भेदा

पर हे सखी ! न तो इनका वेष वैसा है और न सीता इनके साथ हैं। और इनके आगे चतुरङ्गिनी सेना चली जा रही है। ये प्रसन्न मुख भी नहीं हैं, इनके मन में खेद है। हे सखी ! इसी भेद के कारण सन्देह होता है। [विशेषकोन्मीलित अलंकार]

१. पैदल। २. रास्ते में बसने वाले। ३. अवस्था। ४. शरीर। ५. सेना। ६. मन में।

तासु तरक तियगन मन मानी ❀ कहहिं सकल तोहि सम न सयानी
तेहि सराहि बानी फुरि पूजी[1] ❀ बोली मधुर बचन तिय दूजी

उस स्त्री का तर्क अन्य स्त्रियों को अच्छा लगा। सब कहने लगीं कि तेरे बराबर चतुर और कोई नहीं है। यों उसकी सराहना और तेरी बात सत्य हो, इस प्रकार उसका सम्मान करके दूसरी स्त्री मीठे वचन बोली—

कहि सप्रेम सब कथा प्रसंगू ❀ जेहि बिधि राम राज रस भंगू
भरतहि बहुरि सराहन लागी ❀ सील सनेह सुभाय सुभागी

जिस तरह रामचन्द्रजी के राजतिलक में विघ्न हुआ था, वह सब कथा का प्रसंग प्रेम-पूर्वक कहकर फिर वह सौभाग्यवती भरत की और उनके शील, स्नेह और स्वभाव की प्रशंसा करने लगी।

दो० चलत पयादें खात फल पिता दीन्ह तजि राजु।
जात मनावन रघुबरहि भरत सरिस को आजु।२२१।

वह कहने लगी—देखो, भरत को पिता ने राज्य दिया था, पर उसको इन्होंने छोड़ दिया। ये पैदल ही चलते हैं, फलाहार करते हैं, रामचन्द्रजी को मनाने के लिए जाते हैं। आज भरत के समान कौन है?

भायप भगति भरत आचरनू ❀ कहत सुनत दुख दूषन हरनू
जो किछु कहब थोर सखि सोई ❀ राम बन्धु अस काहे न होई

भरत का भाईपन, इनकी भक्ति और इनके आचरण कहने और सुनने से दुःखों और दोषों को हरने वाले हैं। हे सखि! इनके सम्बन्ध में जो कुछ कहा जाय, इनके लिए थोड़ा ही है। भला, रामचन्द्र के भाई होकर ऐसे क्यों न हों?
[द्वितीय सम अलंकार]

हम सब सानुज भरतहि देखें ❀ भइन्ह धन्य जुबती जन लेखें
सुनि गुन देखि दसा पछिताहीं ❀ कैकइ जननि जोगु सुतु नाहीं

हम सब आज शत्रुघ्न-सहित भरत को देखकर धन्य स्त्रियों की गिनती में आ गईं। इस प्रकार भरत के गुण सुनकर, उनकी दशा देखकर स्त्रियाँ पछताती हैं और कहती हैं—यह पुत्र कैकेयी जैसी माता के योग्य नहीं है।

कोउ कह दूषनु रानिहि नाहिन ❀ बिधि सबु कीन्ह हमहिं जो दाहिन
कहँ हम लोक बेद बिधि हीनी ❀ लघु तिय कुल करतूति मलीनी

१. सम्मान करके।

कोई कहती है—इसमें रानी का कुछ दोष नहीं। विधाता ही ने सब कुछ किया, जो हमारे अनुकूल है। कहाँ तो हम लोक और वेद-विधि से हीन, कुल और करतूत दोनों से मलिन तुच्छ स्त्रियाँ, [पर्यस्तापन्हुति अलंकार]

बसहिं कुदेस[1] कुगाँव कुबामा ❀ कहँ यह दरस पुन्य परिनामा
अस अनंदु अचरज प्रति ग्रामा ❀ जनु मरुभूमि कलपतरु जामा

जो बुरे देश, बुरे गाँव में बसती हैं और नीच स्त्रियाँ हैं। और कहाँ पुण्यों का परिणाम-स्वरूप यह दर्शन! ऐसा ही आनन्द और आश्चर्य गाँव-गाँव में हो रहा है, मानो मरुदेश में कल्पवृक्ष उग आया हो।



भरत दरसु देखत खुलेउ मग लोगन्ह कर भागु।
जनु सिंघलबासिन्ह भयउ बिधि बस सुलभ प्रयागु॥

भरत का दर्शन करने से रास्ते के लोगों के भाग्य खुल गये; मानो सिंहल-द्वीप के बसने वालों को भाग्यवश तीर्थराज प्रयाग सुलभ हो गया हो।

निज गुन सहित राम गुन गाथा ❀ सुनत जाहिं सुमिरत रघुनाथा
तीरथ मुनि आस्रम सुरधामा[2] ❀ निरखि निमज्जहिं करहिं प्रनामा

अपने गुणों-सहित रामचन्द्र के गुणों की कथा सुनते हुये, रघुनाथजी को स्मरण करते हुये भरत चले जा रहे हैं। तीर्थ, मुनियों के आश्रम, देवताओं के मन्दिर देखकर वे स्नान और प्रणाम करते हैं। [यथासंख्य अलंकार]

मन ही मन माँगहिं बरु एहू ❀ सीय राम पद पदुम सनेहू
मिलहिं किरात कोल बनबासी ❀ बैषानस[3] बटु[4] जती[5] उदासी

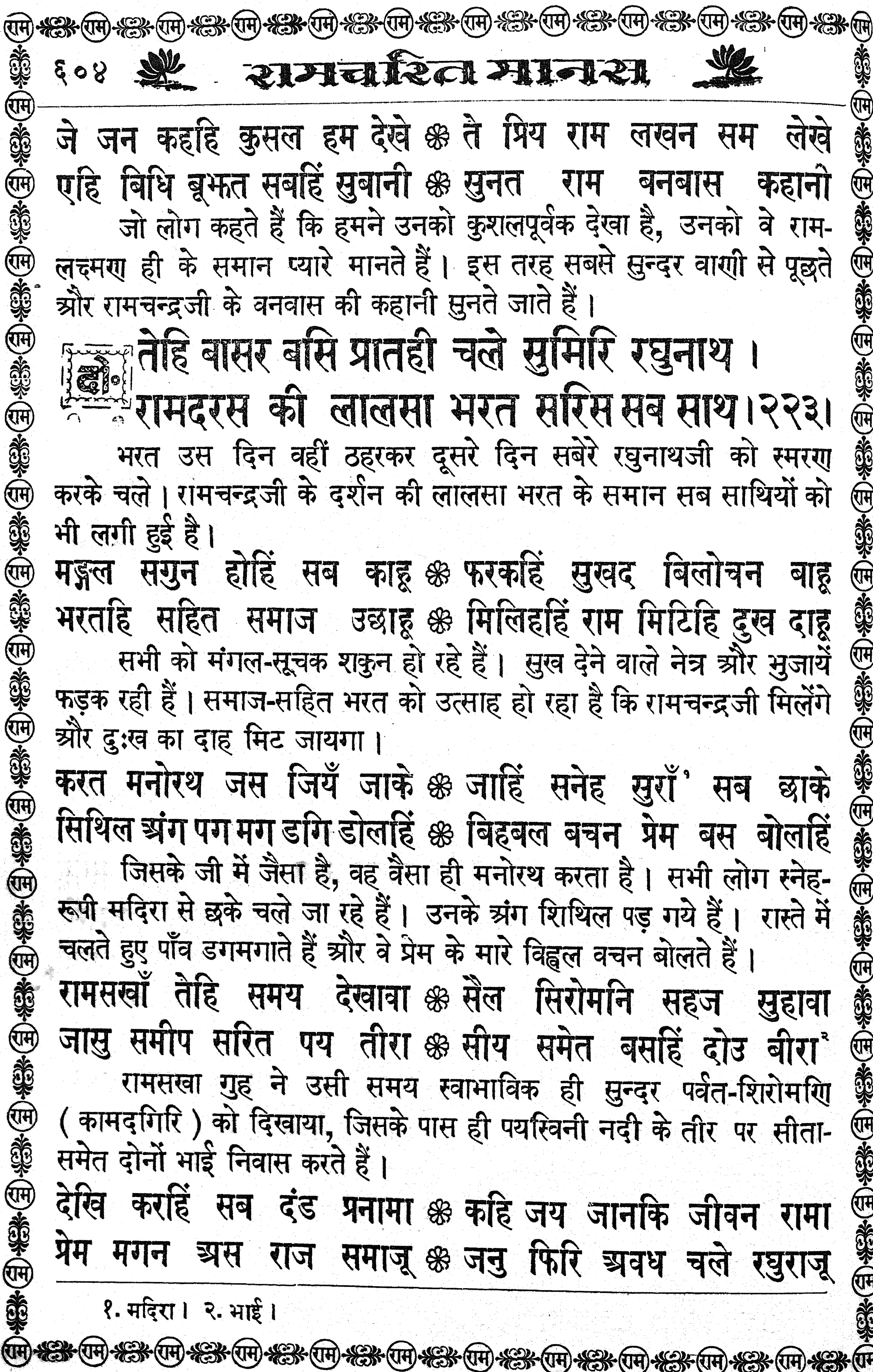
भरत मन ही मन यह वरदान माँगते हैं कि सीतारामजी के चरण-कमलों में प्रेम हो। रास्ते में भील, कोल आदि वनवासी तथा वानप्रस्थ, ब्रह्मचारी, संन्यासी और विरक्त मिलते हैं।

करि प्रनामु पूँछहिं जेहि तेही ❀ केहि बन लखनु रामु बैदेही
ते प्रभु समाचार सब कहहीं ❀ भरतहि देखि जनम फलु लहहीं

जिस-तिस को प्रणाम करके वे पूछते हैं कि राम, लक्ष्मण और जानकी किस वन में हैं? वे प्रभु के समाचार कहते हैं और भरत को देखकर जन्म का फल पाते हैं।

---

१. जंगली देश। २. देव-मन्दिर। ३. वानप्रस्थ। ४. ब्रह्मचारी। ५. संन्यासी।



जे जन कहहिं कुसल हम देखे ❀ ते प्रिय राम लखन सम लेखे
एहि बिधि बूझत सबहिं सुबानी ❀ सुनत राम बनबास कहानी

जो लोग कहते हैं कि हमने उनको कुशलपूर्वक देखा है, उनको वे राम-लक्ष्मण ही के समान प्यारे मानते हैं। इस तरह सबसे सुन्दर वाणी से पूछते और रामचन्द्रजी के वनवास की कहानी सुनते जाते हैं।

दो०—तेहि बासर बसि प्रातहीं चले सुमिरि रघुनाथ।
रामदरस की लालसा भरत सरिस सब साथ।२२३।

भरत उस दिन वहीं ठहरकर दूसरे दिन सबेरे रघुनाथजी को स्मरण करके चले। रामचन्द्रजी के दर्शन की लालसा भरत के समान सब साथियों को भी लगी हुई है।

मङ्गल सगुन होहिं सब काहू ❀ फरकहिं सुखद बिलोचन बाहू
भरतहि सहित समाज उछाहू ❀ मिलिहहिं राम मिटिहि दुख दाहू

सभी को मंगल-सूचक शकुन हो रहे हैं। सुख देने वाले नेत्र और भुजायें फड़क रही हैं। समाज-सहित भरत को उत्साह हो रहा है कि रामचन्द्रजी मिलेंगे और दुःख का दाह मिट जायगा।

करत मनोरथ जस जियँ जाके ❀ जाहिं सनेह सुराँ[1] सब छाके
सिथिल अंग पग मग डगि डोलहिं ❀ बिहबल बचन प्रेम बस बोलहिं

जिसके जी में जैसा है, वह वैसा ही मनोरथ करता है। सभी लोग स्नेह-रूपी मदिरा से छके चले जा रहे हैं। उनके अंग शिथिल पड़ गये हैं। रास्ते में चलते हुए पाँव डगमगाते हैं और वे प्रेम के मारे विह्वल वचन बोलते हैं।

रामसखाँ तेहि समय देखावा ❀ सैल सिरोमनि सहज सुहावा
जासु समीप सरित पय तीरा ❀ सीय समेत बसहिं दोउ बीरा[2]

रामसखा गुह ने उसी समय स्वाभाविक ही सुन्दर पर्वत-शिरोमणि (कामदगिरि) को दिखाया, जिसके पास ही पयस्विनी नदी के तीर पर सीता-समेत दोनों भाई निवास करते हैं।

देखि करहिं सब दंड प्रनामा ❀ कहि जय जानकि जीवन रामा
प्रेम मगन अस राज समाजू ❀ जनु फिरि अवध चले रघुराजू

१. मदिरा। २. भाई।

सब लोग उस पर्वत को देखकर जानकी-जीवन रामचन्द्रजी की जय हो, कहकर दण्डवत् प्रणाम करते हैं। राज-समाज प्रेम में ऐसा मग्न है, मानो रामचन्द्रजी अयोध्या को लौट चले हों।

दो०—भरत प्रेमु तेहि समय जस तस कहि सकइ न शेषु।
कबिहि अगम जिमि ब्रह्मसुखु अह[1] मम[2] मलिन जनेषु[3]॥

उस समय भरत का जैसा प्रेम था, उसे शेषजी भी नहीं कह सकते। कवि के लिये तो वह वैसा ही अगम है, जैसे अहंता और ममता से मलिन लोगों को ब्रह्मानन्द।

सकल सनेह सिथिल रघुबर कें ❀ गए कोस दुइ दिनकर[4] ढरकें[5]
जलु थलु देखि बसे निसि बीतें ❀ कीन्ह गवन रघुनाथ पिरीतें

सब लोग रघुनाथजी के प्रेम में विह्वल सूर्यास्त होने तक दो ही कोस चल पाये। फिर जल का ठिकाना देखकर रात भर सबने निवास किया और सबेरा होते ही रामचन्द्रजी के वे प्रेमी चल पड़े।

उहाँ राम रजनी अवसेषा ❀ जागे सीय सपन अस देखा
सहित समाज भरत जनु आए ❀ नाथ बियोग ताप तन ताए

रामचन्द्रजी रात शेष रहते ही जागे। रात में सीता ने यह स्वप्न देखा, मानो प्रभु के वियोग की अग्नि से शरीर संतप्त किये हुए भरत समाज-सहित यहाँ आये हैं।

सकल मलिन मन दीन दुखारी ❀ देखीं सासु आन अनुहारी[6]
सुनि सिय सपन भरे जल लोचन ❀ भए सोचबस सोच बिमोचन

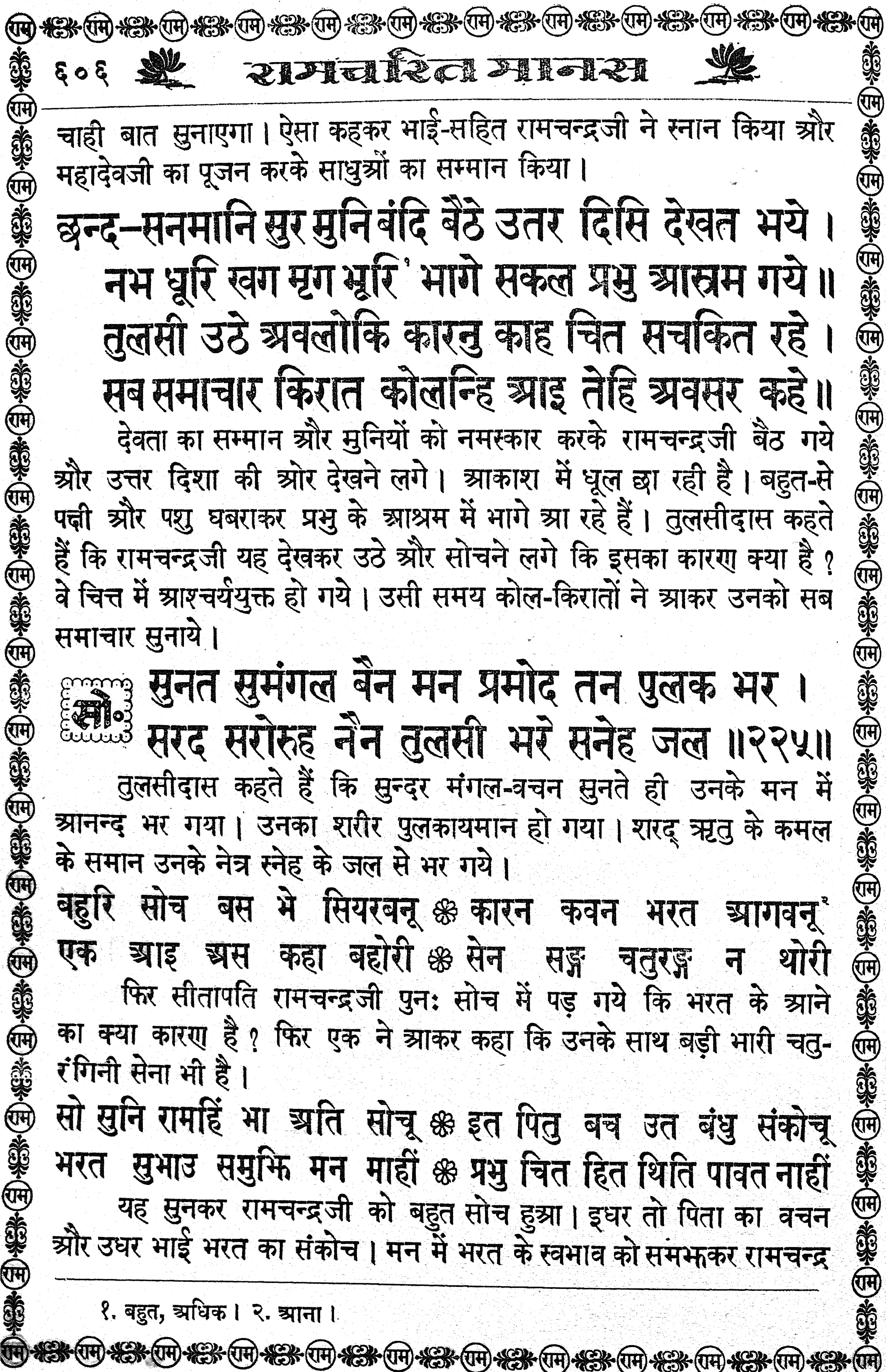
सभी लोग मन में मलिन, दीन और दुःखी हो रहे हैं। सीता ने सासुओं को और ही सूरत में देखा। सीता का स्वप्न सुनकर रामचन्द्रजी की आँखों में जल भर आया और सोच छुड़ा देने वाले प्रभु स्वयं सोच में पड़ गये। [विरोधाभास अलंकार]

लखन सपन यह नीक न होई ❀ कठिन कुचाह[7] सुनाइहि कोई
अस कहि बंधु समेत नहाने ❀ पूजि पुरारि साधु सनमाने

उन्होंने कहा—लक्ष्मण! यह स्वप्न अच्छा नहीं है। कोई भीषण अन-

---

१. अहंकार। २. ममता। ३. मनुष्यों में या को। ४. सूर्य। ५. अस्त होने पर।
६. तरह की। ७. बुरी ख़बर।



चाही बात सुनाएगा। ऐसा कहकर भाई-सहित रामचन्द्रजी ने स्नान किया और महादेवजी का पूजन करके साधुओं का सम्मान किया।

छन्द—सनमानि सुर मुनि बंदि बैठे उतर दिसि देखत भये।
नभ धूरि खग मृग भूरि[1] भागे सकल प्रभु आस्रम गये॥
तुलसी उठे अवलोकि कारनु काह चित सचकित रहे।
सब समाचार किरात कोलन्हि आइ तेहि अवसर कहे॥

देवता का सम्मान और मुनियों को नमस्कार करके रामचन्द्रजी बैठ गये और उत्तर दिशा की ओर देखने लगे। आकाश में धूल छा रही है। बहुत-से पक्षी और पशु घबराकर प्रभु के आश्रम में भागे आ रहे हैं। तुलसीदास कहते हैं कि रामचन्द्रजी यह देखकर उठे और सोचने लगे कि इसका कारण क्या है? वे चित्त में आश्चर्ययुक्त हो गये। उसी समय कोल-किरातों ने आकर उनको सब समाचार सुनाये।

सो०—सुनत सुमंगल बैन मन प्रमोद तन पुलक भर।
सरद सरोरुह नैन तुलसी भरे सनेह जल॥२२५॥

तुलसीदास कहते हैं कि सुन्दर मंगल-वचन सुनते ही उनके मन में आनन्द भर गया। उनका शरीर पुलकायमान हो गया। शरद् ऋतु के कमल के समान उनके नेत्र स्नेह के जल से भर गये।

बहुरि सोच बस भे सियरवनू ❀ कारन कवन भरत आगवनू[2]
एक आइ अस कहा बहोरी ❀ सेन सङ्ग चतुरङ्ग न थोरी

फिर सीतापति रामचन्द्रजी पुनः सोच में पड़ गये कि भरत के आने का क्या कारण है? फिर एक ने आकर कहा कि उनके साथ बड़ी भारी चतुरंगिनी सेना भी है।

सो सुनि रामहिं भा अति सोचू ❀ इत पितु बच उत बंधु संकोचू
भरत सुभाउ समुझि मन माहीं ❀ प्रभु चित हित थिति पावत नाहीं

यह सुनकर रामचन्द्रजी को बहुत सोच हुआ। इधर तो पिता का वचन और उधर भाई भरत का संकोच। मन में भरत के स्वभाव को समझकर रामचन्द्र

१. बहुत, अधिक। २. आना।

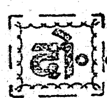
अपना चित्त किसी ठिकाने पर ठहराने के लिये स्थान ही नहीं पाते हैं।

समाधान तब भा यह जाने ❀ भरत कहे महुँ साधु सयाने
लखन लखेउ प्रभु हृदयँ खँभारू[1] ❀ कहत समय सम नीति बिचारू

तब यह जानकर रामचन्द्रजी को समाधान हो गया कि भरत साधु और सयाने लोगों के कहने में हैं। उधर लक्ष्मण प्रभु के मन में चिन्ता देखकर समय के अनुसार नीतियुक्त विचार करने लगे—

बिनु पूछें कछु कहउँ गोसाईं ❀ सेवकु समयँ न ढीठ ढिठाईं
तुम्ह सर्बग्य सिरोमनि स्वामी ❀ आपनि समुझि कहउँ अनुगामी

हे स्वामी! मैं आपके बिना पूछे ही कुछ कहता हूँ, इसके लिए क्षमा करना। क्योंकि समय पर ढिठाई करने वाला सेवक ढीठ नहीं समझा जाता। हे स्वामी! आप सर्वज्ञों में शिरोमणि हैं। मैं सेवक अपनी समझ के अनुसार बात कहता हूँ—



नाथ सुहृद सुठि सरल चित सील सनेह निधान।
सब पर प्रीति प्रतीति[2] जियँ जानिअ आप समान॥

हे नाथ! आप तो परम सुहृद, सरल हृदय, तथा शील और स्नेह के भंडार हैं। सबके ऊपर आपकी प्रीति है और जी में सब पर विश्वास है। आप सबको अपने ही समान जानते हैं।

बिषयी जीव पाइ प्रभुताई ❀ मूढ़ मोहबस होहिं जनाई
भरतु नीति रत साधु सुजाना ❀ प्रभु पद प्रेमु सकल जगु जाना

परन्तु मूढ़ विषयी जीव जब प्रभुता पाते हैं, तब वे मोहवश अपने असली स्वरूप में प्रकट हो जाते हैं। भरत नीति-परायण, सज्जन और चतुर हैं तथा स्वामी के चरणों में उनका प्रेम है, यह सारा जगत जानता है।

तेऊ आजु राज पदु पाई ❀ चले धरम मरजाद मेटाई
कुटिल कुबंधु कुअवसरु ताकी ❀ जानि राम बनबास एकाकी[3]

वे भी आज राज्यपद पाकर धर्म की मर्यादा को मिटाकर चले हैं। कुटिल, दुष्ट बन्धु भरत कुसमय देखकर और रामचन्द्र को वनवास में अकेला असहाय जानकर,

---

१. चिन्ता। २. विश्वास। ३. अकेला।

करि कुमंत्रु मन साजि समाजू ❀ आए करइ अकंटक राजू
कोटि प्रकार कलपि[1] कुटिलाई ❀ आए दल बटोरि दोउ भाई

अपने मन में बुरा विचार करके, समाज जोड़कर, राज्य को निष्कंटक करने के लिए यहाँ आये हैं। करोड़ों तरह की कुटिलताओं की कल्पना करके दल बटोर कर दोनों भाई आए हैं।

जौं जियँ होति न कपट कुचाली ❀ केहि सोहाति रथ बाजि गजाली[2]
भरतहि दोसु देइ को जाएँ[3] ❀ जग बौराइ[4] राज पदु पाएँ

जो इनके जी में कपट और कुचाल न होती, तो रथ, घोड़े और हाथियों की कतार किसे अच्छी लगती? परन्तु भरत ही को व्यर्थ क्यों दोष दिया जाय? राजपद पा जाने पर सारा जगत् ही उन्मत्त हो जाता है। [अनुमान प्रमाण अलंकार]

दो॰ ससि गुरु तिय गामी नहुषु चढ़ेउ भूमिसुर[5] जान।
लोक बेद तें बिमुख भा अधम न बेन समान॥२२७

चन्द्रमा ने गुरु की स्त्री से भोग किया। राजा नहुष ब्राह्मणों की पालकी पर चढ़ा और राजा बेन के समान नीचतो कोई नहीं हुआ, जो लोक और वेद दोनों से विमुख हुआ।

सहसबाहु सुरनाथु त्रिसंकू ❀ केहि न राजमद दीन्ह कलंकू
भरत कीन्ह यह उचित उपाऊ ❀ रिपु रिन रंच[6] न राखब काऊ

सहस्रबाहु, इन्द्र और त्रिशंकु आदि किसको राजमद ने कलंक नहीं दिया? भरत ने यह उपाय उचित ही सोचा है। शत्रु और ऋण ज़रा भर भी शेष नहीं रखना चाहिए। [व्याजनिन्दा अलंकार]

एक कीन्हि नहिं भरत भलाई ❀ निदरे[7] रामु जानि असहाई
समुझि परिहि सोउ आजु बिसेखी ❀ समर सरोष राम मुखु पेखी

हाँ, भरत ने एक बात अच्छी नहीं की, जो रामचन्द्रजी को असहाय जानकर उनका अनादर किया। पर आज युद्ध में रामचन्द्रजी का क्रोधपूर्ण मुख देखकर वह भी उन्हें अच्छी तरह मालूम हो जायगा।

एतना कहत नीति रस भूला ❀ रन रस बिटपु पुलक मिस फूला
प्रभु पद बंदि सीस रज राखी ❀ बोले सत्य सहज बलु भाखी

१. कल्पना करके। २. हाथी की कतार। ३. व्यर्थ। ४. मतवाला हो जाता है। ५. ब्राह्मण। ६. जरा भर भी। ७. निरादर किया।

इतना कहते हुए लक्ष्मण को नीति का रस तो भूल गया और युद्धरस का वृक्ष पुलकावली के मिस से फूल उठा। उन्होंने प्रभु रामचन्द्रजी के चरणों को नमस्कार कर और चरण-रज को सिर पर रखकर अपना सच्चा और स्वाभाविक बल सुनाकर कहा—

अनुचित नाथ न मानब मोरा ❀ भरत हमहिं उपचार[1] न थोरा
कहँ लगि सहिअ रहिअ मनु मारें ❀ नाथ साथ धनु हाथ हमारें

हे नाथ! मेरा कहना अनुचित न मानिएगा। भरत ने हमें कम नहीं ललकारा। आखिर कहाँ तक सहा जाय और मन मारे रहा जाय? जब स्वामी हमारे साथ हैं और धनुष हमारे हाथ में है,

दो॰ छत्रि जाति रघुकुल जनमु राम अनुग[2] जगु जान।
लातहुँ मारें चढ़ति सिर नीच को धूरि समान॥

एक तो क्षत्रिय-जाति, दूसरे रघुकुल में जन्म और फिर रामचन्द्रजी के अनुगामी, यह जगत् जानता है। धूल के समान नीच कौन है? वह भी लात मारने पर सिर पर चढ़ जाती है। [द्वितीय समुच्चय अलंकार]

उठि कर जोरि रजायसु माँगा ❀ मनहुँ बीररस सोवत जागा
बाँधि जटा सिर कसि कटि भाथा ❀ साजि सरासनु सायकु हाथा

लक्ष्मण ने उठकर, हाथ जोड़कर, आज्ञा माँगी। मानो वीररस सोते से जाग उठा। सिर पर जटा बाँधी, कमर में तरकस कस लिया और धनुष सजाकर और हाथ में बाण लेकर कहा—

आजु राम सेवक जसु लेऊँ ❀ भरतहिं समर सिखावन देऊँ
राम निरादर कर फलु पाई ❀ सोवहुँ समर सेज दोउ भाई

आज मैं राम-सेवक होने का यश लूँगा और भरत को युद्ध में शिक्षा दूँगा। दोनों भाई (भरत-शत्रुघ्न) रामचन्द्रजी के निरादर का फल पाकर रण-शय्या पर सोएँ।

आइ बना भल सकल समाजू ❀ प्रगट करउँ रिसि पाछिलि आजू
जिमि करि निकर दलइ मृगराजू ❀ लेइ लपेटि लवा जिमि बाजू

सब समाज एकत्र हो आने से आज अच्छा मौका मिला। आज मैं पिछला

१. ललकारा। २. अनुगामी।

सब क्रोध प्रकट करूँगा। जैसे सिंह हाथियों के झुण्ड को कुचल डालता है और बाज़ जैसे लवे को लपेट में ले लेता है,

तैसेहिं भरतहि सेन समेता ❀ सानुज निदरि निपातउँ खेता
जौं सहाय कर संकरु आई ❀ तौ मारउँ रन राम दोहाई

वैसे ही भरत को सेना-समेत और छोटे भाई-सहित तिरस्कार करके रणक्षेत्र में पछाड़ दूँगा। यदि शङ्कर भी आकर सहायता करेंगे, तो भी मैं मार डालूँगा। मुझे रामचन्द्र की सौगन्ध है।

दो॰ अति सरोष माखे लखनु लखि सुनि सपथ प्रवान[1]।
सभय लोक सब लोकपति चाहत भभरि भगान।२२९।

लक्ष्मण को अत्यन्त क्रोध में तमतमाया हुआ देखकर और उनकी सत्य सौगन्ध सुनकर सब लोग डर गये और इन्द्रादि लोकपति घबराकर भागना चाहते हैं।

जगु भय मगन गगन भइ बानी ❀ लखन बाहु बलु बिपुल बखानी
तात प्रताप प्रभाउ तुम्हारा ❀ को कहि सकइ को जाननिहारा

सारा जगत् भय में डूब गया। तब लक्ष्मण की भुजाओं के विशाल बल का वर्णन करते हुये आकाशवाणी हुई। हे तात! तुम्हारे प्रताप और प्रभाव को कौन सह सकता है? और कौन जानता है?

अनुचित उचित काज कछु होऊ ❀ समुझि करिअ भल कह सब कोऊ
सहसा[2] करि पाछे पछिताहीं ❀ कहहिं बेद बुध ते बुध नाहीं

कोई भी काम हो, उचित या अनुचित, पहले विचारकर तब उसे करना चाहिये, जिसमें सब उसे अच्छा कहें। जो बिना सोचे-विचारे एकदम कर बैठते हैं, वे पीछे पछताते हैं। वेद और विद्वान् कहते हैं कि वे बुद्धिमान नहीं।

सुनि सुर बचन लखन सकुचाने ❀ राम सीय सादर सनमाने
कही तात तुम्ह नीति सुहाई ❀ सब तें कठिन राजमद भाई

देवताओं के वचन (आकाशवाणी) सुनकर लक्ष्मण सकुचा गये। रामचन्द्र और सीता ने आदर के साथ उनका सम्मान किया। (उन्होंने कहा—) हे तात! तुमने बड़ी अच्छी नीति कही। भाई! राजमद सबसे कठिन है।

---

१. सत्य। २. एकदम।

जो अँचवत[1] मातहिं[2] नृप तेई ❀ नाहिन साधु सभा जेहिं सेई
सुनहु लखन भल भरत सरीसा ❀ बिधि प्रपंच महँ सुना न दीसा

जिन्होंने साधु-सभा का सेवन (सत्संग) नहीं किया, वे राजमद रूपी मदिरा का आचमन करते ही मतवाले हो जाते हैं। हे लक्ष्मण! सुनो, ब्रह्मा की सृष्टि भर में भरत के समान उत्तम पुरुष न कोई सुना गया है, न देखा ही गया है।



भरतहि होइ न राजमदु बिधि हरि हर पद पाइ।
कबहुँ कि काँजी सीकरनि छीरसिंधु बिनसाइ ।२३०।

ब्रह्मा, विष्णु और शङ्कर का पद पाकर भी भरत को राजमद नहीं हो सकता। क्या कभी काँजी की बूँदों से क्षीर समुद्र नष्ट हो सकता है। [दृष्टान्त अलंकार]

तिमिर[3] तरुन तरनिहि मकु[4] गिलई ❀ गगन मगन मकु मेघहि मिलई
गोपद जल बूड़हिं घटजोनी ❀ सहज छमा बरु छाड़इ छोनी

अन्धकार चाहे तरुण सूर्य को निगल जाय; आकाश चाहे बादलों में समाकर मिल जाय; गौ के खुर बराबर जल में अगस्त्य डूब जायँ और पृथ्वी चाहे अपनी स्वाभाविक क्षमा को छोड़ दे,

मसक फूँक मकु मेरु उड़ाई ❀ होइ न नृपमदु भरतहि भाई
लखन तुम्हार सपथ पितु आना[5] ❀ सुचि सुबंधु नहिं भरत समाना

मच्छर की फूँक से चाहे सुमेरु पर्वत उड़ जाय। तो भी हे भाई! भरत को राजमद कभी हो नहीं सकता। हे लक्ष्मण! मैं तुम्हारी शपथ और पिता की सौगन्ध खाकर कहता हूँ, भरत के समान पवित्र और उत्तम भाई संसार में नहीं है।

सगुनु खीरु अवगुन जलु ताता ❀ मिलइ रचइ परपंचु बिधाता
भरत हंस रबि बंस तड़ागा ❀ जनमि कीन्ह गुन दोष बिभागा

हे तात! सद्गुणरूपी दूध और अवगुणरूपी जल को मिलाकर ब्रह्मा इस सृष्टि की रचना करता है। सूर्यवंशरूपी तालाब में हंसरूप भरत ने जन्म लेकर गुण और दोष को अलग-अलग कर दिया है। [ललित अलंकार]

---

१. आचमन। २. मतवाले हो जाते हैं। ३. अंधकार। ४. चाहे। ५. सौगन्ध।

गहि गुन पय तजि अवगुन बारी ❀ निज जस जगत कीन्हि उँजिआरी
कहत भरत गुन सीलु सुभाऊ ❀ प्रेम पयोधि मगन रघुराऊ

भरत ने गुणरूपी दूध को लेकर और अवगुणरूपी जल को त्यागकर अपने यश से संसार में उजाला कर दिया है। भरत के गुण, शील और स्वभाव का वर्णन करते-करते रामचन्द्रजी प्रेम-समुद्र में मग्न होगये।

दो० सुनि रघुबर बानी बिबुध देखि भरत पर हेतु।
सकल सराहत राम सो प्रभु को कृपा निकेतु ।२३१।

रामचन्द्रजी की वाणी सुनकर और भरत पर उनका प्रेम देखकर देवतागण उनकी सराहना करने लगे कि रामचन्द्रजी के समान कृपा के धाम प्रभु और कौन हैं।

जौं न होत जग जनम भरत को ❀ सकल धरम धुर धरनि धरत को
कबि कुल अगम भरत गुन गाथा ❀ को जानइ तुम्ह बिनु रघुनाथा

यदि जगत् में भरत का जन्म न होता, तो पृथ्वी पर सम्पूर्ण धर्मों की धुरी को कौन धारण करता? हे रघुनाथजी! कवि-कुल की पहुँच से बाहर भरत के गुणों की कथा आपके सिवा और कौन जान सकता है?

लखन राम सियँ सुनि सुर बानी ❀ अति सुखु लहेउ न जाइ बखानी
इहाँ भरतु सब सहित सहाए[1] ❀ मन्दाकिनीं पुनीत[2] नहाए

लक्ष्मण, रामचन्द्रजी और सीता ने देवताओं की वाणी सुनकर अत्यंत सुख पाया, जो वर्णन नहीं किया जा सकता। इधर भरत ने सब सहायकों-सहित पवित्र मन्दाकिनी में स्नान किया।

सरित समीप राखि सब लोगा ❀ माँगि मातु गुर सचिव नियोगा[3]
चले भरत जहँ सिय रघुराई ❀ साथ निषादनाथु लघु भाई

फिर सब को मन्दाकिनी नदी के पास ठहराकर तथा माता, गुरु और मन्त्री की आज्ञा माँगकर, निषादराज और शत्रुघ्न को साथ लेकर भरत वहाँ चले, जहाँ सीता-रामचन्द्र थे।

समुझि मातु करतब सकुचाहीं ❀ करत कुतरक[4] कोटि मन माहीं
रामु लखनु सिय सुनि मम नाऊँ ❀ उठि जनि अनत[5] जाहिं तजि ठाऊँ

१. सहायकों। २. पवित्र। ३. आज्ञा। ४. शंकायुक्त विचार। ५. अन्यत्र, दूसरी जगह।

भरत-मिलाप

भरत अपनी माता की करतूत समझकर सकुचाते हैं और मन में करोड़ों तरह के कुतर्क करते हैं। वे सोचते हैं कि राम, लक्ष्मण और सीता मेरा नाम सुनकर स्थान छोड़कर, कहीं दूसरी जगह न चले जायँ।

दो॰ मातु मते[1] महुँ मानि मोह जो कछु करहिं सो थोर।
अघ अवगुन छमि आदरहिं समुझि आपनी ओर॥

मुझे माता के मत में मानकर जो कुछ करें, सो थोड़ा ही है। पर वे अपनी ओर समझकर मेरे पापों और अवगुणों को क्षमा करके मेरा आदर ही करेंगे।

जौं परिहरहिं मलिन मनु जानी ❀ जौं सनमानहिं सेवक मानी
मोरें सरन रामहि की पनहीं[2] ❀ राम सुस्वामि दोसु सब जनहीं

चाहे मुझे मलिन-मन जानकर त्याग दें, चाहे अपना सेवक मानकर मेरा सम्मान करें; दोनों प्रकार से मुझे तो रामचन्द्रजी की जूतियाँ ही शरण हैं। रामचन्द्रजी तो अच्छे स्वामी हैं। दोष तो सब सेवक ही का है।

जग जस भाजन चातक मीना ❀ नेम प्रेम निज निपुन नबीना
अस मन गुनत चले मग जाता ❀ सकुच सनेह सिथिल सब गाता

जगत् में पपीहा और मछली ही यश के पात्र हैं जो अपनी टेक और प्रेम को नित्य नया बना रखने में निपुण हैं। ऐसा मन में सोचते हुए भरत रास्ते में चले जाते हैं। उनके सब अंग संकोच और प्रेम से शिथिल पड़ गये हैं।

फेरति मनहिं मातु कृत खोरी[3] ❀ चलत भगति बल धीरज धोरी[4]
जब समुझत रघुनाथ सुभाऊ ❀ तब पथ परत उताइल[5] पाऊ

माता की की हुई दुष्टता मन को पीछे लौटाती है; पर वे भक्ति का बल और धैर्य-रूपी धोरी से आगे चलते हैं। जब रघुनाथजी के स्वभाव को भरत याद करते हैं, तब उनके पैर मार्ग में जल्दी-जल्दी पड़ने लगते हैं।

भरत दसा तेहि अवसर कैसी ❀ जल प्रवाह जल अलि गति जैसी
देखि भरत कर सोचु सनेहू ❀ भा निषाद तेहि समयँ बिदेहू

उस अवसर पर भरत की दशा कैसी है? जैसी गति पानी के प्रवाह में पानी के भौंरे की होती है। उस समय भरत का सोच और प्रेम देखकर निषाद

---

१. राय में। २. जूती। ३. खोटापन। ४. बैल; तीसरा बैल जो अधिक बोझा होने पर आगे लगाया जाता है। ५. जल्दी-जल्दी।

विदेह हो गया, अर्थात् देह की सुध-बुध भूल गया।

दो०—लगे होन मङ्गल सगुन सुनि गुनि कहत निषादु।
मिटिहि सोचु होइहि हरषु पुनि परिनाम बिषादु॥

मंगल शकुन होने लगे। उन्हें सुनकर और विचारकर निषाद कहने लगा—सोच मिटेगा, आनन्द होगा; पर फिर अन्त में दुःख होगा।

सेवक बचन सत्य सब जाने ❀ आस्रम निकट जाइ निअराने
भरत दीख बन सैल समाजू ❀ मुदित छुधित[1] जनु पाइ सुनाजू

भरत ने सेवक (गुह) की सब बातों को सत्य जाना और वे आश्रम के निकट जा पहुँचे। वहाँ के वन और पर्वतों के समूह को देखकर भरत ऐसे प्रसन्न हुए मानो कोई भूखा अच्छा अन्न पा गया हो।

ईति - भीति[2] जनु प्रजा दुखारी ❀ त्रिबिध ताप पीड़ित ग्रह मारी
जाइ सुराज सुदेस सुखारी ❀ होहिं भरत गति तेहि अनुहारी

जैसे ईति-भीति से दुःखी दैहिक, दैविक, भौतिक तापों तथा क्रूर ग्रहों और महामारी से पीड़ित प्रजा किसी अच्छे देश और अच्छे राज्य में जाकर सुखी हो जाय, उस समय भरत की गति ठीक उसी प्रकार की हो रही है।

राम बास बन संपति भ्राजा ❀ सुखी प्रजा जनु पाइ सुराजा
सचिव बिरागु बिबेकु नरेसू ❀ बिपिन सुहावन पावन देसू

रामचन्द्रजी के निवास से वन की सम्पत्ति ऐसी सुशोभित है, मानो अच्छे राजा को पाकर प्रजा सुखी हो। सुहावना वन ही पवित्र देश है। विवेक उसका राजा तथा वैराग्य मन्त्री है।

भट जम[1] नियम[2] सैल रजधानी ❀ सांति सुमति सुचि सुन्दरि रानी
सकल अङ्ग[3] सम्पन्न सुराऊ ❀ राम चरन आस्रित चित चाऊ

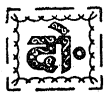
---

१. भूखा। २. अतिवृष्टिरनावृष्टिर्मूषकाः शलभाः शुकाः। स्वचक्रं परचक्रं च सप्तैताईतयः स्मृताः।

अर्थ—अतिवृष्टि, अनावृष्टि, चूहा, टिड्डी, तोते और अपने राजा या दूसरे राजा की चढ़ाई ये सात ईतियाँ कही जाती हैं।

१. यम—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। २. नियम—शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान। ३. राज्य के अंग—स्वामी, अमात्य, सुहृद्, कोष, राष्ट्र, दुर्ग और सेना।

यम-नियमादि उसके योद्धा हैं। पर्वत राजधानी है और शान्ति तथा सुबुद्धि दो पवित्र और सुन्दर रानियाँ हैं। वह श्रेष्ठ राजा राज्य के सब अंगों से पूर्ण है और रामचन्द्रजी के चरणों के आश्रित रहने से उसके चित्त में चाव या उत्साह है।



जीति मोह महिपालु दल सहित बिबेक भुआलु।
करत अकंटक राजु पुर सुख संपदा सुकालु॥२३४॥

मोहरूपी राजा को सेना समेत जीतकर विवेकरूपी राजा निष्कंटक राज्य कर रहा है। उसके पुर में सुख, सम्पत्ति और सुकाल वर्तमान हैं।

बन प्रदेस मुनि बास घनेरे ❀ जनु पुर नगर गाउँ गन खेरे
बिपुल बिचित्र बिहँग मृग नाना ❀ प्रजा समाजु न जाइ बखाना

वन रूपी प्रदेशों में बहुत-से मुनियों के निवास हैं, वही मानो शहरों, नगरों, गाँवों और पुरवों के समूह हैं। तरह-तरह के बहुत-से विचित्र पक्षी और पशु ही मानो प्रजाओं के समाज हैं, जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता।

खगहा करि हरि बाघ बराहा ❀ देखि महिष बृष साजु सराहा
बयरु बिहाइ चरहिं एक संगा ❀ जहँ तहँ मनहुँ सेन चतुरंगा[1]

गैंडा, हाथी, सिंह, बाघ, सूअर, भैंसे और बैलों को देखकर राजा का ठाठ-बाट सराहते ही बनता है। पशु आपस के वैर-भाव को छोड़कर एक साथ ही विचरते हैं। यही मानो चतुरंगिणी सेना है।

झरना झरहिं मत्त गज गाजहिं ❀ मनहुँ निसान बिबिध बिधि बाजहिं
चक चकोर चातक सुक पिक गन ❀ कूजत मंजु मराल मुदित मन

पानी के झरने झर रहे हैं और मतवाले हाथी चिंघाड़ रहे हैं। वे ही मानो वहाँ अनेकों प्रकार के डंके बज रहे हैं। चकवा, चकोर, पपीहा, तोता, कोयलों के झुण्ड और सुन्दर हंस प्रसन्न मन से बोल रहे हैं।

अलिगन गावत नाचत मोरा ❀ जनु सुराज मंगल चहुँ ओरा
बेलि बिटप तृन सफल सफूला ❀ सब समाजु मुद मंगल मूला

भौंरों के झुण्ड गा रहे हैं और मोर नाच रहे हैं, मानो उस अच्छे राज्य में चारों ओर मंगल हो रहा हो। लता, वृक्ष, तृण सब फल और फूलों से युक्त

---

१. चतुरंगिणी सेना—रथ, हाथी, घोड़े और पैदल।

हैं। सारा समाज आनन्द और मंगल का मूल बन रहा है।

दो०—राम सैल सोभा निरखि भरत हृदयँ अति प्रेमु।
तापस तप फलु पाइ जिमि सुखी सिरानें[1] नेमु ॥२३५॥

राम के पर्वत की शोभा देखकर भरत के हृदय में अत्यन्त प्रेम हुआ, जैसे तपस्वी नियम की समाप्ति होने पर तपस्या का फल पाकर सुखी होता है।

तब केवट ऊँचे चढ़ि धाई ❀ कहेउ भरत सन भुजा उठाई
नाथ देखिअहिं बिटप बिसाला ❀ पाकरि जंबु रसाल[2] तमाला

तब केवट दौड़कर ऊँचे चढ़ गया और भुजा उठाकर भरत से कहने लगा—हे नाथ! पाकर, जामुन, आम और तमाल के विशाल वृक्षों को देखिये—

तिन्ह तरुबरन्ह मध्य बटु सोहा ❀ मंजु बिसाल देखि मन मोहा
नील सघन पल्लव फल लाला ❀ अबिरल[3] छाँह सुखद सब काला

उन श्रेष्ठ वृक्षों के बीच में एक सुन्दर विशाल बड़ का वृक्ष शोभित हो रहा है, जिसको देखकर मन मोहित हो जाता है। उसके पत्ते नीले और सघन हैं तथा उसमें लाल फल लगे हैं। उसकी घनी छाया सब ऋतुओं में सुख देने वाली है।

मानहुँ तिमिर अरुनमय रासी ❀ बिरची बिधि सकेलि सुखमा सी
ए तरु सरित समीप गोसाँई ❀ रघुबर परनकुटी जहँ छाई

मानो ब्रह्मा ने अन्धकार और ललाई दोनों की राशि बटोरकर शोभा-सी रच दी है। हे गुसाईं! ये वृक्ष नदी के पास हैं, जहाँ रामचन्द्र ने पर्णकुटी छाई है।

तुलसी तरुबर बिबिध सुहाए ❀ कहुँ कहुँ सियँ कहुँ लखन लगाए
बट छायाँ बेदिका बनाई ❀ सियँ निज पानि सरोज सुहाई

वहाँ तुलसी के बहुत-से सुन्दर वृक्ष सुशोभित हो रहे हैं, जिन्हें कहीं-कहीं लक्ष्मण ने और कहीं-कहीं सीता ने लगाया है। इसी बड़ की छाया में सीता ने अपने कर-कमलों से सुन्दर वेदी बनाई है।

दो०—जहाँ बैठि मुनिगन सहित नित सिय रामु सुजान।
सुनहिं कथा इतिहास सब आगम निगम पुरान।२३६।

१. समाप्त होने पर। २. आम। ३. सघन।

जहाँ बुद्धिमान् सीता-राम मुनियों समेत बैठकर नित्य शास्त्र, वेद, पुराण और इतिहास की कथायें सुनते हैं।

सखा बचन सुनि बिटप निहारी ❀ उमगे भरत बिलोचन बारी
करत प्रनाम चले दोउ भाई ❀ कहत प्रीति सारद सकुचाई

सखा के वचन सुनकर और वृक्षों को देखकर भरत की आँखों में जल उमड़ आया। दूर ही से दोनों भाई प्रणाम करते हुए चले। उनकी प्रीति का वर्णन करने में सरस्वती भी सकुचाती है।

हरषहिं निरखि राम पद अंका[1] ❀ मानहुँ पारस पायेउ रंका[2]
रज सिर धरि हिय नयनन्हि लावहिं ❀ रघुबर मिलन सरिस सुख पावहिं

वे दोनों भाई रामचन्द्र के चरण-चिन्ह देखकर ऐसे हर्षित होते हैं, मानो दरिद्र पारस पा गया हो। वहाँ की धूल को वे मस्तक पर धरते हैं। हृदय और नेत्रों में लगाते हैं और रामचन्द्रजी के मिल जाने के बराबर सुख पाते हैं।

देखि भरत गति अकथ अतीवा ❀ प्रेम मगन मृग खग जड़ जीवा
सखहिं सनेह बिबस मग भूला ❀ कहि सुपंथ सुर बरषहिं फूला

भरत की अत्यन्त अकथनीय दशा को देखकर वन के पशु, पक्षी और जड़, चेतन सभी प्रेम में मग्न हो गये। सखा (गुह) को भी प्रेम के विशेष वश होने से रास्ता भूल गया। तब देवता उन्हें सुन्दर रास्ता बतलाकर उन पर फूल बरसाने लगे।

निरखि सिद्ध साधक अनुरागे ❀ सहज सनेहु सराहन लागे
होत न भूतल भाउ[3] भरत को ❀ अचर सचर चर अचर करत को

भरत के प्रेम की दशा देखकर सिद्ध और साधक लोग भी अनुराग के वश हो गये और उनके स्वाभाविक प्रेम की सराहना करने लगे कि यदि इस पृथ्वीतल पर भरत का भाव (प्रेम या जन्म) न प्रकट होता, तो जड़ को चेतन और चेतन को जड़ कौन कर देता ?



प्रेम अमिअ मंदरु बिरहु भरतु पयोधि गँभीर।
मथि प्रगटेउ सुर साधु हित कृपासिंधु रघुबीर।२३७।

प्रेम अमृत है, विरह मंदराचल पर्वत है और भरत गहरे समुद्र हैं। कृपा

---

१. चिह्न। २. गरीब। ३. प्रेम अथवा जन्म।

के समुद्र रामचन्द्रजी ने देवता और साधु के हित के लिये उसे मथकर प्रेमरूपी अमृत प्रकट किया।

सखा समेत मनोहर जोटा ❀ लखेउ न लखन सघन बन ओटा
भरत दीख प्रभु आस्रमु पावन ❀ सकल सुमंगल सदन सुहावन

सखा-सहित इस मनोहर जोड़ी को लक्ष्मण ने सघन वन की आड़ के कारण नहीं देखा। भरत ने प्रभु रामचन्द्रजी के पवित्र आश्रम को देखा, जो सम्पूर्ण शुभ मंगलों का स्थान और सुहावना है।

करत प्रबेस मिटे दुख दावा ❀ जनु जोगीं परमारथ पावा
देखे भरत लखन प्रभु आगे ❀ पूँछे बचन कहत अनुरागे

उस आश्रम में प्रवेश करते ही भरत का दुःख-दाह मिट गया, मानो योगी ने परमार्थ पा लिया। भरत ने देखा, रामचन्द्रजी के आगे लक्ष्मण खड़े हैं, और रामचन्द्रजी के पूछे हुए वचन प्रेमपूर्वक कह रहे हैं।

सीस जटा कटि मुनिपट बाँधें ❀ तून[1] कसें कर सरु धनु काँधें
बेदी पर मुनि साधु समाजू ❀ सीय सहित राजत रघुराजू

सिर पर जटा है और कमर में मुनियों का वस्त्र (वल्कल) बँधा हुआ है। उसी में तरकस कसे हैं। हाथ में बाण और कन्धे पर धनुष है। वेदी पर मुनि तथा साधुओं का समुदाय बैठा है और सीता-समेत रामचन्द्रजी विराजमान हैं।

बलकल बसन जटिल तनु स्यामा ❀ जनु मुनि बेष कीन्ह रति कामा
कर कमलनि धनु सायक[2] फेरत ❀ जिय की जरनि हरत हँसि हेरत

श्याम शरीर में बल्कल के वस्त्र पहने और जटा धारण किये हुये वे दोनों ऐसे जान पड़ते हैं, मानो रति और कामदेव ने मुनि का वेष धारण किया हो। वे कमल ऐसे हाथों में धनुष-बाण लिये हुए घुमा रहे हैं और हँसकर देखते ही वे जी की जलन हर लेते हैं।

दो०— लसत मंजु मुनि मंडली मध्य सीय रघुचंदु।
ग्यान सभाँ जनु तनु धरे भगति सच्चिदानंद ॥२३८॥

सुन्दर मुनि-मण्डली के बीच में सीता और रघुकुलचन्द्र रामचन्द्रजी ऐसे

१. तरकस। २. बाण।

सुशोभित हो रहे हैं, मानो ज्ञान की सभा में साक्षात् भक्ति और सच्चिदानंद शरीर धारण करके विराजमान हों।

सानुज सखा समेत मगन मन ❁ बिसरे हरष सोक सुख दुख गन
पाहि नाथ कहि पाहि गोसाईं ❁ भूतल परे लकुट[1] की नाईं

छोटे भाई शत्रुघ्न और सखा (गुह) समेत भरत का मन प्रेम में मग्न हो रहा है। हर्ष, शोक, सुख-दुःख आदि सब भूल गये। 'हे नाथ! रक्षा कीजिये। हे गुसाईं! रक्षा कीजिये', ऐसा कहते हुए वे पृथ्वी पर दण्ड के समान गिर पड़े।

बचन सप्रेम लखन पहिचाने ❁ करत प्रनाम भरत जिय जाने
बंधु सनेह सरस एहि ओरा ❁ इत साहिब सेवा बस जोरा

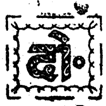
प्रेम-समेत कहे हुए वचनों से लक्ष्मण ने पहचाना और ऐसा जी में जाना कि भरत प्रणाम कर रहे हैं। अब इधर तो भरत का सुमधुर भ्रातृ-प्रेम और उधर स्वामी रामचन्द्रजी की सेवा की परवशता।

मिलि न जाइ नहिं गुदरत बनई ❁ सुकबि लखन मन की गति भनई
रहे राखि सेवा पर भारू ❁ चढ़ी चंग[2] जनु खैंच खेलारू

न तो मिलते ही बनता है, न छोड़ते ही। कोई श्रेष्ठ कवि ही लक्ष्मण के चित्त की उस समय की गति का वर्णन कर सकता है। सेवा पर भार रखकर अर्थात् सेवा का महत्व अधिक मानकर वे सेवा में लगे रहे। जैसे चढ़ी हुई पतंग को खिलाड़ी (पतंग उड़ाने वाला) खींच रहा हो।

कहत सप्रेम नाइ महि माथा ❁ भरत प्रनाम करत रघुनाथा
उठे राम सुनि प्रेम अधीरा ❁ कहुँ पट कहुँ निषङ्ग धनु तीरा

लक्ष्मण ने प्रेम-सहित पृथ्वी पर मस्तक नवाकर कहा—हे रघुनाथजी! भरतजी प्रणाम कर रहे हैं। रामचन्द्रजी इस बात को सुनते ही प्रेम में अधीर होकर उठे। कहीं तो वस्त्र गिरा, कहीं तरकस, कहीं धनुष और कहीं बाण।



बरबस लिये उठाइ उर लाये कृपानिधान।
भरत राम की मिलनि लखि बिसरे सबहिं अपान॥

कृपानिधान रामचन्द्र ने भरत को जबरदस्ती उठाकर छाती से लगा लिया। भरत और रामचन्द्रजी के मिलने को देखकर सबको अपनी सुध भूल गई।

---

१. लाठी। २. पतंग।

मिलनि प्रीति किमि जाइ बखानी ❀ कबि कुल अगम करम मन बानी
परम प्रेम पूरन दोउ भाई ❀ मन बुधि चित अहमिति बिसराई

मिलने की प्रीति का वर्णन कैसे किया जाय? वह तो कवि-कुल के लिए कर्म, मन, वाणी तीनों से अगम है। दोनों भाई, भरत और रामचन्द्रजी मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार को भुलाकर परम प्रेम से पूर्ण हो रहे हैं।

कहहु सुप्रेम प्रगट को करई ❀ केहि छाया कबि मति अनुसरई
कबिहिं अरथ आखर बलु साँचा ❀ अनुहरि ताल गतिहि नटु नाचा

कहिए, उस श्रेष्ठ प्रेम को कौन प्रकट करे? कवि की बुद्धि किसकी छाया का अनुसरण करे? कवि को तो अक्षर और अर्थ का ही सच्चा बल है। जैसे नट ताल की गति के अनुसार ही नाचता है।

अगम सनेह भरत रघुबर को ❀ जहँ न जाइ मनु बिधि हरि हर को
सो मैं कुमति कहउँ केहि भाँती ❀ बाज सुराग कि गाँड़र[1] ताँती

भरत और रामचन्द्रजी का प्रेम ऐसा अगम्य है, जहाँ ब्रह्मा, विष्णु और महादेव का भी मन नहीं जा सकता। उस प्रेम को मैं कुबुद्धि किस प्रकार कहूँ? भला, कहीं गाँडर की ताँत से भी सुन्दर राग बज सकता है? [प्रतिवस्तूपमा अलंकार]

मिलनि बिलोकि भरत रघुबर की ❀ सुरगन सभय धकधकी धरकी
समुझाए सुरगुरु जड़ जागे ❀ बरषि प्रसून प्रसंसन लागे

भरत और रामचन्द्रजी का मिलाप देखकर देवता डर गये। उनकी धुकधुकी धड़कने लगी। फिर जब देवगुरु बृहस्पतिजी ने उन्हें समझाया, तब कहीं वे मूर्ख होश में आये और फूल बरसाकर रामचन्द्रजी की प्रशंसा करने लगे।

दो॰ मिलि सप्रेम रिपुसूदनहिं केवट भेंटेउ राम।
भूरि भायँ भेंटे भरत लछिमन करत प्रनाम ॥२४०

रामचन्द्रजी प्रेम के साथ शत्रुघ्न से मिलकर फिर केवट (गुह) से मिले। इसके बाद लक्ष्मण को प्रणाम करते पाकर भरत उनसे बड़े प्रेम से मिले।

भेंटेउ लखन ललकि लघु भाई ❀ बहुरि निषादु लीन्ह उर लाई
पुनि मुनिगन दुहुँ भाइन्ह बंदे ❀ अभिमत आसिष पाइ अनंदे

---

१. गाँडर एक घास होती है, जिसकी डालें पतली लंबी ताँत की तरह होती हैं।

तब फिर लक्ष्मण ललककर छोटे भाई शत्रुघ्न से मिले। फिर उन्होंने गुह को हृदय से लगा लिया। फिर भरत-शत्रुघ्न दोनों भाइयों ने मुनियों को प्रणाम किया और उनसे इच्छित आशीर्वाद पाकर वे प्रसन्न हुए।

सानुज भरत उमगि अनुरागा ❀ धरि सिर सिय पद पदुम परागा
पुनि पुनि करत प्रनाम उठाए ❀ सिर कर कमल परसि बैठाए

फिर छोटे भाई शत्रुघ्न-सहित भरत प्रेम में उमंगकर, सीता के चरण-कमलों की धूल माथे पर चढ़ाकर, बार-बार प्रणाम करने लगे। सीता ने उन्हें उठा लिया और उनका मस्तक अपने कर-कमल से स्पर्श कर उन दोनों को बिठाया।

सीय असीस दीन्हि मन माहीं ❀ मगन सनेहँ देह सुधि नाहीं
सब बिधि सानुकूल लखि सीता ❀ भे निसोच उर अपडर[1] बीता

सीता ने मन ही मन आशीर्वाद दिया, क्योंकि वे स्नेह में मग्न हैं, शरीर की सुधबुध उन्हें नहीं है। सीता को सब प्रकार से अपने अनुकूल देखकर भरत सोच-रहित हो गये और उनके हृदय का कल्पित भय जाता रहा।

कोउ किछु कहइ न कोउ किछु पूँछा ❀ प्रेम भरा मन निज गति छूँछा
तेहि अवसर केवट धीरजु धरि ❀ जोरि पानि बिनवत प्रनाम करि

उस समय न कोई कुछ कहता है, न कोई कुछ पूछता है। मन प्रेम से भरा हुआ है। वह अपनी गति से खाली है। उस अवसर पर केवट धीरज धर कर और हाथ जोड़, प्रणाम कर, विनती करने लगा।

दो॰ नाथ साथ मुनिनाथ के मातु सकल पुर लोग।
सेवक सेनप सचिव सब आए बिकल बियोग ॥२४१

हे नाथ! मुनिनाथ वशिष्ठजी के साथ आपकी सब मातायें, नगर-निवासी, सेवक, सेनापति, मन्त्री सब आपके वियोग में व्याकुल आये हैं।

सीलसिंधु सुनि गुर आगवनू ❀ सिय समीप राखे रिपुदवनू
चले सबेग रामु तेहि काला ❀ धीर धरम धुर दीनदयाला

शील के समुद्र, धीरज और धर्म के धुरन्धर, दीनदयाल रामचन्द्रजी गुरु

१. कल्पित डर।

का आगमन सुनकर, सीता के पास शत्रुघ्न को रखकर, उसी समय वेग के साथ चल पड़े।

गुरहि देखि सानुज अनुरागे ❀ दंड प्रनाम करन प्रभु लागे
मुनिबर धाइ लिए उर लाई ❀ प्रेम उमगि भेंटे दोउ भाई

लक्ष्मण-सहित प्रभु रामचन्द्रजी गुरु को देखकर प्रेम में भर गये और दंड-प्रणाम करने लगे। मुनिवर वशिष्ठजी ने दौड़कर उन्हें हृदय से लगा लिया और वे प्रेम में उमंगकर दोनों भाइयों से मिले।

प्रेम पुलकि केवट कहि नामू ❀ कीन्ह दूरि तें दंड प्रनामू
रामसखा रिषि बरबस भेंटा ❀ जनु महि लुठत[1] सनेह समेटा

फिर केवट ने प्रेम से पुलकित हो, अपना नाम लेकर, दूर ही से वशिष्ठजी को दंडवत्-प्रणाम किया। ऋषि वशिष्ठ ने रामसखा (गुह) को जबरदस्ती हृदय से लगा लिया, मानो जमीन पर लोटते हुए प्रेम को उन्होंने समेट लिया हो।

रघुपति भगति सुमंगल मूला ❀ नभ सराहि सुर बरिसहिं फूला
एहि सम निपट नीच कोउ नाहीं ❀ बड़ बसिष्ठ सम को जग माहीं

रामचन्द्रजी की भक्ति शुभ मंगलों की मूल है, ऐसा कहकर सराहना करते हुये देवता आकाश से फूल बरसाने लगे। वे कहने लगे—इसके बराबर सर्वथा नीच कोई नहीं और जगत् में वशिष्ठजी से बड़ा कौन है ?

दो॰ जेहि लखि लखनहु तें अधिक मिले मुदित मुनिराउ
सो सीतापति भजन को प्रगट प्रताप प्रभाउ ॥२४२॥

जिसको देखकर मुनिराज वशिष्ठ लक्ष्मण से भी अधिक उससे आनन्दित होकर मिले। यह सब सीतापति रामचन्द्रजी के भजन का प्रत्यक्ष प्रताप और प्रभाव है।

आरत लोग राम सबु जाना ❀ करुनाकर सुजान भगवाना
जो जेहि भायँ रहा अभिलाखी ❀ तेहि तेहि कै तसि तसि रुख राखी

दया की खान, सुजान भगवान् राम ने सब लोगों को दुःखी जाना। तब जो जिस भाव से मिलने का अभिलाषी था, उसका वैसा ही रुख रखते हुये—

१. लोटते हुये।

सानुज मिलि पल महुँ सब काहू ❀ कीन्ह दूरि दुखु दारुन दाहू
येहि बड़ि बात राम कै नाहीं ❀ जिमि घट कोटि एक रबि छाहीं

लक्ष्मण-सहित रामचन्द्रजी ने पलभर में सबसे मिलकर उनके दुःख और कठिन संताप को दूर कर दिया। रामचन्द्रजी के लिए यह कोई बड़ी बात नहीं जैसे करोड़ों घड़ों में एक ही सूर्य की छाया (एक साथ ही दीखती है)।

मिलि केवटहि उमगि अनुरागा ❀ पुरजन सकल सराहहिं भागा
देखीं राम दुखित महतारीं ❀ जनु सुबेलि अवली हिम[1] मारीं

समस्त अयोध्यावासी प्रेम में उमँगकर केवट से मिलकर उसके भाग्य की सराहना करते हैं। रामचन्द्रजी ने देखा कि मातायें दुःखी हैं, मानो सुन्दर लताओं की श्रेणी को पाला मार गया हो।

प्रथम राम भेंटी कैकेई ❀ सरल सुभायँ भगति मति भेई[2]
पग परि कीन्ह प्रबोध बहोरी ❀ काल करम बिधि सिर धरि खोरी

राम सबसे पहले कैकेयी से मिले और अपने सरल स्वभाव और भक्ति-रस से उसकी बुद्धि को भिगो दिया। फिर पाँवों में गिरकर काल-कर्म और विधाता के माथे दोष मढ़कर, उन्होंने उन्हें सान्त्वना दी।

दो० भेंटीं रघुबर मातु सब करि प्रबोधु परितोषु।
अंब ईस आधीन जगु काहु न देइअ दोषु ॥२४३॥

फिर रामचन्द्रजी सब माताओं से मिले। और उन्होंने उन्हें समझा-बुझा कर संतोष कराया कि हे माता! सम्पूर्ण जगत् ईश्वर के अधीन है। किसी को भी दोष नहीं देना चाहिये।

गुर तिय पद बंदे दुहु भाई ❀ सहित बिप्रतिय जे सँग आई
गंग गौरि सम सब सनमानीं ❀ देहिं असीस मुदित मृदु बानीं

फिर दोनों भाइयों ने ब्राह्मणों की जो स्त्रियाँ संग में आई थीं, उन-समेत गुरुजी की स्त्री (अरुन्धती) के चरणों की वन्दना की और उन सबका गंगाजी तथा गौरीजी के समान सम्मान किया। वे सब प्रसन्न होकर मधुर वाणी से आशीर्वाद देने लगीं।

---

१. पाला। २. भिगो दिया, तर कर दिया।

गहि पद लगे सुमित्रा अंका ❀ जनु भेंटी सँपति अति रँका[1]
पुनि जननी चरननि दोउ भ्राता ❀ परे प्रेम ब्याकुल सब गाता

फिर दोनों भाई सुमित्रा के पाँव पड़कर उनकी गोद में जा लिपटे, मानो किसी अति दरिद्र को सम्पत्ति से भेंट हो गई हो। फिर दोनों भाई माता कौशल्या के चरणों में गिर पड़े। प्रेम के मारे उनके सब अंग शिथिल हो गये।

अति अनुराग अँब उर लाए ❀ नयन सनेह सलिल अन्हवाए
तेहि अवसर कर हरष बिषादू ❀ किमि कबि कहइ मूक[2] जिमि स्वादू

माता ने बड़े स्नेह से उन्हें हृदय से लगा लिया और नेत्रों में से बहे हुए प्रेम के आँसुओं से उन्हें नहला दिया। उस समय के हर्ष और विषाद को कवि कैसे कहे? जैसे गूँगा स्वाद को कैसे बतावे?

मिलि जननिहि सानुज रघुराऊ ❀ गुर सन कहेउ कि धारिअ पाऊ[3]
पुरजन पाइ मुनीस नियोगू[4] ❀ जल थल तकि तकि उतरेउ लोगू

लक्ष्मण-समेत रामचन्द्रजी ने माताओं से मिलकर गुरु से कहा कि आश्रम पर पधारिये। फिर सब लोग मुनिराज वशिष्ठ की आज्ञा पाकर जल और थल का सुभीता देख-देखकर उतर गये।

दो॰ महिसुर मन्त्री मातु गुर गने लोग लिये साथ।
पावन आस्रम गवन किय भरत लखन रघुनाथ।२४४

ब्राह्मण, मंत्री, मातायें और गुरु तथा गिने-चुने लोगों को साथ लिये हुए, भरत, लक्ष्मण और रामचन्द्रजी पवित्र आश्रम को चले।

सीय आइ मुनिबर पग लागी ❀ उचित असीस लही मन माँगी
गुरपतिनिहिं मुनितियन्ह समेता ❀ मिली प्रेमु कहि जाइ न जेता

सीता आकर मुनिवर (वशिष्ठजी) के पाँवों पड़ी और उन्होंने मनचाही उचित आसीस पाई। फिर मुनियों की स्त्रियों के साथ-साथ गुरु-पत्नी अरुन्धती से भी मिलीं। उनका प्रेम जितना था, वह कहा नहीं जाता।

बन्दि बन्दि पग सिय सबही के ❀ आसिरबचन लहे प्रिय जी के
सासु सकल जब सीयँ निहारी ❀ मूँदे नयन सहमि सुकुमारी

१. गरीब। २. गूंगा। ३. पद, पग। ४. आज्ञा।

सीता ने सभी के चरणों को प्रणाम कर अपने जी को प्रिय लगने वाले (अनुकूल) आशीर्वाद पाये। जब सुकुमारी सीता ने सासुओं को देखा, तब सहमकर उन्होंने अपनी आँखें बन्द कर लीं।

परी बधिक बस मनहुँ मरालीं ❀ काह कीन्ह करतार कुचालीं
तिन्ह सिय निरखि निपट दुख पावा ❀ सो सब सहिअ जो दैउ सहावा

मानो राजहंसिनियाँ बधिक के वश में पड़ी हों। वे मन में सोचने लगीं कि विधाता ने यह क्या कुचाल चली ? उन्होंने भी सीता को देखकर बड़ा दुःख पाया। जो कुछ दैव सहावे, वह तो सहना ही पड़ता है।

जनकसुता तब उर धरि धीरा ❀ नील नलिन लोयन[1] भरि नीरा
मिली सकल सासुन्ह सिय जाई ❀ तेहि अवसर करुना महि छाई

तब जानकी हृदय में धीरज धरकर, नील कमल के समान नेत्रों में जल भरकर, सब सासुओं से जाकर मिलीं। उस समय पृथ्वी पर करुणा छा गई।

दो०— लागि लागि पग सबनि सिय भेंटति अति अनुराग।
हृदयँ असीसहिं प्रेम बस रहिअहु भरी सोहाग।२४५।

सीता सब के पाँव पड़-पड़कर बड़े प्रेम से भेंट रही हैं। सब सासुएँ प्रेम के बस हृदय से सीता को आशीर्वाद दे रही हैं कि तुम सदा सौभाग्यवती रहो।

बिकल सनेहँ सीय सब रानी ❀ बैठन सबहिं कहेउ गुर ज्ञानी
कहि जग गति मायिक मुनिनाथा ❀ कहे कछुक परमारथ गाथा

सीता और सब रानियाँ स्नेह से व्याकुल हो रही हैं। तब ज्ञानी गुरु ने उनको बैठ जाने के लिए कहा। फिर मुनिनाथ वशिष्ठजी ने जगत् की गति को मायिक कह कर कुछ परमार्थ की कथायें कहीं।

नृप कर सुरपुर गवनु सुनावा ❀ सुनि रघुनाथ दुसह दुखु पावा
मरन हेतु निज नेहु बिचारी ❀ भे अति बिकल धीर धुर धारी

फिर वशिष्ठजी ने राजा दशरथ के स्वर्ग-गमन की बात सुनाई। रामचन्द्रजी ने यह सुन बड़ा ही दुःख पाया। राजा के मरने का कारण अपना स्नेह सोचकर धीर धुरन्धर रामचन्द्रजी बहुत ही व्याकुल हुये।

---

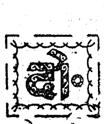
1. लोचन, नेत्र।

कुलिस[1] कठोर सुनत कटु बानी ❀ बिलपत लखन सीय सब रानी
सोक बिकल अति सकल समाजू ❀ मानहुँ राजु अकाजेउ आजू

बज्र के समान कठोर, कड़वी वाणी सुनकर लक्ष्मण, सीता और सब रानियाँ विलाप करने लगीं। सारा समाज शोक में अत्यन्त व्याकुल हो गया, मानो आज ही राजा का देहान्त हुआ हो।

मुनिबर बहुरि राम समुझाए ❀ सहित समाज सुसरित नहाए
ब्रतु निरंबु[2] तेहि दिन प्रभु कीन्हा ❀ मुनिहु कहें जल काहुँ न लीन्हा

फिर मुनिवर वशिष्ठजी ने रामचन्द्रजी को समझाया। तब उन्होंने समाज-सहित श्रेष्ठ नदी मंदाकिनी में स्नान किया। उस दिन प्रभु रामचन्द्रजी ने निर्जल व्रत किया। और वशिष्ठजी के कहने से किसी ने भी जल ग्रहण नहीं किया।



भोरु भयें रघुनंदनहिं जो मुनि आयसु दीन्ह।
श्रद्धा भगति समेत प्रभु सो सबु सादर कीन्ह॥२४६

दूसरे दिन सबेरा होने पर मुनि वशिष्ठजी ने रामचन्द्रजी को जो आज्ञा दी, उसे प्रभु रामचन्द्रजी ने श्रद्धा-भक्ति से बड़े आदर के साथ किया।

करि पितु क्रिया बेद जसि बरनी ❀ भे पुनीत पातक तम तरनी[3]
जासु नाम पावक अघ तूला ❀ सुमिरत सकल सुमङ्गल मूला

जैसा वेदों में कहा है, उसी के अनुसार उन्होंने पिता की क्रिया की और पातक-रूपी अन्धकार को नष्ट करने वाले सूर्यरूप रामचन्द्रजी शुद्ध हुए। जिनका नाम पापरूपी रुई के लिए अग्निरूप है, जिनका स्मरण शुभ मंगलों का मूल है,

सुद्ध सो भयउ साधु सम्मत अस ❀ तीरथ आवाहन सुरसरि जस
सुद्ध भएँ दुइ बासर बीते ❀ बोले गुरु सन राम पिरीते

वे भगवान् रामचन्द्रजी शुद्ध हुए, साधुओं की ऐसी सम्मति है। मानो गंगाजी तीर्थों के आवाहन से शुद्ध होती हैं। शुद्ध होने के दो दिन बीत जाने पर रामचन्द्रजी प्रीति के साथ गुरुजी से बोले—

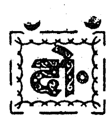
नाथ लोक सब निपट दुखारी ❀ कन्द मूल फल अम्बु[4] अहारी
सानुज भरत सचिव सब माता ❀ देखि मोहि पल जिमि जुग जाता

१. बज्र। २. बिना जल का। ३. सूर्य। ४. जल।

हे नाथ ! सब लोग यहाँ बहुत ही दुखी हो रहे हैं। कन्द, मूल, फल और जल ही का आहार करते हैं। भाई शत्रुघ्न सहित भरत, मन्त्री और सब मातायें, इन्हें देख-देख मुझे एक-एक पल युग के समान बीत रहा है।

सब समेत पुर धारिअ पाऊ ❀ आपु इहाँ अमरावति राऊ
बहुत कहेउँ सब कियेउँ ढिठाई ❀ उचित होइ तस करिअ गोसाईं

अतएव आप सबके साथ अयोध्या को पधारिये, क्योंकि आप यहाँ हैं और राजा स्वर्ग में हैं। मैंने जो कुछ कहा, बहुत कहा। यह बड़ी ढिठाई की है। हे गोसाईं ! जैसा उचित हो, वैसा कीजिये।



धर्म सेतु करुनायतन कस न कहहु अस राम।
लोग दुखित दिन दुइ दरस देखि लहहिं बिस्राम॥

वशिष्ठजी ने कहा—हे राम ! तुम भला ऐसा क्यों न कहो ? तुम धर्म के सेतु और दया के धाम हो। सब लोग दुःखी हैं। दो दिन तुम्हारे दर्शन से शान्ति पा रहे हैं।

राम बचन सुनि सभय समाजू ❀ जनु जल निधि महुँ बिकल जहाजू
सुनि गुर गिरा सुमंगल मूला ❀ भयेउ मनहुँ मारुत[1] अनुकूला

रामचन्द्रजी के वचन सुनकर सारा समाज भयभीत हो गया। मानो बीच समुद्र में जहाज डूबने लगा हो। पीछे कल्याणमूलक गुरु वसिष्ठजी की वाणी सुनी जो उस जहाज के लिये अनुकूल वायु के समान थी।

पावन पयँ तिहुँ काल नहाहीं ❀ जो बिलोकि अघ ओघ नसाहीं
मंगल मूरति लोचन भरि भरि ❀ निरखहिं हरषि दंडवत करि करि

सब लोग पयस्विनी नदी के पवित्र जल में त्रिकाल स्नान करते हैं, जिसके दर्शन ही से पापों के समूह नष्ट हो जाते हैं। मङ्गलमूर्त्ति श्रीरामचन्द्र को दंडवत प्रणाम कर-करके, प्रसन्नतापूर्वक आँखें भर-भर कर देखते हैं।

राम सैल बन देखन जाहीं ❀ जहँ सुख सकल[2] सकल[3] दुख नाहीं
झरना झरहिं सुधा सम बारी ❀ त्रिबिध[4] ताप हर त्रिबिध[5] बयारी

सब रामचन्द्रजी के पर्वत और वन को देखने जाते हैं, जहाँ सभी सुख

---

१. वायु। २. सब। ३. शकल, ज़रा भर भी। ४. दैहिक, दैविक, भौतिक। ५. शीतल, मंद, सुगन्ध।

हैं और ज़रा भर भी दुःख नहीं है। झरनों से अमृत के समान जल झरता है और त्रिविध तापों को हरने वाली तीन प्रकार की वायु चलती है।

बिटप बेलि तृन अगनित जाती ❀ फल प्रसून पल्लव बहु भाँती
सुंदर सिला सुखद तरु छाहीं ❀ जाइ बरनि बन छबि केहि पाहीं

असंख्य जाति के वृक्ष, लताएँ और तृन हैं तथा बहुत तरह के फल-फूल और पत्ते हैं। सुन्दर शिलायें हैं, वृक्षों की सुखदायी छाया है। वन की शोभा किससे वर्णन की जा सकती है?

दो॰ सरनि सरोरुह[1] जल बिहग कूजत गुञ्जत भृङ्ग।
बैर बिगत बिहरत बिपिन मृग बिहंग बहुरंग॥२४८॥

तालाबों में कमल खिल रहे हैं। जल के पक्षी कूज रहे हैं। भौंरे गूँज रहे हैं और वन में रंग-बिरंगे पक्षी और पशु बैर-रहित होकर विहार कर रहे हैं।

कोल किरात भिल्ल बनबासी ❀ मधु सुचि सुंदर स्वादु सुधा सी
भरि भरि परनपुटीं[2] रचि रूरी[3] ❀ कंद मूल फल अंकुर जूरी[4]

वन के रहने वाले कोल, किरात और भील पवित्र, सुन्दर और अमृत के समान स्वादिष्ट शहद सुन्दर सुहावने दोनों में भर-भरकर कन्द, मूल, फल और अंकुर आँटियों में,

सबहिं देहिं करि बिनय प्रनामा ❀ कहि कहि स्वाद भेद गुन नामा
देहिं लोग बहु मोल न लेहीं ❀ फेरत राम दोहाई देहीं

सबको विनय और प्रणाम करके उन चीज़ों के अलग-अलग स्वाद, भेद, गुण और नाम बता-बताकर देते हैं। लोग उनका बहुत-सा दाम देते हैं, पर वे लेते नहीं हैं और लौटा देने में रामजी की दुहाई देते हैं।

कहहिं सनेह मगन मृदुबानी ❀ मानत साधु पेम पहिचानी
तुम्ह सुकृती हम नीच निषादा ❀ पावा दरसनु राम प्रसादा

वे प्रेम में मग्न होकर कोमल वाणी से कहते हैं कि साधु लोग तो प्रेम को पहचानकर उसका सम्मान करते हैं। आप तो पुण्यवान् हैं, हम नीच निषाद हैं। रामचन्द्रजी की कृपा से ही हमने आप लोगों के दर्शन पाये।

---

१. कमल। २. दोना। ३. सुन्दर। ४. आँटी।

हमहिं अगम अति दरसु तुम्हारा ❀ जस मरु धरनि देवधुनि[1] धारा
राम कृपाल निषाद नेवाजा ❀ परिजन प्रजउ चहिय जस राजा

हम लोगों को आपके दर्शन बड़े ही दुर्लभ हैं—जैसे मरुदेश के लिए गंगाजी की धारा दुर्लभ है। देखिये, दयालु रामचन्द्रजी ने निषाद पर कैसी कृपा की? जैसे राजा हैं, वैसा ही उनके परिजन और प्रजा को भी होना चाहिए।

दो॰ यह जियँ जानि सँकोच तजि करिअ छोहु लखि नेहु।
हमहिं कृतारथ करन लगि फल तृन अंकुर लेहु॥

ऐसा जी में जानकर, संकोच छोड़कर और हमारा स्नेह देखकर कृपा कीजिए और हमको कृतार्थ करने के लिए फल, तृण और अंकुर लीजिए।

तुम्ह प्रिय पाहुने बन पगु धारे ❀ सेवा जोगु न भाग हमारे
देब काह हम तुम्हहिं गोसाईं ❀ ईंधनु पात किरात मिताई

आप प्यारे पाहुने वन में पधारे हैं। आपकी सेवा करने के योग्य हमारे भाग्य नहीं हैं। हे स्वामी! हम आपको क्या दे सकते हैं? भीलों की मित्रता तो बस, ईंधन (लकड़ी) और पत्तों ही तक है।

यह हमारि अति बड़ि सेवकाई ❀ लेहिं न बासन[2] बसन[3] चोराई
हम जड़ जीव जीव गन घाती ❀ कुटिल कुचाली कुमति कुजाती

हमारी तो यही बड़ी भारी सेवकाई है कि हम आपके कपड़े और बर्तन नहीं चुरा लेते। हम लोग शठ जीव हैं; जीवों की हिंसा करने वाले हैं और कुटिल, कुचाली, कुबुद्धि और नीच जाति के हैं।

पाप करत निसि बासर जाहीं ❀ नहिं पट कटि नहिं पेट अघाहीं
सपनेहुँ धरम बुद्धि कस काऊ ❀ यह रघुनंदन दरस प्रभाऊ

हमारे रात-दिन पाप करते ही बीतते हैं। न तो हमारी कमर में वस्त्र है न पेट ही भरता है। हममें स्वप्न में भी धर्मबुद्धि कैसी? जो कुछ है, यह सब रामचन्द्रजी के दर्शन का प्रभाव है।

जब तें प्रभु पद पदुम निहारे ❀ मिटे दुसह दुख दोष हमारे
बचन सुनत पुरजन अनुरागे ❀ तिन्ह के भाग सराहन लागे

---

१. गंगाजी। २. बरतन। ३. वस्त्र।

जब से प्रभु के चरण-कमलों का दर्शन हमने पाया, तब से हमारे दुःसह दुःख और दोष मिट गये। उनके वचनों को सुनकर अयोध्यावासी लोग प्रेम में भर गये और उनके भाग्य की सराहना करने लगे।

छंद–लागे सराहन भाग सब अनुराग बचन सुनावहीं।
बोलनि मिलनि सिय राम चरन सनेहु लखि सुख पावहीं॥
नर नारि निदरहिं नेहु निज सुनि कोल भिल्लनि की गिरा[1]।
तुलसी कृपा रघुबंसमनि की लोह लै नौका[2] तिरा॥

सब लोग उनके भाग्य की सराहना करने लगे और प्रेम के वचन सुनाने लगे। उन लोगों का बोलने और मिलने का ढंग और सीताराम के चरणों में उनका प्रेम देखकर वे सब बड़ा सुख पा रहे हैं। उन कोल-भीलों की वाणी सुनकर सब नर-नारी अपने प्रेम को तुच्छ समझने लगे। तुलसीदासजी कहते हैं कि यह रघुवंशमणि रामचन्द्रजी की कृपा है कि लोहा नौका को लेकर तिर गया।

सो०– बिहरहिं बन चहुँ ओर प्रतिदिन प्रमुदित लोग सब।
जल ज्यों दादुर मोर भए पीन[3] पावस प्रथम॥२५०॥

सब लोग आनन्दित होकर प्रतिदिन वन में चारों ओर विहार करते हैं और ऐसे प्रसन्न हैं, जैसे बरसात के आरम्भ में मेढक और मोर मोटे हो जाते हैं।

पुर जन नारि मगन अति प्रीती ❀ बासर जाहिं पलक सम बीती
सीय सासु प्रति बेष बनाई ❀ सादर करइ सरिस सेवकाई

अयोध्यावासी नर-नारी सभी प्रेम में खूब मग्न हो रहे हैं। उनके दिन पलक बन्द करने के समान बीत जाते हैं। जितनी सासुयें हैं सीता उतने वेष बनाकर सब सासुओं की एक-सी सेवा करती हैं।

लखा न मरमु राम बिनु काहूँ ❀ माया सब सिय माया माहूँ[4]
सीयँ सासु सेवा बस कीन्ही ❀ तिन्ह लहि सुख सिख आसिष दीन्ही

इस भेद को रामचन्द्रजी के सिवा और किसी ने नहीं जाना। क्योंकि सब मायायें सीता की माया ही में हैं। सीता ने सासुओं को सेवा से वश में कर

१. वाणी। २. पाठान्तर—लौका तुम्बा। ३. मोटे। ४. में।

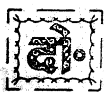
लिया। उन्होंने सुख पाकर सीख और आशीर्वाद दिये।

लखि सिय सहित सरल दोउ भाई ❀ कुटिल रानि पछितानि अघाई
अवनि जमहिं जाँचति कैकेई ❀ महि न बीचु[1] बिधि मीचु[2] न देई

सीता समेत दोनों भाइयों (राम-लक्ष्मण) का सरल स्वभाव देखकर कुटिल रानी कैकेयी खूब ही पछताई। वह पृथ्वी तथा यमराज से माँगती है कि मुझे धरती बीच नहीं देती और विधाता मौत नहीं देता। [यथासंख्य अलंकार]

लोकहुँ बेद बिदित कबि कहहीं ❀ राम बिमुख थलु नरक न लहहीं
यह संसउ सब के मन माहीं ❀ राम गवनु बिधि अवध की नाहीं

लोक और वेद में प्रसिद्ध है और कवि (ज्ञानवान्) भी कहते हैं कि रामजी से विमुख मनुष्य को नरक में भी ठौर नहीं मिलती। सब के मन में यह सन्देह हो रहा है कि हे विधाता! रामचन्द्रजी का अयोध्या जाना होगा कि नहीं? [संदेह अलंकार]



निसि न नींद नहिं भूख दिन भरतु बिकल सुचि सोच।
नीच कीच बिच मगन जस मीनहिं सलिल सँकोच॥

भरत को न रात में नींद आती है न दिन में भूख लगती है। वे पवित्र सोच में ऐसे विकल हैं, जैसे नीचे (तल) के कीचड़ में डूबी हुई मछली को पानी की कमी से व्याकुलता होती है।

कीन्हि मातु मिस काल कुचाली ❀ ईति भीति जस पाकत साली[3]
केहि बिधि होइ राम अभिषेकू ❀ मोहि अवकलत उपाउ न एकू

भरत सोचते हैं कि माता के मिस से काल ने कुचाल की है। जैसे धान पकते समय ईति का भय हो। अब रामचन्द्रजी का राज्याभिषेक किस तरह हो, मुझे तो एक भी उपाय नहीं सूझ पड़ता।

अवसि फिरहिं गुरु आयसु मानी ❀ मुनि पुनि कहब राम रुचि जानी
मातु कहेहुँ बहुरहिं रघुराऊ ❀ राम जननि हठ करबि कि काऊ

रामचन्द्रजी गुरु की आज्ञा मानकर तो अवश्य ही अयोध्या को लौट चलेंगे। पर वशिष्ठ मुनिजी तो रामचन्द्रजी की रुचि देखकर ही कुछ कहेंगे। माता कौशल्या के कहने से भी रामचन्द्रजी लौट सकते हैं। पर भला, रामचन्द्रजी

१. समा जाने की जगह। २. मृत्यु। ३. धान।

जब से प्रभु के चरण-कमलों का दर्शन हमने पाया, तब से हमारे दुःसह दुःख और दोष मिट गये। उनके वचनों को सुनकर अयोध्यावासी लोग प्रेम में भर गये और उनके भाग्य की सराहना करने लगे।

छंद–लागे सराहन भाग सब अनुराग बचन सुनावहीं।
बोलनि मिलनि सिय राम चरन सनेहु लखि सुख पावहीं॥
नर नारि निदरहिं नेहु निज सुनि कोल भिल्लनि की गिरा[1]।
तुलसी कृपा रघुबंसमनि की लोह लै नौका[2] तिरा॥

सब लोग उनके भाग्य की सराहना करने लगे और प्रेम के वचन सुनाने लगे। उन लोगों का बोलने और मिलने का ढंग और सीताराम के चरणों में उनका प्रेम देखकर वे सब बड़ा सुख पा रहे हैं। उन कोल-भीलों की वाणी सुनकर सब नर-नारी अपने प्रेम को तुच्छ समझने लगे। तुलसीदासजी कहते हैं कि यह रघुवंशमणि रामचन्द्रजी की कृपा है कि लोहा नौका को लेकर तिर गया।

सो॰ बिहरहिं बन चहुँ ओर प्रतिदिन प्रमुदित लोग सब।
जल ज्यों दादुर मोर भए पीन[3] पावस प्रथम॥२५०॥

सब लोग आनन्दित होकर प्रतिदिन वन में चारों ओर विहार करते हैं और ऐसे प्रसन्न हैं, जैसे बरसात के आरम्भ में मेढक और मोर मोटे हो जाते हैं।

पुर जन नारि मगन अति प्रीती ❀ बासर जाहिं पलक सम बीती
सीय सासु प्रति वेष बनाई ❀ सादर करइ सरिस सेवकाई

अयोध्यावासी नर-नारी सभी प्रेम में खूब मग्न हो रहे हैं। उनके दिन पलक बन्द करने के समान बीत जाते हैं। जितनी सासुयें हैं सीता उतने वेष बनाकर सब सासुओं की एक-सी सेवा करती हैं।

लखा न मरमु राम बिनु काहूँ ❀ माया सब सिय माया माहूँ[4]
सीयँ सासु सेवा बस कीन्ही ❀ तिन्ह लहि सुख सिख आसिष दीन्ही

इस भेद को रामचन्द्रजी के सिवा और किसी ने नहीं जाना। क्योंकि सब मायायें सीता की माया ही में हैं। सीता ने सासुओं को सेवा से वश में कर

१. वाणी। २. पाठान्तर—लौका तुम्बा। ३. मोटे। ४. में।

लिया। उन्होंने सुख पाकर सीख और आशीर्वाद दिये।

लखि सिय सहित सरल दोउ भाई ❀ कुटिल रानि पछितानि अघाई
अवनि जमहिं जाँचति कैकेई ❀ महि न बीचु[1] बिधि मीचु[2] न देई

सीता समेत दोनों भाइयों (राम-लक्ष्मण) का सरल स्वभाव देखकर कुटिल रानी कैकेयी खूब ही पछताई। वह पृथ्वी तथा यमराज से माँगती है कि मुझे धरती बीच नहीं देती और विधाता मौत नहीं देता। [यथासंख्य अलंकार]

लोकहुँ बेद बिदित कबि कहहीं ❀ राम बिमुख थलु नरक न लहहीं
यह संसउ सब के मन माहीं ❀ राम गवनु बिधि अवध की नाहीं

लोक और वेद में प्रसिद्ध है और कवि (ज्ञानवान्) भी कहते हैं कि रामजी से विमुख मनुष्य को नरक में भी ठौर नहीं मिलती। सब के मन में यह सन्देह हो रहा है कि हे विधाता! रामचन्द्रजी का अयोध्या जाना होगा कि नहीं? [संदेह अलंकार]



निसि न नींद नहिं भूख दिन भरतु बिकल सुचि सोच।
नीच कीच बिच मगन जस मीनहिं सलिल सँकोच॥

भरत को न रात में नींद आती है न दिन में भूख लगती है। वे पवित्र सोच में ऐसे विकल हैं, जैसे नीचे (तल) के कीचड़ में डूबी हुई मछली को पानी की कमी से व्याकुलता होती है।

कीन्हि मातु मिस काल कुचाली ❀ ईति भीति जस पाकत साली[3]
केहि बिधि होइ राम अभिषेकू ❀ मोहि अवकलत उपाउ न एकू

भरत सोचते हैं कि माता के मिस से काल ने कुचाल की है। जैसे धान पकते समय ईति का भय हो। अब रामचन्द्रजी का राज्याभिषेक किस तरह हो, मुझे तो एक भी उपाय नहीं सूझ पड़ता।

अवसि फिरहिं गुरु आयसु मानी ❀ मुनि पुनि कहब राम रुचि जानी
मातु कहेहुँ बहुरहिं रघुराऊ ❀ राम जननि हठ करबि कि काऊ

रामचन्द्रजी गुरु की आज्ञा मानकर तो अवश्य ही अयोध्या को लौट चलेंगे। पर वशिष्ठ मुनिजी तो रामचन्द्रजी की रुचि देखकर ही कुछ कहेंगे। माता कौशल्या के कहने से भी रामचन्द्रजी लौट सकते हैं। पर भला, रामचन्द्रजी

---

१. समा जाने की जगह। २. मृत्यु। ३. धान।

को जन्म देनेवाली माता क्या कभी हठ करेंगी ?

मोहि अनुचर कर केतिक बाता ❀ तेहि महँ कुसमउ बाम बिधाता
जौं हठ करउँ त निपट कुकरमू ❀ हरगिरि तें गुरु[1] सेवक धरमू

मुझ सेवक की तो बात ही क्या है ? उसमें भी समय खराब है, और विधाता प्रतिकूल है। यदि मैं हठ करूँ तो यह बिलकुल ही अनुचित है। सेवक का धर्म कैलास पर्वत से भी भारी (निबाहने में कठिन) है।

एकउ जुगुति न मन ठहरानी ❀ सोचत भरतहिं रैनि[2] बिहानी[3]
प्रात नहाइ प्रभुहिं सिर नाई ❀ बैठत पठए रिषयँ बोलाई

एक भी युक्ति भरत के मन में न ठहरी। सोचते ही सोचते रात बीत गई। प्रातःकाल स्नान करके और प्रभु रामचन्द्रजी को सिर नवाकर बैठे ही थे कि भरत को ऋषि ने बुला भेजा।

दो॰ गुर पद कमल प्रनामु करि बैठे आयसु पाइ।
बिप्र महाजन सचिव सब जुरे सभासद आइ॥२५२॥

भरत गुरु के चरण-कमलों में प्रणाम कर, आज्ञा पाकर बैठ गये। उसी समय ब्राह्मण, महाजन, मन्त्री आदि सभी सभासद भी आकर इकट्ठे हो गये।

बोले मुनिबरु समय समाना ❀ सुनहु सभासद भरत सुजाना
धरम धुरीन भानुकुल भानू ❀ राजा रामु स्वबस भगवानू

मुनिवर वशिष्ठजी समय के अनुसार वचन बोले—हे सभासदो ! हे सुजान भरत ! सुनो। सूर्यकुल में सूर्यरूप राजा राम धर्म के धुरन्धर और स्वतन्त्र भगवान् हैं।

सत्यसंध पालक श्रुति सेतू ❀ राम जनमु जग मंगल हेतू
गुरु पितु मातु बचन अनुसारी ❀ खल दल दलन देव हितकारी

वे सत्य-प्रतिज्ञ और वेद की मर्यादा के रक्षक हैं। रामचन्द्रजी का जन्म ही जगत् के कल्याण के लिए हुआ है। वे गुरु, पिता और माता के वचनों के अनुसार चलने वाले हैं। दुष्टों के दल के नाशक और देवताओं के हितकारी हैं।

नीति प्रीति परमारथ स्वारथु ❀ कोउ न राम सम जान जथारथु
बिधि हरि हरु ससि रबि दिसिपाला ❀ माया जीव करम कुलि काला

१. भारी। २. रात। ३. बीत गई।

नीति, प्रेम, परमार्थ और स्वार्थ को रामचन्द्रजी के समान यथार्थ कोई नहीं जानता। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, चन्द्र, सूर्य, दिक्पाल, माया, जीव, सभी कर्म और काल

अहिप महिप जहँ लगि प्रभुताई ❀ जोग सिद्धि निगमागम गाई
करि बिचार जियँ देखहु नीकें ❀ राम रजाइ सीस सबही कें

शेष और अन्य राजा आदि जहाँ तक प्रभुता (मालिकी) है और योग की सिद्धियाँ जो वेद और शास्त्रों में गाई गई हैं, जी में अच्छी तरह विचारकर देखो, रामचन्द्रजी की आज्ञा इन सभी के सिर पर है।



राखें राम रजाइ रुख हम सब कर हित होइ।
समुझि सयाने करहु अब सब मिलि संमत सोइ॥

इसलिए रामचन्द्रजी की आज्ञा और रुख रखने ही में हम सब का हित होगा। ऐसा समझकर अब तुम सब सयाने लोग जो सब को सम्मत हो, वही मिलकर करो।

सब कहुँ सुखद राम अभिषेकू ❀ मङ्गल मोद मूल मग एकू
केहि बिधि अवध चलहिं रघुराऊ ❀ कहहु समुझि सोइ करिअ उपाऊ

रामचन्द्रजी का राज्याभिषेक सब को सुख देनेवाला है। मंगल और आनन्द का मूल यही एक मार्ग है। रामचन्द्रजी अयोध्या किस तरह चलें? विचारकर कहो, वही उपाय किया जाय।

सब सादर सुनि मुनिबर बानी ❀ नय[1] परमारथ स्वारथ सानी
उतरु न आव लोग भए भोरे ❀ तब सिरु नाइ भरत कर जोरे

नीति, परमार्थ और स्वार्थ में सनी हुई मुनिवर की वाणी सबने आदर-पूर्वक सुनी। उत्तर किसी से न बन पड़ा। सब लोग भ्रमित से हो गये। तब भरत ने सिर नवाकर हाथ जोड़े।

भानुबंस भए भूप घनेरे ❀ अधिक एक तें एक बड़ेरे
जनम हेतु सब कहँ पितु माता ❀ करम सुभासुभ देइ बिधाता

और कहा—सूर्यवंश में एक से एक बढ़कर बहुत-से राजा हुए। सभी के जन्म के कारण पिता-माता होते हैं और शुभ-अशुभ कर्मों के फल तो विधाता देते हैं।

---

१. नीति।



दलि दुख सजइ सकल कल्याना ❀ अस असीस राउरि जगु जाना
सोइ गोसाइँ बिधि गति जेहि छेकी ❀ सकइ को टारि टेक जो टेकी

आपका आशीर्वाद ही एक ऐसा है जो सब दुःखों का नाश कर सभी कल्याणों को सजा देता है, यह जगत् जानता है। आप वही हैं जिन्होंने विधाता की गति को भी रोक दिया। आप जो टेक टेकेंगे, उसे कौन टाल सकेगा?

दो० बूझिअ मोहि उपाउ अब सो सब मोर अभागु।
सुनि सनेहमय बचन गुर उर उमगा अनुरागु ॥२५४

अब आप मुझसे उपाय पूछते हैं। यह सब मेरा अभाग्य ही तो है। भरत के ऐसे प्रेम भरे वचनों को सुनकर गुरु के हृदय में प्रेम उमड़ आया।

तात बात फुरि राम कृपाहीं ❀ राम बिमुख सिधि सपनेहु नाहीं
सकुचउँ तात कहत एक बाता ❀ अरध तजहिं बुध सरबस जाता

गुरु ने कहा—हे तात! रामकृपा से ही यह बात सच होगी। रामचन्द्र से विमुख की तो स्वप्न में भी सिद्धि नहीं हो सकती। हे पुत्र! मैं एक बात कहने में सकुचाता हूँ। पर बुद्धिमान् लोग सर्वस्व जाता देखकर आधा छोड़ देते हैं।

तुम्ह कानन गवनहु दोउ भाई ❀ फेरिअहि लखन सीय रघुराई
सुनि सुबचन हरषे दोउ भ्राता ❀ भे प्रमोद परिपूरन गाता

तुम दोनों भाई (भरत-शत्रुघ्न) वन को जाओ और लक्ष्मण, सीता और रामचन्द्र को लौटा दिया जाय। ऐसे सुन्दर वचन सुनकर दोनों भाई हर्षित हो गये। उनके सारे अंग परमानन्द से परिपूर्ण हो गये।

मन प्रसन्न तन तेजु बिराजा ❀ जनु जिय राउ रामु भए राजा
बहुत लाभ लोगन्ह लघु हानी ❀ सम दुख सुख सब रोवहिं रानी

उनके मन प्रसन्न हो गये। शरीर में तेज सुशोभित हो गया। मानो राजा दशरथ जी उठे और रामचन्द्र राजा हो गये हों। अन्य लोगों को तो इसमें लाभ अधिक और हानि थोड़ी प्रतीत हुई; परन्तु रानियों को दुःख और सुख समान ही थे, इसलिए वे रोने लगीं।

कहहिं भरत मुनि कहा सो कीन्हे ❀ फल जग जीवन्ह अभिमत दीन्हे
कानन करउँ जनम भरि बासू ❀ एहि तें अधिक न मोर सुपासू

भरत कहते हैं कि मुनि ने जो कहा, वह करने से जगत्-भर के जीवों को उनकी इच्छित वस्तु देने का फल होगा। मैं जन्म-भर वन में वास करूँगा। मेरे लिये इससे बढ़कर और कोई सुख नहीं है।


अन्तरजामी रामु सिय तुम्ह सरबग्य सुजान।
जौं फुर[1] कहहुँ त नाथ निज कीजिअ बचन प्रमान॥

रामचन्द्रजी और सीता हृदय की जानने वाले हैं और आप सर्वज्ञ तथा सुजान हैं। यदि मैं यह सत्य कह रहा हूँ तो हे नाथ! आप अपने वचन को पूरा कीजिए।

भरत बचन सुनि देखि सनेहू ❀ सभा सहित मुनि भये बिदेहू
भरत महा महिमा जलरासी ❀ मुनि मति[2] ठाढ़ि तीर अबला सी

भरत के वचन सुनकर और उनका प्रेम देखकर सभा-सहित मुनि वशिष्ठ जी विदेह हो गये; अर्थात् किसी को देह की सुध नहीं रही। भरत की महान् महिमा समुद्र है, मुनि की बुद्धि उसके किनारे अबला स्त्री के समान खड़ी है।

गा चह पार जतनु हियँ हेरा ❀ पावत नाव न बोहित बेरा
औरु करिहि को भरत बड़ाई ❀ सरसी[3] सीपि कि सिंधु[4] समाई

वह समुद्र के पार जाना चाहती है। इसके लिये उसने हृदय में उपाय भी ढूँढे। पर न नाव ही पाती है, न बेड़ा, न जहाज ही। तब और कौन भरत की बड़ाई कर सकता है? क्या तलैया की सीप में भी कभी समुद्र समा सकता है?

भरत मुनिहिं मन भीतर भाये ❀ सहित समाज राम पहिं आये
प्रभु प्रनामु करि दीन्ह सुआसन ❀ बैठे सब सुनि मुनि अनुसासनु

वशिष्ठजी की अंतरात्मा को भरत बहुत अच्छे लगे; और वे समाज-सहित रामचन्द्रजी के पास आये। प्रभु रामचन्द्रजी ने प्रणाम कर उन्हें सुन्दर आसन दिये। मुनि की आज्ञा सुनकर सब लोग बैठ गये।

बोले मुनिबरु बचन बिचारी ❀ देस काल अवसर अनुहारी
सुनहु राम सरबग्य सुजाना ❀ धरम नीति गुन ग्यान निधाना

---

१. सत्य। २. बुद्धि। ३. गड़ही, छोटी तलैया। ४. समुद्र।

मुनिवर देश, काल और मौके के अनुसार विचारपूर्वक वचन बोले— हे सर्वज्ञ ! हे बुद्धिमान ! हे धर्म, नीति, गुण और ज्ञान के भण्डार राम ! सुनिए—

दो०— सब के उर अन्तर बसहु जानहु भाउ कुभाउ।
पुरजन जननी भरत हित होइ सो कहिअ उपाउ॥

आप सब के हृदय के भीतर बसते हैं और सब के भले-बुरे भावों को जानते हैं। जिसमें पुरवासियों, माताओं और भरत का हित हो, वही उपाय बतलाइए।

आरत कहहिं बिचारि न काऊ ❀ सूझ जुआरिहि आपन दाऊ[1]
सुनि मुनि बचन कहत रघुराऊ ❀ नाथ तुम्हारेहि हाथ उपाऊ

दुःखी लोग कभी विचार कर नहीं कहते। जुआरी को अपना ही दाँव सूझता है। मुनि के वचन सुनकर रामचन्द्रजी कहने लगे—हे नाथ ! उपाय तो आप ही के हाथ है।

सब कर हित रुख राउरि राखें ❀ आयसु किये मुदित फुर[2] भाखें
प्रथम जो आयसु मो कहँ होई ❀ माथें मानि करौं सिख सोई

आपका रुख रखने में और आज्ञा को सत्य कहकर प्रसन्नतापूर्वक पालन करने में सब का हित है। पहले मुझे जो आज्ञा हो, मैं उसी सीख को माथे पर चढ़ाकर करूँ।

पुनि जेहि कहँ जस कहब गोसाईं ❀ सो सब भाँति घटिहि[3] सेवकाई
कह मुनि राम सत्य तुम भाखा ❀ भरत सनेहँ बिचारु न राखा

फिर हे गोसाईं ! आप जिसको जैसा कहेंगे, वह सब तरह से सेवा में लग जायगा। मुनि ने कहा—हे राम ! तुमने सच कहा। पर भरत के प्रेम का विचार नहीं रक्खा।

तेहि ते कहउँ बहोरि बहोरी ❀ भरत भगति बस भइ मति भोरी
मोरें जान भरत रुचि राखी ❀ जो कीजिअ सो सुभ सिव साखी

इसीलिये मैं बार-बार कहता हूँ। मेरी बुद्धि भरत की भक्ति के वश हो गई है। मेरी समझ में तो भरत की रुचि रखकर जो कुछ किया जायगा, वह शुभ ही होगा। शिवजी साक्षी हैं।

---

१. दाँव। २. सत्य। ३. करेगा।

दो०—भरत बिनय सादर सुनिअ करिअ बिचारु बहोरि ।
करब साधुमत लोकमत नृपनय निगम निचोरि ॥

पहले भरत की विनती आदरपूर्वक सुन लीजिये। फिर उस पर विचार कीजिए। सज्जनों का मत, लोकमत, राजनीति और वेद का सार लेकर फिर वैसा ही कीजिए।

गुर अनुरागु भरत पर देखी ❀ राम हृदयँ आनंदु बिसेखी
भरतहिं धरम धुरंधर जानी ❀ निज सेवक तन मानस बानी

गुरु का भरत पर स्नेह देखकर रामचन्द्रजी के हृदय में विशेष आनन्द हुआ। भरत को धर्म-धुरन्धर और तन, मन और वचन से अपना सेवक जानकर—

बोले गुरु आयसु अनुकूला ❀ बचन मंजु मृदु मंगल मूला
नाथ सपथ पितु चरन दोहाई ❀ भयउ न भुवन भरत सम भाई

रामचन्द्रजी गुरु की आज्ञा के अनुकूल मनोहर, कोमल और कल्याण के मूल वचन बोले—हे नाथ! आपकी सौगन्ध और पिता के चरणों की दुहाई, विश्व-भर में भरत के समान भाई कोई हुआ ही नहीं।

जे गुर पद अम्बुज अनुरागी ❀ ते लोकहुँ बेदहुँ बड़ भागी
राउर जा पर अस अनुरागू ❀ को कहि सकइ भरत कर भागू

जो लोग गुरु के चरण-कमलों के प्रेमी हैं, वे लोक में भी और वेद में भी बड़भागी होते हैं। जिस पर आपका ऐसा प्रेम है, उस भरत के भाग्य को कौन कह सकता है?

लखि लघु बंधु बुद्धि सकुचाई ❀ करत बदन पर भरत बड़ाई
भरतु कहहिं सोइ किएँ भलाई ❀ अस कहि राम रहे अरगाई[1]

भरत मेरा छोटा भाई है, इससे उसके मुँह पर उसकी बड़ाई करने में मेरी बुद्धि सकुचाती है। भरत जो कुछ कहें, वही करने में भलाई है। ऐसा कहकर रामचन्द्रजी चुप हो गये।

दो०—तब मुनि बोले भरत सन सब सँकोच तजि तात ।
कृपासिंधु प्रियबन्धु सन कहहु हृदय कइ बात ॥२५८॥

---

१. चुप।

तब मुनि वशिष्ठजी ने भरत से कहा—हे तात! अब तुम सब सँकोच छोड़कर कृपा के समुद्र अपने प्यारे भाई से अपने हृदय की बात कहो।

सुनि मुनि बचन राम रुख पाई ❀ गुरु साहिब अनुकूल अघाई
लखि अपने सिर सबु छरुभारू[1] ❀ कहि न सकहिं कछु करहिं बिचारू

मुनि के वचन सुनकर और रामचन्द्रजी का रुख पाकर और यह जानकर कि गुरु तथा स्वामी खूब अनुकूल हैं तथा सारा बोझ अपने ही ऊपर समझकर भरत कुछ कह नहीं सकते। वे विचार करने लगे।

पुलकि सरीर सभाँ भए ठाढ़े ❀ नीरज नयन नेह जल बाढ़े
कहब मोर मुनिनाथ निबाहा ❀ एहि तें अधिक कहौं मैं काहा

उनका शरीर पुलकित हो गया। वे सभा में उठकर खड़े हो गये। कमल ऐसे नेत्रों में स्नेह के आँसुओं की बाढ़ आ गई। भरत ने कहा—मेरा कहना तो मुनिनाथ ने निबाह ही दिया है। इससे अधिक मैं क्या कहूँ?

मैं जानउँ निज नाथ सुभाऊ ❀ अपराधिहु पर कोह[2] न काऊ
मो पर कृपा सनेहु बिसेखी ❀ खेलत खुनिस[3] कबहुँ नहिं देखी

अपने स्वामी का स्वभाव मैं जानता हूँ। अपराधी पर भी वे कभी कोप नहीं करते। मुझ पर तो उनकी विशेष कृपा और स्नेह है। मैंने कभी खेल में भी उनका क्रोध नहीं देखा।

सिसुपन तें परिहरउँ न संगू ❀ कबहुँ न कीन्ह मोर मन भंगू
मैं प्रभु कृपा रीति जिय जोही ❀ हारेहुँ खेल जितावहिं मोहीं

बचपन ही से मैंने कभी उनका सङ्ग नहीं छोड़ा और उन्होंने भी कभी मेरे मन को नहीं तोड़ा। मैंने प्रभु की कृपा की रीति का हृदय में भली भाँति अनुभव किया है। मेरे हारने पर भी खेल में वे मुझे जिता दिया करते थे।

दो०— महूँ सनेह सकोच बस सन्मुख कहे न बयन।
दरसन तृपित न आजु लगि प्रेम पियासे नयन॥२५९॥

मैंने भी प्रेम और सँकोच के वश कभी सामने बात नहीं की। प्रेम के प्यासे मेरे नेत्र आज तक प्रभु के दर्शनों से तृप्त नहीं हुए।

---

१. सारा बोझ। २. कोप, क्रोध। ३. झुँझलाहट।

बिधि न सकेउ सहि मोर दुलारा ❀ नीच बीचु जननी मिस पारा[1]
यहउ कहत मोहि आजु न सोभा ❀ अपनी समुझि साधु सुचि को भा[2]

परन्तु विधाता मेरा दुलार न सह सका। उसने नीच माता के बहाने अन्तर डाल दिया। यह भी कहना आज मुझे शोभा नहीं देता। क्योंकि अपनी समझ से कौन साधु और पवित्र हुआ है ?

मातु मंदि मैं साधु सुचाली ❀ उर अस आनत कोटि कुचाली
फरइ कि कोदव[3] बालि सुसाली ❀ मुकता प्रसव कि संबुक[4] ताली

माता दुष्ट हैं, मैं नेक और अच्छे चलन का हूँ, ऐसा मन में लाना ही करोड़ों बुराइयों के समान है। क्या कोदों की बाली उत्तम धान फल सकती है ? क्या तालाब की सीप कभी मोती पैदा कर सकती है ? [वक्रोक्ति अलंकार]

सपनेहुँ दोस क लेसु न काहू ❀ मोर अभाग उदधि अवगाहू
बिनु समुझें निज अघ परिपाकू[5] ❀ जारिउँ जायँ जननि कहि काकू[6]

स्वप्न में भी किसी को दोष का लेश भी नहीं है। मेरा दुर्भाग्य ही अथाह समुद्र है। बिना अपने पापों का परिणाम समझे मैंने माता को कटुवचन कहकर व्यर्थ ही जलाया।

हृदयँ हेरि हारेउँ सब ओरा ❀ एकहि भाँति भलेहिं भल मोरा
गुर गोसाइँ साहिब सिय रामू ❀ लागत मोहि नीक परिनामू

मैं अपने हृदय में चारों ओर ढूँढकर हार गया। केवल एक ही तरह मेरा भला हो सकता है। मेरे गुरुजी समर्थ हैं और सीताराम मेरे स्वामी हैं। इसी से परिणाम मुझे अच्छा जान पड़ता है।

दो०

साधु सभाँ गुरु प्रभु निकट कहउँ सुथल सतिभाउ।
प्रेम प्रपंचु कि झूठ फुर जानहिं मुनि रघुराउ ॥२६०॥

सज्जनों की सभा में, गुरु और स्वामी के समीप तथा पवित्र तीर्थ-स्थान में मैं सत्य भाव से कहता हूँ। यह प्रेम है या प्रपंच (छल-कपट), झूठ है या सच ? इसे मुनि वशिष्ठजी और रामचन्द्रजी जानते हैं।

भूपति मरन पेम पनु राखी ❀ जननी कुमति जगतु सबु साखी
देखि न जाहिं बिकल महतारीं ❀ जरहिं दुसह जर पुर नर नारीं

१. डाला। २. हुआ। ३. धान की एक किस्म ४. घोंघा। ५. परिणाम। ६. व्यंग्य, कटूक्ति।

प्रेम का प्रण निबाहते हुये राजा का मरना और माता की कुबुद्धि दोनों का सारा संसार साक्षी है। अब व्याकुल माताओं की ओर देखा नहीं जाता। अयोध्या के नर-नारी दुःसह ताप से जल रहे हैं।

महीं सकल अनरथ कर मूला ❀ सो सुनि समुझि सहिउँ सब सूला
सुनि बन गवन कीन्ह रघुनाथा ❀ करि मुनि वेष लखन सिय साथा

मैं ही इन सारे अनर्थों का मूल हूँ। यह सुन और समझकर मैंने सब दुःख सहा है। लक्ष्मण और सीता के साथ मुनि-वेष धारण कर रामचन्द्रजी ने

बिन पानहिन्ह पयादेहि पाएँ ❀ संकरु साखि रहेउँ एहि घाएँ[1]
बहुरि निहारि निषाद सनेहू ❀ कुलिस कठिन उर भयेउ न बेहू

बिना जूते के और पैदल ही वन-गमन किया। इस बात के शङ्करजी साक्षी हैं, कि इस घाव से भी मैं जीवित रहा! फिर निषाद का प्रेम देखकर भी इस बज्र रूपी कठोर हृदय में छेद नहीं हुआ।

अब सबु आँखिन्ह देखेउँ आई ❀ जिअत जीव जड़ सबइ सहाई
जिन्हहिं निरखि मग साँपिनि बीछी ❀ तजहिं बिषम बिषु तामस तीछी

अब यहाँ आकर मैंने सब आँखों देख लिया। यह जड़ जीव जीता रह कर सभी सहावेगा। जिनको देखकर रास्ते की साँपिनी और बीछी भी अपने भयानक विष और तीव्र क्रोध को छोड़ देती हैं—

दो० तेइ रघुनंदनु लखनु सिय अनहित लागे जाहि।
तासु तनय तजि दुसह दुख दैउ सहावइ काहि॥२६१

वही रामचन्द्रजी, लक्ष्मण और सीता जिसको शत्रु मालूम हुये, उस कैकेयी के पुत्र मुझको छोड़कर दैव कठिन दुःख और किसको सहावेगा?

सुनि अति बिकल भरत बर बानी ❀ आरति प्रीति बिनय नय सानी
सोक मगन सब सभाँ खभारू[2] ❀ मनहुँ कमल बन परेउ तुषारू

अत्यन्त व्याकुल तथा दुःख, प्रीति, विनय और नीति से सनी हुई भरत की श्रेष्ठ वाणी सुनकर सब लोग शोक में मग्न हो गये और सारी सभा में विषाद छा गया, मानो कमल के वन पर पाला पड़ गया हो।

---

१. घाव से। २. विषाद।

कहि अनेक बिधि कथा पुरानी ❀ भरत प्रबोधु कीन्ह मुनि ग्यानी
बोले उचित बचन रघुनंदू ❀ दिनकर कुल कैरव बन चंदू

तब ज्ञानी मुनि वशिष्ठजी ने अनेक प्रकार की पुरानी कथाएँ कहकर भरत को समझाया। फिर सूर्यकुलरूपी कुमुद-वन के लिये चन्द्रमा-स्वरूप रामचन्द्रजी उचित वचन बोले।

तात जायँ जिअँ करहु गलानी ❀ ईस अधीन जीव गति जानी
तीनि काल त्रिभुवन मत मोरें ❀ पुन्यसिलोक[1] तात तर तोरें

हे तात! तुम अपने जी में व्यर्थ ही ग्लानि करते हो। जीव की गति ईश्वर के अधीन जानो। मेरी सम्मति में तीनों काल और तीनों लोकों में जो पुण्यश्लोक जीव हैं, वे सब तुमसे नीचे हैं।

उर आनत तुम्ह पर कुटिलाई ❀ जाइ लोकु परलोकु नसाई
दोष देहिं जननिहिं जड़ तेई ❀ जिन्ह गुर साधु सभा नहिं सेई[2]

तुम्हारे ऊपर हृदय में कुटिलता का आरोप करने से लोक-परलोक दोनों नष्ट हो जाते हैं। वे ही मूर्ख माता कैकेयी को दोष देते हैं, जिन्होंने गुरु और साधुओं की सभा का सेवन नहीं किया है।

दो॰ मिटिहहिं पाप प्रपंच सब अखिल[3] अमंगल भार।
लोक सुजसु परलोक सुखु सुमिरत नामु तुम्हार॥

हे भरत! तुम्हारा नाम-स्मरण करने से सब पाप, प्रपंच और सम्पूर्ण अमंगलों के भार मिट जायँगे, तथा इस लोक में सुन्दर यश और परलोक में सुख प्राप्त होगा।

कहउँ सुभाउ सत्य सिव साखी ❀ भरत भूमि रह राउरि राखी
तात कुतरक करहु जनि जाएँ ❀ बैर पेम नहिं दुरइ दुराएँ[4]

हे भरत! मैं शिव को साक्षी करके स्वभाव ही से सत्य कहता हूँ, पृथ्वी तुम्हारी ही रक्खी रह रही है। हे तात! तुम व्यर्थ कुतर्क न करो। बैर और प्रेम छिपाये नहीं छिपते।

मुनिगन निकट बिहँग मृग जाहीं ❀ बाधक बधिक बिलोकि पराहीं[5]
हित अनहित पसु पंछिउ जाना ❀ मानुष तनु गुन ग्यान निधाना

---

१. पुण्यात्मा। २. सेवा की। ३. सम्पूर्ण। ४. छिपाये। ५. भाग जाते हैं।

देखो, पत्ती और पशु तो मुनियों के पास बेधड़क चले जाते हैं, पर हिंसा करने वाले बधिकों को देखते ही भाग जाते हैं। पशु और पत्ती भी मित्र और शत्रु को पहचानते हैं। मनुष्य का शरीर तो गुण और ज्ञान का भंडार ही है।

तात तुम्हहिं मैं जानउँ नीकें ❋ करौं काह असमंजस[1] जी कें
राखेउ रायँ सत्य मोहि त्यागी ❋ तनु परिहरेउ प्रेम पन लागी

हे तात! मैं तुम्हें अच्छी तरह जानता हूँ। पर क्या करूँ? मेरे जी में बड़ा असमंजस है। राजा ने मुझे त्यागकर अपने सत्य को रक्खा और प्रेम-प्रण के लिये अपना शरीर त्याग दिया।

तासु बचन मेटत मन सोचू ❋ तेहिं तें अधिक तुम्हार सँकोचू
ता पर गुर मोहि आयसु दीन्हा ❋ अवसि जो कहहु चहउँ सोइ कीन्हा

उनके वचन को मेटते हुये मन में सोच होता है। उससे भी ज्यादा तुम्हारा संकोच हो रहा है। उस पर भी गुरुजी ने मुझे आज्ञा दी है। इसलिये अब तुम जो कुछ कहो, वही मैं ज़रूर ही करना चाहता हूँ।

दो० मनु प्रसन्न करि सकुच तजि कहहु करौं सोइ आजु।
सत्यसंध रघुबर बचन सुनि भा सुखी समाजु ।२६३।

तुम मन को प्रसन्न कर और संकोच को त्याग कर जो कुछ कहो, मैं आज वही करूँ। सत्य प्रतिज्ञा वाले रामचन्द्रजी का वचन सुनकर सारा समाज सुखी हो गया।

सुर गन सहित सभय सुरराजू ❋ सोचहिं चाहत होन अकाजू
बनत उपाय करत कछु नाहीं ❋ राम सरन सब गे मन माहीं

देवगणों-सहित इन्द्र भयभीत हो गये। वे सोचने लगे कि अब तो काम बिगड़ना चाहता है। कुछ उपाय करते नहीं बनता। इसलिए वे सब मन ही मन रामचन्द्रजी की शरण गये।

बहुरि बिचारि परसपर कहहीं ❋ रघुपति भगत भगति बस अहहीं
सुधि करि अंबरीष[2] दुरबासा[3] ❋ भे सुर सुरपति निपट निरासा

फिर वे विचार करके आपस में कहने लगे कि रामचन्द्रजी तो भक्त की

१. दुबिधा। २. मुनि। ३. मुनि।

भक्ति के वश में हैं। अम्बरीष और दुर्वासा को स्मरण करके तो देवता और इन्द्र बिलकुल ही निराश हो गये।

सहे सुरन्ह बहु काल बिषादा ❀ नरहरि किए प्रगट प्रहलादा
लगि लगि कान कहहिं धुनि माथा ❀ अब सुर काज भरत के हाथा

पहले देवताओं ने बहुत समय तक दुःख सहे। तब भक्त प्रह्लाद ही ने नृसिंह भगवान् को प्रकट किया था। सब देवता एक दूसरे के कानों से लग-लग कर और सिर धुनकर कहते हैं कि अब देवताओं की कार्यसिद्धि भरत के हाथ है।

आन उपाउ न देखिय देवा ❀ मानत रामु सुसेवक सेवा
हियँ सपेम सुमिरहु सब भरतहि ❀ निज गुन सील राम बस करतहि

वे आपस में कहते हैं—हे देवताओ! और कोई उपाय नहीं दिखाई पड़ता। रामचन्द्रजी अपने अच्छे सेवकों की सेवा को मानते हैं। इसलिए अपने गुण और शील से रामचन्द्रजी को वश में करने वाले भरत ही का सब अपने-अपने हृदय में प्रेमसहित स्मरण करो।

दो०— **सुनि सुर मत सुर गुर कहेउ भल तुम्हार बड़ भागु।**
सकल सुमंगल मूल जग भरत चरन अनुरागु॥२६४

देवताओं की राय को सुनकर देवगुरु वृहस्पति ने कहा—तुमने अच्छा विचार किया और तुम्हारे बड़े भाग्य हैं। भरत के चरणों में प्रेम करना ही जगत् में सब शुभ मङ्गलों का मूल है।

सीतापति सेवक सेवकाई ❀ कामधेनु सय सरिस सुहाई
भरत भगति तुम्हरें मन आई ❀ तजहु सोचु बिधि बात बनाई

सीतापति रामचन्द्रजी के सेवक की सेवा सैकड़ों कामधेनुओं के समान सुन्दर है। तुम्हारे मन में भरत की भक्ति उत्पन्न हुई है, तो अब सोच छोड़ दो। विधाता ने बात बना दी।

देखु देवपति भरत प्रभाऊ ❀ सहज सुभायँ बिबस रघुराऊ
मन थिर करहु देव डरु नाहीं ❀ भरतहिं जानि राम परिछाहीं

हे देवराज! भरत का प्रभाव तो देखो; रघुनाथजी सहज स्वभाव से ही जिनके पूर्ण वश हो रहे हैं। हे देवताओ! भरत को रामचन्द्र की परछाईं समझ कर अपना मन स्थिर करो, डर की बात नहीं है।

सुनि सुरगुर सुर संमत सोचू ❀ अंतरजामी प्रभुहिं सँकोचू
निज सिर भार भरत जिय जाना ❀ करत कोटि बिधि उर अनुमाना

देवगुरु बृहस्पति और देवताओं की सम्मति सुनकर अन्तर्यामी रामचन्द्रजी को सँकोच हुआ। भरत ने अपने जी में सब बोझा अपने ही सिर जाना। हृदय में करोड़ों तरह के अनुमान करने लगे।

करि बिचारु मन दीन्ही ठीका[1] ❀ राम रजायसु आपन नीका
निज पन तजि राखेउ पनु मोरा ❀ छोहु सनेहु कीन्ह नहिं थोरा

सब प्रकार से विचारकर उन्होंने मन में यही ठीक ठहराया कि रामचन्द्रजी की आज्ञा ही में अपना कल्याण है। रामचन्द्रजी ने अपना प्रण छोड़कर मेरा प्रण रक्खा। यह उन्होंने कुछ कम कृपा और स्नेह नहीं किया।

दो० कीन्ह अनुग्रह अमित अति सब बिधि सीतानाथ।
करि प्रनाम बोले भरतु जोरि जलज जुग हाथ॥२६५॥

सीतानाथ रामचन्द्रजी ने सब तरह से मुझ पर अत्यन्त अपार अनुग्रह किया। भरत कमल समान दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम कर बोले—

कहौं कहावौं का अब स्वामी ❀ कृपा अंबुनिधि अंतरजामी
गुर प्रसन्न साहिब अनुकूला ❀ मिटी मलिन मन कलपित सूला

हे स्वामी! हे कृपा के समुद्र, हे अन्तर्यामी! अब मैं क्या कहूँ और क्या कहाऊँ? गुरु महाराज प्रसन्न हैं और स्वामी अनुकूल हैं। यह जानकर तो मेरे मलिन मन की कल्पित पीड़ा मिट गई।

अपडर डरेउँ न सोच समूलें ❀ रबिहि न दोषु देव दिसि भूलें
मोर अभागु मातु कुटिलाई ❀ बिधि गति बिषम काल कठिनाई

मैं योंही मिथ्या डर से डर गया था। मेरे सोच की जड़ ही न थी। दिशा भूल जाने पर सूर्य को दोष न देना चाहिए। मेरा दुर्भाग्य, माता की कुटिलता, विधाता की उलटी गति और काल की कठिनता,

पाउँ रोपि सब मिलि मोहि घाला[2] ❀ प्रनतपाल पन आपन पाला
यह नइ रीति न राउरि होई ❀ लोकहुँ बेद बिदित नहिं गोई[3]

इन सबने मिलकर पाँव अड़ाकर मेरा सर्वनाश किया था। परन्तु शरणा-

१. ठीक ठहराया। २. नाश किया। ३. छिपी, गुप्त।

गत के रक्षक आपने अपना प्रण निबाहा। यह आपकी कोई नई रीति नहीं है। यह लोक और वेदों में भी प्रकट है, छिपी नहीं है।

जगु अनभल भल एक गोसाईं ❀ कहिअ होइ भल कासु भलाई
देउ देवतरु सरिस सुभाऊ ❀ सनमुख[1] बिमुख[2] न काहुहि काऊ

सारा जगत् बुरा है, केवल एक आप ही भले हैं। हे स्वामी! भले आदमी से किसकी भलाई नहीं होती? (आप से तो सब की भलाई ही होगी) हे देव! आपका स्वभाव कल्पवृक्ष के समान है। न कभी किसी के अनुकूल, न प्रतिकूल।

दो॰ जाइ निकट पहिचानि तरु छाँह समनि सब सोच।
माँगत अभिमत पाव जग राउ रंकु भल पोच॥

उस कल्पवृक्ष को पहचानकर उसके पास जाय तो उसकी छाया ही सारी चिन्ताओं का नाश करने वाली है। राजा, रंक, भले, बुरे जगत् में उससे माँगते ही मन-इच्छित फल पाते हैं।

लखि सब बिधि गुर स्वामि सनेहू ❀ मिटेउ छोभ नहि मन संदेहू
अब करुनाकर कीजिअ सोई ❀ जन हित प्रभु चित छोभु न होई

सब प्रकार से गुरु और स्वामी का स्नेह देखकर मेरा क्षोभ मिट गया। अब मन में कुछ भी सन्देह नहीं रहा। हे दया की खान! अब वही कीजिए, जिससे दास के लिये प्रभु के चित्त में किसी प्रकार का क्षोभ न हो।

जो सेवकु साहिबहिं सँकोची ❀ निज हित चहइ तासु मति पोची
सेवक हित साहिब सेवकाई ❀ करै सकल सुख लोभ बिहाई

जो सेवक स्वामी को संकोच में डालकर अपना भला चाहता है, उसकी बुद्धि नीच है। सेवक का हित तो सम्पूर्ण सुखों और लोभ को छोड़कर स्वामी की सेवा करने में है।

स्वारथु नाथ फिरें सबही का ❀ कियें रजाइ कोटि बिधि नीका
यह स्वारथ परमारथ सारू ❀ सकल सुकृत फल सुगति सिंगारू

हे नाथ! आपके लौटने में सभी का स्वार्थ है, और आपकी आज्ञा के पालन में करोड़ों प्रकार से कल्याण है। यही स्वार्थ और परमार्थ का सार है,

---

१. मित्र। २. शत्रु।

समस्त पुण्यों का फल है और शुभ गतियों का शृङ्गार है।

देव एक बिनती सुनि मोरी ❁ उचित होइ तस करब बहोरी
तिलक समाजु साजि सबु आना ❁ करिअ सुफल प्रभु जौं मनु माना

हे देव! आप मेरी एक विनती सुनकर, फिर जैसा उचित हो, वैसा ही कीजिए। राजतिलक की सब सामग्री तैयार करके लायी गयी है, जो प्रभु का मन माने, तो उसे सफल कीजिये।

दो॰ सानुज पठइअ मोहिं बन कीजिअ सबहिं सनाथ।
नतरु फेरिअहि बंधु दोउ नाथ चलौं मैं साथ॥२६७

मुझे छोटे भाई शत्रुघ्न-समेत वन में भेज दीजिये और अयोध्या लौटकर सबको सनाथ कीजिये। नहीं तो हे नाथ! दोनों भाई लक्ष्मण और शत्रुघ्न को अयोध्या लौटा दीजिये और मैं आपके साथ चलूँ।

नतरु जाहिं बन तीनिउँ भाई ❁ बहुरिअ[1] सीय सहित रघुराई
जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई ❁ करुना सागर कीजिअ सोई

अथवा हम तीनों भाई वन चले जायँ और हे रघुनाथजी! आप सीता-सहित अयोध्या को लौट जाइये। हे दयासागर! जिस प्रकार से प्रभु का मन प्रसन्न हो, वही कीजिये।

देवँ दीन्ह सब मोहि अभारू[2] ❁ मोरें नीति न धरम बिचारू
कहउँ बचन सब स्वारथ हेतू ❁ रहत न आरत के चित चेतू

हे देव! आपने सब भार मेरे सिर पर रक्खा है। पर मुझमें न नीति है, न धर्म का विचार। मैं सब वचन अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिये कहता हूँ, क्योंकि दुःखी के मन में ज्ञान नहीं रहता।

उतरु देइ सुनि स्वामि रजाई ❁ सो सेवक लखि लाज लजाई
अस मैं अवगुन उदधि अगाधू ❁ स्वामि सनेहँ सराहत साधू

जो स्वामी की आज्ञा सुनकर उत्तर दे, ऐसे सेवक को देखकर लज्जा भी लजा जाती है। मैं अवगुणों का ऐसा अथाह समुद्र हूँ। किन्तु स्वामी स्नेहवश साधु कहकर मुझे सराहते हैं।

१. लौट चलिये। २. अपार।

अब कृपाल मोहि सो मत भावा ❀ सकुच स्वामि मन जाइँ न पावा
प्रभु पद सपथ कहउँ सतिभाऊ ❀ जग मंगल हित एक उपाऊ

हे कृपालु ! अब मुझे वही मत भाता है, जिससे स्वामी का मन व्यर्थ संकोच में न पड़े। मैं स्वामी के चरणों की शपथ खाकर सत्य भाव से कहता हूँ, जगत् के कल्याण का एक यही उपाय है।

दो॰ प्रभु प्रसन्न मन सकुच तजि जो जेहि आयसु देब।
सो सिर धरि धरि करिहि सबु मिटिहि अनट[1] अवरेब[2]॥

आप प्रसन्न-मन से, संकोच छोड़कर, प्रभु जिसको जो आज्ञा देंगे, उसे सब लोग सिर पर रख-रखकर पालन करेंगे और सब उपद्रव और उलझनें मिट जायँगी।

भरत बचन सुचि सुनि सुर हरषे ❀ साधु सराहि सुमन सुर बरषे
असमंजस बस अवध नेवासी ❀ प्रमुदित मन तापस बनबासी

भरत के पवित्र वचनों को सुनकर देवता हर्षित हुए और 'साधु', 'साधु' कहकर सराहना करके उन पर उन्होंने फूल बरसाये। अयोध्यानिवासी असमंजस के वश हो गये। और तपस्वी तथा वनवासी लोग मन में परमानन्दित हो गये।

चुपहिं रहे रघुनाथ सँकोची ❀ प्रभु गति देखि सभा सब सोची
जनक दूत तेहि अवसर आए ❀ मुनि बसिष्ठँ सुनि बेगि बोलाए

किन्तु संकोची श्रीरघुनाथजी चुप ही रहे। प्रभु की यह स्थिति देख सारी सभा सोच में पड़ गई। उसी समय राजा जनक के दूत आये। मुनि वशिष्ठजी ने उनका आना सुनकर उन्हें तुरंत बुलवा लिया।

करि प्रनाम तिन्ह रामु निहारे ❀ बेषु देखि भए निपट दुखारे
दूतन्ह मुनिबर बूझी बाता ❀ कहहु बिदेह भूप कुसलाता

उन दूतों ने आकर प्रणाम किया और रामचन्द्रजी को देखा। उनका वेष देखकर वे अत्यन्त दुःखी हुए। मुनिवर वशिष्ठजी ने दूतों से पूछा—राजा जनक का कुशल समाचार कहो। [विदेह शब्द में व्यंग्य है]

सुनि सकुचाइ नाइ महि माथा ❀ बोले चरबर जोरें हाथा
बूझब राउर सादर साईं ❀ कुसल हेतु सो भयेउ गोसाईं

१. उपद्रव। २. उलझन।

मुनिजी का प्रश्न सुनकर, संकोचपूर्वक सिर झुकाकर, वे श्रेष्ठ दूत हाथ जोड़कर बोले—हे स्वामी ! आपका आदर के साथ कुशल पूछना ही कुशल का कारण हो गया।

दो०— नाहिं त कोसलनाथ कें साथ कुसल गइ नाथ।
मिथिला अवध बिसेष तें जगु सब भयउ अनाथ॥

नहीं तो हे नाथ ! कुशल-क्षेम तो सब कोशलनाथ (दशरथ) के साथ ही चली गई। वैसे तो सारा जगत् ही अनाथ हो गया; पर मिथिला और अयोध्या तो विशेषरूप से अनाथ हो गये।

कोसलपति गति सुनि जनकौरा[1] ❁ भे सब लोक सोकबस बौरा
जेहिं देखे तेहि समय बिदेहू ❁ नामु सत्य अस लाग न केहू

कोशलपति की गति (महाराज दशरथ का मरण) सुनकर जनकपुर के सभी लोग शोक के मारे पागल हो गये। उस समय जिन्होंने विदेह (जनक) को देखा, उनमें से किसी को ऐसा न लगा कि उनका विदेह नाम सत्य है।

रानि कुचालि सुनत नरपालहि ❁ सूझ न कछु जस मनि बिनु ब्यालहि[2]
भरत राज रघुबर बनबासू ❁ भा मिथिलेसहि हृदयँ हराँसू[3]

रानी की कुचाल सुनकर राजा जनकजी को कुछ सूझ न पड़ा, जैसे मणि बिना साँप को नहीं सूझता। फिर भरत को राज्य और रामचन्द्रजी को वनवास सुनकर मिथिलेश्वर महाराज के हृदय में बड़ा ही दुःख हुआ।

नृप बूझे बुध सचिव समाजू ❁ कहहु बिचारि उचित का आजू
समुझि अवध असमंजस दोऊ ❁ चलिअ कि रहिअ न कह कछु कोऊ

महाराज जनकजी ने विद्वानों और मन्त्रियों के समाज से पूछा कि अब क्या करना उचित है ? विचारकर कहिये। अयोध्या की दशा समझकर चलें या रहें ? यह दोनों बातें असमंजस की समझकर किसी ने कुछ नहीं कहा।

नृपहिं धीर धरि हृदयँ बिचारी ❁ पठये अवध चतुर चर[4] चारी
बूझि भरत सति भाउ कुभाऊ ❁ आयेहु बेगि न होइ लखाऊ

तब राजा ने ही धीरज धर हृदय में विचारकर चार चतुर गुप्तचर अयोध्या को भेजे। और उनको आज्ञा दी कि तुम अयोध्या जाकर भरत के सद्भाव

१. जनकपुर वालों। २. साँप को। ३. दुःख। ४. जासूस।

या दुर्भाव का पता लगाकर जल्दी लौट आना। किसी को तुम्हारा पता न लगने पावे।

दो०— गये अवध चर भरत गति बूझि देखि करतूति।
चले चित्रकूटहि भरत चार[1] चले तिरहूति॥२७०॥

वे गुप्तचर अयोध्या में जाकर भरत का रंग-ढंग जानकर और उनकी करनी देखकर जैसे ही भरत चित्रकूट को चले, वैसे ही मिथिला को चल दिये।

दूतन्ह आइ भरत कइ करनी ❀ जनक समाज जथामति बरनी
सुनि गुर परिजन सचिव महीपति ❀ भे सब सोच सनेहँ बिकल अति

दूतों ने आकर भरत की करनी राजा जनकजी की सभा में अपनी बुद्धि के अनुसार वर्णन की। उसे सुनकर गुरु, कुटुम्बी, मंत्री और राजा सभी सोच और स्नेह से बहुत व्याकुल हो गये।

धरि धीरजु करि भरत बड़ाई ❀ लिये सुभट साहनी[2] बोलाई
घर पुर देस राखि रखवारे ❀ हय गय रथ बहु जान सँवारे

फिर जनक महाराज ने धीरज धरकर और भरत की बड़ाई करके अच्छे योद्धाओं और साहनियों को बुलाया। मकान, शहर और देश की रक्षा के लिये रक्षकों का प्रबन्ध करके घोड़े, हाथी, रथ आदि बहुत-सी सवारियाँ तैयार कराईं।

दुघरी साधि चले ततकाला ❀ किए बिस्रामु न मग महिपाला
भोरहिं आजु नहाइ प्रयागा ❀ चले जमुन उतरन सबु लागा

वे दुघड़िया मुहूर्त्त साधकर उसी समय चल पड़े। राजा ने रास्ते में कहीं विश्राम भी नहीं किया। आज सबेरे ही सब लोग प्रयागराज में स्नान करके चले हैं। जब सब लोग यमुना उतरने लगे,

खबरि लेन हम पठये नाथा ❀ तिन्ह कहि अस महि नायेउ माथा
साथ किरात छ सातक दीन्हे ❀ मुनिबर तुरत बिदा चर कीन्हे

तब हे नाथ! हमें खबर लेने को भेजा। उन दूतों ने ऐसा कहकर पृथ्वी पर सिर रखकर प्रणाम किया। मुनिराज वशिष्ठजी ने छः-सात किरातों को साथ देकर दूतों को तुरंत विदा किया।

---

१. जासूस। २. हाथी-घोड़ों के दारोगा।

दो०—सुनत जनक आगवनु सबु हरषेउ अवध समाजु।
रघुनंदनहिं सकोचु बड़ सोच बिबस सुरराजु ॥२७१॥

महाराज जनक का आगमन सुनकर अयोध्या का सारा समाज हर्षित हो गया। रामचन्द्रजी को बड़ा संकोच हुआ और इन्द्र तो विशेष रूप से सोच में पड़ गये।

गरइ गलानि कुटिल कैकेई ❀ काहि कहइ केहि दूषनु देई
अस मन आनि मुदित नर नारी ❀ भयेउ बहोरि रहब दिन चारी

कुटिल कैकेयी मारे ग्लानि के मन ही मन गली जाती हैं। किससे कहे? और किसको दोष दे? और सब स्त्री-पुरुष मन में ऐसा सोचकर प्रसन्न हो रहे हैं कि चलो, चार दिन और ठहरना हो गया।

एहि प्रकार गत बासर सोऊ ❀ प्रात नहान लाग सबु कोऊ
करि मज्जन पूजहिं नरनारी ❀ गनपति गौरि पुरारि[1] तमारी[2]

इस तरह वह दिन भी बीत गया। दूसरे दिन सवेरे सब कोई स्नान करने लगे। सब नर-नारी स्नान करके गणपति, पार्वती, शङ्कर और सूर्य की पूजा करते हैं।

रमा रमन पद बंदि बहोरी ❀ बिनवहिं अंजुलि अञ्चल जोरी
राजा राम जानकी रानी ❀ आनँद अवधि अवध रजधानी

फिर वे लक्ष्मीपति भगवान् के चरणों की वन्दना कर, दोनों हाथ जोड़कर, आँचल पसारकर विनती करते हैं कि रामचन्द्र राजा और सीता रानी हों, तथा अयोध्या राजधानी आनन्द की सीमा होकर—

सुबस[3] बसउ फिरि सहित समाजा ❀ भरतहिं रामु करहुँ जुबराजा
एहि सुख सुधाँ सींचि सब काहू ❀ देव देहु जग जीवन लाहू

फिर समाज-सहित सुखपूर्वक बसे और रामजी भरत को युवराज बनावें। हे देव! कृपा कर इस सुखरूपी अमृत से सींचकर सब को जगत् में जन्म लेने का लाभ दीजिये।

दो०—गुर समाज भाइन्ह सहित राम राज पुर होउ।
अछत[4] राम राजा अवध मरिअ माँग सब कोउ।२७२

१. शिव। २. सूर्य। ३. सुखपूर्वक। ४. रहते हुये।

सब लोग यही माँगते हैं कि गुरु, समाज और भाइयों-समेत रामचन्द्रजी का अयोध्या नगरी में राज्य हो और हम लोग राम राजा के रहते ही मरें।

सुनि सनेहमय पुरजन बानी ❁ निन्दहिं जोग बिरति मुनि ग्यानी
एहि बिधि नित्यकरम करि पुरजन ❁ रामहिं करहिं प्रनाम पुलकि तन

नगर-निवासियों की प्रेमयुक्त वाणी सुनकर ज्ञानी व मुनि भी अपने योग और वैराग्य की निन्दा करते हैं। पुर के लोग इस तरह नित्य-कर्म कर पुलकित शरीर से रामचन्द्रजी को प्रणाम करते हैं।

ऊँच नीच मध्यम नर नारी ❁ लहहिं दरसु निज निज अनुहारी
सावधान सबही सनमानहिं ❁ सकल सराहत कृपानिधानहिं

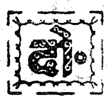
ऊँच, नीच और मध्यम सभी दर्जे के स्त्री-पुरुष अपने-अपने भावानुसार रामचन्द्रजी का दर्शन पाते हैं। दया के भण्डार रामचन्द्रजी सब का सावधानी के साथ सम्मान करते हैं। सब लोग कृपानिधान रामचन्द्रजी की बड़ाई करते हैं।

लरिकाइहि तें रघुबर बानी[1] ❁ पालत नीति प्रीति पहिचानी
सील सँकोच सिंधु रघुराऊ ❁ सुमुख सुलोचन सरल सुभाऊ

लड़कपन ही से रामचन्द्रजी की यह आदत है कि वे प्रेम को पहचानकर नीति का पालन करते हैं। रामचन्द्रजी शील और सँकोच के तो समुद्र ही हैं। उनका श्रीमुख सुन्दर, नेत्र सुहावने और स्वभाव सरल है।

कहत राम गुनगन अनुरागे ❁ सब निज भाग सराहन लागे
हम सम पुन्य पुंज जग थोरे ❁ जिन्हहिं रामु जानत करि मोरे

सब लोग रामचन्द्रजी के गुण-समूहों का वर्णन करते हुए प्रेम में भर गये और अपने-अपने भाग्य की बड़ाई करने लगे कि जग में हमारे समान पुण्यवान् थोड़े हैं, जिनको रामचन्द्रजी अपना करके जानते हैं।



प्रेम मगन तेहि समय सब सुनि आवत मिथिलेसु।
सहित सभा संभ्रम[2] उठेउ रबिकुल कमल दिनेसु॥

उस समय जबकि सब लोग प्रेम में मग्न हैं मिथिलानरेश (जनकजी) को

१. बान, आदत। २. आदरपूर्वक जल्दी से।

आते हुए सुनकर लोग प्रेम में मग्न हुये। सूर्यकुल-कमल-दिवाकर रामचन्द्रजी सभा-सहित जल्दी से उठ खड़े हुए।

भाइ सचिव गुर पुरजन साथा ❁ आगे गवनु कीन्ह रघुनाथा
गिरिबर दीख जनकपति जबहीं ❁ करि प्रनामु रथ त्यागेउ तबहीं

भाई, मन्त्री, गुरु और नगर-निवासियों को साथ लिए हुए रघुनाथजी आगे चले। जनकजी ने ज्योंही गिरिराज अमरनाथ को देखा, त्योंही प्रणामकर उन्होंने रथ छोड़ दिया।

राम दरस लालसा उछाहू ❁ पथ स्रम लेसु कलेसु न काहू
मन तहँ जहँ रघुबर बैदेही ❁ बिनु मन तन दुख सुख सुधि केही

रामचन्द्रजी के दर्शन करने की लालसा और उत्साह से किसी को रास्ते की थकावट और क्लेश जरा भी नहीं। मन तो वहाँ है, जहाँ रामचन्द्रजी और जानकी हैं। फिर बिना मन के शरीर के सुख-दुःख की सुध किस को हो?

आवत जनकु चले एहि भाँती ❁ सहित समाज प्रेम मति माती
आये निकट देखि अनुरागे ❁ सादर मिलन परसपर लागे

इस प्रकार जनकजी चले आ रहे हैं। समाज-सहित उनकी बुद्धि प्रेम में मतवाली हो रही है। निकट आये देखकर सब प्रेम से भर गये और बड़े आदर के साथ आपस में मिलने लगे।

लगे जनक मुनिजन पद बंदन ❁ रिषिन्ह प्रनामु कीन्ह रघुनन्दन
भाइन्ह सहित रामु मिलि राजहिं ❁ चले लवाइ समेत समाजहिं

जनकजी मुनियों के चरणों की वन्दना करने लगे और रामचन्द्रजी ने ऋषियों को प्रणाम किया। भाइयों-समेत रामचन्द्रजी जनकजी से मिलकर उन्हें समाज-सहित आश्रम को लिवा चले।

दो० **आस्रम सागर सांत रस पूरन पावन पाथ[1]।**
सेन मनहुँ करुना सरित लियें जाहिं रघुनाथ॥

रामचन्द्रजी का आश्रम शांत रस रूपी पवित्र जल से पूर्ण समुद्र है। जनकजी की सेना मानो करुणारस की नदी है, जिसे रामचन्द्रजी समुद्र से मिलाने के लिये लिये जा रहे हैं।

---

१. जल।

बोरति ग्यान बिराग करारे[1] ❀ बचन ससोक मिलत नद नारे
सोच उसास समीर तरंगा ❀ धीरज तट तरुबर कर भंगा

वह करुणा की नदी ज्ञान-वैराग्यरूपी किनारों को डुबाती हुई, शोक-भरे वचनरूपी नदी और नालों से मिलकर, सोच की लम्बी साँसरूपी लहरों वाली, धीरजरूपी किनारे के वृक्षों को तोड़ती हुई जा रही है।

बिषम बिषाद तोरावति[2] धारा ❀ भय भ्रम भँवर अवर्त अपारा
केवट बुध बिद्या बड़ि नावा ❀ सकहिं न खेइ न ऐक नहिं आवा

भयानक विषाद उस नदी की तेज धारा है। भय और भ्रम उस नदी के भँवर और अपार चक्र हैं। विद्वान् मल्लाह हैं। विद्या ही बड़ी नाव है। परन्तु उसको कोई खे नहीं सकता। किसी की सूझ नहीं चलती है।

बनचर कोल किरात बिचारे ❀ थके बिलोकि पथिक हियँ हारे
आस्रम उदधि मिली जब जाई ❀ मनहुँ उठेउ अंबुधि अकुलाई

वन के विचरने वाले बेचारे कोल और भील ही मानो बटोही हैं। वे उसको देखकर थक गये। जब वह करुणारूपी नदी आश्रमरूपी समुद्र में जाकर मिली, तो मानो वह समुद्र अकुला उठा।

सोक बिकल दोउ राज समाजा ❀ रहा न ग्यानु न धीरजु लाजा
भूप रूप गुन सील सराही ❀ रोवहिं सोकसिंधु अवगाही[3]

दोनों राज-समाज शोक से व्याकुल हो गये। उनमें न ज्ञान रह गया था, न धीरज और न लज्जा ही। राजा दशरथ के रूप, गुण और शील की सराहना करते हुए वे शोकरूपी समुद्र में डूबकर रो रहे हैं।

छन्द—अवगाहि सोक समुद्र सोचहिं नारि नर ब्याकुल महा।
दै दोष सकल सरोष बोलहिं बाम बिधि कीन्हो कहा ॥
सुर सिद्ध तापस जोगिजन मुनि देखि दसा बिदेह की।
तुलसी न समरथु कोउ जो तरि सकै सरित सनेह की॥

शोक-समुद्र में गोते लगाते हुए स्त्री-पुरुष महाव्याकुल होकर सोच कर रहे हैं। वे सब विधाता को दोष देते हुये क्रोध में भरकर कह रहे हैं कि प्रतिकूल

१. कगार, नदी के किनारे की ऊँची जमीन। २. उमड़ती है। ३. डूबकर।

विधाता ने यह क्या किया ? तुलसीदास कहते हैं कि देवता, सिद्ध, तपस्वी, योगी और मुनि-गणों में, उस समय राजा जनक की दशा देखकर, कोई समर्थ नहीं है, जो प्रेम की नदी को पार कर सके।

सो० किये अमित उपदेस जहँ तहँ लोगन्ह मुनिबरन्ह।
धीरजु धरिअ नरेस कहेउ बसिष्ठ बिदेह सन ॥२७५॥

जहाँ-तहाँ मुनिवरों ने लोगों को अनगिनती उपदेश दिये और वशिष्ठजी ने जनकजी से कहा—हे राजन्! आप धीरज धरिए।

जासु ग्यानु रबि भव निसि नासा ❀ बचन किरन मुनि कमल बिकासा
तेहि कि मोह ममता निअराई[1] ❀ यह सियराम सनेह बड़ाई

जिस राजा जनक का ज्ञानरूपी सूर्य भव (आवागमन) रूपी रात का नाश कर देता है, जिनकी वचनरूपी किरण मुनिरूपी कमलों को खिला देती हैं, क्या मोह और ममता उनके पास आ सकते हैं ? यह तो सीतारामजी के प्रेम की महिमा है।

बिषई साधक सिद्ध सयाने ❀ त्रिबिध जीव जग बेद बखाने
राम सनेह सरस मन जासू ❀ साधु सभाँ बड़ आदर तासू

वेदों ने जगत् में तीन प्रकार के जीव बताये हैं—विषयी, साधक और ज्ञानवान् सिद्ध पुरुष। इन तीनों में जिसका मन रामचन्द्रजी के प्रेम से सराबोर रहता है, सज्जनों की सभा में उसी का बड़ा आदर होता है।

सोह न राम पेम बिनु ग्यानू ❀ करनधार[2] बिनु जिमि जलजानू[3]
मुनि बहु बिधि बिदेहु समुझाये ❀ राम घाट सब लोग नहाये

रामचन्द्रजी के प्रेम के बिना ज्ञान शोभा नहीं देता, जैसे कर्णधार (मल्लाह) के बिना नाव या जहाज। वशिष्ठजी ने जनकजी को बहुत तरह से समझाया। फिर सब लोगों ने रामघाट पर स्नान किया।

सकल सोक संकुल नर नारी ❀ सो बासरु बीतेउ बिनु बारी
पसु खग मृगन्ह न कीन्ह अहारू ❀ प्रिय परिजन कर कवन बिचारू

स्त्री-पुरुष सब शोक से पूर्ण थे। वह दिन जल के बिना ही बीत गया।

---

१. निकट आ सकती है। २. केवट, मल्लाह। ३. नाव।

पशु-पक्षी और मृगों तक ने कुछ नहीं खाया। तब प्रियजनों और कुटुम्बियों का तो कहना ही क्या ?

दो० **दोउ समाज निमिराज रघुराज नहाने प्रात।**
बैठे सब बट बिटप तर मन मलीन कृसगात॥२७६॥

निमिराज (जनकजी) और रघुराज (रामचन्द्रजी) तथा दोनों ओर के समाज ने दूसरे दिन प्रातःकाल स्नान किया और सब बड़ के वृक्ष के नीचे आकर बैठे। सबके मन उदास और शरीर दुबले हैं।

जे महिसुर दसरथ पुर बासी ❁ जे मिथिलापति नगर निवासी
हंस बंस गुर जनक पुरोधा[1] ❁ जिन्ह जग मगु परमारथु सोधा

जो दशरथजी की नगरी अयोध्या के और जो मिथिलापति (जनकजी) के नगर के निवासी ब्राह्मण थे, तथा सूर्यवंश के गुरु (वशिष्ठजी) और जनकजी के पुरोहित शतानन्दजी, जिन्होंने संसार में परमार्थ का मार्ग खोज डाला है,

लगे कहन उपदेस अनेका ❁ सहित धरम नय बिरति बिबेका
कौसिक कहि कहि कथा पुरानीं ❁ समझाई सब सभा सुबानीं

वे सब धर्म, नीति, वैराग्य तथा विवेक से युक्त अनेक उपदेश देने लगे। विश्वामित्रजी ने पुरानी कथायें सुना-सुनाकर सारी सभा को सुन्दर वाणी से समझाया।

तब रघुनाथ कौसिकहिं[2] कहेऊ ❁ नाथ कालि जल बिनु सबु रहेऊ
मुनि कह उचित कहत रघुराई ❁ गयेउ बीति दिन पहर अढ़ाई

तब रघुनाथजी ने विश्वामित्रजी से कहा कि नाथ ! कल सब लोग बिना जल पिये ही रह गये। विश्वामित्रजी ने कहा कि रामचन्द्र उचित ही कह रहे हैं। ढाई पहर दिन आज भी बीत गया।

रिषि रुख लखि कह तेरहु तिराजू ❁ इहाँ उचित नहिं असन[3] अनाजू
कहा भूप भल सबहिं सोहाना ❁ पाइ रजायसु चले नहाना

विश्वामित्रजी का रुख देखकर मिथिला-नरेश (जनकजी) ने कहा— यहाँ अन्न खाना उचित नहीं है। राजा का यह सुन्दर कथन सबको बहुत अच्छा लगा। सब आज्ञा पाकर स्नान करने चले।

---

१. पुरोहित। २. विश्वामित्र। ३. खाना।

दो०— तेहि अवसर फल फूल दल मूल अनेक प्रकार ।
लै आए बनचर बिपुल भरि भरि काँवरि भार ।२७७।

उसी समय वनवासी कोल-भील अनेकों प्रकार के फल, फूल, पत्ते, मूल आदि बड़ी-बड़ी बहँगियों में और बोझों में भर-भरकर ले आये ।

कामद भे गिरि राम प्रसादा ❁ अवलोकत अपहरत बिषादा
सर सरिता बन भूमि बिभागा ❁ जनु उमगत आनँद अनुरागा

रामचन्द्रजी की कृपा से सब पर्वत सबकी मनचाही वस्तु देने वाले हो गये । वे दर्शनमात्र ही से सब दुःखों को दूर कर देते हैं । वहाँ के तालाबों, नदियों, जंगलों और पृथ्वी के सभी भागों में आनंद और प्रेम उमड़ रहा है ।

बेलि बिटप सब सफल सफूला ❁ बोलत खग मृग अलि अनुकूला
तेहि अवसर बन अधिक उछाहू ❁ त्रिबिध समीर सुखद सब काहू

सभी लतायें और वृक्ष फूलों और फलों से युक्त हो गये । पक्षी, पशु और भौंरे अनुकूल बोलने लगे । उस अवसर पर वन में अधिक उत्साह था । सबको सुख देने वाली तीन प्रकार की वायु बह रही थी ।

जाइ न बरनि मनोहरताई ❁ जनु महि करति जनक पहुनाई
तब सब लोग नहाइ नहाई ❁ राम जनक मुनि आयसु पाई

वन की मनोहरता वर्णन नहीं की जा सकती, मानो पृथ्वी जनकजी की पहुनाई कर रही है । फिर सब लोग नहा-नहा करके रामचन्द्रजी, जनकजी और मुनि की आज्ञा पाकर,

देखि देखि तरुबर अनुरागे ❁ जहँ तहँ पुरजन उतरन लागे
दल फल मूल कंद बिधि नाना ❁ पावन सुन्दर सुधा समाना

सुन्दर वृक्षों को देख-देखकर प्रेमपूर्वक जहाँ-तहाँ उतरने लगे । पवित्र, सुन्दर और अमृत के समान स्वादिष्ट अनेकों प्रकार के पत्ते, फल, फूल और कन्द,

दो०— सादर सब कहँ रामगुर पठए भरि भरि भार ।
पूजि पितर सुर अतिथि गुर लगे करन फलहार ॥२७८

रामजी के गुरु वशिष्ठजी ने सब के पास बोझे भर-भरकर आदर-सहित

भेजे। सब लोग पितर, देवता, अतिथि और गुरु का पूजनकर फलाहार करने लगे।

एहि बिधि बासर बीते चारी ❀ रामु निरखि नर नारि सुखारी
दुहुँ समाज असि रुचि मन माहीं ❀ बिनु सिय राम फिरब भल नाहीं

इस प्रकार चार दिन बीत गये। रामचन्द्रजी को देखकर सभी नर-नारी सुखी हैं। अयोध्या और जनकपुर दोनों ओर के समाजों के मन में ऐसी इच्छा है कि सीताराम के बिना घर लौटना ठीक नहीं।

सीता राम संग बनबासू ❀ कोटि अमरपुर सरिस सुपासू
परिहरि लखन रामु बैदेही ❀ जेहि घरु भाव बाम बिधि तेही

सीताराम के साथ वनवास करना करोड़ों देवलोकों के समान सुखदायक है। राम-लक्ष्मण और जानकी को छोड़कर जिसको घर प्यारा लगे, विधि उसके विपरीत हैं।

दाहिन[1] दइउ होइ जब सबहीं ❀ राम समीप बसिअ बन तबहीं
मन्दाकिनि मज्जनु तिहुँ काला ❀ राम दरसु मुद मंगल माला[2]

जब सब प्रकार से दैव अनुकूल हो, तभी रामचन्द्रजी के पास वन में निवास मिल सकता है। मन्दाकिनी का त्रिकाल स्नान और आनन्द-मंगलों का समूह रामचन्द्रजी का दर्शन,

अटनु राम गिरि बन तापस थल ❀ असनु अमिय सम कंद मूल फल
सुख समेत संबत दुइ साता ❀ पल सम होहिं न जनिअहिं जाता

रामगिरि (कामदनाथ—चित्रकूट) के वन और तपस्वियों के स्थानों में घूमना और अमृत के समान कन्द-मूल, फलों का भोजन। चौदह वर्ष सुख के साथ पल के समान बीत जायँगे। जाते हुए जान ही न पड़ेंगे।



एहि सुख जोग न लोग सब कहहिं कहाँ अस भागु।
सहज सुभायँ समाज दुहुँ राम चरन अनुरागु ॥२७९॥

सब लोग कह रहे हैं कि हम ऐसे सुख के योग्य नहीं, हमारे ऐसे भाग्य कहाँ हैं? दोनों समाजों का रामचन्द्र के चरणों में सहज स्वभाव से प्रेम है।

---

१. अनुकूल। २. समूह।

एहि बिधि सकल मनोरथ करहीं ❀ बचन सप्रेम सुनत मन हरहीं
सीय मातु तेहि समय पठाईं ❀ दासीं देखि सुअवसर आईं

इस प्रकार सब मनोरथ कर रहे हैं। प्रेम-समेत ऐसे वचन कह रहे हैं, जो सुनने वालों के मन को हर लें। उसी समय सीता की माता (सुनयना) की भेजी हुई दासियाँ सुन्दर अवसर देखकर आईं।

सावकास[1] सुनि सब सिय सासू ❀ आयेउ जनक राज रनिवासू
कौसल्याँ सादर सनमानी ❀ आसन दिये समय सम आनी

उनसे यह सुनकर कि सीता की सब सासुयें इस समय फुरसत में हैं जनक राजा का रनिवास उनसे मिलने आया। कौशल्या ने आदर के साथ उनका सम्मान किया और समयोचित आसन लाकर दिये।

सीलु सनेहु सकल दुहुँ ओरा ❀ द्रवहिं देखि सुनि कुलिस कठोरा
पुलक सिथिल तन बारि बिलोचन ❀ महि नख लिखन लगीं सब सोचन

दोनों ओर सब के शील और प्रेम को देख और सुनकर कठोर वज्र भी पिघल जाता है। सभी के शरीर पुलकित थे; ढीले पड़ गये थे; और नेत्रों में आँसू थे। वे सभी सोच के वश पैरों के नखों से जमीन पर लिखने और सोचने लगीं।

सब सिय राम प्रीति कि सि मूरति ❀ जनु करुना बहु बेष बिसूरति[2]
सीय मातु कह बिधि बुधि बाँकी ❀ जो पय फेन फोर पबि[3] टाँकी

सभी स्त्रियाँ सीता-रामजी के प्रेम की मूर्त्तियों-सी हैं। मानो स्वयं करुणा ही बहुत वेष धारण करके बिसूर रही हो। सीता की माता (सुनयना) ने कहा—विधाता की बुद्धि बड़ी टेढ़ी है, जो दूध के फेन जैसी कोमल वस्तु को वज्र की टाँकी से फोड़ रहा है।

दो०— सुनिअ सुधा देखिअहिं गरल[4] सब करतूति कराल।
जहँ तहँ काक उलूक बक मानस सकृत[5] मराल॥

अमृत तो केवल सुनने में आता है, विष जहाँ-तहाँ प्रत्यक्ष देखने में आते हैं। विधाता की सभी करतूतें भयंकर हैं। कौए, उल्लूक और बगुले सर्वत्र ही दिखाई देते हैं, पर हंस तो केवल मानसरोवर ही में हैं।

---

१. फुरसत। २. चिन्ता करती हैं। ३. वज्र। ४. विष। ५. केवल, एक।



सुनि ससोच कह देबि सुमित्रा ❀ बिधि गति बड़ि बिपरीत बिचित्रा
जो सृजि पालइ हरइ बहोरी ❀ बाल केलि सम बिधि मति भोरी

यह सुनकर देवी सुमित्रा शोक के साथ कहने लगीं—विधाता की चाल बड़ी ही विपरीत और विचित्र है, जो सृष्टि को उत्पन्न करके पालता और फिर नष्ट करता है। विधाता की बुद्धि बालकों के खेल की-सी भोली है।

कौसल्या कह दोसु न काहू ❀ करम बिबस दुख सुख छति[1] लाहू
कठिन करम गति जान बिधाता ❀ जो सुभ असुभ सकल फल दाता

कौशल्या ने कहा—किसी का दोष नहीं है। दुःख-सुख, हानि-लाभ, सब कर्म के अधीन हैं। कर्म की गति कठिन है, उसे विधाता ही जानता है; अच्छे और बुरे सभी फलों का देने वाला है।

ईस रजाइ सीस सबही कें ❀ उतपति थिति लय बिषहु अमी कें
देबि मोह बस सोचिअ बादी ❀ बिधि प्रपंचु अस अचल अनादी

ईश्वर की आज्ञा सभी के सिर पर है। जगत की उत्पत्ति, पालन और लय तथा अमृत और विष के सिर पर भी है। हे देवि! मोह के वश सोच करना व्यर्थ है। विधाता का प्रपंच ऐसा ही अचल और अनादि है।

भूपति जियब मरब उर आनी ❀सोचिअ सखि लखि निज हितहानी
सीय मातु कह सत्य सुबानी ❀ सुकृती अवधि अवधपति रानी

महाराज (दशरथ) के जीने और मरने की बात को जी में याद करके हम जो चिन्ता करती हैं वह तो हे सखी! हम अपने ही हित की हानि देखकर (स्वार्थ-वश) करती हैं। सीता की माता ने कहा—आपका कथन उत्तम और सत्य है। आप पुण्यवानों की सीमारूप अयोध्यानाथ (महाराज दशरथ) की ही रानी तो हैं।

दो॰ लखनु रामु सिय जाहुँ बन भल परिनाम न पोचु।
गहबरि[2] हियँ कह कौसिला मोहि भरत कर सोचु॥

कौशल्या ने गद्‌गद् हृदय से कहा—राम, लक्ष्मण और सीता वन में जायँ, इसका परिणाम तो अच्छा ही होगा, बुरा नहीं। मुझे तो भरत की चिन्ता है।

---

१. हानि। २. गद्‌गद्।

ईस प्रसाद असीस तुम्हारी ❀ सुत सुतबधू देवसरि बारी
राम सपथ मैं कीन्हि न काऊ ❀ सो करि कहउँ सखी सति भाऊ

ईश्वर के अनुग्रह और आपके आशीर्वाद से मेरे चारों पुत्र और पुत्रों की बहुएँ गंगा-जल के समान पवित्र हैं। हे सखी! मैंने कभी रामचन्द्र की सौगन्द नहीं खाई। वह भी खाकर सच्चे भाव से कहती हूँ—

भरत सील गुन बिनय बड़ाई ❀ भायप भगति भरोस भलाई
कहत सारदहु कर मति हीचे[1] ❀ सागर सीप कि जाहिं उलीचे

भरत के शील, गुण, नम्रता, बड़प्पन, भाईपन, भक्ति, भरोसे और अच्छेपन का वर्णन करने में सरस्वती की बुद्धि भी हिचक जाती है। सीप से कहीं समुद्र उलीचे जा सकते हैं?

जानउँ सदा भरत कुल दीपा ❀ बार बार मोहि कहेउ महीपा
कसें कनकु मनि पारखि पायें ❀ पुरुष परखिअहिं समयँ सुभायें

मैं भरत को सदा ही से कुल का दीपक जानती हूँ और राजा ने भी बार-बार मुझे यही कहा था। सोना कसे जाने पर और रत्न पारखी (जौहरी) के मिलने ही पर पहचाना जाता है। वैसे ही पुरुष की परीक्षा अवसर पड़ने पर उसके स्वभाव से ही हो जाती है।

अनुचित आजु कहब अस मोरा ❀ सोक सनेह सयानप थोरा
सुनि सुरसरि सम पावनि बानीं ❀ भईं सनेह बिकल सब रानीं

किन्तु आज मेरा ऐसा कहना भी अनुचित है। इसमें शोक और स्नेह में सयानापन कम हो जाता है। कौशल्या की गंगा के समान पवित्र वाणी सुनकर सब रानियाँ स्नेह के मारे विह्वल हो गईं।

दोहा

कौसल्या कह धीर धरि सुनहु देवि मिथिलेसि।
को बिबेकनिधि बल्लभहिं[2] तुम्हहिं सकै उपदेसि॥

कौशल्या ने फिर धीरज धरकर कहा—हे देवि मिथिलेश्वरी! सुनिये, आप ज्ञान के भण्डार श्री जनकजी की प्रिया हैं। आपको कौन उपदेश दे सकता है?

१. हिचकती है। २. प्यारी स्त्री।

रानि राय सन अवसरु पाई ❀ अपनी भाँति कहब समुझाई
रखिअहिं लखनु भरतु गवनहिं बन ❀ जौं यह मत मानै महीप मन

हे रानी ! मौका पाकर आप राजा से अपनी ओर से समझाकर कहियेगा कि लक्ष्मण को तो रख लिया जाय और भरत वन को जायँ। यदि यह राय राजा के मन में ठीक जच जाय,

तौ भल जतनु करब सुबिचारी ❀ मोरें सोचु भरत कर भारी
गूढ़ सनेह भरत मन माहीं ❀ रहें नीक मोहि लागत नाहीं

तो अच्छी तरह खूब विचारकर ऐसा यत्न करें। मुझे भरत का भारी सोच है। भरत के मन में गूढ़ प्रेम है। उनके घर रहने में मुझे भलाई नहीं जान पड़ती।

लखि सुभाउ सुनि सरल सुबानी ❀ सब भइँ मगन करुन रस सानी
नभ प्रसून झरि धन्य धन्य धुनि ❀ सिथिल सनेहँ सिद्धि जोगी मुनि

कौशल्या का स्वभाव देखकर और उनकी सरल और उत्तम वाणी को सुनकर सब रानियाँ करुण-रस में निमग्न हो गईं। आकाश से फूलों की वर्षा और धन्य-धन्य की ध्वनि होने लगी। सिद्ध, योगी और मुनि स्नेह से शिथिल हो गये।

सबु रनिवासु बिथकि लखि रहेऊ ❀ तब धरि धीर सुमित्राँ कहेऊ
देबि दंड जुग जामिन बीती ❀ राम मातु सुनि उठी सप्रीती

सारा रनिवास देखकर थकित-सा रह गया। तब सुमित्रा ने धीरज धरकर कहा—हे देवि ! दो घड़ी रात बीत गई है। यह सुनकर कौशल्या प्रेम-पूर्वक उठीं।

दो० बेगि पाउ धारिअ थलहिं[1] कहि सनेहँ सतिभाय।
हमरे तौ अब ईस गति कै मिथिलेस सहाय॥२८३

कौशल्या प्रेम-सहित सद्भाव से बोलीं—अब आप शीघ्र डेरे को पधारें। अब तो हम भगवान् के भरोसे हैं; अथवा मिथिलाधीश (जनक) सहायक हैं। [विकल्प अलंकार]

१. डेरे को।

लखि सनेह सुनि बचन बिनीता ❀ जनक प्रिया गहि पाय पुनीता
देबि उचित असि बिनय तुम्हारी ❀ दसरथ घरिनि[1] राम महतारी

कौशल्या के प्रेम को देखकर और उनके विनीत वचनों को सुनकर जनकजी की प्रिय पत्नी ने उनके पवित्र चरण पकड़ लिये और कहा—हे देवि! आपकी ऐसी नम्रता उचित ही है। आप महाराज दशरथजी की रानी और रामचन्द्रजी की माता हैं।

प्रभु अपने नीचहु आदरहीं ❀ अगिनि धूम गिरि सिर तिनु धरहीं
सेवक राउ करम मन बानी ❀ सदा सहाय महेस भवानी

स्वामी अपने नीच जनों का भी आदर करते हैं। आग धुएँ को और पहाड़ घास को अपने सिर पर धारण करते हैं। हमारे राजा (जनक) कर्म, मन और वाणी से आपके सेवक हैं और सदा सहायक तो शंकर-पार्वतीजी हैं। [दृष्टान्त अलंकार]

रउरे अंग जोगु जग को है ❀ दीप सहाय कि दिनकर सोहै
राम जाइ बनु करि सुर काजू ❀ अचल अवधपुर करिहहिं राजू

हे रानी! जगत् में आपकी समता के योग्य कौन है? कहीं दीपक की सहायता से सूर्य शोभा पाता है? रामचन्द्रजी वन में जाकर, देवताओं का कार्य करके अयोध्यापुरी में अचल राज्य करेंगे।

अमर नाग नर राम बाहुबल ❀ सुख बसिहहिं अपने अपने थल
यह सब जागबलिक कहि राखा ❀ देबि न होइ मुधा[2] मुनि भाखा

देवता, नाग और मनुष्य सब रामचन्द्रजी की भुजाओं के बल पर सुखपूर्वक अपने-अपने स्थानों में बसेंगे। यह सब याज्ञवल्क्य मुनि ने कह रक्खा है। हे देवि! मुनि का वचन झूठा नहीं हो सकता।

दो०— अस कहि पग परि पेम अति सिय हित बिनय सुनाइ।
सिय समेत सिय मातु तब चली सुआयसु पाइ॥

ऐसा कहकर बड़े प्रेम से पाँव पड़कर सीता की माता सीता को साथ भेजने के लिये विनती करके और सुन्दर आज्ञा पाकर सीता-समेत (डेरे को) चलीं।

---

१. स्त्री। २. निष्फल, असत्य।

प्रिय परिजनहिं मिली बैदेही ❀ जो जेहि जोगु भाँति तेहि तेही
तापस बेष जानकी देखी ❀ भा सबु बिकल बिषाद बिसेखी

जानकी अपने प्यारे कुटुम्बियों से, जो जिस योग्य थे, उनसे उसी तरह मिलीं। जानकी को तपस्विनी के वेष में देखकर सभी दुःख से विशेष व्याकुल हो गये।

जनक राम गुर आयसु पाई ❀ चले थलहिं सिय देखी आई
लीन्हि लाइ उर जनक जानकी ❀ पाहुनि पावन पेम प्रान की

राजा जनक रामजी के गुरु वशिष्ठजी की आज्ञा पाकर डेरे को चले। वहाँ आकर उन्होंने सीता को देखा। जनकजी ने अपने पवित्र प्रेम और प्राणों की पाहुनी जानकी को हृदय से लगा लिया।

उर उमगेउ अंबुधि अनुरागू ❀ भयेउ भूप मनु मनहुँ पयागू
सिय सनेह बटु बाढ़त जोहा ❀ तापर राम पेम सिसु सोहा

उनके हृदय में प्रेम का समुद्र उमड़ पड़ा। राजा जनक का मन मानो प्रयागराज हो गया। उसमें सीता का स्नेहरूपी अक्षय बट-वृक्ष बढ़ता हुआ दीखने लगा। उस बट-वृक्ष पर रामचन्द्रजी का प्रेमरूपी बालक शोभायमान हो रहा है।

चिरजीवी मुनि ग्यान बिकल जनु ❀ बूड़त लहेउ बाल अवलंबनु[1]
मोह मगन मति नहिं बिदेह की ❀ महिमा सिय रघुबर सनेह की

राजा जनक के ज्ञानरूपी चिरजीवी (मार्कण्डेय) मुनि ने व्याकुल होकर डूबते-डूबते मानो उस बालक का सहारा पाया। राजा जनक की बुद्धि कभी मोह में फँसने वाली नहीं। पर यह तो सीतारामजी के प्रेम की महिमा है। [उत्प्रेक्षा अलंकार]

दो॰ सिय पितु मातु सनेह बस बिकल न सकी सँभारि।
धरनि सुताँ धीरजु धरेउ समउ सुधरमु बिचारि॥

पिता-माता के स्नेह में सीता ऐसी विकल हो गईं कि वे अपने को सँभाल नहीं सकीं। पर पृथ्वी की कन्या सीता ने समय और सद्धर्म का विचार कर धैर्य धारण किया। [सम अलंकार]

---

१. सहारा।

तापस बेष जनक सिय देखी ❀ भयेउ पेमु परितोषु बिसेखी
पुत्रि पबित्र किये कुल दोऊ ❀ सुजस धवल जग कह सब कोऊ

सीता को तपस्विनी-वेष में देखकर राजा जनक को विशेष प्रेम और सन्तोष हुआ। उन्होंने कहा—पुत्रि! तूने दोनों कुलों को पवित्र कर दिया। सब कोई कहते हैं कि तेरे निर्मल यश से सारा जगत् उज्ज्वल हो रहा है।

जिति सुरसरि कीरति सरि तोरी ❀ गवनु कीन्ह बिधि अंड[1] करोरी[2]
गंग अवनि थल तीनि बड़ेरे ❀ एहिं किये साधु समाज घनेरे

तेरी कीर्तिरूपी नदी देव-नदी (गङ्गाजी) को भी जीतकर करोड़ों ब्रह्माण्डों में बह चली। गङ्गाजी के पृथ्वी पर बड़े स्थल तीन ही हैं—हरिद्वार, प्रयागराज, गङ्गासागर। पर तेरी इस कीर्ति-नदी ने तो अनेक संत-समाजरूपी तीर्थ-स्थान बना दिये हैं। [रूपक अलंकार]

पितु कह सत्य सनेह सुबानी ❀ सीय सकुच महुँ मनहुँ समानी
पुनि पितु मातु लीन्हि उर लाई ❀ सिख आसिष हित दीन्हि सुहाई

पिता ने तो स्नेह से सच्ची शुभ वाणी कही; पर सीता अपनी बड़ाई सुनकर मानो संकोच में समा गई हों। फिर पिता-माता ने उन्हें हृदय से लगा लिया और कल्याणकारिणी सुन्दर शिक्षा और आशीर्वाद दिये।

कहति न सीय सकुचि मन माहीं ❀ इहाँ बसब रजनीं भल नाहीं
लखि रुख रानि जनायउ राऊ ❀ हृदयँ सराहत सीलु सुभाऊ

सीता मन में संकोच करती हुई यह न कह सकीं कि (सासुओं की सेवा छोड़कर) यहाँ रात में रहना अच्छा नहीं है। रानी ने कन्या का रुख देखकर राजा जनक को सूचित किया और दोनों हृदय में सीता के शील और स्वभाव की सराहना करने लगे।

दो०— बार बार मिलि भेंटि सिय बिदा कीन्हि सनमानि।
कही समय सिर[3] भरत गति रानि सुबानि सयानि॥

पिता-माता ने बार-बार मिलकर, हृदय से लगाकर सम्मानपूर्वक सीता को विदा किया। चतुर रानी (सुनयना) ने अवसर पाकर भरत की दशा राजा को भली-भाँति कह सुनायी।

१. ब्रह्मांड। २. करोड़ों। ३. मौक़ा पाकर।

सुनि भूपाल भरत ब्यवहारू ❀ सोन सुगंध सुधा ससि सारू
मूँदे सजल नयन पुलके तन ❀ सुजसु सराहन लगे मुदित मन

सोने में सुगन्ध और चन्द्रमा के सार अमृत के समान भरत का व्यवहार सुनकर, राजा जनक ने आँसू भरे नेत्र मूँद लिये। उनका शरीर रोमांचित हो आया और प्रसन्नमन से वे भरत के यश की सराहना करने लगे।

सावधान सुनु सुमुखि सुलोचनि ❀ भरत कथा भव बंध बिमोचनि[1]
धरम राजनय ब्रह्म बिचारू ❀ इहाँ जथामति मोर प्रचारू

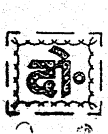
उन्होंने कहा—हे सुमुखि ! हे सुनयने ! सावधान होकर सुनो ! भरत की कथा संसार के बन्धन से छुड़ाने वाली है। धर्म, राजनीति और ब्रह्म-विचार, इन विषयों में अपनी बुद्धि के अनुसार थोड़ा-बहुत मेरा प्रवेश है।

सो मति मोरि भरत महिमाहीं ❀ कहै कहा छलि छुअति न छाहीं
बिधि गनपति अहिपति सिव नारद ❀ कबि कोबिद बुध बुद्धि बिसारद

वह मेरी बुद्धि भरत की महिमा का वर्णन तो क्या करे; छल करके उसकी छाया को भी नहीं छू पाती। ब्रह्मा, गणेश, शेष, महादेव, सरस्वती, कवि, ज्ञानी, पंडित और बुद्धिमान,

भरत चरित कीरति करतूती ❀ धरम सील गुन बिमल बिभूती
समुझत सुनत सुखद सब काहू ❀ सुचि सुरसरि रुचि निदर सुधाहू

सबको भरत के चरित्र, कीर्ति, करनी, धर्म, शील, गुण और निर्मल ऐश्वर्य समझने में और सुनने में सुख देने वाले हैं और पवित्रता में गंगाजी तथा स्वाद में अमृत का भी तिरस्कार करने वाले हैं।



निरवधि[2] गुन निरुपम पुरुषु भरतु भरत सम जानि।
कहिअ सुमेरु कि सेर सम कबि कुल मति सकुचानि॥

भरत असीम गुण वाले और निरुपम पुरुष हैं। भरत के समान भरत ही हैं, ऐसा जानो। कवि-समाज की बुद्धि भी सकुचा गई है। वे सुमेरु-पर्वत को सेर के बराबर कैसे कहें ?

अगम सबहिं बरनत बर बरनी ❀ जिमि जल हीन मीन गमु धरनी
भरत अमित महिमा सुनु रानी ❀ जानहिं राम न सकहिं बखानी

---

१. छुड़ाने वाली। २. असीम।

हे सुन्दरी ! भरत की महिमा का वर्णन वैसा ही अगम है, जैसा पानी-रहित ज़मीन पर मछली का चलना। हे रानी ! सुनो। भरत की अपार महिमा को एक रामचन्द्रजी ही जानते हैं, किन्तु वे भी कह नहीं सकते।

बरनि सप्रेम भरत अनुभाऊ[1] ❀ तिय जियकी रुचि लखि कह राऊ
बहुरहिं लखन भरत बन जाहीं ❀ सब कर भल सब के मन माहीं

इस तरह प्रेम के साथ भरत के प्रभाव का वर्णन कर फिर पत्नी के मन की रुचि जानकर राजा जनक ने कहा—लक्ष्मण घर लौट जायँ और भरत वन को जायँ; इसमें सबका भला है, और यही सब के मन में है।

देबि परंतु भरत रघुबर की ❀ प्रीति प्रतीति जाइ नहिं तरकी[2]
भरत अवधि सनेह ममता की ❀ जद्यपि राम सींव समता की

परन्तु हे देवि ! भरत और रामचन्द्रजी की प्रीति और प्रतीति तर्क में नहीं आ सकती। यद्यपि रामचन्द्रजी समता की सीमा हैं, तथापि भरत प्रेम और ममता की सीमा हैं।

परमारथ स्वारथ सुख सारे ❀ भरत न सपनेहुँ मनहुँ निहारे
साधन सिद्ध राम पग नेहू ❀ मोहि लखि परत भरत मत एहू

परमार्थ, स्वार्थ और सम्पूर्ण सुखों की ओर भरत ने स्वप्न में भी नहीं ताका है। रामचन्द्र के चरणों का प्रेम ही उनका साधन और सिद्धि है। मुझे तो भरत का यही एकमात्र मत जान पड़ता है।

दो०— भोरेहुँ[3] भरत न पेलिहहिं मनसहुँ राम रजाइ।
करिअ न सोचु सनेह बस कहेउ भूप बिलखाइ।२८८।

राजा ने बिलखकर कहा—भरत मन से भी, भूलकर भी रामचन्द्र की आज्ञा को नहीं टालेंगे। इसलिये स्नेह के वश होकर सोच नहीं करना चाहिये।

राम भरत गुन गनत सप्रीती ❀ निसि दंपतिहिं पलक सम बीती
राज समाज प्रात जुग जागे ❀ न्हाइ न्हाइ सुर पूजन लागे

रामचन्द्रजी और भरत के गुणों को प्रेम के साथ कहते-सुनते हुए राजा-रानी को सारी रात पलक के समान बीत गई। सवेरे दोनों राज-समाज जागे और नहा-नहाकर देवताओं की पूजा करने लगे।

---

१. प्रभाव। २. कल्पना की जा सकती। ३. भूलकर भी।

गे नहाइ गुरु पहिं रघुराई ❀ बंदि चरन बोले रुख पाई
नाथ भरत पुरजन महतारीं ❀ सोक बिकल बनबास दुखारीं

रामचन्द्रजी स्नान करके गुरु के पास गये और चरणों की वन्दना कर उनका रुख पाकर बोले—हे नाथ ! भरत, नगर-निवासी जन तथा मातायें सब सोच से व्याकुल और वनवास से दुखी हैं।

सहित समाज राउ मिथिलेसू ❀ बहुत दिवस भए सहत कलेसू
उचित होइ सोइ कीजिअ नाथा ❀ हित सबही कर रउरें हाथा

मिथिलापति राजा जनकजी को भी समाज-सहित क्लेश सहन करते बहुत दिन हो गये। इसलिये हे नाथ ! जो उचित हो, वही कीजिए। आप ही के हाथ सब का हित है।

अस कहि अति सकुचे रघुराऊ ❀ मुनि पुलके लखि सीलु सुभाऊ
तुम्ह बिनु राम सकल सुख साजा ❀ नरक सरिस दुहुँ राज समाजा

ऐसा कहकर रामचन्द्रजी बहुत सकुचा गये। उनका शील-स्वभाव देखकर मुनि वशिष्ठजी पुलकित हो गये। उन्होंने कहा—हे राम ! तुम्हारे बिना दोनों समाजों को सम्पूर्ण सुखों के साज नरक के समान हैं।


प्रान प्रान के जीव के जिव सुख के सुख राम।
तुम्ह तजि तात सुहात गृह जिन्हहिं तिन्हहिं बिधि बाम।

हे राम, तुम प्राणों के भी प्राण, आत्मा के भी आत्मा और सुख के भी सुख हो। तुम्हें छोड़कर जिनको घर सुहाता है, उनका विधाता विपरीत है।

सो सुखु धरमु करमु जरि जाऊ ❀ जहँ न राम पद पंकज भाऊ[1]
जोगु कुजोगु ग्यानु अग्यानू ❀ जहँ नहिं राम पेम परधानू

जहाँ राम के चरण-कमलों में प्रेम नहीं है, वह सुख, धर्म और कर्म जल जाय। जिसमें राम के प्रेम की प्रधानता नहीं है, वह भोग कुयोग है और वह ज्ञान अज्ञान है। [तिरस्कार अलंकार]

तुम्ह बिनु दुखी सुखी तुम्ह तेहीं ❀ तुम्ह जानहु जिय जो जेहि केहीं
राउर आयसु सिर सबही कें ❀ बिदित कृपालहिं गति सब नीकें

तुम्हारे बिना सब दुखी हैं और जो सुखी हैं, वे तुम्हारे से सुखी हैं। जिसके

१. प्रेम।

जी में जो कुछ है, तुम सब जानते हो। तुम्हारी ही आज्ञा सभी के सिर पर है। तुम दयालु हो। सभी की गति तुम को अच्छी तरह मालूम है।

आपु आस्रमहिं धारिअ पाऊ ❀ भयेउ सनेह सिथिल मुनिराऊ
करि प्रनामु तब रामु सिधाए ❀ रिषि धरि धीर जनक पहिं आए

अब तुम आश्रम में पधारो। इतना कह मुनिराज स्नेह से शिथिल हो गये। तब रामचन्द्रजी प्रणाम कर वहाँ से चले गये और ऋषि वशिष्ठजी धीरज धरकर जनक राजा के पास आये।

राम बचन गुर नृपहि सुनाए ❀ सील सनेह सुभायँ सुहाए
महाराज अब कीजिअ सोई ❀ सब कर धरम सहित हित होई

गुरुजी ने रामचन्द्रजी के शील और स्नेह से युक्त स्वभाव से ही सुन्दर वचन राजा को सुनाये और कहा—हे महाराज! अब वही कीजिये, जिसमें सबका हित हो और धर्म भी बना रहे।

दो॰ ग्यान निधान सुजान सुचि धरम धीर नरपाल।
तुम्ह बिनु असमंजस समन को समरथ एहि काल॥

हे राजन्! तुम ज्ञान के भंडार, बुद्धिमान, पवित्र और धर्म में धीर हो। इस समय तुम्हारे बिना इस दुविधा को शमन करने में और कौन समर्थ है?

सुनि मुनि बचन जनक अनुरागे ❀ लखि गति ग्यानु बिरागु बिरागे
सिथिल सनेह गुनत मन माहीं ❀ आए इहाँ कीन्ह भल नाहीं

मुनि के वचन सुनकर जनकजी प्रेम में मग्न हो गये। उनकी दशा देखकर ज्ञान और वैराग्य को भी वैराग्य हो गया। वे स्नेह से शिथिल हो गये और मन में सोचने लगे कि हम यहाँ आये, यह अच्छा नहीं किया।

रामहिं रायँ कहेउ बन जाना ❀ कीन्ह आपु प्रिय पेम प्रबाना[1]
हम अब बन तें बनहिं पठाई ❀ प्रमुदित फिरब बिबेक बढ़ाई

राजा दशरथ ने रामचन्द्रजी को वन जाने को कहा और स्वयं अपने प्रिय के प्रेम को सच्चा कर दिखाया। अब हम रामचन्द्रजी को वन से वन को भेजकर विवेक को बढ़ाकर आनन्द से घर को लौटेंगे।

---

१. सच्चा।

तापस मुनि महिसुर सुनि देखी ❀ भए प्रेम बस बिकल बिसेखी
समउ समुझि धरि धीरजु राजा ❀ चले भरत पहिं सहित समाजा

तपस्वी, मुनि और ब्राह्मण यह सब सुनकर, देखकर प्रेमवश विशेष व्याकुल हुए। फिर राजा जनकजी समय का विचार करके और धीरज धरकर समाज-सहित भरत के पास चले।

भरत आइ आगें भइ¹ लीन्हे ❀ अवसर सरिस सुआसन दीन्हे
तात भरत कह तेरहुति राऊ ❀ तुम्हहिं बिदित रघुबीर सुभाऊ

भरत आगे आकर उन्हें लिवा ले गये और समयानुकूल अच्छे आसन दिये। तिरहुत देश के राजा जनकजी कहने लगे—हे तात भरत! तुमको रामचन्द्रजी का स्वभाव मालूम ही है।

दो॰ राम सत्यब्रत धरम रत सब कर सीलु सनेहु।
संकट सहत सँकोच बस कहिअ जो आयसु देहु॥

रामचन्द्रजी सत्य प्रतिज्ञावाले और धर्मनिष्ठ हैं। वे सबका शील और स्नेह रखने वाले हैं। संकोचवश वे संकट सह रहे हैं। इसलिए अब आप जो आज्ञा दो, वह उनसे कही जाय।

सुनि तन पुलकि नयन भरि बारी ❀ बोले भरतु धीर धरि भारी
प्रभु प्रिय पूज्य पिता सम आपू ❀ कुलगुरु सम हित माय न बापू

भरत यह सुनकर शरीर से पुलकित हो गये। नेत्रों में जल भरकर, वे बड़ा धीरज धरकर बोले—हे प्रभु, आप मेरे पिता के समान प्रिय और पूज्य हैं, और कुलगुरु वशिष्ठजी के समान हितकारी तो माता-पिता भी नहीं हैं।

कौसिकादि मुनि सचिव समाजू ❀ ग्यान अंबु निधि आपुनु आजू
सिसु सेवक आयसु अनुगामी ❀ जानि मोहि सिख देइअ स्वामी

विश्वामित्रजी आदि मुनियों और मंत्रियों का समाज है, और आप स्वयं ज्ञान के सागर आज विद्यमान हैं। हे स्वामी! मुझे अपना बालक, सेवक और आज्ञाकारी समझकर शिक्षा दीजिये।

एहिं समाज थल बूझब राउर ❀ मौन मलिन मैं बोलब बाउर
छोटे बदन कहउँ बड़ि बाता ❀ छमब तात लखि बाम बिधाता

१. होकर।

ऐसे समाज में, ऐसी जगह में आपका पूछना! इस पर मैं चुप रहूँ तो मलिन और बोलूँ तो बावला समझा जाऊँगा। तथापि मैं छोटे मुँह बड़ी बात कहता हूँ। हे तात! आप विधाता को प्रतिकूल समझकर क्षमा कीजिएगा।

आगम निगम प्रसिद्ध पुराना ❀ सेवा धरमु कठिन जगु जाना
स्वामि धरम स्वारथहिं बिरोधू ❀ बैरु अंध प्रेमहिं न प्रबोधू[1]

वेद, शास्त्र और पुराणों में प्रसिद्ध है और संसार जानता है कि सेवा-धर्म बड़ा कठिन है। स्वामि-धर्म में और स्वार्थ में विरोध है, जैसे बैर अंधा होता है और प्रेम को ज्ञान नहीं रहता।

दो० राखि राम रुख धरमु ब्रतु पराधीन मोहि जानि।
सब कें सम्मत सर्ब हित करिअ प्रेम पहिचानि॥२९२॥

मुझे पराधीन जानकर आप रामचन्द्रजी की रुचि, धर्म और व्रत को रखकर और सब के प्रेम को पहचानकर जो सबकी सम्मति हो और सबके लिये हितकारी हो, वही कीजिये।

भरत बचन सुनि देखि सुभाऊ ❀ सहित समाज सराहत राऊ
सुगम अगम मृदु मंजु कठोरे ❀ अरथ अमित अति आखर[2] थोरे

भरत के वचन सुनकर और उनका स्वभाव देखकर समाज-सहित राजा जनक उनकी सराहना करने लगे। उनके वचन सरल, किन्तु गहरे मतलब वाले, सुनने में सुन्दर, पर पालन करने में कठोर हैं। अक्षर तो थोड़े हैं, पर अर्थ अत्यन्त अपार भरा हुआ है।

ज्यों मुखु मुकुर[3] मुकुरु निज पानी[4] ❀ गहि न जाइ अस अदभुत बानी
भूपु भरत मुनि साधु समाजू ❀ गे जहँ बिबुध कुमुद द्विजराजू

जैसे मुख दर्पण में दीखता है और दर्पण अपने हाथ में है; फिर भी मुख पकड़ा नहीं जाता, इसी प्रकार अद्भुत भरत की वाणी है। वह भी पकड़ में नहीं आती। फिर राजा जनक, भरत, मुनि तथा साधु-समाज के साथ वहाँ गये, जहाँ देवतारूपी कुमुदों के चन्द्रमा-स्वरूप रामचन्द्रजी थे।

सुनि सुधि सोच बिकल सब लोगा ❀ मनहुँ मीन गन नव जल जोगा
देवँ प्रथम कुलगुर गति देखी ❀ निरखि बिदेह सनेह बिसेखी

---

१. ज्ञान। २. अक्षर। ३. दर्पण। ४. हाथ।

इस खबर को सुनकर सब लोग सोच से ऐसे व्याकुल हुये, जैसे वर्षा के प्रथम जल के संयोग से मछलियाँ। देवताओं ने पहले कुल-गुरु वशिष्ठजी की दशा देखी। फिर जनकजी के विशेष स्नेह को देखा।

राम भगति मय भरतु निहारे ❀ सुर स्वारथी हहरि हियँ हारे
सब कोउ राम प्रेम मय पेखा ❀ भए अलेख[1] सोच बस लेखा[2]

तब रामचन्द्रजी की भक्ति से ओतप्रोत भरत को देखा। इन सब को देखकर स्वार्थी देवता हड़बड़ाकर हृदय में हार मान गये। सभी को रामचन्द्रजी के प्रेम में सराबोर देखा। तब देवता ऐसे सोच के वश हो गये, जिसका कोई हिसाब नहीं।

दो० रामु सनेह सकोच बस कह ससोच सुरराजु।
रचहु प्रपंचहिं पंच मिलि नाहित भयेउ अकाजु।२९३

देवराज इन्द्र सोच में भरकर कहने लगे—रामचन्द्रजी तो स्नेह और संकोच के वश में हैं। इसलिए सब पंच मिलकर कुछ प्रपंच रचो, नहीं तो काम बिगड़ा जाता है।

सुरन्ह सुमिरि सारदा सराही ❀ देबि देव सरनागत पाही[3]
फेरि भरत मति करि निज माया ❀ पालु बिबुध कुल करि छल छाया

देवताओं ने सरस्वती का स्मरण कर उनकी स्तुति की और कहा—हे देवि! देवता शरणागत हैं, उनकी रक्षा कीजिये। अपनी माया रच कर भरत की बुद्धि को फेर दीजिये। और छल की छाया कर देव-कुल का पालन कीजिये।

बिबुध बिनय सुनि देबि सयानी ❀ बोली सुर स्वारथ जड़ जानी
मो सन कहहु भरत मति फेरू ❀ लोचन सहस न सूझ सुमेरू

देवताओं की विनती सुनकर और देवताओं को स्वार्थी होने से मूर्ख जानकर चतुर सरस्वती बोली—मुझसे कहते हो कि भरत की मति पलट दो। हजार नेत्रों से भी तुम्हें सुमेरु नहीं सूझ पड़ता। [ललित अलंकार]

बिधि हरि हर माया बड़ि भारी ❀ सोउ न भरत मति सकइ निहारी
सो मति मोहि कहत करु भोरी ❀ चांदिनि कर कि चंड[4] कर चोरी

ब्रह्मा, विष्णु और महेश की माया बड़ी प्रबल है। वह भी भरत की बुद्धि

१. लिखने योग्य नहीं। २. देवता। ३. रक्षा कीजिये। ४. सूर्य।

की ओर ताक नहीं सकती। उस बुद्धि को भुलावे में डाल देने के लिये मुझे कह रहे हो? भला, चाँदनी भी कहीं प्रचंड किरणों वाले सूर्य को चुरा सकती है?

भरत हृदयँ सिय राम निवासू ❀ तहँ कि तिमिरि जहँ तरनि प्रकासू
अस कहि सारद गइ बिधि लोका ❀ बिबुध बिकल निसि मानहुँ कोका[1]

भरत के हृदय में सीता-राम का निवास है। भला, जहाँ सूर्य का प्रकाश है, वहाँ कहीं अँधेरा रह सकता है? ऐसा कहकर सरस्वती ब्रह्मलोक को चली गईं। देवता ऐसे व्याकुल हुए, जैसे रात में चकवा व्याकुल होता है।

दो०— सुर स्वारथी मलीन मन कीन्ह कुमंत्र कुठाटु[2]।
रचि प्रपंचु माया प्रबल भय भ्रम अरति उचाटु॥

मन के मैले, स्वार्थी देवताओं ने बुरी सलाहकर षड्यन्त्र रचा। प्रबल माया से भय, भ्रम, अप्रीति और उच्चाटन फैलाकर,

करि कुचालि सोचत सुरराजू ❀ भरत हाथ सबु काजु अकाजू
गए जनक रघुनाथ समीपा ❀ सनमाने सब रबि कुल दीपा

कुचाल करके इन्द्र सोचने लगे कि काम का बनना-बिगड़ना सब भरत के हाथ है। इधर राजा जनक रघुनाथजी के पास पहुँचे। सूर्यकुल के दीपक रामचन्द्रजी ने सबका सम्मान किया।

समय समाज धरम अबिरोधा ❀ बोले तब रघुबंस पुरोधा
जनक भरत सम्बादु सुनाई ❀ भरत कहाउति[3] कही सुहाई

तब रघुकुल के पुरोहित वशिष्ठजी समय, समाज और धर्म के अनुकूल वचन बोले—जनक और भरत का संवाद सुनाकर उन्होंने फिर भरत की कही हुई सुहावनी बातें कह सुनाईं।

तात राम जस आयसु देहू ❀ सो सबु करै मोर मत एहू
सुनि रघुनाथ जोरि जुग पानी ❀ बोले सत्य सरल मृदु बानी

फिर बोले—हे तात राम! मेरा मत तो यह है कि तुम जैसी आज्ञा दो, वैसा ही सब करें। रामचन्द्रजी यह सुनकर, दोनों हाथ जोड़कर, सरल, सत्य और कोमल वाणी बोले—

---

१. चकवा। २. बुरा षड्यंत्र। ३. कही हुई बातें।

बिद्यमान[1] आपुनि मिथिलेसू ❀ मोर कहब सब भाँति भदेसू[2]
राउर राय रजायसु होई ❀ राउरि सपथ सही सिर सोई

आपके और मिथिलेश्वर (जनकजी) के विद्यमान होते हुये मेरा कुछ कहना सब प्रकार से भद्दा है। आपकी और महाराज (जनकजी) की जो आज्ञा होगी, मैं आपकी शपथ करके कहता हूँ, वही शिरोधार्य होगी।

दो० राम सपथ सुनि मुनि जनकु सकुचे सभा समेत।
सकल बिलोकत भरतु मुख बनइ न ऊतरु देत॥

रामचन्द्रजी की शपथ सुनकर सभा-समेत मुनि और जनकजी सकुचा गये। सब भरत के मुँह की ओर ताकने लगे। किसी से उत्तर देते नहीं बनता।

सभा सकुच बस भरत निहारी ❀ राम बंधु धरि धीरजु भारी
कुसमउ देखि सनेहु सँभारा ❀ बढ़त बिंधि जिमि घटज निवारा

सारी सभा को संकोच के वश में देखकर, रामचन्द्रजी के बन्धु (भरत) ने भारी धीरज धरकर और कुसमय देखकर अपने प्रेम को सँभाला। जैसे बढ़ते हुए विन्ध्याचल (पहाड़) को अगस्त्यजी ने रोका था। [उदाहरण अलंकार]

सोक कनक लोचन मति छोनी[3] ❀ हरी बिमल गुन गन जगजोनी
भरत बिबेक बराहँ[4] बिसाला ❀ अनायास उधरी तेहि काला

शोकरूपी हिरण्याक्ष ने विमल गुणरूपी जगत् को उत्पन्न करने वाली बुद्धिरूपी पृथ्वी को हर लिया। भरत के विवेकरूपी विशाल शूकर ने बिना परिश्रम ही उसका तत्काल उद्धार कर दिया। [उदाहरण अलंकार]

करि प्रनामु सब कहँ कर जोरे ❀ रामु राउ गुर साधु निहोरे
छमब आजु अति अनुचित मोरा ❀ कहउँ बदन मृदु बचन कठोरा

भरत ने सबको हाथ जोड़कर प्रणाम किया और रामचन्द्रजी, राजा जनक, गुरु और साधु-संत सबसे विनती की, और कहा—आज मेरे अत्यन्त अनुचित बर्ताव को क्षमा कीजियेगा। मैं कोमल मुँह से कठोर (धृष्टता-पूर्ण) वचन कह रहा हूँ।

हियँ सुमिरी सारदा सुहाई ❀ मानस तें मुख पंकज आई
बिमल बिबेक धरम नय साली ❀ भरत भारती[5] मंजु मराली[6]

उन्होंने हृदय में सुन्दर सरस्वती का स्मरण किया। स्मरण करते ही

१. मौजूद। २. भद्दा, अनुचित। ३. पृथ्वी। ४. वराहावतार। ५. सरस्वती। ६. हंसिनी।

सरस्वती मानस से मुखकमल में आ बिराजीं। निर्मल विवेक, धर्म और नीति से युक्त भरत की वाणी सुन्दर हंसिनीरूप है।

दो॰— निरखि बिबेक बिलोचनन्हि सिथिल सनेहँ समाजु।
करि प्रनामु बोले भरतु सुमिरि सीय रघुराजु॥२९६॥

ज्ञान-रूपी नेत्रों से सारे समाज को स्नेह से शिथिल देखकर, उन्हें प्रणाम कर, सीता-रामचन्द्र को स्मरणकर भरत बोले—

प्रभु पितु मातु सुहृद गुरु स्वामी ❀ पूज्य परम हित अन्तरजामी
सरल सुसाहिबु सील निधानू ❀ प्रनतपाल सर्बग्य सुजानू

हे प्रभु! आप पिता, माता, मित्र, गुरु और स्वामी पूज्य, परम हितैषी, और अन्तर्यामी हैं। सरल हृदय, श्रेष्ठ मालिक, शील के भण्डार, शरणागत के पालक, सर्वज्ञ और चतुर,

समरथ सरनागत हितकारी ❀ गुनगाहकु अवगुन अघ[1] हारी
स्वामि गोसाइँहि सरिस गोसाईं ❀ मोहि समान मैं साइँ दोहाईं[2]

समर्थ, शरणागत के हितकर्त्ता, गुणों का आदर करने वाले और अवगुणों तथा पापों को हरने वाले हैं। हे गोसाईं! आप सरीखे स्वामी आप ही हैं, और स्वामि-द्रोही मेरे समान मैं ही हूँ। [अनन्वय अलंकार]

प्रभु पितु बचन मोह बस पेली[3] ❀ आयउँ इहाँ समाजु सकेली
जग भल पोच ऊँच अरु नीचू ❀ अमिअ अमर पद माहुरु मीचू

मैं मोह-वश प्रभु (आप) के और पिता के वचनों का उल्लंघन करके और सारे समाज को बटोर कर यहाँ आया हूँ। जगत् में भले-बुरे, ऊँचे-नीचे, अमृत और अमरपद, विष और मृत्यु आदि,

राम रजाइ[4] मेट मन माहीं ❀ देखा सुना कतहुँ कोउ नाहीं
सो मैं सब बिधि कीन्हि ढिठाई ❀ प्रभु मानी सनेह सेवकाई

ऐसा कोई कहीं न देखा, न सुना, जो मन में भी रामचन्द्र की आज्ञा मेट दे। मैंने सब प्रकार से वही ढिठाई की, पर प्रभु ने उसको स्नेह और सेवा मान लिया।

१. पाप। २. द्रोहाई का अपभ्रंश, द्रोह करने वाला। ३. उल्लंघन करके। ४. आज्ञा।

दो०- कृपाँ भलाईं आपनी नाथ कीन्ह भल मोर।
दूषन भे[1] भूषन सरिस सुजसु चारु[2] चहुँ ओर ।२९७

हे नाथ ! आपने अपनी कृपा और भलाई से मेरा भला किया। मेरे दोष भूषण के समान हो गये और मेरा सुन्दर यश चारों ओर फैल रहा है। [लेश अलंकार]

राउरि रीति सुबानि[3] बड़ाई ❀ जगत बिदित निगमागम गाई
क्रूर कुटिल खल कुमति कलंकी ❀ नीच निसील निरीस निसंकी

हे नाथ ! आपकी रीति और सुन्दर स्वभाव की बड़ाई जगत् में विख्यात है और वेद-शास्त्रों ने भी गाई है। जो क्रूर, कुटिल, दुष्ट, खोटी बुद्धि वाले, कलङ्की, नीच, शील-रहित, नास्तिक और निडर हैं,

तेउ सुनि सरन सामुहें आए ❀ सकृत प्रनाम किहें अपनाए
देखि दोष कबहुँ न उर आने ❀ सुनि गुन साधु समाज बखाने

वे भी जब (आपके गुणों को सुन) सम्मुख शरणागत आये और एक बार प्रणाम किया, तुरन्त आपने उन्हें अपना लिया। उन शरणागतों के किये हुये दोषों को देखकर भी आप कभी हृदय में नहीं लाते और उनके गुणों को सुनकर साधु-समाज में उनका बखान करते हैं।

को साहिब सेवकहि नेवाजी[4] ❀ आपु समाज साज सब साजी
निज करतूति न समुझिअ सपनें ❀ सेवक सकुच सोचु उर अपनें

ऐसा कौन स्वामी है, जो सेवक पर कृपा करके उसके सब साज-समाज को स्वयं सज दे ? और अपनी करनी को स्वप्न में भी कुछ न समझकर उलटा सेवक को संकोच होगा, इसका सोच अपने हृदय में रक्खें।

सो गोसाइँ नहिँ दूसर कोपी[5] ❀ भुजा उठाइ कहउँ पन रोपी
पसु नाचत सुक पाठ प्रबीना ❀ गुन गति नट पाठक आधीना

मैं भुजा उठाकर और प्रण रोपकर कहता हूँ, ऐसा स्वामी आपके सिवा दूसरा कोई नहीं है। पशु (बन्दर आदि) नाचते और तोते पढ़ने में निपुण हो जाते हैं। परन्तु तोते का गुण और पशु के नाचने की गति पढ़ाने वाले और नचाने वाले के अधीन है। [यथासंख्य अलंकार]

१. हुये। २. सुन्दर। ३. अच्छा स्वभाव। ४. कृपा करके। ५. कोई भी।

दो०— यों सुधारि सनमानि जन किए साधु सिरमोर।
को कृपाल बिनु पालिहै बिरदावलि बरजोर ॥२९८॥

इस प्रकार अपने सेवकों की बिगड़ी बात सुधारकर, उनका सम्मान कर, उन्हें साधुओं का शिरोमणि बना दिया। ऐसे कृपालु के सिवाय अपनी बिरदावली का जबरदस्ती पालन और कौन करेगा ?

सोक सनेहँ कि बाल सुभाएँ ❀ आयेउँ लाइ रजायसु बाएँ[1]
तबहुँ कृपालु हेरि निज ओरा ❀ सबहि भाँति भल मानेउ मोरा

मैं शोक से या स्नेह से या बालक-स्वभाव से आपकी आज्ञा को न मानकर चला आया, तो भी कृपालु स्वामी (आप) ने अपनी ओर देखकर सब प्रकार से मेरा भला ही माना।

देखेउँ पाय सुमंगल मूला ❀ जानेउँ स्वामि सहज अनुकूला
बड़ें समाज बिलोकेउँ भागू ❀ बड़ीं चूक साहिब अनुरागू

मैंने सुन्दर मंगलों के मूल आपके चरणों का दर्शन किया और यह जान लिया कि स्वामी मुझ पर स्वभाव ही से अनुकूल हैं। इस बड़े समाज में अपने भाग्य को देखा कि इतनी बड़ी चूक होने पर भी स्वामी का मुझ पर कितना अनुराग है।

कृपा अनुग्रहु अंगु अघाई ❀ कीन्हि कृपानिधि सब अधिकाई
राखा मोर दुलार गोसाईं ❀ अपने सील सुभायँ भलाईं

हे गुसाईं ! कृपानिधि ने मुझ पर भरपेट कृपा और अनुग्रह, सब कुछ अधिक ही किये। आपने अपने शील, स्वभाव और भलाई से मेरा दुलार रक्खा।

नाथ निपट मैं कीन्हि ढिठाई ❀ स्वामि समाज सकोच बिहाई
अबिनय बिनय जथारुचि बानी ❀ छमिहि देउ अति आरति जानी

हे नाथ ! मैंने स्वामी और समाज के संकोच को छोड़कर नरम, कड़ी, जैसी मन में आई, वैसी वाणी कह कर बहुत बड़ी ढिठाई की। हे देव ! मुझे अत्यन्त दुखी जानकर आप क्षमा करें।

---

१. बायें लाइ=न मानकर।

दो॰ सुहृद सुजान सुसाहिबहि बहुत कहब बड़ि खोरि।
आयसु देइअ देव अब सबइ सुधारी मोरि ॥२६९॥

सुहृद, बुद्धिमान और श्रेष्ठ मालिक से अधिक कहना बड़ा अपराध है। इसलिये हे देव! अब आप मुझे आज्ञा दीजिए। आपने मेरी सभी बात सुधार दी।

प्रभु पद पदमु पराग दोहाई ❀ सत्य सुकृत सुख सीवँ सुहाई
सो करि कहउँ हिये अपने की ❀ रुचि जागत सोवत सपने की

जो सत्य, पुण्य और सुख की सुन्दर सीमा है, स्वामी के चरण-कमलों की उसी रज की दुहाई करके मैं अपने हृदय की रुचि जो जागते, सोते और स्वप्न में भी बनी रहती है, करता हूँ।

सहज सनेहँ स्वामि सेवकाई ❀ स्वारथ छल फल चारि[1] बिहाई
अग्या सम न सुसाहिब सेवा ❀ सो प्रसादु जन पावै देवा

वह रुचि है, कपट, स्वार्थ और चारों फलों को छोड़कर स्वाभाविक प्रेम से स्वामी की सेवा करना। स्वामी की आज्ञा के पालन के समान दूसरी सेवा नहीं है। हे देव! अब वही आज्ञा रूप प्रसाद आपका दास पा जाय।

अस कहि प्रेम बिबस भये भारी ❀ पुलक सरीर बिलोचन बारी
प्रभु पद कमल गहे अकुलाई ❀ समय सनेहु न सो कहि जाई

भरत ऐसा कहकर प्रेम के बहुत ही बस हो गये। शरीर में रोमांच हो आया। आँखों में आँसू आ गये। उन्होंने अकुलाकर स्वामी रामचन्द्रजी के चरण-कमल पकड़ लिये। उस समय को और स्नेह को कहा नहीं जा सकता।

कृपासिंधु सनमानि सुबानी ❀ बैठाये समीप गहि पानी
भरत बिनय सुनि देखि सुभाऊ ❀ सिथिल सनेहँ सभा रघुराऊ

कृपासिन्धु रामचन्द्रजी ने सुन्दर वाणी से भरत का सम्मानकर, हाथ पकड़ कर उन्हें अपने पास बैठा लिया। भरत की विनती सुनकर और उनका स्वभाव देखकर सारी सभा और रघुनाथजी स्नेह से शिथिल हो गये।

---

१. अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष चार फल।

छंद–रघुराउ सिथिल सनेहँ साधु समाज मुनि मिथिला धनी।
मन महुँ सराहत भरत भायप भगति की महिमा घनी॥
भरतहिं प्रसंसत बिबुध बरषत सुमन मानस मलिन से।
तुलसी बिकल सब लोग सुनि सकुचे निसागम नलिन से॥

रामचन्द्रजी, साधुओं का समाज, मुनि, मिथिलापुरी के स्वामी जनकजी स्नेह से शिथिल हो गये। वे अपने-अपने मन में भरत के भाईपन और उनकी दृढ़ भक्ति की अतिशय महिमा को सराहने लगे। देवता भी मलिन मन से भरत की प्रशंसा करते हुए उन पर फूल बरसाने लगे। तुलसीदास कहते हैं—सब लोग यह प्रसंग सुनकर व्याकुल हो गये और ऐसे सकुचा गये, जैसे रात के आने पर कमल।

सो०– देखि दुखारी दीन दुहुँ समाज नरनारि सब।
मघवा महा मलीन मुये मारि मंगल चहत॥३००॥

दोनों समाजों के सभी नर-नारियों को दीन और दुःखी देखकर महा मलिन मन वाला इन्द्र मरे हुओं को मारकर अपना कल्याण चाहता है।

कपट कुचालि सीवँ सुरराजू ❀ पर अकाज प्रिय आपन काजू
काक समान पाकरिपु रीती ❀ छली मलीन कतहुँ न प्रतीती

इन्द्र कपट और कुचाल की सीमा है। दूसरे का काम बिगाड़ना और अपना बनाना उसको प्रिय है। इन्द्र की रीति कौवे के समान है। वह छली और मलिन-मन है। उसका कहीं किसी पर विश्वास नहीं है।

प्रथम कुमत करि कपटु सँकेला ❀ सो उचाटु सबकें सिर मेला
सुर मायाँ सब लोग बिमोहे ❀ राम प्रेम अतिसय न बिछोहे

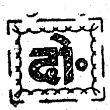
इन्द्र ने पहले तो कुबुद्धि करके कपट को इकट्ठा किया। उस कपट ने सबके सिर पर उचाट रख दिया। फिर देव-माया से उसने सब लोगों को विशेष रूप से मोहित कर दिया। पर रामचन्द्रजी के प्रेम से उनका अत्यंत बिछोह नहीं हुआ।

भय उचाट बस मन थिर नाहीं ❀ छन बन रुचि छन सदन सोहाहीं
दुबिध मनोगति प्रजा दुखारी ❀ सरित सिंधु संगम जनु बारी

भय और उचाट के वश किसी का मन स्थिर नहीं है। क्षण में उनको वन में रहने की इच्छा होती है और क्षण ही में उन्हें घर अच्छा लगने लगता है। मन की इस प्रकार की दुविधा से प्रजा ऐसी दुःखी हो रही है, जैसे नदी और समुद्र के संगम में पानी क्षुब्ध हो जाता है।

दुचित कतहुँ परितोषु न लहहीं ❀ एक एक सन मरमु न कहहीं
लखि हियँ हँसि कह कृपानिधानू ❀ सरिस स्वान मघवान[1] जुबानू[2]

चित्त के दुविधा में पड़ जाने से वे कहीं सन्तोष नहीं पाते हैं। वे एक दूसरे से यह भेद की बात कहते भी नहीं हैं। कृपानिधान रामचन्द्रजी यह दशा देखकर मन ही मन हँसकर कहने लगे—कुत्ता, इन्द्र और नवयुवक (कामी पुरुष) बराबर हैं। [दीपक अलंकार]



भरतु जनकु मुनिजन सचिव साधु सचेत बिहाइ।
लागि देव-माया सबहिं जथा जोगु जनु पाइ॥३०१॥

भरत, जनकजी, मुनिजन, मंत्री और ज्ञानी साधु-संतों को छोड़कर और सब को जो जैसा था, उसे वैसे ही देव-माया लगी।

कृपासिंधु लखि लोग दुखारे ❀ निज सनेहँ सुरपति छल भारे
सभा राउ गुर महिसुर मंत्री ❀ भरत भगति सब कै मति जंत्री

कृपासागर रामचन्द्रजी ने लोगों को अपने स्नेह और इन्द्र के भारी छल से दुःखी देखा। सभा, राजा जनक, गुरु, ब्राह्मण और मन्त्री आदि सभी की बुद्धि को भरत की भक्ति ने जकड़ लिया है।

रामहिं चितवत चित्र लिखे से ❀ सकुचत बोलत बचन सिखे से
भरत प्रीति नति बिनय बड़ाई ❀ सुनत सुखद बरनत कठिनाई

सब लोग रामचन्द्रजी की ओर ऐसे देख रहे हैं, मानो चित्र में लिखे हों। बोलने में ऐसा सकुचाते मानो सिखाये हुए हैं। भरत की प्रीति, नम्रता, विनय और बड़ाई सुनने में तो सुख देने वाली है, पर उसके वर्णन करने में कठिनता है।

जासु बिलोकि भगति लवलेसू ❀ प्रेम मगन मुनिगन मिथिलेसू
महिमा तासु कहै किमि तुलसी ❀ भगति सुभायँ सुमति हियँ हुलसी

---

१. इन्द्र। २. पाणिनीय व्याकरण के अनुसार श्वन्, युवन् और मघवन् शब्दों के रूप भी एक-से होते हैं।

जिनकी भक्ति का लवलेश देखकर मुनिगण और राजा जनकजी प्रेम में मग्न हो गये, उन भरत की महिमा तुलसीदास कैसे कहें ? उनकी भक्ति और सुन्दर भाव के प्रभाव से सुन्दर बुद्धि (कवि के) हृदय में हुलस रही है।

आपु छोटि महिमा बड़ि जानी ❀ कबिकुल कानि[1] मानि सकुचानी
कहि न सकति गुन रुचि अधिकाई ❀ मति गति बाल बचन की नाई

अपने को छोटी और भरत की महिमा को बड़ी जानकर और कवि-वंश की मर्यादा को मानकर वह बुद्धि सकुचा गई। गुणों में उसकी रुचि तो अधिक है, पर उन्हें कह नहीं सकती। बुद्धि की गति बालक के वचनों-जैसी हो गई है।



भरत बिमल जसु बिमल बिधु सुमति चकोर कुमारि।
उदित बिमल जन हृदय नभ एकटक रही निहारि॥

भरत का निर्मल यश निर्मल चन्द्रमा है, और कवि की सुबुद्धि चकोरी है। वह चन्द्रमा भक्तों के हृदयरूपी विमल आकाश में उदय हुआ है। चकोरी उसकी ओर टकटकी लगाकर देखती रह गई है। [अधिक अभेद रूपक अलंकार]

भरत सुभाउ न सुगम निगमहूँ ❀ लघु मति चापलता कबि छमहूँ
कहत सुनत सति भाउ भरत को ❀ सीय राम पद होइ न रत[2] को

भरत के स्वभाव का वर्णन वेद के लिये भी सुगम नहीं है। कवि लोग मेरी तुच्छ बुद्धि की चञ्चलता को क्षमा करें। भरत का सद्भाव कहते और सुनते हुये कौन मनुष्य सीताराम के चरणों में अनुरक्त न हो जायगा ?

सुमिरत भरतहिं प्रेमु राम को ❀ जेहि न सुलभु तेहि सरिस बाम[3] को
देखि दयाल दसा सबही की ❀ राम सुजान जानि जन[4] जी की

भरत का स्मरण करते ही रामचन्द्रजी का प्रेम जिसको सुलभ न हो जाय, उसके बराबर बाम (अभागा) और कौन होगा ? दयालु और सुजान रामचन्द्रजी ने सभी की दशा देखकर और भक्त भरत के हृदय की बात जानकर,

धरम धुरीन धीर नयनागर ❀ सत्य सनेह सील सुख सागर
देसु कालु लखि समउ समाजू ❀ नीति प्रीति पालक रघुराजू

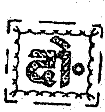
धर्म-धुरन्धर, धीर, नीति में निपुण, सत्य, स्नेह, शील और सुख के समुद्र,

१. मर्यादा। २. अनुरक्त। ३. अभागा। ४. सेवक, भक्त।

नीति और प्रीति के पालने वाले रघुनाथजी देश, काल, अवसर और समाज को देखकर,

बोले बचन बानि सरबसु से ❀ हित परिनाम सुनत ससि रसु[1] से
तात भरत तुम्ह धरम धुरीना ❀ लोक बेद बिद प्रेम प्रबीना

वाणी के सर्वस्व-जैसे वचन बोले, जो परिणाम में हितकारी थे और सुनने में अमृत-जैसे थे। हे तात भरत ! तुम धर्म की धुरी को धारण करने वाले हो, लोक और वेद दोनों के जानने वाले और प्रेम में प्रवीण हो,



करम बचन मानस बिमल तुम समान तुम्ह तात।
गुर समाज लघु बंधु गुन कुसमयँ किमि कहि जात॥

हे तात ! कर्म से, वचन से और मन से निर्मल तुम्हारे समान तुम्हीं हो। बड़ों के समाज में, और इस समय में, छोटे भाई के गुण किस तरह कहे जा सकते हैं। [अनन्वय अलंकार]

जानहु तात तरनि कुल रीती ❀ सत्यसंध पितु कीरति प्रीती
समउ समाजु लाज गुरुजन की ❀ उदासीन हित[2] अनहित[3] मन की

हे तात ! तुम सूर्यवंश की रीति और सत्य प्रतिज्ञा वाले पिता की कीर्त्ति और प्रीति को; समय, समाज और गुरुजनों की लज्जा को तथा उदासीन, मित्र और शत्रु सब के मन की बात को भी जानते हो।

तुम्हहिं बिदित सबही कर करमू ❀ आपन मोर परम हित धरमू
मोहि सब भाँति भरोस तुम्हारा ❀ तदपि कहउँ अवसर अनुसारा

तुमको सबके कर्म और अपना और मेरा परम हितकारी धर्म भी मालूम है। यद्यपि मुझे सब प्रकार से तुम्हारा भरोसा है, तथापि मैं समय के अनुसार कुछ कहता हूँ।

तात तात बिनु बात हमारी ❀ केवल गुर कुल कृपाँ सँभारी
नतरु[4] प्रजा पुरजन परिवारू ❀ हमहिं सहित सबु होत खुआरू[5]

हे तात ! पिताजी के बिना हमारी बात केवल गुरुवंश की कृपा ही ने सम्हाल रक्खी है; नहीं तो हमारे समेत प्रजा, नगरवासी, कुटुम्ब-परिवार सभी बर्बाद हो जाते।

१. अमृत। २. मित्र। ३. शत्रु। ४. नहीं तो। ५. नष्ट।

जौं बिनु अवसर अथवँ दिनेसू ❀ जग केहि कहहु न होइ कलेसू
तस उतपात तात बिधि कीन्हा ❀ मुनि मिथिलेस राखु सबु लीन्हा

अस्त होने का समय हुये बिना ही यदि सूर्य अस्त हो जाय, तो भला जगत् में किसको क्लेश न होगा ? हे तात ! वैसा ही उत्पात विधाता ने किया है। पर मुनि महाराज ने तथा मिथिलेश्वर ने सबको बचा लिया।

दो० राज काज सब लाज पति धरम धरनि धन धाम।
गुरु प्रभाउ पालिहि सबहिं भल होइहि परिनाम ॥

राज्य का सब काम, लज्जा, प्रतिष्ठा, धर्म, पृथ्वी, धन, घर, सबकी रक्षा गुरु महाराज का प्रभाव करेगा और परिणाम शुभ होगा।

सहित समाज तुम्हार हमारा ❀ घर बन गुर प्रसाद रखवारा
मातु पिता गुरु स्वामि निदेसू[1] ❀ सकल धरम धरनीधर सेसू

घर में तथा वन में समाज-सहित हमारा और तुम्हारा गुरु महाराज का प्रसाद ही रक्षक है। माता, पिता, गुरु और स्वामी की आज्ञा-पालन करना समस्त धर्मरूपी पृथ्वी को धारण करने में शेष के समान है।

सो तुम्ह करहु करावहु मोहू ❀ तात तरनि कुल पालक होहू
साधक एक सकल सिधि देनी ❀ कीरति सुगति भूति मय बेनी

हे तात ! तुम वही करो और मुझसे भी कराओ, तथा सूर्यकुल के रक्षक बनो। साधक के लिये यह एक ही साधना सब सिद्धियों की देने वाली है। वह कीर्त्ति, सद्गति और ऐश्वर्यमयी त्रिवेणी है।

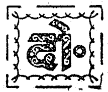
सो बिचारि सहि संकटु भारी ❀ करहु प्रजा परिवारु सुखारी
बाँटी बिपति सबहिं मोहि भाई ❀ तुमहिं अवधि भरि बड़ि कठिनाई

यह विचारकर, भारी संकट सहकर भी तुम प्रजा और परिवार को सुखी करो। हे भाई ! मेरी विपत्ति सभी ने बाँट ली है। परन्तु तुम्हें तो १४ वर्ष तक बड़ी कठिनाई है।

जानि तुम्हहि मृदु कहहुँ कठोरा ❀ कुसमयँ तात न अनुचित मोरा
होहिं कुठाँय[2] सुबंधु सहाये ❀ ओड़ियहि हाथ असनिहु[3] के घाये

१. आज्ञा। २. बुरे अवसर पर। ३. बज्र।

हे तात! मैं तुमको कोमल जानकर भी कठोर वचन कह रहा हूँ। यह कुसमय है, इसमें मेरे लिये अनुचित नहीं है। अच्छे भाई ही कुठौर (कुअवसर) में सहायक होते हैं। जैसे बज्र की चोट के समय हाथ ही आड़े आता है। [दृष्टान्त अलंकार]



सेवक कर पद नयन से मुख सों साहिबु होइ।
तुलसी प्रीति कि रीति सुनि सुकबि सराहहिं सोइ॥

सेवक तो हाथ, पैर और आँखों-जैसा और स्वामी मुख जैसा हो। तुलसी-दास कहते हैं कि इसी तरह प्रीति की रीति सुनकर सुकवि उसकी सराहना करते हैं।

सभा सकल सुनि रघुबर बानी ❁ प्रेम पयोधि अमिअँ जनु सानी
सिथिल समाजु सनेह समाधी ❁ देखि दसा चुप सारद साधी

सारी सभा ने रघुनाथजी की वाणी सुनकर जो मानो प्रेम के समुद्र से निकले हुये अमृत में सनी हुई थी, सारा समाज शिथिल हो गया था। सबको प्रेम-समाधि लग गई। यह दशा देखकर सरस्वती ने चुप साध ली।

भरतहिं भयेउ परम संतोषू ❁ सन्मुख स्वामि बिमुख दुख दोषू
मुखु प्रसन्न मन मिटा बिषादू ❁ भा जनु गूँगेहि गिरा प्रसादू

भरत को परम सन्तोष हुआ। स्वामी के अनुकूल होते ही दुःख और दोषों ने मुँह मोड़ लिया। उनका मुख प्रसन्न हो गया और मन के विषाद मिट गये। मानो गूँगे पर सरस्वती की कृपा हो गई।

कीन्ह सप्रेम प्रनामु बहोरी ❁ बोले पानि पंकरुह[1] जोरी
नाथ भयउ सुखु साथ गए को ❁ लहेउँ लाहु जग जनमु भये को

भरत ने फिर प्रेमपूर्वक प्रणाम किया और कर-कमलों को जोड़कर वे बोले—हे नाथ! मुझे आपके साथ जाने का सुख मिल गया और मैंने जगत् में जन्म लेने का लाभ भी पा लिया।

अब कृपाल जस आयसु होई ❁ करौं सीस धरि सादर सोई
सो अवलंब देउ मोहिं देई[2] ❁ अवधि पारु पावौं जेहि सेई

हे कृपालु! अब जैसी आज्ञा हो, उसी को मैं सिर पर धरकर आदर के साथ

१. कमल। २. दीजिये।

करूँ। हे देव! आप मुझे वह अवलम्बन दीजिये, जिसकी सेवा कर मैं अवधि का पार पा जाऊँ।

दो० देव देव अभिषेक हित गुर अनुसासनु पाइ।
आनेउँ सब तीरथ सलिलु तेहि कहँ काह रजाइ॥

हे देव! गुरुजी की आज्ञा पाकर स्वामी (आप) के अभिषेक के लिये मैं सब तीर्थों का जल लेता आया हूँ। उसके लिये क्या आज्ञा होती है?

एकु मनोरथु बड़ मन माहीं ❀ सभयँ सकोच जात कहि नाहीं
कहहु तात प्रभु आयसु पाई ❀ बोले बानि सनेह सुहाई

एक और बड़ा मनोरथ मेरे मन में है। पर भय और संकोच के कारण वह मुझसे कहा नहीं जाता। तब रामचन्द्रजी ने कहा—हे भाई! कहो। तब प्रभु की आज्ञा पाकर भरत स्नेह-भरी वाणी बोले—

चित्रकूट सुचि थल तीरथ बन ❀ खग मृग सरसरि निर्झर गिरि गन
प्रभु पद अंकित अवनि बिसेषी ❀ आयसु होइ त आवउँ देखी

आज्ञा हो तो चित्रकूट के पवित्र स्थान, तीर्थ, वन, पक्षी, पशु, तालाब, नदी, झरने, पहाड़ों के समूह और विशेषकर प्रभु के चरणों के चिन्ह जिस पर हो गये हैं, वह भूमि देख आऊँ।

अवसि अत्रि आयसु सिर धरहू ❀ तात बिगत भय कानन चरहू[1]
मुनि प्रसादु बन मंगलदाता ❀ पावन परम सुहावन भ्राता

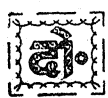
रामचन्द्रजी ने कहा—हे तात! अत्रि ऋषि की आज्ञा सिर धरकर अवश्य ही तुम निर्भय होकर वन में विचरण करो। हे भैया! मुनि के प्रसाद से वन मंगलों का देने वाला, पवित्र और अत्यन्त सुहावना है।

रिषि नायकु जहँ आयसु देहीं ❀ राखेहु तीरथु जलु थल तेहीं
सुनि प्रभु बचन भरत सुखु पावा ❀ मुनि पद कमल मुदित सिरु नावा

जहाँ ऋषिराज अत्रिजी आज्ञा दें, उसी जगह तीर्थों का जल स्थापित कर देना। प्रभु रामचन्द्रजी के वचन सुनकर भरत ने सुख पाया और प्रसन्नतापूर्वक मुनि के चरण-कमलों में सिर नवाया।

---

१. विचरण करो।



भरत राम संवादु सुनि सकल सुमंगल मूल ।
सुर स्वारथी सराहि कुल बरषत सुरतरु फूल ।।३०७

समस्त सुन्दर मंगलों का मूल भरत और रामचन्द्र का संवाद सुनकर स्वार्थी देवगण सूर्यकुल की बड़ाई करके कल्पवृक्ष के फूल बरसाने लगे।

धन्य भरत जय राम गोसाईं ❀ कहत देव हरषत बरिआईं
मुनि मिथिलेस सभाँ सब काहू ❀ भरत बचन सुनि भयउ उछाहू

भरत धन्य है, स्वामि रामचन्द्रजी की जय हो, देवगण ऐसा कहकर अत्यधिक हर्षित होने लगे। भरत का वचन सुनकर वशिष्ठजी, जनकजी और सभा में उपस्थित सभी को बड़ा आनन्द हुआ।

भरत राम गुन ग्राम सनेहू ❀ पुलकि प्रसंसत राउ बिदेहू
सेवक स्वामि सुभाउ सुहावन ❀ नेमु पेमु अति पावन पावन

राजा जनकजी पुलकित-शरीर होकर भरत और रामचन्द्रजी के गुणसमूह तथा स्नेह की प्रशंसा कर रहे हैं। उन्होंने कहा—सेवक और स्वामी दोनों का स्वभाव सुन्दर है। इनके नियम और प्रेम पवित्र को भी अत्यन्त पवित्र करनेवाले हैं।

मति अनुसार सराहन लागे ❀ सचिव सभासद सब अनुरागे
सुनि सुनि राम भरत संबादू ❀ दुहुँ समाज हियँ हरषु बिषादू

मन्त्री और सब सभासद प्रेम-मुग्ध होकर अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार सराहना करने लगे। रामचन्द्रजी और भरत का संवाद सुन-सुनकर दोनों समाजों के हृदयों में हर्ष और विषाद दोनों हुए।

राम मातु दुखु सुखु सम जानी ❀ कहि गुन राम प्रबोधीं रानी
एक कहहिं रघुबीर बड़ाई ❀ एक सराहत भरत भलाई

रामचन्द्रजी की माता कौशल्या ने दुःख और सुख को समान जानकर रामचन्द्रजी के गुण कहकर अन्य रानियों को धीरज बँधाया। कोई तो रघुनाथजी की बड़ाई की चर्चा कर रहे हैं, कोई भरत के अच्छेपन की सराहना करते हैं।



अत्रि कहेउ तब भरत सन[1] सैल समीप सुकूप ।
राखिअ तीरथ तोय[2] तहँ पावन अमिअ अनूप ॥

---

१. से। २. जल।

तब अत्रि मुनि ने भरत से कहा—पर्वत के पास ही एक सुन्दर कुआँ है। इस पवित्र अनुपम और अमृत-जैसे तीर्थों के जल को वहीं स्थापित कर दीजिये।

भरत अत्रि अनुसासन पाई ❀ जल भाजन सब दिये चलाई
सानुज आपु अत्रि मुनि साधू ❀ सहित गये जहँ कूप अगाधू

भरत ने अत्रि मुनि की आज्ञा पाकर जल के सब पात्र भेज दिये और शत्रुघ्न, अत्रि मुनि तथा अन्य साधु-संतों-सहित वहाँ गये, जहाँ वह अथाह कुआँ था।

पावन पाथ[1] पुन्य थल राखा ❀ प्रमुदित प्रेम अत्रि अस भाखा
तात अनादि सिद्ध थल एहू ❀ लोपेउ काल बिदित नहिं केहू[2]

वह पवित्र जल उस पुण्य-स्थल में रख दिया गया। अत्रि ऋषि ने प्रेम से आनन्दित होकर ऐसा कहा—हे तात! यह अनादि सिद्ध-स्थल है। काल-क्रम से यह लोप हो गया था। किसी को पता नहीं था।

तब सेवकन्ह सरस थलु देखा ❀ कीन्ह सुजल हित कूप बिसेषा
बिधि बस भयउ बिस्व उपकारू ❀ सुगम अगम अति धरम बिचारू

तब सेवकों ने सुन्दर जलमय स्थान देखकर उस श्रेष्ठ तीर्थ-जल के लिए विशेष कुआँ बना लिया। दैवयोग से विश्व-भर का उपकार हो गया। धर्म का विचार जो अगम था, अति सुगम हो गया।

भरत कूप अब कहिहहिं लोगा ❀ अति पावन तीरथ जल जोगा
प्रेम सनेम निमज्जत प्रानी ❀ होइहहिं बिमल करम मन बानी

अब इसको लोग भरत-कूप कहेंगे। तीर्थों के जल-योग से यह अत्यन्त ही पवित्र हो गया। जो प्राणी इसमें प्रेम-पूर्वक नियम से स्नान करेंगे, वे कर्म, मन और वाणी से निर्मल हो जायँगे।

दो० **कहत कूप महिमा सकल गये जहाँ रघुराउ।**
अत्रि सुनायउ रघुबरहिं तीरथ पुन्य प्रभाउ ॥३०९॥

सब लोग उस कूप की महिमा कहते-कहते वहाँ गये जहाँ रघुनाथजी थे। रामचन्द्रजी को अत्रि ने उस तीर्थ का पुण्य प्रभाव सुनाया।

---

१. जल। २. किसी को।

कहत धरम इतिहास सप्रीती ❀ भयेउ भोरु निसि सो सुख बीती
नित्य निबाहि भरत दोउ भाई ❀ राम अत्रि गुर आयसु पाई

प्रेम-पूर्वक धार्मिक इतिहासों को कहते-कहते वह रात सुख से बीत गई और सवेरा हो गया। भरत-शत्रुघ्न दोनों भाई नित्य-क्रिया करके रामचन्द्रजी, अत्रि और गुरुजी की आज्ञा पाकर,

सहित समाज साज सब सादें ❀ चले राम बन अटन[1] पयादें
कोमल चरन चलत बिनु पनहीं[2] ❀ भइ मृदु भूमि सकुचि मन मनहीं

समाज-सहित मामूली साज से राम के बन में विचरण करने के लिए पैदल ही चले। कोमल चरणों से बिना जूते के भरत चल रहे हैं। यह देखकर पृथ्वी मन ही मन सकुचाकर कोमल हो गई।

कुस कंटक काँकरीं कुराईं[3] ❀ कटुक कठोर कुबस्तु दुराईं
महि मंजुल मृदु मारग कीन्हे ❀ बहत समीर त्रिबिध सुख लीन्हे

कुश, काँटे, कंकड़ी, दरारे आदि कड़वी, कठोर, बुरी चीज़ों को छिपाकर पृथ्वी ने सुन्दर कोमल मार्ग कर दिये। सुखों को साथ लेकर शीतल, मन्द, सुगन्ध पवन चलने लगा।

सुमन बरषि सुर घन करि छाहीं ❀ बिटप फूलि फल तृन मृदुताहीं
मृग बिलोकि खग बोलि सुबानी ❀ सेवहिं सकल राम प्रिय जानी

देवता फूल बरसाकर, बादल छाया करके, वृक्ष फूल-फल देकर, घास कोमल मार्ग करके, मृग देखकर, पक्षी सुन्दर वाणी बोलकर, भरत को रामचन्द्रजी के प्यारे जानकर उनकी सेवा करने लगे।

दो० **सुलभ सिद्धि सब प्राकृतहु[4] राम कहत जमुहात।**
राम प्रान प्रिय भरत कहुँ यह न होइ बड़ि बात।३१०।

जब एक साधारण भी मनुष्य जम्हाई लेते हुए राम कह दे, उसके लिए सब सिद्धियाँ सुलभ हो जाती हैं, तब रामचन्द्रजी के प्राणप्यारे भरत के लिये यह कोई बड़ी बात नहीं।

एहि बिधि भरतु फिरत बन माँही ❀ नेमु प्रेमु लखि मुनि सकुचाहीं
पुन्य जलास्रय भूमि बिभागा ❀ खग मृग तरु तृन गिरि बन बागा

१. घूमने। २. जूता। ३. दरारा। ४. साधारण जनों को।

इस प्रकार भरत बन में फिर रहे हैं। उनके नियम और प्रेम को देखकर मुनि लोग भी लजा जाते हैं। पवित्र जलाशय, भूखंड, पक्षी, पशु, वृक्ष, तृण, पहाड़, जंगल और बगीचे,

चारु बिचित्र पबित्र बिसेषी ❀ बूझत भरतु दिब्य सब देखी
सुनि मन मुदित कहत रिषिराऊ ❀ हेतु नाम गुन पुन्य प्रभाऊ

सब विशेषरूप से सुन्दर, विचित्र, पवित्र और दिव्य देखकर भरत पूछते हैं। उनका प्रश्न सुनकर ऋषिराज अत्रि मुनि मन में आनन्दित होकर उनके कारण, नाम, गुण, पुण्य और प्रभाव का वर्णन करते हैं।

कतहुँ निमज्जन[1] कतहुँ प्रनामा ❀ कतहुँ बिलोकत मन अभिरामा
कतहुँ बैठि मुनि आयसु पाई ❀ सुमिरत सीय सहित दोउ भाई

भरत कहीं स्नान करते हैं, कहीं प्रणाम करते हैं, कहीं मनोहर स्थानों के दर्शन करते हैं। कहीं अत्रि ऋषि की आज्ञा पाकर बैठ जाते हैं, और सीता-सहित राम-लक्ष्मण को स्मरण करते हैं।

देखि सुभाऊ सनेह सुसेवा ❀ देहिं असीस मुदित बनदेवा
फिरहिं गए दिनु पहर अढ़ाई ❀ प्रभु पद कमल बिलोकहिं आई

भरत का स्वभाव, स्नेह और सुन्दर सेवा-भाव को देखकर बन-देवता प्रसन्न होकर उन्हें आशीर्वाद देते हैं। वे ढाई पहर दिन चढ़ने तक फिरते हैं। फिर लौटकर रामचन्द्रजी के चरण-कमलों के दर्शन करते हैं।

दो०— देखे थल तीरथ सकल भरत पाँच दिन माँझ।
कहत सुनत हरिहर सुजसु गयेउ दिवसु भइ साँझ।३११

भरत ने पाँच दिनों में सब तीर्थ-स्थल देखे। पाँचवें दिन विष्णु और महादेव का सुन्दर यश कहते-कहते दिन बीत गया। साँझ हो गई।

भोर[2] न्हाइ सब जुरा समाजू ❀ भरत भूमिसुर तेरहुति राजू
भल दिन आजु जानि मन माहीं ❀ राम कृपाल कहत सकुचाहीं

छठे दिन सवेरे स्नानकर भरत, ब्राह्मण लोग और जनक जी तथा सारा समाज जुटा। आज सबको विदा करने के लिये अच्छा दिन है, यह मन में जानकर भी कृपालु रामचन्द्रजी कहने में सकुचा रहे हैं।

---

१. नहाते। २. सवेरे।

गुर नृप भरत सभा अवलोकी ❀ सकुचि राम फिरि अवनि बिलोकी
सील सराहि सभा सब सोची ❀ कहुँ न राम सम स्वामि सँकोची

रामचन्द्रजी ने गुरु, भरत, जनकजी और सभी सभा की ओर देखा, किन्तु फिर संकोच कर, जमीन की ओर दृष्टि कर ली। सभा रामचन्द्रजी के शील की बड़ाई करके सोचती है कि रामचन्द्रजी के समान संकोची स्वामी कहीं नहीं है।

भरत सुजान राम रुख देखी ❀ उठि सप्रेम धरि धीर बिसेषी
करि दंडवत कहत कर जोरी ❀ राखी नाथ सकल रुचि मोरी

सुजान भरत रामचन्द्रजी का रुख देखकर, प्रेम-सहित उठकर, विशेष धीरज धारणकर दण्डवत् करके हाथ जोड़कर कहने लगे—हे नाथ! आपने मेरी सभी रुचियाँ रक्खीं।

मोहि लगि सहेउ सबहि संतापू ❀ बहुत भाँति दुखु पावा आपू
अब गोसाइँ मोहि देउ रजाई ❀ सेवउँ अवध अवधि भरि जाई

मेरे लिए सबने सन्ताप सहा और आपने भी बहुत तरह से दुःख पाया। हे गोसाईं! अब मुझे आप आज्ञा दीजिए। मैं जाकर अवधि (१४ वर्ष) पूर्ण होने तक अवध-सेवन करूँ।

दो०—जेहि उपाय पुनि पायँ जनु देखै दीनदयाल।
सो सिख देइअ अवधि लगि कोसलपाल कृपाल॥३१२

हे दीनदयाल! कोशलदेश के पालक कृपालु! अवधि तक के लिए मुझे वही शिक्षा दीजिए, जिस उपाय से यह दास फिर चरणों का दर्शन करे।

पुरजन परिजन प्रजा गोसाईं ❀ सब सुचि सरस सनेहँ सगाईं
राउर बदि भल भव दुख दाहू ❀ प्रभु बिनु बादि परम पद लाहू

हे स्वामी! आपका कहाकर तो अयोध्यानिवासी, कुटुम्बी, प्रजा सभी पवित्र और रस से युक्त हैं। आपके लिये संसार के दुःखों में जलना भी अच्छा है; पर प्रभु (आप) के बिना परम-पद (मोक्ष) का लाभ भी व्यर्थ है।

स्वामि सुजानु जानि सब ही की ❀ रुचि लालसा रहनि जन जी की
प्रनतपालु पालहिं सब काहू ❀ देउ दुहूँ दिसि ओर[1] निबाहू

हे स्वामी! आप सुजान हैं। सभी के हृदय की और मुझ सेवक के जी की

१. अंत।

रुचि, लालसा और रहनि जानते हैं, आप प्रणतपाल हैं, सबके रक्षक हैं ! हे देव ! आप दोनों ओर का निर्वाह अंत तक करेंगे।

अस मोहि सब बिधि भूरि भरोसो ❀ किए बिचारु न सोच खरो सो
आरति मोर नाथ कर छोहू ❀ दुहुँ मिलि कीन्ह ढीठ हठि मोहू

मुझे सब प्रकार से ऐसा बड़ा भरोसा है। विचार करने पर ज़रा-सा भी सोच नहीं रह जाता। मेरी दीनता और स्वामी का स्नेह दोनों ने मिलकर मुझे जबरदस्ती ढीठ बना दिया है।

यह बड़ दोषु दूरि करि स्वामी ❀ तजि सकोच सिखइअ अनुगामी
भरत बिनय सुनि सबहि प्रसंसी ❀ खीर नीर बिबरन गति हंसी

हे स्वामी ! इस बड़े दोष को दूर करके, संकोच छोड़कर मुझ अनुचर को शिक्षा दीजिये। जिस तरह दूध और पानी को अलग-अलग करने की गति हंस में होती है, वैसी ही गति वाले भरत की विनती सुनकर उसकी सबने प्रशंसा की।

दो०— दीनबंधु सुनि बंधु के बचन दीन छलहीन।
देस काल अवसरु सरिस बोले रामु प्रबीन॥३१३॥

दीनबन्धु और परम चतुर रामचन्द्रजी अपने भाई के दीन और निष्कपट वचन सुनकर देश, काल और अवसर के अनुकूल वचन बोले—

तात तुम्हारि मोरि परिजन की ❀ चिंता गुरुहिं नृपहिं घर बन की
माथे पर गुरु मुनि मिथिलेसू ❀ हमहिं तुम्हहिं सपनेहुँ न कलेसू

हे तात ! तुम्हारी, मेरी, परिवार की, घर और वन की सारी चिन्ता गुरुजी और महाराज जनकजी को है। जब माथे पर गुरु वशिष्ठजी, मुनि विश्वामित्रजी और मिथिला-नरेश हैं, तब हमें-तुम्हें स्वप्न में भी क्लेश नहीं है।

मोर तुम्हार परम पुरुषारथु ❀ स्वारथु सुजसु धरमु परमारथु
पितु आयसु पालिअ दुहुँ भाई ❀ लोक बेद भल भूप भलाई

मेरा और तुम्हारा परम पुरुषार्थ, स्वार्थ, सुयश और धर्म इसी में है कि हम दोनों भाई पिता की आज्ञा का पालन करें। लोक और वेद में भले रहने ही में राजा की भलाई है।

गुरु पितु मातु स्वामि सिख पालें ❀ चलेहु कुमग पग परहिं न खाले[1]
अस बिचारि सब सोच बिहाई ❀ पालहु अवध अवधि भरि जाई

हे भरत! गुरु, पिता, माता और स्वामी की आज्ञा का पालन करने से कुमार्ग पर भी चलने से पाँव गड्ढे में नहीं पड़ता। ऐसा विचारकर और सब सोच छोड़कर अवधि भर जाकर अयोध्या का पालन करो।

देसु कोसु परिजन परिवारू ❀ गुरु पद रजहिं लाग छरुभारू
तुम्ह मुनि मातु सचिव सिखमानी ❀ पालेहु पुहुमि[2] प्रजा रजधानी

देश, खजाना, कुटुम्ब-परिवार आदि सबकी जिम्मेदारी तो गुरुजी के चरणों की रज पर है। तुम तो गुरुजी, माताओं और मन्त्रियों की शिक्षा मानकर पृथ्वी, प्रजा और राजधानी की रक्षा-भर करते रहना।



मुखिआ मुखु सो चाहिए खान पान कहुँ एक।
पालइ पोषइ सकल अँग तुलसी सहित बिबेक॥३१४

तुलसीदास कहते हैं—मुखिया मुख के समान होना चाहिये, जो खाने-पीने के लिये तो एक है, परन्तु विवेक-सहित सब अंगों का पालन-पोषण करता है।

राज धरम सरबसु एतनोई ❀ जिमि मन माँह मनोरथ गोई
बंधु प्रबोधु कीन्ह बहु भाँती ❀ बिनु अधार मन तोषु न साँती

राज-धर्म का सार भी इतना ही है, जैसे मन के भीतर मनोरथ छिपा रहता है। रामचन्द्रजी ने बहुत तरह से भाई भरत को समझाया, पर भरत को बिना कोई आधार पाये न मन में सन्तोष ही हुआ, न शान्ति ही मिली।

भरत सील गुरु सचिव समाजू ❀ सकुच सनेह बिबस रघुराजू
प्रभु करि कृपा पाँवरी[3] दीन्हीं ❀ सादर भरत सीस धरि लीन्हीं

भरत के शील और गुरु, मन्त्री तथा समाज के संकोच और स्नेह से विवश होकर रामचन्द्रजी ने कृपाकर खड़ाऊँ दी। भरत ने आदर के साथ उसको मस्तक पर रख लिया।

चरन पीठ करुनानिधान के ❀ जनु जुग जामिक[4] प्रजा प्रान के
संपुट भरत सनेह रतन के ❀ आखर जुग जनु जीब जतन के

१. गड्ढे में। २. पृथ्वी। ३. खड़ाऊँ। ४. पहरेदार।



करुणानिधान रामचन्द्रजी के दोनों खड़ाऊँ मानो प्रजा के प्राणों की रक्षा के लिये दो पहरेदार थे। भरत के प्रेमरूपी रत्न के लिए मानो वे दो डब्बे हैं और जीव के साधन के लिये मानो रामनाम के दो अक्षर हैं।

कुल कपाट कर कुसल करम के ❀ बिमल नयन सेवा सुधरम के
भरत मुदित अवलंब लहे तें ❀ अस सुख जस सिय राम रहे तें

दोनों खड़ाऊँ सूर्यकुल के मानो दो किवाड़ हैं। उत्तम कर्मों के लिये मानो वे दो हाथ हैं। सेवा और सुधर्म के निर्मल नेत्र हैं। आधार मिल जाने से भरत प्रसन्न हो गये। उन्हें ऐसा ही सुख हुआ, जैसा सीताराम के रहने से होता।

दो०— माँगेउ बिदा प्रनाम करि राम लिये उर लाइ।
लोग उचाटे अमरपति कुटिल कुअवसर पाइ ॥३१५

भरत ने प्रणाम करके विदा माँगी। रामचन्द्रजी ने भरत को छाती से लगा लिया। उधर कुटिल इन्द्र ने मौका पाकर लोगों के चित्त उचाट कर दिये।

सो कुचालि सब कहँ भइ नीकी ❀ अवधि आस सम जीवनि जीकी
नतरु लखन सिय राम बियोगा ❀ हहरि मरत सब लोग कुरोगा

वह कुचाल भी सबके लिये हितकर हो गई। अवधि (१४ वर्ष) की आशा के समान वह जीने के लिये संजीवनी हो गई। नहीं तो लक्ष्मण, सीता और रामचन्द्रजी के वियोगरूपी दुष्ट रोग से सब लोग हाय-हाय करके मर जाते।

राम कृपाँ अवरेव[1] सुधारी ❀ बिबुध धारि[2] भइ गुनद गोहारी
भेंटत भुज भरि भाइ भरत सो ❀ राम प्रेम रसु कहि न परत सो

रामचन्द्रजी की कृपा ने सारी उलझनें सुधार दीं। देवताओं की सेना जो लूटने आई थी वह गुणदायक हो गई। भुजाओं में भरकर भाई भरत से रामचन्द्रजी भेंट कर रहे हैं। उस समय रामचन्द्रजी का वह प्रेम का रस कहते नहीं बनता।

तन मन बचन उमग अनुरागा ❀ धीर धुरंधर धीरजु त्यागा
बारिज लोचन मोचत बारी ❀ देखि दसा सुर सभा दुखारी

श्रीराम के शरीर, मन और वचन तीनों में अनुराग उमड़ पड़ा। धैर्य-धारियों में धुरन्धर रामचन्द्रजी ने भी उस समय धैर्य त्याग दिया। वे कमल-

१. उलझन। २. डाकुओं की सेना।

समान नेत्रों से जल बहाने लगे। रामचन्द्रजी की दशा देखकर देवताओं की सभा दुखी हो गई।

मुनिगन गुर धुर धीर जनक से ❀ ग्यान अनल[1] मन कसें कनक[2] से
जे बिरंचि निरलेप उपाये ❀ पदुम पत्र जिमि जग जल जाये

मुनिगण, गुरु और राजा जनक जैसे धीरधुरन्धर, जिनके मन ज्ञानरूपी अग्नि में सोने के समान कसे हुए थे, जिन्हें ब्रह्मा ने निर्लेप ही रचा था, जो जगत्-रूपी जल में कमल के पत्ते की तरह ही पैदा हुये थे,

दो० तेउ बिलोकि रघुबर भरत प्रीति अनूप अपार।
भए मगन मन तन बचन सहित बिराग बिचार ॥३१६

वे भी रामचन्द्र और भरत की अनुपम अपार प्रीति देखकर ज्ञान-वैराग्य-सहित तन, मन, वचन से उस प्रेम में मग्न हो गये।

जहाँ जनक गुरु गति मति भोरी ❀ प्राकृत प्रीति कहत बड़ि खोरी
बरनत रघुबर भरत बियोगू ❀ सुनि कठोर कबि जानिहि लोगू

जहाँ राजा जनक और गुरु वशिष्ठ की भी बुद्धि की गति कुण्ठित हो गई है, वहाँ प्राकृत मनुष्यों की प्रीति से उसकी तुलना करना बड़ा दोष है। रामचन्द्रजी और भरत के वियोग का वर्णन करने में लोग उसे सुनकर कवि को कठोर-हृदय समझेंगे।

सो सकोच रसु अकथ सुबानी ❀ समउ सनेहु सुमिरि सकुचानी
भेंटि भरत रघुबर समुझाए ❀ पुनि रिपुदमन हरषि हियँ लाए

उस संकोच-रस का वर्णन नहीं हो सकता। इसलिए कवि की वह सुन्दर वाणी उस समय के स्नेह को स्मरण कर सकुचा गई। रामचन्द्रजी ने भरत से मिलकर उन्हें समझाया। फिर प्रसन्न होकर शत्रुघ्न को हृदय से लगाया।

सेवक सचिव भरत रुख पाई ❀ निज निज काज लगे सब जाई
सुनि दारुन दुखु दुहूँ समाजा ❀ लगे चलन के साजन साजा

सेवक और मन्त्री भरत का रुख पाकर अपने-अपने काम में लग गये। उसे सुनकर दोनों समाजों में घोर दुख छा गया। वे चलने की तैयारी करने लगे।

---

१. आग। २. सोना।



प्रभु पद पदुम बंदि दोउ भाई ❀ चले सीस धरि राम रजाई
मुनि तापस बनदेव निहोरी ❀ सब सनमानि बहोरि बहोरी

दोनों भाई (भरत-शत्रुघ्न) प्रभु रामचन्द्रजी के चरण-कमलों की वन्दना करके तथा रामचन्द्रजी की आज्ञा शिरोधार्य कर चले। मुनि, तपस्वी और वन-देवताओं से कृतज्ञता प्रकट कर बार-बार सबको विनती की।

दो॰ लखनहिं भेंटि प्रनामु करि सिर धरि सिय पद धूरि।
चले सप्रेम असीस सुनि सकल सुमंगल मूरि ।३१७

लक्ष्मण से मिलकर उन्हें प्रणाम करके और सीता के चरणों की धूलि माथे चढ़ाकर समस्त मंगलों के मूल उन दोनों के आशीर्वाद सुनकर वे प्रेम-सहित चले।

सानुज राम नृपहिं सिर नाई ❀ कीन्हि बहुत बिधि बिनय बड़ाई
देव दयाबस बड़ दुख पायउ ❀ सहित समाज काननहिं आयउ

लक्ष्मण-समेत रामचन्द्र ने राजा जनक को सिर नवाया और उनकी बहुत तरह से विनती तथा बड़ाई की। उन्होंने कहा—हे देव ! दया-वश आपने बहुत ही दुख उठाया। आप समाज-सहित वन में भी आये।

पुर पगु धारिअ देइ असीसा ❀ कीन्ह धीर धरि गवनु महीसा
मुनि महिदेव साधु सनमाने ❀ बिदा किए हरि हर सम जाने

अब आशीर्वाद देकर नगर को पधारिये। यह सुनकर राजा जनकजी धीरज धरकर चल पड़े। फिर रामचन्द्रजी ने मुनि, ब्राह्मण और साधुओं को विष्णु और शिव के समान जानकर, सम्मान करके विदा किया।

सासु समीप गए दोउ भाई ❀ फिरे बंदि पग आसिष पाई
कौशिक[1] बामदेव जाबाली ❀ परिजन पुरजन सचिव सुचाली

फिर दोनों भाई सास के पास गये और उनके चरणों की वन्दना कर आशीर्वाद पाकर लौट आये। फिर विश्वामित्र, वामदेव, जाबालि, कुटुम्बी लोग, नगरनिवासी, शुभ आचरण वाले मन्त्री,

जथा जोगु करि बिनय प्रनामा ❀ बिदा किए सब सानुज रामा
नारि पुरुष लघु मध्य बडेरे ❀ सब सनमानि कृपानिधि फेरे

१. विश्वामित्र।

सबको यथायोग्य विनय प्रणाम करके छोटे भाई लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी ने विदा किया। कृपानिधान रामचन्द्रजी ने सब छोटे, मध्यम और बड़े सभी श्रेणी के स्त्री और पुरुषों को उनका सम्मान करके लौटाया।

दो० **भरत मातु पद बंदि प्रभु सुचि सनेहँ मिलि भेंटि।**
बिदा कीन्ह सजि पालकी सकुच सोच सब मेंटि॥३१८

प्रभु रामचन्द्रजी ने भरत की माता कैकेयी के चरणों की वन्दना कर और पवित्र स्नेह के साथ उनसे मिलकर तथा सब तरह से उनके सारे संकोच और सोच को मिटाकर पालकी सजाकर उन्हें विदा किया।

परिजन मातु पितहि मिलि सीता * फिरी प्रानप्रिय प्रेम पुनीता
करि प्रनामु भेंटी सब सासू * प्रीति कहत कबि हिय न हुलासू

प्राणप्रिय पति रामचन्द्रजी के साथ पवित्र प्रेम रखने वाली सीता परिवार के लोगों और माता-पिता से मिलकर लौट आईं; फिर सब सासुओं को प्रणाम कर गले लगकर उनसे मिलीं। उस समय के प्रेम का वर्णन करते कवि के हृदय में उत्साह नहीं होता।

सुनि सिख अभिमत आसिष पाई * रही सीय दुहुँ प्रीति समाई
रघुपति पटु पालकीं मँगाईं * करि प्रबोधु सब मातु चढ़ाईं

सीता शिक्षा सुनकर, मनचाहा आशीर्वाद पाकर दोनों ओर (नैहर और ससुराल) की प्रीति में समा गईं। तब रामचन्द्रजी ने सुन्दर पालकियाँ मँगवाईं और सब माताओं को आश्वासन देकर उन पर चढ़ा दिया।

बार बार हिलिमिलि दुहुँ भाई * सम सनेह जननी पहुँचाई
साजि बाजि गज बाहन नाना * भूप भरत दल कीन्ह पयाना

दोनों भाइयों ने बार-बार हिल-मिलकर समान प्रेम से माताओं को कुछ दूर तक पहुँचाया। राजा जनक और भरत के दलों ने घोड़े, हाथी आदि अनेकों तरह की सवारियाँ सजाकर प्रस्थान किया।

हृदयँ राम सिय लखन समेता * चले जाहिं सब लोग अचेता
बसह[1] बाजि[2] गज पसु हियँ हारें * चले जाहिं परबस मन मारें

सब लोगों के हृदय में रामचन्द्र, सीता और लक्ष्मण थे। वे अचेत-से

१. बैल। २. घोड़ा।

होकर चले जाते थे। बैल, घोड़े, हाथी आदि पशु हृदय में हारे हुए, पराधीन, मन मारे हुए चले जाते थे।

दो०— गुर गुरतिय पद बंदि प्रभु सीता लखन समेत।
फिरे हरष बिसमय सहित आये परन निकेत॥३१९॥

प्रभु रामचन्द्रजी सीता और लक्ष्मण-समेत गुरु और गुरु-पत्नी के चरणों की वन्दना कर हर्ष और विषाद के साथ पर्णकुटी में लौट आये।

बिदा कीन्ह सनमानि निषादू ❁ चलेउ हृदय बड़ बिरह बिषादू
कोल किरात भिल्ल बनचारी ❁ फेरे फिरे जोहारि जोहारी

फिर निषाद का सम्मानकर उसको विदा किया। वह चला तो सही, पर उसके हृदय में विरह का बड़ा भारी दुख था। फिर कोल, किरात, भील आदि वन-वासी लोगों को रामचन्द्रजी ने लौटाया। वे सब वन्दना कर-करके लौटे।

प्रभु सिय लखन बैठि बट छाहीं ❁ प्रिय परिजन बियोग बिलखाहीं
भरत सनेह सुभाउ सुबानी ❁ प्रिया अनुज सन कहत बखानी

प्रभु रामचन्द्रजी, सीता और लक्ष्मण बड़ की छाया में बैठकर प्रिय परिवार के लोगों के वियोग से बिलख रहे हैं। भरत का स्नेह, स्वभाव और मीठी बोली की बड़ाई कर वे प्रभु पत्नी सीता और अनुज लक्ष्मण से कहने लगे।

प्रीति प्रतीति बचन मन करनी ❁ श्रीमुख राम प्रेम बस बरनी
तेहि अवसर खग मृग जल मीना ❁ चित्रकूट चर अचर मलीना

रामचन्द्रजी ने प्रेम के वश होकर भरत के वचन, मन और कर्म की प्रीति तथा विश्वास का अपने श्रीमुख से वर्णन किया। उस समय पक्षी, पशु, जल की मछलियाँ आदि चित्रकूट के सब चर और अचर जीव खिन्न हो गये।

बिबुध बिलोकि दसा रघुबर की ❁ बरषि सुमन कहि गति घर घर की
प्रभु प्रनामु करि दीन्ह भरोसो ❁ चले मुदित मन डर न खरो[1] सो

रामचन्द्रजी की दशा देखकर देवताओं ने उन पर फूल बरसाकर, अपनी घर-घर की दशा निवेदन की। प्रभु रामचन्द्रजी ने उन्हें प्रणाम कर भरोसा दिया। तब सब प्रसन्न-चित्त चले गये। उनके मन में ज़रा भर भी डर न रहा।

---

१. जरा भर भी।



सानुज सीय समेत प्रभु राजत परन कुटीर।
भगति ग्यान बैराग्य जनु सोहत धरे शरीर ॥३२०॥

प्रभु रामचन्द्रजी छोटे भाई लक्ष्मण और सीता-समेत उस पर्ण-कुटी में ऐसे शोभायमान हो रहे हैं, मानो भक्ति, ज्ञान और वैराग्य शरीर धारण करके शोभित हो रहे हों। [अनुक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार]

मुनि महिसुर गुर भरत भुआलू ❁ राम बिरह सबु साजु बिहालू
प्रभु गुन ग्राम गुनत मन माहीं ❁ सब चुपचाप चले मग जाहीं

मुनि, ब्राह्मण, गुरु, भरत और राजा जनकजी सभी रामचन्द्रजी के विरह में विह्वल हैं। वे सब मन में प्रभु रामचन्द्रजी के गुण-समूहों को याद करते हुये रास्ते में चुपचाप चले जा रहे हैं।

जमुना उतरि पार सब भयऊ ❁ सो बासर बिनु भोजन गयऊ
उतरि देवसरि दूसर बासू ❁ रामसखाँ सब कीन्ह सुपासू

पहले दिन सब यमुना उतरकर पार हुये। वह दिन उन्हें बिना भोजन ही के बीता। दूसरे दिन सबने गङ्गाजी उतरकर मुक़ाम किया। वहाँ रामसखा (गुह) ने सब सुव्यवस्था की।

सई उतरि गोमती नहाए ❁ चौथें दिवस अवधपुर आये
जनकु रहे पुर बासर चारी ❁ राज काज सब साज सँभारी

फिर उन्होंने सई उतर कर गोमती नदी में स्नान किया। चौथे दिन वे अयोध्या जा पहुँचे। जनकजी महाराज चार दिन अयोध्या में रहे और सब राज-काज और सब साज-सामान सम्हालकर,

सौंपि सचिव गुर भरतहि राजू ❁ तेरहुति चले साजि सब साजू
नगर नारि नर गुर सिख मानी ❁ बसे सुखेन राम रजधानी

तथा मंत्री, गुरु और भरत को राज्य सौंपकर, सब साज-सामान ठीक करके वे तिरहुत को चले। नगर के स्त्री-पुरुष सब गुरुजी की शिक्षा मानकर रामचन्द्रजी की राजधानी अयोध्या में सुखपूर्वक रहने लगे।



राम दरस लगि लोग सब करत नेम उपवास।
तजि तजि भूषन भोग सुख जिअत अवधि की आस॥

सब लोग रामचन्द्रजी के दर्शन के लिये नियम और उपवास करने लगे। वे भूषण और भोग-विलासों को छोड़कर अवधि (१४ वर्ष) की आशा पर जी रहे हैं।

सचिव सुसेवक भरत प्रबोधे[1] ❀ निज निज काज पाइ सिख ओधे
पुनि सिख दीन्हि बोलि लघु भाई ❀ सौंपी सकल मातु सेवकाई

भरत ने मंत्री और विश्वासी सेवकों को समझाकर तैयार किया। वे सीख पाकर अपने-अपने काम में लग गये। फिर भरत ने छोटे भाई शत्रुघ्न को बुलाकर सीख दी और सब माताओं की सेवा उनको सौंपी।

भूसुर[2] बोलि भरत कर जोरे ❀ करि प्रनाम बर बिनय निहोरे
ऊँच नीच कारजु भल पोचू ❀ आयसु देब न करब सँकोचू

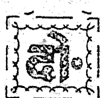
ब्राह्मणों को बुलाकर भरत ने हाथ जोड़ प्रणाम कर बड़ी नम्रता के साथ उनका निहोरा करते हुये कहा—आप लोग छोटा-बड़ा, भला-बुरा जो कुछ भी कार्य हो, उसके लिये आज्ञा दीजियेगा, संकोच न कीजियेगा।

परिजन पुरजन प्रजा बुलाए ❀ समाधानु करि सुबस बसाए
सानुज गे गुर गेहँ बहोरी ❀ करि दंडवत कहत कर जोरी

फिर परिवार के लोगों को, नगर के लोगों को तथा अन्य प्रजा को बुलाकर, उनका समाधान करके, उनको सुखपूर्वक बसाया। फिर छोटे भाई शत्रुघ्न-सहित गुरुजी के घर गये और उन्हें दंडवत् करके हाथ जोड़कर कहने लगे—

आयसु होइ त रहौं सनेमा ❀ बोले मुनि तन पुलकि सपेमा
समुझब कहब करब तुम्ह जोई ❀ धरम सारु जग होइहि सोई

आज्ञा हो, तो मैं नियमपूर्वक रहूँ। यह सुनकर मुनि वशिष्ठजी पुलकित होकर प्रेमपूर्वक बोले—हे भरत ! तुम जो कुछ समझोगे, कहोगे और करोगे, वही जगत् में धर्म का सार होगा।



सुनि सिख पाइ असीस बड़ि गनक[3] बोलि दिनु साधि।
सिंघासन प्रभु पादुका बैठारे निरुपाधि ॥३२२॥

भरत ने यह सुनकर और शिक्षा तथा बड़ा आशीर्वाद पाकर ज्योतिषियों को बुलाया और दिन साधकर (शुभ मुहूर्त्त देखकर) रामचन्द्रजी की पादुकाओं

१. समझाया। २. ब्राह्मण। ३. ज्योतिषी।

को सिंहासन पर निर्विघ्न प्रतिष्ठित कराया।

राम मातु गुर पद सिरु नाई ❀ प्रभु पद पीठ रजायसु पाई
नंदिगाँव करि परन कुटीरा ❀ कीन्ह निवासु धरम धुर धीरा

फिर रामचन्द्रजी की माता कौशल्या और गुरुजी के चरणों में मस्तक नवाकर और प्रभु रामचन्द्रजी की चरण-पादुकाओं की आज्ञा पाकर धर्म धारण करने वाले धीर भरत नन्दिग्राम में पत्तों की कुटी बनाकर, उसी में निवास करने लगे।

जटाजूट सिर मुनिपट धारी ❀ महि खनि[1] कुस साँथरी सँवारी
असन बसन बासन ब्रत नेमा ❀ करत कठिन रिषि धरम सपेमा

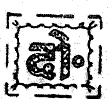
उन्होंने सिर पर जटाजूट और शरीर में मुनियों के (वल्कल) वस्त्र धारण कर, पृथ्वी को खोदकर उसके अन्दर कुश की आसनी बिछाई और वे भोजन, वस्त्र, पात्र, व्रत, नियम आदि सभी बातों में ऋषियों के कठिन धर्म का प्रेम-सहित आचरण करने लगे।

भूषन बसन भोग सुख भूरी ❀ मन तन बचन तजे तिनु तूरी[2]
अवध राजु सुर राजु सिहाई ❀ दसरथ धनु सुनि धनदु[3] लजाई

भरत ने भूषण, वस्त्र और अनेकों प्रकार के सुखों को मन, काया और वचन से तृण तोड़कर (प्रतिज्ञा करके) त्याग दिया। जिस अयोध्या के राज्य को इन्द्र भी सिहाते थे और जहाँ के राजा दशरथ की सम्पत्ति सुनकर कुबेर भी लजा जाते थे,

तेहिं पुर बसत भरत बिनु रागा ❀ चंचरीक[4] जिमि चंपक बागा
रमा बिलासु राम अनुरागी ❀ तजत बमन जिमि जन बड़भागी

उसी अयोध्यापुरी में भरत अनासक्त होकर इस तरह निवास कर रहे हैं, जैसे चंपा के बाग में भौंरा। जो रामचन्द्रजी के प्रेमी हैं, वे बड़भागी पुरुष लक्ष्मी-सम्बन्धी भोगों को इस तरह त्याग देते हैं, जैसे मनुष्य वमन को त्याग देता है।



राम पेम भाजन भरतु बड़े न यहिं करतूति।
चातक हंस सराहिअत टेक बिबेक बिभूति ॥३२३॥

---

१. खोदकर। २. प्रतिज्ञा करके। ३. कुबेर। ४. भौंरा।

फिर भरत तो स्वयं रामचन्द्रजी के प्रेम के पात्र हैं। उनके लिये यह कोई बड़ी बात नहीं। टेक और नीर-क्षीर-विवेचन की विभूति से पपीहे और हंस की भी सराहना की जाती है।

देह दिनहुँ दिन दूबरि होई ❀ घटइ तेजु[1] बल मुख छबि सोई
नित नव राम पेम पनु पीना ❀ बढ़त धरम दलु मनु न मलीना

भरत का शरीर दिन-दिन दुबला होता जाता है। उनका तेज घटता है, पर बल और मुख की कान्ति वैसी ही बनी हुई है। रामचन्द्रजी के प्रेम का प्रण नित्य नवीन और प्रौढ़ होता जाता है। धर्म का दल बढ़ता जाता है। उनका मन उदास नहीं होता।

जिमि जल निघटत सरद प्रकासे ❀ बिलसत बेतस[2] बनज[3] बिकासे
सम दम संजम नियम उपासा ❀ नखत भरत हिय बिमल अकासा

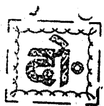
जैसे शरद् ऋतु के प्रकाशित होते ही जल घटता है और बेंत शोभा पाते हैं और कमल विकसित होते हैं। शम, दम, संयम, नियम और उपवास आदि भरत के हृदयरूपी निर्मल आकाश के नक्षत्र हैं।

ध्रुव बिस्वासू अवधि राका सी ❀ स्वामि सुरति सुरबीथि[4] बिकासी
राम पेम बिधु अचल अदोषा ❀ सहित समाज सोह नित चोखा[5]

उस आकाश में विश्वास ही ध्रुवतारा है। वनवास की अवधि (१४ वर्ष) का ध्यान पूर्णिमा-सी है और स्वामी रामजी की स्मृति आकाश-गंगा-सी प्रकाशित हो रही है। रामचन्द्र का प्रेम ही निश्चल और निष्कलंक चन्द्रमा है, वह अपने समाज-सहित (नक्षत्रों-सहित) नित्य सुन्दर सुशोभित है।

भरत रहनि समुझनि करतूती ❀ भगति बिरति गुन बिमल बिभूती
बरनत सकल सुकबि सकुचाहीं ❀ सेस गनेस गिरा गमु[6] नाहीं

भरत की रहनी, समझ, करनी, भक्ति, वैराग्य, निर्मल गुण और ऐश्वर्य का वर्णन करने में सभी सुकवि सकुचाते हैं। क्योंकि वहाँ तो शेष, गणेश और सरस्वती की भी पहुँच नहीं।



नित पूजत प्रभु पाँवरी प्रीति न हृदयँ समाति।
माँगि माँगि आयसु करत राजकाज बहु भाँति॥३२४

१. शरीर की चर्बी। २. बेंत। ३. कमल। ४. आकाश-गंगा। ५. सुन्दर। ६. पहुँच।

वे नित्य रामचन्द्रजी की चरण-पादुकाओं का पूजन करते हैं। प्रेम हृदय में समाता नहीं। पादुकाओं से आज्ञा माँग-माँग करके बहुत भाँति के राज्य-सम्बन्धी कार्य करते हैं।

पुलक गात हियँ सिय रघुबीरू ❀ जीह[1] नामु जप लोचन नीरू
लखन राम सिय कानन बसहीं ❀ भरत भवन बसि तप तनु कसहीं

शरीर पुलकित है। हृदय में सीताराम हैं। जीभ राम-राम जप रही है। नेत्रों में प्रेम के आँसू भरे हैं। लक्ष्मण, राम और सीता तो वन में वास कर रहे हैं परन्तु भरत घर ही में रहकर तपस्या से शरीर को कस रहे हैं।

दोउ दिसि समुझि कहत सब लोगू ❀ सब बिधि भरत सराहन जोगू
सुनि ब्रत नेम साधु सकुचाहीं ❀ देखि दसा मुनिराज लजाहीं

सब लोग दोनों ओर की स्थिति को समझ कर कहते हैं कि भरत सब प्रकार से सराहने योग्य हैं। भरत के व्रत और नियमों को सुनकर साधु-संत भी सकुचा जाते हैं। उनकी दशा देखकर बड़े-बड़े मुनि लजा जाते हैं।

परम पुनीत भरत आचरनू ❀ मधुर मंजु मुद मंगल करनू
हरन कठिन कलि कलुष कलेसू ❀ महा मोह निसि दलन दिनेसू

भरत का आचरण परम पवित्र, मधुर, सुन्दर और आनन्द-मंगलों का करने वाला है। वह कलियुग के कठिन पापों और कलेशों का हरने वाला है। वह महा मोहरूपी रात को नष्ट करने के लिए सूर्य के समान है।

पाप पुंज कुंजर[2] मृगराजू ❀ समन सकल संताप समाजू
जन रंजन भंजन भव भारू ❀ राम सनेह सुधाकर[3] सारू

पापों के समूहरूपी हाथी के लिये वह सिंह है। सारे सन्तापों का नाश करने वाला है। भक्तों को आनन्द देने वाला, संसार के भार (दुःख) का नाश करने वाला तथा रामचन्द्रजी के प्रेमरूपी चन्द्रमा का सार (अमृत) है।

छंद–सिय राम प्रेम पियूष पूरन होत जनमु न भरत को।
मुनि मन अगम जम नियम सम दम बिषम ब्रत आचरत को
दुख दाह दारिद दंभ दूषन सुजस मिस[4] अपहरत को।
कलिकाल तुलसी से सठन्हि हठि राम सनमुख करत को॥

---

१. जीभ। २. हाथी। ३. चन्द्रमा। ४. बहाने।

सीताराम के प्रेमरूपी अमृत से परिपूर्ण भरत का जन्म यदि न होता, तो किस मुनि का मन अगम यम, नियम, शम, दम आदि कठिन व्रतों का आचरण करता ? और सुयश के बहाने से दुःख, ईर्ष्या, दरिद्रता, दम्भ आदि दोषों को कौन हरण करता ? कलिकाल में तुलसीदास जैसे शठों को हठ-पूर्वक श्रीरामजी के सन्मुख कौन करता ?

सो० भरत चरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं ।
सीय राम पद पेमु अवसि होइ भव रस[1] बिरति ॥३२५

तुलसीदासजी कहते हैं—जो भरत के चरित्र को नियम करके आदर-पूर्वक सुनेंगे, सीताराम के चरणों में प्रेम अवश्य होगा और संसारी विषयों से विराग होगा ।

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने अयोध्याकांड
समाप्तः द्वितीयः सोपानः समाप्तः



१, सांसारिक विषय-भोग ।

श्रीगणेशायनमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

रामचरितमानस

तृतीय सोपान

आरण्य-काण्ड

श्लोक

मूलं धर्मतरोर्विवेकजलधेः पूर्णेन्दुमानन्ददं
वैराग्याम्बुजभास्करं ह्यघघनध्वान्तापहं तापहम् ।
मोहाम्भोधरपूगपाटनविधौ स्वः संभवं शङ्करं
वन्दे ब्रह्मकुलं कलङ्कशमनं श्रीरामभूपप्रियम् ॥१॥

धर्मरूपी वृक्ष के मूल, विवेक-रूपी समुद्र के आनन्ददायक पूर्ण चन्द्र, वैराग्य-रूपी कमल के सूर्य, पाप-रूपी घोर अंधकार के दूर करने वाले, तीनों तापों को हरने वाले, मोह-रूपी बादलों के समूह को छिन्न-भिन्न करने के लिये आकाश से उत्पन्न वायुरूप, ब्रह्मा के कुल वाले, कलङ्कनाशक तथा महाराज रामचन्द्रजी के प्रिय श्रीशङ्करजी की मैं वन्दना करता हूँ ।

सान्द्रानन्दपयोदसौभगतनुं पीताम्बरं सुन्दरं
पाणौ बाणशरासनं कटिलसत्तूणीरभारं वरम् ।
राजीवायतलोचनं धृतजटाजूटेन संशोभितं
सीतालक्ष्मणसंयुतं पथिगतं रामाभिरामं भजे ॥२॥

जिनका शरीर जलयुक्त सघन मेघों के समान सुन्दर तथा आनन्दघन है, जो सुन्दर पीला वस्त्र (वल्कल) पहने हैं, जिनके हाथों में बाण और धनुष हैं, कमर उत्तम और भारी तरकस से सुशोभित है, जिनके कमल के समान नेत्र हैं जिनके मस्तक पर जटाजूट सुशोभित है, उन सीता और लक्ष्मण-सहित मार्ग

में चलते हुये अत्यंत सुन्दर राम को मैं भजता हूँ।

सो॰ उमा[1] राम गुन गूढ़ पंडित मुनि पावहिं बिरति।
पावहिं मोह बिमूढ़ जे हरि बिमुख न धरम रति॥

हे पार्वती! रामजी के गुण गूढ़ हैं; पंडित और मुनि उन्हें समझकर लोग वैराग्य प्राप्त करते हैं। पर जो हरि से विमुख हैं और जिनमें धर्म से प्रेम नहीं है, वे महा-मूढ़ मोह को प्राप्त होते हैं। [प्रथम व्याघात अलंकार]

पुर नर भरत प्रीति मैं गाई ❀ मति अनुरूप अनूप सुहाई
अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन ❀ करत जे बन सुर नर मुनि भावन

तुलसीदास कहते हैं कि अयोध्या के निवासियों के और भरत के सुन्दर प्रेम का मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार गान किया। अब देवता, मनुष्य और मुनियों के मन को भाने वाले रामचन्द्रजी के वे अति पवित्र चरित्र सुनो, जिन्हें वे वन में कर रहे हैं।

एक बार चुनि कुसुम[2] सुहाए ❀ निज कर भूषन राम बनाए
सीतहि पहिराए प्रभु सादर ❀ बैठे फटिक सिला पर सुंदर

एक बार सुन्दर फूल चुनकर राम ने अपने हाथों से भाँति-भाँति के गहने बनाये और सुन्दर स्फटिक शिला पर बैठे हुये उन्हें सत्कारपूर्वक सीता को पहनाया।

सुरपति सुत धरि बायस बेषा ❀ सठ चाहत रघुपति बल देखा
जिमि पिपीलिका सागर थाहा ❀ महा मंद मति पावन चाहा

इन्द्र का मूर्ख पुत्र जयंत कौवे का रूप धरकर रामजी का बल देखना चाहता है। जैसे चींटी समुद्र की थाह लेना चाहती हो; अथवा जैसे कोई महा-मूढ़ पवित्रता चाहता हो; वैसा ही वह महा नीच-बुद्धि करना चाहता है।

सीता चरन चोंच हति भागा ❀ मूढ़ मंदमति कारन कागा
चला रुधिर रघुनायक जाना ❀ सींक धनुष सायक संधाना

वह महामूढ़ कौवा अपनी दुष्ट-बुद्धि के कारण सीता के चरण में चोंच मारकर भागा। जब रक्त बह चला, तब रामजी ने जाना और धनुष पर सींक (सरकंडे) का बाण संधान किया।

---

१. पार्वती। २. फूल।

दो० अति कृपालु रघुनायक सदा दीन पर नेह ।
ता सन आइ कीन्ह छलु मूरख अवगुन गेह ॥१॥

रामचन्द्रजी तो बड़े ही कृपालु हैं, दीनों पर सदा स्नेह रखते हैं; उनसे भी उस अवगुणों के घर मूर्ख ने आकर छल किया ।

प्रेरित मन्त्र ब्रह्मसर धावा ❀ चला भाजि बायस भय पावा
धरि निज रूप गयउ पितु पाहीं ❀ राम बिमुख राखा तेहि नाहीं

मन्त्र से प्रेरित होकर वह ब्रह्म-बाण दौड़ा । कौवा भय को प्राप्त होकर भाग चला । वह अपना असली रूप धरकर पिता (इन्द्र) के पास गया । पर उसे राम का विरोधी जानकर इन्द्र ने भी नहीं रक्खा ।

भा निरास उपजी मन त्रासा ❀ जथा चक्र भय रिषि दुर्बासा
ब्रह्मधाम सिवपुर सब लोका ❀ फिरा स्रमित ब्याकुल भय सोका

तब वह निराश हो गया और उसके मन में भय उत्पन्न हो गया । जैसे दुर्वासा ऋषि को चक्र से भय हुआ था, वह ब्रह्मलोक, शिवलोक आदि सभी लोकों में थका हुआ और भय-शोक से व्याकुल होकर भागता फिरा ।

काहूँ बैठन कहा न ओही[1] ❀ राखि को सकइ राम कर द्रोही
मातु मृत्यु पितु समन[2] समाना ❀ सुधा होइ बिष सुनु हरिजाना[3]

पर किसी ने उसे बैठने तक के लिये भी नहीं कहा । भला, राम के विरोधी को कौन रख सकता है ? हे गरुड़ ! सुनिये, उसे माता मृत्यु के समान, पिता यमराज के समान और अमृत विष के समान हो जाता है ।

मित्र करइ सत रिपु कै करनी ❀ ता कहँ बिबुध नदी बैतरनी[4]
सब जगु तेहि अनलहु तें ताता ❀ जो रघुबीर बिमुख सुनु भ्राता

मित्र उससे सैंकड़ों शत्रुओं का-सा व्यवहार करने लगते हैं; देवनदी उसके लिये बैतरणी के समान हो जाती है । हे भाई ! सुनिये, जो राम के विमुख होता है, सारा जगत् उसे अग्नि से भी अधिक दाहक हो जाता है ।

नारद देखा बिकल जयंता ❀ लागि दया कोमल चित संता
पठवा तुरत राम पहिं ताही ❀ कहेसि पुकारि प्रनत हित पाही

---

१. उसको । २. यमराज । ३. गरुड़ । ४. यमपुरी की नदी ।

नारदजी ने देखा कि जयंत व्याकुल है; दया आई; संत कोमल-चित्त तो होते ही हैं। उन्होंने उसे तुरन्त ही रामजी के पास भेजा। उसने पुकारकर कहा—हे शरणागत के हितकारी ! मेरी रक्षा कीजिये।

आतुर सभय गहेसि पद जाई ❀ त्राहि त्राहि दयाल रघुराई
अतुलित बल अतुलित प्रभुताई ❀ मैं मतिमंद जानि नहिँ पाई

आतुर और भयभीत जयंत ने जाकर रामजी के चरण पकड़ लिये और कहा—हे दयालु राम ! रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये ! आपके अतुलित बल और आपकी अतुलित प्रभुता को मैं मंद-बुद्धि जान नहीं पाया था।

निज कृत कर्म जनित फल पायउँ ❀ अब प्रभु पाहि सरन तकि[1] आयउँ
सुनि कृपाल अति आरत[2] बानी ❀ एक नयन करि तजा भवानी

अपने किये हुये कर्म से उत्पन्न हुआ फल मैंने पा लिया। अब हे प्रभु ! मेरी रक्षा कीजिये। मैं आपकी शरण तककर आया हूँ। हे पार्वती ! कृपालु रामजी ने उसकी अत्यन्त आर्त्तवाणी सुनकर उसे एक आँख का काना करके छोड़ दिया।

सो०— कीन्ह मोह बस द्रोह जद्यपि तेहि कर बध उचित।
प्रभु छाँड़ेउ करि छोह को कृपाल रघुबीर सम ॥२॥

उसने मोह-वश द्रोह किया था; यद्यपि उसका वध ही उचित था, पर प्रभु ने दया करके उसे छोड़ दिया। रामजी के समान कृपालु और कौन होगा ?

रघुपति चित्रकूट बसि नाना ❀ चरित किये स्रुति[3] सुधा समाना
बहुरि राम अस मन अनुमाना ❀ होइहि भीर सबहिं मोहि जाना

रामजी ने चित्रकूट में बसकर, कानों को अमृत के समान प्रिय, अनेक चरित्र किये। फिर रामजी ने मन में ऐसा अनुमान किया कि सब लोग मुझे जान गये हैं, इससे यहाँ बड़ी भीड़ हो जायगी।

सकल मुनिन्ह सन बिदा कराई ❀ सीता सहित चले दोउ भाई
अत्रि के आस्रम जब प्रभु गयऊ ❀ सुनत महामुनि हरषित भयऊ

तब सब मुनियों से विदा लेकर सीता-सहित दोनों भाई चले। जब प्रभु

१. देखकर। २. दुःख से भरी। ३. कान।

अत्रि मुनि के आश्रम में गये, तो उनका आगमन सुनकर महामुनि बड़े प्रसन्न हुये।

पुलकित गात अत्रि उठि धाये ❀ देखि राम आतुर चलि आये
करत दंडवत मुनि उर लाये ❀ प्रेम बारि दोउ जन अन्हवाये

पुलकायमान शरीर से अत्रि उठकर दौड़े। उन्हें देखकर रामजी भी जल्दी आगे चले आये। दंडवत् करते हुये रामजी को उठाकर मुनि ने हृदय से लगा लिया, और दोनों जनों को प्रेम के जल से नहला दिया।

देखि राम छबि नयन जुड़ाने ❀ सादर निज आस्रम तब आने
करि पूजा कहि बचन सुहाये ❀ दिये मूल फल प्रभु मन भाये

रामजी की छवि देखकर मुनि के नेत्र शीतल हो उठे। तब मुनि उन्हें आदर-सहित अपने आश्रम में ले आये। आतिथ्य-सत्कार करके, मनोहर वचन कहकर, मुनि ने उन्हें मूल और फल दिये, जो रामजी के मन को बहुत ही प्रिय लगे।

सो० प्रभु आसन आसीन[1] भरि लोचन सोभा निरखि।
मुनिवर परम प्रबीन जोरि पानि अस्तुति करत ॥३॥

प्रभु आसन पर विराजमान हैं। आँख भर उनकी शोभा देखकर परम प्रवीण मुनि हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे।

छन्द—नमामि भक्तवत्सलं कृपालु शील कोमलं।
भजामि ते पदाम्बुजं अकामिनां स्वधामदं ॥
निकाम श्याम सुन्दरं भवाम्बुनाथ मंदरं।
प्रफुल्ल कंज लोचनं मदादि दोष मोचनं ॥

हे भक्तवत्सल! मैं नमस्कार करता हूँ, आप कृपालु, शीलवान् और कोमल हैं। आपके कमल ऐसे पदों को भजता हूँ; जो निष्काम कर्म करने वालों को मोक्ष देने वाले हैं। आप अत्यन्त सुन्दर हैं, श्याम हैं, भवसागर में मंदराचल हैं, फूले हुये कमल के समान नेत्रों वाले और मद आदि दोषों को दूर करने वाले हैं।

---

१. बैठे हुये।

प्रलंब बाहु विक्रमं प्रभोऽप्रमेय वैभवं।
निषंग चाप सायकं धरं त्रिलोक नायकं ॥
दिनेश वंश मंडनं महेश चाप खंडनं।
मुनींद्र संत रंजनं सुरारि[1] वृन्द भञ्जनं।

हे प्रभो! आपकी लम्बी भुजाओं का पराक्रम और आपका ऐश्वर्य असीम है। आप तरकस और धनुष-बाण धारण करने वाले और तीनों लोकों के स्वामी हैं। आप सूर्यवंश के भूषण, शिव के धनुष को तोड़ने वाले, मुनियों और सन्तों को आनन्द देने वाले तथा देवताओं के शत्रु असुरों के समूह का नाश करने वाले हैं।

मनोज बैरि वंदितं अजादि देवसेवितं।
विशुद्ध बोध विग्रहं[2] समस्त दूषणापहं ॥
नमामि इंदिरापतिं सुखाकरं सतां गतिं।
भजे सशक्ति सानुजं शचीपति[3] प्रियानुजं ॥

आप कामदेव के शत्रु शिवजी से वन्दित, ब्रह्मा आदि देवताओं से सेवित, विशुद्ध ज्ञान की मूर्त्ति और समस्त दोषों को नष्ट करने वाले हैं। हे लक्ष्मीपति! आपको नमस्कार करता हूँ। आप सुखों की खान और सत्पुरुषों की गति हैं। हे इन्द्र के प्यारे छोटे भाई (वामनजी)! शक्ति-स्वरूपा सीताजी तथा छोटे भाई लक्ष्मण-सहित मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

त्वदंघ्रि मूल ये नराः भजंति हीन मत्सराः।
पतंति नो भवार्णवे वितर्क बीचि संकुले ॥
विविक्त वासिनः सदा भजंति मुक्तये मुदा।
निरस्य इँद्रियादिकँ प्रयांति ते गतिं स्वकं ॥

जो मनुष्य ईर्ष्या से रहित होकर आपके चरणों के मूल का सेवन करते हैं, वे भवसागर में तर्क-वितर्करूपी लहरों में नहीं गिरते। जो एकान्तवासी पुरुष

१. राक्षस। २. मूर्त्ति। ३. इन्द्र।

मुक्ति की आशा से, इन्द्रिय-सुख को छोड़कर प्रसन्नता-पूर्वक आपको भजते हैं; वे स्वकीय गति को प्राप्त होते हैं।

त्वमेकमद्भुतं प्रभुं निरीहमीश्वरं विभुं।
जगद्गुरुं च शाश्वतं तुरीयमेव केवलं॥
भजामि भाव वल्लभं कुयोगिनां सुदुर्लभं।
स्वभक्त कल्प पादपं समं सुसेव्यमन्वहं॥

आप एक, अद्भुत, प्रभु, इच्छारहित, ईश्वर, व्यापक, जगद्गुरु, अविनाशी, तुरीय अवस्था वाले और केवल हैं। आप भाव-प्रिय, निन्दित योगियों, विषयी पुरुषों के लिये दुर्लभ, अपने भक्तों के लिये कल्पवृक्ष, सम और सदा सुखपूर्वक सेवन करने योग्य हैं, मैं आपको निरन्तर भजता हूँ।

अनूप रूप भूपतिं नतोऽहमुर्विजापतिं।
प्रसीद मे नमामि ते पदाब्ज भक्ति देहि मे॥
पठंति ये स्तवं इदं नरादरेण ते पदं।
व्रजंति नात्र संशयः त्वदीय भक्ति संयुताः॥

हे अनुपम रूप वाले! हे पृथ्वीपति! हे सीता-पति! मैं आपको प्रणाम करता हूँ। मुझ पर प्रसन्न होइये। मैं आपको नमस्कार करता हूँ। अपने चरण-कमलों में मुझे भक्ति दीजिये। जो मनुष्य इस स्तुति का आदर के साथ पाठ करते हैं, वे आपकी भक्ति से युक्त होकर आपके परमपद को प्राप्त करते हैं, इसमें सन्देह नहीं है।

दो०— बिनती करि मुनि नाइ सिर कह कर जोरि बहोरि।
चरन सरोरुह नाथ जनि कबहुँ तजै मति मोरि॥

विनती करके, सिर नवाकर, मुनि ने हाथ जोड़कर फिर कहा—हे नाथ! मेरी बुद्धि आपके कमल ऐसे चरणों को कभी न छोड़े।

अनुसूया के पद गह सीता ❀ मिली बहोरि सुसील बिनीता
रिषि पतिनी मन सुख अधिकाई ❀ आसिष देइ निकट बैठाई

तब परम शीलवती और विनम्र सीता अनुसूया (अत्रि की स्त्री) के चरण



पकड़कर उनसे फिर मिलीं। ऋषि-पत्नी के मन में बड़ा सुख हुआ। उन्होंने आशीर्वाद देकर सीता को पास बैठा लिया।

दिब्य बसन भूषन पहिराए ❀ जे नित नूतन अमल सुहाए
कह रिषि बधू सरस मृदु बानी ❀ नारि धरम कछु ब्याज[1] बखानी

फिर सीता को ऐसे दिव्य वस्त्र और आभूषण पहनाये, जो सदा नवीन, निर्मल और सुन्दर बने रहते हैं। ऋषि की स्त्री अनुसूयाजी उनके बहाने से मधुर और कोमल वाणी से स्त्रियों के कुछ धर्म कहने लगीं—

मातु पिता भ्राता हितकारी ❀ मित प्रद सब सुनु राजकुमारी
अमित दानि भर्ता[2] बैदेही ❀ अधम सो नारि जो सेव न तेही
धीरज धर्म मित्र अरु नारी ❀ आपद काल परखियहिं चारी

हे राजकुमारी सुनो! माता, पिता, भाई, ये सभी एक हद तक ही हित करने वाले हैं; पर हे सीता! पति तो (मोक्षरूप) असीम (सुख) देने वाला है। वह स्त्री अधम है, जो पति की सेवा नहीं करती। संकट के समय में धैर्य, धर्म, मित्र और स्त्री, इन चारों की परीक्षा होती है।

बृद्ध रोग बस जड़ धन हीना ❀ अंध बधिर क्रोधी अति दीना
ऐसेहु पति कर किएँ अपमाना ❀ नारि पाव जमपुर दुख नाना

बुड्ढा, रोगी, मूर्ख, निर्धन, अंधा, बहरा, क्रोधी और बहुत ही ग़रीब पति हो, उसका भी अपमान करने से स्त्री यमपुर में तरह-तरह के दुःख पाती है।

एकइ धर्म एक ब्रत नेमा ❀ कायँ बचन मन पति पद प्रेमा
जग पतिब्रता चारि बिधि अहहीं ❀ बेद पुरान संत सब कहहीं

स्त्री का एक ही धर्म है, एक ही व्रत और नियम है कि शरीर, वचन और मन से पति के चरणों में प्रेम रखे। जगत् में चार प्रकार की पतिव्रतायें हैं; वेद, पुराण और संत सब ऐसा कहते हैं।

उत्तम के अस बस मन माहीं ❀ सपनेहुँ आन पुरुष जग नाहीं
मध्यम पर पति देखै कैसे ❀ भ्राता पिता पुत्र निज जैसे

उत्तम श्रेणी की पतिव्रता के मन में ऐसा भाव रहता है कि जगत् में उसके पति के सिवा दूसरा पुरुष स्वप्न में भी नहीं। मध्यम श्रेणी की पतिव्रता दूसरे के

१. बहाना। २. पति।

पति को अपने भाई, पिता और पुत्र की भाँति देखती है।

धर्म बिचारि समुझि कुल रहई ❁ सो निकृष्ट तिय स्रुति अस कहई
बिनु अवसर भय तें रह जोई ❁ जानेउ अधम नारि जग सोई

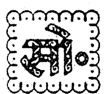
जो धर्म का विचार करके अपने कुल की मर्यादा समझ करके पतिव्रता बनी रहती है, वह नीच स्त्री है, ऐसा वेद कहते हैं। और जो स्त्री अवसर न मिलने से या भय-वश पतिव्रता बनी रहती है, जगत् में उसे अधम स्त्री जानना।

पति बंचक पर पति रति करई ❁ रौरव नरक कल्प सत परई
छन सुख लागि जनम सत कोटी ❁ दुख न समुझ तेहि सम को खोटी

जो स्त्री पति को धोखा देकर अन्य पति से रति करती है, वह सौ कल्पों तक रौरव नरक में पड़ी रहती है। क्षण भर के सुख के लिये जो सौ करोड़ असंख्य जन्मों के दुःख का विचार नहीं करती, उसके समान दुष्टा कौन होगी ?

पति प्रतिकूल जनम जहँ जाई ❁ बिधवा होइ पाइ तरुनाई[1]

पति के प्रतिकूल रहने से वह जहाँ भी जाकर जन्म लेती है, वहाँ वह भरी जवानी ही में विधवा हो जाती है।



सहज अपावनि नारि पति सेवत सुभ गति लहइ।
जसु गावत श्रुति चारि अजहुँ तुलसिका[2] हरिहि प्रिय॥

स्त्री जन्म ही से अपवित्र है, पर पति की सेवा करके वह अनायास ही शुभ गति को प्राप्त करती है। आज भी तुलसी विष्णु को प्रिय है और चारों वेद उसका यश गा रहे हैं।

सुनु सीता तव नाम सुमिरि नारि पतिब्रत करहिं।
तोहि प्रानप्रिय राम कहिउँ कथा संसार हित॥

हे सीता ! सुनो, तुम्हारा तो नाम ही स्मरण करके स्त्रियाँ पतिव्रत-धर्म का पालन करेंगी। तुमको तो राम प्राणप्रिय हुई हैं; यह कथा तो मैंने संसार के हित के लिये कही है।

सुनि जानकीं परम सुखु पावा ❁ सादर तासु चरन सिरु नावा
तब मुनि सन कह कृपानिधाना ❁ आयसु होइ जाउँ बन आना[3]

---

१. जवानी। २. तुलसी-वृक्ष और जलंधर दैत्य की स्त्री। ३. अन्य, दूसरे।

जानकी ने सुनकर बड़ा सुख पाया और आदर-सहित अनुसूया के चरणों में सिर नवाया। तब कृपा के घर राम ने मुनि से कहा—आज्ञा हो, तो अब दूसरे वन में जाऊँ।

संतत[1] मो पर कृपा करेहू ❀ सेवक जानि तजेहु जनि नेहू
धरम धुरन्धर प्रभु कै बानी ❀ सुनि सप्रेम बोले मुनि ग्यानी

मुझ पर सदा कृपा करते रहियेगा और अपना सेवक जानकर मुझ पर से स्नेह न छोड़ियेगा। धर्म की धुरी धारण करने वाले प्रभु (रामचन्द्रजी) के वचन सुनकर ज्ञानी मुनि अत्रि प्रेम-सहित बोले—

जासु कृपा अज[2] सिव सनकादी ❀ चहत सकल परमारथबादी
ते तुम्ह राम अकाम[3] पियारे ❀ दीन बंधु मृदु बचन उचारे

ब्रह्मा, शिव और सनक आदि सभी परमार्थ का चिन्तन करने वाले (तत्व-वेत्ता) जिसकी कृपा चाहते हैं, हे राम! आप वही निष्काम पुरुषों को प्रिय और दीनबन्धु हैं जो ऐसे मधुर वचन बोल रहे हैं।

अब जानी मैं श्री चतुराई ❀ भजी तुम्हहिं सब देव बिहाई
जेहि समान अतिसय नहिं कोई ❀ ता कर सील कस न अस होई

अब मैंने लक्ष्मी की चतुरता समझी जिन्होंने सब देवताओं को छोड़कर केवल आप ही को भजा। जिसके समान अत्यंत बड़ा कोई नहीं है, उसका शील (सौजन्य) ऐसा क्यों न हो?

केहि बिधि कहौं जाहु अब स्वामी ❀ कहहु नाथ तुम्ह अंतरजामी
अस कहि प्रभु बिलोकि मुनि धीरा ❀ लोचन जल बह पुलक सरीरा

हे स्वामी! मैं कैसे कहूँ कि अब जाइये। हे नाथ! आप अन्तर्यामी हैं, आप ही कहिये। ऐसा कहकर धैर्यवान् मुनि प्रभु को देखने लगे। मुनि के नेत्रों से जल बह रहा है और शरीर पुलकायमान है।

छंद—तन पुलक निर्भर प्रेम पूरन नयन मुख पङ्कज दिए।
मन ग्यान गुन गोतीत प्रभु मैं दीख जप तप का किए॥
जप जोग धर्म समूह ते नर भगति अनुपम पावई।
रघुबीर चरित पुनीत निसि दिन दास तुलसी गावई॥

१. सदा। २. ब्रह्मा। ३. कामना-रहित।

मुनि का शरीर पुलकित है, प्रेम से पूर्ण नेत्रों को उन्होंने राम के कमल ऐसे मुख पर लगा रक्खा है। वे बोले—मन, ज्ञान, गुण और इन्द्रियों की पहुँच से परे प्रभु को मैंने देखा। जप, योग और धर्म-समूह से मनुष्य अनुपम भक्ति पाता है। तुलसीदास रामजी के पवित्र चरित्र को गाता है।

कलि मल समन दमन मन राम सुजस सुखमूल।
सादर सुनहिं जे तिन्हहिं पर राम रहहिं अनुकूल ॥

रामचन्द्रजी का सुन्दर यश कलियुग के पापों को नष्ट करने वाला, मन को दमन करने वाला और सुख का मूल है। जो इसे आदरपूर्वक सुनते हैं, उन पर राम सदा प्रसन्न रहते हैं।

सो० **कठिन काल मल कोस[1] धर्म न ग्यान न जोग जप।**
परिहरि सकल भरोस रामहिं भजहिं ते चतुर नर ॥

यह कलिकाल कठिन पापों का खजाना है। न इसमें धर्म है, न ज्ञान, न योग और न जप। इसमें तो जो लोग सब भरोसों को छोड़कर राम ही को भजते हैं, वे ही चतुर हैं।

मुनि पद कमल नाइ कर सीसा ❀ चले बनहिं सुर नर मुनि ईसा
आगें राम अनुज पुनि पाछें ❀ मुनि बर बेष बने अति काछें

मुनि के कमल ऐसे चरणों में सिर नवाकर देवता, मनुष्य और मनुष्यों के स्वामी वन को चले। आगे-आगे राम हैं। उनके पीछे छोटे भाई लक्ष्मण मुनियों का सुन्दर वेष बनाये अत्यन्त सुशोभित हैं।

उभय[2] बीच श्री सोहइ कैसी ❀ ब्रह्म जीव बिच माया जैसी
सरिता बन गिरि अवघट[3] घाटा ❀ पति पहिचानि देहिं बर बाटा

दोनों के बीच में सीताजी कैसी शोभायमान हैं, जैसे ब्रह्म और जीव के बीच माया। नदी, वन, पर्वत और दुर्गम घाट-घाटियाँ ये सब अपने स्वामी को पहचानकर सुन्दर रास्ता देते हैं। [उत्प्रेक्षा अलंकार]

जहँ जहँ जाहिं देव रघुराया ❀ करहिं मेघ तहँ तहँ नभ छाया
मिला असुर बिराध मग जाता ❀ आवतहीं रघुबीर निपाता

देव रामचन्द्रजी जहाँ-जहाँ जाते हैं, वहाँ-वहाँ बादल आकाश में छाया

१. खजाना। २. दोनों। ३. दुर्गम।

करते जाते हैं। रास्ते में जाते हुये विराध राक्षस मिला। सामने आते ही रामचन्द्रजी ने उसे मार डाला।

तुरतहिं रुचिर रूप तेहिं पावा ❀ देखि दुखी निज धाम पठावा
पुनि आए जहँ मुनि सरभङ्गा ❀ सुन्दर अनुज जानकी सङ्गा

उसने तुरन्त सुन्दर रूप पा लिया। उसे दुखी देखकर रामजी ने उसे अपने परमधाम को भेज दिया। फिर वे सुन्दर छोटे भाई लक्ष्मण और सीता के साथ वहाँ आये, जहाँ शरभङ्ग मुनि थे।

दो० देखि राम मुख पंकज मुनिबर लोचन भृङ्ग।
सादर पान करत अति धन्य जनम सरभङ्ग ॥७॥

रामजी के कमल ऐसे मुख को मुनि के भ्रमररूपी नेत्र देखकर आदर-पूर्वक (रूप-रस का) पान कर रहे हैं। शरभंग का जन्म धन्य है।

कह मुनि सुनु रघुबीर कृपाला ❀ संकर मानस राज मराला
जात रहेउँ बिरञ्चि के धामा ❀ सुनेउँ स्रवन बन अइहहिं रामा

मुनि ने कहा—हे कृपालु राम! हे शिवजी के मनरूपी मानसरोवर के राजहंस! सुनिये मैं ब्रह्मलोक को जा रहा था, इतने में सुना कि रामजी वन में आयेंगे।

चितवत पंथ रहेउँ दिन राती ❀ अब प्रभु देखि जुड़ानी छाती
नाथ सकल साधन मैं हीना ❀ कीन्ही कृपा जानि जन दीना

मैं रात-दिन आपकी राह देखता रहा हूँ। आज प्रभु को देखकर मेरी छाती शीतल हुई है। हे नाथ! मैं सब साधनों से हीन हूँ। आपने अपना दीन सेवक जानकर मुझ पर कृपा की है।

सो कछु देव न मोहि निहोरा ❀ निज पन राखेहु जन मन चोरा
तब लगि रहहु दीन हित लागी ❀ जब लगि मिलौं तुम्हहिं तनु त्यागी

हे देव! यह कुछ मुझ पर आपका एहसान नहीं है। हे भक्तों के मन के चोर! आपने अपने प्रण की ही रक्षा की है। अब इस दीन के कल्याण के लिये तब तक यहाँ ठहरिये, जब तक मैं शरीर को छोड़कर आपमें मिल न जाऊँ।

जोग जग्य जप तप जत कीन्हा ❀ प्रभु कहँ देइ भगति बर लीन्हा
एहि बिधि सर[1] रचि मुनि सरभंगा ❀ बैठे हृदयँ छाँड़ि सब संगा

मुनि ने जितना योग, यज्ञ, जप, तप आदि किया था, सब प्रभु को समर्पण करके बदले में भक्ति का वरदान ले लिया। इस प्रकार मुनि शरभंग सरा (चिता) रचकर, हृदय से सब आसक्ति को छोड़ करके उस पर जा बैठे।

दो॰ सीता अनुज समेत प्रभु नील जलद तनु स्याम।
मम हिय बसहु निरंतर सगुन रूप श्रीराम॥८॥

मुनि ने कहा—हे नीले मेघ के समान श्याम शरीर वाले राम! हे प्रभु! आप सीता और लक्ष्मण-सहित सगुणरूप से निरंतर मेरे हृदय में निवास कीजिये।

अस कहि जोग अगिनि तनु जारा ❀ राम कृपाँ बैकुंठ सिधारा
तातें मुनि हरि लीन न भयऊ ❀ प्रथमहिं भेद भगति बर लयऊ

ऐसा कहकर शरभङ्ग ने योग की अग्नि में शरीर को जला डाला और रामजी की कृपा से वे बैकुण्ठ को चले गये। मुनि इस कारण से भगवान् में लीन नहीं हुये, कि पहले ही उन्होंने (सेव्य-सेवक का) भेद करके भक्ति का वर ले लिया था।

रिषि निकाय[2] मुनिबर गति देखी ❀ सुखी भये निज हृदयँ बिसेखी
अस्तुति करहिं सकल मुनि बृन्दा ❀ जयति प्रनतहित करुना कंदा

ऋषियों का समूह मुनिवर शरभङ्ग की परम गति को देखकर हृदय में बहुत सुखी हुआ। समस्त मुनिवृन्द रामजी की स्तुति कर रहे हैं। हे करुणा-कंद! हे शरणागत का कल्याण करने वाले! आपकी जय हो।

पुनि रघुनाथ चले बन आगे ❀ मुनि बर बृन्द बिपुल[3] सँग लागे
अस्थि[4] समूह देखि रघुराया ❀ पूछा मुनिन्ह लागि अति दाया

फिर रामजी आगे के वन में चले गये। बहुत-से श्रेष्ठ मुनियों के समूह उनके साथ हो लिये। रास्ते में रामजी ने हड्डियों का समूह देखकर मुनियों से पूछा। उन्हें बड़ी दया आई।

---

१. चिता। २. समूह। ३. बहुत। ४. हड्डी।



जानतहूँ पूछिय कस स्वामी ❀ सबदरसी[1] तुम्ह अंतरजामी
निसिचर निकर सकल मुनि खाए ❀ सुनि रघुबीर नयन जल छाये

मुनियों ने कहा—हे स्वामी ! आप सब कुछ जानते हुए भी हमसे कैसे पूछ रहे हैं ? आप तो सर्वज्ञ और अन्तर्यामी हैं। राक्षसों के समूह ने सब मुनियों को खा डाला है। यह सुनते ही रामजी के नेत्रों में जल छा गया।

दो॰ निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह ।
सकल मुनिन्ह के आस्रमन्हि जाइ जाइ सुख दीन्ह ॥

राम ने भुजा उठाकर प्रण किया कि मैं पृथ्वी को राक्षसों से रहित कर दूंगा। फिर समस्त मुनियों के आश्रमों में जा-जाकर उन्होंने उनको सुख दिया।

मुनि अगस्ति कर सिष्य सुजाना ❀ नाम सुतीच्छन रत भगवाना
मन क्रम बचन राम पद सेवक ❀ सपनेहु आन भरोस न देवक

अगस्त्य मुनि का एक चतुर शिष्य था। उसका नाम सुतीक्ष्ण था और भगवान में उसकी प्रीति थी। वह मन, वचन और कर्म से रामजी के चरणों का दास था। स्वप्न में भी उसे किसी अन्य देवता का भरोसा नहीं था।

प्रभु आगवनु स्रवन सुनि पावा ❀ करत मनोरथ आतुर धावा
हे बिधि दीनबंधु रघुराया ❀ मोसे सठ पर करिहहिं दाया

ज्योंही उसने प्रभु का आगमन कान से सुना, त्योंही वह मन में अनेक प्रकार के मनोरथ करता हुआ जल्दी से दौड़कर आया। वह सोच रहा था—हे ब्रह्मा, दीनबन्धु राम क्या मुझ जैसे दुष्ट पर भी दया करेंगे ?

सहित अनुज मोहि राम गोसाईं ❀ मिलिहहिं निज सेवक की नाईं
मोरे जिय भरोस दृढ़ नाहीं ❀ भगति बिरति न ग्यान मन माहीं

क्या स्वामी रामजी अपने छोटे भाई लक्ष्मण और सीता-सहित मुझे अपने सेवक की तरह जानकर मिलेंगे ? मेरे मन में न भक्ति है, न वैराग्य है, न ज्ञान है, इससे पक्का भरोसा नहीं है।

नहिं सतसंग जोग जप जागा ❀ नहिं दृढ़ चरन कमल अनुरागा
एक बानि[2] करुनानिधान की ❀ सो प्रिय जाके गति न आन की

---

१. सर्वदर्शी, सर्वज्ञ। २. स्वभाव, आदत।

न मैंने सत्संग किया, न योग, जप और यज्ञ ही किये। रामजी के कमल ऐसे चरणों में मेरा दृढ़ प्रेम भी नहीं है। पर कृपा के घर रामजी की यह एक बानि है कि जिसे किसी का सहारा नहीं, वह उनको प्रिय होता है।

होइहैं सुफल आजु मम लोचन ❀ देखि बदन पंकज भव मोचन
निर्भर प्रेम मगन मुनि ग्यानी ❀ कहि न जाइ सो दसा भवानी

आज संसार के दुःखों से छुटकारा देने वाले प्रभु के कमल ऐसे मुख को देखकर मेरे नेत्र सफल होंगे। हे पार्वती ! ज्ञानी मुनि प्रेम में पूर्ण रूप से निमग्न हैं। उनकी दशा का वर्णन नहीं हो सकता।

दिसि अरु बिदिसि पंथ नहिं सूझा ❀ को मैं चलेउँ कहाँ नहिं बूझा
कबहुँक फिरि पाछें पुनि जाई ❀ कबहुँक नृत्य करइ गुन गाई

मुनि को आगे या पीछे का कोई रास्ता दिखाई नहीं पड़ रहा है। मैं कौन हूँ ? और कहाँ जा रहा हूँ ? यह भी जान नहीं पड़ता। वे कभी घूमकर फिर आगे चले जाते हैं और कभी राम के गुण गा-गाकर नाचने लगते हैं।

अबिरल[1] प्रेम भगति मुनि पाई ❀ प्रभु देखहिं तरु ओट लुकाई[2]
अतिसय प्रीति देखि रघुबीरा ❀ प्रगटे हृदयँ हरन भव भीरा

मुनि ने प्रगाढ़ प्रेम-भक्ति पा ली है। प्रभु वृक्ष की आड़ में छिपकर मुनि की दशा देख रहे हैं। मुनि का अत्यन्त प्रेम देखकर संसार के दुखों को हरने वाले रामचन्द्रजी मुनि के हृदय में प्रकट हो गये।

मुनि मग माँझ अचल होइ बैसा ❀ पुलक सरीर पनस फल जैसा
तब रघुनाथ निकट चलि आये ❀ देखि दसा निज जन मन भाये

मुनि बीच रास्ते में अचल होकर बैठ गये। उनका शरीर रोमाञ्च से कटहल के फल जैसा हो गया। तब रामचन्द्रजी मुनि के पास चले आये और अपने भक्त की प्रेम-दशा देखकर बहुत प्रसन्न हुये।

मुनिहिं राम बहु भाँति जगावा ❀ जाग न ध्यान जनित सुख पावा
भूप रूप तब राम दुरावा[3] ❀ हृदयँ चतुर्भुज रूप देखावा

रामजी ने बहुत प्रकार से मुनि को जगाया, पर मुनि नहीं जागे। क्योंकि उनको ध्यान से उत्पन्न सुख मिल रहा था। तब रामजी ने अपने राज-रूप को

---

१. प्रगाढ़। २. छिपकर। ३. छिपाया।

छिपाकर मुनि के हृदय में अपना चतुर्भुज रूप प्रकट किया।

मुनि अकुलाइ उठा तब कैसें ❀ बिकल हीन मनि फनिबर[1] जैसें
आगें देखि राम तनु स्यामा ❀ सीता अनुज सहित सुख धामा

तब मुनि इस प्रकार व्याकुल होकर उठे, जैसे श्रेष्ठ मणिधर साँप मणि के बिना व्याकुल हो जाता है। मुनि ने श्याम शरीर वाले और सुख के धाम रामजी को सीता और लक्ष्मण-सहित सामने देखा।

परेउ लकुट[2] इव चरनन्हि लागी ❀ प्रेम मगन मुनिबर बड़ भागी
भुज बिसाल गहि लिये उठाई ❀ परम प्रीति राखे उर लाई

तब वह भाग्यशाली श्रेष्ठ मुनि प्रेम में मग्न होकर रामजी के चरणों से लगकर लाठी की तरह पड़ गये। रामजी ने अपनी लम्बी भुजाओं से पकड़कर उन्हें उठा लिया और बड़ी प्रीति से उन्हें हृदय से लगा लिया।

मुनिहिं मिलत अस सोह कृपाला ❀ कनक[3] तरुहिं जनु भेंट तमाला[4]
राम बदन बिलोकि मुनि ठाढ़ा ❀ मानहुँ चित्र माँझ लिखि काढ़ा

कृपा करने वाले राम मुनि को मिलते हुये ऐसे शोभित हुये, जैसे तमाल (आबनूस) वृक्ष अर्जुन वृक्ष से मिलता हो। मुनि रामजी का मुख देखते हुये इस प्रकार खड़े थे, मानो चित्र में लिखकर बनाये गये हों। [वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार]

दो०— तब मुनि हृदयँ धीर धरि गहि पद बारहिं बार।
निज आस्रम प्रभु आनि करि पूजा बिबिध प्रकार।१०

तब मुनि ने हृदय में धीरज धरकर, बार-बार रामजी के चरणों को स्पर्श किया और अपने आश्रम में लाकर उनकी अनेक प्रकार से पूजा की।

कह मुनि प्रभु सुनु बिनती मोरी ❀ अस्तुति करौं कवनि बिधि तोरी
महिमा अमित मोरि मति थोरी ❀ रबि सनमुख खद्योत[5] अँजोरी[6]

मुनि ने कहा—हे प्रभु! मेरी विनती सुनिये, मैं किस प्रकार से आपकी स्तुति करूँ? आपकी महिमा की सीमा नहीं और मेरी बुद्धि कम है। जैसे सूर्य के सम्मुख जुगनू का प्रकाश। [दृष्टान्त अलंकार]

---

१. साँप। २. लाठी। ३. अर्जुन वृक्ष। ४. आबनूस। ५. जुगनू। ६. प्रकाश।

स्याम तामरस[1] दाम सरीरं ❁ जटा मुकुट परिधन[2] मुनि चीरं
पानि चाप सर कटि तूनीरं[3] ❁ नौमि[4] निरंतर श्रीरघुबीरं

हे नील-कमल की माला के समान श्याम शरीर वाले ! हे जटाओं का मुकुट और वल्कल वस्त्र पहने हुये, हाथ में धनुष-बाण लिये तथा कमर में तरकस बाँधे हुये श्रीरामचन्द्रजी ! मैं आपको निरंतर नमस्कार करता हूँ।

मोह बिपिन घन दहन कृशानुः ❁ संत सरोरुह कानन भानुः
निशिचर करि बरूथ मृगराजः ❁ त्रातु सदा नो भव खग बाजः

जो मोहरूपी घने वन को जलाने के लिये अग्नि हैं; जो संतरूपी कमलों के वन के लिये सूर्य हैं; जो राक्षसरूपी हाथियों के समूह के लिये सिंह हैं और जो संसाररूपी पक्षी के लिये बाज-स्वरूप हैं; वे प्रभु सदा हमारी रक्षा करें।

अरुण नयन राजीव सुबेशं ❁ सीता नयन चकोर निशेशं
हर हृदि मानस राज मरालं ❁ नौमि राम उर बाहु बिशालं

हे लाल कमल के समान नेत्र और सुन्दर वेष वाले, हे सीता के नेत्ररूपी चकोर के लिये चन्द्रमा-स्वरूप, शिवजी के हृदयरूपी मानसरोवर के बाल-हंस, विशाल छाती और भुजा वाले रामजी ! आपको मैं नमस्कार करता हूँ।

संशय सर्प ग्रसन उरगादः ❁ शमन सुकर्कस तर्क विषादः
भव भंजन रंजन सुर जूथः[5] ❁ त्रातु सदा नो कृपा बरूथः[6]

हे संशयरूपी सर्प को ग्रसने के लिये गरुड़ ! अत्यंत कठोर तर्क से उत्पन्न होने वाले विषाद को नाश करने वाले ! संसार के आवागमन से छुड़ाने वाले ! देवताओं के समूह को आनन्द देने वाले ! कृपा के समूह राम ! आप मेरी सदा रक्षा करें।

निर्गुण सगुण बिषम सम रूपं ❁ ज्ञान गिरा गोतीतमनूपं
अमलमखिलमनवद्यमपारं ❁ नौमि राम भंजन महि भारं

हे निर्गुण ! हे सगुण ! हे विषम और समरूप वाले ! हे ज्ञान, वाणी और इन्द्रियों से परे ! अनुपम ! निर्मल ! अखंड ! दोष-रहित ! अनन्त ! हे पृथ्वी का भार उतारने वाले रामजी ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। [विरोधाभास अलंकार]

१. कमल। २. वस्त्र। ३. तरकस। ४. नमस्कार करता हूँ। ५. समूह। ६. समूह।

भक्त कल्प पादप आरामः ❀ तर्जन क्रोध लोभ मद कामः
अति नागर भव सागर सेतुः ❀ त्रातु सदा दिनकर कुल केतुः

हे भक्तों के लिये कल्पवृक्ष के उपवन ! हे क्रोध, लोभ, मद और काम को डसने वाले ! अत्यंत चतुर ! संसाररूपी समुद्र को तरने के लिये सेतु-रूप ! हे सूर्यवंश की ध्वजा रामजी ! सदा मेरी रक्षा कीजिये।

अतुलित भुज प्रताप बल धामः ❀ कलि मल बिपुल बिभंजन नामः
धर्म वर्म नर्मद गुणग्रामः ❀ संतत संतनोतु मम रामः

हे अपरम्पार भुजाओं के प्रताप वाले, बल के धाम, कलियुग के असंख्य पापों के नाशक नाम वाले ! हे धर्म के कवच वाले ! आनन्ददायक गुणों के समूह ! हे राम ! सदा मेरे कल्याण का विस्तार कीजिये।

जदपि बिरज ब्यापक अबिनासी ❀ सब के हृदयँ निरंतर बासी
तदपि अनुज श्री सहित खरारी ❀ बसहु मनसि मम कानन चारी

यद्यपि आप माया-रहित, व्यापक, नाश-रहित और सबके हृदय में सदा निवास करने वाले हैं, तो भी हे खर-राक्षस के शत्रु, रामजी ! लक्ष्मण और सीता-सहित वन में विचरने वाले ! आप मेरे हृदय में निवास कीजिये। [खरारी शब्द से भाविक अलंकार]

जे जानहिं ते जानहुँ स्वामी ❀ सगुन अगुन उर अंतरजामी
जो कोसलपति राजिव नयना ❀ करउ सो राम हृदय मम अयना

हे स्वामी ! आपको जो सगुण, निर्गुण और सबके हृदय की बात जानते हों, वे जाना करें। मेरे हृदय को तो वे ही रामजी अपना निवास-स्थान बनायें, जो अयोध्यापति हैं और जिनके नेत्र कमल-जैसे हैं।

अस अभिमान जाय जनि भोरें ❀ मैं सेवक रघुपति पति मोरें
सुनि मुनि बचन राम मन भाए ❀ बहुरि हरषि मुनिबर उर लाए
परम प्रसन्न जानु मुनि मोही ❀ जो बर माँगु देउँ सो तोही

मेरा यह अभिमान भूल करके भी मुझसे न छूटे कि मैं सेवक हूँ और रामचन्द्रजी मेरे स्वामी हैं। मुनि के वचन सुनकर रामजी के मन को बहुत ही प्रिय लगे। राम ने आनन्दित होकर मुनि को फिर हृदय से लगा लिया और कहा—हे मुनि ! मुझे अत्यन्त प्रसन्न जानकर जो वर माँगो, मैं तुम्हें वही दूँ।

मुनि कह मैं बर कबहुँ न जांचा ❀ समुझि न परइ झूठ का साँचा
तुम्हहिं नीक लागै रघुराई ❀ सो मोहि देहु दास सुखदाई

मुनि ने कहा—मैंने तो वर कभी माँगा ही नहीं। मुझे समझ ही नहीं पड़ता कि क्या झूठ है, और क्या सच है। इससे हे राम! आपको जो अच्छा लगे और जो दास को सुख देने वाला हो मुझे वही दीजिये।

अबिरल भगति बिरति बिग्याना ❀ होहु सकल गुन ग्यान निधाना
प्रभु जो दीन्ह सो बरु मैं पावा ❀ अब सो देहु मोहिं जो भावा

रामचन्द्रजी ने कहा—हे मुनि! तुम प्रगाढ़ भक्ति, वैराग्य, विज्ञान और समस्त गुणों और ज्ञान के निधान हो जाओ। मुनि ने कहा—प्रभु ने जो वरदान दिया, वह तो मैंने पा लिया; अब मुझे जो प्रिय लगता है वह दीजिये।

दो०—अनुज जानकी सहित प्रभु चाप बान धर धाम।
मम हिय गगन[1] इन्दु[2] इव[3] बसहु सदा निश्काम[4]॥

हे राम! हे प्रभु! छोटे भाई लक्ष्मण और सीता-सहित धनुष-बाण धारण करके मेरे हृदयरूपी आकाश में चन्द्रमा की तरह वासना-रहित भाव से आप सदा निवास कीजिये।

एवमस्तु कहि रमा निवासा ❀ हरषि चले कुम्भज रिषि पासा
बहुत दिवस गुर दरसनु पाएँ ❀ भये मोहि एहि आस्रम आएँ
अब प्रभु संग जाउँ गुरु पाहीं ❀ तुम्ह कहुँ नाथ निहोरा नाहीं

'ऐसा ही हो' कहकर लक्ष्मीपति रामजी आनन्दित होकर अगस्त्य ऋषि के पास चले। तब सुतीक्ष्ण ने कहा—मुझे इस आश्रम में आये और गुरु का दर्शन पाये हुये बहुत दिन हो गये। अब मैं प्रभु के साथ गुरु के पास चल रहा हूँ। इसमें हे नाथ! आप पर मेरा कोई एहसान नहीं है।

देखि कृपानिधि मुनि चतुराई ❀ लिए संग बिहंसे दोउ भाई
पंथ कहत निज भगति अनूपा ❀ मुनि आस्रम पहुँचे सुरभूपा

कृपा के भण्डार रामजी ने मुनि की चतुरता देखी, तब दोनों भाई हँसे और उन्होंने मुनि को साथ ले लिया। रास्ते में अपनी अनुपम भक्ति का वर्णन करते हुये, देवताओं के स्वामी रामचन्द्रजी अगस्त्य मुनि के आश्रम में पहुँचे।

---

१. आकाश। २. चन्द्रमा। ३. तरह। ४. स्थिर होकर।

तुरत सुतीछन गुर पहिं गयऊ ❀ करि दंडवत कहत अस भयऊ
नाथ कोसलाधीस कुमारा ❀ आए मिलन जगत आधारा

सुतीक्ष्ण तुरन्त ही गुरु के पास गये और दंडवत् (प्रणाम) करके ऐसा कहने लगे—हे नाथ! अयोध्या के राजा दशरथजी के कुमार, जगत् के आधार रामचन्द्रजी आपसे मिलने आये हैं।

राम अनुज समेत बैदेही ❀ निसि दिनु देव जपत हहु[1] जेही
सुनत अगस्त तुरत उठि धाये ❀ हरि बिलोकि लोचन जल छाये

वे छोटे भाई लक्ष्मण और सीता-सहित हैं। हे देव! जिनको आप रात-दिन जपते रहते हैं। यह सुनते ही अगस्त्य ऋषि तुरन्त ही उठ दौड़े। भगवान् को देखते ही उनके नेत्रों में आँसू भर आये।

मुनि पद कमल परे दोउ भाई ❀ रिषि अति प्रीति लिये उर लाई
सादर कुसल पूँछि मुनि ग्यानी ❀ आसन बर बैठारे आनी

दोनों भाई मुनि के चरण-कमलों पर गिर पड़े। ऋषि ने उन्हें बड़े प्रेम से हृदय से लगा लिया। ज्ञानी मुनि ने आदर-सहित कुशल-प्रश्न पूछकर उनको लाकर श्रेष्ठ आसन पर बैठाया।

पुनि करि बहु प्रकार प्रभु पूजा ❀ मोहि सम भागवंत नहिँ दूजा
जहँ लगि रहे अपर मुनि बृन्दा ❀ हरषे सब बिलोकि सुखकंदा

फिर बहुत प्रकार से प्रभु का सत्कार करके मुनि ने कहा—मेरे समान आज कोई दूसरा भाग्यवान् नहीं है। वहाँ जो अन्य मुनिगण थे, वे सब भी सुख के मूल रामजी को देखकर प्रसन्न हुये।

दो॰ मुनि समूह महँ बैठे सन्मुख सब की ओर।
सरद इन्दु तन चितवत मानहुँ निकर चकोर ॥१२॥

रामचन्द्रजी मुनियों के समूह में सबकी ओर सन्मुख होकर बैठे हैं। ऐसा जान पड़ता है, मानो चकोरों का समूह शरद्-ऋतु के चन्द्रमा को देख रहा हो।

तब रघुबीर कहा मुनि पाहीं ❀ तुम्ह सन प्रभु दुराव[2] कछु नाहीं
तुम्ह जानहु जेहि कारन आयउँ ❀ तातें तात न कहि समुझायउँ

१. हो। २. छिपाव।

तब रामजी ने मुनि से कहा—हे प्रभु ! आपसे तो कुछ छिपाव है नहीं। मैं जिस कारण से आया हूँ, आप जानते ही हैं। इसी से हे तात ! मैंने आप से खुलासा कुछ नहीं कहा।

अब सो मंत्र देहु प्रभु मोही ❁ जेहि प्रकार मारौं मुनि द्रोही

हे प्रभु ! अब मुझे वही सलाह दीजिये, जिससे मैं मुनियों के शत्रु राक्षसों को मारूँ।

मुनि मुसकाने सुनि प्रभु बानी ❁ पूछेहु नाथ मोहि का जानी
तुम्हरेइँ भजन प्रभाव अघारी[1] ❁ जानउँ महिमा कछुक तुम्हारी

प्रभु की वाणी सुनकर मुनि मुसकुराये और बोले—हे नाथ! आप मुझे क्या समझकर पूछते हैं ? हे पापों के शत्रु ! आप ही की भक्ति के प्रभाव से मैंने आपकी कुछ महिमा जान पाई है।

ऊमरि तरु बिसाल तव माया ❁ फल ब्रह्मांड अनेक निकाया

आपकी माया गूलर के विशाल वृक्ष की तरह है, जिसमें फल-रूपी अनेक ब्रह्मांडों के समूह लटक रहे हैं।

जीव चराचर जंतु समाना ❁ भीतर बसहिं न जानहिं आना
ते फल भच्छक कठिन कराला ❁ तव भयँ डरत सदा सोउ काला

उसमें सचराचर जीव-जन्तुओं के समान भीतर बसते हैं और वे दूसरों को नहीं जान पाते। उन फलों का भक्षण करने वाला कठिन और भयानक काल है, जो सदा आपके डर से डरता है।

ते तुम्ह सकल लोकपति साईं ❁ पूछेहु मोहि मनुज की नाईं
यह बर माँगउँ कृपानिकेता ❁ बसहु हृदयँ सिय अनुज समेता

वही आपने समस्त लोकों के स्वामी होकर मुझसे मनुष्य की तरह प्रश्न किया। हे कृपा के धाम राम ! मैं यह वर माँगता हूँ कि सीता और लक्ष्मण-सहित आप मेरे हृदय में बसें।

अबिरल भगति बिरति सतसंगा ❁ चरन सरोरुह प्रीति अभंगा
जद्यपि ब्रह्म अखंड अनंता ❁ अनुभव गम्य भजहिं जेहि संता

मुझे अपनी प्रगाढ़ भक्ति, वैराग्य, सत्संग और अपने चरण-कमलों में

---

१. पाप के शत्रु।

अखंड प्रीति दीजिये। यद्यपि आप अखण्ड और अनन्त ब्रह्म हैं, जो अनुभव से ही जाने जाते हैं, और जिनका संतजन भजन करते हैं।

अस तव रूप बखानउँ जानउँ ❀ फिरि फिरि सगुन ब्रह्म रति मानउँ
संतत दासन्ह देहु बड़ाई ❀ तातें मोहि पूँछेहु रघुराई

यद्यपि मैं आपके ऐसे ही रूप को जानता और उसी का बखान भी करता हूँ तो भी लौट-लौटकर मैं सगुण ब्रह्म में ही प्रीति मानता हूँ। आप सदा ही सेवकों को बड़ाई देने वाले हैं, इसी से हे राम! आपने मुझसे पूछा है।

है प्रभु परम मनोहर ठाऊँ ❀ पावन पंचबटी तेहि नाऊँ

हे प्रभो! एक बहुत रमणीक और पवित्र स्थान है, उसका नाम पंचवटी है।

दंडक बन पुनीत प्रभु करहू ❀ उग्र साप मुनिबर कर हरहू
बास करहु तहँ रघुकुल राया ❀ कीजे सकल मुनिन्ह पर दाया

हे प्रभु! आप दंडक वन को पवित्र कीजिये और उस पर से मुनिवर का कठोर श्राप दूर कीजिये। हे रामचन्द्र! वहीं निवास कीजिये और सब मुनियों पर दया कीजिये।

चले राम मुनि आयसु पाई ❀ तुरतहिं पंचबटी निअराई

मुनि की आज्ञा पाकर रामजी चल खड़े हुये और तुरन्त ही पंचवटी के निकट पहुँच गये।

दो०— गीधराज सों भेंट भइ बहु बिधि प्रीति बढ़ाइ।
गोदावरी निकट प्रभु रहे परन गृह छाइ॥१३॥

वहाँ गृध्रराज जटायु से भेंट हुई। उसके साथ बहुत प्रकार से प्रेम बढ़ाकरके वे गोदावरी नदी के समीप झोंपड़ा छाकर रहने लगे।

जब तें राम कीन्ह तहँ बासा ❀ सुखी भये मुनि बीती त्रासा
गिरि बन नदीं ताल छबि छाये ❀ दिन दिन प्रति अति होहिं सुहाये

जबसे रामजी ने वहाँ निवास किया, तबसे सब मुनि सुखी हो गये और उनका डर जाता रहा। पर्वत, वन, नदी और ताल शोभायमान हो गये और वे दिन-प्रतिदिन अधिक सुहावने होने लगे।

खग मृग बृन्द अनंदित रहहीं ❀ मधुप मधुर गुंजत छबि लहहीं
सो बन बरनि न सक अहिराजा ❀ जहाँ प्रगट रघुबीर बिराजा

पक्षियों और पशुओं के समूह आनन्द से रहते हैं। भौंरे मधुर गुंजार करते हुये शोभा पा रहे हैं। उस वन का वर्णन शेषनाग भी नहीं कर सकते, जिसमें साक्षात् श्रीरामचन्द्रजी विराजमान हैं।

एक बार प्रभु सुख आसीना ❀ लछिमन बचन कहे छलहीना
सुर नर मुनि सचराचर साईं ❀ मैं पूछउँ निज प्रभु की नाईं

एक बार प्रभु सुख से बैठे हुये थे। उस समय लक्ष्मण ने निष्कपट (सरल) भाव से वचन कहे—हे सुर, नर, मुनि और चराचर के स्वामी! मैं आपको अपने प्रभु की तरह जानकर पूछता हूँ।

मोहि समुझाइ कहहु सोइ देवा ❀ सब तजि करौं चरन रज सेवा
कहहु ग्यान बिराग अरु माया ❀ कहहु सो भगति करहु जेहि दाया

हे देव! मुझे समझाकर वही कहिये, जिससे मैं सब छोड़कर आपके चरण-रज की ही सेवा करूँ। ज्ञान, वैराग्य और माया का वर्णन कीजिये, और उस भक्ति को कहिये, जिससे आप भक्तों पर दया किया करते हैं।

दो०— ईश्वर जीव भेद प्रभु सकल कहहु समुझाइ।
जाते होइ चरन रति सोक मोह भ्रम जाइ॥१४॥

हे प्रभो! ईश्वर और जीव का सारा भेद भी समझाकर कहिये, जिससे आपके चरणों में मेरी प्रीति हो और शोक, मोह तथा भ्रम नष्ट हो जायँ।

थोरेहि महँ सब कहउँ बुझाई ❀ सुनहु तात मति मन चित लाई
मैं अरु मोर तोर तैं माया ❀ जेहि बस कीन्हे जीव निकाया

रामजी ने कहा—हे तात! मैं संक्षेप ही में सब समझाकर कहता हूँ। तुम मन, चित्त और बुद्धि लगाकर सुनो। मैं और मेरा, तू और तेरा, यही माया है, जिसने समस्त जीवों को वश में कर रक्खा है।

गो[1] गोचर[2] जहँ लगि मन जाई ❀ सो सब माया जानेहु भाई
तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ ❀ बिद्या अपर अबिद्या दोऊ

इन्द्रियाँ और उनके विषय तथा जहाँ तक मन जाता है, हे भाई! उन सबको माया जानना। अब तुम उसके भी भेद सुनो—एक है विद्या और दूसरी अविद्या।

१. इन्द्रियाँ। २. इन्द्रियों के विषय।

एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा ❀ जा बस जीव परा भवकूपा
एक रचइ जग गुन बस जाकें ❀ प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताकें

एक (अविद्या) तो दुष्ट है और अत्यन्त दुःखरूप है, जिसके वश होकर जीव संसाररूपी कुएँ में पड़ा हुआ है। और दूसरी विद्या, जिसके वश में गुण हैं, जो जगत् की रचना करती है। वह प्रभु की प्रेरणा से सब कुछ करती है, उसका अपना बल कुछ नहीं है।

ग्यान मान जहँ एकउ नाहीं ❀ देख ब्रह्म समान सब माहीं
कहिअ तात सो परम बिरागी ❀ तृन सम सिद्धि तीनि गुन[1] त्यागी

ज्ञान वह है, जिसमें मान आदि एक भी दोष नहीं है और जो सब में समानरूप से ब्रह्म को व्यापक देखता है। हे तात! उसी को परम वैराग्यवान कहना चाहिये, जिसने सारी सिद्धियों को और तीनों गुणों को तिनके के समान त्याग दिया हो।

दो०— माया ईस न आपु कहँ जान कहिअ सो जीव।
बंध मोच्छ प्रद सर्बपर माया प्रेरक[2] सीव[3] ॥१५॥

जो माया को, ईश्वर को और अपने स्वरूप को नहीं जानता है, उसे जीव कहना चाहिये। और जो बन्धन और मोक्ष का दाता है, सबसे परे है, माया का प्रेरक है, वही ईश्वर है।

धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना ❀ ग्यान मोच्छ प्रद बेद बखाना
जातें बेगि द्रवउँ मैं भाई ❀ सो मम भगति भगत सुखदाई

धर्म से वैराग्य, वैराग्य से योग और योग से ज्ञान होता है और ज्ञान मोक्ष का देने वाला है, ऐसा वेद कहते हैं। हे भाई! जिससे मैं शीघ्र ही प्रसन्न हो जाता हूँ, वह मेरी भक्ति है, जो भक्तों को सुख देने वाली है। [कारणमाला अलंकार]

सो सुतंत्र अवलंब न आना ❀ तेहि आधीन ग्यान बिग्याना
भगति तात अनुपम सुखमूला ❀ मिलइ जो संत होइँ अनुकूला

वह भक्ति स्वतन्त्र है, उसे दूसरे साधन का सहारा नहीं है। ज्ञान और विज्ञान सब उसके अधीन हैं। हे तात! भक्ति अनुपम एवं सुख की जड़ है। और वह तभी मिलती है, जब संत-जन अनुकूल होते हैं।

---

१. सत, रज, तम। २. आज्ञा देने वाला। ३. वही।

भगति के साधन कहउँ बखानी ❀ सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी
प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती ❀ निज निज धरम निरत श्रुति रीती

अब मैं भक्ति के साधन विस्तार से कहता हूँ और वह सुगम मार्ग बतलाता हूँ, जिससे प्राणी मुझे सहज में पा सकें। पहले तो ब्राह्मणों के चरणों में अत्यंत प्रीति होनी चाहिये और वेद की रीति से कहे हुये अपने-अपने धर्म में श्रद्धा होनी चाहिये।

यहि कर फल पुनि बिषय बिरागा ❀ तब मम धर्म उपज अनुरागा
स्रवनादिक नव भगति दृढ़ाहीं ❀ मम लीला रति अति मन माहीं

इसका फल यह होगा कि विषयों से मन हट जायगा। तब मेरे धर्म (भागवत धर्म) में प्रेम उत्पन्न होगा। श्रवण आदि नव प्रकार की भक्तियाँ दृढ़ होंगी और मन में मेरी लीलाओं के प्रति अत्यंत प्रेम होगा।

संत चरन पंकज अति प्रेमा ❀ मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा
गुरु पितु मातु बन्धु पति देवा ❀ सब मोहिं कहँ जानै दृढ़ सेवा

जिसका संतों के चरण-कमलों में अत्यंत प्रेम हो; जो मन, कर्म और वचन से भजन में दृढ़ नियम वाला हो और मुझे ही गुरु, पिता, माता, भाई, पति और देवता सब कुछ जाने और सेवा में दृढ़ हो,

मम गुन गावत पुलक शरीरा ❀ गदगद गिरा[1] नयन बह नीरा
काम आदि मद दंभ न जाकें ❀ तात निरन्तर बस मैं ताकें

मेरा गुण गाते समय जिसके शरीर में रोमांच हो आता हो, वाणी गद्गद हो जाती हो और नेत्रों में आँसू गिरते हों, और जिसके काम, मद और दंभ आदि न हों, हे भाई! मैं हमेशा उसके वश में रहता हूँ।

दो०
बचन करम मन मोरि गति भजन करहिं निःकाम।
तिन्ह के हृदय कमल महुँ करउँ सदा बिस्राम॥१६॥

मन, वचन और कर्म से जिनको मेरी ही गति है, और जो निष्काम भाव से मेरा भजन करते हैं, मैं उनके हृदय-कमल में सदा विश्राम किया करता हूँ।

भगति जोग सुनि अति सुख पावा ❀ लछिमन प्रभु चरनन्हि सिर नावा

---

१. वाणी।

भक्ति-योग की बातें सुनकर लक्ष्मण ने अत्यंत सुख पाया और रामजी के चरणों में सिर नवाया।

एहि बिधि गए कछुक दिन बीती ❁ कहत बिराग ग्यान गुन नीती

इस प्रकार वैराग्य, ज्ञान, गुण और नीति की बातें कहते हुये कुछ दिन बीत गये।

सूपनखा रावन कै बहिनी ❁ दुष्ट हृदय दारुन जसि अहिनी[1]
पञ्चबटी सो गइ एक बारा ❁ देखि बिकल भइ जुगल कुमारा

शूर्पणखा रावण की बहन थी। वह हृदय की दुष्ट और साँपिनी की तरह भयानक थी। एक बार वह पंचवटी में गई और दोनों राजपुत्रों को देखकर विकल (काम से पीड़ित) हो गई।

भ्राता पिता पुत्र उरगारी ❁ पुरुष मनोहर निरखत नारी
होइ बिकल सक मनहिं न रोकी ❁ जिमि रबिमनि[2] द्रव[3] रबिहिं बिलोकी

काक-भुशुंडि कहते हैं—हे गरुड़! स्त्री मनोहर पुरुष को देखकर चाहे वह भाई, पिता, पुत्र ही क्यों न हो, विकल हो जाती है और मन को नहीं रोक सकती। जैसे सूर्यकान्त-मणि सूर्य को देखते ही द्रवित हो जाती है।

रुचिर रूप धरि प्रभु पहिं जाई ❁ बोली बचन बहुत मुसुकाई
तुम सम पुरुष न मो सम नारी ❁ यह सँजोग बिधि रचा बिचारी

सुन्दर रूप धरकर, प्रभु के पास जाकर और बहुत मुसकुराकर वह मधुर वचन बोली—तुम्हारे समान न कोई पुरुष है, न मेरे समान कोई स्त्री। ब्रह्मा ने ऐसा संयोग (जोड़ा) बहुत विचारकर ही रचा है। [प्रथम सम अलंकार]

मम अनुरूप पुरुष जग माहीं ❁ देखेउँ खोजि लोक तिहुँ नाहीं
तातें अब लगि रहिउँ कुमारी ❁ मनु माना कछु तुम्हहिं निहारी

मेरे योग्य पुरुष (वर) संसार में नहीं है, मैंने तीनों लोकों को खोज डाला। इससे मैं अब तक कुमारी (अविवाहिता) रही। अब तुमको देखकर मन कुछ मान गया है। [मिथ्याध्वसित अलंकार]

सीतहि चितइ कही प्रभु बाता ❁ अहै कुमार मोर लघु भ्राता
गइ लछिमन रिपुभगिनी जानी ❁ प्रभु बिलोकि बोले मृदु बानी

१. नागिनी, साँपिनी। २. सूर्यकान्तमणि। ३. पिघल जाती है।

सीता की ओर देखकर प्रभु रामचन्द्रजी ने यह बात कही—मेरा छोटा भाई कुमार है। तब वह लक्ष्मण के पास गई। उसे शत्रु की बहन समझकर और प्रभु की ओर देखकर वे मधुर वचन बोले—

सुन्दरि सुनु मैं उन्ह कर दासा ❀ पराधीन नहिं तोर सुपासा
प्रभु समरथ कोसलपुर राजा ❀ जो कछु करहिं उन्हहिं सब छाजा

हे सुन्दरी ! सुन, मैं तो उनका दास हूँ। मैं पराधीन हूँ। अतः तुमको कोई सुभीता न होगा। वे समर्थ हैं, अयोध्यापुरी के राजा हैं। वे जो कुछ करें, उन्हें सब शोभा देता है।

सेवक सुख चह मान भिखारी ❀ व्यसनी धन सुभ गति बिभिचारी
लोभी जसु चह चार[1] गुमानी ❀ नभ दुहि दूध चहत ये प्रानी

सेवक सुख चाहे, भिखारी सम्मान चाहे, व्यसनी धन और व्यभिचारी शुभ गति चाहे, लोभी यश और अभिमानी चार फल (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) चाहे, तो ये सब प्राणी आकाश को दुह कर दूध लेना चाहते हैं। [दृष्टान्त अलंकार]

पुनि फिरि राम निकट सो आई ❀ प्रभु लछिमन पहिं बहुरि पठाई
लछिमन कहा तोहि सो बरई[2] ❀ जो तृन तोरि लाज परिहरई

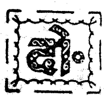
वह लौटकर फिर रामजी के पास आई। प्रभु ने उसे फिर लक्ष्मण के पास भेजा। लक्ष्मण ने कहा—तुम्हें वही वरण कर सकता है, जो लोक-लज्जा को तृण की तरह तोड़कर (प्रतिज्ञा करके) त्याग देगा।

तब खिसिआनि राम पहिं गई ❀ रूप भयंकर प्रगटत भई

तब वह खिसियाई हुई रामजी के पास गई और उसने अपना भयानक रूप प्रकट किया।

सीतहि सभय देखि रघुराई ❀ कहा अनुज सन सैन[3] बुझाई

सीता को भयभीत देखकर रामजी ने लक्ष्मण को इशारे से समझाकर कहा। [सूक्ष्म अलंकार]



लछिमन अति लाघवँ[4] सों नाक कान बिनु कीन्हि।
ताके कर रावन कहँ मनहुँ चुनौती[5] दीन्हि ॥१७॥

---

१. चार फल—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। २. ब्याह करे। ३. इशारा। ४. शीघ्रता से। ५. ललकार, आह्वान।

तब लक्ष्मण ने बड़ी फुर्ती से उसे बिना नाक, कान की कर दिया। मानो उसके हाथ रावण को (युद्ध के लिये) चुनौती दी।

नाक कान बिनु भइ बिकरारा ❀ जनु स्त्रव सैल गेरु कै धारा

वह बिना नाक, कान की होकर बहुत भयानक हो गई। मानो पर्वत से गेरु की धारा बहने लगी।

खर दूषन पहिं गइ बिलपाता ❀ धिग धिग तव बल पौरुष भ्राता
तेहि पूछा सब कहेसि बुझाई ❀ जातुधान[1] सुनि सेन बनाई

वह विलाप करती हुई खर-दूषण के पास गई और बोली—हे भाई ! तुम्हारे पौरुष और बल को धिक्कार है, धिक्कार है। उसने पूछा, तब शूर्पणखा ने सब समझाकर कह सुनाया। यह सुनकर राक्षसों ने सेना तैयार की।

धाए निसिचर निकर बरूथा ❀ जनु सपच्छ कज्जल गिरि जूथा

राक्षसों के झुण्ड के झुण्ड दौड़े, जैसे पंखधारी काजल के पर्वतों का समूह।

नाना बाहन नानाकारा ❀ नानायुधधर घोर अपारा
सूपनखा आगें करि लीन्ही ❀ असुभ रूप श्रुति नासा हीना

वे अनेकों प्रकार की सवारियों पर सवार थे और तरह-तरह की सूरतों के थे। वे अपार थे और अनेकों प्रकार के असंख्य भयानक हथियार धारण किये हुए थे। उन्होंने कान और नाक से रहित अशुभ रूप वाली शूर्पणखा को आगे कर लिया।

असगुन अमित होहिं भयकारी ❀ गनहिं न मृत्यु बिबस सब झारी
गर्जहिं तर्जहिं गगन उड़ाहीं ❀ देखि कटक भट अति हरषाहीं

भय उत्पन्न करने वाले अनेकों अशकुन हो रहे थे, पर वे राक्षस मृत्यु के वश होकर किसी भय को गिनते ही न थे। वे गरजते थे, ललकारते थे, आकाश में कूदते थे। सेना देखकर योद्धा लोग बहुत ही हर्षित हो रहे थे।

कोउ कह जिअत धरहु दोउ भाई ❀ धरि मारहु तिय लेहु छुड़ाई

कोई कहता था—दोनों भाइयों को जीतेजी पकड़ लो और पकड़कर मारो और स्त्री को छीन लो।

---

१. राक्षस।

धूरि पूरि नभ मंडल रहा ❀ राम बोलाइ अनुज सन कहा
लै जानकिहि जाहु गिरि कंदर ❀ आवा निसिचर कटकु भयंकर

आकाश-मंडल धूल से भर गया। तब रामजी ने लक्ष्मण को बुलाकर कहा—राक्षसों की भयानक सेना आ गई। सीता को तुम पर्वत की गुफा में ले जाओ।

रहेहु सजग सुनि प्रभु कै बानी ❀ चले सहित सिय सर धनु पानी[1]
देखि राम रिपुदल चलि आवा ❀ बिहँसि कठिन कोदंड चढ़ावा

सावधान रहना। प्रभु के वचन सुनकर लक्ष्मण हाथ में धनुष-बाण और सीता को साथ लिये हुये चले गये। रामजी ने देखा कि शत्रुओं की सेना समीप चली आई है, तब उन्होंने हँसकर कठोर धनुष पर रोदा चढ़ाया।

छंद—कोदंड कठिन चढ़ाइ सिर जट जूट बाँधत सोह क्यों।
मरकत सयल पर लसत दामिनि कोटि सों जुग[2] भुजग[3] ज्यों॥
कटि कसि निषंग बिसाल भुज गहि चाप बिसिख सुधारि कै।
चितवत मनहुँ मृगराज प्रभु गजराज घटा[4] निहारि कै॥

कठिन धनुष पर रोदा चढ़ाकर, सिर पर जटा बाँधते हुये प्रभु इस प्रकार शोभित हुये, जैसे मरकत मणि (पन्ने) के पर्वत पर करोड़ों बिजलियों से दो साँप लड़ रहे हों। कमर में तरकस कसकर, विशाल भुजाओं में धनुष और बाण सुधारकर प्रभु रामचन्द्रजी राक्षसों को इस तरह देखने लगे, मानो सिंह हाथियों के समूह को देखकर ताक रहा हो।

सो०—आइ गए बगमेल धरहु धरहु धावत सुभट।
जथा बिलोकि अकेल बाल रबिहिं घेरत दनुज[5]॥१८

इतने में राक्षसों का हुल्लड़ आ गया। 'पकड़ो', 'पकड़ो' कहकर सब राक्षस योद्धा दौड़ पड़े। जैसे प्रभातकाल के बाल-सूर्य को अकेला देखकर दैत्य घेर लेते हैं।

प्रभु बिलोकि सर सकहिं न डारी ❀ थकित भई रजनीचर धारी

राक्षस लोग प्रभु रामजी को देखकर शिथिल पड़ गये। उन पर बाण

१. हाथ। २. दो। ३. साँप। ४. समूह। ५. राक्षस।

चलाने की उनकी हिम्मत न हुई। [ऊर्जस्वित अलंकार]

सचिव बोलि बोले खर दूषन ❀ यह कोउ नृप बालक नर भूषन
नाग असुर सुर नर मुनि जेते ❀ देखे जिते हते हम केते

मन्त्री को बुलाकर खर-दूषण ने कहा—मनुष्यों के भूषण ये तो कोई राजकुमार हैं। जितने भी नाग, असुर, सुर और मुनि हैं, उनमें से कितने ही हमने देखे, जीते और मार डाले हैं।

हम भरि जनम सुनहु सब भाई ❀ देखि नहिं असि सुन्दरताई
जद्यपि भगिनी कीन्ह कुरूपा ❀ बध लायक नहिं पुरुष अनूपा

पर हे भाइयो! सब सुनो। हमने जन्मभर ऐसी सुन्दरता कहीं नहीं देखी। यद्यपि इन्होंने हमारी बहिन को कुरूप कर दिया, तो भी ये अनुपम पुरुष वध करने योग्य नहीं हैं।

देहु तुरत निज नारि दुराई[1] ❀ जीवत भवन जाहु दोउ भाई
मोर कहा तुम्ह ताहि सुनावहु ❀ तासु बचन सुनि आतुर[2] आवहु

इनको कहो कि अपनी स्त्री को, जिसे उन्होंने छिपा रक्खा है, हमें तुरन्त ही दे दें और दोनों भाई जीते-जी घर लौट जायँ। तुम लोग मेरी बात उनको सुनाओ और उसका उत्तर लेकर जल्दी आओ।

दूतन्ह कहा राम सन जाई ❀ सुनत राम बोले मुसुकाई

दूतों ने जाकर रामजी से यह सन्देश कहा। उसे सुनकर रामचन्द्रजी मुसकुराते हुये बोले—

हम छत्री मृगया[3] बन करहीं ❀ तुम्ह से खल मृग खोजत फिरहीं
रिपु बलवंत देखि नहिं डरहीं ❀ एक बार कालहु सन लरहीं

हम क्षत्रिय हैं। वन में शिकार खेलते हैं। तुम्हारे जैसे दुष्ट पशुओं को तो हम खोजते ही फिरते हैं। बलवान शत्रु को देखकर हम नहीं डरते। काल भी हो, तो एक बार तो हम उससे लड़ ही जाते हैं।

जद्यपि मनुज दनुज कुल घालक ❀ मुनि पालक खल सालक बालक
जौं न होइ बल घर फिरि जाहू ❀ समर बिमुख मैं हतउँ न काहू

यद्यपि हम मनुष्य हैं, तो भी राक्षसों के कुल का नाश करने वाले हैं।

---

१. छिपा। २. जल्दी। ३. शिकार।

हम बालक हैं, तो भी मुनियों के पालक और दुष्टों को दंड देने वाले हैं। तुममें बल न हो, तो घर लौट जाओ। युद्ध से पीठ दिखाने वाले को मैं कभी नहीं मारता।

रन चढ़ि करिअ कपट चतुराई ❀ रिपु पर कृपा परम कदराई
दूतन्ह जाइ तुरत सब कहेऊ ❀ सुनि खर दूषन उर अति दहेऊ

युद्ध में चढ़कर कपट-चतुराई करना और शत्रु पर कृपा करना यह तो बड़ी भारी कायरता है। दूतों ने लौटकर तुरंत सब बातें खर-दूषण को कहीं, जिन्हें सुनकर खर-दूषण का हृदय अत्यन्त जल उठा।

छंद—उर दहेउ कहेउ कि धरहु धाये बिकट भट रजनीचरा।
सर चाप तोमर सक्ति सूल कृपान परिघ परसु धरा॥
प्रभु कीन्ह धनुष टँकोर प्रथम कठोर घोर भयावहा।
भये बधिर ब्याकुल जातुधान न ग्यान तेहि अवसर रहा॥

खर-दूषण हृदय में जल उठे। उन्होंने कहा—पकड़ लो। सुनकर भयानक राक्षस योद्धा बाण, धनुष, तोमर, शक्ति, शूल, कटार, परिघ और फरसा लिये हुए दौड़ पड़े। प्रभु ने पहले धनुष का टङ्कार किया, जिससे बड़ा भयानक शब्द हुआ, जिसे सुनकर राक्षस बहरे हो गये और घबरा उठे। उस समय उन्हें अपनी सुध-बुध नहीं रह गई।

दो०—सावधान होइ धाये जानि सबल आराति[1]।
लागे बरषन राम पर अस्त्र सस्त्र बहु भाँति ॥१९(क)

शत्रु को प्रबल जानकर राक्षस सावधान होकर दौड़े। वे रामजी के ऊपर बहुत प्रकार के अस्त्र-शस्त्र बरसाने लगे।

तिन्ह के आयुध तिल सम करि काटे रघुबीर।
तानि सरासन श्रवन लगि पुनि छाँड़े निज तीर।१९(ख)

रामजी ने उनके हथियारों को तिनके के समान टुकड़े-टुकड़े करके काट डाला। फिर कान तक अपना धनुष तानकर अपने बाण मारे।

१. शत्रु।

तोमर छंद–तब चले बान कराल। फुंकरत जनु बहु ब्याल[1]॥
कोपेउ समर श्रीराम। चले बिसिख निसित[2] निकाम॥

तब भयानक बाण ऐसे चले जैसे फुफकारते हुये बहुत-से सर्प हों। राम युद्ध में क्रुद्ध हुये और बहुत ही पैने बाण चले।

अवलोकि खरतर तीर। मुरि चले निसिचर बीर॥

अत्यन्त पैने बाणों को देखकर राक्षस वीर पीठ दिखाकर भाग खड़े हुये।

भए क्रुद्ध तीनिउ भाइ। जो भागि रन तें जाइ॥
तेहि बधब हम निज पानि। फिरे मरन मन महुँ ठानि॥

फिर तीनों भाई (खर, दूषण और तृशिरा) क्रुद्ध हुये। उन्होंने कहा—जो युद्ध से भाग जायगा, उसका हम अपने हाथ से वध करेंगे। तब राक्षसगण मन में मरना ठानकर लौट पड़े।

आयुध अनेक प्रकार। सनमुख तें करहिं प्रहार॥
रिपु परम कोपे जानि। प्रभु धनुष सर संधानि॥

वे सामने होकर अनेकों प्रकार के हथियार राम पर मारने लगे। शत्रु को अत्यंत क्रुद्ध जानकर प्रभु ने धनुष पर बाण चढ़ाकर

छाँड़े बिपुल नाराच[3]। लगे कटन बिकट पिसाच॥
उर सीस भुज कर चरन। जहँ तहँ लगे महि परन॥

असंख्य बाण छोड़े। जिनसे वे भयानक राक्षस कटने लगे। उनके छाती, सिर, हाथ, भुजा और पैर कट-कटकर जहाँ-तहाँ पृथ्वी पर गिरने लगे।

चिक्करत लागत बान। धर परत कुधर[4] समान॥
भट कटत तन सत खंड। पुनि उठत करि पाखंड॥

बाण लगते ही राक्षस चिल्ला उठते थे और उनके धड़ कट-कटकर पहाड़ की तरह गिर पड़ते थे। योद्धाओं के शरीर कटकर सैकड़ों टुकड़े हो जाते थे। वे फिर माया करके उठ खड़े होते थे।

---

१. साँप। २. तेज, पैने। ३. बाण। ४. पर्वत।

नभ उड़त बहु भुज मुंड। बिनु मौलि[1] धावत रुंड ॥
खग कंक[2] काक सृगाल[3]। कटकटहिं कठिन कराल ॥

आकाश में बहुत सी भुजायें और सिर उड़ रहे थे। बिना सिर के धड़ दौड़ रहे थे। चील, कौवे आदि पक्षी और सियार बड़ी भयंकरता से कटकटाते थे।

छन्द—कटकटहिं जंबुक भूत प्रेत पिसाच खप्पर संचहीं[4]।
बेताल बीर कपाल ताल बजाइ जोगिनि नंचहीं ॥
रघुबीर बान प्रचंड खंडहिं भटन्ह के उर भुज सिरा।
जहँ तहँ परहिं उठि लरहिं धर धरु धरु करहिं भयकर गिरा ॥

सियार कटकटाते हैं, भूत-प्रेत और पिशाच खोपड़ियाँ जमा करते हैं। वीर बैताल खोपड़ियों पर ताल दे रहे हैं और योगिनियाँ नाच रही हैं। रामचन्द्रजी के प्रचण्ड बाण योद्धाओं के छाती, भुजा और सिरों के टुकड़े-टुकड़े कर देते हैं। उनके धड़ जहाँ-तहाँ गिर रहे हैं, फिर उठकर लड़ते हैं, और 'पकड़ो-पकड़ो' का भयंकर शब्द करते हैं।

अंतावरी गहि उड़त गीध पिसाच कर गहि धावहीं।
संग्राम पुर बासी मनहुँ बहु बाल गुड़ी[5] उड़ावहीं ॥
मारे पछारे उर बिदारे बिपुल भट कहँरत परे।
अवलोकि निज दल बिकल भट तिसिरादि खर दूषन फिरे

अँतड़ियों का एक छोर पकड़ कर गीध उड़ते हैं और उन्हीं का दूसरा छोर पकड़कर पिशाच दौड़ते हैं। ऐसा मालूम होता है मानो युद्ध-रूपी नगर के निवासी बहुत-से बालक पतंग उड़ा रहे हों। बहुत से योद्धा मारे गये, बहुत से गिरा दिये गये, बहुतों की छाती फाड़ दी गई। बहुत से योद्धा जमीन पर पड़े हुये कराह रहे हैं। अपनी सेना को विकल देखकर तृशिरा और खर दूषण आदि योद्धा लौटे।

सर सक्ति तोमर परसु सूल कृपान एकहिं बारहीं।
करि कोप श्रीरघुबीर पर अगनित निसाचर डारहीं ॥

१. सिर। २. चील। ३. सियार। ४. जमा करते हैं। ५. पतंग।

प्रभु निमिष[1] महुँ रिपु सर निवारि प्रचारि डारे सायका[2]।
दस दस बिसिख[3] उर माँझ मारे सकल निसिचर नायका॥

असंख्य राक्षस क्रोध करके श्रीरामचन्द्र पर बाण, शक्ति, तोमर, फरसा, शूल और तलवार एक बार ही में छोड़ते हैं। प्रभु ने क्षणभर में शत्रुओं के बाणों को काट कर, ललकार कर उन पर बाण छोड़े और सब राक्षस-सेनापतियों के हृदय में दस-दस बाण मारे।

महि परत भट उठि भिरत मरत न करत माया अति घनी
सुर डरत चौदह सहस प्रेत बिलोकि एक अवध धनी[4]॥
सुर मुनि सभय प्रभु देखि मायानाथ अति कौतुक कर्यो।
देखहि परसपर राम करि संग्राम रिपु दल लरि मर्यो॥

राक्षस योद्धा पृथ्वी पर गिरते हैं और उठकर फिर भिड़ते हैं। मरते नहीं, और अनेक प्रकार की माया रचते हैं। देवता डर रहे हैं कि राक्षस तो चौदह हज़ार हैं और अयोध्या के स्वामी रामजी अकेले हैं। देवता और मुनियों को भयभीत देखकर मायापति रामजी ने यह कौतुक किया कि शत्रुओं की सेना एक दूसरे को राम समझकर आपस ही में युद्ध करके लड़ मरी। [द्वितीय सम अलंकार]

दो०
राम राम कहि तनु तजहिं पावहिं पद निर्बान[5]।
करि उपाय रिपु मारेउ छन महुँ कृपानिधान॥

राम-राम कहकर वे शरीर छोड़ते हैं और मोक्ष-पद पाते हैं। कृपा के भंडार रामजी ने यह उपाय करके क्षणभर में शत्रुओं को मार डाला।

हरषित बरषहिं सुमन सुर बाजहिं गगन निसान।
अस्तुति करि करि सब चले सोभित बिबिध बिमान॥

देवता प्रसन्न होकर फूल बरसाते हैं। आकाश में नगाड़े बज रहे हैं। देवगण स्तुति कर-करके अनेकों विमानों पर सुशोभित होकर चले गये।

जब रघुनाथ समर रिपु जीते ❋ सुर नर मुनि सब के भय बीते
तब लछिमन सीतहिं लै आये ❋ प्रभु पद परत हरषि उर लाये

१. पलभर। २. बाण। ३. बाण। ४. स्वामी। ५. मोक्ष।

जब रामचन्द्रजी ने युद्ध में शत्रुओं को जीत लिया और देवता, मनुष्य और मुनि सबके भय जाते रहे, तब लक्ष्मण सीता को ले आये। चरणों में पड़ते हुये देखकर रामजी ने उनको प्रसन्नतापूर्वक हृदय से लगा लिया।

सीता चितव स्याम मृदु गाता ❀ परम प्रेम लोचन न अघाता
पंचबटी बसि श्री रघुनायक ❀ करत चरित सुर मुनि सुखदायक

सीता रामजी के श्याम और सुकुमार शरीर को अत्यन्त प्रेम से देख रही हैं। उनके नेत्र अघाते नहीं हैं। इस प्रकार पंचवटी में बसकर रामचन्द्रजी देवताओं और मुनियों को सुख देने वाले चरित्र करते रहे।

धुआँ देखि खर दूषन केरा ❀ जाइ सुपनखाँ रावन प्रेरा[1]
बोली बचन क्रोध करि भारी ❀ देस कोस[2] कै सुरति बिसारी

खर-दूषण का धुवाँ देखकर शूर्पणखा ने जाकर रावण को भड़काया। वह बड़ा क्रोध करके वचन बोली—तूने अपने देश और खजाने की सुधि ही भुला दी।

करसि पान सोवसि दिनु राती ❀ सुधि नहिं तव सिर पर आराता
राज नीति बिनु धन बिनु धर्मा ❀ हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा

शराब पीता है, दिन-रात पड़ा सोता है। तुझे खबर नहीं कि शत्रु सिर पर खड़ा है। नीति के बिना राज्य, धर्म बिना धन, भगवान् को समर्पण किये बिना उत्तम कर्म,

बिद्या बिनु बिबेक उपजायें ❀ स्रम फल पढ़े कियें अरु पायें
संग तें जती[3] कुमन्त्र तें राजा ❀ मान तें ग्यान पान[4] तें लाजा
प्रीति प्रनय बिनु मद तें गुनी ❀ नासहिं बेगि नीति अस सुनी

विवेक उत्पन्न किये बिना विद्या, (विपरीत क्रम से) बिना पढ़े, बिना किये और बिना पाये, इन चारों पदार्थों का फल केवल श्रम ही है; अर्थात् फल कुछ नहीं। विषयों के संग से संन्यासी, बुरी सलाह से राजा, मान से ज्ञान, मदिरा-पान से लज्जा, नम्रता के बिना प्रीति और अहंकार से गुणवान् शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं, इस प्रकार मैंने नीति सुनी है। [यथासंख्य अलंकार]

१. भड़काया, उत्साहित किया। २. खजाना। ३. संन्यासी। ४. मदिरा-पान

सो० रिपु रुज[1] पावक[2] पाप प्रभु अहि गनिअ न छोट करि।
अस कहि बिबिध बिलाप करि लागी रोदन करन॥

शत्रु, रोग, अग्नि, पाप, स्वामी और साँप को छोटा करके न गिनना चाहिये। ऐसा कहकर शूर्पणखा अनेक प्रकार से विलाप करके रोने लगी।

दो० सभा माँझ परि ब्याकुल बहु प्रकार कह रोइ।
तोहि जिअत दसकंधर मोरि कि असि गति होइ॥

रावण की सभा में वह व्याकुल होकर पड़ी हुई बहुत प्रकार से रोकर कह रही है कि अरे दश सिर वाले रावण! तेरे जीते-जी मेरी ऐसी दशा हो?

सुनत सभासद उठे अकुलाई ❀ समुझाई गहि बाँह उठाई
कह लंकेस कहसि निज बाता ❀ केइँ तव नासा कान निपाता

शूर्पणखा की बात सुनते ही रावण के सभासद अकुला उठे। उन्होंने शूर्पणखा की बाँह पकड़कर उसे उठाया और समझाया। लंकापति रावण ने कहा—अपनी बात तो बता, किसने तेरे नाक-कान काट लिये हैं?

अवध नृपति दसरथ के जाये ❀ पुरुष सिंघ बन खेलन आये
समुझि परी मोहि उन्ह कै करनी ❀ रहित निसाचर करिहहिं धरनी

उसने कहा—अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र, जो पुरुषों में सिंह के समान हैं, वन में शिकार खेलने आये हैं। उनके कामों को देखकर मैं समझ रही हूँ कि वे पृथ्वी को राक्षसों से रहित कर देंगे।

जिन्ह कर भुजबल पाइ दसानन ❀ अभय भये बिचरत मुनि कानन
देखत बालक काल समाना ❀ परम धीर धन्वी गुन नाना

हे रावण! जिनकी भुजाओं का बल पाकर मुनिगण निर्भय होकर वन में विचरने लगे हैं। वे देखने में तो बालक हैं, पर हैं काल के समान। वे बड़े धीर, श्रेष्ठ धनुर्धारी और अनेकों गुणों से युक्त हैं।

अतुलित बल प्रताप दोउ भ्राता ❀ खल बध रत सुर मुनि सुखदाता
सोभा धाम राम अस नामा ❀ तिन्ह के संग नारि एक स्यामा[3]

दोनों भाई अतुलनीय बल और प्रताप वाले हैं। वे दुष्टों के वध करने में

१. रोग। २. अग्नि। ३. सुन्दर युवती।

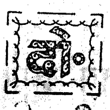
लगे हुये और देवता और मुनियों को सुख देने वाले हैं। वे शोभा के धाम हैं, उनका नाम 'राम' ऐसा है। उनके साथ एक युवती सुन्दरी स्त्री है।

रूप रासि बिधि नारि सँवारी ❁ रति सत कोटि तासु बलिहारी
तासु अनुज काटे स्रुति नासा ❁ सुनि तव भगिनि करहि परिहासा'

ब्रह्मा ने वह स्त्री रूप की ऐसी राशि बनाई है कि उस पर सौ करोड़ रति भी निछावर हैं। उन्हीं के छोटे भाई ने मेरे नाक-कान काटे हैं। यह जानकर कि मैं तेरी बहन हूँ, वे मज़ाक उड़ाने लगे।

खर दूषन सुनि लगे पुकारा ❁ छन महँ सकल कटक उन्ह मारा
खर दूषन तिसिरा कर घाता ❁ सुनि दससीस जरे सब गाता

मेरी पुकार खर-दूषण ने सुनी, तब वे मेरी सहायता करने आये। पर उन्होंने क्षणभर में सारी सेना को मार डाला। खर, दूषण और तृषिरा का वध सुनकर रावण के सारे अंग जल उठे।



सूपनखहि समुझाइ करि बल बोलेसि बहु भाँति।
गयेउ भवन अति सोचबस नींद परइ नहिं राति॥

रावण ने शूर्पणखा को समझाकर बहुत प्रकार से अपने बल की डींग मारी। किन्तु वह (मन में) बहुत चिन्ता-वश होकर अपने महल में गया। रात भर उसे नींद नहीं आई।

सुर नर असुर नाग खग माहीं ❁ मोरे अनुचर कहँ कोउ नाहीं
खर दूषन मोहि सम बलवंता ❁ तिन्हहिं को मारइ बिनु भगवंता

वह सोचने लगा—देवता, मनुष्य, नाग और पक्षियों में कोई ऐसा नहीं, जो मेरे दास को भी पा सके। खर-दूषण तो मेरे ही समान बली थे, उन्हें भगवान् के सिवा और कौन मार सकता है?

सुर रंजन भंजन महि भारा ❁ जौं भगवंत लीन्ह अवतारा
तो मैं जाइ बैरु हठि करऊँ ❁ प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ

देवताओं को आनन्द देने वाले और पृथ्वी का भार हरण करने वाले भगवान् ने ही यदि अवतार लिया हो तो मैं जाकर हठपूर्वक उनसे बैर करूँगा और प्रभु के बाण से प्राण छोड़कर भवसागर से तर जाऊँगा।

---

१. मज़ाक।

होइहि भजनु न तामस देहा ❀ मन क्रम बचन मंत्र दृढ़ एहा
जौं नर रूप भूप सुत कोऊ ❀ हरिहउँ नारि जीति रन दोऊ

इस तामसी शरीर से भजन तो होगा नहीं; अतएव मन, कर्म और वचन से यही राय पक्की है। और यदि वे मनुष्य के रूप में किसी राजा के पुत्र होंगे तो उन दोनों को रण में जीतकर उनकी स्त्री को छीन लूँगा। [संदेह अलंकार]

चला अकेल जान चढ़ि तहवाँ ❀ बस मारीच सिंधु तट जहवाँ
इहाँ राम जसि जुगुति बनाई ❀ सुनहु उमा सो कथा सुहाई

रावण रथ पर चढ़कर अकेला ही वहाँ चला, जहाँ समुद्र के तट पर मारीच बसता था। अब हे पार्वती ! यहाँ रामजी ने जैसी युक्ति रची, वह सुन्दर कथा सुनो।

दो॰ लछिमन गये बनहिं जब लेन मूल फल कंद।
जनकसुता सन बोले बिहँसि कृपा सुख बृन्द॥२३॥

लक्ष्मण जब मूल, फल और कंद लेने के लिये बन में गये थे, तब कृपा और सुख के समूह रामजी हँसकर सीता से बोले।

सुनहु प्रिया ब्रत रुचिर सुसीला ❀ मैं कछु करबि ललित नर लीला
तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा ❀ जौं लगि करौं निसाचर नासा

हे प्रिये ! हे सुन्दर पतिव्रत-धर्म का पालन करने वाली सुशीले ! सुनो। मैं अब कुछ मनोहर नर-लीला करूँगा। इसलिये जब तक मैं राक्षसों का नाश करूँ, तब तक तुम अग्नि में निवास करो।

जबहिं राम सब कहा बखानी ❀ प्रभु पद धरि हियँ अनल समानी
निज प्रतिबिंब राखि तहँ सीता ❀ तैसइ सील रूप सुबिनीता

रामजी ने जब सब समझाकर कहा, तब सीता प्रभु के चरणों को हृदय में धरकर अग्नि में समा गईं। सीता ने अपने ही जैसी शील स्वभाव और रूप वाली विनम्र छाया-मूर्त्ति वहाँ रख दी।

लछिमनहूँ यह मरमु[1] न जाना ❀ जो कछु चरित रचा भगवाना
दसमुख गयेउ जहाँ मारीचा ❀ नाइ माथ स्वारथ रत नीचा

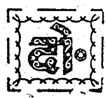
---

१. रहस्य, भेद।

भगवान् ने जो कुछ लीला रची, उस रहस्य को लक्ष्मण ने भी नहीं जाना। स्वार्थी और नीच रावण वहाँ गया, जहाँ मारीच था और उसे सिर नवाया।

नवनि नीच कै अति दुखदाई ❀ जिमि अंकुस धनु उरग बिलाई
भयदायक खल कै प्रिय बानी ❀ जिमि अकाल के कुसुम भवानी

नीच का झुकना अत्यंत दुखदाई होता है। जैसे अंकुश, धनुष, साँप और बिल्ली का झुकना है। हे पार्वती! दुष्ट की मीठी वाणी भी भय उत्पन्न करने वाली होती है, जैसे बिना ऋतु के फूल।



करि पूजा मारीच तब सादर पूछी बात।
कवन हेतु मन ब्यग्र अति अकसर[1] आयेउ तात॥

तब मारीच ने स्वागत-सत्कार करके आदर-सहित रावण से पूछा—हे तात! किस कारण से आपका मन विकल है और आप अकेले आये हैं?

दसमुख सकल कथा तेहि आगें ❀ कही सहित अभिमान अभागें
होहु कपट मृग तुम्ह छलकारी ❀ जेहि बिधि हरि आनौं नृप नारी

भाग्यहीन रावण ने उसके सामने सारी कथा अभिमान-सहित कह सुनाई और फिर कहा—तुम छल करने वाले कपट-मृग बनो, जिससे मैं उस राजा की स्त्री को हर लाऊँ।

तेहिं पुनि कहा सुनहु दससीसा ❀ ते नर रूप चराचर ईसा
तासों तात बयरु नहिं कीजे ❀ मारें मरिअ जिआयें जीजै

तब मारीच ने कहा—हे रावण! सुनिये, वे मनुष्य नहीं, चराचर जगत् के स्वामी हैं। उनसे वैर मत कीजिये। उन्हीं के मारने से मरना और जिलाने से जीना होता है।

मुनि मख[2] राखन गयउ कुमारा ❀ बिनु फर सर रघुपति मोहि मारा
सत जोजन आयउँ छन माहीं ❀ तिन्ह सन बयरु कियें भल नाहीं

राजकुमार राम मुनि विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा के लिये गये थे, उस समय उन्होंने बिना फल का बाण मुझे मारा था। जिससे मैं क्षण-भर में सौ योजन पर आ गिरा। उनसे वैर करने में भलाई नहीं।

---

१. अकेले। २. यज्ञ।

भइ मति कीट भृंग[1] की नाईं ❀ जहँ तहँ मैं देखउँ दोउ भाई
जौं नर तात तदपि अति सूरा ❀ तिन्हहिं बिरोधि न आइहि पूरा

मेरी दशा तो भृङ्गी के कीड़े की-सी हो गई। अब मैं तो जहाँ-जहाँ देखता हूँ, वे ही दोनों भाई मुझको दिखाई पड़ते हैं। और हे तात! यदि वे नर हैं, तो भी बड़े वीर हैं, उनसे वैर करने में पूरा न पड़ेगा, (सफलता नहीं मिलेगी)।

दो॰ जेहिं ताड़का सुबाहु हति खंडेउ हर कोदंड।
खर दूषन तिसिरा बधेउ मनुज कि अस बरिबंड[2]॥

जिन्होंने ताड़का और सुबाहु को मारकर शिवजी के धनुष को तोड़ डाला और खर-दूषण और तृशिरा का वध किया, ऐसा प्रचंड बली भी कहीं मनुष्य हो सकता है?

जाहु भवन कुल कुसल बिचारी ❀ सुनत जरा दीन्हिसि बहु गारी
गुरु जिमि मूढ़ करसि मम बोधा ❀ कहु जग मोहि समान को जोधा

अतः अपने कुल का कल्याण सोचकर घर लौट जाइये। यह सुनकर रावण जल उठा और उसने उसे बहुत-सी गालियाँ दीं। अरे मूर्ख! तू गुरु की तरह मुझे ज्ञान सिखाता है? बता, मेरे समान संसार में योद्धा कौन है?

तब मारीच हृदयँ अनुमाना ❀ नवहि बिरोधे नहिं कल्याना
सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी ❀ बैद्य बंदि कबि भानस[3] गुनी

तब मारीच ने हृदय में अनुमान किया कि नौ व्यक्तियों से विरोध करने में कल्याण नहीं होता। वे नौ ये हैं—हथियार लिये हुये, भेद जानने वाला, समर्थ स्वामी, दुष्ट, धनवान, वैद्य, भाट, कवि और रसोइया।

उभय[4] भाँति देखा निज मरना ❀ तब ताकेसि रघुनायक सरना
उतरु देत मोहि बधब अभागें ❀ कस न मरौं रघुपति सर लागें

जब उसने दोनों प्रकार से अपना मरण देखा, तब उसने रामजी की शरण जाने ही में कल्याण समझा। उसने सोचा—उत्तर देता हूँ, तो यह अभागा मुझको मार डालेगा, तो राम ही के बाण से क्यों न मरूँ?

१. भृंगी कीड़ा, जो दूसरे कीड़ों को अपने ही सरीखा बना लेता है। २. प्रचंड बली। ३. रसोइया। ४. दोनों।

अस जियँ जानि दसानन संगा ❀ चला राम पद प्रेम अभंगा
मन अति हरष जनाव न तेही ❀ आजु देखिहउँ परम सनेही

ऐसा हृदय में समझकर, राम के चरणों में अखंड प्रीति रखकर, वह रावण के साथ चला। उसके मन में अत्यन्त हर्ष है कि आज मैं अपने परम स्नेही राम को देखूँगा; परन्तु यह हर्ष उसने रावण पर प्रकट नहीं होने दिया।

छन्द–निज परम प्रीतम देखि लोचन सुफल करि सुख पाइहौं
श्री सहित अनुज समेत कृपा निकेत पद मन लाइहौं ॥
निर्बान दायक क्रोध जाकर भगति अबसहिं बस करी।
निज पानि सर सँधानि सो मोहि बधिहि सुख सागर हरी ॥

अपने परम प्रियतम को देखकर नेत्रों को सफल करके सुख पाऊँगा और लक्ष्मी-सहित और छोटे भाई लक्ष्मण समेत कृपा के धाम रामजी के चरणों में मन लगाऊँगा। जिनका क्रोध भी मुक्ति देने वाला है, जिनकी भक्ति उन परम स्वतन्त्र भगवान् को भी वश में कर लेती है, वे ही सुख के समुद्र हरि अपने हाथों में बाण सन्धानकर मेरा वध करेंगे।

दो०– मम पाछें धर धावत धरें सरासन बान।
फिरि फिरि प्रभुहिं बिलोकिहउँ धन्य न मो सम आन॥

धनुष-बाण लिये हुये मेरे पीछे पृथ्वी पर दौड़ते हुये प्रभु को मैं मुड़-मुड़कर देखूँगा। मेरे समान धन्य दूसरा कोई नहीं।

तेहि बन निकट दसानन गयेऊ ❀ तब मारीच कपट मृग भयेऊ

जब रावण उस वन के निकट पहुँचा तब मारीच कपट मृग बन गया।

अति बिचित्र कछु बरनि न जाई ❀ कनक देह मनि रचित बनाई
सीता परम रुचिर मृग देखा ❀ अंग अंग सुमनोहर बेषा

वह ऐसा विचित्र था कि उसका कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता। सोने का शरीर मणियों से जड़कर बनाया था। सीता ने उस परम सुन्दर मृग को देखा, जिसके अंग-अंग की छटा मनोहर थी।

सुनहु देव रघुबीर कृपाला ❀ एहि मृग कर अति सुन्दर छाला
सत्यसँध प्रभु बध कर एही ❀ आनहु चर्म कहति बैदेही

हे देव ! हे कृपालु रघुबीर ! सुनिये, इस मृग का चमड़ा बहुत ही सुन्दर है। सीता ने कहा—हे सच्ची प्रतिज्ञा करने वाले प्रभो ! इस मृग को मारकर इसका चमड़ा ला दीजिये।

तब रघुपति जानत सब कारन ❀ उठे हरषि सुर काजु सँवारन
मृग बिलोकि कटि परिकर[1] बाँधा ❀ करतल चाप रुचिर सर साँधा

तब रामचन्द्रजी सब कारण जानते हुये देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिये प्रसन्न होकर उठे। मृग को देखकर प्रभु ने कमर में फेंटा बाँधा, हाथ में धनुष लेकर उस पर सुन्दर बाण संधान किया।

प्रभु लछिमनहिं कहा समुझाई ❀ फिरत बिपिन निसिचर बहु भाई
सीता केरि करेहु रखवारी ❀ बुधि बिबेक बल समय बिचारी

प्रभु ने लक्ष्मण को समझाकर कहा—हे भाई ! वन में बहुत-से राक्षस घूमते रहते हैं। बुद्धि और विवेक द्वारा बल और समय का विचार करके सीता की रखवाली करना।

प्रभुहिं बिलोकि चला मृग भाजी ❀ धाये राम सरासन साजी
निगम नेति[2] सिव ध्यान न पावा ❀ मायामृग पाछें सो धावा

प्रभु को देखकर मृग भाग चला। रामचन्द्रजी धनुष संधान कर उसके पीछे दौड़े। वेद ने जिसे 'नेति' कहा, शिव जिसको ध्यान में नहीं पाते, वे ही रामचन्द्रजी माया-मृग के पीछे दौड़ रहे हैं।

कबहुँ निकट पुनि दूरि पराई ❀ कबहुँक प्रगटइ कबहुँ छिपाई
प्रगटत दुरत करत छल भूरी[3] ❀ एहि बिधि प्रभुहि गयउ लै दूरी

कभी वह निकट आ जाता है, कभी दूर भाग जाता है। कभी दिखाई पड़ता है और कभी छिप जाता है। इस प्रकार दिखाई पड़ते, छिपते और बहुत कपट करते हुये वह प्रभु को दूर ले गया।

तब तकि राम कठिन सर मारा ❀ धरनि परेउ करि घोर पुकारा
लछिमन कर प्रथमहि लै नामा ❀ पाछें सुमिरेसि मन महुँ रामा

तब रामजी ने निशाना साधकर उसे कठोर बाण मारा, जिसके लगने से वह ज़ोर से पुकारकर ज़मीन पर गिर पड़ा। पहले लक्ष्मण का नाम लेकर पीछे उसने मन में रामजी का स्मरण किया।

---

१. फेंटा। २. न इति, इतना ही नहीं। ३. बहुत।

पंचवटी में

प्रान तजत प्रगटेसि निज देहा ❀ सुमिरेसि रामु समेत सनेहा
अंतर प्रेमु तासु पहिचाना ❀ मुनि दुर्लभ गति दीन्हि सुजाना

प्राण छोड़ते समय उसने अपना असली शरीर दिखलाया और प्रेम-सहित राम का स्मरण किया। सुजान राम ने उसके हृदय के प्रेम को पहचानकर उसे वह गति दी, जो मुनियों को भी दुर्लभ है।

दो॰ बिपुल सुमन सुर बरषहिं गावहिं प्रभु गुन गाथ।
निज पद दीन्ह असुर कहुँ दीनबन्धु रघुनाथ॥२७॥

देवता बहुत-से फूल बरसा रहे हैं और प्रभु के गुणों की स्तुतियों का गान कर रहे हैं कि रामचन्द्रजी ऐसे दीनबन्धु हैं कि उन्होंने असुर को अपना पद (बैकुण्ठ) दे दिया।

खल बधि तुरत फिरे रघुबीरा ❀ सोह चाप कर कटि तूनीरा[1]
आरत गिरा सुनी जब सीता ❀ कह लछिमन सन परम सभीता

उस दुष्ट मारीच को मारकर राम तुरन्त ही लौटे। उनके हाथ में धनुष और कमर में तरकस शोभा दे रहा है। इधर जब सीता ने कराहने की दुःखभरी आवाज़ सुनी, तब वे बहुत भयभीत होकर लक्ष्मण से कहने लगीं—

जाहु बेगि संकट अति भ्राता ❀ लछिमन बिहँसि कहा सुनु माता
भृकुटि बिलास सृष्टि लय होई ❀ सपनेहु संकट परइ कि सोई

तुम्हारे भाई बड़े संकट में हैं, तुम शीघ्र जाओ। लक्ष्मण ने हँसकर कहा—हे माता! सुनो, जिसके भौं के इशारे से सभी सृष्टि का प्रलय हो सकता है, भला, वे कभी स्वप्न में भी संकट में पड़ सकते हैं?

मरम बचन जब सीता बोला ❀ हरि प्रेरित लछिमन मन डोला

इस पर जब सीता ने हृदय में कुछ चुभने वाली बात कही, तब भगवान् की प्रेरणा से लक्ष्मण का मन भी चलायमान हो गया।

बन दिसि देव सौंपि सब काहू ❀ चले जहाँ रावन ससि राहू

उन्हें वन और दिशाओं के देवताओं को सौंपकर लक्ष्मण वहाँ चले, जहाँ रावणरूपी चन्द्रमा के राहू-रूप रामजी थे।

---

१. तरकस।

सून[1] बीच दसकंधर देखा ❀ आवा निकट जती कें बेषा
जाकें डर सुर असुर डेराहीं ❀ निसि न नींद दिन अन्न न खाहीं

(लछमण की खींची हुई) गोल रेखा के बीच में सूना देखकर रावण यति के वेश में सीता के समीप आया। जिसके भय से सुर और असुर इतना डरते हैं; उन्हें रात में न नींद आती है और न वे दिन में भरपेट अन्न खाते हैं।

सो दससीस स्वान[2] की नाईं ❀ इत उत चितइ चला भड़िहाईं[3]
इमि कुपंथ पग देत खगेसा ❀ रह न तेज तन बुधि बल लेसा

वही रावण कुत्ते की तरह इधर-उधर ताक-झाँककर चोरी करने चला। हे गरुड़! इसी प्रकार बुरे मार्ग पर पैर रखते ही शरीर में तेज, बुद्धि तथा बल का लेश भी नहीं रह जाता।

नाना बिधि कहि कथा सुहाई ❀ राजनीति भय प्रीति देखाई
कह सीता सुनु जती गोसाईं ❀ बोलेहु बचन दुष्ट की नाईं

रावण ने अनेकों प्रकार की सुहावनी कथायें कहकर सीता को राजनीति, भय और प्रेम दिखलाया। तब सीता ने कहा—हे यति! हे गोसाईं! तुमने तो दुष्ट की तरह वचन कहे।

तब रावन निज रूप देखावा ❀ भईं सभय जब नाम सुनावा
कह सीता धरि धीरजु गाढ़ा ❀ आइ गयउ प्रभु रहु खल ठाढ़ा

तब रावण ने अपना असली रूप दिखलाया और जब नाम सुनाया, तब तो सीताजी बहुत डर गईं। सीताजी ने खूब हिम्मत करके कहा—अरे दुष्ट! खड़ा तो रह, स्वामी आ गये।

जिमि हरिबधुहि[4] छुद्र सस[5] चाहा ❀ भयेसि काल बस निसिचर नाहा

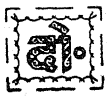
जैसे सिंह की स्त्री को तुच्छ खरहा चाहे वैसे ही अरे राक्षसराज, तू काल के वश हुआ है।

सुनत बचन दससीस रिसाना ❀ मन महुँ चरन बंदि सुख माना

ये वचन सुनते ही रावण क्रोधित हो गया; पर मन में उसने सीता के चरणों की वन्दना करके सुख पाया।

---

१. शून्य, गोल रेखा। २. कुत्ता। ३. बरतन-भाँडे में चुपके से मुँह डालना।
४. सिंहनी। ५. खरगोश।



दो० क्रोधवंत तब रावन लीन्हेसि रथ बैठाइ।
चला गगनपथ आतुर भयँ रथ हाँकि न जाई॥२८

तब क्रोध में भरकर रावण ने सीता को रथ पर बैठा लिया और वह जल्दी-जल्दी आकाश-मार्ग से चला। डर के मारे उससे रथ हाँका नहीं जाता था।

हा जग एक बीर रघुराया ❀ केहि अपराध बिसारेहु दाया
आरति हरन सरन सुखदायक ❀ हा रघुकुल सरोज दिननायक

सीता विलाप करने लगीं—हाय जगत में अद्वितीय वीर राम! आपने किस अपराध से मुझ पर दया भुला दी? हे दुःखों के हरने वाले, शरण में आये हुये को सुख देने वाले, हे रघुकुलरूपी कमल के सूर्य!

हा लछिमन तुम्हार नहिं दोसा ❀ सो फल पायेउँ कीन्हेउँ रोसा[1]

हा! लक्ष्मण, तुम्हारा दोष नहीं है। मैंने क्रोध किया था, उसका फल पाया।

बिबिध बिलाप करत बैदेही ❀ भूरि कृपा प्रभु दूरि सनेही

सीता बहुत प्रकार से विलाप कर रही हैं। हाय! स्वामी की कृपा तो मुझ पर बहुत है, पर वे स्नेही प्रभु इस समय दूर हैं।

बिपति मोरि को प्रभुहिं सुनावा ❀ पुरोडास[2] चह रासभ[3] खावा
सीता कै बिलाप सुनि भारी ❀ भए चराचर जीव दुखारी

प्रभु को मेरी यह विपत्ति कौन सुनाये? गधा यज्ञ के अन्न को खाना चाहता है। सीता का भारी विलाप सुनकर चर और अचर सभी जीव दुखी हुये।

गीधराज सुनि आरत बानी ❀ रघुकुल तिलक नारि पहिचानी
अधम निसाचर लीन्हें जाई ❀ जिमि मलेछ बस कपिला[4] गाई

गृधराज जटायु ने सीता की दुख-भरी वाणी सुनकर पहचान लिया कि वे रघुकुल-तिलक रामजी की पत्नी हैं। नीच राक्षस उनको इस तरह लिये जा रहा है जैसे कपिला गाय म्लेच्छ के पाले पड़ गई हो।

सीते पुत्रि करसि जनि त्रासा ❀ करिहौं जातुधान कै नासा

हे सीता बेटी, डरो मत, मैं इस राक्षस का नाश करूँगा।

---

१. क्रोध। २. यज्ञ का अन्न। ३. गधा। ४. सीधी।

धावा क्रोधवंत खग कैसें ❀ छूटै पबि[1] पर्बत कहुँ जैसें
रे रे दुष्ट ठाढ़ किन होही ❀ निर्भय चलेसि न जानेसि मोही

वह पक्षी क्रोध में भरकर ऐसा दौड़ा, जैसे पर्वत की ओर बज्र छूटता हो। उसने ललकारा—अरे दुष्ट, खड़ा क्यों नहीं होता? निडर होकर चला जा रहा है, मुझे नहीं जानता?

आवत देखि कृतांत[2] समाना ❀ फिरि दसकंधर कर अनुमाना
की मैनाक कि खगपति होई ❀ मम बल जान सहित पति सोई
जाना जरठ जटायू एहा ❀ मम कर तीरथ छाँड़िहि देहा

उसको यमराज के समान आता हुआ देखकर रावण लौट पड़ा और अनुमान करने लगा—यह या तो मैनाक-पर्वत है, या पक्षियों का स्वामी गरुड़। पर वह भी तो अपने स्वामी (विष्णु) सहित मेरे बल को जानता है। अन्त में उसने जाना कि अरे, यह तो बुड्ढा जटायु है। यह मेरे हाथरूपी तीर्थ में आज शरीर छोड़ेगा।

सुनत गीध क्रोधातुर धावा ❀ कह सुनु रावन मोर सिखावा
तजि जानकिहि कुसल गृह जाहू ❀ नाहिं त अस होइहि बहुबाहू

यह सुनते ही, जटायु क्रोध में भरकर बड़े वेग से दौड़ा और बोला—रावण, मेरी बात सुन। तू जानकी को छोड़कर कुशल-सहित अपने घर चला जा। नहीं तो हे बहुत भुजाओं वाले! तेरा ऐसा हाल होगा कि—

राम रोष पावक अति घोरा ❀ होइहि सलभ[3] सकल कुल तोरा
उतरु न देत दसानन जोधा ❀ तबहिं गीध धावा करि क्रोधा

राम के क्रोधरूपी अत्यन्त भयानक अग्नि में तेरा सारा परिवार पतिंगा हो जायगा। योद्धा रावण उसकी बात का कुछ उत्तर नहीं देता। तब जटायु क्रोध करके दौड़ा।

धरि कच बिरथ कीन्ह महि गिरा ❀ सीतहिं राखि गीध पुनि फिरा
चोचन्ह मारि बिदारेसि देही ❀ दंड[4] एक भइ मुरुछा तेही

उसने रावण के बाल पकड़कर उसे रथ से खींच लिया। रावण पृथ्वी पर गिर पड़ा। गीध सीता को एक ओर बैठाकर फिर लौटा और चोंचों से मारकर

१. बज्र। २. यमराज। ३. पतिंगा। ४. घड़ी।

उसके शरीर को विदीर्ण कर डाला। इससे उसे एक घड़ी तक मूर्च्छा आ गई।

तब सक्रोध निसिचर खिसियाना ❀ काढ़ेसि परम कराल कृपाना
काटेसि पंख परा खग धरनी ❀ सुमिरि राम करि अद्भुत करनी

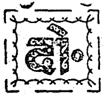
तब खिसियाये हुये रावण ने क्रुद्ध होकर अत्यन्त भयानक कटार निकाली और उससे जटायु के पंख काट डाले। जटायु अद्भुत करनी करके राम को स्मरण करके धरती पर गिर पड़ा।

सीतहि जान चढ़ाइ बहोरी ❀ चला उताइल त्रास न थोरी

रावण फिर सीता को रथ पर चढ़ाकर जल्दी-जल्दी चला। उसे भय कम न था।

करति बिलाप जाति नभ सीता ❀ ब्याध बिबस जनु मृगी सभीता
गिरि पर बैठे कपिन्ह निहारी ❀ कहि हरि नाम दीन्ह पट[1] डारी
एहि बिधि सीतहिं सो लै गयऊ ❀ बन असोक महँ राखत भयऊ

सीता आकाश में विलाप करती हुई जा रही हैं, जैसे ब्याध के वश में पड़ी हुई कोई भयभीत हरिणी हो। पर्वत पर बैठे हुये बानरों को देखकर सीता ने राम का नाम लेकर वस्त्र फेंक दिया। रावण इस प्रकार सीता को ले गया और उन्हें अशोक वन में रक्खा।



हारि परा खल बहु बिधि भय अरु प्रीति देखाइ।
तब असोक पादप[2] तर राखेसि जतनु कराइ॥

वह दुष्ट रावण बहुत प्रकार से सीता को भय और प्रीति दिखलाकर जब हार गया, तब उन्हें अशोक वृक्ष के नीचे यत्न कराके उसने रखा दिया।

जेहि बिधि कपट कुरंग सँग धाइ चले श्रीराम।
सो छबि सीता राखि उर रटति रहति हरिनाम॥

जिस प्रकार कपट-मृग के साथ श्रीराम दौड़ चले थे, उसी छवि को हृदय में रखकर वे राम का नाम रटती रहती हैं।

रघुपति अनुजहि आवत देखी ❀ बाहिज चिंता कीन्हि बिसेषी
जनकसुता परिहरेउ अकेली ❀ आयहु तात बचन मम पेली

१. वस्त्र। २. वृक्ष।

छोटे भाई को आते देखकर रामचन्द्रजी ने बाहरी (दिखावटी) चिन्ता विशेषरूप से की, और कहा—हे भाई ! सीता को अकेली छोड़कर और मेरा वचन टालकर तुम यहाँ आये।

निसिचर निकर[1] फिरहिं बन माहीं ❀ मम मन सीता आश्रम नाहीं

राक्षसों के समूह वन में घूमते रहते हैं। मेरे मन में ऐसा आता है कि सीता आश्रम में नहीं हैं।

गहि पद कमल अनुज कर जोरी ❀ कहेउ नाथ कछु मोरि न खोरी[2]

छोटे भाई लक्ष्मण ने राम के चरण-कमलों को पकड़कर, हाथ जोड़कर कहा—हे नाथ ! मेरा कुछ भी अपराध नहीं है।

अनुज समेत गए प्रभु तहवाँ ❀ गोदावरि तट आस्रम जहवाँ
आस्रम देखि जानकी हीना ❀ भए बिकल जस प्राकृत दीना

लक्ष्मण-सहित प्रभु राम फिर वहाँ गये, जहाँ गोदावरी के तट पर उनका आश्रम था। आश्रम को सीता से रहित देखकर राम इस प्रकार विकल हुये, जैसे साधारण मनुष्य व्याकुल और दीन हो जाते हैं।

हा गुन खानि जानकी सीता ❀ रूप सील ब्रत नेम पुनीता

राम विलाप करने लगे—हा, गुणों की खानि जनकराजकुमारी ! हा ! रूप, शील, व्रत और पवित्र नियमों वाली सीता !

लछिमन समुझाए बहु भाँती ❀ पूछत चले लता तरु पाँती
हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी ❀ तुम्ह देखी सीता मृगनैनी

लक्ष्मण ने बहुत प्रकार से समझाया, तब राम लताओं और वृक्षों की पंक्तियों से पूछते हुये आगे चले—हे पक्षियो ! हे पशुओ ! हे भौंरों की श्रेणियाँ ! तुमने कहीं मृगों के से नेत्रों वाली सीता को देखा है ?

खंजन सुक कपोत मृग मीना ❀ मधुप निकर कोकिला प्रबीना
कुंद कली दाड़िम दामिनी ❀ कमल सरद ससि अहिभामिनी

खंजन, तोता, कबूतर, हरिण, मछली, भौंरों का समूह प्रवीण कोयल, कुन्द की कली, अनार, बिजली, कमल, शरद का चन्द्रमा और नागिनी,

बरुन पास मनोज धनु हंसा ❀ गज केहरि निज सुनत प्रसंसा
श्रीफल[3] कनक कदलि[4] हरषाहीं ❀ नेकु न संक सकुच मन माहीं

१. समूह। २. अपराध। ३. बेल। ४. केला।

वरुण का पाश, कामदेव का धनुष, हंस, हाथी और सिंह, ये सब आज अपनी प्रशंसा सुन रहे हैं। बेल, सोना और केला हर्षित हो रहे हैं। इनके मन में ज़राभर भी भय और संकोच नहीं है।

सुनु जानकी तोहि बिनु आजू ❀ हरषे सकल पाइ जनु राजू

हे सीता! आज तुम्हारे बिना ये सब ऐसे प्रसन्न हैं, जैसे राज पा गये हैं।

एहि बिधि खोजत बिलपत स्वामी ❀ मनहुँ महा बिरही अति कामी

इस प्रकार स्वामी रामजी सीता को खोजते और विलाप करते हैं जैसे कोई महा विरही और अत्यन्त कामी पुरुष हो।

पूरन काम राम सुखरासी ❀ मनुज चरित कर अज अबिनासी

राम तो पूर्ण काम, सुख की राशि, अजन्मा और विनाश-रहित होकर भी मनुष्यों जैसा चरित्र कर रहे हैं।

आगे परा गीधपति देखा ❀ सुमिरत रामचरन की रेखा

आगे जाने पर गृद्धपति जटायु को पड़ा हुआ देखा, जो राम के चरणों का स्मरण कर रहा था, जिनमें (ध्वज, कुलिश आदि) रेखायें हैं।



कर सरोज सिरु परसेउ कृपासिंधु रघुबीर।
निरखि राम छबि धाम मुख बिगत भई सब पीर॥३०॥

कृपा के समुद्र रामजी ने अपने कमल ऐसे हाथ से उसके सिर का स्पर्श किया। शोभा के धाम राम का मुख देखकर उसकी सब पीड़ा जाती रही।

तब कह गीध बचन धरि धीरा ❀ सुनहु राम भंजन भव भीरा
नाथ दसानन यह गति कीन्ही ❀ तेहि खल जनक सुता हर लीन्ही

तब धीरज धरकर गीध ने यह वचन कहा—हे संसार के संकट को नाश करने वाले राम! सुनिये। हे नाथ! रावण ने मेरी यह दशा की है। उसी दुष्ट ने जनकराज-पुत्री सीता को हर लिया है।

लै दच्छिन दिसि गयउ गोसाईं ❀ बिलपति अति कुररी[1] की नाईं
दरस लागि प्रभु राखेउँ प्राना ❀ चलन चहत अब कृपा निधाना

हे स्वामी! वह सीता को लेकर दक्षिण दिशा को गया है। सीता कुररी की तरह अत्यन्त विलाप कर रही थीं। हे प्रभो! मैंने आपके दर्शनों ही के लिये

१. चील की तरह का एक पक्षी।

प्राणों को रोक रक्खा था। हे कृपा के धाम राम! अब ये चलना ही चाहते हैं।

राम कहा तनु राखहु ताता ❀ मुख मुसुकाइ कही तेहिं बाता
जाकर नाम मरत मुख आवा ❀ अधमहु मुकुत होइ श्रुति गावा

रामचन्द्रजी ने कहा—हे तात! शरीर को बनाये रखिये। तब उसने मुसकुराते हुये मुख से यह बात कही—मरते समय जिसका नाम मुख में आ जाता है तो पापी भी मुक्त हो जाता है, ऐसा वेद गाते हैं—

सो मम लोचन गोचर आगें ❀ राखौं देह नाथ केहि खाँगे[1]
जल भरि नयन कहहिं रघुराई ❀ तात कर्म निज तें गति पाई

वही (आप) मेरी आँखों के आगे हैं। अब हे नाथ! किस कमी की पूर्ति के लिये देह को रक्खूँ। आँखों में जल भरकर राम कहने लगे—हे तात! आपने अपने कर्मों से ही सद्गति पाई है।

परहित बस जिन्हके मन माहीं ❀ तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं
तनु तजि तात जाहु मम धामा ❀ देउँ काह तुम्ह पूरन कामा

जिनके मन में दूसरों का हित बसता है, उनके लिये जगत् में कुछ भी दुर्लभ नहीं। हे तात! शरीर छोड़कर आप मेरे धाम (बैकुण्ठ) को जाइये। आप तो पूर्ण-काम हैं। मैं आपको क्या दूँ।

दो॰ सीता हरन तात जनि कहेहु पिता सन जाइ।
जौं मैं राम त कुल सहित कहिहि दसानन आइ ॥३१

हे तात! सीताहरण की बात आप जाकर पिताजी से न कहियेगा। यदि मैं राम हूँ तो रावण कुटुम्ब-सहित वहाँ आकर स्वयं ही कहेगा। [प्रथम पर्यायोक्ति अलंकार]

गीध देह तजि धरि हरि रूपा ❀ भूषन बहु पट पीत अनूपा
स्याम गात बिसाल भुज चारी ❀ अस्तुति करत नयन भरि बारी

जटायु ने गीध-देह छोड़कर, हरि का रूप धर लिया और बहुत से दिव्य आभूषण और अनुपम दिव्य पीताम्बर पहन लिये, श्याम शरीर और विशाल चार भुजाओं से युक्त होकर, वह नेत्रों में जल भरकर, स्तुति करने लगा—

---

१. कमी।

छंद—जय राम रूप अनूप निर्गुन सगुन गुन प्रेरक सही ।
दस सीस बाहु प्रचंड खंडन चंड सर मंडन मही ॥
पाथोद[1] गात सरोज मुख राजीव[2] आयत लोचनं ।
नित नौमि रामु कृपालु बाहु बिसाल भव भय मोचनं ॥

हे अनुपम रूप वाले राम ! आपकी जय हो । आप निर्गुण और सगुण हैं और सत्य ही गुणों के प्रेरक हैं । दस सिर वाले रावण की प्रचण्ड भुजाओं के खंड-खंड करने के लिये प्रचण्ड बाण धारण करने वाले, पृथ्वी को सुशोभित करने वाले, जलयुक्त मेघ के समान श्याम शरीर वाले, कमल ऐसे मुख वाले, कमल के समान विशाल नेत्रों वाले, विशाल भुजाओं वाले, संसार के भय को मिटाने वाले, हे कृपालु राम ! मैं आपको नित्य नमस्कार करता हूँ ।

बलमप्रमेयमनादिमजमव्यक्तमेकमगोचरं ।
गोविंद गोपर द्वंद्व[3]हर बिग्यानघन धरनीधरं ॥
जे राम मंत्र जपंत संत अनंत जन मन रंजनं ।
नित नौमि राम अकाम प्रिय कामादि खल दल गंजनं ॥

आप अपरिमित बल वाले हैं; अनादि, अजन्मा, निराकार, एक, अगोचर, गोविन्द, इन्द्रियों से परे, द्वन्द्वों को हरने वाले, विज्ञानघन और पृथ्वी के आधार हैं । संतजन जिस राम मन्त्र को जपते हैं, उन असंख्य भक्तों के मन को प्रसन्न करने वाले हैं । उन निष्काम भक्ति करने वालों को प्रिय तथा काम आदि दुष्टों के दलन करने वाले राम को मैं नित्य नमस्कार करता हूँ ।

जेहि श्रुति निरंजन[4] ब्रह्म ब्यापक बिरज अज कहि गावहीं ।
करि ध्यान ग्यान बिराग जोग अनेक मुनि जेहि पावहीं ॥
सो प्रगट करुना कंद सोभा बृन्द अग[5] जग[6] मोहई ।
मम हृदय पंकज भृङ्ग अङ्ग अनङ्ग बहु छबि सोहई ॥

वेद जिसे निरंजन, ब्रह्म, व्यापक, निर्विकार और जन्म-रहित कहकर गान

---

१. जलयुक्त मेघ । २. कमल । ३. जन्म-मरण, सुख-दुःख, हर्ष-शोक आदि जोड़े ।
४. माया से परे । ५. अचर । ६. चर ।

करते हैं; मुनि जिसे ध्यान, ज्ञान, वैराग्य और योग आदि अनेकों साधनों से पाते हैं, वह करुणा का मूल, शोभा का समूह प्रकट होकर सचराचर को मोहित करता है। वह मेरे हृदय रूपी कमल का भौंरा है और उसके अङ्ग-अङ्ग में अनेकों कामदेवों की छवि शोभा पा रही है।

जो अगम सुगम सुभाव निर्मल असम सम सीतल सदा।
पश्यंति जं जोगी जतन करि करत मन गो बस जदा॥
सो राम रमा निवास संतत दास बस त्रिभुवन धनी।
मम उर बसउ सो समन संसृति जासु कीरति पावनी॥

जो अगम भी हैं, सुगम भी हैं, जिनका स्वभाव निर्मल है, जो विषम भी हैं, सम भी हैं, जो सदा शीतल हैं, योगी जिन्हें यत्न करके जब मन और इन्द्रियों को वश में कर लेते हैं, तब देख पाते हैं, वे लक्ष्मीपति, तीनों लोकों के स्वामी, सदा भक्तों के वश में रहने वाले राम मेरे हृदय में बसें; जिनकी पवित्र कीर्त्ति आवागमन को मिटाने वाली है।

दो० **अबिरल[1] भगति माँगि बर गीध गयेउ हरिधाम।**
तेहि कै क्रिया जथोचित निज कर कीन्ही राम॥

अखंड भक्ति का वर माँगकर जटायु हरि के परमधाम (बैकुण्ठ) को गया। रामचन्द्रजी ने उसकी यथोचित (दाह-कर्म आदि) क्रियायें अपने हाथों से कीं।

कोमल चित अति दीनदयाला ❀ कारन बिनु रघुनाथ कृपाला
गीध अधम खग आमिष[2] भोगी ❀ गति दीन्ही जो जाँचत जोगी

रामजी अत्यंत कोमल चित्त वाले, दीनदयालु और बिना कारण ही कृपा करने वाले हैं। गीध एक अधम पक्षी और मांसाहारी था, उसे भी राम ने वह गति दी जिसे योगी-जन माँगते रहते हैं।

सुनहु उमा ते लोग अभागी ❀ हरि तजि होहिं विषय अनुरागी
पुनि सीतहि खोजत दोउ भाई ❀ चले बिलोकत बन बहुताई

हे पार्वती! सुनो, वे लोग भाग्यहीन हैं, जो भगवान् को छोड़कर विषयों

१. अखंड। २. माँस।

से अनुराग करते हैं। फिर दोनों भाई सीता को खोजते हुये और वन की सघनता देखते हुये आगे चले।

संकुल लता बिटप घन कानन ❀ बहु खग मृग तहँ गज पंचानन[1]
आवत पंथ कबंध[2] निपाता ❀ तेहि सब कही साप कै बाता

वह वन लताओं और सघन वृक्षों से भरा है। उसमें अनेक प्रकार के पक्षी, पशु, हाथी और सिंह रहते हैं। रास्ते में आते हुये उन्होंने कबंध का वध किया। उसने अपने शाप की सारी बातें सुनाईं।

दुरबासा मोहि दीन्ही सापा ❀ प्रभु पद देखि मिटा सो पापा
सुनु गंधर्ब कहउँ मैं तोही ❀ मोहिं न सोहाइ ब्रह्म कुल द्रोही

उसने कहा—दुर्वासा ने मुझे शाप दिया था। सो वह पाप आज प्रभु के चरणों को देखकर मिट गया। राम ने कहा—हे गन्धर्व! मैं तुमको कहता हूँ, सुनो। ब्राह्मण-कुल से द्रोह करने वाला मुझे नहीं सुहाता।

दो० मन क्रम बचन कपट तजि जो गुर भूसुर सेव।
मोहि समेत बिरंचि सिव बस ताकें सब देव ॥३३॥

मन, वचन और कर्म से छल छोड़कर जो गुरु और ब्राह्मणों की सेवा करता है, मुझ समेत ब्रह्मा और शिव आदि सब देवता उसके वश में हो जाते हैं।

सापत ताड़त परुष[3] कहंता ❀ बिप्र पूज्य अस गावहिं संता
पूजिअ बिप्र सील गुन हीना ❀ सूद्र न गुन गन ग्यान प्रबीना

शाप देता हुआ, मारता हुआ और कटु वचन कहता हुआ भी ब्राह्मण पूजा के योग्य है, ऐसा संत कहते हैं। ब्राह्मण शील और गुणों से हीन हो, तब भी वह पूजा के योग्य है। पर गुणों के समूह से युक्त और ज्ञान में निपुण भी शूद्र पूजा के योग्य नहीं है।

कहि निज धर्म ताहि समुझावा ❀ निज पद प्रीति देखि मन भावा
रघुपति चरन कमल सिरु नाई ❀ गयेउ गगन आपनि गति पाई

रामजी ने अपना धर्म (भागवत-धर्म) बताकर उसे समझाया। अपने चरणों में उसका प्रेम देखकर वह उन्हें प्रिय लगा। राम के चरण-कमलों में सिर नवाकर वह अपनी गति पाकर (गन्धर्व होकर) आकाश में चला गया।

---

१. सिंह। २. एक राक्षस। ३. कठोर वचन।

ताहि देइ गति राम उदारा ❀ सबरी के आश्रम पगु धारा
सबरी देखि राम गृहँ आए ❀ मुनि के बचन समुझि जियँ भाए

उदार रामजी उसे गति देकर शबरी के आश्रम में पधारे। शबरी ने देखा, राम घर में आये हैं। तब मुनि (मतंग) के वचन उसे याद आये और मन को प्रिय लगे।

सरसिज लोचन बाहु बिसाला ❀ जटा मुकुट सिर उर बन माला
स्याम गौर सुन्दर दोउ भाई ❀ सबरी परी चरन लपटाई

कमल ऐसे नेत्र और विशाल भुजाओं वाले, सिर पर जटा का मुकुट और हृदय पर बनमाला धारण किये हुये सुन्दर साँवले और गोरे दोनों भाइयों को देखकर शबरी उनके चरणों में लिपट पड़ी।

प्रेम मगन मुख बचनु न आवा ❀ पुनि पुनि पद सरोज सिर नावा
सादर जल लै चरन पखारे ❀ पुनि सुन्दर आसन बैठारे

वह प्रेम में मग्न हो गई। मुख से वचन नहीं निकलता। बार-बार वह कमल ऐसे चरणों पर सिर नवाती है। फिर उसने जल लेकर आदरपूर्वक उनके चरण धोये। फिर उन्हें सुन्दर आसनों पर बैठाया।

दो॰ कंद मूल फल सुरस अति दिए राम कहुँ आनि।
प्रेम सहित प्रभु खायउ बारम्बार बखानि ॥३४॥

शबरी ने रामजी को रसीले और स्वादिष्ट कंद, मूल और फल लाकर दिये। प्रभु ने उन्हें प्रेम-सहित और बार-बार उनकी प्रशंसा करके खाया।

पानि जोरि आगे भइ ठाढ़ी ❀ प्रभुहिं बिलोकि प्रीति अति बाढ़ी
केहि बिधि अस्तुति करौं तुम्हारी ❀ अधम जाति मैं जड़मति भारी

फिर वह हाथ जोड़कर आगे खड़ी हुई। प्रभु को देखकर उसकी प्रीति बहुत बढ़ी। उसने कहा—हे राम ! मैं आपकी स्तुति किस प्रकार करूँ ? मैं नीच जाति की हूँ और बड़ी मूर्खा हूँ।

अधम तें अधम अधम अति नारी ❀ तिन्ह महँ मैं मतिमंद अघारी
कह रघुपति सुनु भामिनि बाता ❀ मानउँ एक भगति कर नाता

हे पापों के शत्रु ! जो अधम से भी अधम है, स्त्रियाँ उनमें भी अत्यन्त अधम हैं और उनमें भी मैं मंद-बुद्धि हूँ। रामजी ने कहा—हे भामिनी ! मेरी बात सुन।

कन्दमूल फल सुरस अति, दिये राम कहुँ आनि ।
प्रेम सहित प्रभु खाये, बारंबार बखानि ।।

मैं तो केवल एक भक्ति ही का सम्बन्ध मानता हूँ। [सार अलंकार]

जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई ❀ धन बल परिजन गुन चतुराई
भगति हीन नर सोहइ कैसा ❀ बिनु जल बारिद देखिअ जैसा

जाति, पाँति, कुल, धर्म, बड़ाई, धन, बल, कुटुम्ब, गुण और चतुरता इन सबके होने पर भी भक्ति से रहित मनुष्य इस प्रकार लगता है, जैसे जलहीन बादल दिखाई पड़ता है।

नवधा भगति कहउँ तोहि पाहीं ❀ सावधान सुनु धरु मन माहीं
प्रथम भगति संतन्ह कर संगा ❀ दूसरि रति मम कथा प्रसंगा

मैं तुमसे अब अपनी नवधा भक्ति कहता हूँ। तू सावधान होकर सुन और मन में रख। पहली भक्ति है सन्तों का सत्संग। दूसरी भक्ति है मेरी कथा-प्रसंगों में प्रेम।

दो० **गुर पद पंकज सेवा तीसरि भगति अमान।**
चौथि भगति मम गुन गन करै कपट तजि गान ॥३५

तीसरी भक्ति है अभिमान-रहित होकर गुरु के कमल ऐसे चरणों की सेवा। चौथी भक्ति है, कपट छोड़कर मेरे गुण-समूहों का गान करना।

मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा ❀ पँचम भजन सो बेद प्रकासा
छठ दम सील बिरति बहु कर्मा ❀ निरत निरंतर सज्जन धर्मा

पाँचवीं भक्ति है, मुझमें दृढ़ विश्वास रखकर मेरे मंत्र का जप और भजन करना, जैसा वेदों में प्रसिद्ध है। छठी भक्ति है, इन्द्रियों का निग्रह, शील, बहुत कार्यों से वैराग्य और सदा सत्पुरुषों के धर्म में तत्पर रहना।

सातवँ सम मोहि मय जग देखा ❀ मोतें संत अधिक करि लेखा
आठवँ जथालाभ संतोषा ❀ सपनेहु नहिं देखै परदोषा

सातवीं भक्ति है, समान दृष्टि रखकर सारे जगत् को मुझसे ओत-प्रोत देखना और सन्तों को मुझसे भी अधिक करके मानना। आठवीं भक्ति है, जो कुछ मिल जाय, उसी में संतोष का होना, और स्वप्न में भी पराये दोषों को न देखना।

नवम सरल सब सन छलहीना ❀ मम भरोस हियँ हरष न दीना
नव महुँ एकउ जिन्हकें होई ❀ नारि पुरुष सचराचर कोई

नवीं भक्ति है, सरलता और सबसे कपटहीन व्यवहार करना। हृदय में मेरा ही भरोसा रखना, और न हर्ष हो न दीनता। इन नवों में से एक भी किसी के पास हो, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, जड़ हो या चेतन, कोई भी हो,

सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरें ❀ सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरें
जोगि बृन्द दुर्लभ गति जोई ❀ तो कहुँ आजु सुलभ भइ सोई

हे भामिनि! मुझे वही अत्यन्त प्रिय है। तुझमें तो सभी प्रकार की भक्ति दृढ़ है। अतएव योगियों को भी जो गति दुर्लभ है, वही आज तुझे सुलभ हो गई है।

मम दरसन फल परम अनूपा ❀ जीव पाव निज सहज सरूपा
जनकसुता कइ सुधि कहु भामिनी ❀ जानहि कहु जो करिबर गामिनी

मेरे दर्शन का यह परम अनुपम फल है कि जीव अपना सहज स्वभाव पा लेता है। हे भामिनी! अब यदि कुछ जानती हो, तो गजगामिनी जानकी की ख़बर बता।

पंपा सरहि जाहु रघुराई ❀ तहँ होइहि सुग्रीव मिताई
सो सब कहिहि देव रघुबीरा ❀ जानतहू पूँछहु मतिधीरा
बार बार प्रभुपद सिरु नाई ❀ प्रेमसहित सब कथा सुनाई

शबरी ने कहा—हे राम! पंपा नामक सरोवर को जाइये। वहाँ आपकी सुग्रीव से मित्रता होगी। हे देव! हे राम! वह सब हाल बतायेगा। हे धीर मति वाले! आप सब कुछ जानते हुये भी मुझसे पूछते हैं। बार-बार प्रभु के चरणों में सिर नवाकर, प्रेम-सहित उसने सब कथा सुनाई।

छंद—कहि कथा सकल बिलोकि हरि मुख हृदयँ पद पंकज धरे
तजि जोग पावक देह हरि पद लीन भइ जहँ नहिं फिरे ॥
नर बिबिध कर्म अधर्म बहु मत सोकप्रद सब त्यागहू ।
बिस्वास करि कह दास तुलसी राम पद अनुरागहू ॥

सारी कथा कहकर राम के मुख को देखकर, हृदय में उनके कमल ऐसे चरणों को धारण कर योगाग्नि से देह छोड़कर वह दुर्लभ हरि-पद में लीन हो गई, जहाँ से फिर लौटना नहीं होता। हे मनुष्यो! अधर्म, अनेकों प्रकार के कर्म और बहुमत, ये शोकप्रद हैं, इन्हें छोड़ो। तुलसीदासजी कहते हैं कि

विश्वास करके रामजी के चरणों में प्रीति करो।



जाति हीन अघ जनम महि मुकुत कीन्हि असि नारि
महामन्द मन सुख चहसि ऐसे प्रभुहि बिसारि ॥३६

रामजी ने नीच जाति की और जो पापों की जन्मभूमि थी, ऐसी स्त्री को भी मुक्ति दी। अरे महामूर्ख मन! तू ऐसे प्रभु को भूलकर सुख चाहता है?

चले राम त्यागा बन सोऊ ❀ अतुलित बल नर केहरि दोऊ
बिरही इव प्रभु करत बिषादा ❀ कहत कथा अनेक संबादा

राम आगे चले; उन्होंने उस वन को भी छोड़ दिया। दोनों भाई अतुलित बल वाले और मनुष्यों में सिंह के समान हैं। प्रभु विरहियों की तरह दुःख प्रकट करते हुये अनेकों कथायें और सम्वाद कहते चलते हैं।

लछिमन देखु बिपिन कइ सोभा ❀ देखत केहि कर मन नहिं छोभा
नारि सहित सब खग मृग बृन्दा ❀ मानहुँ मोरि करत हहिं निन्दा

हे लक्ष्मण! वन की शोभा तो देखो; इसे देखकर किस (विरही) का मन क्षुब्ध नहीं होता। सब पशु और पक्षी स्त्री-सहित हैं; मानो वे मेरा उपहास कर रहे हैं।

हमहिं देखि मृग निकर पराहीं ❀ मृगी कहहिं तुम्ह कहँ भय नाहीं
तुम्ह आनन्द करहु मृग जाये ❀ कंचन मृग खोजन ए आये

हमें देखकर मृगों के समूह दूर भाग जाते हैं। तब हरिणियाँ उनसे कहती हैं, तुमको भय नहीं। तुम तो साधारण मृगों के बच्चे हो, आनन्द से विचरण करो; ये तो सोने का मृग खोजने आये हैं।

संग लाइ करिनीं[1] करि[2] लेहीं ❀ मानहुँ मोहि सिखावनु देहीं
सास्त्र सुचिन्तित पुनि पुनि देखिअ ❀ भूप सुसेवित बस नहिं लेखिअ

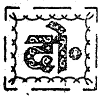
हाथी हथिनियों को संग कर लेते हैं, वे मानो मुझे शिक्षा देते हैं (किसी स्त्री को कभी अकेला नहीं छोड़ना)। अच्छी तरह चिंतन किये हुये शास्त्र को भी फिर-फिर देखते रहना चाहिये। अच्छी तरह सेवा किये हुये भी राजा को अपने वश में नहीं समझना चाहिये।

---

१. हथिनी। २. हाथी।

राखिअ नारि जदपि उर माहीं ❀ जुबती सास्त्र नृपति बस नाहीं
देखहु तात बसंत सुहावा ❀ प्रिया हीन मोहि भय उपजावा

और स्त्री को चाहे हृदय में ही क्यों न रक्खा जाय, पर युवती स्त्री, शास्त्र और राजा ये किसी के वश में नहीं रहते। हे भाई! सुहावने बसन्त को देखो, प्रिया के बिना यह मुझको भय उत्पन्न करता है। [संग लाई से उपजावा तक यथासंख्य, प्रथम तुल्ययोगिता, प्रथम व्याघात और प्रथम विनोक्ति अलंकार]



बिरह बिकल बलहीन मोहि जानेसि निपट अकेल।
सहित बिपिन मधुकर खगन मदन कीन्हि बगमेल॥

मुझे विरह से व्याकुल, बल से हीन और निपट अकेला जानकर कामदेव ने वन, भौंरों और पक्षियों को साथ लेकर धावा बोल दिया है।

देखि गये भ्राता सहित तासु दूत सुनि बात।
डेरा कीन्हेउ मनहुँ तब कटक हटकि[1] मनजात[2]॥

उस कामदेव का दूत जब यह देख गया है कि मैं अकेला नहीं हूँ, भाई के साथ हूँ, तब उसकी बात सुनकर कामदेव ने सेना को रोककर मानो डेरा डाल दिया है।

बिटप बिसाल लता अरुझानी ❀ बिबिध बितान दिये जनु तानी
कदलि ताल बर ध्वजा पताका ❀ देखि न मोह धीर मन जाका

विशाल वृक्षों में लतायें उलझी हुई हैं, मानो अनेकों प्रकार के तम्बू तान दिये गये हैं। केला और ताड़, ये सुन्दर ध्वजा और पताका हैं। इन्हें देखकर, वही नहीं मोहता, जिसका मन धीर है।

बिबिध भाँति फूले तरु नाना ❀ जनु बानैत[3] बने बहु बाना
कहुँ कहुँ सुन्दर बिटप सुहाये ❀ जनु भट बिलग बिलग होइ छाये

अनेकों वृक्ष नाना प्रकार से फूले हुये हैं। मानो बाना (वर्दी) धारण किये हुये बहुत-से बाणधारी (तीरंदाज़) हैं। कहीं-कहीं सुन्दर वृक्ष शोभा दे रहे हैं, मानो योद्धा लोग अलग-अलग होकर छावनी डाले हैं।

कूजत पिक मानहुँ गज माते ❀ ढेक महोख ऊँट बिसराते[4]
मोर चकोर कीर बर बाजी ❀ पारावत मराल सब ताजी

१. रोककर। २. कामदेव। ३. तीरंदाज़। ४. खच्चर।

कोकिल कूज रहे हैं, वे मानो मतवाले हाथी हैं। ढेक (कुलंग) और महोख पक्षी मानो ऊँट और खच्चर हैं। मोर, चकोर, तोते, कबूतर और राजहंस मानो सब सुन्दर ताज़ी घोड़े हैं।

तीतिर लावक[1] पदचर[2] जूथा ❀ बरनि न जाइ मनोज बरूथा
रथ गिरि सिला दुंदुभी झरना ❀ चातक बंदी गुन गन बरना

तीतर और बटेर, ये पैदल सिपाहियों के समूह हैं। कामदेव की सेना का वर्णन नहीं हो सकता। पर्वतों की शिलायें रथ और जल के झरने नगाड़े हैं। पपीहे भाट हैं, जो गुणों का वर्णन करते हैं।

मधुकर मुखर भेरि सहनाई ❀ त्रिबिध बयारि बसीठीं आई
चतुरंगिनी सेन सँग लीन्हें ❀ बिचरत सबहिं चुनौती दीन्हें

भौंरों की गुञ्जार भेरी और शहनाई है। शीतल, मन्द और सुगन्धित हवा मानो बसीठी (दूत का काम, आह्वान-पत्र) है। इस प्रकार चतुरङ्गिणी सेना साथ लेकर कामदेव मानो सबको ललकारता हुआ विचर रहा है।

लछिमन देखत काम अनीका[3] ❀ रहहिं धीर तिन्ह कै जग लीका
एहि कें एक परम बल नारी ❀ तेहि तें उबर सुभट सोइ भारी

हे लक्ष्मण! कामदेव की इस सेना को देखकर जो धीर बने रहते हैं, जगत् में उन्हीं की कीर्ति रहती है। इस कामदेव के स्त्री एक बड़ा भारी बल है। उससे जो बच जाय, वही बड़ा योद्धा है।



दो॰ तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिष महुँ छोभ।३८

हे भाई! काम, क्रोध और लोभ, ये तीन बड़े प्रबल दुष्ट हैं। ये विज्ञान के धाम मुनियों के भी मनों को क्षण-भर में क्षुब्ध कर देते हैं।

लोभ कें इच्छा दंभ बल काम कें केवल नारि।
क्रोध के परुष बचन बल मुनिबर कहहिं बिचारि।

लोभ को इच्छा और दम्भ का बल है। काम को केवल स्त्री का बल है और क्रोध को कठोर वचनों का बल है। मुनिवर ऐसा विचारकर कहते हैं।

---

१. बटेर। २. पैदल सिपाही। ३. सेना।

गुनातीत सचराचर स्वामी ❀ राम उमा सब अंतरजामी
कामिन्ह कै दीनता देखाई ❀ धीरन्ह कें मन बिरति दृढ़ाई

हे पार्वती ! तीनों गुणों से परे, चराचर जगत् के स्वामी रामचन्द्रजी सबके अन्तर की जानने वाले हैं। इन उक्तियों से उन्होंने कामी पुरुषों की दीनता प्रकट की है और धीर पुरुषों के मन में वैराग्य को दृढ़ कर दिया है।

क्रोध मनोज लोभ मद माया ❀ छूटहिं सकल राम कीं दाया
सो नर इन्द्रजाल नहिं भूला ❀ जा पर होइ सो नट अनुकूला

क्रोध, काम, लोभ, मद और माया, ये सभी राम की दया से छूट जाते हैं। वह नट (नटराज भगवान्) जिस पर अनुकूल होता है, वह मनुष्य इन्द्रजाल (माया) के प्रभाव में नहीं आता।

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना ❀ सत हरि भजनु जगत सब सपना
पुनि प्रभु गए सरोबर तीरा ❀ पंपा नाम सुभग गंभीरा

हे पार्वती ! मैं अपना अनुभव कहता हूँ। हरि का भजन ही सत्य है और सारा जगत् तो स्वप्न की भाँति मिथ्या है। फिर राम पंपा नाम के सुन्दर और गहरे सरोवर के तट पर गये।

संत हृदय जस निर्मल बारी[1] ❀ बाँधे घाट मनोहर चारी
जहँ तहँ पिअहिं बिबिध मृग नीरा ❀ जनु उदार गृह जाचक[2] भीरा

उसका जल संतों के हृदय जैसा निर्मल है। उसमें चारों ओर सुन्दर घाट बँधे हुये हैं। भाँति-भाँति के पशु जहाँ-तहाँ जल पी रहे हैं, जैसे उदार दानी पुरुषों के घर पर याचकों की भीड़ लगी रहती है।

दो॰ पुरइन सघन ओट जल बेगि न पाइअ मर्म।
मायाछन्न[3] न देखिये जैसे निर्गुन ब्रह्म ॥३९॥

घनी पुरइनों (कमल के पत्तों) की आड़ में छिपा होने से जल का पता शीघ्र मिलता ही नहीं। जैसे माया के आवरण से ढका हुआ निर्गुण ब्रह्म नहीं दीखता।

सुखी मीन सब एक रस अति अगाध जल माहिं।
जथा धर्म सीलन्ह के दिन सुख संजुत जाहिं ॥३९(ख)॥

१. पानी। २. भिक्षुक। ३. माया से ढका हुआ।

उस सरोवर के अत्यन्त अथाह जल में सब मछलियाँ सुखी हैं, जैसे धर्मात्मा पुरुषों के सब दिन सुख-पूर्वक बीतते हैं।

बिकसे सरसिज नाना रंगा ❁ मधुर मुखर गुंजत बहु भृङ्गा
बोलत जलकुक्कुट कल हंसा ❁ प्रभु बिलोकि जनु करत प्रसंसा

उसमें अनेक रंगों के कमल खिले हैं। बहुत-से भौंरे मधुर स्वर से गुञ्जार कर रहे हैं। जल के मुर्गे और राजहंस बोल रहे हैं। मानो प्रभु को देखकर उनकी वे प्रशंसा कर रहे हैं।

चक्रवाक बक खग समुदाई ❁ देखत बनइ बरनि नहिं जाई
सुंदर खग गन गिरा सुहाई ❁ जात पथिक जनु लेत बोलाई

चकवा, बगुले आदि पक्षियों का समूह देखते ही बनता है, वर्णन नहीं किया जा सकता। सुन्दर पक्षियों की सुहावनी बोली आगे जाते हुये पथिक को भी मानो बुलाये लेती है।

ताल[१] समीप मुनिन्ह गृह छाए ❁ चहुँ दिसि कानन बिटप सुहाए
चंपक बकुल कदंब तमाला ❁ पाटल पनस परास[२] रसाला[३]

सरोवर के निकट मुनियों ने आश्रम बना रक्खे हैं। उसके चारों ओर वन के सुन्दर-सुन्दर वृक्ष हैं। चम्पा, मौलसिरी, कदम्ब, तमाल, पाटल, कटहल, ढाक और आम आदि—

नव पल्लव कुसुमित तरु नाना ❁ चंचरीक[४] पटली[५] कर गाना
सीतल मन्द सुगन्ध सुभाऊ ❁ संतत बहइ मनोहर बाऊ
कुहू कुहू कोकिल धुनि करहीं ❁ सुनि रव सरस ध्यान मुनि टरहीं

अनेक प्रकार के वृक्ष नये पल्लवों और वृक्षों से युक्त हैं, जिन पर भौंरों की पंक्ति गुञ्जार कर रही है। स्वभाव ही से शीतल, मंद, सुगन्धित और मन को हरने वाली वायु सदा बहती रहती है। कोकिलायें 'कुहू' 'कुहू' ध्वनि कर रही हैं। उनकी रसीली बोली सुनकर मुनिओं का भी ध्यान टूट जाता है।

दो० फल भारन नमि बिटप सब रहे भूमि निअराइ।
पर उपकारी पुरुष जिमि नवहिं सुसंपति पाइ॥४०॥

फलों के बोझ से झुककर सारे वृक्ष पृथ्वी के निकट आ लगे हैं। जैसे

१. सरोवर। २. ढाक। ३. आम। ४. भौंरा। ५. पंक्ति।

परोपकारी पुरुष सम्पत्ति पाकर विनय से नम्र हो जाते हैं।

देखि राम अति रुचिर तलावा ❀ मज्जनु कीन्ह परम सुख पावा
देखी सुन्दर तरुबर छाया ❀ बैठे अनुज सहित रघुराया

रामजी ने अत्यन्त सुन्दर तालाब देखकर स्नान किया और परम सुख पाया। एक सुन्दर वृक्ष की छाया देखकर रामचन्द्रजी अपने छोटे भाई लक्ष्मण-सहित (उसके नीचे) बैठ गये।

तहँ पुनि सकल देव मुनि आए ❀ अस्तुति करि निज धाम सिधाए
बैठे परम प्रसन्न कृपाला ❀ कहत अनुज सन कथा रसाला

फिर वहाँ सब देवता और मुनि आये और स्तुति करके अपने-अपने धाम को चले गये। छोटे भाई लक्ष्मण से सरस कथा कहते हुये कृपालु रामचन्द्रजी बहुत प्रसन्न होकर वहाँ बैठे।

बिरहवंत भगवंतहिं देखी ❀ नारद मन भा सोच बिसेषी
मोर साप करि अंगीकारा ❀ सहत राम नाना दुख भारा

भगवान् को विरहाकुल देखकर नारद के मन में बड़ी चिन्ता हुई। वे सोचने लगे—मेरा शाप स्वीकार करके राम अनेकों प्रकार के दुःखों का भार सह रहे हैं।

ऐसे प्रभुहिं बिलोकउँ जाई ❀ पुनि न बनिहि अस अवसरु आई
यह बिचारि नारद कर[1] बीना ❀ गए जहाँ प्रभु सुख आसीना[2]

ऐसे भक्तवत्सल प्रभु को जाकर देखूँ तो ऐसा अवसर फिर न मिलेगा। ऐसा विचारकर नारद हाथ में वीणा लिये हुये वहाँ गये, जहाँ प्रभु सुख से बैठे थे।

गावत राम चरित मृदु बानी ❀ प्रेम सहित बहु भाँति बखानी
करत दंडवत लिए उठाई ❀ राखे बहुत बार[3] उर लाई
स्वागत पूँछि निकट बैठारे ❀ लछिमन सादर चरन पखारे

कोमल वाणी से प्रेम के साथ बहुत प्रकार से बखान-बखानकर रामचरित का गान करते हुये मुनि को दण्डवत् प्रणाम करते देखकर रामचन्द्रजी ने उठा लिया और बहुत देर तक हृदय से चिपटाये रक्खा। फिर कुशल-क्षेम पूछकर बैठा लिया। लक्ष्मण ने आदर-सहित उनके चरण धोये।

---

१. हाथ। २. बैठे हुये। ३. समय, देर।

दो०—नाना बिधि बिनती करि प्रभु प्रसन्न जियँ जानि।
नारद बोले बचन तब जोरि सरोरुह पानि ॥४१॥

बहुत प्रकार से विनती करके और प्रभु को मन में प्रसन्न जानकर तब नारद कमल-ऐसे हाथों को जोड़कर बोले—

सुनहु उदार सहज रघुनायक ❀ सुन्दर अगम सुगम बरदायक
देहु एक बर माँगउँ स्वामी ❀ जद्यपि जानत अंतरजामी

हे स्वभाव ही से उदार, सुन्दर, अगम, सुगम और वर देने वाले रामचन्द्रजी ! सुनिये। हे स्वामी ! मैं एक वर माँगता हूँ, दीजिये। यद्यपि आप अन्तर्यामी हैं और सब जानते ही हैं।

जानहु मुनि तुम्ह मोर सुभाऊ ❀ जन सन कबहुँ कि करउँ दुराऊ
कवनि बस्तु असि प्रिय मोहि लागी ❀ जो मुनिबर न सकहु तुम्ह माँगी

रामचन्द्रजी ने कहा—हे मुनि ! तुम तो मेरा स्वभाव जानते ही हो। क्या मैं कभी अपने भक्त से कुछ छिपाता हूँ ? हे मुनिवर ! मुझे ऐसी कौन-सी वस्तु प्रिय लग रही है, जिसे तुम नहीं माँग सकते ?

जन कहुँ कछु अदेय नहिं मोरें ❀ अस बिस्वास तजहु जनि भोरें[1]
तब नारद बोले हरषाई ❀ अस बर माँगउँ करउँ ढिठाई

मुझे भक्त के लिये कुछ भी अदेय नहीं है। ऐसा विश्वास भूल करके भी न छोड़ना। तब नारद प्रसन्न होकर बोले—मैं ऐसा वर माँगने की धृष्टता करता हूँ।

जद्यपि प्रभु के नाम अनेका ❀ स्रुति कह अधिक एक तें एका
राम सकल नामन्ह तें अधिका ❀ होउ नाथ अघ खग गन बधिका

यद्यपि प्रभु के अनेकों नाम हैं, और वेद एक से एक बढ़कर बतलाते हैं तो भी हे नाथ ! राम-नाम सब नामों में श्रेष्ठ है और पाप रूपी पक्षियों के लिये वह बधिक के समान है।

दो०—राका[2] रजनी भगति तव राम नाम सोइ सोम।
अपर नाम उडगन बिमल बसहु भगत उर ब्योम॥

१. भूलकर। २. पूर्णिमा।

आपकी भक्ति पूर्णिमा की रात्रि है, उसमें आपका राम-नाम पूर्ण चन्द्रमा होकर और अन्य नाम तारागण के समान होकर भक्तों के हृदय-रूपी निर्मल आकाश में बसें।

एवमस्तु मुनि सन कहेउ कृपासिन्धु रघुनाथ।
तब नारद मन हरष अति प्रभुपद नायेउ माथ॥

तब कृपा के समुद्र रामचन्द्रजी ने मुनि से 'एवमस्तु' (ऐसा ही हो) कहा। तब नारद ने मन में अत्यन्त हर्षित होकर प्रभु के चरणों में मस्तक नवाया।

अति प्रसन्न रघुनाथहि जानी ❀ पुनि नारद बोले मृदु बानी
राम जबहिं प्रेरेहु निज माया ❀ मोहेहु मोहि सुनहु रघुराया

रामचन्द्रजी को अत्यन्त प्रसन्न जानकर फिर नारद कोमल वाणी से बोले—हे राम! हे रघुनाथजी! सुनिये; जब आपने अपनी माया को प्रेरित करके मुझे मोहित किया था—

तब बिबाह मैं चहउँ कीन्हा ❀ प्रभु केहि कारन करै न दीन्हा
सुनु मुनि तोहि कहउँ सहरोसा[1] ❀ भजहिं जे मोहि तजि सकल भरोसा

तब मैं विवाह करना चाहता था। हे प्रभु! आपने किस कारण से नहीं करने दिया? रामचन्द्रजी ने कहा—हे मुनि! सुनो; तुमको मैं हर्षपूर्वक कहता हूँ कि जो दूसरों का सब आशा-भरोसा छोड़कर केवल मुझको ही भजते हैं:—

करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी ❀ जिमि बालक राखइ महतारी
गह सिसु बच्छ अनल[2] अहि[3] धाई ❀ तहँ राखइ जननी अरुगाई

मैं सदा उनकी वैसी ही रखवाली करता हूँ, जैसे माता बालक की रक्षा करती है। छोटा बच्चा और बछड़ा जब दौड़कर आग और साँप को पकड़ने जाता है, वहाँ माता और गाय उसे बचा लेती हैं।

प्रौढ़ भए तेहि सुत पर माता ❀ प्रीति करइ नहिं पाछिलि बाता
मोरें प्रौढ़ तनय सम ग्यानी ❀ बालक सुत सम दास अमानी

वही बच्चा जब सयाना हो जाता है तब उस पुत्र पर माता प्रीति तो करती है पर पहले की तरह नहीं करती। ज्ञानी मेरे प्रौढ़ पुत्र की तरह हैं और तुम्हारे समान अपने बल का मान करने वाला सेवक मेरे शिशु पुत्र के समान है।

१. हर्ष-पूर्वक। २. आग। ३. साँप।

जनहि मोर बल निज बल ताही ❀ दुहुँ कहँ काम क्रोध रिपु आही[1]
यह बिचारि पंडित मोहि भजहीं ❀ पाएहुँ ग्यान भगति नहिं तजहीं

भक्तों को मेरा बल रहता है और ज्ञानी को अपना बल। पर काम, क्रोध दोनों के शत्रु हैं। ऐसा विचारकर पंडित-जन मुझे भजते हैं। ज्ञान पाने पर भी वे भक्ति नहीं छोड़ते।

दो०
काम क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धारि[2]।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद माया रूपी नारि॥४३

काम, क्रोध, लोभ और मद आदि ये मोह (अज्ञान) की प्रबल सेना हैं। इनमें माया रूपिणी स्त्री अत्यन्त दारुण दुःख देने वाली है।

सुनु मुनि कह पुरान श्रुति संता ❀ मोह बिपिन कहुँ नारि बसंता
जप तप नेम जलासय झारी ❀ होइ ग्रीष्म सोखइ सब नारी

हे मुनि! सुनो। पुराण, वेद और संत कहते हैं कि मोह-रूपी वन के लिये स्त्री बसंत ऋतु के समान है। जप, तप और नियम रूपी सम्पूर्ण जल के स्थानों को स्त्री ग्रीष्म होकर सबको सोख लेती है।

काम क्रोध मद मत्सर भेका[3] ❀ इनहिं हरषप्रद बरषा एका
दुर्बासना कुमुद समुदाई ❀ तिन्ह कहँ सदा सरद सुखदाई

उस सरोवर में काम, क्रोध, मद और मत्सर मेंढक के समान हैं। उनको एक मात्र हर्ष प्रदान करने वाली यह (स्त्री) वर्षा ऋतु के समान है। बुरी वासनायें कुमुदों के समूह हैं। उन्हें सदा सुख देने वाली यह (स्त्री) शरद् ऋतु के समान है।

धर्म सकल सरसीरुह बृन्दा ❀ होइ हिम तिन्हहिं दहइ सुख मंदा
पुनि ममता जवास बहुताई ❀ पलुहइ नारि सिसिर रितु पाई

सब धर्म कमलों के समूह हैं। यह माया रूपिणी स्त्री हिम-ऋतु होकर उन्हें जला डालती है। फिर ममता रूपी जवास का समूह स्त्री-रूपी शिशिर-ऋतु पाकर हरा-भरा हो जाता है।

पाप उलूक निकर सुखकारी ❀ नारि निबिड़[4] रजनी अँधियारी
बुधि बल सील सत्य सब मीना ❀ बनसी सम त्रिय कहहिं प्रबीना

१. है। २. सेना। ३. मेंढक। ४. घनी।

पापरूपी उल्लुओं के समूह के लिये स्त्री सुख देने वाली घोर अंधकारमयी रात्रि है। बुद्धि, बल, शील और सत्य ये सब मछलियाँ हैं। उनके लिये स्त्री बंसी के समान है, चतुर लोग ऐसा कहते हैं।

दो० अवगुन मूल सूल प्रद प्रमदा सब दुख खानि।
तातें कीन्ह निवारन मुनि मैं यह जिय जानि ॥४४

युवती स्त्री अवगुणों की मूल, पीड़ा देने वाली और सब दुःखों की खान है। इसी से हे मुनि! मैंने जी में ऐसा जानकर तुमको विवाह करने से रोका था।

सुनि रघुपति के बचन सुहाए ❀ मुनि तन पुलक नयन भरि आए
कहहु कवन प्रभु कै असि रीती ❀ सेवक पर ममता अरु प्रीती

रामजी के सुहावने वचन सुनकर मुनि को रोमांच हो आया और नेत्रों में जल भर आया। नारद मन ही मन कहने लगे—कहो तो, ऐसी किस स्वामी की रीति है, जिसका सेवक पर इतना ममत्व और प्रेम हो।

जे न भजहिं अस प्रभु भ्रम त्यागी ❀ ग्यान रंक नर मंद अभागी
पुनि सादर बोले मुनि नारद ❀ सुनहु राम बिग्यान बिसारद

ऐसे प्रभु को जो मनुष्य भ्रम छोड़कर नहीं भजते, वे ज्ञान के गरीब, मतिमंद और भाग्यहीन हैं। फिर नारद मुनि आदर सहित बोले—हे विज्ञान-विशारद रामजी! सुनिये।

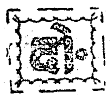
संतन्ह के लच्छन रघुबीरा ❀ कहहु नाथ भंजन भव भीरा
सुनु मुनि संतन्ह के गुन कहऊँ ❀ जिन्ह ते मैं उन्ह कें बस रहऊँ

हे रघुवीर! जन्म-मरण के भय का नाश करने वाले हे नाथ! अब कृपा कर संतों के लक्षण कहिये। रामचन्द्रजी ने कहा—हे मुनि! सुनो। मैं संतों के गुणों को कहता हूँ, जिनके कारण मैं उनके वश में रहता हूँ।

षट बिकार जित अनघ अकामा ❀ अचल अकिंचन सुचि सुखधामा
अमित बोध अनीह मितभोगी ❀ सत्यसार कबि कोबिद जोगी
सावधान मानद मदहीना ❀ धीर धर्मगति परम प्रबीना

वे संत काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर इन छः विकारों को जीतने वाले, पाप-रहित, कामना-रहित, स्थिर-मति, सर्वत्यागी, पवित्र, सुख के धाम, असीम ज्ञान वाले, इच्छा-रहित, मिताहारी, निष्ठ, कवि, विद्वान्, सावधान,

दूसरों को मान देने वाले, अभिमान-रहित, धैर्यवान् और धर्म के ज्ञान और आचरण में परम निपुण—



गुनागार संसार दुख रहित बिगत संदेह।
तजि मम चरन सरोज प्रिय जिन्ह कहुँ देह न गेह॥४५

गुणों के घर, संसार के दुःखों से रहित, सन्देह-हीन और जिनको मेरे चरण-कमल को छोड़कर न देह ही प्रिय है, न घर ही,

निज गुन स्रवन सुनत सकुचाहीं ❀ पर गुन सुनत अधिक हरषाहीं
सम सीतल नहिं त्यागहिं नीती ❀ सरल सुभाउ सबहिं सन प्रीती

जो अपना गुण कान से सुनने में संकोच करते हैं, अन्यों के गुण सुनने से अधिक हर्षित होते हैं, जो सब में समान-भाव रखने वाले और शीतल स्वभाव के हैं, जो न्याय नहीं छोड़ते, जो सरल स्वभाव होते हैं और सबसे प्रीति रखते हैं,

जप तप ब्रत दम संजम नेमा ❀ गुरु गोबिंद बिप्र पद प्रेमा
श्रद्धा छमा मइत्री दाया ❀ मुदिता मम पद प्रीति अमाया

जो जप, तप, व्रत, दम, संयम, नियम में रत रहते हैं, जो गुरु गोविन्द और ब्राह्मणों के चरणों में प्रेम रखते हैं, जिनमें श्रद्धा, क्षमा, मैत्री, दया, प्रसन्नता और मेरे चरणों में निष्कपट प्रीति है,

बिरति बिबेक बिनय बिग्याना ❀ बोध जथारथ बेद पुराना
दंभ मान मद करहिं न काऊ ❀ भूलि न देहिं कुमारग पाऊ

जिनको वैराग्य, विवेक, विनय, विज्ञान, वेद और पुराण का यथार्थ ज्ञान है, जो दंभ, अभिमान और मद भी नहीं करते और भूलकर भी कुमार्ग पर पैर नहीं रखते—

गावहिं सुनहिं सदा मम लीला ❀ हेतु[1] रहित परहित रत सीला
सुनु मुनि साधन के गुन जेते ❀ कहि न सकहिं सारद स्रुति तेते

जो सदा मेरे चरित्रों को गाते और सुनते हैं, अकारण ही जो दूसरों के कल्याण में लगे रहते हैं। हे मुनि! सुनो, संतों के जितने गुण हैं, उनको सरस्वती और वेद भी नहीं कह सकते।

---

१. कारण।

छन्द–कहि सक न सारद सेष नारद सुनत पद पंकज गहे।
अस दीनबंधु कृपालु अपने भगत गुन निज मुख कहे॥
सिरु नाइ बारहिं बार चरनन्हि ब्रह्मपुर नारद गये।
ते धन्य तुलसीदास आस बिहाइ जे हरि रँग रये॥

'शेष और शारदा भी नहीं कह सकते।' यह सुनते ही नारद ने भगवान के कमल ऐसे चरणों को पकड़ लिया। दीनबन्धु कृपालु प्रभु ने इस प्रकार अपने भक्तों के गुण अपने श्रीमुख से कहे। बार-बार भगवान् के चरणों में सिर नवाकर नारद ब्रह्मलोक को गये। तुलसीदास कहते हैं कि वे धन्य हैं जो सब आशा छोड़कर हरि के रंग में रँग उठे हैं।

दो०–रावनारि जसु पावन गावहिं सुनहिं जे लोग।
राम भगति दृढ़ पावहिं बिनु बिराग जप जोग॥

जो लोग रावण के शत्रु रामजी का पवित्र यश गाते और सुनते हैं, वे वैराग्य, जप और योग के बिना ही रामजी की दृढ़ भक्ति पाते हैं। [द्वितीय विशेष अलंकार]

दीप सिखा सम जुवति तन मन जनि होसि पतंग।
भजहि राम तजि काम मद करहि सदा सतसंग॥

युवती स्त्रियों का शरीर दीपक की लौ के समान है; हे मन! तू उसका पतिंगा न बन। काम और मद को छोड़कर रामजी का भजन कर और सदा सत्संग कर।

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने
तृतीयः सोपानः समाप्तः



श्रीगणेशायनमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

रा म च रि त मा न स

किष्किंधा-काण्ड

श्लोकाः

कुन्देन्दीवर सुन्दरावतिबलौ विज्ञानधामावुभौ ।
शोभाढ्यौ वरधन्विनौ श्रुतिनुतौ गोविप्रवृन्दप्रियौ ॥
मायामानुषरूपिणौ रघुवरौ सद्धर्म्मवर्म्मौ हि तौ ।
सीतान्वेषणतत्परौ पथिगतौ भक्तिप्रदौ तौ हि नः ॥१॥

कुन्द और नील कमल के समान सुन्दर गौर और श्यामवर्ण, अतिबली, विज्ञान के धाम, सुन्दरता से भरे, श्रेष्ठ, धनुर्धर, वेदों से स्तुति किये हुये, गो-ब्राह्मणों के समूह को प्रिय, माया से नररूपधारी, सद्धर्म के कवचस्वरूप, सब के हितकारी, सीता के ढूँढ़ने में तत्पर, पथिकरूप, रघुकुल में श्रेष्ठ, राम और लक्ष्मण, दोनों भाई हमें भक्तिप्रद हों ।

ब्रह्माम्भोधिसमुद्भवं कलिमलप्रध्वंसनं चाव्ययं ।
श्रीमच्छम्भुमुखेन्दुसुन्दरवरं संशोभितं सर्वदा ॥
संसारामयभेषजं सुखकरं श्रीजानकीजीवनं ।
धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं श्रीरामनामामृतम् ॥२॥

वे पुण्यात्मा पुरुष धन्य हैं, जो वेद-रूपी समुद्र से निकले हुये, कलि के मल को सर्वथा नष्ट करने वाले, अविनाशी, श्रीशिवजी के मुखरूपी चन्द्रमा में सदैव शोभायमान, जन्म-मरण रूपी रोग के औषध, सबको सुख देने वाले, श्रीजानकी के जीवन-स्वरूप, श्रीराम-नामरूपी अमृत का निरन्तर पान करते रहते हैं ।

सो०— मुक्ति जन्म महि जानि ग्यान खानि अघ हानि कर।
जहँ बस संभु भवानि सो कासी सेइअ कस न ॥

जहाँ शिव और पार्वती बसते हैं, उस काशी को मुक्ति की जन्म-भूमि, ज्ञान की खानि और पापों का नाश करने वाली जानकर उसका सेवन क्यों न करना चाहिये ?

जरत सकल सुर बृंद बिषम गरल[1] जेहिं पान किय।
तेहि न भजसि मन मंद को कृपाल संकर सरिस ॥

देवताओं को जलते हुए देखकर जिन्होंने घोर हलाहल विष को स्वयं पान कर लिया, हे मन्द-बुद्धि मन ! उन शंकरजी को क्यों नहीं भजता ? शंकरजी के समान कृपालु कौन है ?

आगें चले बहुरि रघुराया ❀ रिष्यमूक पर्बत निअराया
तहँ रह सचिव सहित सुग्रीवा ❀ आवत देखि अतुल बल सींवा

रामचन्द्रजी फिर आगे चले और ऋष्यमूक पर्वत निकट आ गया। वहाँ मंत्रियों के साथ सुग्रीव रहता था। अतुल बल की सीमा रामचन्द्रजी और लक्ष्मण को आते देखकर—

अति सभीत कह सुनु हनुमाना ❀ पुरुष जुगल बल रूप निधाना
धरि बटु[2] रूप देखु तैं जाई ❀ कहेसु जानि जियँ सैन[3] बुझाई

सुग्रीव अत्यन्त भयभीत होकर बोला—हे हनुमान ! सुनो, ये दोनों पुरुष बल और रूप के निधान हैं। तुम ब्रह्मचारी का रूप धरकर जाकर देखो; अपने मन में उनकी ठीक बात जानकर मुझे इशारे से समझाकर कह देना।

पठये बालि होहिं मन मैला ❀ भागौं तुरत तजौं यह सैला[4]
बिप्र रूप धरि कपि तहँ गयऊ ❀ माथ नाइ पूछत अस भयऊ

यदि बाली ने उन्हें भेजा है, तब तो ये अवश्य ही मन के मैले होंगे। तब मैं तुरन्त ही यह पर्वत छोड़कर भाग जाऊँ। हनुमान ब्राह्मण का रूप धरकर वहाँ गये, और मस्तक नवाकर ऐसा पूछने लगे—

१. विष। २. ब्रह्मचारी। ३. इशारा। ४. पहाड़।

को तुम्ह स्यामल गौर सरीरा ❀ छत्री रूप फिरहु बन बीरा
कठिन भूमि कोमल पद गामी[1] ❀ कवन हेतु बिचरहु बन स्वामी

हे साँवले और गोरे शरीर वाले आप कौन हैं, जो क्षत्रिय के रूप में वन में विचरण कर रहे हैं? कड़ी भूमि पर सुकुमार पैरों से चलने वाले हे स्वामी! आप किस कारण से वन में विचर रहे हैं?

मृदुल मनोहर सुंदर गाता ❀ सहत दुसह बन आतप बाता
की तुम्ह तीन देव महँ कोऊ ❀ नर नारायन की तुम्ह दोऊ

आपके कोमल, मनोहर और सुन्दर शरीर वन की असह्य धूप और वायु को सह रहे हैं। क्या आप तीन देवों (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) में से कोई हैं? या आप दोनों नर और नारायण हैं?

दो० जग कारन तारन भव भंजन धरनी भार।
की तुम्ह अखिल[2] भुवन पति लीन्ह मनुज अवतार॥

या आप जगत् के मूल-कारण, भवसागर से उद्धार करने वाले, पृथ्वी का भार हटाने वाले और सम्पूर्ण लोकों के स्वामी हैं और मनुष्य का अवतार लिया है।

कोसलेस दसरथ के जाये[3] ❀ हम पितु बचन मानि बन आये

रामचन्द्रजी ने कहा—हम अयोध्या के स्वामी राजा दशरथ के पुत्र हैं और पिता का वचन मानकर वन आये हैं।

नाम राम लछिमन दोउ भाई ❀ संग नारि सुकुमारि सुहाई
इहाँ हरी निसिचर बैदेही ❀ बिप्र फिरहिं हम खोजत तेही

हम दोनों भाइयों के नाम राम और लक्ष्मण हैं। हमारे साथ सुन्दर सुकुमारी स्त्री थी। यहाँ राक्षस ने मेरी स्त्री जानकी को हर लिया। हे ब्राह्मण! हम उसे ही खोजते फिरते हैं।

आपन चरित कहा हम गाई ❀ कहहु बिप्र निज कथा बुझाई
प्रभु पहिचानि परेउ कपि चरना ❀ सो सुख उमा जाइ नहिं बरना

हमने तो अपना हाल कह सुनाया। अब हे ब्राह्मण! अपनी कथा समझाकर कहिये। हनुमानजी प्रभु को पहचानकर उनके चरणों पर गिर पड़े।

१. चलने वाले। २. सम्पूर्ण। ३. पुत्र।

हे पार्वती ! वह सुख वर्णन नहीं किया जा सकता ।

पुलकित तन मुख आव न बचना ❋ देखत रुचिर बेष कै रचना
पुनि धीरज धरि अस्तुति कीन्ही ❋ हरष हृदयँ निज नाथहिं चीन्ही

हनुमानजी का शरीर पुलकित है, मुख से बात नहीं निकलती है । वे उनके सुन्दर वेष की रचना देखते रह गये । फिर धैर्य धरकर स्तुति की । अपने नाथ को पहचान लिया, इससे उनके हृदय में हर्ष हो रहा है ।

मोर न्याउ[1] मैं पूँछा साईं ❋ तुम्ह पूछहु कस नर की नाईं
तव माया बस फिरौं भुलाना ❋ ता तें मैं नहिं प्रभु पहिचाना

हे स्वामी ! मैंने तो अपनी बानरी बुद्धि के अनुसार पूछा; पर आप मनुष्य की तरह कैसे पूछ रहे हैं ? मैं तो आपकी माया के वश भूला फिरता हूँ । इसी से मैंने अपने स्वामी को नहीं पहचाना ।

दो० एक मंद मैं मोहबस कुटिल हृदय अग्यान ।
पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ दीनबंधु भगवान ॥२॥

एक तो मैं यों ही मन्द हूँ, दूसरे मोह के वश में हूँ, तीसरे हृदय का कुटिल और ज्ञान से रहित हूँ; फिर हे दीन-बन्धु भगवान् ! स्वामी (आप) ने भी मुझे बिसरा दिया ।

जदपि नाथ बहु अवगुन मोरें ❋ सेवक प्रभुहिं परै जनि भोरें
नाथ जीव तव मायाँ मोहा ❋ सो निस्तरइ तुम्हारेहिं छोहा[2]

हे नाथ ! यद्यपि मुझमें बहुत-से अवगुण हैं, तो भी यह सेवक स्वामी से भुलाया जाना नहीं चाहिये । हे नाथ ! आपकी माया में मोहित जीव आपकी ही कृपा से निस्तार पा सकता है ।

ता पर मैं रघुबीर दोहाई ❋ जानउँ नहिं कछु भजन उपाई
सेवक सुत पति मातु भरोसें ❋ रहइ असोच बनइ प्रभु पोसें[3]

इस पर भी मैं हे रामजी ! आपकी शपथ खाकर कहता हूँ, कि मैं भजन का कोई भी उपाय नहीं जानता । सेवक स्वामी के और पुत्र अपनी माता के भरोसे निश्चिन्त रहता है; इससे प्रभु को सेवक का पालन-पोषण करना ही पड़ता है । [प्रतिषेध और यथा-संख्य अलंकार]

---

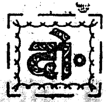
१. तरह, अनुसार । २. कृपा । ३. पालन किये ।

अस कहि परेउ चरन अकुलाई ❀ निज तनु प्रगटि प्रीति उर छाई
तब रघुपति उठाइ उर लावा ❀ निज लोचन जल सींचि जुड़ावा

ऐसा कहकर हनुमानजी अकुलाकर प्रभु के चरणों पर गिर पड़े और उन्होंने अपना असली शरीर प्रकट कर दिया। उनके हृदय में बड़ा प्रेम उमड़ आया। तब रामजी ने हनुमानजी को उठाकर हृदय से लगा लिया और अपने नेत्रों के जल से उन्हें सींचकर शीतल किया।

सुनु कपि जियँ मानसि जनि ऊना[1] ❀ तैं मम प्रिय लछिमन तें दूना
समदरसी मोहि कह सब कोऊ ❀ सेवक प्रिय अनन्य गति सोऊ

रामजी ने कहा—हे कपि! सुनो, मन में किसी प्रकार की ग्लानि का अनुभव न करना। तुम मुझे लक्ष्मण से दूने प्रिय हो। सब मुझे समदर्शी कहते हैं, पर मुझे वह सेवक प्रिय है, जिसे मेरे सिवा कोई अन्य गति नहीं।



सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत॥३॥

हे हनुमान! अनन्य वही है, जिसकी ऐसी बुद्धि कभी नहीं टलती। अर्थात्, जो सदा ऐसा समझता रहे कि मैं सेवक हूँ और यह जड़-चेतन चराचर जगत् मेरे स्वामी भगवान् का रूप है।

देखि पवन सुत पति अनुकूला ❀ हृदयँ हरष बीती सब सूला
नाथ सैल पर कपिपति रहई ❀ सो सुग्रीव दास तव अहई

पवनसुत (हनुमान) ने देखा कि स्वामी प्रसन्न हैं। इससे उनके हृदय में हर्ष छा गया और सब दुःख जाते रहे। उन्होंने कहा—हे नाथ! इस पर्वत पर बानरों का राजा सुग्रीव रहता है, वह आपका दास है।

तेहि सन नाथ मइत्री[2] कीजे ❀ दीन जानि तेहि अभय करीजे
सो सीता कर खोज कराइहि ❀ जहँ तहँ मरकट[3] कोटि पठाइहि

हे नाथ! उससे मित्रता कीजिये और उसे दीन जानकर निर्भय कर दीजिये। वह सीता की खोज करायेगा और जहाँ-तहाँ करोड़ों बानरों को भेजेगा।

एहि बिधि सकल कथा समुझाई ❀ लिये दुवौ जन पीठि चढ़ाई
जब सुग्रीवँ राम कहुँ देखा ❀ अतिसय जनम धन्य करि लेखा

१. कमी, ग्लानि। २. मित्रता। ३. बन्दर।

इस प्रकार हनुमान ने सब कथा कहकर दोनों जनों को पीठ पर चढ़ा लिया। जब सुग्रीव ने राम को देखा, तब उसने अपने जन्म को अत्यन्त धन्य समझा।

सादर मिलेउ नाइ पद माथा ❀ भेंटेउ अनुज सहित रघुनाथा
कपि कर मन बिचार एहि रीती ❀ करहहिं बिधि मो सन ये प्रीती

वह रामजी के चरणों में मस्तक नवाकर आदर-सहित मिला। छोटे भाई सहित रामजी भी उससे गले लगकर मिले। सुग्रीव मन में इस प्रकार सोच रहा था कि हे ब्रह्मा! क्या ये मुझसे प्रीति करेंगे?

दो०- तब हनुमंत उभय[1] दिसि कहि सब कथा सुनाइ।
पावक साखी देइ करि जोरी प्रीति दृढ़ाइ ॥४॥

तब हनुमान ने दोनों पक्षों की सब कथा कह सुनाई और अग्नि की साक्षी देकर उनकी प्रीति को दृढ़ता से जोड़ दिया।

कीन्हि प्रीति कछु बीच[2] न राखा ❀ लछिमन राम चरित सब भाषा
कह सुग्रीव नयन भरि बारी ❀ मिलिहि नाथ मिथिलेस कुमारी

दोनों ने हृदय से प्रीति की, कुछ अन्तर नहीं रक्खा। तब लक्ष्मण ने रामजी का सारा इतिहास कहा। सुग्रीव ने नेत्रों में जल भरकर कहा— हे नाथ! जानकी मिल जायँगी।

मंत्रिन्ह सहित इहाँ एक बारा ❀ बैठ रहेउँ मैं करत बिचारा
गगन पंथ देखी मैं जाता ❀ परबस परी बहुत बिलपाता

एक बार यहाँ मंत्रियों के साथ बैठे-बैठे मैं कुछ विचार कर रहा था, तब मैंने सीता को आकाश-मार्ग से जाते हुये देखा था, जो पराये वश में पड़ी हुई विलाप कर रही थीं।

राम राम हा राम पुकारी ❀ हमहिं देखि दीन्हेउ पट डारी
माँगा राम तुरत तेहि दीन्हा ❀ पट उर लाइ सोच अति कीन्हा

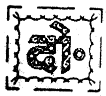
सीता ने हमें देखकर राम-राम, हा राम कहकर वस्त्र नीचे फेंक दिया था। रामजी ने उसे माँगा, तब सुग्रीव ने तुरन्त ही दे दिया। रामजी ने वस्त्र को हृदय से लगाकर बहुत ही सोच किया।

---

१. दोनों। २. अन्तर, भेद।

कह सुग्रीवँ सुनहु रघुबीरा ❀ तजहु सोच मन आनहु धीरा
सब प्रकार करिहउँ सेवकाई ❀ जेहि बिधि मिलिहि जानकी आई

सुग्रीव ने कहा—हे रघुवीर ! चिन्ता छोड़ दीजिये और मन में धीरज लाइये। मैं सब प्रकार से आपकी सेवा करूँगा, जिस उपाय से जानकी आकर आपको मिलें।



सखा बचन सुनि हरषे कृपासिंधु बल सींवँ।
कारन कवन बसहु बन मोहि कहहु सुग्रीवँ ॥५॥

कृपा के समुद्र और बल की सीमा रामजी सखा सुग्रीव के वचन सुनकर प्रसन्न हुये। उन्होंने पूछा—हे सुग्रीव ! मुझे बताओ, क्या कारण है जो वन में रहते हो।

नाथ बालि अरु मैं दोउ भाई ❀ प्रीति रही कछु बरनि न जाई
मयसुत मायावी तेहि नाऊँ ❀ आवा सो प्रभु हमरें गाऊँ

सुग्रीव ने कहा—हे नाथ ! बालि और मैं दो भाई हैं। हम दोनों में ऐसी प्रीति थी जिसका वर्णन नहीं हो सकता। मय दानव का एक पुत्र था, उसका नाम मायावी था। हे प्रभु ! एक बार वह हमारे गाँव में आया।

अर्ध राति पुर द्वार पुकारा ❀ बाली रिपु बल सहै न पारा[1]
धावा बालि देखि सो भागा ❀ मैं पुनि गयउँ बंधु संग लागा

आधी रात के समय नगर के फाटक पर आकर उसने पुकारा। बालि शत्रु के बल को सह नहीं सका। वह दौड़ा। मायावी भगा। मैं भी भाई के साथ लगा हुआ चला गया।

गिरिबर गुहाँ पैठ सो जाई ❀ तब बाली मोहिं कहा बुझाई
परिखेसु मोहि एक पखवारा ❀ नहिं आवौं तब जानेसु मारा

वह मायावी दानव पर्वत की गुफा में घुस गया। तब बालि ने मुझे समझा कर कहा—तुम मुझे एक पखवाड़े तक अगोरना। न आऊँ तो जान लेना कि मैं मारा गया।

मास दिवस[2] तहँ रहेउँ खरारी ❀ निसरी रुधिर धार तहँ भारी
बालि हतेसि मोहि मारिहि आई ❀ सिला देइ तहँ चलेउँ पराई

१. सका। २. बारह दिन।

हे खर राक्षस के शत्रु ! मैं वहाँ महीने भर तक रहा। अन्त में वहाँ रक्त की बड़ी भारी धारा निकली। मैंने समझा, दानव ने बालि को मार डाला, अब आकर वह मुझे मारेगा। मैं गुफा के द्वार पर शिला रखकर भाग आया।

काव्य-शास्त्र में मास की संज्ञा १२ की मानी जाती है। अतएव 'मास दिवस' का अर्थ बारह दिन भी होता है। मेरी राय में सुग्रीव ने वाक्छल से मास शब्द का प्रयोग किया है, जिससे मास का अर्थ महीना लगाकर रामजी उसे निर्दोष समझने लगें। बालि के क्रोध का कारण भी बारह दिन हो सकता है।

मंत्रिन्ह पुर देखा बिनु साईं ❀ दीन्हेउ मोहिं राजु बरि आईं
बाली ताहि मारि गृह आवा ❀ देखि मोहि जियँ भेद बढ़ावा

मन्त्रियों ने नगर को बिना स्वामी (राजा) का देखा, तब उन्होंने ज़बर-दस्ती मुझे राज्य दे दिया। बालि उसे मारकर घर आया। मुझे राज्यारूढ़ देख-कर उसने मन में विरोध माना।

रिपु सम मोहि मारेसि अति भारी ❀ हरि लीन्हेसि सर्बसु अरु नारी
ताके भय रघुबीर कृपाला ❀ सकल भुवन मैं फिरेउँ बिहाला

तब उसने मुझे शत्रु के समान खूब मारा। मेरा सर्वस्व और स्त्री को भी उसने छीन लिया। हे कृपालु राम ! मैं उसी के डर से समस्त लोकों में विह्वल होकर फिरता रहा।

इहाँ सापबस आवत नाहीं ❀ तदपि सभीत रहउँ मन माहीं
सुनि सेवक दुख दीनदयाला ❀ फरकि उठीं दोउ भुजा बिसाला

यद्यपि वह शाप के कारण यहाँ नहीं आता, फिर भी मैं मन में तो भयभीत रहता ही हूँ। सेवक का दुःख सुनकर दोनों पर दया करने वाले रामजी की दोनों विशाल भुजायें फड़क उठीं।

दो० सुनु सुग्रीवँ मारिहउँ बालिहि एकहि बान।
ब्रह्म रुद्र सरनागत गये न उबरिहिं प्रान ॥६॥

रामजी ने कहा—हे सुग्रीव ! सुनो, मैं एक ही बाण से बालि को मार डालूँगा। ब्रह्मा और रुद्र की शरण में जाने पर भी उसके प्राण न बचेंगे।

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी ❀ तिन्हहिं बिलोकत पातक[1] भारी
निज दुख गिरि सम रज[2] करि जाना ❀ मित्र क दुख रज मेरु समाना

१. पाप। २. धूल।

जो लोग मित्र के दुख से दुखी नहीं होते, उन्हें देखने से भी भारी पाप लगता है। अपने पर्वत के समान दुःख को भी धूल के समान और मित्र के धूल के समान दुःख को सुमेरु पर्वत के समान जाने।

जिन्हकें असि मति सहज न आई ❀ से शठ कत हठि करत मिताई
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा ❀ गुन प्रगटै अवगुनहिं दुरावा

जिनमें ऐसी बुद्धि स्वभाव ही से नहीं होती, वे मूर्ख हठ करके किसी से मित्रता क्यों करते हैं? मित्र को चाहिये कि वह मित्र को बुरे मार्ग से रोककर अच्छे मार्ग पर चलाये। उसके गुण को प्रकट करे और अवगुण को छिपा दे।

देत लेत मन संक न धरई ❀ बल अनुमान सदा हित करई
बिपति काल कर सत गुन नेहा ❀ स्रुति कह संत मित्र गुन एहा

देने-लेने में मन में शंका न रक्खे। अपनी शक्ति के अनुसार सदा भलाई ही करता रहे। विपत्ति के समय में तो सौगुना स्नेह करे। वेद कहते हैं कि श्रेष्ठ मित्र के ये ही गुण के (लक्षण) हैं।

आगें कह मृदु बचन बनाई ❀ पाछें अनहित मन कुटिलाई
जाकर चित अहि गति[1] सम भाई ❀ अस कुमित्र परिहरेहिं भलाई

और जो सामने तो बना-बनाकर मीठे वचन कहता है और पीठ-पीछे बुराई करता है और मन में कुटिलता रखता है, हे भाई! जिसका मन साँप की चाल के समान टेढ़ा है, ऐसे कुमित्र को तो छोड़ने ही में भलाई है।

सेवक सठ नृप कृपन कुनारी ❀ कपटी मित्र सूल सम चारी
सखा सोच त्यागहु बल मोरें ❀ सब बिधि घटब[2] काज मैं तोरें

मूर्ख सेवक, कंजूस राजा, कुलटा स्त्री और कपटी मित्र, ये चारों शूल के समान दुःखदायक हैं। हे सखा! मेरे बल पर अब तुम चिन्ता छोड़ दो। मैं सब प्रकार से तुम्हारे काम आऊँगा।

कह सुग्रीवँ सुनहु रघुबीरा ❀ बालि महाबल अति रनधीरा
दुंदुभि अस्थि[3] ताल देखराये ❀ बिनु प्रयास रघुनाथ ढहाये[4]

सुग्रीव ने कहा—हे रामचन्द्रजी! सुनिये। बालि बहुत बल वाला और बड़ा ही रणधीर है। फिर सुग्रीव ने राम को दुन्दुभी राक्षस की हड्डियाँ और

१. साँप की टेढ़ी चाल। २. काम आऊँगा। ३. हड्डी। ४. गिरा दिया।

ताल के वृक्ष दिखलाये। राम ने सहज ही में उन्हें मार गिराया।

देखि अमित बल बाढ़ी प्रीती ❀ बालि बधब इन्ह भइ परतीती
बार बार नावै पद सीसा ❀ प्रभुहि जानि मन हरष कपीसा

रामजी का अपरम्पार बल देखकर सुग्रीव के हृदय में प्रीति बढ़ी और उसे विश्वास हो गया कि ये बालि का वध अवश्य करेंगे। वह बार-बार चरणों में सिर नवाने लगा। प्रभु को पहचानकर सुग्रीव के मन में बड़ा हर्ष हुआ।

उपजा ग्यान बचन तब बोला ❀ नाथ कृपाँ मन भयेउ अलोला[1]
सुख संपति परिवार बड़ाई ❀ सब परिहरि करिहउँ सेवकाई

जब उसे ज्ञान उत्पन्न हुआ, तब वह बोला—हे नाथ ! आपकी कृपा से अब मेरा मन स्थिर हो गया। अब सुख, सम्पत्ति, कुटुम्ब और सम्मान सब को छोड़कर मैं आपकी सेवा ही करूँगा।

ए सब राम भगति के बाधक ❀ कहहिं संत तव पद अवराधक
सत्रु मित्र सुख दुख जग माहीं ❀ मायाकृत परमारथ नाहीं

क्योंकि ये सब राम-भक्ति में बाधक होते हैं। यह बात आपके चरणों की आराधना करने वाले संत कहते हैं। जगत् में जो शत्रु, मित्र और सुख-दुख हैं, सब के सब माया से उत्पन्न हैं, उनमें परमार्थ नहीं है।

बालि परम हित जासु प्रसादा ❀ मिलेहु राम तुम्ह समन[2] बिषादा
सपनें जेहि सन होई लराई ❀ जागें समुझत मन सकुचाई

हे रामजी ! बालि तो मेरा बड़ा हितकारी है, जिसकी कृपा से, विषाद को नष्ट करने वाले आप मुझे मिले। और जिसके साथ स्वप्न में भी लड़ाई हो तो जगने पर याद आने से मन में संकोच होगा।

अब प्रभु कृपा करहु एहि भाँती ❀ सब तजि भजनु करौं दिनुराती
सुनि बिराग संयुत कपि बानी ❀ बोले बिहँसि रामु धनुपानी

हे प्रभो ! अब तो इस प्रकार कृपा कीजिये कि सबको छोड़कर मैं दिन-रात आपका भजन ही करूँ। सुग्रीव की वैराग्य-युक्त वाणी सुनकर हाथ में धनुष लिये हुये रामजी मुसकुराकर बोले—

जो कछु कहेहु सत्य सब सोई ❀ सखा बचन मम मृषा न होई
नट मरकट इव सबहिं नचावत ❀ रामु खगेस बेद अस गावत

१. स्थिर। २. नाश करने वाले।

हे सखा! तुमने जो कुछ कहा है, वह सभी सत्य है। पर मेरा वचन मिथ्या नहीं होता। हे पक्षिराज गरुड़! राम सबको नचाते हैं, जैसे नट (मदारी) बानर को नचाता है, वेद ऐसा कहते हैं।

लेइ सुग्रीव सङ्ग रघुनाथा ❀ चले चाप[1] सायक गहि हाथा
तब रघुपति सुग्रीवँ पठावा ❀ गरजेसि जाइ निकट बलु पावा

तब रामजी सुग्रीव को साथ लेकर और हाथ में धनुष-बाण धारण करके चले। रामजी ने सुग्रीव को बालि के पास भेजा। बल पाकर वह बालि के निकट जाकर गरजा।

सुनत बालि क्रोधातुर धावा ❀ गहि कर चरन नारि समुझावा
सुनु पति जिन्हहिं मिलेउ सुग्रीवा ❀ ते दोउ बंधु तेज बल सींवा

उसका गरजना सुनते ही बालि क्रोध से विह्वल होकर वेग से दौड़ा। उसकी स्त्री तारा ने उसके पैर पकड़ कर समझाया—हे नाथ! सुग्रीव जिनको मिला है, वे दोनों भाई तेज और बल की सीमा हैं।

कोसलेस सुत लछिमन रामा ❀ कालहु जीति सकहिं संग्रामा
सोइ रघुबीर हृदय महँ आनहु ❀ ममता छाँड़ि कहा मम मानहु

वे अयोध्यापति दशरथजी के पुत्र राम और लक्ष्मण युद्ध में काल को भी जीत सकते हैं। तुम भी माया-मोह छोड़कर उन्हीं राम को हृदय से सुमिरो। मेरा कहा मानो।

दो०— कह बाली सुनु भीरु प्रिय समदरसी रघुनाथ।
जौं कदाचि मोहि मारहिं तौ पुनि होउँ सनाथ॥

बालि ने कहा—हे डरपोक प्रिये! सुन। राम समदर्शी हैं। यदि कदाचित् वे मुझे मारेंहीगे तो मैं सनाथ हो जाऊँगा।

अस कहि चला महा अभिमानी ❀ तृन समान सुग्रीवहिं जानी
भिरे उभौ बाली अति तरजा[2] ❀ मुठिका[3] मारि महा धुनि गरजा

ऐसा कहकर वह महान् अभिमानी बालि सुग्रीव को तृण के समान जानकर चला। दोनों भिड़ गये। बालि ने सुग्रीव को बहुत धमकाया और घूँसा मारकर बड़े ज़ोर से गरजा।

---

१. धनुष। २. धमकाया। ३. घूँसा।



तब सुग्रीव बिकल होइ भागा ❀ मुष्टि प्रहार बज्र सम लागा
मैं जो कहा रघुबीर कृपाला ❀ बंधु न होइ मोर यह काला

घूँसे की चोट से सुग्रीव व्याकुल होकर भागा। घूँसे की चोट उसे बज्र के समान लगी। सुग्रीव ने आकर राम से कहा—हे कृपालु राम! मैं कहता था न, कि बालि मेरा भाई नहीं है, काल है। [शुद्धापन्हुति अलंकार]

एक रूप तुम्ह भ्राता दोऊ ❀ तेहि भ्रम तें नहिं मारेउँ सोऊ
कर परसा[1] सुग्रीव सरीरा ❀ तनु भा कुलिस गई सब पीरा

रामजी ने कहा—तुम दोनों भाइयों का एक-सा ही रूप है, इसी भ्रम से मैंने उसे नहीं मारा। फिर रामजी ने सुग्रीव के शरीर को हाथ से छुआ, जिससे उसका शरीर बज्र के समान हो गया और सारी पीड़ा जाती रही।

मेली[2] कंठ सुमन कै माला ❀ पठवा पुनि बल देइ बिसाला
पुनि नाना बिधि भई लराई ❀ बिटप[3] ओट देखहिं रघुराई

तब रामजी ने सुग्रीव के गले में फूलों की माला डाल दी और उसे बड़ा भारी बल देकर फिर भेजा। बालि-सुग्रीव में फिर अनेक प्रकार से युद्ध हुआ। रामजी वृक्ष की आड़ से देख रहे थे।

दो० **बहु छल बल सुग्रीव करि हियँ हारा भय मानि।**
मारा बालि राम तब हृदय माँझ सर तानि ॥८॥

सुग्रीव ने बहुत-से दाँव-पेंच किये, पर वह अन्त में भयभीत होकर हृदय में हार गया। तब रामजी ने तानकर बालि के हृदय में बाण मारा।

परा बिकल महि सर के लागें ❀ पुनि उठि बैठ देखि प्रभु आगें
स्याम गात सिर जटा बनाएँ ❀ अरुन नयन सर चाप चढ़ाएँ

बाण लगते ही बालि व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। फिर वह प्रभु रामचन्द्रजी को आगे देखकर उठ बैठा। साँवले शरीर वाले, सिर पर जटा बाँधे हुये, लाल नेत्रों वाले और धनुष-बाण चढ़ाये हुये राम को—

पुनि पुनि चितइ चरन चित दीन्हा ❀ सुफल जनम माना प्रभु चीन्हा
हृदयँ प्रीति मुख बचन कठोरा ❀ बोला चितइ राम की ओरा

१. छुआ। २. डाला ३. वृक्ष।

बार-बार देखकर बालि ने उनके चरणों में चित्त लगा दिया। प्रभु को पहचाना और अपना जन्म सफल माना। उसके हृदय में तो प्रीति थी, पर मुख में कठोर वचन थे। वह रामजी की ओर देखकर बोला—

धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं ❀ मारेहु मोहिं ब्याध की नाईं
मैं बैरी सुग्रीव पिआरा ❀ अवगुन कवन नाथ मोहिं मारा

हे स्वामी! आपने तो धर्म की रक्षा के लिये अवतार लिया है। और मुझे ब्याध की तरह (लुककर) मारा। मैं तो शत्रु और सुग्रीव मित्र हुआ। मेरा क्या अपराध था, जो आपने मुझे मारा?

अनुज बधू भगिनी सुत नारी ❀ सुनु सठ कन्या सम ए चारी
इन्हहिं कुदिष्टि बिलोकइ जोई ❀ ताहि बधें कछु पाप न होई

रामजी ने कहा—हे मूर्ख! सुन। भाई की स्त्री, बहन, पुत्र की स्त्री और कन्या, ये चारों समान हैं। इनको जो कोई बुरी दृष्टि से देखता है, उसे मारने में कुछ भी पाप नहीं होता।

मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना ❀ नारि सिखावन करसि न काना
मम भुजबल आश्रित तेहि जानी ❀ मारा चहसि अधम अभिमानी

हे मूर्ख! तुझे अत्यन्त अभिमान है। स्त्री की सीख पर भी तूने कान नहीं दिया। सुग्रीव को मेरी भुजाओं के बल पर आश्रित जानकर भी, अरे अधम अभिमानी! तूने उसको मारना चाहा?



सुनहु राम स्वामी सन चल न चातुरी मोर।
प्रभु अजहूँ मैं पापी अंतकाल गति तोरि ॥९॥

बालि ने कहा—हे रामजी! सुनिये। स्वामी से मेरी चतुराई नहीं चल सकती। हे प्रभो! अन्तकाल में आपकी गति (शरण) पाकर मैं अब भी पापी ही रहा?

सुनत राम अति कोमल बानी ❀ बालि सीस परसेउ निज पानी
अचल करौं तनु राखहु प्राना ❀ बालि कहा सुनु कृपानिधाना

उसकी अत्यन्त कोमल वाणी सुनकर रामजी ने अपने हाथ से उसका सिर छुवा, और कहा—कहो तो तुम्हारी मृत्यु रोक दूँ, तुम अपने प्राणों को रख लो। बालि ने कहा—हे कृपा के धाम रामजी! सुनिये—

जन्म जन्म मुनि जतन कराहीं[1] ❀ अन्त राम कहि आवत नाहीं
जासु नाम बल संकर कासी ❀ देत सबहिं सम गति अबिनासी
मम लोचन गोचर सोइ आवा ❀ बहुरि कि प्रभु अस बनिहि बनावा

मुनि-गण अनेकों जन्मों तक उपाय करते रहते हैं, फिर भी मृत्युकाल में उन्हें राम नहीं कह आता। जिनके नाम के बल से शिवजी काशी में सबको अविनाशिनी मुक्ति देते हैं, वे ही राम स्वयं मेरे नेत्रों के सामने प्रकट हैं। हे प्रभो! ऐसा संयोग क्या फिर कभी बन पड़ेगा?

छंद—सो नयन गोचर जासु गुन नित नेति कहि श्रुति गावहीं।
जिति[2] पवन मन गो निरस करि मुनि ध्यान कबहुँक पावहीं॥
मोहि जानि अति अभिमान बस प्रभु कहेउ राखु सरीरही।
अस कवन सठ हठि काटि सुरतरु बारि[3] करिहि बबूरही॥

जिसके गुणों को वेद सदा 'नेति' (इतना ही नहीं) कहकर गान करते हैं, प्राण और मन को जीतकर इन्द्रियों को नीरस बनाकर और ध्यान धरकर मुनि जिसकी क्वचित ही भक्ति पाते हैं, वे ही प्रभु साक्षात् मेरी आँखों के सामने हैं। मुझे अत्यन्त अभिमान-वश जानकर आप ने कहा कि तुम शरीर को रख लो। पर ऐसा मूर्ख कौन होगा जो हठ करके कल्पवृक्ष को काटकर बबूल के चारों ओर बाढ़ लगायेगा।

अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो बर माँगउँ।
जेहि जोनि जनमौं कर्मबस तहँ राम पद अनुरागउँ॥
यह तनय मम सम बिनय बल कल्यानप्रद प्रभु लीजिए।
गहि बाँह सुर नर नाह[4] आपन दास अङ्गद कीजिए॥

हे नाथ! अब दया करके देखिये और जो वर माँग रहा हूँ, उसे दीजिये। मैं कर्मवश जिस योनि में जन्म लूँ, वहीं रामजी के चरणों में अनुरक्त रहूँ। हे कल्याणास्पद प्रभो! यह मेरा पुत्र (अंगद) विनय और बल में मेरे ही समान है, इसे ग्रहण कीजिये। और हे देवताओं और मनुष्यों के नाथ! बाँह पकड़कर इसको अपना दास बनाइये।

---

१. करते हैं। २. जीतकर। ३. बाड़, घेरा। ४. नाथ, स्वामी।

दो०- राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग।
सुमन माल जिमि कंठ तें गिरत न जानइ नाग[1] ॥

रामजी के चरणों में दृढ़ प्रीति करके बालि ने शरीर को वैसे ही त्याग दिया, जैसे हाथी फूलों की माला को अपने कंठ से गिरता हुआ न जाने।

राम बालि निज धाम पठावा ❀ नगर लोग सब व्याकुल धावा
नाना बिधि बिलाप कर तारा ❀ छूटे केस न देह सँभारा

रामचन्द्रजी ने बालि को अपने धाम (बैकुण्ठ) को भेज दिया। नगर के सब लोग व्याकुल होकर दौड़े। तारा (बालि की स्त्री) अनेकों प्रकार से विलाप करने लगी। उसके बाल बिखरे हुये हैं और देह की सँभाल नहीं है।

तारा बिकल देखि रघुराया ❀ दीन्ह ग्यान हरि लीन्ही माया
छिति जल पावक गगन समीरा ❀ पंच रचित यह अधम सरीरा

रामजी ने तारा को व्याकुल देखकर उसे ज्ञान दिया और उसकी माया हर ली। उन्होंने कहा—पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु इन पंच तत्वों से यह अधम शरीर रचा गया है।

प्रगट सो तनु तव आगें सोवा ❀ जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा
उपजा ग्यान चरन तब लागी ❀ लीन्हेसि परम भगति बर माँगी

वह शरीर तो प्रत्यक्ष तुम्हारे सामने सोया हुआ है। और जीव नित्य है, फिर किसके लिये तुम रो रही हो ? जब उसे ज्ञान उत्पन्न हुआ, तब वह रामजी के चरणों से लिपट गई, और उसने परम भक्ति का वर माँग लिया।

उमा दारु जोषित[2] की नाईं ❀ सबहिं नचावत रामु गोसाईं
तब सुग्रीवहिं आयसु दीन्हा ❀ मृतक कर्म बिधिवत सब कीन्हा

हे उमा ! स्वामी राम सब को कठपुतली की तरह नचाते हैं। तब रामजी ने सुग्रीव को आज्ञा दी और सुग्रीव ने बालि का सब विधिवत् मृतक-कर्म किया।

राम कहा अनुजहिं समुझाई ❀ राज देहु सुग्रीवहि जाई
रघुपति चरन नाइ करि माथा ❀ चले सकल प्रेरित रघुनाथा

तब रामजी ने लक्ष्मण को समझाकर कहा कि तुम जाकर सुग्रीव को

---

१. हाथी। २. कठपुतली।

राज्य दे दो। रामजी के चरणों में मस्तक नवाकर सब लोग रामजी की प्रेरणा से चले।

दो०— लछिमन तुरत बोलाए पुरजन बिप्र समाज।
राजु दीन्ह सुग्रीव कहँ अङ्गद कहँ जुबराज ॥११॥

लक्ष्मण ने तुरन्त ही नगर-निवासियों को और ब्राह्मणों के समाज को बुलाया और उन्होंने सुग्रीव को राज्य और अंगद को युवराज-पद दिया।

उमा राम सम हित जग माहीं ❀ गुरु पितु मातु बंधु कोउ नाहीं
सुर नर मुनि सब कै यह रीती ❀ स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती

हे पार्वती! रामजी के समान हित करने वाला जगत् में कोई गुरु, पिता, माता और बन्धु नहीं है। देवता, मनुष्य और मुनि सबकी यह रीति है कि सब स्वार्थ के लिये ही प्रीति करते हैं।

बालि त्रास ब्याकुल दिन राती ❀ तनु बहु ब्रन[1] चिंता जर छाती
सोइ सुग्रीव कीन्ह कपिराऊ ❀ अति कृपाल रघुबीर सुभाऊ

जो सुग्रीव दिन-रात बालि के डर से व्याकुल रहता था, जिसके शरीर में बहुत-से घाव हो गये थे और चिन्ता से जिसकी छाती जला करती थी, उसी सुग्रीव को रामजी ने बानरों का राजा बना दिया। रामजी का स्वभाव बड़ा ही कृपालु है।

जानतहूँ अस प्रभु परिहरहीं ❀ काहे न बिपति जाल नर परहीं
पुनि सुग्रीवहिं लीन्ह बोलाई ❀ बहु प्रकार नृपनीति सिखाई

ऐसा जानते हुये भी जो लोग ऐसे प्रभु का परित्याग करते हैं, वे भला विपत्ति के जाल में क्यों न पड़ें? फिर रामजी ने सुग्रीव को बुला लिया और बहुत प्रकार से राजनीति की शिक्षा दी।

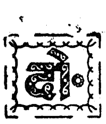
कह प्रभु सुनु सुग्रीव हरीसा[2] ❀ पुर न जाउँ दस चारि बरीसा
गत ग्रीषम बरषा रितु आई ❀ रहिहउँ निकट सैल पर छाई

फिर प्रभु ने कहा—हे वानरपति सुग्रीव! सुनो। मैं चौदह बरस तक बस्ती में नहीं जाऊँगा। ग्रीष्म ऋतु समाप्त हो गई, वर्षा ऋतु आ गई है। मैं यहाँ पास ही पर्वत पर टिक रहूँगा।

१. घाव। २. बानरों के स्वामी।

अंगद सहित करहु तुम्ह राजू ❀ संतत[1] हृदय धरेहु मम काजू
तब सुग्रीवँ भवन फिरि आये ❀ राम प्रबरषन गिरि पर छाये

तुम अंगद-सहित राज्य करो। मेरे काम की चिन्ता हृदय में सदा रखना। जब सुग्रीव घर लौट आये, तब रामजी प्रवर्षण पर्वत पर जा टिके।



प्रथमहिं देवन्ह गिरि गुहा[2] राखेउ रुचिर बनाइ।
राम कृपानिधि कछु दिन बास करहिंगे आइ॥१२॥

देवताओं ने पहले ही से उस पर्वत की गुफा को सुन्दर बना रक्खा था। वे जानते थे कि कृपा के भंडार रामजी यहाँ आकर कुछ दिन निवास करेंगे।

सुन्दर बन कुसुमित अति सोभा ❀ गुंजत मधुप निकर मधु लोभा
कंद मूल फल पत्र सुहाये ❀ भये बहुत जब तें प्रभु आये

सुन्दर फूले हुये वन की अत्यन्त शोभा है। भौंरों के समूह मधु के लोभ से गुंजार कर रहे हैं। जब से प्रभु आये, तब से वन में कंद, मूल, फल और पत्तों की बहुतायत हो गई।

देखि मनोहर सैल अनूपा ❀ रहे तहँ अनुज सहित सुरभूपा
मधुकर खग मृग तनु धरि देवा ❀ करहिं सिद्ध मुनि प्रभु कै सेवा

सुन्दर और अनुपम पर्वत को देखकर देवताओं के सम्राट् रामजी वहाँ भाई सहित रह गये। देवता तथा सिद्ध और मुनिगण भौंरों, पक्षियों और पशुओं का शरीर धारण करके प्रभु की सेवा करने लगे।

मंगल रूप भयउ बन तब तें ❀ कीन्ह निवास रमापति जब तें
फटिक सिला अति सुभ्र सुहाई ❀ सुख आसीन तहाँ दोउ भाई

जब से लक्ष्मीनाथ रामजी ने वहाँ निवास किया, तब से वन मङ्गल-स्वरूप हो गया। बहुत स्वच्छ और सुन्दर स्फटिक-शिला पर दोनों भाई वहाँ सुख से विराजमान हैं।

कहत अनुज सन कथा अनेका ❀ भगति बिरति नृप नीति बिबेका
बरषा काल मेघ नभ छाये ❀ गरजत लागत परम सुहाये

रामजी अपने छोटे भाई लक्ष्मण से भक्ति, वैराग्य, राजनीति और ज्ञान की

---

१. सदा। २. गुफा।

अनेकों कथायें कहा करते हैं। वर्षाकाल में आकाश में बादल छा गये। गरजते हुए वे बहुत सुहावने लगते हैं।

दो०— लछिमन देखहु मोर गन नाचत बारिद पेखि।
गृही[1] बिरति रत हरष जस बिष्नु भगत कहुँ देखि।१३।

रामजी कहने लगे—हे लक्ष्मण! देखो, बादलों को देखकर मोरों के झुंड नाच रहे हैं, जैसे वैराग्य में अनुरक्त गृहस्थ किसी विष्णुभक्त को देखकर हर्षित होते हैं।

घन घमंड नभ गरजत घोरा ❀ प्रिया हीन डरपत मन मोरा
दामिनि[2] दमकि रह न घन माहीं ❀ खल कै प्रीति जथा थिर नाहीं

आकाश में बादल उमड़-घुमड़कर घोर गर्जना कर रहे हैं। प्रिया (सीता) के बिना मेरा मन भयभीत हो रहा है। बिजली चमककर बादलों में फिर नहीं ठहरती, जैसे दुष्ट की प्रीति स्थिर नहीं रहती।

बरषहिं जलद भूमि नियरायें ❀ जथा नवहिं बुध बिद्या पायें
बूँद अघात[3] सहहिं गिरि कैसें ❀ खल के बचन संत सह जैसें

बादल भूमि के निकट आकर बरस रहे हैं, जैसे विद्या पाकर विद्वान् नम्र हो जाते हैं। बूँदों की चोट पर्वत किस प्रकार सह रहे हैं, जैसे दुष्टों के वचन संत सहते हैं।

छुद्र नदीं भरि चलीं तोराई[4] ❀ जस थोरेहुँ धन खल इतराई
भूमि परत भा ढाबर[5] पानी ❀ जिमि जीवहि माया लपटानी

छोटी नदियाँ भरकर तोड़ मारती हुई उमड़ चलीं; जैसे थोड़े धन से भी दुष्ट इतरा जाते हैं। पृथ्वी पर पड़ते ही जल गदला हो गया, जैसे जीव को माया लिपट गई हो।

समिटि समिटि जल भरहि तलावा ❀ जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा
सरिता जल जलनिधि महुँ जाई ❀ होइ अचल जिमि जिव हरि पाई

जल इकट्ठा हो-होकर तालाब को भर रहा है, जैसे सद्गुण सज्जन के पास आ जाते हैं। नदी का जल समुद्र में जाकर इस प्रकार अचल हो जाता है,

१. गृहस्थ। २. बिजली। ३. चोट। ४. तोड़ मारती हुई, किनारों को तोड़ती हुई। ५. गदला।

जैसे जीव भगवान् को पाकर स्थिर हो जाता है।

दो०— हरित भूमि तृन संकुल[1] समुझि परहिं नहिं पंथ।
जिमि पाखंड बाद तें गुप्त होहिं सदग्रन्थ ॥१४॥

तृणों से परिपूर्ण होकर भूमि हरी हो गई है, रास्ते समझ नहीं पड़ते, जैसे पाखंड मत के प्रचार से सद्ग्रन्थ गुप्त हो जाते हैं।

दादुर धुनि चहुँ दिसा सुहाई ❀ बेद पढ़हिं जनु बटु समुदाई
नव पल्लव भये बिटप अनेका ❀ साधक मन जस मिलें बिबेका

चारों दिशाओं में मेंढकों की ध्वनि सुहावनी लग रही है, मानो विद्यार्थियों के समुदाय वेद पढ़ रहे हों। अनेकों वृक्षों में नये पत्ते निकल आये हैं, जैसे साधक का मन विवेक मिलने पर होता है। [वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार]

आक जवास पात बिनु भयऊ ❀ जस सुराज खल उद्यम गयऊ
खोजत कतहुँ मिलइ नहिं धूरी ❀ करइ क्रोध जिमि धरमहि दूरी

मदार और जवासा बिना पत्ते के हो गये, जैसे अच्छे राज्य में दुष्टों का उद्यम जाता रहा। धूल कहीं खोजने पर भी नहीं मिलती, जैसे क्रोध धर्म को दूर कर देता है।

ससि[2] सम्पन्न[3] सोह महि कैसी ❀ उपकारी कै संपति जैसी
निसि तम घन खद्योत[4] बिराजा ❀ जनु दंभिन्ह कर मिला समाजा

अन्न से पूर्ण पृथ्वी कैसी शोभायमान लगती है, जैसे उपकारी पुरुष की सम्पत्ति। रात के घने अन्धकार में जुगनू ऐसे शोभा पा रहे हैं, जैसे दंभियों का समाज एकत्र हुआ है।

महाबृष्टि चलि फूटि किआरीं ❀ जिमि सुतंत्र भयँ बिगरहिं नारीं
कृषी निरावहिं चतुर किसाना ❀ जिमि बुध तजहिं मोह मद माना

अधिक वृष्टि होने से खेतों की क्यारियाँ फूट चलीं, जैसे स्वतन्त्र होने से स्त्रियाँ बिगड़ जाती हैं। चतुर किसान खेत निरा रहे हैं, जैसे विद्वान् लोग मोह, मद और मान को छोड़ देते हैं।

देखिअत चक्रवाक[5] खग नाहीं ❀ कलिहि पाइ जिमि धर्म पराहीं
ऊसर बरषइ तृन नहिं जामा ❀ जिमि हरिजन हियँ उपज न कामा

---

१. परिपूर्ण। २. अन्न। ३. पूर्ण। ४. जुगनू। ५. चकवा।

चक्रवाक पक्षी दिखाई नहीं दे रहे हैं, जैसे कलियुग को पाकर धर्म भाग जाते हैं। ऊसर में वर्षा होती है, पर उस पर घास तक नहीं उगती, जैसे हरिभक्त के हृदय में काम नहीं उत्पन्न होता।

बिबिध जंतु संकुल महि भ्राजा[1] ❀ प्रजा बाढ़ जिमि पाइ सुराजा
जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना ❀ जिमि इन्द्रिय गन उपजें ग्याना

पृथ्वी अनेक प्रकार के जीवों से भरी हुई वैसी ही शोभायमान है, जैसे सुराज्य पाकर प्रजा की वृद्धि होती है। जहाँ-तहाँ अनेकों पथिक थककर ठहरे हुये हैं, जैसे ज्ञान उत्पन्न होने पर इन्द्रियाँ (शिथिल हो जाती हैं)।

दो॰ **कबहुँ प्रबल बह मारुत जहँ तहँ मेघ बिलाहिं।**
जिमि कपूत के उपजें कुल सद्धर्म नसाहिं॥१५॥(क)

कभी-कभी हवा बड़े ज़ोर से चलती है और मेघ जहाँ-तहाँ गायब हो जाते हैं, जैसे कुपुत्र के उत्पन्न होने से कुल के सद्धर्म नष्ट हो जाते हैं।

कबहुँ दिवस महँ निबिड़[2] तम कबहुँक प्रगट पतंग[3]।
बिनसइ उपजइ ग्यान जिमि पाइ कुसंग सुसंग।१५।(ख)

कभी दिन में घोर अन्धकार छा जाता है और कभी सूर्य उदय हो जाता है, जैसे कुसंगति पाकर ज्ञान नष्ट होता है और सुसंगति पाकर उत्पन्न होता है।

बरषा बिगत[4] सरद रितु आई ❀ लछिमन देखहु परम सुहाई
फूले कास सकल महि छाई ❀ जनु बरषाँ कृत प्रगट बुढ़ाई

वर्षा बीत गई। हे लक्ष्मण ! देखो, अत्यन्त सुहावनी शरद्-ऋतु आ गई। सारी पृथ्वी फूले हुये कासों से छा गई, मानो वर्षा-ऋतु ने अपनी वृद्धावस्था प्रकट की है।

उदित अगस्त[5] पंथ जल सोखा ❀ जिमि लोभहि सोखइ संतोषा
सरिता सर निर्मल जल सोहा ❀ संत हृदय जस गत मद मोहा

अगस्त तारे ने उदय होकर रास्ते का जल सोख लिया, जैसे सन्तोष लोभ को सोख लेता है। नदियों और तालाबों का निर्मल जल ऐसा शोभायमान है, जैसे मद और मोह से रहित संतों का हृदय।

---

१. सुशोभित। २. घना। ३. सूर्य। ४. बीत गई। ५. एक तारा।

रस रस[1] सूख सरित सर पानी ❁ ममता त्याग करहिं जिमि ग्यानी
जानि सरद रितु खंजन[2] आए ❁ पाइ समय जिमि सुकृत[3] सुहाए

नदी और तालाबों का पानी धीरे-धीरे सूख रहा है। जैसे ज्ञानी पुरुष ममता का त्याग करते हैं। शरद्-ऋतु को आया जानकर खञ्जन पक्षी आ गये, जैसे समय पाकर सुन्दर सुकृत (पुण्य) प्रकट हो जाते हैं।

पंक न रेनु सोह असि धरनी ❁ नीति निपुन नृप कै जसि करनी
जल संकोच बिकल भइँ मीना ❁ अबुध कुटुम्बी जिमि धनहीना

न कीचड़ है, न धूल; इससे पृथ्वी ऐसी शोभा दे रही है जैसे नीति-निपुण राजा की करनी। पानी कम हो जाने से मछलियाँ व्याकुल हो रही हैं, जैसे मूर्ख गृहस्थ धन की कमी से व्याकुल होता है।

बिनु घन निर्मल सोह अकासा ❁ हरिजन इव[4] परिहरि सब आसा
कहुँ कहुँ बृष्टि सारदी थोरी ❁ कोउ एक पाव भगति जिमि मोरी

बादलों से रहित निर्मल आकाश ऐसा शोभायमान लग रहा है, जैसे भगवद्भक्त सब प्रकार की आशा छोड़कर सुशोभित होते हैं। कहीं-कहीं शरद्-ऋतु की थोड़ी-थोड़ी वर्षा हो रही है, जैसे कोई विरले ही मेरी भक्ति पाते हैं।

दो० चले हरषि तजि नगर नृप तापस बनिक भिखारि।
जिमि हरिभगति पाइ श्रम तजहिं आस्रमी चारि[5]।१६

राजा, तपस्वी, व्यापारी और भिक्षुक हर्षित होकर नगर छोड़कर चल पड़े, जैसे हरि की भक्ति पाकर चारों आश्रमों वाले काम को त्याग देते हैं।

सुखी मीन जे नीर अगाधा ❁ जिमि हरिसरन न एकउ बाधा
फूलें कमल सोह सर कैसे ❁ निर्गुन ब्रह्म सगुन भएँ जैसे

जो मछलियाँ अथाह जल में हैं, वे सुखी हैं। जैसे भगवान् की शरण में चले जाने पर एक भी बाधा नहीं रहती। कमलों के फूलने से तालाब ऐसा शोभायमान लग रहा है, जैसे निर्गुण (निराकार) ब्रह्म सगुण (साकार) होगया है।

गुंजत मधुकर मुखर अनूपा ❁ सुन्दर खग रव नाना रूपा
चक्रवाक मन दुख निसि पेखी ❁ जिमि दुरजन पर संपति देखी

---

१. धीरे-धीरे। २. एक पक्षी। ३. पुण्य। ४. तरह। ५. ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास, चार आश्रम वाले।

अनुपम ध्वनि करते हुये भौंरे गूँज रहे हैं। पक्षियों के नाना प्रकार के सुन्दर शब्द हो रहे हैं। रात देखकर चकवे के मन में वैसा ही दुःख हो रहा है, जैसे दूसरे का ऐश्वर्य देखकर दुष्ट को होता है।

चातक रटत तृषा अति ओही ❀ जिमि सुख लहइ न संकरद्रोही
सरदातप[1] निसि ससि अपहरई ❀ संत दरस जिमि पातक टरई

पपीहा रट रहा है, उसे बड़ी प्यास है, जैसे शिवजी का द्रोही सुख नहीं पाता। शरद ऋतु के ताप को रात के समय चन्द्रमा हर लेता है, जैसे संतों के दर्शन से पाप दूर हो जाते हैं।

देखि इंदु[2] चकोर समुदाई ❀ चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाई
मसक दंस बीते हिम त्रासा ❀ जिमि द्विज द्रोह किएँ कुल नासा

चकोरों के समूह चन्द्रमा को देख रहे हैं, जैसे भगवद्भक्त भगवान् को पाकर उनके दर्शन करते हैं। मच्छर और डाँस जाड़े के भय से नष्ट हो गये, जैसे ब्राह्मणों से द्रोह करने पर कुल का नाश हो जाता है।

दो॰ भूमि जीव संकुल रहे गए सरद रितु पाइ।
सदगुर मिलें जाहिं जिमि संसय भ्रम समुदाइ ॥१७॥

भूमि पर जीवों के समूह जो भर गये, वे शरद्-ऋतु पाकर वैसे ही नष्ट हो गये, जैसे सद्गुरु के मिलने पर संशय और भ्रम के समूह नष्ट हो जाते हैं।

बरषा गत निर्मल रितु आई ❀ सुधि न तात सीता कै पाई
एक बार कैसेहुँ सुधि जानौं ❀ कालहु जीति निमिष महुँ आनौं

वर्षा बीत गई, निर्मल शरद्-ऋतु आ गई। हे भाई! सीता की कोई खबर नहीं मिली। एक बार किसी तरह भी पता पाऊँ तो काल को भी क्षणभर में जीतकर सीता को ले आऊँ।

कतहुँ रहउ जौं जीवति होई ❀ तात जतन करि आनउँ सोई
सुग्रीवहुँ सुधि मोरि बिसारी ❀ पावा राज कोस पुर नारी

कहीं भी हो, यदि जीवित हो, तो हे तात! मैं उपाय करके उसे अवश्य ले आऊँगा। सुग्रीव ने राज्य, खजाना, नगर और स्त्री पाया। उसने भी मेरी याद भुला दी।

---

१. शरद् ऋतु की धूप। २. चन्द्रमा।

जेहि सायक मारा मैं बाली ❀ तेहि सर हतौं मूढ़ कहुँ काली[1]
जासु कृपा छूटहिं मद मोहा ❀ ताकहुँ उमा कि सपनेहुँ कोहा[2]

जिस बाण से मैंने बालि को मारा था, उसी से कल उस मूढ़ को भी मारूँगा। (शिवजी कहते हैं—) जिसकी कृपा से मद और मोह छूट जाते हैं, हे पार्वती! उसे कहीं स्वप्न में भी क्रोध हो सकता है?

जानहिं यह चरित्र मुनि ग्यानी ❀ जिन्ह रघुबीर चरन रति मानी
लछिमन क्रोधवंत प्रभु जाना ❀ धनुष चढ़ाइ गहे कर बाना

इस बात का रहस्य ज्ञानी मुनि ही जानते हैं, जिन्होंने रामजी के चरणों में प्रेम लगा रक्खा है। लक्ष्मण ने जब प्रभु को क्रोधित जाना, तब उन्होंने धनुष चढ़ाकर हाथ में बाण ले लिये।

दो॰ तब अनुजहिं समुझावा रघुपति करुना सीवँ।
भय देखाइ लै आवहु तात सखा सुग्रीव ॥१८॥

तब दया की सीमा रामजी ने छोटे भाई लक्ष्मण को समझाया और कहा—हे तात! सखा सुग्रीव को केवल भय दिखला कर ले आओ।

इहाँ पवनसुत हृदयँ बिचारा ❀ राम काजु सुग्रीवँ बिसारा
निकट जाइ चरनन्हि सिरु नावा ❀ चारिहु बिधि तेहि कहि समुझावा

इधर हनुमान ने भी हृदय में सोचा कि सुग्रीव ने रामजी के कार्य को भुला दिया। उन्होंने सुग्रीव के निकट जाकर चरणों में सिर नवाया और (साम, दाम, दंड, भेद) चारों प्रकार की नीति कहकर उसे समझाया।

सुनि सुग्रीवँ परम भय माना ❀ बिषयँ मोर हरि लीन्हेउ ग्याना
अब मारुतसुत दूत समूहा ❀ पठवहु जहँ तहँ बानर जूहा

हनुमान के वचन सुनकर सुग्रीव बहुत ही भयभीत हुआ। वह पछताने लगा कि विषयभोग ने मेरा ज्ञान ही हर लिया। उसने कहा—हे पवनपुत्र! जहाँ-तहाँ बानरों के समूह रहते हैं, वहाँ दूतों के समूहों को भेजो।

कहेहु पाख महुँ आव न जोई ❀ मोरें कर ता कर बध होई
तब हनुमंत बोलाए दूता ❀ सब कर करि सनमान बहूता

सबको कहला दो कि जो एक पखवाड़े में नहीं आ जायेगा उसका

१. कल। २. क्रोध।

मेरे हाथों वध होगा। तब हनुमान ने दूतों को बुलाया और सबका बहुत सम्मान करके,

भय अरु प्रीति नीति देखराई ❀ चले सकल चरनन्हि सिर नाई
एहि अवसर लछिमन पुर आए ❀ क्रोध देखि जहँ तहँ कपि धाए

उन्हें भय, प्रीति और नीति दिखलाई। वे सब हनुमान के चरणों में सिर नवाकर चले। इसी अवसर में लक्ष्मण नगर में आये। उनका क्रोध देखकर बानरगण जहाँ-तहाँ दौड़ पड़े।

दो॰ धनुष चढ़ाइ कहा तब जारि करउँ पुर छार।
ब्याकुल नगर देखि तब आयेउ बालिकुमार॥१९

लक्ष्मण ने धनुष चढ़ाकर कहा—मैं नगर को जलाकर भस्म कर दूँगा। तब नगर निवासियों को विकल देखकर बालि-पुत्र अंगद उनके पास आये।

चरन नाइ सिरु बिनती कीन्ही ❀ लछिमनु अभय बाँह तेहि दीन्ही
क्रोधवंत लछिमन सुनि काना ❀ कह कपीस[1] अति भयँ अकुलाना

अंगद ने लक्ष्मण के चरणों में सिर नवाकर विनय की, तब लक्ष्मण ने उसकी भुजा पकड़कर उसे 'अभय' वचन दिया। लक्ष्मण को अपने कानों से क्रुद्ध सुनकर भय से व्याकुल होकर सुग्रीव कहने लगा—

सुनु हनुमंत संग लै तारा ❀ करि बिनती समुझाउ कुमारा
तारा सहित जाइ हनुमाना ❀ चरन बंदि प्रभु सुजस बखाना

हे हनुमान! सुनो, तुम तारा को साथ लेकर जाओ और विनय करके राजकुमार लक्ष्मण को समझाओ। हनुमान तारा को साथ लेकर गये और उन्होंने लक्ष्मण के चरणों की बन्दना करके प्रभु के सुन्दर यश का बखान किया।

करि बिनती मन्दिर[2] लै आए ❀ चरन पखारि पलँग बैठाए
तब कपीस चरनन्हि सिरु नावा ❀ गहि भुज लछिमन कंठ लगावा

फिर विनय करके वे उनको महल में ले आये। उनके पैर धोये और उन्हें पलग पर बैठाया। तब सुग्रीव ने लक्ष्मण के चरणों में सिर नवाया। लक्ष्मण ने उसकी भुजा पकड़कर उसे गले से लगा लिया।

१. सुग्रीव। २. महल।

नाथ बिषय सम मद[1] कछु नाहीं ❀ मुनि मन मोह करइ छन माहीं
सुनत बिनीत बचन सुख पावा ❀ लछिमन तेहि बहु बिधि समुझावा
पवनतनय सब कथा सुनाई ❀ जेहिं बिधि गए दूत समुदाई

सुग्रीव ने कहा—हे नाथ ! विषय के समान और कोई मद नहीं है, यह क्षण-मात्र में मुनियों के मन में भी मोह उत्पन्न कर देता है। सुग्रीव के विनय-युक्त वचन सुनकर लक्ष्मण ने बहुत सुख पाया और उसे बहुत प्रकार से समझाया। तब पवनपुत्र हनुमान ने, जिस प्रकार दूतों के समूह सीता की खोज में भेजे गये थे, सब हाल कहा।

दो०— हरषि चले सुग्रीव तब अंगदादि कपि साथ।
रामानुज आगें करि आए जहँ रघुनाथ ॥२०॥

तब अंगद आदि बानरों को साथ लेकर और रामजी के छोटे भाई को आगे करके सुग्रीव हर्षित होकर चले और वहाँ आये, जहाँ रामजी थे।

नाइ चरन सिरु कह कर जोरी ❀ नाथ मोहि कछु नाहिन खोरी
अतिसय प्रबल देव तव माया ❀ छूटइ राम करहु जौं दाया

सुग्रीव रामजी के चरणों में सिर नवाकर और हाथ जोड़कर कहने लगा—हे नाथ ! मेरी कोई भी भूल नहीं है। हे देव ! आपकी माया अत्यन्त प्रबल है। हे राम ! आप ही दया करें, तब छूट सकती है।

बिषय बस्य सुर नर मुनि स्वामी ❀ मैं पावँर पसु कपि अति कामी
नारि नयन सर जाहि न लागा ❀ घोर क्रोध तम निसि जो जागा

हे स्वामी ! देवता, मनुष्य और मुनि सभी विषयों के वश में हैं। फिर मैं तो पामर पशु और पशुओं में भी अत्यन्त कामी बन्दर हूँ। स्त्री का नयन-बाण जिसे नहीं लगा, जो भयानक क्रोधरूपी अँधेरी रात में भी जागता रहता है,

लोभ पाँस जेहि गर न बँधाया ❀ सो नर तुम्ह समान रघुराया
यह गुन साधन तें नहिं होई ❀ तुम्हरी कृपाँ पाव कोइ कोई

लोभ के फंदे से जिसने अपना गला नहीं बँधाया, हे रामजी ! वह मनुष्य आप ही के समान है। ये गुण साधन से नहीं प्राप्त होते। आप ही की कृपा से कोई-कोई इन्हें पाते हैं।

---

१. नशा।

तब रघुपति बोले मुसुकाई ❀ तुम्ह प्रिय मोहि भरत जिमि भाई
अब सोइ जतनु करहु मन लाई ❀ जेहि बिधि सीता कै सुधि पाई

तब रामजी मुसकुराकर बोले—हे भाई ! तुम मुझे भरत के समान प्यारे हो। अब मन लगाकर वही उपाय करो, जिससे सीता की ख़बर मिले।

दो॰ एहि बिधि होत बतकही आए बानर जूथ।
नाना बरन सकल दिसि देखिअ कीस बरूथ ॥२१॥

इस प्रकार बातचीत हो ही रही थी कि बानरों के झुण्ड आ गये। सब दिशाओं में अनेक रूप-रङ्गों के बानरों के समूह दिखाई पड़ने लगे।

बानर कटक उमा मैं देखा ❀ सो मूरुख जो करन चह लेखा
आइ रामपद नावहिं माथा ❀ निरखि बदनु सब होहिं सनाथा

शिवजी कहते हैं—हे पार्वती ! मैंने बानरों की सेना देखी। वह मूर्ख है जो हिसाब लगाना चाहे। बानर आ-आकर रामजी के चरणों में माथा नवाते हैं और राम के श्रीमुख को देखकर सब कृतार्थ होते हैं।

अस कपि एक न सेना माहीं ❀ राम कुसल जेहि पूछी नाहीं
यह कछु नहिं प्रभु कइ अधिकाई ❀ बिस्वरूप ब्यापक रघुराई

सेना में एक भी बानर ऐसा नहीं था, जिससे रामजी ने कुशल न पूछी हो। यह प्रभु के लिये कोई बड़ी बात नहीं, रामजी तो विश्वरूप तथा सर्व-व्यापक हैं।

ठाढ़े जहँ तहँ आयसु पाई ❀ कह सुग्रीव सबहिं समुझाई
राम काजु अरु मोर निहोरा[1] ❀ बानर जूथ जाहु चहुँ ओरा

सुग्रीव की आज्ञा पाकर सब जहाँ-तहाँ खड़े हो गये। तब सुग्रीव ने सब को समझाकर कहा—एक तो रामजी का काम, दूसरे मेरा अनुरोध, इससे हे बानरो के समूह ! तुम चारों ओर जाओ।

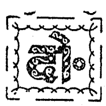
जनकसुता कहुँ खोजहु जाई ❀ मास दिवस महँ आयहु भाई
अवधि मेटि जो बिनु सुधि पाएँ ❀ आवइ बनिहि सो मोहिं मराएँ

और जाकर जनक-राजकुमारी को खोजो। हे भाई ! महीने-भर में लौट

---

१. अनुरोध।

आना। बिना खबर लिये अवधि के बाद जो लौटेगा, उसका वध मुझे करना ही पड़ेगा।



बचन सुनत सब बानर जहँ तहँ चले तुरंत।
तब सुग्रीवँ बोलाये अंगद नल हनुमंत ॥२२॥

सुग्रीव के वचन सुनते ही बानरों के झुण्ड जहाँ-तहाँ तुरन्त ही चल पड़े। तब सुग्रीव ने अंगद, नल और हनुमान को बुलाया।

सुनहु नील अंगद हनुमाना ❀ जामवंत मतिधीर सुजाना
सकल सुभट मिलि दच्छिन जाहू ❀ सीता सुधि पूँछेहु सब काहू

हे नील, अंगद, हनुमान और धीर मतिवाले बुद्धिमान् जामवंत! सुनो। सब वीर मिलकर दक्षिण दिशा को जाओ और सबसे सीता का पता पूछना।

मन क्रम बचन सो जतन बिचारेहु ❀ रामचन्द्र कर काज सँवारेहु
भानु पीठि सेइअ उर आगी ❀ स्वामिहि सर्ब भाव छल त्यागी

मन, कर्म और वचन से उसी का उपाय सोचना और रामचन्द्रजी का कार्य सिद्ध करना। सूर्य को पीठ की ओर से और अग्नि को छाती की ओर से सेना चाहिये, पर स्वामी की सेवा सर्व-भाव से, छल छोड़कर करनी चाहिये। [अर्थान्तरन्यास अलंकार]

तजि माया सेइअ परलोका ❀ मिटहि सकल भव संभव सोका
देह धरे कर यह फलु भाई ❀ भजिअ राम सब काम बिहाई

माया को छोड़कर परलोक के कल्याण के लिये प्रयत्न करना चाहिये, जिससे जन्म-मरण से उत्पन्न समस्त शोक मिट जायँ। हे भाई! शरीर धारण करने का यही फल है कि सब काम छोड़कर रामजी का भजन ही किया जाय।

सोइ गुनग्य सोई बड़भागी ❀ जो रघुबीर चरन अनुरागी
आयसु माँगि चरन सिरु नाई ❀ चले हरषि सुमिरत रघुराई

वही मनुष्य गुणज्ञ है, वही भाग्यशाली है, जो रामजी के चरणों का प्रेमी है। आज्ञा माँगकर और चरणों में सिर नवाकर राम को याद करते हुये सब हर्षित होकर चले।

पाछें पवन तनय सिरु नावा ❀ जानि काज प्रभु निकट बोलावा
परसा सीस सरोरुह पानी ❀ करमुद्रिका दीन्हि जन जानी

सबके बाद पवनपुत्र हनुमान ने सिर नवाया। उनसे काम होगा, ऐसा समझकर प्रभु रामचन्द्रजी ने उन्हें अपने निकट बुलाया। कमल ऐसे हाथ से रामजी ने हनुमान का सिर-स्पर्श किया और उन्हें सेवक जानकर हाथ की अँगूठी उतार दी।

बहु प्रकार सीतहिं समुझायेहु ❀ कहि बल बिरह बेगि तुम्ह आयेहु
हनुमत जनम सुफल करि माना ❀ चलेउ हृदयँ धरि कृपानिधाना
जद्यपि प्रभु जानत सब बाता ❀ राजनीति राखत सुरत्राता[1]

और कहा—सीता को बहुत प्रकार से समझाना। मेरा बल और विरह (प्रेम) बताकर तुम जल्दी ही लौट आना। हनुमान ने अपना जन्म सफल माना और वे कृपानिधान रामजी को हृदय में रखकर चले। यद्यपि प्रभु सब बातें जानते हैं, तो भी देवताओं के रक्षक रामजी राजनीति की मर्यादा रखते हैं।

दो०— चले सकल बन खोजत सरिता सर गिरि खोह।
राम काज लयलीन मन बिसरा तन कर छोह॥२३॥

सब बानर वन, नदी, तालाब, पहाड़ और पहाड़ों की खोहों में खोजते हुये चले जा रहे हैं। सबका मन रामजी के काम में तन्मय हो रहा है। उन्हें अपने शरीर तक का मोह भूल गया है।

कतहुँ होइ निसिचर सैं भेंटा ❀ प्रान लेहिं एक एक चपेटा[2]
बहु प्रकार गिरि कानन हेरहिं ❀ कोउ मुनि मिलइ ताहि सब घेरहिं

कहीं किसी राक्षस से भेंट हो जाती है तो वे एक-एक चपत में ही उसके प्राण ले लेते हैं। वह पहाड़ों और जंगलों को बहुत प्रकार से खोज रहे हैं। कोई मुनि मिल जाता है तो पता पूछने के लिये वे सब उसे घेर लेते हैं।

लागि तृषा[3] अतिसय अकुलाने ❀ मिलइ न जल घन गहन[4] भुलाने
मन हनुमान कीन्ह अनुमाना ❀ मरन चहत सब बिनु जल पाना

उन्हें अत्यन्त प्यास लगी। वे सब बहुत ही व्याकुल हो गये, किन्तु पानी कहीं न मिला और वे घने वन में रास्ता भूल गये। तब हनुमान ने मन में अनुमान लगाया कि पानी पिये बिना सब लोग मरना ही चाहते हैं।

चढ़ि गिरि सिखर चहूँ दिसि देखा ❀ भूमि बिबर[5] एक कौतुक पेखा
चक्रवाक बक हंस उड़ाहीं ❀ बहुतक खग प्रबिसहिं तेहि माहीं

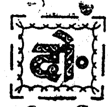
---

१. देवताओं के रक्षक। २. चपत। ३. प्यास। ४. वन। ५. गुफा।

पहाड़ की चोटी पर चढ़कर उन्होंने चारों दिशाओं में देखा तो भूमि के अन्दर एक गुफा में उन्हें एक आश्चर्य दिखाई पड़ा। उसके ऊपर चकवा, बगुला और हँस उड़ रहे हैं और बहुत से पक्षी उसमें प्रवेश कर रहे हैं।

गिरि तें उतरि पवनसुत आवा ❀ सब कहुँ लै सोइ बिबर देखावा
आगें कै हनुमंतहिं लीन्हा ❀ पैठे बिबर बिलंबु न कीन्हा

हनुमान पर्वत से उतर आये और सबको ले जाकर उन्होंने वह गुफा दिखलाई। सब ने हनुमान को आगे कर लिया और वे गुफा में घुस गये। देरी नहीं की।



दीख जाइ उपबन बर सर बिगसित बहु कंज।
मंदिर एक रुचिर तहँ बैठि नारि तप पुंज ॥२४॥

अन्दर जाकर उन्होंने एक सुन्दर उपवन और सरोवर देखा, जिसमें बहुत से कमल खिले हुये थे। वहीं एक सुन्दर मन्दिर था, जिसमें एक तपस्विनी स्त्री बैठी थी।

दूरि तें ताहि सबन्हि सिरु नावा ❀ पूछें निज बृत्तान्त सुनावा
तेहिं तब कहा करहु जल पाना ❀ खाहु सुरस सुन्दर फल नाना

सब ने उसे दूर ही से सिर नवाया, और पूछे जाने पर उसे अपना सब वृत्तान्त भी कह सुनाया। तब उसने कहा—जलपान करो और तरह-तरह के रसीले सुन्दर फल खाओ।

मज्जनु[1] कीन्ह मधुर फल खाये ❀ तासु निकट पुनि सब चलि आये
तेहि सब आपनि कथा सुनाई ❀ मैं अब जाब जहाँ रघुराई

बानरों ने स्नान किया, मीठे फल खाये और फिर सब उसके पास चले आये। तब उसने अपनी सब कथा कह सुनाई और कहा—मैं अब वहाँ जाऊँगी, जहाँ रघुनाथजी हैं।

मूँदहु नयन बिबर तजि जाहू ❀ पैहहु सीतहि जनि पछिताहू
नयन मूँदि पुनि देखहिं बीरा ❀ ठाढे सकल सिन्धु कें तीरा

तुम लोग आँखें मूँद लो और गुफा को छोड़कर बाहर जाओ। तुम सीता को पाओगे, पछताओ मत। आँखें मूँदकर जब उन वीरों ने फिर आँखें खोलीं,

---

१. स्नान।

तब उन्होंने देखा कि वे सब समुद्र के किनारे खड़े हैं।

सो पुनि गई जहाँ रघुनाथा ❀ जाइ कमल पद नायेसि माथा
नाना भाँति बिनय तेहिं कीन्ही ❀ अनपायनी[1] भगति प्रभु दीन्ही

फिर वह वहाँ गई, जहाँ रघुनाथजी थे। जाकर उसने प्रभु के कमल ऐसे चरणों में सिर नवाया और अनेक प्रकार से विनती की। प्रभु ने उसे अपनी अचल भक्ति दी।

दो॰— बदरीबन कहुँ सो गई प्रभु अग्या धरि सीस।
उर धरि राम चरन जुग जे बंदत अज[2] ईस[3] ॥२५॥

वह प्रभु की आज्ञा सिर पर धारण करके रामजी के दोनों चरणों को, जिनकी ब्रह्मा और शिव भी वन्दना करते हैं, हृदय में धरकर बदरीवन को चली गई।

इहाँ बिचारहिं कपि मन माहीं ❀ बीती अवधि काज कछु नाहीं
सब मिलि कहहिं परसपर बाता ❀ बिनु सुधि लयें करब का भ्राता

यहाँ बानरगण मन में विचार करने लगे कि अवधि तो बीत गई, पर काम कुछ न हुआ। सब आपस में मिलकर बात करने लगे कि हे भाई! सीता की खबर लिये बिना हम लौटकर भी क्या करेंगे?

कह अंगद लोचन भरि बारी ❀ दुहुँ प्रकार भइ मृत्यु हमारी
इहाँ न सुधि सीता कै पाई ❀ उहाँ गयें मारिहि कपिराई

अंगद ने आँखों में आँसू भरकर कहा—दोनों ही प्रकार से हमारी मृत्यु हुई। यहाँ तो सीता की खबर नहीं मिली और वहाँ जाने पर सुग्रीव हमें मार डालेंगे।

पिता बधे पर मारत मोही ❀ राखा राम निहोर न ओही
पुनि पुनि अंगद कह सब पाहीं ❀ मरन भयउ कछु संसय नाहीं

पिता के वध होने पर राम ही ने मुझे बचाया, इसमें सुग्रीव का एहसान नहीं। अंगद बार-बार सब से कहता था कि अब मरना हुआ, इसमें कुछ संशय नहीं।

अंगद बचन सुनत कपिबीरा ❀ बोलि न सकहिं नयन बह नीरा
छन एक सोच मगन होइ रहेऊ ❀ पुनि अस बचन कहत सब भयेऊ

१. अचल। २. ब्रह्मा। ३. शिव।

वानर वीर अंगद के वचन सुनते हैं, पर कुछ बोल नहीं सकते हैं, उनके नेत्रों से जल बह रहा है। क्षण भर तक के लिये वे चिंता-मग्न हुये रहे; फिर सब ऐसा वचन कहने लगे—

हम सीता कै सुधि लीन्हें बिना ❀ नहिं जैहैं जुबराज प्रबीना
अस कहि लवन[1] सिंधु तट जाई ❀ बैठे कपि सब दर्भ[2] डसाई

हे सुयोग्य युवराज! हम लोग सीता की खोज लिये बिना नहीं लौटेंगे, ऐसा कहकर लवण-सागर के किनारे जाकर वे सब बानर कुश बिछाकर बैठ गये।

जामवन्त अंगद दुख देखी ❀ कहीं कथा उपदेस बिसेषी
तात राम कहुँ नर जनि मानहु ❀ निर्गुन ब्रह्म अजित अज जानहु
हम सब सेवक अति बड़ भागी ❀ संतत सगुन ब्रह्म अनुरागी

अंगद का दुःख देखकर जामवन्त ने विशेष उपदेश वाली कथायें कहीं। हे तात! रामजी को मनुष्य मत समझो। उनको निर्गुण ब्रह्म, अजेय और अजन्मा जानो। हम सब सेवक अत्यन्त भाग्यशाली हैं, जो सदा सगुण (साकार) ब्रह्म में प्रेम रखते हैं।

दो०— निज इच्छा प्रभु अवतरइ सुर महि गो द्विज लागि।
सगुन उपासक संग तहँ रहहिं मोच्छ सुख त्यागि॥

देवता, पृथ्वी, गौ और ब्राह्मण के लिये प्रभु अपनी इच्छा से अवतार लेते हैं। सगुण ब्रह्म की उपासना करने वाले सब प्रकार के मोक्ष-सुखों का परित्याग कर उनकी सेवा में साथ रहते हैं।

एहि बिधि कथा कहहिं बहु भाँती ❀ गिरि कंदराँ सुनी संपाती[3]
बाहेर होइ देखे बहु कीसा ❀ मोहि अहार दीन्ह जगदीसा

इस प्रकार जामवन्त बहुत तरह की कथायें कहते रहे। इनकी बातें पर्वत की गुफा में रहने वाले संपाती ने सुनीं, तब बाहर आकर उसने बहुत से बानर देखे। वह कहने लगा—भगवान् ने मुझे घर-बैठे बहुत-सा आहार दिया है।

आजु सबन्ह कहँ भच्छन करऊँ ❀ दिन बहु चले अहार बिनु मरऊँ
कबहुँ न मिल भरि उदर अहारा ❀ आजु दीन्ह बिधि एकहिं बारा

आज इन सब को खा जाऊँगा। बहुत दिन बीत गये, आहार बिना मर

१. खारी समुद्र। २. कुशा। ३. जटायु का बड़ा भाई।

रहा था। कभी पेट भरकर आहार नहीं मिला। आज ब्रह्मा ने एक ही बार में बहुत-सा दे दिया।

डरपे गीधबचन सुनि काना ❀ अब भा मरन सत्य हम जाना
कपि सब उठे गीध कहँ देखी ❀ जामवंत मन सोच बिसेषी

गिद्ध की बात कानों से सुनकर सब डर गये और सोचने लगे कि अब सचमुच ही मरना हो गया, यह हम जान गये। उस गिद्ध को देखकर सब बानर उठ खड़े हुये। जामवन्त के मन में विशेष चिंता हुई।

कह अङ्गद बिचारि मन माहीं ❀ धन्य जटायू सम कोउ नाहीं
राम काज कारन तनु त्यागी ❀ हरि पुर गयउ परम बड़भागी

अंगद ने मन में विचारकर कहा—जटायु के समान धन्य कोई नहीं। रामजी के काम के लिये उसने शरीर छोड़ा और परम भाग्यवान् वह बैकुण्ठ को चला गया।

सुनि खग हरष सोक जुत बानी ❀ आवा निकट कपिन्ह भय मानी
तिन्हहिं अभय करि पूछेसि जाई ❀ कथा सकल तिन्ह ताहि सुनाई
सुनि संपाति बंधु कै करनी ❀ रघुपति महिमा बहु बिधि बरनी

हर्ष और शोक से युक्त यह वाणी सुनकर गिद्ध निकट आया; तब बानर भयभीत हो गये। उनको अभय वचन देकर गिद्ध ने उनके निकट जाकर जटायु का हाल पूछा—तब उन्होंने उसे सारी कथा कह सुनाई। अपने भाई जटायु की करनी सुनकर संपाती ने रामजी की महिमा का वर्णन बहुत प्रकार से किया।

दो० मोहि लै जाहु सिंधुतट देउँ तिलांजलि ताहि।
बचन सहाय करबि मैं पैहहु खोजहु जाहि ॥२७॥

उसने कहा—मुझे समुद्रतट पर ले चलो, मैं जटायु को तिलांजलि दूँगा। इस सेवा के बदले मैं तुम्हारी सहायता केवल वचन से करूँगा, जिसे तुम खोज रहे हो, उसे पा जाओगे।

अनुज क्रिया करि सागर तीरा ❀ कह निज कथा सुनहु कपि बीरा
हम दोउ बंधु प्रथम तरुनाई ❀ गगन गए रबि निकट उड़ाई

समुद्र के तीर पर अपने छोटे भाई जटायु का क्रिया-कर्म करके संपाती अपना हाल कहने लगा—हे वीर बानरो! सुनो, हम दोनों भाई उठती जवानी

में आकाश में उड़ते-उड़ते सूर्य के निकट जा पहुँचे।

तेज न सहि सक सो फिरि आवा ❀ मैं अभिमानी रबि निअरावा
जरे पंख अति तेज अपारा ❀ परेउँ भूमि करि घोर चिकारा

वह सूर्य का तेज नहीं सह सका और लौट आया। मैं अभिमानी था। सूर्य के निकट चला गया। सूर्य के अत्यन्त अपार तेज से मेरे पंख जल गये। मैं बड़े ज़ोर से चीख़ मारकर पृथ्वी पर गिर पड़ा।

मुनि एक नाम चंद्रमा ओही ❀ लागी दया देखि करि मोही
बहु प्रकार तेहिं ग्यान सुनावा ❀ देह जनित अभिमान छुड़ावा

वहाँ एक मुनि थे, उनका नाम चन्द्रमा था। मुझे देखकर उन्हें दया लगी। उन्होंने बहुत प्रकार से मुझे ज्ञान की बातें सुनाईं और देह-सम्बन्धी मेरा अभिमान छुड़ा दिया।

त्रेताँ ब्रह्म मनुज तनु धरिहिं ❀ तासु नारि निसिचर पति हरिहीं
तासु खोज पठइहि प्रभु दूता ❀ तिन्हहिं मिलें तैं होब पुनीता

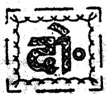
मुनि ने कहा—त्रेतायुग में परब्रह्म मनुष्य का शरीर धारण करेंगे। उनकी स्त्री को राक्षसों का राजा हर ले जायगा। उसकी खोज में प्रभु दूत भेजेंगे। उनको मिलकर तू पवित्र हो जायगा।

जमिहहिं पंख करसि जनि चिंता ❀ तिन्हहिं देखाइ दिहेसु तैं सीता
मुनि कइ गिरा सत्य भइ आजू ❀ सुनि मम बचन करहु प्रभु काजू

तेरे पंख जम आयेंगे, चिन्ता मत कर। उन्हें तू सीता को दिखला देना। आज मुनि का वचन सत्य हुआ। अब मेरी बातें सुनकर तुम प्रभु का कार्य करो।

गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका ❀ तहँ रह रावन सहज असंका
तहँ असोक उपबन जहँ रहई ❀ सीता बैठि सोच रत अहई

त्रिकूट पर्वत पर लंका बसी हुई है। स्वभाव ही से निडर रावण वहाँ रहता है। वहाँ अशोक नाम का बगीचा है, जहाँ सीता रहती हैं और चिन्ता में मग्न बैठी हैं।



मैं देखउँ तुम्ह नाहीं गीधहि दृष्टि अपार।
बूढ़ भयउँ न त करतेउँ कछुक सहाय तुम्हार॥२८॥

मैं उन्हें देख रहा हूँ, तुम नहीं देख सकते। गिद्ध की दृष्टि बहुत तेज़ होती है। मैं बूढ़ा हो गया, नहीं तो मैं तुम्हारी कुछ तो सहायता करता ही।

जो नांघइ सत जोजन सागर ❀ करइ सो राम काज मति आगर

सौ योजन समुद्र को जो नाँघ सकेगा वही बुद्धिमान् राम का काम कर सकेगा।

मोहि बिलोकि धरहु मन धीरा ❀ राम कृपाँ कस भयेउ सरीरा
पापिउ जा कर नाम सुमिरहीं ❀ अति अपार भवसागर तरहीं

मुझे देखकर मन में धीरज धरो। देखो, रामजी की कृपा से मेरा शरीर कैसा हो गया? अर्थात् पंख निकल आये। पापी भी जिनका नाम स्मरण करके अत्यन्त अपार भवसागर को तर जाते हैं,

तासु दूत तुम्ह तजि कदराई[1] ❀ राम हृदयँ धरि करहु उपाई
अस कहि गरुड़ गीध जब गयऊ ❀ तिन्ह कें मन अति बिसमय भयऊ

तुम उसके दूत हो, कायरता छोड़कर, राम को हृदय में धारण करके उपाय करो। काक भुशुंडि कहते हैं—हे गरुड़! गीध ऐसा कहकर जब चला गया, तब उन बानरों के मन में बड़ा विस्मय हुआ।

निज निज बल सब काहूँ भाखा ❀ पार जाइ कर संसय राखा
जरठ[2] भयउँ अब कहइ रिछेसा ❀ नहिं तन रहा प्रथम बल लेसा
जबहिं त्रिबिक्रम[3] भये खरारी ❀ तब मैं तरुन रहेउँ बल भारी

सब किसी ने अपना-अपना बल कह सुनाया। पर सभी ने समुद्र के पार जाने में सन्देह प्रकट किया। ऋक्षों के स्वामी जामवन्त ने कहा—मैं अब बुड्ढा हो गया, अब पहले का बल शरीर में लेशमात्र भी नहीं रह गया। जब विष्णु ने त्रिविक्रम (वामन) का रूप धारण किया था, तब मैं जवान था और मुझ में बड़ा बल था।

दो० बलि बाँधत प्रभु बाढ़ेउ सो तनु बरनि न जाइ।
उभय[4] घरी महँ दीन्ही सात प्रदच्छिन[5] धाइ॥२९॥

बलि को बाँधते समय प्रभु इतने बढ़े कि उस शरीर का वर्णन नहीं हो सकता। मैंने दो ही घड़ी में दौड़कर उनकी सात प्रदक्षिणाएँ कर लीं।

अंगद कहइ जाउँ मैं पारा ❀ जियँ संसय कछु फिरती बारा
जामवंत कह तुम्ह सब लायक ❀ पठइअ किमि सबही कर नायक

१. कायरता। २. बुड्ढा। ३. वामन। ४. दो। ५. परिक्रमा।

अंगद ने कहा—मैं पार तो जा सकता हूँ; पर लौटते समय के लिये मेरे जी में कुछ सन्देह है। जामवन्त ने कहा—तुम सब प्रकार से योग्य हो; पर सबके नेता को कैसे भेजा जाय?

कहा रीछपति सुनु हनुमाना ❀ का चुप साधि रहा बलवाना
पवन तनय बल पवन समाना ❀ बुधि बिबेक बिग्यान निधाना

जामवन्त ने कहा—हे हनुमान! सुनो। हे बलवान्! तुमने यह क्या चुप्पी साध रक्खी है? तुम पवन के पुत्र हो और बल में पवन के समान हो। तुम बुद्धि, विवेक और विज्ञान के धाम हो।

कवन सो काज कठिन जग माहीं ❀ जो नहिं तात होइ तुम्ह पाहीं
राम काज लगि तव अवतारा ❀ सुनतहिं भयउ पर्वताकारा

जगत् में ऐसा कठिन काम कौन-सा है, जो हे तात! तुमसे न हो सके। रामजी के काम के लिये ही तुम्हारा अवतार हुआ है। यह सुनते ही हनुमान (उत्साहित होकर) पर्वत के आकार के हो गये।

कनक बरन तन तेज बिराजा ❀ मानहुँ अपर गिरिन्ह कर राजा
सिंहनाद करि बारहिं बारा ❀ लीलहिं नाघउँ जलधि अपारा

हनुमान के सोने के-से रंग वाले शरीर में तेज सुशोभित हुआ, जैसे पर्वतों का दूसरा राजा हो। हनुमान ने बार-बार सिंहनाद करके कहा—मैं इस अपार समुद्र को खेल में ही लाँघ सकता हूँ।

सहित सहाय रावनहिं मारी ❀ आनउँ इहाँ त्रिकूट उपारी
जामवंत मैं पूँछउँ तोही ❀ उचित सिखावनु दीजहु मोही

मैं रावण को उसके सहायकों-सहित मारकर, त्रिकूट पर्वत को उखाड़कर यहाँ ला सकता हूँ। हे जामवन्त! मैं तुमको पूछता हूँ, मुझे उचित सीख दो।

एतना करहु तात तुम्ह जाई ❀ सीतहि देखि कहहु सुधि आई
तब निज भुज बल राजिवनैना ❀ कौतुक लागि संग कपि सैना

जामवन्त ने कहा—हे तात! तुम जाकर इतना ही करो कि सीता को देखकर लौट आओ और उनकी खबर कह दो। तब कमल ऐसे नेत्रों वाले रामजी अपने भुजबल से, बानरों की सेना खिलवाड़ की तरह साथ लेकर,

छंद—कपि सेन संग सँघारि निसिचर रामु सीतहिं आनिहैं।
त्रैलोक पावन सुजसु सुर मुनि नारदादि बखानिहैं॥
जो सुनत गावत कहत समुझत परम पद नर पावई।
रघुबीर पद पाथोज मधुकर दास तुलसी गावई॥

बानरों की सेना साथ लेकर, राक्षसों को मारकर रामजी सीता को ले आयेंगे। तब तीनों लोकों को पवित्र करने वाले उनके सुन्दर यश का बखान देवता और नारद आदि मुनि करेंगे, जिसे सुनकर, गाकर, कहकर और समझकर मनुष्य मोक्षपद पाते हैं और जिसे राम के कमल ऐसे चरणों का भ्रमर तुलसीदास गाता है।

दो०—भव भेषज रघुनाथ जसु सुनहिं जे नर अरु नारि।
तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि[1]॥

रामजी का यश जन्म-मरण रूपी रोग की दवा है। जो पुरुष और स्त्री उसे सुनते हैं, उनके सब मनोरथों को त्रिशिरा के शत्रु रामजी सिद्ध करते हैं।

सो०—नीलोत्पल[2] तन स्याम काम कोटि सोभा अधिक।
सुनिअ तासु गुन ग्राम[3] जासु नाम अघ[4] खग बधिक॥

जिनका नीले कमल के समान श्याम शरीर है, जिनकी शोभा करोड़ों कामदेवों से भी अधिक है और जिनका नाम पापरूपी पक्षियों को मारने के लिये बधिक के समान है, उन श्रीरामजी के गुणों के समूह को अवश्य सुनना चाहिये।

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने
चतुर्थः सोपानः समाप्तः



१. त्रिशिरा राक्षस के शत्रु। २. नीला कमल। ३. समूह। ४. पाप।

श्रीगणेशायनमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

रामचरितमानस

सुन्दर-काण्ड

श्लोकाः

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं।
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम्॥
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं।
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूड़ामणिम्॥१॥

शांत, सनातन, प्रमाणों से परे, निष्पाप, मोक्षरूप, शान्ति देने वाले, ब्रह्मा, शिव और शेष से निरन्तर सेवित, वेदान्त द्वारा जानने योग्य, सर्वव्यापक, देवताओं में श्रेष्ठ, माया से मनुष्य-रूप दीखने वाले, पापों को हरने वाले, करुणा की खान, रघुकुल के श्रेष्ठ तथा राजाओं में शिरोमणि, राम नामधारी जगदीश्वर की मैं वन्दना करता हूँ।

नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये।
सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा॥
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुङ्गव निर्भरां मे।
कामादि दोष रहितं कुरु मानसं च॥२॥

हे राम! मैं सच कहता हूँ, मेरे हृदय में दूसरी इच्छा नहीं है, और आप तो सबके अन्तर की बात जानते ही हैं। हे रघुश्रेष्ठ! मुझे अपनी पूर्ण भक्ति दीजिये और मेरे मंन को काम आदि दोषों से रहित कीजिये।

अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपति वरदूतं वातजातं नमामि ॥३॥

अतुल बल के धाम, सुवर्ण के पर्वत के समान कान्तिमान शरीर वाले, दैत्यरूपी वन के लिये अग्नि-रूप, ज्ञानियों में अग्रगण्य, सम्पूर्ण गुणों के घर, वानरों के स्वामी, रामचन्द्रजी के श्रेष्ठ दूत, पवनपुत्र, श्रीहनुमान को मैं प्रणाम करता हूँ।

जामवन्त के बचन सुहाये ❀ सुनि हनुमन्त हृदय अति भाये
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई ❀ सहि दुख कन्द मूल फल खाई

जामवन्त के सुन्दर वचन सुनकर हनुमान के हृदय को बहुत ही अच्छे लगे। हनुमान ने कहा—हे भाई! तुम लोग दुःख सहकर, कंद, मूल, फल खाकर तब तक मेरी राह देखना,

जब लगि आवौं सीतहि देखी ❀ होइ काजु मोहि हरष बिसेषी
अस कहि नाइ सबन्हि कहुँ माथा ❀ चलेउ हरषि हियँ धरि रघुनाथा

जब तक मैं सीता को देखकर लौट आऊँ। काम ज़रूर होगा, क्योंकि मुझे बहुत हर्ष हो रहा है। ऐसा कहकर, सबको मस्तक नवाकर, हृदय में रामचन्द्रजी का ध्यान धरकर और प्रसन्न होकर हनुमान चले।

सिन्धु तीर एक भूधर सुंदर ❀ कौतुक कूदि चढ़ेउ ता ऊपर
बार बार रघुबीर सँभारी[1] ❀ तरकेउ[2] पवन तनय बल भारी

समुद्र के तीर पर एक सुन्दर पर्वत था। हनुमान खेलवाड़ की तरह कूद-कर उसके ऊपर जा चढ़े। बार-बार रामचन्द्रजी का स्मरण करके अति बली पवनपुत्र हनुमान उस पर से कूदे।

जेहिं गिरि चरन देइ हनुमंता ❀ चलेउ सो गा पाताल तुरंता
जिमि अमोघ[3] रघुपति कर बाना ❀ तेही भाँति चलेउ हनुमाना
जलनिधि रघुपति दूत बिचारी ❀ तैं मैनाक होहि श्रमहारी

१. स्मरण करके। २. कूदे। ३. जो निष्फल न हो।

जिस पहाड़ पर हनुमान ने पैर रक्खा, वह तुरन्त ही पाताल में धँस गया। जैसे रामचन्द्र का बाण निष्फल नहीं होता, हनुमान वैसे ही चले; जैसे रामचन्द्रजी का अमोघ बाण चलता है, वैसे ही हनुमान चले। समुद्र ने रामचन्द्रजी का दूत समझकर मैनाक को कहा कि तुम इनकी थकावट को हर लो। अर्थात् इनको अपने ऊपर विश्राम करने दो।

दो० **हनुमान तेहि परसा कर पुनि कीन्ह प्रनाम।**
राम काजु कीन्हे बिनु मोहि कहाँ बिश्राम ॥१॥

हनुमान ने उसे हाथ से छू दिया, फिर प्रणाम किया और कहा—रामचन्द्रजी का काम किये बिना मुझे विश्राम कहाँ?

जात पवनसुत देवन्ह देखा ❀ जानैं कहुँ बल बुद्धि बिसेषा
सुरसा नाम अहिन्ह कै माता ❀ पठइन्हि आइ कही तेहिं बाता

देवताओं ने हनुमान को जाते हुये देखा। उनकी विशेष बल-बुद्धि को जानने के लिये उन्होंने सर्पों की माता सुरसा को भेजा। उसने आकर हनुमान से यह बात कही—

आजु सुरन्ह मोहि दीन्ह अहारा ❀ सुनत बचन कह पवनकुमारा
राम काजु करि फिरि मैं आवौं ❀ सीता कइ सुधि प्रभुहि सुनावौं

आज देवताओं ने मुझे आहार दिया है। यह वचन सुनकर हनुमान ने कहा—रामचन्द्रजी का कार्य करके मैं लौट आऊँ और सीता का समाचार प्रभु को सुना दूँ,

तब तव बदन पैठिहउँ आई ❀ सत्य कहउँ मोहि जान दे माई
कवनेहुँ जतन देइ नहिं जाना ❀ ग्रससि न मोहि कहेउ हनुमाना

तब मैं आकर तुम्हारे मुँह में प्रवेश करूँगा। हे माता! मैं सच कहता हूँ, मुझे जाने दो। वह किसी तरह जाने नहीं देती थी, तब हनुमान ने कहा—मुझे खा क्यों नहीं लेती?

जोजन भरि तेहिं बदनु[1] पसारा ❀ कपि तनु कीन्ह दुगुन बिस्तारा
सोरह जोजन मुख तेहिं ठयऊ[2] ❀ तुरत पवनसुत बत्तिस भयऊ

उसने योजन (चार कोस) भर मुँह फैलाया। हनुमान ने अपना शरीर

१. मुँह। २. किया

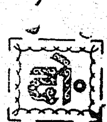
उससे दूना बढ़ा लिया। उसने सोलह योजन का मुँह किया। हनुमान तुरन्त ही बत्तीस योजन के हो गये।

जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा ❀ तासु दून कपि रूप देखावा
सत जोजन तेहि आनन कीन्हा ❀ अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा

जैसे-जैसे सुरसा ने मुँह बढ़ाया, हनुमान ने उसका दूना रूप दिखलाया। उसने सौ योजन का मुँह किया तब हनुमान ने बहुत छोटा रूप धारण कर लिया।

बदन पइठि पुनि बाहर आवा ❀ माँगा बिदा ताहि सिरु नावा
मोहि सुरन्ह जेहि लागि पठावा ❀ बुधि बल मरमु तोर मैं पावा

वे उसके मुँह में प्रवेशकर फिर तुरन्त ही बाहर आ गये और उसे सिर नवाकर विदा माँगने लगे। उसने कहा—देवताओं ने मुझे जिस लिये भेजा था, सो तुम्हारे बुद्धि-बल का भेद मैंने पा लिया।



राम काजु सबु करिहहु तुम्ह बल बुद्धि निधान।
आसिष देइ गई सो हरषि चलेउ हनुमान ॥२॥

तुम बल-बुद्धि के भंडार हो, तुम रामचन्द्रजी का कार्य करोगे। वह ऐसा आशीर्वाद देकर चली गई। हनुमान प्रसन्न होकर आगे चले।

निसिचरि एक सिंधु महुँ रहई ❀ करि माया नभ के खग गहई
जीव जन्तु जे गगन उड़ाहीं ❀ जल बिलोकि तिन्ह कै परछाहीं

समुद्र में एक राक्षसी रहती थी। वह माया करके आकाश में उड़ते हुये पक्षियों को पकड़ लेती थी। आकाश में जो जीव-जन्तु उड़ा करते थे, उनकी परछाईं पानी में देखकर,

गहइ छाँह सक सो न उड़ाई ❀ एहि बिधि सदा गगनचर खाई
सोइ छल हनूमान तें कीन्हा ❀ तासु कपटु कपि तुरतहिं चीन्हा

वह परछाईं को पकड़ लेती थी और वे उड़ नहीं सकते थे। इस तरह वह सदा आकाश में उड़ने वाले जीवों को खाया करती थी। उसने वही छल हनुमान से भी किया। हनुमान ने तुरन्त ही उसका कपट पहचान लिया।

ताहि मारि मारुतसुत बीरा ❀ बारिधि पार गयेउ मतिधीरा
तहाँ जाइ देखी बन सोभा ❀ गुंजत चंचरीक मधु लोभा

धीर मति वाले, वीर पवनपुत्र हनुमान उसे मारकर समुद्र के पार हो गये। वहाँ जाकर उन्होंने वन की शोभा देखी। मधु के लोभ से भौंरे गूँज रहे थे।

नाना तरु फल फूल सुहाये ❀ खग मृग बृंद देखि मन भाये
सैल बिसाल दीख एक आगें ❀ तापर धाइ चढ़ेउ भय त्यागें

भाँति-भाँति के वृक्ष फल और फूल से शोभित थे। पक्षियों और पशुओं के समूह देखकर तो उनके मन को बहुत ही अच्छे लगे। सामने एक बड़ा पर्वत देखकर हनुमानजी निर्भय होकर उस पर दौड़कर चढ़ गये।

उमा न कछु कपि कै अधिकाई ❀ प्रभु प्रताप जो कालहि खाई
गिरि पर चढ़ि लंका तेहिं देखी ❀ कहि न जाइ अति दुर्ग[1] बिसेषी
अति उतंग[2] जलनिधि चहुँ पासा ❀ कनक कोट[3] कर परम प्रकासा

हे पार्वती! इसमें वानर हनुमान की कोई विशेष बड़ाई नहीं। यह प्रभु का प्रताप है, जो काल को भी खा लेता है। पर्वत पर चढ़कर उन्होंने लंका देखी। बहुत बड़ा क़िला था, कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता। वह अत्यन्त ऊँचा है, उसके चारों ओर समुद्र है। सोने की चहारदीवारी का बड़ा प्रकाश हो रहा है।

छंद—कनक कोट बिचित्र मनि कृत सुंदरायतना घना।
चउहट्ट हट्ट[4] सुबट्ट[5] बीथीं[6] चारु पुर बहु बिधि बना॥
गज बाजि खच्चर निकर पदचर रथ बरूथन्हि को गनै।
बहुरूप निसिचर जूथ अति बल सेन बरनत नहिं बनै॥

विचित्र मणियों से जड़ा हुआ सोने का परकोटा है, उसके अंदर सुन्दर-सुन्दर घर बने हैं। चौराहे, बाज़ार, सुन्दर मार्ग और गलियों से युक्त नगर बहुत सुन्दर बना हुआ है। हाथी, घोड़े, खच्चरों के समूह, पैदल और रथों के समूहों की गिनती कौन कर सकता है? अनेक रूप वाले अति बली राक्षसों की सेना का वर्णन नहीं किया जा सकता।

बन बाग उपबन बाटिका सर कूप बापी सोहहीं।
नर नाग सुर गंधर्ब कन्या रूप मुनि मन मोहहीं॥

---

१. किला। २. ऊँचा। ३. परकोटा, चहारदीवारी। ४. बाजार। ५. सुन्दर मार्ग। ६. गली।

कहुँ माल देह बिसाल सैल समान अति बल गर्जहीं।
नाना अखारेन्ह भिरहिं बहु बिधि एक एकन्ह तर्जहीं॥

वन, बाग, बगीचे, फुलवाड़ी, तालाब, कुएँ और बावड़ियाँ शोभायमान हैं। मनुष्य, नाग, देवता और गन्धर्वों की कन्यायें अपने रूप से मुनियों के मन को भी मोह रही हैं। कहीं पर्वत के समान बड़े शरीर वाले बड़े ही बलवान मल्ल गरज रहे हैं। वे अनेकों अखाड़ों में बहुत प्रकार से भिड़ते और एक दूसरे को ललकारते हैं।

करि जतन भट कोटिन्ह बिकट तन नगर चहुँ दिसि रच्छहीं।
कहुँ महिष मानुष धेनु खर अज खल निसाचर भच्छहीं॥
एहि लागि तुलसीदास इन्ह की कथा कछु यक है कही।
रघुबीर सर तीरथ सरीरन्हि त्यागि गति पैहहिं सही॥

भयंकर शरीर वाले करोड़ों योद्धा यत्न करके नगर की सब ओर से रखवाली करते हैं। कहीं दुष्ट राक्षस भैंसे, मनुष्य, गाय, गधा और बकरा खा रहे हैं। तुलसीदास ने इनकी इसलिये ही थोड़ी-सी कथा कह दी है कि ये तो निश्चय ही रामचन्द्रजी के बाणरूपी तीर्थ में शरीर त्यागकर परमगति पावेंगे। [काव्यालिंग अलंकार]

दो०—पुर रखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह बिचार।
अति लघु रूप धरौं निसि नगर करौं पइसार॥३॥

नगर के बहुत-से रखवालों को देखकर हनुमान ने मन में विचार किया कि बहुत छोटा रूप धरकर मैं रात में नगर में प्रवेश करूँ।

मसक समान रूप कपि धरी ❀ लंकहि चलेउ सुमिरि नरहरी
नाम लंकिनी एक निसिचरी ❀ सो कह चलेसि मोहि निंदरी

मच्छर के समान रूप धरकर हनुमान नररूप से हरि रामचन्द्रजी को स्मरण करके लंका को चले। लंका के द्वार पर लंकिनी नाम की एक राक्षसी थी। उसने कहा—मेरा निरादर करके कहाँ जाता है?

जानेहि नहीं मरमु सठ मोरा ❀ मोर अहार जहाँ लगि चोरा
मुठिका एक महा कपि हनी ❀ रुधिर बमत धरनीं ढनमनी

रे दुष्ट ! तू मेरा भेद नहीं जानता। जितने चोर हैं, वे सब मेरे आहार हैं। महाकपि हनुमान ने उसे एक घूँसा मारा जिससे वह रक्त-वमन करती हुई पृथ्वी पर लुढ़क पड़ी।

पुनि संभारि उठी सो लंका ❀ जोरि पानि कर बिनय ससंका
जब रावनहि ब्रह्म बर दीन्हा ❀ चलत बिरंचि कहा मोहि चीन्हा

वह लंकिनी फिर अपने को सँभालकर उठी और डर के मारे हाथ जोड़कर विनती करने लगी—जब ब्रह्मा ने रावण को वर दिया था, तब चलते-चलते उन्होंने मुझे यह पहचान बता दी थी कि— [समाहित अलंकार]

बिकल होसि तैं कपि कें मारे ❀ तब जानेसु निसिचर संघारे
तात मोर अति पुन्य बहूता ❀ देखेउँ नयन राम कर दूता

जब तू बानर की मार से व्याकुल हो जाय, तब राक्षसों का संहार हुआ जान लेना। हे तात ! यह मेरा बड़ा पुण्य है जो मैं आँखों से रामजी के दूत को देख पायी। [गूढ़ोत्तर अलंकार]

दो०— तात स्वर्ग अपबर्ग[1] सुख धरिअ तुला[2] एक अंग।
तूल[3] न ताहि सकल मिलि जो सुख लव[4] सतसंग॥

हे तात ! स्वर्ग और मोक्ष के सब सुखों को तराजू के एक पलड़े में रक्खा जाय तो भी वे सब मिलकर (दूसरे पलड़े पर रखे हुए) एक क्षणमात्र के सत्संग के सुख के बराबर नहीं हो सकते।

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा ❀ हृदय राखि कोसलपुर राजा
गरल[5] सुधा रिपु करहिं मिताई ❀ गोपद सिंधु अनल सितलाई

नगर में प्रवेश करके, हृदय में अयोध्यापुरी के राजा रामचन्द्रजी का ध्यान धरकर सब काम कीजिये। उसके लिये विष अमृत हो जाता है, शत्रु मित्रता करते हैं, समुद्र गाय के खुर के समान हो जाता है, आग में शीतलता आ जाती है।

गरुअ[6] सुमेरु रेनु[7] सम ताही ❀ राम कृपा करि चितवा जाही
अति लघु रूप धरेउ हनुमाना ❀ पैठा नगर सुमिरि भगवाना

भारी सुमेरु पर्वत उसके लिये धूल के समान हो जाता है, जिसे रामचन्द्रजी

---

१. मोक्ष। २. तराजू। ३. समान हो। ४. क्षणमात्र के। ५. विष। ६. भारी। ७. धूल।



ने एक बार कृपा करके देख लिया। तब हनुमान ने बहुत ही छोटा रूप धारण किया और भगवान् का स्मरण करके नगर में प्रवेश किया। ['गरल सुधा' से 'गरुअ सुमेरु रेनु सम' तक विरोधाभास अलंकार]

मंदिर[1] मंदिर प्रति करि सोधा ❀ देखे जहँ तहँ अगनित जोधा
गयउ दसानन मंदिर माँहीं ❀ अति बिचित्र कहि जात सो नाहीं

उन्होंने हरएक महल की खोज की। जहाँ-तहाँ अनगिनती योद्धा देखे। फिर वे रावण के महल में गये। वह अत्यंत विचित्र था। उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

सयन किए देखा कपि तेही ❀ मंदिर महुँ न दीखि बैदेही
भवन एक पुनि दीख सुहावा ❀ हरि मन्दिर तहँ भिन्न बनावा

हनुमान ने उस रावण को सोते हुये देखा। पर उस महल में सीता नहीं दिखाई दी। फिर एक सुन्दर महल देख पड़ा, जहाँ भगवान् का एक अलग मन्दिर बना हुआ था।

दो॰ रामायुध[2] अङ्कित गृह सोभा बरनि न जाइ।
नव तुलसिका बृंद तहँ देखि हरष कपिराइ ॥५॥

वह महल रामजी के आयुध धनुष-बाण के चिह्नों से अंकित था। उसकी शोभा कही नहीं जा सकती। वहाँ नवीन तुलसी के पेड़-समूहों को देखकर हनुमान हर्षित हुये।

लंका निसिचर निकर निवासा ❀ इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा
मन महुँ तरक[3] करैं कपि लागा ❀ तेहीं समय बिभीषनु जागा

लंका में तो राक्षसों के समूह का निवास है। यहाँ सज्जन का निवास कहाँ ? हनुमान मन में ऐसा तर्क कर ही रहे थे कि उसी समय विभीषण जागे। [समाधि अलंकार]

राम राम तेहिं सुमिरन कीन्हा ❀ हृदयँ हरष कपि सज्जन चीन्हा
एहि सन हठि करिहउँ पहिचानी ❀ साधु तें होइ न कारज हानी

विभीषण ने रामनाम का उच्चारण किया। हनुमान हृदय में हर्षित हुये और उन्हें सज्जन जाना। उन्होंने मन में कहा—इनसे हठ करके परिचय करूँगा,

१. महल। २. धनुष-बाण। ३. विचार।

क्योंकि साधु से कार्य बिगड़ने नहीं पाता।

बिप्र रूप धरि बचन सुनाए ❀ सुनत बिभीषन उठि तहँ आए
करि प्रनाम पूँछी कुसलाई ❀ बिप्र कहहु निज कथा बुझाई

ब्राह्मण का रूप धरकर हनुमान ने वचन सुनाया। सुनते ही विभीषण उठकर वहाँ आये। उन्होंने प्रणाम करके कुशल-क्षेम पूछा कि हे ब्राह्मण! अपनी कथा समझाकर कहिये।

की तुम्ह हरि दासन महुँ कोई ❀ मोरें हृदय प्रीति अति होई
की तुम्ह रामु दीन अनुरागी ❀ आयेहु मोहि करन बड़भागी

जान पड़ता है, आप हरिभक्तों में से कोई हैं; क्योंकि आपको देखकर मेरे हृदय में बड़ी प्रीति उमड़ रही है। या आप दीनों से प्रेम करने वाले साक्षात् राम ही हैं और मुझे बड़भागी बनाने आये हैं।

दो०— तब हनुमंत कही सब राम कथा निज नाम।
सुनत जुगल[1] तन पुलक मन मगन सुमिरि गुन ग्राम॥

तब हनुमान ने रामचन्द्रजी की सारी कथा कहकर अपना नाम बताया। सुनते ही दोनों के शरीर रोमांचित हो आये। रामजी के गुणों को याद करके दोनों के मन मग्न हो गये।

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी ❀ जिमि दसनन्हि[2] महुँ जीभ बिचारी
तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा ❀ करिहहिं कृपा भानु कुल नाथा

विभीषण ने कहा—हे पवनपुत्र हनुमान! मेरी रहनी सुनो। यहाँ मैं वैसे ही रहता हूँ, जैसे दाँतों के बीच में बेचारी जीभ। हे तात! मुझे अनाथ जानकर सूर्यकुल के स्वामी रामचन्द्रजी क्या कभी मुझ पर कृपा करेंगे?

तामस तनु कछु साधन नाहीं ❀ प्रीति न पद सरोज मन माहीं
अब मोहि भा भरोस हनुमंता ❀ बिनु हरि कृपा मिलहिं नहिं संता

मेरा राक्षसी शरीर होने से किसी प्रकार का साधन तो बनता नहीं, और न मन में रामचन्द्रजी के चरण-कमलों में प्रीति ही है। परन्तु हे हनुमान! अब मुझे भरोसा हुआ है, क्योंकि भगवान् की कृपा के बिना सज्जन नहीं मिलते। [सार अलंकार]

---

१. दोनों के। २. दाँत।

जौं रघुबीर अनुग्रह[1] कीन्हा ❀ तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा
सुनहु बिभीषन प्रभु कै रीती ❀ करहिं सदा सेवक पर प्रीती

जब रामचन्द्रजी ने कृपा की, तभी तो आपने आग्रहपूर्वक मुझे दर्शन दिये हैं। हनुमान ने कहा—हे विभीषण! सुनिये, प्रभु की यह रीति है कि सेवक पर सदा ही प्रेम किया करते हैं।

कहहु कवन मैं परम कुलीना ❀ कपि चंचल सबहीं बिधि हीना
प्रात लेइ जो नाम हमारा ❀ तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा

भला कहिये, मैं ही कौन बड़ा कुलीन हूँ। जाति का बानर हूँ, चंचल हूँ, सब प्रकार से हीन हूँ। प्रातःकाल जो हम लोगों का नाम लेले तो उसे उस दिन भोजन न मिले।

दो० अस मैं अधम सखा सुनु मोहू पर रघुबीर।
कीन्ही कृपा सुमिरि गुन भरे बिलोचन नीर ॥७॥

हे सखा! सुनिये, मैं ऐसा अधम हूँ, पर रामचन्द्रजी ने तो मुझ पर भी कृपा ही की है। रामचन्द्रजी के गुणों को स्मरण करके हनुमान की आँखों में जल भर आया।

जानतहूँ अस स्वामि बिसारी ❀ फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी
एहि बिधि कहत राम गुन ग्रामा[2] ❀ पावा अनिर्वाच्य[3] बिस्रामा[4]

जो जानते हुये भी ऐसे स्वामी को भुलाकर भटकते फिरते हैं, वे दुःखी क्यों न हों? इस प्रकार रामजी के गुणों को कहते हुये हनुमान ने वचन से न कहे जाने योग्य शान्ति पाई।

पुनि सब कथा बिभीषन कही ❀ जेहि बिधि जनकसुता तहँ रही
तब हनुमंत कहा सुनु भ्राता ❀ देखी चहउँ जानकी माता

फिर विभीषण ने जिस प्रकार सीता वहाँ रहती थीं, वह सब कथा बताई। तब हनुमान ने कहा—हे भाई! सुनो। मैं जानकी माता को देखना चाहता हूँ।

जुगुति[5] बिभीषन सकल सुनाई ❀ चलेउ पवनसुत बिदा कराई
करि सोइ रूप गयेउ पुनि तहवाँ ❀ बन असोक सीता रह जहवाँ

विभीषण ने सीता के दर्शन की सब युक्तियाँ बता दीं। तब हनुमान विदा

१. कृपा। २. समूह। ३. जो वचन से न कहा जा सके। ४. शान्ति। ५. युक्ति, तरकीब।

लेकर चले। फिर वही पहले वाला मसक-समान रूप धरकर वहाँ गये, जहाँ सीता रहती थीं।

देखि मनहिं महुँ कीन्ह प्रनामा ❀ बैठेहिं बीति जात निसि जामा
कृस तनु सीस जटा एक बेनी ❀ जपति हृदय रघुपति गुन स्रेनी

सीता को देखकर उन्होंने मन-ही-मन प्रणाम किया। बैठे ही बैठे रात के चार पहर बीत गये। सीता का शरीर दुर्बल हो गया है। सिर पर जटाओं की एक लट है। हृदय में रामचन्द्रजी के गुण-समूहों का जाप करती रहती हैं।

दो०—**निज पद नयन दियें मन राम पद कमल लीन।**
परम दुखी भा पवनसुत देखि जानकी दीन ॥८॥

नेत्रों को अपने चरणों पर लगाये हुये हैं और मन रामचन्द्रजी के चरणों में लीन है। जानकी को दुखी देखकर हनुमान बहुत ही दुखी हुये।

तरु पल्लव महुँ रहा लुकाई ❀ करइ बिचार करौं का भाई
तेहि अवसर रावन तहँ आवा ❀ संग नारि बहु कियें बनावा[1]

हनुमान वृक्ष के पत्तों में छिप रहे और विचार करने लगे कि हे भाई! क्या करूँ? उसी समय साथ में बहुत-सी स्त्रियाँ लिये और ठाट-बाट से रावण वहाँ आया।

बहु बिधि खल सीतहिं समुझावा ❀ साम दाम[2] भय भेद दिखावा
कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी ❀ मंदोदरी आदि सब रानी

उस दुष्ट ने सीता को बहुत तरह से समझाया। साम, दान, भय और भेद दिखलाया। रावण ने कहा—हे सुन्दर मुँह वाली सयानी सीता! सुनो। मन्दोदरी आदि जितनी रानियाँ हैं,

तव अनुचरीं[3] करउँ पन मोरा ❀ एक बार बिलोकु मम ओरा
तृन धरि ओट कहति बैदेही ❀ सुमिरि अवधपति परम सनेही

सबको मैं तुम्हारी दासी बना दूँगा, यह मेरी प्रतिज्ञा है। तुम एक बार मेरी ओर देखो तो सही। अपने परम प्रिय रामचन्द्रजी को याद करके सीता ने तिनके की आड़ (परदा) करके कहा—

---

१. ठाट-बाट। २. दान, धन आदि का लोभ। ३. दासी।

सुनु दसमुख खद्योत प्रकासा ❀ कबहुँ कि नलिनी करइ बिकासा
अस मन समुझु कहति जानकी ❀ खल सुधि नहिं रघुबीर बान की
सठ सूनें हरि आनेहि मोही ❀ अधम निलज्ज लाज नहिं तोही

हे रावण! सुन, कभी जुगनू के प्रकाश से भी कमलिनी खिलती है? जानकी ने कहा—तू अपने लिये ऐसा ही मन में समझ ले। रे दुष्ट! तुझे रामजी के बाणों की खबर नहीं है। रे पापी! तू मुझे अकेली पाकर उठा लाया है। रे अधम! निर्लज्ज! तुझे शरम नहीं आती?

दो॰ आपुहि सुनि खद्योत सम रामहिं भानु समान।
परुष[1] बचन सुनि काढ़ि असि[2] बोला अति खिसिआन

अपने को जुगनू के समान और रामचन्द्रजी को सूर्य के समान ऐसे कठोर वचनों को सुनकर रावण खिसिया कर तलवार निकाल कर बोला। [हेतु अलंकार]

सीता तैं मम कृत अपमाना ❀ कटिहउँ तव सिर कठिन कृपाना[3]
नाहिं त सपदि मानु मम बानी ❀ सुमुखि होत न त जीवन हानी

सीता! तू ने मेरा अपमान किया। मैं तेरा सिर इस कठोर तलवार से काट डालूँगा। नहीं तो जल्दी मेरी बात मान ले। हे सुन्दर मुँह वाली! नहीं तो तेरे जीवन की हानि होने ही वाली है।

स्याम सरोज दाम[4] सम सुंदर ❀ प्रभु भुज करि[5] कर[6] सम दसकंधर
सो भुज कंठ कि तव असि घोरा ❀ सुनु सठ अस प्रवान पन मोरा

सीता ने कहा—हे रावण! श्याम कमल की माला, और हाथी की सूँड़ के समान सुन्दर जो स्वामी की भुजा है, या तो वह मेरे कंठ में पड़ेगी या तेरी तीक्ष्ण तलवार ही। रे दुष्ट! सुन यह मेरा दृढ़ निश्चय है।

चंद्रहास हर मम परितापं ❀ रघुपति बिरह अनल संजातं
सीतल निसित बहसि बर धारा ❀ कह सीता हरु मम दुख भारा

सीता कहने लगीं—हे चन्द्रहास (तलवार)! रघुनाथजी के विरहरूपी अग्नि से उत्पन्न मेरी भारी जलन को तू हर ले। क्योंकि तू शीतल और तेज़ धार को धारण करती है। तू मेरे दुःख के भार को हर ले। [गूढ़ोक्ति अलंकार]

---

१. कठोर। २. तलवार। ३. तलवार। ४. माला। ५. हाथी। ६. सूँड़।

सुनत बचन पुनि मारन धावा ❀ मयतनयाँ कहि नीति बुझावा
कहेसि सकल निसिचरिन्ह बोलाई ❀ सीतहि बहु बिधि त्रासहु जाई
मास दिवस महुँ कहा न माना ❀ तौ मैं मारबि काढ़ि कृपाना

यह वचन सुनकर रावण फिर मारने दौड़ा। तब मन्दोदरी ने नीति बताकर उसे समझाया। तब रावण ने सब राक्षसियों को बुलाकर कहा कि जाकर सीता को बहुत प्रकार से भय दिखलाओ। महीने-भर में यदि इसने कहा न माना, तो मैं इसे तलवार निकालकर मार डालूँगा।

दो० भवन गयउ दसकन्धर इहाँ पिसाचिनि बृंद।
सीतहिं त्रास देखावहिं धरहिं रूप बहु मन्द ॥१०॥

रावण घर चला गया। यहाँ राक्षसियाँ बहुत-से बुरे रूप धरकर सीता को डर दिखाने लगीं।

त्रिजटा नाम राच्छसी एका ❀ राम चरन रति निपुन बिबेका
सबन्हौं बोलि सुनायेसि सपना ❀ सीतहिं सेइ करहु हित अपना

उनमें एक त्रिजटा नाम की राक्षसी थी। रामजी के चरणों में उसकी प्रीति थी और वह विवेक (ज्ञान) में निपुण थी। उसने सब राक्षसियों को बुलाकर अपना स्वप्न सुनाया और कहा कि सीता की सेवा करके अपना कल्याण कर लो।

सपनें बानर लंका जारी ❀ जातुधान सेना सब मारी
खर आरूढ़ नगन दससीसा ❀ मुंडित सिर खंडित भुज बीसा

स्वप्न में (मैंने देखा कि) बानर ने लङ्का जला दी और राक्षसों की सारी सेना मार डाली गई। रावण नंगा और गधे पर सवार है। उसके सिर मुँड़े हुये हैं और बीसों भुजाएँ कटी हुई हैं।

एहि बिधि सो दच्छिन दिसि जाई ❀ लंका मनहुँ बिभीषन पाई
नगर फिरी रघुबीर दोहाई ❀ तब प्रभु सीता बोलि पठाई

इस प्रकार वह दक्षिण की ओर (यमपुरी को) जा रहा है। लङ्का मानो विभीषण ने पाई है। नगर में रामजी की दुहाई फिर गई। तब प्रभु ने सीता को बुला भेजा।

यह सपना मैं कहउँ पुकारी ❀ होइहि सत्य गएँ दिन चारी
तासु बचन सुन ते सब डरीं ❀ जनकसुता के चरनन्हि परीं

मैं पुकारकर कह रही हूँ कि चार (कुछ ही) दिन बाद मेरा यह स्वप्न सत्य होकर रहेगा। उसकी बातें सुनकर सब राक्षसियाँ डर गईं और जानकी के चरणों पर गिर पड़ीं। [पर्यायोक्ति अलंकार]

दो०—जहँ तहँ गईं सकल तब सीता कर मन सोच।
मास दिवस बीतें मोहि मारिहि निसिचर पोच[1] ॥११॥

तब वे सब इधर-उधर चली गईं। सीता के मन में यह चिन्ता हुई कि एक महीना बीतने पर नीच राक्षस मुझे मार डालेगा।

त्रिजटा सन बोलीं कर जोरी ❀ मातु बिपति संगिनि तैं मोरी
तजौं देह करु बेगि उपाई ❀ दुसह बिरहु अब नहिं सहि जाई

सीता हाथ जोड़कर त्रिजटा से बोली—हे माता! तू मेरी विपत्ति की संगिनी है। जल्दी कोई ऐसा उपाय कर कि मैं शरीर छोड़ दूँ। विरह असह्य हो रहा है, अब वह सहा नहीं जाता।

आनि[2] काठ रचु चिता बनाई ❀ मातु अनल पुनि देहि लगाई
सत्य करहि मम प्रीति सयानी ❀ सुनै को श्रवन[3] सूल सम बानी

काठ लाकर अच्छी तरह चिता बना दे। हे माता! फिर उसमें आग लगा दे। हे सयानी! तू मेरी प्रीति को सत्य कर दे। रावण की शूल ऐसी कठोर वाणी कानों से कौन सुने?

सुनत बचन पद गहि समुझायेसि ❀ प्रभु प्रताप बल सुजस सुनायेसि
निसि न अनल मिलु सुनु सुकुमारी ❀ अस कहि सो निज भवन सिधारी

सीता के ये वचन सुनकर त्रिजटा ने चरण पकड़कर समझाया और प्रभु के प्रताप और बल का सुयश सुनाया। उसने कहा—हे सुकुमारी! सुनो, रात में आग नहीं मिलेगी। ऐसा कहकर वह अपने घर चली गई।

कह सीता बिधि भा प्रतिकूला ❀ मिलहि न पावक मिटहि न सूला
देखिअत प्रगट गगन अंगारा ❀ अवनि[4] न आवत एकउ तारा

सीता कहने लगीं—विधाता ही विमुख हो गये। न आग मिलेगी, न पीड़ा मिटेगी। आकाश में अंगारे स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं, पर पृथ्वी पर एक भी तारा नहीं आता। [द्वितीय निदर्शना अलंकार]

---

१. नीच। २. लाकर। ३. कान। ४. पृथ्वी।

पावकमय ससि स्रवत[1] न आगी ❀ मानहुँ मोहि जानि हतभागी
सुनहि बिनय मम बिटप असोका ❀ सत्य नाम करु हरु मम सोका

चन्द्रमा अग्निमय है, पर वह अग्नि नहीं बरसाता। मानो वह भी मुझे अभागिनी समझता है। हे अशोक वृक्ष! मेरी विनती सुन। मेरा शोक हरकर अपना अशोक नाम सत्य कर।

नूतन किसलय अनल समाना ❀ देहि अगिनि तन करहि निदाना[2]
देखि परम बिरहाकुल सीता ❀ सो छन कपिहि कलप सम बीता

तेरे नवीन कोमल पत्ते अग्नि के समान हैं। अग्नि प्रदान कर और मेरी देह का अंत कर दे। सीता को विरह से व्याकुल देखकर वह क्षण हनुमान को कल्प के समान बीता।

सो० कपि करि हृदयँ बिचार दीन्हि मुद्रिका डारि तब।
जनु असोक अंगार दीन्ह हरषि उठि कर गहेउ॥

हनुमान ने हृदय में विचार करके सीता के सामने अँगूठी डाल दी। सीता ने यह समझकर कि अशोक ने अंगार दिया है, हर्षित होकर, उठकर, उसे हाथ में ले लिया।

तब देखी मुद्रिका मनोहर ❀ राम नाम अंकित अति सुन्दर
चकित चितव मुदरी[3] पहिचानी ❀ हरष बिषाद हृदयँ अकुलानी

तब उन्होंने राम नाम से अंकित अत्यन्त सुन्दर अँगूठी देखी। आश्चर्य से देखकर सीता ने अँगूठी पहचानी और हर्ष और विषाद से हृदय में अकुला उठीं।

जीति को सकइ अजय रघुराई ❀ माया तें असि रचि नहिं जाई
सीता मन बिचार कर नाना ❀ मधुर बचन बोलेउ हनुमाना

वे सोचने लगीं कि रामचन्द्रजी तो अजेय हैं, उन्हें कौन जीत सकता है? और माया से ऐसी बनाई नहीं जा सकती। सीता मन में तरह-तरह के विचार कर रही थीं, इतने में हनुमान ने मीठी वाणी से कहा—

रामचंद्र गुन बरनैं लागा ❀ सुनतहिं सीता कर दुख भागा
लागीं सुनैं श्रवन मन लाई ❀ आदिहु तें सब कथा सुनाई

वे रामचन्द्रजी के गुणों का वर्णन करने लगे, जिन्हें सुनते ही सीता का

१. चुकाता, बरसाता। २. अंत। ३. अँगूठी।

दुःख भाग गया। वे कान और मन लगाकर उन्हें सुनने लगीं। हनुमान ने आदि से लेकर सारी कथा कह सुनाई। [चपलातिशयोक्ति अलंकार]

स्रवनामृत[1] जेहिं कथा सुहाई ❁ कही सो प्रगट होत किन भाई
तब हनुमंत निकट चलि गयऊ ❁ फिरि बैठीं मन बिसमय भयऊ

सीता ने कहा—कानों के लिये अमृत के समान सुन्दर कथा जिसने कही है, वह हे भाई! प्रकट क्यों नहीं होता? तब हनुमान पास चले गये। उन्हें देखकर सीता को सन्देह हुआ। वह मुँह फेरकर बैठ गईं।

राम दूत मैं मातु जानकी ❁ सत्य सपथ करुनानिधान की
यह मुद्रिका मातु मैं आनी ❁ दीन्हि राम तुम्ह कहँ सहिदानी[2]
नर बानरहि संग कहु कैसें ❁ कही कथा भइ संगति जैसें

हनुमान ने कहा—हे माता जानकी! मैं करुणा के धाम रामचन्द्रजी की शपथ खाकर कहता हूँ कि मैं राम का दूत हूँ। हे माता! यह अँगूठी मैं लाया हूँ। रामजी ने मुझे आपके लिये यह पहचान दी है। सीता ने पूछा—नर और बानर का साथ कहो कैसे हुआ? हनुमान ने जैसे संग हुआ था, उसकी सब कथा कह सुनाई।

दो०—कपि के बचन सप्रेम सुनि उपजा मन बिस्वास।
जाना मन क्रम बचन यह कृपासिंधु कर दास॥१३॥

हनुमान के प्रेम-युक्त वचन सुनकर सीता के मन में विश्वास उत्पन्न हो गया। उन्होंने जाना कि यह मन, कर्म और वचन से कृपा के समुद्र रामचन्द्रजी का सेवक है।

हरिजन जानि प्रीति अति बाढ़ी ❁ सजल नयन पुलकावलि ठाढ़ी
बूड़त बिरह जलधि हनुमाना ❁ भयेउ तात मो कहुँ जलजाना[3]

भगवान् का जन (सेवक) जानकर बहुत प्रीति बढ़ी, आँखें भर आईं और शरीर में रोमाञ्च हो आया। सीता ने कहा—हे हनुमान! विरह के समुद्र में डूबती हुई मुझ को तुम जहाज हुये।

अब कहु कुसल जाउँ बलिहारी ❁ अनुज सहित सुख भवन खरारी[4]
कोमल चित कृपाल रघुराई ❁ कपि केहि हेतु धरी निठुराई

१. कानों के लिये अमृत के समान। २. चिह्न, पहचान। ३. जहाज। ४. खर नामक राक्षस के शत्रु।

मैं बलैया लेती हूँ, अब छोटे भाई लक्ष्मण-सहित सुख के धाम, खरारि रामचन्द्रजी का कुशल-मंगल कहो। रामचन्द्रजी तो चित्त के कोमल और दयालु हैं। हे हनुमान, उन्होंने किस लिये यह निष्ठुरता धारण कर ली?

सहज बानि सेवक सुख दायक ❀ कबहुँक सुरति करत रघुनायक
कबहुँ नयन मम सीतल ताता ❀ होइहहिं निरखि स्याम मृदु गाता

सेवक को सुख देना तो उनकी स्वाभाविक बान है। क्या रघुनाथजी कभी मेरी भी याद करते हैं? हे तात! क्या कभी उनके कोमल श्याम शरीर को देखकर मेरे नेत्र शीतल होंगे?

बचन न आव नयन भरे बारी ❀ अहह नाथ हौं निपट[1] बिसारी
देखि परम बिरहाकुल सीता ❀ बोला कपि मृदु बचन बिनीता

मुँह से वचन नहीं निकलता। आँखों में जल भर आया। सीता कहने लगीं—हे नाथ! आपने मुझे बिलकुल ही भुला दिया। सीता को विरह से बहुत व्याकुल देखकर हनुमान कोमल और नम्र वचन बोले—

मातु कुसल प्रभु अनुज समेता ❀ तव दुख दुखी सुकृपा निकेता
जनि जननी मानहु जियँ ऊना[2] ❀ तुम्ह तें प्रेम राम कें दूना

हे माता! छोटे भाई लक्ष्मण-सहित कृपा के धाम प्रभु रामचन्द्रजी कुशल से हैं और आपके दुःख से दुःखी हैं। हे माता! मन को छोटा न कीजिये। रामचन्द्रजी के हृदय में आपसे दूना प्रेम है।

दो० **रघुपति कर संदेसु अब सुनु जननी धरि धीर।**
अस कहि कपि गदगद भयेउ भरे बिलोचन नीर॥१४

हे माता! अब धीरज धरकर रामचन्द्रजी का सन्देश सुनिये। ऐसा कहकर हनुमान प्रेम से गद्गद् हो गये। उनकी आँखों में जल भर आया।

कहेउ राम बियोग तव सीता ❀ मो कहुँ सकल भए बिपरीता
नव तरु किसलय मनहुँ कृसानू ❀ कालनिसा सम निसि ससि भानू

हनुमान कहने लगे—रामजी ने कहा है कि हे सीता! तुम्हारे वियोग में मेरे लिये सभी पदार्थ विपरीत हो गये। वृक्षों के नवीन पत्ते अग्नि के समान, रात्रि कालरात्रि के समान, चन्द्रमा सूर्य के समान,

१. बिल्कुल। २. ग्लानि।

कुबलय बिपिन कुंत बन सरिसा ❀ बारिद तपत[1] तेल जनु बरिसा
जेहि तरु रहे करत तेइ पीरा ❀ उरग[2] स्वास सम त्रिबिध समीरा

कमलों के वन भालों के समान हो गये हैं। बादल मानो खौलता हुआ तेल बरसाते हैं। जो हित करने वाले थे, वे ही पीड़ा देने लगे हैं। शीतल, मन्द, सुगन्ध समीर साँप के साँस के समान हो गया है।

कहेहू तें कछु दुख घटि होई ❀ काहि कहौं यह जान न कोई
तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा ❀ जानत प्रिया एकु मनु मोरा

मन का दुःख कहने से भी कुछ दुःख घट जाता है, पर कहूँ किससे ? यह दुःख कोई नहीं जानता। हे प्रिये ! मेरे और तेरे प्रेम का तत्त्व केवल एक मेरा मन ही जानता है।

सो मन सदा रहत तोहि पाहीं ❀ जानु प्रीति रसु एतनेहि माहीं
प्रभु संदेसु सुनत बैदेही ❀ मगन प्रेम तन सुधि नहिं तेही

और वह मन सदा तेरे ही पास रहता है, बस इतने में ही मेरे प्रेम का सार समझ लेना। स्वामी का सन्देशा सुनते ही सीता प्रेम में मग्न हो गईं। उन्हें शरीर की सुध नहीं रही।

कह कपि हृदयँ धीर धरु माता ❀ सुमिरु राम सेवक सुखदाता
उर आनहु रघुपति प्रभुताई ❀ सुनि मम बचन तजहु कदराई

हनुमान ने कहा—हे माता ! हृदय में धीरज धरो। सेवकों को सुख देने वाले रामजी का स्मरण करो। हृदय में रामचन्द्रजी की प्रभुता को ले आओ और मेरे वचन सुनकर कायरता छोड़ो।

दो॰ निसिचर निकर पतंग सम रघुपति बान कृसानु।
जननी हृदय धीर धरु जरे निसाचर जानु ॥१५॥

राक्षसों के समूह पतंगों के समान हैं और रामचन्द्रजी के बाण अग्नि के समान हैं। हे माता ! हृदय में धीरज धरो और राक्षसों को जला हुआ ही समझो। [अत्यन्तातिशयोक्ति अलंकार]

जौं रघुबीर होति सुधि पाई ❀ करते नहिं बिलंबु रघुराई
राम बान रबि उयें जानकी ❀ तम बरूथ[3] कहँ जातुधान की

१. खौलता हुआ। २. साँप। ३. समूह, सेना।

यदि रामचन्द्रजी ने खबर पाई होती तो वे कभी देरी न करते। हे जानकी! रामचन्द्रजी के बाणरूपी सूर्य के उदय होने पर राक्षसों का सेनारूपी अंधकार कहाँ रह सकता है?

अबहिं मातु मैं जाऊँ लेवाई ❀ प्रभु आयसु नहिं राम दोहाई
कछुक दिवस जननी धरु धीरा ❀ कपिन्ह सहित अइहहिं रघुबीरा

हे माता! मैं आपको यहाँ से अभी लिवा ले जाता, पर रामजी की शपथ है, मुझे प्रभु की आज्ञा नहीं है। हे माता! कुछ दिन धीरज धरो। रामचन्द्रजी बानरों सहित यहाँ आवेंगे।

निसिचर मारि तोहि लै जैहहिं ❀ तिहुँ पुर नारदादि जस गैहहिं
हैं सुत कपि सब तुम्हहिं समाना ❀ जातुधान अति भट बलवाना

राक्षसों को मारकर आपको ले जायेंगे। नारद आदि तीनों लोकों में उनका यश गायेंगे। सीता ने कहा—हे पुत्र! सब बानर तुम्हारे ही समान (नन्हें-नन्हें) होंगे, पर राक्षस तो बड़े बलवान् योद्धा हैं।

मोरें हृदय परम संदेहा ❀ सुनि कपि प्रगट कीन्हि निज देहा
कनक भूधराकार सरीरा ❀ समर भयंकर अतिबल बीरा
सीता मन भरोस तब भयेउ ❀ पुनि लघु रूप पवनसुत लयेउ

इसी से मेरे हृदय में बड़ा भारी सन्देह होता है। यह सुनकर हनुमान ने अपना शरीर प्रकट किया—सोने के पर्वत के समान विशाल युद्ध में भय उत्पन्न करने वाला, बड़ा बली और वीर। तब सीता के मन में विश्वास हुआ। हनुमान ने फिर छोटा रूप धारण कर लिया।

दो०— सुनु माता साखामृग नहिं बल बुद्धि बिसाल।
प्रभु प्रताप तें गरुड़हिं खाइ परम लघु ब्याल॥१६॥

हे माता! सुनो। बन्दरों में बहुत बल-बुद्धि नहीं होती, पर प्रभु के प्रताप से बहुत छोटा सर्प भी गरुड़ को खा सकता है।

मन संतोष सुनत कपि बानी ❀ भगति प्रताप तेज बल सानी
आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना ❀ होहु तात बल सील निधाना

भक्ति, प्रताप, तेज और बल से सनी हुई हनुमान की वाणी सुनकर सीता के मन में संतोष हुआ। उन्होंने रामजी का प्रिय जानकर उन्हें आशीर्वाद दिया

कि हे तात ! बल और शील के निधान होओ।

अजर अमर गुननिधि सुत होहू ❀ करहुँ बहुत रघुनायक छोहू
करहुँ कृपा प्रभु अस सुनि काना ❀ निर्भर प्रेम मगन हनुमाना

हे पुत्र ! अजर हो, अमर हो, गुणों के भण्डार होओ। रघुनाथजी तुम पर बहुत कृपा करें। 'प्रभु कृपा करें', ऐसा कानों से सुनकर हनुमान पूर्ण प्रेम में मग्न हो गये।

बार बार नायेसि पद सीसा ❀ बोला बचन जोरि कर कीसा
अब कृतकृत्य भयेउँ मैं माता ❀ आसिष तव अमोघ बिख्याता

हनुमान ने सीता के चरणों पर बार-बार सिर नवाया और फिर हाथ जोड़कर कहा—हे माता ! अब मैं कृतार्थ हो गया। आपका आशीर्वाद कभी निष्फल नहीं होता, यह प्रसिद्ध ही है।

सुनहु मातु मोहि अतिसय भूखा ❀ लागि देखि सुन्दर फल रूखा
सुनु सुत करहिं बिपिन रखवारी ❀ परम सुभट रजनीचर भारी
तिन्ह कर भय माता मोहि नाहीं ❀ जौं तुम्ह सुख मानहु मन माहीं

हे माता ! सुनो। सुन्दर फल वाले वृक्षों को देखकर मुझे बड़ी ही भूख लग आई है। सीता ने कहा—हे पुत्र ! सुनो। बड़े बलवान राक्षस इस वन की रखवाली करते हैं। हनुमान ने कहा—हे माता ! जो आप मन में सुख मानें, तो मुझे उनका भय नहीं है।

दो॰ देखि बुद्धि बल निपुन कपि कहेउ जानकी जाहु।
रघुपति चरन हृदयँ धरि तात मधुर फल खाहु॥१७॥

हनुमान को बुद्धि और बल में प्रवीण देखकर सीता ने कहा—जाओ, हे तात ! रघुनाथजी के चरणों को हृदय में धरकर मीठे फल खाओ।

चलेउ नाइ सिरु पैठेउ बागा ❀ फल खायेसि तरु तोरैं लागा
रहे तहाँ बहु भट रखवारे ❀ कछु मारेसि कछु जाइ पुकारे

हनुमान सीता को सिर नवाकर चले और बाग में घुस गये। फल खाये और वृक्षों को तोड़ने लगे। वहाँ बहुत-से योद्धा रखवाले थे। उनमें से कुछ को मार डाला और कुछ ने जाकर रावण से पुकार की—

नाथ एक आवा कपि भारी ❀ तेहि असोक बाटिका उजारी
खायेसि फल अरु बिटप उपारे ❀ रच्छक मर्दि मर्दि महि डारे

हे नाथ! एक बड़ा भारी बन्दर आया है, उसने अशोक-वाटिका उजाड़ डाली। फल खाये और वृक्षों को उखाड़ डाला। रखवालों को रौंद-रौंदकर पृथ्वी पर डाल दिया।

सुनि रावन पठये भट नाना ❀ तिन्हहिं देखि गर्जेउ हनुमाना
सब रजनीचर कपि संघारे ❀ गये पुकारत कछु अधमारे

यह सुनकर रावण ने बहुत-से योद्धा भेजे। उनको देखकर हनुमान ने गर्जन किया। हनुमान ने सब राक्षसों को मार डाला। कुछ अधमरे चिल्लाते हुये फिर रावण के पास गये।

पुनि पठयेउ तेहि अच्छकुमारा ❀ चला संग लै सुभट अपारा
आवत देखि बिटप गहि तर्जा ❀ ताहि निपाति महाधुनि गर्जा

फिर उसने अक्षयकुमार को भेजा। वह अपने साथ बहुत-से योद्धा लेकर चला। उसे आता देखकर हनुमान ने एक वृक्ष हाथ में लेकर ललकारा और उसे मारकर बड़े ज़ोर से गर्जन किया।

दो॰ कछु मारेसि कछु मर्देसि कछु मिलियेसि धरि धूरि।
कछु पुनि जाइ पुकारे प्रभु मर्कट बल भूरि ॥१८॥

कुछ को मारा, कुछ को रगड़ा और कुछ को पकड़कर धूल में मिला दिया। कुछ ने फिर जाकर पुकारा कि हे स्वामी! बानर बड़ा ही बलवान् है।

सुनि सुत बध लंकेस रिसाना ❀ पठयेसि मेघनाद बलवाना
मारेसि जनि सुत बाँधेसु ताही ❀ देखिअ कपिहि कहाँ कर आही

पुत्र का मारा जाना सुनकर रावण क्रोधित हो उठा और उसने बलवान् मेघनाद को भेजा। उसे आज्ञा दी कि हे पुत्र! बानर को मारना नहीं, बाँध लाना। देखा तो जाय कि वह बानर कहाँ का है?

चला इन्द्रजित अतुलित जोधा ❀ बंधु निधन सुनि उपजा क्रोधा
कपि देखा दारुन भट आवा ❀ कटकटाइ गर्जा अरु धावा

इन्द्र को जीतने वाला अतुलित वीर मेघनाद चला। भाई का मारा जाना सुन उसे क्रोध हो आया। हनुमान ने देखा कि इस बार भयानक योद्धा आया

है। तब वे कटकटाकर गर्जे और दौड़े।

अति बिसाल तरु एक उपारा ❀ बिरथ कीन्ह लंकेस कुमारा
रहे महाभट ताके संगा ❀ गहि गहि कपि मर्दइ निज अंगा

उन्होंने एक बहुत बड़ा वृक्ष उखाड़ लिया और उससे मेघनाद को बिना रथ का कर दिया। उसके साथ बड़े-बड़े योद्धा थे। हनुमान उनको पकड़-पकड़-कर अपने शरीर से मसलने लगे।

तिन्हहिं निपाति ताहि सन बाजा ❀ भिरे जुगल मानहुँ गजराजा
मुठिका मारि चढ़ा तरु जाई ❀ ताहि एक छन मुरुछा आई
उठि बहोरि कीन्हिसि बहु माया ❀ जीति न जाय प्रभंजन जाया

उन सबको मारकर मेघनाद से भिड़ गये। दोनों ऐसे लगते थे जैसे दो बड़े हाथी भिड़े हों। उसे एक घूँसा मारकर हनुमान वृक्ष पर जा चढ़े। उसे क्षण-भर के लिये मूर्च्छा आ गई। फिर उठकर उसने बड़ी माया फैलाई। पर पवन का पुत्र उससे जीता न गया।

दो० ब्रह्म अस्त्र तेहि साँधा[1] कपि कन कीन्ह बिचार।
जौं न ब्रह्मसर मानउँ महिमा मिटइ अपार॥१९॥

अंत में उसने ब्रह्मास्त्र सन्धान किया। तब हनुमान ने मन में सोचा कि जो ब्रह्मास्त्र को नहीं मानता हूँ तो उसकी अपार महिमा मिट जायगी।

ब्रह्मबान कपि कहुँ तेहिं मारा ❀ परतिहुँ बार कटकु संघारा
तेहिं देखा कपि मुरुछित भयऊ ❀ नागपास बाँधेसि लै गयऊ

उसने हनुमान को ब्रह्मबाण मारा, जिससे गिरते-गिरते भी हनुमान ने बहुत-सी सेना मार डाली। जब उसने देखा कि हनुमान मूर्च्छित हो गये हैं, तब उन्हें नागपाश से बाँधकर वह ले गया।

जासु नाम जपि सुनहु भवानी ❀ भवबंधन काटहिं नर ग्यानी
तासु दूत कि बँध तर आवा ❀ प्रभु कारज लगि कपिहि बँधावा

शिवजी कहते हैं—हे पार्वती! सुनो। जिसका नाम जपकर ज्ञानी लोग संसार का बन्धन काटते हैं। भला, उसका दूत कहीं बन्धन में आ सकता है? किन्तु प्रभु के काम के लिये हनुमान ने स्वयं अपने को बँधा लिया।

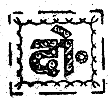
१. संधान किया, प्रयोग किया।

कपि बंधन सुनि निसिचर धाए ❀ कौतुक लागि सभाँ सब आए
दसमुख सभा दीखि कपि जाई ❀ कहि न जाइ कछु अति प्रभुताई

बन्दर पकड़ा गया, यह समाचार सुनकर राक्षस दौड़े और तमाशा देखने के लिये सब सभा में आये। हनुमान ने जाकर रावण की सभा देखी। उसकी अत्यंत प्रभुता का वर्णन नहीं किया जा सकता।

कर जोरें सुर दिसिप[1] बिनीता ❀ भृकुटि बिलोकत सकल सभीता
देखि प्रताप न कपि मन संका ❀ जिमि अहिगन महुँ गरुड़ असंका

देवता और दिग्पाल सब हाथ जोड़े बड़े नम्र भाव से सबके सब डरे हुये उसकी भौं ताक रहे हैं। उसका प्रताप देखकर हनुमान शंकित नहीं हुये, जैसे सर्पों के समूह में गरुड़ निःशंक रहता है।



कपिहि बिलोकि दसानन बिहँसा कहि दुर्बाद[2]।
सुत बध सुरति कीन्हि पुनि उपजा हृदयँ बिषाद॥

हनुमान को देखकर रावण दुर्वचन कहता हुआ खूब हँसा। फिर पुत्र के मारे जाने का स्मरण करके उसके हृदय में विषाद उत्पन्न हो गया। [प्रथम समुच्चय अलंकार]

कह लंकेस कवन तैं कीसा ❀ केहि कें बल घालेहि बन खीसा
की धौं श्रवन सुनेहि नहिं मोही ❀ देखउँ अति असंक सठ तोही

रावण ने कहा—रे बानर ! तू कौन है ? किसके बल पर तूने बगीचे को उजाड़कर नष्ट कर डाला। जान पड़ता है, तूने कभी कानों से मेरा नाम नहीं सुना। दुष्ट ! मैं तुझे बड़ा निर्भय देख रहा हूँ।

मारे निसिचर केहिं अपराधा ❀ कहु सठ तोहि न प्रान कइ बाधा
सुनु रावन ब्रह्मांड निकाया[3] ❀ पाइ जासु बल बिरचति माया

किस अपराध से तूने राक्षसों को मारा ? रे मूर्ख ! बता, तुझे अपने प्राणों का भय नहीं है ? हनुमान ने कहा—हे रावण ! सुन, जिसका बल पाकर माया ब्रह्माण्डों के समूहों की रचना करती है,

जाकें बल बिरंचि हरि ईसा ❀ पालत सृजत हरत दससीसा
जा बल सीस धरत सहसानन ❀ अंडकोस[4] समेत गिरि कानन

---

१. दिग्पाल। २. दुर्वचन, गाली। ३. समूह। ४. ब्रह्मांड।

हे रावण ! जिसके बल से ब्रह्मा, विष्णु, महेश सृष्टि को पालते, रचते और नाश करते हैं, जिसके बल से सहस्र फन वाले शेष पर्वत और वन-सहित समस्त ब्रह्मांड को सिर पर धरे हुये हैं,

धरइ जो बिबिध देह सुरत्राता[1] ❀ तुम्ह से सठन्ह सिखावनु दाता
हर कोदंड[2] कठिन जेहिं भंजा[3] ❀ तोहि समेत नृप दल मद गंजा
खर दूषन त्रिसिरा अरु बाली ❀ बधे सकल अतुलित बलसाली

जो विविध देह धारण करता है, जो देवताओं की रक्षा करता है और तुम्हारे जैसे मूर्खों को शिक्षा देने वाला है, जिसने शिवजी के कठोर धनुष को तोड़ डाला, और उसी के साथ राजाओं के समूह के गर्व को चूर्ण कर दिया। जिसने खर, दूषण, त्रिशिरा और बालि को, जो बड़े बलवान् थे, मार डाला;

दो॰ जाके बल लवलेस तें जितेहु चराचर झारि[4]।
तासु दूत मैं जा करि हरि आनेहु प्रिय नारि ॥२१॥

जिसके ज़रा से बल से तुमने समस्त चराचर जगत् को जीत लिया, मैं उसी का दूत हूँ, जिसकी प्रिय पत्नी को तुम चुरा लाये हो।

जानउँ मैं तुम्हारि प्रभुताई ❀ सहसबाहु सन परी लराई
समर बालि सन करि जसु पावा ❀ सुनि कपि बचन बिहँसि बहरावा[5]

मैं तुम्हारी प्रभुता को खूब जानता हूँ। सहस्रबाहु से भी तुम्हारी लड़ाई हुई थी और बालि से युद्ध करके भी तुमने कीर्ति कमाई है। हनुमान के वचन सुनकर रावण ने हँसकर बात टाल दी। [व्याजनिंदा अलंकार]

खायेउँ फल प्रभु लागी भूँखा ❀ कपि सुभाव तें तोरेउँ रूखा
सब कें देह परम प्रिय स्वामी ❀ मारहिं मोहि कुमारग गामी

हे प्रभु ! मुझे भूख लगी थी, इससे मैंने फल खाये। बानर के स्वभाव के कारण वृक्ष तोड़े। हे (राक्षसों) के स्वामी ! सबको अपनी देह प्यारी होती है, सो कुपथ चलने वाले दुष्ट राक्षस मुझे मारने लगे।

जिन्ह मोहि मारा ते मैं मारे ❀ तेहि पर बाँधेउ तनयँ तुम्हारे
मोहि न कछु बाँधे कइ लाजा ❀ कीन्ह चहउँ निज प्रभु कर काजा

उन्होंने मुझे मारा, मैंने भी उन्हें मारा। इस पर भी तुम्हारे पुत्र ने मुझे

१. देवताओं के रक्षक। २. धनुष। ३. तोड़ा। ४. समस्त। ५. टाल दिया।

बाँध लिया। मुझे अपने बाँधे जाने की कुछ भी लज्जा नहीं है, मैं तो अपने मालिक का कार्य करना चाहता हूँ।

बिनती करउँ जोरि कर रावन ❋ सुनहु मान तजि मोर सिखावन
देखहु तुम निज कुलहि बिचारी ❋ भ्रम तजि भजहु भगत भय हारी

हे रावण! मैं हाथ जोड़कर तुमसे विनती करता हूँ। तुम अभिमान छोड़कर मेरी सीख सुनो। तुम अपने कुल का विचार करके देखो और भ्रम को छोड़कर भक्तों का भय हरण करने वाले भगवान् को भजो।

जाकें डर अति काल डेराई ❋ जो सुर असुर चराचर खाई
तासों बैरु कबहुँ नहिं कीजै ❋ मोरे कहें जानकी दीजै

जो देवता, राक्षस और समस्त चराचर को खा जाता है, जिसके भय से वह काल भी बहुत डरता है, उससे बैर कभी न कर और मेरे कहने से जानकी को दे दे।

दो०- प्रनतपाल रघुनायक करुना सिंधु खरारि।
गयें सरन प्रभु राखिहैं तव अपराध बिसारि॥२२॥

खर के शत्रु रघुनाथजी शरणागतों की रक्षा करने वाले और दया के समुद्र और खर के शत्रु हैं। तुम उनकी शरण जाओगे तो वे प्रभु तुम्हारा सब अपराध क्षमा करके तुम्हें शरण में रख लेंगे।

राम चरन पंकज उर धरहू ❋ लंका अचल राजु तुम्ह करहू
रिषि पुलस्ति जस बिमल मयंका ❋ तेहि ससि महुँ जनि होहु कलंका

रामजी के चरण-कमल हृदय में धरो और लंका का अटल राज्य करो। ऋषि पुलस्त्य का यश निर्मल चन्द्रमा के समान है। उस चन्द्रमा में तुम कलंक न बनो।

राम नाम बिनु गिरा न सोहा ❋ देखु बिचारि त्यागि मद मोहा
बसन हीन नहिं सोह सुरारी ❋ सब भूषन भूषित बर नारी

रामनाम के बिना वाणी शोभा नहीं पाती। मद, मोह को छोड़कर विचार-करके तो देखो। हे देवताओं के शत्रु! सब भूषणों से सज्जित सुन्दरी स्त्री भी वस्त्र के बिना (नंगी) शोभा नहीं पाती। [प्रतिवस्तूपमा अलंकार]

राम बिमुख संपति प्रभुताई ❋ जाइ रही पाई बिनु पाई
सजल मूल जिन्ह सरितन्ह नाहीं ❋ बरषि गयें पुनि तबहिं सुखाहीं

रामजी के विमुख पुरुष की संपत्ति और प्रभुता रही हुई भी चली जाती है, उसका पाना न पाने के समान है। जिन नदियों का तल सजल अर्थात् सोतायुक्त नहीं होता, वे वर्षा के बाद तत्काल ही सूख भी जाती हैं।

सुनु दसकंठ कहउँ पन रोपी ❀ बिमुख राम त्राता नहिं कोपी[1]
संकर सहस बिष्नु अज तोही ❀ सकहिं न राखि राम कर द्रोही

हे रावण! सुनो। मैं प्रण ठानकर कहता हूँ, राम से विमुख का कोई भी रक्षक नहीं। हज़ारों शिव, विष्णु और ब्रह्मा रामजी के विरोधी तुमको बचा नहीं सकते।

दो०— मोह मूल बहु सूल प्रद त्यागहु तम अभिमान।
भजहु राम रघुनायक कृपा सिन्धु भगवान ॥२३॥

जिस अभिमान का मोह ही मूल है और जो बहुत पीड़ा देने वाला है, उस तम-रूप अभिमान को त्यागो और रघुकुल के स्वामी, कृपा के समुद्र भगवान् रामजी का भजन करो।

जदपि कही कपि अति हित बानी ❀ भगति बिबेक बिरति नय सानी
बोला बिहँसि महा अभिमानी ❀ मिला हमहिं कपि गुर बड़ ग्यानी

यद्यपि हनुमान ने भक्ति, विवेक, वैराग्य और नीति से सनी हुई बहुत हित की बात कही। तो भी वह महा अभिमानी रावण हँसकर बोला कि हमें यह बानर बड़ा ज्ञानी गुरु मिला।

मृत्यु निकट आई खल तोही ❀ लागेसि अधम सिखावन मोही
उलटा होइहि कह हनुमाना ❀ मतिभ्रम तोर प्रगट मैं जाना

रे मूर्ख! तेरी मृत्यु निकट आ गई है? रे नीच! तू मुझे उपदेश देने चला है? हनुमान ने कहा—इसका उलटा ही होगा, अर्थात्, तेरी मृत्यु निकट आई है। तेरी बुद्धि भ्रष्ट हो रही है। यह मैंने स्पष्ट जान लिया है।

सुनि कपि बचन बहुत खिसिआना ❀ बेगि न हरहु मूढ़ कर प्राना
सुनत निसाचर मारन धाए ❀ सचिवन्ह[2] सहित बिभीषन आए

हनुमान के वचन सुनकर वह बहुत ही खिसिया गया। उसने कहा—अरे! इस मूर्ख का प्राण जल्दी क्यों नहीं ले लेते? यह सुनते ही राक्षस उसे मारने दौड़े। उसी समय मंत्रियों के साथ विभीषण वहाँ आये।

---

१. कोई भी। २. मंत्रियों।

नाइ सीस करि बिनय बहूता ❀ नीति बिरोध न मारिअ दूता
आन दंड कछु करिअ गोसांई ❀ सबही कहा मंत्र भल भाई
सुनत बिहँसि बोला दसकंधर ❀ अंग भंग करि पठइअ बंदर

सिर नवाकर और बहुत विनय करके उन्होंने रावण से कहा कि दूत को मारना न चाहिये। यह नीति के विरुद्ध है। हे राजन्! कोई दूसरा दंड दिया जाय। सब ने कहा—भाई! यह सलाह अच्छी है। यह सुनते ही रावण हँसकर बोला—अच्छा, बन्दर को अङ्ग-भङ्ग करके भेज दिया जाय।

दो० कपि कें ममता पूँछ पर सबहिं कहउँ समुझाइ।
तेल बोरि पट[1] बाँधि पुनि पावक देहु लगाइ॥२४॥

मैं सबको समझाकर कहता हूँ कि बानर की ममता पूँछ पर होती है। तेल में कपड़ा डुबोकर उसे इसकी पूँछ में बाँधकर फिर आग लगा दो।

पूँछहीन बानर तहँ जाइहि ❀ तब सठ निज नाथहिं लइ आइहि
जिन्ह के कीन्हिसि बहुत बड़ाई ❀ देखउँ मैं तिन्ह के प्रभुताई

पूँछ से रहित यह बानर जब जायगा, तब यह मूर्ख अपने स्वामी को साथ ले आयगा। जिसकी इसने बड़ी बड़ाई की, ज़रा मैं उसकी प्रभुता तो देखूँ।

बचन सुनत कपि मन मुसुकाना ❀ भइ सहाय सारद[2] मैं जाना
जातुधान सुनि रावन बचना ❀ लागे रचइ मूढ़ सोइ रचना

यह वचन सुनते ही हनुमान मन में मुस्कुराये और मन ही मन बोले कि जान पड़ता है कि सरस्वती सहाय हुई हैं। रावण की बातें सुनकर मूर्ख राक्षस लोग वही तैयारी करने लगे। [अनुज्ञा अलंकार]

रहा न नगर बसन घृत तेला ❀ बाढ़ी पूँछ कीन्ह कपि खेला
कौतुक कहँ आए पुरबासी ❀ मारहिं चरन करहिं बहु हाँसी

नगर में कपड़ा, घी और तैल नहीं रह गया। पूँछ बहुत बढ़ी। बानर ने अच्छा खेल किया। नगर के लोग तमाशा देखने को आये। वे पैर से ठोकरें मारते थे और बहुत मज़ाक उड़ाते थे।

---

१. कपड़ा। २. सरस्वती।

बाजहिं ढोल देहिं सब तारी ❀ नगर फेरि पुनि पूँछ प्रजारी[1]
पावक जरत देखि हनुमंता ❀ भयेउ परम लघु रूप तुरंता
निबुकि[2] चढ़ेउ कपि कनक अटारीं ❀ भईं सभीत निसाचर नारीं

ढोल बजते हैं और सब तालियें पीटते हैं। हनुमान को नगर में घुमाकर फिर पूँछ में आग लगा दी। अग्नि को जलते हुये देखकर हनुमान ने तुरन्त ही बहुत छोटा रूप धर लिया। फंदा छुड़ाकर हनुमान सोने की अटारियों पर जा चढ़े। उनको देखकर राक्षसों की स्त्रियाँ डर गईं।



हरि प्रेरित तेहि अवसर चले मरुत[3] उनचास।
अट्टहास करि गर्जा कपि बढ़ि लाग अकास ॥२५॥

उस समय भगवान् की प्रेरणा से उनचासों पवन चलने लगे। हनुमान बढ़कर आकाश तक जा लगे और उन्होंने अट्टहास करके गर्जन किया।

देह बिसाल परम हरुआई[4] ❀ मंदिर तें मन्दिर चढ़ धाई
जरइ नगर भा लोग बिहाला ❀ झपट लपट बहु कोटि कराला

देह तो बड़ी विशाल, पर फुरती ख़ूब। दौड़ करके इस मन्दिर से उस मन्दिर पर चढ़ जाते हैं। नगर जल रहा है; लोग विह्वल हो गये। आग की करोड़ों भयानक लपटें झपट रही हैं।

तात मातु हा सुनिअ पुकारा ❀ एहिं अवसर को हमहिं उबारा
हम जो कहा यह कपि नहिं होई ❀ बानर रूप धरें सुर कोई

हाय बप्पा! हाय मैया! यही पुकार सुनाई पड़ती है। लोग कहते हैं कि इस अवसर पर हमें कौन बचायेगा? हम तो पहले ही से कहते थे कि यह बानर नहीं है, कोई देवता है जो बानर का रूप धरे है।

साधु अवग्या[5] कर फल ऐसा ❀ जरइ नगर अनाथ कर जैसा
जारा नगरु निमिष एक माहीं ❀ एक बिभीषन कर गृह नाहीं

साधु के अपमान का यह फल है कि नगर अनाथ के नगर की तरह जल रहा है। हनुमान ने क्षण-भर में सारा नगर जला डाला। एक विभीषण का घर नहीं जलाया।

१. जलाई। २. बन्धन से छूटकर। ३. वायु। ४. फुर्तीलापन। ५. अपमान।



ताकर दूत अनल जेहिं सिरिजा ❀ जरा न सो तेहि कारन गिरिजा
उलटि पलटि लंका सब जारी ❀ कूदि परा पुनि सिंधु मँझारी

हे पार्वती! जिसने अग्नि को बनाया है, हनुमान उसी के दूत हैं, इसी से वे अग्नि से नहीं जले। हनुमान ने उलट-पलट कर लंका को अच्छी तरह जलाया। फिर वे समुद्र में कूद पड़े।

दो० पूँछ बुझाइ खोइ स्रम धरि लघु रूप बहोरि।
जनकसुता कें आगे ठाढ़ भयेउ कर जोरि ॥२६॥

पूँछ बुझाकर, थकावट मिटाकर और फिर छोटा-सा रूप धरकर वे सीता के सामने हाथ जोड़ कर जा खड़े हुये।

मातु मोहि दीजे कछु चीन्हा ❀ जैसें रघुनायक मोहि दीन्हा
चूड़ामनि उतारि तब दयऊ ❀ हरष समेत पवनसुत लयऊ

हनुमान ने कहा—हे माता! मुझे कोई चिन्ह दीजिये, जैसे रघुनाथजी ने दिया था। तब सीता ने चूड़ामणि उतारकर दिया, जिसे हनुमान ने हर्षपूर्वक ले लिया।

कहे तात अस मोर प्रनामा ❀ सब प्रकार प्रभु पूरन कामा[1]
दीन दयालु बिरिदु संभारी ❀ हरहु नाथ मम संकट भारी

सीता ने कहा—हे पुत्र! मेरा प्रणाम इस प्रकार कहना कि हे प्रभु! आप तो सब प्रकार से मनोरथ पूर्ण करने वाले हैं। हे दीनों पर दया करने वाले! आप अपने विरद को याद करके मेरे भारी संकट को दूर कीजिये।

तात सक्रसुत[2] कथा सुनायेहु ❀ बान प्रताप प्रभुहि समुझायेहु
मास दिवस महुँ नाथु न आवा ❀ तौ पुनि मोहि जिअत नहिं पावा

हे तात! इन्द्र-पुत्र जयन्त की कथा सुनाना और प्रभु को उनके बाण का प्रताप याद दिलाना। महीने भर में नाथ न आये तो फिर मुझे जीवित न पावेंगे।

कहु कपि केहि बिधि राखौं प्राना ❀ तुम्हहू तात कहत अब जाना
तोहि देखि सीतलि भइ छाती ❀ पुनि मो कहुँ सोइ दिनु सोइ राती

हे हनुमान! बताओ मैं किस प्रकार प्राण रक्खूँ? हे तात! तुम भी अब

---

१. कामना रहित। २. इन्द्र का पुत्र, जयन्त।

जाने को कहते हो। तुमको देखकर छाती ठंडी हुई थी। अब तो मुझे फिर वही दिन और वही रात।

दो॰ जनकसुतहिं समुझाइ करि बहु बिधि धीरजु दीन्ह।
चरन कमल सिरु नाइ कपि गवनु राम पहिं कीन्ह ।२७

हनुमान ने सीता को समझाकर बहुत प्रकार से ढाढ़स बँधाया और उनके कमल ऐसे चरणों में सिर नवाकर रामजी के पास गमन किया।

चलत महाधुनि गर्जेसि भारी ❀ गर्भ स्रवहिं सुनि निसिचर नारी
नाँघि सिंधु एहि पारहिं आवा ❀ सबद किलकिला[1] कपिन्ह सुनावा

चलते समय उन्होंने बड़े ज़ोर से गर्जन किया, जिसको सुनकर राक्षसों की स्त्रियों के गर्भ गिरने लगे। समुद्र लाँघकर वे इस पार आये। उन्होंने बानरों को किलकिलाकर शब्द (हर्षसूचक) सुनाया।

हरषे सब बिलोकि हनुमाना ❀ नूतन[2] जन्म कपिन्ह तब जाना
मुख प्रसन्न तन तेज बिराजा ❀ कीन्हेसि रामचन्द्र कर काजा

सब बानर हनुमान को देखकर हर्षित हो गये। बानरों ने अपना नया जन्म समझा। हनुमान का मुख प्रसन्न और शरीर में तेज विराजमान देखकर सबने समझ लिया कि ये रामचन्द्रजी का कार्य कर आये हैं।

मिले सकल अति भये सुखारी ❀ तलफत मीन पाव जिमि बारी
चले हरषि रघुनायक पासा ❀ पूँछत कहत नवल[3] इतिहासा

सब हनुमान से मिले और बहुत ही सुखी हुये। जैसे तड़पती हुई मछली को पानी मिल जाय। सब नई-नई बातें पूछते-कहते हुये रघुनाथजी के पास चले।

तब मधुबन भीतर सब आये ❀ अंगद संमत मधु फल खाये
रखवारे जब बरजन लागे ❀ मुष्टि प्रहार हनत सब भागे

तब सब मधुबन के भीतर आये और अंगद की सलाह से सबने मधु और फल खाये। रखवाले रोकने लगे, पर घूसों की मार पाते ही सब भागे।

दो॰ जाइ पुकारे ते सब बन उजार जुबराज।
सुनि सुग्रीव हरष कपि करि आये प्रभु काज ॥२८॥

१. बानरों का हर्षसूचक शब्द। २. नया। ३. नया।

उन्होंने जाकर पुकारा कि युवराज (अंगद) बन उजाड़ रहे हैं। यह सुनकर सुग्रीव हर्षित हुये कि बानर प्रभु का कार्य कर आये हैं। [अनुमान प्रमाण अलंकार]

जौं न होति सीता सुधि पाई ❀ मधुबन के फल सकहिं कि खाई
एहि बिधि मन बिचार कर राजा ❀ आइ गये कपि सहित समाजा

जो सीता की खबर न पाई होती तो क्या वे मधुबन के फल को खा सकते थे ? इस प्रकार राजा (सुग्रीव) मन में विचार कर ही रहे थे कि दलसहित बानर आ गये।

आइ सबन्हि नावा पद सीसा ❀ मिले सबन्हि अति प्रेम कपीसा
पूँछी कुसल कुसल पद देखी ❀ राम कृपा भा काजु बिसेषी

आकर सब ने सुग्रीव के चरणों में सिर नवाया। सुग्रीव सब से बड़े प्रेम-सहित मिले। उन्होंने कुशल पूछी। बानरों ने कहा—आपके चरणों के दर्शन से सब कुशल है। रामजी की कृपा से विशेष कार्य हुआ।

नाथ काजु कीन्हेउ हनुमाना ❀ राखे सकल कपिन्ह के प्राना
सुनि सुग्रीवँ बहुरि तेहि मिलेऊ ❀ कपिन्ह सहित रघुपति पहिं चलेऊ

बानरों ने कहा—हे नाथ ! हनुमान ही ने सब कार्य किया, और सब बानरों के प्राण बचा लिये। यह सुनकर सुग्रीव फिर हनुमान से मिले और सब बानरों को लेकर रघुनाथजी के पास चले।

राम कपिन्ह जब आवत देखा ❀ कियें काजु मन हरष बिसेषा
फटिक सिला बैठे दोउ भाई ❀ परे सकल कपि चरनन्हि जाई

रामजी ने जब बानरों को आते देखा तब यह जानकर कि कार्य हो गया, उनके मन में बड़ा हर्ष हुआ। दोनों भाई स्फटिक शिला पर बैठे थे। सब बानर जाकर उनके चरणों पर गिर पड़े।

दो॰ प्रीति सहित सब भेंटे रघुपति करुना पुंज।
पूँछी कुसल नाथ अब कुसल देखि पद कंज॥२९॥

करुणा की राशि रघुनाथजी ने प्रीति-सहित सबको गले लगाया और कुशल पूछा। सबने कहा—आपके कमल ऐसे चरणों को देखकर सब कुशल है।

जामवन्त कह सुनु रघुराया ❀ जा पर नाथ करहु तुम्ह दाया
ताहि सदा सुभ कुसल निरन्तर ❀ सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर

जाम्बवन्त ने कहा—हे रघुनाथजी ! सुनिये, हे नाथ ! जिस पर आप दया करते हैं, उसे सदा कल्याण और हमेशा कुशल है। उस पर देवता, मनुष्य और मुनि सभी प्रसन्न रहते हैं।

सोइ बिजई बिनई गुन सागर ❀ तासु सुजसु त्रयलोक उजागर
प्रभु की कृपा भयेउ सब काजू ❀ जन्म हमार सुफल भा आजू

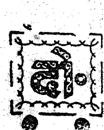
वही विजयी है, वही विनयी है और वही गुणों का समुद्र बन जाता है। उसी का सुयश तीनों लोकों में प्रकाशित होता है। आपकी कृपा से सब काम हो गया। हमारा जन्म आज सफल हुआ।

नाथ पवनसुत कीन्हि जो करनी ❀ सहसहुँ मुख न जाइ सो बरनी
पवन तनय के चरित सुहाये ❀ जामवंत रघुपतिहि सुनाये

हे नाथ ! पवनपुत्र हनुमान ने जो कार्य किया, वह हज़ारों मुख से भी कहा नहीं जा सकता। तब हनुमान के सुन्दर चरित्र जाम्बवान् ने रामचन्द्रजी को सुनाये।

सुनत कृपानिधि मन अति भाए ❀ पुनि हनुमान हरषि हियँ लाए
कहहु तात केहि भाँति जानकी ❀ रहति करति रच्छा स्वप्रान की

वे चरित्र सुनने पर कृपानिधि रामचन्द्रजी के मन को बहुत ही अच्छे लगे। उन्होंने प्रसन्न होकर हनुमान को फिर हृदय से लगा लिया और पूछा—हे तात ! बताओ, सीता किस प्रकार रहती और अपने प्राण की रक्षा करती हैं ?



नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहि बाट॥३०॥

हनुमान ने कहा—आपका नाम रात-दिन उनका पहरे वाला है; आपका ध्यान ही किवाड़ा है। अपने पैरों की ओर लगे हुये उनके नेत्र ताले की तरह हैं। फिर प्राण किस मार्ग से जायँ ? [काव्यलिंग अलंकार]

चलत मोहि चूड़ामनि दीन्ही ❀ रघुपति हृदय लाइ सोइ लीन्ही
नाथ जुगल लोचन भरि बारी ❀ बचन कहे कछु जनककुमारी

चलते समय उन्होंने मुझे चूड़ामणि दिया। रामचन्द्रजी ने उसे लेकर हृदय से लगा लिया। हनुमान ने कहा—हे नाथ ! दोनों नेत्रों में जल भरकर जानकीजी ने कुछ वचन कहे हैं।

अनुज समेत गहेहु प्रभु चरना ❀ दीनबंधु प्रनतारति हरना
मन क्रम बचन चरन अनुरागी ❀ केहिं अपराध नाथ हौं त्यागी

छोटे भाई-समेत रामजी के चरण छूना और कहना कि हे दीनबन्धु शरणागतों के दुःख दूर करने वाले ! मन, वचन और कर्म से चरणों की अनुरागिणी हूँ फिर किस अपराध से नाथ ने मुझे त्याग दिया।

अवगुन एक मोर मैं माना ❀ बिछुरत प्रान न कीन्ह पयाना
नाथ सो नयनन्हि को अपराधा ❀ निसरत प्रान करहिं हठि बाधा

हाँ, मेरा एक दोष है, उसे मैं मानती हूँ कि आपका वियोग होते ही मेरे प्राण क्यों नहीं चल गये। किन्तु हे नाथ ! यह तो आँखों का अपराध है, जो निकलते हुये प्राणों को हठपूर्वक बाधा देते हैं।

बिरह अगिनि तनु तूल समीरा ❀ स्वास जरै छन माहिं सरीरा
नयन स्रवहिं जल निज हित लागी ❀ जरैं न पाव देह बिरहागी
सीता कै अति बिपति बिसाला ❀ बिनहिं कहें भलि दीनदयाला

विरह अग्नि है, शरीर रूई है, साँस वायु है, इससे शरीर क्षणभर में जल सकता है। पर नेत्र अपने हित के लिये जल बरसाते हैं, जिससे विरह की आग से भी शरीर जलने नहीं पाता। सीता की विपत्ति बड़ी भयानक है। हे दीनदयाल ! वह बिना कही ही अच्छी है।

दो॰ निमिष निमिष करुनानिधि जाहिं कलप सम बीति।
बेगि चलिअ प्रभु आनिअ भुज बल खल दल जीति॥

हे करुणा के भण्डार ! उनका एक-एक पल कल्प के समान बीतता है। अतः हे प्रभु ! जल्दी चलिये और अपनी भुजाओं के बल से दुष्टों के दल को जीतकर सीता को ले आइये।

सुनि सीता दुख प्रभु सुख अयना ❀ भरि आए जल राजिव नयना
बचन कायँ मन मम गति जाही ❀ सपनेहुँ बूझिअ बिपति कि ताही

सीता का दुख सुनकर सुख के धाम प्रभु के कमल ऐसे नेत्रों में जल भर आया। रामजी कहने लगे—वचन, शरीर और मन से जिसे मेरी ही गति है, भला उसे स्वप्न में भी विपत्ति हो सकती है ?

कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई ❀ जब तव सुमिरन भजनु न होई
केतिक बात प्रभु जातुधान की ❀ रिपुहि जीति आनिबी जानकी

हनुमान ने कहा—हे प्रभु ! विपत्ति वही है, जब आपका सुमिरन और भजन न हो। राक्षसों की बात ही कितनी है ? शत्रु को जीतकर आप जानकीजी को ले आयेंगे।

सुनु कपि तोहि समान उपकारी ❀ नहिं कोउ सुर नर मुनि तनु धारी
प्रति उपकार करौं का तोरा ❀ सनमुख होइ न सकत मन मोरा

रामचन्द्रजी ने कहा—हे हनुमान ! सुनो। तुम्हारे समान मेरा उपकार करने वाला देवता, मनुष्य अथवा मुनि कोई भी शरीरधारी नहीं है। तुम्हारे उपकार का बदला मैं क्या दूँ ? मेरा मन भी तो तुम्हारे सामने नहीं हो सकता।

सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं ❀ देखेउँ करि बिचार मन माहीं
पुनि पुनि कपिहि चितव सुरत्राता ❀ लोचन नीर पुलक अति गाता

हे पुत्र ! सुनो। मैंने मन में विचार करके देख लिया कि मैं तुमसे उऋण नहीं हो सकता। देवताओं के रक्षक रामजी बार-बार हनुमान को देख रहे हैं। उनकी आँखों में जल है और शरीर अत्यंत पुलकित है।

दो० सुनि प्रभु बचन बिलोकि मुख गात हरषि हनुमंत।
चरन परेउ प्रेमाकुल त्राहि त्राहि भगवंत ॥३२॥

प्रभु के वचन सुनकर और उनके (प्रसन्न) मुँह और (पुलकित) शरीर को देखकर हनुमान हर्षित हो गये। वे प्रेम में विह्वल होकर रामजी के चरणों में गिरे और बोले—हे भगवन् ! मेरी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो।

बार बार प्रभु चहइ उठावा ❀ प्रेम मगन तेहि उठब न भावा
प्रभु कर पंकज कपि कें सीसा ❀ सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा

प्रभु उन्हें बार-बार उठाना चाहते हैं। पर हनुमान प्रेम में ऐसे मग्न हैं कि उन्हें उठना अच्छा ही नहीं लगता। प्रभु का कर-कमल हनुमान के सिर पर है, इस स्थिति का स्मरण करके शिवजी प्रेम-मग्न हो गये।

सावधान मन करि पुनि संकर ❀ लागे कहन कथा अति सुन्दर
कपि उठाइ प्रभु हृदयँ लगावा ❀ कर गहि परम निकट बैठावा

मन को सँभालकर शिवजी फिर अत्यंत सुन्दर कथा कहने लगे। हनुमान

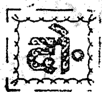
को उठाकर रामजी ने हृदय से लगा लिया और हाथ पकड़कर अत्यंत निकट बैठा लिया।

कहु कपि रावन पालित लंका ❁ केहि बिधि दहेउ दुर्ग अति बंका[1]
प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना ❁ बोला बचन बिगत अभिमाना

रामजी पूछने लगे—हे हनुमान ! बताओ, रावण से पाली हुई लंका और उसके बड़े दुर्गम क़िले को तुमने किस तरह जलाया ? हनुमान ने प्रभु को प्रसन्न जाना और वे अभिमान-रहित वचन बोले।

साखामृग कै बड़ि मनुसाई[2] ❁ साखा तें साखा पर जाई
नाँघि सिंधु हाटकपुर[3] जारा ❁ निसिचर गन बधि बिपिन उजारा
सो सब तव प्रताप रघुराई ❁ नाथ न कछू मोरि प्रभुताई

बानर का सबसे बड़ा पुरुषार्थ यही है कि एक डाल पर से दूसरी डाल पर चला जाता है। मैंने जो समुद्र नाँघकर सोने का नगर जलाया और राक्षसों के समूह को मारकर अशोकवन को उजाड़ डाला, यह सब हे रघुनाथजी ! आपका ही प्रताप है। हे नाथ ! इसमें मेरी कुछ भी प्रभुता नहीं।



ता कहुँ प्रभु कछु अगम नहिं जा पर तुम्ह अनुकूल।
तव प्रभावँ बड़वानलहि[4] जारि सकइ खलु[5] तूल[6]।३३

हे प्रभु ! जिस पर आप प्रसन्न हों, उसके लिये कुछ भी कठिन नहीं। आपके प्रभाव से बड़वानल को रुई भी निश्चय ही जला सकती है। [द्वितीय असंगति अलंकार]

नाथ भगति अति सुख दायनी ❁ देहु कृपा करि अनपायनी
सुनि प्रभु परम सरल कपि बानी ❁ एवमस्तु तब कहेउ भवानी

हे नाथ ! आप कृपा करके परम सुख देने वाली अपनी निश्चल भक्ति दीजिये। हनुमान की अत्यन्त सरल वाणी सुनकर, हे भवानी ! तब रामचन्द्रजी ने एवमस्तु (ऐसा ही हो) कहा।

उमा राम सुभाव जेहि जाना ❁ ताहि भजनु तजि भाव न आना
यह संबाद जासु उर आवा ❁ रघुपति चरन भगति सोइ पावा

---

१. बाँका, दुर्गम। २. पुरुषार्थ। ३. सोने का नगर, लंका। ४. समुद्र के भीतर की आग।
५. निश्चयपूर्वक। ६. रुई।

हे पार्वती ! जिसने रामचन्द्रजी के स्वभाव को जान लिया है, उसे भजन छोड़कर दूसरी बात अच्छी नहीं लगती। यह स्वामी-सेवक का संवाद जिसके हृदय में आ गया, वही रामजी के चरणों की भक्ति पा गया।

सुनि प्रभु बचन कहहिं कपि बृन्दा ❋ जय जय जय कृपाल सुखकंदा
तब रघुपति कपिपतिहिं बोलावा ❋ कहा चलैं कर करहु बनावा[1]

प्रभु के वचनों को सुनकर बानरगण कहने लगे—कृपालु, आनन्दकन्द रामजी की जय हो, जय हो, जय हो। तब रामजी ने सुग्रीव को बुलाया और कहा—चलने की तैयारी करो।

अब बिलंबु केहि कारन कीजे ❋ तुरत कपिन्ह कहुँ आयसु दीजे
कौतुक देखि सुमन बहु बरषी ❋ नभ तें भवन चले सुर हरषी

अब देरी क्यों की जाय? बानरों को तुरन्त आज्ञा दो। यह लीला देखकर, बहुत-सा फूल बरसाकर और हर्षित होकर देवता आकाश से अपने-अपने लोक को चले।

दो०— कपिपति बेगि बोलाए आए जूथप[2] जूथ।
नाना बरन अतुल बल बानर भालु बरूथ॥३४॥

बानरराज सुग्रीव ने शीघ्र ही बानरों को बुलाया। सेनापतियों के समूह आ गये। बानर भालुओं के झुण्ड अनेक रंगों के हैं और उनमें अतुलनीय बल है।

प्रभु पद पंकज नावहिं सीसा ❋ गर्जहिं भालु महाबल कीसा[3]
देखी राम सकल कपि सैना ❋ चितइ कृपा करि राजिव नैना

वे रामजी के चरण-कमलों में सिर नवाते हैं। बड़े बलवान भालू और बानर गरज रहे हैं। रामजी ने बानरों की सारी सेना देखी। तब कमल ऐसे नेत्रों वाले रामजी ने कृपापूर्वक उनकी ओर दृष्टि डाली।

राम कृपा बल पाइ कपिंदा[4] ❋ भए पच्छजुत मनहुँ गिरिंदा[5]
हरषि राम तब कीन्ह पयाना[6] ❋ सगुन भए सुन्दर सुभ नाना

रामजी की कृपा का बल पाकर बड़े-बड़े बानर मानो पंखयुक्त बड़े पर्वत हो गये। तब रामजी ने आनन्दित होकर प्रयाण (कूच) किया। अनेक सुन्दर और कल्याणकारी सगुन हुये।

१. तैयारी। २. सेनापति। ३. बानर। ४. बड़े-बड़े बानर। ५. बड़े पर्वत। ६. प्रस्थान, प्रयाण।

जासु सकल मंगलमय कीती ❀ तासु पयान सगुन यह नीती
प्रभु पयान जाना बैदेहीं ❀ फरकि बाम अँग जनु कहि देहीं

जिसकी कीर्ति सब मंगलों से पूर्ण है, उसके प्रयाण के समय सगुन होना यह नीति है। सीता ने भी प्रभु के प्रयाण का समाचार जान लिया। उनके बायें अंग फड़क-फड़ककर मानो कह देते थे।

जोइ जोइ सगुन जानकिहि होई ❀ असगुन भयेउ रावनहि सोई
चला कटकु को बरनैं पारा ❀ गर्जहिं बानर भालु अपारा

सीता को जो-जो सगुन होते थे, वे ही रावण के लिये असगुन हुये। सेना चली, उसका वर्णन करके कौन पार पा सकता है? असंख्य बानर और भालू गर्जन कर रहे हैं।

नख आयुध गिरि पादप धारी ❀ चले गगन महि इच्छाचारी
केहरि नाद भालु कपि करहीं ❀ डगमगाहिं दिग्गज चिक्करहीं

नख ही जिनके हथियार हैं, वे बानर और भालू पर्वतों और वृक्षों को धारण किये हुये आकाश-मार्ग और पृथ्वी पर अपनी-अपनी इच्छा के अनुसार चले जा रहे हैं। वे सिंह के समान गर्जन कर रहे हैं। उनसे दिशाओं के हाथी डगमगा-कर चिंघाड़ रहे हैं।

छंद—चिक्करहिं दिग्गज डोल महि गिरि लोल सागर खरभरे।
मन हरष दिनकर सोम सुर मुनि नाग किन्नर दुख टरे॥
कटकटहिं मर्कट बिकट भट बहु कोटि कोटिन्ह धावहीं।
जय राम प्रबल प्रताप कोसलनाथ गुन गन गावहीं॥

दिशाओं के हाथी चिंघाड़ने लगे; पृथ्वी डोलने लगी, पर्वत काँपने लगे, और समुद्र खलबला उठे। सूर्य, चन्द्रमा, देवता, मुनि, नाग और किन्नर मन में हर्षित हुये कि हमारे अब दुःख टल गये। अनेकों करोड़ बड़े वीर बानर कट-कटाते हैं और करोड़ों दौड़ रहे हैं। प्रबल प्रतापी अयोध्यानाथ रामचन्द्रजी की जय हो, ऐसा पुकारते हुये वे उनके गुणों का गान कर रहे हैं।

सहि सक न भार उदार अहिपति बार बारहिं मोहई।
गहि दसन पुनि पुनि कमठ पृष्ठ कठोर सो किमि सोहई॥



रघुबीर रुचिर पयान प्रस्थिति जानि परम सुहावनी।
जनु कमठ खर्पर सर्पराज सो लिखत अबिचल पावनी॥

महान् शेषनाग सेना का अत्यन्त भार उठा नहीं सकते। वे बारम्बार मोहित हो जाया करते हैं और फिर-फिर दाँतों से कच्छप की कठोर पीठ को पकड़ते हैं। वे ऐसे शोभा देते हैं, मानो रामजी के सुन्दर प्रयाण की पवित्र कथा को सुहावनी जानकर शेषनाग कच्छप की पीठ पर लिख रहे हैं।

दो॰ **एहि बिधि जाइ कृपानिधि उतरे सागर तीर।**
जहँ तहँ लागे खान फल भालु बिपुल कपि बीर॥३५॥

इस प्रकार कृपा के भण्डार रामजी समुद्र के किनारे जा उतरे। असंख्य वीर भालू और वानर जहाँ-तहाँ फल खाने लगे।

उहाँ निसाचर रहहिं ससंका ❀ जब तें जारि गयेउ कपि लंका
निज निज गृह सब करहिं बिचारा ❀ नहिं निसिचर कुल केर[1] उबारा

जबसे हनुमान लङ्का को जला गये, तब से वहाँ राक्षस डरते रहते थे। अपने-अपने घरों में सब विचार करते हैं कि राक्षसों के कुल की अब रक्षा नहीं।

जासु दूत बल बरनि न जाई ❀ तेहि आएँ पुर कवनि भलाई
दूतिन्ह सन सुनि पुरजन बानी ❀ मन्दोदरी अधिक अकुलानी

जिसके दूत के बल का वर्णन नहीं हो सकता, वह नगर में स्वयं आयेगा तो क्या भलाई होगी? दूतियों से नगर-निवासियों के वचन सुनकर मन्दोदरी बहुत ही व्याकुल हो गई।

रहसि[2] जोरि कर पति पग लागी ❀ बोली बचन नीति रस पागी
कंत करष हरि सन परिहरहू ❀ मोर कहा अति हित हिय धरहू

वह एकान्त में हाथ जोड़कर रावण के चरणों से लगी और नीति-रस में पगी हुई वाणी बोली—हे प्रियतम! भगवान् से विरोध छोड़ दीजिये। मेरे कहने को अत्यन्त हितकारी जानकर हृदय में धारण कीजिये।

समुझत जासु दूत कइ करनी ❀ स्रवहिं गर्भ रजनीचर घरनी[3]
तासु नारि निज सचिव बोलाई ❀ पठवहु कंत जो चहहु भलाई

---

१. का। २. एकान्त में। ३. स्त्री।

जिसके दूत की करनी का विचार करते ही राक्षसों की स्त्रियों के गर्भ गिर जाते हैं, हे प्रियतम! यदि भला चाहते हैं, तो अपने मन्त्री को बुलाकर उसके साथ उनकी स्त्री को भेज दीजिये।

तव कुल कमल बिपिन दुख दाई ❀ सीता सीत निसा सम आई
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें ❀ हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें

सीता आपके कुलरूपी कमलों के बन को दुख देने वाली शिशिर ऋतु (जाड़े) की रात्रि के समान आई है। हे नाथ! सुनिये, सीता को दिये बिना आपका कल्याण चाहे शिवजी और ब्रह्मा ही क्यों न करें, नहीं है।



दो॰ राम बान अहि गन सरिस निकर निसाचर भेक।
जब लगि ग्रसत न तब लगि जतनु करहु तजि टेक॥

रामजी के बाण साँपों के समूह के समान हैं और राक्षसों के समूह मेढक के समान। जब तक वे उनको नहीं ग्रसते, तब तक हठ छोड़कर उपाय कर लीजिये।

स्रवन सुनी सठ ता करि बानी ❀ बिहँसा जगत बिदित अभिमानी
सभय सुभाउ नारि कर साचा ❀ मङ्गल महुँ भय मन अति काचा

मूर्ख रावण ने जब कानों से उसकी बात सुनी, तब जगत् में प्रसिद्ध वह अभिमानी खूब हँसा। उसने कहा—स्त्रियों का स्वभाव सचमुच ही डरपोक होता है। उनका मन बहुत ही कच्चा होता है। वे मंगल-कार्य में भी भय करती हैं।

जौं आवइ मर्कट कटकाई ❀ जियहिं बिचारे निसिचर खाई
कंपहिं लोकप जाकीं त्रासा ❀ तासु नारि सभीत बड़ि हासा

बानरों की सेना यदि आयेगी तो बेचारे राक्षस उसे खाकर जियेंगे। जिसके भय से लोकपाल भी काँपते हैं, उसकी स्त्री भयभीत हो, यह बड़ी हँसी की बात है। [द्वितीय विषम अलंकार]

अस कहि बिहँसि ताहि उर लाई ❀ चलेउ सभा ममता अधिकाई
मंदोदरी हृदयँ कर चिंता ❀ भयेउ कंत पर बिधि बिपरीता

रावण ने ऐसा कहकर, हँसकर, उसे हृदय से लगा लिया और अधिक स्नेह दिखाकर वह दरबार में चला गया। मन्दोदरी हृदय में चिन्ता करने लगी—हाय! स्वामी पर ब्रह्मा प्रतिकूल हो गये हैं।

बैठेउ सभाँ खबरि असि पाई ❀ सिंधु पार सेना सब आई
बूझेसि सचिव उचित मत कहहू ❀ ते सब हँसे मष्ट[1] करि रहहू
जितेहु सुरासुर तब श्रम नाहीं ❀ नर बानर केहि लेखे[2] माहीं

ज्योंही वह सभा में जाकर बैठा, उसने ऐसी खबर पाई कि शत्रु की सारी सेना समुद्र के पार उतर आई है। उसने मंत्रियों से पूछा कि उचित सलाह बताओ। वे सब हँसे और बोले कि चुप किये रहिये। जब आपने देवताओं और राक्षसों को जीत लिया, तब तो कुछ श्रम हुआ ही नहीं; फिर, मनुष्य और बानर किस गिनती में हैं?

दो॰ सचिव बैद गुर तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगिही नास ॥३७॥

मंत्री, वैद्य और गुरु, ये तीन जो भय या लाभ की आशा से प्रिय बोलें तो राज्य, शरीर और धर्म, इन तीनों का शीघ्र ही नाश हो जाता है। [भग्नक्रम यथासंख्य अलंकार]

सोइ रावन कहुँ बनी सहाई ❀ अस्तुति करहिं सुनाइ सुनाई
अवसर जानि बिभीषनु आवा ❀ भ्राता चरन सीसु तेहिं नावा

वे ही रावण के सहायक बने हैं। वे उसे सुना-सुनाकर स्तुति करते हैं। उसी समय मौका जानकर विभीषण आया और उसने भाई के चरणों में सिर नवाया।

पुनि सिरु नाइ बैठ निज आसन ❀ बोला बचन पाई अनुसासन[3]
जौं कृपाल पूँछेहु मोहिं बाता ❀ मति अनुरूप[4] कहौं हित ताता

फिर वह सिर नवाकर अपने आसन पर बैठ गया और आज्ञा पाकर ये वचन बोला—हे कृपालु! जब आपने मुझे पूछा है तो हे तात! मैं अपनी बुद्धि के अनुसार आपके कल्याण की बात कहता हूँ।

जो आपन चाहै कल्याना ❀ सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना
सो पर नारि लिलार[5] गोसाईं ❀ तजइ चउथि के चंद कि नाईं

जो मनुष्य अपना कल्याण, सुयश, सुबुद्धि, शुभ गति और नाना प्रकार के सुख चाहता हो, वह हे स्वामी! पराई स्त्री के ललाट को चौथ के चन्द्रमा के समान त्याग दे। [गूढ़ोक्ति अलंकार]

१. चुप। २. गिनती। ३. आज्ञा। ४. अनुसार। ५. ललाट, माथा।

चौदह भुवन एक पति होई ❀ भूतद्रोह तिष्टइ[1] नहिं सोई
गुन सागर नागर नर जोऊ ❀ अलप लोभ भल कहइ न कोऊ

चौदह भुवनों का कोई एक ही स्वामी हो, वह भी जीवों से बैर करके ठहर नहीं सकता। जो मनुष्य गुणों का समुद्र और चतुर हो, उसे चाहे थोड़ा भी लोभ क्यों न हो, कोई भला न कहेगा।

दो० काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरहि भजहु भजहिं जेहि संत ॥३८

हे नाथ! काम, क्रोध, मद और लोभ, ये सब नरक के मार्ग हैं। इन सबको छोड़कर रामजी ही को भजिये, जिन्हें संत भजते हैं।

तात राम नहिं नर भूपाला ❀ भुवनेस्वर कालहु कर काला
ब्रह्म अनामय[2] अज भगवंता[3] ❀ ब्यापक अजित अनादि अनंता

हे तात! राम मनुष्यों ही के राजा नहीं हैं, वे समस्त लोकों के स्वामी और काल के भी काल हैं। वे भगवान्, ब्रह्म, विकार-रहित, अजन्मा, अजेय, अनादि और अनन्त ब्रह्म हैं।

गो द्विज धेनु देव हितकारी ❀ कृपा सिंधु मानुष तनु धारी
जन रंजन भंजन खल ब्राता[4] ❀ बेद धर्म रच्छक सुनु भ्राता

पृथ्वी, ब्राह्मण, गौ और देवताओं के हित करने वाले वे कृपासिन्धु भगवान् ही मनुष्य का शरीर धारण किये हुये हैं। हे भाई! सुनिये। वे सेवकों को आनन्द देने वाले, दुष्टों के समूह को नष्ट करने वाले और वेद धर्म की रक्षा करने वाले हैं।

ताहि बयरु तजि नाइय माथा ❀ प्रनतारति भंजन रघुनाथा
देहु नाथ प्रभु कहुँ बैदेही ❀ भजहु राम बिनु हेतु सनेही

बैर छोड़कर उन्हें मस्तक नवाइये। रघुनाथजी शरणागत का दुःख नष्ट करने वाले हैं। हे नाथ! उन प्रभु को सीता दे दीजिये और बिना कारण ही स्नेह करने वाले रामजी का भजन कीजिये।

सरन गएँ प्रभु ताहु न त्यागा ❀ बिस्व द्रोह कृत अघ जेहि लागा
जासु नाम त्रय ताप नसावन ❀ सोइ प्रभु प्रगट समुझु जियँ रावन

---

१. टिक सके। २. विकार-रहित। ३. सम्पूर्ण ऐश्वर्य, यश, श्री, धर्म, वैराग्य तथा ज्ञान के भण्डार भगवान्। ४. समूह।

जिसे सम्पूर्ण जगत् से द्रोह करने का पाप लगा है, शरण में आ जाने पर प्रभु उसका भी त्याग नहीं करते। जिनका नाम तीनों पापों को नाश करने वाला है, वे ही प्रभु मनुष्य रूप में प्रकट हुये हैं। हे रावण! हृदय में यह समझ लीजिये।

दो०—बार बार पद लागउँ बिनय करउँ दससीस।
परिहरि मान मोह मद भजहु कोसलाधीस॥

हे रावण! मैं बार-बार आपके पैरों पड़ता हूँ और विनती करता हूँ, आप मान, मोह और मद को छोड़कर अयोध्यापति रामचन्द्रजी का भजन कीजिये।

मुनि पुलस्ति निज शिष्य सन कहि पठई यह बात।
तुरत सो मैं प्रभु सन कही पाइ सुअवसरु तात॥

मुनि पुलस्त्य ने यह बात अपने शिष्य से कहला भेजी है। हे तात! सुन्दर अवसर पाकर मैंने तुरन्त ही वह बात प्रभु (आप) से कह दी।

माल्यवंत अति सचिव सयाना ❀ तासु बचन सुनि अति सुख माना
तात अनुज तव नीति बिभूषन ❀ सोइ उर धरहु जो कहत बिभीषन

माल्यवन्त नाम का एक बड़ा बुद्धिमान् मन्त्री था। वह उनके वचन सुनकर बहुत सुखी हुआ और बोला—हे तात! आपके छोटे भाई नीति के भूषण हैं। विभीषण जो कहते हैं, उसे हृदय में धारण कीजिये।

रिपु उतकरष[1] कहत सठ दोऊ ❀ दूरि न करहु इहाँ हइ कोऊ
माल्यवंत गृह गयेउ बहोरी ❀ कहइ बिभीषन पुनि कर जोरी

रावण ने कहा—ये दोनों मूर्ख शत्रु की महिमा बखान रहे हैं। कोई यहाँ है? इन्हें दूर करो न? तब माल्यवन्त तो घर लौट गया और विभीषण फिर हाथ जोड़कर कहने लगा—

सुमति कुमति सबके उर रहहीं ❀ नाथ पुरान निगम अस कहहीं
जहाँ सुमति तहँ सम्पति नाना ❀ जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना

हे नाथ! पुराण और वेद ऐसा कहते हैं कि सबके हृदय में सुबुद्धि और कुबुद्धि रहती हैं। जहाँ सुबुद्धि रहती है, वहाँ अनेकों प्रकार के ऐश्वर्य रहते हैं और जहाँ कुबुद्धि रहती है, वहाँ के परिणाम में विपत्ति रहती है।

---

१. महिमा।

तव उर कुमति बसी बिपरीता ❀ हित अनहित मानहु रिपु प्रीता
कालराति निसिचर कुल केरी ❀ तेहि सीता पर प्रीति घनेरी

आपके हृदय में उलटी बुद्धि आ बसी है। आप हित को अहित और शत्रु को मित्र मान रहे हैं। जो राक्षस-कुल के लिये काल-रात्रि के समान है, उस सीता पर आपकी बड़ी प्रीति है।

दो॰ तात चरन गहि माँगउँ राखहु मोर दुलार।
सीता देहु राम कहुँ अहित न होइ तुम्हार ॥४०॥

हे तात! मैं पैर पकड़कर आपसे भीख माँगता हूँ, कि आप मेरा दुलार रखिये, मुझ बालक के आग्रह को स्वीकार कीजिये। सीता रामजी को लौटा दीजिये, जिससे आपका अहित न हो।

बुध पुरान श्रुति संमत बानी ❀ कही बिभीषन नीति बखानी
सुनत दसानन उठा रिसाई ❀ खल तोहि निकट मृत्यु अब आई

विभीषण ने पंडितों, पुराणों और वेदों से समर्थन किये हुए वचनों में नीति बखान कर कही। सुनते ही रावण क्रुद्ध हो उठा और उसने कहा—दुष्ट! मृत्यु अब तेरे निकट आ गई है।

जियसि सदा सठ मोर जिआवा ❀ रिपु कर पच्छ मूढ़ तोहि भावा
कहसि न खल अस को जग माहीं ❀ भुजबल जाहि जिता मैं नाहीं

रे मूर्ख! मेरा ही जिलाया हुआ तो तू सदा जीता है। मूर्ख! तुझे शत्रु का पक्ष प्रिय लग रहा है? अरे दुष्ट! बता तो सही कि जगत् में ऐसा कौन है, जिसे मैंने अपनी भुजाओं के बल से न जीता हो?

मम पुर बसि तपसिन्ह पर प्रीती ❀ सठ मिलु जाइ तिन्हहिं कहु नीती
अस कहि कीन्हेसि चरन प्रहारा ❀ अनुज गहे पद बारहिं बारा

मेरे ही नगर में बसकर तपस्वियों पर प्रेम करता है? मूर्ख! उन्हीं से जाकर मिल और उन्हीं को नीति बता। ऐसा कहकर रावण ने उसे लात मारी। पर छोटे भाई विभीषण ने बार-बार उसके चरण ही पकड़े।

उमा संत कइ इहइ बड़ाई ❀ मंद करत जो करइ भलाई
तुम्ह पितु सरिस भलेहि मोहि मारा ❀ राम भजें हित नाथ तुम्हारा
सचिव संग लै नभ पथ गयेऊ ❀ सबहिं सुनाइ कहत अस भयेऊ

शिवजी कहते हैं—हे उमा! संत की बड़ाई इसी में है कि उनका कोई अप्रिय भी करे तो वे उसकी भलाई ही करते हैं। विभीषण ने कहा—आप तो पिता के समान हैं, मुझे मारा सो अच्छा ही किया। पर हे नाथ! राम को भजने ही में आपका कल्याण है। विभीषण अपने मन्त्रियों को साथ लेकर आकाश-मार्ग में गया और सबको सुनाकर वह ऐसा कहने लगा—

दो०— राम सत्य संकल्प प्रभु सभा काल बस तोरि।
मैं रघुबीर सरन अब जाउँ देहु जनि खोरि[1] ॥४१॥

रामजी सच्ची प्रतिज्ञा करने वाले प्रभु हैं और हे रावण! आपकी सभा काल के वश है। अतः मैं अब रामजी की शरण जाता हूँ। मुझे दोष न देना।

अस कहि चला बिभीषन जबहीं ❀ आयू हीन भए सब तबहीं
साधु अवग्या तुरत भवानी ❀ कर कल्यान अखिल[2] कै हानी

ऐसा कहकर विभीषण जैसे ही चला, वैसे ही सब आयुहीन हो गये (उनकी मृत्यु निश्चित हो गई)। शिवजी कहते हैं—हे पार्वती! सत्पुरुष का अपमान तुरन्त ही सम्पूर्ण कल्याण की हानि कर देता है।

रावन जबहिं बिभीषनु त्यागा ❀ भयेउ बिभव बिनु तबहिं अभागा
चलेउ हरषि रघुनायक पाहीं ❀ करत मनोरथ बहु मन माहीं

रावण ने जिस क्षण विभीषण को त्यागा, उसी क्षण वह अभागा ऐश्वर्य से रहित हो गया। विभीषण हर्षित होकर मन में बहुत-सी कामनायें करता हुआ राम के पास चला।

देखिहउँ जाइ चरन जलजाता[3] ❀ अरुन मृदुल सेवक सुखदाता
जे पद परसि तरी रिषिनारी[4] ❀ दंडक कानन पावनकारी

वह मन में सोचता जाता था कि आज जाकर रामजी के लाल, कोमल और सेवकों को सुख देने वाले चरण-कमलों के दर्शन करूँगा। जिन चरणों को छूकर अहल्या तर गई और जो चरण दंडक वन को पवित्र करने वाले हैं,

जे पद जनकसुताँ उर लाए ❀ कपट कुरङ्ग सङ्ग धर[5] धाए
हर उर सर सरोज पद जेई ❀ अहोभाग्य मैं देखिहउँ तेई

जिन चरणों को सीता ने हृदय में लगा रक्खा है; जो चरण कपट-मृग के

१. दोष। २. समस्त, सम्पूर्ण। ३. कमल। ४. अहल्या। ५. पृथ्वी।

साथ पृथ्वी पर दौड़े थे, और जो चरण-कमल शिवजी के हृदय रूपी सरोवर में विराजते हैं, मेरा धन्य भाग्य है कि मैं उन्हीं को देखूँगा।

दो० जिन्ह पायन्ह के पादुकन्हि भरत रहे मन लाइ।
ते पद आज बिलोकिहउँ इन्ह नयनन्हि अब जाइ॥

जिन चरणों की खड़ाउओं में भरत ने अपना मन लगा रक्खा है, अहा! आज उन्हीं चरणों को मैं इन आँखों से देखूँगा।

एहि बिधि करत सप्रेम बिचारा ❀ आयेउ सपदि सिंधु एहि पारा
कपिन्ह बिभीषन आवत देखा ❀ जाना कोउ रिपुदूत बिसेषा

इस प्रकार प्रेम-सहित विचार करते हुये वह शीघ्र ही समुद्र के इस पार आ गया। बानरों ने विभीषण को आते देखा; उन्होंने समझा कि यह शत्रु का कोई खास दूत है।

ताहि राखि कपीस पहिं आए ❀ समाचार सब ताहि सुनाए
कह सुग्रीवँ सुनहु रघुराई ❀ आवा मिलन दसानन भाई

फिर उसे (पहरे पर) ठहराकर वे सुग्रीव के पास आये और उन्होंने उसे सब समाचार कह सुनाया। सुग्रीव ने कहा—हे रामजी! सुनिये, रावण का भाई आपसे मिलने आया है।

कह प्रभु सखा बूझिए काहा ❀ कहइ कपीस सुनहु नरनाहा
जानि न जाइ निसाचर माया ❀ कामरूप केहि कारन आया

प्रभु ने कहा—हे मित्र! तुम्हारी क्या राय है? तुम क्या समझते हो? सुग्रीव ने कहा—हे महाराज! सुनिये, राक्षसों की माया का पता नहीं चलता। इच्छानुसार रूप बदलने वाला यह न जाने क्यों आया है।

भेद हमार लेन सठ आवा ❀ राखिअ बाँधि मोहि अस भावा
सखा नीति तुम्ह नीकि बिचारी ❀ मम पन सरनागत भय हारी
सुनि प्रभु बचन हरष हनुमाना ❀ सरनागत बच्छल भगवाना

मुझे तो ऐसा लग रहा है कि यह मूर्ख हमारा भेद लेने आया है। इसे बाँध रखना चाहिये। रामजी ने कहा—हे सखा! तुमने अच्छी नीति का विचार किया है, पर मेरी तो प्रतिज्ञा शरण में आये हुये का भय दूर करना है। प्रभु के वचन सुनकर हनुमान हर्षित हुये कि भगवान् शरणागतवत्सल हैं।

दो०— सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।
ते नर पाँवर पापमय तिन्हहिं बिलोकत हानि ।४३।

जो मनुष्य अपने अहित का अनुमान करके शरण में आये हुये का त्याग कर देते हैं, वे अधम हैं, पाप से पूर्ण हैं, उन्हें देखने में हानि है।

कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू ❀ आए सरन तजउँ नहिं ताहू
सनमुख होइ जीव मोहिं जबहीं ❀ जनम कोटि अघ नासहिं तबहीं

रामजी ने कहा—जिसे करोड़ों ब्राह्मणों के मारने की हत्या लगी हो, शरण में आने पर मैं उसे भी नहीं त्यागता। जीव ज्यों ही मेरे सन्मुख होता है, त्यों ही उसके करोड़ों जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं।

पापवंत कर सहज सुभाऊ ❀ भजनु मोर तेहि भाव न काऊ
जौं पै दुष्ट हृदय सोइ होई ❀ मोरे सनमुख आव कि सोई

पापी का यह सहज स्वभाव होता है कि मेरा भजन उसे कभी प्रिय नहीं लगता और यदि वह (रावण का भाई) दुष्ट हृदय वाला होता तो क्या वह मेरे सम्मुख आ सकता था ?

निर्मल मन जन सो मोहि पावा ❀ मोहि कपट छल छिद्र न भावा
भेद लेन पठवा दससीसा ❀ तबहुँ न कछु भय हानि कपीसा

जो मनुष्य निर्मल मन का होता है, वही मुझे पाता है। मुझे कपट और छल-छिद्र प्रिय नहीं लगते। यदि रावण ने उसे हमारा भेद लेने को भेजा है, तब भी हे सुग्रीव ! अपने को कोई भय या हानि नहीं है।

जग महुँ सखा निसाचर जेते ❀ लछिमनु हनइ निमिष महुँ तेते
जौं सभीत आवा सरनाई ❀ रखिहउँ ताहि प्रान की नाईं

हे सखा ! जगत् में जितने भी राक्षस हैं, उन सबको लक्ष्मण क्षण-भर में मार सकते हैं। और यदि वह डर के मारे शरण में आया है तो मैं उसे प्राणों की तरह रक्खूँगा।

दो०— उभय भाँति तेहि आनहु हँसि कह कृपानिकेत।
जय कृपाल कहि कपि चले अंगद हनू समेत ॥४४

कृपा के धाम राम ने हँसकर कहा—दोनों ही दशा में उसे ले आओ।

यह सुनकर अंगद और हनुमान-सहित सुग्रीव 'कृपालु राम की जय हो' कहते हुये चले।

सादर तेहि आगें करि बानर ❀ चले जहाँ रघुपति करुनाकर
दूरिहि तें देखे दोउ भ्राता ❀ नयनानंद दान के दाता

विभीषण को आदर-सहित आगे करके बानर वहाँ चले, जहाँ करुणा की खान रामजी थे। नेत्रों को आनन्द का दान देने वाले दोनों भाइयों को विभीषण ने दूर ही से देखा।

बहुरि राम छबि धाम बिलोकी ❀ रहेउ ठठुकि एकटक पल[1] रोकी
भुज प्रलंब कंजारुन लोचन ❀ स्यामल गात प्रनत[2] भय मोचन

फिर शोभा के धाम को देखकर वह पलक भाँजना रोककर ठिठककर एकटक देखता ही रहा। रामजी की लम्बी भुजायें, लाल कमल के समान नेत्र, शरणागतों के भय को दूर करने वाला श्याम शरीर,

सिंहकंध आयत उर सोहा ❀ आनन अमित मदन मन मोहा
नयन नीर पुलकित अति गाता ❀ मन धरि धीर कही मृदु बाता

सिंह के समान चौड़ा कंधा, विशाल वक्षःस्थल और असंख्य कामदेवों के मन को मोहने वाला मुख है। विभीषण ने नेत्रों में जल भरकर, अत्यन्त पुलकित शरीर से, मन में धीरज धरकर कोमल वचन कहे—

नाथ दसानन कर मैं भ्राता ❀ निसिचर बंस जनम सुरत्राता
सहज पाप प्रिय तामस देहा ❀ जथा उलूकहिं तम पर नेहा

हे नाथ! मैं रावण का भाई हूँ। हे देवताओं के रक्षक! मेरा जन्म राक्षस-कुल में हुआ है। स्वभाव ही से पाप जिसे प्रिय हैं, ऐसा तामसी मेरा शरीर है, जैसे उल्लू को अन्धकार पर सहज स्नेह होता है।

दो॰ श्रवन सुजसु सुनि आयेउँ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर ॥४५

कानों से आपकी सत्कीर्ति सुनकर मैं आया हूँ कि आप (प्रभु) संसार के दुःखों को नष्ट करने वाले हैं। हे दुखियों के दुख को दूर करने वाले और शरण में आये हुये को सुख देने वाले रामजी! मेरी रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये।

---

१. पलक। २. शरणागत।

असि कहि करत दंडवत देखा ❀ तुरत उठे प्रभु हरष बिसेषा
दीन बचन सुनि प्रभु मन भावा ❀ भुज बिसाल गहि हृदयँ लगावा

प्रभु ने उन्हें ऐसा कहकर दंडवत् करते हुये देखा, तब वे अत्यन्त हर्षित होकर उठे। विभीषण के दीन वचन सुनकर रामजी के मन को बहुत ही प्रिय लगे। उन्होंने अपनी विशाल भुजाओं से उसे पकड़कर हृदय से लगा लिया।

अनुज सहित मिलि ढिग[1] बैठारी ❀ बोले बचन भगत भय हारी
कहु लंकेस सहित परिवारा ❀ कुसल कुठाहर[2] बास तुम्हारा

छोटे भाई लछमण-सहित गले मिलकर उसे राम ने अपने पास बैठाया। फिर भक्तों के भय को हरने वाले रामजी उससे बोले—कहो लङ्कापति ! परिवार-सहित कुशल से तो हो ? तुम्हारा निवास तो बड़े ही बुरे स्थान में है।

खल मंडली बसहु दिनु राती ❀ सखा धरम निबहइ केहि भाँती
मैं जानउँ तुम्हारि सब रीती ❀ अति नय निपुन न भाव अनीती

दुष्टों की मंडली में दिन-रात बसते हो, हे सखे! तुम्हारा धर्म कैसे निभता है ? मैं तुम्हारी सब रीति (आचार-व्यवहार) जानता हूँ। तुम बड़े ही नीति-कुशल हो; तुम्हें अनीति अच्छी नहीं लगती।

बरु भल बास नरक कर ताता ❀ दुष्ट संग जनि देइ बिधाता
अब पद देखि कुसल रघुराया ❀ जौं तुम्ह कीन्ह जानि जन दाया

हे तात ! नरक में बसना बल्कि अच्छा है, पर ब्रह्मा दुष्ट का साथ कभी न दें। विभीषण ने कहा—हे रामजी ! आपके चरणों को देखकर अब कुशल से हूँ, जो आपने अपना सेवक जानकर मुझ पर दया की है। [अनुज्ञा अलंकार]

दो०— तब लगि कुसल न जीव कहुँ सपनेहुँ मन बिश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुँ सोक धाम तजि काम॥

तब तक जीव की कुशल नहीं और न स्वप्न में भी मन को शान्ति है, जब तक शोक के घर काम (विषय-वासना) को छोड़कर जीव रामजी को नहीं भजता।

तब लगि हृदय बसत खल नाना ❀ लोभ मोह मत्सर मद माना
जब लगि उर न बसत रघुनाथा ❀ धरें चाप सायक कटि भाथा[3]

१. पास। २. बुरा स्थान। ३. तरकस।

हृदय में लोभ, मोह, मत्सर, मद और मान आदि अनेकों दुष्ट तभी तक बसते हैं, जब तक धनुष-बाण धारण किये हुये और कमर में तरकस बाँधे हुये रामजी हृदय में नहीं बसते।

ममता तरुन[1] तमी[2] अँधियारी ❀ राग द्वेष उलूक सुखकारी
तब लगि बसत जीव मन माहीं ❀ जब लगि प्रभु प्रताप रवि नाहीं

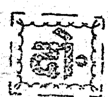
ममता-पूर्ण अँधेरी रात्रि है, जो राग-द्वेषरूपी उल्लुओं को सुख देने वाली है। वह जीव के मन में तभी तक बसती है, जब तक आपके प्रताप का सूर्य नहीं उदित होता।

अब मैं कुसल मिटे भय भारे ❀ देखि राम पद कमल तुम्हारे
तुम्ह कृपाल जा पर अनुकूला ❀ ताहि न ब्याप त्रिबिध भव सूला

हे रामजी! आपके चरण-कमलों के दर्शन करके अब मैं कुशल से हूँ। मेरे भारी भय मिट गये। हे कृपालु! आप जिस पर अनुकूल हों, उसे दैहिक, दैविक और भौतिक, ये तीनों प्रकार के भव-शूल नहीं व्यापते।

मैं निसिचर अति अधम सुभाऊ ❀ सुभ आचरनु कीन्ह नहिं काऊ
जासु रूप मुनि ध्यान न आवा ❀ तेहि प्रभु हरषि हृदयँ मोहि लावा

मैं राक्षस हूँ। अत्यन्त नीच स्वभाव का हूँ। मैंने कभी शुभ आचरण नहीं किया। जिसका रूप मुनियों के भी ध्यान में नहीं आता, उस प्रभु ने स्वयं हर्षित होकर मुझे हृदय से लगा लिया।



अहोभाग्य मम अमित अति राम कृपा सुख पुंज।
देखेउँ नयन बिरंचि सिव सेव्य[3] जुगल पद कंज॥

हे कृपा और सुख की राशि रामजी! मेरा अत्यन्त असीम सौभाग्य है, जो मैंने ब्रह्मा और शिव से सेवित आपके युगल चरणों को अपनी आँखों से देखा।

सुनहु सखा निज कहउँ सुभाऊ ❀ जान भुसुंडि संभु गिरिजाऊ
जौं नर होइ चराचर द्रोही ❀ आवै सभय सरन तकि मोही

रामजी कहने लगे—हे सखे! सुनो। मैं तुमको अपने स्वभाव की बात कहता हूँ। उसे काकभुशुंडि, शिवजी और पार्वती भी जानती हैं। कोई व्यक्ति सम्पूर्ण जड़-चेतनमय जगत् का द्रोही क्यों न हो, यदि वह भी भयभीत होकर मेरी शरण देखकर आवे—

---

१. घोर। २. रात्रि। ३. सेवित।

तजि मद मोह कपट छल नाना ❀ करउँ सद्य[1] तेहि साधु समाना
जननी जनक बंधु सुत दारा ❀ तनु धनु भवन सुहृद परिवारा

और मद, मोह तथा नाना प्रकार के छल-कपट छोड़ दे, तो मैं उसे तत्काल सत्पुरुष के समान कर देता हूँ। माता, पिता, भाई, पुत्र, स्त्री, शरीर, धन, घर, मित्र और परिवार—

सब कै ममता ताग बटोरी ❀ मम पद मनहिं बाँध बरि[2] डोरी
समदरसी इच्छा कछु नाहीं ❀ हरष सोक भय नहिं मन माहीं

इन सबके ममतारूपी तागों को एकत्र करके और उन सबकी एक डोरी बटकर उससे जो मेरे पैरों से अपने मन को बाँध लेता है, जो समदर्शी है, जिसे कुछ इच्छा नहीं है, जिसके मन में हर्ष, शोक और भय नहीं है—

अस सज्जन मम उर बस कैसें ❀ लोभी हृदयँ बसइ धन जैसें
तुम्ह सारिखे संत प्रिय मोरें ❀ धरउँ देह नहिं आन निहोरें

ऐसा सज्जन मेरे हृदय में किस प्रकार बसता है, जैसे लोभी के हृदय में धन। तुम्हारे समान संत ही मुझे प्रिय हैं। मैं और किसी के लिये देह नहीं धरता।

दो० सगुन उपासक परहित निरत नीति दृढ़ नेम।
ते नर प्रान समान मम जिन्ह के द्विज पद प्रेम ॥४८॥

जो मनुष्य सगुण (साकार) भगवान् के उपासक हैं, जो दूसरों के हित में लगे रहते हैं, नीति और नियमों के पालन में जो दृढ़ हैं और जिन्हें ब्राह्मणों के चरणों में प्रेम है, वे मुझे प्राणों के समान हैं।

सुनु लंकेस सकल गुन तोरें ❀ ताते तुम्ह अतिसय प्रिय मोरें
राम बचन सुनि बानर जूथा ❀ सकल कहहिं जय कृपा बरूथा

हे लंकापति! सुनो। तुम में (ऊपर कहे हुये) सब गुण हैं, इससे तुम मुझे अत्यन्त प्रिय हो। रामजी के वचन सुनकर सब बानरों के समूह कहने लगे—कृपा के समूह रामजी की जय हो!

सुनत बिभीषन प्रभु कै बानी ❀ नहिं अघात स्रवनामृत जानी
पद अंबुज[3] गहि बारहिं बारा ❀ हृदयँ समात न प्रेमु अपारा

१. तत्काल। २. बटकर। ३. कमल।

रामजी की वाणी सुनकर, उसे कानों के लिये अमृत समान जानकर विभीषण अघाता नहीं था। वह बार-बार रामजी के चरण-कमलों को पकड़ता था। अपार प्रेम उसके हृदय में समाता ही नहीं था।

सुनहु देव सचराचर स्वामी ❀ प्रनत पाल उर अंतर जामी
उर कछु प्रथम बासना रही ❀ प्रभु पद प्रीति सरित[1] सो बही

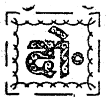
विभीषण ने कहा—हे देव! हे चराचर जगत् के स्वामी! शरणागत के रक्षक! सब के हृदय के भीतर की जानने वाले! सुनिये। पहले मेरे हृदय में कुछ वासना थी, वह प्रभु के चरणों की प्रीतिरूपी नदी में बह गई।

अब कृपाल निज भगत पावनी[2] ❀ देहु सदा सिव मन भावनी
एवमस्तु कहि प्रभु रनधीरा ❀ माँगा तुरत सिंधु कर नीरा

हे कृपालु! अब अपनी पवित्र भक्ति, जो शिव के मन को सदैव प्रिय लगती है, मुझे दीजिये। रणधीर रामजी ने 'ऐसा ही हो' कहकर तुरन्त ही समुद्र का जल माँगा।

जदपि सखा तव इच्छा नाहीं ❀ मोर दरसु अमोघ जग माहीं
अस कहि राम तिलक तेहि सारा[3] ❀ सुमन बृष्टि नभ भई अपारा

रामजी ने कहा—हे सखा! यद्यपि तुम्हारी इच्छा नहीं है, पर जगत् में मेरा दर्शन निष्फल नहीं जाता। ऐसा कहकर रामजी ने उसको राजतिलक कर दिया। आकाश से फूलों की अपार वर्षा हुई।



रावन क्रोध अनल निज स्वास समीर प्रचंड।
जरत बिभीषनु राखेउ दीन्हेउ राजु अखंड॥४९ (क)

रावण के क्रोधरूपी अग्नि में, जो अपनी (विभीषण की) ही साँसरूपी वायु से प्रचण्ड हो रही थी, जलते हुये विभीषण को रामजी ने बचा लिया और उसे अखण्ड राज्य दिया।

जो संपति सिव रावनहिं दीन्हि दिएँ दस माथ।
सोइ संपदा बिभीषनहिं सकुचि दीन्हि रघुनाथ।४९ (ख)

जिस संपत्ति को शिवजी ने रावण को दसों सिरों की बलि देने पर दी थी, वही संपदा विभीषण को रामजी ने बहुत सकुचते हुये दी। [व्यतिरेक अलंकार]

---

१. नदी। २. पवित्र। ३. किया।

अस प्रभु छाँड़ि भजहिं जे आना ❀ ते नर पसु बिनु पूँछ बिषाना
निज जन जानि ताहि अपनावा ❀ प्रभु सुभाव कपि कुल मन भावा

ऐसे प्रभु को छोड़कर जो दूसरे को भजते हैं, वे मनुष्य बिना पूँछ और सींग के पशु हैं। विभीषण को अपना सेवक जानकर रामजी ने उसे अपना लिया। प्रभु का यह स्वभाव बानर-कुल के मन को बहुत प्रिय लगा।

पुनि सर्बग्य सर्ब उर बासी ❀ सर्बरूप सब रहित उदासी
बोले बचन नीति प्रतिपालक ❀ कारन मनुज दनुज कुल घालक

फिर सब-कुछ जानने वाले, सबके हृदय में बसने वाले, सर्वरूप, सब से रहित, उदासीन, नीति की रक्षा करने वाले, कारण-वश मनुष्य-रूप और राक्षसों के कुल का नाश करने वाले रामजी बोले—

सुनु कपीस लंकापति बीरा ❀ केहि बिधि तरिअ जलधि गंभीरा
संकुल मकर उरग झष जाती ❀ अति अगाध दुस्तर सब भाँती

हे वीर बानरराज सुग्रीव ! हे लंकेश (विभीषण) सुनो। इस गहरे समुद्र को किस प्रकार पार किया जाय ? अनेक जातियों के मगर, सर्प और मत्स्यों से भरा हुआ यह अथाह समुद्र पार करने में सब प्रकार से कठिन है।

कह लंकेस सुनहु रघुनायक ❀ कोटि सिंधु सोषक[1] तव सायक[2]
जद्यपि तदपि नीति असि गाई ❀ बिनय करिअ सागर सन जाई

विभीषण ने कहा—हे रघुनाथजी ! सुनिये, यद्यपि आपका एक बाण ही करोड़ों समुद्रों को सोख सकता है, तो भी ऐसी नीति कही गई है कि पहले जाकर समुद्र से प्रार्थना की जाय।

दो०— प्रभु तुम्हार कुलगुर जलधि कहिहि उपाय बिचारि।
बिनु प्रयास[3] सागर तरिहि सकल भालु कपि धारि[4]॥

हे प्रभु ! समुद्र आपके कुलगुरु हैं। वे ही विचार करके उपाय कहेंगे। तब भालू और वानरों की सारी सेना सहज ही में समुद्र के पार उतर जायगी।

सखा कही तुम्ह नीकि उपाई ❀ करिअ दैव जौं होइ सहाई
मंत्र न यह लछिमन मन भावा ❀ राम बचन सुनि अति दुख पावा

रामजी ने कहा—हे सखा ! तुमने अच्छा उपाय बताया है। यही किया

१. सोखने वाला। २. बाण। ३. प्रयत्न, परिश्रम। ४. सेना।

जाय, यदि दैव सहायक हों। यह सलाह लक्ष्मण को पसन्द नहीं आई। और फिर रामजी का वचन भी वैसा ही सुना तो उन्होंने बड़ा दुःख पाया।

नाथ दैव कर कवन भरोसा ❀ सोखिअ सिंधु करिअ मन रोसा
कादर मन कहुँ एक अधारा ❀ दैव दैव आलसी पुकारा

लक्ष्मण ने कहा—हे नाथ ! भाग्य का क्या भरोसा ? मन में क्रोध कीजिये और समुद्र को सुखा डालिये। यह दैव तो कायर के मन के लिये एक आधार है। आलसी लोग ही दैव-दैव पुकारा करते हैं।

सुनत बिहँसि बोले रघुबीरा ❀ ऐसहिं करब धरहु मन धीरा
अस कहि प्रभु अनुजहि समुझाई ❀ सिंधु समीप गए रघुराई

यह सुनते ही रामजी ने हँस कर कहा—ऐसा ही करूँगा, मन में धीरज रक्खो। ऐसा कहकर छोटे भाई को समझाकर रामचन्द्रजी समुद्र के पास गये।

प्रथम प्रनाम कीन्ह सिरु नाई ❀ बैठे पुनि तट दर्भ डसाई
जबहिं बिभीषन प्रभु पहिं आये ❀ पाछें रावन दूत पठाये

उन्होंने पहले सिर नवाकर समुद्र को प्रणाम किया, फिर उसके तट पर कुश बिछाकर वे बैठ गये। इधर ज्योंही विभीषण रामजी के पास आया, त्योंही उसके पीछे रावण ने दूत भेजे।

दो० **सकल चरित तिन्ह देखे धरें कपट कपि देह।**
प्रभु गुन हृदयँ सराहहिं सरनागत पर नेह ॥५४॥

वानर का कपट-वेष धरकर उन्होंने वहाँ का सब हाल-चाल देखा। वे अपने हृदय में प्रभु रामजी के गुणों की और शरणागत पर उनके स्नेह की सराहना करने लगे।

प्रगट बखानहिं राम सुभाऊ ❀ अति सप्रेम गा बिसरि दुराऊ
रिपु के दूत कपिन्ह तब जाने ❀ सकल बाँधि कपीस पहिं आने

वे प्रकटरूप में तो रामजी के स्वभाव की बड़ाई करते थे। पर अत्यन्त प्रेम के कारण उनको अपना कपट-वेष भूल गया। तब बानरों ने जाना कि वे शत्रु के दूत हैं और उन्हें बाँधकर वे सुग्रीव के पास ले आये।

कह सुग्रीव सुनहु सब बानर ❀ अंग भंग करि पठवहु निसिचर
सुनि सुग्रीव बचन कपि धाये ❀ बाँधि कटक चहुँ पास फिराये

सुग्रीव ने कहा—हे बानरो ! सुनो, इन राक्षसों के अंग-भंग करके तब इन्हें जाने दो। सुग्रीव के वचन सुनकर बानर दौड़े। उन्होंने दूतों को बाँधकर उन्हें सेना के चारों ओर घुमाया।

बहु प्रकार मारन कपि लागे ❀ दीन पुकारत तदपि न त्यागे
जो हमार हर नासा काना ❀ तेहि कोसलाधीस कै आना[1]

बानर उन्हें बहुत तरह से मारने-पीटने लगे। वे चिरौरी करने लगे, तो भी बानरों ने उन्हें नहीं छोड़ा। दूतों ने कहा—जो हमारे नाक-कान काटे, उसे अयोध्यापति रामजी की शपथ है।

सुनि लछिमन सब निकट बोलाये ❀ दया लागि हँसि तुरत छोड़ाये
रावन कर दीन्हेहु यह पाती ❀ लछिमन बचन बाँचु कुलघाती

यह सुनकर लक्ष्मण ने सबको अपने पास बुलाया। उन्हें दया लगी, हँस-कर उन्होंने राक्षसों को तुरन्त ही छुड़ा दिया। लक्ष्मण ने उनसे कहा—यह पत्र रावण के हाथ में देकर कहना—हे वंश-नाशक ! लो, लक्ष्मण का यह संदेश बाँचो।

दो० **कहेहु मुखागर[2] मूढ़ सन मम संदेसु उदार।**
सीता देइ मिलहु न त आवा काल तुम्हार ॥५२॥

फिर उस मूर्ख से तुम ज़बानी भी यह मेरा कृपा से भरा हुआ संदेश कहना कि सीता को देकर रामजी से मिलो, नहीं तो तुम्हारा काल आ गया है।

तुरत नाइ लछिमन पद माथा ❀ चले दूत बरनत गुन गाथा
कहत राम जसु लंका आये ❀ रावन चरन सीस तिन्ह नाये

लक्ष्मण के चरणों में सिर नवाकर और रामजी के गुणों की कथा कहते हुये दूत तुरन्त ही चल दिये। रामजी का यश बखानते हुये वे लंका में आये और उन्होंने रावण के चरणों में सिर नवाया।

बिहँसि दसानन पूँछी बाता ❀ कहसि न सुक आपनि कुसलाता
पुनि कहु खबरि बिभीषन केरी ❀ जाहि मृत्यु आई अति नेरी[3]

दशमुख रावण ने हँसकर उनसे बात पूछी—अरे शुक ! अपनी कुशल बता न ? फिर विभीषण का हाल सुना, मृत्यु जिसके अत्यन्त निकट आ गई है।

---

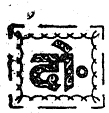
१. शपथ। २. ज़बानी। ३. निकट।

करत राज लंका सठ त्यागी ❀ होइहि जव कर कीट अभागी
पुनि कहु भालु कीस कटकाई ❀ कठिन काल प्रेरित चलि आई

उस मूर्ख ने राज्य करते हुये लंका को त्याग दिया। वह अभागा जौ का कीड़ा (घुन) बनेगा। फिर भालू और बानरों की सेना का हाल बता, जो कठिन काल की प्रेरणा से यहाँ चली आई है।

जिन्ह के जीवन कर रखवारा ❀ भयो मृदुल चित सिंधु बेचारा
कहु तपसिन्ह कै बात बहोरी ❀ जिन्ह के हृदयँ त्रास अति मोरी

और जिनके जीवन का रक्षक कोमल चित्त वाला बेचारा समुद्र बन गया है। फिर उन तपस्वियों की बात बता, जिनके हृदय में मेरा बड़ा आतंक है।


की भइ भेंट कि फिरि गये स्रवन सुजस सुनि मोर।
कहसि न रिपु दल तेज बल बहुत चकित चित तोर॥

उनसे तेरी मुलाकात हुई या कानों से वे मेरा सुयश सुनकर लौट गये? शत्रु सेना का तेज और बल बताता क्यों नहीं? तेरा चित्त बहुत भौंचक्का-सा हो रहा है।

नाथ कृपा करि पूँछेहु जैसें ❀ मानहु कहा क्रोध तजि तैसें
मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा ❀ जातहिं राम तिलक तेहि सारा

दूत ने कहा—हे नाथ! आपने जैसे कृपा करके पूछा है, वैसे ही क्रोध छोड़कर मेरा कहना मानिये भी। जब आपका छोटा भाई जाकर रामजी से मिला, तब पहुँचते ही रामजी ने उसे राजतिलक कर दिया।

रावन दूत हमहिं सुनि काना ❀ कपिन्ह बाँधि दीन्हें दुख नाना
स्रवन नासिका काटैं लागे ❀ राम सपथ दीन्हें हम त्यागे

हमें कानों से रावण का दूत सुनकर बानरों ने बाँधा और बहुत दुख दिये। वे हमारे नाक-कान काटने लगे; राम की शपथ दिलाई, तब उन्होंने हमें छोड़ा।

पूँछेहु नाथ राम कटकाई ❀ बदन कोटि सत बरनि न जाई
नाना बरन भालु कपि धारी ❀ बिकटानन बिसाल भयकारी

हे नाथ! आपने रामजी की सेना पूछी। सो वह तो सौ करोड़ मुखों से भी वर्णन नहीं की जा सकती। अनेकों रङ्ग-रूप के भालू और बानरों की सेना है, जो भयंकर मुँहवाले, विशाल शरीर वाले और भय उत्पन्न करने वाले हैं।

जेहिं पुर दहेउ हतेउ सुत तोरा ❀ सकल कपिन्ह महँ तेहि बलु थोरा
अमित नाम भट कठिन कराला ❀ अमित नाग[1] बल बिपुल बिसाला

जिसने लंकापुरी को जलाया और आपके पुत्र को मारा, सब बानरों में उसी का बल कम है। असंख्य नामों के बलिष्ठ और भयङ्कर योद्धा हैं। उनमें असंख्य हाथियों का बल है, और वे अत्यंत विशाल हैं।

दो॰ द्विबिद मयंद नील नल अंगद गद बिकटासि।
दधिमुख केहरि कुमुद गव जामवंत बलरासि ॥५४॥

द्विविद, मयन्द, नील, नल, अंगद, गद, विकटास्य, दधिमुख, केसरी, कुमुद, गव और बलशाली जाम्वन्त।

ए कपि सब सुग्रीव समाना ❀ इन्ह सम कोटिन्ह गनइ को नाना
राम कृपा अतुलित बल तिन्हहीं ❀ तृन समान त्रैलोकहिं गनहीं

ये सब बानर बल में सुग्रीव के समान हैं और इनके जैसे करोड़ों हैं। उन अनेकों को गिन ही कौन सकता है? रामजी की कृपा से उनमें अपार बल है। वे तीनों लोकों को तिनके के समान (तुच्छ) समझते हैं।

अस मैं स्रवन सुना दसकंधर ❀ पदुम अठारह जूथप बन्दर
नाथ कटक महँ सो कपि नाहीं ❀ जो न तुम्हहिं जीतै रन माहीं

हे दशग्रीव! मैंने कानों से ऐसा सुना है कि अठारह पद्म तो बानरों के सेनापति हैं। हे नाथ! उस सेना में ऐसा एक भी बानर नहीं, जो आपको रण में न जीत सके।

परम क्रोध मींजहिं सब हाथा ❀ आयसु पै न देहिं रघुनाथा
सोषहिं सिंधु सहित झष[2] ब्याला[3] ❀ पूरहिं न त भरि कुधर[4] बिसाला

वे सब के सब अत्यंत क्रोध से हाथ मींजते रहते हैं, पर रघुनाथजी उन्हें आज्ञा नहीं देते। (सब बानर ऐसा वचन कह रहे हैं कि) वे मत्स्य और साँपों-सहित समुद्र को सोख लेंगे। नहीं तो उसे बड़े-बड़े पर्वतों से भरकर पूर (पाट) देंगे।

मर्दि गर्द मिलवहिं दससीसा ❀ ऐसेइ बचन कहहिं सब कीसा
गर्जहिं तर्जहि सहज असंका ❀ मानहु ग्रसन चहत हहिं लंका

१. हाथी। २. मछली। ३. साँप। ४. पर्वत।

और रावण को भी मींज-माँजकर धूल में मिला देंगे। सब बानर ऐसे ही वचन कह रहे हैं। वे स्वभाव ही से निडर हैं। वे इस प्रकार गरजते और ललकारते हैं, मानो लंका को निगल ही जाना चाहते हैं।

दो० **सहज सूर कपि भालु सब पुनि सिर पर प्रभु राम।**
रावन काल कोटि कहुँ जीति सकहिं संग्राम॥

एक तो बानर-भालू स्वभाव ही से बड़े शूरवीर हैं, फिर उनके सिर पर (सहायक) प्रभु रामजी हैं। हे रावण! वे युद्ध में करोड़ों कालों को भी जीत सकते हैं।

राम तेज बल बुधि बिपुलाई ❀ सेष सहस सत सकहिं न गाई
सक सर एक सोषि सत सागर ❀ तव भ्रातहिं पूँछेउ नय नागर

रामजी के तेज, बल और बुद्धि की अधिकता को लाखों शेष भी नहीं गा सकते। वे एक ही बाण से सैंकड़ों समुद्रों को सोख सकते हैं। परन्तु नीति-निपुण रामजी ने आपके भाई से उपाय पूछा।

तासु बचन सुनि सागर पाहीं ❀ माँगत पंथ कृपा मन माहीं
सुनत बचन बिहँसा दससीसा ❀ जौं असि मति सहाय कृत कीसा

आपके भाई के वचन सुनकर वे (रामचन्द्रजी) समुद्र से राह माँग रहे हैं। उनके मन में (क्रोध नहीं) कृपा भरी है। दूत के वचन सुनते ही रावण हँसा और बोला—ऐसी बुद्धि है तभी तो बानरों को सहायक बनाया है।

सहज भीरु कर बचन दृढ़ाई ❀ सागर सन ठानी मचलाई
मूढ़ मृषा का करसि बड़ाई ❀ रिपु बल बुद्धि थाह मैं पाई

स्वभाव ही से डरपोक विभीषण के वचन को प्रमाण मानकर उन्होंने समुद्र से मचलना (सत्याग्रह) ठाना है। अरे मूर्ख! झूठी बड़ाई क्या करता है? मैंने शत्रु के बल और बुद्धि की थाह पा ली।

सचिव सभीत बिभीषन जाकें ❀ बिजय बिभूति कहाँ जग ताकें
सुनि खल बचन दूत रिसि बाढ़ी ❀ समय बिचारि पत्रिका काढ़ी

जिसका विभीषण जैसा डरपोक मन्त्री है, उसे जगत् में विजय और ऐश्वर्य कहाँ? दुष्ट रावण के वचन सुनकर दूत का क्रोध बढ़ आया। अवसर देखकर उसने लक्ष्मण की पत्रिका निकाली।

रामानुज दीन्ही यह पाती ❁ नाथ बँचाइ जुड़ावहु छाती
बिहँसि बाम कर लीन्ही रावन ❁ सचिव बोलि सठ लाग बँचावन

उसने कहा—राम के छोटे भाई लक्ष्मण ने यह पत्रिका दी है। हे नाथ! इसे बँचवा कर अपनी छाती ठंडी कीजिये। रावण ने हँसकर उसे बायें हाथ से लिया। फिर मन्त्री को बुलवाकर वह मूर्ख उसे बँचाने लगा।

दो॰ बातन्ह मनहिं रिझाइ सठ जनि घालसि कुल खीस।
राम बिरोध न उबरसि सरन बिष्णु अज ईस॥

पत्रिका में लिखा था—अरे मूर्ख! बातों में मन को फुसलाकर अपने कुल को नष्ट-भ्रष्ट न कर। रामजी से विरोध करके तू विष्णु, ब्रह्मा और शिव की शरण जाने पर भी नहीं बचेगा।

की तजि मान अनुज इव प्रभु पद पंकज भृङ्ग।
होहि कि राम सरानल खल कुलसहित पतंग॥

या तो अभिमान छोड़कर अपने छोटे भाई की तरह प्रभु के चरण-कमलों का भ्रमर बन जा। या हे दुष्ट! रामजी के बाणरूपी अग्नि में कुटुम्ब-सहित पतिंगा हो जा।

सुनत सभय मन मुख मुसुकाई ❁ कहत दसानन सबहिं सुनाई
भूमि परा कर गहत अकासा ❁ लघु तापस कर बाग बिलासा

पत्रिका सुनते ही रावण मन में तो डर गया, पर मुख पर मुसकराहट लाकर, सबको सुनाकर कहने लगा—जैसे कोई ज़मीन पर पड़ा हुआ हाथ से आकाश को पकड़ने की चेष्टा करता हो, वैसे ही यह उस छोटे तपस्वी का वाग्विलास (डींग मारना) है। [गूढ़ोत्तर अलंकार]

कह सुक नाथ सत्य सब बानी ❁ समुझहु छाँड़ि प्रकृति अभिमानी
सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा ❁ नाथ राम सन तजहु बिरोधा

शुक (दूत) कहने लगा—हे नाथ! अभिमानी स्वभाव को छोड़कर (इस पत्रिका की) सब बातों को सत्य समझिये। क्रोध छोड़कर मेरा वचन सुनिये। हे नाथ! रामजी से बैर छोड़ दीजिये।

अति कोमल रघुबीर सुभाऊ ❁ जद्यपि अखिल लोक कर राऊ
मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करही ❁ उर अपराध न एकउ धरही

यद्यपि रामजी समस्त लोकों के स्वामी हैं, पर उनका स्वभाव अत्यन्त ही कोमल है। मिलते ही प्रभु आप पर कृपा करेंगे और आपके एक भी अपराध को वे हृदय में नहीं रक्खेंगे।

जनक सुता रघुनाथहि दीजे ❀ एतना कहा मोर प्रभु कीजे
जब तेहिं कहा देन बैदेही ❀ चरन प्रहार कीन्ह सठ तेही

सीता रामजी को दे दीजिये। हे प्रभु! मेरा इतना कहना स्वीकार कीजिये। जब उसने सीता को देने के लिये कहा तब उस मूर्ख रावण ने उस दूत को लात मारी।

नाइ चरन सिरु चला सो तहाँ ❀ कृपासिंधु रघुनायक जहाँ
करि प्रनामु निज कथा सुनाई ❀ राम कृपाँ आपनि गति पाई

वह भी रावण के चरणों में सिर नवाकर वहाँ चला, जहाँ कृपा के समुद्र राम थे। प्रणाम करके उसने अपना हाल सुनाया और रामजी की कृपा से अपनी गति को प्राप्त हुआ।

रिषि अगस्ति कीं साप भवानी ❀ राछस भयेउ रहा मुनि ग्यानी
बंदि राम पद बारहिं बारा ❀ मुनि निज आश्रम कहुँ पगु धारा

शिवजी कहते हैं—हे भवानी! पहले वह एक ज्ञानी मुनि था, अगस्त्य ऋषि के शाप से वह राक्षस हो गया था। बार-बार रामजी के चरणों की वन्दना करके वह मुनि अपने आश्रम को चला गया।



बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति ॥५७॥

तीन दिन बीत गये, पर जड़ समुद्र विनय नहीं मानता। तब रामजी क्रोध करके बोले—बिना भय के प्रीति नहीं होती।

लछिमन बान सरासन आनू ❀ सोखौं बारिधि बिसिख कृसानू
सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती ❀ सहज कृपन सन सुन्दर नीती

हे लक्ष्मण! धनुष-बाण लाओ। मैं अग्नि-बाण से समुद्र को सोख डालूँ। मूर्ख से विनय, कुटिल से प्रीति, स्वभाव ही से कंजूस से सुन्दर नीति—

ममता रत सन ग्यान कहानी ❀ अति लोभी सन बिरति बखानी
क्रोधिहिं सम कामिहि हरि कथा ❀ ऊसर बीज बएँ फल जथा

माया-मोह में लिप्त से ज्ञान की कथा, अत्यन्त लोभी से वैराग्य का वर्णन, क्रोधी से शम (शान्ति) की बात और कामी से हरि की कथा, इनका वैसा ही फल होता है, जैसा ऊसर में बीज बोने से होता है।

अस कहि रघुपति चाप चढ़ावा ❀ यह मत लछिमन के मन भावा
संधानेउ प्रभु बिसिख कराला ❀ उठी उदधि उर अंतर ज्वाला

ऐसा कहकर रामजी ने धनुष चढ़ाया। यह मत लक्ष्मण के मन को बहुत पसन्द आया। प्रभु ने भयानक बाण संधान किया, जिससे समुद्र के हृदय के भीतर आग भभक उठी।

मकर उरग झष गन अकुलाने ❀ जरत जंतु जलनिधि जब जाने
कनक थार भरि मनि गन नाना ❀ बिप्र रूप आयउ तजि माना

मगर, साँप और मत्स्यगण व्याकुल हो गये। जब समुद्र ने अपने जीव-जन्तुओं को जलते हुये जाना, तब सोने के थाल में अनेक प्रकार की मणियों को भरकर, अभिमान छोड़कर, वह ब्राह्मण के रूप में आया।

दो०— काटेहिं पइ कदली फरै कोटि जतन कोउ सींच।
बिनय न मान खगेस सुनु डाँटेहि पइ नव नीच॥

काकभुशुन्डि कहते हैं—हे गरुड़! सुनिये, चाहे कोई करोड़ों उपाय करके सींचे, पर केला काटने ही पर फलता है। नीच विनय से नहीं मानता, वह तो डाटने ही पर झुकता है। [दृष्टान्त अलंकार]

सभय सिंधु गहि पद प्रभु केरे ❀ छमहु नाथ सब अवगुन मेरे
गगन समीर अनल जल धरनी ❀ इन्ह कइ नाथ सहज जड़ करनी

समुद्र भयभीत होकर, प्रभु के चरणों को पकड़कर, कहने लगा—हे नाथ! मेरे सब दोषों को क्षमा कीजिये। हे नाथ! आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी, इन सबकी करनी स्वभाव ही से जड़ है।

तब प्रेरित मायाँ उपजाए ❀ सृष्टि हेतु सब ग्रंथनि गाए
प्रभु आयसु जेहि कहँ जस अहई ❀ सो तेहि भाँति रहें सुख लहई

आपकी प्रेरणा से माया ने इन्हें सृष्टि के लिये उत्पन्न किया है, ऐसा सब ग्रन्थों ने गान किया है। जिसके लिये स्वामी की आज्ञा जैसी है, वह उसी प्रकार से रहने में सुख पाता है।

प्रभु भल कीन्ह मोहि सिख दीन्ही ❀ मरजादा पुनि तुम्हरिअ कीन्ही
ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी ❀ सकल ताड़ना के अधिकारी

प्रभु ने मुझे शिक्षा दी, यह अच्छा ही किया। किन्तु मर्यादा भी तो आप ही की बनाई हुई है। ढोल, गँवार, शूद्र, पशु और स्त्री, ये सब दण्ड के अधिकारी हैं।

प्रभु प्रताप मैं जाब सुखाई ❀ उतरिहि कटकु न मोरि बड़ाई
प्रभु अग्या अपेल श्रुति गाई ❀ करौं सो बेगि जो तुम्हहि सुहाई

प्रभु के प्रताप से मैं सूख जाऊँगा और सेना पार उतर जायगी, इसमें मेरी बड़ाई नहीं है। वेद ने प्रभु की आज्ञा को अपेल (जो टाली न जा सके) गाया है। अब आपको जो प्रिय लगे, मैं तुरन्त वही करूँ।



सुनत बिनीत बचन अति कह कृपाल मुसुकाइ।
जेहि बिधि उतरै कपि कटकु तात सो कहहु उपाइ॥

समुद्र के अत्यन्त नम्र वचन सुनकर कृपालु रामजी मुसकुराकर बोले—हे तात! जिस प्रकार बानरों की सेना पार उतर जाय, वह उपाय बताओ।

नाथ नील नल कपि दोउ भाई ❀ लरिकाईं रिषि आसिष पाई
तिन्ह कें परस किएँ गिरि भारे ❀ तरिहहिं जलधि प्रताप तुम्हारे

समुद्र ने कहा—हे नाथ! नील और नल दो बानर भाई हैं। लड़कपन में इन्होंने ऋषि से आशीर्वाद पाया था। इनके छूने से बड़े-बड़े भारी पहाड़ भी आपके प्रताप से समुद्र पर तैर जायँगे।

मैं पुनि उर धरि प्रभु प्रभुताई ❀ करिहउँ बल अनुमान सहाई
एहि बिधि नाथ पयोधि बँधाइअ ❀ जेहिं यह सुजसु लोक तिहुँ गाइअ

फिर मैं भी स्वामी की प्रभुता को हृदय में धरकर अपनी शक्ति के अनुसार सहायता करूँगा। हे नाथ! इस प्रकार समुद्र को बँधाइये, जिससे तीनों लोकों में आपका सुन्दर यश गाया जाय।

एहिं सर मम उत्तर तट बासी ❀ हतहु नाथ खल नर अघ रासी
सुनि कृपाल सागर मन पीरा ❀ तुरतहिं हरीं राम रनधीरा

इस बाण से मेरे उत्तर तट पर रहने वाले पाप की राशि दुष्ट मनुष्यों का वध कीजिये। कृपालु और रणधीर रामजी ने समुद्र के मन की पीड़ा सुनकर

उसे तुरन्त ही हर लिया। [अक्रमातिशयोक्ति अलंकार]

देखि राम बल पौरुष भारी ❀ हरषि पयोनिधि भयेउ सुखारी
सकल चरित कहि प्रभुहिं सुनावा ❀ चरन बंदि पाथोधि[1] सिधावा

रामजी का भारी बल और पौरुष देखकर समुद्र हर्षित होकर सुखी हो गया। उसने प्रभु को उन दुष्टों का सारा हाल कह सुनाया। फिर रामजी के चरणों की वन्दना करके समुद्र चला गया।

छंद—निज भवन गवनेउ सिंधु श्रीरघुपतिहि यह मत भायेऊ।
यह चरित कलि मल हर जथामति दास तुलसी गायेऊ॥
सुख भवन संसय समन दमन बिषाद रघुपति गुन गना।
तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत[2] सठ मना॥

समुद्र अपने घर चला गया। रामचन्द्रजी को उसकी सलाह प्रिय लगी। यह चरित्र कलियुग के पापों को हरने वाला है। इसे तुलसीदास ने अपनी बुद्धि के अनुसार गाया है। रामचन्द्रजी के गुणगण सुख के धाम, संदेह का नाश करने वाले और विषाद का दमन करने वाले हैं। अरे मूर्ख मन! तू संसार का सब आशा-भरोसा छोड़कर निरन्तर उन्हें गा और सुन।

दो०—सकल सुमङ्गल दायक रघुनायक गुन गान।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जलजान॥६०॥

रघुनाथजी के गुणों का गान सम्पूर्ण सुन्दर मंगलों का देने वाला है। जो इसे आदर-सहित सुनेंगे, वे बिना नौका ही के भव-सागर को उतर जायँगे।

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने
पञ्चमः सोपानः समाप्तः



१. समुद्र। २. निरन्तर।

श्रीगणेशायनमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

रामचरितमानस

लंका-काण्ड

श्लोकाः

रामं कामारिसेव्यं भवभयहरणं कालमत्तेभसिंहं
योगीन्द्रं ज्ञानगम्यं गुणनिधिमजितं निर्गुणं निर्विकारम्।
मायातीतं सुरेशं खलवधनिरतं ब्रह्मवृन्दैकदेवं
वन्दे कन्दावदातं सरसिजनयनं देवमुर्वीशरूपम् ॥ १ ॥

कामदेव के शत्रु शिवजी से सेवित, जन्म-मृत्यु के भय को हरने वाले, काल-रूपी मतवाले हाथी के लिये सिंह के समान, योगीश्वर, ज्ञान से प्राप्य, गुणों के भण्डार, अजित, निर्गुण, निर्विकार, माया से परे, देवताओं के स्वामी, दुष्टों के वध में लगे हुये, ब्राह्मण-समूह के एकमात्र देवता, मेघ के समान सुन्दर, कमल ऐसे नेत्र वाले, पृथ्वी-पति के रूप में परम देव रामजी की मैं वन्दना करता हूँ।

शङ्खेन्द्वाभमतीवसुन्दरतनुं शार्दूलचर्म्माम्बरं
कालव्यालकरालभूषणधरं गङ्गाशशाङ्कप्रियम्।
काशीशं कलिकल्मषौघशमनं कल्याणकल्पद्रुमं
नौमीड्यं गिरिजापतिं गुणनिधिं कन्दर्पहं शङ्करम् ॥२॥

शंख और चन्द्रमा के समान आभा के बहुत ही सुन्दर शरीर वाले, व्याघ्र-चर्म के वस्त्र वाले, भयानक काले साँपों का भूषण धारण करने वाले, गंगा और

चन्द्रमा से प्रीति रखने वाले, काशीपति, कलियुग के पापों के समूह का नाश करने वाले, कल्याण के कल्प-वृक्ष, पार्वती-पति, गुण-निधि और कामदेव को भस्म करने वाले शंकरजी को मैं नमस्कार करता हूँ।

यो ददाति सतां शम्भुः कैवल्यमपि दुर्लभम्।
खलानां दण्डकृद्योऽसौ शङ्करः शं तनोतु मे ॥ ३ ॥

जो शम्भु सत्पुरुषों को अत्यन्त दुर्लभ मुक्ति तक दे डालते हैं और जो दुष्टों को दंड देने वाले हैं, वे शंकरजी मेरे कल्याण का विस्तार करें।

दो०— **लव निमेष परमानु जुग बरष कलप सर चंड।**
भजसि न मन तेहि राम कहुँ काल जासु कोदंड ॥

हे मन! तू उन रामजी को क्यों नहीं भजता? काल जिनका धनुष है और लव, निमेष, परमाणु, युग, वर्ष और कल्प जिनके तीक्ष्ण बाण हैं। [समअभेद रूपक अलंकार]

सो०— **सिंधु बचन सुनि राम सचिव बोलि प्रभु अस कहेउ।**
अब बिलंबु केहि काम करहु सेतु[1] उतरै कटकु ॥

समुद्र के वचन सुनकर प्रभु रामजी ने मन्त्रियों को बुलाकर ऐसा कहा— अब देरी क्यों की जा रही है? सेतु तैयार करो, सेना उतरे।

सुनहु भानुकुल केतु जामवंत कर जोरि कह।
नाथ नाम तव सेतु नर चढ़ि भव सागर तरहिं ॥

जाम्बवंत ने हाथ जोड़कर कहा—हे सूर्य-वंश के ध्वजा-स्वरूप रामजी! सुनिये, हे नाथ! आपका नाम सेतु ही है, जिस पर चढ़ कर मनुष्य संसार-सागर से पार होते हैं।

यहि लघु जलधि तरत कति बारा[2] ❀ अस सुनि पुनि कह पवनकुमारा
प्रभु प्रताप बड़वानल भारी ❀ सोखेउ प्रथम पयोनिधि बारी

इस छोटे से समुद्र को पार करने में कितनी देर लगेगी? ऐसा सुनकर फिर पवन-पुत्र हनुमान ने कहा—प्रभु का प्रताप भारी बड़वानल है, इसने पहले समुद्र का पानी सोख लिया था। [अत्यन्तातिशयोक्ति अलंकार]

---

१. पुल। २. देर।

तव रिपु नारि रुदन जल धारा ❀ भरेउ बहोरि भयेउ तेहिं खारा
सुनि अति उक्ति पवनसुत केरी ❀ हरषे कपि रघुपति तन हेरी[1]

आपके शत्रुओं की स्त्रियों के आँसुओं की धारा से यह फिर भर गया और उसी से खारी भी हो गया। पवन-पुत्र हनुमान की यह अत्युक्ति सुनकर बानर रामजी की ओर देखकर हर्षित हो गये। [हेत्वापन्हुति अलंकार]

जामवन्त बोले दोउ भाई ❀ नल नीलहि सब कथा सुनाई
राम प्रताप सुमिरि मन माहीं ❀ करहु सेतु प्रयास कछु नाहीं

जाम्बवन्त ने नल-नील दोनों भाइयों को बुलाकर उन्हें सारी कथा कह सुनाई, और कहा—मन में रामजी के प्रताप को स्मरण करके सेतु तैयार करो, कुछ भी श्रम नहीं होगा।

बोलि लिए कपि निकर बहोरी ❀ सकल सुनहु बिनती कछु मोरी
राम चरन पंकज उर धरहू ❀ कौतुक एक भालु कपि करहू

फिर उन्होंने बानरों के समूह को बुलाकर कहा—आप सब मेरी थोड़ी-सी विनती सुनिये। राम के कमल ऐसे चरणों को अपने हृदय में धारण कर लीजिये और सब भालू और बानर मिलकर एक खेल कीजिये।

धावहु मरकट बिकट बरूथा ❀ आनहु बिटप गिरिन्ह के जूथा
सुनि कपि भालु चले करि हू हा ❀ जय रघुबीर प्रताप समूहा

प्रबल बानरों के समूह दौड़ जाइये और वृक्षों और पर्वतों के समूहों को उखाड़ लाइये। यह सुनकर बानर और भालू हू हा (हुङ्कार) करके और राम के प्रताप-समूह का जय-जयकार करते हुये चले।

दो०- अति उतंग गिरि पादप लीलहिं[2] लेहिं उठाइ।
आनि देहिं नल नीलहि रचहिं ते सेतु बनाइ ॥१॥

वे बहुत ऊँचे-ऊँचे पर्वतों और वृक्षों के समूह को खेल की तरह उठा लेते हैं और ला-लाकर नल और नील को देते हैं। वे उन्हें ठीक करके सेतु बनाते हैं।

सैल बिसाल आनि कपि देहीं ❀ कंदुक इव नल नील ते लेहीं
देखि सेतु अति सुन्दर रचना ❀ बिहँसि कृपानिधि बोले बचना

बानर बड़े-बड़े पहाड़ ला-लाकर देते हैं, नल-नील उन्हें गेंद की तरह ले

१. देखकर। २. खेल की तरह।

लेते हैं। सेतु की बड़ी सुन्दर रचना देखकर कृपा के भंडार रामजी हँसकर वचन बोले—

परम रम्य उत्तम यह धरनी ❋ महिमा अमित जाइ नहिं बरनी
करिहउँ इहाँ सम्भु थापना ❋ मोरे हृदयँ परम कलपना[1]

यह भूमि बहुत ही रमणीय और उत्तम है। इसकी अपार महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता। मैं यहाँ शिवजी की स्थापना करूँगा; मेरे हृदय में यह महान् संकल्प है।

सुनि कपीस बहु दूत पठाए ❋ मुनिवर सकल बोलि लै आए
लिंग थापि[2] बिधिवत करि पूजा ❋ सिव समान प्रिय मोहि न दूजा

यह सुनकर सुग्रीव ने बहुत-से दूत भेजे, जो सब श्रेष्ठ मुनियों को बुलाकर ले आये। शिव-लिंग की स्थापना करके, विधिपूर्वक उसका पूजन करके, राम ने कहा—शिवजी के समान मुझे दूसरा कोई प्रिय नहीं।

सिव द्रोही मम भगत कहावा ❋ सो नर सपनेहुँ मोहि न पावा
संकर बिमुख भगति चह मोरी ❋ सो नारकी मूढ़ मति थोरी

जो शिवजी से द्रोह रखता है और मेरा भक्त कहलाता है, वह मनुष्य स्वप्न में भी मुझे नहीं पाता। शिव का विरोधी होकर जो व्यक्ति मेरी भक्ति चाहता है, वह नरक-गामी, मूर्ख और थोड़ी बुद्धि वाला है।

दो०
संकरप्रिय मम द्रोही सिव द्रोही मम दास।
ते नर करहिं कलप भरि घोर नरक महुँ बास ॥२॥

जो शिवजी का भक्त है, पर मेरा द्रोही है और जो शिवजी का द्रोही है मेरा दास है, वे मनुष्य कल्पभर घोर नरक में निवास करते हैं।

जो रामेस्वर दरसनु करिहहिं ❋ ते तनु तजि मम लोक सिधरिहहिं
जो गंगाजलु आनि चढ़ाइहिं ❋ सो साजुज्य[3] मुक्ति नर पाइहिं

जो मनुष्य इन रामेश्वरजी का दर्शन करेंगे, वे शरीर छोड़कर मेरे लोक को जायँगे। और जो रामेश्वरजी पर गंगाजल लाकर चढ़ायगा, वह सायुज्य मुक्ति पायगा।

---

१. संकल्प। २. स्थापित करके। ३. सायुज्य मुक्ति, भगवान् के साथ एक हो जाना।

होइ अकाम जो छल तजि सेइहि ❀ भगति मोरि तेहि संकर देइहि
मम कृत सेतु जो दरसन करिहीं ❀ सो बिनु स्रम भवसागर तरिहीं

और जो निष्काम बुद्धि से छल छोड़कर रामेश्वरजी की सेवा करेंगे, उन्हें शिवजी मेरी भक्ति देंगे। जो मेरे बनाये सेतु का दर्शन करेगा, वह बिना परिश्रम ही संसार-सागर से पार हो जायगा।

राम बचन सब के जिय भाए ❀ मुनिवर निज निज आश्रम आए
गिरिजा रघुपति कै यह रीती ❀ संतत करहिं प्रनत पर प्रीती

रामजी के ये वचन सबके मन को प्रिय लगे। मुनिवर लोग अपने-अपने आश्रमों को लौट आये। शिवजी कहते हैं—हे पार्वती! रामजी की यह रीति है कि वे शरणागत पर सदा प्रीति करते हैं।

बाँधेउ सेतु नील नल नागर ❀ राम कृपाँ जसु भयेउ उजागर
बूड़हिं आनहिं बोरहिं जेई ❀ भए उपल[1] बोहित[2] सम तेई
महिमा यह न जलधि कइ बरनी ❀ पाहन[3] गुन न कपिन्ह कइ करनी

चतुर नील और नल ने सेतु बाँधा। रामजी की कृपा से उनका यश सर्वत्र फैल गया। जो पत्थर स्वयं डूबते हैं और दूसरों को भी डुबा देते हैं, वे ही जहाज़ के समान हो गये। यह न तो समुद्र की महिमा कही जायगी, न पत्थर का ही गुण है, और न बानरों ही की कोई करामात है। [चतुर्थ विभावना अलंकार]

दो०— श्री रघुबीर प्रताप तें सिंधु तरे पाषान[4]।
ते मतिमंद जे राम तजि भजहिं जाइ प्रभु आन ॥३॥

श्रीरामचन्द्रजी के प्रताप से समुद्र में पत्थर तैरने लगे। वे मूढ़ हैं, जो ऐसे रामजी को छोड़कर किसी और स्वामी को जाकर भजते हैं।

बाँधि सेतु अति सुदृढ़ बनावा ❀ देखि कृपानिधि के मन भावा
चली सेन कछु बरनि न जाई ❀ गरजहिं मरकट भट समुदाई

नल-नील ने सेतु बाँधकर उसे बहुत मज़बूत बनाया। देखने पर वह रामजी को बहुत ही प्रिय लगा। उस पर होकर सेना चली, जिसका कुछ वर्णन नहीं हो सकता। योद्धा बानरों के समूह गरज रहे हैं।

१. पत्थर। २. जहाज। ३. पत्थर। ४. पत्थर।

सेतु बंध ढिग चढ़ि रघुराई ❀ चितव कृपाल सिंधु बहुताई
देखन कहुँ प्रभु करुना कंदा ❀ प्रगट भए सब जलचर बृन्दा

सेतुबन्ध के पास तट पर चढ़कर कृपालु रामजी समुद्र का विस्तार देखने लगे। करुणा के मूल प्रभु को देखने के लिये सब जलचरों के समूह ऊपर निकल आये।

मकर नक्र नाना झख ब्याला ❀ सत जोजन तन परम बिसाला
अइसेउ एक तिन्हहि जे खाहीं ❀ एकन कें डर तेपि डराहीं

अनेक प्रकार के मगर, नाक, मत्स्य, सर्प प्रकट हुये, जिनके सौ-सौ योजन के विशाल शरीर थे। कुछ ऐसे भी थे, जो उनको भी खा जायँ। इससे वे भी एक दूसरे के डर से डर रहे थे।

प्रभुहि बिलोकहिं टरहिं न टारे ❀ मन हरषित सब भए सुखारे
तिन्ह कीं ओट न देखिअ बारी ❀ मगन भए हरि रूप निहारी
चला कटकु प्रभु आयसु पाई ❀ को कहि सक कपि दल बिपुलाई

वे सब प्रभु के दर्शन कर रहे हैं। हटाने से भी नहीं हटते। सबके मन हर्षित हैं। सब सुखी हो गये। उनकी आड़ के कारण पानी नहीं दिखाई पड़ता। वे सब भगवान् का रूप देखकर मग्न हो गये। प्रभु की आज्ञा पाकर सेना चली। बानर सेना की अधिकता को कौन कह सकता है?

दो० सेतुबंध भइ भीर अति कपि नभ पन्थ उड़ाहिं।
अपर जलचरन्हि ऊपर चढ़ि चढ़ि पारहिं जाहिं॥

सेतुबन्ध पर बड़ी भीड़ हो गई। कुछ बानर आकाश-मार्ग से उड़कर जाने लगे। कितने ही जलचरों के ऊपर चढ़-चढ़कर पार जा रहे हैं।

अस कौतुक बिलोकि दोउ भाई ❀ बिहँसि चले कृपाल रघुराई
सेन सहित उतरे रघुबीरा ❀ कहि न जाइ कपि जूथप भीरा

कृपालु रामचन्द्रजी भाई-सहित ऐसा कौतुक देखकर हँसते हुये चले। रामजी सेना-सहित समुद्र पार हो गये। बानरों और उनके सेनापतियों की ऐसी भीड़ हुई, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

सिन्धु पार प्रभु डेरा कीन्हा ❀ सकल कपिन्ह कहुँ आयसु दीन्हा
खाहु जाइ फल मूल सुहाए ❀ सुनत भालु कपि जहँ तहँ धाए

प्रभु ने समुद्र के पार उतरकर डेरा डाला और सब बानरों को आज्ञा दी कि तुम सब जाकर सुन्दर फल-मूल खाओ। यह सुनते ही भालू और बानर जहाँ-तहाँ दौड़ पड़े।

सब तरु फरे राम हित लागी ❀ रितु अनरितु अकाल गति त्यागी
खाहिं मधुर फल बिटप हलावहिं ❀ लंका सनमुख सिखर चलावहिं

रामजी के लिये वहाँ के सब वृक्ष मौसम और बेमौसम तथा समय और असमय का विचार छोड़कर फल उठे। बानर और भालू मीठे-मीठे फल खा रहे हैं, वृक्षों को झकझोर रहे हैं, और लंका की ओर पर्वतों के शिखर फेंक रहे हैं।

जहँ कहुँ फिरत निसाचर पावहिं ❀ घेरि सकल बहु नाच नचावहिं
दसनन्हि काटि नासिका काना ❀ कहि प्रभु सुजसु देहिं तब जाना

घूमते-फिरते वे जहाँ कहीं किसी राक्षस को पा जाते हैं, सब उसे घेरकर खूब नाच नचाते हैं। दाँतों से उसके नाक-कान काटकर, रामजी का सुयश बताकर तब उसे जाने देते हैं।

जिन्ह कर नासा कान निपाता ❀ तिन्ह रावनहिं कही सब बाता
सुनत श्रवन बारिधि बंधाना ❀ दस मुख बोलि उठा अकुलाना

जिन राक्षसों के नाक और कान काट डाले गये थे, उन्होंने रावण से सब समाचार कहा। समुद्र का बाँधा जाना कानों से सुनते ही रावण घबराकर दसों मुखों से बोल उठा—

(दो०) बाँध्यो बननिधि नीरनिधि जलधि सिंधु बारीस।
सत्य तोयनिधि कंपति उदधि पयोधि नदीस[1]॥५॥

बननिधि, नीरनिधि, जलधि, सिन्धु, वारीश, तोयनिधि, कंपति, उदधि, पयोधि और नदीश को क्या सचमुच ही बाँध लिया ?

व्याकुलता निज समुझि बहोरी ❀ बिहँसि गयउ गृह करि भय भोरी
मंदोदरी सुनेउ प्रभु आये ❀ कौतुकही पाथोधि[2] बँधाये

फिर वह अपनी व्याकुलता को समझकर हँसता हुआ, भय को भुलाकर, महल को गया। मन्दोदरी ने सुना कि प्रभु रामजी आये हैं और उन्होंने खेल में ही समुद्र को बँधवा लिया है।

---

१. समुद्र के दस नाम। २. समुद्र। यह नाम मन्दोदरी ने कहा, जो ग्यारहवाँ है।

कर गहि पतिहि भवन निज आनी ❀ बोली परम मनोहर बानी
चरन नाइ सिरु अंचलु रोपा ❀ सुनहु बचन पिय परिहरि कोपा

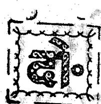
वह हाथ पकड़कर, पति को अपने महल में लाकर अत्यन्त मनोहर वाणी बोली। रावण के चरणों में सिर नवाकर उसने आँचल पसारा और कहा—हे प्रियतम! क्रोध छोड़कर मेरा वचन सुनिये।

नाथ बयरु कीजे ताही सों ❀ बुधि बल सकिअ जीति जाही सों
तुम्हहिं रघुपतिहिं अंतर कैसा ❀ खलु[३] खद्योत दिनकरहिं जैसा

हे नाथ! बैर उसी से करना चाहिये, जिसको बुद्धि और बल से जीत सकिये। आप में और रामजी में निश्चयपूर्वक वैसा ही अन्तर है, जैसा जुगनू और सूर्य में है।

अति बल मधु कैटभ जेहिं मारे ❀ महाबीर दितिसुत संहारे
जेहिं बलि बाँधि सहसभुज मारा ❀ सोइ अवतरेउ हरन महि भारा
तासु बिरोध न कीजिअ नाथा ❀ काल करम जिव जाकें हाथा

जिन्होंने अत्यन्त बलवान मधु और कैटभ (दैत्य) को मारा, दिति के बड़े वीर पुत्रों (हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष) का संहार किया, जिन्होंने बलि को बाँधा और सहस्रबाहु को मारा, वही भगवान् पृथ्वी का भार हरने के लिये अवतीर्ण हुये हैं। हे नाथ! जिनके वश में काल, कर्म और जीव सभी हैं, उनसे वैर न कीजिये।



रामहिं सौंपि जानकी नाइ कमल पद माथ।
सुत कहुँ राज समर्पि बन जाइ भजिअ रघुनाथ ॥६॥

रामजी के चरण-कमलों में सिर नवाकर उन्हें जानकी सौंप दीजिये। आप पुत्र को राज्य देकर वन में जाकर रामजी का भजन कीजिये।

नाथ दीनदयाल रघुराई ❀ बाघउ सनमुख गएँ न खाई
चाहिअ करन सो सब करि बीते ❀ तुम्ह सुर असुर चराचर जीते

हे नाथ! रामजी तो दीनदयालु हैं। बाघ भी तो शरण जाने पर नहीं खाता। जो कुछ करना चाहिये था, आप सब कर चुके। आपने सुर और असुर तथा चर-अचर सभी को जीत लिया।

३. निश्चयपूर्वक।

संत कहहिं असि नीति दसानन ❀ चौथें पन जाइहिं नृप कानन
तासु भजनु कीजिअ तहँ भरता[1] ❀ जो करता[2] पालक संहरता[3]

हे दशमुख! संतजन ऐसी नीति बतलाते हैं कि चौथेपन में राजा को वन में चला जाना चाहिये। हे स्वामी! वहाँ चलकर आप उनका भजन कीजिये। जो सृष्टि के रचने वाले, पालने वाले और संहार करने वाले हैं,

सोइ रघुबीर प्रनत अनुरागी ❀ भजहु नाथ ममता सब त्यागी
मुनिबर जतनु करहिं जेहि लागी ❀ भूप राजु तजि होहिं बिरागी

रामजी वही हैं। वे शरणागत पर प्रेम रखने वाले हैं। हे नाथ! सब माया-मोह छोड़कर आप उन्हीं का भजन कीजिये। जिनके लिये मुनिवर साधन करते हैं, और राजा राज्य छोड़कर वैरागी हो जाते हैं,

सोइ कोसलाधीस रघुराया ❀ आए करन तोहि पर दाया
जो पिय मानहु मोर सिखावन ❀ होइ सुजसु तिहुँ पुर अति पावन

वही अयोध्यापति रामजी आप पर दया करने आये हैं। हे प्रियतम! आप मेरी सीख मानियेगा तो आपका पवित्र और सुन्दर यश तीनों लोकों में फैलेगा।

दो०— अस कहि लोचन बारि भरि गहि पद कंपित गात।
नाथ भजहु रघुनाथहिं अचल होइ अहिवात ॥७॥

ऐसा कहकर, नेत्रों में जल भरकर, पति के पैर पकड़कर, काँपते हुये शरीर से मंदोदरी ने कहा—हे नाथ! रामजी का भजन कीजिये, जिससे मेरा सुहाग अचल हो जाय।

तब रावन मयसुता[4] उठाई ❀ कहै लाग खल निज प्रभुताई
सुनु तैं प्रिया बृथा भय माना ❀ जग जोधा को मोहिं समाना

तब रावण ने मन्दोदरी को उठाया और वह दुष्ट अपनी प्रभुता कहने लगा—हे प्रिये! सुन। तू नाहक़ डरती है, बता तो, मेरे समान संसार में योद्धा कौन है?

बरुन कुबेर पवन जम काला ❀ भुज बल जितेउँ सकल दिगपाला
देव दनुज नर सब बस मोरें ❀ कवन हेतु उपजा भय तोरें

वरुण, कुबेर, पवन, यम, काल और सब दिग्पालों को मैंने अपनी भुजाओं

१. स्वामी, पति। २. रचने वाला। ३. संहार करने वाला। ४. मय दानव की कन्या, मंदोदरी।



के बल से जीत लिया है। देवता, दानव और मनुष्य सभी मेरे वश में हैं। तेरे मन में भय किस कारण से उत्पन्न हुआ?

नाना बिधि तेहि कहेसि बुझाई ❀ सभाँ बहोरि बैठ सो जाई
मंदोदरीं हृदयँ अस जाना ❀ काल बिबस उपजा अभिमाना

रावण ने मंदोदरी को अनेक प्रकार से समझाकर कहा और वह फिर सभा में जाकर बैठ गया। मंदोदरी ने हृदय में ऐसा जान लिया कि काल के वश होने से पति को अभिमान उत्पन्न हो गया है।

सभाँ आइ मंत्रिन्ह तेहि बूझा ❀ करब कवनि बिधि रिपु सें जूझा
कहहिं सचिव सुनु निसिचर नाहा ❀ बार बार प्रभु पूछहु काहा
कहहु कवन भय करिअ बिचारा ❀ नर कपि भालु अहार हमारा

सभा में आकर उसने मन्त्रियों से पूछा—शत्रु से किस प्रकार युद्ध किया जायगा? मन्त्रीगण कहने लगे—हे निशाचरों के स्वामी! सुनिये; हे प्रभु! बार-बार आप क्या पूछते हैं? कौन-सा भय है, जिसका विचार किया जाय? मनुष्य, बानर और भालू तो आहार ही हैं।

दो॰ सबके बचन श्रवन सुनि कह प्रहस्त कर जोरि।
नीति बिरोध न करिअ प्रभु मंत्रिन्ह मति अति थोरि॥

कानों से सबके वचन सुनकर प्रहस्त (रावण का पुत्र) हाथ जोड़कर कहने लगा—हे प्रभु! मन्त्रियों में बुद्धि बहुत ही थोड़ी है; आप नीति के विरुद्ध कोई आचरण न कीजिये।

कहहिं सचिव सब ठकुरसोहाती ❀ नाथ न पूर आव एहि भाँती
बारिधि नाँघि एक कपि आवा ❀ तासु चरित मन महुँ सब गावा

ये सभी मन्त्री ठकुरसुहाती (मालिक को प्रिय लगने वाली बात) कहते हैं। हे नाथ! इस प्रकार की बातों से पूरा नहीं पड़ेगा। एक बानर समुद्र लाँघकर आया था। उसका चरित सब लोग मन ही मन गाया करते हैं।

छुधा न रही तुम्हहि तब काहू ❀ जारत नगर न कस धरि खाहू
सुनत नीक आगें दुख पावा ❀ सचिवन्ह अस मत प्रभुहिं सुनावा

तब क्या तुम लोगों में से किसी को भूख नहीं थी? नगर जलाते समय उसे पकड़कर क्यों नहीं खा लिया? मन्त्रियों ने ऐसी राय स्वामी को सुनाई है

जो सुनने में प्रिय है, पर आगे चलकर दुःख पाना होगा।

जेहिं बारीस बँधायेउ हेला ❀ उतरेउ सेन समेत सुबेला
सो भनु मनुज खाब हम भाई ❀ बचन कहहिं सब गाल फुलाई

जिसने खेलवाड़ की तरह समुद्र बँधा लिया और सेना-सहित जो सुबेल पर्वत पर आ उतरा, उसे कहते हो कि मनुष्य है, और गाल फुला-फुलाकर कहते हैं कि उसे हम खा लेंगे।

तात बचन मम सुनु अति आदर ❀ जनि मन गुनहु मोहि करि कादर
प्रिय बानी जे सुनहिं जे कहहीं ❀ ऐसे नर निकाय जग अहहीं

हे तात! मेरी बातें आदर-सहित (गौर से) सुनिये। मन में मुझे कायर मत समझ लीजियेगा। जगत् में ऐसे झुंड के झुंड हैं, जो प्रिय वचन ही सुनते और कहते हैं।

बचन परम हित सुनत कठोरे ❀ सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे
प्रथम बसीठ पठउ सुनु नीती ❀ सीता देइ करहु पुनि प्रीती

हे प्रभु! सुनने में कठोर और परिणाम में परम कल्याणकारी वचन जो सुनते और कहते हैं, ऐसे मनुष्य बहुत ही थोड़े हैं। नीति सुनिये। उसके अनुसार पहले दूत भेजिये, फिर सीता को देकर रामजी से प्रीति (मेल) कीजिये।

दो० नारि पाइ फिरि जाहिं जौं तौ न बढ़ाइअ रारि।
नाहिं त सनमुख समर महिं तात करिअ हठि मारि॥

यदि रामजी स्त्री पाकर लौट जायँ, तब तो झगड़ा न बढ़ाइये। यदि न फिरें, तो हे तात! सम्मुख युद्ध में उनसे डटकर युद्ध कीजिये।

यह मत जौं मानहु प्रभु मोरा ❀ उभय प्रकार सुजसु जग तोरा
सुत सन कह दसकंठ रिसाई ❀ असि मति सठ केहिं तोहि सिखाई

हे प्रभु! आप मेरी यह सम्मति मानेंगे, तो दोनों तरह से जगत् में आपका सुयश होगा। रावण क्रुद्ध होकर पुत्र से बोला—अरे मूर्ख! ऐसी बुद्धि तुझे किसने सिखाई?

अबहीं ते उर संसय होई ❀ बेनु मूल सुत भयेउ घमोई
सुनि पितु गिरा परुष अति घोरा ❀ चला भवन कहि बचन कठोरा

अभी से तेरे हृदय में संदेह (भय) हो रहा है? तो तू बांस के कुल में

घमोई (बाँस का रोग) हुआ। पिता की अत्यन्त कठोर वाणी सुनकर प्रहस्त कठोर वचन कहकर अपने घर को चला गया।

हित मत तोहि न लागत कैसें ❀ काल बिबस कहुँ भेषज जैसें
संध्या समय जानि दससीसा ❀ भवन चलेउ निरखत भुज बीसा

उसने कहा—कल्याण की सलाह आपको कैसे नहीं लगती, जैसे मृत्यु के वश हुये को दवा नहीं लगती। संध्या का समय जानकर रावण अपनी बीसों भुजायें देखता हुआ महल को चला।

लंका सिखर उपर आगारा ❀ अति बिचित्र तहँ होइ अखारा
बैठि जाइ तेहि मंदिर रावन ❀ लागे किन्नर गुन गन गावन
बाजहिं ताल पखाउज[1] बीना ❀ नृत्य करहिं अपछरा[2] प्रबीना

लंका की चोटी पर एक अत्यन्त विचित्र महल था। उसमें नाच-गान का अखाड़ा जमता था। रावण उसी महल में जाकर बैठा। किन्नर उसके गुण-गण गाने लगे। ताल, पखावज (मृदंग) और वीणा बज रहे हैं। नृत्य में प्रवीण अप्सरायें नृत्य कर रही हैं।

दो०—सुनासीर[3] सत सरिस सोइ संतत करै बिलास।
परम प्रबल रिपु सीस पर तदपि न कछु मन त्रास।१०।

सैकड़ों इन्द्रों के समान वह निरन्तर भोग-विलास किया करता है। अत्यंत प्रबल शत्रु उसके सिर पर है, फिर भी उसको न चिंता है, न डर ही।

इहाँ सुबेल सैल रघुबीरा ❀ उतरे सेन सहित अति भीरा
सैल सृङ्ग एक सुन्दर देखी ❀ अति उतंग सम सुभ्र[4] बिसेखी

यहाँ रामजी सुबेल पर्वत पर सेना-सहित उतरे। वहाँ बड़ी भीड़ है। पर्वत की एक सुन्दर चोटी, जो बहुत ऊँची, समतल और बहुत स्वच्छ थी, देखकर

तहँ तरु किसलय सुमन सुहाये ❀ लछिमन रचि निज हाथ डसाये
ता पर रुचिर मृदुल मृगछाला ❀ तेहिं आसन आसीन[5] कृपाला

वहाँ लक्ष्मण ने वृक्षों के कोमल पत्ते और सुन्दर फूल अपने हाथों से सजाकर बिछा दिये। उसके ऊपर सुन्दर और कोमल मृगछाला बिछा दी। उस आसन पर कृपालु रामजी विराजमान थे।

---

१. मृदंग। २. अप्सरा। ३. इंद्र। ४. उज्ज्वल। ५. बैठे।

प्रभु कृत सीस कपीस उछंगा[1] ❀ बाम दहिन दिसि चाप निषंगा[2]
दुहुँ कर कमल सुधारत बाना ❀ कह लंकेस[3] मंत्र लगि काना

बानरराज सुग्रीव की गोद में रामजी ने सिर रक्खा है। उनकी बायीं ओर धनुष और दाहिनी ओर तरकस रक्खे हैं। वे अपने दोनों कर-कमलों से बाण सुधार रहे हैं। विभीषण कानों से लगकर सलाह कर रहा है।

बड़भागी अंगद हनुमाना ❀ चरन कमल चापत बिधि नाना
प्रभु पाछें लछिमन बीरासन ❀ कटि निषंग कर बान सरासन

परम भाग्यशाली अंगद और हनुमान अनेक प्रकार से प्रभु के चरण-कमल दबा रहे हैं। प्रभु के पीछे लक्ष्मण वीरासन पर बैठे हैं, जिनकी कमर में तरकस और हाथों में बाण और धनुष है।

दो०
एहि बिधि कृपा रूप गुन धाम राम आसीन।
ते नर धन्य जे ध्यान एहिं रहत सदा लयलीन॥

इस प्रकार कृपा, रूप और गुणों के धाम रामजी विराजमान हैं। वे मनुष्य धन्य हैं, जो सदा इस ध्यान में जी लगाये रहते हैं।

पूरब दिसा बिलोकि प्रभु देखा उदित मयंक[4]।
कहत सबहिं देखहु ससिहि मृगपति सरिस असंक॥

रामजी ने पूर्व दिशा की ओर देखकर चन्द्रमा को उदय हुआ देखा। तब वे सब से कहने लगे—चन्द्रमा को ही देखो, कैसा सिंह के समान निडर है?

पूरब दिसि गिरिगुहा[5] निवासी ❀ परम प्रताप तेज बल रासी
मत्त नाग तम कुम्भ[6] बिदारी ❀ ससि केसरी[7] गगन बन चारी

पूर्व दिशारूपी पर्वत की गुफा में रहने वाला, अत्यन्त प्रताप, तेज और बल की राशि यह चन्द्रमारूपी सिंह अन्धकाररूपी मतवाले हाथी के मस्तक को विदीर्ण करके आकाशरूपी वन में विचर रहा है। [परम्परित रूपक अलंकार]

बिथुरे नभ मुकुताहल[8] तारा ❀ निसि सुन्दरी केर सिंगारा
कह प्रभु ससि महँ मेचकताई[9] ❀ कहहु काह निज निज मति भाई

१. गोद। २. तरकस। ३. विभीषण। ४. चन्द्रमा। ५. पर्वत की खोह। ६. कनपटी के पास का स्थान, गंडस्थल। ७. सिंह। ८. मोती। ९. कालापन।

आकाश में जो मोतियों-जैसे तारे बिखरे हैं, जो रात्रिरूपी सुन्दरी स्त्री के शृङ्गार हैं। प्रभु ने फिर कहा—अच्छा भाइयो! चन्द्रमा में जो कालापन है, वह क्या है? अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार कहो।

कह सुग्रीव सुनहु रघुराई ❀ ससि महुँ प्रगट भूमि कै झाँई
मारेउ राहु ससिहि कह कोई ❀ उर महँ परी स्यामता सोई

सुग्रीव ने कहा—हे रामजी! सुनिये। चन्द्रमा में भूमि की छाया दिखाई दे रही है। किसी ने कहा—चन्द्रमा को राहु ने मारा है। उसी का काला दाग़ उसकी छाती पर पड़ा हुआ है।

कोउ कह जब बिधि रति[1] मुख कीन्हा ❀ सार भाग ससि कर हरि लीन्हा
छिद्र[2] सो प्रगट इंदु[3] उर माहीं ❀ तेहि मग देखिअ नभ परिछाहीं

किसी ने कहा—जब ब्रह्मा ने रति का मुँह बनाया था, तब उसने चन्द्रमा का सार भाग निकाल लिया था। वही छेद चन्द्रमा की छाती में मौजूद है। उसी छेद की राह से आकाश की काली छाया दिखाई पड़ रही है। [अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार]

प्रभु कह गरलु[4] बंधु ससि केरा ❀ अति प्रिय निज उर दीन्ह बसेरा
बिष संयुत कर[5] निकर पसारी ❀ जारत बिरहवंत नरनारी

रामजी ने कहा—विष चन्द्रमा का भाई है। अत्यंत प्यारा होने के कारण उसे उसने अपने हृदय में स्थान दे रक्खा है। अपनी विषैली किरणों को फैलाकर वह वियोगी स्त्री-पुरुषों को जलाता रहता है। [असिद्धविषया गम्यहेतूत्प्रेक्षा अलंकार]

दो०
कह हनुमंत सुनहु प्रभु ससि तुम्हार निज दास।
तव मूरति बिधु[6] उर बसति सोइ स्यामता अभास॥(क)

हनुमान ने कहा—हे प्रभु! सुनिये। चन्द्रमा आपका प्रिय दास है। आपकी साँवली मूर्त्ति चन्द्रमा के हृदय में बसती है। वह उसी साँवलेपन की झलक है। [तृतीय निदर्शना अलंकार]

पवनतनय के बचन सुनि बिहँसे रामु सुजान।
दच्छिन दिस अवलोकि[7] पुनि बोले कृपानिधान॥(ख)

पवनपुत्र हनुमान के वचन सुनकर सुजान रामजी हँसे। फिर कृपा के धाम रामजी दक्षिण की ओर देखकर बोले—

१. कामदेव की स्त्री। २. छेद। ३. चंद्रमा। ४. विष। ५. किरण। ६. चन्द्रमा। ७. देखकर।

देखु बिभीषन दच्छिन आसा[1] ❀ घन घमंड दामिनी[2] बिलासा
मधुर मधुर गरजइ घन घोरा ❀ होइ बृष्टि जनु उपल[3] कठोरा

हे विभीषण ! दक्षिण की ओर देखो, बादल घुमड़ रहे हैं, बिजली चमक रही है। बादल मीठे-मीठे स्वर में घोर गर्जन कर रहे हैं, मानो कठोर ओलों की वर्षा हो रही है। [भ्रान्ति अलंकार]

कहत बिभीषन सुनहु कृपाला ❀ होइ न तड़ित[4] न बारिद माला
लंका सिखर रुचिर आगारा ❀ तहँ दसकंधर देख अखारा

विभीषण बोला—हे कृपालु ! सुनिये। न तो यह बिजली है, न बादलों की घटा। लंका की चोटी पर एक सुन्दर महल है। उसमें रावण नाच-गान का अखाड़ा देख रहा है।

छत्र मेघडंबर सिर धारी ❀ सोइ जनु जलद घटा अति कारी
मंदोदरी स्रवन ताटंका[5] ❀ सोइ प्रभु जनु दामिनी दमंका

रावण ने बादलों के आकार का विशाल और काला छत्र सिर पर धारण कर रक्खा है। वही मानो बादलों की अत्यन्त काली घटा है। हे प्रभु ! मन्दोदरी के कानों में कर्णफूल हैं, वे ही बिजली-जैसे चमक रहे हैं।

बाजहिं ताल मृदंग अनूपा ❀ सोइ रव मधुर सुनहु सुर भूपा
प्रभु मुसुकान समुझि अभिमाना ❀ चाप चढ़ाइ बान संधाना

अनुपम ताल और मृदंग बज रहे हैं। हे देवताओं के सम्राट् ! सुनिये, वही मधुर ध्वनि है। रावण का अभिमान समझकर प्रभु मुसकुराये। धनुष चढ़ाकर उस पर उन्होंने बाण सन्धान किया।

दो॰ छत्र मुकुट ताटंक तब हते एकहीं बान।
सब कें देखत महि परे मरमु न कोऊ जान ॥१३(क)॥

एक ही बाण से उन्होंने रावण का छत्र, मुकुट और मन्दोदरी के कर्णफूल मार गिराये। सबके देखते-देखते वे भूमि पर आ पड़े, पर किसी ने उसका भेद नहीं जाना।

अस कौतुक करि राम सर प्रबिसेउ आइ निषंग।
रावन सभा ससंक सब देखि महा रस भंग ॥१३(ख)॥

१. दिशा। २. बिजली। ३. ओला। ४. बिजली। ५. कर्णफूल।

रामजी का बाण ऐसा चमत्कार करके फिर तरकस में आ घुसा। यह बड़ा रंग-भंग देखकर रावण की सारी सभा भयभीत हो गई।

कंप न भूमि न मरुत बिसेषा ❀ अस्त्र सस्त्र कछु नयन न देखा
सोचहिं सब निज हृदय मझारी ❀ असगुन भयेउ भयंकर भारी

न भूकंप हुआ, न बहुत ज़ोर की हवा चली, न कोई अस्त्र-शस्त्र ही आँख से दिखाई पड़े। सब अपने-अपने हृदय में सोचने लगे कि यह तो बड़ा भयंकर अपशकुन हुआ।

दसमुख देखि सभा भय पाई ❀ बिहँसि बचन कह जुगुतिं बनाई
सिरउ गिरे संतत सुभ जाही ❀ मुकुट खसे कस असगुन ताही

रावण ने देखा कि सभा डर गई है। तब वह हँसकर युक्ति रचकर कहने लगा—सिरों का गिरना भी जिसके लिये सदा कल्याणकारी होता रहा है, उसके लिये मुकुट का गिरना अशकुन कैसा? [व्याजोक्ति अलंकार]

सयन करहु निज निज गृह जाई ❀ गवने भवन सकल सिरु नाई
मंदोदरी सोच उर बसऊ ❀ जब तें स्रवनपूर महि खसऊ

अपने-अपने घर जाकर सो रहो। यह सुनकर सब सिर नवा-नवाकर अपने-अपने घर गये। पर जब से कर्णफूल पृथ्वी पर गिरा, तब से मन्दोदरी के हृदय में चिन्ता बस गई।

सजल नयन कह जुग कर जोरी ❀ सुनहु प्रान पति बिनती मोरी
कंत राम बिरोध परिहरहू ❀ जानि मनुज जनि हठ मन धरहू

वह आँखों में आँसू भरकर दोनों हाथ जोड़कर कहने लगी—हे प्राणनाथ! मेरी विनती सुनो। हे कांत! रामजी से विरोध छोड़ दीजिये। उन्हें मनुष्य जानकर मन में हठ न पकड़े रहिये।

दो०—बिस्वरूप रघुबंसमनि करहु बचन बिस्वासु।
लोक कल्पना बेद कर अङ्ग अङ्ग प्रति जासु॥१४

मेरी बात का विश्वास कीजिये। वे रघुकुल के शिरोमणि रामजी विश्व-जीवन-रूप हैं। वेद जिनके प्रत्येक अंग में अनेकों लोकों की कल्पना करते हैं।

पद पाताल सीस अज धामा ❀ अपर लोक अँग अँग बिस्रामा
भृकुटि बिलास भयङ्कर काला ❀ नयन दिवाकर कच घन माला

पाताल चरण है, ब्रह्मलोक सिर है, अन्य लोक अङ्ग-अङ्ग में बसते हैं, जिसका भ्रू-संचालन भयंकर काल है, सूर्य नेत्र है, बादलों का समूह बाल हैं,

जासु घ्रान अस्विनीकुमारा ❀ निसि अरु दिवस निमेष अपारा
स्रवन दिसा दस बेद बखानी ❀ मारुत स्वास निगम[1] निज बानी

अश्विनीकुमार जिसकी नासिका हैं, रात और दिन जिनके निमेष (पलक भाँजना) हैं। दशों दिशायें कान हैं, वेद ऐसा कहते हैं। वायु साँस और वेद जिसकी अपनी वाणी है,

अधर लोभ जम दसन[2] कराला ❀ माया हास बाहु दिगपाला
आनन अनल अंबुपति[3] जीहा ❀ उतपति पालन प्रलय समीहा[4]

लोभ जिसके ओंठ, यम जिसके भयंकर दाँत, माया जिसकी हँसी, दिग्पाल जिसकी भुजायें, अग्नि मुख, वरुण जिह्वा, जगत् की उत्पत्ति, पालन और प्रलय जिसकी इच्छा है।

रोमराजि अष्टादस भारा[5] ❀ अस्थि सैल सरिता नस जारा[6]
उदर उदधि अधगा[7] जातना ❀ जगमय प्रभु का बहु कलपना

अठारह प्रकार की असंख्य वनस्पतियों का समूह जिसकी रोमावली, पर्वत हड्डियाँ, नदियाँ नसों का जाल, समुद्र पेट, और नरक जिसकी नीचे की इन्द्रियाँ हैं। इस प्रकार प्रभु विश्वमय हैं। अधिक कल्पना क्या की जाय ?

दो०

अहंकार सिव बुद्धि अज मन ससि चित्त महान।
मनुज बास चर अचर मय रूप राम भगवान॥

अहंकार जिसका शिव, बुद्धि ब्रह्मा, मन चन्द्रमा और चित्त महत्तत्व (विष्णु) है। मनुष्यों का वास-स्थान यह चराचर जगत् उसी भगवान् रामजी का रूप है।

अस बिचारि सुनु प्रानपति प्रभु सन बयरु बिहाइ।
प्रीति करहु रघुबीर पद मम अहिबात न जाइ॥

ऐसा विचारकर हे प्राणपति ! सुनिये, प्रभु से बैर छोड़कर रामजी के चरणों में प्रेम कीजिये, जिससे मेरा सुहाग न जाय।

१. वेद। २. दाँत। ३. समुद्र। ४. चेष्टा। ५. वनस्पतियों का समूह। ६. जाल।
७. पेट से नीचे की इन्द्रियाँ।

बिहँसा नारि बचन सुनि काना ❀ अहो मोह महिमा बलवाना
नारि सुभाउ सत्य कबि कहहीं ❀ अवगुन आठ सदा उर रहहीं

स्त्री के वचन कानों से सुनकर रावण खूब हँसा और कहने लगा—अहो! मोह (अज्ञान) की महिमा बड़ी बलवान् है। कवि लोग स्त्री के स्वभाव का वर्णन सत्य ही करते हैं कि उनके हृदय में आठ अवगुण सदा रहते हैं।

साहस अनृत चपलता माया ❀ भय अबिबेक असौच अदाया
रिपु कर रूप सकल तैं गावा ❀ अति बिसाल भय मोहि सुनावा

साहस, झूठ, चंचलता, माया (छल), भय, अविवेक (मूर्खता), अपवित्रता और निर्दयता। तूने शत्रु का सब रूप गाया और मुझे उसका बड़ा भारी भय सुनाया।

सो सब प्रिया सहज बस मोरे ❀ समुझि परा प्रसाद अब तोरे
जानेउँ प्रिया तोरि चतुराई ❀ एहि मिस कहहि मोरि प्रभुताई

हे प्रिये! यह सब (चराचरमय जगत्) तो स्वभाव ही से मेरे वश में है। यह अब मुझे तेरी कृपा से समझ पड़ा। हे प्रिये! मैंने तेरी चतुराई जान ली। इसी बहाने तू मेरी प्रभुता का बखान कर रही है।

तव बतकही गूढ़ मृगलोचनि ❀ समुझत सुखद सुनत भय मोचनि
मंदोदरि मन महुँ अस ठयऊ ❀ पियहि काल बस मति भ्रम भयऊ

हे मृग के से नेत्रों वाली! तेरी बातें बड़ी गूढ़ हैं, समझने पर सुख देने वाली और सुनने से भय को दूर करने वाली हैं। मन्दोदरी के मन में ऐसा जम गया कि पति को काल-वश मतिभ्रम हो रहा है।

दो०— बहु बिधि जल्पेसि[1] सकल निसि प्रात भए दसकंध।
सहज असंक लंकपति सभाँ गयेउ मद अंध॥

सारी रात वह बहुत प्रकार से अंड-बंड बकता रहा। सबेरा होने पर स्वभाव ही से निडर और अभिमान में अंधा लंकापति रावण दरबार में गया।

सो०— फूलइ फरइ न बेत जदपि सुधा बरषहिं जलद।
मूरख हृदयँ न चेत जौं गुर मिलहिं बिरंचि सत॥

१. बकता-झकता रहा।

यदि बादल अमृत भी बरसे, तो भी बेत फूलता फलता नहीं। इसी प्रकार चाहे सौ ब्रह्मा के समान भी ज्ञानी गुरु मिलें, पर मूर्ख के हृदय में चेत (ज्ञान) नहीं आता। [प्रतिवस्तूपमा अलंकार]

इहाँ प्रात जागे रघुराई ❁ पूछा मत सब सचिव बोलाई
कहहु बेगि का करिअ उपाई ❁ जामवंत कह पद सिरु नाई

यहाँ रामचन्द्रजी सबेरा होने पर जागे और उन्होंने सब मन्त्रियों को बुलाकर उनसे सलाह पूछी कि जल्दी बताइये, क्या उपाय किया जाय? जाम्बवंत ने रामजी के चरणों में सिर नवाकर कहा—

सुनु सर्बग्य सकल उर बासी ❁ बुधि बल तेज धर्म गुन रासी
मंत्र कहउँ निज मति अनुसारा ❁ दूत पठाइअ बालि कुमारा

हे सर्वज्ञ! हे सब के हृदय में बसने वाले! हे बुद्धि, बल, तेज, धर्म और गुणों की राशि प्रभु! सुनिये। मैं अपनी बुद्धि के अनुसार सम्मति देता हूँ कि अंगद को दूत बनाकर भेजा जाय।

नीक मंत्र सब के मन माना ❁ अंगद सन कह कृपानिधाना
बालि तनय बुधि बल गुन धामा ❁ लंका जाहु तात मम कामा

यह राय सबके मन में जँच गई। कृपा के धाम रामजी ने अंगद से कहा—हे बल, बुद्धि और गुणों के धाम बालि-पुत्र अंगद! हे तात! तुम मेरे काम से लङ्का जाओ।

बहुत बुझाइ तुम्हहिं का कहऊँ ❁ परम चतुर मैं जानत अहऊँ
काज हमार तासु हित होई ❁ रिपु सन करेहु बतकही सोई

तुमको बहुत समझाकर क्या कहूँ? मैं जानता हूँ तुम परम चतुर हो। जिससे मेरा काम हो और उस (रावण) का भी कल्याण हो, वही बात-चीत शत्रु से करना।

सो०— प्रभु अग्याँ धरि सीस चरन बंदि अंगद उठेउ।
सोइ गुन सागर ईस राम कृपा जा पर करहु॥(क)

प्रभु की आज्ञा माथे चढ़ाकर और रामजी के चरणों की वन्दना करके अंगद उठा। उसने कहा—हे भगवान् रामजी! आप जिस पर कृपा करें, वही गुणों का समुद्र हो जाता है।

स्वयं सिद्ध सब काज नाथ मोहि आदरु दियेउ।
अस बिचारि जुबराज तन पुलकित हरषित हियउ ॥(ख)

स्वामी के काम तो अपने आप सिद्ध हैं, पर काम सौंपकर प्रभु ने मुझे आदर दिया है। ऐसा विचारकर युवराज अंगद का हृदय हर्षित और शरीर पुलकित हो गया।

बंदि चरन उर धरि प्रभुताई ❋ अंगद चलेउ सबहिं सिरु नाई
प्रभु प्रताप उर सहज असंका ❋ रन बाँकुरा बालि सुत बंका

रामजी के चरणों की वन्दना करके और उनकी प्रभुता हृदय में धरकर अंगद सबको सिर नवाकर चला। प्रभु का प्रताप हृदय में है, ऐसा रण में बाँका बीर बालि का पुत्र अंगद स्वभाव ही से निर्भय है।

पुर पैठत रावन कर बेटा ❋ खेलत रहा सो होइ गइ भेंटा
बातहिं बात करष[1] बढ़ि आई ❋ जुगल अतुल बल पुनि तरुनाई

लंका में घुसते ही रावण के बेटे से अंगद की भेंट हो गई, जो खेल रहा था। बात ही बात में दोनों में झगड़ा बढ़ गया। एक तो दोनों अतुलित बलवान् थे, दूसरे दोनों की युवावस्था थी।

तेहि अङ्गद कहुँ लात उठाई ❋ गहि पद पटकेउ भूमि भवाँई[2]
निसिचर निकर देखि भट भारी ❋ जहँ तहँ चले न सकहिं पुकारी

उसने अंगद को मारने के लिये लात उठायी। अङ्गद ने उसके पैर पकड़कर उसे घुमाकर ज़मीन पर पटक दिया। राक्षसों के समूह ऐसा भारी योद्धा देखकर जहाँ-तहाँ भाग चले। वे डर के मारे पुकार भी न मचा सके।

एक एक सन मरमु न कहहीं ❋ समुझि तासु बध चुप करि रहहीं
भयेउ कोलाहल[3] नगर मझारी ❋ आवा कपि लंका जेहिं जारी

वे एक-दूसरे को मर्म (असली बात) नहीं बतलाते हैं, रावण के पुत्र का वध समझकर सब चुप मारकर रह जाते हैं। नगर में बड़ा हल्ला हुआ कि वही बानर फिर आया है, जिसने लंका जलायी थी।

अब धौं काह करिहि करतारा ❋ अति सभीत सब करहिं बिचारा
बिनु पूछें मग देहिं देखाई ❋ जेहि बिलोक सोइ जाइ सुखाई

---

१. झगड़ा। २. घुमाकर। ३. हल्ला।

अब विधाता न जाने क्या करेगा। नगर-निवासी अत्यन्त भयभीत होकर विचार करने लगे। वे बिना पूछे ही अङ्गद को रास्ता बता देते हैं। अङ्गद जिसकी ओर देखता है, वह डर के मारे सूख जाता है।

दो॰ गयेउ सभा दरबार तब सुमिरि राम पद कंज।
सिंह ठवनि इत उत चितव धीर बीर बल पुंज ॥१८॥

अङ्गद रामजी के चरण-कमलों का स्मरण कर रावण की सभा के द्वार पर गया। सिंह की-सी शान से वह धीर, वीर और बल की राशि अङ्गद इधर-उधर देखने लगा।

तुरत निसाचर एक पठावा ❀ समाचार रावनहिं जनावा
सुनत बिहँसि बोला दससीसा ❀ आनहु बोलि कहाँ कर कीसा

उसने तुरन्त ही एक राक्षस को भेजा और रावण को अपने आने का समाचार जतलाया। सुनते ही रावण हँसकर बोला—बुला लाओ, देखें कहाँ का बानर है।

आयसु पाइ दूत बहु धाए ❀ कपि कुंजरहि बोलि लै आए
अङ्गद दीख दसानन वैसा[1] ❀ सहित प्रान कज्जल गिरि जैसा

आज्ञा पाकर बहुत-से दूत दौड़े और बानरों में हाथी के समान अङ्गद को बुला लाये। अङ्गद ने रावण को ऐसा बैठे हुये देखा, जैसे कोई सजीव काजल का पहाड़ हो।

भुजा बिटप सिर सृङ्ग समाना ❀ रोमावली लता जनु जाना
मुख नासिका नयन अरु काना ❀ गिरि कन्दरा खोह अनुमाना

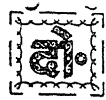
जिसकी भुजायें वृक्षों के समान, सिर पर्वतों के शिखरों के समान और रोमावली मानो बहुत-सी लतायें हैं। मुँह, नाक, नेत्र और कान पर्वत की गुफाओं और खोहों के समान हैं।

गयेउ सभाँ मन नेकु न मुरा ❀ बालितनय अतिबल बाकुरा
उठे सभासद कपि कहुँ देखी ❀ रावन उर भा क्रोध बिसेषी

अत्यन्त बलवान् और रण में बाँका वीर बालि-पुत्र अङ्गद सभा में गया। वह मन में ज़रा-भर भी नहीं झिझका। अङ्गद को देखकर रावण के सब सभा-

१. उसी प्रकार का; बैठा हुआ (बँगला)।

सद उठ खड़े हुये। यह देखकर रावण के हृदय में बड़ा क्रोध उत्पन्न हुआ।



जथा मत्त गज जूथ महँ पंचानन[1] चलि जाइ।
राम प्रताप सुमिरि मन बैठ सभाँ सिरु नाइ॥१९॥

जैसे मतवाले हाथियों के झुंड में सिंह चला जाता है, वैसे ही रामजी के प्रताप का मन में स्मरण करके वह सभा में सिर नवाकर बैठ गया।

कह दसकंठ कवन तैं बन्दर ❀ मैं रघुबीर दूत दसकंधर
मम जनकहि तोहि रही मिताई ❀ तव हित कारन आयेउँ भाई

रावण ने पूछा—ओ बानर! तू कौन है? अङ्गद ने कहा—हे रावण! मैं रामजी का दूत हूँ। मेरे पिता से और तुमसे मित्रता थी। हे भाई! मैं तुम्हारी भलाई के लिये ही आया हूँ। [गूढ़ोत्तर अलंकार]

उत्तम कुल पुलस्ति कर नाती ❀ सिव बिरंचि पूजेहु बहु भाँती
बर पायेहु कीन्हेहु सब काजा ❀ जीतेहु लोकपाल[2] सब राजा

तुम उत्तम कुल के हो, पुलस्ति ऋषि के पौत्र हो। तुमने बहुत प्रकार से शिवजी और ब्रह्माजी की पूजा की है और वर पाये हैं, और सब काम सिद्ध किये हैं। तुमने लोकपालों को और सब राजाओं को भी जीत लिया है।

नृप अभिमान मोहबस किंबा ❀ हरि आनेहु सीता जगदंबा
अब सुभ कहा सुनहु तुम्ह मोरा ❀ सब अपराध छमिहि प्रभु तोरा

हे राजा! तुम अभिमान से या अज्ञान के वश होकर जगज्जननी सीता को हर लाये हो। अब तुम मेरा कल्याणकारी वचन सुनो। प्रभु राम तुम्हारे सब अपराधों को क्षमा कर देंगे।

दसन गहहु तृन कंठ कुठारी ❀ परिजन सहित संग निज नारी
सादर जनकसुता करि आगें ❀ एहि बिधि चलहु सकल भय त्यागें

दाँतों में तृण लेकर और गले में कुल्हाड़ी डालकर, कुटुम्बियों-सहित अपनी स्त्रियों को साथ लेकर, आदर-पूर्वक सीताजी को आगे करके, इस प्रकार सब भय छोड़कर चलो।



प्रनतपाल रघुबंस मनि त्राहि त्राहि अब मोहि।
सुनतहि आरत बचन प्रभु अभय करहिंगे तोहि॥२०॥

१. सिंह। २. इन्द्र।

और कहो—शरणागत के पालक रघुकुल-शिरोमणि रामजी ! मेरी रक्षा कीजिये, मेरी रक्षा कीजिये। ऐसी आर्त्त-पुकार सुनते ही प्रभु तुमको निर्भय कर देंगे।

रे कपि पोत न बोलु सँभारी ❀ मूढ़ न जानसि मोहि सुरारी
कहु निज नाम जनक कर भाई ❀ केहि नातें मानियै मिताई

रावण ने कहा—अरे बानर के बच्चे ! सँभालकर नहीं बोलता। मूर्ख! तू मुझ देवताओं के शत्रु को नहीं जानता ? अरे भाई ! अपना और अपने बाप का नाम तो बता। किस नाते से मित्रता मानता है ?

अंगद नाम बालि कर बेटा ❀ तासों कबहुँ भई ही भेंटा
अंगद बचन सुनत सकुचाना ❀ रहा बालि बानर मैं जाना

अंगद ने कहा—मेरा नाम अङ्गद है, मैं बालि का पुत्र हूँ। उससे कभी तुम्हारी भेंट हुई थी। अङ्गद का वचन सुनकर रावण कुछ शर्मिन्दा हुआ। उसने कहा—हाँ मैं जान गया, बालि नाम का एक बानर था।

अङ्गद तहीं बालि कर बालक ❀ उपजेहु बंस अनल कुल घालक
गर्भ न गयेहु ब्यर्थ तुम जाये ❀ निज मुख तापस दूत कहाये

अरे, अंगद ! तू ही बालि का लड़का है ? तू तो कुल को नष्ट करने वाले बाँस की आग की तरह पैदा हुआ। गर्भ ही में क्यों न नष्ट हो गया ? व्यर्थ ही तू पैदा हुआ, जो अपने ही मुँह से तपस्वियों का दूत कहलाया !

अब कहु कुसल बालि कहँ अहई ❀ बिहँसि बचन तब अङ्गद कहई
दिन दस गए बालि पहिं जाई ❀ बूझेहु कुसल सखा उर लाई

अब बालि की कुशल तो बता। वह आजकल कहाँ है ? तब अंगद ने हँसकर कहा—दस दिन बाद स्वयं ही बालि के पास जाकर, अपने मित्र को छाती से लगाकर, कुशल पूछ लेना।

राम बिरोध कुसल जसि होई ❀ सो सब तोहि सुनाइहि सोई
सुनु सठ भेद होइ मन ताकें ❀ श्रीरघुबीर हृदयँ नहिं जाकें

रामजी से विरोध करने पर जैसी कुशल होती है, वह सब तुमको वह सुनायेंगे। हे मूर्ख ! सुन। भेद उसी के मन में पड़ सकता है, जिसके हृदय में रामजी न हों।



हम कुल घालक सत्य तुम्ह कुल पालक दससीस।
अंधउ बधिर न अस कहहिं नयन कान तव बीस॥

सच है, हे रावण! मैं तो कुल का नाश करने वाला हूँ और तुम कुल के रक्षक हो। ऐसी बात तो कोई अंधा-बहरा भी न कहेगा। तुम्हारे तो बीस नेत्र और बीस कान हैं।

सिव बिरंचि सुर मुनि समुदाई ❁ चाहत जासु चरन सेवकाई
तासु दूत होइ हम कुल बोरा ❁ ऐसिहु मति उर बिहर न तोरा

शिव, ब्रह्मा आदि देवता और मुनियों के समुदाय जिसके चरणों की सेवा करना चाहते हैं, उसका दूत होकर मैंने अपने कुल को डुबो दिया? ऐसी बुद्धि होने पर भी तुम्हारा हृदय फट नहीं जाता।

सुनि कठोर बानी कपि केरी ❁ कहत दसानन नयन तरेरी
खल तव कठिन बचन सब सहऊँ ❁ नीति धर्म मैं जानत अहऊँ

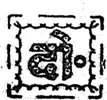
बानर (अंगद) की कठोर वाणी सुनकर रावण आँखें तरेरकर बोला— अरे दुष्ट! मैं तेरी सब कड़ी बातें इसलिये सह रहा हूँ, कि मैं नीति और धर्म को जानता हूँ।

कह कपि धर्मसीलता तोरी ❁ हमहुँ सुनी कृत पर तिय चोरी
देखी नयन दूत रखवारी ❁ बूड़ि न मरहु धर्म ब्रतधारी

अंगद बोला—तुम्हारा धर्मात्मापन मैंने भी सुना है कि तुमने पराई स्त्री की चोरी की है! और दूत की रक्षा की बात तो मैंने अपनी आँखों से देख ली है। ऐसे धर्म का व्रत धारण करने वाले तुम! डूबकर मर क्यों नहीं जाते?

नाक कान बिनु भगिनि[1] निहारी ❁ छमा कीन्हि तुम्ह धर्म बिचारी
धर्मसीलता तव जग जागी[2] ❁ पावा दरसु हमहुँ बड़भागी

नाक-कान से रहित बहन को देखकर तुमने धर्म विचार कर ही तो क्षमा कर दिया था। तुम्हारी धर्मशीलता जग-जाहिर है। मैं भी बड़ा भाग्यवान् था, जो मैंने तुम्हारा दर्शन पाया। [व्याजनिंदा अलंकार]



जनि जल्पसि जड़ जंतु कपि सठ बिलोकु मम बाहु।
लोकपाल बल बिपुल ससि ग्रसन हेतु जिमि राहु॥

१. बहन। २. जग-जाहिर।

रावण ने कहा—अरे जड़ जन्तु बानर! व्यर्थ बक-बक न कर। अरे मूर्ख! मेरी भुजाएँ तो देख। लोकपालों के विशाल बल-रूपी चन्द्रमा को ग्रसने के लिये ये मानो राहु हैं।

पुनि नभ सर मम कर[1] निकर कमलन्हि पर करि बास।
सोभत भयेउ मराल[2] इव संभु सहित कैलास॥

फिर (तू ने सुना ही होगा), आकाश रूपी तालाब में मेरे बाहु रूपी कमलों पर बैठकर शिव-सहित कैलाश हंस की तरह शोभायमान हुआ था। [अधिक अभेद रूपक अलंकार]

तुम्हरे कटक माँझ सुनु अंगद ❀ मो सन भिरिहि कवन जोधा बद[3]
तव प्रभु नारि बिरह बल हीना ❀ अनुज तासु दुख दुखी मलीना

अरे अंगद! सुन। तेरी सेना में बता, ऐसा कौन योद्धा है, जो मुझसे भिड़ेगा? तेरा स्वामी तो स्त्री के विरह में निर्बल हो रहा है। और उसका भाई उसी के दुःख से दुःखी और उदास है।

तुम्ह सुग्रीव कुलद्रुम दोऊ ❀ अनुज हमार भीरु अति सोऊ
जामवंत मंत्री अति बूढ़ा ❀ सो कि होइ अब समर अरूढ़ा

तुम और सुग्रीव, दोनों नदी-तट के वृक्ष हो। मेरा छोटा भाई विभीषण, वह भी बड़ा ही डरपोक है। मन्त्री जाम्बवन्त बहुत बुड्ढा है। भला, वह क्या अब युद्ध में चढ़ सकता है?

सिल्पि कर्म जानहिं नल नीला ❀ है कपि एक महा बल सीला
आवा प्रथम नगर जेहिं जारा ❀ सुनत बचन कह बालिकुमारा

नल-नील तो केवल शिल्प-कर्म जानते हैं। हाँ, एक बानर ज़रूर बड़ा बलवान् है, जो पहले आया था, और जिसने लंका जलायी थी। यह वचन सुनकर अंगद बोला—

सत्य बचन कहु निसिचर नाहा ❀ साँचेहुँ कीस कीन्ह पुर दाहा
रावन नगर अलप[4] कपि दहई ❀ को अस झूठ सुनै को कहई

हे राक्षस-राज! सच बताना। सचमुच क्या उस बानर ने तुम्हारा नगर जला दिया था? रावण का नगर और एक मामूली बानर जला दे। ऐसी झूठी बात कौन कहे और कौन सुने?

१. हाथ। २. हंस। ३. कह, बता। ४. अल्प, छोटे, साधारण।

जो अति सुभट सराहेउ रावन ❀ सो सुग्रीव केर लघु धावन[1]
चलइ बहुत सो बीर न होई ❀ पठवा खबरि लेन हम सोई

हे रावण ! जिसको तुमने बड़ा योद्धा बताकर सराहा है, वह तो सुग्रीव का एक मामूली हरकारा है। वह बहुत चलता है, वीर नहीं है। उसको तो हमने ख़बर लाने के लिये भेजा था।

दो०— सत्य नगर कपि जारेउ बिनु प्रभु आयसु पाइ।
फिरि न गयेउ सुग्रीव पहिं तेहिं भय रहा लुकाइ ॥(क)

क्या सचमुच उस बानर ने स्वामी की आज्ञा पाये बिना ही तुम्हारा नगर जला डाला था ? जान पड़ता है, इसी से वह लौटकर सुग्रीव के पास नहीं गया, और कहीं लुक गया है।

सत्य कहेउ दसकंठ सब मोहि न सुनि कछु कोह।
कोउ न हमारें कटक अस तो सन लरत जो सोह ॥(ख)

हे रावण ! तुमने सच ही कहा है, मुझे सुनकर कुछ भी क्रोध नहीं हुआ। मेरी सेना में ऐसा कोई भी नहीं, जो तुमसे लड़ने में शोभा पाये।

प्रीति बिरोध समान सन करिअ नीति असि आहि।
जौं मृगपति बध मेडुकन्हि भल कि कहइ कोउ ताहि ॥

नीति ऐसी है कि प्रीति और बैर समान वाले से ही करना चाहिये। सिंह यदि मेंढकों का वध करे तो क्या उसे कोई भला कहेगा ?

जद्यपि लघुता राम कहुँ तोहि बधें बड़ दोष।
तदपि कठिन दसकंठ सुनु छत्रि जाति कर रोष ॥(घ)

यद्यपि तुम्हें मारने में रामजी की छोटाई ही है और बड़ा दोष भी है, तो भी हे रावण ! सुनो, क्षत्रिय जाति का क्रोध बड़ा कठिन होता है।

बक्र उक्ति धनु बचन सर हृदय दहेउ रिपु कीस।
प्रतिउत्तर सँडसिन्ह मनहुँ काढ़त भट दससीस ॥(ङ)

---

१. हरकारा।

वक्रोक्तिरूपी धनुष से वचनरूपी बाण मारकर अंगद ने शत्रु का हृदय जला दिया। वीर रावण उन बाणों को मानो प्रत्युत्तररूपी सँडासियों से निकाल रहा है।

हँसि बोलेउ दसमौलि[1] तब कपि कर बड़ गुन एक।
जो प्रतिपालइ तासु हित करइ उपाय अनेक॥(च)

तब रावण ने हँसकर कहा—बानर में यह एक बड़ा गुण है कि जो उसे पालता है, उसकी भलाई के लिये वह अनेकों उपाय करता है।

धन्य कीस जो निज प्रभु काजा ❀ जहँ तहँ नाचइ परिहरि लाजा
नाचि कूदि करि लोग रिझाई ❀ पति हित करइ धर्म निपुनाई

बानर को धन्य है, जो अपने मालिक के लिये लज्जा छोड़कर जहाँ-तहाँ नाचता है। नाच-कूदकर, लोगों को प्रसन्न करके, अपने मालिक का हित करता है। यह उसके धर्म की निपुणता है। [व्याजनिंदा अलंकार]

अंगद स्वामि भक्त तव जाती ❀ प्रभु गुन कस न कहसि एहि भाँती
मैं गुन गाहक परम सुजाना ❀ तव कटु रटनि करउँ नहिं काना

हे अंगद! तेरी जाति स्वामिभक्त है। भला, तू अपने मालिक का गुण इस प्रकार क्यों न कहे? मैं बहुत समझदार गुण-ग्राहक हूँ, इसी से तेरे कटु-वचनों पर ध्यान नहीं देता।

कह कपि तव गुन गाहकताई ❀ सत्य पवनसुत मोहि सुनाई
बन बिधंसि सुत बधि पुर जारा ❀ तदपि न तेहिं कछु कृत अपकारा

अङ्गद ने कहा—तुम्हारी सच्ची गुण-ग्राहकता तो मुझे हनुमान ने सुनाई थी। हनुमान ने अशोक-वन को विध्वंस करके, तुम्हारे पुत्र को मारकर नगर को जला दिया था। तो भी उसने तुम्हारा कुछ अपकार नहीं किया।

सोइ बिचारि तव प्रकृति सुहाई ❀ दसकंधर मैं कीन्हि ढिठाई
देखेउँ आइ जो कछु कपि भाषा ❀ तुम्हरें लाज न रोष न माषा[2]

हे रावण! तुम्हारा वही सुन्दर स्वभाव समझकर मैंने कुछ धृष्टता की है। हनुमान ने जो कुछ कहा था, उसे आकर मैंने प्रत्यक्ष देखा कि तुमको न लज्जा है, न क्रोध है और न चिढ़ है।

---

१. दस सिर वाला रावण। २. चिढ़।

जौ असि मति पितु खायेहु कीसा ❀ कहि अस बचन हँसा दससीसा
पितहि खाइ खातेउँ पुनि तोही ❀ अबहीं समुझि परा कछु मोही

रावण बोला—अरे बानर ! तेरी ऐसी ही बुद्धि है, तभी तो तूने बाप को खा डाला। रावण ऐसा वचन कहकर हँसा। अङ्गद ने कहा—पिता को खाकर फिर तुमको भी खा डालता, पर मुझे अभी कुछ और ही बात सूझ गई है।

बालि बिमल जस भाजन[1] जानी ❀ हतउँ न तोहि अधम अभिमानी
कहु रावन रावन जग केते ❀ मैं निज श्रवन सुने सुनु जेते

अरे नीच अभिमानी ! बालि की विमल कीर्ति का पात्र जानकर मैं तुम्हें नहीं मारता हूँ। अच्छा रावण ! बता तो, संसार में कितने रावण हैं ? मैंने जितने रावण अपने कानों से सुने हैं, उन्हें सुन।

बलिहि जितन एकु गयेउ पताला ❀ राखा बाँधि सिसुन्ह हयसाला
खेलहिं बालक मारहिं जाई ❀ दया लागि बलि दीन्ह छोड़ाई

एक रावण तो बलि को जीतने के लिये पाताल में गया था। बच्चों ने उसे घुड़साल में बाँध रक्खा। बालक खेलते थे और उसे पीटते थे। बलि को दया लगी, तब उसने उसे छुड़ा दिया।

एक बहोरि सहसभुज देखा ❀ धाइ धरा जिमि जंतु बिसेषा
कौतुक लागि भवन लै आवा ❀ सो पुलस्ति मुनि जाइ छोड़ावा

एक रावण को सहस्रबाहु ने देख पाया। उसने उसको अद्भुत जंतु समझकर पकड़ लिया। तमाशे के लिये वह उसे घर ले आया। तब पुलस्त्य मुनि ने जाकर उसे छुड़ाया।

दो० एक कहत मोहि सकुच अति रहा बालि की काँख।
तिन्ह महुँ रावन तैं कवन सत्य बदहि[2] तजि माख॥

एक रावण की बात कहने में तो मुझे शर्म लगती है। वह बालि की काँख में रहा था। इनमें तुम कौन-से रावण हो ? खीजना छोड़कर सच-सच बताओ।

सुनु सठ सोइ रावन बलसीला ❀ हरगिरि[3] जान जासु भुज लीला
जान उमापति जासु सुराई[4] ❀ पूजेउँ जेहि सिर सुमन चढ़ाई

१. पात्र। २. कह। ३. कैलाश पर्वत। ४. शूरता।

रावण ने कहा—अरे मूर्ख ! सुन, मैं वही बलवान रावण हूँ, जिसकी भुजाओं की लीला कैलाश पर्वत जानता है, जिसकी शूरता उमापति शिवजी जानते हैं, जिन्हें मैंने अपने सिर-रूपी फूल चढ़ा-चढ़ाकर पूजा था।

सिर सरोज निज करन्हि उतारी ❀ पूजेउँ अमित बार त्रिपुरारी[1]
भुज बिक्रम जानहिं दिगपाला ❀ सठ अजहूँ जिन्ह कें उर साला

सिर रूपी कमलों को अपने हाथों से उतारकर मैंने असंख्य बार शिवजी की पूजा की थी। दिक्पाल मेरी भुजाओं का पराक्रम जानते हैं। अरे मूर्ख ! आज भी जिनके हृदय में वह चुभ रहा है।

जानहिं दिग्गज उर कठिनाई ❀ जब जब भिरेउँ जाइ बरिआई
जिन्ह के दसन कराल न फूटे ❀ उर लागत मूलक इव टूटे

दिग्गज (दिशाओं के हाथी) मेरी छाती की कठोरता को जानते हैं। मैं जब-जब उनसे जाकर जबरदस्ती भिड़ा हूँ, तब-तब उनके जो भयानक दाँत कभी नहीं फूटे थे, मेरी छाती से लगते ही मूली की तरह टूट गये।

जासु चलत डोलति इमि धरनी ❀ चढ़त मत्त गज जिमि लघु तरनी[2]
सोइ रावन जग बिदित प्रतापी ❀ सुनेहि न स्रवन अलीक प्रलापी

जिसके चलने से पृथ्वी ऐसी हिलती है, जैसे मतवाले हाथी के चढ़ने से छोटी नौका। मैं वही जगत् में प्रसिद्ध प्रतापी रावण हूँ। अरे झूठी डींगें मारने वाले ! तू ने कानों से क्या कभी सुना नहीं था ?

दो०— तेहि रावन कहँ लघु कहसि नर कर करसि बखान।
रे कपि बर्बर[3] खर्ब खल अब जाना तव ग्यान ॥२५॥

उस रावण को तू छोटा कहता है और मनुष्य का बखान करता है ? अरे दुष्ट, असभ्य, तुच्छ बानर ! अब तेरा ज्ञान मुझे मालूम हुआ।

सुनि अंगद सकोप कह बानी ❀ बोलु सँभारि अधम अभिमानी
सहसबाहु भुज गहन[4] अपारा ❀ दहन अनल सम जासु कुठारा

यह सुनकर अङ्गद क्रोधसहित बोला—अरे नीच अभिमानी ! सँभालकर बोल। सहस्रबाहु की भुजाओं रूपी अपार वन को जलाने के लिये जिनका फरसा अग्नि के समान था,

---

१. शिवजी। २. नाव। ३. असभ्य। ४. जंगल।

जासु परसु सागर खर धारा ❀ बूड़े नृप अगनित बहु बारा
तासु गर्व जेहि देखत भागा ❀ सो नर क्यों दससीस अभागा

जिनके फरसा-रूपी समुद्र की तीव्र धारा में अगणित राजा अनेकों बार डूब गये, उन परशुरामजी का घमण्ड जिन्हें देखते ही भाग गया, अरे अभागे रावण ! वे मनुष्य क्योंकर हैं ?

राम मनुज कस रे सठ बंगा ❀ धन्वी कामु नदी पुनि गंगा
पसु सुरधेनु कलपतरु रूखा ❀ अन्न दान अरु रस पीयूषा

क्यों रे मूर्ख उद्दण्ड ! रामजी मनुष्य हैं ? कामदेव भी क्या धनुर्धारी है ? गङ्गा क्या नदी है ? कामधेनु क्या पशु है ? कल्पवृक्ष क्या पेड़ है ? अन्न भी क्या दान है ? और अमृत क्या रस है ?

बैनतेय[1] खग अहि सहसानन ❀ चिंतामनि पुनि उपल दसानन
सुनु मतिमंद ! लोक बैकुण्ठा ❀ लाभु कि रघुपति भगति अकुंठा

गरुड़ क्या पक्षी हैं ? शेष क्या सर्प हैं ? अरे रावण ! चिंतामणि भी क्या पत्थर है ? अरे ओ मूर्ख ! सुन। बैकुण्ठ भी क्या लोक है ? और रामजी की अखण्ड भक्ति क्या लाभ कहलायेगी ? [प्रतिषेध अलंकार]

दो॰ सेन सहित तव मान मथि बन उजारि पुर जारि।
कस रे सठ हनुमान कपि गयेउ जो तव सुत मारि॥

सेना-समेत तेरा मान मथकर, अशोकवन को उजाड़कर, नगर को जलाकर और तेरे पुत्र को मारकर जो हनुमान लौट गये, क्यों रे दुष्ट ! वे क्या बानर हैं ?

सुनु रावन परिहरि चतुराई ❀ भजसि न कृपासिंधु रघुराई
जौं खल भयेसि राम कर द्रोही ❀ ब्रह्म रुद्र सक राखि न तोही

अरे रावण ! चतुराई (कपट) छोड़कर सुन। तू कृपा के समुद्र रामजी को भजता क्यों नहीं ? अरे दुष्ट ! यदि तू रामजी का द्रोही हुआ तो तुझे ब्रह्मा और रुद्र भी बचा न सकेंगे।

मूढ़ मुधा[2] जनि मारसि गाला ❀ राम बयर होइहि अस हाला
तव सिर निकर कपिन्ह के आगें ❀ परिहहिं धरनि राम सर लागें

१. गरुड़। २. व्यर्थ।

हे मूढ़ ! व्यर्थ डींग मत हाँक। रामजी के बैर से तेरा ऐसा हाल होगा कि रामजी के बाण लगने पर तेरे सिरों के समूह बानरों के सामने धरती पर पड़ेंगे।

तें तव सिर कन्दुक सम नाना ❁ खेलिहहिं भालु कीस चौगाना
जबहिं समर कोपिहिं रघुनायक ❁ छुटिहहिं अति कराल बहु सायक

तब बानर और भालू गेंद के समान तेरे अनेकों सिरों से चौगान खेलेंगे। जब रामजी युद्ध में कोप करेंगे और उनके अत्यन्त तीक्ष्ण बहुत-से बाण छूटेंगे,

तब कि चलिहि अस गाल तुम्हारा ❁ अस बिचारि भजु राम उदारा
सुनत बचन रावन परजरा[1] ❁ बरत महानल जनु घृत परा

तब क्या तेरा ऐसा गाल चलेगा ? ऐसा विचारकर उदार कृपालु रामजी को भज। अंगद के वचन सुनते ही रावण अत्यधिक जल उठा, जैसे जलती हुई प्रचंड आग में घी पड़ गया हो।

दो० **कुम्भकरन अस बन्धु मम सुत प्रसिद्ध सक्रारि[2]।**
मोर पराक्रम सुनेसि नहिं जितेउँ चराचर झारि॥

उसने कहा—अरे मूर्ख ! कुम्भकर्ण-जैसा मेरा भाई है, इन्द्र का शत्रु सुप्रसिद्ध मेघनाद मेरा पुत्र है, और तूने मेरा पराक्रम तो सुना नहीं ? मैंने समस्त जड़ और चेतन जगत् को जीत लिया है।

सठ साखामृग जोरि सहाई ❁ बाँधा सिंधु इहइ प्रभुताई
नाँघहिं खग अनेक बारीसा ❁ सूर न होहिं ते सुनु जड़ कीसा

अरे दुष्ट ! बानरों की सहायता जोड़कर राम ने समुद्र बाँध लिया, यही उसकी प्रभुता है ? समुद्र को तो अनेकों पक्षी लाँघते रहते हैं, पर वे शूरवीर नहीं हो जाते। अरे बुद्धिहीन बानर ! सुन। [द्वितीय प्रतीप अलंकार]

मम भुज सागर बल जल पूरा ❁ जहँ बूड़े बहु सुर नर सूरा
बीस पयोधि अगाध अपारा ❁ को अस बीर जो पाइहि पारा

मेरी भुजाओं का समुद्र बलरूपी जल से पूर्ण है, जिसमें अनेकों शूरवीर देवता और मनुष्य डूब चुके हैं। ऐसा वीर कौन है, जो मेरे इन अथाह और अपार बीसों समुद्रों का पार पा जायगा।

---

१. प्रज्वलित हो उठा, भभक उठा। २. इन्द्र का शत्रु, मेघनाद।

दिगपालन्ह मैं नीर भरावा ❀ भूप सुजसु खल मोहि सुनावा
जौं पै समर सुभट तव नाथा ❀ पुनि पुनि कहसि जासु गुन गाथा

अरे दुष्ट! मैंने दिग्पालों तक से पानी भराया। तू एक राजा का सुयश मुझे सुनाता है? यदि तेरा मालिक जिसकी गुण-गाथा तू बार-बार गाता है, रण-योद्धा है,

तौ बसीठ[1] पठवत केहि काजा ❀ रिपु सन प्रीति करत नहिं लाजा
हरगिरि मथन निरखु मम बाहू ❀ पुनि सठ कपि निज प्रभुहि सराहू

तो फिर दूत किसलिये भेजता है? शत्रु से प्रीति (सन्धि) करने में उसको लज्जा नहीं आती? पहले कैलाश को मथने वाले मेरे बाहुओं को देख, तब हे मूर्ख! तू अपने मालिक की सराहना करना।

दो० सूर कवन रावन सरिस स्वकर[2] काटि जेहिं सीस।
हुते अनल महुँ बार बहु हरषि साखि गौरीस ॥२८॥

रावण के समान शूरवीर कौन है? जिसने अपने ही हाथों से अपने सिर काट-काटकर, प्रसन्न मन से बहुत बार अग्नि में होम किया। स्वयं शिवजी साक्षी हैं।

जरत बिलोकेउँ जबहिं कपाला ❀ बिधि के लिखे अङ्क निज भाला
नर कें कर आपन बध बाँची ❀ हँसेउ जानि बिधि गिरा असाँची

मस्तकों के जलते समय जब मैंने अपने ललाट पर लिखे हुये ब्रह्मा के अक्षर देखे, तब मनुष्य के हाथ से अपनी मृत्यु होना बाँचकर और ब्रह्मा के लेख को मिथ्या जानकर मैं हँसा।

सोइ मन समुझि त्रास नहिं मोरें ❀ लिखा बिरंचि जरठ[3] मति भोरें
आन बीर बल सठ मम आगें ❀ पुनि पुनि कहसि लाज पति त्यागें

उसे भी स्मरण करके मेरे मन में भय नहीं है। बुड्ढे ब्रह्मा ने बुद्धिभ्रम से ऐसा लिख दिया होगा। अरे मूर्ख! तू लज्जा और मर्यादा छोड़कर मेरे आगे बार-बार दूसरे वीर के बल का बखान करता है।

कह अङ्गद सलज्ज जग माहीं ❀ रावन तोहिं समान कोउ नाहीं
लाजवन्त तव सहज सुभाऊ ❀ निज मुख निज गुन कहसि न काऊ

१. दूत। २. अपने हाथों। ३. बुड्ढा।

अङ्गद ने कहा—अरे रावण! तेरे समान लज्जावान् जगत् में दूसरा कोई नहीं। लज्जाशीलता तेरा सहज स्वभाव है। तू तो अपने मुँह से अपने गुणों का बखान कभी नहीं करता।

सिर अरु सैल कथा चित रही ❀ तातें बार बीस तैं कही
सो भुजबल राखउ उर घाली ❀ जीतेउ सहसबाहु बलि बाली

सिर काटने और कैलाश उठाने ही की कथा तेरे चित्त में चढ़ी हुई थी, इससे तू ने उसे बीस बार कहा। भुजाओं के उस बल को तो तू ने हृदय में ही छिपा रक्खा, जिससे तू ने सहस्रबाहु, बलि और बालि को जीता था। (प्रत्येक मुँह से सिर और शैल की दो कथायें कहीं, इससे बीस बार कहा।)

सुनु मतिमंद देहि अब पूरा ❀ काटें सीस कि होइअ सूरा
इंद्रजालि कहुँ कहिअ न बीरा ❀ काटइ निज कर सकल सरीरा

अरे मंदबुद्धि! सुन। अब उत्तर दे कि क्या सिर काटने से भी कोई शूर-वीर होता है? बाजीगर को वीर नहीं कहा जा सकता, यद्यपि वह अपने हाथ से अपना सारा शरीर काट डालता है। [अर्थान्तरन्यास अलंकार]

दो॰ जरहिं पतंग मोह बस भार बहहिं खर बृन्द।
ते नहिं सूर कहावहिं समुझि देखु मतिमंद ॥२९॥

अरे मंदबुद्धि! समझकर देख, पतंगे मोहवश आग में जलते हैं, गधों के झुंड बोझा लेकर चलते हैं, पर वे इन कारणों से वीर नहीं कहलाते।

अब जनि बतबढ़ाव खल करही ❀ सुनु मम बचन मान परिहरही
दसमुख मैं न बसीठी आयउ ❀ अस बिचारि रघुबीर पठायउ

अरे दुष्ट! अब बतबढाव मत कर और मेरी बात सुन, घमंड छोड़ दे। अरे रावण! मैं दूत की तरह नहीं आया हूँ। राम ने ऐसा विचार कर मुझे भेजा है—

बार बार अस कहेउ कृपाला ❀ नहिं गजारि जसु बधें सृगाला
मन महुँ समुझि बचन प्रभु केरे ❀ सहेउँ कठोर बचन सठ तेरे

कृपालु रामजी ने बार-बार ऐसा कहा है कि सियार के मारने से सिंह की प्रशंसा नहीं होती। अरे मूर्ख! प्रभु के उन्हीं वचनों को मन में समझ कर ही मैंने तेरे कठोर वचन सहे हैं।

नाहिं त करि मुख भंजन तोरा ❀ लै जातेउँ सीतहि बरजोरा
जानेउँ तव बल अधम सुरारी ❀ सूने हरि आनेसि परनारी

नहीं तो तेरे मुँह तोड़कर मैं सीता को जबरदस्ती ले जाता। अरे नीच! देवताओं के शत्रु! मैंने तेरा बल तभी जान लिया जब तू अकेले में दूसरे की स्त्री को हर लाया।

तैं निसिचर पति गर्ब बहूता ❀ मैं रघुपति सेवक कर दूता
जौं न राम अपमानहिं डरऊँ ❀ तोहि देखत अस कौतुक करऊँ

तू राक्षसों का राजा है और बड़ा अभिमानी है। पर मैं तो रामजी के सेवक का दूत हूँ। यदि मैं रामजी के अपमान से न डरूँ तो तेरे देखते-देखते मैं ऐसा करूँ कि,

दो० तोहि पटकि महि सेन हति चौपट[1] करि तव गाउँ।
तव जुवतिन्ह समेत सठ जनकसुतहि लै जाउँ ॥३०॥

तुझे पृथ्वी पर पटककर, तेरी सेना का संहार करके और तेरे गाँव को बर्बाद करके, अरे मूर्ख! तेरी युवती स्त्रियों-सहित सीता को मैं ले जाऊँ।

जौं अस करौं तदपि न बड़ाई ❀ मुयेहि बधें कछु नहिं मनुसाई[2]
कौल काम बस कृपिन बिमूढ़ा ❀ अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा

यदि ऐसा करूँ भी, तो भी इसमें मेरी कोई बड़ाई नहीं है। मरे हुये को मारने में कुछ भी बहादुरी नहीं है। वाममार्गी, कामी, कंजूस, अत्यन्त मूढ़, बहुत गरीब, बदनाम, अत्यन्त वृद्ध,

सदा रोगबस संतत क्रोधी ❀ बिष्णु बिमुख श्रुति संत बिरोधी
तनु पोषक निंदक अघ खानी ❀ जीवत सव[3] सम चौदह प्रानी

नित्य का रोगी, सदा क्रोध करने वाला, विष्णु से विमुख, वेद और सन्तों का विरोधी, अपना ही शरीर पालने वाला, परायी निन्दा करने वाला, पाप की खान, ये चौदह प्राणी जीते ही मुर्दे के समान हैं।

अस बिचारि खल बधउँ न तोही ❀ अब जनि रिस उपजावसि मोही
सुनि सकोप कह निसिचर नाथा ❀ अधर दसन दसि[4] मींजत हाथा

१. बरबाद। २. बहादुरी। ३. मृतक। ४. काटकर।

हे दुष्ट! ऐसा विचारकर मैं तुझे नहीं मारता। अब तू मुझ में क्रोध न पैदा कर। यह सुनकर राक्षसों का राजा रावण दाँतों से ओंठ काटकर, क्रोध से हाथ मलते हुये, कहने लगा।

रे कपि अधम मरन अब चहसी[1] ❀ छोटे बदन बात बड़ि कहसी
कटु जल्पसि जड़ कपि बल जाकें ❀ बल प्रताप बुधि तेज न ताकें

अरे नीच बानर! अब तू मरना ही चाहता है। इसी से छोटे मुँह बड़ी बात कहता है। अरे जड़! जिसके बल पर तू कड़वे बचन बक रहा है, उसके न बल है, न प्रताप और न बुद्धि है, न तेज।

दो॰ अगुन अमान जानि तेहि दीन्ह पिता बनबास।
सो दुख अरु जुबती बिरह पुनि निसि दिन मम त्रास॥

उसे गुणहीन और मानहीन समझकर पिता ने वनवास दिया। एक तो यही दुःख उसे है, फिर युवती स्त्री का विरह और उस पर भी रात-दिन मेरा भय बना रहता है।

जिन्ह के बल कर गर्ब तोहि ऐसे मनुज अनेक।
खाहिं निसाचर दिवस निसि मूढ़ समुझु तजि टेक॥

जिनके बल का तुझे अभिमान है, ऐसे अनेकों मनुष्यों को राक्षस रात-दिन खाया करते हैं। अरे मूढ़! हठ छोड़कर समझ।

जब तेहिं कीन्हि राम कै निंदा ❀ क्रोधवन्त अति भयेउ कपिन्दा
हरि हर निन्दा सुनइ जो काना ❀ होइ पाप गो-घात समाना

जब उसने रामजी की निन्दा की तब तो अंगद अत्यन्त क्रोधित हुआ। जो अपने कानों से विष्णु और शिव की निन्दा सुनता है उसे गोवध के समान पाप होता है।

कटकटान कपिकुञ्जर भारी ❀ दुहु भुजदंड तमकि महि मारी
डोलत धरनि सभासद खसे ❀ चले भाजि भय मारुत ग्रसे

बानरों में हाथी के समान बलवान अंगद ज़ोर से कटकटाया और उसने क्रोध में आकर दोनों भुजदंडों को ज़मीन पर दे मारा। पृथ्वी के हिलते ही

१. चाहता है।

सभासद गिर पड़े, वे भय रूपी वायु से ग्रस्त होकर भाग चले।

गिरत सँभारि उठा दसकंधर ❀ भूतल परे मुकुट अति सुंदर
कछु तेहिं लै निज सिरन्हि सँवारे ❀ कछु अंगद प्रभु पास पवारे[1]

रावण गिरते-गिरते सँभलकर उठा। पर उसके अत्यन्त सुन्दर मुकुट पृथ्वी पर गिर पड़े। कुछ को तो उसने उठाकर अपने सिरों पर सुधार कर रख लिया और कुछ को अंगद ने उठाकर रामजी के पास फेंक दिया।

आवत मुकुट देखि कपि भागे ❀ दिन ही लूक[2] परन बिधि लागे
की रावन करि कोप चलाए ❀ कुलिस चारि आवत अति धाए

मुकुटों को आते देखकर बानर भागे। और सोचने लगे—अरे राम! क्या दिन ही में लूक बरसने लगे? या तो रावण ने ये क्रोध करके चलाये हैं। ये चार बज्र बड़ी तेज़ी से दौड़े हुये आ रहे हैं।

कह प्रभु हँसि जनि हृदय डेराहू ❀ लूक न असनि[3] केतु नहिं राहू
ए किरीट[4] दसकंधर केरे ❀ आवत बालितनय के प्रेरे

प्रभु ने हँसकर कहा—मन में डरो मत। न ये लूक हैं, न बज्र, न केतु न राहु। ये रावण के मुकुट हैं, और अंगद के फेंके हुये आ रहे हैं।

दो०—तरफि[5] पवनसुत कर गहे आनि धरे प्रभु पास।
कौतुक देखहिं भालु कपि दिनकर[6] सरिस प्रकास॥

हनुमान ने उछलकर उन्हें हाथ से पकड़ लिया और लाकर प्रभु के पास रख दिया। बानर और भालू तमाशा देखने लगे। मुकुटों में सूर्य के समान प्रकाश था।

उहाँ कहत दसकंध रिसाई ❀ धरि मारहु कपि भागि न जाई
एहि बिधि बेगि सुभट सब धावहु ❀ खाहु भालु कपि जहँ तहँ पावहु

वहाँ (लंका में) रावण क्रोध करके कहने लगा—इस बानर को पकड़कर मारो, भाग न जाय। इस प्रकार सब योद्धा जल्दी दौड़ो और बानर-भालुओं को जहाँ पावो वहीं खा डालो।

---

१. फेंका। २. उल्का। ३. बज्र। ४. मुकुट। ५. उछलकर। ६. सूर्य।

मरकट हीन करहु महि जाई ❀ जिअत धरहु तापस दोउ भाई
पुनि सकोप बोलेउ जुबराजा ❀ गाल बजावत तोहि न लाजा

पृथ्वी को बानरों से रहित कर दो और जाकर दोनों भाइयों को जीते-जी पकड़ लो। फिर अंगद क्रोध करके बोला—डींग मारने में तुझे लाज नहीं आती ?

मरु गर काटि निलज कुलघाती ❀ बल बिलोकि बिहरति नहिं छाती
रे त्रिय चोर कुमारग गामी ❀ खल मल रासि मंदमति कामी

अरे बेशर्म ! कुल का नाश करने वाले ! तू गला काटकर मर जा। मेरा बल देखकर तेरी छाती नहीं फटती ? अरे स्त्री चुराने वाले, कुपथ पर चलने वाले, दुष्ट, पाप की ढेरी, मंदबुद्धि और कामी !

सन्निपात जल्पसि दुर्बादा ❀ भयेसि काल बस खल मनुजादा
याकर फल पावहुगे आगे ❀ बानर भालु चपेटन्हि लागे

तू सन्निपात में क्या दुर्वचन बक रहा है ? हे दुष्ट ! मनुष्य-भक्षक ! तू मृत्यु के वश हो गया है। इसका फल तू आगे बानर और भालुओं के चपेटे लगने पर पायेगा।

राम मनुज बोलत असि बानी ❀ गिरहिं न तव रसना अभिमानी
गिरिहहिं रसना संसय नाहीं ❀ सिरन्हि समेत समर महि माहीं

राम मनुष्य हैं, ऐसा वचन बोलते हुये, अरे अभिमानी ! तेरी जीभें नहीं गिर पड़तीं ? इसमें शक नहीं कि तेरी जीभें सिरों के साथ रणभूमि में गिरेंगी।

सो० सो नर क्यों दसकंध बालि बध्यो जेहि एक सर।
बीसहु लोचन अंध धिग तव जनम कुजाति जड़॥

अरे रावण ! जिसने बालि को एक ही बाण से मार डाला, वह मनुष्य कैसे है ? अरे कुजाति ! अरे जड़ ! बीस आँखें होने पर भी तू अन्धा है। तेरे जन्म को धिक्कार है।

तव सोनित[1] की प्यास तृषित राम सायक निकर।
तजौं तोहि तेहि त्रास कटु जल्पक निसिचर अधम॥

१. रक्त।

रामजी के बाणों के समूह तेरे रक्त की प्यास से प्यासे हैं। अरे कटुवादी! नीच राक्षस! इसीलिये मैं तुझे छोड़ता हूँ।

मैं तव दसन तोरिबे लायक ❀ आयसु मोहिं न दीन्ह रघुनायक
अस रिसि[1] होत दसउ मुख तोरौं ❀ लङ्का गहि समुद्र महँ बोरौं

मैं तेरे दाँत तोड़ने में समर्थ हूँ। पर मुझे रामजी ने आज्ञा नहीं दी। ऐसा क्रोध आता है कि तेरे दसों मुँह तोड़ डालूँ और लंका को उठाकर समुद्र में डुबा दूँ।

गूलरि फल समान तव लंका ❀ बसहु मध्य तुम्ह जंतु असंका
मैं बानर फल खात न बारा ❀ आयसु दीन्ह न राम उदारा

तेरी लंका गूलर के फल के समान है। तुम सब कीड़े उसके भीतर निडर होकर बसे हो। मैं बानर हूँ, इस फल को खाते मुझे क्या देरी? पर कृपालु रामजी ने आज्ञा नहीं दी है।

जुगुति सुनत रावन मुसुकाई ❀ मूढ़ सिखिहि कहँ बहुत झुठाई
बालि न कबहुँ गाल अस मारा ❀ मिलि तपसिन्ह तैं भयेसि लबारा[2]

अंगद की युक्ति सुनकर रावण मुसकुराकर कहने लगा—अरे मूर्ख! बहुत झूठ बोलना तूने कहाँ सीखा? बालि ने तो कभी ऐसी डींग नहीं मारी थी। जान पड़ता है, तपस्वियों से मिलकर तू लबार हो गया है।

साँचेहुँ मैं लबार भुज बीहा[3] ❀ जौं न उपारउँ तव दस जीहा[4]
राम प्रताप सुमिरि कपि कोपा ❀ सभा माँझ पन करि पद रोपा

अंगद ने कहा—यदि मैं तेरी दसों जीभें न उखाड़ लूँ तो हे बीस भुजाओं वाले! मैं सचमुच लबार ही हूँ। अंगद राम के प्रताप को स्मरण करके क्रुद्ध हुआ और उसने रावण की सभा में प्रण करके पैर रोप दिया।

जौं मम चरन सकसि[5] सठ टारी ❀ फिरहिं रामु सीता मैं हारी
सुनहु सुभट सब कह दससीसा ❀ पद गहि चरन पछारहु कीसा

अङ्गद ने कहा—अरे मूर्ख! यदि तू मेरा पैर हटा सकेगा, तो रामजी लौट जायँगे, मैं सीता को हारता हूँ। रावण ने कहा—हे सब वीरो! सुनो। इस बानर का पैर पकड़ कर पृथ्वी पर पछाड़ दो।

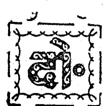
१. क्रोध। २. झूठा। ३. बीस। ४. जीभ। ५. सकेगा।

इंद्रजीत आदिक बलवाना ॐ हरषि उठे जहँ तहँ भट नाना
झपटहिं करि बल बिपुल उपाई ॐ पद न टरइ बैठहिं सिरु नाई

इन्द्रजीत (मेघनाद) आदि अनेकों बलवान योद्धा जहाँ-तहाँ हर्षित होकर उठ खड़े हुये। वे बहुत बल लगाकर, बहुत तरह की तरकीबें करके झपटते हैं, पर पैर नहीं टलता और वे सिर नवाकर बैठ जाते हैं।

पुनि उठि झपटहिं सुर आराती ॐ टरइ न कीस चरन एहि भाँती
पुरुष कुजोगी जिमि उरगारी[1] ॐ मोह बिटप नहिं सकहिं उपारी[2]

देवताओं के शत्रु राक्षस फिर-फिर उठकर झपटते हैं, पर बानर का पैर इस प्रकार नहीं टलता था, जैसे हे गरुड़! कुयोगी विषयी पुरुष मोह-रूपी वृक्ष को नहीं उखाड़ सकते।



कोटिन्ह मेघनाद सम सुभट उठे हरषाइ।
झपटहिं टरै न कपि चरन पुनि बैठहिं सिरु नाइ॥

मेघनाद के समान करोड़ों योद्धा हर्षित होकर उठे। वे झपटते हैं; पर बानर का चरण नहीं उठता और वे लज्जा के मारे सिर नवाकर बैठ जाते हैं।

भूमि न छाँड़त कपि चरन देखत रिपु मद भाग।
कोटि बिघ्न तें संत कर मन जिमि नीति न त्याग॥

बानर का पैर पृथ्वी को नहीं छोड़ता था, यह देखकर शत्रु का घमण्ड दूर हो गया। जैसे करोड़ों विघ्न पड़ने पर भी सत्पुरुष का मन नीति को नहीं छोड़ता।

कपिबल देखि सकल हियँ हारे ॐ उठा आप जुबराज पचारे
गहत चरन कह बालिकुमारा ॐ मम पद गहें न तोर उबारा

बानर का बल देखकर सब हृदय में हार गये। तब युवराज (अङ्गद) के ललकारने पर रावण खुद उठा। जब वह अङ्गद का पैर पकड़ने चला तब अंगद ने कहा—मेरा पैर पकड़ने से तेरा बचाव नहीं होगा।

गहसि न राम चरन सठ जाई ॐ सुनत फिरा मन अति सकुचाई
भयेउ तेजहत श्री सब गई ॐ मध्य दिवस जिमि ससि सोहई

---

१. साँपों के शत्रु, गरुड़। २. उखाड़।

अरे मूर्ख ! तू जाकर रामजी के पैर क्यों नहीं पकड़ता ? यह सुनकर वह मन में बहुत ही लज्जित होकर लौट गया। उसकी सारी श्री जाती रही। वह तेजहीन हो गया, जैसे दिन के बीच में चन्द्रमा दिखाई देता है।

सिंघासन बैठेउ सिर नाई ❀ मानहुँ संपति सकल गँवाई
जगदातमा प्रानपति रामा ❀ तासु बिमुख किमि लह बिश्रामा

वह सिर नीचा करके सिंहासन पर जा बैठा। मानो सारी सम्पत्ति ही गँवा दी हो। रामजी जगत् की आत्मा और प्राणों के स्वामी हैं। उनसे विमुख होकर कोई शान्ति कैसे पा सकता है ?

उमा राम कर भृकुटि बिलासा ❀ होइ बिस्व पुनि पावइ नासा
तृन तें कुलिस कुलिस तृन करई ❀ तासु दूत पन कहु किमि टरई

शिवजी कहते हैं—हे उमा ! रामजी के भौं के इशारे से विश्व उत्पन्न होता है और फिर नाश को प्राप्त होता है। जो तिनके को बज्र और बज्र को तिनका बना देते हैं, उनके दूत का प्रण भला कैसे टल सकता है ?

पुनि कपि कही नीति बिधि नाना ❀ मान न ताहि कालु नियराना
रिपु मद मथि प्रभु सुजस सुनायो ❀ यह कहि चलेउ बालि नृप जायो[1]

फिर बानर ने अनेकों प्रकार से नीति की बातें कहीं। पर रावण ने नहीं माना, क्योंकि उसकी मृत्यु निकट थी। शत्रु के गर्व को मथ कर अंगद ने उसको प्रभु का सुयश सुनाया और फिर बालि राजा का पुत्र यह कहकर चल दिया—

हतौं न खेत खेलाइ खेलाई ❀ तोहि अबहिं का करौं बड़ाई
प्रथमहिं तासु तनय[2] कपि मारा ❀ सो सुनि रावन भयेउ दुखारा
जातुधान[3] अंगद बल देखी ❀ भय ब्याकुल सब भये बिसेषी

तुझे रणखेत में खेला-खेलाकर न मारूँ, तब तक अभी से क्या बड़ाई करूँ ? अंगद ने पहले ही उसके पुत्र का वध किया था, यह सुनकर रावण दुःखी हो गया। सब राक्षस अंगद का बल देखकर भय से बहुत ही व्याकुल हो गये।

---

१. पुत्र। २. पुत्र। ३. राक्षस।

दो०– रिपु बल धरषि हरषि कपि बालि तनय बल पुञ्ज।
सजल नयन तन पुलक अति गहे राम पद कंज ॥

शत्रु के बल को कुचलकर, बल की राशि बालि-पुत्र अंगद ने हर्षित होकर, आँखों में जल भरे हुये, पुलकित होकर रामजी के चरण-कमल पकड़ लिये ।

साँझ जानि दसकंधर भवन गयेउ बिलखाइ ।
मंदोदरी रावनहि बहुरि कहा समुझाइ ॥

संध्या हुई जानकर रावण बिलखता हुआ महल में गया। मंदोदरी ने रावण को समझाकर फिर कहा,

कंत समुझि मन तजहु कुमतिही ❀ सोह न समर तुम्हहिं रघुपतिही
रामानुज लघु रेख खँचाई ❀ सोउ नहिं नाँघेहु असि मनुसाई

हे कांत ! मन में समझकर कुबुद्धि को छोड़ दो। आप से और रामजी से युद्ध होना शोभा नहीं देता। उनके छोटे भाई ने मामूली-सी रेखा खींच दी थी, उसे भी आप नहीं लाँघ सके, ऐसा तो आपका पुरुषत्व है।

पिय तुम्ह ताहि जितब संग्रामा ❀ जा के दूत करे अस कामा
कौतुक सिंधु नाँघि तव लंका ❀ आयेउ कपि केहरी असंका

हे प्रियतम ! आप उसे युद्ध में जीत पायेंगे ? जिसके दूत का ऐसा काम है, कि खेलवाड़ की तरह समुद्र को लाँघकर वह बानरों में सिंह के समान तुम्हारी लङ्का में निर्भय चला आया।

रखवारे हति बिपिन उजारा ❀ देखत तोहि अच्छ[1] तेहिं मारा
जारि नगर सब कीन्हेसि छारा ❀ कहाँ रहा बल गर्ब तुम्हारा

रखवालों को मारकर उसने अशोकवन को उजाड़ डाला; आपके देखते-देखते उसने अक्षयकुमार को भी मार डाला। सारे नगर को जलाकर राख कर दिया। तब आपके बल का घमण्ड कहाँ था ?

अब पति मृषा गाल जनि मारहु ❀ मोर कहा कछु हृदयँ बिचारहु
पति रघुपतिहि नृपति जनि मानहु ❀ अग[2] जग[3] नाथ अतुल बल जानहु

१. अक्षयकुमार, रावण का पुत्र। २. चर। ३. अचर।

अब हे स्वामी ! व्यर्थ डींग मत हाँकिये, मेरे कहने पर हृदय में कुछ विचार कीजिये। हे पति ! रामजी को राजा ही मत समझिये, बल्कि उन्हें चर-अचर जगत् के स्वामी और अतुलनीय बल वाला जानिये।

बान प्रताप जान मारीचा ❀ तासु कहा नहिं मानेहु नीचा
जनक सभा अगनित महिपाला ❀ रहे तुम्हउ बल अतुल बिसाला

रामजी के बाण की महिमा तो नीच मारीच भी जानता था, पर तुमने उसका भी कहना नहीं माना। जनक की सभा में अगणित राजागण थे। वहाँ अत्यन्त अधिक बल वाले आप भी मौजूद थे।

भंजि धनुष जानकी बिआही ❀ तब संग्राम जितेहु किन ताही
सुरपति सुत जानइ बल थोरा ❀ राखा जियत आँखि गहि फोरा
सूपनखा कै गति तुम्ह देखी ❀ तदपि हृदय नहिं लाज बिसेषी

वहाँ रामजी ने धनुष तोड़कर जानकी को ब्याह लिया, तब आपने युद्ध में उन्हें क्यों नहीं जीता ? इन्द्र का पुत्र जयन्त उनके बल को कुछ-कुछ जानता है। रामजी ने उसकी एक आँख फोड़ दी और उसे जीता छोड़ दिया। आपने शूर्पणखा की दशा देख ली, तो भी आपके हृदय में लज्जा नहीं आती।

दो॰ बधि बिराध खर दूषनहिं लीलाँ हतेउ कबंध।
बालि एक सर मारेउ तेहि जानहु दसकंध ॥३६॥

विराध और खर-दूषण को मारकर रामजी ने खेलवाड़ ही में कबंध को मार डाला। और बालि को एक ही बाण से मार दिया। हे दशकंधर ! इसे जानिये।

जेहि जलनाथ बँधायेउ हेला ❀ उतरे प्रभु दल सहित सुबेला
कारुनीक दिनकर कुल केतू ❀ दूत पठायेउ तव हित हेतू

जिन्होंने खेलवाड़ की तरह समुद्र को बँधा लिया और जो प्रभु सेना-सहित सुबेल पर्वत पर उतरे हैं, उन्हीं करुणा करने वाले, सूर्यकुल के पताका रामजी ने आपके कल्याण के लिये दूत भेजा।

सभा माँझ जेहिं तव बल मथा ❀ करि बरूथ महुँ मृगपति जथा
अंगद हनुमत अनुचर जाके ❀ रन बाँकुरे बीर अति बाँके

जिसने सभा में आकर आपके बल को मथ डाला, जैसे हाथियों के समूह

में सिंह। रण में बड़े बाँके वीर अङ्गद और हनुमान जिसके सेवक हैं।

तेहि कहुँ पिय पुनि पुनि नर कहहू ❀ मुधा[1] मान ममता मद बहहू[2]
अहह कंत कृत राम बिरोधा ❀ काल बिबस मन उपज न बोधा

हे पति! उसे आप बार-बार मनुष्य कहते हैं, आप व्यर्थ ही मान, ममता और घमण्ड का बोझा ढो रहे हैं। हा प्रियतम! आपने रामजी से विरोध कर लिया और काल के वश होने से आपके मन में ज्ञान नहीं पैदा होता।

काल दंड गहि काहु न मारा ❀ हरइ धर्म बल बुद्धि बिचारा
निकट काल जेहि आवत साईं ❀ तेहि भ्रम होहि तुम्हारिहि नाईं

काल लाठी लेकर किसी को नहीं मारता, वह तो धर्म, बल, बुद्धि तथा विचार को हरण कर लेता है। हे स्वामी! जिसका काल निकट आ जाता है, उसे आप ही की तरह भ्रम हो जाता है।

दो०— दुइ सुत मरे दहेउ पुर अजहुँ पूर पिअ देहु।
कृपासिंधु रघुनाथ भजि नाथ बिमल जसु लेहु॥३७॥

आपके दो पुत्र मारे गये, नगर जल गया। हे प्रियतम! अब भी समाप्ति कर दीजिये। हे नाथ! कृपा के समुद्र रामजी को भजकर निर्मल यश लीजिये।

नारि बचन सुनि बिसिख समाना ❀ सभा गयेउ उठि होत बिहाना
बैठ जाइ सिंहासन फूली ❀ अति अभिमान त्रास सब भूली

तीर की तरह चुभने वाले स्त्री के वचन सुनकर वह सवेरा होते ही उठकर दरबार में गया। वह जाकर अत्यन्त अभिमान में फूलकर और सब भय भुलाकर सिंहासन पर जा बैठा।

इहाँ राम अंगदहिं बोलावा ❀ आइ चरन पङ्कज सिरु नावा
अति आदर समीप बैठारी ❀ बोले बिहँसि कृपाल खरारी

यहाँ रामजी ने अङ्गद को बुलाया। अङ्गद ने आकर रामजी के चरण-कमलों में सिर नवाया। कृपालु और खर राक्षस के शत्रु रामजी अंगद को बड़े आदर से पास बैठाकर हँस कर बोले—

बालितनय अति कौतुक[3] मोही ❀ तात सत्य कहु पूछउँ तोही
रावन जातुधान कुल टीका ❀ भुज बल अतुल जासु जग लीका

१. व्यर्थ। २. ढोते हो। ३. कौतूहल, आश्चर्य।

हे बालि के पुत्र ! मुझे बड़ा कौतूहल है। हे तात ! मैं तुमसे पूछता हूँ, सच बताना। रावण तो राक्षसों के कुल का तिलक है, जिसके अपार भुजबल की जगत् भर में धाक है।

तासु मुकुट तुम्ह चारि चलाए ❀ कहहु तात कवनी बिधि पाए
सुनु सर्वग्य प्रनत सुख कारी ❀ मुकुट न होहिं भूप गुन चारी

उसके चार मुकुट तुमने फेंके, हे तात ! बताओ, तुमने उन्हें कैसे पाया ? अंगद ने कहा—हे सर्वज्ञ, हे शरणागत को सुख देने वाले ! सुनिये, वे मुकुट नहीं हैं, राजा के चार गुण हैं।

साम दाम अरु दंड बिभेदा ❀ नृप उर बसहिं नाथ कह बेदा
नीति धर्म के चरन सुहाए ❀ अस जिय जानि नाथ पहिं आए

हे नाथ ! वेद कहते हैं कि साम, दाम, दंड और भेद, ये चारों राजा के हृदय में बसते हैं। ये नीति-धर्म के चार सुन्दर चरण हैं। ऐसा जी में जानकर ये नाथ के पास आ गये।

दो०

धर्महीन प्रभु पद बिमुख काल बिबस दससीस।
आए गुन तजि रावनहि सुनहु कोसलाधीस॥

रावण धर्म से रहित, प्रभु के पद से विमुख और काल के वश में है। इससे हे कोसलराज ! सुनिये, वे गुण रावण को छोड़कर आपके पास आ गये हैं।

परम चतुरता श्रवन सुनि बिहँसे राम उदार।
समाचार पुनि सब कहे गढ़ के बालिकुमार॥

अंगद की बड़ी चतुरता की बात कानों से सुनकर कृपालु राम हँसने लगे। फिर बालिपुत्र ने लङ्कागढ़ के सब समाचार सुनाये।

रिपु के समाचार जब पाए ❀ राम सचिव सब निकट बोलाए
लंका बाँके चारि दुआरा ❀ केहि बिधि लागिअ करहु बिचारा

शत्रु के समाचार पाकर रामजी ने सब मन्त्रियों को पास बुलाया और कहा—लंका के चार बड़े विकट द्वार हैं, उन पर किस तरह आक्रमण किया जाय, इस पर विचार करो।

तब कपीस रिच्छेस बिभीषन ❁ सुमिरि हृदयँ दिनकर कुल भूषन
करि बिचार तिन्ह मंत्र दृढ़ावा ❁ चारि अनी[1] कपि कटकु[2] बनावा

तब सुग्रीव, जाम्बवंत और विभीषण ने हृदय में सूर्यकुल के भूषण रामजी को स्मरण किया और विचार करके राय निश्चित की और उन्होंने बानरों की सेना को चार टुकड़ियों में बाँटा।

जथाजोग सेनापति कीन्हे ❁ जूथप सकल बोलि तब लीन्हे
प्रभु प्रताप कहि सब समुझाये ❁ सुनि कपि सिंहनाद करि धाये

उन टुकड़ियों के लिये जैसे चाहियें वैसे सेनापति नियुक्त किये। फिर सब सरदारों को बुलाया और सबको प्रभु का प्रताप कहकर समझाया, जिसे सुनकर सब बानर सिंह की तरह गर्जन करके दौड़े।

हरषित राम चरन सिर नावहिं ❁ गहि गिरि सिखर बीर सब धावहिं
गर्जहिं तर्जहिं भालु कपीसा ❁ जय रघुबीर कोसलाधीसा

सब हर्षित होकर रामजी के चरणों में सिर नवाते हैं और पर्वतों की शिलायें ले-लेकर सब वीर दौड़ते हैं। 'कोसलपति रामजी की जय हो', ऐसा कहकर भालू और बानर गरजते और ललकारते हैं।

जानत परम दुर्ग अति लंका ❁ प्रभु प्रताप कपि चले असंका
घटाटोप करि चहुँदिसि घेरी ❁ मुखहि निसान बजावहिं भेरी

यह जानते हुये भी कि लंका बड़ा अजेय क़िला है, बानर प्रभु के प्रताप से निडर होकर दौड़े। बादलों की घटा की तरह उमड़-घुमड़कर उन्होंने चारों ओर से घेर लिया। वे मुँह ही से डंके और भेरी बजाने लगे।

दो॰ जयति राम भ्राता सहित जय कपीस सुग्रीव।
गर्जहिं सिंघनाद कपि भालु महा बल सींव ॥३९॥

'भाई-सहित रामजी की जय हो', 'बानरों के स्वामी सुग्रीव की जय हो', ऐसा कहकर बड़े बल वाले भालू और बानर सिंह की तरह नाद कर गरजने लगे।

लंका भयेउ कोलाहल भारी ❁ सुना दसानन अति अहँकारी
देखहु बनरन्ह केरि ढिठाई ❁ बिहँसि निसाचर सेन बोलाई

---

१. सेना की टुकड़ियाँ। २. सेना।

लङ्का में बड़ा भारी हल्ला हुआ। अत्यन्त अहंकारी रावण ने भी उसे सुना। वह कहने लगा—बानरों की ढिठाई तो देखो! यह कहकर हँसकर उसने राक्षसों की सेना बुलाई।

आये कीस काल के प्रेरे ❀ छुधावन्त[1] रजनीचर मेरे
अस कहि अट्टहास[2] सठ कीन्हा ❀ गृह बैठें अहार बिधि दीन्हा

उसने कहा—ये बानर काल की प्रेरणा से चले आये हैं। मेरे राक्षस भूखे भी हैं। ब्रह्मा ने घर-बैठे ही भोजन भेज दिया। ऐसा कहकर उस मूर्ख ने अट्टहास किया।

सुभट सकल चारिहुँ दिसि जाहू ❀ धरि धरि भालु कीस सब खाहू
उमा रावनहि अस अभिमाना ❀ जिमि टिट्टिभ खग सूत उताना

राक्षसों से उसने कहा—हे वीरो! सब लोग चारों दिशाओं में जाओ और भालुओं और बानरों को पकड़-पकड़कर खाओ। शिवजी कहते हैं—हे उमा! रावण को ऐसा अभिमान था, जैसे टिटिहिरी पक्षी पैर ऊपर की ओर करके सोता है।

चले निसाचर आयसु माँगी ❀ गहि कर भिंडिपाल बर साँगी
तोमर मुगदर परिघ प्रचंडा ❀ सूल कृपान परसु गिरिखंडा

राक्षस आज्ञा ले-लेकर और हाथों में भिंडिपाल, बरछी, तोमर, मुगदर, प्रचंड परिघ, शूल, दुधारी तलवार, फरसे और पहाड़ों के टुकड़े लेकर चले।

जिमि अरुनोपल[3] निकर निहारी ❀ धावहिं सठ खग मांस अहारी
चोंच भंग दुख तिन्हहिं न सूझा ❀ तिमि धाए मनुजाद अबूझा

जैसे लाल पत्थरों का समूह देखकर मूर्ख मांसाहारी पक्षी उस पर टूट पड़ते हैं; पत्थरों पर पड़ने से चोंच टूट जाने का दुःख उन्हें नहीं सूझता। वैसे ही वे मूर्ख राक्षस दौड़े।



नानायुध सर चाप धर जातुधान बलबीर।
कोट[4] कँगूरनि चढ़ि गए कोटि कोटि रनधीर।४०।

अनेकों प्रकार के अस्त्र-शस्त्र और धनुष-बाण लेकर करोड़ों बली, वीर और रणधीर राक्षस परकोटे के कँगूरों पर चढ़ गये।

---

१. भूखे। २. ठहाका मारकर हँसना। ३. लाल पत्थर। ४. परकोटा, चहारदीवारी।

कोट कँगूरन्हि सोहहिं कैसे ❀ मेरु के सृङ्गनि जनु घन बैसे[1]
बाजहिं ढोल निसान जुझाऊ ❀ सुनि धुनि होहि भटन्हि मन चाऊ

परकोटे के कँगूरों पर वे ऐसे शोभायमान लगते हैं जैसे मेरु की चोटियों पर बादल बैठे हों। युद्ध के ढोल और डंके बज रहे हैं, उनकी ध्वनि सुनकर योद्धाओं के मन में लड़ने का चाव बढ़ रहा है।

बाजहिं भेरि नफीरि अपारा ❀ सुनि कादर उर जाहिं दरारा
देखिन्ह जाइ कपिन्ह के ठट्टा ❀ अति बिसाल तनु भालु सुभट्टा

अगणित भेरी और नफीरी बज रही हैं, जिन्हें सुनकर कायरों के हृदय में दरारें पड़ जाती हैं। उन्होंने जाकर अत्यन्त विशाल शरीर वाले बड़े वीर भालू और बानरों के ठट्ट (समूह) बैठे देखे।

धावहिं गनहिं न अवघट घाटा ❀ पर्बत फोरि करहिं गहि बाटा
कटकटाहिं कोटिन्ह भट गर्जहिं ❀ दसन ओठ काटहिं अति तर्जहिं

वे दौड़ते हैं और ऊबड़-खाबड़ विकट घाटियों की परवाह नहीं करते। पहाड़ों को पकड़कर फोड़कर वे राह बना लेते हैं। करोड़ों वीर कटकटाते और गरजते हैं, दाँतों से ओंठ काटते और खूब ललकारते हैं।

उत रावन इत राम दोहाई ❀ जयति जयति जय परी लराई
निसिचर सिखर समूह ढहावहिं ❀ कूदि धरहिं कपि फेर चलावहिं

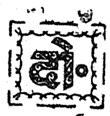
उधर रावण की और इधर रामजी की दोहाई बोली जा रही है। 'जय' 'जय' 'जय' के साथ लड़ाई छिड़ गई। राक्षस पहाड़ों की चोटियों के समूह फेंकते हैं, बानर उन्हें कूद कर पकड़ते और वापस मारते हैं।

छंद—धरि कुधर[2] खंड प्रचंड मर्कट भालु गढ़ पर डारहीं।
झपटहिं चरन गहि पटकि महि भजि चलत बहुरि प्रचारहीं॥
अति तरल[3] तरुन प्रताप तर्जहिं तमकि गढ़ चढ़ि चढ़ि गए।
कपि भालु चढ़ि मंदिरन्ह जहँ तहँ राम जस गावत भए॥

पर्वतों के टुकड़े ले-लेकर प्रचंड बानर और भालू किले पर फेंकते हैं। वे झपटते हैं, राक्षसों के पैर पकड़कर उन्हें पृथ्वी पर पटककर भागते और फिर

१. बैठे। २. पर्वत। ३. चंचल।

ललकारते हैं। बहुत ही चंचल और नौजवान प्रतापी बानर और भालु उछलकर क़िले पर चढ़ गये और महलों में जहाँ-तहाँ घुसकर वे राम का यश गाने लगे।



एकु एकु निसिचर गहि पुनि कपि चले पराइ।
ऊपर आपु हेठ भट गिरहिं धरनि पर आइ ॥४१॥

फिर एक-एक राक्षस को पकड़कर वे बानर भाग चले। क़िले पर से वे पृथ्वी पर गिरते हैं तो स्वयं ऊपर होते हैं और नीचे राक्षस होते हैं।

राम प्रताप प्रबल कपि जूथा ❀ मर्दहिं निसिचर सुभट बरूथा
चढ़े दुर्ग पुनि जहँ तहँ बानर ❀ जय रघुबीर प्रताप दिवाकर

रामजी के प्रताप से प्रबल बानरों के झुंड राक्षस योद्धाओं के समूह के समूह को मसलने लगे। बानर फिर जहाँ-तहाँ क़िले पर चढ़ गये। और 'रामजी के प्रतापरूपी सूर्य की जय' बोलने लगे।

चले निसाचर निकर पराई ❀ प्रबल पवन जिमि घन समुदाई
हाहाकार भयेउ पुर भारी ❀ रोवहिं आरत बालक नारी

राक्षसों के झुण्ड भाग चले, जैसे ज़ोर की हवा चलने पर बादलों के समूह तितर-बितर हो जाते हैं। लंका में बड़ा भारी हाहाकार मच गया। बालक और स्त्रियाँ दुःखी होकर रोने लगीं।

सब मिलि देहिं रावनहिं गारी ❀ राज करत एहि मृत्यु हँकारी
निज दल बिचल सुना जब काना ❀ फेरि सुभट लंकेस रिसाना

सब मिलकर रावण को गालियाँ देने लगे कि राज करते हुये इसने मृत्यु को बुला लिया। रावण ने जब अपनी सेना को विचलित होते हुये सुना, तब वह क्रुद्ध हुआ।

जो रन बिमुख सुना मैं काना ❀ सो मैं हतब कराल कृपाना
सरबसु खाइ भोग करि नाना ❀ समर भूमि भये बल्लभ प्राना

उसने कहा—मैं जिसको लड़ाई से भागा हुआ कानों से सुन पाऊँगा, उसे भयानक तलवार से मारूँगा। मेरा सर्वस्व खाया, अनेकों सुख भोगे और अब रणभूमि में प्राण प्यारे लगने लगे?

उग्र बचन सुनि सकल डेराने ❀ फिरे क्रोध करि सुभट लजाने
सनमुख मरन बीर कै सोभा ❀ तब तिन्ह तजा प्रान कर लोभा

रावण के कठोर वचन सुनकर सब वीर डर गये और लज्जित होकर क्रोध करके फिर लौटे। रण में सामने मरने ही में वीर की शोभा है। तब उन्होंने प्राणों का लोभ छोड़ दिया।

दो॰ बहु आयुध धर सुभट सब भिरहिं पचारि पचारि।
ब्याकुल कीन्हे भालु कपि परिघ त्रिसूलन्हि मारि॥

बहुत-से अस्त्र-शस्त्र ले-लेकर सब वीर ललकार-ललकारकर भिड़ने लगे। उन्होंने परिघ और त्रिशूलों की मार से सब भालुओं और बानरों को व्याकुल कर दिया।

भय आतुर कपि भागन लागे ❀ जद्यपि उमा जीतिहहिं आगे
कोउ कह कहँ अंगद हनुमंता ❀ कहँ नल नील दुबिद बलवंता

बानर भय से विह्वल होकर भागने लगे। यद्यपि हे उमा! आगे चलकर वे ही जीतेंगे। कोई कहता है—अंगद हनुमान कहाँ हैं? बलवान नल, नील और द्विविद कहाँ हैं?

निज दल बिकल सुना हनुमाना ❀ पच्छिम द्वार रहा बलवाना
मेघनाद तहँ करै लराई ❀ टूट न द्वार परम कठिनाई

हनुमान ने जब अपने दल को भयभीत हुआ सुना, तब वह बलवान पश्चिम द्वार पर था। वहाँ मेघनाद लड़ रहा था। वह द्वार टूटता नहीं था। बड़ी भारी कठिनता थी।

पवन तनय मन भा अति क्रोधा ❀ गर्जेउ प्रबल काल सम जोधा
कूदि लंक गढ़ ऊपर आवा ❀ गहि गिरि मेघनाद कहुँ धावा

तब हनुमान के मन में बड़ा भारी क्रोध हुआ। वह योद्धा काल के समान बड़े ज़ोर से गरजा और कूदकर लंका के ऊपर आया तथा पहाड़ लेकर मेघनाद पर दौड़ा।

भंजेउ रथ सारथी निपाता ❀ ताहि हृदय महँ मारेसि लाता
दुसरे सूत[1] बिकल तेहि जाना ❀ स्यंदन[2] घालि तुरत गृह आना

उसने मेघनाद का रथ तोड़ डाला। उसके सारथी को मार गिराया और

१. सारथी। २. रथ।

मेघनाद की छाती में लात मारी। दूसरा सारथी मेघनाद को मूर्च्छित जानकर, उसे रथ में डालकर, तुरंत घर ले आया।

दो०— अंगद सुना पवनसुत गढ़ पर गयेउ अकेल।
समर बाँकुरा बालि सुत तरकि चढ़ेउ कपि खेल॥

अंगद ने सुना कि हनुमान क़िले पर अकेले ही गये हैं, तब युद्ध में बाँका वीर बालि का पुत्र अंगद बानर के खेल की तरह उछलकर क़िले पर चढ़ गया।

जुद्ध बिरुद्ध क्रुद्ध दोउ बन्दर ❁ राम प्रताप सुमिरि उर अंतर
रावन भवन चढ़े दोउ धाई ❁ करहिं कोसलाधीस दोहाई

युद्ध में शत्रुओं के विरुद्ध दोनों बानर हृदय में रामजी के प्रताप का स्मरण करके रावण के महल पर चढ़ गये और अयोध्यापति की दुहाई बोलने लगे।

कलस सहित गहि भवनु ढहावा ❁ देखि निसाचरपति भय पावा
नारि बृन्द कर पीटहिं छाती ❁ अब दुइ कपि आये उतपाती

उन्होंने कलश-सहित महल को पकड़कर ढहा दिया। यह देखकर रावण भयभीत हो गया। सब स्त्रियाँ हाथों से छाती पीटने लगीं और कहने लगीं—अब दो उपद्रवी बानर एक साथ आ गये।

कपि लीला करि तिन्हहिं डेरावहिं ❁ रामचन्द्र कर सुजस सुनावहिं
पुनि कर गहि कंचन के खंभा ❁ कहेन्हि करिअ उतपात अरंभा

दोनों बानर बानर-खेल करके उनको डराते और उन्हें रामचन्द्रजी का सुन्दर यश सुनाते हैं। फिर सोने के खम्भों को हाथों से पकड़कर उन्होंने आपस में कहा कि उपद्रव शुरू किया जाय।

गर्जि परे रिपु कटक मँझारी ❁ लागे मर्दै भुज बल भारी
काहुहि लात चपेटन्हि केहू ❁ भजहु न रामहिं सो फल लेहू

वे गर्जकर शत्रु की सेना के बीच में कूद पड़े और अपने भारी भुजबल से वे उन्हें मसलने लगे। किसी को लात मारी, किसी को थप्पड़ मारे और कहा कि तुम राम को नहीं भजते उसका यह फल लो।

दो०— एक एक सन मर्दि करि तोरि चलावहिं मुंड।
रावन आगें परहिं ते जनु फूटहिं दधिकुंड॥४४॥

एक को एक से भिड़ाकर, मसलकर, उनके सिरों को तोड़कर, वे फेंकते हैं। वे रावण के आगे गिरते हैं और ऐसे फूटते हैं, जैसे दही के कूँड़े फूट रहे हैं।

महा महा मुखिआ जे पावहिं ❀ ते पद गहि प्रभु पास चलावहिं
कहहिं बिभीषन तिन्ह के नामा ❀ देहिं राम तिन्हहूँ निज धामा

बड़े-बड़े मुखियों को वे पकड़ पाते हैं, उनके पैर पकड़कर उन्हें वे रामजी के पास फेंक देते हैं। विभीषण उनके नाम बतलाते हैं। रामजी उन्हें भी अपना धाम परमपद दे देते हैं।

खल मनुजाद द्विजामिषभोगी ❀ पावहिं गति जो जाँचत जोगी
उमा राम मृदु चित करुनाकर ❀ बैर भाव सुमिरत मोहि निसिचर

ब्राह्मणों का मांस खाने वाले वे नरभोजी दुष्ट राक्षस भी वे गति पाते हैं, जिसकी याचना योगी किया करते हैं। शिवजी कहते हैं—हे उमा! रामजी बड़े कोमल स्वभाव के और करुणा की खान हैं। वे सोचते हैं कि राक्षस बैर-भाव ही से सही, मेरा स्मरण तो करते हैं।

देहिं परम गति सो जियँ जानी ❀ अस कृपाल को कहहु भवानी
सुनि अस प्रभु न भजहिं भ्रम त्यागी ❀ नर मतिमंद ते परम अभागी

ऐसा हृदय में जानकर वे उन्हें परमगति देते हैं। हे भवानी! कहो तो, ऐसा कृपालु और कौन है? प्रभु का ऐसा स्वभाव सुनकर, जो मनुष्य भ्रम त्यागकर ऐसे स्वामी को नहीं भजते, वे अत्यन्त मन्दबुद्धि बड़े भाग्यहीन हैं।

अंगद अरु हनुमंत प्रबेसा ❀ कीन्ह दुर्ग अस कह अवधेसा
लंका दोउ कपि सोहहिं कैसे ❀ मथहिं सिंधु दुइ मंदर[1] जैसे

रामजी कहने लगे—अंगद और हनुमान क़िले में प्रवेश कर गये हैं। लंका में वे दोनों बानर किस प्रकार शोभित हो रहे हैं, जैसे दो मन्दराचल समुद्र को मथ रहे हों।

दो० भुज बल रिपु दल दलमलि देखि दिवस कर अंत।
कूदे जुगल बिगत स्रम आए जहँ भगवंत ॥४५॥

अपनी भुजाओं के बल से शत्रु की सेना को दल-मलकर, फिर दिन का अन्त देखकर वे दोनों कूद पड़े और श्रम-रहित वहाँ आये, जहाँ रामजी थे।

---

१. पर्वत।

प्रभु पद कमल सीस तिन्ह नाए ❁ देखि सुभट रघुपति मन भाए
राम कृपा करि जुगल निहारे ❁ भए बिगतस्रम परम सुखारे

उन्होंने प्रभु के चरण-कमलों में सिर नवाये। उन योद्धाओं को देखकर रामजी बहुत प्रसन्न हुये। रामजी ने कृपा करके उन दोनों को देखा, जिससे वे थकावट से रहित और परम सुखी हो गये।

गए जानि अङ्गद हनुमाना ❁ फिरे भालु मर्कट भट नाना
जातुधान प्रदोष[1] बल पाई ❁ धाए करि दससीस दोहाई

अंगद और हनुमान को गया हुआ जानकर सभी भालू और बानर वीर लौट पड़े। राक्षसों ने रात्रि का बल पाकर रावण की दुहाई बोलते हुये बानरों पर धावा किया।

निसिचर अनी देखि कपि फिरे ❁ जहँ तहँ कटकटाइ भट भिरे
दोउ दल प्रबल पचारि पचारी ❁ लरत सुभट नहिं मानत हारी

राक्षसों की सेना आती देखकर बानर फिर लौटे और वे योद्धा जहाँ-तहाँ कटकटाकर भिड़ गये। दोनों प्रबल दलों के वीर ललकार-ललकारकर लड़ते हैं और हार नहीं मानते।

बीर तमीचर[2] सब अति कारे ❁ नाना बरन बलीमुख[3] भारे
सबल जुगल दल समबल जोधा ❁ बिबिध प्रकार भिरत करि क्रोधा

सभी राक्षस वीर और बहुत काले हैं और बानर अनेकों रंगों के भारी शरीर वाले हैं। दोनों ही दल बलवान् हैं और दोनों में समान बल वाले योद्धा हैं। वे क्रोध करके अनेकों प्रकार से एक दूसरे पर आक्रमण कर रहे हैं।

प्राबिट[4] सरद पयोद घनेरे ❁ लरत मनहुँ मारुत के प्रेरे
अनिप अकंपन अरु अतिकाया ❁ बिचलत सेन कीन्हि इन्ह माया
भयेउ निमिष महँ अति अँधियारा ❁ बृष्टि होइ रुधिरोपल छारा

ऐसा जान पड़ता है, मानो वर्षा-ऋतु और शरद्-ऋतु के बहुत-से बादल वायु से प्रेरित होकर लड़ रहे हैं। अकंपन और अतिकाय सेनापतियों ने अपनी सेना को बिचलते देखकर माया की। क्षण-भर में अत्यन्त अंधकार हो गया। रक्त, पत्थर और राख की वृष्टि होने लगी।

१. रात्रि। २. राक्षस। ३. बन्दर। ४. वर्षा-ऋतु।

दो० देखि निबिड़[1] तम दसहुँ दिसि कपि दल भयेउ खभार।
एकहिं एक न देखहिं जहँ तहँ करहिं पुकार ॥

दसों दिशाओं में अत्यन्त घना अन्धकार देखकर बानरों की सेना में खलबली मच गई। एक दूसरे को नहीं देख पाता है। वे जहाँ-तहाँ पुकार कर रहे थे।

सकल मरमु रघुनायक जाना ❀ लिये बोलि अङ्गद हनुमाना
समाचार सब कहि समुझाए ❀ सुनत कोपि कपिकुञ्जर धाए

रामजी सब रहस्य जान गये। उन्होंने अङ्गद और हनुमान को बुला लिया, और उन्हें सब समाचार कहकर समझा दिया। सुनते ही बानरों में हाथी के समान बलवान अङ्गद और हनुमान क्रोध करके दौड़े।

पुनि कृपाल हँसि चाप चढ़ावा ❀ पावक सायक सपदि[2] चलावा
भयेउ प्रकास कतहुँ तम नाहीं ❀ ग्यान उदय जिमि संसय[3] जाहीं

फिर कृपालु रामजी ने हँसकर धनुष चढ़ाया और तुरन्त अग्निबाण चलाया, जिससे उजाला हो गया, कहीं अन्धकार नहीं रह गया, जैसे ज्ञान के उदय होने पर संशय चला जाता है।

भालु बलीमुख पाइ प्रकासा ❀ धाए कोपि बिगत स्रम त्रासा
हनूमान अङ्गद रन गाजे ❀ हाँक सुनत रजनीचर भाजे

भालू और बानर प्रकाश पाकर क्रोध करके दौड़े। उनकी थकावट मिट गई और भय जाता रहा। हनुमान और अंगद युद्ध में गरज उठे। उनकी हाँक सुनते ही राक्षस भाग खड़े हुये।

भागत भट पटकहिं धरि धरनी ❀ करहिं भालु कपि अद्भुत करनी
गहि पद डारहिं सागर माहीं ❀ मकर उरग झष धरि धरि खाहीं

भागते हुये राक्षस योद्धाओं को बानर और भालू पकड़-पकड़कर पृथ्वी पर पटक देते हैं, और विचित्र तमाशे करते हैं। उनके पैर पकड़कर वे समुद्र में डाल देते हैं, जिनको मगर और साँप और मत्स्य पकड़-पकड़कर खा डालते हैं।

दो० कछु मारे कछु घायल कछु गढ़ चले पराइ।
गर्जहिं भालु बलीमुख रिपु दल बल बिचलाइ ॥४७॥

१. घना। २. तुरन्त। ३. सन्देह।

कुछ मारे गये, कुछ घायल हुये, कुछ गढ़ को भाग चले। शत्रु के दल-बल को विचलित करके भालू और बानर वीर गरज रहे हैं।

निसा जानि कपि चारिउ अनी ❀ आए जहाँ कोसला धनी
राम कृपा करि चितवा सबहीं ❀ भए बिगत स्रम बानर तबहीं

रात हुई जानकर बानरों की चारों टोलियाँ वहाँ आईं, जहाँ अयोध्यापति रामजी थे। रामजी ने जैसे ही सबको कृपा करके देखा, वैसे ही वे बानर बिना थकावट के हो गये।

उहाँ दसानन सचिव हँकारे ❀ सब सन कहेसि सुभट जे मारे
आधा कटकु कपिन्ह संहारा ❀ कहहु बेगि का करिअ बिचारा

वहाँ रावण ने मन्त्रियों को बुलाया और सबसे उसने मारे गये वीरों के नाम बताये। बानरों ने आधी सेना मार डाली। अब जल्दी बोलो, क्या विचार (उपाय) करना चाहिये ?

माल्यवन्त अति जरठ निसाचर ❀ रावन मातु पिता मंत्री बर
बोला बचन नीति अति पावन ❀ सुनहु तात कछु मोर सिखावन

माल्यवंत बहुत बुड्ढा राक्षस था। वह रावण की माता का पिता और श्रेष्ठ मंत्री था। वह अत्यन्त पवित्र नीति के वचन बोला—हे तात ! कुछ मेरी सीख भी सुनिये।

जब तें तुम्ह सीता हरि आनी ❀ असगुन होंहि न जाहि बखानी
बेद पुरान जासु जस गावा ❀ राम बिमुख सुख काहु न पावा

जब से आप सीता को हर लाये हैं, तब से इतने असगुन हो रहे हैं, जिनका वर्णन नहीं हो सकता। जिस रामजी का यश वेदों और पुराणों ने गाया है, उनके विरुद्ध होकर किसी ने सुख नहीं पाया।

दो०— हिरन्याच्छ भ्राता सहित मधु कैटभ बलवान।
जेहिं मारे सोइ अवतरेउ कृपासिन्धु भगवान॥ (क)

भाई हिरण्यकशिपु-सहित हिरण्याक्ष और बलवान मधु-कैटभ को जिन्होंने मारा था, उन्हीं कृपा के समुद्र भगवान् ने अवतार लिया है।

कालरूप खल बन दहन गुनागार घन बोध।
सिव बिरञ्चि जेहि सेवहिं तासों कवन बिरोध॥ (ख)

जो काल-स्वरूप हैं, दुष्टों के वन के लिये आग के समान हैं, गुणों का धाम और ज्ञान-घन हैं, शिव और ब्रह्मा भी जिनकी सेवा करते हैं, उनसे वैर कैसा ?

परिहरि बयरु देहु बैदेही ❀ भजहु कृपानिधि परम सनेही
ता के बचन बान सम लागे ❀ करिया[1] मुह करि जाहि अभागे

बैर छोड़कर उनको सीता दे दीजिये और परम स्नेह वाले कृपा के भंडार रामजी का भजन कीजिये। रावण को उसके वचन तीर की तरह लगे। उसने कहा—अरे अभागे! मुँह काला करके यहाँ से निकल जा।

बूढ़ भयसि न त मरतेउँ तोही ❀ अब जनि बदन देखावसि मोही
तेहि अपने मन अस अनुमाना ❀ बध्यो चहत एहि कृपानिधाना

तू बुड्ढा न होता तो मैं तुझे मार ही डालता। अब मेरी आँखों को अपना मुँह न दिखला। माल्यवान ने अपने मन में ऐसा अनुमान किया कि इसे कृपा के धाम रामजी मारना ही चाहते हैं।

सो उठि गयेउ कहत दुर्बादा ❀ तब सकोप बोलेउ घननादा
कौतुक प्रात देखिअहु मोरा ❀ करिहउँ बहुत कहौं का थोरा

वह रावण के दुर्वचन कहते ही उठकर चला गया। तब क्रोध करके मेघनाद बोला—सबेरे मेरी करामात देखना। मैं बहुत कुछ करूँगा; थोड़ा क्या कहूँ ?

सुनि सुत बचन भरोसा आवा ❀ प्रीति समेत अंक बैठावा
करत बिचार भयेउ भिनुसारा[2] ❀ लागे कपि पुनि चहूँ दुआरा

पुत्र के वचन सुनकर रावण को भरोसा आ गया। उसने उसे बड़े प्रेम से गोद में बैठा लिया। सोचते-सोचते सबेरा हो गया। बानर फिर चारों फाटकों पर आ लगे।

कोपि कपिन्ह दुरघट[3] गढ़ घेरा ❀ नगर कोलाहलु भयेउ घनेरा
बिबिधायुध धर निसिचर धाये ❀ गढ़ ते पर्वत सिखर ढहाये

बानरों ने क्रोध करके दुर्गम गढ़ को घेर लिया। नगर में बड़ा हल्ला हुआ। राक्षस अनेकों तरह के हथियार लेकर दौड़े और उन्होंने क़िले पर से पहाड़ों के शिखर ढकेले।

---

१. काला। २. सबेरा। ३. दुर्गम, विकट।

छंद—ढाहे महीधर सिखर कोटिन्ह बिबिध बिधि गोला चले।
घहरात जिमि पबिपात[1] गर्जत जनु प्रलय के बादले[2]॥
मर्कट बिकट भट जुटत कटत न लटत तन जर्जर भये।
गहि सैल तेइ गढ़ पर चलावहिं जहँ सो तहँ निसिचर हये॥

राक्षसों ने पर्वत के करोड़ों शिखर ढकेले और अनेक प्रकार से गोले चलने लगे, जो ऐसा घहराते हैं जैसे बज्रपात; और योद्धा ऐसे गरजते हैं, जैसे प्रलय के बादल हों। विकट वीर बानर भिड़ते हैं, कट जाते हैं, उनके शरीर जर्जर हो जाते हैं, तब भी वे हिम्मत नहीं हारते। पहाड़ उठाकर वे उसे गढ़ पर फेंकते हैं। जहाँ पहाड़ गिरते हैं वहीं राक्षस मारे जाते हैं।

दो०—मेघनाद सुनि श्रवन अस गढ़ पुनि छेंका आइ।
उतर्‌यो बीर दुर्ग तें सनमुख चल्यो बजाइ॥४९॥

मेघनाद ने कानों से ऐसा सुना कि बानरों ने फिर आकर गढ़ को घेर लिया है। वह श्रेष्ठ वीर क़िले से उतरा और डंका बजाकर उनके सामने चला।

कहँ कोसलाधीस दोउ भ्राता ❀ धन्वी[3] सकल लोक बिख्याता[4]
कहँ नल नील द्विबिद सुग्रीवा ❀ अंगद हनूमंत बलसींवा

मेघनाद कहने लगा—अयोध्यापति दोनों भाई कहाँ हैं? जो समस्त लोकों में धनुर्धर प्रसिद्ध हैं। नल, नील, द्विविद, सुग्रीव, अङ्गद और बल की सीमा हनुमान कहाँ हैं?

कहाँ बिभीषन भ्राता द्रोही ❀ आजु सठहि हठि मारउँ ओही
अस कहि कठिन बान संधाने ❀ अतिसय क्रोध स्रवन लगि ताने

भाई से द्रोह करने वाला विभीषण कहाँ है? आज मैं उस दुष्ट को तो हठ-पूर्वक (निश्चय) मारूँगा। ऐसा कहकर उसने कठिन बाण धनुष पर चढ़ाये और अत्यन्त क्रोध करके धनुष को कान तक खींचा।

सर समूह सो छाड़ै लागा ❀ जनु सपच्छ धावहिं बहु नागा[5]
जहँ तहँ परत देखिअहिं बानर ❀ सनमुख होइ न सके तेहि अवसर

वह बाणों के समूह छोड़ने लगा। मानो बहुत-से पंख वाले साँप दौड़ने

१. वज्रपात। २. बादल। ३. धनुर्धर। ४. प्रसिद्ध। ५. साँप।

लगे। बानर जहाँ-तहाँ गिरते हुये दिखाई पड़ने लगे। उस अवसर पर कोई भी उसके सामने खड़े न हो सके।

जहँ तहँ भागि चले कपि रीछा ❀ बिसरी सबहिं जुद्ध कै ईछा
सो कपि भालु न रन महँ देखा ❀ कीन्हेसि जेहि न प्रान अवसेषा

बानर और भालू जहाँ-तहाँ भाग चले। लड़ाई की इच्छा सबको भूल गई। ऐसा एक भी बानर और भालू युद्ध में नहीं दिखाई पड़ा, जिसको उसने केवल प्राणमात्र (मृत) न कर दिया हो।

दो० दस दस सर सब मारेसि परे भूमि कपि बीर।
सिंहनाद करि गर्जा मेघनाद बल धीर ॥५०॥

सबको उसने दस-दस बाण मारे। बानर-वीर पृथ्वी पर गिर पड़े। बलवान और धीर मेघनाद सिंहनाद करके गरजने लगा।

देखि पवनसुत कटक बिहाला ❀ क्रोधवंत धायेउ जनु काला
महा सैल एक तुरत उपारा ❀ अति रिसि मेघनाद पर डारा

सारी सेना को व्याकुल देखकर हनुमान क्रोध करके ऐसे दौड़े, जैसे काल। उन्होंने तुरन्त एक बड़ा पहाड़ उखाड़ लिया और बड़े ही क्रोध के साथ उसे मेघनाद के ऊपर फेंका।

आवत देखि गयेउ नभ सोई ❀ रथ सारथी तुरग[1] सब खोई
बार बार पचार हनुमाना ❀ निकट न आव मरमु सो जाना

पहाड़ को आता देखकर वह आकाश को चला गया। पर उसके रथ, सारथी और घोड़े, सब नष्ट हो गये। हनुमान ने उसे बार-बार ललकारा, पर वह पास नहीं आता, क्योंकि वह उनके बल का मर्म जानता था।

रघुपति निकट गयेउ घननादा ❀ नाना भाँति कहेसि दुर्बादा
अस्त्र सस्त्र आयुध सब डारे ❀ कौतुकहीं प्रभु काटि निवारे[2]

तब मेघनाद रामजी के पास गया और उसने अनेकों प्रकार के दुर्वचन कहे। फिर उन पर अनेक अस्त्र-शस्त्र और हथियार फेंके। प्रभु ने खेलवाड़ की तरह सबको काट कर अलग कर दिया।

१. घोड़ा। २. हटा दिया।

देखि प्रताप मूढ़ खिसियाना ❀ करै लाग माया बिधि नाना
जिमि कोउ करै गरुड़ सैं खेला ❀ डरपावै गहि स्वल्प सँपेला[1]

रामजी का प्रताप (सामर्थ्य) देखकर वह मूर्ख खिसिया गया और अनेकों प्रकार की माया करने लगा। जैसे कोई छोटा-सा साँप का बच्चा हाथ में लेकर गरुड़ को डरावे और उससे खेलवाड़ करे।

दो॰ जासु प्रबल माया बस सिव बिरंचि बड़ छोट।
ताहि दिखावइ निसिचर निजि माया मति खोट॥

जिसकी अत्यन्त प्रबल माया के वश में शिव और ब्रह्मा तक बड़े-छोटे सब हैं, उन्हें मन्द बुद्धि राक्षस अपनी माया दिखलाता है।

नभ चढ़ि बरष बिपुल अंगारा ❀ महि तें प्रगट होहिं जलधारा
नाना भाँति पिसाच पिसाची ❀ मारु काटु धुनि बोलहिं नाची

आकाश में जाकर वह बहुत-से अङ्गारों की बड़ी वृष्टि करता था। पृथ्वी से पानी की धारा प्रकट होने लगीं। अनेकों प्रकार के पिशाच और पिशाचिनियाँ नाच-नाचकर 'मारो, काटो' का शब्द करने लगीं।

बिष्ठा[2] पूय[3] रुधिर कच[4] हाड़ा ❀ बरषै कबहुँ उपल बहु छाँड़ा[5]
बरषि धूरि कीन्हेसि अँधिआरा ❀ सूझ न आपन हाथ पसारा

वह कभी विष्टा, पीब, रक्त, बाल, हड्डियाँ बरसाता था, और कभी बहुत से पत्थर फेंक देता था। फिर उसने धूल बरसाकर ऐसा अँधेरा कर दिया कि अपना ही फैलाया हुआ हाथ नहीं सूझता था।

कपि अकुलाने माया देखें ❀ सब कर मरनु बना येहि लेखें
कौतुक देखि राम मुसुकाने ❀ भए सभीत सकल कपि जाने

माया देखकर बानर घबराये। वे सोचने लगे कि इस तरह तो सब का मरण आ बना। यह खेल देखकर रामजी मुसकुराये। उन्होंने जान लिया कि सब बानर डर गये हैं।

एक बान काटी सब माया ❀ जिमि दिनकर हर तिमिर निकाया
कृपादृष्टि कपि भालु बिलोके ❀ भए प्रबल रन रहहिं न रोकें

---

१. साँप का बच्चा। २. मल। ३. पीब। ४. बाल। ५. छोड़ता था, फेंकता था।

तब रामजी ने एक ही बाण से सारी माया काट डाली, जैसे सूर्य अंधकार के समूह को नष्ट कर देता है। रामजी ने बानर और भालुओं को कृपा की दृष्टि से देखा, जिससे वे इतने प्रबल हो गये कि रोकने पर भी युद्ध करने से नहीं रुकते थे।

दो०- आयसु माँगि राम पहिं अंगदादि कपि साथ।
लछिमन चले क्रुद्ध होइ बान सरासन हाथ ॥५२॥

तब रामजी से आज्ञा माँगकर, अंगद आदि बानरों को साथ लेकर अत्यंत क्रोध से लछमण चले। बाण और धनुष उनके हाथ में है।

छतज[1] नयन उर बाहु बिसाला ❀ हिमगिरि निभ[2] तनु कछु एक लाला
इहाँ दसानन सुभट पठाए ❀ नाना अस्त्र सस्त्र गहि धाए

लछमण की आँखें रक्त की तरह लाल, छाती चौड़ी और भुजायें विशाल और शरीर हिमाचल पर्वत की आभा वाला कुछ लाली लिये हुये गौर वर्ण है। इधर रावण ने भी बड़े-बड़े योद्धाओं को भेजा, जो अनेकों अस्त्र-शस्त्र लेकर दौड़े।

भूधर नख बिटपायुध धारी ❀ धाए कपि जय राम पुकारी
भिरे सकल जोरिहि सन जोरी ❀ इत उत जय इच्छा नहिं थोरी

पर्वत, नख और वृक्षों के हथियार धारण करने वाले बानर 'राम की जय हो' पुकारकर दौड़े। सब जोड़ी से जोड़ी भिड़ गये। इधर-उधर दोनों ओर जय की इच्छा कम नहीं थी।

मुठिकन्ह लातन्ह दाँतन्ह काटहिं ❀ कपि जयसील मारि पुनि डाटहिं
मारु मारु धरु धरु धरु मारू ❀ सीस तोरि गहि भुजा उपारू

बानर राक्षसों को घूँसे मारते हैं, लात मारते हैं, और दाँतों से काटते हैं, विजय के विश्वास वाले बानर उन्हें मारकर फिर डाटते भी हैं। मारो, मारो, धरो, धरो, पकड़कर मारो, सिर तोड़ दो, और भुजाएँ पकड़कर उखाड़ लो—

असि रव पूरि रही नव खंडा ❀ धावहिं जहँ तहँ रुंड प्रचंडा
देखहिं कौतुक नभ सुर बृन्दा ❀ कबहुँक बिसमय कबहुँ अनंदा

नवों खंडों में ऐसी आवाज़ भर रही है। प्रचंड रुंड इधर-उधर दौड़ रहे

---

२. रक्त (लाल)। २. आभा वाला।

हैं। आकाश में देवतागण यह तमाशा देख रहे हैं। कभी वे विस्मित हो जाते हैं और कभी आनन्दित।

दो॰ रुधिर गाड़[1] भरि भरि जमेउ ऊपर धूरि उड़ाइ।
जिमि अँगार रासिन्ह पर मृतक धूम रह्यो छाइ॥

रक्त गड्ढों में भर-भरकर जम गया है, उस पर धूल उड़कर पड़ रही है, वह दृश्य ऐसा मालूम देता है, जैसे अंगारों की राशियों पर चिता की राख छा रही हो।

घायल बीर बिराजहिं कैसे ❀ कुसुमित किंसुक[2] के तरु जैसे
लछिमन मेघनाद दोउ जोधा ❀ भिरहिं परसपर करि अति क्रोधा

घायल वीर ऐसे लगते हैं, जैसे फूले हुये ढाक के वृक्ष। लक्ष्मण और मेघनाद दोनों वीर अत्यंत क्रोध करके एक दूसरे से भिड़ते हैं।

एकहि एक सकइ नहिं जीती ❀ निसिचर छल बल करइ अनीती
क्रोधवंत तब भयेउ अनंता[3] ❀ भंजेउ रथ सारथी तुरंता

एक दूसरे को जीत नहीं सकता। राक्षस छल-कपट और अनीति से काम लेता है। तब लक्ष्मण क्रोधित हुये और उसके रथ और सारथी को उन्होंने तुरन्त टुकड़े-टुकड़े कर डाला।

नाना बिधि प्रहार कर सेषा ❀ राच्छस भयेउ प्रान अवसेषा
रावन सुत निज मन अनुमाना ❀ संकट भयेउ हरिहि मम प्राना

लक्ष्मण अनेक प्रकार से उस पर प्रहार करने लगे। राक्षस के प्राणमात्र शेष रह गये। मेघनाद ने मन में सोचा कि अब तो प्राणों पर संकट आ उपस्थित हुआ है, अब यह मेरा प्राण हर लेगा।

बीरघातिनी छाँड़ेसि साँगी[4] ❀ तेज पुंज लछिमन उर लागी
मुरुछा भई सक्ति के लागें ❀ तब चलि गयेउ निकट भय त्यागें

तब उसने वीर-घातिनी शक्ति चलाई। वह चमकीली शक्ति लक्ष्मण की छाती में लगी। शक्ति के लगने से लक्ष्मण को मूर्च्छा आ गई। तब मेघनाद भय छोड़कर उनके पास चला गया।

---

१. गड्ढा। २. ढाक। ३. शेषनाग के अवतार (लक्ष्मण)। ४. शक्ति।

दो०- मेघनाद सम कोटि सत जोधा रहे उठाइ।
जगदाधार शेष किमि उठै चले खिसिआइ ॥५४॥

मेघनाद के समान सौ-करोड़ योद्धा लक्ष्मण को उठा रहे हैं; पर जगत् के आधार (शेष के अवतार) लक्ष्मण कैसे उठ सकते थे ? तब वे खिसियाकर चले गये।

सुनु गिरिजा क्रोधानल जासू ❀ जारइ भुवन चारिदस आसू[1]
सक संग्राम जीति को ताही ❀ सेवहिं सुर नर अग जग जाही

शिवजी कहते हैं—हे पार्वती ! सुनो, जिसके क्रोध की आग चौदहों भुवनों को तुरन्त ही जला डालती है और देवता, मनुष्य, चर और अचर सब जिनकी सेवा करते हैं, उसे युद्ध में कौन जीत सकता है ?

यह कौतूहल जानइ सोई ❀ जा पर कृपा राम कै होई
संध्या भई फिरि दोउ बाहिनी[2] ❀ लगे सँभारन निज निज अनी

इस लीला को वही जान सकता है, जिस पर रामजी की कृपा हो। शाम हुई, दोनों ओर की सेनाएँ लौट पड़ीं। सब अपनी-अपनी सेनाएँ सँभालने लगे।

ब्यापक ब्रह्म अजित भुवनेस्वर ❀ लछिमन कहाँ बूझ करुनाकर
तब लगि लै आयेउ हनुमाना ❀ अनुज देखि प्रभु अति दुख माना

व्यापक, ब्रह्म, अजेय, सम्पूर्ण ब्रह्मांड के स्वामी और करुणा की खान रामजी ने पूछा—लक्ष्मण कहाँ हैं ? तब तक हनुमान उन्हें ले आये। छोटे भाई को देखकर प्रभु ने बहुत ही दुख माना।

जामवंत कह बैद सुषेना ❀ लंकाँ रहइ को पठइअ लेना
धरि लघु रूप गयउ हनुमंता ❀ आनेउ भवन समेत तुरंता

जाम्बवन्त ने कहा—लंका में सुषेण वैद्य रहता है, उसे बुलाने के लिये किस को भेजा जाय ? हनुमान छोटा रूप धरकर गये और तुरन्त ही सुषेण को घर-सहित उठा लाये।

दो०- राम पदारबिंद[3] सिरु नायेउ आय सुषेन।
कहा नाम गिरि औषधी जाहु पवनसुत लेन ॥५५॥

---

१. तत्काल। २. सेना। ३. चरण-कमल।

सुषेण ने आकर रामजी के चरण-कमलों में सिर नवाया। उसने पर्वत और औषध का नाम बताया और हनुमान को कहा कि लेने के लिये जाओ।

राम चरन सरसिज उर राखी ❀ चले प्रभंजन[1] सुत बल भाषी
उहाँ दूत एक मरम जनावा ❀ रावन कालनेमि गृह आवा

रामजी के चरण-कमलों को हृदय में रखकर पवन-पुत्र हनुमान 'मैं अभी लिये आता हूँ' ऐसा बल बताकर चले। उधर रावण को एक गुप्तचर ने ख़बर कर दी। तब रावण कालनेमि के घर आया।

दसमुख कहा मरमु तेहि सुना ❀ पुनि पुनि कालनेमि सिर धुना
देखत तुम्हहिं नगर जेहिं जारा ❀ तासु पंथ को रोकनिहारा

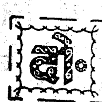
रावण ने उसको सारा हाल बताया। उसने सुना और बार-बार सिर पीटा। उसने कहा—तुम्हारे देखते-देखते जिसने तुम्हारा नगर जला डाला, उसका रास्ता रोकने वाला कौन है?

भजि रघुपति करु हित आपना ❀ छाँड़हु नाथ मृषा जल्पना
नील कंज तनु सुन्दर स्यामा ❀ हृदय राखु लोचन अभिरामा

रामजी का भजन करके तुम अपना कल्याण करो। हे नाथ! झूठी बकवाद छोड़ दो। नेत्रों को आनन्द देने वाले नीले कमल के समान सुन्दर श्याम शरीर को हृदय में रक्खो।

मैं तैं मोर मूढ़ता त्यागू ❀ महा मोह निसि सोवत जागू
काल ब्याल कर भच्छक जोई ❀ सपनेहुँ समर कि जीतिअ सोई

मैं-तू (भेद-भाव) और ममता रूपी मूढ़ता को त्याग दो। महामोह (अज्ञान) रूपी रात्रि में सो रहे हो, सो जागो। कालरूपी सर्प का भी जो भक्षक है, भला, स्वप्न में भी वह जीता जा सकता है?


सुनि दसकंध रिसान अति तेहिं मन कीन्ह बिचार।
राम दूत कर मरौं बरु यह खल रत मल भार॥५६॥

उसकी बातें सुनकर रावण बहुत ही चिढ़ा। तब कालनेमि ने मन में विचारा कि रामजी के दूत के हाथ से ही मरना अच्छा है। यह दुष्ट तो पाप का भार उठाने में ही अनुरक्त है।

---

१. वायु।

अस कहि चला रचेसि मग माया ❀ सर मन्दिर बन बाग बनाया
मारुतसुत देखा सुभ आस्रम ❀ मुनिहि बूझि जल पिअौं जाइ स्रम

ऐसा कहकर वह चला और रास्ते में उसने माया रची। तालाब, मन्दिर और सुन्दर बाग बनाया। हनुमान ने सुन्दर आश्रम देखकर सोचा कि मुनि से पूछकर पानी पी लूँ, जिससे थकावट जाती रहे।

राच्छस कपट बेष तहँ सोहा ❀ मायापति दूतहि चह मोहा
जाइ पवनसुत नायेउ माथा ❀ लाग सो कहै राम गुन गाथा

राक्षस वहाँ कपट के वेष में विराजमान था। वह माया के स्वामी के दूत को फँसाना चाहता था। हनुमान ने उसके पास जाकर सिर नवाया। वह रामजी के गुणों की कथा कहने लगा।

होत महा रन रावन रामहिं ❀ जितिहहिं राम न संसय या महिं
इहाँ भएँ मैं देखउँ भाई ❀ ग्यान दृष्टि बल मोहिं अधिकाई

वह कहने लगा—रावण और राम में महान् युद्ध हो रहा है। राम जीतेंगे, इसमें सन्देह नहीं है। यहाँ रहता हुआ भी, हे भाई! मैं देख रहा हूँ। मुझमें ज्ञान-दृष्टि का बड़ा बल है।

माँगा जल तेहि दीन्ह कमंडल ❀ कह कपि नहिं अघाउँ थोरे जल
सर मज्जनु[1] करि आतुर[2] आवहु ❀ दिच्छा देउँ ग्यान जेहि पावहु

हनुमान ने उससे पानी माँगा; उसने कमंडल दे दिया। हनुमान ने कहा—थोड़े पानी से मैं नहीं अघाऊँगा। उसने कहा—तालाब में स्नान करके जल्दी ही लौट आओ तो तुम्हें मैं दीक्षा दूँ, जिससे ज्ञान प्राप्त हो।

दो॰ सर पैठत कपि पद गहा मकरीं तब अकुलान।
मारी सो धरि दिव्य तनु चली गगन चढ़ि जान॥५७॥

तालाब में पैठते ही एक मगरी ने अकुलाकर हनुमान का पैर पकड़ लिया। हनुमान ने उसे मार डाला। वह दिव्य शरीर धारण करके विमान पर चढ़कर आकाश को चली।

कपि तव दरस भइउँ निःपापा ❀ मिटा तात मुनिबर कर सापा
मुनि न होइ यह निसिचर घोरा ❀ मानहु सत्य बचन कपि मोरा

१. स्नान। २. जल्दी।

उसने कहा—हे बानर ! तुम्हारे दर्शन से मैं पाप-रहित हो गई । हे तात ! मुनिवर का शाप मिट गया । हे कपि ! यह मुनि नहीं है, बल्कि घोर निशाचर है । मेरा वचन सत्य मानो ।

अस कहि गई अपछरा जबहीं ❀ निसिचर निकट गयेउ कपि तबहीं
कह कपि मुनि गुरदछिना[1] लेहू ❀ पाछे हमहिं मंत्र तुम्ह देहू

ऐसा कहकर वह अप्सरा ज्यों ही गई, त्यों ही हनुमान निशाचर के पास गये । हनुमान ने कहा—हे मुनि ! पहले गुरु-दक्षिणा लीजिये, पीछे मुझे मंत्र दीजियेगा ।

सिर लंगूर लपेटि पछारा ❀ निज तनु प्रगटेसि मरती बारा
राम राम कहि छाड़ेसि प्राना ❀ सुनि मन हरषि चलेउ हनुमाना

हनुमान ने उसके सिर को पूँछ में लपेटकर उसे पछाड़ दिया । मरते समय उसने अपना शरीर प्रकट किया । राम-राम कहकर उसने प्राण छोड़े । यह सुनकर हनुमान मन में हर्षित होकर चले ।

देखा सैल न औषध चीन्हा ❀ सहसा[2] कपि उपारि गिरि लीन्हा
गहि गिरि निसि नभ धावत भयऊ ❀ अवध पुरी ऊपर कपि गयऊ

हनुमान ने पर्वत को देखा, पर औषध नहीं पहचान सके । तब उन्होंने एकदम से पर्वत ही को उखाड़ लिया । पर्वत लेकर रात ही में वे आकाश-मार्ग से दौड़ चले और अयोध्या के ऊपर आये ।

दो० देखा भरत बिसाल अति निसिचर मन अनुमानि ।
बिनु फर सायक मारेउ चाप[3] स्रवन लगि तान ॥

भरत ने देखा और मन में अनुमान किया कि यह कोई बड़ा भारी राक्षस है । उन्होंने कान तक धनुष को खींचकर बिना फल का बाण मारा ।

परेउ मुरुछि महि लागत सायक ❀ सुमिरत राम राम रघुनायक
सुनि प्रिय बचन भरत तब धाए ❀ कपि समीप अति आतुर आए

बाण लगते ही हनुमान मूर्च्छित होकर 'राम-राम, रघुपति' जपते हुये पृथ्वी पर गिर पड़े । प्रिय वचन (राम-नाम) सुनकर भरत उठकर दौड़े और बड़ी उतावली से हनुमान के पास आये ।

---

१. गुरु दक्षिणा । २. एकदम से । ३. धनुष ।

बिकल बिलोकि कीस उर लावा ❀ जागत नहिं बहु भाँति जगावा
मुख मलीन मन भए दुखारी ❀ कहत बचन भरि लोचन बारी

उन्होंने हनुमान को व्यथित देखकर छाती से लगा लिया। बहुत तरह से जगाया पर वे नहीं जागे। भरत का मुँह मलिन हो गया, मन दुखी हो गया। वह आँखों में आँसू भरकर कहने लगे—

जेहि बिधि राम बिमुख मोहि कीन्हा ❀ तेहिं पुनि यह दारुन दुख दीन्हा
जौं मोरें मन बच अरु काया ❀ प्रीति राम पद कमल अमाया[1]

जिस विधाता ने मुझे रामजी से विमुख किया, उसी ने फिर यह भयानक दुख भी दिया। यदि मन, वचन और शरीर से राम के चरण-कमलों में मेरा निष्कपट प्रेम हो,

तौ कपि होउ बिगत स्रम सूला[2] ❀ जौं मो पर रघुपति अनुकूला
सुनत बचन उठि बैठ कपीसा ❀ कहि जय जयति कोसलाधीसा

और रामजी मुझ पर प्रसन्न हों, तो यह बानर थकावट और पीड़ा से रहित हो जाय। यह वचन सुनते ही कपिराज हनुमान 'अयोध्यापति की जय हो, जय हो' कहकर उठ बैठे।

सो० लीन्ह कपिहि उर लाइ पुलकित तन लोचन सजल।
प्रीति न हृदयँ समाइ सुमिरि राम रघुकुल तिलक॥

भरत ने बानर को हृदय से लगा लिया। उनका शरीर पुलकित हो गया और आँखें भर आईं। रघुकुल-तिलक रामजी का स्मरण करके भरत के हृदय में प्रीति समाती न थी।

तात कुसल कहु सुख निधान की ❀ सहित अनुज अरु मातु जानकी
कपि सब चरित सँछेप बखाने ❀ भए दुखी मन महुँ पछिताने

भरत बोले—हे तात! सुख के धाम राम और छोटे भाई लक्ष्मण तथा जानकी माता की कुशल कहो। बानर ने संक्षेप में सब कह सुनाया। सुनकर भरत दुखी हुये और मन में पछताने लगे।

अहह दैव मैं कत जग जायउँ ❀ प्रभु के एकहु काज न आयउँ
जानि कुअवसर मन धरि धीरा ❀ पुनि कपि सन बोले बलबीरा

१. निष्कपट। २. पीड़ा।

हा दैव! मैं जगत् में क्यों जन्मा? प्रभु के एक भी काम नहीं आया। फिर कुअवसर जानकर, मन में धीरज धरकर, बली और वीर भरत बानर से बोले—

तात गहरु[1] होइहि तोहि जाता ❀ काजु नसाइहि होत प्रभाता
चढ़ु मम सायक सैल समेता ❀ पठवौं तोहिं जहँ कृपानिकेता

हे तात! तुमको जाने में देरी होगी और सवेरा होते ही काम बिगड़ जायगा। पर्वत-सहित मेरे बाण पर चढ़ लो, मैं तुमको वहाँ भेज दूँ, जहाँ कृपा के धाम रामजी हैं।

सुनि कपि मन उपजा अभिमाना ❀ मोरें भार चलिहि किमि बाना
राम प्रभाव बिचारि बहोरी ❀ बंदि चरन कह कपि कर जोरी

यह सुनकर हनुमान के मन में अभिमान उत्पन्न हुआ कि मेरे बोझ से बाण चलेगा कैसे? फिर राम का प्रभाव सोचकर, भरत के चरणों की वन्दना करके वे हाथ जोड़कर बोले—

तव प्रताप उर राखि गोसाईं ❀ जैहउँ राम बान की नाईं
भरत हरषि तब आयसु दयऊ ❀ पद सिर नाइ चलत कपि भयऊ

हे स्वामी! आपका प्रताप हृदय में रखकर मैं राम के बाण की तरह तेज़ जाऊँगा। तब भरत ने हर्षित होकर आज्ञा दी और हनुमान उनके चरणों पर सिर नवाकर चल पड़े।

दो०—**भरत बाहु बल सील गुन प्रभु पद प्रीति अपार।**
मन महुँ जात सराहत पुनि पुनि पवनकुमार॥६०॥

पवनपुत्र हनुमान भरत की भुजाओं का बल, शील, गुण और प्रभु के चरणों में उनकी अपार प्रीति की सराहना मन ही मन करते चले जा रहे हैं।

उहाँ राम लछिमनहिं निहारी ❀ बोले बचन मनुज अनुहारी[2]
अर्ध राति गइ कपि नहिं आयउ ❀ राम उठाइ अनुज उर लायउ

वहाँ लक्ष्मण को देखकर रामजी साधारण मनुष्यों की तरह वचन कहने लगे—आधी रात बीत चुकी, हनुमान नहीं आये। यह कहकर रामजी ने छोटे भाई को उठाकर छाती से लगा लिया—

१. देर। २. अनुसार, की तरह।

सकहु न दुखित देखि मोहिं काऊ ❀ बंधु सदा तव मृदुल सुभाऊ
मम हित लागि तजेहु पितु माता ❀ सहेहु बिपिन हिम आतप बाता

हे भाई ! तुम मुझे कभी दुखी नहीं देख सकते थे। तुम्हारा स्वभाव सदा से ही कोमल था। तुमने मेरे लिये माता-पिता को भी छोड़ दिया और वन में जाड़ा, गरमी और हवा सब सहन किया।

सो अनुराग कहाँ अब भाई ❀ उठहु न सुनि मम बच[1] बिकलाई
जौं जनतेउँ बन बंधु बिछोहू ❀ पिता बचन मनतेउँ नहिं ओहू

हे भाई ! वह प्रेम अब कहाँ है ? मेरे व्याकुल वचन सुनकर उठो न ? यदि मैं वन में भाई का विछोह होना जानता तो मैं पिता के उस वचन को भी न मानता।

सुत बित नारि भवन परिवारा ❀ होहिं जाहिं जग बारहिं बारा
अस बिचारि जियँ जागहु ताता ❀ मिलइ न जगत सहोदर भ्राता

पुत्र, धन, स्त्री, घर और परिवार, ये जगत् में बार-बार होते और जाते हैं। परंतु जगत् में सहोदर भाई फिर नहीं मिलता। ऐसा हृदय में विचारकर हे तात ! जागो।

जथा पङ्ख बिनु खग अति दीना ❀ मनि बिनु फनि करिबर[2] कर हीना
अस मम जिवन बंधु बिनु तोही ❀ जौं जड़ दैव जियावै मोही

जैसे पंख बिना पक्षी, मणि बिना सर्प और सूँड बिना श्रेष्ठ हाथी अत्यन्त दीन हो जाते हैं; हे भाई ! यदि कहीं जड़ दैव मुझे जीवित रक्खे, तो तुम्हारे बिना मेरा जीवन भी वैसा ही होगा।

जैहउँ अवध कवन मुँह लाई ❀ नारि हेतु प्रिय भाइ गँवाई
बरु अपजस सहतेउँ जग माहीं ❀ नारि हानि बिसेष छति नाहीं

मैं स्त्री के लिये प्यारे भाई को खोकर कौन-सा मुँह लेकर अयोध्या जाऊँगा। मैं जगत् में अपयश भले ही सह लेता और स्त्री की हानि से कोई विशेष क्षति थी भी नहीं।

अब अपलोकु सोकु सुत तोरा ❀ सहिहि निठुर कठोर उर मोरा
निज जननी के एक कुमारा ❀ तात तासु तुम्ह प्रान अधारा

---

१. वचन। २. श्रेष्ठ हाथी।

अब तो हे पुत्र! मेरा निष्ठुर कठोर हृदय यह निन्दा और तुम्हारा शोक दोनों ही सहन करेगा। हे तात! तुम अपनी माता के एक ही पुत्र हो, और उसके प्राणाधार हो।

सौंपेसि मोहि तुम्हहिं गहि पानी ❀ सब बिधि सुखद परम हित जानी
उतरु काह दैहउँ तेहि जाई ❀ उठि किन मोहि सिखावहु भाई

उसने मुझे सब प्रकार से सुख देने वाला और तुम्हारा परम शुभचिन्तक समझकर, तुम्हें हाथ पकड़कर मेरे सुपुर्द किया था। मैं अब जाकर उसे क्या उत्तर दूँगा? हे भाई! उठकर मुझे सिखाते क्यों नहीं?

बहु बिधि सोचत सोच बिमोचन ❀ स्रवत सलिल राजिव[1] दल[2] लोचन
उमा एक अखंड रघुराई ❀ नर गति भगत कृपाल देखाई

सोच से छुड़ाने वाले रामजी बहुत प्रकार से चिन्ता करने लगे। उनके कमल की पंखुड़ी के समान नेत्रों से जल बह रहा है। शिवजी कहते हैं—हे उमा! रामजी एक और अखंड हैं। उन कृपालु ने भक्तों के लिये यह मनुष्यों की दशा दिखलाई है।

सो०— प्रभु बिलाप सुनि कान बिकल भये बानर निकर।
आइ गयेउ हनुमान जिमि करुना महँ बीर रस ॥६१॥

रामजी का विलाप कानों से सुनकर बानरों के समूह व्याकुल हो गये। इतने में हनुमान आ गये, जैसे करुणा-रस में वीर-रस आ गया हो।

हरषि राम भेंटेउ हनुमाना ❀ अति कृतग्य प्रभु परम सुजाना
तुरत बैद तब कीन्हि उपाई ❀ उठि बैठे लछिमन हरषाई

रामजी हर्षित होकर हनुमान को गले लगाकर मिले। परम बुद्धिमान प्रभु अत्यन्त ही कृतज्ञ हुये। वैद्य ने तुरन्त ही उपाय किया, जिससे लक्ष्मण हर्षित होकर उठ बैठे।

हृदयँ लाइ प्रभु भेंटेउ भ्राता ❀ हरषे सकल भालु कपि ब्राता[3]
पुनि कपि बैद तहाँ पहुँचावा ❀ जेहि बिधि तबहि ताहि लेइ आवा

प्रभु भाई को हृदय से लगाकर मिले। भालू और बानरों के समूह सब

---

१. कमल। २. पंखुडी। ३. समूह।

हर्षित हो गये। हनुमान ने वैद्य को उसी प्रकार से वहाँ पहुँचा दिया जिस प्रकार से और जहाँ से वह लाये थे।

यह बृत्तान्त दसानन सुनेऊ ❀ अति बिषाद पुनि पुनि सिर धुनेऊ
ब्याकुल कुम्भकरन पहिं गयऊ ❀ करि बहु जतन जगावत भयऊ

यह समाचार जब रावण ने सुना, तब बहुत दुःख के मारे उसने बार-बार सिर पीटा। व्याकुल होकर वह कुम्भकर्ण के पास गया और बहुत-से उपाय करके उसने उसे जगाया।

जागा निसिचर देखिअ कैसा ❀ मानहुँ काल देह धरि बैसा[1]
कुम्भकरन बूझा सुन भाई ❀ काहे तव मुख रहे सुखाई

कुम्भकर्ण जगा। वह ऐसा दिखाई देता है मानो स्वयं काल ही देह धरकर बैठा है। कुम्भकर्ण ने पूछा—हे भाई! सुनो, तुम्हारा मुँह सूखा क्यों है?

कथा कही तब तेहिं अभिमानी ❀ जेहि प्रकार सीता हरि आनी
तात कपिन्ह सब निसिचर मारे ❀ महा महा जोधा संघारे

तब उस अभिमानी ने सारी कथा कह सुनाई। जिस प्रकार से वह सीता को हर लाया था। फिर कहा—हे तात! बानरों ने सारे राक्षसों को मार डाला। बड़े-बड़े योद्धाओं का भी उन्होंने संहार कर डाला।

दुर्मुख सुररिपु मनुज अहारी ❀ भट अतिकाय अकंपन भारी
अपर महोदर आदिक बीरा ❀ परे समर महि सब रनधीरा

दुर्मुख, देवान्तक, नरान्तक, भारी योद्धा अतिकाय और अकंपन तथा महोदर आदि दूसरे सभी वीर और रणधीर सब युद्ध-भूमि में मरकर पड़े हैं।

दो०— सुनि दसकंधर बचन तब कुम्भकरन बिलखान।
जगदंबा हरि आनि अब सठ चाहत कल्यान।६२।

तब रावण के वचन सुनकर कुम्भकर्ण बिलखकर बोला—हे मूर्ख! जगज्जननी को हर लाकर अब तुम कल्याण चाहते हो?

भल न कीन्ह तैं निसिचर नाहा ❀ अब मोहि आइ जगायेहि काहा
अजहूँ तात त्यागि अभिमाना ❀ भजहु राम होइहि कल्याना

१. बैठा।

हे राक्षसों के राजा! तुमने अच्छा नहीं किया। अब आकर मुझे क्यों जगाया? अब भी हे तात! अभिमान छोड़कर रामजी को भजो, तो कल्याण होगा।

हैं दससीस मनुज रघुनायक ❀ जाके हनूमान से पायक
अहह बंधु तैं कीन्हि खोटाई ❀ प्रथमहिं मोहि न सुनायेहि आई

हे रावण! जिनके हनूमान ऐसे सेवक हैं, वे रामजी क्या मनुष्य हैं? हे भाई! तुमने बुरा किया, जो पहले ही आकर मुझे यह सब समाचार नहीं बताया।

कीन्हेहु प्रभु बिरोध तेहि देवक ❀ सिव बिरंचि सुर जाके सेवक
नारद मुनि मोहि ग्यान जो कहा ❀ कहतेउँ तोहि समय निरबहा

तुमने उस परम देवता का विरोध किया, जिसके शिव और ब्रह्मा आदि देवता सेवक हैं। नारद मुनि ने मुझे जो ज्ञान बताया था, मैं तुमसे कहता, पर अब तो समय जाता रहा।

अब भरि अंक भेंटु मोहि भाई ❀ लोचन सुफल करौं मैं जाई
स्याम गात सरसीरुह लोचन ❀ देखौं जाइ ताप त्रय मोचन

अब मुझे अँकवार भरकर भेंट लो। मैं अब जाकर अपने नेत्र सफल करूँ। श्याम शरीर वाले, कमल ऐसे नेत्रों वाले और तीनों तापों को मिटाने वाले रामजी का मैं जाकर दर्शन करूँ।

दो० राम रूप गुन सुमिरत मगन भयेउ छन एक।
रावन माँगेउ कोटि घट मद अरु महिष अनेक।६३।

रामजी के रूप और गुणों का स्मरण करके कुम्भकर्ण क्षणभर तक प्रेम में मग्न हो गया। फिर रावण ने करोड़ों घड़े शराब और अनेकों भैंसे मँगवाये।

महिष खाइ करि मदिरा पाना ❀ गर्जा बज्राघात[1] समाना
कुम्भकरन दुर्मद रन रंगा ❀ चला दुर्ग तजि सेन न संगा

भैंसे खाकर और शराब पीकर वह बिजली गिरने के समान गरजा। मद में चूर, रण के उत्साह से पूर्ण क्रूर कुम्भकर्ण गढ़ छोड़कर चला। साथ में सेना भी नहीं ली।

१. बिजली गिरना।

देखि बिभीषनु आगें आयउ ❀ परेउ चरन निज नाम सुनायउ
अनुज उठाइ हृदयँ तेहि लावा ❀ रघुपति भक्त जानि मन भावा

उसे देखकर विभीषण आगे आया और उसके चरणों पर गिरकर उसने अपना नाम सुनाया। छोटे भाई को उठाकर उसने हृदय से लगा लिया, और राम का भक्त जानकर वह उसके मन को प्रिय लगा।

तात लात रावन मोहि मारा ❀ कहत परम हित मंत्र बिचारा
तेहि गलानि रघुपति पहिं आयउँ ❀ देखि दीन प्रभु के मन भायउँ

विभीषण ने कहा—हे तात! रावण ने मुझे लात मारी, जब कि मैं बहुत ही कल्याणकारी मन्त्र और विचार की बातें कह रहा था। मैं उसी ग्लानि के मारे रामजी के पास चला आया। दीन देखकर भगवान् के मन को मैं बहुत प्रिय लगा।

सुनु सुत भयेउ कालबस रावन ❀ सो कि मान अब परम सिखावन
धन्य धन्य तैं धन्य बिभीषन ❀ भयेहु तात निसिचर कुल भूषन
बंधु बंस तैं कीन्ह उजागर ❀ भजेहु राम सोभा सुख सागर

कुम्भकर्ण ने कहा—हे पुत्र! सुनो। रावण तो काल के वश हो गया है। भला, अब वह क्या उत्तम शिक्षा मान सकता है? हे विभीषण! तुम धन्य हो, धन्य हो, धन्य हो। हे तात! तुम राक्षस-कुल के भूषण हो गये। हे भाई! तुमने अपने कुल को उजागर कर दिया, जो तुमने शोभा और सुख के समुद्र रामजी को भजा।

दो०— बचन कर्म मन कपट तजि भजेहु राम रनधीर।
जाहु न निज पर सूझ मोहि भयेउँ कालबस बीर।६४।

वचन, कर्म और मन से कपट छोड़कर रण-धीर रामजी को भजना। हे भाई! तुम अब जाओ, मैं काल के वश हो गया हूँ। मुझे अब अपना पराया कुछ नहीं सूझता।

बंधु बचन सुनि फिरा बिभीषन ❀ आयेउ जहँ त्रैलोक बिभूषन
नाथ भूधराकार सरीरा ❀ कुंभकरन आवत रनधीरा

भाई के वचन सुनकर विभीषण लौट गया और वहाँ आया जहाँ तीनों

लोकों के भूषण रामजी थे। उसने कहा—हे नाथ! पर्वत के समान विशाल शरीर वाला रणधीर कुम्भकर्ण आ रहा है।

एतना कपिन्ह सुना जब काना ❀ किलिकिलाइ धाए बलवाना
लिए उपारि बिटप अरु भूधर ❀ कटकटाइ डारहिं ता ऊपर

बानरों ने जब कानों से इतना सुना, तब वे बलवान किलकिलाकर दौड़े। उन्होंने वृक्ष और पहाड़ उखाड़ लिये और वे दाँत कटकटाकर उसके ऊपर डालने लगे।

कोटि कोटि गिरि सिखर प्रहारा ❀ करहिं भालु कपि एक एक बारा
मुरइ न मनु तनु टरइ न टारा ❀ जिमि गज अर्क[1] फलन्हि कर मारा

भालू और बानर एक बार में करोड़ों पहाड़ों के शिखरों से उस पर प्रहार करते हैं, परन्तु न तो उसका मन मुड़ता है और न शरीर ही टालने से टलता है, जैसे मदार के फलों की मार से हाथी पर कुछ असर नहीं होता।

तब मारुतसुत मुठिका हनेऊ ❀ परेउ धरनि व्याकुल सिर धुनेऊ
पुनि उठि तेहिं मारेउ हनुमंता ❀ घुर्मित भूतल परेउ तुरंता

तब हनुमान ने उसे घूँसा मारा, जिससे वह व्याकुल होकर धरती पर गिर पड़ा और सिर पीटने लगा। फिर उठकर उसने भी हनुमान को मारा। हनुमान चक्कर खाकर तुरन्त ही पृथ्वी पर गिर पड़े।

पुनि नल नीलहि अवनि[2] पछारेसि ❀ जहँ तहँ पटकि पटकि भट डारेसि
चली बलीमुख सेन पराई ❀ अति भय त्रसित न कोउ समुहाई

फिर उसने नल-नील को पृथ्वी पर पछाड़ दिया। और दूसरे योद्धाओं को जहाँ-तहाँ पटक-पटक कर डाल दिया। बानरों की सेना भाग चली। सब अत्यन्त भय से डर गये; कोई सामने नहीं आता।



अंगदादि कपि मूरछित करि समेत सुग्रीव।
काँख दाबि कपिराज कहुँ चला अमित बल सींव॥६५

सुग्रीव-समेत अंगद आदि बानरों को मूर्छित करके फिर वह असीम बल वाला कुम्भकर्ण सुग्रीव को काँख में दाबकर ले चला।

---

१. मदार। २. पृथ्वी।

उमा करत रघुपति नरलीला ❀ खेल गरुड़ जिमि अहिगन मीला
भृकुटि भंग जो कालहि खाई ❀ ताहि कि सोहइ ऐसि लराई

शिवजी कहते हैं—हे उमा! रामजी वैसे ही नरलीला कर रहे हैं, जैसे गरुड़ सर्पों के समूह में मिलकर खेलता हो। जो भौं के इशारे से ही काल को भी खा जाता है, उसे कहीं ऐसी लड़ाई शोभा देती है?

जग पावनि[1] कीरति बिस्तरिहहिं[2] ❀ गाइ गाइ भवनिधि नर तरिहहिं
मुरुछा गइ मारुतसुत जागा ❀ सुग्रीवहिं तब खोजन लागा

भगवान् इसके द्वारा जग को पवित्र करने वाली कीर्त्ति फैलायेंगे जिसे गा-गाकर मनुष्य भवसागर को पार करेंगे। मूर्च्छा जाती रही, और हनुमान जागे। फिर वे सुग्रीव को खोजने लगे।

सुग्रीवहुँ कै मुरुछा बीती ❀ निबुकि गयउ तेहि मृतक प्रतीती[3]
काटेसि दसन नासिका काना ❀ गरजि अकास चला तेहिं जाना

सुग्रीव की भी मूर्च्छा गई, तब वह भी कुम्भकर्ण को अपने मृतक होने का विश्वास दिलाकर छुटकारा पा गया। उसने कुम्भकर्ण के नाक और कान दाँतों से चबा लिये। और फिर गरजकर आकाश की ओर चला, तब कुम्भकर्ण ने जाना।

गहेउ चरन धरि धरनि पछारा ❀ अति लाघवँ उठि पुनि तेहि मारा
पुनि आयेउ प्रभु पहिं बलवाना ❀ जयति जयति जय कृपानिधाना

उसने सुग्रीव की टाँग पकड़कर उसे पृथ्वी पर पछाड़ दिया। फिर सुग्रीव बड़ी फुर्ती से उठा और उसे मारा। फिर बलवान सुग्रीव प्रभु के पास आया और बोला—कृपा के धाम राम की जय हो, जय हो, जय हो।

नाक कान काटे जियँ जानी ❀ फिरा क्रोध-करि भइ मन ग्लानी
सहज भीम पुनि बिनु श्रुति नासा ❀ देखत कपि दल उपजी त्रासा

नाक, कान काटे गये, ऐसा मन में जानकर उसके मन में बड़ी ग्लानि हुई और वह क्रोध करके लौटा। एक तो स्वभाव ही से भयंकर और फिर बिना नाक-कान का; उसे देखते ही बानरों की सेना में भय उत्पन्न हो गया।

---

१. पवित्र करने वाली। २. फैलायेंगे। ३. विश्वास दिलाकर।

दो॰ जय जय जय रघुबंस मनि धाये कपि देइ हूह।
एकहि बार तासु पर छाड़ेन्हि गिरि तरु जूह[1] ॥६६॥

'रघुकुल के शिरोमणि की जय हो, जय हो, जय हो', बानर ऐसा कहकर हू-हू करके दौड़े और एक साथ ही उस पर उन्होंने पहाड़ और वृक्षों के समूह फेंके।

कुम्भकरन रन रंग बिरुद्धा ❀ सनमुख चला काल जनु क्रुद्धा
कोटि कोटि कपि धरि धरि खाई ❀ जनु टीड़ी गिरि गुहाँ समाई

रण के उत्साह में उन्मत्त कुम्भकर्ण सामने ऐसा चला, जैसे क्रोधित काल। करोड़ों बानरों को एक साथ पकड़-पकड़कर वह खाने लगा, जैसे पहाड़ की गुफा में टिड्डियाँ समा रही हों।

कोटिन्ह गहि सरीर सन मर्दा ❀ कोटिन्ह मींजि मिलव महि गर्दा[2]
मुख नासा स्रवनन्हि की बाटा[3] ❀ निसरि पराहिं भालु कपि ठाटा[4]

करोड़ों बानरों को पकड़-पकड़कर उसने शरीर से मसल डाला। करोड़ों को हाथ मींजकर पृथ्वी की धूल में मिला दिया। पेट में गये हुए भालू और बानरों के ठट्ट के ठट्ट उसके मुँह, नाक और कानों की राह से निकल-निकलकर भाग रहे हैं।

रन मद मत्त निसाचर दर्पा ❀ बिस्व ग्रसिहि जनु एहि बिधि अर्पा
मुरे सुभट रन फिरहिं न फेरे ❀ सूझ न नयन सुनहिं नहिं टेरे[5]

रण के मद में मत्त राक्षस ऐसा गर्वित हुआ, मानो विश्व को ग्रस लेने के लिये ही विधाता ने उसे अर्पण किया हो। सब योद्धा लड़ाई से भाग खड़े हुये, वापस बुलाने से भी नहीं लौटते। आँखों से उन्हें सूझता नहीं और पुकारने से वे सुनते नहीं।

कुम्भकरन कपि फौज बिडारी ❀ सुनि धाई रजनीचर धारी
देखी राम बिकल कटकाई ❀ रिपु अनीक नाना बिधि आई

कुम्भकर्ण ने बानरों की सेना तितर-बितर कर दी। यह सुनकर राक्षसों की सेना दौड़ पड़ी। रामजी ने अपनी सेना को व्याकुल और शत्रु की अनेक प्रकार की सेना को आई हुई देखा।

---

१. समूह। २. धूल। ३. राह से। ४. समूह। ५. बुलाने से।

दो० सुनु सुग्रीव बिभीषन अनुज सँभारेहु सैन।
मैं देखउँ खल दल बलहिं बोले राजिवनैन ॥६७॥

तब कमल-नयन रामजी ने कहा—हे सुग्रीव ! हे विभीषण और हे लक्ष्मण ! सुनो, तुम सेना को सँभालना। मैं इस दुष्ट के बल और सेना को देखूँ तो सही।

कर सारंग[1] साजि कटि भाथा ❀ अरि दल दलन चले रघुनाथा
प्रथम कीन्ह प्रभु धनुष टँकोरा ❀ रिपु दल बधिर भयेउ सुनि सोरा[2]

हाथ में धनुष और कमर में तरकस सजकर रामजी शत्रु-सेना को नष्ट करने चले। प्रभु ने पहले तो धनुष का टंकार किया, जिसकी आवाज़ सुनकर ही शत्रु-दल बहरा हो गया।

सत्यसंध छाँड़े सर लच्छा ❀ काल सर्प जनु चले सपच्छा
जहँ तहँ चले बिपुल नाराचा ❀ लगे कटन भट बिकट पिसाचा

फिर सच्ची प्रतिज्ञा करने वाले रामजी ने एक लाख बाण छोड़े। वे पङ्ख-सहित कालरूपी सर्प की तरह चले। जहाँ-तहाँ असंख्य बाण चले, जिनसे भयानक राक्षस योद्धा कटने लगे।

कटहिं चरन उर सिर भुजदंडा ❀ बहुतक बीर होहिं सत खंडा
घुर्मि घुर्मि[3] घायल महि परहीं ❀ उठि संभारि सुभट पुनि लरहीं

उनके पैर, छाती, सिर और भुजायें कट रही हैं। बहुत-से वीरों के तो सौ-सौ टुकड़े हो जाते हैं। घायल चक्कर खा-खाकर पृथ्वी पर गिर रहे हैं। बड़े वीर फिर सँभलकर उठते और लड़ते हैं।

लागत बान जलद जिमि गाजहिं ❀ बहुतक देखि कठिन सर भाजहिं
रुंड प्रचंड मुंड बिनु धावहिं ❀ धरु धरु मारु मारु धुनि गावहिं

बाण लगते ही वे बादल की तरह गरजते हैं और बहुत-से तो कठिन बाण को देखते ही भाग जाते हैं। प्रचण्ड रुण्ड बिना मुण्ड के दौड़ रहे हैं और धरो, धरो, मारो, मारो की आवाज़ करते हुये चिल्ला रहे हैं।

दो० छन महुँ प्रभु के सायकन्हि काटे बिकट पिसाच।
पुनि रघुबीर निषंग[4] महुँ प्रबिसे सब नाराच ॥६८॥

१. धनुष। २. शोर। ३. चक्कर खा-खाकर। ४. तरकस।

प्रभु के बाणों ने क्षणभर में भयानक राक्षसों को काट डाला। फिर वे बाण रामजी के तरकस में प्रवेश कर गये।

कुंभकरन मन दीख बिचारी ❀ हती निमिष महँ निसिचर धारी
भयेउ क्रुद्ध दारुन बल बीरा ❀ करि मृगनायक[1] नाद गँभीरा

कुम्भकर्ण ने मन में विचारकर देखा कि रामजी ने तो क्षणभर में राक्षसों की सेना का संहार कर डाला। तब वह भयानक बल वाला वीर अत्यन्त क्रोधित हुआ और उसने गम्भीर सिंहनाद किया।

कोपि महीधर लेइ उपारी ❀ डारै जहँ मर्कट भट भारी
आवत देखि सैल प्रभु भारे ❀ सरन्हि काटि रज[2] सम करि डारे

क्रुद्ध होकर वह पर्वत उखाड़ लेता है और वहाँ डाल देता है, जहाँ भारी-भारी बानर योद्धा खड़े होते हैं। प्रभु बड़े-बड़े पर्वतों को आते देखकर उन्हें बाणों से काटकर धूल के कण के समान कर डालते हैं।

पुनि धनु तानि कोपि रघुनायक ❀ छाँड़े अति कराल बहु सायक
तन महुँ प्रबिसि निसरि सर जाहीं ❀ जनु दामिनि घन माँझ समाहीं

फिर रामजी ने धनुष तानकर क्रोध करके अनेकों अत्यन्त भयङ्कर बाण छोड़े। वे बाण कुम्भकर्ण के शरीर में घुसकर पार निकल जाते हैं, जैसे बिजलियाँ बादल में समा जाती हैं।

सोनित स्रवत सोह तन कारे ❀ जनु कज्जल गिरि गेरु पनारे
बिकल बिलोकि भालु कपि धाए ❀ बिहँसा जबहिं निकट भट आए

उसके काले शरीर पर रक्त बहता हुआ ऐसा शोभित हो रहा है, जैसे काजल के पर्वत पर गेरू के पनाले बह रहे हों। उसे विकल देखकर भालू और बानर दौड़े। वे ज्यों ही निकट आये, त्यों ही वह हँसा।

दो० महानाद करि गरजा कोटि कोटि गहि कीस।
महि पटकइ गजराज इव सपथ करइ दससीस॥६९॥

वह बड़ा घोर शब्द करके गरजा। करोड़-करोड़ बानरों को पकड़कर वह गजराज की तरह उन्हें पृथ्वी पर पटकने लगा और रावण की दुहाई देने लगा।

---

१. सिंह। २. धूल।

भागे भालु बलीमुख जूथा ❀ बृक बिलोकि जिमि मेष[1] बरूथा
चले भागि कपि भालु भवानी ❀ बिकल पुकारत आरत बानी

भालू और बानरों के झुण्ड भाग खड़े हुये, जैसे भेड़िये को देखकर भेड़ों के झुण्ड। हे भवानी! बानर-भालू विकल होकर दुःख-भरी वाणी से पुकारते हुये भाग चले।

यह निसिचर दुकाल सम अहई ❀ कपिकुल देस परन अब चहई
कृपा बारिधर[2] राम खरारी ❀ पाहि पाहि प्रनतारतिहारी

यह राक्षस दुर्भिक्ष के समान है, जो बानर-कुल-रूपी देश में अब पड़ना चाहता है। कृपारूपी जल धारण करने वाले मेघरूप रामजी! हे खर के शत्रु! हे शरणागत के दुःख-निवारक! रक्षा करो, रक्षा करो! [रसवान अलंकार]

सकरुन बचन सुनत भगवाना ❀ चले सुधारि सरासन बाना
राम सेन निज पाछें घाली[3] ❀ चले सकोप महा बलसाली

करुणा से भरे वचन सुनते ही भगवान तत्काल ही धनुष-बाण सुधारकर चले। महा बलशाली रामजी ने सेना को पीछे कर लिया और वे क्रोध करके अकेले चले।

खैंचि धनुष सर सत संधाने ❀ छूटे तीर सरीर समाने
लागत सर धावा रिस भरा ❀ कुधर[4] डगमगत डोलति धरा[5]

उन्होंने धनुष खींचकर सौ बाण संधान किये। तीर छूटे और कुम्भकर्ण के शरीर में समा गये। बाणों के लगते ही, वह क्रोध में भरकर दौड़ा। उसके दौड़ने से पर्वत डगमगा उठे और पृथ्वी हिल उठी।

लीन्ह एक तेहि सैल उपाटी[6] ❀ रघुकुल तिलक भुजा सोइ काटी
धावा बाम बाहु गिरि धारी ❀ प्रभु सोउ भुजा काटि महि पारी[7]

उसने एक पहाड़ उखाड़ लिया। रघुकुल तिलक रामजी ने उसकी भुजा ही काट दी। तब वह बायें हाथ में पहाड़ लेकर दौड़ा। प्रभु ने उसकी वह भुजा भी काटकर पृथ्वी पर गिरा दी।

काटें भुजा सोह खल कैसा ❀ पच्छहीन मंदर गिरि जैसा
उग्र बिलोकनि प्रभुहि बिलोका ❀ ग्रसन चहत मानहुँ त्रैलोका

१. भेड़। २. बादल। ३. डालकर। ४. पर्वत। ५. पृथ्वी। ६. उखाड़। ७. गिरा दी।

भुजाओं के कट जाने पर वह दुष्ट कैसी शोभा पाने लगा, जैसे बिना पंख का मन्दराचल पर्वत हो। उसने प्रभु को आँख गुरेरकर देखा, मानो वह तीनों लोकों को निगल जाना चाहता हो।



करि चिक्कार घोर अति धावा बदनु पसारि।
गगन सिद्ध सुर त्रासित हा हा हेति पुकारि ॥७०॥

वह बड़े ज़ोर से चिंघाड़ करके और मुँह फैलाकर दौड़ा। आकाश में सिद्ध और देवता डर कर हा! हा! हा! इस प्रकार पुकारने लगे।

सभय देव करुनानिधि जानेउ ❁ श्रवन प्रजंत[1] सरासन तानेउ
बिसिख निकर निसिचर मुख भरेऊ ❁ तदपि महाबल भूमि न परेऊ

करुणा के भांडार रामजी ने देवताओं को डरा हुआ जाना। तब उन्होंने कान तक धनुष खींचा और राक्षस के मुँह को बाणों के समूह से भर दिया। तो भी वह महाबली पृथ्वी पर नहीं गिरा।

सरन्हि भरा मुख सनमुख धावा ❁ काल त्रोन[2] सजीव जनु आवा
तब प्रभु कोपि तीब्र सर लीन्हा ❁ धर[3] तें भिन्न तासु सिर कीन्हा

मुँह में बाण भरे हुये वह प्रभु के सामने दौड़ा। मानो काल का सजीव तरकस ही आ रहा हो। तब प्रभु ने कोप करके पैना बाण लिया और उसके सिर को धड़ से अलग कर दिया।

सो सिर परेउ दसानन आगें ❁ बिकल भयेउ जिमि फनि मनि त्यागें
धरनि धसइ धर धाव प्रचंडा ❁ तब प्रभु काटि कीन्ह दुइ खंडा

वह सिर रावण के आगे जा गिरा। उसे देखकर वह ऐसा विकल हुआ, जैसे सर्प मणि के छूट जाने पर होता है। कुम्भकर्ण का प्रचंड धड़ दौड़ा, जिससे पृथ्वी धँसी जाती थी। तब प्रभु ने काटकर उसके दो टुकड़े कर दिये।

परे भूमि जिमि नभ तें भूधर ❁ हेठ दाबि कपि भालु निसाचर

बानर, भालू और निशाचरों को अपने नीचे दबाते हुये वे दोनों टुकड़े पृथ्वी पर ऐसे गिरे, जैसे आकाश से दो पहाड़ गिरे हों।

तासु तेज प्रभु बदन समाना ❁ सुर मुनि सबहिं अचंभव माना
नभ दुंदुभी बजावहिं हरषहिं ❁ जय जय करि प्रसून सुर बरषहिं

---

१. पर्यन्त, तक। २. तरकस। ३. धड़।

उसका तेज प्रभु के मुँह में समा गया। देवता और मुनि सबने अचरज माना। देवता आकाश में नगाड़े बजाते, हर्षित होते और जय-जय करके फूल बरसा रहे हैं।

करि बिनती सुर सकल सिधाये ❀ तेही समय देवरिषि[1] आये
गगनोपरि हरि गुनगन गाये ❀ रुचिर बीर रस प्रभु मन भाये
बेगि हतहु खल कहि मुनि गये ❀ राम समर महि सोभत भये

विनती करके सब देवता चले गये। उसी समय देवर्षि नारद आये। आकाश के ऊपर से उन्होंने भगवान के गुणों का गान किया। सुन्दर वीर रस के गीत प्रभु के मन को बहुत प्रिय लगे। मुनि यह कहकर चले गये कि दुष्ट का वध जल्दी कीजिये, और राम युद्ध-भूमि में आकर शोभायमान हुये।

छन्द–संग्राम भूमि बिराज रघुपति अतुल बल कोसलधनी।
स्रम बिंदु[2] मुख राजीव लोचन रुचिर तन सोनित कनी॥
भुज जुगल फेरत सर सरासन भालु कपि चहुँ दिसि बने।
कह दास तुलसी कहि न सक छबि सेष जेहि आनन घने॥

अतुलनीय बल वाले, अयोध्यापति रामजी संग्राम-भूमि में सुशोभित हुये। कमलनेत्र वाले रामजी के मुख पर पसीने की बूँदें और सुन्दर शरीर पर रक्त के कण हैं। दोनों हाथों से वह धनुष और बाण फिरा रहे हैं। भालू और बानर चारों ओर घेरे हुये हैं। तुलसीदास कहते हैं कि इस छवि का वर्णन शेष भी नहीं कर सकता, जिसके बहुत-से मुख हैं।

दो०– निसिचर अधम मलाकर ताहि दीन्ह निज धाम।
गिरिजा ते नर मंदमति जे न भजहिं श्रीराम॥७१॥

शिवजी कहते हैं—हे गिरिजे! कुम्भकर्ण, जो नीच राक्षस, अधम और पाप की खान था, उसे भी रामजी ने अपना धाम (बैकुण्ठ) दे दिया। वे मनुष्य मंदबुद्धि हैं, जो उन श्रीराम को नहीं भजते।

दिन कें अन्त फिरीं दोउ अनी ❀ समर भई सुभटन्ह स्रम घनी
राम कृपा कपि दल बल बाढ़ा ❀ जिमि तृन पाइ लाग अति डाढ़ा[3]

१. नारद। २. पसीना। ३. अग्नि।

दिन का अन्त होने पर दोनों सेनायें लौटीं। आज के युद्ध में योद्धाओं को बड़ी थकावट हुई थी। रामजी की कृपा से बानर-सेना का बल उसी प्रकार बढ़ गया, जैसे तृण पाकर आग प्रबल हो जाती है।

छीजहिं निसिचर दिन अरु राती ❀ निज मुख कहें सुकृत जेहि भाँती
बहु बिलाप दसकंधर करई ❀ बंधु सीस पुनि पुनि उर धरई

राक्षस रात-दिन घटते ही जा रहे हैं, जैसे अपने ही मुँह से कहने पर पुण्य घट जाता है। रावण बहुत विलाप कर रहा है। भाई का सिर बार-बार कलेजे से लगा रहा है।

रोवहिं नारि हृदय हति पानी ❀ तासु तेज बल बिपुल बखानी
मेघनाद तेहि अवसर आवा ❀ कहि बहु कथा पिता समुझावा

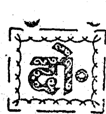
स्त्रियाँ छाती पीट-पीटकर और कुम्भकर्ण के तेज और बड़े बल का बखान करके रो रही हैं। उसी समय मेघनाद आया। उसने बहुत-सी कथायें कहकर पिता को समझाया।

देखेउ कालि मोरि मनुसाई ❀ अबहिं बहुत का करौं बड़ाई
इष्टदेव सैं बर रथ पायउँ ❀ सो बल तात न तोहि देखायउँ

और कहा—कल मेरा पुरुषार्थ देखियेगा। अभी मैं अपनी बहुत बड़ाई क्या करूँ? इष्टदेव से मैंने वरदान और रथ पाया है, हे तात! मैंने अपना वह बल अब तक आपको नहीं दिखलाया था।

एहि बिधि जलपत भयउ बिहाना ❀ चहुँ दुआर लागे कपि नाना
इत कपि भालु काल सम बीरा ❀ उत रजनीचर अति रनधीरा
लरहिं सुभट निज निज जय हेतू ❀ बरनि न जाइ समर खगकेतू

इस तरह डींग मारते हुये सबेरा हो गया। बहुत-से बानर लंका के चारों फाटकों पर आ डटे। इधर काल के समान वीर बानर और भालू हैं और उधर बड़े रणधीर राक्षस। सभी वीर अपनी-अपनी जय के लिये लड़ रहे हैं। हे गरुड़! उनके युद्ध का वर्णन नहीं किया जा सकता।



मेघनाद मायामय रथ चढ़ि गयेउ अकास।
गर्जेउ अट्टहास करि भइ कपि कटकहि त्रास॥७२॥

मेघनाद माया के रथ पर चढ़कर आकाश में चला गया और अट्टहास करके

गरजा, जिससे बानरों की सेना में भय छा गया।

सक्ति सूल तरवारि कृपाना ❀ अस्त्र सस्त्र कुलिसायुध नाना
डारइ परसु परिघ पाषाना ❀ लागेउ बृष्टि करै बहु बाना

वह शक्ति, शूल, तलवार, कृपाण आदि अस्त्र-शस्त्र और वज्र तथा अनेकों हथियार फरसा, परिघ, पत्थर और अगणित बाणों की वृष्टि करने लगा।

रहे दसहु दिसि सायक छाई ❀ मानहुँ मघा मेघ झरि लाई
धरु धरु मारु सुनिअ धुनि काना ❀ जो मारइ तेहि कोउ न जाना

दसों दिशाओं में बाण छा गये, मानो मघा नक्षत्र के बादलों ने झड़ी लगा दी हो। पकड़ो, पकड़ो, मारो की आवाज़ ही कान से सुनाई पड़ती है। पर जो मार रहा है, उसे कोई नहीं जान पाता।

गहि गिरि तरु अकास कपि धावहिं ❀ देखहिं तेहि न दुखित फिरि आवहिं
अवघट घाट बाट गिरि कंदर ❀ माया बल कीन्हेसि सर पंजर[1]

बानर पर्वत और वृक्ष लेकर आकाश में दौड़कर जाते हैं, पर उसे देख नहीं पाते और दुखी होकर वापस लौट आते हैं। मेघनाद ने माया के बल से घाटियों, रास्तों और पर्वत की गुफाओं को बाणों के पिंजरे बना दिये।

जाहिं कहाँ ब्याकुल भये बंदर ❀ सुरपति बंदि परे जनु मंदर[2]
मारुतसुत अंगद नल नीला ❀ कीन्हेसि बिकल सकल बलसीला

बानर घबराये। वे कहाँ जायँ? मानो पर्वत इन्द्र की क़ैद में पड़े हैं। उसने हनुमान, अङ्गद, नल और नील आदि सभी बलवानों को व्याकुल कर दिया।

पुनि लछिमन सुग्रीव बिभीषन ❀ सरन्हि मारि कीन्हेसि जर्जर तन
पुनि रघुपति सैं जूझै लागा ❀ सर छाँड़इ होइ लागहिं नागा

फिर लक्ष्मण, सुग्रीव और विभीषण को बाणों से मारकर उनके शरीरों को उसने छलनी कर दिया। फिर वह रामजी से युद्ध करने लगा। वह जो बाण छोड़ता है, वे साँप होकर लगते हैं।

ब्याल पास बस भये खरारी ❀ स्वबस अनंत एक अबिकारी
नट इव कपट चरित कर नाना ❀ सदा स्वतंत्र एक भगवाना
रन सोभा लगि प्रभुहिं बँधावा ❀ देखि दसा देवन्ह भय पावा

१. पिंजड़ा। २. पर्वत।

जो स्वतन्त्र, अनन्त, अखण्ड और निर्विकार हैं, वे खर के शत्रु रामजी नागपाश के वश में हो गये। राम भगवान् सदा स्वतन्त्र और अद्वितीय हैं। नट की तरह वे नाना प्रकार की दिखावटी लीलायें करते हैं। लड़ाई की शोभा के लिये उन्होंने अपने को नागपाश में बँधा लिया। उनकी दशा देखकर देवताओं को बड़ा भय हुआ।

दो०—गिरिजा जासु नाम जपि मुनि काटहिं भव पास।
सो कि बंध तर आवइ ब्यापक बिस्व निवास ॥७२॥

हे गिरिजे! जिसका नाम जपकर मुनि जन्म-मृत्यु के बन्धन को काट डालते हैं, वह सर्व-व्यापक और विश्व का निवास-स्थल प्रभु कहीं बन्धन में आ सकता है?

चरित राम के सगुन भवानी ❀ तर्कि[1] न जाहिं बुद्धि बल बानी
अस बिचारि जे तग्य[2] बिरागी ❀ रामहि भजहिं तर्क[3] सब त्यागी

हे भवानी! रामजी के ये सगुण चरित्र हैं। बुद्धि और वाणी के बल से इनका निर्णय नहीं किया जा सकता। ऐसा विचारकर जो तत्वज्ञानी और विरक्त पुरुष हैं, वे सब शंका छोड़कर रामजी को भजते हैं।

ब्याकुल कटकु कीन्ह घननादा ❀ पुनि भा प्रगट कहइ दुर्बादा
जामवन्त कह खल रहु ठाढ़ा ❀ सुनि करि ताहि क्रोध अति बाढ़ा

मेघनाद ने सेना को व्याकुल कर दिया। फिर वह प्रकट हुआ और दुर्वचन कहने लगा। इस पर जाम्बवन्त ने कहा—अरे दुष्ट! खड़ा रह। यह सुनकर उसे बड़ा क्रोध बढ़ा।

बूढ़ जानि सठ छाँड़ेउँ तोही ❀ लागेसि अधम पचारै मोही
अस कहि तरल[4] त्रिसूल चलावा ❀ जामवंत कर गहि सोइ धावा

अरे मूर्ख! तुझे बुड्ढा जानकर मैंने छोड़ दिया था। अरे नीच! अब तू मुझे ललकारने लगा? ऐसा कहकर उसने चमकता हुआ त्रिशूल चलाया। जाम्बवन्त उसी त्रिशूल को हाथ से पकड़कर दौड़ा।

मारेसि मेघनाद कै छाती ❀ परा धरनि घुर्मित सुरघाती
पुनि रिसान गहि चरन फिरावा ❀ महि पछारि निज बल देखरावा

---

१. निर्णय। २. तत्त्वज्ञानी। ३. शंका। ४. चमकता हुआ।

और उसे मेघनाद की छाती में मार दिया। देवताओं का वह शत्रु चक्कर खाकर ज़मीन पर गिर पड़ा। जाम्बवान फिर क्रोधित हुआ और उसने उसके पैर पकड़कर घुमाया और ज़मीन पर पटककर उसे अपना बल दिखलाया।

बर प्रसाद सो मरइ न मारा ❀ तब गहि पद लंका पर डारा
इहाँ देवरिषि गरुड़ पठावा ❀ राम समीप सपदि[1] सो आवा

वरदान के प्रभाव से मेघनाद मारे नहीं मरता था, तब जाम्बवन्त ने उसकी टाँग पकड़कर उसे लंका पर फेंक दिया। इधर नारद ने गरुड़ को भेजा। वह शीघ्र ही राम के पास आ पहुँचा।

दो॰ खगपति सब खाए धरि माया नाग बरूथ।
माया बिगत भये सब हरषे बानर जूथ ॥७४॥

गरुड़ ने क्षणभर में माया के सब साँपों के समूहों को खा डाला। तुरन्त ही माया से मुक्त होकर बानरों के समूह हर्षित हो गये।

गहि गिरि पादप उपल नख धाये कीस रिसाइ।
चले तमीचर बिकलतर गढ़ पर चढ़े पराइ ॥(ख)

पर्वत, वृक्ष, पत्थर और नख धारण किये हुए बानर क्रुद्ध होकर दौड़े। राक्षस बहुत व्याकुल होकर भागकर किले पर चढ़ गये।

मेघनाद कै मुरुछा जागी ❀ पितहि बिलोकि लाज अति लागी
तुरत गयेउ गिरिबर कंदरा ❀ करौं अजय मख अस मन धरा

मेघनाद की मूर्च्छा भंग हुई, तब पिता को देखकर उसे बड़ी लज्जा लगी। वह तुरन्त ही अजेय होने का यज्ञ करने के लिये मन में निश्चय करके पहाड़ की गुफा में गया।

सो सुधि पाइ बिभीषन कहई ❀ सुनु प्रभु समाचार अस अहई
मेघनाद मख करइ अपावन ❀ खल मायाबी देव सतावन

यह समाचार पाकर विभीषण कहने लगा—हे प्रभु! सुनिये, ऐसा समाचार है। अपवित्र, दुष्ट, मायावी और देवताओं को सताने वाला मेघनाद यज्ञ कर रहा है।

---

१. शीघ्र।

जौं प्रभु सिद्ध होइ सो पाइहि ❁ नाथ बेगि पुनि जीति न जाइहि
सुनि रघुपति अतिसय सुख माना ❁ बोले अङ्गदादि कपि नाना

हे प्रभु ! यदि उसका यज्ञ सिद्ध होने पायेगा, तो हे नाथ ! मेघनाद शीघ्र जीता नहीं जा सकेगा। यह सुनकर रामजी ने बहुत सुख माना और अङ्गद आदि बहुत-से बानरों को बुलाया और कहा—

लछिमन संग जाहु सब भाई ❁ करहु बिधंस जग्य कर जाई
तुम्ह लछिमन मारेहु रन ओही ❁ देखि सभय सुर दुख अति मोही

सब भाई लक्ष्मण के साथ जाओ, और जाकर यज्ञ का विध्वंस करो। हे लक्ष्मण ! संग्राम में तुम उसे मारना। देवताओं को भयभीत देखकर मुझे बड़ा दुख है।

मारेहु तेहि बल बुद्धि उपाई ❁ जेहि छीजै निसिचर सुनु भाई
जामवन्त सुग्रीव बिभीषन ❁ सेन समेत रहेहु तीनिउ जन
जब रघुबीर दीन्हि अनुसासन ❁ कटि निषंग कसि साजि सरासन

उसे बल और बुद्धि के उपाय से मारना, जिससे हे भाई ! सुनो, वह राक्षस नष्ट हो जाय। जाम्बवन्त, सुग्रीव और विभीषण तुम तीनों जने सेना-समेत साथ रहना। जब राम ने आज्ञा दी, तब कमर में तरकस कसकर और धनुष सजाकर

प्रभु प्रताप उर धरि रनधीरा ❁ बोले घन इव गिरा गँभीरा

रणधीर लक्ष्मण प्रभु के प्रताप को हृदय में धरकर बादल की तरह गम्भीर वाणी बोले—

जौं तेहि आजु बधें बिनु आवौं ❁ तौ रघुपति सेवक न कहावौं
जौं सत संकर करहिं सहाई ❁ तदपि हतउँ रघुबीर दोहाई

यदि आज मैं उसे बिना मारे आऊँ, तो रामजी का सेवक न कहलाऊँ। यदि सैकड़ों शिव भी उसकी सहायता करें, तो भी राम की शपथ है, आज मैं उसे मार ही डालूँगा।

दो० रघुपति चरन नाइ सिरु चलेउ तुरंत अनंत[1]।
अंगद नील मयंद नल संग सुभट हनुमंत ॥७५॥

रामजी के चरणों की वन्दना करके लक्ष्मण तुरन्त ही चले। उनके साथ

१. शेषावतार लक्ष्मण।

अंगद, नील, मयंद, नल और हनुमान आदि उत्तम योद्धा थे।

जाइ कपिन्ह सो देखा बैसा ❀ आहुति देत रुधिर अरु भैंसा
कीन्ह कपिन्ह सब जग्य बिधंसा ❀ जब न उठइ तब करहिं प्रसंसा

बानरों ने जाकर मेघनाद को बैठा हुआ देखा, जो रक्त और भैंसे की आहुति दे रहा है। बानरों ने सब यज्ञ विध्वंस कर दिया। फिर भी जब वह नहीं उठा, तब वे उसकी बड़ाई करने लगे।

तदपि न उठइ धरेन्हि कच जाई ❀ लातन्हि हति हति चले पराई
लेइ त्रिसूल धावा कपि भागे ❀ आये जहँ रामानुज आगे

फिर भी वह नहीं उठा, तब उन्होंने जाकर उसके बाल पकड़े और वे लातों से मार-मारकर भागने लगे। तब वह त्रिशूल लेकर दौड़ा, बानर भागे और वहाँ आ गये, जहाँ आगे लक्ष्मण खड़े थे।

आवा परम क्रोध कर मारा ❀ गर्ज घोर रव बारहिं बारा
कोपि मरुतसुत अंगद धाये ❀ हति त्रिसूल उर धरनि गिराये

मेघनाद अत्यन्त क्रोध का मारा हुआ आया और बार-बार घोर शब्द करके गरजने लगा। हनुमान और अंगद क्रोध करके दौड़े। उसने उनकी छाती में त्रिशूल मारकर उन्हें पृथ्वी पर गिरा दिया।

प्रभु कहँ छाँड़ेसि सूल प्रचंडा ❀ सर हति कृत अनंत जुग खंडा
उठि बहोरि मारुति जुबराजा ❀ हतहिं कोपि तेहि घाउ न बाजा[1]

फिर उसने लक्ष्मण पर प्रचंड त्रिशूल चलाया। लक्ष्मण ने बाण मारकर उसके दो टुकड़े कर दिये। हनुमान और अंगद फिर उठकर क्रोध करके उसे मारने लगे, पर उसे चोट भी न लगी।

फिरे बीर रिपु मरइ न मारा ❀ तब धावा करि घोर चिकारा
आवत देखि क्रुद्ध जनु काला ❀ लछिमन छाड़े बिसिख कराला

शत्रु मारे नहीं मरता, इससे वे वीर लौट चले। तब घोर चिंघाड़ करके दौड़ा। क्रुद्ध काल की तरह उसे आता देखकर लक्ष्मण ने भयानक बाण छोड़े।

देखेसि आवत पबि सम बाना ❀ तुरत भयेउ खल अन्तरधाना
बिबिध बेष धरि करइ लराई ❀ कबहुँक प्रगट कबहुँ दुरि[2] जाई

---

१. लगा। २. छिपा।

बज्र के समान बाणों को आते देखकर वह दुष्ट तुरन्त ही अन्तर्धान हो गया। वह भाँति-भाँति के वेष धरकर युद्ध करने लगा। कभी प्रकट होता था और कभी छिप जाता था।

देखि अजय रिपु डरपे कीसा ❀ परम क्रुद्ध तब भयेउ अहीसा[1]
एहि पापिहिं मैं बहुत खेलावा ❀ अब बध उचित कपिन्ह भय पावा

शत्रु को अजेय देखकर बानर डरे। तब लक्ष्मण बहुत ही क्रुद्ध हुये। उन्होंने सोचा—इस पापी को मैंने बहुत खेलाया। अब इसे मारना ठीक है। बानर डर गये हैं।

सुमिरि कोसलाधीस प्रतापा ❀ सर संधान कीन्ह करि दापा[2]
छाँड़ेउ बान माझ उर लागा ❀ मरती बार कपटु सब त्यागा

राम के प्रताप का स्मरण करके लक्ष्मण ने जोश के साथ बाण का संधान किया और बाण छोड़ दिया, जो उसकी छाती के बीच में लगा। मरते समय उसने सब छल छोड़ दिया।

दो॰ रामानुज कहँ रामु कहँ अस कहि छाँड़ेसि प्रान।
धन्य धन्य तव जननी कह अंगद हनुमान॥७६॥

लक्ष्मण कहाँ हैं? राम कहाँ हैं? ऐसा कहकर उसने प्राण छोड़ दिये। अङ्गद और हनुमान कहने लगे—तेरी माता धन्य है, धन्य है।

बिनु प्रयास हनुमंत उठावा ❀ लंका द्वार राखि तेहि आवा
तासु मरन सुनि सुर गन्धर्बा ❀ चढ़ि बिमान आए नभ सर्बा

हनुमान ने उसे सहज ही में उठा लिया और वे उसे लंका के फाटक पर रख आये। उसका मरना सुनकर देवता, गन्धर्व आदि सब विमानों पर चढ़कर आकाश में आये।

बरषि सुमन दुंदुभीं बजावहिं ❀ श्री रघुबीर बिमल जसु गावहिं
जय अनंत जय जगदाधारा ❀ तुम प्रभु सब देवन्हि निस्तारा[3]

वे फूल बरसाकर नगाड़े बजाते हैं और श्रीरामचन्द्रजी का विमल यश गाते हैं। हे अनन्त! आपकी जय हो; हे जगत् के आधार! आपकी जय हो। हे प्रभु! आपने सब देवताओं का उद्धार किया।

---

१. शेषावतार लक्ष्मण। २. दर्प, जोश। ३. उद्धार किया।

अस्तुति करि सुर सिद्ध सिधाए ❀ लछिमन कृपासिंधु पहिं आए
सुत बध सुनेउ दसानन जबहीं ❀ मुरुछित भयेउ परेउ महि तबहीं

स्तुति करके देवता और सिद्ध चले गये, और लक्ष्मण कृपा के समुद्र रामजी के पास आये। रावण ने जब पुत्र के मारे जाने का हाल सुना, तब वह मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा।

मंदोदरी रुदन करि भारी ❀ उर ताड़त[1] बहु भाँति पुकारी
नगर लोग सब ब्याकुल सोचा ❀ सकल कहहिं दसकंधर पोचा

मन्दोदरी बड़ा भारी विलाप करने और बहुत तरह से पुकार-पुकारकर छाती पीटने लगी। नगर के सब लोग शोक से व्याकुल हो गये। सभी रावण को नीच कहने लगे।

दो०— तब दसकंध अनेक बिधि समुझाईं सब नारि।
नस्वर रूप प्रपंच[2] सब देखहु हृदयँ बिचारि ॥७७॥

तब रावण ने सब स्त्रियों को अनेकों प्रकार से समझाया कि यह सब दृश्य-जगत् नाशवान् है, हृदय में विचार करके देखो।

तिन्हहिं ग्यान उपदेसा रावन ❀ आपुन मंद कथा सुभ भाव न
पर उपदेस कुसल बहुतेरे ❀ जे आचरहिं ते नर न घनेरे

रावण ने उन्हें ज्ञान का उपदेश दिया। पर स्वयं नीच है, उसे शुभ-कथा प्रिय नहीं लगती। दूसरों को उपदेश देने में बहुत लोग निपुण होते हैं, पर जो उपदेश के अनुसार आचरण भी करते हैं, ऐसे लोग अधिक नहीं हैं।

निसा सिरानि भयेउ भिनुसारा ❀ लगे भालु कपि चारिहुँ द्वारा
सुभट बोलाइ दसानन बोला ❀ रन सनमुख जाकर मन डोला

रात बीती, सवेरा हुआ। भालू और बानर चारों द्वारों पर आ डटे। योद्धाओं को बुलाकर रावण कहने लगा—रण में शत्रु के सामने जाने में जिसका मन डाँवाडोल हो,

सो अबहीं बरु जाउ पराई ❀ संजुग[3] बिमुख भएँ न भलाई
निज भुज बल मैं बैरु बढ़ावा ❀ देइहौं उतरु जो रिपु चढ़ि आवा

१. पीटता है। २. जगत्। ३. युद्ध।

अच्छा है, वह अभी भाग जाय। युद्ध से विमुख होने (भागने) में भलाई नहीं है। मैंने अपनी भुजाओं के बल पर बैर बढ़ाया है। शत्रु चढ़ आया है, तो मैं उसको उत्तर दे लूँगा।

अस कहि मरुत[1] बेग रथ साजा ❁ बाजे सकल जुझाऊ बाजा
चले बीर सब अतुलित बली ❁ जनु कज्जल कै आँधी चली
असगुन अमित होहिं तेहि काला ❁ गनइ न भुज बल गर्ब बिसाला

ऐसा कहकर उसने हवा के समान तेज चलने वाला रथ सजाया। युद्ध के सब बाजे बजने लगे। सब अतुलनीय बलवान वीर चले, मानो काजल की आँधी चली है। उस समय बहुत-से अशकुन होने लगे, पर अपनी भुजाओं के बल का बड़ा गर्व होने से रावण उन्हें गिनता नहीं है।

छंद—अति गर्ब गनइ न सगुन असगुन स्रवहिं आयुध हाथ तें।
भट गिरत रथ तें बाजि गज चिक्करत भागहिं साथ तें॥
गोमायु[2] गीध कराल[3] खर रव स्वान रोवहिं अति घने।
जनु कालदूत उलूक बोलहिं बचन परम भयावने॥

अत्यंत गर्व के कारण वह शकुन और अशकुन का कुछ विचार ही नहीं करता। हथियार उसके हाथ से छूटे पड़ते हैं। योद्धा रथ से गिर पड़ते हैं। घोड़े, हाथी चिंघाड़ करते हुये साथ छोड़कर भाग रहे हैं, सियार, गीध, कौवे और गधे भयानक शब्द कर रहे हैं, बहुत अधिक कुत्ते रो रहे हैं। उल्लू ऐसा भयानक वचन बोलते हैं, जैसे काल के दूत हों।

दो० ताहि कि संपति सगुन सुभ सपनेहुँ मन बिस्राम।
भूत द्रोह रत मोह बस राम बिमुख रत काम॥७८॥

क्या उसे भी सम्पत्ति और शुभ शकुन हो सकते हैं और स्वप्न में भी उसके मन को शान्ति मिल सकती है जो जीवों से द्रोह करने में लगा है, मोह के वश हो रहा है, राम के विमुख है और कामासक्त है।

चलेउ निसाचर कटक अपारा ❁ चतुरंगिनी अनी बहु धारा
बिबिध भाँति बाहन रथ जाना ❁ बिपुल बरन पताक ध्वज नाना

---

१. वायु। २. सियार। ३. कौवा।

राक्षसों की अपार सेना चली। चतुरंगिनी सेना की अनेकों टुकड़ियाँ हैं। तरह-तरह के वाहन, रथ, सवारियाँ हैं और अनेकों रंगों की बहुत-सी पताकाएं और ध्वजायें हैं।

चले मत्त गज जूथ घनेरे ❀ प्राबिट जलद मरुत जनु प्रेरे
बरन बरन बिरदैत[1] निकाया ❀ समर सूर जानहिं बहु माया

मतवाले हाथियों के बहुत-से झुंड चले। मानो वायु के उड़ाये हुये वर्षा-ऋतु के बादल हों। तरह-तरह के प्रशंसित वीरों के समूह हैं, जो युद्ध में बड़े शूरवीर हैं और बहुत प्रकार की माया जानते हैं।

अति बिचित्र बाहिनी[2] बिराजी ❀ बीर बसन्त सेन जनु साजी
चलत कटक दिग सिंधुर[3] डगहीं ❀ छुभित पयोधि कुधर डगमगहीं

अत्यन्त विचित्र सेना शोभित हुई। मानो वीर बसन्त ने सेना सजाई हो। सेना के चलने से दिशाओं के हाथी डिगने लगे। समुद्र क्षुब्ध हो गये, और पर्वत डगमगाने लगे।

उठी रेनु[4] रबि गयेउ छपाई ❀ पवन थकित बसुधा अकुलाई
पनव निसान घोर रव बाजहिं ❀ महा प्रलय के घन जनु गाजहिं

इतनी धूल उड़ी कि सूर्य छिप गया, वायु रुक गया और पृथ्वी अकुला उठी। ढोल और नगाड़े घोर शब्द करके बज रहे हैं, जैसे महाप्रलय के बादल गरज रहे हों।

भेरि नफीरि बाज सहनाई ❀ मारू राग सुभट सुखदाई
केहरि नाद बीर सब करहीं ❀ निज निज बल पौरुष उच्चरहीं

भेरी, नफीरी (तुरही) और शहनाई बज रही हैं, उनमें योद्धाओं को सुख देने वाला मारू राग बज रहा है। सब वीर सिंहनाद करते हैं और अपने-अपने बल और बहादुरी का बखान कर रहे हैं।

कहइ दसानन सुनहु सुभट्टा ❀ मर्दहु भालु कपिन्ह के ठट्टा
हौं मारिहउँ भूप दोउ भाई ❀ अस कहि सनमुख फौज रेंगाई[5]
यह सुधि सकल कपिन्ह जब पाई ❀ धाये करि रघुबीर दोहाई

रावण ने कहा—हे वीरो! सुनो, बानरों और भालुओं के झुण्डों को रगड़

---

१. बिरद वाले, प्रशंसित। २. सेना। ३. हाथी। ४. धूल। ५. चलाया।

डालो। मैं दोनों राजकुमार भाइयों को मारूँगा। ऐसा कहकर उसने अपनी सेना सामने चलाई। जब सब बानरों ने यह समाचार पाया, तब वे रामजी की दुहाई बोलते हुये दौड़े।

छंद–धाये बिसाल कराल मरकट[1] भालु काल समान ते।
मानहुँ सपच्छ उड़ाहिं भूधर बृन्द नाना बान ते॥
नख दसन सैल महाद्रुमायुध सबल संक न मानहीं।
जय राम रावन मत्त गज मृगराज सुजसु बखानहीं॥

विशाल और काल के समान भयानक बानर और भालू दौड़े। मानो पङ्ख वाले पर्वतों के समूह उड़ रहे हैं, जो अनेक वर्णों के हैं। नाखून, दाँत, पहाड़ और बड़े-बड़े वृक्ष ही उनके हथियार हैं। वे बड़े बलवान हैं और किसी का डर नहीं मानते। रावणरूपी मतवाले हाथी के लिये सिंह के समान 'रामजी का जय-जयकार' करके वे उनके सुन्दर यश का वर्णन करते हैं।

दो०–दुहुँ दिसि जय जयकार करि निज निज जोरी जानि।
भिरे बीर इत रामहिं उत रावनहिं बखानि॥

दोनों ओर के योद्धा जय-जयकार करके अपनी-अपनी जोड़ी चुनकर इधर राम और उधर रावण का बखान करके परस्पर भिड़ गये।

रावन रथी बिरथ रघुबीरा ❀ देखि बिभीषन भयेउ अधीरा
अधिक प्रीति मन भा संदेहा ❀ बंदि चरन कह सहित सनेहा

रावण रथ पर और राम को रथहीन देखकर विभीषण अधीर हो गया। अधिक प्रीति होने से उसके मन में सन्देह हो गया। वह रामजी के चरणों की वन्दना करके स्नेह-सहित कहने लगा।

नाथ न रथ नहिं तन पदु त्राना[2] ❀ केहि बिधि जितब बीर बलवाना
सुनहु सखा कह कृपानिधाना ❀ जेहि जय होइ सो स्यंदन[3] आना[4]

हे नाथ! आपका न रथ है, न शरीर की रक्षा करने वाला कवच और न जूते ही हैं। उस बलवान वीर रावण को कैसे जीतियेगा? कृपा-निधान रामजी ने कहा—हे सखा! सुनो, जिससे जय होती है, वह रथ और ही है।

---

१. बानर। २. जूता। ३. रथ। ४. अन्य, दूसरा।

सौरज धीरज तेहि रथ चाका ❀ सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका
बल बिबेक दम परहित घोरे ❀ छमा कृपा समता रजु[1] जोरे

शौर्य और धैर्य उस रथ के पहिये हैं। सत्य और शील (सदाचार) उसकी मज़बूत ध्वजा और पताका हैं। बल, विवेक, दम और परोपकार ये चार उसके घोड़े हैं, जो क्षमा, दया और समतारूपी डोरी से रथ में जोड़े हुये हैं।

ईस भजनु सारथी सुजाना ❀ बिरति चर्म[2] संतोष कृपाना
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा ❀ बर बिग्यान कठिन कोदण्डा

ईश्वर का भजन उस रथ का चतुर सारथी है। वैराग्य ढाल और संतोष तलवार है। दान फरसा है, बुद्धि प्रचण्ड शक्ति है, श्रेष्ठ विज्ञान कठिन धनुष है।

अमल अचल मन त्रोन[3] समाना ❀ सम जम नियम सिलीमुख[4] नाना
कवच अभेद बिप्र गुर पूजा ❀ यहि सम बिजय उपाय न दूजा
सखा धर्ममय अस रथ जाके ❀ जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताके

निर्मल और निश्चल मन तरकस के समान है। शम, यम और नियम, ये बहुत-से बाण हैं। ब्राह्मणों और गुरु का सत्कार अभेद कवच है। इसके समान विजय पाने का दूसरा उपाय नहीं है। हे सखा! ऐसा धर्ममय रथ जिसके पास है, उसके जीतने को कहीं शत्रु ही नहीं है।



महा अजय संसार रिपु जीति सकइ सो बीर।
जाके अस रथ होइ दृढ़ सुनहु सखा मतिधीर ॥(क)

हे धीर मति वाले सखा! सुनो, जिसके पास ऐसा दृढ़ रथ हो, वह वीर संसाररूपी दुर्जय शत्रु को भी जीत सकता है। [ललित और कैतवापन्हुति अलंकार]

सुनि प्रभु बचन बिभीषन हरषि गहे पद कंज।
एहि मिस मोहि उपदेसहु राम कृपा सुख पुञ्ज ॥(ख)

प्रभु के वचन सुनकर विभीषण ने हर्षित होकर रामजी के चरण-कमल पकड़ लिये और कहा—हे कृपा और सुख के समूह रामजी! आपने इसी बहाने मुझे उपदेश दिया।

---

१. डोरी। २. ढाल। ३. तरकश। ४. बाण।

उत पचार दसकंधर इत अंगद हनुमान।
लरत निसाचर भालु कपि करि निज निज प्रभु आन॥

उधर से वीर रावण ललकार रहा है, इधर से अंगद और हनुमान। राक्षस और भालू बानर अपने-अपने स्वामी की दुहाई देकर लड़ रहे हैं।

सुर ब्रह्मादि सिद्ध मुनि नाना ❀ देखत रन नभ चढ़े बिमाना
हमहू उमा रहे तेहिं संगा ❀ देखत राम चरित रन रंगा

ब्रह्मा आदि देवता तथा अनेकों सिद्ध और मुनि विमान पर चढ़कर युद्ध देख रहे हैं। हे उमा! मैं भी उनके साथ था और रामजी के रण-रंग की लीला देख रहा था।

सुभट समर रस दुहुँ दिसि माते ❀ कपि जयसील राम बल ताते
एक एक सन भिरहिं पचारहिं ❀ एकन्ह एक मर्दि महि पारहिं

दोनों ओर के योद्धा युद्ध के रस में मतवाले हो रहे हैं, बानर विजयशील हैं; क्योंकि उन्हें रामजी का बल है। एक दूसरे से भिड़ते और ललकारते हैं और एक दूसरे को मींज-मींजकर पृथ्वी पर डाल देते हैं।

मारहिं काटहिं धरहिं पछारहिं ❀ सीस तोरि सीसन्ह सन मारहिं
उदर बिदारहिं भुजा उपाटहिं ❀ गहि पद अवनि पटकि भट डाटहिं

वे एक दूसरे को मारते, काटते, पकड़ते और पछाड़ देते हैं, सिर तोड़कर उन्हीं सिरों से दूसरों को मारते हैं। पेट फाड़ते हैं, भुजा उखाड़ लेते हैं और योद्धाओं को पैर पकड़कर पृथ्वी पर पटकते और एक दूसरे को डाटते हैं।

निसिचर भट महि गाड़हिं भालू ❀ ऊपर डारि देहिं बहु बालू
बीर बलीमुख जुद्ध बिरुद्धे ❀ देखिअत बिपुल काल जनु क्रुद्धे

राक्षस वीरों को भालू पृथ्वी में गाड़ देते हैं और ऊपर से उन पर बहुत-सी बालू डाल देते हैं। वीर बानर युद्ध में खूब जुटे हुये हैं, वे ऐसे दिखाई पड़ते हैं, जैसे बहुत-से क्रोधित काल हों।

छंद—क्रुद्धे कृतान्त[1] समान कपि तनु स्रवत सोनित राजहीं।
मर्दहिं निसाचर कटक भट बलवन्त घन जिमि गाजहीं॥

१. यम।

मारहिं चपेटन्हि डाटि दातन्ह काटि लातन्ह मींजहीं।
चिक्करहिं मरकट भालु छल बल करहिं जेहिं खल छीजहीं॥

बानर यमराज के समान क्रुद्ध हो रहे हैं। उनके शरीरों से रक्त बह रहा है, वे शोभायमान लगते हैं। राक्षसों की सेना के वीरों को वे बलवान बानर रगड़ते और बादल की तरह गरजते हैं। वे डाटकर चपेटों से मारते, दाँतों से काटकर लातों से उन्हें पीस देते हैं। बानर और भालू चिंघाड़ते और छल-बल करते हैं, जिससे दुष्ट राक्षस नष्ट हो जायँ।

धरि गाल फारहिं उर बिदारहिं गल अँतावरि मेलहीं।
प्रहलादपति[1] जनु बिबिध तनु धरि समर अंगन खेलहीं॥
धरु मारु काटु पछारु घोर गिरा गगन महि भरि रही।
जय राम जो तृन तें कुलिस कर कुलिस तें कर तृन सही॥

बानर राक्षसों के गाल पकड़कर फाड़ डालते हैं, छाती चीर डालते हैं और अँतड़ियाँ निकालकर गले में डाल देते हैं। वे ऐसे जान पड़ते हैं, मानो नृसिंह भगवान् अनेक शरीर धारण करके युद्ध के मैदान में क्रीड़ा कर रहे हों। धरो, मारो, काटो, पछाड़ो आदि भयानक शब्द आकाश और पृथ्वी में भर गये हैं। जो तृण से बज्र और बज्र से तिनका कर देते हैं, उन रामजी की जय हो।

दो०— निज दल बिचलित देखेसि बीस भुजा दस चाप।
रथ चढ़ि चलेउ दसानन फिरहु फिरहु करि दाप॥८१

अपने दल को बिचलते हुये देखकर बीस भुजाओं में दस धनुष धारण करके, रथ पर चढ़कर, रावण गर्व के साथ यह कहते हुये चला कि लौटो, लौटो।

धायेउ परम क्रुद्ध दसकंधर ❀ सनमुख चले हूह देइ बंदर
गहि कर पादप उपल पहारा ❀ डारेन्हि ता पर एकहिं बारा

रावण अत्यन्त क्रोधित होकर दौड़ा। उसके मुकाबले के लिये बानर हू-हू करके दौड़े। उन्होंने हाथों में वृक्ष, पत्थर और पहाड़ लेकर रावण पर एक साथ ही डाले।

१. नृसिंह।

लागहिं सैल बज्र तनु तासू ❀ खंड खंड होइ फूटहिं आसू[1]
चला न अचल रहा रथ रोपी[2] ❀ रन दुर्मद रावन अति कोपी

उसके बज्र ऐसे शरीर में जब पहाड़ लगते हैं, तब तुरन्त ही टुकड़े-टुकड़े होकर फूट जाते हैं। रण में कठिनता से हारने वाला अत्यन्त क्रोधी रावण रथ रोककर अचल खड़ा रहा, ज़रा भी नहीं हिला।

इत उत झपटि दपटि कपि जोधा ❀ मर्दै लाग भयेउ अति क्रोधा
चले पराइ भालु कपि नाना ❀ त्राहि त्राहि अंगद हनुमाना

वह इधर-उधर झपटकर और डपटकर बानर योद्धाओं का मर्दन करने लगा। वह बहुत ही क्रुद्ध हुआ। अनेकों भालू और बानर 'हे अंगद! हे हनुमान! बचाओ, बचाओ' कहते हुये भाग चले।

पाहि पाहि रघुबीर गोसाईं ❀ यह खल खाइ काल की नाईं
तेहिं देखे कपि सकल पराने ❀ दसहुँ चाप सायक संधाने

'हे स्वामी रामचन्द्र! रक्षा करो, रक्षा करो, यह दुष्ट काल की तरह हमें खा रहा है।' उसने देखा कि सब बानर भाग रहे हैं। तब उसने दसों धनुषों पर बाण चढ़ाये।

छंद-संधानि धनु सर निकर छाँड़ेसि उरग[3] जिमि उड़ि लागहीं
रहे पूरि सर धरनी गगन दिसि बिदिसि कहँ कपि भागहीं॥
भयो अति कोलाहल बिकल कपि दल भालु बोलहिं आतुरे।
रघुबीर करुना सिंधु आरत बन्धु जन रच्छक हरे॥

धनुष चढ़ाकर उसने बाणों के समूह छोड़े, जो उड़कर सर्प की तरह जा लगते थे। पृथ्वी, आकाश, दिशा-विदिशा सर्वत्र बाण भर रहे हैं। बानर कहाँ भागें? बड़ा हल्ला हुआ। बानर और भालुओं की सेना घबरा उठी। वे आर्त होकर पुकारने लगे—हे रघुवीर! हे दया के समुद्र! हे दुखियों के सहायक! हे भक्तों के रक्षक हरि!



निज दल बिकल देखि कटि कसि निषंग धनु हाथ।
लछिमन चले क्रुद्ध होइ नाइ राम पद माथ॥८२॥

१. तत्काल। २. रोककर। ३. साँप।

तब अपनी सेना को व्याकुल देखकर, कमर में तरकस कसकर और हाथ में धनुष लेकर, रामजी के चरणों में सिर नवाकर लक्ष्मण क्रोधित होकर चले।

रे खल का मारसि कपि भालू ❀ मोहि बिलोकु तोर मैं कालू
खोजत रहेउँ तोहि सुतघाती ❀ आजु निपाति जुड़ावउँ छाती

अरे दुष्ट! बानर और भालुओं को क्या मारता है? मुझे देख, मैं तेरा काल हूँ। रावण ने कहा—अरे! मेरे पुत्र के घातकी! मैं तुझे ही खोजता था। आज तुझे मारकर मैं अपनी छाती ठंडी करूँगा।

अस कहि छाड़ेसि बान प्रचंडा ❀ लछिमन किये सकल सत खंडा
कोटिन्ह आयुध रावन डारे ❀ तिल प्रवान[1] करि काटि निवारे

ऐसा कहकर उसने प्रचंड बाण छोड़े। लक्ष्मण ने सबके सैंकड़ों टुकड़े कर डाले। रावण ने करोड़ों अस्त्र-शस्त्र चलाये। लक्ष्मण ने उन्हें तृण के बराबर काटकर हटा दिया।

पुनि निज बानन्ह कीन्ह प्रहारा ❀ स्यंदनु भंजि सारथी मारा
सत सत सर मारे दस भाला ❀ गिरि सृङ्गन्ह[2] जनु प्रबिसहिं ब्याला

फिर लक्ष्मण ने अपने बाणों से प्रहार किया और उसके रथ को तोड़-कर सारथी को मार डाला। रावण के दसों सिरों में सौ-सौ बाण मारे, मानो पहाड़ के शिखरों में सर्प प्रवेश कर रहे हों।

सत सर पुनि मारा उर माहीं ❀ परेउ अवनि तल सुधि कछु नाहीं
उठा प्रबल पुनि मुरुछा जागी ❀ छाँड़ेसि ब्रह्म दीन जो साँगी[3]

फिर सौ बाण उसकी छाती में मारे। वह पृथ्वी पर गिर पड़ा, उसे कुछ होश न रहा। फिर मूर्च्छा से जगकर वह प्रबल रावण उठा और उसने वह शक्ति चलाई, जो ब्रह्मा ने उसे दी थी।

छंद—सो ब्रह्म दत्त प्रचंड सक्ति अनंत उर लागी सही।
पर्‌यो बीर बिकल उठाव दसमुख अतुल बल महिमा रही॥
ब्रह्मांड भवन बिराज जाके एक सिर जिमि रज कनी।
तेहि चह उठावन मूढ़ रावन जान नहिं त्रिभुवन धनी॥

---

१. बराबर। २. शिखरों में। ३. शक्ति (हथियार)।

ब्रह्मा की दी हुई वह प्रचंड शक्ति लक्ष्मण की ठीक छाती में लगी। वीर लक्ष्मण विकल होकर गिर पड़े। रावण उठाने लगा। पर उसके अतुलित बल की महिमा यों ही रह गई। जिसके एक ही सिर पर ब्रह्मांडरूपी भवन धूल के एक कण के समान विराजता है, उसे मूर्ख रावण उठाना चाहता है, वह तीनों भुवनों के स्वामी को नहीं जानता।

दो॰ देखि पवनसुत धायेउ बोलत बचन कठोर।
आवत कपिहिं हनेउ तेहि मुष्टि प्रहार प्रघोर॥८३॥

यह देखकर हनुमान कठोर वचन बोलते हुये दौड़े। आते ही रावण ने हनुमान की छाती में बड़े ज़ोर से घूँसा मारा।

जानु[1] टेकि कपि भूमि न गिरा ❀ उठा सँभारि बहुत रिस भरा
मुठिका[2] एक ताहि कपि मारा ❀ परेउ सैल जनु बज्र प्रहारा

हनुमान ने घुटने टेक दिये, पर ज़मीन पर वे न गिरे। फिर बहुत क्रोध से भरे हुये वे सँभलकर उठे। हनुमान ने रावण को एक घूँसा मारा, वह ऐसा गिर पड़ा, जैसे बज्र की मार से पर्वत गिरा हो।

मुरुछा गई बहोरि सो जागा ❀ कपि बल बिपुल सराहन लागा
धिग धिग मम पौरुष धिग मोही ❀ जौं तैं जियत रहेसि सुरद्रोही

मूर्च्छा भंग होने पर फिर वह जागा और हनुमान के बड़े भारी बल की सराहना करने लगा। हनुमान ने कहा—मेरे पौरुष को धिक्कार है, धिक्कार है, और मुझे भी धिक्कार है, जो हे देव-शत्रु! तू अब भी जीता रह गया।

अस कहि लछिमन कहुँ कपि ल्यायो ❀ देखि दसानन बिसमय पायो
कह रघुबीर समुझु जियँ भ्राता ❀ तुम्ह कृतांत[3] भच्छक सुर त्राता

ऐसा कहकर हनुमान लक्ष्मण को रामजी के पास उठा लाये। यह देखकर रावण को आश्चर्य हुआ। रामजी ने लक्ष्मण से कहा—हे भाई! हृदय में समझो। तुम मृत्यु के भी भक्षक और देव-रक्षक हो।

सुनत बचन उठि बैठ कृपाला ❀ गई गगन सो सक्ति कराला
पुनि कोदंड बान गहि धाये ❀ रिपु सनमुख अति आतुर आये

यह सुनते ही कृपालु लक्ष्मण उठ बैठे। वह कराल शक्ति आकाश को

१. घुटना। २. घूँसा। ३. मृत्यु।

चली गई। लक्ष्मण फिर धनुष और बाण लेकर दौड़े और बहुत ही शीघ्र शत्रु के सामने आ पहुँचे।

छंद—आतुर बहोरि बिभंजि स्यंदन सूत हति ब्याकुल कियो।
गिर्यो धरनि दसकंधर बिकलतर बान सत बेध्यो हियो॥
सारथी दूसर घालि रथ तेहि तुरत लंका लै गयो।
रघुबीर बंधु प्रताप पुञ्ज बहोरि प्रभु चरनन्हि नयो॥

उन्होंने बड़ी ही फुर्ती से रावण के रथ को चूर-चूर कर और सारथी को मारकर उसे (रावण को) व्याकुल कर दिया। फिर लक्ष्मण ने उसकी छाती में सौ बाण मारे जिससे रावण बहुत ही विकल होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। तब दूसरा सारथी उसे रथ में डालकर तुरन्त ही लंका को ले गया। प्रताप के समूह रामजी के भाई लक्ष्मण ने फिर आकर प्रभु के चरणों में सिर नवाया।

दो०—उहाँ दसानन जागि करि करै लाग कछु जग्य।
राम बिरोध बिजय चह सठ हठ बस अति अग्य॥८४

वहाँ रावण मूर्च्छा से जागकर कुछ यज्ञ करने लगा। वह अत्यन्त अज्ञानी, मूर्ख दुष्ट रावण हठ-वश रामजी के विमुख होकर जय चाहता है।

इहाँ बिभीषन सब सुधि पाई ❀ सपदि जाइ रघुपतिहि सुनाई
नाथ करइ रावन एक जागा ❀ सिद्ध भयें नहिं मरिहि अभागा

यहाँ विभीषण ने जब समाचार पाया, तुरन्त उसने राम के पास जाकर कहा—हे नाथ! रावण एक यज्ञ कर रहा है। यज्ञ सिद्ध होने पर वह अभागा सहज ही नहीं मरेगा।

पठवहु नाथ बेगि भट बंदर ❀ करहिं बिधंस आव दसकंधर
प्रात होत प्रभु सुभट पठाये ❀ हनुमदादि अंगद सब धाये

हे नाथ! शीघ्र ही बानर योद्धाओं को भेजिये, वे यज्ञ का विध्वंस करें, जिससे रावण युद्ध में आवे। प्रातःकाल होते ही रामजी ने वीर योद्धाओं को भेजा। हनुमान और अंगद आदि सब वीर दौड़े।

कौतुक कूदि चढ़े कपि लंका ❀ पैठे रावन भवन असंका
जग्य करत जबहीं सो देखा ❀ सकल कपिन्ह भा क्रोध बिशेषा

बानर खिलवाड़ की तरह कूदकर लंका पर जा चढ़े और रावण के महल में निडर होकर घुस गये। रावण को यज्ञ करते देखकर सब बानरों को बड़ा क्रोध हुआ।

रन तें निलज भाजि गृह आवा ❁ इहाँ आइ बक ध्यान लगावा
अस कहि अंगद मारेउ लाता ❁ चितव न सठ स्वारथ मन राता[1]

बानर बोले—अरे ओ बेशरम! युद्ध-भूमि से घर भागकर आया और यहाँ तू बक-ध्यान लगाकर बैठा है? ऐसा कहकर अङ्गद ने लात मारी। पर उस दुष्ट ने उनकी ओर देखा ही नहीं। उसका मन स्वार्थ में अनुरक्त था।

छंद—नहिं चितव जब करि कोप कपि गहि दसन लातन्ह मारहीं
धरि केस नारि निकारि बाहेर तेऽति दीन पुकारहीं॥
तब उठेउ क्रुद्ध कृतांत सम गहि चरन बानर डारई।
एहि बीच कपिन्ह बिधंस कृत मख[2] देखि मन महुँ हारई॥

जब उसने नहीं देखा तब बानर क्रोध करके उसे दाँतों से काटने और लातों मे मारने लगे। बाल पकड़कर रावण की स्त्रियों को वे घर से बाहर घसीट लाये। वे बड़ी ही दीन होकर पुकारने लगीं। तब वह काल के समान क्रुद्ध होकर उठा और बानरों के पैर पकड़कर पटकने लगा। इसी बीच में बानरों ने यज्ञ विध्वंस कर डाला। यह देखकर वह मन में हारने लगा (निराश हो गया)।

दो०—जग्य बिधंसि कुसल कपि आये रघुपति पास।
चलेउ लंकपति क्रुद्ध होइ त्यागि जिवन कै आस॥

यज्ञ को विध्वंस करके सब बानर रामजी के पास आ गये। तब रावण जीने की आशा छोड़कर क्रोधित होकर चला।

चलत होहिं अति असुभ भयंकर ❁ बैठहिं गीध उड़ाइ सिरन्ह पर
भयउ कालबस काहु न माना ❁ कहेसि बजावहु जुद्ध निसाना

रावण के चलते समय बहुत भयंकर अशकुन होने लगे। गिद्ध उड़-उड़कर उसके सिरों पर बैठने लगे। किन्तु वह काल के वश हो रहा था, इससे किसी अशकुन की परवा नहीं करता था। उसने कहा—युद्ध का डंका बजाओ।

---

१. अनुरक्त, लगा हुआ। २. यज्ञ।

चली तमीचर अनी अपारा ❀ बहु गज रथ पदाति असवारा
प्रभु सनमुख धाये खल कैसें ❀ सलभ[1] समूह अनल कहँ जैसें

राक्षसों की अपार सेना चल पड़ी। उसमें बहुत-से हाथी, रथ, पैदल और घुड़सवार थे। प्रभु के सामने वे दुष्ट ऐसे दौड़े, जैसे आग की ओर पतिंगों का समूह।

इहाँ देवतन्ह अस्तुति कीन्ही ❀ दारुन बिपति हमहि एहिं दीन्ही
अब जनि राम खेलावहु एही ❀ अतिसय दुखित होति बैदेही

इधर देवताओं ने स्तुति की कि हे रामजी! इसने हमें बड़े कष्ट दिये। अब आप इसे अधिक न खेलाइये। सीता बहुत ही दुखित हो रही हैं।

देव बचन सुनि प्रभु मुसुकाना ❀ उठि रघुबीर सुधारे बाना
जटाजूट दृढ़ बाँधे माथे ❀ सोहहिं सुमन बीच बिच गाथे[2]

देवताओं के वचन सुनकर प्रभु मुसकुराये और उठकर उन्होंने बाण सँभाले। मस्तक पर कसकर जटाजूट बाँधे। बीच-बीच में फूल गुँथे हैं, जो बहुत ही सुन्दर लग रहे हैं।

अरुन नयन बारिद तनु स्यामा ❀ अखिल लोक लोचन अभिरामा
कटितट परिकर कसेउ निषंगा ❀ कर कोदंड कठिन सारंगा

लाल नेत्र और मेघ के समान श्याम शरीर वाले, समस्त लोकों के नेत्रों को आनन्द देने वाले प्रभु ने कमर में फेंटा और तरकस कस लिया तथा हाथ में कठोर शार्ङ्ग धनुष ले लिया।

छंद—सारंग कर सुन्दर निषंग सिलीमुखाकर कटि कस्यौ।
भुजदंड पीन मनोहरायत उर धरासुर पद लस्यौ॥
कह दास तुलसी जबहिं प्रभु सर चाप कर फेरन लगे।
ब्रह्माण्ड दिग्गज कमठ अहि महि सिंधु भूधर डगमगे॥

उन्होंने हाथ में शार्ङ्ग धनुष लिया और कमर में बाणों की खान सुन्दर तरकस कस लिया। उनके भुजदंड पुष्ट हैं और सुन्दर चौड़ी छाती पर ब्राह्मण (भृगु) के पद का चिह्न शोभित है। तुलसीदास कहते हैं, जब प्रभु धनुष-बाण

१. पतंगे। २. खोंसे हुये, गुँथे हुये।

हाथ में लेकर फिराने लगे, तब ब्रह्माण्ड, दिशाओं के हाथी, कच्छप, शेषनाग, पृथ्वी, समुद्र और पर्वत सब डगमगा उठे।

दो० सोभा देखि हरषि सुर बरषहिं सुमन अपार।
जय जय जय करुणानिधि छबि बल गुन आगार॥

देवता राम की छवि देखकर हर्षित होकर फूलों की अपार वर्षा कर रहे हैं और कह रहे हैं—शोभा, शक्ति और गुणों के धाम करुणानिधान प्रभु की जय हो, जय हो, जय हो।

एही बीच निसाचर अनी ❀ कसमसाति आई अति घनी
देखि चले सनमुख कपि भट्टा ❀ प्रलय काल के जनु घन घट्टा

इसी बीच में राक्षसों की अत्यंत घनी सेना कसमसाती हुई आई। उसे देखकर बानर वीर इस प्रकार सामने दौड़े, जैसे प्रलयकाल के बादलों की घटा उमड़ रही हो।

बहु कृपान तरवारि चमंकहिं ❀ जनु दहँ दिसि दामिनि दमंकहिं
गज रथ तुरंग चिकार कठोरा ❀ गर्जहिं मनहु बलाहक[1] घोरा

बहुत-सी कृपाण और तलवारें चमक रही हैं, जैसे दसों दिशाओं में बिजलियाँ चमक रही हों। हाथी, रथ और घोड़े बड़े ज़ोर से चिंघाड़ कर रहे हैं, मानो बादल घोर गर्जन कर रहे हों।

कपि लंगूर[2] बिपुल नभ छाये ❀ मनहुँ इंद्रधनु उए सुहाये
उठइ धूरि मानहुँ जल धारा ❀ बान बुंद भइ बृष्टि अपारा

बानरों की बहुत-सी पूँछें आकाश में छाई हुई हैं, मानो सुन्दर इन्द्र-धनुष उदय हुये हों। धूल ऐसी उठ रही है, जैसे जल की धारा हो। बाण-रूपी बूँदों की अपार वृष्टि होने लगी।

दुहुँ दिसि पर्वत करहिं प्रहारा ❀ बज्रपात जनु बारहिं बारा
रघुपति कोपि बान झरि लाई ❀ घायल भइ निसिचर समुदाई

दोनों ओर से पहाड़ों की मार होती है। मानो बारम्बार बज्रपात हो रहा हो। रामजी ने क्रोध करके बाणों की झड़ी लगा दी, जिससे राक्षसों का समूह घायल हो गया।

---

१. बादल। २. पूँछ।

लागत बान बीर चिक्करहीं ❀ घुर्मि घुर्मि जहँ तहँ महि परहीं
स्रवहिं सैल जनु निर्झर बारी ❀ सोनित सरि कादर भयकारी

बाण लगने से वीर चिंघाड़ कर उठते हैं और चक्कर खा-खाकर जहाँ-तहाँ पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। उनके शरीर से खून ऐसा बह रहा है, जैसे पर्वतों के भारी झरनों से जल बह रहा हो। डरपोकों को डराने वाली रुधिर की नदी बह चली।

छंद—कादर भयंकर रुधिर सरिता चली परम अपावनी।
दोउ कूल[1] दल रथ रेत चक्र अबर्त्त[2] बहति भयावनी॥
जल जंतु गज पदचर तुरग खर विविध बाहन को गने।
सर सक्ति तोमर सर्प चाप तरंग चर्म कमठ घने॥

कायरों को भयभीत करने वाली रुधिर की नदी, जो बहुत ही अपवित्र है, बह चली। दोनों दल उसके दोनों किनारे हैं। रथ रेत और पहिये भँवर हैं। वह नदी भयानक रूप में बह रही है। हाथी, पैदल, घोड़े, गधे और अनेक सवारियाँ, जिनकी गिनती कौन करे, ये ही उस नदी के जल-जन्तु हैं। बाण, शक्ति और तोमर ये सर्प हैं, धनुष तरंगें और ढाल अनेकों कछुवे हैं।

दो०—बीर परहिं जनु तीर तरु मज्जा बहु बह फेन।
कादर देख डरहिं तहँ सुभटन के मन चैन॥८७॥

वीर इस प्रकार गिर रहे हैं, जैसे नदी के तट पर वृक्ष। बहुत-सी मज्जा बह रही है, वही फेन है। कायर उसे देखकर डर जाते हैं, पर योद्धाओं के मन में उसे देखकर सुख होता है।

मज्जहिं भूत पिसाच बेताला ❀ प्रमथ महा झोटिंग कराला
काक कंक लै भुजा उड़ाहीं ❀ एक ते छीनि एक लै खाहीं

भूत, पिशाच और बैताल, बड़े-बड़े झोंटों वाले महा भयानक झोटिंग और प्रमथ आदि (शिव-गण) उस नदी में नहा रहे हैं। कौवे और चील भुजाएँ लेकर उड़ते हैं, और एक-दूसरे से छीनकर खा जाते हैं।

---

१. तट। २. भँवर।

एक कहहिं ऐसिउ सौंघाई[1] ❁ सठहु तुम्हार दरिद्र न जाई
कहँरत भट घायल तट गिरे ❁ जहँ तहँ मनहुँ अर्धजल[2] परे

एक कहता है—अरे मूर्खो! ऐसे सस्तेपन में भी, तुम्हारी दरिद्रता नहीं जाती? घायल योद्धा किनारे पर गिरे हुये कराह रहे हैं। जहाँ-तहाँ मानो वे अर्द्धजल पड़े हों।

खैंचहिं गीध आँत तट भए ❁ जनु बनसी खेलहिं चित दए
बहु भट बहहिं चढ़े खग जाहीं ❁ जनु नावरि खेलहिं सरि माहीं

गिद्ध उनकी आँतें खींच रहे हैं, वह ऐसा लगता है, मानो मछलीमार किनारे पर से बंसी से मछली फँसाने में मन लगाये हुये हों। बहुत-से योद्धा बहे जा रहे हैं, उन पर पक्षी चढ़े चले जा रहे हैं। मानो वे नदी में नावरि (नाव का खेल) खेल रहे हैं।

जोगिनि भरि भरि खप्पर संचहिं ❁ भूत पिसाच बधू नभ नंचहिं
भट कपाल करताल बजावहिं ❁ चामुंडा नाना विधि गावहिं

योगिनियाँ खप्परों में भर-भरकर रुधिर जमा कर रही हैं। आकाश में भूतों और पिशाचों की स्त्रियाँ नाच रही हैं। चामुंडायें योद्धाओं की खोपड़ियों का करताल बजा रही हैं और अनेक प्रकार से गा रही हैं।

जंबुक निकर कटक्कट कट्टहिं ❁ खाहिं हुआहिं अघाहिं दपट्टहिं
कोटिन्ह रुंड मुण्ड बिनु डोल्लहिं ❁ सीस परे महि जय जय बोल्लहिं

सियारों के समूह कट-कट शब्द करते हुये मुरदों को काटते, खाते, हुआँ-हुआँ करते और पेट भर जाने पर एक-दूसरे को डाँटते हैं। करोड़ों रुण्ड बिना मुण्ड के फिर रहे हैं। सिर पृथ्वी पर पड़े-पड़े जय-जय बोल रहे हैं।

छंद-बोल्लहिं जो जय जय मुण्ड रुण्ड प्रचण्ड सिर बिनु धावहीं
खप्परिन्ह खग्ग अलुज्झि[3] जुज्झहिं सुभट भटन्ह ढहावहीं
निसिचर बरूथ बिमर्दि गरजहिं भालु कपि दर्पित भए
संग्राम अंगन सुभट सोवहिं राम सर निकरन्हि हए

मुंड जय-जय बोलते हैं, प्रचंड रुंड बिना सिर के दौड़ रहे हैं, पक्षी

१. सस्तापन। २. वे व्यक्ति जो मरने से पहले आधे जल में रक्खे जाते हैं। ३. उलझकर।

खोपड़ियों में उलझे हुये परस्पर लड़े मरते हैं। अच्छे योद्धा दूसरे योद्धाओं को काट-काटकर गिरा रहे हैं। राक्षसों के समूह को मर्दन करके घमंड से भालू और बानर गरज रहे हैं। रामजी के बाणों के समूह से मरे हुये योद्धा लड़ाई के मैदान में सो रहे हैं।

दो० रावन हृदयँ बिचारा भा निसिचर संहार।
मैं अकेल कपि भालु बहु माया करौं अपार ॥८८॥

रावण ने हृदय में सोचा कि अब तो राक्षसों का नाश हो गया है। मैं अकेला हूँ और बानर-भालू बहुत हैं। आओ, ऐसी माया रचूँ, जिससे ये पार न पा सकें।

देवन्ह प्रभुहिं पयादे देखा ❁ उपजा उर अति छोभ बिसेखा
सुरपति निज रथ तुरत पठावा ❁ हरष सहित मातलि लै आवा

देवताओं ने प्रभु को पैदल देखा, तो उनके हृदय में बड़ा भारी क्षोभ पैदा हुआ। इन्द्र ने तुरन्त ही अपना रथ भेज दिया। मातलि (इन्द्र का सारथी) उसे हर्ष के साथ ले आया।

तेज पुञ्ज रथ दिब्य अनूपा ❁ बिहँसि चढ़े कोसलपुर भूपा
चञ्चल तुरग मनोहर चारी ❁ अजर अमर मन सम गतिकारी

उस दिव्य, अनुपम और तेजपुंज रथ पर अयोध्या के राजा रामजी हर्षित होकर चढ़े। उसमें चार चञ्चल, मनोहर, अजर, अमर और मन की गति के समान चलने वाले घोड़े जुते हुये थे।

रथारूढ़ रघुनाथहिं देखी ❁ धाए कपि बलु पाइ बिसेषी
सही न जाइ कपिन्ह कै मारी ❁ तब रावन माया बिस्तारी

रामजी को रथ पर सवार देखकर बानर विशेष बल पाकर दौड़े। बानरों की मार जब सही नहीं गई, तब रावण ने माया फैलाई।

सो माया रघुबीरहिं बाँची ❁ लछिमन कपिन्ह सो मानी साँची
देखी कपिन्ह निसाचर अनी ❁ अनुज सहित बहु कोसल धनी

एक रामजी को ही वह माया नहीं लगी, बाकी सब बानरों और लक्ष्मण ने भी उसे सच मान लिया। बानरों ने राक्षसी सेना में बहुत-से लक्ष्मणों और रामों को देखा।

छंद—बहु राम लछिमन देखि मरकट भालु मन अति अपडरे
जनु चित्र लिखित समेत लछिमन जहँ सो तहँ चितवहिं खरे
निज सेन चकित बिलोकि हँसि सर चाप सजि कोसल धनी
माया हरी हरि निमिष महुँ हरषी सकल मरकट अनी

बहुत-से राम और लक्ष्मण देखकर बानर-भालू मिथ्या भय से बहुत ही भयभीत हो गये। लक्ष्मण-सहित वे मानो चित्र में लिखे-से जहाँ के तहाँ खड़े देखने लगे। तब अपनी सेना को चकित देखकर, धनुष-बाण चढ़ाकर, अयोध्या-पति हरि ने हँसकर, क्षणभर में माया दूर कर दी, जिससे बानरों की सारी सेना हर्षित हो गई।

दो०—बहुरि राम सब तन चितइ बोले बचन गँभीर।
द्वंद जुद्ध देखहु सकल स्रमित भए अति बीर ॥८९

फिर रामजी सबकी ओर देखकर गम्भीर वचन बोले—हे वीरो! तुम सब बहुत ही थक गये हो, इसलिये अब मेरा और रावण का द्वंद्व-युद्ध देखो।

अस कहि रथ रघुनाथ चलावा ❀ बिप्र चरन पङ्कज सिरु नावा
तब लंकेस क्रोध उर छावा ❀ गर्जत तर्जत सनमुख धावा

ऐसा कहकर रामजी ने रथ चलाया और ब्राह्मणों के चरण-कमलों में सिर नवाया। तब रावण के हृदय में क्रोध छा गया। वह गरजता और ललकारता हुआ सामने दौड़ा।

जीतेहु जे भट संजुग[1] माहीं ❀ सुनु तापस मैं तिन्ह सम नाहीं
रावन नाम जगत जस जाना ❀ लोकप जाकें बंदीखाना

उसने कहा—अरे तपस्वी! सुन, तूने युद्ध में जिन योद्धाओं को जीता है, मैं उनके समान नहीं हूँ। मेरा नाम रावण है, सारा जगत् मेरे यश को जानता है, लोकपाल तक जिसके कैदखाने में पड़े हैं।

खर दूषन बिराध तुम्ह मारा ❀ बधेहु ब्याध इव बालि बिचारा
निसिचर निकर सुभट संघारेहु ❀ कुंभकरन घननादहिं मारेहु

तूने खर, दूषण और विराध को मारा। व्याध की तरह छिपकर बेचारे

१. सग्राम।

बालि को मारा। निशाचर योद्धाओं के समूह का संहार किया। कुम्भकरण और मेघनाद को भी मारा।

बैरु आजु सब लेउँ निबाही ❀ जौं रन भूप भाजि नहिं जाही
आजु करउँ खलु काल हवाले ❀ परेहु कठिन रावन के पाले

अरे राजा! यदि आज तू रण से भाग न गया, तो आज मैं सारा बैर चुका लूँगा। आज मैं तुझे निश्चय ही काल के सुपुर्द कर दूँगा। तू भयानक रावण के पाले पड़ा है।

सुनि दुर्बचन कालबस जाना ❀ बिहँसि बचन कह कृपानिधाना
सत्य सत्य सब तव प्रभुताई ❀ जलपसि जनि देखाउ मनुसाई

रावण के दुर्वचन सुनकर कृपा के धाम रामजी ने उसे मृत्यु के वश समझा और हँसकर यह वचन कहा—तुम्हारी सारी प्रभुता बिल्कुल सच है। पर अब व्यर्थ बकवाद मत करो, अपना पुरुषार्थ दिखलाओ।

छंद-जनि जल्पना करि सुजसु नासहि नीति सुनहि करहि छमा
संसार महँ पूरुष त्रिबिध पाटल[1] रसाल[2] पनस[3] समा
एक सुमनप्रद एक सुमन फल एक फलइ केवल लागहीं
एक कहहिं कहहिं करहिं अपर एक करहिं कहत न बागहीं[4]

व्यर्थ बकवाद करके अपनी सुन्दर कीर्ति का नाश न करो। क्षमा करना, तुम्हें नीति की बात सुनाता हूँ, सुनो। संसार में तीन प्रकार के पुरुष होते हैं—पाटल (गुलाब), आम और कटहल के समान। एक (पाटल) फूल देने वाले, एक (आम) फूल और फल दोनों देते हैं, और एक कटहल में केवल फल ही लगते हैं। इसी प्रकार पुरुषों में एक कहते हैं (करते नहीं), एक कहते और करते भी हैं और तीसरे केवल करते हैं, वे वाणी से कहते नहीं। [गूढ़ोत्तर अलंकार]

दो०- राम बचन सुनि बिहँसा मोहि सिखावत ग्यान।
बयरु करत नहिं तब डरेहु अब लागे प्रिय प्रान॥९०

रामजी के वचन सुनकर वह खूब हँसा और बोला—मुझे ज्ञान सिखाता है? बैर करते तो नहीं डरे, अब प्राण प्यारे लग रहे हैं।

---

१. गुलाब। २. आम। ३. कटहल। ४. कहते हैं।

कहि दुर्बचन क्रुद्ध दसकंधर ❀ कुलिस समान लाग छाँड़ै सर
नानाकार सिलीमुख धाये ❀ दिसि अरु बिदिसि गगन महि छाये

दुर्वचन कहकर क्रोधित रावण बज्र के समान बाण छोड़ने लगा। अनेकों आकार के बाण दौड़े और दिशा, विदिशा, चारों ओर आकाश और पृथ्वी में छा गये।

पावक सर छाँड़ेउ रघुबीरा ❀ छन महँ जरे निसाचर तीरा
छाँड़ेसि तीब्र सक्ति खिसिआई ❀ बान संग प्रभु फेरि पठाई

रामजी ने अग्नि-बाण छोड़ा, जिससे रावण के सारे तीर क्षणभर में जल गये। तब रावण ने खिसियाकर तीक्ष्ण शक्ति छोड़ी; पर रामजी ने उसे बाण के साथ वापस भेज दिया।

कोटिन्ह चक्र त्रिसूल पबारै ❀ बिनु प्रयास प्रभु काटि निवारै
निफल होहिं रावन सर कैसें ❀ खल के सकल मनोरथ जैसें

वह करोड़ों चक्र और त्रिशूल फेंकता है, पर प्रभु रामचन्द्रजी उन्हें सहज ही में काट-काटकर हटा देते हैं। रावण के बाण इस प्रकार निष्फल होते हैं, जैसे दुष्ट मनुष्य के सब मनोरथ।

तब सत बान सारथी मारेसि ❀ परेउ भूमि जय राम पुकारेसि
राम कृपा करि सूत उठावा ❀ तब प्रभु परम क्रोध कहुँ पावा

तब उसने रामजी के सारथी को सौ बाण मारे। वह पृथ्वी पर गिर पड़ा और उसने रामजी की जय पुकारी। रामजी ने कृपा करके सारथी को उठाया। तब प्रभु अत्यन्त क्रोध को प्राप्त हुये।

छन्द—भये क्रुद्ध जुद्ध बिरुद्ध रघुपति त्रोन सायक कसमसे।
कोदंड धुनि अति चंड सुनि मनुजाद सब मारुत ग्रसे॥
मंदोदरी उर कंप कंपति[1] कमठ भू भूधर त्रसे।
चिक्करहिं दिग्गज दसन[2] गहि महि देखि कौतुक सुर हँसे॥

युद्ध में अवरुद्ध (उलझे हुये) रामजी क्रोधित हो गये। उनके तरकस में बाण कसमसाने लगे। उनके धनुष का अत्यन्त घोर टङ्कार सुनकर सब राक्षस

---

१. समुद्र। २. दाँत।

वात-ग्रस्त हो गये। मन्दोदरी का हृदय काँप उठा। समुद्र, कच्छप, पृथ्वी और पर्वत भयभीत हो गये। दिशाओं के हाथी पृथ्वी को दाँतों से पकड़कर चिंघाड़ करने लगे। यह तमाशा देखकर देवता हँसने लगे।

दो०-तानेउ चाप स्रवन लगि छाँड़े बिसिख कराल।
राम मारगन[1] गन चले लहलहात जनु ब्याल॥८१॥

कान तक धनुष तानकर रामजी ने भयानक बाण छोड़े। रामजी के छोड़े बाणों के समूह साँपों की तरह लहलहाते हुये चले।

चले बान सपच्छ जनु उरगा[2] ❀ प्रथमहिं हतेउ सारथी तुरगा
रथ बिभंजि हति केतु पताका ❀ गर्जा अति अंतर बलु थाका

बाण पंख-युक्त सर्पों की तरह चले। पहले ही उन्होंने रावण के सारथी और घोड़े को मार डाला और रथ को चूर-चूर करके झंडी और झण्डा तोड़ कर गिरा दिया। तब रावण बड़े जोर से गरजा; पर भीतर से उसका बल थक गया था।

तुरत आन रथ चढ़ि खिसियाना ❀ अस्त्र सस्त्र छाँड़ेसि बिधि नाना
बिफल होहिं सब उद्यम ताके ❀ जिमि पर द्रोह निरत मनसा के

तुरन्त दूसरे रथ पर चढ़कर, खिसियाकर, वह अनेकों प्रकार के अस्त्र-शस्त्र छोड़ने लगा। उसके सब उद्योग इस प्रकार नष्ट हो रहे हैं, जैसे पर-द्रोह में लगे हुये चित्त वाले मनुष्य के होते हैं।

तब रावन दस सूल चलावा ❀ बाजि चारि महि मार गिरावा
तुरग उठाइ कोपि रघुनायक ❀ खैंचि सरासन छाँड़े सायक

तब रावण ने दस त्रिशूल चलाये और रामजी के चारों घोड़ों को मारकर पृथ्वी पर गिरा दिये। तब रामजी घोड़ों को उठाकर क्रोध करके धनुष खींचकर बाण छोड़ने लगे।

रावन सिर सरोज बन चारी ❀ चलि रघुबीर सिलीमुख[3] धारी[4]
दस दस बान भाल दस मारे ❀ निसरि गये चले रुधिर पनारे

रावण के सिररूपी कमल वन में विचरण करने वाले रामजी के बाणरूपी भ्रमरों की पंक्ति चली। रामजी ने रावण के दसों सिरों में दस-दस बाण मारे, वे

१. बाण। २. साँप। ३. भौंरा। ४. पंक्ति।

सिरों को छेद करके पार हो गये और उनसे रक्त के पनाले बह चले।

स्रवत रुधिर धायेउ बलवाना ❁ प्रभु पुनि कृत धनु सर संधाना
तीस तीर रघुबीर पबारे[1] ❁ भुजन्ह समेत सीस महि पारे[2]

रुधिर बहते हुये ही बलवान रावण दौड़ा। प्रभु ने फिर धनुष पर बाण संधान किया। रामजी ने तीस बाण मारे, और उसकी बीस भुजायें और दसों सिर काटकर पृथ्वी पर गिरा दिये।

काटत ही पुनि भये नबीने ❁ राम बहोरि भुजा सिर छीने
प्रभु बहु बार बाहु सिर हये ❁ कटत झटिति पुनि नूतन भये

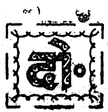
काटते ही वे फिर नवीन हो गये। रामजी ने फिर भुजाओं और सिरों को काट गिराया। प्रभु ने बहुत बार भुजायें और सिर काटे, परन्तु कटते ही वे झटपट फिर नये हो गये।

पुनि पुनि प्रभु काटत भुज सीसा ❁ अति कौतुकी कोसलाधीसा
रहे छाइ नभ सिर अरु बाहू ❁ मानहुँ अमित केतु अरु राहू

प्रभु फिर-फिर भुजायें और सिर काटते हैं। कोशलनाथ बड़े खिलवाड़ी हैं। रावण के सिर और बाहु आकाश में ऐसे छा रहे हैं, जैसे बहुत-से केतु और राहु हों।

छंद—जनु राहु केतु अनेक नभ पथ स्रवत सोनित धावहीं।
रघुबीर तीर प्रचंड लागहिं भूमि गिरन न पावहीं॥
एक एक सर सिर निकर छेदे नभ उड़त इमि सोहहीं।
जनु कोपि दिनकर कर निकर जहँ तहँ बिधुंतुद[3] पोहहीं॥

मानो अनेकों राहु और केतु रक्त बहाते हुये आकाश-मार्ग से दौड़ रहे हैं। रामजी के प्रचंड बाणों के लगने से वे भूमि पर गिरने नहीं पाते। एक-एक बाण कई-कई सिरों को छेदे हुये आकाश में उड़ते हुये ऐसे लगते हैं, मानो सूर्य की किरणें क्रुद्ध होकर जहाँ-तहाँ राहुओं को गूँथ रही हैं।



जिमि जिमि प्रभु हर तासु सिर तिमि तिमि होहिं अपार
सेवत बिषय बिबर्ध[4] जिमि नित नित नूतन मार॥

---

१. फेंका। २. गिरा दिया। ३. राहु।

प्रभु जैसे-जैसे उसके सिरों को काटते हैं, वैसे-वैसे वे असंख्य होते जाते हैं, जैसे विषयों के सेवन से काम नित्य नवीन बढ़ता जाता है।

दसमुख देखि सिरन्ह कै बाढ़ी ❀ बिसरा मरन भई रिस गाढ़ी
गर्जेउ मूढ़ महा अभिमानी ❀ धायेउ दसहु सरासन तानी

सिरों की बढ़ती देखकर रावण को अपना मरण भूल गया और गहरा क्रोध आया। वह महा घमंडी और मूर्ख रावण गरजा और दसों धनुषों को तानकर दौड़ा।

समर भूमि दसकंधर कोपेउ ❀ बरषि बान रघुपति रथ तोपेउ
दंड एक रथ देखि न परेऊ ❀ जनु निहार[1] महँ दिनमनि दुरेऊ

रणभूमि में रावण ने क्रोध किया और बाणों की वर्षा करके रामजी के रथ को ढक दिया। एक दंड (घड़ी) तक रथ दिखलाई ही नहीं पड़ा, जैसे कुहरे में सूर्य छिप गया हो।

हाहाकार सुरन्ह जब कीन्हा ❀ तब प्रभु कोपि कारमुक[2] लीन्हा
सर निवारि रिपु के सिर काटे ❀ ते दिसि बिदिसि गगन महि पाटे

जब देवताओं ने हाहाकार मचाया, तब प्रभु ने क्रोध करके धनुष उठाया। रावण के बाणों को हटाकर उन्होंने शत्रु के सिर काट डाले और उनसे दिशा-विदिशा, आकाश और पृथ्वी सब को पाट दिया।

काटे सिर नभ मारग धावहिं ❀ जय जय धुनि करि भय उपजावहिं
कहँ लछिमन हनुमान कपीसा ❀ कहँ रघुबीर कोसलाधीसा

काटे हुये सिर आकाश-मार्ग से दौड़ते हैं और जय-जय का शब्द करके भय उत्पन्न करते हैं। लक्ष्मण, हनुमान और सुग्रीव कहाँ हैं ? कोशलपति राम कहाँ हैं ?

छंद—कहँ रामु कहि सिर निकर धाये देखि मर्कट भजि चले।
संधानि धनु रघुबंसमनि हँसि सरन्ह सिर बेधे भले॥
सिर मालिका गहि कालिका कर बृन्द बृन्दन्हि बहु मिलीं।
करि रुधिर सरि मज्जन मनहुँ संग्राम बट पूजन चलीं॥

---

१. कुहरा। २. धनुष।

राम कहाँ हैं ? ऐसा कहकर सिरों के समूह दौड़ चले। उन्हें देखकर बानर भाग खड़े हुये। धनुष चढ़ाकर, रघुकुल के शिरोमणि रामजी ने हँसकर उन सिरों को बाणों से अच्छी तरह बेध डाला। हाथों में सिरों की माला ले-लेकर, कालिकायें झुण्ड की झुण्ड मिलकर ऐसी चलीं, मानो वे रुधिर की नदी में नहाकर युद्धरूपी वट-वृक्ष की पूजा करने चली हैं।

दो० **पुनि दसकंठ क्रुद्ध होइ छाँड़ेसि सक्ति प्रचंड।**
चली बिभीषन सनमुख मनहुँ काल कर दंड ॥९३॥

फिर रावण ने बहुत क्रोध करके प्रचंड शक्ति छोड़ी। वह विभीषण के सामने ऐसी चली, जैसे काल का दंड हो।

आवत देखि सक्ति अति घोरा ❀ प्रनतारति भंजन पन मोरा
तुरत बिभीषन पाछे मेला ❀ सनमुख राम सहेउ सोइ सेला

तीक्ष्ण धारवाली शक्ति को आती हुई देखकर और यह विचारकर कि मेरा प्रण शरणागत के दुःख का नाश करना है, रामजी ने तुरन्त ही विभीषण को पीछे कर लिया और सामने आकर उन्होंने वह शक्ति अपने ऊपर ले ली।

लागि सक्ति मुरुछा कछु भई ❀ प्रभु कृत खेल सुरन्ह बिकलई
देखि बिभीषन प्रभु स्रम पायेउ ❀ गहि कर गदा क्रुद्ध होइ धायेउ

शक्ति लगने से उन्हें कुछ मूर्छा आ गई। रामजी ने तो यह लीला की थी, पर देवताओं को घबराहट हुई। विभीषण ने देखा कि प्रभु को क्लेश हुआ है, तब वह क्रोधित होकर गदा लेकर दौड़ा।

रे कुभाग्य सठ मंद कुबुद्धे ❀ तैं सुर नर मुनि नाग बिरुद्धे
सादर सिव कहुँ सीस चढ़ाये ❀ एक एक के कोटिन्ह पाये

अरे अभागे, मूर्ख, नीच, दुर्बुद्धि ! तूने देवता, नर, मुनि, नाग सभी से विरोध किया। तूने आदर-सहित शिव को अपने सिर चढ़ाये थे, और एक-एक के बदले में करोड़ों प्राप्त किये थे।

तेहि कारन खल अब लगि बाँचा ❀ अब तव कालु सीस पर नाँचा
राम बिमुख सठ चहसि संपदा ❀ अस कहि हनेसि माझ उर गदा

अरे दुष्ट ! इसी कारण से तू अभी तक बचा है। अब तेरा काल तेरे सिर पर नाच रहा है। अरे मूर्ख ! रामजी से विरुद्ध होकर संपत्ति (सुख) चाहता है ?

ऐसा कहकर उसने रावण की छाती के बीचों-बीच गदा मारी।

छंद—उर माँझ गदा प्रहार घोर कठोर लागत महि पर्‌यो।
दस बदन सोनित स्रवत पुनि संभारि धायेउ रिस भर्‌यो॥
दोउ भिरे अतिबल मल्ल जुद्ध बिरुद्ध एकु एकहि हने।
रघुबीर बल गर्बित बिभीषन घालि[1] नहिं ता कहुँ गने॥

गदा की घोर और कठिन चोट छाती में लगते ही रावण पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसके दसों मुखों से रक्त बहने लगा। वह अपने को फिर सँभालकर उठा और क्रोध में भरा हुआ दौड़ा। दोनों अत्यन्त बली योद्धा, मल्लयुद्ध में गुत्थम-गुत्था हो गये और एक दूसरे को मारने लगे। रामजी के बल से गर्वित विभीषण उसे घेलुआ (सौदे के अन्त में मिलने वाली वस्तु, पासंग) के बराबर भी नहीं समझता।

दो॰ उमा बिभीषनु रावनहिं सनमुख चितव कि कोउ।
सो अब भिरत काल ज्यों श्रीरघुबीर प्रभाउ॥९४॥

हे उमा! क्या कभी विभीषण रावण के सामने आँख उठाकर भी देख सकता था? पर अब वही काल के समान उससे लड़ रहा है। यह श्रीरामचन्द्र का प्रभाव है।

देखा स्रमित[2] बिभीषन भारी ❀ धायेउ हनूमान गिरिधारी
रथ तुरंग सारथी निपाता ❀ हृदय माँझ तेहि मारेसि लाता

विभीषण को बहुत ही थका हुआ देखकर हनुमान पर्वत लेकर दौड़े। उन्होंने रावण का रथ तोड़ डाला, सारथी और घोड़ों को मार डाला और उसकी छाती में लात मारी।

ठाढ़ रहा अति कंपित गाता ❀ गयेउ बिभीषन जहँ जनत्राता
पुनि रावन कपि हतेउ पचारी ❀ चला गगन कपि पूँछ पसारी

रावण खड़ा रहा, पर उसका शरीर बहुत काँप रहा है। विभीषण वहाँ गया, जहाँ सेवकों के रक्षक रामजी थे। फिर रावण ने ललकारकर हनुमान को मारा। हनुमान पूँछ फैलाकर आकाश में चले गये।

१. पासंग। २. थका हुआ।

गहेसि पूँछ कपि सहित उड़ाना ❀ पुनि फिरि भिरेउ प्रबल हनुमाना
लरत अकास जुगल सम जोधा ❀ हनत एकु एकहिं करि क्रोधा

रावण ने पूँछ पकड़ ली। वह हनुमान के साथ ऊपर उड़ा। महा बलवान हनुमान लौटकर फिर भिड़ गये। दोनों समान योद्धा आकाश में लड़ते हुये एक-दूसरे को क्रोध करके मारने लगे।

सोहहिं नभ छल बल बहु करहीं ❀ कज्जलगिरि सुमेरु जनु लरहीं
बुधि बल निसिचर परइ न पारा ❀ तब मारुतसुत प्रभु संभारा[1]

दोनों बहुत-से दाँव-पेंच करते हुये आकाश में ऐसे शोभित हुये, जैसे काजल का पर्वत और सुमेरु पर्वत लड़ रहे हैं। बुद्धि के बल से वह राक्षस गिराया नहीं जा सकता था, तब हनुमान ने प्रभु को स्मरण किया।

छन्द–संभारि श्रीरघुबीर धीर पचारि कपि रावन हन्यौ।
महि परत पुनि उठि लरत देवन जुगल कहँ जय जय भन्यौ
हनुमंत संकट देखि मर्कट भालु क्रोधातुर चले।
रनमत्त रावन सकल सुभट प्रचंड भुज बल दलमले॥

श्रीराम का स्मरण करके धीर हनुमान ने ललकारकर रावण को मारा। वे दोनों पृथ्वी पर गिरते और फिर उठकर लड़ते हैं। देवताओं ने दोनों की 'जय-जय' कहा। हनुमान पर सङ्कट देखकर बानर-भालू क्रोधातुर होकर दौड़े। रण-मद में मतवाले रावण ने सब वीरों को अपनी प्रचण्ड भुजाओं के बल से पीस डाला।

दो०– तब रघुबीर पचारे धाये कीस प्रचंड।
कपि बल प्रबल देखि तेहि कीन्ह प्रगट पाखंड॥९५॥

तब राम ने ललकारा। प्रचंड वीर बानर दौड़े। बानरों की प्रबल सेना देखकर रावण ने माया प्रकट की।

अंतरधान भयेउ छन एका ❀ पुनि प्रगटे खल रूप अनेका
रघुपति कटक भालु कपि जेते ❀ जहँ तहँ प्रगट दसानन तेते

क्षण-भर के लिये वह अदृश्य हो गया। फिर उस दुष्ट ने अनेकों रूप

१. स्मरण किया।

प्रकट किये। रामजी की सेना में जहाँ जितने भालू और बानर थे, वहाँ उतने ही रावण प्रकट हो गये।

देखे कपिन्ह अमित दससीसा ❀ जहँ तहँ भगे भालु अरु कीसा
भागे बानर धरहिं न धीरा ❀ त्राहि त्राहि लछिमन रघुबीरा

बानरों ने असंख्य रावण देखे। भालू और बानर सब इधर-उधर भाग चले। बानर धीरज नहीं धरते, वे भाग चले। वे 'हे लक्ष्मण! हे रामजी! बचाओ, बचाओ' पुकारने लगे।

दहँ दिसि धावहिं कोटिन्ह रावन ❀ गर्जहिं घोर कठोर भयावन
डरे सकल सुर चले पराई ❀ जय कै आस तजहु अब भाई

दसों दिशाओं में करोड़ों रावण दौड़ते हैं। वे घोर और भयानक कठोर स्वर से गरज रहे हैं। सब देवता डर गये और भाग चले। उन्होंने कहा—हे भाई! अब जीत की आशा छोड़ दो।

सब सुर जिते एक दसकंधर ❀ अब बहु भये तकहु गिरि कंदर
रहे बिरंचि संभु मुनि ग्यानी ❀ जिन्ह जिन्ह प्रभु महिमा कछु जानी

एक ही रावण ने सब देवताओं को जीत लिया था। अब तो बहुत-से रावण हो गये हैं। अब पहाड़ की गुफाओं की शरण लो। वहाँ ब्रह्मा, शिव और ज्ञानी मुनि ही डटे रहे, जिन्होंने प्रभु की कुछ महिमा जान ली थी।

छन्द–जाना प्रताप ते रहे निर्भय कपिन्ह रिपु माने फुरे।
चले बिचलि मर्कट भालु सकल कृपाल पाहि भयातुरे॥
हनुमंत अंगद नील नल अतिबल लरत रनबाँकुरे।
मर्दहिं दसानन कोटि कोटिन्ह कपट भू भट अंकुरे॥

जो प्रभु का प्रताप जानते थे, वे वहीं निर्भय खड़े रहे। बानरों ने शत्रु रावणों को सच्चा ही मान लिया था। भय से विकल होकर, 'हे कृपालु राम! बचाओ', पुकारते हुये बानर और भालू भाग चले। हनुमान, अंगद, नील और नल ये अतीव बलवान रण के बाँके वीर लड़ते रहे। वे कपटरूपी भूमि से अंकुर की तरह उपजे हुये करोड़ों रावणों को पकड़-पकड़कर रगड़ते रहे।

दो॰ सुर बानर देखे बिकल हँसे कोसलाधीस।
सजि सारंग एक सर हते सकल दससीस ॥९६॥

देवताओं और बानरों को व्याकुल देखकर रामजी हँसने लगे। उन्होंने धनुष पर एक बाण चढ़ाकर (माया के बने हुये) समस्त रावणों को मार डाला।

प्रभु छन महुँ माया सब काटी ॐ जिमि रबि उयें जाहिं तम फाटी
रावन एक देखि सुर हरषे ॐ फिरे सुमन बहु प्रभु पर बरषे

प्रभु ने क्षणभर में सब माया काट डाली, जैसे सूर्य के उदय होने पर अन्धकार मिट जाता है। अब एक रावण को देखकर देवता हर्षित हुये। वे लौटे और प्रभु पर उन्होंने फूलों की बड़ी वर्षा की।

भुज उठाइ रघुपति कपि फेरे ॐ फिरे एक एकन्ह तब टेरे
प्रभु बलु पाइ भालु कपि धाए ॐ तरल तमकि संजुग महि आए

रामजी ने भुजा उठाकर बानरों को लौटाया। तब वे एक-दूसरे को पुकार-पुकारकर लौट पड़े। प्रभु का बल पाकर भालू और बानर दौड़ पड़े। फुरती से झपटकर, वे रण-भूमि में आ गये।

अस्तुति करत देवतन्हि देखे ॐ भयेउ एक मैं इन्ह के लेखे
सठहु सदा तुम्ह मोर मरायल[1] ॐ अस कहि कोपि गगन पथ धायल[2]

रावण ने देवताओं को रामजी की स्तुति करते देख लिया। उसने समझा—मैं इनकी समझ में फिर एक हो गया। उसने कहा—हे मूर्खो! तुम सदा ही मेरे पीटे हुये हो। ऐसा कहकर वह क्रोध करके आकाश पर दौड़ा।

हाहाकार करत सुर भागे ॐ खलहु जाहु कहँ मोरे आगे
बिकल देखि सुर अंगद धावा ॐ कूदि चरन गहि भूमि गिरावा

देवता हाहाकार करते हुए भगे। रावण ने कहा—दुष्टो! मेरे आगे से कहाँ जा सकोगे? देवताओं को विकल देखकर अंगद दौड़ा और कूदकर उसने रावण का पैर पकड़कर उसे पृथ्वी पर गिरा दिया।

छन्द-गहि भूमि पर्‌यो लात मार्‌यो बालिसुत प्रभु पहिं गयो
संभारि उठि दसकंठ घोर कठोर रव गर्जत भयो ॥

१. मार खाने वाला। २. दौड़ा।

करि दाप चाप चढ़ाइ दस संधान सर बहु बरषई।
किए सकल भट घायल भयाकुल देखि निज बल हरषई॥

अंगद ने उसे पकड़कर पृथ्वी पर गिरा दिया। लात मारी और फिर वह राम के पास चला गया। रावण सँभलकर उठा और बड़े घोर-कठोर शब्द से गरजने लगा। क्रोध करके दसों धनुष चढ़ाकर उन पर बहुत-से बाण सन्धानकर, वह बाण-वृष्टि करने लगा। उसने सब योद्धाओं को घायल और भयभीत कर दिया और अपना बल देखकर हर्षित होने लगा।

दो०- तब रघुपति रावन के सीस भुजा सर चाप।
काटे बहुत बढ़े पुनि जिमि तीरथ कर पाप॥९७॥

तब रामजी ने रावण के सिर, भुजायें, बाण और धनुष काट डाले। पर वे फिर बहुत बढ़ गये, जैसे तीर्थ में किये हुये पाप बढ़ जाते हैं।

सिर भुज बाढ़ि देखि रिपु केरी ❀ भालु कपिन्ह रिस भई घनेरी
मरत न मूढ़ न कटेहुँ भुज सीसा ❀ धाए कोपि भालु भट कीसा

शत्रु के सिर और भुजाओं की बढ़ती देखकर भालुओं और बानरों को बड़ा क्रोध हुआ। यह मूर्ख भुजाओं और सिरों के कटने पर भी नहीं मरता, (ऐसा कहते हुये) भालू और बानर भी क्रोध करके दौड़े।

बालितनय मारुति नल नीला ❀ दुबिद कपीस पनस बलसीला
बिटप महीधर करहिं प्रहारा ❀ सोइ गिरि तरु गहि कपिन्ह सो मारा

अंगद, हनुमान, नल, नील, द्विविद, सुग्रीव और पनस ये बलवान जो-जो वृक्ष और पर्वत उस पर मारते हैं, वह उन्हीं पर्वतों और वृक्षों को पकड़कर उन्हीं से बानरों को मारता है।

एक नखन्ह रिपु बपुष[1] बिदारी ❀ भागि चलहिं एक लातन्ह मारी
तब नल नील सिरन्ह चढ़ि गए ❀ नखन्ह लिलार बिदारत भए

कोई बानर नाखूनों से शत्रु के शरीर को फाड़कर और कोई उसे लात मारकर भाग जाते हैं। तब नल और नील रावण के सिरों पर चढ़ गये और नाखूनों से वे उसका माथा फाड़ने लगे।

---

१. शरीर।

रुधिर बिलोकि सकोप सुरारी ❀ तिन्हहिं धरन कहँ भुजा पसारी
गहे न जाहिं सिरन्ह पर फिरहीं ❀ जनु जुग मधुप कमल बन चरहीं[1]

रक्त देखकर उस देव-शत्रु ने क्रोध करके उनको पकड़ने के लिये हाथ फैलाया, पर वे पकड़ में नहीं आते, सिरों पर घूमते-फिरते हैं, जैसे दो भौंरे कमलों के वन में विचरण करते हों।

कोपि कूदि दोउ धरेसि बहोरी ❀ महि पटकत भजे भुजा मरोरी
पुनि सकोप दस धनु कर लीन्हे ❀ सरन्ह मारि घायल कपि कीन्हे

तब उसने क्रोध करके, कूदकर, दोनों को पकड़ा। वह उन्हें पृथ्वी पर पटकना ही चाहता था कि वे उसकी भुजाओं को मरोड़कर भाग निकले। फिर उसने क्रोध करके हाथों में दसों धनुष लिये और बानरों को बाणों से मारकर घायल कर दिया।

हनुमदादि मुरुछित करि बंदर ❀ पाइ प्रदोष[2] हरष दसकंधर
मुरुछित देखि सकल कपि बीरा ❀ जामवंत धायेउ रनधीरा

हनुमान आदि बानरों को मूर्च्छित करके और संध्या का समय पाकर रावण हर्षित हो गया। सब बानर वीरों को मूर्च्छित देखकर रणधीर जाम्बवंत दौड़ा।

संग भालु भूधर तरु धारी ❀ मारन लगे पचारि पचारी
भयेउ क्रुद्ध रावन बलवाना ❀ गहि पद महि पटकइ भट नाना
देखि भालुपति निज दल घाता ❀ कोपि माझ उर मारेसि लाता

पहाड़ और वृक्ष लिये हुये भालू उसके साथ थे। सब रावण को ललकार-ललकार कर मारने लगे। बलवान रावण क्रुद्ध हुआ। वह अनेकों वीरों के पैर पकड़कर उन्हें पृथ्वी पर पटकने लगा। जाम्बवान ने अपने दल का विध्वंस देखकर क्रोध करके रावण की छाती में लात मारी।

छंद—उर लात घात[3] प्रचंड लागत बिकल रथ तें महि परा
गहि भालु बीसहु कर मनहुँ कमलन्हि बसे निसि मधुकरा
मुरुछित बिलोकि बहोरि पद हति भालुपति प्रभु पहिं गयो
निसि जानि स्यंदन घालि तेहि तब सूत जतनु करत भयो

१. विचरण करते हैं। २. संध्या। ३. आघात, चोट।

छाती में लात की प्रचण्ड चोट लगते ही रावण विकल होकर रथ से पृथ्वी पर गिर पड़ा। बीसों हाथों में उसने भालुओं को पकड़ रक्खा था। ऐसा जान पड़ता था, मानो रात्रि के समय कमलों में भौंरें बसे हुये हैं। उसे मूर्च्छित देखकर, फिर लात जमाकर जाम्बवान प्रभु के पास गया। रात हुई जानकर तब सारथी ने रावण को रथ में बैठाया और उसे होश में लाने का वह उपाय करने लगा।

दो० **मुरछा बिगत भालु कपि सब आये प्रभु पास।**
निसिचर सकल रावनहिं घेरि रहे अति त्रास॥९८॥

मूर्च्छा दूर होने पर सब भालू और बानर प्रभु के पास आये। उधर सारे राक्षस अत्यन्त भयभीत होकर रावण को घेरकर खड़े रहे।

तेही निसि सीता पहिं जाई ❀ त्रिजटा कहि सब कथा सुनाई
सिर भुज बाढ़ि सुनत रिपु केरी ❀ सीता उर भइ त्रास[1] घनेरी

उसी रात में सीता के पास जाकर त्रिजटा ने सब कथा कह सुनाई। शत्रु के सिर और भुजाओं की वृद्धि की बात सुनकर सीता के हृदय में बड़ा भय हुआ।

मुख मलीन उपजी मन चिंता ❀ त्रिजटा सन बोली तब सीता
होइहि काह कहसि किन माता ❀ केहि बिधि मरिहि बिस्व दुखदाता

मुँह उदास हो गया, मन में चिन्ता पैदा हो गई। तब सीता त्रिजटा से कहने लगी—हे माँ! बताती क्यों नहीं? क्या होगा? विश्व को दुःख देने वाला यह किस प्रकार मरेगा?

रघुपति सर सिर कटेहुँ न मरई ❀ बिधि बिपरीत चरित सब करई
मोर अभाग्य जियावत ओही ❀ जेहिं हौं हरि पद कमल बिछोही

रामजी के बाणों से सिर कटने पर भी यह नहीं मरता। विधाता सारे चरित्र विपरीत ही कर रहा है। मेरा अभाग्य ही उसे (रावण को) जिला रहा है, जिसने मुझे भगवान् के चरण-कमलों से अलग कर दिया है।

जेहिं कृत कपट कनक मृग झूठा ❀ अजहुँ सो दैव मोहि पर रूठा
जेहिं बिधि मोहि दुख दुसह सहाए ❀ लछिमन कहुँ कटु बचन कहाए

---

१. भय।

जिसने सोने का झूठा कपट-मृग बनाया, वही दैव आज भी मुझ पर रूठा हुआ है, जिस विधाता ने मुझ से न सहन करने योग्य दुःख सहन कराये, और लक्ष्मण को कटु-वचन कहलाये।

रघुपति बिरह सबिष सर भारी ❀ तकि तकि मार बार बहु मारी
ऐसेहु दुख जो राखु मम प्राना ❀ सोइ बिधि ताहि जिआव न आना

जो रामजी के विरहरूपी बड़े विषैले बाणों से ताक-ताककर मुझे बहुत बार मारकर अब भी मार रहा है, ऐसे दुःखों में भी जो मेरे प्राणों को बचाये हुये है, वही विधाता उसे जिला रहा है, दूसरा कोई नहीं।

बहुबिधि करति बिलाप जानकी ❀ करि करि सुरति कृपानिधान की
कह त्रिजटा सुन राजकुमारी ❀ उर सर लागत मरइ सुरारी
प्रभु तातें उर हतइ न तेही ❀ एहि के हृदयँ बसति बैदेही

कृपा के धाम राम की याद कर-करके जानकी बहुत प्रकार से विलाप कर रही हैं। त्रिजटा कहने लगी—हे राजकुमारी ! सुनो। हृदय में बाण लगने पर वह देव-शत्रु मरेगा। प्रभु इस कारण से उसके हृदय में बाण नहीं मारते कि वे सोचते हैं कि उसके हृदय में सीता बसती हैं।

छन्द—एहि के हृदय बस जानकी जानकी उर मम बास है
मम उदर[1] भुवन अनेक लागत बान सब कर नास है
सुनि बचन हरष बिषाद मन अति देखि पुनि त्रिजटाँ कहा
अब मरिहि रिपु एहि बिधि सुनहि सुंदरि तजहि संसय महा

इसके हृदय में जानकी बसती हैं, जानकी के हृदय में मेरा वास है और मेरे उदर में अनेकों भुवन हैं, इससे रावण के हृदय में बाण लगते ही सबका नाश हो जायगा। यह वचन सुनकर, सीता के मन को अत्यन्त हर्ष और विषाद हुआ देखकर त्रिजटा ने फिर कहा—हे सुन्दरी ! अब शत्रु इस प्रकार से मरेगा, उसे बड़ा संशय छोड़कर सुनो। [एकावली अलंकार]

दो॰ काटत सिर होइहि बिकल छुटि जाइहि तव ध्यान।
तब रावनहिं हृदय महँ मारहिं रामु सुजान॥

१. पेट।

सिरों के काटे जाने पर जब वह विकल हो जायगा और तुम्हारा ध्यान छूट जायगा, तब बुद्धिमान राम उसके हृदय में बाण मारेंगे।

अस कहि बहुत भाँति समुझाई ❀ पुनि त्रिजटा निज भवन सिधाई
राम सुभाउ सुमिरि बैदेही ❀ उपजी बिरह बिथा अति तेही

ऐसा कहकर और सीता को बहुत प्रकार से समझाकर फिर त्रिजटा अपने घर चली गई। रामजी के स्वभाव का स्मरण करके सीता को बड़ी विरह-व्यथा उत्पन्न हुई।

निसिहि ससिहि निंदति बहु भाँती ❀ जुग सम भई सिराति न राती
करति बिलाप मनहिं मन भारी ❀ राम बिरहँ जानकी दुखारी

वह रात्रि की और चन्द्रमा की बहुत प्रकार से निन्दा कर रही हैं और कहती हैं—हाय! रात युग के समान बड़ी हो गई, बीतती ही नहीं। राम के विरह में बहुत दुखी होकर मन ही मन वह भारी विलाप करती रहती हैं।

जब अति भयेउ बिरह उर दाहू ❀ फरकेउ बाम नयन अरु बाहू
सगुन बिचारि धरी मन धीरा ❀ अब मिलिहहिं कृपाल रघुबीरा

जब विरह के मारे हृदय में दारुण दाह हो गया तब उनका बायाँ नेत्र और बाहु फड़क उठे। शकुन समझकर उन्होंने मन में धैर्य धारण किया कि अब कृपालु रामजी अवश्य मिलेंगे।

इहाँ अर्धनिसि रावनु जागा ❀ निज सारथि सन खीझन लागा
सठ रनभूमि छड़ायसि मोही ❀ धिग धिग अधम मंदमति तोही

यहाँ आधी रात को रावण जगा और वह अपने सारथी पर रुष्ट होकर कहने लगा—अरे मूर्ख! तूने मुझे रण-भूमि से अलग कर दिया। अरे नीच, मन्द-बुद्धि! तुझे धिक्कार है, धिक्कार है।

तेहिं पद गहि बहु बिधि समुझावा ❀ भोरु भयें रथ चढ़ि पुनि धावा
सुनि आगमनु दसानन केरा ❀ कपि दल खरभर भयेउ घनेरा
जहँ तहँ भूधर बिटप उपारी ❀ धाए कटकटाइ भट भारी

सारथी ने रावण के पैर पकड़कर बहुत प्रकार से समझाया। तब सबेरा होते ही वह रथ पर चढ़कर फिर दौड़ा। रावण का आना सुनकर बानरों के दल

में बड़ी खलबली मच गई। जहाँ-तहाँ से पर्वत और वृक्ष उखाड़कर भारी बानर वीर दाँत कटकटाकर दौड़े।

छन्द—धाए जो मर्कट बिकट भालु कराल कर भूधर धरा।
अति कोपि करहिं प्रहार मारत भजि चले रजनीचरा॥
बिचलाइ दल बलवंत कीसन्ह घेरि पुनि रावनु लियो।
चहुँ दिसि चपेटन्हि मारि नखन्हि बिदारितनु ब्याकुल कियो

विकट और विकराल बानर और भालू हाथों में पर्वत लेकर दौड़े। वे बड़े क्रोध से मारते हैं। उनकी मार से राक्षस भाग खड़े हुये। बलवान् बानरों ने शत्रु की सेना को विचलित करके फिर रावण को घेर लिया। चारों ओर से उसे चपेटे (थप्पड़) मारकर, नखों से उसका शरीर नोच-नोचकर बानरों ने उसको विकल कर दिया।

दो०—देखि महा मर्कट प्रबल रावन कीन्ह बिचार।
अंतरहित[1] होइ निमिष महुँ कृत माया बिस्तार॥१००

बानरों को महा प्रबल देखकर रावण ने विचार किया और क्षणभर में अन्तर्द्धान होकर उसने माया फैलाई।

छन्द—जब कीन्ह तेहि पाखंड[2]। भए प्रगट जंतु प्रचंड।
बेताल भूत पिसाच। कर धरे धनु नाराच॥
जोगिनि गहें करवाल[3]। एक हाथ मनुज कपाल।
करि सद्य सोनित पान। नाचहिं करहिं बहु गान॥

जब उसने माया रची, तब भयंकर जीव प्रकट हो गये। बेताल, भूत और पिशाच हाथों में धनुष-बाण लिये प्रकट हुये। योगिनियाँ एक हाथ में तलवार और दूसरे हाथ में मनुष्य की खोपड़ी लिये ताज़ा रुधिर पीकर नाचने और बहुत तरह के गीत गाने लगीं।

धरु मारु बोलहिं घोर। रहि पूरि धुनि चहुँ ओर।
मुख बाइ[4] धावहिं खान। तब लगे कीस परान॥

१. अन्तर्द्धान। २. माया, छल। ३. तलवार। ४. फैलाकर।

जहँ जाहिं मर्कट भागि। तहँ बरत[1] देखहिं आगि।
भए बिकल बानर भालु। पुनि लाग बरषै बालु॥

वे 'धरो, मारो' आदि भयानक शब्द बोल रही हैं। यह ध्वनि चारों ओर भर गई। वे मुख फैलाकर खाने दौड़ती हैं। तब बानर भागने लगे। बानर भाग कर जहाँ जाते हैं, वहीं आग जलती हुई देखते हैं। बानर-भालू व्याकुल हो गये। फिर रावण बालू की वर्षा करने लगा।

जहँ तहँ थकित करि कीस। गर्जेउ बहुरि दससीस
लछिमन कपीस समेत। भए सकल बीर अचेत
हा राम हा रघुनाथ। कहि सुभट मीजहिं हाथ
एहि बिधि सकल बल तोरि। तेहिं कीन्ह कपट बहोरि

बानरों को जहाँ-तहाँ थकाकर फिर रावण गरजा। लक्ष्मण और सुग्रीव-सहित सभी वीर अचेत हो गये। हा राम! हा रघुनाथ! कहकर सभी योद्धा हाथ मलते हैं। इस प्रकार सबका बल तोड़कर रावण ने फिर दूसरी माया रची।

प्रगटेसि बिपुल हनुमान। धाए गहे पाषान
तिन्ह रामु घेरे जाइ। चहुँ दिसि बरूथ बनाइ
मारहु धरहु जनि जाइ। कटकटहिं पूँछ उठाइ
दहँ दिसि लँगूर बिराज। तेहि मध्य कोसलराज

उसने बहुत-से हनुमान प्रकट कर दिये, जो पत्थर लिये दौड़े। उन्होंने दल बनाकर चारों ओर से जाकर रामजी को घेर लिया। मारो, पकड़ो, जाने न पाये, कहते हुये वे पूँछ उठाकर कटकटाते हैं। दसों दिशाओं में उनके लंगूर शोभा दे रहे हैं, उनके मध्य में अयोध्यानाथ रामजी हैं।

तेहि मध्य कोसलराज सुन्दर स्याम तन सोभा लही।
जनु इन्द्रधनुष अनेक की बर बारि[2] तुङ्ग[3] तमालही॥

१. जलती हुई। २. बाड़, घेरा। ३. ऊँचे।

प्रभु देखि हरष बिषाद उर सुर बदत जय जय जय करी।
रघुबीर एकहिं तीर कोपि निमेष महुँ माया हरी॥

उनके मध्य में अयोध्यानाथ के सुन्दर साँवले शरीर ने ऐसी शोभा प्राप्त की, मानो ऊँचे तमाल वृक्ष के चारों ओर अनेकों इन्द्र-धनुषों की बाड़ लगी हो। प्रभु को देखकर देवता हृदय में हर्ष और विषाद-सहित हृदय से जय-जय-जय बोलने लगे। रामजी ने क्रोध करके एक ही बाण से, क्षणभर में, सारी माया हर ली।

माया बिगत कपि भालु हरषे बिटप गिरि गहि सब फिरे।
सर निकर छाड़े राम रावन बाहु सिर पुनि महि गिरे॥
श्रीराम रावन समर चरित अनेक कल्प जो गावहीं।
सत सेष सारद निगम कबि तेउ तदपि पार न पावहीं॥

माया दूर हो जाने पर बानर-भालू हर्षित हुये और वृक्ष और पर्वत लेकर वे सब लौट पड़े। रामजी ने बाणों के समूह छोड़े, जिनसे रावण की भुजायें और सिर फिर कटकर पृथ्वी पर गिर पड़े। श्रीराम और रावण के युद्ध का चरित्र सैंकड़ों शेष, सरस्वती, वेद और कवि अनेक कल्पों तक गाते रहें, तो भी वे पार नहीं पा सकते।

दो०— ताके गुन गन कछु कहे जड़मति तुलसीदास।
जिमि निज बल अनुरूप ते माछी उड़इ अकास॥

मन्दबुद्धि तुलसीदास ने उसी चरित्र के कुछ गुण-गण कहे हैं—जैसे अपनी शक्ति के अनुसार मक्खी भी आकाश में उड़ती है।

काटे सिर भुज बार बहु मरत न भट लंकेस।
प्रभु क्रीड़त सुर सिद्ध मुनि ब्याकुल देख कलेस॥

सिर और भुजाओं के बहुत बार काटे जाने पर भी वीर रावण मरता नहीं। प्रभु तो खेलवाड़ ही कर रहे हैं, पर देवता, सिद्ध और मुनि प्रभु का क्लेश देखकर व्याकुल हैं।

काटत बढ़हिं सीस समुदाई ❀ जिमि प्रति लाभ लोभ अधिकाई
मरइ न रिपु स्रम भयेउ बिसेषा ❀ राम बिभीषन तन तब देखा

काटते ही सिरों का समूह बढ़ जाता है। जैसे प्रत्येक लाभ के साथ लोभ बढ़ता है। शत्रु मरता नहीं और परिश्रम बहुत हुआ। तब रामजी ने विभीषण की ओर देखा।

उमा काल मरु जाकी ईछा ❀ सो प्रभु कर जन प्रीति परीछा
सुनु सर्बग्य चराचर नायक ❀ प्रनतपाल सुर मुनि सुखदायक

हे उमा! जिसकी इच्छामात्र से काल भी मर जाता है, वही प्रभु सेवक की प्रीति की परीक्षा ले रहे हैं। विभीषण ने कहा—हे सर्वज्ञ! हे चर और अचर जगत् के स्वामी! हे शरणागत के पालने वाले और देवता और मुनियों को सुख देने वाले!

नाभिकुण्ड पियूष[1] बस याकें ❀ नाथ जिअत रावन बल ताकें
सुनत बिभीषन बचन कृपाला ❀ हरषि गहे कर बान कराला

इसके नाभिकुण्ड में अमृत बसता है। हे नाथ! रावण उसी के बल से जीता है। विभीषण का बचन सुनते ही कृपालु रामजी ने हर्षित होकर भयानक बाण हाथ में लिया।

असगुन होन लगे तब नाना ❀ रोवहिं बहु सृगाल खर स्वाना
बोलहिं खग जग आरति हेतू ❀ प्रगट भये नभ जहँ तहँ केतू

तब नाना प्रकार के अशकुन होने लगे। बहुत-से सियार, गधे और कुत्ते रोने लगे। जगत् के दुख को सूचित करने के लिये पक्षी बोलने लगे। जहाँ-तहाँ आकाश में केतु प्रकट हो गये।

दस दिसि दाह होन अति लागा ❀ भयेउ परब बिनु रबि उपरागा[2]
मंदोदरि उर कंपति भारी ❀ प्रतिमा[3] स्रवहिं नयन मग बारी

दसों दिशाओं में अत्यन्त ज्वाला दहकने लगी। बिना पर्व का योग हुये सूर्य-ग्रहण होने लगा। मन्दोदरी का हृदय बहुत काँपने लगा। मूर्त्तियाँ नेत्र-मार्ग से जल गिराने लगीं।

छन्द-प्रतिमा स्रवहिं पबि पात नभ अति बात बहु डोलत मही।
बरषहिं बलाहक रुधिरु कच रज असुभ अति सक को कही॥

१. अमृत। २. सूर्य-ग्रहण। ३. मूर्त्ति।

उतपात अमित बिलोकि नभ सुर बिकल बोलहिं जय जये।
सुर सभय जानि कृपाल रघुपति चाप सर जोरत भये॥

मूर्त्तियाँ रोने लगीं, आकाश से बज्रपात होने लगे, प्रचण्ड वायु चलने लगी, पृथ्वी काँपने लगी, बादल रक्त, बाल और धूलि की वर्षा करने लगे। बहुत अमङ्गल होने लगे, उन्हें कौन कह सकता है? असंख्य उत्पात देखकर आकाश में देवता विकल होकर जय-जय बोल उठे। देवताओं को भयभीत जानकर कृपालु राम ने धनुष पर बाण रक्खा।

दो॰ खैंचि सरासन स्रवन लगि छाड़े सर एकतीस।
रघुनायक सायक चले मानहुँ काल फनीस[1] ॥१०२॥

कान तक धनुष को खींचकर रामजी ने इकतीस बाण मारे। रामचन्द्रजी के बाण ऐसे चले, मानो काल-सर्प हैं।

सायक एक नाभिसर सोषा ❀ अपर[2] लगे सिर भुज करि रोषा
लै सिर बाहु चले नाराचा ❀ सिर भुज हीन रुण्ड महि नाचा

रामजी के एक बाण ने रावण की नाभि का अमृत-कुण्ड सोख लिया। दूसरे तीस बाण कोप करके उसके सिरों और भुजाओं में लगे। बाण उसके सिरों और भुजाओं को लेकर चले। सिरों और भुजाओं से रहित रुंड (धड़) पृथ्वी पर नाचने लगा।

धरनि धसइ धर धाव प्रचंडा ❀ तब प्रभु सर हति कृत जुग खंडा
गर्जेउ मरत घोर रव भारी ❀ कहाँ रामु रन हतौं पचारी

धड़ प्रचण्ड वेग से दौड़ता है, जिससे धरती धँसने लगी। तब प्रभु ने बाण मारकर उसके दो टुकड़े कर दिये। मरते समय रावण भयानक कठोर शब्द से गरजकर बोला—राम कहाँ है? मैं ललकारकर युद्ध में उसको मारूँ।

डोली भूमि गिरत दसकंधर ❀ छुभित सिंधु सरि दिग्गज भूधर
धरनि परेउ दोउ खण्ड बढ़ाई ❀ चापि भालु मर्कट समुदाई

रावण के गिरने से पृथ्वी हिल गई। समुद्र, नदियाँ, दिशाओं के हाथी और पर्वत क्षुब्ध हो उठे। दोनों टुकड़ों को फैलाकर भालू और बानरों के समूह को दबाता हुआ रावण धरती पर गिर पड़ा।

---

१. साँप। २. दूसरे।

मंदोदरि आगें भुज सीसा ❀ धरि सर चले जहाँ जगदीशा
प्रबिसे सब निषंग महुँ जाई ❀ देखि सुरन्ह दुंदुभीं बजाई

रावण की भुजाओं और सिरों को मन्दोदरी के सामने रखकर बाण वहाँ चले, जहाँ जगत् के स्वामी रामजी थे। सब बाण जाकर तरकस में घुस गये। यह देखकर देवताओं ने नगाड़े बजाये।

तासु तेजु समान प्रभु आनन ❀ हरषे देखि संभु चतुरानन
जय जय धुनि पूरी ब्रह्मंडा ❀ जय रघुबीर प्रबल भुजदंडा
बरषहिं सुमन देव मुनि बृन्दा ❀ जय कृपाल जय जयति मुकुन्दा

उसका तेज प्रभु के मुख में समा गया। यह देखकर शिव और ब्रह्मा हर्षित हुये। जय-जय की ध्वनि ब्रह्मांड भर में भर गई—प्रबल भुजदण्डों वाले रघुबीर की जय हो। देवता और मुनियों के समूह फूल बरसाते हैं और कहते हैं—कृपालु की जय हो, मुकुन्द की जय हो, जय हो।

छंद—जय कृपा कंद मुकुन्द द्वंद हरन सरन सुखप्रद प्रभो।
खल दल बिदारन परम कारन कारुनीक सदा बिभो॥
सुर सुमन बरषहिं हरष संकुल बाज दुंदुभि गहगही।
संग्राम अंगन राम अंग अनङ्ग बहु सोभा लही॥

हे कृपा के घन, मुकुन्द, द्वंद्वों (हर्ष-शोक, राग-द्वेष, जन्म-मृत्यु आदि) के हरने वाले, शरणागत को सुख देने वाले, प्रभु, दुष्टों के दल को विदीर्ण करने वाले, परम कारण, सदा करुणा करने वाले, सर्वव्यापक! आपकी जय हो। देवता हर्षित होकर फूल बरसाते और घमाघम नगाड़े बजाते हैं। संग्राम-भूमि में रामजी के अंगों ने बहुत-से कामदेवों की शोभा प्राप्त की।

सिर जटा मुकुट प्रसून बिच बिच अति मनोहर राजहीं
जनु नीलगिरि पर तड़ित पटल[1] समेत उडुगन[2] भ्राजहीं
भुजदंड सर कोदंड फेरत रुधिर कन तन अति बने
जनु रायमुनी[3] तमाल पर बैठीं बिपुल सुख आपने

---

१. समूह। २. नक्षत्र। ३. एक प्रकार की छोटी चिड़िया।

सिर पर जटाओं का मुकुट है, जिसके बीच-बीच में बहुत मनोहर फूल शोभा दे रहे हैं। मानो नील पर्वत पर बिजली के समूह-सहित नक्षत्र शोभा पा रहे हैं। रामजी भुजाओं से बाण और धनुष फिरा रहे हैं। शरीर पर रक्त की बहुत-सी बूँदें ऐसी लगती हैं, जैसे तमाल वृक्ष पर बहुत-सी रायमुनी चिड़ियाँ अपने महान् सुख में मग्न हुई निश्चल बैठी हों।

दो० **कृपादृष्टि करि बृष्टि प्रभु अभय किये सुरबृन्द।**
भालु कीस सब हरषे जय सुख धाम मुकुंद।१०३

प्रभु रामचन्द्रजी ने कृपा-दृष्टि की वर्षा करके देवताओं को निर्भय कर दिया। बानर और भालू सब हर्षित हुये, और कहने लगे—हे सुख के धाम! हे मुकुन्द! आपकी जय हो।

पति सिर देखत मंदोदरी ❀ मुरुछित बिकल धरनि खसि परी
जुबति बृन्द रोवत उठि धाई ❀ तेहि उठाइ रावन पहिं आई

पति का सिर देखते ही मन्दोदरी व्याकुल और मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। स्त्रियाँ रोती हुई उठ दौड़ीं और उसको उठाकर रावण के पास आईं।

पति गति देखि ते करहिं पुकारा ❀ छूटे चिकुर[1] न बपुष सँभारा
उर ताड़ना करहिं बिधि नाना ❀ रोवत करहिं प्रताप बखाना

पति की दशा देखकर वे चिल्लाने लगीं; उनके बाल खुल गये; देह की सँभाल नहीं रह सकी। अनेकों प्रकार से वे छाती पीटती हैं और रोती हुई रावण के प्रताप का बखान करती हैं।

तव बल नाथ डोल नित धरनी ❀ तेज हीन पावक ससि तरनी
सेष कमठ सहि सकहिं न भारा ❀ सोइ तनु भूमि परेउ भरि छारा

हे नाथ! तुम्हारे बल से नित्य पृथ्वी काँपती रहती थी। अग्नि, चन्द्रमा और सूर्य तुम्हारे सामने तेजहीन थे। शेष और कच्छप भी जिसका भार नहीं सह सकते थे, हाय! वही तुम्हारा शरीर धूल से भरा हुआ पृथ्वी पर पड़ा है।

बरुन कुबेर सुरेस समीरा ❀ रन सनमुख धर काहुँ न धीरा
भुजबल जितेहु काल जम साईं ❀ आजु परेहु अनाथ की नाईं

---

१. बाल।

वरुण, कुबेर, इन्द्र और वायु, ये कोई भी रण में तुम्हारे सामने धैर्य नहीं धारण कर सकते थे। हे स्वामी! तुमने भुजाओं के बल से काल और यमराज को भी जीत लिया। वही तुम आज अनाथ की तरह पड़े हो।

जगत बिदित तुम्हारि प्रभुताई ❀ सुत परिजन बल बरनि न जाई
राम बिमुख अस हाल तुम्हारा ❀ रहा न कोउ कुल रोवनिहारा

तुम्हारी प्रभुता जगत् भर में प्रसिद्ध है। तुम्हारे पुत्रों और कुटुम्बियों के बल का वर्णन नहीं हो सकता। रामचन्द्रजी के विमुख होने ही से तुम्हारी ऐसी दशा हुई कि कुल में अब कोई रोने वाला भी न रह गया।

तव बस बिधि प्रपंच सब नाथा ❀ सभय दिसिप नित नावहिं माथा
अब तव सिर भुज जंबुक खाहीं ❀ राम बिमुख यह अनुचित नाहीं
काल बिबस पति कहा न माना ❀ अग जग नाथु मनुज करि जाना

हे नाथ! तुम्हारे वश ब्रह्मा की सारी सृष्टि थी। दिग्पाल भयभीत होकर सदा तुमको सिर नवाते थे। अब तुम्हारे सिर और भुजाओं को सियार खा रहे हैं। राम के विमुख के लिये ऐसा होना ठीक ही है। हे पति! काल के वश में होने से तुमने कहना नहीं माना और चराचर के नाथ को मनुष्य करके जाना।

छंद—जानेउ मनुज करि दनुज कानन दहन पावक हरि स्वयं।
जेहि नमत सिव ब्रह्मादि सुर पिअ भजेहु नहिं करुनामयं॥
आजन्म[1] ते पर द्रोह रत पापौघमय[2] तव तनु अयं।
तुम्हहूँ दियो निजधाम राम नमामि ब्रह्म निरामयं॥

दैत्यरूपी वन को जलाने के लिये अग्नि के समान स्वयं भगवान् को तुमने मनुष्य करके जाना। हे प्रियतम! जिसे शिव और ब्रह्मा आदि देवता नमस्कार करते हैं, उस करुणामय को तुमने नहीं भजा। जन्मभर तुम दूसरों के साथ बैर ही में लगे रहे। तुम्हारा यह शरीर पापों के समूह से पूर्ण रहा। तुमको भी राम ने अपना धाम (बैकुण्ड) दिया, उन निर्विकार ब्रह्म रामजी को मैं नमस्कार करती हूँ।

दो०— अहह नाथ रघुनाथ सम कृपासिंधु नहिं आन।
जोगि बृन्द दुर्लभ गति तोहि दीन्हि भगवान॥१०४॥

१. जन्मभर। २. पापों के समूहयुक्त।

अहो! रघुनाथजी के समान कृपा का समुद्र दूसरा कोई नहीं, जिस भगवान् ने तुमको वह परमगति दी, जो योगियों को भी दुर्लभ है।

मंदोदरी बचन सुनि काना ❀ सुर मुनि सिद्ध सबन्हि सुख माना
अज महेस नारद सनकादी ❀ जे मुनिबर परमारथ बादी

मन्दोदरी के वचन कानों से सुनकर देवता, मुनि और सिद्ध आदि सभी ने सुख माना। ब्रह्मा, शिव, नारद और सनक आदि, तथा और भी जो परमार्थ तत्त्व पर विचार करने वाले श्रेष्ठ मुनि थे,

भरि लोचन रघुपतिहिं निहारी ❀ प्रेम मगन सब भए सुखारी
रुदन करत देखीं सब नारी ❀ गयेउ बिभीषनु मन दुख भारी

सभी आँखें भरकर रामजी को देखकर प्रेम में मग्न और अत्यंत सुखी हो गये। सब स्त्रियों को रोते हुये देखकर विभीषण के मन में बड़ा दुख हुआ, और वह उनके पास गया।

बंधु दसा बिलोकि दुख कीन्हा ❀ तब प्रभु अनुजहिं आयसु दीन्हा
लछिमन तेहि बहु बिधि समुझायेउ ❀ बहुरि बिभीषन प्रभु पहिं आयेउ

भाई की दशा देखकर विभीषण ने दुख अनुभव किया। तब रामजी ने छोटे भाई को आज्ञा दी। लक्ष्मण ने जाकर उसे बहुत प्रकार से समझाया, फिर विभीषण प्रभु के पास आया।

कृपादृष्टि प्रभु ताहि बिलोका ❀ करहु क्रिया परिहरि सब सोका
कीन्हि क्रिया प्रभु आयसु मानी ❀ बिधिवत देस काल जियँ जानी

प्रभु ने उसे कृपापूर्ण दृष्टि से देखा और कहा—सब शोक छोड़कर जाकर रावण का क्रिया-कर्म करो। विभीषण ने प्रभु की आज्ञा मानकर देश और काल का मन में विचार करके विधिपूर्वक क्रिया-कर्म किया।

दो० मंदोदरी आदि सब देइ तिलांजलि ताहि।
भवन गईं रघुबीर गुन गन बरनत मन माहिं ॥१०५॥

मन्दोदरी आदि सब स्त्रियाँ उसे तिलांजलि देकर, मन में रामजी के गुण-गण का बखान करती हुई महल को गईं।

आइ बिभीषन पुनि सिरु नायेउ ❀ कृपासिंधु तब अनुज बोलायेउ
तुम्ह कपीस अंगद नल नीला ❀ जामवंत मारुति नयसीला

फिर विभीषण ने आकर सिर नवाया। तब कृपा के समुद्र रामजी ने लक्ष्मण को बुलाया, और कहा कि तुम, सुग्रीव, अंगद, नल, नील, जाम्बवंत और हनुमान, सब नीति-निपुण लोग,

सब मिलि जाहु बिभीषन साथा ❀ सारेहु तिलक कहेउ रघुनाथा
पिता बचन मैं नगर न आवउँ ❀ आपु सरिस कपि अनुज पठावउँ

मिलकर विभीषण के साथ जाओ और उसका राजतिलक पूर्ण रीति से कर दो। पिताजी के वचनों के कारण मैं नगर में नहीं आ सकता। पर अपने ही समान बानर और छोटे भाई को भेजता हूँ।

तुरत चले कपि सुनि प्रभु बचना ❀ कीन्ही जाइ तिलक कै रचना
सादर सिंहासन बैठारी ❀ तिलक सारि अस्तुति अनुसारी

प्रभु के वचन सुनकर बानर तुरन्त ही चले और उन्होंने जाकर राजतिलक की सारी व्यवस्था की। आदर के साथ विभीषण को सिंहासन पर बैठाकर उन्होंने राजतिलक किया और स्तुति की।

जोरि पानि सबहीं सिर नाए ❀ सहित बिभीषन प्रभु पहिं आए
तब रघुबीर बोलि कपि लीन्हे ❀ कहि प्रिय बचन सुखी सब कीन्हे

सबने हाथ जोड़कर सिर नवाये और फिर विभीषण-सहित सब प्रभु के पास आये। तब रामजी ने बानरों को बुला लिया और प्रिय वचन कहकर सबको सुखी किया।

छंद—किए सुखी कहि बानी सुधा सम बल तुम्हारे रिपु हयो।
पायो बिभीषन राज तिहुँ पुर जस तुम्हारो नित नयो॥
मोहि सहित सुभ कीरति तुम्हारी परम प्रीति जे गाइहैं।
संसार सिंधु अपार पार प्रयास बिनु नर पाइहैं॥

अमृत के समान यह वचन कहकर रामजी ने सबको सुखी किया कि तुम्हारे ही बल से मैंने शत्रु को मारा है। विभीषण ने राज्य पाया। तुम्हारी कीर्ति तीनों लोकों में नित्य नई बनी रहेगी। मेरे सहित तुम्हारी शुभ कीर्ति को जो लोग परम प्रेम से गायेंगे, वे बिना परिश्रम ही इस अपार संसार-सागर का पार पा जायेंगे।

दो॰ प्रभु के बचन स्त्रवन सुनि नहिं अघाहिं कपि पुंज।
बार बार सिर नावहिं गहहिं सकल पद कंज ॥१०६

प्रभु के वचन कानों से सुनकर बानर-गण तृप्त नहीं होते। वे सब बार-बार सिर नवाते और उनके चरण-कमलों को पकड़ते हैं।

पुनि प्रभु बोलि लिये हनुमाना ❋ लंका जाहु कहेउ भगवाना
समाचार जानकिहिं सुनावहु ❋ तासु कुसल लेइ तुम्ह चलि आवहु

फिर रामजी ने हनुमान को बुलाया। भगवान् ने कहा—तुम लंका जाओ। सीता को सब समाचार सुनाओ और उसका कुशल-समाचार लेकर तुम चले आओ।

तब हनुमंत नगर महुँ आये ❋ सुनि निसिचरी निसाचर धाये
बहु प्रकार तिन्ह पूजा कीन्ही ❋ जनकसुता देखाइ पुनि दीन्ही

तब हनुमान नगर में आये। यह सुनकर राक्षस-राक्षसी दौड़े। उन्होंने बहुत प्रकार से हनुमान की पूजा की और सीता को दिखला दिया।

दूरिहिं ते प्रनाम कपि कीन्हा ❋ रघुपति दूत जानकीं चीन्हा
कहहु तात प्रभु कृपानिकेता ❋ कुसल अनुज कपि सेन समेता

हनुमान ने दूर ही से सीता को प्रणाम किया। सीता ने पहचान लिया कि यह वही रामजी का दूत है, और पूछा—हे तात! कृपा के धाम मेरे प्रभु अपने छोटे भाई और बानरों की सेना-सहित कुशल से तो हैं?

सब बिधि कुसल कोसलाधीसा ❋ मातु समर जीतेउ दससीसा
अबिचल राजु बिभीषन पावा ❋ सुनि कपि बचन हरष उर छावा

हनुमान ने कहा—हे माता! कोसलपति सब प्रकार से कुशल-पूर्वक हैं। उन्होंने युद्ध में दस सिर वाले रावण को जीत लिया और विभीषण ने अचल राज्य पाया। हनुमान के वचन सुनकर सीता के हृदय में हर्ष छा गया।

छंद-अति हरष मन तन पुलक लोचन सजल कह पुनि पुनि रमा
का देउँ तोहि त्रैलोक महुँ कपि किमपि[1] नहिं बानी समा

१. कुछ भी।

सुनु मातु मैं पायेउँ अखिल जग राज आजु न संसयं
रन जीति रिपुदल बंधुगत पस्यामि राममनामयं

सीता के मन में अत्यन्त हर्ष हुआ। उनका शरीर पुलकित हो गया और नेत्रों में जल छा गया। वे बार-बार कहने लगीं—हे हनुमान! मैं तुझे क्या दूँ? तीनों लोकों में इस वाणी के समान और कुछ भी नहीं है।

हनुमान ने कहा—हे माता! सुनो, मैंने आज निस्संदेह सारे जगत् का राज पा लिया, जो मैं युद्ध में शत्रु-सेना को जीतकर भाई-सहित निर्विकार रामजी को देख रहा हूँ।

दो॰ सुनु सुत सदगुन सकल तव हृदयँ बसहुँ हनुमंत।
सानुकूल कोसलपति रहहुँ समेत अनंत ॥१०७॥

सीता ने कहा—हे पुत्र! सुनो, समस्त सद्गुन तेरे हृदय में बसें और हे हनुमान! लक्ष्मण-सहित कोसलपति प्रभु तुझ पर प्रसन्न रहें।

अब सोइ जतन करहु तुम्ह ताता ❀ देखौं नयन स्याम मृदु गाता
तब हनुमान राम पहिं जाई ❀ जनकसुता कै कुसल सुनाई

हे तात! अब तुम वही उपाय करो, जिससे मैं इन आँखों से प्रभु के कोमल श्याम शरीर का दर्शन करूँ। तब राम के पास जाकर हनुमान ने सीता का कुशल-समाचार सुनाया।

सुनि संदेस भानुकुल भूषन ❀ बोलि लिये जुबराज[1] बिभीषन
मारुतसुत के संग सिधावहु ❀ सादर जनकसुतहिं लै आवहु

संदेश सुनकर सूर्य-कुल के भूषण रामजी ने अंगद और विभीषण को बुला लिया, और कहा—हनुमान के साथ जाओ और सीता को आदर-सहित ले आओ।

तुरतहिं सकल गये जहँ सीता ❀ सेवहिं सब निसिचरीं बिनीता
बेगि बिभीषन तिन्हहिं सिखावा ❀ तिन्ह बहु बिधि मज्जन करवावा

वे सब तुरन्त ही वहाँ गये, जहाँ सीता थीं। सब राक्षसियाँ नम्रता-पूर्वक उनकी सेवा कर रही थीं। विभीषण ने जल्दी उनको बातें समझा दीं। उन्होंने बहुत प्रकार से सीता को स्नान कराया।

१. युवराज अंगद।

बहु प्रकार भूषन पहिराये ❀ सिबिका रुचिर साजि पुनि ल्याये
तापर हरषि चढ़ी बैदेही ❀ सुमिरि राम सुखधाम सनेही

उन्होंने बहुत प्रकार के गहने पहनाये; फिर वे एक सुन्दर पालकी सजाकर ले आये। सीता हर्षित होकर सुख के धाम प्रियतम रामजी को स्मरण करके उस पर चढ़ीं।

बेतपानि[1] रच्छक चहुँ पासा ❀ चले सकल मन परम हुलासा
देखन भालु कीस सब आये ❀ रच्छक कोपि निवारन धाये

चारों ओर हाथों में बेंत लिये रक्षक चले। सबके मनों में परम उल्लास था। सब भालू और बानर दर्शन करने आये। तब रक्षक क्रोध करके उनको रोकने दौड़े।

कह रघुबीर कहा मम मानहु ❀ सीतहिं सखा पयादें आनहु
देखहिं कपि जननी की नाईं ❀ बिहसि कहा रघुनाथ गुसाईं

रामजी ने कहा—हे मित्र! मेरा कहा मानो और सीता को पैदल ले आओ, जिससे बानर उसको माता की तरह देखें। स्वामी रामजी ने ऐसा हँसकर कहा।

सुनि प्रभु बचन भालु कपि हरषे ❀ नभ तें सुरन्ह सुमन बहु बरषे
सीता प्रथम अनल महुँ राखी ❀ प्रगट कीन्हि चह अंतर साखी

प्रभु के वचन सुनकर भालू और बानर हर्षित हो गये। देवताओं ने आकाश से फूलों की खूब वर्षा की। सीता को पहले अग्नि में रक्खा था। अब भीतर के साक्षी भगवान् उनको प्रकट करना चाहते हैं।

दो०— तेहि कारन करुनानिधि कहे कछुक दुर्बाद।
सुनत जातुधानी[2] सब लागीं करन बिषाद॥१०८॥

इसी कारण करुणा के भंडार रामजी ने कुछ कड़े वचन कहे, जिन्हें सुनकर सब राक्षसियाँ विषाद करने लगीं।

प्रभु के बचन सीस धरि सीता ❀ बोली मन क्रम बचन पुनीता
लछिमन होहु धरम कै नेगी ❀ पावक प्रगट करहु तुम्ह बेगी

---

१. हाथों में बेंत लिये हुये सिपाही। २. राक्षसियाँ।

मन, कर्म और वचन से पवित्र सीता प्रभु के वचनों को सिर चढ़ाकर बोलीं—हे लक्ष्मण! तुम धर्म के नेगी (धर्माचरण में सहायक) बनो और जल्दी अग्नि तैयार करो।

सुनि लछिमन सीता कै बानी ❀ बिरह बिबेक धरम निति सानी
लोचन सजल जोरि कर दोऊ ❀ प्रभु सन कछु कहि सकत न ओऊ

विरह, विवेक, धर्म और नीति से सनी हुई सीता की वाणी सुनकर लक्ष्मण के नेत्रों में जल भर आया। वे दोनों हाथ जोड़े खड़े रहे। वे भी प्रभु से कुछ नहीं कह सकते।

देखि राम रुख लछिमन धाये ❀ प्रगटि कृसानु काठ बहु लाये
पावक प्रबल देखि बैदेही ❀ हृदयँ हरष कछु भय नहिं तेही

रामजी का रुख देखकर लक्ष्मण दौड़े और आग तैयार करके बहुत-सा काठ ले आये। अग्नि को खूब प्रज्वलित देखकर सीता के हृदय में हर्ष हुआ। उन्हें भय कुछ भी नहीं हुआ।

जौं मन बच क्रम मम उर माहीं ❀ तजि रघुबीर आन गति नाहीं
तौ कृसानु सब कै गति जाना ❀ मो कहँ होहु श्रीखंड[1] समाना

सीता ने कहा—जो मन, वचन और कर्म से मेरे हृदय में रघुबीर को छोड़कर दूसरी गति नहीं है, तो हे अग्निदेव! जो सब के मन की गति जानते हैं, मेरे लिये चन्दन के समान शीतल हो जायँ।

छंद—श्रीखंड सम पावक प्रबेस कियो सुमिरि प्रभु मैथिली[2]।
जय कोसलेस महेस बंदित चरन रति अति निर्मली॥
प्रतिबिंब अरु लौकिक कलङ्क प्रचण्ड पावक महुँ जरे।
प्रभु चरित काहु न लखे नभ सुर सिद्ध मुनि देखहिं खरे॥

सीता ने रामजी को स्मरण कर चंदन के समान शीतल अग्नि में यह कहकर प्रवेश किया—शिवजी से वंदित कोशलपति के चरणों में अत्यन्त निर्मल प्रीति की जय हो। प्रतिबिम्ब (नकली सीता) और लौकिक कलंक सब प्रचंड अग्नि में जल गये। प्रभु के इन चरित्रों को किसी ने नहीं जाना। देवता, सिद्ध और मुनि सब आकाश में खड़े देख रहे हैं।

---

१. चंदन। २. सीता।

धरि रूप पावक पानि गहि श्री सत्य श्रुति जग बिदित जो।
जिमि छीरसागर इंदिरा[1] रामहिं समर्पी आनि सो॥
सो राम बाम बिभाग राजति रुचिर अति सोभा भली।
नव नील नीरज निकट मानहुँ कनक पंकज की कली॥

तब अग्नि ने शरीर धारण करके वेदों में और जगत् में विख्यात सीता का हाथ पकड़, उन्हें रामजी को वैसे ही समर्पित किया, जैसे क्षीरसागर ने विष्णु को लक्ष्मी समर्पित की थी। सीता राम के बायें भाग में सुशोभित हुईं। उनकी उत्तम शोभा अत्यंत ही सुन्दर है, जैसे नवीन खिले हुये नीले कमल के पास सुनहले कमल की कली सुशोभित हो।

दो० **बरषहिं सुमन हरषि सुर बाजहिं गगन निसान।**
गावहिं किन्नर अपछरा नाचहिं चढ़ीं बिमान॥(क)

देवता हर्षित होकर फूल बरसाने लगे। आकाश में डंके बजने लगे। किन्नर गाने लगे और अप्सरायें विमान पर चढ़ी हुई नाचने लगीं।

जनकसुता समेत प्रभु सोभा अमित अपार।
देखि भालु कपि हरषे जय रघुपति सुख सार॥(ख)

श्री जानकीजी-सहित प्रभु की अपरिमित और अपार शोभा देखकर भालू और बानर हर्षित हो गये और सुख के सार रामजी की जय बोलने लगे।

तब रघुपति अनुसासन[2] पाई ❀ मातलि चलेउ चरन सिरु नाई
आए देव सदा स्वारथी ❀ बचन कहहिं जनु परमारथी

तब रामजी की आज्ञा पाकर इन्द्र का सारथी मातलि चरणों में सिर नवाकर (रथ लेकर) चला गया। अब सदा के स्वार्थी देवता आये। वे ऐसे वचन कह रहे हैं, मानो बड़े परमार्थी हों।

दीन बंधु दयाल रघुराया ❀ देव कीन्हि देवन्ह पर दाया
बिस्व द्रोह रत यह खल कामी ❀ निज अघ गयेउ कुमारग गामी

हे दीनबन्धु! हे दयालु रामचन्द्रजी! हे देव! आपने देवताओं पर बड़ी दया की। विश्व के द्रोह में लगा हुआ यह दुष्ट, कामी और बुरे मार्ग पर चलने

१. लक्ष्मी। २. आज्ञा।

वाला रावण अपने ही पाप से नाश को प्राप्त हुआ।

तुम्ह सम रूप ब्रह्म अबिनासी ❀ सदा एकरस सहज उदासी
अकल अगुन अज अनघ अनामय ❀ अजित अमोघसक्ति करुनामय

आप समरूप, ब्रह्म, अविनाशी, नित्य, एकरस, स्वभाव ही से उदासीन (शत्रु-मित्र-भाव-शून्य), अखंड, निर्गुण, अजन्मा, पापहीन, विकारहीन, अजेय, अमोघ-शक्ति सम्पन्न (जिसकी शक्ति कभी निष्फल न जाय) और करुणामय हैं।

मीन कमठ सूकर नरहरी ❀ बामन परसुराम बपु[1] धरी
जब जब नाथ सुरन्ह दुख पावा ❀ नाना तनु धरि तुम्हहिं नसावा

आपने मत्स्य, कच्छप, शूकर, नृसिंह, वामन और परशुराम का शरीर धारण किया। हे नाथ! जब-जब देवताओं ने दुःख पाया, तब-तब आप ही ने अनेकों शरीर धारण करके उनके दुःखों को नष्ट किया।

यह खल मलिन सदा सुरद्रोही ❀ काम लोभ मद रत अति कोही[2]
अधम सिरोमनि तव पद पावा ❀ यह हमरें मन बिसमौ आवा

यह दुष्ट रावण मलिन-हृदय, देवताओं का नित्य शत्रु, काम, लोभ और मद में लिप्त तथा बड़ा ही क्रोधी था। अधमों का शिरोमणि वह भी परम पद पा गया। यह देखकर हमारे मन में आश्चर्य हुआ है।

हम देवता परम अधिकारी ❀ स्वारथ रत प्रभु भगति बिसारी
भव प्रबाहँ संतत[3] हम परे ❀ अब प्रभु पाहि सरन अनुसरे

हम देवगण परमपद के पूर्ण अधिकारी होकर भी स्वार्थ-वश आपकी भक्ति भूलकर सदा भवसागर के प्रवाह में पड़े हैं। अब हे प्रभु! हम आपकी शरण में आ गये हैं, हमारी रक्षा कीजिये।

दो०— **करि बिनती सुर सिद्ध सब रहे जहँ तहँ कर जोरि।**
अति सप्रेम तन पुलकि बिधि अस्तुति करत बहोरि॥

देवता और सिद्ध सब विनती करके जहाँ के तहाँ हाथ जोड़े खड़े रहे। तब अत्यन्त प्रेम से पुलकित शरीर होकर ब्रह्मा स्तुति करने लगे।

---

१. शरीर २. क्रोधी। ३. निरन्तर, सदा।

छंद-जय राम सदा सुख धाम हरे। रघुनायक सायक चाप धरे
भव बारन दारन सिंह प्रभो। गुनसागर नागर नाथ बिभो

हे सदा सुख के धाम ! हे हरि ! हे धनुष-बाण धारण किये हुये रघुनाथ जी ! आपकी जय हो। हे प्रभु ! आप भवरूपी हाथी को विदीर्ण करने के लिये सिंह के समान हैं। आप गुणों के समुद्र, परम चतुर, समर्थ और सर्व-व्यापक हैं।

तन काम अनेक अनूप छबी। गुन गावत सिद्ध मुनीन्द्र कबी
जसु पावन रावन नाग महा। खगनाथ जथा करि कोप गहा

आपके शरीर में अनेकों कामदेवों की अनुपम शोभा है। सिद्ध, मुनीश्वर और कवि आपके गुणों का गान कर रहे हैं। आपका यश पवित्र है। आपने क्रोध करके रावण-रूपी महा सर्प को गरुड़ की तरह पकड़ लिया।

जन रंजन भंजन सोक भयं। गतक्रोध सदा प्रभु बोधमयं
अवतार उदार अपार गुनं। महिभार बिभंजन ग्यानघनं

आप सेवकों को आनन्द देने वाले, शोक और भय को नष्ट करने वाले, क्रोध से रहित और सदा ज्ञान-स्वरूप हैं। आपका अवतार श्रेष्ठ, अपार गुणों वाला, पृथ्वी के भार को नष्ट करने वाला और ज्ञान का समूह है।

अज व्यापकमेकमनादि सदा। करुनाकर राम नमामि मुदा[1]
रघुबंस बिभूषन दूषन हा। कृत भूप बिभीषन दीन रहा

आप अजन्मा, व्यापक, एक, अनादि और सदा करुणा करने वाले हैं। हे राम ! मैं आपको बड़े हर्ष के साथ नमस्कार करता हूँ। हे रघुकुल के आभूषण ! हे दूषण राक्षस को मारने वाले ! तथा-समस्त दोषों को हरने वाले ! आपने विभीषण को राजा बना दिया, जो दीन था।

गुन ग्यान निधान अमान अजं। नित राम नमामि बिभुं बिरजं
भुज दंड प्रचंड प्रताप बलं। खल बृन्द निकंद महा कुसलं

हे गुण और ज्ञान के भण्डार, मान-रहित, अजन्मा, व्यापक और माया-रहित राम ! मैं आपको नित्य नमस्कार करता हूँ। आपके भुजदंडों का प्रताप

---

१. हर्ष के साथ।

और बल प्रचण्ड है। दुष्टों के समूहों को नाश करने में आप परम निपुण हैं।

बिनु कारन दीन दयाल हितं। छबि धाम नमामि रमासहितं
भव तारन कारन काजपरं। मन संभव दारुन दोष हरं

आप बिना कारण ही दीनों पर दया तथा उनका कल्याण करने वाले और शोभा के धाम हैं। श्री सीता-सहित आपको नमस्कार है। आप भवसागर से पार करने वाले हैं, कारण (प्रकृति) और कार्य (जगत्) दोनों से परे हैं और मन से उत्पन्न होने वाले कठिन दोषों को हरने वाले हैं।

सर चाप मनोहर त्रोन धरं। जलजारुन लोचन भूपबरं
सुख मंदिर सुंदर श्रीरमनं। मद मार[1] मुधा[2] ममता समनं

आप मनोहर बाण-धनुष और तरकस धारण करने वाले हैं। लाल कमल के समान आपके नेत्र हैं। आप राजाओं में श्रेष्ठ, सुख के धाम, सुन्दर लक्ष्मी-पति तथा मद, काम और झूठी ममता के नाश करने वाले हैं।

अनवद्य अखंड न गोचर गो। सब रूप सदा सब होइ न सो
इत बेद बदंति न दंतकथा। रबिआतप भिन्नमभिन्न जथा

आप दोषों से रहित, अखंड हैं; इन्द्रियों की पहुँच से परे हैं। सदा सर्वरूप होते हुये भी आप वह सब नहीं हैं, ऐसा वेद कहते हैं। यह कोई कोरी कल्पना नहीं है। जैसे सूर्य और सूर्य का प्रकाश अलग-अलग हैं और अलग नहीं भी हैं, वैसे ही आप भी संसार से भिन्न और अभिन्न दोनों ही हैं।

कृतकृत्य बिभो सब बानर ए। निरखंत तवानन सादर ये
धिग जीवन देव सरीर हरे। तव भक्ति बिना भवभूलि परे

हे व्यापक प्रभो ! ये सब बानर कृतार्थ हो गये। ये आदरपूर्वक आपका मुख देख रहे हैं। हे देव ! हे हरि ! हमारे जीवन और देव-शरीर को धिक्कार है, क्योंकि हम आपकी भक्ति के बिना संसार के माया-मोह में भूले पड़े हैं।

अब दीनदयाल दया करिए। मति मोरि बिभेद करी हरिए
जेहि तें बिपरीत क्रिया करिऐ। दुख सो सुखमानिसुखी चरिऐ

---

१. कामदेव। २. व्यर्थ।

अब हे दीनों पर दया करने वाले ! आप दया कीजिये और विभेद करने वाली मेरी उस बुद्धि को हरण कर लीजिये, जिससे मैं विपरीत कर्म करता हूँ और दुःख को सुख मानकर आनन्द से विचरता हूँ।

खलखण्डनमण्डनरम्यछमा[1]। पद पङ्कज सेवित सम्भु उमा
नृपनायक दे बरदानमिदं। चरनांबुज प्रेम सदा सुभदं

आप खलों का नाश करने वाले और पृथ्वी के सुन्दर अलंकार हैं। आपके चरण-कमल शिव और पार्वती द्वारा सेवित हैं। हे राजाओं के महाराज ! यह वरदान दीजिये कि आपके कमल ऐसे सदा कल्याणकारी चरणों में मेरा प्रेम हो।

दो०— बिनय कीन्हि चतुरानन प्रेम पुलक अति गात।
सोभा सिंधु बिलोकत लोचन नाहिं अघात ॥१११

ब्रह्मा ने अत्यन्त प्रेम से पुलकित-शरीर से बहुत प्रकार से विनती की। रामजी का दर्शन करते हुये उनके नेत्र तृप्त ही नहीं होते थे।

तेहि अवसर दसरथ तहँ आए ❀ तनय बिलोकि नयन जल छाए
अनुज सहित प्रभु बन्दन कीन्हा ❀ आसिर्बाद पिताँ तब दीन्हा

उसी समय वहाँ दशरथजी आये। पुत्र को देखकर उनके नेत्रों में जल छा गया। छोटे भाई लक्ष्मण-सहित प्रभु ने उनकी वन्दना की और पिता ने उन्हें आशीर्वाद दिया।

तात सकल तव पुन्य प्रभाऊ ❀ जीतेउँ अजय निसाचर राऊ
सुनि सुत बचन प्रीति अति बाढ़ी ❀ नयन सलिल रोमावलि ठाढ़ी

रामजी ने कहा—हे पिता ! यह सब आपके पुण्यों का प्रभाव है, जो हमने अजेय राक्षसराज को जीत लिया। पुत्र का वचन सुनकर दशरथजी के हृदय में बड़ी प्रीति उत्पन्न हुई। उनके नेत्रों में जल छा गया और रोयें खड़े हो गये।

रघुपति प्रथम प्रेम अनुमाना ❀ चितइ पितहिं दीन्हेउ दृढ़ ग्याना
तातें उमा मोच्छ नहिं पावा ❀ दसरथ भेद भगति मन लावा

रामजी ने पहले के (जीवित काल के) प्रेम का अनुमान कर, पिता की ओर देखकर ही उन्हें अपने स्वरूप का ज्ञान करा दिया। हे उमा ! दशरथजी ने भेद-भक्ति में अपना मन लगाया था, इसी से उन्होंने मोक्ष नहीं पाया।

---

१. पृथ्वी।

सगुनोपासक मोच्छ न लेहीं ❀ तिन्ह कहुँ राम भगति निज देहीं
बारबार करि प्रभुहिं प्रनामा ❀ दसरथ हरषि गये सुरधामा

सगुण-स्वरूप की उपासना करने वाले भक्त इस प्रकार मोक्ष नहीं लेते। उनको रामजी अपनी भक्ति देते हैं। बार-बार प्रभु को प्रणाम करके दशरथजी हर्षित होकर देवलोक को चले गये।

दो॰ अनुज जानकी सहित प्रभु कुसल कोसलाधीस।
सोभा देखि हरषि मन अस्तुति करि सुर ईस ॥११२॥

लक्ष्मण और सीता-सहित कोशलपति प्रभु को सकुशल देखकर तथा उनकी शोभा देखकर इन्द्र मन में अत्यन्त हर्षित होकर स्तुति करने लगा।

छंद–जय राम सोभा धाम। दायक प्रनत बिश्राम।
धृत त्रोन बर सर चाप। भुज दण्ड प्रबल प्रताप॥
जय दूषनारि खरारि। मर्दन निसाचर धारि।
यह दुष्ट मारेउ नाथ। भए देव सकल सनाथ॥

शोभा के धाम, शरणागत को विश्राम देने वाले, श्रेष्ठ तर कसऔर धनुष-बाण धारण करने वाले, प्रबल भुजदण्ड और प्रताप वाले रामजी की जय हो। खर और दूषण के शत्रु तथा राक्षसों की सेना के मर्दन करने वाले आपकी जय हो। हे नाथ! आपने इस दुष्ट को मारा, जिससे सब देवता सनाथ हो गये।

जय हरन धरनी भार। महिमा उदार अपार।
जय रावनारि कृपाल। किए जातुधान बिहाल॥
लंकेस अति बल गर्ब। किए बस्य सुर गन्धर्ब।
मुनि सिद्ध नर खग नाग। हठि पन्थ सब कें लाग॥

हे पृथ्वी का भार हरने वाले! अपार श्रेष्ठ महिमा वाले! आपकी जय हो। हे रावण के शत्रु! हे कृपालु! आपकी जय हो। आपने राक्षसों को तहस-नहस कर दिया। रावण को अपने बल का बड़ा घमण्ड था। उसने देवता और गन्धर्व सभी को अपने वश में कर लिया था। मुनि, सिद्ध, मनुष्य, पक्षी और नाग आदि वह सभी के पीछे हाथ धोकर पड़ गया था।

पर द्रोह रत अति दुष्ट। पायो सो फलु पापिष्ट।
अब सुनहु दीनदयाल। राजीव नयन बिसाल॥
मोहि रहा अति अभिमान। नहि कोउ मोहि समान।
अब देखि प्रभु पद कंज। गत मान प्रद दुख पुञ्ज॥

वह पराये द्रोह में लगा हुआ बड़ा ही दुष्ट था। उस पापी ने वैसा ही फल भी पाया। अब हे दीनों पर दया करने वाले! कमल ऐसे विशाल नेत्रों वाले! सुनिये। मुझे बड़ा अभिमान था कि मेरे समान कोई नहीं। पर अब आपके कमल ऐसे चरणों को देखकर दुख-समूह का देने वाला मेरा वह अभिमान जाता रहा।

कोउ ब्रह्म निर्गुन ध्याव। अव्यक्त जेहि श्रुति गाव।
मोहि भाव कोसल भूप। श्रीराम सगुन सरूप॥
बैदेहि अनुज समेत। मम हृदयँ करहु निकेत।
मोहि जानिये निज दास। दे भक्ति रमानिवास॥

कोई-कोई निर्गुण ब्रह्म का ध्यान करते हैं, जिसे वेद अव्यक्त कहते हैं। पर मुझे तो कोशलराज श्रीरामजी का यह सगुण रूप ही प्रिय लगता है। सीता और छोटे भाई लक्ष्मण-सहित मेरे हृदय को अपना घर बनाइये। हे लक्ष्मी-निवास! मुझे अपना दास समझिये और अपनी भक्ति दीजिये।

दे भक्ति रमानिवास त्रास हरन सरन सुखदायकं।
सुख धाम राम नमामि काम अनेक छबि रघुनायकं॥
सुर बृन्द रञ्जन द्वन्द भञ्जन मनुज तनु अतुलित बलं
ब्रह्मादि सङ्कर सेब्य राम नमामि करुना कोमलं॥

हे रमानिवास! हे भय को हरने वाले! हे शरणागत को सुख देने वाले, मुझे अपनी भक्ति दीजिये। हे सुख के धाम! हे अनेकों कामदेवों की छवि वाले रामजी! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। हे देवताओं के समूह को आनन्द देने वाले, द्वन्द्वों (हर्ष-शोक, जन्म-मरण आदि) के नाश करने वाले, मनुष्य शरीर-

धारी, अपार बल वाले, ब्रह्मा और शिव आदि से सेवित, करुणा से कोमल रामजी ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ ।

दो०-अब करि कृपा बिलोकि मोहि आयसु देहु कृपाल।
काह करौं सुनि प्रिय बचन बोले दीनदयाल ॥११३॥

हे कृपालु ! अब मेरी ओर कृपापूर्वक देखकर आज्ञा दीजिये कि मैं क्या सेवा करूँ ? यह सुनकर दीनों पर दया करने वाले रामजी प्रिय वचन बोले—

सुनु सुरपति कपि भालु हमारे ❁ परे भूमि निसिचरन्हि जे मारे
मम हित लागि तजे इन्ह प्राना ❁ सकल जिआउ सुरेस सुजाना

हे इन्द्र ! सुनो । हमारे बानर और भालू, जिन्हें राक्षसों ने मार डाला है, भूमि पर पड़े हैं । उन्होंने मेरे लाभ के लिये प्राण छोड़े हैं । हे सुजान इन्द्र ! इन सबको जिला दो ।

सुनु खगेस प्रभु कै यह बानी ❁ अति अगाध जानहिं मुनि ज्ञानी
प्रभु सक त्रिभुवन मारि जिआई ❁ केवल सक्रहि दीन्हि बड़ाई

हे गरुड़ ! सुनिये, प्रभु के ये वचन बड़े गूढ़ हैं । ज्ञानी मुनि ही इन्हें समझ सकते हैं । प्रभु त्रिभुवन को मार और जिला सकते हैं । यहाँ तो उन्होंने केवल इन्द्र को बड़प्पन दिया है ।

सुधा बरषि कपि भालु जिआए ❁ हरषि उठे सब प्रभु पहिं आए
सुधा बृष्टि भइ दुहुँ दल ऊपर ❁ जिये भालु कपि नहिं रजनीचर

इन्द्र ने अमृत-वर्षा करके बानर और भालुओं को जिला दिया । सब प्रसन्न होकर उठे और प्रभु के पास आये । अमृत की वर्षा दोनों ही दलों पर हुई, पर भालु और बानर ही जीवित हुये, राक्षस नहीं ।

रामाकार भए तिन्ह के मन ❁ मुक्त भये छूटे भव बंधन
सुर अंसिक सब कपि अरु रीछा ❁ जिये सकल रघुपति कीं ईछा

राक्षसों के मन मरते समय रामाकार (राममय) होने से वे मुक्त हो गये और उनके भव-बन्धन छूट गये । समस्त बानर और भालू तो देवांश थे ही । इसलिये वे सब रामजी की इच्छा से जी उठे ।

राम सरिस को दीन हितकारी ❁ कीन्हे मुकुत निसाचर झारी
खल मल धाम काम रत रावन ❁ गति पाई जो मुनिबर पाव न

रामजी के समान दीनों का हित करने वाला कौन है ? जिन्होंने समस्त निशाचरों को मुक्त कर दिया। दुष्ट, पापों के घर और कामी रावण ने भी वह गति पाई, जिसे मुनिवर भी नहीं पाते।

दो० सुमन बरषि सब सुर चले चढ़ि चढ़ि रुचिर बिमान।
देखि सुअवसर राम पहिं आएउ संभु सुजान ॥

फूल बरसाकर सब देवता सुन्दर-सुन्दर विमानों पर चढ़-चढ़कर चले। तब सुअवसर जानकर शिवजी रामजी के पास आये।

परम प्रीति कर जोरि जुग नलिन नयन भरि बारि।
पुलकित तन गदगद गिराँ बिनय करत त्रिपुरारि ॥

परम प्रेम से दोनों हाथ जोड़कर, दोनों कमल-नेत्रों में जल भरकर, पुलकित शरीर और गद्‌गद् वाणी से शिवजी विनती करने लगे।

मामभिरक्षय रघुकुलनायक। धृत बर चाप रुचिर कर सायक
मोह महा घन पटल प्रभंजन। संसयबिपिन अनल सुररंजन

हे रघुकुल के स्वामी ! हाथों में श्रेष्ठ धनुष और सुन्दर बाण धारण किये हुये रामजी ! मेरी रक्षा कीजिये। हे महामोह-रूपी मेघ-समूह के लिये प्रचंड पवन ! हे संशयरूपी वन के लिये अग्नि के समान ! और देवताओं को आनन्द देने वाले,

अगुन सगुन गुन मंदिर सुन्दर। भ्रम तम प्रबल प्रताप दिवाकर
काम क्रोध मद गज पंचानन। बसहु निरंतर जन मन कानन

निर्गुण, सगुण, गुणों के धाम परम सुन्दर, भ्रमरूपी अन्धकार के लिये प्रबल प्रतापवान् सूर्य ! काम, क्रोध और मदरूपी हाथियों के लिये सिंह के समान, आप इस सेवक के मनरूपी वन में निरन्तर निवास कीजिये।

बिषय मनोरथ पुञ्ज कञ्ज बन। प्रबल तुषार उदार पार मन
भव बारिधि मंदर परमं दर। बारय तारय संसृति दुस्तर

विषय और मनोरथों के समूहरूपी कमल-वन के लिये आप प्रबल पाला हैं। आप उदार और मन से परे हैं। भवसागर को मथने के लिये आप मन्दरा-

चल पर्वत हैं। आप हमारे बड़े भय को दूर कीजिये और हम को दुस्तर संसार-सागर से पार कीजिए।

स्याम गात राजीव बिलोचन। दीन बंधु प्रनतारति मोचन
अनुजजानकीसहित निरंतर। बसहु राम नृप मम उर अंतर
मुनि रंजन महि मंडल मंडन। तुलसिदास प्रभु त्रास बिखंडन

श्याम शरीर वाले, कमल ऐसे नेत्र वाले, दीन-बन्धु, शरणागतों के दुःख-निवारक हे राजा रामचन्द्रजी! आप लक्ष्मण और सीता-सहित मेरे हृदय में सदा निवास कीजिये। आप मुनियों को आनन्दित करने वाले, पृथ्वी-मण्डल के भूषण, तुलसीदास के प्रभु और भय का नाश करने वाले हैं।

दो०— नाथ जबहिं कोसलपुरीं होइहि तिलक तुम्हार।
कृपासिंधु मैं आउब देखन चरित उदार ॥११५॥

हे नाथ! जब अयोध्यापुरी में आपका तिलक होगा, तब हे कृपा के समुद्र! आपका उदार चरित्र देखने आऊँगा।

करि बिनती जब संभु सिधाये ❀ तब प्रभु निकट बिभीषनु आये
नाइ चरन सिरु कह मृदु बानी ❀ बिनय सुनहु प्रभु सारँगपानी

जब शिवजी विनती करके चले गये, तब प्रभु के समीप विभीषण आये। चरणों में सिर नवाकर उन्होंने मीठी वाणी से कहा—हे शार्ङ्ग धनुष के धारण करने वाले प्रभु! मेरी विनती सुनिये—

सकुल सदल प्रभु रावन मारा ❀ पावन जस त्रिभुवन बिस्तारा
दीन मलीन हीन मति जाती ❀ मो पर कृपा कीन्हि बहु भाँती

आपने कुल और सेना-सहित रावण को मारकर त्रिभुवन में अपना पवित्र यश फैलाया। और मुझ दीन, पापी, बुद्धिहीन और जातिहीन पर आपने बहुत प्रकार से कृपा की।

अब जन गृह पुनीत प्रभु कीजे ❀ मज्जन करिअ समर स्रम छीजे
देखि कोस मंदिर संपदा ❀ देहु कृपाल कपिन्ह कहुँ मुदा

हे प्रभु! अब इस दास के गृह को पवित्र कीजिये और वहाँ चलकर स्नान कीजिये, जिससे युद्ध की थकावट मिट जाय। ख़जाना, महल और

सम्पत्ति को देखकर प्रसन्न मन से हे कृपालु ! बानरों को दीजिये ।

सब बिधि नाथ मोहि अपनाइअ ❀ पुनि मोहि सहित अवधपुर जाइअ
सुनत बचन मृदु दीनदयाला ❀ सजल भये दोउ नयन बिसाला

हे नाथ ! मुझे सब प्रकार से अपना लीजिये और फिर हे प्रभु ! मुझे साथ लेकर अयोध्यापुरी को पधारिये । विभीषण के कोमल वचन सुनते ही दीनों पर दया करने वाले रामजी के दोनों विशाल नेत्र सजल हो आये ।

दो०—तोर कोस गृह मोर सब सत्य बचन सुनु भ्रात ।
भरत दसा सुमिरत मोहि निमिष कल्प सम जात ॥

रामजी ने कहा—हे भाई ! तुम्हारा ख़जाना और घर सब मेरा ही है, यह सच है । पर भरत की दशा का स्मरण करके मुझे एक-एक पल एक कल्प के समान बीत रहा है ।

तापस बेष गात कृस जपत निरंतर मोहि ।
देखौं बेगि सो जतन करु सखा निहोरउँ तोहि ॥

तपस्वी के वेष में शरीर से दुर्बल, निरन्तर मेरा नाम जपते हुये भरत को मैं जल्दी देखूँ, ऐसा ही उपाय करो । हे मित्र ! मैं तुम से अनुरोध करता हूँ ।

बीतें अवधि जाउँ जौं जियत न पावउँ बीर[1] ।
सुमिरत अनुज प्रीति प्रभु पुनि पुनि पुलक शरीर ॥(ग)

अवधि बीत जाने पर जाऊँगा, तो भाई को जीता न पाऊँगा । छोटे भाई भरत की प्रीति का स्मरण करके प्रभु का शरीर फिर-फिर पुलकित हो रहा है ।

करेहु कल्प भरि राजु तुम्ह मोहि सुमिरेहु मन माहिं ।
पुनि मम धाम पाइहहु जहाँ संत सब जाहिं ॥(घ)

रामजी फिर कहने लगे—हे विभीषण ! तुम कल्प-भर राज करना, मन में मुझे स्मरण करते रहना, फिर तुम मेरे धाम (बैकुण्ठ) को पा जाओगे, जहाँ सब संत जाते हैं ।

सुनत बिभीषन बचन राम के ❀ हरषि गहे पद कृपाधाम के
बानर भालु सकल हरषाने ❀ गहि प्रभु पद गुन बिमल बखाने

---

१. भाई ।

रामजी के वचन सुनकर विभीषण ने हर्षित होकर कृपा के धाम राम के चरण पकड़ लिये। सभी बानर और भालू हर्षित हो गये और प्रभु के चरण पकड़ कर उनके विमल गुणों का बखान करने लगे।

बहुरि बिभीषन भवन सिधावा ❀ मनि गन बसन बिमान भरावा
लेइ पुष्पक प्रभु आगें राखा ❀ हँसि करि कृपासिंधु तब भाषा

विभीषण फिर महल को गया और उसने मणियों के समूहों और वस्त्रों से विमान को भर लिया। फिर पुष्पक-विमान को ले आकर प्रभु के सामने रक्खा। तब कृपा के समुद्र रामजी ने हँसकर कहा—

चढ़ि बिमान सुनु सखा बिभीषन ❀ गगन जाइ बरषहु पट भूषन
नभ पर जाइ बिभीषन तबहीं ❀ बरषि दिये मनि अंबर सबहीं

हे सखा विभीषण! विमान पर चढ़कर आकाश में जाओ और वस्त्रों और गहनों को बरसा दो। तब आकाश में जाकर विभीषण ने मणियों और वस्त्रों को बरसा दिया।

जोइ जोइ मन भावइ सोइ लेहीं ❀ मनि मुख मेलि डारि कपि देहीं
हँसे रामु श्री अनुज समेता ❀ परम कौतुकी कृपा निकेता

जिसके मन को जो प्रिय लगता है, वह वही लेता है। मणियों को मुँह में लेकर बानर फिर उन्हें उगल देते हैं। रामजी, सीता और लक्ष्मण-सहित हँसने लगे। कृपा के धाम राम बड़े विनोदी हैं।

दो॰ मुनि जेहि ध्यान न पावहिं नेति नेति कह बेद।
कृपासिंधु सोइ कपिन्ह सन करत अनेक बिनोद ॥(क)

मुनि जिसे ध्यान में भी नहीं पाते, वेद जिसे नेति-नेति कहते हैं, वे ही कृपा के समुद्र रामजी बानरों से अनेकों प्रकार के विनोद (हँसी-मज़ाक़) कर रहे हैं।

उमा जोग जप दान तप नाना मख ब्रत नेम।
राम कृपा नहिं करहिं तसि जसि निस्केवल प्रेम ॥(ख)

हे उमा! अनेकों प्रकार के योग, जप, दान, तप, यज्ञ, व्रत और नियम करने पर भी रामजी वैसी कृपा नहीं करते, जैसी अनन्य प्रेम होने पर करते हैं।

भालु कपिन्ह पट भूषन पाए ❀ पहिरि पहिरि रघुपति पहिं आए
नाना जिनिस देखि प्रभु कीसा ❀ पुनि पुनि हँसत कोसलाधीसा

भालुओं और बानरों ने कपड़े और गहने पाये और पहन-पहनकर वे रामजी के पास आये। बानरों की अनेकों जातियाँ देखकर कोशलपति रामजी बार-बार हँस रहे हैं।

चितइ सबन्हि पर कीन्ही दाया ❀ बोले मृदुल बचन रघुराया
तुम्हरें बल मैं रावनु मारा ❀ तिलक बिभीषन कहँ पुनि सारा

रामजी ने सब पर दृष्टि डालकर दया की। फिर वे कोमल वचन बोले—तुम्हारे ही बल से मैंने रावण को मारा और फिर विभीषण का राजतिलक किया।

निज निज गृह अब तुम्ह सब जाहू ❀ सुमिरेहु मोहि डरेहु जनि काहू
बचन सुनत प्रेमाकुल बानर ❀ पानि जोरि बोले सब सादर

अब तुम सब अपने-अपने घर जाओ। मेरा स्मरण करते रहना और किसी से डरना नहीं। यह वचन सुनकर प्रेम में विह्वल होकर बानर हाथ जोड़कर आदर-पूर्वक बोले—

प्रभु जोइ कहहु तुम्हहिं सब सोहा ❀ हमरें होत बचन सुनि मोहा
दीन जानि कपि किए सनाथा ❀ तुम्ह त्रैलोक ईस रघुनाथा

हे स्वामी! आप जो कुछ कह रहे हैं, आपको सब शोभा देता है; पर आपके वचन सुनकर हमको मोह होता है। हे रामजी! आप तो तीनों लोकों के स्वामी हैं। हम बानरों को दीन जानकर ही आपने सनाथ किया था।

सुनि प्रभु बचन लाज हम मरहीं ❀ मसक कतहुँ खगपति हित करहीं
देखि राम रुख बानर रीछा ❀ प्रेम मगन नहिं गृह कै ईछा

प्रभु के वचन सुनकर हम लज्जा से मरे जा रहे हैं। कहीं मच्छर भी गरुड़ का हित कर सकते हैं? रामजी का रुख देखकर बानर और भालू प्रेम में मग्न हो गये। घर जाने की इच्छा किसी की नहीं है।



प्रभु प्रेरित कपि भालु सब राम रूप उर राखि।
हरष बिषाद सहित चले बिनय बिबिध बिधि भाषि॥

परन्तु प्रभु की प्रेरणा से सब बानर और भालू रामजी के रूप को हृदय

में रखकर और अनेकों प्रकार से विनती करके हर्ष और विषाद-सहित घर को चले।

कपिपति नील रीछपति अंगद नल हनुमान।
सहित बिभीषन अपर जे जूथप कपि बलवान॥

सुग्रीव, नील, जाम्बवन्त, अंगद, नल और हनुमान तथा विभीषण-सहित और जो बलवान बानर सेनापति हैं,

कहि न सकहिं कछु प्रेम बस भरि भरि लोचन बारि।
सनमुख चितवहिं राम तन नयन निमेष निवारि।

वे प्रेम-वश कुछ कह नहीं सकते। नेत्रों में जल भर-भरकर, पलक भाँजना छोड़कर वे सम्मुख खड़े रामजी की ओर देख रहे हैं।

अतिसय प्रीति देखि रघुराई ❁ लीन्हे सकल बिमान चढ़ाई
मन महुँ बिप्र चरन सिरु नावा ❁ उत्तर दिसिहिं बिमान चलावा

रामजी ने उनका अत्यन्त प्रेम देखकर सबको विमान पर चढ़ा लिया। और मन ही मन ब्राह्मणों के चरणों को प्रणाम करके उत्तर दिशा की ओर विमान चलाया।

चलत बिमान कोलाहल होई ❁ जय रघुबीर कहइ सबु कोई
सिंहासन अति उच्च मनोहर ❁ श्री समेत प्रभु बैठे ता पर

विमान के चलते समय बड़ा शोर हो रहा है। सब कोई रामचन्द्रजी की जय कह रहे हैं। विमान में एक अत्यन्त ऊँचा सुन्दर सिंहासन है। सीता-सहित प्रभु उस पर जाकर बैठ गये।

राजत राम सहित भामिनी ❁ मेरु सृंग जनु घन दामिनि
रुचिर बिमान चले अति आतुर ❁ कीन्ही सुमन बृष्टि हरषे सुर

पत्नी-सहित रामजी ऐसे सुशोभित हो रहे हैं, मानो सुमेरु की चोटी पर बिजली-सहित श्याम घन। सुन्दर विमान बड़ी तेज़ी से चला। देवता हर्षित हुये और उन्होंने फूलों की वर्षा की।

परम सुखद चलि त्रिबिध बयारी ❁ सागर सर सरि निर्मल बारी
सगुन होहिं सुंदर चहुँ पासा ❁ मन प्रसन्न निर्मल नभ आसा[1]

---

१. दिशा।

अत्यन्त सुख देने वाली तीन प्रकार की हवा चलने लगी। समुद्र, तालाब और नदियों का जल निर्मल हो गया। चारों ओर सुन्दर शकुन होने लगे। सबके मन प्रसन्न हैं, आकाश और दिशायें निर्मल हैं।

कह रघुबीर देखु रन सीता ❁ लछिमन इहाँ हतउ इँद्रजीता
हनूमान अंगद के मारे ❁ रन महिं परे निसाचर भारे
कुंभकरन रावन दोउ भाई ❁ इहाँ हते सुर मुनि दुखदाई

रामजी ने कहा—हे सीते! रणभूमि को देखो। लक्ष्मण ने यहाँ मेघनाद को मारा था। हनुमान और अंगद के मारे हुये बड़े-बड़े राक्षस रणभूमि में पड़े हैं। देवताओं और मुनियों को दुःख देने वाले कुम्भकर्ण और रावण दोनों भाई यहाँ मारे गये थे।

दो०— इहाँ सेतु बाँधेउ अरु थापेउँ सिव सुख धाम।
सीता सहित कृपानिधि संभुहि कीन्ह प्रनाम ॥११९(क)

मैंने यहाँ पुल बाँधा और सुख के धाम शिवजी की स्थापना की। तब कृपा-निधान रामजी ने सीता-सहित शिवजी को प्रणाम किया।

जहँ जहँ करुनासिंधु बन कीन्ह बास बिस्राम।
सकल देखाये जानकिहिं कहे सबन्हि के नाम ॥

वन में जहाँ-जहाँ करुणा के समुद्र रामजी ने निवास और विश्राम किया था, वे सब स्थान उन्होंने जानकी को दिखलाये और सबके नाम बताये।

तुरत बिमान तहाँ चलि आवा ❁ दंडक बन जहँ परम सुहावा
कुंभजादि मुनिनायक नाना ❁ गये राम सब के अस्थाना

विमान तुरन्त ही वहाँ आ पहुँचा, जहाँ परम सुहावना दण्डक वन था। अगस्त्य आदि अनेक सभी मुनियों के स्थानों पर रामजी गये।

सकल रिषिन्ह सन पाइ असीसा ❁ चित्रकूट आयेउ जगदीसा
तहँ करि मुनिन्ह केर संतोषा ❁ चला बिमानु तहाँ ते चोखा

सब ऋषियों से आशीर्वाद पाकर जगत् के स्वामी रामजी चित्रकूट आये। वहाँ उन्होंने मुनियों को सन्तुष्ट किया और विमान वहाँ से आगे बड़े वेग से चला।

बहुरि राम जानकिहि देखाई ❀ जमुना कलि मल हरनि सुहाई
पुनि देखी सुर सरी पुनीता ❀ राम कहा प्रनाम करु सीता

फिर रामजी ने जानकी को कलियुग के पापों को हरने वाली सुहावनी यमुना के दर्शन कराये। फिर उन्होंने पवित्र गंगाजी के दर्शन किये। रामजी ने कहा—सीता! प्रणाम करो।

तीरथपति पुनि देखु प्रयागा ❀ देखत जनम कोटि अघ भागा
देखु परम पावनि पुनि बेनी ❀ हरनि सोक हरि लोक निसेनी
पुनि लखु अवधपुरी अति पावनि ❀ त्रिबिध ताप भवरोग नसावनि

फिर तीर्थराज प्रयाग को देखो, जिसके दर्शन से ही कोटि जन्म के पाप भाग जाते हैं। फिर परम पवित्र त्रिवेणी को देखो, जो शोक को हरने वाली और विष्णु-लोक की सीढ़ी है। फिर अत्यन्त पवित्र अवधपुरी के दर्शन करो, जो तीनों प्रकार के तापों और भवरोगों का नाश करने वाली है।

दो॰ तब रघुनन्दन सिय सहित अवधहिं कीन्ह प्रनाम।
सजल बिलोचन पुलकि तन पुनि पुनि हरषत राम॥

तब सीता-सहित रामजी ने अयोध्या को प्रणाम किया। सजल नेत्रों और पुलकित शरीर से रामजी बार-बार हर्षित हो रहे हैं।

बहुरि त्रिबेनी आइ प्रभु हरषित मज्जनु कीन्ह।
कपिन्ह सहित बिप्रन्ह कहँ दान बिबिध बिधि दीन्ह॥

फिर प्रभु ने त्रिवेणी में आकर हर्षित होकर स्नान किया और बानरों-सहित ब्राह्मणों को अनेकों प्रकार के दान दिये।

प्रभु हनुमंतहि कहा बुझाई ❀ धरि बटु रूप अवधपुर जाई
भरतहिं कुसल हमारि सुनायेहु ❀ समाचार लेइ तुम्ह चलि आयेहु

प्रभु ने हनुमान को समझाकर कहा—तुम ब्रह्मचारी का वेश धरकर अयोध्या को जाओ। भरत को हमारी कुशल सुनाना और उनका समाचार लेकर चले आना।

तुरत पवनसुत गवनत भयेऊ ❀ तब प्रभु भरद्वाज पहिं गयेउ
नाना बिधि मुनि पूजा कीन्ही ❀ अस्तुति करि पुनि आसिष दीन्ही

हनुमान तुरन्त ही चलते हुये। तब प्रभु भरद्वाजजी के यहाँ गये। मुनि ने नाना प्रकार से पूजा की, स्तुति की और फिर आशीर्वाद दिया।

मुनि पद बंदि जुगल कर जोरी ❀ चढ़ि बिमान प्रभु चले बहोरी
इहाँ निषाद सुना प्रभु आये ❀ नाव नाव कहँ लोग बुलाये

दोनों हाथ जोड़कर मुनि के चरणों की वन्दना करके, प्रभु विमान पर चढ़कर फिर चले। यहाँ जब केवट ने सुना कि प्रभु आ गये, तब उसने 'नाव कहाँ है? नाव कहाँ है?' कहकर लोगों को बुलाया।

सुरसरि नाँघि जान जब आवा ❀ उतरेउ तट प्रभु आयसु पावा
तब सीता पूजी सुरसरी ❀ बहु प्रकार पुनि चरनन्हि परी

जब विमान गंगाजी को नाँघ आया, तब प्रभु की आज्ञा पाकर वह किनारे पर उतरा। सीता ने गङ्गाजी की बहुत प्रकार से पूजा की और फिर वह चरणों पर गिरीं।

दीन्हि असीस हरषि मन गंगा ❀ सुंदरि तव अहिवात अभंगा
सुनत गुहा धायेउ प्रेमाकुल ❀ आयेउ निकट परम सुख संकुल

गंगाजी ने प्रसन्न मन से आशीर्वाद दिया—हे सुन्दरी! तुम्हारा सुहाग अखण्ड हो। भगवान् के तट पर उतरने का समाचार सुनते ही केवट प्रेम में विह्वल होकर दौड़ा। परम सुख से परिपूर्ण होकर वह प्रभु के पास आया।

प्रभुहि बिलोकि सहित बैदेही ❀ परेउ अवनि तन सुधि नहिं तेही
प्रीति परम बिलोकि रघुराई ❀ हरषि उठाइ लियो उर लाई

प्रभु को सीता-सहित देखकर वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसे शरीर की सुधि नहीं रही। रामजी ने उसकी अत्यन्त प्रीति देखकर उसे उठाकर हृदय से लगा लिया।

छंद—लियो हृदयँ लाइ कृपा निधान सुजान रायँ रमापती।
बैठारि परम समीप बूझी कुसल सो कर बीनती॥
अब कुसल पद पंकज बिलोकि बिरंचि संकर सेब्य जे।
सुख धाम पूरन काम राम नमामि राम नमामि ते॥

सुजानों के राजा, लक्ष्मीपति, कृपा के भंडार रामजी ने उसे हृदय से लगा

लिया और अत्यंत निकट बैठाकर उसका कुशल-मंगल पूछा। वह विनती करने लगा—आपके चरणकमलों के, जो ब्रह्मा और शिव से सेवित हैं, दर्शन करके अब कुशल है। हे सुख के धाम, पूर्णकाम रामजी! आपको नमस्कार करता हूँ, आपको नमस्कार करता हूँ। [काव्यलिंग अलंकार]

सब भाँति अधम निषाद सो हरि भरत ज्यों उर लाइयो।
मतिमंद तुलसीदास सो प्रभु मोह बस बिसराइयो॥
यह रावनारि चरित्र पावन राम पद रति प्रद सदा।
कामादि हर बिग्यानकर सुर सिद्ध मुनि गावहिं मुदा॥

सब प्रकार से नीच उस निषाद को भगवान् ने भरत की तरह हृदय से लगा लिया। तुलसीदास कहते हैं—इस बुद्धिहीन ने (मैंने) उस प्रभु को मोह-वश भुला दिया। रावण के शत्रु का यह पवित्र चरित्र सदा रामजी के चरणों में प्रीति देने वाला है। यह कामादि (विकारों) का हरने वाला और विशेष ज्ञान उत्पन्न करने वाला है। देवता, सिद्ध और मुनि आनंदित होकर इसे गाते हैं।

दो०— समर बिजय रघुबीर के चरित जे सुनहिं सुजान।
बिजय बिबेक बिभूति नित तिन्हहिं देहिं भगवान॥

जो सुजान लोग रामजी का समर-विजय-चरित्र सुनते हैं, उनको भगवान् सदा विजय, विवेक और विभूति देते हैं।

यह कलिकाल मलायतन मन करि देखु बिचार।
श्री रघुनाथ नाम तजि नाहिन आन अधार॥

अरे मन! विचार करके देख, यह कलियुग पाप का घर है। इसमें श्रीराम-चन्द्रजी के नाम को छोड़कर दूसरा कोई आधार नहीं है।

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने
षष्ठः सोपानः समाप्तः



श्रीगणेशायनमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

रामचरितमानस

उत्तर-काण्ड

श्लोकाः

केकीकण्ठाभनीलं सुरवरविलसद्विप्रपादाब्जचिह्नं
शोभाढ्यं पीतवस्त्रं सरसिजनयनं सर्वदा सुप्रसन्नम्।
पाणौ नाराचचापं कपिनिकरयुतं बन्धुना सेव्यमानं
नौमीड्यं जानकीशं रघुवरमनिशं पुष्पकारूढरामम् ॥१॥

मोर के कंठ की आभा के समान नील-वर्ण, देवताओं में श्रेष्ठ, ब्राह्मण के चरणकमल के चिह्न से सुशोभित, शोभा से पूर्ण, पीताम्बरधारी, कमल-नेत्र, सदा सुप्रसन्न रहने वाले, हाथ में बाण और धनुष लिये हुये, बानर-समूह से युक्त, भाई लक्ष्मण से सेवित, स्तुति किये जाने योग्य, सीतापति, रघुश्रेष्ठ, पुष्पक-विमान पर सवार श्रीरामचन्द्रजी को मैं नमस्कार करता हूँ।

कोशलेन्द्रपदकञ्जमञ्जुलौ कोमलावजमहेशवन्दितौ।
जानकीकरसरोजलालितौ चिन्तकस्य मनभृङ्गसङ्गिनौ ॥२॥

कोशलदेश के स्वामी रामचन्द्रजी के सुन्दर और कोमल दोनों चरण-कमल, जो ब्रह्मा और शिवजी से वन्दित हैं तथा सीता के कर-कमलों से दुलराये हुये हैं और ध्यान धरने वाले के मन-रूपी भौंरे के सदा साथी हैं।

कुन्दइन्दुदरगौरसुन्दरं अम्बिकापतिमभीष्टसिद्धिदम्।
कारुणीककलकञ्जलोचनं नौमि शङ्करमनङ्गमोचनम् ॥३॥

कुन्द (फूल), चन्द्रमा और शंख के समान गोरे और सुन्दर, जगज्जननी श्रीपार्वती के पति, वाञ्छित फल देने वाले, दया करने वाले, सुन्दर कमल ऐसे

नेत्र वाले, कामदेव से छुड़ाने वाले शंकर को मैं नमस्कार करता हूँ। [मालोपमा अलंकार]

दो०। रहा एक दिन अवधि कर अति आरत पुर लोग।
जहँ तहँ सोचहिं नारि नर कृस[1] तन राम बियोग॥

रामचन्द्रजी के लौटने की अवधि का एक ही दिन बाकी रह गया, नगर के लोग बहुत अधीर हो रहे हैं।

सगुन होहिं सुंदर सकल मन प्रसन्न सब केर।
प्रभु आगवन जनाव जनु नगर रम्य चहुँ फेर॥

इतने में सब प्रकार के सुन्दर शकुन होने लगे। सबके मन प्रसन्न हो गये। नगर चारों ओर से रमणीक हो गया। मानो ये चिह्न प्रभु का आना सूचित कर रहे हैं।

कौसल्यादि मातु सब मन अनंद अस होइ।
आयेउ प्रभु सिय अनुज जुत कहन चहत अब कोइ॥

कौशल्या आदि सब माताओं के मन में ऐसा आनन्द हो रहा है, जैसे कोई अभी यह कहना ही चाहता है कि—सीता और लक्ष्मण-सहित प्रभु आ गये।

भरत नयन भुज दच्छिन[2] फरकत बारहिं बार।
जानि सगुन मन हरष अति लागे करन बिचार॥

भरत की दाहिनी आँख और दाहिनी भुजा बार-बार फड़क रही हैं। इसे शुभ शकुन जानकर उनके मन में बड़ा हर्ष हुआ और वे विचार करने लगे।

रहेउ एक दिन अवधि अधारा ❀ समुझत मन दुख भयेउ अपारा
कारन कवन नाथ नहिं आयेउ ❀ जानि कुटिल प्रभु मोहिं बिसरायेउ

प्राणों का आधार-स्वरूप अवधि का अब एक ही दिन रह गया। यह सोचते ही उनके मन में अपार दुख हुआ। क्या कारण है, जो नाथ नहीं आये? जान पड़ता है, मुझे कुटिल समझकर उन्होंने मुझे भुला दिया।

अहह धन्य लछिमन बड़ भागी ❀ राम पदारबिंदु अनुरागी
कपटी कुटिल मोहि प्रभु चीन्हा ❀ तातें नाथ संग नहिं लीन्हा

१. दुबला। २. दाहिना।

अहो ! लक्ष्मण बड़भागी और धन्य हैं, जो रामजी के चरण-कमलों के प्रेमी हैं। प्रभु ने मुझे तो कपटी और कुटिल पहचान लिया, इसी से तो नाथ ने मुझे साथ नहीं लिया।

जौं करनी समुझैं प्रभु मोरी ❀ नहिं निस्तार कलप सत कोरी
जन अवगुन प्रभु मान न काऊ ❀ दीन बंधु अति मृदुल सुभाऊ

यदि प्रभु मेरी करनी पर ध्यान दें, तो सौ करोड़ कल्पों तक भी मेरा उद्धार नहीं। पर प्रभु सेवक का अवगुण कभी नहीं मानते। वे दीनबन्धु हैं और अत्यंत ही कोमल स्वभाव के हैं।

मोरे जियँ भरोस दृढ़ सोई ❀ मिलिहहिं राम सगुन सुभ होई
बीतें अवधि रहहिं जौं प्राना ❀ अधम कवन जग मोहि समाना

अतएव मेरे जी में ऐसा पक्का भरोसा है कि राम अवश्य मिलेंगे, क्योंकि शुभ शकुन हो रहे हैं। अवधि बीतने पर भी यदि मेरे प्राण रह गये, तो जगत में मेरे समान नीच कौन होगा ? [समुच्चय अलंकार]

दो०— **राम बिरह सागर महँ भरत मगन मन होत।**
बिप्र रूप धरि पवन सुत आइ गयेउ जनु पोत[1] ॥(क)

रामजी के विरह-समुद्र में भरत का मन डूब रहा था, इतने में पवनपुत्र हनुमान ब्राह्मण का रूप धरकर ऐसे आ गये, जैसे नाव आ गई हो।

बैठे देखि कुसासन जटा मुकुट कृस गात।
राम राम रघुपति जपत स्रवत नयन जलजात[2] ॥(ख)

हनुमान ने भरत को कुश के आसन पर बैठे देखा। जटा ही का उनका मुकुट है, शरीर दुर्बल है, वे राम-राम रघुपति जप रहे हैं और उनके कमल ऐसे नेत्रों से आँसू बह रहे हैं।

देखत हनूमान अति हरषेउ ❀ पुलक गात लोचन जल बरषेउ
मन महँ बहुत भाँति सुख मानी ❀ बोलेउ स्रवन सुधा सम बानी

हनुमान उन्हें देखकर अत्यन्य हर्षित हुये। उनका शरीर पुलकायमान हो आया और उनके नेत्रों से आँसू बह चले। मन में बहुत प्रकार से सुख मानकर

१. नाव। २. कमल।

हनुमान कानों के लिये अमृत के समान वचन बोले—

जासु बिरहँ सोचहु दिन राती ❀ रटहु निरंतर गुन गन पाँती
रघुकुल तिलक सुजन सुखदाता ❀ आयेउ कुसल देव मुनि त्राता

जिनके विरह में रात-दिन आप चिन्तित हैं, और जिनके गुणों के समूहों की पंक्तियाँ आप निरंतर रट रहे हैं, वे ही रघुकुल के तिलक, सुजनों को सुख देने वाले और देवताओं और मुनियों के रक्षक रामजी सकुशल आ गये।

रिपु रन जीति सुजस सुर गावत ❀ सीता अनुज सहित प्रभु आवत
सुनत बचन बिसरे सब दूखा ❀ तृषावंत[1] जिमि पाइ पियूषा

शत्रु को रण में जीतकर सीता और लक्ष्मण-सहित प्रभु आ रहे हैं, देवता उनका सुयश गा रहे हैं। यह वचन सुनते ही भरत सारे दुख भूल गये, मानो प्यासा अमृत पाकर प्यास के दुख को भूल जाय।

को तुम्ह तात कहाँ तें आए ❀ मोहि परम प्रिय बचन सुनाए
मारुत सुत मैं कपि हनुमाना ❀ नाम मोर सुनु कृपानिधाना

भरत ने पूछा—हे तात ! तुम कौन हो ? और कहाँ से आये हो ? मुझे तुमने बहुत ही प्रिय वचन सुनाये। हनुमान ने कहा—मैं पवन का पुत्र बानर हूँ। हे कृपानिधान ! सुनिये, मेरा नाम हनुमान है।

दीनबंधु रघुपति कर किंकर[2] ❀ सुनत भरत भेंटेउ उठि सादर
मिलत प्रेम नहिं हृदयँ समाता ❀ नयन स्रवत जल पुलकित गाता

मैं दीनबन्धु रामजी का दास हूँ। यह सुनते ही भरत उठकर आदर-पूर्वक हनुमान को गले लगकर मिले। भेंटते हुये प्रेम हृदय में नहीं समाता। नेत्रों से आँसू बह रहे हैं और शरीर पुलकायमान है।

कपि तव दरस सकल दुख बीते ❀ मिले आजु मोहि राम पिरीते
बार बार बूझी कुसलाता ❀ तो कहुँ देउँ काह सुनु भ्राता

हे बानर ! तुम्हारे दर्शन से मेरे समस्त दुःख समाप्त हो गये। आज मुझे प्यारे रामजी मिल गये। भरत ने बार-बार कुशल पूछी। हे भाई ! सुनो, मैं तुम्हें क्या दूँ ?

---

१. प्यासा। २. सेवक।

एहि संदेस सरिस जग माहीं ❀ करि बिचार देखेउँ कछु नाहीं
नाहिंन तात उरिन मैं तोही ❀ अब प्रभु चरित सुनावहु मोही

इस सन्देश के समान जगत् में कुछ नहीं है। मैंने यह विचार करके देख लिया है। हे तात! मैं तुमसे उऋण नहीं हूँ। अब मुझे प्रभु का हाल सुनाओ।

तब हनुमंत नाइ पद माथा ❀ कहे सकल रघुपति गुन गाथा
कहु कपि कबहुँ कृपाल गोसाईं ❀ सुमिरहिं मोहि दास की नाईं

तब हनुमान ने भरत के चरणों में मस्तक नवाकर रामजी की सारी गुण-गाथा कही। भरत ने पूछा—हे हनुमान! बताओ, कृपालु स्वामी रामजी कभी मुझे अपने दास की तरह स्मरण भी करते हैं?

छन्द—निज दास ज्यों रघुबंस भूषन कबहुँ मम सुमिरन कर्‌यो
सुनि भरत बचन बिनीत अति कपि पुलकितन चरनन्हि पर्‌यो
रघुबीर निज मुख जासु गुन गन कहत अग जग नाथ जो
काहे न होइ बिनीत परम पुनीत सदगुन सिंधु सो

रघुकुल के भूषण रामजी क्या कभी अपने दास की तरह मेरा स्मरण करते रहे हैं? भरत के अत्यन्त नम्र वचन सुनकर हनुमान पुलकित शरीर होकर उनके चरणों पर गिर पड़े। हनुमान ने सोचा—जो चर और अचर जगत के स्वामी हैं, वे रामचन्द्रजी अपने मुख से जिनके गुण-समूहों का वर्णन करते हैं, वे भरत ऐसे विनम्र, परम पवित्र और सद्‌गुणों के समुद्र क्यों न हों?

दो०— राम प्रानप्रिय नाथ तुम्ह सत्य बचन मम तात।
पुनि पुनि मिलत भरत सुनि हरष न हृदयँ समात॥

हनुमान ने कहा—हे नाथ! हे तात! सुनिये। मैं सत्य कहता हूँ। आप रामजी को प्राणों के समान प्रिय हैं। यह सुनकर भरत बार-बार मिलते हैं। हर्ष उनके हृदय में समाता नहीं है।

सो०— भरत चरन सिरु नाइ तुरित गयेउ कपि राम पहिं।
कही कुसल सब जाइ हरषि चलेउ प्रभु जान चढ़ि॥

भरत के चरणों में सिर नवाकर हनुमान तुरन्त ही रामजी के पास लौट

गये और जाकर उन्होंने सब कुशल-समाचार कहा। तब प्रभु हर्षित होकर विमान पर चढ़कर चले।

हरषि भरत कोसलपुर आये ❀ समाचार सब गुरहिं सुनाये
पुनि मंदिर महँ बात जनाई ❀ आवत नगर कुसल रघुराई

इधर भरत हर्षित होकर अयोध्यापुरी में आये, और उन्होंने गुरुजी को सब समाचार सुनाया। फिर महलों में ख़बर भेजी कि रामचन्द्रजी सकुशल नगर को आ रहे हैं।

सुनत सकल जननीं उठि धाईं ❀ कहि प्रभु कुसल भरत समुझाईं
समाचार पुरबासिन्ह पाए ❀ नर अरु नारि हरषि सब धाए

ख़बर सुनते ही सब मातायें उठ दौड़ीं। भरत ने प्रभु का कुशल-समाचार कहकर सबको समझाया। नगर-निवासियों ने यह समाचार पाया तो स्त्री और पुरुष सभी हर्षित होकर दौड़े।

दधि दुर्बा रोचन[1] फल फूला ❀ नव तुलसी दल मङ्गल मूला
भरि भरि हेम[2] थार भामिनी ❀ गावत चलीं सिंधुर[3] गामिनी

दही, दूब, गोरोचन, फल, फूल, और मंगल के मूल नवीन तुलसी के दल सोने के थालों से भर-भरकर हथिनी की-सी चाल वाली सौभाग्यवती स्त्रियाँ लेकर गाती हुई चलीं।

जो जैसेहिं तैसेहिं उठि धावहिं ❀ बाल बृद्ध कहँ संग न लावहिं
एक एकन्ह कहँ बूझहिं भाई ❀ तुम्ह देखे दयाल रघुराई

जो जिस दशा में हैं, वे वैसे ही उठ दौड़ते हैं। बालकों और बुड्ढों को भी कोई साथ नहीं लेता, एक दूसरे से पूछते हैं—भाई! तुमने दयालु रामजी को देखा।

अवधपुरी प्रभु आवत जानी ❀ भई सकल सोभा कै खानी
भइ सरजू अति निर्मल नीरा ❀ बहइ सुहावन त्रिबिध समीरा

प्रभु को आते जानकर अयोध्यापुरी सब शोभाओं की खान हो गई। सरयू अत्यन्त निर्मल जल वाली हो गई। तीनों प्रकार की सुहावनी वायु बहने लगी।

---

१. गोरोचन। २. सोना। ३. हाथी।

दो०-हरषित गुर परिजन अनुज भूसुर बृन्द समेत।
चले भरत अति प्रेम मन सनमुख कृपानिकेत ॥

गुरु वशिष्ठजी, कुटुम्बी, छोटे भाई शत्रुघ्न तथा ब्राह्मणों के समूह के साथ हर्षित होकर भरत अत्यन्त प्रेमयुक्त मन से कृपा के धाम रामजी के सामने चले।

बहुतक चढ़ीं अटारिन्ह निरखहिं गगन बिमान।
देखि मधुर सुर[1] हरषित करहिं सुमङ्गल गान ॥

बहुत-सी स्त्रियाँ अटारियों पर चढ़ी आकाश में विमान देख रही हैं, देखकर, हर्षित होकर, वे मीठे स्वर से सुन्दर मङ्गल गा रही हैं।

राका[2] ससि रघुपति पुर सिंधु देखि हरषान।
बढ़ेउ कोलाहल करत जनु नारि तरङ्ग समान ॥

रामजी पूर्णिमा के चन्द्रमा हैं। अवधपुर एक समुद्र है। वह उस पूर्ण चन्द्र को देखकर हर्षित हो रही है। और वह शोर करता हुआ बढ़ रहा है। स्त्रियाँ उसकी तरङ्गों के समान लगती हैं। [सम अभेद रूपक अलंकार]

इहाँ भानुकुल कमल दिवाकर ❀ कपिन्ह देखावत नगर मनोहर
सुनु कपीस अंगद लंकेसा ❀ पावन पुरी रुचिर यह देसा

इधर सूर्यकुल रूपी कमल के सूर्य रामचन्द्रजी बानरों को मनोहर नगर दिखला रहे हैं। रामजी कहते हैं—हे सुग्रीव! अंगद और विभीषण! सुनो। यह पुरी पवित्र है और देश सुन्दर है।

जद्यपि सब बैकुंठ बखाना ❀ बेद पुरान बिदित जगु जाना
अवध सरिस प्रिय मोहि न सोऊ ❀ यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ

यद्यपि सबने वैकुण्ठ की प्रशंसा की है, यह वेदों और पुराणों में भी प्रकट है और जगत् भी जानता है; पर मुझे वह भी अवधपुरी के समान प्रिय नहीं है। यह भेद कोई-कोई (विरले ही) जानते हैं।

जनमभूमि मम पुरी सुहावनि ❀ उत्तर दिसि बह सरजू पावनि
जा मज्जन तें बिनहिं प्रयासा ❀ मम समीप नर पावहिं बासा

१. स्वर। २. पूर्णिमा।

यह सुहावनी पुरी मेरी जन्म-भूमि है। इसके उत्तर ओर पवित्र सरयू बहती है, जिसमें स्नान करने से मनुष्य बिना प्रयत्न किये ही मेरे समीप निवास पा जाते हैं।

अति प्रिय मोहि इहाँ के बासी ❀ मम धामदा पुरी सुख रासी
हरषे सब कपि सुनि प्रभु बानी ❀ धन्य अवध जो राम बखानी

यहाँ के निवासी मुझे अत्यन्त प्यारे हैं। यह पुरी सुख की राशि और मेरे परम धाम (मुक्ति) को देने वाली है। प्रभु की वाणी सुनकर सब बानर हर्षित हुये कि जिस अवध का बखान स्वयं रामजी ने किया, वह अवश्य ही धन्य है।

दो०— **आवत देखि लोग सब कृपासिंधु भगवान।**
नगर निकट प्रभु प्रेरेउ उतरेउ भूमि बिमान॥

कृपा के समुद्र भगवान् रामचन्द्रजी ने सब लोगों को आते देखा तो प्रभु ने नगर के समीप उतरने की प्रेरणा की, तब विमान भूमि पर उतरा।

उतरि कहेउ प्रभु पुष्पकहि तुम्ह कुबेर पहिं जाहु।
प्रेरित राम चलेउ सो हरष बिरहु अति ताहु॥

उतरकर प्रभु ने पुष्पक विमान को कहा कि तुम कुबेर के पास जाओ। रामजी की आज्ञा से वह चला। उसे हर्ष भी है और अत्यन्त दुःख भी।

आये भरत संग सब लोगा ❀ कृस तन श्री रघुबीर बियोगा
बामदेव बसिष्ठ मुनिनायक ❀ देखे प्रभु महि धरि धनु सायक

भरत के साथ सब लोग आये। रामचन्द्रजी के वियोग से सबके शरीर दुर्बल हो रहे हैं। प्रभु ने वामदेव, वशिष्ठ आदि मुनिवरों को देखा तो उन्होंने धनुष-बाण पृथ्वी पर रखकर,

धाइ धरे गुर चरन सरोरुह ❀ अनुज सहित अति पुलक तनोरुह[1]
भेंटि कुसल बूझी मुनिराया ❀ हमरें कुसल तुम्हारिहिं दाया

भाई-सहित दौड़कर गुरुजी के चरण-कमल पकड़ लिये। उनके शरीर के रोम-रोम अत्यन्त पुलकित हो रहे हैं। मुनिराज वशिष्ठ ने उन्हें गले लगाकर कुशल पूछी। उन्होंने कहा—आप ही की दया में हमारी कुशल है।

१. रोम, रोवाँ।

सकल द्विजन्ह मिलि नायेउ माथा ❁ धरम धुरंधर रघुकुल नाथा
गहे भरत पुनि प्रभु पद पंकज ❁ नमत जिन्हहिं सुर मुनि संकर अज

धर्म की धुरी धारण करने वाले रघुकुल के स्वामी रामजी ने सब ब्राह्मणों से मिलकर उन्हें मस्तक नवाया। फिर भरत ने प्रभु के चरण-कमल पकड़े, जिन्हें सुर, मुनि और ब्रह्मा भी नमस्कार करते हैं।

परे भूमि नहिं उठत उठाये ❁ बर[1] करि कृपासिंधु उर लाये
स्यामल गात रोम भये ठाढ़े ❁ नव राजीव नयन जल बाढ़े

भरत पृथ्वी पर पड़े हैं, उठाये से उठते नहीं। तब कृपा के समुद्र रामजी ने बल करके उन्हें उठाया और छाती से लगा लिया। रामजी के श्याम शरीर पर रोयें खड़े हो गये। नवीन कमल ऐसे नेत्रों में जल की बाढ़ आ गई।

छंद-राजीव लोचन स्रवत जल तन ललित पुलकावलि बनी
अति प्रेम हृदय लगाइ अनुजहिं मिले प्रभु त्रिभुवन धनी॥
प्रभु मिलत अनुजहिं सोह मो पहिं जाति नहिं उपमा कही।
जनु प्रेम अरु सिंगार तनु धरि मिले बर सुषमा लही॥

कमल ऐसे नेत्रों से जल बह रहा है। सुन्दर शरीर में पुलकावली शोभा दे रही है। तीनों भुवनों के स्वामी रामजी छोटे भाई भरत को अत्यन्त प्रेम से हृदय से लगाकर मिले। छोटे भाई से मिलते समय प्रभु ऐसे शोभायमान लगते हैं कि उसकी उपमा मुझसे कही नहीं जा रही है। मानो प्रेम और शृङ्गार शरीर धारण करके मिले और उत्तम शोभा को प्राप्त हुये।

बूझत कृपानिधि कुसल भरतहिं बचन बेगि न आवई।
सुनु सिवा सो सुख बचन मन ते भिन्न जान जो पावई॥
अब कुसल कोसलनाथ आरत जानि जन दरसन दियो।
बूड़त बिरह बारीस[2] कृपानिधान मोहि कर गहि लियो॥

कृपा के भण्डार रामजी भरत से कुशल पूछते हैं, पर भरत के मुख से वचन शीघ्र निकलते नहीं हैं। हे पार्वती! सुनो, वह सुख वचन और मन से परे है। वही जानता है, जो उसे पाता है। भरत ने कहा—हे कोशलनाथ! आपने

१. बल। २. समुद्र।

जो इस दास को दुखी जानकर दर्शन दिया, इससे अब कुशल है। मुझ विरह के समुद्र में डूबते हुये को कृपा-निधान आपने हाथ पकड़कर बचा लिया।

दो०—पुनि प्रभु हरषि सत्रुहन भेंटे हृदयँ लगाइ।
लछिमन भरत मिले तब परम प्रेम दोउ भाइ॥५॥

फिर प्रभु हर्षित होकर शत्रुघ्न को हृदय से लगाकर मिले। तब लक्ष्मण और भरत दोनों भाई अत्यन्त प्रेम-पूर्वक मिले।

भरतानुज लछिमन पुनि भेंटे ❀ दुसह बिरह संभव दुख मेटे
सीता चरन भरत सिरु नावा ❀ अनुज समेत परम सुख पावा

फिर भरत के छोटे भाई शत्रुघ्न और लक्ष्मण गले लगकर मिले और इस प्रकार विरह से उत्पन्न असह्य दुःख को दूर किया। भाई-सहित भरत ने सीता के चरणों में सिर नवाया और अत्यन्त सुख प्राप्त किया।

प्रभु बिलोकि हरखे पुरबासी ❀ जनित[1] बियोग बिपति सब नासी
प्रेमातुर सब लोग निहारी ❀ कौतुक कीन्ह कृपाल खरारी

प्रभु को देखकर नगर-निवासी हर्षित हुये। वियोग से उत्पन्न उनके सब दुःख नष्ट हो गये। सब लोगों को प्रेम-विह्वल देखकर, खर राक्षस के शत्रु कृपालु रामजी ने एक चमत्कार किया—

अमित रूप प्रगटे तेहि काला ❀ जथाजोग मिलि सबहिं कृपाला
कृपादृष्टि रघुबीर बिलोकी ❀ किये सकल नर नारि बिसोकी

उसी समय कृपालु रामजी असंख्य रूपों में प्रकट हो गये और सबसे यथा-योग्य मिले। राम ने सब स्त्री-पुरुषों को कृपा की दृष्टि से देखकर शोक से रहित कर दिया।

छन महि सबहिं मिले भगवाना ❀ उमा मरम यह काहु न जाना
एहि बिधि सबहिं सुखी करि रामा ❀ आगे चले सील गुन धामा
कौसल्यादि मातु सब धाईं ❀ निरखि बच्छ जनु धेनु लवाईं

भगवान् क्षणभर में सबसे मिल लिये। हे उमा! यह रहस्य किसी ने नहीं जाना। इस प्रकार शील और गुणों के धाम रामजी सबको सुखी करके आगे

१. उत्पन्न।

बढ़े। कौशल्या आदि मातायें दौड़ीं; जैसे नई ब्याई हुई गौवें बछड़ों को देखकर दौड़ती हैं।

छंद—जनु धेनु बालक बच्छ तजि गृहँ चरन बन परबस गईं
दिन अंत पुर रुख स्त्रवत थन हुंकार करि धावत भईं
अति प्रेम प्रभु सब मातु भेंटी बचन मृदु बहु बिधि कहे
गइ बिषम बिपति बियोगभव तिन्ह हरष सुख अगनित लहे

जैसे नई ब्याई हुई गौवें छोटे बच्चों को घर पर छोड़कर परवश होकर वन में चरने गई हों और दिन का अंत होने पर गाँव की ओर हुंकार करके, थन से दूध गिराती हुई दौड़कर आई हों। प्रभु ने अत्यन्त प्रेम से सब माताओं से भेंट की और बहुत प्रकार के मधुर वचन कहे। वियोग से उत्पन्न विषम विपत्ति जाती रही और उन सबने अगणित सुख और हर्ष प्राप्त किये। [द्वितीय असंगति अलंकार]

दो०— भेंटेउ तनय सुमित्रा राम चरन रति जानि।
रामहिं मिलत कैकई हृदयँ बहुत सकुचानि॥

सुमित्रा अपने पुत्र लक्ष्मण की रामजी के चरणों में प्रीति जानकर उनसे मिलीं। रामजी से मिलते समय कैकेयी हृदय में बहुत सकुचाई।

लछिमन सब मातन्ह मिलि हरषे आसिष पाइ।
कैकइ कहँ पुनि पुनि मिले मन कर छोभु न जाइ॥

लक्ष्मण भी सब माताओं से मिलकर और आशीर्वाद पाकर हर्षित हुये। कैकेयी से वे फिर-फिर मिले, परन्तु उनके मन का विक्षोभ मिटता ही नहीं।

सासुन्ह सबन्हि मिली बैदेही ❀ चरनन्हि लागि हरषु अति तेही
देहिं असीस बूझि कुसलाता ❀ होहु अचल तुम्हार अहिवाता

सीता सब सासुओं से मिली। उनके चरणों से लगकर उन्हें अत्यन्त हर्ष हुआ। सासुएँ कुशल पूछकर आशीर्वाद देती हैं कि तुम्हारा सुहाग अचल हो।

सब रघुपति मुख कमल बिलोकहिं ❀ मङ्गल जानि नयन जल रोकहिं
कनक थार आरती उतारहिं ❀ बार बार प्रभु गात निहारहिं

सब मातायें रामजी का कमल ऐसा मुख देख रही हैं। पर मंगल का समय

जानकर नेत्रों का जल रोके रखती हैं। सोने के थाल से आरती उतारती हैं और बार-बार प्रभु के अंगों की ओर देखती हैं।

नाना भाँति निछावरि करहीं ❀ परमानंद हरष उर भरहीं
कौसल्या पुनि पुनि रघुबीरहिं ❀ चितवति कृपासिंधु रनधीरहिं

वे अनेक प्रकार से निछावरें करती हैं और हृदय में परम आनन्द तथा हर्ष भरती हैं। कौशल्या बार-बार कृपा के समुद्र और रणधीर राम को देख रही हैं।

हृदयँ बिचारति बारहिं बारा ❀ कवन भाँति लंकापति मारा
अति सुकुमार जुगल मेरे बारे ❀ निसिचर सुभट महाबल भारे

बार-बार हृदय में विचार करती हैं कि इन्होंने लंका-पति रावण को कैसे मारा होगा। मेरे दोनों बच्चे बड़े ही सुकुमार हैं, और राक्षस बड़े भारी योद्धा और बलवान थे।



लछिमन अरु सीता सहित प्रभुहिं बिलोकति मातु।
परमानंद मगन मन पुनि पुनि पुलकित गातु॥७॥

माताएँ लक्ष्मण और सीता-सहित प्रभु रामचन्द्रजी को देखती हैं। सबके मन परम आनन्द में डूबे हुये हैं और बार-बार उनके शरीर में रोमाञ्च हो आता है।

लंकापति कपीस नल नीला ❀ जामवंत अंगद सुभ सीला
हनुमदादि सब बानर बीरा ❀ धरे मनोहर मनुज सरीरा

विभीषण, सुग्रीव, नल, नील, जाम्बवंत, अंगद और हनुमान आदि सब उत्तम स्वभाव वाले वीर बानरों ने मनुष्यों के मनोहर शरीर धारण कर लिये।

भरत सनेह सील ब्रत नेमा ❀ सादर सब बरनहिं अति प्रेमा
देखि नगर बासिन्ह कै रीती ❀ सकल सराहहिं प्रभु पद प्रीती

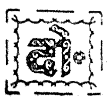
वे सब भरत के स्नेह, शील, व्रत और नियमों का बहुत प्रेम से आदर-पूर्वक बखान कर रहे हैं। नगर-वासियों की रीति-भाँति देखकर वे सब प्रभु के पद में उनकी प्रीति की सराहना कर रहे हैं।

पुनि रघुपति सब सखा बोलाये ❀ मुनि पद लागहु सकल सिखाये
गुर बसिष्ठ कुलपूज्य हमारे ❀ इन्ह की कृपा दनुज रन मारे

फिर रामचन्द्रजी ने सब सखाओं को बुलाया और सबको सिखाया कि मुनि के चरणों में लगो। ये हमारे कुल के पूज्य गुरु वशिष्ठजी हैं। इन्हीं की कृपा से हमने युद्ध में राक्षस मारे हैं।

ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे ❀ भये समर सागर कहुँ बेरे[1]
मम हित लागि जनम इन्ह हारे ❀ भरतहु तें मोहि अधिक पिआरे
सुनि प्रभु बचन मगन सब भये ❀ निमिष निमिष उपजत सुख नये

फिर वशिष्ठजी से उन्होंने कहा—हे मुनि ! सुनिये, ये सब मेरे सखा हैं। ये युद्ध-रूपी समुद्र में मेरे लिये बेड़े (जहाज़) के समान हुये थे। मेरे लाभ के लिये इन्होंने जीवन हार दिया है। ये मुझे भरत से भी अधिक प्रिय हैं। प्रभु के वचन सुनकर सब प्रेम और आनन्द में मगन हो गये। इस प्रकार प्रत्येक क्षण में नये-नये सुख उत्पन्न हो रहे हैं।



कौसल्या के चरनन्हि पुनि तिन्ह नायेउ माथ।
आसिष दीन्ही हरषि तुम्ह प्रिय मम जिमि रघुनाथ॥

फिर उन लोगों ने कौशल्या के चरणों में सिर नवाया। कौशल्या ने हर्षित होकर आशीर्वाद दिया कि तुम मुझे ऐसे प्रिय हो, जैसे रामचन्द्र।

सुमन वृष्टि नभ संकुल भवन चले सुखकंद।
चढ़ी अटारिन्ह देखहिं नगर नारि नर बृन्द॥

आकाश से फूलों की खूब वृष्टि हुई। सुख के मूल (या मेघ) रामचन्द्रजी राजभवन को चले। नगर के स्त्री-पुरुषों के समूह अटारियों पर चढ़े हुये उन्हें देख रहे हैं।

कंचन कलस बिचित्र सँवारे ❀ सबहिं धरे सजि निज निज द्वारे
बंदनवार पताका केतू ❀ सबन्हि बनाए मङ्गल हेतू

विलक्षण ढंग से सँवारे हुये सोने के कलश सब अपने-अपने द्वार पर धरे हुये थे। सबने मङ्गल-सूचक वन्दनवार, पताका और झण्डियाँ लगाईं।

बीथी सकल सुगन्ध सिंचाई ❀ गजमनि रचि बहु चौक पुराई
नाना भाँति सुमङ्गल साजे ❀ हरषि नगर निसान बहु बाजे

समस्त गलियाँ सुगन्धित जल से सिंचाई गईं। गज-मुक्ताओं से रचकर

१. बेड़ा, जहाज।

बहुत-से चौक पुराये गये। अनेकों प्रकार के सुन्दर मङ्गल-साज सजाये गये। हर्ष-पूर्वक नगर में बहुत-से डंके बजने लगे।

जहँ तहँ नारि निछावरि करहीं ❀ देहिं असीस हरष उर भरहीं
कंचन थार आरती नाना ❀ जुवती सजें करहिं सुभ गाना

जहाँ-तहाँ स्त्रियाँ निछावर कर रही हैं, आशीर्वाद देती हैं और हृदय में हर्ष भरती हैं। सोने के थालों में अनेकों प्रकार की आरती सजाकर युवती स्त्रियाँ मंगल-गीत गा रही हैं।

करहिं आरती आरतिहर कें ❀ रघुकुल कमल बिपिन दिनकर कें
पुर सोभा संपति कल्याना ❀ निगम सेष सारदा बखाना
तेउ यह चरित देखि ठगि रहहीं ❀ उमा तासु गुन नर किमि कहहीं

दुखों को हरने वाले और सूर्यकुलरूपी कमल-वन के सूर्य की वे आरती कर रही हैं। पुर की शोभा, संपत्ति और कल्याण का बखान वेद, शेष और सरस्वती करते हैं। वे भी यह चरित्र देखकर ठगे-से रह जाते हैं। हे उमा! तब भला, उनके गुणों को मनुष्य कैसे कह सकते हैं?

दो०— नारि कुमुदिनी अवध सर रघुपति बिरह दिनेस।
अस्त भये बिगसत भईं निरखि राम राकेस ॥(क)

स्त्रियाँ कुईं हैं, अयोध्या सरोवर, और राम का विरह सूर्य है। विरहरूपी सूर्य के अस्त होने पर रामरूपी पूर्ण चन्द्र को देखकर वे विकसित हो गईं।

होहिं सगुन सुभ बिबिध बिधि बाजहिं गगन निसान।
पुर नर नारि सनाथ करि भवन चले भगवान ॥(ख)

अनेकों प्रकार के शुभ शकुन हो रहे हैं। आकाश में डंके बज रहे हैं। पुर के पुरुषों और स्त्रियों को कृतार्थ करके भगवान् रामचन्द्रजी महल को चले।

प्रभु जानी कैकई लजानी ❀ प्रथम तासु गृह गये भवानी
ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा ❀ पुनि निज भवन गमन हरि कीन्हा

प्रभु ने समझा कि कैकेयी लजाई हुई हैं, इससे वे पहले-पहल उन्हीं के महल को गये। उन्हें समझा-बुझाकर बहुत सुख दिया। फिर हरि ने अपने भवन में प्रवेश किया।

कृपासिंधु जब मंदिर गये ❀ पुर नर नारि सुखी सब भये
गुर बसिष्ठ द्विज लिये बोलाई ❀ आज सुघरी सुदिन सुभदाई

कृपा के समुद्र रामजी जब महल में गए, तब पुर के स्त्री-पुरुष सब बहुत सुखी हुए। गुरु वशिष्ठजी ने ब्राह्मणों को बुला लिया और कहा—आज शुभ घड़ी और सुन्दर दिन सभी शुभ-योग है।

सब द्विज देहु हरषि अनुसासन ❀ रामचन्द्र बैठहिं सिंघासन
मुनि बसिष्ठ के बचन सुहाए ❀ सुनत सकल बिप्रन्ह अति भाए

आज सब ब्राह्मण हर्षित होकर आज्ञा दीजिये कि रामचन्द्रजी सिंहासन पर बैठें। वशिष्ठ मुनि के सुहावने प्रिय वचन सुनते ही सब ब्राह्मणों को बहुत ही प्रिय लगे।

कहहिं बचन मृदु बिप्र अनेका ❀ जग अभिराम राम अभिषेका
अब मुनिबर बिलंब नहिं कीजै ❀ महाराज कहँ तिलक करीजै

वे सब अनेकों ब्राह्मण कोमल वचन कहने लगे कि रामजी का राज्याभिषेक सम्पूर्ण जगत् को आनन्द देने वाला है। हे मुनिवर! अब देरी न कीजिए और महाराज का राजतिलक कीजिए।

दो०— तब मुनि कहेउ सुमंत्र सन सुनत चलेउ हरषाइ।
रथ अनेक बहु बाजि गज तुरत सँवारेउ जाइ॥(क)

तब मुनि ने सुमंत्र से कहा। वह सुनते ही हर्षित होकर चले और जाकर तुरंत उन्होंने अनेकों रथ, घोड़े और हाथी सजाये।

जहँ तहँ धावन[1] पठइ पुनि मङ्गल द्रब्य[2] मँगाइ।
हरष समेत बसिष्ठ पद पुनि सिरु नायेउ आइ॥(ख)

उन्होंने जहाँ-तहाँ हरकारों को भेजकर और मंगल-द्रव्य मँगाकर फिर हर्ष के साथ आकर वशिष्ठजी के चरणों में सिर नवाया।

अवधपुरी अति रुचिर बनाई ❀ देवन्ह सुमन बृष्टि झरि लाई
राम कहा सेवकन्ह बोलाई ❀ प्रथम सखन्ह अन्हवावहु जाई

अयोध्यापुरी बहुत ही सुन्दर सजायी गयी। देवताओं ने फूलों की वर्षा की

---

१. हरकारा। २. वस्तु।

झड़ी लगा दी। रामजी ने सेवकों को बुलाकर कहा कि तुम लोग पहले मेरे सखाओं को लेजाकर स्नान कराओ।

सुनत बचन जहँ तहँ जन धाये ❀ सुग्रीवादि तुरत अन्हवाये
पुनि करुनानिधि भरतु हँकारे ❀ निज कर राम जटा निरुआरे

रामजी के वचन सुनते ही सेवक जहाँ-तहाँ दौड़े। उन्होंने तुरन्त ही सुग्रीवादि को स्नान कराया। फिर करुणा-निधान रामजी ने भरत को बुलाया और अपने हाथों से उन्होंने उनकी जटा सुलझाई।

अन्हवाये प्रभु तीनउ भाई ❀ भगत बछल कृपाल रघुराई
भरत भाग्य प्रभु कोमलताई ❀ सेष कोटि सत सकहिं न गाई

फिर भक्तवत्सल कृपालु प्रभु रामचन्द्रजी ने तीनों भाइयों को स्नान कराया। भरत का भाग्य और प्रभु की कोमलता अरबों शेष भी नहीं गा सकते।

पुनि निज जटा राम बिबराये ❀ गुर अनुसासन मागि नहाये
करि मज्जन प्रभु भूषन साजे ❀ अंग अनंग कोटि छबि लाजे

फिर रामजी ने अपनी जटायें खोलीं और गुरु की आज्ञा लेकर स्नान किया। स्नान करके प्रभु ने आभूषण धारण किये। उनके अंगों की छवि से करोड़ों कामदेवों की शोभा लजा जाती है।

दो०— सासुन्ह सादर जानकिहि मज्जन तुरत कराइ।
दिब्य बसन बर भूषन अँग अँग सजे बनाइ॥

सासुओं ने जानकी को तुरन्त ही आदर-सहित स्नान कराके उनके अंग-अंग में दिव्य वस्त्र और उत्तम गहने अच्छी तरह सजा दिये।

राम बाम दिसि सोभति रमा रूप गुन खानि।
देखि मातु सब हरषीं जनम सुफल निज जानि॥

रामजी के बाईं ओर रूप और गुणों की खान लक्ष्मी-रूपिणी सीता शोभित हो रही हैं। यह देखकर सब मातायें अपना जन्म सफल समझकर हर्षित हुईं।

सुनु खगेस तेहि अवसर ब्रह्मा सिव मुनि बृन्द।
चढ़ि बिमान आये सब सुर देखन सुखकंद॥

हे गरुड़ ! सुनिये। उस समय ब्रह्मा, शिव और मुनियों के समूह तथा विमानों पर चढ़कर सब देवता आनन्द-कन्द रामचन्द्रजी के दर्शन के लिये आये।

प्रभु बिलोकि मुनि मन अनुरागा ❀ तुरत दिव्य सिंघासन माँगा
रबि सम तेज सो बरनि न जाई ❀ बैठे राम द्विजन्ह सिरु नाई

प्रभु को देखकर मुनि (वशिष्ठजी) के मन में प्रेम भर आया। उन्होंने तुरन्त ही दिव्य सिंहासन मँगवाया। सिंहासन का तेज सूर्य के समान था। उसका वर्णन नहीं हो सकता। ब्राह्मणों को मस्तक नवाकर रामजी उस पर विराज गये।

जनकसुता समेत रघुराई ❀ पेखि प्रहरषे मुनि समुदाई
बेद मंत्र तब द्विजन्ह उचारे ❀ नभ सुर मुनि जय जयति पुकारे

सीता-सहित रामजी को देखकर मुनियों का समूह अत्यन्त हर्षित हुआ। तब ब्राह्मणों ने वेद-मन्त्रों का उच्चारण किया। आकाश में देवता और मुनि 'जय हो, जय हो' की पुकार करने लगे।

प्रथम तिलक बसिष्ठ मुनि कीन्हा ❀ पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा
सुत बिलोकि हरषीं महतारी ❀ बार बार आरती उतारी

सबसे पहले वशिष्ठ मुनि ने तिलक किया। फिर उन्होंने सब ब्राह्मणों को तिलक करने की आज्ञा दी। पुत्र को राज-सिंहासन पर देखकर मातायें हर्षित हुईं और उन्होंने बार-बार आरती उतारी।

बिप्रन्ह दान बिबिध बिधि दीन्हे ❀ जाचक सकल अजाचक कीन्हे
सिंघासन पर त्रिभुवन साईं ❀ देखि सुरन्ह दुंदुभीं बजाईं

ब्राह्मणों को अनेकों प्रकार के दान दिये और समस्त याचकों को अयाचक बना दिया। त्रिभुवन के स्वामी को सिंहासन पर देखकर देवताओं ने नगाड़े बजाये।

छंद—नभ दुन्दुभीं बाजहिं बिपुल गंधर्ब किन्नर गावहीं।
नाचहिं अपछरा बृन्द परमानंद सुर मुनि पावहीं॥

भरतादि अनुज बिभीषनांगद हनुमदादि समेत ते।
गहे छत्र चामर ब्यजन[1] धनु असि चर्म सक्ति बिराजते॥

आकाश में बहुत-से नगाड़े बज रहे हैं। गंधर्व और किन्नर गा रहे हैं। झुंड के झुंड अप्सरायें नाच रही हैं। देवता और मुनि परमानन्द पा रहे हैं। भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न, विभीषण, अंगद, हनुमान और सुग्रीव आदि क्रमशः चँवर, पंखा, धनुष, तलवार, ढाल और शक्ति धारण किए हुए सुशोभित हैं। (यथासंख्य अलंकार)

श्री सहित दिनकर बंस भूषन काम बहु छबि सोहई।
नव अंबुधर[2] बर गात अंबर पीत[3] सुर मन मोहई॥
मुकुटांगदादि बिचित्र भूषन अङ्ग अङ्गन्हि प्रति सजे।
अम्भोज नयन बिसाल उर भुज धन्य नर निरखंत जे॥

सीता-सहित सूर्यकुल के भूषण रामजी के शरीर में अनेकों कामदेवों की छवि शोभा दे रही है। नवीन मेघ के समान सुन्दर शरीर पर पीताम्बर देवगणों के मन को भी मोह रहा है। मुकुट, बाजूबन्द आदि अद्भुत आभूषण अंग-अंग में सजे हुये हैं। रामजी के कमल ऐसे नेत्र, विशाल छाती और भुजाओं के जो मनुष्य दर्शन करते हैं वे धन्य हैं।

दो०—वह सोभा समाज सुख कहत न बनइ खगेस।
बरनहिं सारद सेष श्रुति सो रस जान महेस॥१२(क)

हे गरुड़! वह शोभा, वह समाज और वह सुख मुझसे कहते नहीं बनता। सरस्वती, शेष और वेद निरन्तर उसका वर्णन करते हैं, और उसका रस शिवजी ही जानते हैं।

भिन्न भिन्न अस्तुति करि गये सुर निज निज धाम।
बंदी बेष बेद तब आए जहँ श्रीराम॥१२(ख)॥

सब देवता अलग-अलग स्तुति करके अपने-अपने लोक को गए। तब भाँटों का वेष धारण करके वेद वहाँ आए, जहाँ श्रीराम थे।

---

१. पंखा। २. मेघ। ३. पीताम्बर।

प्रभु सर्बग्य कीन्ह अति आदर कृपानिधान।
लखेउ न काहूँ मरम कछु लगे करन गुन गान॥१२(ग)

सर्वज्ञ और कृपा के धाम प्रभु ने उनका बहुत ही आदर किया। यह रहस्य किसी ने कुछ भी नहीं जाना। वे गुणगान करने लगे।

छन्द—जय सगुन निर्गुन रूप रूप अनूप भूप सिरोमने।
दसकन्धरादि प्रचण्ड निसिचर प्रबल खल भुज बल हने॥
अवतार नर संसार भार बिभंजि दारुन दुख दहे।
जय प्रनतपाल दयाल प्रभु संजुक्त सक्ति नमामहे॥

हे सगुण और निर्गुण-रूप! हे अनुपम रूप वाले! हे राजाओं के शिरोमणि रामजी! आपकी जय हो। आपने रावण आदि प्रचण्ड राक्षसों और बड़े बली दुष्टों को अपने भुजबल से मार डाला। आपने मनुष्य का अवतार लेकर संसार के भार को नष्ट करके अत्यन्त कठोर दुखों को जला दिया। हे शरणागतों के पालने वाले, हे दयालु प्रभो! आपकी जय हो। मैं शक्ति-सहित (सीता-सहित) आपको नमस्कार करता हूँ।

तव बिषम माया बस सुरासुर नाग नर अग जग हरे।
भव पन्थ भ्रमत अमित दिवस निसि काल कर्म गुनन्हि भरे
जे नाथ करि करुना बिलोके त्रिबिध दुख ते निर्बहे।
भव खेद छेदन दच्छ[1] हम कहुँ रच्छ राम नमामहे॥

हे हरि! आपकी विषम माया के वश में देवता, असुर, नाग, नर और चर, अचर सब हैं। वे सब काल, कर्म और गुणों से भरे हुये रात-दिन संसार के आवागमन के मार्ग में भटक रहे हैं। इनमें से जिनको आपने दया करके देखा, वे तीनों प्रकार के दुखों से छुटकारा पा गये। हे संसार के दुखों को नष्ट करने में कुशल राम! हमारी रक्षा कीजिये। हम आपको नमस्कार करते हैं।

जे ग्यान मान बिमत्त तव भव हरनि भक्ति न आदरी।
ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी॥

---

१. दक्ष, कुशल।

बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे।
जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भव नाथ सो समरामहे॥

जो मिथ्या ज्ञान के अभिमान में मतवाले हैं और संसार के दुःखों को हरने वाली आपकी भक्ति का आदर नहीं करते, हे हरि! वे देव-दुर्लभ पद पाकर भी उस पद से गिर पड़ते हैं, यह हम देख रहे हैं। जो सब प्रकार की आशायें छोड़कर आप पर विश्वास करके आपके दास हो रहते हैं, वे केवल आपका नाम ही जपकर बिना प्रयास ही भवसागर से तर जाते हैं। हे नाथ! ऐसे आपका हम स्मरण करते हैं।

जे चरन सिव अज पूज्य रज सुभ परसि मुनिपतिनी तरी।
नख निर्गता मुनि बन्दिता त्रैलोक पावन सुरसरी॥
ध्वज कुलिस अंकुस कञ्ज जुत बन फिरत कंटक किन[1] लहे
पद कञ्ज द्वन्द मुकुन्द राम रमेस नित्य भजामहे॥

आपके जो चरण शिव और ब्रह्मा द्वारा पूज्य हैं, जिनके कल्याणकारी रज का स्पर्श करके मुनि-पत्नी अहल्या तर गई, जिनके नख से तीनों लोकों को पवित्र करने वाली और मुनियों से वंदित देवनदी गंगाजी निकली हैं; जिन चरणों में ध्वजा, बज्र, अंकुश और कमल के चिन्ह हैं, तथा जिनमें वन में फिरते समय काँटे चुभ जाने से घट्ठे पड़ गये हैं, हे मुकुन्द! हे राम! हे रमापति! हम आपके उन्हीं दोनों चरण-कमलों को नित्य भजते रहते हैं।

अव्यक्त[2] मूलमनादि तरु त्वच चारि[3] निगमागम भने।
षट कंध[4] साखा पञ्च बीस[5] अनेक पर्न[6] सुमन[7] घने॥
फल जुगल[8] बिधि कटु मधुर बेलि[9] अकेलि जेहि आस्रित रहे।
पल्लवत फूलत नवल नित संसार बिटप नमामहे॥

वेदों और शास्त्रों ने कहा है कि जिसका मूल प्रकृति है, जो अनादि है,

---

१. घट्ठा। २. प्रकृति। ३. चार त्वचा=धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। ४. षट स्कंध=पाँच तत्त्व और मन। ५. पचीस शाखा=दश इन्द्रियाँ और दश इन्द्रियों के दश विषय तथा मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार और जीव। ६. पत्ते=वासनायें। ७. सुमन=संकल्प-विकल्प। ८. कटु-मधुर फल=सुख-दुःख। ९. अकेली लता=माया।

जिसके चार त्वचायें (खाल), छः तने, पचीस शाखायें और अनेकों पत्ते और बहुत से फूल बताये हैं, जिसमें कड़वे और मीठे दो प्रकार के फल लगे हैं, जिस पर एक ही लता है, जो उसी के आश्रित रहती है और जिसमें नित्य नवीन पत्ते और फूल निकलते रहते हैं। ऐसे संसार-वृक्ष-स्वरूप आपको मैं नमस्कार करता हूं। [सांगरूपक अलंकार]

जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभवगम्य मनपर ध्यावहीं।
ते कहहुँ जानहुँ नाथ हम तव सगुन जस नित गावहीं॥
करुनायतन प्रभु सदगुनाकर देव यह बर माँगहीं।
मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं॥

ब्रह्म अजन्मा है, अद्वैत है; केवल अनुभव से जाना जाता है और मन से परे है। ऐसा कहकर जो उस ब्रह्म का ध्यान करते हैं, वे ऐसा कहें और जानें। हम तो हे नाथ ! आपके सगुण रूप का यश ही नित्य गाते हैं। हे करुणा के धाम ! हे सद्गुणों की खान ! हे देव ! हम यह वर माँगते हैं कि मन, वचन और कर्म से विकारों को छोड़कर आपके चरणों ही में हम प्रेम करें।

दो० सब के देखत बेदन्ह बिनती कीन्हि उदार।
अंतर्धान भये पुनि गये ब्रह्म आगार॥ (क)

सब के देखते हुये वेदों ने यह श्रेष्ठ विनती की। फिर वे अन्तर्द्धान हो गये और ब्रह्मलोक को चले गये।

बैनतेय सुनु सम्भु तब आए जहँ रघुबीर।
बिनय करत गदगद गिरा पूरित पुलक सरीर॥ (ख)

हे गरुड़ ! सुनिये, तब शिवजी वहाँ आये, जहाँ रामजी थे, और गद्गद् वाणी से वे विनय करने लगे। उनका शरीर पुलकावली से पूर्ण हो गया।

छंद-जय राम रमा रमनं समनं। भव ताप भयाकुल पाहि जनं
अवधेस सुरेस रमेस बिभो। सरनागत माँगत पाहि प्रभो
दससीस बिनासन बीस भुजा। कृत दूरि महा महि भूरि रुजा
रजनीचर बृन्द पतङ्ग रहे। सर पावक तेज प्रचण्ड दहे

हे राम ! हे रमारमण ! हे संसार के ताप को नष्ट करने वाले राम ! आपकी जय हो। आवागमन के भय से व्याकुल इस सेवक की रक्षा कीजिये। हे अयोध्यानाथ ! हे देवताओं के स्वामी ! हे रमापति, हे विभो ! मैं शरणागत आपसे यही माँगता हूँ। हे प्रभो ! मेरी रक्षा कीजिये। हे दस सिर और बीस भुजाओं वाले रावण का विनाश करने वाले ! पृथ्वी के महारोग को दूर करने वाले रामजी ! राक्षसों के समूह रूपी जो पतंगे थे, वे आपके बाणरूपी अग्नि के प्रचण्ड तेज से भस्म हो गये।

महि मंडल मंडन चारुतरं। धृत सायक चाप निषंग वरं
मद मोह महा ममता रजनी। तमपुंज दिवाकर तेज अनी
मनजात किरात निपात किये। मृग लोग कुभोग सरेन हिये
हति नाथ अनाथन्हि पाहि हरे। बिषया वन पाँवर भूलि परे

आप पृथ्वी-मण्डल के अत्यन्त सुन्दर भूषण हैं; आप श्रेष्ठ बाण, धनुष और तरकस धारण किये हुये हैं। मद, मोह और महा ममता-रूपी रात्रि के अन्धकार-समूह को नाश करने के लिये आप सूर्य के तेजोमय किरण-समूह हैं। कामदेवरूपी भील ने मनुष्यरूपी हरिणों के हृदय में कुभोगरूपी बाण मारकर उन्हें गिरा दिया है। उसे मारकर हे नाथ ! विषयरूपी वन में भूले पड़े हुये इन पामर अनाथ जीवों की रक्षा कीजिये।

बहु रोग बियोगन्हि लोग हए। भवदंघ्रि निरादर के फल ए
भवसिंधु अगाध परे नर ते। पद पंकज प्रेम न जे करते
अति दीन मलीन दुखी नितहीं। जिन्ह कें पद पंकज प्रीति नहीं
अवलंब भवंत कथा जिन्हके। प्रिय संत अनंत सदा तिन्हके

लोग बहुत-से रोगों और वियोगों से मारे हुये हैं। ये आपके चरणों के निरादर के फल हैं। जो आपके चरण-कमलों में प्रेम नहीं करते वे मनुष्य अथाह भवसागर में पड़े हैं। जिन्हें आपके चरण-कमलों में प्रीति नहीं है, वे अत्यन्त दीन, मलिन और सदा दुःखी रहते हैं। और जिन्हें आपकी कथा ही का आधार है, उन्हें संत और भगवान् सदा अत्यन्त प्रिय लगते हैं।

नहिं राग न लोभ न मान मदा। तिन्ह कें सम बैभव वा बिपदा
एहि तें तव सेवक होत मुदा। मुनि त्यागत जोग भरोस सदा
करि प्रेम निरंतर नेम लियें। पदपंकज सेवत सुद्ध हियें
सम मानि निरादर आदरहीं। सब संत सुखी बिचरंति मही

उन्हें न राग है, न लोभ, न मान और न मद; उन्हें सम्पत्ति और विपत्ति समान हैं, इसी से मुनि लोग प्रसन्नता के साथ आपके सेवक हो जाते हैं और साधन का भरोसा सदा के लिये त्याग देते हैं। वे निरंतर नियम लेकर प्रेम-पूर्वक शुद्ध हृदय से आपके चरण-कमलों की सेवा करते रहते हैं। अपमान और सम्मान को समान मानकर वे सब संत सुखी होकर पृथ्वी पर विचरण करते हैं।

मुनि मानस पङ्कज भृङ्ग भजे। रघुबीर महा रनधीर अजे
तव नाम जपामि नमामि हरी। भव रोग महा गद[1] मान अरी
गुनसील कृपा परमायतनं। प्रनमामि निरंतर श्रीरमनं
रघुनंद निकंदय द्वंदघनं। महिपाल बिलोकय दीन जनं

हे मुनियों के मनरूपी कमल के भ्रमर! हे महारणधीर और अजेय रामजी! मैं आपको भजता हूँ। हे हरि! आपका नाम जपता हूँ, और आपको नमस्कार करता हूँ। आप जन्म-मरण रूपी रोग की औषधि और अभिमान के शत्रु हैं। आप गुण, शील और कृपा के परम स्थान हैं। हे लक्ष्मीरमण! मैं निरन्तर आपको प्रणाम करता हूँ। हे रघुनन्दन! मेरे द्वंद्व-समूह का नाश कीजिये। हे पृथ्वी की पालना करने वाले राजन्! आप इस दीन जन पर भी दृष्टि डालिये।

दो०
बार बार बर माँगउँ हरषि देहु श्रीरंग।
पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग ॥

मैं बार-बार यही वरदान माँगता हूँ, कि मुझे आपके चरण-कमलों में भक्ति और आपके भक्तों का सदा सत्संग प्राप्त हो। हे लक्ष्मीपति! हर्षित होकर मुझे यही दीजिये।

---

1. रोग।

बरनि उमापति राम गुन हरषि गये कैलास।
तब प्रभु कपिन्ह दिवाये सब बिधि सुखप्रद बास॥

उमा-पति महादेवजी रामजी का गुण वर्णन करके हर्षित होकर कैलाश को चले गये। तब प्रभु ने बानरों को सब प्रकार से सुख देने वाले डेरे दिलवाये।

सुनु खगपति यह कथा पावनी ❀ त्रिविध ताप भव भय दावनी
महाराज कर सुभ अभिषेका ❀ सुनत लहहिं नर बिरति बिवेका

हे गरुड़! यह पवित्र कथा, जो तीनों प्रकार के तापों और जन्म-मृत्यु के भय का नाश करने वाली है, सुनिये। महाराज रामचन्द्रजी के कल्याणमय राज्याभिषेक श्रवणकर मनुष्य विषयों से विरक्ति और विवेक पाते हैं।

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं ❀ सुख संपति नाना बिधि पावहिं
सुर दुर्लभ सुख करि जग माहीं ❀ अन्तकाल रघुपति पुर जाहीं

जो मनुष्य इसे किसी कामना से सुनते और जो गाते हैं, वे अनेकों प्रकार के सुख और सम्पत्ति पाते हैं। वे जगत् में देव-दुर्लभ सुखों को भोगकर अन्त में रामजी के पुर को जाते हैं।

सुनहिं बिमुक्त बिरत अरु बिषई ❀ लहहिं भगति गति संपति नई
खगपति राम कथा मैं बरनी ❀ स्वमति बिलास त्रास दुख हरनी

इसे जो जीवन्मुक्त, विरक्त और विषयी सुनते हैं, वे भक्ति, मुक्ति और नवीन सम्पत्ति पाते हैं। हे गरुड़! मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार राम-कथा वर्णन की, जो भय और दुख को हरने वाली है।

बिरति बिबेक भगति दृढ़ करनी ❀ मोह नदी कहँ सुन्दर तरनी
नित नव मंगल कोसलपुरी ❀ हरषित रहहिं लोग सब कुरी[1]

यह विरक्ति, विवेक और भक्ति को दृढ़ करने वाली है और मोहरूपी नदी के लिये सुन्दर नौका है। अयोध्यापुरी में नित्य नवीन मंगलोत्सव होते हैं। सभी वर्गों के लोग आनन्दित रहते हैं।

नित नइ प्रीति राम पद पंकज ❀ सबके जिन्हहिं नमत सिव मुनि अज
मङ्गन बहु प्रकार पहिराये ❀ द्विजन्ह दान नाना बिधि पाये

रामजी के चरण-कमलों में सबकी नित्य नवीन प्रीति है, जिन चरणों को

१. वर्ग।



रामचरित मानस



वह शोभा समाज सुख, कहत न बनइ खगेस ।
बरनइ सारद सेष स्रुति, सो रस जान महेश ।।

शिव, मुनि और ब्रह्मा भी नमस्कार करते हैं। मँगतों को बहुत प्रकार के वस्त्राभूषण पहनाये गये, और ब्राह्मणों ने नाना प्रकार के दान पाये।

दो०- ब्रह्मानन्द मगन कपि सब कें प्रभु पद प्रीति।
जात न जाने दिवस तिन्ह गए मास षट बीति॥

बानर सब ब्रह्मानन्द में मग्न हैं। प्रभु के चरणों में सबकी प्रीति है। उन्होंने दिन जाते जाने ही नहीं, और छः महीने बीत गये।

बिसरे गृह सपनेहुँ सुधि नाहीं ❀ जिमि पर द्रोह सन्त मन माहीं
तब रघुपति सब सखा बोलाए ❀ आइ सबन्हि सादर सिरु नाए

उन लोगों को अपने घर तो भूल ही गये। उन्हें स्वप्न में भी घर की याद नहीं आती, जैसे संत पुरुषों के मन में पराया द्रोह याद नहीं आता। तब रामचन्द्रजी ने सब सखाओं को बुलाया। सबने आकर आदर-सहित सिर नवाया।

परम प्रीति समीप बैठारे ❀ भगत सुखद मृदु बचन उचारे
तुम्ह अति कीन्हि मोरि सेवकाई ❀ मुख पर केहि बिधि करौं बड़ाई

रामजी ने परम प्रीति से उन्हें पास बैठाया और भक्तों को सुख देने वाले कोमल वचन कहे—तुम लोगों ने मेरी बड़ी सेवा की। मुँह पर कैसे तुम्हारी बड़ाई करूँ?

तातें मोहि तुम्ह अति प्रिय लागे ❀ मम हित लागि भवन सुख त्यागे
अनुज राज सम्पति बैदेही ❀ देह गेह परिवार सनेही

मेरे हित के लिये तुम लोगों ने अपना गृह-सुख छोड़ा, इससे तुम मुझे बहुत ही प्रिय लग रहे हो। छोटे भाई, राज्य, सम्पत्ति, सीता, देह, घर और कुटुम्ब और मित्र,

सब मम प्रिय नहिं तुम्हहिं समाना ❀ मृषा न कहउँ मोर यह बाना
सब कें प्रिय सेवक यह नीती ❀ मोरें अधिक दास पर प्रीती

ये सभी मुझे प्रिय हैं, पर तुम्हारे समान नहीं। मैं झूठ नहीं कह रहा हूँ, यह मेरा स्वभाव है। नीति की बात तो यह है कि सेवक सभी को प्यारे लगते हैं, पर मेरा तो दास पर विशेष प्रेम रहता है।

दो०- अब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दृढ़ नेम।
सदा सर्बगत सर्ब हित जानि करहु अति प्रेम॥

हे सखागण ! अब सब लोग घर जाओ। वहाँ दृढ़ नियम से मुझे भजते रहना। मुझे सदा सर्वव्यापक और सबका कल्याणकारी जानकर अत्यन्त प्रेम करना।

सुनि प्रभु बचन मगन सब भये ❀ को हम कहाँ बिसरि तन गये
एकटक रहे जोरि कर आगे ❀ सकहिं न कछु कहि अति अनुरागे

प्रभु के वचन सुनकर सब प्रेम में मग्न हो गये। हम कौन हैं ? और कहाँ हैं ? वे यह भूल गये। यहाँ तक कि शरीर की सुध-बुध भी भूल गये। वे हाथ जोड़कर एकटक देखते हुये आगे खड़े ही रह गये। अत्यन्त प्रेम के कारण वे कुछ कह नहीं सकते।

परम प्रेम तिन्ह कर प्रभु देखा ❀ कहा बिबिध बिधि ग्यान-बिसेषा
प्रभु सनमुख कछु कहन न पारहिं ❀ पुनि पुनि चरन सरोज निहारहिं

प्रभु ने उनका अत्यन्त प्रेम देखा। तब उन्होंने अनेक प्रकार से विशेष ज्ञान का उपदेश दिया। प्रभु के सन्मुख वे कुछ कह नहीं सकते। बार-बार वे प्रभु के चरण-कमलों को निहारते हैं।

तब प्रभु भूषन बसन मँगाये ❀ नाना रङ्ग अनूप सुहाये
सुग्रीवहि प्रथमहि पहिराये ❀ बसन भरत निज हाथ बनाये

तब प्रभु ने गहने और वस्त्र मँगाये, जो अनेक रंगों के और अनुपम सुन्दर थे। भरत ने पहले सुग्रीव को अपने हाथ से अच्छी तरह सँवारकर पहनाया।

प्रभु प्रेरित लछिमन पहिराये ❀ लङ्कापति रघुपति मन भाये
अंगद बैठि रहा नहिं डोला ❀ प्रीति देखि प्रभु ताहि न बोला

प्रभु की प्रेरणा से लक्ष्मण ने विभीषण को भूषण-वस्त्र पहनाये, जो रामजी को बहुत प्रिय लगे। अंगद बैठा ही रहा। वह अपनी जगह से नहीं हिला-डुला। उसकी प्रीति देखकर रामजी ने उसे नहीं बुलाया।

दो० जामवन्त नीलादि सब पहिराये रघुनाथ।
हियँ धरि राम रूप सब चले नाइ पद माथ ॥१७(क)॥

रामजी ने जाम्बवंत और नील आदि को भूषण-वस्त्र स्वयं पहनाये। सब रामजी के रूप को हृदय में धारण करके उनके चरणों में सिर नवाकर चले।

तब अंगद उठि नाइ सिरु सजल नयन कर जोरि।
अति बिनीत बोलेउ बचन मनहु प्रेम रस बोरि॥१७(ख)

तब अङ्गद उठकर, सिर नवाकर, सजल नेत्रों से हाथ जोड़कर अति विनीत तथा प्रेम के रस में डुबाये हुये वचन बोले—

सुनु सर्बग्य कृपा सुख सिंधो ❀ दीन दयाकर आरत बंधो
मरती बार नाथ मोहि बाली ❀ गयेउ तुम्हारेहिं कोंछें घाली

हे सर्वज्ञ! हे कृपा और सुख के समुद्र! हे दीनों पर दया करने वाले! हे दुखियों के बंधु! हे नाथ! मरते समय बालि मुझे आपके ही कोछ (गोद) में डाल गया था।

असरन सरन बिरुद संभारी ❀ मोहि जनि तजहु भगत हितकारी
मोरें तुम्ह प्रभु गुर पितु माता ❀ जाउँ कहाँ तजि पद जलजाता

हे अशरण को शरण देने वाले! हे भक्तों के हित करने वाले! अपना विरद (बाना) स्मरण करके मुझे न छोड़िये। आप ही मेरे स्वामी, गुरु, पिता और माता हैं। मैं आपके चरण-कमलों को छोड़कर कहाँ जाऊँ?

तुम्हइ बिचारि कहहु नरनाहा ❀ प्रभु तजि भवन काजु मम काहा
बालक ग्यान बुद्धि बल हीना ❀ राखहु सरन जानि जन दीना

हे महाराज! आप ही विचारकर कहिये, प्रभ को छोड़कर घर में मेरा काम ही क्या है? इस ज्ञान, बुद्धि और बल से हीन बालक और दीन जन को शरण में रखिये।

नीचि टहल गृह कै सब करिहउँ ❀ पद पंकज बिलोकि भव तरिहौं
अस कहि चरन परेउ प्रभु पाही ❀ अब जनि नाथ कहहु गृह जाही

मैं आपके घर की नीची से नीची सेवा करूँगा और आपके चरण-कमलों का दर्शन करके भवसागर से तर जाऊँगा। हे नाथ! मेरी रक्षा कीजिये। ऐसा कहकर वह रामजी के चरणों पर गिर पड़ा और फिर बोला—हे नाथ! अब यह न कहिये कि तू घर जा।



अङ्गद बचन बिनीत सुनि रघुपति करुनासींव।
प्रभु उठाइ उर लायेउ सजल नयन राजीव॥१८(क)॥

अङ्गद के विनम्र वचन सुनकर करुणा की सीमा प्रभु रामचन्द्रजी ने उसे उठाकर छाती से लगा लिया। रामजी के कमल ऐसे नेत्रों में जल भर आया।

निज उर माल बसन मनि बालि तनय पहिराय।
बिदा कीन्हि भगवान तब बहु प्रकार समुझाइ॥

तब भगवान् ने अपने गले की माला, वस्त्र और मणि बालि-पुत्र अङ्गद को पहनाकर और बहुत प्रकार से समझाकर उसकी विदाई की।

भरत अनुज सौमित्रि समेता ❀ पठवन चले भगत कृत चेता
अंगद हृदय प्रेम नहिं थोरा ❀ फिरि फिरि चितव राम कीं ओरा

भक्तों के उपकार को ध्यान में रखकर भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मण-सहित रामजी उन सबको पहुँचाने चले। अंगद के हृदय में थोड़ा प्रेम नहीं है, वह फिर-फिर रामजी की ओर देखता है।

बार बार कर दंड प्रनामा ❀ मन अस रहन कहहिं मोहि रामा
राम बिलोकनि बोलनि चलनी ❀ सुमिरि सुमिरि सोचत हँसि मिलनी

वह बार-बार दंड प्रणाम करता है। उसके मन में ऐसा आता है कि अब रामजी मुझे रहने को कहना ही चाहते हैं। रामजी का कृपा-पूर्वक देखना, बोलना, व्यवहार और हँसकर मिलने की रीति को बार-बार याद कर-करके वे सब सोचते हैं।

प्रभु रुख देखि बिनय बहु भाखी ❀ चलेउ हृदय पद पङ्कज राखी
अति आदर सब कपि पहुँचाये ❀ भाइन्ह सहित राम फिरि आये

किन्तु प्रभु की इच्छा समझकर, बहुत प्रकार से विनय के शब्द कहकर, वे सब हृदय में रामजी के चरण-कमलों को रखकर चले। अत्यन्त आदर से सब बानरों को पहुँचाकर भाइयों-सहित रामजी वापस आये।

तब सुग्रीव चरन गहि नाना ❀ भाँति बिनय कीन्ही हनुमाना
दिन दस करि रघुपति पद सेवा ❀ पुनि तव चरन देखिहउँ देवा

तब सुग्रीव के चरण पकड़कर हनुमान ने अनेक प्रकार से विनती की और कहा—हे देव! दस दिन रामजी के चरणों की सेवा करके फिर मैं आकर आपके चरणों के दर्शन करूँगा।

पुन्य पुञ्ज तुम्ह पवनकुमारा ❀ सेवहु जाइ कृपा आगारा
अस कहि कपि सब चले तुरंता ❀ अंगद कहइ सुनहु हनुमंता

सुग्रीव ने कहा—हे पवनकुमार ! तुम पुण्य की राशि हो। जाकर कृपा के धाम रामजी की सेवा करो। सब बानर ऐसा कहकर तुरन्त ही चल पड़े। अङ्गद ने कहा—हे हनुमान ! सुनो।

दो०—कहेहु दंडवत प्रभु सैं तुम्हहिं कहउँ कर जोरि।
बार बार रघुनायकहिं सुरति करायेहु मोरि॥

मैं तुमको हाथ जोड़कर कहता हूँ, प्रभु से मेरा दंडवत् प्रणाम कहना और रामचन्द्रजी को मेरा बार-बार स्मरण दिलाते रहना।

अस कहि चलेउ बालि सुत फिरि आयेउ हनुमंत।
तासु प्रीति प्रभु सन कही मगन भए भगवंत॥

ऐसा कहकर अंगद चला और हनुमान् लौट आये। हनुमान् ने आकर उसकी प्रीति का वर्णन प्रभु से किया। सुनकर भगवान् रामजी प्रेम-मग्न हो गये।

कुलिसहु चाहि कठोर अति कोमल कुसुमहु चाहि।
चित्त खगेस राम कर समुझि परइ कहु काहि॥

हे गरुड़ ! रामजी का चित्त बज्र से भी अत्यन्त कठोर और फूल से भी अत्यन्त कोमल है। तब कहिये, वह किसकी समझ में आ सकता है। [तृतीय प्रतीप अलंकार]

पुनि कृपाल लियो बोलि निषादा ❀ दीन्हें भूषन बसन प्रसादा
जाहु भवन मम सुमिरन करेहू ❀ मन क्रम बचन धर्म अनुसरेहू

फिर कृपालु रामजी ने निषाद को बुला लिया और उसे भूषण, वस्त्र प्रसाद में दिये। फिर कहा—अब तुम भी घर जाओ; मेरा स्मरण करते रहना और मन, कर्म और वचन से धर्म के अनुसार चलते रहना।

तुम्ह मम सखा भरत सम भ्राता ❀ सदा रहेहु पुर आवत जाता
बचन सुनत उपजा सुख भारी ❀ परेउ चरन भरि लोचन बारी

तुम मेरे मित्र हो और भरत के समान भाई हो। अयोध्या में सदैव आते-

जाते रहना। यह वचन सुनते ही उसे बड़ा ही सुख उत्पन्न हुआ। आँखों में जल भरकर वह रामजी के चरणों में गिर पड़ा।

चरन नलिन उर धरि गृह आवा ❀ प्रभु सुभाउ परिजनन्हि सुनावा
रघुपति चरित देखि पुरबासी ❀ पुनि पुनि कहहिं धन्य सुखरासी

रामजी के चरण-कमलों को हृदय में रखकर वह घर आया और उसने अपने कुटुम्बियों को प्रभु का स्वभाव सुनाया। अयोध्यापुरी के निवासी रामजी के चरित को देखकर फिर-फिर कहते हैं कि सुख की राशि रामचन्द्र धन्य हैं।

राम राज बैठें त्रैलोका ❀ हरषित भये गये सब सोका
बयरु न कर काहू सन कोई ❀ राम प्रताप विषमता खोई

रामजी के राजगद्दी पर बैठने से तीनों लोक हर्षित हो गये और सारे शोक जाते रहे। कोई किसी से बैर नहीं करता। रामजी के प्रताप से सब की विषमता (भेद-भाव) मिट गई।

दो०— बरनास्त्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुख नहिं भय सोक न रोग॥

सब लोग अपने-अपने वर्ण और आश्रम-धर्म के अनुसार सदा वेदोक्त मार्ग पर चलते हैं और सुख पाते हैं। न उन्हें किसी बात का भय है, न शोक और न कोई रोग ही सताता है।

दैहिक दैविक भौतिक तापा ❀ राम राज नहिं काहुहि ब्यापा
सब नर करहिं परसपर प्रीती ❀ चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती

राम-राज्य में दैहिक, दैविक और भौतिक ताप किसी को नहीं व्यापते। सब मनुष्य आपस में प्रेम करते हैं और वेदों में बतायी हुई नीति (मर्यादा) में तत्पर रहकर अपने-अपने धर्म का पालन करते हैं।

चारिउ चरन[1] धर्म जग माहीं ❀ पूरि रहा सपनेहुँ अघ नाहीं
राम भगति रत नर अरु नारी ❀ सकल परम गति के अधिकारी

धर्म अपने चारों चरणों से जगत् में परिपूर्ण हो रहा है। स्वप्न में भी कहीं पाप नहीं है। पुरुष और स्त्री सभी रामजी की भक्ति में लगे रहते हैं और सभी परमगति (मोक्ष) के अधिकारी हैं।

---

१. धर्म के चार चरण=सत्य, शौच, दया और दान।

अल्प मृत्यु नहिं कवनिउ पीरा ❀ सब सुन्दर सब बिरुज[1] सरीरा
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना ❀ नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना

किसी की छोटी अवस्था में मृत्यु नहीं होती, न किसी को कोई पीड़ा होती है। सभी के शरीर सुन्दर और नीरोग हैं। न कोई दरिद्र है, न दुखी है और न ग़रीब है। न कोई मूर्ख है और न सुलक्षणों से हीन ही है।

सब निर्दम्भ धर्मरत पुनी ❀ नर अरु नारि चतुर सब गुनी
सब गुनग्य पंडित सब ग्यानी ❀ सब कृतग्य नहिं कपट सयानी

सभी दंभ से रहित, धर्म-परायण और पुण्यात्मा हैं। सभी पुरुष और स्त्री चतुर और गुणवान् हैं। सभी गुणों का आदर करने वाले, पंडित तथा सभी उपकार को मानने वाले हैं। धूर्तता किसी में नहीं है।

दो॰ राम राज नभगेस सुनु सचराचर जग माहिं।
काल कर्म सुभाव गुन कृत दुख काहुहि नाहिं॥२१॥

हे गरुड़! सुनिये। रामजी के राज्य में सारे सचराचर जगत् में काल, कर्म, स्वभाव और गुणों से उत्पन्न दुख किसी को भी नहीं होते।

भूमि सप्त सागर मेखला ❀ एक भूप रघुपति कोसला
भुवन अनेक रोम प्रति जासू ❀ यह प्रभुता कछु बहुत न तासू

अयोध्या में रघुनाथजी सात समुद्रों की मेखला (करधनी) वाली पृथ्वी के एकमात्र राजा हैं। जिनके एक-एक रोम में अनेकों ब्रह्मांड हैं, उनके लिये यह प्रभुता कुछ अधिक नहीं है।

सो महिमा समुझत प्रभु केरी ❀ यह बरनत हीनता घनेरी[2]
सो महिमा खगेस जिन्ह जानी ❀ फिरि येहि चरित तिन्हहुँ रति[3] मानी

प्रभु की उस महिमा को समझ लेने पर यह कहना (कि वह सात सागरों से घिरी हुई पृथ्वी के स्वामी हैं) उनकी बड़ी हीनता बताना है। हे गरुड़! जिन्होंने वह महिमा जान भी ली, वे फिर भी इस चरित में बड़ी प्रीति मानते हैं।

सोउ जाने कर फल यह लीला ❀ कहहिं महा मुनिबर दमसीला
राम राज कर सुख संपदा ❀ बरनि न सकइ फनीस सारदा

क्योंकि उस महिमा को जानने का भी फल यह लीला ही है। इन्द्रियों

---

१. रोग-रहित। २. बहुत। ३. प्रीति।

का दमन करने वाले श्रेष्ठ महामुनि ऐसा कहते हैं। राम-राज्य का सुख और उसके ऐश्वर्य का वर्णन शेष और सरस्वती भी नहीं कर सकते।

सब उदार सब पर उपकारी ❀ बिप्र चरन सेवक नर नारी
एक नारि ब्रत रत सब झारी ❀ ते मन बच क्रम पति हितकारी

राम-राज्य में सभी पुरुष और स्त्री उदार हैं, सभी परोपकारी हैं और सभी ब्राह्मणों के चरणों के सेवक हैं। सभी पुरुषमात्र एक पत्नीव्रती हैं। उसी प्रकार स्त्रियाँ भी मन, वचन और कर्म से पति का हित करने वाली हैं।

दो०- दंड[1] जतिन्ह कर भेद[2] जहँ नर्त्तक नृत्य समाज।
जीतहु मनहिं सुनिअ अस रामचंद्र कें राज ॥२२॥

रामचन्द्रजी के राज्य में दण्ड केवल संन्यासियों के हाथ में है और भेद (ताल-स्वर का भेद) नाचने वालों के नृत्य-समाज में है; जहाँ मन को जीतने के लिये ही 'जीतो' शब्द सुनाई पड़ता है।

फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन ❀ रहहिं एक सँग गज पञ्चानन
खग मृग सहज बयरु बिसराई ❀ सबन्हि परसपर प्रीति बढ़ाई

वन में वृक्ष सदा फूलते और फलते हैं। हाथी और सिंह एक साथ रहते हैं। पक्षी और पशु स्वाभाविक बैर भूलकर सबने आपस में प्रीति बढ़ा ली है।

कूजहिं खग मृग नाना बृन्दा ❀ अभय चरहिं बन करहिं अनंदा
सीतल सुरभि पवन बह मंदा ❀ गुंजत अलि लइ चलि मकरंदा[3]

पक्षी कलरव करते हैं, भाँति-भाँति के पशुओं के समूह वन में निर्भय विचरते और आनन्द करते हैं। शीतल, सुगन्धित और मन्द पवन बहता रहता है। भौंरे फूलों का रस लेकर गुञ्जार करते चलते हैं। या फूलों के रस में सने हुये भौंरे गुञ्जार करते रहते हैं।

लता बिटप मागे मधु चवहीं[4] ❀ मनभावतो धेनु पय स्रवहीं
सस[5] संपन्न सदा रह धरनी ❀ त्रेताँ भइ कृत जुग[6] कै करनी

लतायें और वृक्ष माँगने से ही मधु (मकरंद) टपका देते हैं। गायें

१. राजनीति में साम, दाम, दंड और भेद; हाथ का डंडा। २. संगीत में सुर-ताल का भेद; भेदनीति। ३. पुष्परस। ४. टपकाती है। ५. खेती। ६. सत्ययुग।

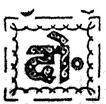
मनचाहा दूध देती हैं। पृथ्वी सदा खेती से भरी रहती है। त्रेता में सतयुग की स्थिति हो गई है।

प्रगटीं गिरिन्ह बिबिध मनि खानी ❀ जगदातमा भूप जग जानी
सरिता सकल बहहिं बर बारी ❀ सीतल अमल स्वादु सुखकारी

समस्त जगत के आत्मा भगवान् को राजा जानकर पर्वतों ने अनेक प्रकार की मणियों की खानें प्रकट कर दीं। सब नदियाँ उत्तम, शीतल, निर्मल, स्वादिष्ट और सुखप्रद जल बहाने लगीं।

सागर निज मरजादा रहहीं ❀ डारहिं रतन तटन्हि नर लहहीं
सरसिज संकुल सकल तड़ागा ❀ अति प्रसन्न दस दिसा बिभागा

समुद्र अपनी मर्यादा में रहते हैं। वे किनारों पर रत्न फेंक देते हैं, जिन्हें मनुष्य पा जाते हैं। सब तालाब कमलों से पूर्ण हैं। दसों दिशायें और भूमि के सब प्रदेश अत्यन्त प्रसन्न हैं।



बिधु महि पूर मयूखन्हि रबि तप जेतनेहिं काज।
माँगें बारिद देहिं जल रामचन्द्र कें राज ॥२३॥

रामचन्द्रजी के राज्य में चन्द्रमा अपनी किरणों से पृथ्वी को पूर्ण कर देता है, सूर्य उतना ही तपता है, जितने की ज़रूरत होती है और मेघ माँगने से जहाँ जितनी ज़रूरत होती है, जल देते हैं।

कोटिन्ह बाजिमेध प्रभु कीन्हे ❀ दान अनेक द्विजन्ह कहँ दीन्हे
श्रुति पथ पालक धर्म धुरंधर ❀ गुनातीत अरु भोग पुरन्दर[1]

प्रभु रामजी ने करोड़ों अश्वमेध यज्ञ किये। ब्राह्मणों को अनेकों दान दिये। रामचन्द्रजी वेद-मार्ग के पालने वाले, धर्म की धुरी को धारण करने वाले, गुणों (सत, रज और तम) से परे, और भोगों (ऐश्वर्य) में इन्द्र के समान हैं।

पति अनुकूल सदा रह सीता ❀ सोभा खानि सुसील बिनीता
जानति कृपासिन्धु प्रभुताई ❀ सेवति चरन कमल मन लाई

शोभा की खान, सुन्दर स्वभाव वाली और विनम्र सीता सदा पति के अनुकूल रहती हैं। कृपा के समुद्र रामजी की प्रभुता (महिमा) को जानती हैं। वे मन लगाकर उनके चरण-कमलों की सेवा करती हैं।

---

१. इन्द्र।

जद्यपि गृहँ सेवक सेवकिनी ❀ बिपुल सकल सेवा बिधि गुनी
निज कर गृह परिचरजा करई ❀ रामचन्द्र आयसु अनुसरई

यद्यपि घर में बहुत-से दास और दासियाँ हैं, और वे सभी सेवा की सब विधियों में निपुण हैं, तथापि सीता अपने ही हाथों से घर के सब काम-काज करती और रामचन्द्रजी की आज्ञा का अनुसरण करती हैं।

जेहि बिधि कृपासिन्धु सुख मानइ ❀ सोइ कर श्री सेवा बिधि जानइ
कौसल्यादि सासु गृह माहीं ❀ सेवइ सबन्हि मान मद नाहीं
उमा रमा ब्रह्मादि बंदिता ❀ जगदम्बा संततमनिन्दिता

कृपा के समुद्र रामजी जिस प्रकार सुख मानते हैं, लक्ष्मी-रूपिणी सीता वही करती हैं; क्योंकि वे सेवा की विधि को जानने वाली हैं। घर में कौशल्या आदि जितनी सासुएँ हैं, सीता सब की सेवा करती हैं, उन्हें रूपादि का अभिमान और राजमहिषी होने का मद नहीं है। हे पार्वती! लक्ष्मी (सीता) ब्रह्मा आदि देवताओं से वंदित, जगत् की माता और सदा अनिंदित हैं।

दो०— जासु कृपा कटाच्छु सुर चाहत चितव न सोइ।
राम पदारबिन्द रति करति सुभावहिं खोइ ॥२४॥

देवता जिस (लक्ष्मी) के कृपा-कटाक्ष की चाहना करते हैं, पर वह उनकी ओर देखती भी नहीं, वही लक्ष्मी अपने स्वभाव (चांचल्य) को छोड़कर रामजी के चरणारविंद में प्रीति करती हैं।

सेवहिं सानुकूल सब भाई ❀ राम चरन रति अति अधिकाई
प्रभु मुख कमल बिलोकत रहहीं ❀ कबहुँ कृपाल हमहिं कछु कहहीं

सब भाई रामजी के अनुकूल रहकर उनकी सेवा करते हैं। रामजी के चरणों में उनकी अत्यंत अधिक प्रीति है। वे रामजी के मुखारविन्द को देखते ही रहते हैं कि कृपालु रामजी कभी हमें कुछ सेवा करने को कहें।

राम करहिं भ्रातन्ह पर प्रीती ❀ नाना भाँति सिखावहिं नीती
हरषित रहहिं नगर के लोगा ❀ करहिं सकल सुर दुर्लभ भोगा

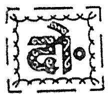
रामजी भाइयों पर प्रीति करते हैं और अनेकों प्रकार की नीतियाँ सिखलाते रहते हैं। नगर के लोग आनन्दित रहते हैं और सब प्रकार के देव-दुर्लभ भोग भोगते हैं।

अहनिसि[1] बिधिहिं मनावत रहहीं ❀ श्रीरघुबीर चरन रति चहहीं
दुइ सुत सुन्दर सीताँ जाये ❀ लव कुश बेद पुरानन्हि गाये

वे दिन-रात ब्रह्मा को मनाते रहते हैं और उनसे श्रीरामचन्द्रजी के चरणों में प्रीति चाहते हैं। सीता ने लव और कुश दो पुत्र उत्पन्न किये, जिनकी कथा वेद और पुराणों ने गाई है।

दोउ बिजई बिनई गुन मंदिर ❀ हरि प्रतिबिंब मनहुँ अति सुन्दर
दुइ दुइ सुत सब भ्रातन्ह केरे ❀ भये रूप गुन सील घनेरे

वे दोनों ही विजयी, सुशील और गुणों के धाम हैं, और अत्यन्त सुन्दर मानो भगवान् के प्रतिबिम्ब ही हों। दो-दो पुत्र सभी भाइयों के हुये, जो बड़े ही सुन्दर, गुणी और सुशील हैं।



ग्यान गिरा गोऽतीत अज माया मन गुन पार।
सोइ सच्चिदानन्द घन कर नर चरित उदार ॥२५॥

जो ज्ञान, वाणी और इन्द्रियों की पहुँच से परे, अजन्मा तथा माया, मन और गुणों के परे हैं, वही सच्चिदानंदघन भगवान् मनुष्य का-सा चरित्र करते हैं।

प्रातकाल सरजू करि मज्जन ❀ बैठहिं सभा संग द्विज सज्जन
बेद पुरान बसिष्ठ बखानहिं ❀ सुनहिं राम जद्यपि सब जानहिं

प्रातःकाल सरयू में स्नान करके रामचन्द्रजी ब्राह्मणों और अन्य सज्जनों के साथ सभा में बैठते हैं। वशिष्ठजी वेद और पुराण कहते हैं। रामजी सब सुनते हैं, यद्यपि वे सब जानते हैं।

अनुजन्ह संजुत भोजन करहीं ❀ देखि सकल जननीं सुख भरहीं
भरत सत्रुहन दूनउ भाई ❀ सहित पवनसुत उपबन जाई

वे भाइयों को साथ लेकर भोजन करते हैं। उन्हें देखकर सब माताएँ आनन्द से भर जाती हैं। भरत और शत्रुघ्न दोनों भाई हनुमान को साथ लेकर, उपवन में जाकर,

बूझहिं बैठि राम गुन गाहा ❀ कह हनुमान सुमति अवगाहा
सुनत बिमल गुन अति सुख पावहिं ❀ बहुरि बहुरि करि बिनय कहावहिं

वहाँ बैठकर रामजी के गुणों की कथायें पूछते हैं। हनुमान अपनी सुन्दर

१. दिन-रात।

बुद्धि से उन गुणों में डुबकी लगाकर उनका वर्णन करते हैं। रामजी के विमल गुणों को सुनकर वे बड़ा ही सुख पाते हैं और विनय करके बार-बार कहलवाते हैं।

सब कें गृह गृह होहिं पुराना ❀ राम चरित पावन बिधि नाना
नर अरु नारि राम गुन गानहिं ❀ करहिं दिवस निसि जात न जानहिं

सबके यहाँ घर-घर में पुराणों और अनेक प्रकार के पवित्र राम-चरित्रों की कथायें होती हैं। पुरुष और स्त्री सभी रामजी के गुणों का गान करते हैं। वे दिन और रात का बीतना जान ही नहीं पाते।

दो० अवधपुरी बासिन्ह कर सुख सम्पदा समाज।
सहस सेष नहिं कहि सकहिं जहँ नृप राम बिराज॥२६

जहाँ रामचन्द्रजी स्वयं राजा होकर विराजमान हैं, उस अवधपुरी के निवासियों के सुख-सम्पत्ति के समुदाय का वर्णन हज़ारों शेष भी नहीं कर सकते।

नारदादि सनकादि मुनीसा ❀ दरसन लागि कोसलाधीसा
दिन प्रति सकल अजोध्या आवहिं ❀ देखि नगरु बिराग बिसरावहिं

नारद आदि और सनक आदि मुनीश्वर कोशलनाथ के दर्शनों के लिये प्रतिदिन अयोध्या आते हैं और नगर को देखकर वैराग्य भुला देते हैं।

जातरूप[1] मनि रचित अटारीं ❀ नाना रङ्ग रुचिर गच ढारीं
पुर चहुँ पास कोट अति सुन्दर ❀ रचे कँगूरा रङ्ग रङ्ग बर

सोने और मणियों से बनी हुई अटारियाँ हैं, जिनमें अनेक रंगों की सुन्दर ढली हुई फर्शें हैं। पुर के चारों ओर अत्यन्त सुन्दर परकोटा बना है, जिस पर रंग-बिरंग के सुन्दर कँगूरे बने हैं।

नव ग्रह निकर अनीक बनाई ❀ जनु घेरी अमरावति आई
महि बहु रङ्ग रचित गच[2] काँचा ❀ जो बिलोकि मुनिबर मन नाचा

मानो नवग्रहों के समूह ने बड़ी भारी सेना बनाकर अमरावती को आकर घेर लिया हो। पृथ्वी अनेक रंगों के काँच के गच सँवारकर बनाई गई है, जिसे देखकर मुनियों के मन नाच उठते हैं।

---

१. सोना। २. फर्श।

धवल धाम ऊपर नभ चुंबत ❁ कलस मनहुँ रबि ससि दुति निंदत
बहु मनि रचित झरोखा भ्राजहिं ❁ गृह गृह प्रति मनि दीप बिराजहिं

उज्ज्वल महल ऊपर आकाश को चूम रहे हैं, उनके कलश मानो सूर्य, चन्द्रमा की द्युति की भी निन्दा करते हैं। बहुत-सी मणियों से रचे हुये झरोखे शोभा दे रहे हैं, और घर-घर में मणियों के दीपक शोभा पा रहे हैं।

छंद—मनि दीप राजहिं भवन भ्राजहिं देहरीं बिद्रुम[1] रची
मनि खम्भ भीति बिरंचि बिरची कनक मनि मरकत[2] खची
सुन्दर मनोहर मंदिरायत अजिर[3] रुचिर फटिक रचे
प्रति द्वार द्वार कपाट पुरट[4] बनाइ बहु बज्रन्हि[5] खचे

घरों में मणियों के दीप शोभा दे रहे हैं। मूँगों की बनी हुई देहलियाँ चमक रही हैं। मणियों के खंभे हैं। सोने की दीवारें मानो ब्रह्मा ने मरकत मणियों (पन्ने) से जड़कर बनाई हैं। महल लम्बे-चौड़े, सुन्दर और मनोहर हैं। उनमें सुन्दर स्फटिक के आँगन बने हैं। प्रत्येक द्वार पर बहुत-से ख़रादे हुये हीरों से अच्छी तरह जड़े हुये सोने के किवाड़े लगे हैं।

दो०—चारु चित्रसाला रुचिर प्रति गृह लिखे बनाइ।
राम चरित जे निरख मुनि ते मन लेहिं चोराइ॥२७

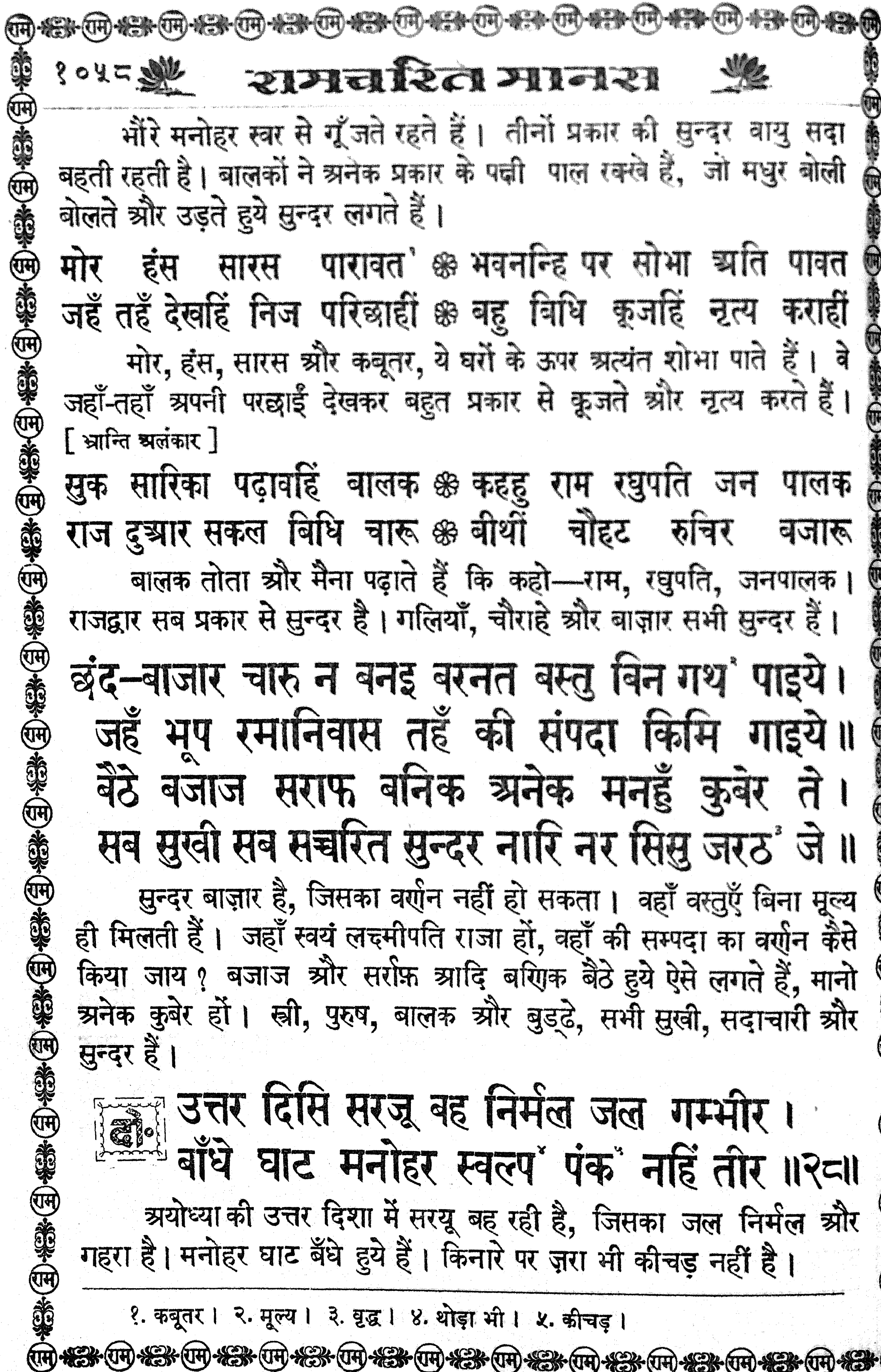
घर-घर की सुन्दर चित्रशालाएँ हैं, जिनमें राम-चरित बड़ी सुन्दरता के साथ सँवारकर अंकित किये हुये हैं, जिन्हें मुनि देखते हैं तो वे उनके भी चित को चुरा लेते हैं।

सुमन बाटिका सबहिं लगाई ❁ बिबिध भाँति करि जतन बनाई
लता ललित बहु जाति सुहाई ❁ फूलहिं सदा बसन्त कि नाई

सभी ने विविध प्रकार के फूलों की वाटिकाएँ यत्नपूर्वक लगा रक्खी हैं, जिनमें बहुत-सी जातियों की सुन्दर ललित लतायें लगी हैं, जो सब ऋतुओं में बसंत की तरह फूलती रहती हैं।

गुञ्जत मधुकर मुखर मनोहर ❁ मारुत त्रिबिध सदा बह सुन्दर
नाना खग बालकन्हि जिआये ❁ बोलत मधुर उड़ात सुहाये

१. मूँगा। २. पन्ना। ३. आँगन। ४. सोना। ५. हीरों से।



भौंरे मनोहर स्वर से गूँजते रहते हैं। तीनों प्रकार की सुन्दर वायु सदा बहती रहती है। बालकों ने अनेक प्रकार के पक्षी पाल रक्खे हैं, जो मधुर बोली बोलते और उड़ते हुये सुन्दर लगते हैं।

मोर हंस सारस पारावत[1] ❀ भवनन्हि पर सोभा अति पावत
जहँ तहँ देखहिं निज परिछाहीं ❀ बहु बिधि कूजहिं नृत्य कराहीं

मोर, हंस, सारस और कबूतर, ये घरों के ऊपर अत्यंत शोभा पाते हैं। वे जहाँ-तहाँ अपनी परछाईं देखकर बहुत प्रकार से कूजते और नृत्य करते हैं। [भ्रान्ति अलंकार]

सुक सारिका पढ़ावहिं बालक ❀ कहहु राम रघुपति जन पालक
राज दुआर सकल बिधि चारू ❀ बीथीं चौहट रुचिर बजारू

बालक तोता और मैना पढ़ाते हैं कि कहो—राम, रघुपति, जनपालक। राजद्वार सब प्रकार से सुन्दर है। गलियाँ, चौराहे और बाज़ार सभी सुन्दर हैं।

छंद—बाजार चारु न बनइ बरनत बस्तु बिन गथ[2] पाइये।
जहँ भूप रमानिवास तहँ की संपदा किमि गाइये॥
बैठे बजाज सराफ बनिक अनेक मनहुँ कुबेर ते।
सब सुखी सब सच्चरित सुन्दर नारि नर सिसु जरठ[3] जे॥

सुन्दर बाज़ार है, जिसका वर्णन नहीं हो सकता। वहाँ वस्तुएँ बिना मूल्य ही मिलती हैं। जहाँ स्वयं लक्ष्मीपति राजा हों, वहाँ की सम्पदा का वर्णन कैसे किया जाय? बजाज और सर्राफ़ आदि बणिक बैठे हुये ऐसे लगते हैं, मानो अनेक कुबेर हों। स्त्री, पुरुष, बालक और बुड्ढे, सभी सुखी, सदाचारी और सुन्दर हैं।

दो॰ उत्तर दिसि सरजू बह निर्मल जल गम्भीर।
बाँधे घाट मनोहर स्वल्प[4] पंक[5] नहिं तीर॥२८॥

अयोध्या की उत्तर दिशा में सरयू बह रही है, जिसका जल निर्मल और गहरा है। मनोहर घाट बँधे हुये हैं। किनारे पर ज़रा भी कीचड़ नहीं है।

१. कबूतर। २. मूल्य। ३. वृद्ध। ४. थोड़ा भी। ५. कीचड़।

दूरि फराक रुचिर सो घाटा ❀ जहँ जल पिअहिं बाजि गज ठाटा
पनिघट परम मनोहर नाना ❀ तहाँ न पुरुष करहिं अस्नाना

दूर और अलग लम्बा-चौड़ा वह सुन्दर घाट है, जहाँ घोड़ों और हाथियों के झुण्ड के झुण्ड जल पिया करते हैं। पानी भरने के लिये अनेक अत्यंत सुन्दर पनघट हैं, वहाँ पुरुष स्नान नहीं करते।

राजघाट सब बिधि सुन्दर बर ❀ मज्जहिं तहाँ बरन चारिउ नर
तीर तीर देवन्ह के मन्दिर ❀ चहुँदिसि तिन्ह के उपबन सुन्दर

राजघाट सब प्रकार से सुन्दर और उत्तम है, जहाँ चारों वर्णों के पुरुष स्नान करते हैं। सरयू के किनारे-किनारे देवताओं के मन्दिर हैं, जिनके चारों ओर सुन्दर उपवन हैं।

कहुँ कहुँ सरिता तीर उदासी ❀ बसहिं ग्यान रत मुनि संन्यासी
तीर तीर तुलसिका सुहाई ❀ बृन्द बृन्द बहु मुनिन्ह लगाई

नदी के किनारे कहीं-कहीं ज्ञान-परायण और विरक्त, उदासी, मुनि और संन्यासी बसते हैं। किनारे-किनारे तुलसी के झुण्ड के झुण्ड सुन्दर पौधे मुनियों ने लगा रक्खे हैं।

पुर सोभा कछु बरनि न जाई ❀ बाहर नगर परम रुचिराई
देखत पुरी अखिल[1] अघ भागा ❀ बन उपबन बापिका तड़ागा

पुर की शोभा का कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता। नगर के बाहर भी परम सुन्दरता है। पुरी के दर्शन करते ही समस्त पाप भाग जाते हैं। पुर में वन, उपवन, बावली और तालाब सुशोभित हैं।

छन्द—बापीं तड़ाग अनूप कूप मनोहरायत सोहहीं।
सोपान सुन्दर नीर निर्मल देखि सुर मुनि मोहहीं॥
बहु रङ्ग कंज अनेक खग कूजहिं मधुप गुञ्जारहीं।
आराम[2] रम्य पिकादि खग रव जनु पथिक हंकारहीं[3]॥

अनुपम बावलियाँ और तालाब, सुन्दर तथा विशाल कुएँ शोभा दे रहे हैं। जिनकी सुन्दर सीढ़ियाँ और निर्मल जल देखकर देवता और मुनि तक मोहित

१. सम्पूर्ण। २. बाग। ३. बुलाते हैं।

हो जाते हैं। अनेक रंगों के कमल खिल रहे हैं। अनेक प्रकार के पक्षी कूजते और भौंरे गुञ्जार करते हैं। रमणीय बाग के कोकिल आदि पक्षी बोलकर मानो पथिकों को बुला रहे हैं।

दो०-रमानाथ जहँ राजा सो पुर बरनि कि जाइ।
अनिमादिक[३] सुख संपदा रहीं अवध सब छाइ ॥२९॥

स्वयं लक्ष्मीपति जहाँ राजा हों, उस पुर का कहीं वर्णन किया जा सकता है? अणिमा आदि सिद्धियाँ तथा समस्त सुख-सम्पदा अवध में छा रही हैं।

जहँ तहँ नर रघुपति गुन गावहिं ❀ बैठि परसपर इहइ सिखावहिं
भजहु प्रनत प्रतिपालक रामहि ❀ सोभा सील रूप गुन धामहि

लोग जहाँ-तहाँ रामजी का गुण गाते हैं और बैठकर आपस में यह उपदेश करते हैं कि शरणागत को पालने वाले रामजी को भजो; शोभा, शील, रूप और गुणों के धाम रामजी को भजो।

जलज बिलोचन स्यामल गातहिं ❀ पलक नयन इव सेवक त्रातहिं
धृत सर रुचिर चाप तूनीरहिं ❀ संत कंज बन रबि रनधीरहिं

कमल-नेत्र और साँवले शरीर वाले को भजो। पलक और नेत्र की तरह सेवक की रक्षा करने वाले को भजो। सुन्दर बाण, धनुष और तरकस धारण करने वाले को भजो। संतरूपी कमल-वन के लिये सूर्य-रूप तथा रण में धीर धरने वाले को भजो।

काल कराल ब्याल खगराजहिं ❀ नमत राम अकाम ममता जहिं
लोभ मोह मृग जूथ किरातहिं ❀ मनसिज करि हरिजन सुख दातहिं

कालरूपी भयानक साँप के भक्षण करने वाले गरुड़ को भजो। निष्काम भाव से प्रणाम करते ही ममता का नाश कर देने वाले रामजी को भजो। लोभ-मोहरूपी हरिणों के समूह का नाश करने वाले व्याधरूपी रामजी को भजो। कामदेवरूपी हाथी के लिये सिंह-रूप तथा सेवकों को सुख देने वाले रामजी को भजो।

संसय सोक निबिड़ तम भानुहिं ❀ दनुज गहन घन दहन कृसानुहिं
जनकसुता समेत रघुबीरहिं ❀ कस न भजहु भंजन भव भीरहिं

३. सिद्धियाँ--अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व, वशित्व कुल आठ हैं।

संशय और शोकरूपी घने अन्धकार के लिये सूर्य-रूप को तथा राक्षस-रूपी घने वन को जलाने वाले अग्नि-रूप रामजी को भजो। जन्म-मृत्यु के भय को नाश करने वाले सीता-सहित रामजी को क्यों नहीं भजते ?

बहु बासना मसक हिम रासहिं ❀ सदा एक रस अज अबिनासहिं
मुनि रञ्जन भञ्जन महि भारहिं ❀ तुलसीदास के प्रभुहि उदारहिं

बहुत-सी वासनाओं-रूपी मच्छरों के लिये हिम-राशिरूप रामजी को भजो। सदा एकरस, अजन्मा और अविनाशी रामजी को भजो। मुनियों को आनन्द देने वाले, पृथ्वी का भार उतारने वाले और तुलसीदास के उदार दयालु प्रभु को भजो। [भाविक अलंकार]

दो०— एहि बिधि नगर नारि नर करहिं राम गुन गान।
सानुकूल सब पर रहहिं संतत कृपानिधान ॥३०॥

इस प्रकार नगर के स्त्री-पुरुष रामजी के गुणों का गान करते हैं। कृपा के धाम रामजी सदा सब पर अत्यन्त प्रसन्न रहते हैं।

जब तें राम प्रताप खगेसा ❀ उदित भयेउ अति प्रबल दिनेसा
पूरि प्रकास रहेउ तिहुँ लोका ❀ बहुतेन्ह सुख बहुतन मन सोका

हे गरुड़ ! जब से राम प्रताप रूपी अत्यन्त प्रबल सूर्य उदित हुआ, तब से तीनों लोकों में पूर्ण प्रकाश भर रहा है। इससे बहुतों को सुख हुआ और बहुतों के मन में शोक हुआ है।

जिन्हहिं सोक ते कहउँ बखानी ❀ प्रथम अबिद्या निसा नसानी
अघ उलूक जहँ तहाँ लुकाने ❀ काम क्रोध कैरव सकुचाने

जिन्हें शोक हुआ, उन्हें मैं बखानकर कहता हूँ। पहले तो अविद्या-रूपी रात्रि नष्ट हो गई। पाप-रूपी उल्लू जहाँ-तहाँ छिप गये। काम-क्रोधरूपी कुमुद संकुचित हो गये।

बिबिध कर्म गुन काल सुभाऊ ❀ ए चकोर सुख लहहिं न काऊ
मत्सर मान मोह मद चोरा ❀ इन्ह कर हुनर न कवनिहुँ ओरा

अनेक प्रकार के कर्म, गुण, काल और स्वभाव ये चकोर हैं जो कभी सुख नहीं पाते। मत्सर, मान, मोह और मद-रूपी चोरों की कला भी किसी तरफ भी चल नहीं पाती।

धरम तड़ाग ग्यान बिग्याना ❀ ए पङ्कज बिकसे बिधि नाना
सुख संतोष बिराग बिवेका ❀ बिगत सोक ए कोक[1] अनेका

धर्म-रूपी तालाब में ज्ञान-विज्ञानरूपी अनेकों प्रकार के कमल खिल उठे। सुख, संतोष, वैराग्य और विवेक-रूपी अनेकों चकवाक शोक-रहित हो गये।

दो० यह प्रताप रबि जाकें उर जब करइ प्रकास।
पछिले बाढ़हिं प्रथम जे कहे ते पावहिं नास ॥३१

रामजी के प्रताप का यह सूर्य जिसके हृदय में जब प्रकाश करता है, तो जिनका वर्णन मैंने पीछे किया है, वे धर्म, ज्ञान, विज्ञान, सुख, संतोष, वैराग्य और विवेक बढ़ जाते हैं और जिनका वर्णन पहले किया है, वे अविद्या, पाप, काम, क्रोध, कर्म, काल, गुण, स्वभाव आदि नष्ट हो जाते हैं।

भ्रातन्ह सहित रामु एक बारा ❀ संग परम प्रिय पवनकुमारा
सुन्दर उपबन देखन गये ❀ सब तरु कुसुमित पल्लव नये

एक बार भाइयों-सहित रामजी परम प्रिय हनुमान को साथ लेकर सुन्दर उपवन देखने गये। वहाँ के सब वृक्ष फूले हुये थे और उनमें नवीन पल्लव आ गये थे।

जानि समय सनकादिक आये ❀ तेज पुन्ज गुन सील सुहाये
ब्रह्मानन्द सदा लयलीना ❀ देखत बालक बहुकालीना[2]

मौका देखकर सनक आदि मुनि आये, जो तेज के पुञ्ज और सुन्दर गुणों वाले तथा शील से युक्त थे। वे सदा ब्रह्मानन्द में निमग्न रहते हैं। देखने में तो वे बालक लगते हैं, पर हैं बहुत समय के।

रूप धरें जनु चारिउ बेदा ❀ समदरसी मुनि बिगत बिभेदा
आसा बसन ब्यसन यह तिन्हहीं ❀ रघुपति चरित होइ तहँ सुनहीं

मानो चारों वेद ही बालक-रूप धारण किये हों। वे मुनि, समदर्शी, और भेद-भाव-रहित हैं। दिशाएँ ही उनके वस्त्र हैं अर्थात् वे नग्न हैं। उन्हें एक यही व्यसन है कि जहाँ रामजी की चरित्र-कथा होती हो, वहाँ जाकर उसे सुनते हैं।

---

१. चकवा। २. बहुत समय के।

तहाँ रहे सनकादि भवानी ❀ जहँ घटसम्भव मुनिबर ग्यानी
राम कथा मुनिबर बहु बरनी ❀ ग्यान जोनि पावक जिमि अरनी[1]

हे भवानी ! सनक आदि मुनि वहाँ गये, जहाँ ज्ञानी मुनिश्रेष्ठ अगस्त्य रहते थे। मुनि ने रामजी की बहुत-सी कथाएँ कही थीं, जो ज्ञान को उत्पन्न करने में उसी प्रकार समर्थ हैं, जैसे अरणि लकड़ी से अग्नि उत्पन्न होती है।

दो॰ देखि राम मुनि आवत हरषि दण्डवत कीन्ह।
स्वागत पूँछि पीतपट प्रभु बैठन कहँ दीन्ह ॥३२

मुनियों को आते हुये देखकर रामजी ने हर्षित होकर उन्हें दंड-प्रणाम किया और उनका (कुशल-मङ्गल) पूछकर, प्रभु ने उनके बैठने के लिये अपना पीताम्बर बिछा दिया।

कीन्ह दंडवत तीनिउँ भाई ❀ सहित पवनसुत सुख अधिकाई
मुनि रघुपति छबि अतुल बिलोकी ❀ भए मगन मन सके न रोकी

फिर हनुमान-सहित तीनों भाइयों ने भी उन्हें दंड-प्रणाम किया। सबको बड़ा सुख हुआ। रामचन्द्रजी की अतुलित छवि देखकर मुनि उसी में मग्न हो गये और मन को रोक न सके।

स्यामल गात सरोरुह लोचन ❀ सुन्दरता मन्दिर भव मोचन
एकटक रहे निमेष न लावहिं ❀ प्रभु कर जोरें सीस नवावहिं

श्याम शरीर वाले, कमल ऐसे नेत्र वाले, आवागमन से छुड़ाने वाले, सुन्दरता के धाम रामजी को वे टकटकी लगाकर देखते ही रहे, पलक नहीं गिराते। और प्रभु हाथ जोड़े सिर नवा रहे हैं।

तिन्ह कै दसा देखि रघुबीरा ❀ स्रवत नयन जल पुलक सरीरा
कर गहि प्रभु मुनिबर बैठारे ❀ परम मनोहर बचन उचारे

उनकी दशा देखकर रामजी के नेत्रों से भी जल गिरने लगा और शरीर पुलकित हो गया। तब प्रभु ने मुनिवरों का हाथ पकड़कर बैठाया और फिर वे परम मनोहर वचन बोले—

आजु धन्य मैं सुनहु मुनीसा ❀ तुम्हरें दरस जाहिं अघ खीसा
बड़े भाग पाइअ सतसंगा ❀ बिनहिं प्रयास होइ भव भङ्गा

१. लकड़ी, जिसे घिसकर आग उत्पन्न करते हैं।

हे मुनीश्वरो ! सुनिये, आज मैं धन्य हूँ। आपके दर्शनों ही से सारे पाप नाश को प्राप्त होते हैं। सत्संग बड़े ही भाग्य से मिलता है, जिससे बिना परिश्रम ही के जन्म-मृत्यु का दुख नष्ट हो जाता है।

दो॰ सन्त संग अपवर्ग कर कामी भव कर पन्थ।
कहहिं सन्त कवि कोविद श्रुति पुरान सदग्रन्थ॥३३॥

संत का संग मोक्ष का, और कामी का संग जन्म-मृत्यु के बंधन में पड़ने का मार्ग है। संत, कवि, कोविद तथा वेद और पुराण सभी सद्ग्रन्थ ऐसा कहते हैं।

सुनि प्रभु बचन हरषि मुनि चारी ❀ पुलकित तनु अस्तुति अनुसारी
जय भगवन्त अनन्त अनामय ❀ अनघ अनेक एक करुनामय

प्रभु के वचन सुनकर, चारों मुनि हर्षित होकर, पुलकित शरीर से स्तुति करने लगे—हे भगवन्त ! आपकी जय हो। आप अन्तरहित हैं, आप विकार-रहित, पाप-रहित, अनेक, एक और करुणामय हैं।

जय निर्गुन जय जय गुन सागर ❀ सुख मंदिर सुन्दर अति नागर
जय इंदिरा रमन जय भूधर ❀ अनुपम अज अनादि सोभाकर

हे निर्गुण ! आपकी जय हो। हे गुणों के समुद्र ! आपकी जय हो, जय हो। हे सुख के धाम, अत्यन्त सुन्दर और अति चतुर ! हे लक्ष्मीनाथ ! आपकी जय हो। हे पृथ्वी के धारण करने वाले ! आपकी जय हो। हे उपमा-रहित, अजन्मा, आदि-रहित और शोभा की खान ! आपकी जय हो।

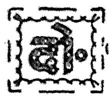
ग्यान निधान अमान मानप्रद ❀ पावन सुजस पुरान बेद बद
तग्य कृतग्य अग्यता भञ्जन ❀ नाम अनेक अनाम निरञ्जन

आप ज्ञान के भंडार, मान-रहित और दूसरों को मान देने वाले हैं। पुराण और वेद आपका पवित्र सुयश गाते हैं। आप तत्व के ज्ञाता, उपकार के ज्ञाता और अज्ञान को नष्ट करने वाले हैं। हे निरंजन (माया-रहित) आपके अनेकों नाम हैं, फिर भी आप नाम-रहित हैं।

सर्ब सर्बगत सर्ब उरालय ❀ बससि सदा हम कहँ परिपालय
द्वंद बिपति भयफंद बिभंजय ❀ हृदि बसि राम काम मद गञ्जय

यह सम्पूर्ण जगत् आपही का स्वरूप है। आप सब में व्याप्त हैं। आप सबके

हृदयरूपी घर में सदा बसते हैं। आप हमारा परिपालन कीजिये। सुख-दुख, हर्ष शोक आदि द्वंद्व, विपत्ति और जन्म-मृत्यु के जाल को काट दीजिये। आप हमारे-हृदय में बसकर काम और मद का नाश कर दीजिये।



परमानन्द कृपायतन मन परिपूरन काम।
प्रेम भगति अनपायनो देहु हमहि श्रीराम ॥३४॥

हे परमानन्दस्वरूप, कृपा के धाम, मनोकामनाओं को पूरा करने वाले श्रीरामजी! हमें अपनी निश्चल प्रेम-भक्ति दीजिये।

देहु भगति रघुपति अति पावनि ❁ त्रिबिध ताप भव दाप नसावनि
प्रनत काम सुरधेनु कलपतरु ❁ होइ प्रसन्न दीजै प्रभु यह बरु

हे रघुपति! हमें अपनी अत्यंत पवित्र करने वाली, तीनों प्रकार के तापों और जन्म-मरण के क्लेशों का नाश करने वाली भक्ति दीजिये। हे शरणागतों की कामना पूरी करने के लिये कामधेनु और कल्पवृक्ष-स्वरूप प्रभु! प्रसन्न होकर हमें यही वर दीजिये।

भव बारिधि कुम्भज रघुनायक ❁ सेवत सुलभ सकल सुखदायक
मन सम्भव दारुन दुख दारय ❁ दीनबंधु समता बिस्तारय

आप जन्म-मृत्यु-रूप समुद्र के लिये अगस्त्य हैं। आप सेवा करने में सुलभ हैं, तथा सुखों के देने वाले हैं। हे दीनबन्धु! मन से उत्पन्न कठोर दुखों का नाश कीजिये और हम में समदृष्टि का विस्तार कीजिये।

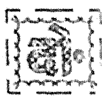
आस त्रास इरिषादि निवारक ❁ बिनय बिबेक बिरति बिस्तारक
भूप मौलि मनि मंडन धरनी ❁ देहि भगति संसृति सरि तरनी

आप आशा, डर और ईर्ष्या का निवारण करने वाले हैं, तथा विनय, विवेक और वैराग्य के विस्तार करने वाले हैं। हे राजाओं के शिरोमणि! पृथ्वी के भूषण रामजी! संसृति-रूपी नदी के लिये नौका रूप अपनी भक्ति प्रदान कीजिये।

मुनि मन मानस हंस निरंतर ❁ चरन कमल बंदित अज संकर
रघुकुल केतु सेतु श्रुति रच्छक ❁ काल कर्म सुभाव गुन भच्छक
तारन तरन हरन सब दूषन ❁ तुलसिदास प्रभु त्रिभुवन भूषन

हे मुनियों के मन-रूपी मानसरोवर में निरन्तर निवास करने वाले हंस!

आपके चरण-कमल ब्रह्मा और शिव द्वारा सदा वंदित हैं। आप रघुकुल के केतु, भवसागर के सेतु और वेद-मर्यादा के रक्षक, तथा काल, कर्म, स्वभाव और गुण के भक्षक हैं। आप तरन-तारन, स्वयं तरे हुये और दूसरों को तारने वाले और सब दोषों को हरने वाले हैं, त्रिभुवन के भूषण आप ही तुलसीदास के प्रभु हैं।



बार बार अस्तुति करि प्रेम सहित सिरु नाइ।
ब्रह्म भवन सनकादि गे अति अभीष्ट[1] बर पाइ॥३५॥

प्रेम-सहित बार-बार स्तुति करके और सिर नवाकर सनक आदि मुनि अत्यन्त इच्छित बर पाकर ब्रह्मलोक को गये।

सनकादिक बिधि लोक सिधाये ❀ भ्रातन्ह राम चरन सिरु नाये
पूँछत प्रभुहिं सकल सकुचाहीं ❀ चितवहिं सब मारुतसुत पाहीं

सनक आदि मुनि ब्रह्मलोक को चले गये; तब भाइयों ने रामजी के चरणों में सिर नवाया। सब प्रभु से कुछ पूछते सकुचाते हैं और सब हनुमान की ओर देख रहे हैं।

सुनी चहहिं प्रभु मुख कै बानी ❀ जो सुनि होइ सकल भ्रम हानी
अंतरजामी प्रभु सभ जाना ❀ बूझत कहहु काह हनुमाना

वे प्रभु के मुख से वह वाणी सुनना चाहते हैं, जिसे सुनकर सब भ्रम नष्ट हो जाते हैं। अन्तर्यामी प्रभु ने सब जान लिया। उन्होंने पूछा—कहो हनुमान! क्या है?

जोरि पानि तब कह हनुमंता ❀ सुनहु दीनदयाल भगवंता
नाथ भरत कछु पूछन चहहीं ❀ प्रस्न करत मन सकुचत अहहीं

तब हनुमान हाथ जोड़कर बोले—हे दीनदयालु भगवान्! सुनिये। हे नाथ! भरतजी कुछ पूछना चाहते हैं, पर प्रश्न करते मन में सकुचाते हैं।

तुम्ह जानहु कपि मोर सुभाऊ ❀ भरतहि मोहि न कछु दुराऊ
सुनि प्रभु बचन भरत गहे चरना ❀ सुनहु नाथ प्रनतारति हरना

रामजी कहने लगे—हे हनुमान! तुम तो मेरा स्वभाव जानते ही हो। भरत और मुझ में कुछ छिपाव नहीं है। प्रभु के वचन सुनकर भरत ने रामजी के चरण

१. इच्छित, मनचाहा।

पकड़ लिये और कहा—हे शरणागतों के दुःखों को हरने वाले ! सुनिये ।

दो०—नाथ न मोहि संदेह कछु सपनेहुँ सोक न मोह ।
केवल कृपा तुम्हारिहि कृपानंद संदोह ॥३६॥

हे नाथ ! न तो मुझे कुछ सन्देह है, न स्वप्न में भी शोक और मोह है। हे कृपा और आनन्द के समूह ! यह केवल आप ही की कृपा का फल है ।

करउँ कृपानिधि एक ढिठाई ❀ मैं सेवक तुम्ह जन सुखदाई
संतन्ह कै महिमा रघुराई ❀ बहु बिधि बेद पुरानन्हि गाई

हे कृपानिधि ! मैं आप से एक धृष्टता करता हूँ । मैं सेवक हूँ और आप सेवक को सुख देने वाले हैं। हे रघुनाथजी ! संतों की महिमा वेद और पुराणों ने बहुत प्रकार से गाई है ।

श्रीमुख तुम्ह पुनि कीन्हि बड़ाई ❀ तिन्ह पर प्रभुहिं प्रीति अधिकाई
सुना चहउँ प्रभु तिन्ह कर लच्छन ❀ कृपासिंधु गुन ग्यान बिचच्छन

आपने भी अपने श्रीमुख से बड़ाई की है और उन पर आपका प्रेम भी अधिक है । हे प्रभु ! मैं उनके लक्षण सुनना चाहता हूँ । आप कृपा के समुद्र हैं और गुण और ज्ञान में अत्यन्त निपुण हैं ।

संत असन्त भेद बिलगाई ❀ प्रनतपाल मोहि कहहु बुझाई
संतन्ह के लच्छन सुनु भ्राता ❀ अगिनित श्रुति पुरान बिख्याता

हे शरणागत के पालक ! संत और असंत के भेद अलग-अलग करके मुझे समझाकर कहिये । रामजी ने कहा—हे भाई ! संतों के लक्षण सुनो । लक्षण असंख्य हैं और वेदों और पुराणों में प्रसिद्ध हैं ।

संत असंतन्ह कै असि करनी ❀ जिमि कुठार चन्दन आचरनी
काटइ परसु मलय सुनु भाई ❀ निज गुन देइ सुगन्ध बसाई

सन्त और असन्तों की करनी ऐसी है, जैसे कुल्हाड़ी और चन्दन का आचरण होता है । हे भाई ! सुनो । कुल्हाड़ी चन्दन को काटती है, किन्तु चन्दन अपना गुण देकर उसे सुगन्ध से सुवासित कर देता है ।

दो०—तातें सुर सीसन्ह चढ़त जग बल्लभ श्रीखंड ।
अनल दाहि पीटत घनहिं परसु बदन यह दंड ॥३७

इसी गुण के कारण चन्दन देवताओं के सिरों पर चढ़ता है और जगत् का प्यारा हो रहा है। पर कुल्हाड़ी के मुख को यह दण्ड मिलता है कि उसे आग में जलाकर फिर घन से पीटा जाता है। [दृष्टान्त अलंकार]

बिषय अलम्पट सील गुनाकर ❀ पर दुख दुख सुख सुख देखें पर
सम अभूत रिपु[1] बिमद बिरागी ❀ लोभामरष[2] हरष भय त्यागी

संत विषयों में अलिप्त, शील और सद्‌गुणों की खान होते हैं। उन्हें पराया दुःख देखकर दुःख और सुख देखकर सुख होता है। वे सब में समान भाव रखते हैं। अजात-शत्रु होते हैं। मद से रहित और वैराग्य-युक्त तथा लोभ, क्रोध, हर्ष और भय का त्याग किये हुये होते हैं।

कोमल चित दीनन्ह पर दाया ❀ मन बच क्रम मम भगति अमाया
सबहिं मानप्रद आपु अमानी ❀ भरत प्रान सम मम ते प्रानी

उनका चित्त कोमल होता है, वे दीनों पर दया रखते हैं, मन, वचन और कर्म से माया से रहित होकर मेरी निष्कपट भक्ति करते हैं, सबको सम्मान देते हैं, पर स्वयं मान-रहित होते हैं, हे भरत! वे प्राणी मुझे प्राणों के समान प्यारे होते हैं।

बिगत काम मम नाम परायन ❀ सान्ति बिरति बिनती मुदितायन
सीतलता सरलता मइत्री[3] ❀ द्विज पद प्रीति धर्म जनयित्री[4]

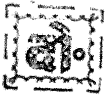
उनको कोई कामना नहीं होती। वे मेरे नाम के परायण होते हैं। शांति, वैराग्य, विनम्रता और प्रसन्नता के घर होते हैं। उनमें शीतलता, सरलता, मैत्री और ब्राह्मण के चरणों में प्रीति होती है, जो धर्म को उत्पन्न करने वाली होती है।

ये सब लच्छन बसहिं जासु उर ❀ जानहु तात संत संतत फुर[5]
सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं ❀ परुष[6] बचन कबहूँ नहिं बोलहिं

हे तात! जिसके हृदय में ये सब लक्षण बसते हों, उसे सदा सच्चा सन्त समझना। जो शम, दम, नियम और नीति से कभी चलायमान नहीं होते, मुख से कभी कठोर वचन नहीं निकालते,

---

१. अजातशत्रु, जिसका कोई शत्रु पैदा ही न हुआ हो। २. लोभ और क्रोध।
३. सब के प्रति मित्र-भाव। ४. उत्पन्न करने वाली। ५. सत्य। ६. कठोर।



निन्दा अस्तुति उभय सम ममता मम पद कंज।
ते सज्जन मम प्रान प्रिय गुन मंदिर सुख पुंज॥

जिन्हें निंदा और बड़ाई दोनों समान हैं और मेरे चरण-कमलों में जिनका ममत्व है, वे गुणों के घर और सुख की राशि सन्तजन मुझे प्राणों के समान प्यारे हैं।

सुनहु असंतन्ह केर सुभाऊ ❀ भूलेहुँ सङ्गति करिअ न काऊ
तिन्ह कर सङ्ग सदा दुखदाई ❀ जिमि कपिलहि[1] घालइ हरहाई[2]

अब दुष्टों का स्वभाव सुनो। कभी भूलकर भी उनकी संगति नहीं करनी चाहिए। उनका संग सदा दुख देने वाला होता है, जैसे कपिला गाय को हरहट (चोरी से दूसरे का खेत खाने वाली) गाय साथ लेकर नष्ट कर डालती है।

खलन्ह हृदयँ अति ताप बिसेखी ❀ जरहिं सदा पर सम्पति देखी
जहँ कहुँ निन्दा सुनहिं पराई ❀ हरषहिं मनहुँ परी निधि पाई

दुष्टों के हृदय में अत्यन्त अधिक संताप रहता है। वे पराई सम्पत्ति (सुख) देखकर सदा जला करते हैं। वे जहाँ कहीं दूसरे की निन्दा सुनते हैं, वहाँ ऐसे प्रसन्न होते हैं, मानो उन्होंने रास्ते में पड़ा हुआ खज़ाना पा लिया है।

काम क्रोध मद लोभ परायन[3] ❀ निर्दय कपटी कुटिल मलायन[4]
बयरु अकारन सब काहू सों ❀ जो कर हित अनहित ताहू सों

वे काम, क्रोध, मद और लोभ में लिप्त तथा दया-रहित, छली, कुटिल और पापों के घर होते हैं। अकारण ही वे सब किसी से बैर किया करते हैं। जो उनका उपकार करता है, उसके साथ भी बुराई करते हैं।

झूठइ लेना झूठइ देना ❀ झूठइ भोजन झूठ चबेना
बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा ❀ खाहिं महा अहि हृदय कठोरा

उनके लेने और देने के दोनों व्यवहार झूठे होते हैं। इसी प्रकार उनका भोजन और चबेना भी झूठा ही होता है। वे ऊपर से ऐसा मधुर वचन बोलते हैं, जैसे मोर; किन्तु हृदय के ऐसे कठोर होते हैं कि बड़े-बड़े साँपों को भी खा जाते हैं।

---

१. सीधी और दुधार। २. दुष्ट, चंचल। ३. लिप्त। ४. पाप के घर।

दो॰ पर द्रोही पर दार रत पर धन पर अपवाद[1]।
ते नर पाँवर पापमय देह धरे मनुजाद[2] ॥३९॥

वे दूसरों से द्रोह करने वाले, पराई स्त्री, पराया धन और पराई निन्दा से प्रीति रखने वाले हैं। वे पामर और पाप से युक्त मनुष्य नर-शरीर धारण किये हुये राक्षस ही हैं।

लोभइ ओढ़न लोभइ डासन ❀ सिस्नोदर पर जमपुर त्रास न
काहू की जौं सुनहि बड़ाई ❀ स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई

लोभ ही उनका ओढ़ना और लोभ ही बिछौना होता है। वे लिंग और पेट इन्हीं दो के परायण होते हैं। उन्हें यमपुर का भय नहीं होता। यदि किसी की वे बड़ाई सुनते हैं, तो ऐसी साँस लेते हैं, मानो उन्हें जूड़ी आ गई है।

जब काहू कै देखहिं बिपती ❀ सुखी भये मानहुँ जग नृपती
स्वारथ रत परिवार बिरोधी ❀ लंपट काम लोभ अति क्रोधी

जब वे किसी की विपत्ति देखते हैं, तब ऐसे सुखी होते हैं, मानो जगत् भर के राजा हो गये हैं। वे स्वार्थ में लिप्त, परिवार वालों के विरोधी, काम और लोभ के कारण लम्पट और बड़े क्रोधी होते हैं।

मातु पिता गुरु बिप्र न मानहिं ❀ आपु गये अरु घालहिं आनहिं
करहिं मोहबस द्रोह परावा ❀ सन्त सङ्ग हरि कथा न भावा

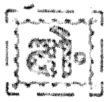
वे माता, पिता, गुरु और ब्राह्मण किसी का सम्मान नहीं करते। आप तो नष्ट हुये ही रहते हैं, दूसरों को भी नष्ट करते हैं। मोहवश दूसरों से शत्रुता करते हैं। उन्हें न संतों का संग अच्छा लगता है, न भगवान् की कथा ही सुहाती है।

अवगुन सिन्धु मन्दमति कामी ❀ बेद बिदूषक[3] पर धन स्वामी
बिप्र द्रोह पर द्रोह बिसेषा ❀ दम्भ कपट जिअँ धरें सुबेषा

वे अवगुणों के समुद्र, मन्दबुद्धि, कामी, वेदों के निंदक और ज़बरदस्ती पराये धन के स्वामी होते हैं। दूसरों से वे द्रोह तो करते ही हैं, ब्राह्मणों से तो और भी द्रोह करते हैं। हृदय में पाखंड और छल भरा रहता है, पर ऊपर से सुन्दर वेश धारण किये रहते हैं।

---

१. निन्दा। २. राक्षस। ३. निंदा करने वाला।



ऐसे अधम मनुज खल कृतजुग त्रेताँ नाहिं।
द्वापर कछुक बृन्द बहु होइहहिं कलिजुग माहिं ॥४०॥

सतयुग और त्रेता में ऐसे नीच और दुष्ट मनुष्य नहीं होते। द्वापर में थोड़े-से होंगे। पर कलियुग में तो इनके झुण्ड के झुण्ड होंगे।

पर हित सरिस धर्म नहिं भाई ❀ पर पीड़ा सम नहिं अधमाई
निरनय[1] सकल पुरान बेद कर ❀ कहेउँ तात जानहिं कोबिद नर

हे भाई ! परोपकार के समान कोई धर्म नहीं और दूसरों को कष्ट पहुँचाने के समान कोई नीचता नहीं। हे तात ! मैंने सब पुराणों और वेदों का निचोड़ तुमसे कह दिया। इस बात को पंडितजन जानते हैं।

नर सरीर धरि जे पर पीरा ❀ करहिं ते सहहिं महा भव भीरा
करहिं मोह बस नर अघ नाना ❀ स्वारथ रत परलोक नसाना

मनुष्य का शरीर धारण करके जो लोग दूसरों को पीड़ा पहुँचाते हैं, उनको जन्म-मृत्यु के महान् कष्ट भोगने पड़ते हैं। मनुष्य मोहवश अनेकों पाप करते हैं। वे स्वार्थ में अनुरक्त रहते हैं। इसी से उनका परलोक नष्ट हो जाता है।

काल रूप तिन्ह कहुँ मैं भ्राता ❀ सुभ अरु असुभ कर्म फल दाता
अस बिचारि जे परम सयाने ❀ भजहिं मोहि संसृत दुख जाने

हे भाई ! मैं उनके लिये कालरूप हूँ। मैं ही उनके अच्छे और बुरे कर्मों का फल देने वाला हूँ। ऐसा विचारकर जो लोग परम चतुर हैं, वे संसार को दुःखरूप जानकर मुझे ही भजते हैं।

त्यागहिं कर्म सुभासुभ दायक ❀ भजहिं मोहि सुर नर मुनि नायक
सन्त असंतन्ह के गुन भाखे ❀ ते न परहिं भव जिन्ह लखि राखे

इसी से वे शुभ और अशुभ फल देने वाले कर्मों को त्यागकर (निष्काम भाव से) देवता, मनुष्य और मुनियों के नायक मुझ को भजते हैं। मैंने संतों और असंतों के गुण कहे। जिन्होंने इन गुणों को समझ लिया है, वे जन्म-मरण के चक्कर में नहीं पड़ते।

१. निर्णय, सिद्धान्त, निचोड़।

दो०– सुनहु तात मायाकृत गुन अरु दोष अनेक।
गुन यह उभय न देखिअहिं देखिअ सो अविबेक॥

हे तात! सुनो, माया से रचे हुये ही अनेक गुण और दोष हैं। गुण इसी में है कि गुण-दोष दोनों ही न देखे जायँ। इन्हें देखना ही अविवेक है।

श्रीमुख बचन सुनत सब भाई ❀ हरषे प्रेमु न हृदयँ समाई
करहिं बिनय अति बारहिं बारा ❀ हनूमान हियँ हरष अपारा

रामजी के श्रीमुख से ये वचन सुनकर सब भाई हर्षित हो गये। प्रेम उनके हृदय में समाता न था। वे बार-बार बड़ी विनती करते हैं। विशेषकर हनुमान के हृदय में अपार हर्ष है।

पुनि रघुपति निज मन्दिर गये ❀ एहि बिधि चरित करत नित नए
बार बार नारद मुनि आवहिं ❀ चरित पुनीत राम के गावहिं

फिर रामचन्द्रजी अपने महल को गये। इसी प्रकार वे नित्य नई लीला करते हैं। नारद मुनि बार-बार आते थे, और राम के पवित्र चरित्र का गान करते थे।

नित नव चरित देखि मुनि जाहीं ❀ ब्रह्मलोक सब कथा कहाहीं
सुनि बिरंचि अतिसय सुख मानहिं ❀ पुनि पुनि तात करहु गुन गानहिं

मुनि नित्य नवीन चरित्र देखकर जाते हैं और ब्रह्मलोक में जाकर सब कथा कहते हैं। ब्रह्मा सुनकर अत्यन्त सुख मानते हैं और कहते हैं—हे तात! फिर-फिर रामजी के गुणों का गान करो।

सनकादिक नारदहिं सराहहिं ❀ जद्यपि ब्रह्म निरत मुनि आहहिं
सुनि गुन गान समाधि बिसारी ❀ सादर सुनहिं परम अधिकारी

सनक आदि मुनि नारद की सराहना करते हैं। यद्यपि मुनि ब्रह्मनिष्ठ हैं, तो भी रामजी के गुणों का गान सुनकर वे भी समाधि भूल जाते हैं और परम अधिकारी की तरह आदरपूर्वक सुनते हैं।

दो०– जीवनमुक्त ब्रह्मपर चरित सुनहिं तजि ध्यान।
जे हरि कथाँ न करहिं रति तिन्ह के हिय पाषान॥

जो जीवन्मुक्त हैं, ब्रह्मनिष्ठ हैं, वे भी ध्यान (ब्रह्म-समाधि) छोड़कर रामजी

का चरित्र सुनते हैं। यह जानकर भी जो भगवान् की कथा से प्रेम नहीं करते, उनके हृदय पत्थर के समान हैं।

एक बार रघुनाथ बोलाये ❁ गुर द्विज पुरबासी सब आये
बैठे सदसि अनुज मुनि सज्जन ❁ बोले बचन भगत भय भंजन

एक बार रामजी ने बुलाया, तो गुरु, ब्राह्मण और अन्य नगर-निवासी सब आये। सभा में रामजी के छोटे भाई, मुनि और अन्य सज्जन बैठे। तब भक्तों के भय को मिटाने वाले रामजी वचन बोले—

सुनहु सकल पुरजन मम बानी ❁ कहउँ न कछु ममता उर आनी
नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुताई ❁ सुनहु करहु जो तुम्हहिं सोहाई

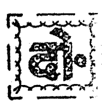
हे समस्त नगर-निवासियो ! मेरी बात सुनिये। मैं कुछ ममता हृदय में लाकर नहीं कहता हूँ। न अनीति की बात कहता हूँ और न कुछ प्रभुता की; इसलिये सुन लो और फिर तुम्हें अच्छी लगे, तो उसके अनुसार करो।

सोइ सेवक प्रियतम मम सोई ❁ मम अनुसासन मानै जोई
जौं अनीति कछु भाषौं भाई ❁ तौ मोहि बरजहु भय बिसराई

वही मेरा सेवक है, और वही मेरा प्रियतम है, जो मेरी आज्ञा माने। हे भाई ! मैं यदि कुछ अनीति की बात कहूँ, तो भय भुलाकर (बेखटके) मुझे रोक देना।

बड़े भाग मानुष तनु पावा ❁ सुर दुर्लभ सब ग्रन्थन्हि गावा
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा ❁ पाइ न जेहिं परलोक सँवारा

बड़े भाग्य से यह मनुष्य शरीर मिला है। सब ग्रन्थों ने यही कहा है कि यह शरीर देव-दुर्लभ है। यह साधन का धाम और मोक्ष का द्वार पाकर भी जिसने परलोक नहीं बना लिया,



सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोष लगाइ ॥४३

वह परलोक में दुःख पाता है और सिर धुन-धुनकर पछताता है और काल, कर्म और ईश्वर पर मिथ्या दोष लगाता है।

एहि तन कर फल बिषय न भाई ❁ स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई
नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं ❁ पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं

हे भाई ! इस शरीर का फल विषय-भोग नहीं है । स्वर्ग का भोग भी थोड़े दिन का है; और अंत में वह भी दुःख देने वाला है । जो मनुष्य-शरीर पाकर विषयों में मन लगाते हैं, वे मूर्ख अमृत को बदलकर विष ले लेते हैं ।

ताहि कबहुँ भल कहइ न कोई ❁ गुञ्जा ग्रहइ परस मनि[1] खोई
आकर[2] चारि[3] लच्छ चौरासी ❁ जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी

उसे कभी कोई भला न कहेगा, जो पारस मणि को खोकर बदले में घुँघची ले लेता है । चार खानों और चौरासी लाख योनियों में यह अविनाशी जीव चक्कर लगाता रहता है ।

फिरत सदा माया कर प्रेरा ❁ काल कर्म सुभाव गुन घेरा
कबहुँक करि करुना नर देही ❁ देत ईस बिनु हेतु सनेही

यह माया की प्रेरणा से काल, कर्म, स्वभाव और गुण से घिरा हुआ सदा भटकता रहता है । बिना कारण ही स्नेह करने वाले ईश्वर करुणा करके कभी इसे मनुष्य का शरीर दे देते हैं ।

नर तनु भव बारिधि कहुँ बेरो[4] ❁ सनमुख मरुत अनुग्रह मेरो
करनधार[5] सदगुरु दृढ़ नावा ❁ दुर्लभ साज[6] सुलभ करि पावा

यह मनुष्य का शरीर भवसागर के लिये बेड़ा (जहाज़) है । मेरी कृपा ही उसके लिए अनुकूल पवन है । सद्गुरु उस मज़बूत बेड़े के कर्णधार हैं । इस प्रकार कठिनता से मिलने वाले साधन सुलभ होकर उसे प्राप्त हो गये हैं ।

दो० जो न तरै भव सागर नर समाज अस पाइ ।
सो कृत निन्दक मंदमति आतमहन गति जाइ ॥४४

जो मनुष्य ऐसे साधन पाकर भी भवसागर से न तरे, वह कृतघ्न और मंदबुद्धि है और आत्मघाती की गति को प्राप्त होता है ।

जौं परलोक इहाँ सुख चहहू ❁ सुनि मम बचन हृदयँ दृढ़ गहहू
सुलभ सुखद मारग यह भाई ❁ भगति मोरि पुरान श्रुति गाई

यदि परलोक और यहाँ दोनों स्थानों में सुख चाहते हो, तो मेरे वचन सुनकर हृदय में उन्हें दृढ़ता से पकड़ रक्खो । हे भाई ! मेरी भक्ति का मार्ग

---

१. पारस पत्थर । २. खान । ३. अंडज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज । ४. जहाज़ ।
५. खेने वाला । ६. साधन ।

सुलभ और सुखद है, पुराणों और वेदों ने ऐसा गाया है।

ग्यान अगम प्रत्यूह[1] अनेका ❋ साधन कठिन न मन कहुँ टेका
करत कष्ट बहु पावई कोऊ ❋ भक्तिहीन मोहि प्रिय नहिं सोऊ

ज्ञान अगम है, उसकी प्राप्ति में अनेकों विघ्न हैं। उसका साधन कठिन है और उसमें मन के लिये कोई आधार नहीं है। बहुत कष्ट करके कोई उसे पा भी लेता है, पर वह भी भक्ति-रहित होने के कारण मुझे प्रिय नहीं होता।

भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी ❋ बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी
पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता ❋ सतसंगति संसृति कर अन्ता

भक्ति स्वतन्त्र है। वह सब सुखों की खान है। परन्तु प्राणी उसे बिना सत्संग के नहीं पा सकते। और पुण्य-समूह के बिना सन्त नहीं मिलते। सत्संगति ही आवागमन का अन्त करने वाली है।

पुन्य एक जग महुँ नहिं दूजा ❋ मन क्रम बचन बिप्र पद पूजा
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा ❋ जो तजि कपटु करइ द्विज सेवा

जगत् में पुण्य एक ही है, दूसरा नहीं। वह है, मन, कर्म और वचन से ब्राह्मणों के चरणों की पूजा करना। जो कपट छोड़कर ब्राह्मणों की सेवा करता है, देवता और मुनि उस पर प्रसन्न रहते हैं।

दो० **औरउ एक गुपुत मत सबहि कहउँ कर जोरि।**
संकर भजन बिना नर भगति न पावइ मोरि॥

और भी एक गुप्त मत है, मैं उसे सबसे हाथ जोड़कर कहता हूँ। वह यह है कि शिवजी के भजन बिना मनुष्य मेरी भक्ति नहीं पाता।

कहहु भगति पथ कवन प्रयासा ❋ जोग न मख जप तप उपवासा
सरल सुभाव न मन कुटिलाई ❋ जथा लाभ संतोष सदाई

कहो तो भक्ति-पथ में कौन-सा परिश्रम है? न योग करना पड़ता है, न यज्ञ, न जप-तप और न उपवास ही। सरल स्वभाव हो, मन में कुटिलता न हो, और जो मिले उसी में सदा सन्तोष रक्खे।

मोर दास कहाइ नर आसा ❋ करइ त कहहु कहा बिस्वासा
बहुत कहउँ का कथा बढ़ाई ❋ एहि आचरन बस्य मैं भाई

१. विघ्न।

मेरा दास कहलाकर यदि कोई मनुष्यों का भरोसा करे, तो तुम्हीं बताओ, उसका क्या विश्वास है ? मैं बहुत बात बढ़ाकर और क्या कहूँ ? मैं तो इसी आचरण से वश में रहता हूँ—

बयरु न बिग्रह आस न त्रासा ❀ सुखमय ताहि सदा सब आसा
अनारम्भ अनिकेत अमानी ❀ अनघ अरोष दच्छ बिग्यानी

जो न किसी से बैर करे, न लड़ाई-झगड़ा करे, न आशा रक्खे, न भय ही करे, उसके लिये सभी दिशायें सदा सुखमयी हैं। जो सर्वारंभ परित्यागी, आश्रय-हीन, मान-हीन, पाप-हीन, क्रोध-हीन, भक्ति करने में निपुण और विवेक-वान् है,

प्रीति सदा सज्जन संसर्गा ❀ तृन सम बिषय स्वर्ग अपबर्गा
भगति पच्छ हठ नहिं सठताई ❀ दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई

सज्जनों के संसर्ग में रहने का जिसे सदा प्रेम है, जो भक्त के सामने स्वर्ग और मुक्ति को तृण के समान गिनता है, जो भक्ति के पक्ष में हठ तो करता है, पर मूर्खता नहीं करता, तथा जिसने सब कुतर्कों को दूर बहा दिया है,

दो० मम गुन ग्राम नाम रत गत ममता मद मोह।
ताकर सुख सोइ जानइ परानन्द सन्दोह[1] ॥४६

जो मेरे गुण-समूहों और नाम के परायण हैं, ममता, मद और मोह से रहित हैं, उसका सुख वही जानता है, जो परमानन्द-राशि को प्राप्त है।

सुनत सुधा सम बचन राम के ❀ गहे सबन्हि पद कृपाधाम के
जननि जनक गुर बन्धु हमारे ❀ कृपा निधान प्रान ते प्यारे

रामचन्द्रजी के अमृत के समान वचन सुनकर सबने कृपा के धाम रामजी के चरण पकड़ लिये। और कहा—हे कृपानिधान ! आप हमारे माता, पिता, गुरु, भाई और प्राणों से भी अधिक प्रिय हैं।

तनु धनु धाम राम हितकारी ❀ सब बिधि तुम्ह प्रनतारतिहारी
अस सिख तुम्ह बिनु देइ न कोऊ ❀ मातु पिता स्वारथरत ओऊ

हे शरणागत के दुःख दूर करने वाले रामजी ! आप ही हमारे शरीर, धन, धाम और सभी प्रकार से हित करने वाले हैं। ऐसा उपदेश आपके अतिरिक्त

---

१. समूह।

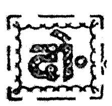
कोई नहीं दे सकता। माता-पिता हैं, परन्तु वे भी स्वार्थ-परायण हैं।

हेतु रहित जग जुग उपकारी ❀ तुम्ह तुम्हार सेवक असुरारी
स्वारथ मीत सकल जग माहीं ❀ सपनेहुँ प्रभु परमारथ नाहीं

हे असुरों के शत्रु! जगत् में बिना कारण उपकार करने वाले केवल दो हैं—एक आप और दूसरे आपके सेवक। जगत् में शेष सब स्वार्थ के मित्र हैं। हे प्रभो! स्वप्न में भी उनमें परमार्थ का भाव नहीं है।

सब के बचन प्रेम रस साने ❀ सुनि रघुनाथ हृदयँ हरषाने
निज निज गृह गये आयसु पाई ❀ बरनत प्रभु बतकही सुहाई

सबके प्रेमरस में सने हुये वचन सुनकर रामचन्द्रजी हृदय में हर्षित हुये। तब वे सब आज्ञा पाकर प्रभु के मनोहर वार्तालाप की चर्चा करते हुये अपने-अपने घर गये।


उमा अवधबासी नर नारि कृतारथ रूप।
ब्रह्म सच्चिदानन्द घन रघुनायक जहँ भूप ॥४७॥

हे पार्वती! अयोध्यावासी पुरुष-स्त्री सभी कृतार्थ स्वरूप हैं, जहाँ सच्चिदा-नन्द-घन ब्रह्म रामचन्द्रजी राजा हैं।

एक बार बसिष्ठ मुनि आये ❀ जहाँ राम सुखधाम सुहाये
अति आदर रघुनायक कीन्हा ❀ पद पखारि पादोदक[1] लीन्हा

एक बार मुनि वशिष्ठजी वहाँ आये, जहाँ सुन्दर सुख के धाम रामजी थे। राम ने उनका बड़ा ही सत्कार किया और उनके चरण धोकर चरणामृत लिया।

राम सुनहु मुनि कह कर जोरी ❀ कृपासिन्धु बिनती कछु मोरी
देखि देखि आचरन तुम्हारा ❀ होत मोह मम हृदयँ अपारा

मुनि ने हाथ जोड़कर कहा—हे कृपा के समुद्र, रामजी! मेरी कुछ विनती सुनिये। आपके चरित्र देखकर मेरे हृदय में अपार मोह होता है।

महिमा अमित बेद नहिं जाना ❀ मैं केहि भाँति कहउँ भगवाना
उपरोहित्य कर्म अति मन्दा ❀ बेद पुरान स्मृति कर निन्दा

---

१. चरण धोया हुआ जल।

हे भगवान् ! आपकी महिमा की सीमा नहीं है। उसे वेद भी नहीं जानते, मैं किस प्रकार कह सकता हूँ। पुरोहिती का धंधा बड़ा नीचा है। वेद, पुराण और स्मृति सभी इसकी निंदा करते हैं।

जब न लेउँ मैं तब बिधि मोही ❀ कहा लाभ आगें सुत तोही
परमातमा ब्रह्म नर रूपा ❀ होइहि रघुकुल भूषन भूपा

जब मैं पुरोहिती का काम नहीं ले रहा था, तब ब्रह्मा ने मुझे कहा था—हे पुत्र ! आगे तुम्हें लाभ होगा। स्वयं परमात्मा ब्रह्म मनुष्य-रूप में रघुकुल के भूषण राजा होंगे।

दो० तब मैं हृदयँ बिचारा जोग जग्य ब्रत दान।
जा कहुँ करिअ सो पैहउँ धर्म न एहि सम आन ॥४८

तब मैंने हृदय में विचार किया कि जिसके लिये योग, यज्ञ, व्रत और दान किया जाता है, उसे मैं इसी कर्म से पा जाऊँगा, तब तो इसके समान दूसरा कोई धर्म ही नहीं है।

जप तप नियम जोग निज धर्मा ❀ श्रुति सम्भव नाना सुभ कर्मा
ग्यान दया दम तीरथ मज्जन ❀ जहँ लगि धर्म कहत श्रुति सज्जन

जप, तप, नियम, योग, अपने-अपने वर्णाश्रम के धर्म, श्रुतियों से उत्पन्न अनेक शुभ कर्म, ज्ञान, दया, दम, तीर्थ-स्नान आदि जहाँ तक वेदों और सज्जनों ने धर्म कहे हैं,

आगम निगम पुरान अनेका ❀ पढ़े सुने कर फल प्रभु एका
तव पद पङ्कज प्रीति निरंतर ❀ सब साधन कर यह फल सुन्दर

हे प्रभु ! अनेक तन्त्र, वेद और पुराणों के पढ़ने और सुनने का फल एक ही है। वह है आपके कमल ऐसे चरणों में निरन्तर प्रेम; और सब साधनों का भी यही एक सुन्दर फल है।

छूटइ मल कि मलहि के धोएँ ❀ घृत कि पाव कोउ बारि बिलोएँ[1]
प्रेम भगति जल बिनु रघुराई ❀ अभिअन्तर[2] मल कबहुँ न जाई

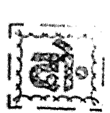
मल से धोने से कहीं मल छूटता है ? पानी मथ कर कोई घी पीता है ? हे रामजी ! प्रेम-भक्ति-रूपी जल के बिना अन्तःकरण का मल कभी नहीं जाता।

---

१. मथने से। २. भीतर का।

सोइ सर्बग्य तग्य सोइ पंडित ❀ सोइ गुन गृह बिग्यान अखंडित
दच्छ सकल लच्छन जुत सोई ❀ जाकें पद सरोज रति होई

वही सर्वज्ञ है, वही तत्वज्ञ है, वही पंडित है, वही गुणों का घर और अखंड विज्ञानी है, वही चतुर और सब सुलक्षणों से युक्त है, जिसकी आपके चरण-कमल में प्रीति हो।



नाथ एक बर माँगउँ राम कृपा करि देहु।
जन्म जन्म प्रभु पद कमल कबहुँ घटै जनि नेहु ॥४९॥

हे नाथ! हे रामजी! एक वर माँगता हूँ, कृपा करके दीजिये। जन्म-जन्मान्तर में भी आपके चरण-कमलों में मेरा प्रेम कभी न घटे।

अस कहि मुनि बसिष्ठ गृह आये ❀ कृपासिंधु के मन अति भाये
हनूमान भरतादिक भ्राता ❀ सङ्ग लिये सेवक सुखदाता

ऐसा कहकर मुनि वशिष्ठजी घर आये। कृपा के समुद्र रामचन्द्रजी के मन को वे बहुत प्रिय लगे। तदनन्तर हनुमान तथा भरत आदि भाइयों को साथ लेकर सेवकों को सुख देने वाले

पुनि कृपाल पुर बाहर गये ❀ गज रथ तुरग मँगावत भये
देखि कृपा करि सकल सराहे ❀ दिये उचित जिन्ह जिन्ह तेइ चाहे

कृपालु राम फिर नगर के बाहर गये और उन्होंने हाथी, रथ और घोड़े मँगवाये। उन्हें देखकर, कृपा करके उन्होंने सबकी बड़ाई की और जिसको जिसने चाहा, उसे उसको उचित जानकर दिया।

हरन सकल श्रम प्रभु श्रम पाई ❀ गये जहाँ सीतल अँबराई
भरत दीन्ह निज बसन डसाई ❀ बैठे प्रभु सेवहिं सब भाई

संसार के समस्त श्रमों को हरने वाले प्रभु ने थकावट अनुभव की और वे वहाँ गये, जहाँ शीतल अमराई (आमों का बगीचा) थी। वहाँ भरत ने अपना वस्त्र बिछा दिया। प्रभु बैठ गये और सब भाई उनकी सेवा करने लगे।

मारुतसुत तब मारुत करई ❀ पुलक बपुष लोचन जल भरई
हनूमान सम नहिं बड़ भागी ❀ नहिं कोउ राम चरन अनुरागी
गिरिजा जासु प्रीति सेवकाई ❀ बार बार प्रभु निज मुख गाई

उस समय पवन-पुत्र हनुमान हवा करने लगे। उनका शरीर पुलकित हो गया और नेत्रों में जल भर आया। हनुमान-जैसा रामजी के चरणों में प्रीति रखने वाला कोई बड़भागी नहीं है। हे पार्वती! जिसकी प्रीति और सेवा की बड़ाई प्रभु ने बार-बार अपने मुख से की है।

दो० तेहिं अवसर मुनि नारद आए करतल बीन।
गावन लागे राम कल कीरति सदा नवीन ॥५०॥

उसी अवसर पर नारदमुनि हाथ में वीणा लिये हुये आये। वे रामजी की नित्य नवीन रहने वाली सुन्दर कीर्ति गाने लगे।

मामवलोकय पङ्कज लोचन ❀ कृपा बिलोकनि सोक बिमोचन
नील तामरस स्याम काम अरि ❀ हृदय कंज मकरंद मधुप हरि

हे कमलनेत्र! हे शोक के छुड़ाने वाले! कृपा-दृष्टि से मेरी ओर देखिये। हे नीले कमल के समान श्याम वर्ण वाले हरि! हे कामदेव के शत्रु शिवजी के हृदय-रूपी कमल के मकरन्द के पान करने वाले भ्रमर!

जातुधान बरूथ बल भञ्जन ❀ मुनि सज्जन रंजन अघ गञ्जन
भूसुर ससि नव बृंद बलाहक ❀ असरन सरन दीन जन गाहक

हे राक्षसों की सेना के बल को तोड़ने वाले! हे मुनियों और सज्जनों को आनन्दित करने वाले, पाप के नाश करने वाले, हे ब्राह्मणरूपी खेती के लिये नवीन मेघ-समूह! हे शरणहीनों को शरण देने वाले! हे दीनजनों को ग्रहण करने वाले!

भुजबल बिपुल भार महि खंडित ❀ खर दूषन बिराध बध पंडित
रावनारि सुखरूप भूपबर ❀ जय दसरथ कुल कुमुद सुधाकर

हे अपने भुजबल से पृथ्वी के बड़े भारी भार को चूर-चूर करने वाले, खर-दूषण और विराध के वध करने में कुशल, रावण के शत्रु, सुख-रूप, राजाओं में श्रेष्ठ और दशरथ के कुल-रूपी कुईं के लिये चन्द्रमा के समान रामजी! आपकी जय हो।

सुजसु पुरान बिदित निगमागम ❀ गावत सुर मुनि संत समागम
कारुनीक ब्यलीक मद खंडन ❀ सब बिधि कुसल कोसला मंडन
कलि मल मथन नाम ममताहन ❀ तुलसिदास प्रभु पाहि प्रनत जन

आपका सुयश पुराणों, वेदों और शास्त्रों में प्रकट है। देवता, मुनि और संत एकत्र होकर उसे गाते हैं। आप करुणा करने वाले, झूठे मद का नाश करने वाले, सब प्रकार से निपुण और अवध के भूषण ही हैं। आपका नाम कलियुग के पापों को मथने वाला और ममता को मारने वाला है। हे तुलसीदास के प्रभु! शरणागत की रक्षा कीजिये।

प्रेम सहित मुनि नारद बरनि राम गुन ग्राम।
सोभा सिंधु हृदयँ धरि गये जहाँ बिधि धाम॥५१॥

नारद मुनि रामजी के गुण-ग्राम का प्रेम-सहित वर्णन करके और शोभा के समुद्र को हृदय में धरकर ब्रह्मलोक को गये।

गिरिजा सुनहु बिसद यह कथा ❀ मैं सब कही मोरि मति जथा
राम चरित सत कोटि अपारा ❀ श्रुति सारदा न बरनै पारा

हे गिरिजे! सुनो, मैंने यह उज्ज्वल कथा, जैसी मेरी बुद्धि थी, वैसी कही। रामजी के चरित्र सौ करोड़ और अपार हैं। वेद और सरस्वती भी वर्णन करके उसका पार नहीं पा सकते।

राम अनन्त अनन्त गुनानी ❀ जन्म कर्म अनन्त नामानी
जल सीकर[1] महि रज गनि जाहीं ❀ रघुपति चरित न बरनि सिराहीं

रामजी अनंत हैं, उनके गुण अनंत हैं, उनके जन्म, कर्म और नाम भी अनंत हैं। जल की बूँदें, पृथ्वी के रज-कण गिने जा सकते हैं, पर रामजी के चरित्र वर्णन करने पर नहीं चुकते। [प्रौढ़ोक्ति अलंकार]

बिमल कथा हरि पद दायनी ❀ भगति होइ सुनि अनपायनी
उमा कहेउँ सब कथा सुहाई ❀ जो भुसुण्डि खगपतिहिं सुनाई

रामजी की पवित्र कथा परम पद को देने वाली है। इसके सुनने से अविचल भक्ति प्राप्त होती है। हे उमा! मैंने वह सब सुन्दर कथा कही, जो काकभुशुण्डि ने गरुड़ को सुनाई थी।

कछुक राम गुन कहेउँ बखानी ❀ अब का कहौं सो कहहु भवानी
सुनि सुभ कथा उमा हरषानी ❀ बोलीं अति बिनीत मृदु बानी
धन्य धन्य मैं धन्य पुरारी ❀ सुनेउँ राम गुन भव भय हारी

१. बूँद।

मैंने थोड़ा-सा राम का गुण बखानकर कहा। अब हे भवानी! कहो, अब और क्या कहूँ? रामजी की मंगलमयी कथा सुनकर पार्वती हर्षित हुईं। वे अत्यंत नम्रता से मधुर वाणी बोलीं—हे त्रिपुरारि! मैं धन्य हूँ, धन्य हूँ, धन्य हूँ जो मैंने जन्म-मृत्यु के भय को हरण करने वाले रामजी के गुण (चरित्र) सुने।

दो० **तुम्हरी कृपाँ कृपायतन अब कृतकृत्य न मोह।**
जानेउँ राम प्रताप प्रभु चिदानन्द सन्दोह ॥(क)

हे कृपा के धाम! आपकी कृपा से अब मैं कृतार्थ हो गई। अब मुझे मोह नहीं रह गया है। हे प्रभु! मैं सच्चिदानन्द-घन रामजी के प्रताप को जान गई।

नाथ तवानन ससि स्रवत कथा सुधा रघुबीर।
स्रवन पुटन्हि मन पान करि नहिं अघात मतिधीर ॥(ख)

हे नाथ! आपका चन्द्र-मुख रामजी की कथा-रूपी अमृत की वर्षा कर रहा है। हे मतिधीर! श्रवण-पुटों से उसे पी कर मेरा मन नहीं अघाता है।

राम चरित जे सुनत अघाहीं ❀ रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं
जीवनमुक्त महामुनि जेऊ ❀ हरि गुन सुनहिं निरंतर तेऊ

रामजी का चरित्र सुनते सुनते जो तृप्त हो जाते हैं, उन्होंने उसका विशेष रस जाना ही नहीं। जो जीवन्मुक्त महामुनि हैं, वे भी भगवान् के गुण-वर्णन निरंतर सुनते रहते हैं।

भवसागर चह पार जो पावा ❀ राम कथा ता कहँ दृढ़ नावा
बिषइन्ह कहँ पुनि हरि गुन ग्रामा ❀ श्रवन सुखद अरु मन अभिरामा

जो व्यक्ति भवसागर का पार पाना चाहता है, रामजी की कथा उसके लिये दृढ़ नौका है। हरि के गुणों के समूह तो विषयी लोगों के भी कानों को सुख देने वाले और मन को आनन्दित करने वाले हैं।

स्रवनवंत अस को जग माहीं ❀ जाहि न रघुपति चरित सोहाहीं
ते जड़ जीव निजात्मक घाती ❀ जिन्हहिं न रघुपति कथा सोहाती

जगत् में ऐसा कान वाला कौन है, जिसे रामजी की कथा प्यारी नहीं लगती। वे जड़ प्राणी अपनी आत्मा का घात करने वाले हैं, जिन्हें रामजी की कथा प्रिय नहीं लगती।

हरि चरित्र मानस तुम्ह गावा ❀ सुनि मैं नाथ अमित सुख पावा
तुम्ह जो कही यह कथा सुहाई ❀ कागभुसुंडि गरुड़ प्रति गाई

हे नाथ ! आपने रामचरितमानस का गान किया, उसे सुनकर मैंने अपार सुख पाया। आपने जो यह कहा कि यह सुन्दर कथा काकभुशुण्डि ने गरुड़ से कही थी—

दो॰ बिरति ग्यान बिग्यान दृढ़ राम चरन अति नेह।
बायस तन रघुपति भगति मोहि परम संदेह ॥५३॥

काकभुशुण्डि वैराग्य, ज्ञान और विज्ञान में दृढ़ हैं। रामजी के चरणों में उनका अत्यन्त स्नेह भी है, पर कौवे के शरीर में रामजी की भक्ति होने का मुझे बड़ा सन्देह हो रहा है।

नर सहस्र महँ सुनहु पुरारी ❀ कोउ एक होइ धर्म ब्रत धारी
धर्मसील कोटिक महँ कोई ❀ बिषय बिमुख बिराग रत होई

हे त्रिपुरारि ! सुनिये, हज़ारों मनुष्यों में कोई एक धर्म के व्रत का पालन करने वाला होता है और करोड़ों धर्मात्माओं में कोई एक विषय से विमुख और वैराग्य में अनुरक्त होता है।

कोटि बिरक्त मध्य श्रुति कहई ❀ सम्यक[1] ग्यान सकृत[2] कोउ लहई
ग्यानवंत कोटिक महँ कोऊ ❀ जीवन मुक्त सकृत जग सोऊ

वेद कहते हैं कि करोड़ों विरक्तों में कोई एक यथार्थ ज्ञान पाता है। करोड़ों ज्ञानियों में कोई एक ही जीवन्मुक्त होता है।

तिन्ह सहस्र महुँ सब सुख खानी ❀ दुर्लभ ब्रह्म लीन बिग्यानी
धर्मसील बिरक्त अरु ग्यानी ❀ जीवनमुक्त ब्रह्मपर प्रानी

उन हजारों जीवन्मुक्तों में भी सब सुखों की खान, ब्रह्म में लीन और विज्ञानी पुरुष और भी दुर्लभ है। धर्मात्मा, विरक्त, ज्ञानी, जीवन्मुक्त और ब्रह्मलीन, इन सब प्राणियों में,

सब तें सो दुर्लभ सुरराया ❀ राम भगति रत गत मद माया
सो हरि भगति काग किमि पाई ❀ बिस्वनाथ मोहि कहहु बुझाई

---

१. यथार्थ। २. विरला।

हे देवाधिदेव महादेव ! वह प्राणी दुर्लभ है, जो राम-भक्ति परायण है और मद और माया से रहित है। हे विश्वनाथ ! उस हरि-भक्ति को कौवे ने कैसे पाया ? मुझे समझाकर कहिये।

दो०— राम परायन ग्यान रत गुनागार मति धीर।
नाथ कहहु केहि कारन पायेउ काक सरीर ॥५४॥

हे नाथ ! रामजी में अनुरक्त, ज्ञान में युक्त, गुणों का धाम और धीरबुद्धि होकर भी भुशुण्डि ने कौवे का शरीर कैसे पाया।

यह प्रभु चरित पवित्र सुहावा ❀ कहहु कृपाल काग कहँ पावा
तुम्ह केहि भाँति सुना मदनारी ❀ कहहु मोहि अति कौतुक भारी

हे कृपालु ! प्रभु का यह पवित्र और सुन्दर चरित्र कौवे ने कहाँ पाया ? और हे कामदेव के शत्रु ! यह बताइये कि आपने किस प्रकार इसे सुना ? मुझे बड़ा भारी कौतूहल हो रहा है।

गरुड़ महा ग्यानी गुन रासी ❀ हरि सेवक अति निकट निवासी
तेहि केहि हेतु काग सन जाई ❀ सुनी कथा मुनि निकर बिहाई

गरुड़ तो बड़े ज्ञानी, गुणों की राशि, श्रीहरि के सेवक और उनके अत्यन्त निकट के रहने वाले हैं; उन्होंने मुनियों का समूह छोड़कर, कौवे के पास जाकर किस कारण से कथा सुनी ?

कहहु कवन बिधि भा संबादा ❀ दोउ हरि भगत काग उरगादा[1]
गौरि गिरा सुनि सरल सुहाई ❀ बोले सिव सादर सुख पाई

बताइये, उनमें संवाद किस प्रकार हुआ ? काकभुशुण्डि और गरुड़ दोनों ही भगवद्भक्त हैं। पार्वती की सरल और सुहावनी वाणी सुनकर शिवजी सुख पाकर आदर-सहित बोले—

धन्य सती पावनि मति तोरी ❀ रघुपति चरन प्रीति नहिं थोरी
सुनहु परम पुनीत इतिहासा ❀ जो सुनि सकल सोक भ्रम नासा
उपजइ राम चरन बिस्वासा ❀ भव निधि तर नर बिनहिं प्रयासा

हे सती ! तुम धन्य हो; तुम्हारी बुद्धि पवित्र है, राम के चरणों में तुम्हारी प्रीति भी कम नहीं है। अब तुम उस परम पवित्र इतिहास को सुनो, जिसे सुनने

---

१. साँप को खाने वाला, गरुड़।

से सब शोक और भ्रम का नाश हो जाता है, तथा रामजी के चरणों में विश्वास उत्पन्न होता है, और मनुष्य सहज ही में भवसागर से तर जाता है।

दो० ऐसिअ प्रस्न बिहंगपति कीन्ह काग सन जाइ।
सो सब सादर कहिहउँ सुनहु उमा मन लाइ ॥५५॥

ऐसा ही प्रश्न गरुड़ ने भी काकभुशुण्डि के पास जाकर किया था। हे उमा! मैं वह सब आदर-सहित कहूँगा, मन लगाकर सुनो।

मैं जिमि कथा सुनी भव मोचनि ❀ सो प्रसंग सुनु सुमुखि सुलोचनि
प्रथम दच्छ गृह तव अवतारा ❀ सती नाम तब रहा तुम्हारा

मैंने जिस प्रकार वह भव (जन्म-मृत्यु) से छुड़ाने वाली कथा सुनी, हे सुन्दर मुँह वाली, सुन्दर नेत्रों वाली! वह प्रसंग सुनो। पहले दक्ष प्रजापति के घर तुम्हारा जन्म हुआ था, तब तुम्हारा नाम सती था।

दच्छ जग्य तव भा अपमाना ❀ तुम्ह अति क्रोध तजे तब प्राना
मम अनुचरन्ह कीन्ह मख भङ्गा ❀ जानहु तुम्ह सो सकल प्रसंगा

दक्ष के यज्ञ में जब तुम्हारा अपमान हुआ और तुमने अत्यन्त क्रोध-वश प्राण त्याग दिये, और फिर मेरे सेवकों ने यज्ञ विध्वंस कर दिया, वह सारा प्रसंग तुम जानती हो।

तब अति सोच भयेउ मन मोरें ❀ दुखी भयेउँ बियोग प्रिय तोरें
सुन्दर बन गिरि सरित तड़ागा ❀ कौतुक देखत फिरेउँ बेरागा

तब हे प्रिये! मेरे मन में बड़ा सोच हुआ और मैं तुम्हारे वियोग से दुःखी हो गया। मैं विरक्त की तरह सुन्दर वन, पर्वत, नदी और तालाबों का कौतुक (दृश्य) देखता हुआ फिरता रहा।

गिरि सुमेर उत्तर दिसि दूरी ❀ नील सैल एक सुन्दर भूरी
तासु कनकमय सिखर सुहाये ❀ चारि चारु मोरें मन भाये

उत्तर दिशा में, सुमेरु पर्वत से भी बहुत दूर, बहुत ही सुन्दर एक नीलपर्वत है। उसके सुनहले सुन्दर शिखरों में से चार बहुत सुन्दर शिखर मेरे मन को बहुत ही प्रिय लगे।

तिन्ह पर एक एक बिटप बिसाला ❀ बट पीपर पाकरी रसाला
सैलोपरि सर सुन्दर सोहा ❀ मनि सोपान देखि मन मोहा

उन एक-एक पर बरगद, पीपल, पाकर और आम के एक-एक विशाल वृक्ष हैं। पर्वत के ऊपर एक सुन्दर तालाब शोभायमान है, जिसकी मणियों की सीढ़ियाँ देखकर मन मोहित हो जाता है।

दो० सीतल अमल मधुर जल जलज बिपुल बहुरंग।
कूजत कल रव हंस गन गुञ्जत मञ्जुल भृङ्ग॥५६॥

उसका जल शीतल, निर्मल और मीठा है। उसमें अनेक रंगों के बहुत कमल खिले हैं। हंसगण मधुर स्वर से बोल रहे हैं और भौंरे सुन्दर गुञ्जार कर रहे हैं।

तेहि गिरि रुचिर बसै खग सोई ❀ तासु नास कल्पांत न होई
माया कृत गुन दोष अनेका ❀ मोह मनोज आदि अबिबेका

उस सुन्दर पर्वत पर वही पक्षी (काक-भुशुंडि) बसता है। उसका नाश कल्प के अन्त में भी नहीं होगा। माया से उत्पन्न अनेकों गुण और दोष, मोह,काम आदि अविवेक,

रहे ब्यापि समस्त जग माहीं ❀ तेहि गिरि निकट कबहुँ नहिं जाहीं
तहँ बसि हरि हि भजै जिमि कागा ❀ सो सुनु उमा सहित अनुरागा

सारे जगत् में व्याप्त हो रहे हैं, पर वे उस पर्वत के पास कभी नहीं जाते। वहाँ बसकर वह कौवा जिस प्रकार हरि को भजता है, हे उमा ! उसे प्रेम-सहित सुनो।

पीपर तरु तर ध्यान जो धरई ❀ जाप जग्य पाकरि तर करई
आम छाँह कर मानस पूजा ❀ तजि हरि भजनु काजु नहिं दूजा

पीपल-वृक्ष के नीचे वह ध्यान लगाता है। जप और यज्ञ पाकर के नीचे करता है। आम की छाया में मानसी पूजा करता है। उसे हरि के भजन को छोड़कर दूसरा कोई काम नहीं है।

बर तर कह हरि कथा प्रसंगा ❀ आवहिं सुनहिं अनेक बिहंगा
राम चरित बिचित्र बिधि नाना ❀ प्रेम सहित कर सादर गाना

बरगद के नीचे वह हरि की कथाओं के प्रसङ्ग कहता है। अनेकों पक्षी आते और कथा सुनते हैं। विचित्र रामचरित्र का वह अनेकों प्रकार से प्रेम और आदर-सहित गान करता है।

सुनहिं सकल मति बिमल मराला ❀ बसहिं निरंतर जे तेहि ताला
जब मैं जाइ सो कौतुक देखा ❀ उर उपजा आनन्द बिसेषा

सब निर्मल बुद्धि वाले हंस, जो उस ताल में सदा निवास करते हैं, उसे सुनते हैं। जब वहाँ जाकर मैंने यह दृश्य देखा, तब हृदय में विशेष आनन्द उत्पन्न हुआ।

दो॰ तब कछु काल मराल तनु धरि तहँ कीन्ह निवास।
सादर सुनि रघुपति गुन पुनि आयेउँ कैलास॥

तब मैंने हंस का शरीर धारण कर कुछ समय वहाँ निवास किया। आदर-पूर्वक रामजी के गुणों को सुनकर फिर मैं कैलास को लौट आया।

गिरिजा कहेउँ सो सब इतिहासा ❀ मैं जेहि समय गयेउँ खग पासा
अब सो कथा सुनहु जेहि हेतू ❀ गयेउ काग पहिं खग कुल केतू

हे पार्वती! मैंने वह सब इतिहास कहा, कि जब मैं उस पक्षी के पास गया था। अब वह कथा सुनो, जिस कारण से गरुड़ उस कौवे के पास गये।

जब रघुनाथ कीन्ह रन क्रीड़ा[1] ❀ समुझत चरित होति मोहिं ब्रीड़ा[2]
इन्द्रजीत कर आपु बँधायो ❀ तब नारद मुनि गरुड़ पठायो

जब रामजी ने ऐसी रणलीला की, जिस लीला का स्मरण करने से मुझे लज्जा होती है—मेघनाद के हाथ से उन्होंने अपना बंधन कराया; तब नारद मुनि ने गरुड़ को भेजा।

बंधन काटि गयेउ उरगादा ❀ उपजा हृदयँ प्रचंड बिषादा
प्रभु बन्धन समुझत बहु भाँती ❀ करत बिचार उरग आराती

गरुड़ बंधन काटकर गये, तब उनके हृदय में बड़ा भारी विषाद उत्पन्न हुआ। प्रभु के (सचमुच) बन्धन का स्मरण कर सर्पों के शत्रु गरुड़ बहुत प्रकार से विचार करने लगे।

ब्यापक ब्रह्म बिरज बागीसा ❀ माया मोह पार परमीसा
सो अवतार सुनेउँ जग माहीं ❀ देखेउँ सो प्रभाव कछु नाहीं

व्यापक, ब्रह्म, विकार-रहित, वाणी के पति और माया-मोह से, परे परमेश्वर

१. लीला। २. लज्जा।

हैं उन्हीं का अवतार मैंने जगत् में सुना, पर उस अवतार का कुछ प्रभाव मैंने नहीं देखा।

दो०—भव बंधन तें छूटहिं नर जपि जाकर नाम।
खर्ब निसाचर बाँधेउ नागपास सोइ राम ॥५८

जिसका नाम जपकर मनुष्य भव-बंधन से छूट जाते हैं, उन्हीं राम को एक मामूली राक्षस ने नाग-पाश से बाँध लिया!

नाना भाँति मनहिं समुझावा ❀ प्रगट न ग्यान हृदयँ भ्रम छावा
खेद खिन्न मन तर्क बढ़ाई ❀ भयेउ मोह बस तुम्हरिहि नाई

गरुड़ ने अनेकों प्रकार से मन को समझाया, पर ज्ञान नहीं प्रकट हुआ। हृदय में भ्रम और भी अधिक छा गया। खेद से खिन्न होकर, मन में कुतर्क बढ़ाकर वह तुम्हारी ही तरह मोह के वश हो गया।

ब्याकुल गयेउ देवरिषि पाहीं ❀ कहेसि जो संसय निज मन माहीं
सुनि नारदहिं लागि अति दाया ❀ सुनु खग प्रबल राम कै माया

व्याकुल होकर वे देवर्षि नारद के पास गये और मन में जो संदेह था, वह उनसे कहा। उसे सुनकर नारद को बड़ी दया आई। उन्होंने कहा—हे पक्षी! सुनो, रामजी की माया बड़ी ही प्रबल है।

जो ग्यानिन्ह कर चित अपहरई ❀ बरिआईं बिमोह मन करई
जेहि बहु बार नचावा मोही ❀ सोइ ब्यापी बिहंगपति तोही

जो ज्ञानियों के चित्त को भी भलीभाँति हरण कर लेती है और उनके मन में ज़बरदस्ती बड़ा भारी मोह उत्पन्न कर देती है, जिसने मुझे भी बहुत बार नचाया, वही हे पक्षीराज! आपको भी व्याप हो गई है।

महा मोह उपजा उर तोरें ❀ मिटिहि न बेगि कहें खग मोरें
चतुरानन[1] पहिं जाहु खगेसा ❀ सोइ करेहु जो देहिं निदेसा

हे गरुड़! आपके मन में बड़ा भारी मोह उत्पन्न हो गया है। मेरे कहने से वह शीघ्र नहीं मिटेगा। हे पक्षीराज! आप ब्रह्मा के पास जाइये। वे जैसा आदेश दें, वैसा ही कीजियेगा।

---

१. ब्रह्मा।

दो० — अस कहि चले देवरिषि करत राम गुन गान।
हरि माया बल बरनत पुनि पुनि परम सुजान ॥५६॥

ऐसा कहकर परम चतुर देवर्षि नारद रामजी का गुण गान करते हुये और फिर-फिर हरि की माया का बल बखानते हुये चले।

तब खगपति बिरंचि पहिं गयेऊ ❀ निज संदेह सुनावत भयेऊ
सुनि बिरंचि रामहिं सिरु नावा ❀ समुझि प्रताप प्रेम उर छावा

तब पक्षिराज गरुड़ ब्रह्मा के पास गये, और उनको अपना सन्देह कह सुनाया। उसे सुनकर ब्रह्मा ने रामजी को सिर नवाया। उनके प्रताप को स्मरण करके उनके हृदय में प्रेम छा गया।

मन महुँ करइ बिचार बिधाता ❀ माया बस कबि कोबिद ग्याता
हरि माया कर अमित प्रभावा ❀ बिपुल बार जेहिं मोहिं नचावा

ब्रह्मा मन में विचार करने लगे कि कवि, कोविद और ज्ञानी भी माया के वश हैं। भगवान् की माया का प्रभाव असीम है, जिसने मुझ तक को बहुत बार नचाया है।

अग जग मय सब मम उपराजा[1] ❀ नहिं आचरज मोह खगराजा
तब बोले बिधि गिरा सुहाई ❀ जान महेस राम प्रभुताई

यह समस्त चराचर जगत् मेरा रचा हुआ है। जब मैं ही माया-वश नाचने लगता हूँ, तब पक्षिराज को मोह हुआ, तो आश्चर्य क्या है? तब ब्रह्मा सुहावनी वाणी बोले—रामजी की प्रभुता को शिवजी जानते हैं।

बैनतेय संकर पहिं जाहू ❀ तात अनत[2] पूछेहु जनि काहू
तहँ होइहि तव संसय हानी ❀ चलेउ बिहंग सुनत बिधि बानी

हे विनता के पुत्र गरुड़! तुम शिवजी के पास जाओ। हे तात! और कहीं किसी से न पूछना। वहाँ तुम्हारे सन्देह का नाश होगा। ब्रह्मा का वचन सुनते ही गरुड़ रवाना हो गये।

दो० — परमातुर बिहंगपति आयेउ तब मो पास।
जात रहेउँ कुबेर गृह रहिहु उमा कैलास ॥६०॥

१. उत्पन्न किया हुआ। २. अन्यत्र, दूसरी जगह।

बड़ी उतावली से पक्षिराज गरुड़ मेरे पास आये। हे उमा ! मैं उस समय कुबेर के घर में जा रहा था और तुम कैलाश पर थीं।

तेहि मम पद सादर सिरु नावा ❀ पुनि आपन संदेह सुनावा
सुनि ता करि बिनीत मृदु बानी ❀ प्रेम सहित मैं कहेउँ भवानी

गरुड़ ने मेरे चरणों में आदर-पूर्वक सिर नवाया और फिर मुझे अपना सन्देह कह सुनाया। उनकी विनम्र और मधुर वाणी सुनकर हे भवानी ! मैंने प्रेम-सहित कहा—

मिलेउ गरुड़ मारग महँ मोही ❀ कवन भाँति समुझावौं तोही
तबहिं होइ सब संसय भंगा ❀ जब बहु काल करिअ सतसंगा

हे गरुड़ ! तुम मुझे रास्ते में मिले हो, राह चलते मैं तुम्हें किस प्रकार समझाऊँ ? जब बहुत समय तक सत्संग किया जाय, तभी संशय का नाश होता है।

सुनिअ तहाँ हरि कथा सुहाई ❀ नाना भाँति मुनिन्ह जो गाई
जेहि महुँ आदि मध्य अवसाना[1] ❀ प्रभु प्रतिपाद्य राम भगवाना

वहाँ (सत्संग में) जाकर भगवान् की सुन्दर कथा सुननी चाहिये, जिसे मुनियों ने अनेकों प्रकार से गाया है, जिसके आदि, मध्य और अन्त में भगवान् रामजी ही प्रतिपाद्य प्रभु हैं।

नित हरि कथा होति जहँ भाई ❀ पठवउँ तहाँ सुनहु तुम्ह जाई
जाइहि सुनत सकल सन्देहा ❀ राम चरन होइहि अति नेहा

हे भाई ! जहाँ प्रतिदिन हरि की कथा होती है, मैं तुमको वहीं भेजता हूँ, तुम जाकर सुनो। सुनते ही सारा सन्देह चला जायगा और रामजी के चरणों में अत्यन्त प्रेम होगा।

दो० बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गये बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग ॥६१॥

बिना सत्संग के हरि की कथा सुनने को नहीं मिलती। उसके बिना मोह नहीं भागता। मोह के गये बिना रामजी के चरणों में प्रेम दृढ़ (अचल) नहीं होता। [कारणमाला अलंकार]

१. अन्त।

मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा ❀ कियें जोग जप ग्यान बिरागा
उत्तर दिसि सुन्दर गिरि नीला ❀ तहँ रह कागभुसुंडि सुसीला

बिना प्रेम के केवल योग, जप करने से तथा ज्ञान और वैराग्य से भी रामजी नहीं मिलते। उत्तर दिशा में एक सुन्दर नील गिरि है। वहाँ सुन्दर स्वभाव वाले काकभुशुण्डि रहते हैं।

राम भगति पथ परम प्रबीना ❀ ग्यानी गुन गृह बहु कालीना
राम कथा सो कहइ निरंतर ❀ सादर सुनहिं बिबिध बिहंग बर

वे राम-भक्ति के मार्ग में बड़े प्रवीण हैं, ज्ञानी हैं, गुणों के घर और अति प्राचीन हैं। वह निरन्तर राम-कथा कहते रहते हैं, जिसे अनेकों श्रेष्ठ पक्षी आदर-पूर्वक सुनते हैं।

जाइ सुनहु तहँ हरि गुन भूरी[1] ❀ होइहि मोह जनित दुख दूरी
मैं जब तेहि सब कथा बुझाई ❀ चलेउ हरषि मम पद सिरु नाई

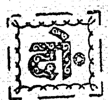
वहाँ जाकर भगवान् के गुण-समूह सुनो। तब मोह से उत्पन्न तुम्हारा दुख दूर हो जायगा। मैंने जब उसे सब समझाकर कहा, तब वह मेरे चरणों में सिर नवाकर हर्षित होकर चला गया।

ता तें उमा न मैं समुझावा ❀ रघुपति कृपाँ मरमु मैं पावा
होइहिं कीन्ह कबहुँ अभिमाना ❀ सो खोवै चह कृपानिधाना

हे उमा! मैंने उसे इसीलिये नहीं समझाया कि रामचन्द्र की कृपा से मैं उसका मर्म पा गया था। उसने कभी अभिमान किया होगा, उसे ही कृपा के धाम रामजी नष्ट करना चाहते थे।

कछु तेहि तें पुनि मैं नहिं राखा ❀ समुझइ खग खग ही कै भाषा
प्रभु माया बलवंत भवानी ❀ जाहि न मोह कवन अस ग्यानी

कुछ इस कारण से भी मैंने उसे अपने पास नहीं रक्खा कि पक्षी की बोली पक्षी ही समझते हैं। हे भवानी! प्रभु की माया बड़ी ही बलवती है। ऐसा कौन ज्ञानी है, जिसे वह मोहित नहीं करती?



ग्यानी भगत सिरोमनि त्रिभुवनपति कर जान।
ताहि मोह माया नर पावँर करहिं गुमान ॥६२(क)॥

---

१. समूह।

जो ज्ञानी हैं, भक्त-शिरोमणि हैं, त्रिभुवन-पति भगवान् के वाहन हैं, उन गरुड़ को भी माया ने मोह लिया। नीच मनुष्य व्यर्थ ही अभिमान किया करते हैं।

सिव बिरंचि कहँ मोहइ को है बपुरा आन।
अस जियँ जानि भजहिं मुनि मायापति भगवान ॥(ख)॥

यह माया जब शिव और ब्रह्मा को भी मोह लेती है, तब दूसरा बेचारा क्या चीज है? ऐसा जी में जानकर ही मुनि लोग मायापति भगवान का भजन करते हैं।

गयेउ गरुड़ जहँ बसइ भुसुंडा ❀ मति अकुंठ[1] हरि भगति अखंडा
देखि सैल प्रसन्न मन भयेऊ ❀ माया मोह सोच सब गयेऊ

गरुड़ वहाँ गये, जहाँ निर्बाध बुद्धि और पूर्ण हरि-भक्ति वाले काकभुशुंडि बसते थे। उस पर्वत को देखकर उनका मन प्रसन्न हो गया। माया-मोह और सोच सब जाते रहे।

करि तड़ाग मज्जन जलपाना ❀ बट तर गयेउ हृदय हरषाना
बृद्ध बृद्ध बिहँग तहँ आये ❀ सुनै राम के चरित सुहाये

तालाब में स्नान और जलपान करके, हृदय में हर्षित होकर वे वट-वृक्ष के नीचे गये। वहाँ सुन्दर रामचरित्र सुनने बुड्ढे-बुड्ढे पक्षी आये हुये थे।

कथा अरंभ करइ सोइ चाहा ❀ तेही समय गयेउ खगनाहा
आवत देखि सकल खगराजा ❀ हरषेउ बायस सहित समाजा

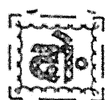
भुशुण्डि कथा का आरम्भ करना ही चाहते थे कि उसी समय पक्षिराज गरुड़ वहाँ आ पहुँचे। पक्षियों के राजा को आते देखकर सारे समाज-सहित काकभुशुण्डि आनन्दित हुये।

अति आदर खगपति कर कीन्हा ❀ स्वागत पूछि सुआसन दीन्हा
करि पूजा समेत अनुरागा ❀ मधुर बचन तब बोलेउ कागा

भुशुण्डि ने पक्षिराज गरुड़ का अत्यन्त आदर-सत्कार किया और स्वागत (कुशल) पूछकर बैठने के लिये सुन्दर आसन दिया। फिर प्रेम-सहित पूजा करके भुशुण्डि मधुर वचन बोले—

---

१. निर्बाध।



नाथ कृतारथ भयेउँ मैं तव दरसन खगराज।
आयसु देहु सो करौं अब प्रभु आयेहु केहि काज॥

हे नाथ! हे पक्षिराज! आपके दर्शन से मैं कृतार्थ हो गया। आप जो आज्ञा दें, अब मैं वही करूँ। हे प्रभो! आप किस कार्य के लिये आये हैं?

सदा कृतारथ रूप तुम्ह कह मृदु बचन खगेस।
जेहि कै अस्तुति सादर निज मुख कीन्हि महेस॥

पक्षिराज गरुड़ ने कोमल वचन कहे—आप तो सदा ही कृतार्थ-रूप हैं, जिनकी प्रशंसा शिवजी ने आदर-सहित अपने श्रीमुख से की है।

सुनहु तात जेहि कारन आयेउँ ❀ सो सब भयेउ दरस तव पायेउँ
देखि परम पावन तव आश्रम ❀ गयेउ मोह संसय नाना भ्रम

हे तात! सुनिये, मैं जिस काम के लिये आया था, वह तो यहाँ आते ही पूरा हो गया। फिर आपके दर्शन भी हो गये। आपका परम-पवित्र आश्रम देखकर मोह, संशय और अनेक प्रकार के भ्रम सब जाते रहे।

अब श्रीराम कथा अति पावनि ❀ सदा सुखद दुख पुञ्ज नसावनि
सादर तात सुनावहु मोही ❀ बार बार बिनवउँ प्रभु तोही

अब हे तात! श्रीरामजी की अति पवित्र कथा, जो सदा सुख देने वाली और दुःख के समूह का नाश करने वाली है, आदर-सहित मुझे सुनाइये। हे प्रभो! मैं बार-बार आपसे यही विनय करता हूँ।

सुनत गरुड़ कै गिरा बिनीता ❀ सरल सुप्रेम सुखद सुपुनीता
भयेउ तासु मन परम उछाहा ❀ लाग कहै रघुपति गुन गाहा[1]

गरुड़ की विनम्र, सरल, सुन्दर, प्रेम-युक्त, सुख देने वाली और सुन्दर पवित्र वाणी सुनकर भुशुण्डि के मन में परम उत्साह हुआ। वे रामजी की गुण-गाथा कहने लगा।

प्रथमहिं अति अनुराग भवानी ❀ रामचरित सर कहेसि बखानी
पुनि नारद कर मोह अपारा ❀ कहेसि बहुरि रावन अवतारा
प्रभु अवतार कथा पुनि गाई ❀ तब सिसु चरित कहेसि मन लाई

---

१. गाथा, कथा।

हे भवानी ! पहले तो उन्होंने रामचरितमानस-सरोवर का रूपक समझा-कर कहा। फिर नारद का अपार मोह और फिर रावण का अवतार कहा। फिर उसने प्रभु के अवतार की कथा कही और फिर मन लगाकर रामजी की बाल-लीलायें कहीं।

दो०—बालचरित कहि बिबिध बिधि मन महँ परम उछाह।
रिषि आगवनु कहेसि पुनि श्रीरघुबीर बिबाह॥

फिर मन में परम उत्साहित होकर अनेकों प्रकार से रामजी का बालचरित कहकर, उसने विश्वामित्र ऋषि का आना और श्रीरामचन्द्र का विवाह-वर्णन किया।

बहुरि राम अभिषेक प्रसंगा ❀ पुनि नृप बचन राज रस भंगा
पुरबासिन्ह कर बिरह बिषादा ❀ कहेसि राम लछिमन संबादा

फिर रामजी के राज्याभिषेक का प्रसंग, फिर राजा दशरथ जी के वचन से राज-रस में भङ्ग पड़ना, फिर पुरवासियों का विरह, विषाद और राम-लक्ष्मण का संवाद कहा।

बिपिन गवन केवट अनुरागा ❀ सुरसरि उतरि निवास प्रयागा
बालमीकि प्रभु मिलन बखाना ❀ चित्रकूट जिमि बसे भगवाना

श्रीराम का वन-गमन, केवट का प्रेम, गङ्गावतरण, प्रयाग-निवास, वाल्मीकि और प्रभु का मिलन और जिस तरह भगवान चित्रकूट में बसे, वह सब बखानकर कहा।

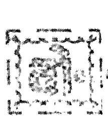
सचिवागवन नगर नृप मरना ❀ भरतागवन प्रेम बहु बरना
करि नृप क्रिया संग पुरबासी ❀ भरत गये जहँ प्रभु सुख रासी

फिर सुमन्त्र मन्त्री का नगर को लौटना, राजा का मरण, भरत का आना और उनके प्रेम का बहुत वर्णन किया। राजा का क्रिया-कर्म करके पुरवासियों के साथ भरत वहाँ गये, जहाँ सुख की राशि रामचन्द्रजी थे।

पुनि रघुपति बहु बिधि समुझाये ❀ लइ पादुका अवधपुर आये
भरत रहनि सुरपति सुत करनी ❀ प्रभु अरु अत्रि भेंट पुनि बरनी

फिर रामचन्द्रजी ने भरत को बहुत प्रकार से समझाया। राम की खड़ाऊँ लेकर भरत अयोध्या आये। भरत का नंदिग्राम में रहना, इन्द्र-सुत जयन्त की

नीच करनी और फिर प्रभु और अत्रि मुनि के भेंट की कथा कही।



कहि बिराध बध जेहि बिधि देह तजो सरभङ्ग।
बरनि सुतीछन प्रीति पुनि प्रभु अगस्ति सतसंग॥६५

विराध-वध का वर्णन करके फिर जिस तरह शरभंग ने शरीर छोड़ा, उसका वर्णन किया और फिर सुतीच्ण की प्रीति और प्रभु और अगस्त्य का सत्संग कहा।

कहि दंडक बन पावनताई ❀ गीध मइत्री पुनि तेहिं गाई
पुनि प्रभु पञ्चबटी कृत बासा ❀ भञ्जी[1] सकल मुनिन्ह कै त्रासा

दण्डक-वन का पवित्र करना कहकर फिर गीध के साथ मित्रता का वर्णन किया। फिर जिस प्रकार प्रभु ने पञ्चवटी में निवास किया और सब मुनियों के भय का नाश किया।

पुनि लछिमन उपदेस अनूपा ❀ सूपनखा जिमि कीन्हि कुरूपा
खर दूषन बध बहुरि बखाना ❀ जिमि सब मरमु दसानन जाना

फिर जैसे लच्मण को अनुपम उपदेश दिया और शूर्पणखा को कुरूप किया, वह सब वर्णन किया; फिर खर-दूषण का वध और जिस प्रकार से रावण ने सब समाचार जाना, वह सब बखान कर कहा।

दसकन्धर मारीच बतकही ❀ जेहि बिधि भई सो सब तेहिं कही
पुनि माया सीता कर हरना ❀ श्रीरघुबीर बिरह कछु बरना

फिर जिस प्रकार रावण और मारीच की बातचीत हुई, वह सब उसने कही। फिर माया की सीता का हरण और रामचन्द्रजी के विरह का कुछ वर्णन किया।

पुनि प्रभु गीध क्रिया जिमि कीन्ही ❀ बधि कबंध सबरिहि गति दीन्ही
बहुरि बिरह बरनत रघुबीरा ❀ जेहि बिधि गये सरोवर तीरा

फिर प्रभु ने गृद्ध जटायु की जिस प्रकार क्रिया की, कबन्ध को मारकर शबरी को सद्गति दी, फिर रामजी का विरह वर्णन करते हुये, जिस प्रकार वे पम्पासर के किनारे गये, वह सब कहा।

---

१. नाश किया।

दो०— प्रभु नारद संवाद कहि मारुति मिलन प्रसङ्ग ।
पुनि सुग्रीव मिताई बालि प्रान कर भङ्ग ॥६६(क)॥

प्रभु और नारद का संवाद और हनुमान से मिलने का प्रसंग कहकर फिर सुग्रीव से मित्रता और बालि के प्राणनाश का वर्णन किया ।

कपिहि तिलक करि प्रभु कृत सैल प्रबरषन बास ।
बरनत बर्षा सरद अरु राम रोष कपि त्रास ॥६६(ख)॥

कपि सुग्रीव का राजतिलक करके प्रभु ने प्रवर्षण पर्वत पर निवास किया, वह तथा वर्षा और शरद् का वर्णन, रामजी का सुग्रीव पर रोष और सुग्रीव का भय आदि प्रसंग कहे ।

जेहि बिधि कपिपति कीस पठाये ❀ सीता खोजन सकल सिधाये
बिबर प्रबेस कीन्ह जेहि भाँती ❀ कपिन्ह बहोरि मिला संपाती

जिस प्रकार सुग्रीव ने बानरों को भेजा, जिस प्रकार सब बानर सीता को खोजने गये, जिस प्रकार उन्होंने विवर में प्रवेश किया और फिर जैसे बानरों को संपाती मिला ।

सुनि सब कथा समीर कुमारा ❀ नाँघत भयेउ पयोधि अपारा
लंका कपि प्रबेस जिमि कीन्हा ❀ पुनि सीतहि धीरजु जिमि दीन्हा

संपाती से सब कथा सुनकर पवन-पुत्र हनुमान जिस तरह अपार समुद्र को लाँघ गये, फिर उन्होंने जिस प्रकार लंका में प्रवेश किया और फिर जैसे सीता को धीरज दिया, वह सब कहा ।

बन उजारि रावनहिं प्रबोधी ❀ पुर दहि नाँघेउ बहुरि पयोधी
आये कपि सब जहँ रघुराई ❀ बैदेही कै कुसल सुनाई

अशोक वन को उजाड़कर, रावण को समझाकर, लंकापुरी को जलाकर फिर जैसे उन्होंने समुद्र को लाँघा और जिस प्रकार सब बानर वहाँ आये, जहाँ रामजी थे और आकर उन्होंने सीता की कुशल सुनायी,

सेन समेत जहाँ रघुबीरा ❀ उतरे जाइ बारिनिधि तीरा
मिला बिभीषन जेहि बिधि आई ❀ सागर निग्रह[1] कथा सुनाई

१. बाँधना ।

फिर जिस प्रकार रामचन्द्रजी सेना-सहित जाकर समुद्र के तट पर उतरे, और जिस प्रकार विभीषण आकर मिला, वह सब और समुद्र के बाँधने की कथा उसने सुनाई।

दो०— सेतु बाँधि कपि सेन जिमि उतरी सागर पार।
गयेउ बसीठी[1] बीरबर जेहि बिधि बालिकुमार॥

समुद्र में पुल बाँधकर जिस प्रकार बानरों की सेना समुद्र के पार उतरी, और जिस प्रकार वीरों में श्रेष्ठ बालिपुत्र अंगद दूत-कर्म के लिये गया, वह सब कहा।

निसिचर कीस लराई बरनेसि बिबिध प्रकार।
कुंभकरन घननाद कर बल पौरुष संहार॥

फिर राक्षसों और बानरों की लड़ाई का वर्णन विविध प्रकार से किया। फिर कुम्भकर्ण और मेघनाद के बल, पुरुषार्थ और संहार की कथा कही।

निसिचर निकर मरन बिधि नाना ❀ रघुपति रावन समर बखाना
रावन बध मंदोदरि सोका ❀ राज बिभीषन देव असोका

राक्षसों के समूह का मरण कहकर फिर राम और रावण के अनेक प्रकार के युद्ध का वर्णन किया। रावण का वध, मन्दोदरी का शोक, विभीषण का राज्याभिषेक और देवताओं का शोक-रहित होना कहकर

सीता रघुपति मिलन बहोरी ❀ सुरन्ह कीन्हि अस्तुति कर जोरी
पुनि पुष्पक चढ़ि कपिन्ह समेता ❀ अवध चले प्रभु कृपा निकेता

फिर सीता और राम का मिलाप कहा। जिस प्रकार देवताओं ने हाथ जोड़कर स्तुति की, फिर जैसे बानरों-सहित पुष्पक पर चढ़कर कृपा के धाम रामजी अवध को चले, वह कहा।

जेहि बिधि राम नगर निज आए ❀ बायस बिसद चरित सब गाए
कहेसि बहोरि राम अभिषेका ❀ पुर बरनत नृप नीति अनेका

जिस प्रकार रामजी अपने नगर में आये, वे सब उज्ज्वल चरित्र काकभुशुण्डि ने विस्तारपूर्वक कहे। फिर रामजी का राज्याभिषेक कहा। अयोध्यापुरी का और अनेक प्रकार की राजनीति का वर्णन करते हुये,

---

१. दूत-कर्म।

कथा समस्त भुसुंडि बखानी ❀ जो मैं तुम्ह सन कही भवानी
सुनि सब राम कथा खगनाहा ❀ कहत बचन मन परम उछाहा

भुशुण्डि ने सब कथा कह सुनाई। शिवजी कहते हैं—हे भवानी! जिसे मैंने तुमसे कहा वह सारी राम-कथा सुनकर मन में बहुत ही उत्साह भरकर गरुड़ वचन कहने लगे—

सो० गयेउ मोर संदेह सुनेउँ सकल रघुपति चरित।
भयेउ राम पद नेह तव प्रसाद[1] बायस तिलक॥

रामजी का समस्त चरित सुनकर मेरा सन्देह जाता रहा। हे काक-कुल-तिलक! आपके अनुग्रह से रामजी के चरणों में मेरा प्रेम हो गया।

मोहि भयेउ अति मोह प्रभु बन्धन रन महुँ निरखि।
चिदानन्द सन्दोह राम बिकल कारन कवन॥(ख)॥

युद्ध में प्रभु का बन्धन देखकर मुझे यह बड़ा मोह हुआ था कि रामजी तो चिदानन्द की राशि हैं, वे किस कारण विकल हुये।

देखि चरित अति नर अनुसारी ❀ भयेउ हृदयँ मम संसय भारी
सोइ भ्रम अब हित करि मैं माना ❀ कीन्ह अनुग्रह कृपानिधाना

उनका बिल्कुल ही साधारण मनुष्यों का-सा चरित देखकर मेरे हृदय में भारी संशय हो गया था। मैं अब उस भ्रम को अपने लिये कल्याणकारी समझता हूँ। कृपानिधान ने मुझ पर यह बड़ी कृपा की।

जो अति आतप ब्याकुल होई ❀ तरु छाया सुख जानइ सोई
जौं नहिं होत मोह अति मोही ❀ मिलतेउँ तात कवन बिधि तोही

धूप से जो अत्यन्त विकल हो, वही वृक्ष की छाया का सुख जानता है। हे तात! मुझे अत्यन्त मोह न होता, तो मैं आपसे कैसे मिलता?

सुनतेउँ किमि हरि कथा सुहाई ❀ अति बिचित्र बहु बिधि तुम्ह गाई
निगमागम पुरान मत एहा ❀ कहहिं सिद्ध मुनि नहि संदेहा

और अति विचित्र हरि-कथा कैसे सुनता? जिसे आपने बहुत प्रकार से

१. अनुग्रह।

गाया है। वेद, शास्त्र और पुराणों का यही मत है, सिद्ध और मुनि भी यही कहते हैं, इसमें सन्देह नहीं है।

सन्त बिसुद्ध मिलहिं परि तेही ❁ चितवहिं राम कृपा करि जेही
राम कृपाँ तव दरसन भयेऊ ❁ तव प्रसाद सब संसय गयेऊ

शुद्ध (सच्चे) सन्त उसे ही मिलते हैं, जिसे रामजी कृपा करके देखते हैं। रामजी की कृपा से आपका दर्शन हुआ। आपकी कृपा से मेरा सन्देह गया।

दो०— **सुनि बिहंगपति बानी सहित बिनय अनुराग।**
पुलक गात लोचन सजल मन हरषेउ अति काग॥

पक्षिराज गरुड़ की विनय और प्रेम से पूर्ण वाणी सुनकर काकभुशुण्डि का शरीर पुलकित हो गया। उनके नेत्र जल-पूर्ण हो गये और वह मन में अत्यन्त हर्षित हुये।

स्रोता सुमति सुसील सुचि कथा रसिक हरि दास।
पाइ उमा अति गोप्यमपि[1] सज्जन करहिं प्रकास।

हे उमा! सुन्दर बुद्धि वाले, सुशील, पवित्र, कथा के प्रेमी और हरि के सेवक श्रोता को पाकर सज्जन अत्यन्त छिपाने योग्य रहस्य को भी प्रकट कर देते हैं।

बोलेउ कागभसुण्ड बहोरी ❁ नभग[2] राज पर प्रीति न थोरी
सब बिधि नाथ पूज्य तुम्ह मेरे ❁ कृपापात्र रघुनायक केरे[3]

काकभुशुण्डि ने फिर कहा। पक्षिराज पर उनकी प्रीति कम न थी। हे नाथ! आप सब प्रकार से मेरे पूज्य हैं, और रामचन्द्रजी के कृपापात्र हैं।

तुम्हहिं न संसय मोह न माया ❁ मो पर नाथ कीन्हि तुम्ह दाया
पठइ मोह मिस खगपति तोही ❁ रघुपति दीन्हि बड़ाई मोही

आपको न संशय है, न मोह है और न माया ही है। हे नाथ! आपने तो मुझ पर दया की है। हे पक्षिराज! मोह के बहाने रामचन्द्रजी ने आपको यहाँ भेजकर मुझे बड़प्पन दिया है।

---

१. छिपाने योग्य भी। २. पक्षी। ३. के।

तुम्ह निज मोह कहा खग साईं ❀ सो नहिं कछु आचरज गोसाईं
नारद भव बिरंचि सनकादी ❀ जे मुनिनायक आतमबादी

हे खगराज ! आपने अपना मोह बताया, सो हे गोसाईं ! यह कुछ आश्चर्य नहीं है। नारद, शिव, ब्रह्मा और सनक आदि जो मुनिश्रेष्ठ और आत्म-तत्त्व के मर्मज्ञ हैं।

मोह न अन्ध कीन्ह केहि केही ❀ को जग काम नचाव न जेही
तृस्नाँ केहि न कीन्ह बौराहा ❀ केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा[1]

उनमें से किस-किसको मोह ने अन्धा नहीं किया ? जगत् में ऐसा कौन है, जिसे काम ने नहीं नचाया ? तृष्णा ने किसे मतवाला नहीं बनाया ? क्रोध ने किसका हृदय नहीं जलाया ?

दो॰ ग्यानी तापस सूर कबि कोबिद गुन आगार।
केहि कै लोभ बिडम्बना[2] कीन्हि न एहि संसार ॥(क)

ज्ञानी, तपस्वी, शूरवीर, कवि, कोविद और गुणों का घर इस जगत् में कौन ऐसा है, जिसकी विडंबना लोभ ने न की हो।

श्री मद बक्र[3] न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि।
मृगलोचनि के नैन सर को अस लाग न जाहि ॥(ख)

लक्ष्मी के मद ने किसे कुटिल और प्रभुता ने किसे बहरा नहीं कर दिया ? और ऐसा कौन है, जिसे मृगनयनी (युवती स्त्री) के नेत्र-बाण न लगे हों।

गुन कृत सन्यपात नहिं केही ❀ कोउ न मान मद तजेउ निबेही[4]
जोबन ज्वर केहि नहिं बलकावा ❀ ममता केहि कर जस न नसावा

गुणों से उत्पन्न सन्निपात किसे नहीं हुआ ? मान और मद ने किस को अछूता नहीं छोड़ा ? यौवन के ज्वर ने किसे नहीं खौलाया ? ममता ने किस की कीर्ति का नाश नहीं किया ?

मच्छर[5] काहि कलंक न लावा ❀ काहि न सोक समीर डोलावा
चिंता साँपिनि को नहिं खाया ❀ को जग जाहि न ब्यापी माया

मत्सर (डाह) ने किसे कलंक नहीं लगाया ? शोक-रूपी वायु ने किसे

---

१. जलाया। २. मिट्टी पलीद। ३. टेढ़ा, कुटिल। ४. अछूता। ५. मत्सर, डाह।

नहीं हिला दिया ? चिन्ता-रूपी साँपिन ने किसे नहीं खा लिया ? जगत् में ऐसा कौन है, जिसे माया न व्यापी हो ?

कीट मनोरथ दारु[1] सरीरा ❀ जेहि न लाग घुन को अस धीरा
सुत बित लोक ईषना तीनी ❀ केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी

मनोरथ कीड़ा है, शरीर लकड़ी है। ऐसा धैर्यवान कौन है, जिसके शरीर में यह घुन नहीं लगा हो ? संसार में तीन ईषणायें हैं—पुत्र, धन और लोक की। इनके द्वारा किसकी गति मलिन नहीं हुई ?

यह सब माया कर परिवारा ❀ प्रबल अमिति को बरनै पारा
सिव चतुरानन जाहि डेराहीं ❀ अपर जीव केहि लेखे माहीं

यह सब माया का बड़ा बलवान परिवार है, और अपार है। इसका वर्णन कौन कर सकता है ? शिव और ब्रह्मा भी जिससे डरते हैं, फिर अन्य जीव किस गिनती में है ?

दो०— **ब्यापि रहेउ संसार महुँ माया कटक प्रचंड।**
सेनापति कामादि भट दंभ कपट पाखंड ॥७१॥(क)

संसार भर में माया की प्रचंड सेना व्याप्त हो रही है। काम, क्रोध और लोभ उसके सेनापति हैं और दंभ, कपट और पाखंड उसके योद्धा हैं।

सो दासी रघुबीर कै समुझें मिथ्या सोपि[2]।
छूट न राम कृपा बिनु नाथ कहउँ पद रोपि ॥७१॥(ख)

वह (माया) रामजी की दासी है। समझ लेने पर यद्यपि वह मिथ्या ही है, पर हे नाथ ! मैं प्रतिज्ञा करके कहता हूँ कि फिर भी वह रामजी की कृपा के बिना छूटती नहीं।

जो माया सब जगहि नचावा ❀ जासु चरित लखि काहु न पावा
सोइ प्रभु भ्रू बिलास खगराजा ❀ नाच नटी इव सहित समाजा

जो माया सारे जगत् को नचाती है और जिसका चरित्र किसी ने लख नहीं पाया, हे खगराज ! वही माया प्रभु की भृकुटी के इशारे पर समाज-सहित नटी की तरह नाचती है।

---

१. लकड़ी। २. वह भी।

सोइ सच्चिदानन्द घन रामा ❀ अज बिग्यान रूप बल धामा
ब्यापक ब्याप्य[1] अखंड अनंता ❀ अखिल अमोघ सक्ति भगवंता

रामजी वही सच्चिदानन्दघन, अजन्मा, विज्ञानरूप, बल के धाम, व्यापक, व्याप्य, अखंड, अनंत, सम्पूर्ण, अमोघ-शक्ति-सम्पन्न, ऐश्वर्यवान्,

अगुन अदभ्र[2] गिरा गोतीता ❀ सबदरसी अनवद्य[3] अजीता
निर्मम निराकार निरमोहा ❀ नित्य निरंजन सुख संदोहा[4]

निर्गुण, महान्, वाणी और इन्द्रियों से परे, सब कुछ देखने वाले, दोष-रहित, अजित, ममता-रहित, निराकार, मोह-रहित, नित्य, माया-रहित, सुख की राशि,

प्रकृति पार प्रभु सब उर बासी ❀ ब्रह्म निरीह बिरज अबिनासी
इहाँ मोह कर कारन नाहीं ❀ रबि सनमुख तम कबहुँ कि जाहीं

प्रकृति से परे, समर्थ, सदा सबके हृदय में बसने वाले, इच्छा-रहित, निर्विकार और अविनाशी ब्रह्म हैं। यहाँ मोह का कारण ही नहीं है। सूर्य के सामने कहीं अन्धकार जा सकता है?

दो॰ भगत हेतु भगवान प्रभु राम धरेउ तनु भूप।
किये चरित पावन परम प्राकृत नर अनुरूप॥

भगवान् प्रभु रामजी ने भक्तों के लिये राजा का शरीर धारण किया, और साधारण मनुष्यों की तरह उन्होंने अनेकों परम पवित्र चरित्र किये।

जथा अनेक बेष धरि नृत्य करइ नट कोइ।
सोइ सोइ भाव देखावइ आपुन होइ न सोइ॥

जैसे कोई नट अनेक वेष धारण करके नृत्य करता है, और वेष के अनुसार वही-वही भाव दिखलाता है, पर स्वयं वह वैसा नहीं हो जाता।

असि रघुपति लीला उरगारी ❀ दनुज बिमोहनि जन सुखकारी
जे मति मलिन बिषय बस कामी ❀ प्रभु पर मोह धरहिं इमि स्वामी

हे गरुड़! रामजी की लीला ऐसी ही है। वह राक्षसों को मोहित करने वाली और भक्तों को सुख देने वाली है। जो मनुष्य मलिन मति वाले, विषयों

---

१. सर्वरूप। २. महान्। ३. निर्दोष। ४. राशि।

के वश में और कामी हैं, हे स्वामी ! वे ही प्रभु पर इस प्रकार मोह का आरोपण करते हैं।

नयन दोष जा कहँ जब होई ❀ पीत बरन ससि कहुँ कह सोई
जब जेहि दिसि भ्रम होइ खगेसा ❀ सो कह पच्छिम उयेउ दिनेसा

जब जिसे नेत्र-दोष होता है, तब वह चन्द्रमा को पीले रंग का कहता है। हे पक्षिराज ! जब जिसे दिशा-भ्रम होता है, तब वह कहता है कि सूर्य पश्चिम में उदय हुआ है।

नौकारूढ़ चलत जग देखा ❀ अचल मोह बस आपुहि लेखा
बालक भ्रमहिं न भ्रमहि गृहादी ❀ कहहिं परसपर मिथ्याबादी

नाव पर चढ़ा हुआ मनुष्य जगत् को चलता हुआ देखता है और मोहवश अपने को अचल समझता है। (खेल में) बालक चक्राकार घूमते हैं, घर आदि नहीं घूमते; पर वे आपस में एक-दूसरे को झूठा कहते हैं।

हरि बिषइक अस मोह बिहंगा ❀ सपनेहुँ नहिं अग्यान प्रसंगा
मायाबस मतिमन्द अभागी ❀ हृदयँ जवनिका बहु बिधि लागी
ते सठ हठ बस संसय करहीं ❀ निज अग्यान राम पर धरहीं

हे गरुड़ ! भगवान् के विषय में मोह की कल्पना भी ऐसी ही है। भगवान् में तो स्वप्न में भी अज्ञान का प्रसंग नहीं है। किन्तु जो माया के वश, मंदबुद्धि और भाग्यहीन हैं और जिनके हृदय पर बहुत प्रकार के परदे पड़े हैं, वे ही मूर्ख हठ करके सन्देह करते हैं और अपना अज्ञान रामजी पर आरोपित करते हैं।

दो॰ काम क्रोध मद लोभ रत गृहासक्त दुख रूप।
ते किमि जानहिं रघुपतिहि मूढ़ परे तम कूप॥

जो काम, क्रोध, मद और लोभ में अनुरक्त हैं, दुःखरूप घर में आसक्त हैं, वे रामजी को कैसे जानेंगे ? वे मूर्ख तो अंधकाररूपी कुएँ में पड़े हुये हैं।

निर्गुन रूप सुलभ अति सगुन जान नहिं कोइ।
सुगम अगम नाना चरित सुनि मुनि मन भ्रम होइ॥

निर्गुण रूप अत्यन्त सुलभ है, परन्तु सगुण-रूप को कोई जानता नहीं। उन सगुण भगवान् के अनेक प्रकार के सुगम अगम चरित्रों को सुनकर

मुनियों के भी मन को भ्रम हो जाता है।

सुनु खगेस रघुपति प्रभुताई ❁ कहउँ जथामति कथा सुहाई
जेहि बिधि मोह भयेउ प्रभु मोही ❁ सो सब कथा सुनावउँ तोही

हे गरुड़! रामजी की प्रभुता सुनिये। मैं अपनी बुद्धि के अनुसार वह सुहावनी कथा कहता हूँ। हे प्रभो! मुझे जिस प्रकार मोह हुआ, वह सब कथा आपको सुनाता हूँ।

राम कृपा भाजन[1] तुम्ह ताता ❁ हरि गुन प्रीति मोहि सुखदाता
तातें नहिं कछु तुम्हहिं दुरावउँ ❁ परम रहस्य मनोहर गावउँ

हे तात! आप रामजी के कृपापात्र हैं। भगवान् के गुणों में आपकी प्रीति है, इसीलिये आप मुझे सुख देने वाले हैं। इसी से मैं आपसे कुछ भी नहीं छिपाता और परम मनोहर और रहस्य की बातें गाकर आपको सुनाता हूँ।

सुनहु राम कर सहज सुभाऊ ❁ जन[2] अभिमान न राखहि काऊ
संसृत मूल सूलप्रद नाना ❁ सकल सोक दायक अभिमाना

रामजी का सहज स्वभाव सुनिये। वे भक्त (के हृदय) में अभिमान कभी नहीं रहने देते। क्योंकि अभिमान संसार का मूल, अनेक क्लेशों तथा समस्त शोकों का देने वाला है।

ता तें करहिं कृपानिधि दूरी ❁ सेवक पर ममता अति भूरी[3]
जिमि सिसु तन ब्रन[4] होइ गोसाईं ❁ मातु चिराव कठिन की नाईं

इसी से कृपानिधि उसे दूर कर देते हैं, क्योंकि सेवक पर उनकी अत्यन्त अधिक ममता रहती है। हे गोसाईं! जैसे बच्चे के शरीर में जब फोड़ा हो जाता है, तो माता उसे कठोर हृदय वाले की तरह चिरा डालती है।

दो०- जदपि प्रथम दुख पावइ रोवइ बाल अधीर।
ब्याधि नास हित जननी गनत न सो सिसु पीर।

यद्यपि बच्चा पहले दुःख पाता है और अधीर होकर रोता है, तो भी रोग के नाश के लिये माता बच्चे की पीड़ा को कुछ भी नहीं गिनती।

---

१. पात्र। २. भक्त, सेवक। ३. बहुत। ४. फोड़ा।

तिमि रघुपति निज दास कर हरहिं मान हित लागि।
तुलसीदास ऐसे प्रभुहिं कस न भजसि भ्रम त्यागि॥

उसी प्रकार रामजी अपने दास का अभिमान उसके कल्याण के लिये हर लेते हैं। तुलसीदास कहते हैं कि ऐसे प्रभु को भ्रम त्यागकर क्यों नहीं भजते?

राम कृपा आपनि जड़ताई ❀ कहउँ खगेस सुनहु मन लाई
जब जब राम मनुज तन धरहीं ❀ भक्त हेतु लीला बहु करहीं

हे गरुड़! रामजी की कृपा और अपनी मूर्खता का हाल कहता हूँ, मन लगाकर सुनिये। जब-जब रामजी मनुष्य-शरीर धारण करते हैं और भक्तों के लिये बहुत-सी लीलायें करते हैं,

तब तब अवधपुरी मैं जाऊँ ❀ बालचरित बिलोकि हरषाऊँ
जनम महोत्सव देखउँ जाई ❀ बरष पाँच तहँ रहउँ लोभाई

तब-तब मैं अवधपुरी जाता हूँ और रामजी के बाल-चरित देखकर हर्षित होता हूँ। वहाँ जाकर मैं रामजी का जन्म-महोत्सव देखता हूँ और पाँच वर्ष तक लुभाया हुआ वहीं रहता हूँ।

इष्टदेव मम बालक रामा ❀ सोभा बपुष[1] कोटि सत कामा
निज प्रभु बदन[2] निहारि निहारी ❀ लोचन सुफल करउँ उरगारी
लघु बायस बपु[3] धरि हरि संगा ❀ देखउँ बालचरित बहुरंगा

मेरे इष्टदेव बाल-स्वरूप रामजी हैं, जिनके शरीर में अरबों कामदेवों की शोभा है। अपने प्रभु के मुख को देख-देखकर हे गरुड़! मैं नेत्रों को सफल करता हूँ। छोटे-से कौवे का शरीर धरकर और भगवान के साथ फिर कर उनके अनेकों प्रकार के बाल-चरित्रों को देखा करता हूँ।

लरिकाईं जहँ जहँ फिरहिं तहँ तहँ संग उड़ाउँ।
जूठनि परइ अजिर[4] महँ सोइ उठाइ करि खाउँ॥

बालपन में जहाँ-जहाँ वे फिरते हैं, वहाँ-वहाँ मैं साथ उड़ता हूँ, और आँगन में जो उनकी जूठन पड़ती है, वही उठाकर खाता हूँ।

---

१. शरीर। २. मुख। ३. शरीर। ४. आंगन।

एक बार अतिसय सब चरित किये रघुबीर।
सुमिरत प्रभु लीला सोइ पुलकित भयेउ सरीर।

एक बार रामजी ने अत्यन्त अधिकता से सब चरित्र किये। प्रभु की उस लीला का स्मरण करते ही काकभुशुण्डि का शरीर पुलकित हो गया।

कहइ भसुंड सुनहु खगनायक ❁ राम चरित सेवक सुखदायक
नृप मंदिर सुन्दर सब भाँती ❁ खचित कनक मनि नाना जाती

काकभुशुण्डि कहने लगे—हे गरुड़! सुनिये। रामजी का चरित्र सेवकों को सुख देने वाला है। राजभवन सब प्रकार से सुन्दर नाना जातियों की मणियों से जड़ा हुआ सोने का है।

बरनि न जाइ रुचिर अँगनाई ❁ जहँ खेलहिं नित चारिउ भाई
बाल बिनोद करत रघुराई ❁ बिचरत अजिर जननि सुखदाई

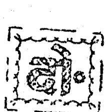
सुन्दर आँगन का वर्णन नहीं किया जा सकता, जहाँ चारों भाई सदा खेलते हैं। माता को सुख देने वाले रामजी बाल-क्रीड़ा करते हुये आँगन में विचर रहे हैं।

मरकत मृदुल कलेवर[1] स्यामा ❁ अंग अङ्ग प्रति छबि बहु कामा
नव राजीव अरुन मृदु चरना ❁ पदज[2] रुचिर नख ससि दुति हरना

मरकत-मणि के समान श्याम और कोमल शरीर है। उनके अंग-अंग में बहुत से कामदेवों की छवि छाई हुई है। नवीन लाल कमल के समान कोमल चरण हैं। सुन्दर अँगुलियाँ हैं और चन्द्रमा की ज्योति को भी मात करने वाले नख हैं।

ललित अङ्क कुलिसादिक चारी ❁ नूपुर चारु मधुर रव[3] कारी
चारु पुरट[4] मनि रचित बनाई ❁ कटि किंकिनि कल मुखर[5] सुहाई

तलवे में कुलिश, अंकुश, ध्वजा और कमल ये चार ललित चिह्न हैं। चरणों में मधुर शब्द करने वाले सुन्दर नूपुर हैं। मणियों से जड़ी हुई सोने की सुन्दर करधनी का शब्द सुहावना लग रहा है।



रेखा त्रय सुन्दर उदर नाभी रुचिर गँभीर।
उर आयत भ्राजत बिबिध बाल बिभूषन चीर॥७६॥

---

१. शरीर। २. अँगुलियाँ। ३. शब्द। ४. सोना। ५. शब्द करती हुई।

पेट पर सुन्दर तीन रेखायें (त्रिबली) हैं। नाभी सुन्दर और गहरी है। चौड़ी छाती पर अनेकों प्रकार के बच्चों के गहने और वस्त्र शोभायमान हैं।

अरुन पानि[1] नख करज[2] मनोहर ❀ बाहु बिसाल बिभूषन सुन्दर
कन्ध बाल केहरि दर[3] ग्रीवाँ ❀ चारु चिबुक[4] आनन छबि सीवाँ

लाल-लाल हथेलियाँ, मन को हरने वाले नख और उँगलियाँ हैं, और विशाल भुजाओं पर सुन्दर गहने हैं। बाल-सिंह के-से कंधे और शंख के समान गला है। सुन्दर ठुड्डी और मुख तो शोभा की सीमा ही है।

कलबल बचन अधर[5] अरुनारे ❀ दुइ दुइ दसन बिसद बर वारे[6]
ललित कपोल मनोहर नासा ❀ सकल सुखद ससिकर सम हाँसा

कलबल (तोतले) वचन हैं, लाल-लाल ओंठ हैं। उज्ज्वल, सुन्दर और छोटी-छोटी दो-दो दँतुलियाँ हैं। सुन्दर गाल, मन को हरने वाली नाक और समस्त कलाओं से युक्त चन्द्रमा की किरणों के समान सुख देने वाली मुसकान है।

नील कंज लोचन भव मोचन ❀ भ्राजत भाल तिलक गोरोचन
बिकट भृकुटि सम स्रवन सुहाये ❀ कुञ्चित[7] कच[8] मेचक[9] छबि छाये

नीले कमल के समान नेत्र जन्म-मरण के दुख से छुड़ाने वाले हैं। माथे पर गोरोचन का तिलक शोभायमान है। भौंहें टेढ़ी, कान सम और सुन्दर हैं। काले और घुँघराले केशों की छवि छाई हुई है।

पीत झीनि झगुली तन सोही ❀ किलकनि चितवनि भावति मोही
रूप रासि नृप अजिर बिहारी ❀ नाचहिं निज प्रतिबिम्ब निहारी

पीली और बारीक झँगुली शरीर पर शोभा दे रही है। उनकी किलकारी और चितवन मुझे प्रिय लगती है। राजा दशरथ के आँगन में विहार करने वाले, रूप की राशि रामचन्द्रजी अपनी परछाईं देखकर नाचते हैं।

मोहि सन करहिं बिबिध बिधि क्रीड़ा ❀ बरनत होति मोहि अति ब्रीड़ा[10]
किलकत मोहि धरन जब धावहिं ❀ चलउँ भागि तब पूप देखावहिं

मुझसे बहुत प्रकार के खेल करते हैं। उनके बाल-चरित्र का वर्णन करने में मुझे संकोच होता है। किलकारी मारकर जब मुझे वे पकड़ने दौड़ते और मैं

---

१. हाथ। २. हाथ की उँगलियाँ। ३. शंख। ४. ठुड्डी।
५. ओंठ। ६. छोटे-छोटे। ७. टेढ़े, घुँघराले। ८. बाल। ९. काले। १०. लज्जा, संकोच।

भाग चलता, तब मुझे पूआ दिखलाते थे।

दो०- आवत निकट हँसहिं प्रभु भाजत रुदन कराहिं।
जाउँ समीप गहन पद फिरि फिरि चितइ पराहिं ॥(क)

मैं समीप आता तो प्रभु हँसते, और भागने पर रोते हैं। मैं उनका चरण-स्पर्श करने को निकट जाता हूँ, तो वे पीछे घूम-घूमकर मेरी ओर देखते हुये भाग जाते हैं।

प्राकृत सिसु इव लीला देखि भयेउ मोहि मोह।
कवन चरित्र करत प्रभु चिदानन्द सन्दोह ॥७७(ख)॥

साधारण बच्चों के समान उनकी लीला देखकर मुझे मोह हुआ कि चिदानन्द-राशि प्रभु यह क्या लीला कर रहे हैं।

एतना मन आनत[1] खगराया ❁ रघुपति प्रेरित ब्यापी माया
सो माया न दुखद मोहि काहीं ❁ आन जीव इव संसृत नाहीं

हे पक्षिराज! मन में इतनी शंका लाते ही रामजी की प्रेरणा से माया मुझ पर छा गई। पर वह माया मुझे दुखदायी नहीं हुई और न अन्य जीवों की तरह मुझे संसार के बन्धन में फँसाने वाली ही हुई।

नाथ इहाँ कछु कारन आना ❁ सुनहु सो सावधान हरिजाना
ग्यान अखंड एक सीताबर ❁ माया बस्य जीव सचराचर

हे नाथ! यहाँ कुछ और ही कारण है। हे विष्णुवाहन! सावधान होकर सुनिये। एक सीतापति रामजी ही अखंड ज्ञान-स्वरूप हैं। और बाकी समस्त जड़-चेतन जीव माया के वश हैं।

जौं सब कें रह ग्यान एकरस ❁ ईस्वर जीवहिं भेद कहहु कस
माया बस्य जीव अभिमानी ❁ ईस बस्य माया गुन खानी

यदि सब में एक-सा अखंड ज्ञान रहे, तो कहिये, फिर ईश्वर और जीव में भेद ही कैसा? अहङ्कार-युक्त जीव माया के वश है और सत, रज और तम गुणों की खान माया ईश्वर के वश में है।

परबस जीव स्वबस भगवन्ता ❁ जीव अनेक एक श्रीकन्ता
मुधा[2] भेद जद्यपि कृत माया ❁ बिनु हरि जाइ न कोटि उपाया

१. लाते हुये। २. मिथ्या, असत्।

जीव परतन्त्र है, भगवान स्वतन्त्र हैं, जीव अनेक हैं, लक्ष्मीपति भगवान एक हैं। यद्यपि माया का किया हुआ यह भेद मिथ्या है, पर वह भगवान (की कृपा) बिना करोड़ों उपाय करने पर भी नहीं जा सकता।

दो॰ रामचन्द्र के भजन बिनु जो चह पद निर्बान।
ग्यानवन्त अपि[1] सो नर पसु बिनु पूँछ बिषान[2] ॥

रामचन्द्रजी के भजन बिना जो मोक्ष-पद चाहता है, वह मनुष्य ज्ञानवान् ही क्यों न हो, बिना पूँछ और सींग का पशु है।

राकापति षोडस उअहिं तारागन समुदाइ।
सकल गिरिन्ह दव लाइअ बिनु रबि राति न जाइ ॥

सभी तारागणों के साथ सोलह कलाओं से पूर्ण चन्द्रमा उदय हो, और समस्त पर्वतों में दवाग्नि लगा दी जाय, तब भी सूर्य के उदय हुये बिना रात नहीं जा सकती।

ऐसेहिं बिनु हरि भजन खगेसा ❀ मिटइ न जीवन्ह केर कलेसा
हरि सेवकहिं न ब्याप अबिद्या ❀ प्रभु प्रेरित ब्यापइ तेहि बिद्या

हे पक्षिराज! इसी प्रकार भगवान के भजन बिना जीवों का क्लेश नहीं मिटता। भगवान के सेवक को अविद्या नहीं व्यापती। प्रभु की प्रेरणा से उसे विद्या व्यापती है।

ता तें नास न होइ दास कर ❀ भेद भगति बाढ़इ बिहंगबर
भ्रम तें चकित राम मोहि देखा ❀ बिहँसे सो सुनु चरित बिसेषा

इसी से दास का नाश नहीं होता। हे पक्षिवर! उससे भेद-भक्ति बढ़ती है। रामजी ने मुझे जब भ्रम से चकित देखा, तब वे हँसे। वह विशेष चरित्र सुनिये।

तेहि कौतुक कर मरमु न काहूँ ❀ जाना अनुज न मातु पिताहूँ
जानु पानि धाये मोहि धरना ❀ स्यामल गात अरुन कर चरना

उस कौतुक का मर्म किसी ने नहीं जाना, न उनके छोटे भाइयों ने और न माता-पिता ही ने। वे श्याम शरीर और लाल-लाल हथेली और तलुवे वाले रामजी मुझे पकड़ने को घुटने और हाथ के बल दौड़े।

---

१. भी। २. सींग।

तब मैं भागि चलेउँ उरगारी ❀ राम गहन कहँ भुजा पसारी
जिमि जिमि दूरि उड़ाउँ अकासा ❀ तहँ हरि भुज देखउँ निज पासा

हे गरुड़ ! तब मैं भाग चला। मुझे पकड़ने के लिये रामजी ने भुजा फैलाई। मैं जैसे-जैसे आकाश में दूर उड़ता गया, वैसे-वैसे मैं भगवान् की भुजा को अपने पास ही देखता था।

दो०- ब्रह्मलोक लगि गयेउँ मैं चितयेउँ पाछ उड़ात।
जुग अंगुल कर बीच सब राम भुजहिं मोहि तात॥

मैं ब्रह्मलोक तक गया और जब उड़ते हुये मैंने पीछे की ओर देखा, तब हे तात ! मुझ में और रामजी की भुजा में केवल दो ही अंगुल का अन्तर था।

सप्तावरन भेद करि जहाँ लगें गति मोरि।
गयेउँ तहाँ प्रभु भुज निरखि ब्याकुल भयेउँ बहोरि॥

सातों आवरणों को भेदकर जहाँ तक मेरी गति थी, वहाँ तक मैं गया। पर वहाँ भी प्रभु की भुजा को अपने पीछे देखकर मैं व्याकुल हो गया।

मूँदेउँ नयन त्रसित जब भयेउँ ❀ पुनि चितवत कोसलपुर गयेउँ
मोहि बिलोकि राम मुसुकाहीं ❀ बिहँसत तुरत गयेउँ मुख माहीं

जब मैं भयभीत हो गया, तब मैंने नेत्र मूँद लिये। फिर आँखें खोलकर देखा तो अयोध्यापुरी में पहुँच गया। मुझे देखकर रामजी मुसकाने लगे। उनके हँसते ही मैं तुरन्त उनके मुँह में प्रवेश कर गया।

उदर माँझ सुनु अंडज[1] राया ❀ देखेउँ बहु ब्रह्मांड निकाया[2]
अति बिचित्र तहँ लोक अनेका ❀ रचना अधिक एक ते एका

हे पक्षियों के राजा ! सुनिये, उनके पेट में मैंने बहुत-से ब्रह्मांडों के समूह देखे। उनमें अत्यन्त अद्भुत अनेकों लोक थे। उनकी रचना एक की एक से बढ़कर थी।

कोटिन्ह चतुरानन[3] गौरीसा[4] ❀ अगनित उडुगन रबि रजनीसा[5]
अगनित लोकपाल जम काला ❀ अगनित भूधर भूमि बिसाला

करोड़ों ब्रह्मा, शिव, असंख्य तारागण, सूर्य और चन्द्रमा, असंख्य लोक-

---

१. पक्षी। २. समूह। ३. ब्रह्मा। ४. शिव। ५. चन्द्रमा।

पाल, यम और काल, असंख्य विशाल पर्वत और भूमि,

सागर सरि सर बिपिन अपारा ❁ नाना भाँति सृष्टि बिस्तारा
सुर मुनि सिद्ध नाग नर किन्नर ❁ चारि प्रकार जीव सचराचर

असंख्य समुद्र, नदी, तालाब और अपार वन तथा और भी अनेकों प्रकार से सृष्टि का विस्तार देखा। देवता, मुनि, सिद्ध, नाग, नर, किन्नर तथा चारों प्रकार के जड़ और चेतन जीव देखे।

दो॰— **जो नहिं देखा नहिं सुना जो मनहुँ न समाइ।**
सो सब अदभुत देखेउँ बरनि कवनि बिधि जाइ॥

जो पहले कभी देखा नहीं था, न सुना था और जो मन में भी नहीं समा सकता था, वही सब अद्भुत दृश्य मैंने देखे। तब किस प्रकार उसका वर्णन किया जाय !

एक एक ब्रह्मांड महुँ रहेउँ बरस सत एक।
एहि बिधि देखत फिरेउँ मैं अंडकटाह[1] अनेक॥

एक-एक ब्रह्मांड में मैं एक-एक सौ वर्षों तक रहता। इस प्रकार मैं अनेकों ब्रह्मांड देखता फिरा।

लोक लोक प्रति भिन्न बिधाता ❁ भिन्न बिष्नु सिव मनु दिसित्राता[2]
नर गन्धर्ब भूत बैताला ❁ किन्नर निसिचर पसु खग ब्याला

प्रत्येक लोक में भिन्न-भिन्न ब्रह्मा, विष्णु, शिव, मनु, दिग्पाल, मनुष्य, गंधर्व, भूत, वैताल, किन्नर, राक्षस, पशु, पक्षी, सर्प,

देव दनुज गन नाना जाती ❁ सकल जीव तहँ आनहिं भाँती
महि सरि सागर सर गिरि नाना ❁ सब प्रपंच तहँ आनइ आना[3]

तथा नाना जातियों के देवता और दैत्य-गण थे। सभी जीव वहाँ दूसरे ही प्रकार के थे। अनेक पृथ्वी, नदी, समुद्र, तालाब, पर्वत तथा सब सृष्टि वहाँ और ही और प्रकार की थी।

अण्डकोस प्रति प्रति निज रूपा ❁ देखेउँ जिनिस अनेक अनूपा
अवधपुरी प्रति भुअन निनारी ❁ सरजू भिन्न भिन्न नर नारी

---

१. ब्रह्मांड। २. दिग्पाल। ३. अन्य, दूसरे।

प्रत्येक ब्रह्मांड में मैंने अपना रूप तथा अनेकों अनुपम पदार्थ देखे। प्रत्येक भुवन में अयोध्या न्यारी ही थी। सरयू भी भिन्न थी और नर-नारी भी भिन्न-भिन्न प्रकार के थे।

दसरथ कौसल्या सुनु ताता ❀ बिबिध रूप भरतादिक भ्राता
प्रति ब्रह्माण्ड राम अवतारा ❀ देखेउँ बाल बिनोद अपारा

हे तात! सुनिये। दशरथ, कौशल्या और भरत आदि भाई भी अनेक रूपों के थे। प्रत्येक ब्रह्माण्ड में मैंने रामजी का अवतार और उनके अपार बाल-विनोद भी देखे।

दो०— भिन्न भिन्न मैं दीख सबु अति बिचित्र हरिजान।
अगनित भुवन फिरेउँ प्रभु राम न देखेउँ आन ॥(क)

हे हरिवाहन! मैंने सभी कुछ भिन्न-भिन्न और अत्यन्त विचित्र देखे। मैं असंख्य भुवनों में फिरता रहा, पर प्रभु रामजी को मैंने दूसरी तरह का नहीं देखा।

सोइ सिसुपन सोइ सोभा सोइ कृपाल रघुबीर।
भुअन भुअन देखत फिरउँ प्रेरित मोह समीर ॥(ख)

रामजी का सर्वत्र वही शिशुपन, वही शोभा और वही कृपालु रामजी। मैं भुवन-भुवन में मोहरूपी पवन की प्रेरणा से देखता फिरता था।

भ्रमत मोहि ब्रह्माण्ड अनेका ❀ बीते मनहुँ कलप सत एका
फिरत फिरत निज आश्रम आयेउँ ❀ तहँ पुनि रहि कछु काल गवाँयेउँ

अनेक ब्रह्माण्डों में भटकते हुये मुझे मानो एक-सौ कल्प बीत गये। फिरते फिरते मैं अपने आश्रम में आया। फिर वहीं रहकर मैंने कुछ समय बिताया।

निज प्रभु जनम अवध सुनि पायेउँ ❀ निर्भर प्रेम हरषि उठि धायेउँ
देखेउँ जनम महोत्सव जाई ❀ जेहि बिधि प्रथम कहा मैं गाई

जब मैंने अपने प्रभु का जन्म अवधपुरी में होना सुन पाया, तब प्रेम से भरपूर होकर, हर्षपूर्वक मैं उठ दौड़ा। वहाँ जाकर मैंने जन्म-महोत्सव देखा, जिस प्रकार मैं पहले विस्तार से कह चुका हूँ।

राम उदर देखेउँ जग नाना ❀ देखत बनइ न जाइ बखाना
तहँ पुनि देखेउँ राम सुजाना ❀ माया पति कृपाल भगवाना

रामजी के पेट में मैंने अनेक जगत् देखे, जो देखते ही बनते थे, वर्णन नहीं किये जा सकते। वहाँ फिर मैंने सुजान, मायापति, कृपालु भगवान् रामजी को देखा।

करउँ बिचार बहोरि बहोरी ❀ मोह कलिल[1] ब्यापित मति मोरी
उभय[2] घरी महँ मैं सब देखा ❀ भयेउँ भ्रमित मन मोह बिसेषा

मैं बार-बार विचार करता था। मेरी बुद्धि मोहरूपी कीचड़ से व्याप्त थी। दो ही घड़ी में मैंने सब देखा। मन में विशेष मोह होने से मैं थक गया।

दो० देखि कृपाल बिकल मोहि बिहँसे तब रघुबीर।
बिहँसतही मुख बाहेर आयेउँ सुनु मतिधीर ॥(क)

मुझे विकल देखकर कृपालु रामजी भी हँसने लगे। हे धीरबुद्धि गरुड़! सुनिये, उनके हँसते ही मैं उनके मुँह से बाहर आ गया।

सोइ लरिकाई मो सन करन लगे पुनि राम।
कोटि भाँति समुझावउँ मनु न लहइ बिश्राम ॥(ख)

रामजी मेरे साथ फिर वही लड़कपन करने लगे। मैं करोड़ों भाँति से मन को समझाता था, पर शान्ति न पाता था।

देखि चरित यह सो प्रभुताई ❀ समुझत देह दसा बिसराई
धरनि परेउँ मुख आव न बाता ❀ त्राहि त्राहि आरत जन त्राता

यह बालचरित देखकर और उस प्रभुता को समझकर मैं देह की सुध-बुध भूल गया, और हे दुखियों के रक्षक! रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये, पुकारता हुआ मैं पृथ्वी पर गिर पड़ा। मेरे मुँह से बात नहीं निकलती थी।

प्रेमाकुल प्रभु मोहि बिलोकी ❀ निज माया प्रभुता तब रोकी
कर सरोज प्रभु मम सिर धरेऊ ❀ दीनदयाल सकल दुख हरेऊ

मुझे प्रेम-विह्वल देखकर प्रभु ने अपनी माया का प्रभाव रोक लिया। प्रभु ने मेरे सिर पर अपना कर-कमल रक्खा। दीनों पर दया करने वाले रामजी ने मेरे सब दुःख हर लिये।

---

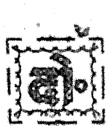
१. कीचड़। २. दो।

कीन्ह राम मोहि बिगत बिमोहा ❁ सेवक सुखद कृपा संदोहा
प्रभुता प्रथम बिचारि बिचारी ❁ मन महँ होइ हरष अति भारी

सेवकों को सुख देने वाले और कृपा की राशि रामजी ने मुझे मोह से रहित कर दिया। रामजी की पहले वाली प्रभुता को सोच-सोच कर मेरे मन में अत्यन्त हर्ष हुआ।

भक्त बछलता प्रभु कै देखी ❁ उपजी मम उर प्रीति बिसेषी
सजल नयन पुलकित कर जोरी ❁ कीन्हेउँ बहु बिधि बिनय बहोरी

प्रभु की भक्त-वत्सलता देखकर मेरे हृदय में बहुत ही प्रीति उत्पन्न हुई। फिर मैंने नेत्रों में आँसू भरकर, पुलकित होकर और हाथ जोड़कर बहुत प्रकार से विनती की।



सुनि सप्रेम मम बानी देखि दीन निज दास।
बचन सुखद गंभीर मृदु बोले रमानिवास॥

मेरी प्रेम-युक्त वाणी सुनकर और अपने दास को दीन देखकर लक्ष्मी-निवास रामजी सुखद, गम्भीर और मधुर वचन बोले—

काकभसुंडि माँगु बर अति प्रसन्न मोहि जानि।
अनिमादिक सिधि अपर रिधि मोच्छ सकल सुख खानि

हे काकभुशुण्डि! मुझे अत्यन्त प्रसन्न जानकर वर माँगो। अणिमा आदि अष्ट सिद्धियाँ, अन्य ऋद्धियाँ तथा सकल सुखों की खान मोक्ष।

ग्यान बिबेक बिरति बिग्याना ❁ मुनि दुर्लभ गुन जे जग जाना
आजु देउँ सब संसय नाहीं ❁ माँगु जो तोहि भाव मन माहीं

ज्ञान, विवेक, वैराग्य, विज्ञान आदि वे अनेकों गुण जो जगत् में मुनियों के लिये भी दुर्लभ हैं, उन सबको मैं आज तुम्हें दूँगा। इसमें सन्देह नहीं। जो तुम्हें प्रिय लगे, सो माँग लो।

सुनि प्रभु बचन अधिक अनुरागेउँ ❁ मन अनुमान करन तब लागेउँ
प्रभु कह देन सकल सुख सही ❁ भगति आपनी देन न कही

प्रभु के वचन सुनकर मैं बहुत ही अनुरक्त हो गया और मन में अनुमान

करने लगा कि प्रभु ने सब सुख देने की बात कही, यह तो सत्य है; पर अपनी भक्ति देने की बात नहीं कही।

भगति हीन गुन सब सुख कैसे ❀ लवन बिना बहु बिंजन जैसे
भजन हीन सुख कवने काजा ❀ अस बिचारि बोलेउँ खगराजा

भक्ति से रहित सब गुण और सब सुख कैसे हैं, जैसे नमक के बिना बहुत प्रकार के भोजन के पदार्थ। भजन से रहित सुख किस काम के ? हे पक्षिराज ! ऐसा विचारकर मैं बोला—

जौं प्रभु होइ प्रसन्न बर देहू ❀ मो पर करहु कृपा अरु नेहू
मन भावत बर माँगउँ स्वामी ❀ तुम्ह उदार उर अन्तरजामी

हे प्रभो ! यदि आप प्रसन्न होकर मुझे वर देते हैं और मुझ पर कृपा और स्नेह करते हैं, तो हे स्वामी ! मैं अपने मन को प्रिय लगने वाला वर माँगता हूँ। आप उदार हैं और हृदय के भीतर की जानने वाले हैं।

दो॰— अबिरल[1] भगति बिसुद्ध तव श्रुति पुरान जो गाव।
जेहि खोजत जोगीस मुनि प्रभु प्रसाद कोउ पाव॥

आपकी जिस अविरल और विशुद्ध भक्ति को वेद और पुराण गाते हैं, जिसे योगीश्वर मुनि खोजते हैं और प्रभु की कृपा से कोई विरला ही जिसे पाता है।

भगत कल्पतरु प्रनतहित कृपा सिन्धु सुख धाम।
सोइ निज भगति मोहि प्रभु देहु दया करि राम॥

हे भक्तों के कल्पवृक्ष ! शरणागत का कल्याण करने वाले ! कृपा के समुद्र ! सुख के धाम ! प्रभु राम ! मुझे दया करके वही भक्ति दीजिये।

एवमस्तु कहि रघुकुलनायक ❀ बोले बचन परम सुखदायक
सुनु बायस तैं सहज सयाना ❀ काहे न माँगसि अस बरदाना

रघुकुल के स्वामी रामजी 'एवमस्तु' (ऐसा ही हो) कहकर परम सुख देने वाले वचन बोले—हे काग ! सुन, तू स्वभाव ही से बुद्धिमान, ऐसा वरदान कैसे न माँगता ?

---

१. प्रगाढ़।

सब सुख खानि भगति तैं माँगी ❀ नहिं जग कोउ तोहि सम बड़भागी
जो मुनि कोटि जतन नहिं लहहीं ❀ जे जप जोग अनल तन दहहीं

तूने सब सुखों की खान भक्ति माँगी है। तेरे समान बड़भागी जगत् में कोई नहीं है। जिसे मुनि, जो जप और योग की आग में अपने शरीर को जलाते रहते हैं, करोड़ों यत्न करके भी नहीं पाते,

रीझेउँ देखि तोरि चतुराई ❀ माँगेहु भगति मोहि अति भाई
सुनु बिहंग प्रसाद अब मोरें ❀ सब सुभ गुन बसिहहिं उर तोरें

तेरी चतुरता देखकर मैं रीझ गया। तूने वही भक्ति मुझ से माँगी, यह मुझे बहुत ही प्रिय लगी। हे पक्षी! सुन, मेरी कृपा से अब समस्त शुभ गुण तेरे हृदय में बसेंगे।

भगति ग्यान बिग्यान बिरागा ❀ जोग चरित्र रहस्य बिभागा
जानब तैं सबही कर भेदा ❀ मम प्रसाद नहिं साधन खेदा

भक्ति, ज्ञान, विज्ञान, वैराग्य, योग, मेरी लीलायें, उनके रहस्य तथा विभाग—इन सबके भेद को तू मेरी कृपा से जान जायगा। तुझे साधन का कष्ट नहीं होगा।

दो॰ माया संभव भरम सब अब न ब्यापिहहिं तोहि।
जानेसु ब्रह्म अनादि अज अगुन गुनाकर मोहि॥

माया से उत्पन्न सब भ्रम अब तुझे न व्यापेंगे। मुझे अनादि, अजन्मा, अगुण और गुणों की खान ब्रह्म जानना।

मोहि भगत प्रिय संतत अस बिचारि सुनु काग।
कायँ बचन मन मम पद करेसु अचल अनुराग॥

हे काक! सुन, मुझे भक्त सदा प्यारे हैं, ऐसा विचारकर शरीर, वचन और मन से मेरे चरणों में निश्चल प्रेम करना।

अब सुनु परम बिमल मम बानी ❀ सत्य सुगम निगमादि बखानी
निज सिद्धान्त सुनावउँ तोही ❀ सुनु मन धरु सब तजि भजु मोही

अब मेरी परम निर्मल वाणी सुन, जो सत्य है, सुगम है और वेद आदि में वर्णित है। मैं तुझ को अपना निज सिद्धान्त सुनाता हूँ। सुनकर उसे मन

में धारण कर और सब को तजकर मेरा भजन कर।

मम माया संभव संसारा ❀ जीव चराचर बिबिध प्रकारा
सब मम प्रिय सब मम उपजाए ❀ सब ते अधिक मनुज मोहि भाए

यह सारा संसार मेरी माया से उत्पन्न है, जिसमें अनेकों प्रकार के चेतन और जड़ जीव हैं। मुझे सभी प्रिय हैं, क्योंकि सभी मेरे उत्पन्न किये हुये हैं। किन्तु इनमें मनुष्य मुझे सब से अधिक प्रिय हैं।

तिन्ह महँ द्विज द्विज महँ श्रुतिधारी[1] ❀ तिन्ह महुँ निगम धर्म अनुसारी
तिन्ह महँ प्रिय बिरक्त पुनि ग्यानी ❀ ग्यानिहुँ तें अति प्रिय बिग्यानी

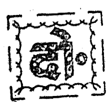
मनुष्यों में भी द्विज, द्विजों में भी वेदज्ञ, वेदज्ञों में भी वेदोक्त धर्म पर चलने वाले, उनसे भी विरक्त और विरक्त से भी ज्ञानी मुझे प्रिय हैं। ज्ञानी से भी अधिक प्रिय विज्ञानी हैं।

तिन्ह तें पुनि मोहि प्रिय निज दासा ❀ जेहि गति मोरि न दूसरि आसा
पुनि पुनि सत्य कहउँ तोहि पाहीं ❀ मोहि सेवक सम प्रिय कोउ नाहीं

उनसे भी अधिक प्रिय मुझे अपना दास है, जिसे मेरी ही गति है और कोई दूसरी आशा नहीं है। मैं तुझ से बार-बार सत्य कहता हूँ, मुझे अपने सेवक के समान और कोई भी प्रिय नहीं है। [सार अलंकार]

भगति हीन बिरंचि किन होई ❀ सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई
भगतिवंत अति नीचउ प्रानी ❀ मोहि प्रानप्रिय असि मम बानी

भक्ति से रहित ब्रह्मा ही क्यों न हो, वह मुझे अन्य सब जीवों के समान प्रिय है। परंतु भक्तिवान् अत्यंत नीच प्राणी भी मुझे प्राणों के समान प्रिय है। यही मेरी घोषणा (या मेरा स्वभाव) है।



सुचि सुसील सेवक सुमति प्रिय कहु काहि न लाग।
श्रुति पुरान कह नीति असि सावधान सुनु काग॥

पवित्र सुन्दर स्वभाव वाला, सुन्दर बुद्धि वाला सेवक भला, बता तो, किसे प्रिय नहीं लगता ? वेद और पुराण ऐसी ही नीति कहते हैं। हे काक ! सावधान होकर सुन।

१. वेदों को कण्ठ में धारण करने वाला।

एक पिता के बिपुल[1] कुमारा ❀ होहिं पृथक[2] गुन सील अचारा[3]
कोउ पंडित कोउ तापस ग्याता ❀ कोउ धनवंत सूर कोउ दाता

एक पिता के बहुत-से पुत्र होते हैं। सबके गुण, शील और आचरण अलग-अलग होते हैं। कोई पंडित होता है, कोई तपस्वी, कोई ज्ञानी, कोई धनी, कोई वीर, कोई दानी,

कोउ सर्बग्य धर्मरत कोई ❀ सब पर पितहि प्रीति सम होई
कोउ पितु भगत बचन मन कर्मा ❀ सपनेहु जान न दूसर धर्मा

कोई सर्वज्ञ, कोई धर्म-परायण होता है। पर पिता की प्रीति सब पर बराबर होती है। कोई वचन, मन और कर्म से पिता का भक्त होता है। वह स्वप्न में भी दूसरा धर्म नहीं जानता।

सो सुत प्रिय पितु प्रान समाना ❀ जद्यपि सो सब भाँति अयाना
एहि बिधि जीव चराचर जेते ❀ त्रिजग[4] देव नर असुर समेते

वही पुत्र पिता को प्राणों के समान प्रिय होता है, चाहे वह सब प्रकार से ज्ञान-रहित ही हो। इसी प्रकार जितने भी तिर्यक्, देव, मनुष्य और असुर-सहित चेतन और जड़ जीव हैं,

अखिल बिस्व यह मम उपजाया ❀ सब पर मोरि बरावरि दाया
तिन्ह महँ जो परिहरि मद माया ❀ भजै मोहि मन बच अरु काया

यह सम्पूर्ण विश्व मेरा ही उत्पन्न किया हुआ है। अतः सब पर मेरी बराबर दया है। परन्तु इनमें भी जो मद और माया छोड़कर, मुझे मन, वचन और शरीर से भजता है,

दो०— पुरुष नपुंसक नारि वा जीव चराचर कोइ।
भगति भाव भज कपट तजि मोहि परम प्रिय सोइ॥(क)

वह पुरुष हो, नपुंसक हो, स्त्री हो अथवा चेतन और जड़ कोई भी जीव हो, कपट छोड़कर जो मुझे भक्ति-भाव से भजता है, वही मुझे परम प्रिय है।

सो०— सत्य कहउँ खग तोहि सुचि सेवक मम प्रान प्रिय।
अस बिचारि भजु मोहि परिहरि आस भरोस सब॥(ख)

---

१. बहुत-से। २. अलग-अलग। ३. आचरण। ४. पशु-पक्षी।

हे पक्षी ! मैं तुझसे सत्य कहता हूँ, पवित्र सेवक मुझे प्राणों की तरह प्रिय होता है। ऐसा विचार कर सब आशा-भरोसा छोड़कर मुझे ही भज।

कबहुँ काल नहिं ब्यापिहि तोही ❀ सुमिरि स्वरूप निरंतर मोही
प्रभु बचनामृत सुनि न अघाऊँ[1] ❀ तनु पुलकित मन अति हरषाऊँ

तुझे कभी काल नहीं व्यापेगा। निरन्तर मेरे स्वरूप का स्मरण किया कर। प्रभु के अमृत-जैसे वचन सुनकर मैं अघाता नहीं था। मेरा शरीर पुलकित हो रहा था और मैं मन में बहुत-ही हर्षित हो रहा था।

सो सुख जानइ मन अरु काना ❀ नहिं रसना पहिं जाइ बखाना
प्रभु सोभा सुख जानहिं नयना ❀ कहि किमि सकहिं तिन्हहिं नहिं बयना

वह सुख तो मन और कान ही जानते हैं। जीभ से उसका वर्णन नहीं हो सकता। प्रभु की शोभा का वह सुख नेत्र ही जानते हैं। पर वे कह कैसे सकते हैं ? उनके वाणी तो है नहीं।

बहु बिधि मोहि प्रबोधि सुख देई ❀ लगे करन सिसु कौतुक तेई
सजल नयन कछु मुख करि रूखा ❀ चितइ मातु लागी अति भूखा

मुझे बहुत प्रकार से समझा-बुझाकर, सुख देकर प्रभु फिर वही बाल-कौतुक करने लगे। आँखों में आँसू भरकर, मुँह को कुछ रूखा-सा बनाकर उन्होंने माता की ओर देखा कि बहुत भूख लगी है।

देखि मातु आतुर उठि धाई ❀ कहि मृदु बचन लिये उर लाई
गोद राखि कराव पय पाना ❀ रघुपति चरित ललित कर गाना

यह देखकर माता शीघ्रता से उठ दौड़ी और मधुर वचन कहकर उसने रामजी को छाती से लगा लिया। गोद में लेकर वे दूध पिलाने और राम की ललित लीलाओं का गान करने लगीं।

सो०— जेहि सुख लागि पुरारि असुभ बेष कृत सिव सुखद।
अवधपुरी नरनारि तेहि सुख महुँ संतत मगन ॥८८(क)॥

जिस सुख के लिये सबको सुख देने वाले कल्याणरूप शिव ने अशुद्ध वेष धारण किया, उस सुख में अयोध्यापुरी के पुरुष-स्त्री सदा मगन रहते हैं।

१. तृप्त होऊँ।

सोई सुख लवलेस जिन्ह बारक[1] सपनेहु लहेउ।
तेहि नहिं गनहिं खगेस ब्रह्मसुखहिं सज्जन सुमति॥(ख)॥

उस सुख का लवलेश-मात्र भी जिन्होंने एक बार स्वप्न में भी प्राप्त कर लिया, हे पक्षिराज! वे सुन्दर मति वाले सज्जन ब्रह्म-सुख को भी कुछ नहीं गिनते।

मैं पुनि अवध रहेउँ कछु काला ❀ देखेउँ बाल बिनोद रसाला
राम प्रसाद भगति बर पायेउँ ❀ प्रभु पद बंदि निजाश्रम आयेउँ

मैं कुछ समय तक अयोध्यापुरी में रहा और मैंने रामजी के रसीले बाल-चरित्र देखे। रामजी की कृपा से मैंने भक्ति का वरदान पाया। फिर प्रभु के चरणों की वन्दना करके मैं अपने आश्रम को लौट आया।

तब तें मोहि न ब्यापी माया ❀ जब तें रघुनायक अपनाया
यह सब गुप्त चरित मैं गावा ❀ हरि मायाँ जिमि मोहि नचावा

इस प्रकार जब से रामजी ने मुझे अपनाया, तब से मुझे माया कभी नहीं व्यापी। भगवान् की माया ने मुझे जैसा नचाया, वह सब छिपा हुआ रहस्य मैंने कहा।

निज अनुभव अब कहउँ खगेसा ❀ बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा
राम कृपा बिनु सुनु खगराई ❀ जानि न जाइ राम प्रभुताई

हे पक्षिराज! मैं अब अपना निजी अनुभव आपसे कहता हूँ। भगवान् के भजन बिना क्लेश दूर नहीं होते। हे पक्षिराज! सुनिये, रामजी की कृपा के बिना रामजी की प्रभुता जानी नहीं जा सकती।

जानें बिनु न होइ परतीती ❀ बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती
प्रीति बिना नहिं भगति दिढ़ाई ❀ जिमि खगपति जल कै चिकनाई

प्रभुता जाने बिना विश्वास नहीं जमता; विश्वास जमे बिना प्रीति नहीं होती और प्रीति बिना भक्ति वैसे ही दृढ़ नहीं होती, जैसे हे पक्षिराज! जल का चिकनापन नहीं ठहरता। [कारणमाला अलंकार]

सो०

बिनु गुर होइ कि ग्यान ग्यान कि होइ बिराग बिनु।
गावहिं बेद पुरान सुख कि लहिअ हरि भगति बिनु॥

---

१. एक बार।

बिना गुरु के कहीं ज्ञान हो सकता है? और वैराग्य के बिना कहीं ज्ञान हो सकता है? वेद और पुराण गाते हैं कि भगवान् की भक्ति के बिना क्या सुख मिल सकता है?

कोउ बिस्राम कि पाव तात सहज संतोष बिनु।
चलै कि जल बिनु नाव कोटि जतन पचि पचि मरिअ॥

हे तात! स्वाभाविक संतोष के बिना क्या कोई शान्ति पा सकता है? करोड़ों उपाय करने पर, जान लड़ा देने पर भी, क्या पानी के बिना नाव चल सकती है?

बिनु संतोष न काम नसाहीं ❀ काम अछत सुख सपनेहुँ नाहीं
राम भजन बिनु मिटहिं कि कामा ❀ थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा

सन्तोष के बिना कामना का नाश नहीं होता, और कामना के रहते हुये स्वप्न में भी सुख नहीं हो सकता, और रामजी के भजन बिना कहीं कामनाएँ मिट सकती हैं? भूमि न हो, तो क्या कभी वृक्ष उग सकता है?

बिनु बिग्यान कि समता आवइ ❀ को अवकास कि नभ बिनु पावइ
श्रद्धा बिना धरम नहिं होई ❀ बिनु महि गन्ध कि पावइ कोई

विज्ञान (तत्वज्ञान) के बिना क्या समभाव आ सकता है? आकाश के बिना क्या कोई अवकाश (पोल) पा सकता है? श्रद्धा के बिना धर्म (का आचरण) नहीं होता। क्या कोई पृथ्वी-तल के बिना गंध पा सकता है?

बिनु तप तेज कि कर बिस्तारा ❀ जल बिनु रस कि होइ संसारा
सील कि मिल बिनु बुध सेवकाई ❀ जिमि बिनु तेज न रूप गुसाईं

तप के बिना क्या तेज का विस्तार हो सकता है? जल-तत्त्व के बिना संसार में क्या रस हो सकता है? बुद्धिमान की सेवा बिना क्या सदाचार मिल सकता है? हे गोसाईं! जैसे बिना तेज के रूप नहीं मिलता।

निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा[1] ❀ परस कि होइ बिहीन समीरा
कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा ❀ बिनु हरि भजन न भव[2] भय नासा

आत्म-सुख के बिना क्या मन स्थिर हो सकता है? वायु-तत्त्व के बिना क्या स्पर्श हो सकता है? क्या विश्वास के बिना कोई भी सिद्धि हो सकती है?

१. स्थिर। २. जन्म-मरण।

इसी प्रकार भगवान् के भजन के बिना जन्म-मृत्यु के भय का नाश नहीं होता।

दो०—बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहिं न रामु।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह बिश्रामु॥

बिना विश्वास के भक्ति नहीं होती; और भक्ति के बिना रामजी नहीं पसीजते। रामजी की कृपा के बिना जीव स्वप्न में भी शान्ति नहीं पाता।

सो०—अस बिचारि मतिधीर तजि कुतर्क संसय सकल।
भजहु राम रघुबीर करुनाकर सुन्दर सुखद॥

हे धीरबुद्धि गरुड़! ऐसा विचारकर समस्त कुतर्कों और संशयों को छोड़कर करुणा की खान सुन्दर और सुख देने वाले रघुवीर रामजी का भजन कीजिये।

निज मति सरिस नाथ मैं गाया ❀ प्रभु प्रताप महिमा खगराया
कहेउँ न कछु करि जुगुति बिसेषी ❀ यह सब मैं निज नयनन्हि देखी

हे पक्षिराज! हे नाथ! मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार प्रभु के प्रताप और महिमा का गान किया। मैंने कोई विशेष युक्ति से कुछ बढ़ाकर नहीं कहा है। यह सब मैंने अपनी आँखों से देखा है।

महिमा नाम रूप गुन गाथा ❀ सकल अमित अनंत रघुनाथा
निज निज मति मुनि हरि गुन गावहिं ❀ निगम सेष सिव पार न पावहिं

रामजी की महिमा, नाम, रूप और गुणों की कथा सभी अपार और अनंत हैं। रामजी स्वयं भी अनन्त हैं। मुनि-गण अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार भगवान् के गुण गाते हैं। वेद, शेष और शिवजी भी उनका पार नहीं पाते।

तुम्हहिं आदि खग मसक प्रजंता[1] ❀ नभ उड़ाहिं नहिं पावहिं अंता
तिमि रघुपति महिमा अवगाहा ❀ तात कबहुँ कोउ पाव कि थाहा

आपसे लेकर मच्छर तक सभी छोटे-बड़े जीव आकाश में उड़ते हैं किन्तु उसका पार नहीं पाते। इसी प्रकार हे तात! रामजी की महिमा भी अथाह है, उसमें डुबकी लगाकर क्या कोई थाह पा सकता है?

रामु काम सत कोटि सुभग तन ❀ दुर्गा कोटि अमित अरि मर्दन
सक्र कोटि सत सरिस बिलासा ❀ नभ सत कोटि अमित अवकासा

१. पर्यंत, तक।

रामजी का शरीर अरबों कामदेवों के समान सुन्दर है। वे अनन्त कोटि दुर्गाओं के समान शत्रुनाशक हैं। अरबों इन्द्र के समान उनका विलास-ऐश्वर्य है। अरबों आकाशों के समान उनका अनन्त विस्तार है।

दो० मरुत कोटि सत बिपुल बल रबि सत कोटि प्रकास।
ससि सत कोटि सुसीतल समन सकल भव त्रास॥

अरबों पवन के समान उनमें महान् बल है, अरबों सूर्य के समान उनमें प्रकाश है। वे अरबों चन्द्रमा के समान शीतल और संसार के समस्त भयों का नाश करने वाले हैं।

काल कोटि सत सरिस अति दुस्तर[1] दुर्ग दुरंत[2]।
धूमकेतु सत कोटि सम दुराधर्ष[3] भगवन्त॥

अरबों कालों के समान वे अत्यन्त दुस्तर, दुर्गम और अन्त-हीन हैं। वे भगवन्त अरबों धूमकेतुओं के समान अत्यन्त प्रबल हैं।

प्रभु अगाध सत कोटि पताला ❁ समन कोटि सत सरिस कराला
तीरथ अमित कोटि सम पावन ❁ नाम अखिल अघपुञ्ज नसावन

अरबों पातालों के समान प्रभु अथाह हैं। अरबों यमराजों के समान वे भयानक हैं। अनन्त करोड़ तीर्थों के समान वे पवित्र करने वाले हैं। उनका नाम समस्त पापों के समूह का नाश करने वाला है।

हिमगिरि कोटि अचल रघुबीरा ❁ सिंधु कोटि सत सम गम्भीरा
कामधेनु सत कोटि समाना ❁ सकल काम दायक भगवाना

करोड़ों हिमालयों के समान वे अचल हैं और अरबों समुद्रों के समान गहरे हैं। भगवान् अरबों कामधेनुओं के समान समस्त कामनाओं के देने वाले हैं।

सारद कोटि अमित चतुराई ❁ बिधि सत कोटि सृष्टि निपुनाई
बिष्नु कोटि सत पालन करता[4] ❁ रुद्र कोटि सत सम संहरता

अनन्त करोड़ सरस्वतियों के समान उनमें चतुरता है। अरबों ब्रह्माओं के समान उनमें सृष्टि रचने की निपुणता है। अरबों विष्णुओं के समान वे पालन

---

१. जो पार न पाया जा सके। २. जिसका अंत न हो। ३. अत्यन्त प्रबल। ४. कर्त्ता, करने वाले।

करने वाले और अरबों रुद्रों के समान वे संहार करने वाले हैं।

धनद[1] कोटि सत सम धनवाना ❁ माया कोटि प्रपंच निधाना
भार धरन सत कोटि अहीसा ❁ निरवधि निरुपम प्रभु जगदीसा

अरबों कुबेरों के समान वे धनवान और करोड़ों मायाओं के समान मायावी हैं। अरबों शेषों के समान वे भार धारण कर सकते हैं। जगत् के स्वामी प्रभु रामजी सीमा-रहित और अनुपम हैं।

छन्द–निरुपम न उपमा आन राम समान रामु निगम कहै
जिमि कोटि सत खद्योत सम रवि कहत अति लघुता लहै
एहि भाँति निज निज मति बिलास मुनीस हरिहिं बखानहीं
प्रभु भाव गाहक अति कृपाल सप्रेम सुनि सुख मानहीं

रामजी निरुपम हैं; उनकी कोई दूसरी उपमा है ही नहीं। राम के समान राम ही हैं, ऐसा वेद कहते हैं। जैसे अरबों जुगनुओं के समान कहने से सूर्य लघुता को ही प्राप्त होता है, उसी प्रकार अपनी-अपनी बुद्धि के विकास के अनुसार मुनीश्वर भगवान् का बखान करते हैं। किन्तु प्रभु भक्तों के भाव को ग्रहण करने वाले अति कृपालु हैं। वे उस वर्णन को प्रेम-सहित सुनकर सुख मानते हैं।

दो०-रामु अमित गुन सागर थाह कि पावइ कोइ।
संतन्ह सन जस किछु सुनेउँ तुम्हहि सुनायेउँ सोइ॥

रामजी अपार गुणों के समुद्र हैं। क्या उनकी कोई थाह पा सकता है? सन्तों से मैंने जैसा कुछ सुना था, वही आपको सुनाया।

सो०-भाव बस्य भगवान सुख निधान करुना भवन।
तजि ममता मद मान भजिअ सदा सीता रवन॥

सुख के भण्डार, करुणा के धाम भगवान् भाव के वश हैं। इसलिए ममता, मद और मान को छोड़कर सदा सीतापति का ही भजन करना चाहिये।

सुनि भुसुण्डि के बचन सुहाये ❁ हरषित खगपति पङ्ख फुलाये
नयन नीर मन अति हरषाना ❁ श्रीरघुबीर प्रताप उर आना

---

१. कुबेर।

भुशुण्डि के सुहावने वचन सुनकर पक्षिराज ने हर्षित होकर अपने पंख फुला लिये। उनके नेत्रों में जल आ गया और मन अत्यन्त हर्षित हो गया। उन्होंने श्रीरामचन्द्रजी का प्रताप हृदय में धारण किया।

पाछिल[1] मोह समुझि पछिताना ❀ ब्रह्म अनादि मनुज करि जाना
पुनि पुनि काग चरन सिर नावा ❀ जानि राम सम प्रेम बढ़ावा

गरुड़ अपने पिछले मोह को समझकर पछताने लगे, जो उन्होंने अनादि ब्रह्म को मनुष्य करके माना था। बार-बार उन्होंने काकभुशुण्डि के चरणों पर सिर नवाया, और उसे रामजी के समान जानकर प्रेम बढ़ाया।

गुर बिनु भव निधि तरइ न कोई ❀ जौं बिरंचि संकर सम होई
संसय सर्प ग्रसेउ मोहि ताता ❀ दुखद लहरि कुतर्क बहु ब्राता

गुरु के बिना कोई भव-सागर नहीं तर सकता, चाहे वह ब्रह्मा और शिवजी के समान ही क्यों न हो? गरुड़ ने कहा—हे तात! मुझे संशय-रूपी सर्प ने डस लिया था, और दुःख देनेवाली बहुत-सी कुतर्करूपी लहरें आ रही थीं।

तव सरूप गारुड़ि[2] रघुनायक ❀ मोहि जिआयेउ जन सुख दायक
तव प्रसाद मम मोह नसाना ❀ राम रहस्य अनूपम जाना

आपके स्वरूप-रूपी गारुड़ी मन्त्र-द्वारा भक्तों को सुख देने वाले रामजी ने मुझे जिला लिया। आपकी कृपा से मेरा मोह नष्ट हो गया और मैंने रामजी का अनुपम रहस्य जाना।

दो० ताहि प्रसंसि बिबिध बिधि सीस नाइ कर जोरि।
बचन बिनीत सप्रेम मृदु बोलेउ गरुड़ बहोरि॥

बहुत प्रकार से काकभुशुण्डि की प्रशंसा करके, सिर नवाकर और हाथ जोड़कर, फिर गरुड़ ने प्रेम-पूर्वक विनम्र और मधुर वचन कहा—

प्रभु अपने अबिबेक ते बूझउँ स्वामी तोहि।
कृपासिन्धु सादर कहहु जानि दास निज मोहि॥

हे प्रभो! हे स्वामी! मैं अपने अविवेक के कारण आपसे पूछता हूँ। हे

---

१. पिछला। २. साँप का विष उतारने का मन्त्र।

कृपा के समुद्र ! मुझे अपना निज दास जानकर आदरपूर्वक मेरे प्रश्न का उत्तर दीजिये ।

तुम्ह सर्बग्य तग्य¹ तम पारा ❁ सुमति सुसील सरल आचारा
ग्यान बिरत बिग्यान निवासा ❁ रघुनायक के तुम्ह प्रिय दासा

आप सर्वज्ञ हैं, तत्वज्ञ हैं, माया के अन्धकार से परे, उत्तम बुद्धि वाले, सुन्दर स्वभाव वाले, सरल आचरण वाले, ज्ञान, वैराग्य और विज्ञान के धाम और रामजी के प्रिय दास हैं ।

कारन कवन देह यह पाई ❁ तात सकल मोहि कहहु बुझाई
राम चरित सर सुन्दर स्वामी ❁ पायेउ कहाँ कहहु नभगामी

आपने यह शरीर किस कारण से पाया ? हे तात ! मुझे सब समझाकर कहिये । हे स्वामी ! हे आकाशाचारी ! आपने यह सुन्दर रामचरितमानस कहाँ पाया ? बताइये ।

नाथ सुना मैं अस सिव पाहीं ❁ महा प्रलैहुँ नास तव नाहीं
मुधा बचन नहिं ईस्वर कहई ❁ सो मोरें मन संसय अहई

हे नाथ ! मैंने शिवजी से ऐसा सुना है कि महाप्रलय में भी आपका नाश नहीं होता, और शिवजी कभी मिथ्या बात कहते नहीं, यह भी मेरे मन में सन्देह है ।

अग जग जीव नाग नर देवा ❁ नाथ सकल जगु काल कलेवा
अंड कटाह अमित लय कारी ❁ काल सदा दुरतिक्रम² भारी

हे नाथ ! नाग, नर और देव आदि जितने चर-अचर जीव संसार में हैं, तथा यह सारा जगत् काल का कलेवा है । अनन्त ब्रह्मांडों का नाश करने वाला काल सदा बड़ा ही अजेय है ।

सो०— तुम्हहिं न ब्यापत काल अति कराल कारन कवन ।
मोहि सो कहहु कृपाल ग्यान प्रभाउ कि जोग बल ॥

वह अत्यन्त भयंकर काल आपको नहीं व्यापता, इसका क्या कारण है ? हे कृपालु ! मुझे बताइये, यह ज्ञान का प्रभाव है या योग का बल है ?

---

१. तत्त्वज्ञानी । २. अजेय, अनिवार्य ।

दो० प्रभु तव आस्रम आयेउँ मोर मोह भ्रम भाग।
कारन कवन सो नाथ सब कहहु सहित अनुराग ॥

हे प्रभो! आपके आश्रम में आते ही मेरा मोह और भ्रम भाग गया। इसका क्या कारण है? हे नाथ! सब प्रेम-सहित कहिये।

गरुड़ गिरा सुनि हरषेउ कागा ❀ बोलेउ उमा सहित अनुरागा
धन्य धन्य तव मति उरगारी ❀ प्रस्न तुम्हारि मोहि अति प्यारी

गरुड़ की वाणी सुनकर काकभुशुण्डि हर्षित हुआ। हे उमा! वह प्रेम-सहित बोला—हे सर्प-शत्रु! आपकी बुद्धि को धन्य है! धन्य है! आपके प्रश्न मुझे बहुत ही प्यारे लगे।

सुनि तव प्रस्न सप्रेम सुहाई ❀ बहुत जनम कै सुधि मोहि आई
अब निज कथा कहउँ मैं गाई ❀ तात सुनहु सादर मन लाई

आपके प्रेम-युक्त सुन्दर प्रश्न सुनकर मुझे बहुत जन्मों की याद आ गई। अब मैं अपनी सब कथा विस्तार से कहता हूँ। हे तात! आदर-सहित मन लगाकर सुनिये।

जप तप ब्रत मख[1] सम[2] दम[3] दाना ❀ बिरति बिबेक जोग बिग्याना
सब कर फल रघुपति पद प्रेमा ❀ तेहि बिनु कोउ न पावइ छेमा

अनेक जप, व्रत, सम, दम, दान, वैराग्य, विवेक, योग, विज्ञान आदि सबका फल रामजी के चरणों में प्रेम होना है। इसके बिना कोई कल्याण नहीं प्राप्त कर सकता।

एहि तन राम भगति मैं पाई ❀ तातें मोहि ममता अधिकाई
जेहि तें कछु निज स्वारथ होई ❀ तेहि पर ममता कर सब कोई

इसी शरीर से मैंने रामजी की भक्ति प्राप्त की है, इसी से इस पर मेरी ममता अधिक है। जिससे अपना कुछ स्वार्थ होता है, उस पर सभी कोई प्रेम करते हैं।

सो० पन्नगारि असि नीति श्रुति संमत सज्जन कहहिं।
अति नीचहु सन प्रीति करिअ जानि निज परम हित ॥

१. यज्ञ। २. शम, मन को रोकना। ३. इन्द्रियों को रोकना।

हे सर्प-शत्रु ! वेदों में मानी हुई ऐसी नीति है, और सज्जन भी ऐसा ही कहते हैं कि अपना परम हितैषी जानकर अत्यन्त नीच से भी प्रीति करनी चाहिये।

पाट कीट तें होइ तेहि तें पाटंबर रुचिर।
कृमि पालइ सबु कोइ परम अपावन प्रान सम।

रेशम कीड़े से होता है, उससे सुन्दर रेशमी वस्त्र बनते हैं। इसी से उस परम अपवित्र कीड़े को भी सब कोई प्राणों के समान पालते हैं।

स्वारथ साँच जीव कहुँ एहा ❀ मन क्रम बचन राम पद नेहा
सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा ❀ जो तनु पाइ भजिअ रघुबीरा

जीव के लिये सच्चा स्वार्थ यही है कि मन, वचन और कर्म से रामजी के चरणों में प्रेम हो। वही शरीर पवित्र और सुन्दर है, जिस शरीर को पाकर रामजी का भजन किया जाय।

राम बिमुख लहि बिधि सम देही ❀ कबि कोबिद न प्रसंसहिं तेही
राम भगति एहि तन उर जामी ❀ तातें मोहि परम प्रिय स्वामी

जो रामजी से विमुख है,वह ब्रह्मा का भी शरीर पा जाय, तो कवि और पंडित उसकी प्रशंसा नहीं करते। इसी शरीर से मेरे हृदय में रामजी की भक्ति उत्पन्न हुई है, इसी से हे स्वामी ! मुझे यह परम प्रिय है।

तजउँ न तनु निज इच्छा मरना ❀ तनु बिनु बेद भजन नहिं बरना
प्रथम मोहँ मोहि बहुत बिगोवा[1] ❀ राम बिमुख सुख कबहुँ न सोवा

यद्यपि अपनी इच्छा से मर सकता हूँ, फिर भी यह शरीर मैं नहीं छोड़ता। वेदों ने शरीर के बिना भजन होना नहीं कहा है। पहले मोह ने मेरी बड़ी दुर्गति की। रामजी के विमुख होकर मैं कभी सुख से नहीं सोया।

नाना जनम करम पुनि नाना ❀ किए जोग जप तप मख दाना
कवन जोनि जनमेउँ जहँ नाहीं ❀ मैं खगेस भ्रमि भ्रमि जग माहीं

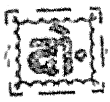
अनेकों जन्मों में मैंने अनेकों प्रकार के कर्म, योग, जप, तप, यज्ञ और दान किये। हे गरुड़ ! कौन-सी योनि है, जिसमें मैंने जगत् में घूम-फिरकर जन्म नहीं लिया हो ?

---

१. दुर्गति की।

देखेउँ सब करि करम गुसाईं ❁ सुखी न भयेउँ अबहिं की नाईं
सुधि मोहि नाथ जनम बहु केरी ❁ सिव प्रसाद मति मोहँ न घेरी

मैंने सब कर्म करके देख लिये, पर इस जन्म की तरह मैं कभी सुखी नहीं हुआ। हे नाथ! मुझे बहुत-से जन्मों की याद है। शिवजी की कृपा से मेरी बुद्धि को मोह ने नहीं घेरा।



प्रथम जनम के चरित अब कहउँ सुनहु बिहगेस।
सुनि प्रभु पद रति उपजइ जातें मिटहिं कलेस॥

हे पक्षिराज! सुनिये। अब मैं अपने पहले जन्म का हाल कहता हूँ, जिसे सुनकर प्रभु के चरणों में प्रीति उत्पन्न होती है और जिससे सब क्लेश मिट जाते हैं।

पूरब कल्प एक प्रभु जुग कलिजुग मल मूल।
नर अरु नारि अधर्म रत सकल निगम प्रतिकूल॥

हे प्रभो! पहले के एक कल्प में पापों का मूल युग कलियुग था, जिसमें पुरुष और स्त्री सभी अधर्म में तत्पर और वेद के विरोधी थे।

तेहि कलिजुग कोसलपुर जाई ❁ जनमत भयेउँ सूद्र तनु पाई
सिव सेवक मन क्रम अरु बानी ❁ आन देव निन्दक अभिमानी

उस कलियुग में मैं अयोध्यापुरी में जाकर शूद्र का शरीर पाकर जन्मा। मैं मन, कर्म और वाणी से शिवजी का सेवक और दूसरे देवताओं का निंदक तथा अभिमानी था।

धन मद मत्त परम बाचाला ❁ उग्र बुद्धि उरु दंभ बिसाला
जदपि रहेउँ रघुपति रजधानी ❁ तदपि न कछु महिमा तब जानी

मैं धन के मद से मतवाला, बड़ा ही बकवादी और उग्र बुद्धि वाला था। मेरे हृदय में बड़ा भारी दम्भ था। यद्यपि मैं रामजी की राजधानी में रहता था, तो भी इसकी महिमा उस समय मैंने नहीं जानी।

अब जाना मैं अवध प्रभावा ❁ निगमागम पुरान अस गावा
कवनेहुँ जनम अवध बस जोई ❁ राम परायन सो परि होई

अब मैंने अवध का प्रभाव जाना। वेद, शास्त्र और पुराणों ने ऐसा कहा

है कि कोई किसी जन्म में भी अयोध्या में बस जाता है तो वह अवश्य ही रामानुरागी हो जायगा।

अवध प्रभाव जान तब प्रानी ❀ जब उर बसहिं रामु धनुपानी
सो कलिकाल कठिन उरगारी ❀ पाप परायन सब नर नारी

अवध का प्रभाव प्राणी तभी जानता है, जब हाथ में धनुष धारण करने वाले रामजी उसके हृदय में बसते हैं। हे गरुड़! वह कलियुग बड़ा कठिन था। उसमें सब स्त्री-पुरुष पापों में लिप्त थे।

दो०— कलिमल ग्रसे धर्म सब गुप्त भये सदग्रन्थ।
दंभिन्ह निज मति कल्पि करि प्रगट किये बहु पन्थ॥

कलियुग के पापों ने सब धर्मों को ग्रस लिया, अच्छे ग्रन्थ गुप्त हो गये, दंभियों ने अपनी बुद्धि से कल्पना कर-करके बहुत-से पंथ प्रकट कर दिये।

भये लोग सब मोह बस लोभ ग्रसे सुभ कर्म।
सुनु हरिजान ग्यान निधि कहउँ कछुक कलिधर्म॥

सभी लोग मोह के वश हो गये। शुभ कर्मों को लोभ ने ग्रस लिया। हे ज्ञान के भण्डार, विष्णु-वाहन गरुड़! सुनिये, अब कलि के कुछ धर्म कहता हूँ।

बरन[1] धरम नहिं आश्रम[2] चारी ❀ श्रुति बिरोध रत सब नरनारी
द्विज स्रुति बेचक भूप प्रजासन ❀ कोउ नहिं मान निगम अनुसासन

कलि में न वर्ण-धर्म रहता है, न चारों आश्रम रहते हैं। सब पुरुष-स्त्री वेद के विरोध में तत्पर रहते हैं। ब्राह्मण वेदों के बेचने वाले और राजा प्रजा के खा डालने वाले होते हैं। वेद की आज्ञा कोई नहीं मानता।

मारग सोइ जा कहुँ जोइ भावा ❀ पंडित सोइ जो गाल बजावा
मिथ्यारम्भ दम्भ रत जोई ❀ ता कहुँ संत कहइ सब कोई

जो जिसे अच्छा लग जाय, वही मार्ग है। जो डींग मारता है, वही पंडित है। जो मिथ्या आरम्भ करता (आडम्बर रचता) है और जो पाखण्ड में रत है, उसी को सब कोई सन्त कहते हैं।

---

१. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र। २. ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास।

सोइ सयान जो पर धन हारी ❀ जो कर दंभ सो बड़ आचारी
जो कह झूँठ मसखरी जाना ❀ कलिजुग सोइ गुनवन्त बखाना

जो पराया धन हरण कर ले, वही बुद्धिमान् है। जो दम्भ करता है, वही बड़ा आचारी है। जो झूठ बोलता है, मज़ाक करना जानता है, कलियुग में वही गुणवान् कहा जाता है।

निराचार जो श्रुति पथ त्यागी ❀ कलिजुग सोइ ज्ञानी सो बरागी
जा के नख अरु जटा बिसाला ❀ सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला

जो आचारहीन और वेद-मार्ग को त्यागे हुये है, कलियुग में वही ज्ञानी और वही वैराग्यवान् है। जिसके बड़े-बड़े नख और लम्बी-लम्बी जटायें हैं, वही कलियुग में प्रसिद्ध तपस्वी है।

दो॰ असुभ बेष भूषन धरें भच्छाभच्छ[1] जे खाहिं।
तेइ जोगी तेइ सिद्ध नर पूज्य ते कलिजुग माहिं॥

जो अशुभ वेष और अशुभ भूषण धारण करते हैं, भक्ष्य-अभक्ष्य सब कुछ खा लेते हैं, वे ही योगी हैं, वे ही सिद्ध हैं और वे ही कलियुग में पूज्य हैं।

सो॰ जे अपकारी चार[2] तिन्ह कर गौरव मान्य तेइ।
मन क्रम बचन लबार[3] ते बकता कलिकाल महुँ॥

जो अपकारी और चुगलखोर हैं, उन्हीं का बड़ा गौरव और उन्हीं की बड़ी मान्यता होती है। जो मन, वचन और कर्म से लबार हैं, कलियुग में वे ही वक्ता माने जाते हैं।

नारि बिबस नर सकल गोसाईं ❀ नाचहिं नट मरकट[4] की नाईं
सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ज्ञाना ❀ मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना

हे गोसाईं! सभी मनुष्य स्त्री के वश होकर मदारी के वानर की तरह नाचते हैं। ब्राह्मणों को शूद्र ज्ञानोपदेश करते हैं और गले में जनेऊ डाल कर कुत्सित दान लेते हैं।

सब नर काम लोभ रत क्रोधी ❀ देव बिप्र श्रुति संत बिरोधी
गुन मंदिर सुन्दर पति त्यागी ❀ भजहिं नारि पर पुरुष अभागी

१. खाने योग्य और न खाने योग्य। २. चुगलखोर। ३. झूठा। ४. बन्दर।

सभी पुरुष काम और लोभ में अनुरक्त और क्रोधी होते हैं। देवता, ब्राह्मण, वेद और सन्तों के विरोधी होते हैं। अभिमानी स्त्रियाँ गुणों के धाम सुन्दर पति को त्याग कर पर-पुरुष का सेवन करती हैं।

सौभागिनी बिभूषन हीना ❁ बिधवन्ह के सिंगार नबीना
गुरु सिष बधिर अन्ध कर लेखा ❁ एक न सुनइ एक नहिं देखा

सुहागिनी स्त्रियाँ तो गहनों से रहित होती हैं, पर विधवाओं के नित्य नये शृङ्गार होते हैं। शिष्य और गुरु में बहरे और अन्धे का हिसाब होता है। एक सुनता नहीं, दूसरा देखता नहीं।

हरइ सिष्य धन सोक न हरई ❁ सो गुर घोर नरक महुँ परई
मातु पिता बालकन्हि बोलावहिं ❁ उदर भरै सोइ धर्म सिखावहिं

जो गुरु शिष्य का धन हरता है, पर उसका शोक नहीं हरता, वह घोर नरक में पड़ता है। माता-पिता बालकों को बुलाकर जिससे पेट भरे, वह धर्म सिखलाते हैं।

दो० ब्रह्म ग्यान बिनु नारि नर कहहिं न दूसरि बात।
कौड़ी लागि लोभ बस करहिं बिप्र गुर घात॥

स्त्री-पुरुष ब्रह्मज्ञान के सिवा दूसरी बात ही नहीं करते; पर वे लोभ के मारे कौड़ी के लिये ब्राह्मण और गुरु की हत्या कर डालते हैं।

बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन हम तुम्ह तें कछु घाटि।
जानइ ब्रह्म सो बिप्र बर आँखि देखावहिं डाँटि॥

शूद्र ब्राह्मणों से विवाद करते हैं कि हम क्या तुमसे कुछ कम हैं? जो ब्रह्म को जानता है, वही श्रेष्ठ ब्राह्मण है, ऐसा कहकर वे घुड़ककर उन्हें आँखें दिखलाते हैं।

पर तिय लंपट कपट सयाने ❁ मोह द्रोह ममता लपटाने
तेइ अभेदबादी[1] ग्यानी नर ❁ देखा मैं चरित्र कलिजुग कर

जो पर-स्त्री में आसक्त, कपट करने में चतुर, मोह, द्रोह और ममता में लिपटे हुये हैं, वे ही मनुष्य अभेदवादी ज्ञानी कहलाते हैं। मैंने इस कलियुग का यह चरित्र देखा।

१. ब्रह्म और जीव को एक बताने वाले।

आपु गए अरु औरनि घालहिं ❀ जे कहुँ सतमारग प्रतिपालहिं
कल्प कल्प भरि एक एक नरका ❀ परहिं जे दूखहिं श्रुति करि तरका

वे स्वयं तो नष्ट हुये ही होते हैं; दूसरे, जो सन्मार्ग का प्रतिपालन करते हैं, उनको भी वे नष्ट कर देते हैं। जो तर्क करके वेद को दूषित करते हैं, वे एक-एक नरक में एक-एक कल्प पड़े रहते हैं।

जे बरनाधम तेलि कुम्हारा ❀ स्वपच किरात कोल कलवारा
नारि मुई गृह संपति नासी ❀ मूँड़ मुड़ाइ होहिं संन्यासी

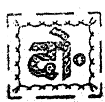
तेली, कुम्हार, चांडाल, भील, कोल और कलवार आदि जो अधम वर्ण वाले हैं, स्त्री के मरने पर अथवा घर की सम्पत्ति नष्ट हो जाने पर, सिर मुँड़ाकर संन्यासी हो जाते हैं।

ते बिप्रन्ह सन आप पुजावहिं ❀ उभय लोक निज हाथ नसावहिं
बिप्र निरच्छर लोलुप कामी ❀ निराचार सठ बृषली स्वामी

वे ब्राह्मणों से अपनी पूजा कराते हैं, और अपने ही हाथों अपने दोनों लोक नष्ट करते हैं। ब्राह्मण अपढ़, लोभी, कामी, आचारहीन, मूर्ख और शूद्रजाति की व्यभिचारिणियों के स्वामी होते हैं।

सूद्र करहिं जप तप ब्रत नाना ❀ बैठि बरासन कहहिं पुराना
सब नर कल्पित करहिं अचारा ❀ जाइ न बरनि अनीति अपारा

शूद्र लोग नाना प्रकार के जप, तप और व्रत करते हैं, और उच्चासन पर बैठकर पुराण कहते हैं। सब मनुष्य मनमाना आचरण करते हैं। अपार अनीति का वर्णन नहीं किया जा सकता।



भए बरन सङ्कर सकल भिन्न सेतु सब लोग।
करहिं पाप पावहिं दुख भय रुज सोक बियोग॥

सब लोग वर्ण-संकर (दोगला) और मर्यादा से च्युत हो गये। वे पाप करते हैं और दुःख, भय, रोग, शोक और वियोग पाते हैं।

श्रुति संमत हरि भक्ति पथ संजुत बिरति बिबेक।
तेहि न चलहिं नर मोह बस कल्पहिं पंथ अनेक॥

वेद-सम्मत तथा वैराग्य और ज्ञान से युक्त जो हरि-भक्ति का मार्ग है, उस पर न चलकर मनुष्य मोहवश अनेकों नये-नये पंथों की कल्पना करते हैं।

बहु दाम सँवारहि धाम जती। बिषया हरि लीन्हि न रहि बिरती
तपसी धनवन्त दरिद्र गृही। कलि कौतुक तात न जात कही

संन्यासी बहुत धन लगाकर घर सजाते हैं। उनमें वैराग्य नहीं रहा; उसे विषयों ने हर लिया। तपस्वी तो धनी हो गये और गृहस्थ गरीब। हे तात! कलियुग की लीला कुछ कही नहीं जा सकती।

कुलवन्ति निकारहिं नारि सती। गृह आनहि चेरि निबेरि गती
सुत मानहिं मातु पिता तब लौं। अबलानन दीख नहीं जब लौं

लोग कुलवन्ती और पतिव्रता स्त्री को घर से निकाल देते हैं और अच्छी चाल को छोड़कर घर में दासी ला रखते हैं। पुत्र तभी तक अपने माता-पिता को मानते हैं, जब तक स्त्री का मुँह नहीं दिखाई पड़ा।

ससुरारि पिआरि लगी जब तें। रिपु रूप कुटुम्ब भए तब तें
नृप पाप परायन धर्म नहीं। करि दंड बिडंब प्रजा नितहीं

जब से उन्हें ससुराल प्यारी लगने लगी, तब से कुटुम्ब के लोग शत्रु-रूप हो गये। राजा लोग पाप में लीन हैं, उनमें धर्म नहीं रहा; वे प्रजा को नित्य ही दण्ड देकर उसकी दुर्गति किया करते हैं।

धनवंत कुलीन मलीन अपी[1]। द्विज चिन्ह जनेउ उघार तपी
नहिं मान पुरानन बेदहिं जो। हरि सेवक सन्त सही कलि सो

जो धनी है, वही कुलीन माना जाता है, चाहे वह कैसा ही मलीन क्यों न हो। द्विज का चिन्ह जनेउ मात्र रह गया है और नंगे बदन रहना तपस्वी का। जो वेदों और पुराणों को नहीं मानते, कलियुग में वे ही हरिभक्त और सच्चे सन्त हैं।

कबि बृन्द उदार दुनी न सुनी। गुन दूषक ब्रात न कोपि गुनी
कलि बारहिं बार दुकाल परै। बिनु अन्न दुखी सब लोग मरै

[1] भी।

कवियों के झुण्ड तो हो गये, पर दुनिया में कोई उदार दाता सुनाई नहीं पड़ता। गुण में दोष लगाने वाले बहुत हैं, पर गुणी कोई भी नहीं। कलियुग में बार-बार अकाल पड़ते हैं, अन्न के बिना सब लोग दुःखी होकर मरते हैं।

दो०-सुनु खगेस कलि कपट हठ दंभ द्वेष पाखंड।
मान मोह मारादि सब ब्यापि रहे ब्रह्मंड॥

हे पक्षीराज! सुनिये। कलियुग में कपट, हठ, दंभ, द्वेष, पाखंड, मान, मोह और काम आदि सब दुर्गुण ब्रह्मांड में छा गये हैं।

तामस धर्म करहिं नर जप तप ब्रत मख दान।
देव न बरषहिं धरनि पर बयें न जामहिं धान[1]॥

सब लोग जप, तप, यज्ञ, ब्रत और दान आदि धर्म तामसी भाव से करते हैं। वृष्टि के देवता इन्द्र पृथ्वी पर जल नहीं बरसाते; अन्न बोने से जमता नहीं।

छंद-अबला कच भूषन भूरि छुधा। धनहीन दुखी ममता बहुधा॥
सुख चाहहिं मूढ़ न धर्म रता। मति थोरि कठोरि न कोमलता॥

बाल ही स्त्रियों के भूषण हैं। उनको भूख बहुत लगती है। वे धनहीन और दुःखी हैं। फिर भी ममता बहुत है। वे मूढ़ हैं, धर्म में उनको प्रेम नहीं, फिर भी सुख चाहती हैं। बुद्धि कम है, पर वह कठोर है, उसमें कोमलता नहीं है।

नर पीड़ित रोग न भोग कहीं। अभिमान बिरोध अकारन ही॥
लघु जीवन संबत पञ्च दसा। कलपांत न नास गुमान असा[2]॥

मनुष्य रोगों से पीड़ित हैं, सुख कहीं नहीं है। वे बिना कारण ही अभिमान और विरोध करते हैं। दस-पाँच वर्षों का अल्प जीवन है, फिर भी घमण्ड ऐसा है कि मानो कल्पान्त होने पर भी उनका नाश नहीं होगा।

कलिकाल बिहाल किए मनुजा। नहिं मानत कोउ अनुजा तनुजा॥
नहिं तोष बिचार न सीतलता। सब जाति कुजाति भए मँगता॥

कलिकाल के मनुष्यों को बेहाल कर दिया। कोई बहन-बेटी का भी विचार

१. अन्न। २. ऐसा।

नहीं करता। न उनमें संतोष है, न विवेक है, और न शीतलता है। ऊँच-नीच सभी जातियों के लोग भीख माँगने वाले हो गये।

इरषा परुषाच्छर लोलुपता। भरि पूरि रही समता बिगता
सब लोग बियोग बिसोक हये। बरनाश्रम धर्म बिचार गये

उनमें ईर्ष्या, कठोर वचन और लालच अच्छी तरह भर गया है। समता समाप्त हो गई। सब लोग वियोग और विशेष शोक से मारे हुये हैं। वर्णाश्रम-धर्म के आचरण तो चले ही गये।

दम दान दया नहिं जानपनी। जड़ता परबंचनताति घनी
तनु पोषक नारि नरा सगरे। पर निन्दक ते जग मो बगरे

न दम है, न दान, न दया और न समझदारी किसी में रही। मूढ़ता और दूसरों को ठगना यह बहुत अधिक बढ़ गया है। स्त्री-पुरुष सभी शरीर-पोषक हैं। जो परनिन्दक हैं, जगत् में वे ही फैले हुये हैं

दो० सुनु ब्यालारि[1] कराल कलि मल अवगुन आगार।
गुनउ बहुत कलिजुग कर बिनु प्रयास निस्तार॥

हे सर्पों के शत्रु गरुड़! सुनिये! यह भयंकर कलियुग पाप और अवगुणों का घर है। किन्तु कलियुग में एक गुण भी बड़ा है कि उसमें बिना परिश्रम ही भव-बन्धन से छुटकारा मिल जाता है।

कृतजुग त्रेताँ द्वापर पूजा मख अरु जोग।
जो गति होइ सों कलि हरि नाम तें पावहिं लोग॥

सत्ययुग, त्रेता और द्वापर में क्रमशः पूजा, यज्ञ और योग से जो गति प्राप्त होती है, उसे ही लोग कलियुग में केवल हरि नाम से पा जाते हैं।

कृतजुग[2] सब जोगी बिग्यानी ❀ करि हरि ध्यान तरहिं भव प्रानी
त्रेताँ बिबिध जग्य नर करहीं ❀ प्रभुहिं समर्पि करम भव तरहीं

सत्ययुग में सब योगी और विज्ञानी होते हैं। केवल हरि का ध्यान करके सब प्राणी तर जाते हैं। त्रेता में मनुष्य अनेक प्रकार के यज्ञ करते हैं, और सब कर्मों को प्रभु के समर्पण करके भवसागर से पार हो जाते हैं।

---

१. सांपों के शत्रु, गरुड़। २. सत्ययुग।

द्वापर करि रघुपति पद पूजा ❀ नर भव तरहिं उपाउ न दूजा
कलिजुग केवल हरि गुन गाहा ❀ गावत नर पावहिं भव थाहा

द्वापर में रामजी के चरणों की पूजा करके मनुष्य भवसागर से तर जाते हैं, दूसरा कोई उपाय नहीं है। कलियुग में केवल भगवान् के गुणों की कथा का गान करके मनुष्य भवसागर की थाह पा जाते हैं।

कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना ❀ एक अधार राम गुन गाना
सब भरोस तजि जो भज रामहिं ❀ प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहिं

कलियुग में न योग है, न यज्ञ और न ज्ञान ही है। केवल रामजी के गुणों का गान ही एक-मात्र आधार है। सब आशा-भरोसा छोड़कर जो रामजी को भजता है और प्रेम-सहित उनके गुण-समूहों को गाता है,

सोइ भव तर कछु संसय नाहीं ❀ नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं
कलि कर एक पुनीत प्रतापा ❀ मानस पुन्य होइ नहिं पापा

वही भवसागर से तर जाता है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं। नाम का प्रताप कलियुग में प्रत्यक्ष है। कलियुग का एक पवित्र प्रताप है कि मानसिक पुण्य तो होते हैं, पर मानसिक पाप नहीं होते।

दो० कलिजुग सम जुग आन नहिं जौं नर कर बिस्वास।
गाइ राम गुन गन बिमल भव तर बिनहिं प्रयास॥

यदि मनुष्य विश्वास करे, तो कलियुग के समान दूसरा युग नहीं है। इस युग में मनुष्य रामजी के निर्मल गुणों को गा-गाकर बिना प्रयास ही भव से तर जाता है।

प्रगट चारि पद धर्म के कलि महुँ एक प्रधान।
जेन केन[1] बिधि दीन्हे दान करइ कल्यान॥

धर्म के चार चरण (सत्य, दया, तप और दान) प्रसिद्ध हैं। कलि में एक दान रूपी चरण ही प्रधान है। वह यह है कि चाहे जिस प्रकार से हो, दान दिये जाने पर कल्याण ही करता है।

नित जुग धर्म होहिं सब केरे ❀ हृदयँ राम माया के प्रेरे
सुद्ध सत्व समता बिग्याना ❀ कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना

1. जिस किसी।

राम की माया की प्रेरणा से सभी युगों में, सबके हृदयों में, सभी युगों के धर्म नित्य होते रहते हैं। शुद्ध सतोगुण, समता, विज्ञान और मन में हर्ष जान पड़ना, उसे सत्ययुग का प्रभाव जाने।

सत्व बहुत रज कछु रति कर्मा ❁ सब बिधि सुख त्रेता कर धर्मा
बहु रज सत्व स्वल्प कछु तामस ❁ द्वापर धर्म हरष भय मानस[1]

सतोगुण अधिक हो, कुछ रजोगुण हो, कर्मों में प्रीति हो, सब प्रकार से सुख हो, यह त्रेता का धर्म है। रजोगुण बहुत हो, सतोगुण थोड़ा हो, कुछ तमोगुण भी हो, मन में हर्ष और भय दोनों हों, यह द्वापर का धर्म है।

तामस बहुत रजोगुन थोरा ❁ कलि प्रभाव बिरोध चहुँ ओरा
बुध जुग धर्म जानि मन माहीं ❁ तजि अधर्म रति धर्म कराहीं

तमोगुण बहुत हो, रजोगुण थोड़ा हो, चारों ओर बैर-विरोध हो, यह कलि-युग का प्रभाव है। बुद्धिमान् जन मन में युग-धर्म जानकर, अधर्म छोड़कर, धर्म में प्रीति करते हैं।

काल धर्म नहिं ब्यापहिं ताही ❁ रघुपति चरन प्रीति अति जाही
नट कृत बिकट कपट खगराया ❁ नट सेवकहि न ब्यापइ माया

जिसे रामजी के चरणों में अत्यन्त प्रीति होती है, उसे काल-धर्म नहीं व्यापता। हे पक्षिराज! नट का किया हुआ कपट-चरित्र (इन्द्रजाल) देखने वालों के लिये बड़ा विकट होता है, पर नट के सेवक को उसकी माया नहीं व्यापती।

दो० हरि माया कृत दोष गुन बिनु हरि भजन न जाहिं।
भजिय राम सब काम तजि असि बिचारि मन माहिं॥

हरि की माया से उत्पन्न दोष और गुण भगवद्भजन बिना नहीं जाते। ऐसा मन में विचारकर, सब कामनाओं को छोड़कर, रामजी को भजना चाहिये।

तेहिं कलिकाल बरष बहु बसेउँ अवध बिहगेस।
परेउ दुकाल बिपति बस तब मैं गयेउँ बिदेस॥

---

१. मन में।

हे पक्षिराज ! उस कलिकाल में मैं बहुत वर्षों तक अवध में बसा रहा। एक बार वहाँ अकाल पड़ा, तब मैं विपत्ति का मारा विदेश चला गया।

गयेउँ उजेनी सुनु उरगारी ❁ दीन मलीन दरिद्र दुखारी
गयें काल कछु संपति पाई ❁ तहँ पुनि करउँ संभु सेवकाई

हे सर्पों के शत्रु गरुड़ ! सुनिये। मैं दीन, मलिन, दरिद्र और दुःखी होकर उज्जयिनी गया। कुछ समय बीतने पर कुछ धन पाकर मैं फिर वहीं शम्भु की आराधना करने लगा।

बिप्र एक बैदिक सिव पूजा ❁ करइ सदा तेहि काजु न दूजा
परम साधु परमारथ बिंदक ❁ संभु उपासक नहिं हरि निन्दक

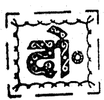
एक ब्राह्मण वेदविधि से सदा शिवजी की पूजा किया करते। उन्हें दूसरा कोई काम न था। वे बड़े ही साधु और परमार्थ के ज्ञाता थे। शम्भु के उपासक थे, पर हरि के निंदक नहीं थे।

तेहि सेवउँ मैं कपट समेता ❁ द्विज दयाल अति नीति निकेता
बाहिज[1] नम्र देखि मोहि साईं ❁ बिप्र पढ़ाव पुत्र की नाईं

मैं उनकी सेवा कपट-पूर्वक करता। ब्राह्मण बड़े ही दयालु और नीति के घर थे। हे स्वामी ! बाहर से नम्र देखकर वे मुझे पुत्र की भाँति मानकर पढ़ाते थे।

संभु मन्त्र मोहि द्विजबर दीन्हा ❁ सुभ उपदेस बिबिध बिधि कीन्हा
जपउँ मन्त्र सिव मन्दिर जाई ❁ हृदयँ दम्भ अहमिति[2] अधिकाई

उन ब्राह्मण-श्रेष्ठ ने मुझे शिवजी का मन्त्र दिया, और अनेकों प्रकार के कल्याणकारी उपदेश दिये। मैं शिवजी के मन्दिर में जाकर मन्त्र जपता। मेरे हृदय में दम्भ और अहंकार बढ़ गया।



मैं खल मल संकुल मति नीच जाति बस मोह।
हरि जन द्विज देखें जरउँ करउँ बिष्णु कर द्रोह॥

मैं दुष्ट, पाप से पूर्ण बुद्धि वाला, नीच जाति में उत्पन्न, मोह-वश हरि के भक्तों और द्विजों को देखकर जल उठता था और विष्णु भगवान् से द्रोह करता था।

१. बाहर से। २. अहंकार।

सो०— गुर नित मोहि प्रबोध दुखित देखि आचरन मम।
मोहि उपजइ अति क्रोध दंभिहि नीति कि भावई॥

गुरुजी नित्य मुझे समझाते-बुझाते थे। पर मेरा आचरण देखकर वे दुःखित थे। उलटे मुझे बड़ा क्रोध उत्पन्न होता। दंभी को कहीं नीति अच्छी लगती है?

एक बार गुर लीन्ह बोलाई ❀ मोहि नीति बहु भाँति सिखाई
सिव सेवा कर सुत फल सोई ❀ अबिरल भगति राम पद होई

एक बार गुरुजी ने बुला लिया और मुझे बहुत प्रकार से नीति की शिक्षा दी। उन्होंने कहा—हे पुत्र! शिवजी की सेवा का फल यही है कि रामजी के चरणों में अविरल (प्रगाढ़) भक्ति हो।

रामहिं भजहिं तात सिव धाता ❀ नर पाँवर कै केतिक बाता
जासु चरन अज सिव अनुरागी ❀ तासु द्रोहँ सुख चहसि अभागी

हे तात! रामजी को शिव और ब्रह्मा भी भजते हैं। नीच मनुष्य की तो बात ही क्या है? जिसके चरणों के प्रेमी ब्रह्मा और शिव हैं, अरे भाग्यहीन! उनसे द्रोह करके तू सुख चाहता है?

हर कहुँ हरि सेवक गुर कहेऊ ❀ सुनि खगनाथ हृदय मम दहेऊ
अधम जाति मैं बिद्या पाएँ ❀ भयेउँ जथा अहि दूध पिआएँ

गुरुजी ने शिव को हरि का सेवक कहा। हे पक्षिराज! यह सुनकर मेरा तो हृदय जल उठा। नीच जाति का मैं विद्या पाकर ऐसा हो गया, जैसे दूध पिलाने से साँप।

मानी कुटिल कुभाग्य कुजाती ❀ गुर कर द्रोह करउँ दिनु राती
अति दयाल गुर स्वल्प न क्रोधा ❀ पुनि पुनि मोहि सिखाव सुबोधा

अभिमानी, कुटिल, दुर्भाग्य और कुजाति मैं दिन-रात गुरुजी से द्रोह किया करता। गुरुजी अत्यन्त दयालु थे, उन्हें तनिक भी क्रोध न आता। वे बार-बार मुझे उत्तम ज्ञान ही सिखाते।

जेहि तें नीच बड़ाई पावा ❀ सो प्रथमहिं हठि ताहि नसावा
धूम अनल सम्भव[1] सुनु भाई ❀ तेहि बुझाव घन पदवी पाई

---

१. उत्पन्न।

नीच मनुष्य जिससे बड़प्पन पाता है, वह सबसे पहले उसी को नष्ट करता है। हे भाई! सुनिये, धुवाँ आग से उत्पन्न होता है, पर वह मेघ की पदवी पाने पर उसी को बुझा देता है।

रज मग परी निरादर रहई ❀ सब कर पद प्रहार नित सहई
मरुत उड़ाव प्रथम तेहि भरई ❀ नृप किरीट पुनि नयनन्हि परई

धूल रास्ते में बिना आदर के पड़ी रहती है, और सदा सबकी लातों की मार सहती रहती है। पर जब पवन उसे उठाता है, तब पहले तो वह उसे ही भर देती है, फिर राजाओं के मुकुट और आँखों में पड़ती है।

सुनु खगपति अस समुझि प्रसङ्गा ❀ बुध नहिं करहिं अधम कर सङ्गा
कबि कोबिद गावहिं अस नीती ❀ खल सन कलह न भल नहिं प्रीती

हे पक्षिराज! सुनिये, ऐसी बात समझकर बुद्धिमान लोग नीच का संग नहीं करते। कवि और कोविद ऐसी नीति कहते हैं कि दुष्ट से न बैर अच्छा है, न प्रीति ही।

उदासीन नित रहिय गोसाईं ❀ खल परिहरिअ स्वान[1] की नाईं
मैं खल हृदयँ कपट कुटिलाई ❀ गुर हित कहहिं न मोहि सुहाई

हे गोसाईं! उससे तो सदा उदासीन ही रहना चाहिये। दुष्ट को कुत्ते की तरह त्याग देना चाहिये। मैं दुष्ट था, हृदय में कपट और कुटिलता भरी थी। गुरुजी मेरे कल्याण की बात कहते थे, पर वह मुझे प्रिय नहीं लगती थी।

दो०— एक बार हर मंदिर जपत रहेउँ सिव नाम।
गुर आयेउ अभिमान तें उठि नहिं कीन्ह प्रनाम॥

एक बार शिवजी के मन्दिर में मैं शिव का नाम जप रहा था। उसी समय गुरुजी वहाँ आये, पर अभिमान-वश मैंने उठकर उनको प्रणाम नहीं किया।

सो दयाल नहिं कहेउ कछु उर न रोष लवलेस।
अति अघ गुर अपमानता सहि नहिं सके महेस॥

गुरुजी दयालु थे, उन्होंने कुछ नहीं कहा। उनके हृदय में लेशमात्र भी क्रोध न था। पर गुरु का अपमान बड़ा भारी पाप है, शिवजी उसे नहीं सह सके।

---

१. कुत्ता।

मंदिर माँझ भई नभबानी ❁ रे हतभाग्य अग्य अभिमानी
जद्यपि तव गुर कें नहिं क्रोधा ❁ अति कृपाल उर सम्यक[1] बोधा

मन्दिर में आकाशवाणी हुई—अरे भाग्यहीन ! मूर्ख ! अभिमानी ! यद्यपि तेरे गुरु को क्रोध नहीं है; वे अत्यन्त कृपालु स्वभाव के हैं; उनको पूर्ण ज्ञान है;

तदपि साप सठ देहउँ तोही ❁ नीति बिरोध सोहाइ न मोही
जौं नहिं दण्ड करौं खल तोरा ❁ भ्रष्ट होइ श्रुति मारग मोरा

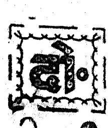
तो भी हे मूर्ख ! मैं तुझे शाप दूँगा। क्योंकि नीति के प्रतिकूल आचरण मुझे नहीं सुहाता। अरे दुष्ट ! यदि मैं तुझे दंड न दूँ, तो मेरा यह वेद-मार्ग ही भ्रष्ट हो जायगा।

जे सठ गुर सन इरिषा करहीं ❁ रौरव नरक कोटि जुग परहीं
त्रिजग[2] जोनि पुनि धरहिं सरीरा ❁ अयुत[3] जनम भरि पावहिं पीरा

जो मूर्ख गुरु से ईर्ष्या करते हैं, वे करोड़ों युगों तक रौरव नरक में पड़े रहते हैं। फिर वहाँ से निकलकर वे तिर्यक् योनि में शरीर धारण करते हैं और दश हजार जन्मों तक पीड़ा पाते रहते हैं।

बैठि रहेसि अजगर इव पापी ❁ सर्प होहि खल मल मति ब्यापी
महा बिटप कोटर[4] महुँ जाई ❁ रहु अधमाधम अधगति पाई

पापी ! तू गुरु के सामने अजगर की तरह बैठा रहा। रे दुष्ट ! तेरी बुद्धि में पाप व्याप्त हो गया है। तू सर्प हो जा। अरे नीच से भी नीच ! तू अधोगति को पाकर किसी वृक्ष के खोखले में जाकर रह।



हाहाकार कीन्ह गुर दारुन सुनि सिव स्राप।
कंपित मोहि बिलोकि अति उर उपजा परिताप ॥(क)

शिवजी का भयंकर शाप सुनकर गुरुजी ने हाहाकार किया। मुझे काँपता हुआ देखकर उनके हृदय में बड़ा संताप उत्पन्न हुआ।

करि दण्डवत सप्रेम द्विज सिव सनमुख कर जोरि।
बिनय करत गदगद स्वर समुझि घोर गति मोरि ॥(ख)

प्रेम-सहित दण्डवत करके वे सामने हाथ जोड़कर, खड़े होकर, मेरी भयङ्कर

१. भलीभाँति। २. तिर्यक्, पशु-पक्षी आदि। ३. दस हजार। ४. खोखला।

दशा का विचार कर, गद्‌गद् वाणी से विनती करने लगे—

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं। विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं। चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं

हे मोक्षस्वरूप! विभु! व्यापक, ब्रह्म और वेद-स्वरूप ईशान दिशा के ईश्वर शिव! आपको मैं नमस्कार करता हूँ। निज स्वरूप में स्थित, निर्गुण, निर्विकल्प, इच्छा-रहित, चेतन, आकाशरूप और आकाश को ही वस्त्ररूप में धारण करने वाले, आपको मैं भजता हूँ।

निराकारमोंकारमूलं तुरीयं। गिराज्ञानगोतीतमीशं गिरीशं
करालं महाकाल कालं कृपालं। गुणागार संसारपारं नतोऽहं

निराकार, ओङ्कार के मूल, तुरीय, वाणी, ज्ञान और इंद्रियों से परे, गिरीश (पर्वत कैलाश) के स्वामी, भयंकर, महाकाल के भी काल, कृपालु, गुणों के धाम, संसार से परे आपको मैं नमस्कार करता हूँ।

तुषाराद्रि संकाश गौरं गभीरं। मनोभूत कोटि प्रभा श्री शरीरं
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गंगा। लसद्भाल बालेन्दु कंठे भुजंगा

जो हिमालय के समान गौर शरीर वाले, तथा गंभीर हैं, जिनके शरीर में करोड़ों कामदेवों की प्रभा और शोभा है, जिनके सिर पर कलकल-निनादिनी सुन्दर गङ्गा विराजमान है, जिनके ललाट पर द्वितीया का चन्द्रमा और कण्ठ में सर्प सुशोभित हैं।

चलत्कुंडलं भ्रू सुनेत्रं विशालं। प्रसन्नाननं नीलकंठं दयालं
मृगाधीश चर्म्माम्बरं मुण्डमालं। प्रियं शङ्करं सर्वनाथं भजामि

जिनके कानों के कुंडल हिल रहे हैं, जिनके भृकुटी और नेत्र विशाल हैं, जिनका मुख प्रसन्न है, जो नीलकंठ और दयालु हैं, बाघाम्बर जिनका वस्त्र है, जो मुंडों की माला पहने हैं, जो सबको प्रिय और सबके स्वामी हैं, उन शंकरजी को मैं भजता हूँ।

प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं। अखंडं अजं भानुकोटिप्रकाशं
त्रयः शूल निर्मूलनं शूलपाणिं। भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यं

प्रचंड, श्रेष्ठ, प्रतिभाशाली, परमेश्वर, अखंड, अजन्मा, करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाश वाले, तीनों प्रकार के शूलों (दुखों) को निर्मूल करने वाले, त्रिशूलधारी, भाव (प्रेम) द्वारा प्राप्त होने वाले भवानीपति को मैं भजता हूँ।

कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी। सदा सज्जनानंददाता पुरारी
चिदानन्द संदोह मोहापहारी। प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी

कलाओं से परे, कल्याणस्वरूप और प्रलय करने वाले, सज्जनों को सदा आनन्द देने वाले, त्रिपुर के शत्रु, चिदानन्द के समूह, मोह को हरने वाले, हे कामदेव के शत्रु, प्रभो! प्रसन्न हूजिये, प्रसन्न हूजिये।

न यावद् उमानाथ पादारविंदं। भजन्तीह लोके परे वा नराणां
न तावत्सुखं शान्तिसन्तापनाशं। प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं

जबतक उमानाथ के चरण-कमलों का भजन मनुष्य नहीं करते, तब तक इस लोक और परलोक दोनों में सुख और शांति नहीं पाते और न उनके तापों का नाश होता है। हे समस्त जीवों के हृदय में निवास करने वाले प्रभो! प्रसन्न हूजिये।

न जानामि योगं जपं नैव पूजां। नतोऽहं सदा सर्वदा शम्भु तुभ्यं
जरा जन्म दुःखौघ तातप्यमानं। प्रभो पाहि आपन्नमामीश शम्भो

न मैं योग जानता हूँ, न जप और न पूजा ही। मैं तो हे शम्भो! सदा सर्वदा आपही को नमस्कार करता हूँ। हे प्रभो! बुढ़ापा तथा जन्म के दुःखों के समूहों से जलते हुये मुझ दुखी की दुख से रक्षा कीजिये। हे ईश्वर! हे शंभो! मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

श्लोक—रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति॥

यह रुद्राष्टक शिवजी को प्रसन्न करने के लिये ब्राह्मण द्वारा कहा गया। जो मनुष्य इसे भक्तिपूर्वक पढ़ते हैं, उन पर शम्भु प्रसन्न होते हैं।

दो०—सुनि बिनती सर्बग्य सिव देखि बिप्र अनुरागु।
पुनि मन्दिर नभबानी भइ द्विजबर बर माँगु॥

सर्वज्ञ शिवजी ने यह विनती सुनी, और ब्राह्मण का प्रेम देखा। तब मन्दिर में आकाशवाणी हुई कि हे द्विजश्रेष्ठ! वर माँगो।

जौं प्रसन्न प्रभु मो पर नाथ दीन पर नेहु।
निज पद भगति देइ प्रभु पुनि दूसर बर देहु॥

ब्राह्मण ने कहा—हे प्रभो! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं और हे नाथ! यदि इस दीन पर आपका स्नेह है, तो पहले अपने चरणों की भक्ति दीजिये और फिर दूसरा यह वर दीजिये—

तव मायाबस जीव जड़ सन्तत फिरहिं भुलान।
तेहि पर क्रोध न करिअ प्रभु कृपासिन्धु भगवान॥

हे प्रभो! आपकी मायावश अज्ञानी जीव सदा भूला भटका फिरता है। हे कृपा के समुद्र भगवान्! उस पर क्रोध न कीजिये।

सङ्कर दीन दयाल अब एहि पर होहु कृपाल।
साप अनुग्रह होइ जेहिं नाथ थोरेहीं काल॥

हे दीनों पर दया करने वाले शिव! अब इस पर कृपालु होइये, जिससे हे नाथ! थोड़े ही समय में इसे शाप से छुटकारा मिल जाय।

एहि कर होइ परम कल्याना ❀ सोइ करहु अब कृपानिधाना
बिप्र गिरा सुनि परहित सानी ❀ एवमस्तु इति भइ नभबानी

हे कृपा के धाम! अब वही कीजिये, जिससे इसका परम कल्याण हो। परोपकार में सनी हुई ब्राह्मण की वाणी सुनकर फिर आकाशवाणी हुई—'एवमस्तु' (ऐसा ही हो)।

जदपि कीन्ह यह दारुन पापा ❀ मैं पुनि दीन्हि क्रोध करि सापा
तदपि तुम्हारि साधुता देखी ❀ करिहउँ एहि पर कृपा बिसेषी

यद्यपि इसने भयानक पाप किया है, और फिर मैंने भी इसे क्रोध करके शाप दिया है, तो भी तुम्हारी साधुता देखकर मैं इस पर विशेष कृपा करूँगा।

छमासील जे पर उपकारी ❀ ते द्विज मोहि प्रिय जथा खरारी
मोर साप द्विज ब्यर्थ न जाइहि ❀ जनम सहस्र अवसि यह पाइहि

हे द्विज! जो क्षमाशील एवं परोपकारी होते हैं, वे मुझे वैसे ही प्रिय हैं, जैसे खर के शत्रु रामजी। हे द्विज! मेरा शाप व्यर्थ न जायगा। यह हजार जन्म अवश्य पायेगा।

जनमत मरत दुसह दुख होई ❀ एहि स्वल्पउ नहिं ब्यापिहि सोई
कवनेहु जनम मिटिहि नहिं ग्याना ❀ सुनहि सूद्र मम बचन प्रवाना

पर जन्मने और मरने में जो असहनीय दुःख होता है, वह इसे ज़रा भी न व्यापेगा, और किसी भी जन्म में इसका ज्ञान नहीं मिटेगा। हे शूद्र! मेरा सत्य वचन सुन।

रघुपति पुरीं जनम तव भयेऊ ❀ पुनि तैं मम सेवाँ मन दयेऊ
पुरी प्रभाव अनुग्रह मोरें ❀ राम भगति उपजिहि उर तोरें

पहले तो तेरा जन्म रामजी की पुरी में हुआ, फिर तूने मेरी सेवा में मन लगाया। पुरी में जन्म लेने के प्रभाव और मेरी कृपा से तेरे हृदय में रामजी की भक्ति उत्पन्न होगी।

सुनु मम बचन सत्य अब भाई ❀ हरितोषन ब्रत द्विज सेवकाई
अब जनि करहि बिप्र अपमाना ❀ जानेसु संत अनंत[1] समाना

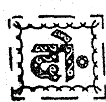
हे भाई! अब मेरा सच्चा वचन सुन। हरि को संतुष्ट करने का व्रत द्विजों की सेवा करना ही है। अब कभी ब्राह्मण का अपमान न करना। संतों को भगवान् ही के समान समझना।

इन्द्र कुलिस मम सूल बिसाला ❀ काल दंड हरि चक्र कराला
जो इन्ह कर मारा नहिं मरई ❀ बिप्र द्रोह पावक सो जरई

इन्द्र के वज्र, मेरे विशाल त्रिशूल, काल के दण्ड और विष्णु के भयंकर चक्र के मारे भी जो नहीं मरता, वह भी विप्र-द्रोह-रूपी अग्नि से भस्म हो जाता है।

अस बिबेक राखेहु मन माहीं ❀ तुम्ह कहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं
औरउ एक आसिषा[2] मोरी ❀ अप्रतिहत[3] गति होइहि तोरी

ऐसा विवेक मन में रखना। फिर तुमको जगत् में कुछ भी दुर्लभ नहीं होगा। मेरा एक और भी आशीर्वाद है कि तुम्हारी गति अबाध (बिना रुकावट की) होगी। अर्थात् जहाँ जाना चाहोगे, वहाँ तुम बेरोक-टोक के जा सकोगे।



सुनि सिव बचन हरषि गुरु एवमस्तु इति भाषि।
मोहि प्रबोधि गयेउ गृह संभु चरन उर राखि ॥(क)

शिवजी के वचन सुनकर गुरुजी हर्षित होकर 'एवमस्तु' ऐसा कहकर, मुझे बहुत समझा-बुझाकर और शिवजी के चरणों को हृदय में रखकर अपने घर गये।

---

१. भगवान्। २. आशीर्वाद। ३. बिना रोक-टोक की।

प्रेरित काल बिंधि गिरि जाइ भयेउँ मैं ब्याल।
पुनि प्रयास बिनु सो तनु तजेउँ गयें कछु काल ॥(ख)

काल की प्रेरणा से मैं विंध्याचल में जाकर साँप हुआ। फिर कुछ समय बीतने पर मैंने सहज ही में वह शरीर छोड़ दिया।

जोइ तन धरउँ तजउँ पुनि अनायास हरिजान।
जिमि नूतन पट[1] पहिरइ नर परिहरइ पुरान ॥(ग)

हे हरिवाहन ! जो भी शरीर मैं धारण करता, उसे बिना ही परिश्रम वैसे ही छोड़ देता था, जैसे मनुष्य पुराना वस्त्र छोड़कर नया धारण कर लेता है।

सिवँ राखी श्रुति नीति अरु मैं नहिं पाव कलेस।
एहि बिधि धरेउँ बिबिध तनु ग्यान न गयेउ खगेस ॥(घ)

शिवजी ने श्रुति की मर्यादा की रक्षा की, और मैंने क्लेश भी नहीं पाया। इस प्रकार मैंने अनेक शरीर धारण किये, पर हे पक्षिराज ! मेरा ज्ञान नहीं गया।

त्रिजग देव नर जोइ तनु धरऊँ ❁ तहँ तहँ राम भजन अनुसरऊँ
एक सूल मोहि बिसर न काऊ ❁ गुर कर कोमल सील सुभाऊ

तिर्यक् योनि (पशु, पक्षी), देवता और मनुष्य का जो भी शरीर धारण करता, वहाँ-वहाँ मैं रामजी का भजन करता। परंतु एक शूल मुझे बना ही रहा। वह यह कि गुरुजी का कोमल सुशील स्वभाव मुझे कभी नहीं भूलता।

चरम[2] देह द्विज कै मैं पाई ❁ सुर दुर्लभ पुरान श्रुति गाई
खेलउँ तहाँ बालकन्ह मीला ❁ करउँ सकल रघुनायक लीला

मैंने अन्तिम शरीर ब्राह्मण का पाया, जिसे पुराण और वेद देव-दुर्लभ बताते हैं। मैं वहाँ भी बालकों में मिलकर खेलता तो रामजी की ही सब लीलायें किया करता।

प्रौढ़[3] भयें मोहि पिता पढ़ावा ❁ समुझउँ सुनउँ गुनउँ नहिं भावा
मन तें सकल बासना भागी ❁ केवल राम चरन लय लागी

प्रौढ़ होने पर पिताजी मुझे पढ़ाने लगे। मैं समझता, सुनता और विचारता, पर मुझे पढ़ना अच्छा नहीं लगता था। मेरे मन से सारी वासनायें भाग गईं,

१. वस्त्र। २. अंतिम। ३. सयाना।

केवल रामजी के चरणों में लौ लग गई।

कहु खगेस अस कवन अभागी ❀ खरी सेव सुरधेनुहिं त्यागी
प्रेम मगन मोहि कछु न सोहाई ❀ हारेउ पिता पढ़ाइ पढ़ाई

हे गरुड़! बताइये, ऐसा भाग्यहीन कौन होगा, जो कामधेनु को त्यागकर गदही की सेवा करे? मैं प्रेम में मग्न रहता, मुझे कुछ प्रिय न लगता। पिता पढ़ा-पढ़ाकर हार गये।

भये काल बस जब पितु माता ❀ मैं बन गयेउँ भजन जनत्राता
जहँ जहँ बिपिन मुनीस्वर पावउँ ❀ आस्रम जाइ जाइ सिरु नावउँ

जब पिता-माता मृत्यु के वश हो गये, तब मैं भक्तों के रक्षक रामजी का भजन करने के लिये वन में चला गया। वन में जहाँ-जहाँ मैं मुनीश्वरों के आश्रम पाता, वहाँ-वहाँ जा-जाकर उन्हें सिर नवाता।

बूझउँ तिन्हहि राम गुन गाहा ❀ कहहिं सुनउँ हरषित खगनाहा
सुनत फिरउँ हरि गुन अनुबादा ❀ अब्याहत[1] गति संभु प्रसादा

उनसे रामजी के गुणों की कथाएं पूछता। हे पक्षिराज! वे कहते और मैं हर्षित होकर सुनता। इस प्रकार भगवान् के गुणानुवाद मैं सुनता फिरता। शिवजी की कृपा से मेरी सर्वत्र अबाध गति थी।

छूटी त्रिबिधि ईषना गाढ़ी ❀ एक लालसा उर अति बाढ़ी
राम चरन बारिज जब देखौं ❀ तब निज जनम सुफल कर लेखौं

मेरी तीनों प्रकार की (पुत्र, धन और मान की) ईषणायें छूट गईं और हृदय में एक यही लालसा अधिक बढ़ी कि रामजी के चरण-कमलों के दर्शन करूँ और अपना जन्म सफल हुआ समझूँ।

जेहि पूँछउँ सोइ मुनि अस कहई ❀ ईस्वर सर्ब भूतमय अहई
निर्गुन मत नहिं मोहि सोहाई ❀ सगुन ब्रह्म रति उर अधिकाई

जिससे मैं पूछता, वे ही मुनि ऐसा कहते कि ईश्वर सर्वभूतमय है। यह निर्गुण मत मुझे प्रिय न लगता। हृदय में सगुण ब्रह्म पर प्रीति बढ़ रही थी।

दो० गुरु के बचन सुरति करि राम चरन मनु लाग।
रघुपति जस गावत फिरउँ छन छन नव अनुराग ॥(क)

१. बेरोक-टोक की।

गुरुजी के वचनों को स्मरण करके मेरा मन राम के चरणों में लग गया। मैं राम का यश गाता फिरता और प्रत्येक क्षण मेरा प्रेम नवीन होता जाता था।

मेरु सिखर बट छायाँ मुनि लोमस आसीन।
देखि चरन सिरु नायउँ बचन कहेउँ अति दीन ॥(ख)

सुमेरु पर्वत की चोटी पर बरगद की छाया में लोमश मुनि बैठे थे। उन्हें देखकर मैंने उनके चरणों में सिर नवाया और अत्यन्त दीन वचन कहे।

सुनि मम बचन बिनीत मृदु मुनि कृपाल खगराज।
मोहि सादर पूँछत भये द्विज आयेहु केहि काज ॥(ग)

हे पक्षिराज! मेरे अत्यंत नम्र और कोमल वचन सुनकर कृपालु मुनि मुझसे आदर-सहित पूछने लगे—हे ब्राह्मण! आप किस कार्य से यहाँ आये हैं?

तब मैं कहा कृपानिधि तुम्ह सर्बग्य सुजान।
सगुन ब्रह्म आराधना मोहि कहहु भगवान ॥(घ)

तब मैंने कहा—हे कृपानिधि! आप सर्वज्ञ हैं और सुजान हैं। हे भगवान्! मुझे सगुण ब्रह्म की आराधना के सम्बन्ध में कहिये।

तब मुनीस रघुपति गुन गाथा ❀ कहे कछुक सादर खगनाथा
ब्रह्म ग्यान रत मुनि बिग्यानी ❀ मोहि परम अधिकारी जानी

तब हे पक्षिराज! मुनीश्वर ने आदरपूर्वक रामजी के गुणों की कुछ कथायें कहीं। ब्रह्मज्ञान में अनुराग रखने वाले विज्ञानी मुनि ने मुझे परम अधिकारी जानकर,

लागे करन ब्रह्म उपदेसा ❀ अज अद्वैत अगुन हृदयेसा
अकल अनीह अनाम अरूपा ❀ अनुभव गम्य अखण्ड अनूपा

ब्रह्म का उपदेश करने लगे कि वह अजन्मा है, अद्वैत है, निर्गुण और हृदय का स्वामी है। संपूर्ण, इच्छा-रहित, रूप-रहित, अनुभव से जानने योग्य, अखंड और अनुपम है।

मनगोतीत अमल अबिनासी ❀ निर्बिकार निरवधि सुख रासी
सो तैं ताहि तोहि नहिं भेदा ❀ बारि बीचि[1] इव[2] गावहिं बेदा

१. लहर। २. तरह।

वह मन और इन्द्रियों से परे, निर्मल, विनाश-रहित, निर्विकार, असीम और सुख की राशि है। वह और तुम, उसे और तुम्हें, इसमें भेद नहीं है, जैसे जल और तरंग में भेद नहीं होता। ऐसा वेद गाते हैं।

बिबिध भाँति मुनि मोहि समुझावा ❀ निर्गुन मत मम हृदयँ न आवा
पुनि मैं कहेउँ नाइ पद सीसा ❀ सगुन उपासन कहहु मुनीसा

मुनि ने मुझे बहुत प्रकार से समझाया, पर निर्गुण मत मेरे हृदय में नहीं बैठा। फिर मैंने मुनि के चरणों में सिर नवाकर कहा—हे मुनिवर! सगुण ब्रह्म की उपासना कहिये।

राम भगति जल मम मन मीना ❀ किमि बिलगाइ मुनीस प्रबीना
सो उपदेस करहु करि दाया ❀ निज नयनन्हि देखौं रघुराया

रामजी की भक्ति जल है, उसमें मेरा मन मछली हो रहा है। हे प्रवीण मुनीश्वर! वह उससे अलग कैसे हो सकता है? आप दया करके मुझे वही उपदेश कीजिये, जिससे मैं अपनी आँखों से रामजी को देख सकूँ।

भरि लोचन बिलोकि अवधेसा ❀ तब सुनिहउँ निर्गुन उपदेसा
मुनि पुनि कहि हरिकथा अनूपा ❀ खण्डि सगुन मत अगुन निरूपा

अवधपति को आँख भरकर देखकर, तब मैं निर्गुण का उपदेश सुनूँगा। मुनि ने फिर हरि की अनुपम कथा कहकर, सगुण मत का खंडन करके निर्गुण का निरूपण किया।

तब मैं निर्गुन मत करि दूरी ❀ सगुन निरूपेउँ करि हठ भूरी
उत्तर प्रति उत्तर[1] मैं कीन्हा ❀ मुनि तन भए क्रोध के चीन्हा

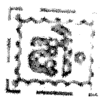
तब मैं निर्गुण मत को दूर करके बहुत हठ करके सगुण का निरूपण करने लगा। मैंने उत्तर, प्रत्युत्तर किया, इससे मुनि के शरीर में क्रोध के चिन्ह प्रकट हो आये।

सुनु प्रभु बहुत अवग्या[2] किएँ ❀ उपज क्रोध ग्यानिहु के हिएँ
अति संघरषन[3] करइ जो कोई ❀ अनल प्रगट चन्दन तें होई

हे प्रभो! सुनिये, बहुत अपमान करने पर ज्ञानी के हृदय में भी क्रोध उत्पन्न हो जाता है। यदि कोई बहुत घिसे, तो चन्दन की लकड़ी से भी अग्नि प्रकट हो जायगी।

---

१. जवाब का जवाब। २. अपमान। ३. घिसना, रगड़ना।



बारम्बार सकोप मुनि करइ निरूपन ग्यान।
मैं अपने मन बैठि तब करउँ बिबिध अनुमान॥

मुनि बार-बार क्रोध-सहित ज्ञान का निरूपण करते थे। तब मैं बैठा-बैठा अपने मन में तरह-तरह के अनुमान करने लगा।

क्रोध कि द्वैत बुद्धि बिनु द्वैत कि बिनु अग्यान।
मायाबस परिछिन्न[1] जड़ जीव कि ईस समान॥

द्वैत-बुद्धि के बिना क्रोध कैसा? और बिना अज्ञान के द्वैत-बुद्धि कैसी? माया के वश ढका हुआ जड़ जीव क्या ईश्वर के समान हो सकता है?

कबहुँ कि दुख सब कर हित ताकें ❀ तेहि कि दरिद्र परस मनि जाकें
परद्रोही कि होइ निःसंका ❀ कामी पुनि कि रहहिं अकलंका

सब का कल्याण चाहने से क्या कभी किसी को दुःख हो सकता है? जिसके पास पारस मणि है, क्या उसको भी दारिद्र्य हो सकता है? पराये से द्रोह करने वाला कहीं निर्भय हो सकता है? कामी कहीं कलङ्कहीन हो सकते हैं?

बंस कि रह द्विज अनहित कीन्हें ❀ कर्म कि होहिं स्वरूपहिं चीन्हें
काहू सुमति कि खल संग जामी ❀ सुभ गति पाव कि परत्रिय गामी

ब्राह्मण का अपकार करने से कहीं वंश रहता है? स्वरूप का ज्ञान होने पर कहीं कर्म हो सकते हैं? दुष्ट के साथ किसी को सुबुद्धि जम सकी है। पर-स्त्री-गामी कहीं शुभगति पा सकता है?

भव कि परहिं परमातम बिन्दक[2] ❀ सुखी कि होहिं कबहुँ पर निन्दक
राज कि रहइ नीति बिनु जानें ❀ अघ[3] कि रहइ हरिचरित बखानें

परमात्मा को जानने वाले कहीं भवसागर में पड़ सकते हैं? कहीं पराइ निंदा करने वाले भी सुखी हो सकते हैं? नीति बिना जाने कहीं राज रहता है? हरि का चरित्र बखानने से कहीं पाप रह सकते हैं?

पावन जस कि पुन्य बिनु होई ❀ बिनु अघ अजस कि पावै कोई
लाभ कि कछु हरि भगति समाना ❀ जेहि गावहिं श्रुति संत पुराना

---

१. ढका हुआ। २. जानने वाला। ३. पाप।

पुण्य के बिना कहीं पवित्र यश मिल सकता है ? क्या कोई बिना पाप के भी अपकीर्ति पा सकता है ? जिसे वेद, संत और पुराण गाते हैं, उस हरि-भक्ति के समान क्या कोई लाभ है ?

हानि कि जग एहि सम किछु भाई ❀ भजिअ न रामहिं नर तनु पाई
अघ कि पिसुनता सम कछु आना ❀ धर्म कि दया सरिस हरिजाना

हे भाई ! मनुष्य का शरीर पाकर भजन न किया जाय, तो क्या इसके समान जगत् में और भी कोई हानि है ? चुगलखोरी के समान क्या कोई अन्य पाप है ? और हे गरुड़ ! दया के समान क्या कोई दूसरा धर्म है ?

एहि बिधि अमित जुगुति मन गुनऊँ ❀ मुनि उपदेस न सादर सुनऊँ
पुनि पुनि सगुन पच्छ मैं रोपा[1] ❀ तब मुनि बोलेउ बचन सकोपा

इस प्रकार मैं असंख्य युक्तियाँ मन में सोचता रहता था और मुनि का उपदेश आदर-सहित नहीं सुनता था। मैंने बार-बार सगुण का पक्ष स्थापित किया, तब मुनि क्रोधयुक्त वचन बोले—

मूढ़ परम सिख देउँ न मानसि ❀ उत्तर प्रतिउत्तर बहु आनसि
सत्य बचन बिस्वास न करही ❀ बायस[2] इव सबही तें डरही

अरे मूढ़ ! मैं तुझे परमोत्तम शिक्षा देता हूँ, तो भी तू नहीं मानता और बहुत-से उत्तर-प्रत्युत्तर (दलीलें) उपस्थित करता है। मेरे सच्चे वचन पर विश्वास नहीं करता और कौए की तरह सभी से डरता है।

सठ स्वपच्छ तव हृदयँ बिसाला ❀ सपदि[3] होहि पच्छी चंडाला
लीन्ह साप मैं सीस चढ़ाई ❀ नहिं कछु भय न दीनता आई

अरे मूर्ख ! तेरे हृदय में अपने पक्ष का बड़ा हठ है, तू शीघ्र चांडाल पक्षी (कौवा) हो जा। मैंने मुनि के शाप को सिर पर चढ़ा लिया, न मुझे कुछ भय हुआ, न दीनता ही आई।



तुरत भयेउँ मैं काग तब पुनि मुनि पद सिरु नाइ।
सुमिरि राम रघुबंस मनि हरषित चलेउँ उड़ाइ॥(क)

तब तुरन्त ही मैं कौआ हो गया। फिर मुनि के चरणों पर सिर नवाकर और रघुकुल-शिरोमणि रामजी का स्मरण करके मैं प्रसन्नता-सहित उड़ चला।

---

१. स्थापित किया। २. कौवा। ३. शीघ्र।

उमा जे राम चरन रत बिगत काम मद क्रोध।
निज प्रभुमय देखहिं जगत केहि सन करहिं बिरोध॥(ख)

हे उमा ! जो रामजी के चरणों के प्रेमी हैं, काम, अभिमान और क्रोध से रहित हैं, वे जगत् को अपने प्रभुमय देखते हैं, फिर वे किससे बैर करें ?

सुनु खगेस नहिं कछु रिषि दूषन ❀ उर प्रेरक रघुबंस बिभूषन
कृपासिंधु मुनि मति करि भोरी ❀ लीन्ही प्रेम परिच्छा मोरी

हे गरुड़ ! सुनिये, इसमें ऋषि का कुछ भी दोष नहीं था। रघुकुल-भूषण रामजी ही सबके हृदय में प्रेरणा करने वाले हैं। कृपा के समुद्र प्रभु ने मुनि की बुद्धि को भुलावे में डालकर मेरे प्रेम की परीक्षा ली।

मन बच क्रम मोहिं निज जन जाना ❀ मुनि मति पुनि फेरी भगवाना
रिषि मम सहनसीलता देखी ❀ राम चरन बिस्वास बिसेषी

मन, वचन और कर्म से जब उन्होंने मुझे अपना सेवक जान लिया, तब भगवान् ने मुनि की मति फिर पलट दी। ऋषि ने मेरी सहनशीलता और रामजी के चरणों में विशेष विश्वास देखा।

अति बिसमय पुनि पुनि पछिताई ❀ सादर मुनि मोहि लीन्ह बोलाई
मम परितोष बिबिध बिधि कीन्हा ❀ हरषित राममंत्र मोहि दीन्हा

बहुत दुख के साथ बार-बार पछताकर मुनि ने मुझे आदर-सहित बुला लिया। अनेकों प्रकार से मेरा सन्तोष किया और तब हर्षित होकर मुझे राम-मन्त्र दिया।

बालकरूप राम कर ध्याना ❀ कहेउ मोहि मुनि कृपानिधाना
सुन्दर सुखद मोहि अति भावा ❀ सो प्रथमहिं मैं तुम्हहिं सुनावा

फिर कृपा-निधान मुनि ने मुझे बालकरूप रामजी का ध्यान बतलाया। सुन्दर और सुख देने वाला यह ध्यान मुझे बहुत ही प्रिय लगा। उसे मैं आपको पहले ही सुना चुका हूँ।

मुनि मोहि कछुक काल तहँ राखा ❀ राम चरित मानस सब भाषा
सादर मोहि यह कथा सुनाई ❀ पुनि बोले मुनि गिरा सुहाई

मुनि ने मुझे वहाँ अपने पास कुछ समय तक रक्खा और सम्पूर्ण राम-

चरित-मानस कहा। आदरपूर्वक मुझे यह कथा सुनाकर फिर मुनि सुहावनी वाणी बोले—

रामचरित सर गुप्त सुहावा ❀ संभु प्रसाद तात मैं पावा
तोहि निज भगत राम कर जानी ❀ तातें मैं सब कहेउँ बखानी

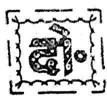
हे तात! यह सुन्दर और गुप्त रामचरित-मानस शिवजी की कृपा से मैंने पाया था। तुम्हें रामजी का निज भक्त जाना, इसी से तुम से मैंने सब विस्तार से कहा।

राम भगति जिन्ह कें उर नाहीं ❀ कबहुँ न तात कहिअ तिन्ह पाहीं
मुनि मोहि बिबिध भाँति समुझावा ❀ मैं सप्रेम मुनि पद सिरु नावा

जिनके हृदय में रामजी की भक्ति नहीं, हे तात! उनके सामने कभी भी यह रामचरित-मानस न कहना चाहिये। मुनि ने मुझे अनेकों प्रकार से समझाया। तब मैंने प्रेम-सहित मुनि के चरणों में सिर नवाया।

निज कर कमल परसि मम सीसा ❀ हरषित आसिष दीन्ह मुनीसा
राम भगति अबिरल उर तोरें ❀ बसिहि सदा प्रसाद[1] अब मोरें

अपने कर-कमलों से मेरा सिर छूकर मुनीश्वर ने हर्षित होकर मुझे आशीर्वाद दिया कि अब तेरे हृदय में मेरी कृपा से अविरल राम-भक्ति सदा बसेगी।


सदा राम प्रिय होहु तुम्ह सुभ गुन भवन अमान।
कामरूप इच्छामरन ग्यान बिराग निधान॥

तुम सदा रामजी को प्रिय होओ, शुभ गुणों के धाम, मान-रहित स्वेच्छा-नुसार रूप धारण करने और अपनी इच्छा से शरीर त्याग करने में समर्थ तथा ज्ञान और वैराग्य के भंडार होओ।

जेहि आश्रम तुम्ह बसब पुनि सुमिरत श्री भगवन्त।
ब्यापिहि तहँ न अबिद्या[2] जोजन[3] एक प्रजंत[4]॥

तुम श्रीभगवान् को स्मरण करते हुये जिस आश्रम में बसोगे, वहाँ एक योजन तक अविद्या न व्यापेगी।

---

१. कृपा। २. माया-मोह। ३. योजन, चार कोस। ४. पर्यंत, तक।

काल कर्म गुन दोष सुभाऊ ❀ कछु दुख तुम्हहिं न ब्यापिहि काऊ
राम रहस्य ललित बिधि नाना ❀ गुप्त प्रगट इतिहास पुराना

काल, कर्म, गुण, दोष और स्वभाव से उत्पन्न कुछ भी दुःख तुमको कभी नहीं व्याप्त होगा। अनेकों प्रकार के चमत्कार-युक्त रामजी के चरित्रों के रहस्य, जो इतिहास और पुराण में गुप्त और प्रकट हैं,

बिनु स्रम तुम्ह जानब सब सोऊ ❀ नित नव नेह राम पद होऊ
जो इच्छा करिहहु मन माहीं ❀ हरि प्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं

तुम उन सबको बिना परिश्रम ही जान जाओगे। रामजी के चरणों में तुम्हारा नित्य नया प्रेम हो। अपने मन में तुम जो इच्छा करोगे, हरि की कृपा से तुमको कुछ भी दुर्लभ नहीं होगा।

सुनि मुनि आसिष सुनु मतिधीरा ❀ ब्रह्म गिरा भइ गगन गँभीरा
एवमस्तु तव बच मुनि ग्यानी ❀ यह मम भगत करम मन बानी

हे धीरबुद्धि गरुड़! सुनिये, मुनि का आशीर्वाद सुनकर आकाश में गंभीर ब्रह्मवाणी हुई कि हे ज्ञानी मुनि! तुम्हारा वचन ऐसा ही हो। यह कर्म, मन और वाणी से मेरा भक्त है।

सुनि नभगिरा हरष मोहि भयऊ ❀ प्रेम मगन सब संसय गयऊ
करि बिनती मुनि आयसु पाई ❀ पद सरोज पुनि पुनि सिरु नाई

आकाशवाणी सुनकर मुझे बड़ा हर्ष हुआ। मैं प्रेम में मग्न हो गया। मेरा सब सन्देह जाता रहा। फिर विनती करके, मुनि की आज्ञा पाकर, मुनि के चरण-कमलों में बार-बार सिर नवाकर,

हरष सहित एहिं आस्रम आयेउँ ❀ प्रभु प्रसाद दुर्लभ बर पायेउँ
इहाँ बसत मोहिं सुनु खग ईसा ❀ बीते कलप सात अरु बीसा

मैं हर्ष-सहित इस आश्रम में आया। प्रभु की कृपा से मैंने दुर्लभ वर पा लिया। हे पक्षिराज! मुझे यहाँ बसते सत्ताईस कल्प बीत गये।

करउँ सदा रघुपति गुन गाना ❀ सादर सुनहिं बिहंग सुजाना
जब जब अवधपुरी रघुबीरा ❀ धरहिं भगत हित मनुज सरीरा

मैं यहाँ सदा रामजी के गुणों का गान किया करता हूँ और चतुर पक्षी उसे आदरपूर्वक सुनते हैं। जब-जब अयोध्यापुरी में रामचन्द्रजी भक्तों के कल्याण के लिये मनुष्य-शरीर धारण करते हैं,

तव तव जाइ रामपुर रहऊँ ❀ सिसु लीला बिलोकि सुख लहऊँ
पुनि उर राखि राम सिसुरूपा ❀ निज आस्रम आवउँ खगभूपा

तब तब मैं जाकर रामजी की नगरी में रहता हूँ और प्रभु की बाललीला देखकर सुख प्राप्त करता हूँ। फिर रामजी का बाल-रूप हृदय में रखकर, हे पक्षिराज! मैं अपने आश्रम को जाता हूँ।

कथा सकल मैं तुम्हहिं सुनाई ❀ काग देह जेहिं कारन पाई
कहेउँ तात सब प्रस्न तुम्हारी ❀ राम भगति महिमा अति भारी

मैंने आपको वह सारी कथा सुना दी, जिस कारण से मैंने कौवे का शरीर पाया। हे तात! मैंने आपके सब प्रश्नों के उत्तर कहे। अहा! राम-भक्ति की बड़ी भारी महिमा है।

दो॰ तातें यह तन मोहि प्रिय भयेउ राम पद नेह।
निज प्रभु दरसन पायेउँ गये सकल सन्देह ॥(क)

मुझे अपना यह शरीर इसी से प्रिय है कि इसके द्वारा मुझे राम के चरणों में प्रेम प्राप्त हुआ। इसी शरीर से मैंने अपने प्रभु का दर्शन पाया और मेरे सब संदेह जाते रहे।

भगति पच्छ हठ करि रहेउँ दीन्हि महा रिषि साप।
मुनि दुर्लभ बर पायेउँ देखहु भजन प्रताप ॥(ख)

मैं हठ करके भक्ति-पक्ष पर अड़ा रहा, इससे महर्षि लोमश ने मुझे शाप दिया। पर उसका फल यह हुआ कि जो मुनियों को भी दुर्लभ है, वह वर मैंने पाया, भजन का प्रताप तो देखिये।

जे असि भगति जानि परिहरहीं ❀ केवल ग्यान हेतु स्रम करहीं
ते जड़ कामधेनु गृहँ त्यागी ❀ खोजत आकु[1] फिरहिं पय लागी

जो ऐसी भक्ति को जान-बूझकर छोड़ देते हैं और केवल ज्ञान के लिये श्रम करते हैं, वे मूर्ख घर पर खड़ी हुई कामधेनु को छोड़कर दूध के लिये मदार के पेड़ को खोजते फिरते हैं।

सुनु खगेस हरि भगति बिहाई ❀ जे सुख चाहहिं आन उपाई
ते सठ महा सिंधु बिनु तरनी ❀ पैरि पार चाहहिं जड़ करनी

१. मदार।

हे पक्षिराज ! सुनिये, जो हरिभक्ति को छोड़कर अन्य उपायों से सुख चाहते हैं, वे मूर्ख अपनी जड़ करनी से महासमुद्र को बिना नाव के तैरकर पार होना चाहते हैं ।

सुनि भुसुण्डि के बचन भवानी ❁ बोलेउ गरुड़ हरषि मृदु बानी
तव प्रसाद प्रभु मम उर माहीं ❁ संसय सोक मोह भ्रम नाहीं

हे भवानी ! भुशुण्डि के वचन सुनकर गरुड़ हर्षित होकर कोमल वाणी से बोले—हे प्रभो ! आपकी कृपा से मेरे हृदय में संशय, शोक, मोह और भ्रम कुछ भी नहीं रह गये ।

सुनेउँ पुनीत राम गुन ग्रामा ❁ तुम्हरी कृपाँ लहेउँ बिस्रामा
एक बात प्रभु पूँछउँ तोही ❁ कहउ बुझाइ कृपानिधि मोही

मैंने रामजी के पवित्र गुण-समूहों को सुना और आपकी कृपा से शान्ति पाई । हे प्रभो ! अब मैं एक बात आपसे और पूछता हूँ—हे कृपा के भण्डार ! मुझे समझाकर कहिये ।

कहहिं संत मुनि बेद पुराना ❁ नहिं कछु दुर्लभ ग्यान समाना
सोइ मुनि तुम्ह सन कहेउ गोसाईं ❁ नहिं आदरेहु भगति की नाईं

संत, मुनि, वेद और पुराण यह कहते हैं कि ज्ञान के समान दुर्लभ कुछ भी नहीं है। हे गोसाईं ! मुनि ने आपसे वही ज्ञान कहा, पर आपने भक्ति के समान उसका आदर नहीं किया ।

ग्यानहिं भगतिहिं अन्तर केता ❁ सकल कहहु प्रभु कृपा निकेता
सुनि उरगारि बचन सुख माना ❁ सादर बोलेउ काग सुजाना

हे कृपा के धाम, हे प्रभो ! ज्ञान और भक्ति में कितना अन्तर है ? यह सब कहिये। गरुड़ के वचन सुनकर बुद्धिमान भुशुण्डि ने बहुत सुख माना और आदर-पूर्वक कहा—

भगतिहिं ग्यानहिं नहिं कछु भेदा ❁ उभय हरहिं भव संभव खेदा
नाथ मुनीस कहहिं कछु अन्तर ❁ सावधान सोउ सुनु बिहंगबर

भक्ति और ज्ञान में कुछ भी भेद नहीं है। दोनों ही संसार-जनित दुःखों को हर लेते हैं। हे नाथ ! मुनिवर लोग इनमें कुछ अन्तर बतलाते हैं। हे पक्षिवर ! उसे सावधान होकर सुनिये—

ग्यान बिराग जोग बिग्याना ❁ ए सब पुरुष सुनहु हरिजाना
पुरुष प्रताप प्रबल सब भाँती ❁ अबला अबल सहज जड़ जाती

हे विष्णुवाहन ! सुनिये, ज्ञान, वैराग्य, योग और विज्ञान ये सब पुरुष हैं। पुरुष का प्रताप सब प्रकार से प्रबल होता है। अबला (माया) स्वभाव ही से निर्बल और जड़ (मूर्ख) होती है।

दो॰ पुरुष त्यागि सक नारिहि जो बिरक्त मति धीर।
न तु कामी बिषया बस बिमुख जो पद रघुबीर॥

जो विरक्त और धीर-बुद्धि पुरुष हैं, वे ही स्त्री को त्याग सकते हैं; न कि वे कामी पुरुष, जो विषयों के वश में हैं और रामजी के चरणों से विमुख हैं।

सो॰ सोउ मुनि ग्याननिधान मृगनयनी बिधु मुख निरखि।
बिकल होहिं हरिजान नारि बिष्नु माया प्रगट॥

वे ज्ञान-निधान मुनि भी हरिणाक्षी के चन्द्रमुख को देखकर विकल हो जाते हैं। हे विष्णुवाहन ! विष्णु माया ही स्त्री-रूप से प्रकट है।

इहाँ न पच्छपात कछु राखउँ ❁ बेद पुरान सन्त मत भाषउँ
मोह न नारि नारि के रूपा ❁ पन्नगारि यह रीति अनूपा

यहाँ मैं कुछ पक्षपात नहीं रखता हूँ और वेद, पुराण और संतों का मत ही कहता हूँ। एक स्त्री के रूप पर दूसरी स्त्री मुग्ध नहीं होती। हे गरुड़ ! यह अनुपम रीति है।

माया भगति सुनहु प्रभु दोऊ ❁ नारि बर्ग जानहिं सब कोऊ
पुनि रघुबीरहिं भगति पियारी ❁ माया खलु[1] नर्त्तकी[2] बिचारी

हे प्रभो ! सुनिये, माया और भक्ति ये दोनों ही स्त्री-वर्ग की हैं। यह सब कोई जानते हैं। फिर रामजी को तो भक्ति ही प्यारी है, माया बेचारी तो निश्चय ही नाचने वाली नटिनी मात्र है।

भगतिहिं सानुकूल रघुराया ❁ तातें तेहि डरपति अति माया
राम भगति निरुपम निरुपाधी ❁ बसइ जासु उर सदा अबाधी

रामजी भक्ति के विशेष अनुकूल रहते हैं, इसी से माया उससे बहुत ही

१. निश्चयपूर्वक। २. नाचने वाली।

डरती रहती है। उपमा-रहित और उपाधि-रहित रामजी की भक्ति जिसके हृदय में सदा बिना किसी बाधा के बसती है,

तेहि बिलोकि माया सकुचाई ❀ करि न सकइ कछु निज प्रभुताई
अस बिचारि जे मुनि बिग्यानी ❀ जाचहिं भगति सकल सुख खानी

उसे देखकर माया सकुचा जाती है और उस पर वह अपनी कुछ भी प्रभुता नहीं चला सकती। ऐसा विचारकर जो विज्ञानी मुनि हैं, वे सब सुखों की खान भक्ति ही की याचना करते हैं।

दो०— यह रहस्य रघुनाथ कर बेगि न जानइ कोइ।
जो जानइ रघुपति कृपाँ सपनेहुँ मोह न होइ ॥(क)॥

रामजी का यह रहस्य शीघ्र कोई भी नहीं जान पाता। रामजी की कृपा से जो उसे जान जाता है, उसे स्वप्न में भी मोह नहीं होता।

औरउ ग्यान भगति कर भेद सुनहु सुप्रबीन।
जो सुनि होइ राम पद प्रीति सदा अबिछीन[1] ॥(ख)॥

हे परम प्रवीण गरुड़! ज्ञान और भक्ति का और भी भेद सुनिये। जिसे सुनकर रामजी के चरणों में सदा अविच्छिन्न प्रेम हो जाता है।

सुनहु तात यह अकथ कहानी ❀ समुझत बनइ न जाइ बखानी
ईस्वर अंस जीव अबिनासी ❀ चेतन अमल सहज सुखरासी

हे तात! यह अकथनीय कहानी सुनिये। यह समझते ही बनती है, कही नहीं जा सकती। अविनाशी, चेतन, निर्मल और स्वभाव ही से सुख की राशि यह जीव ईश्वर का अंश है।

सो मायाबस भयेउ गोसाईं ❀ बँधेउ कीर[2] मरकट[3] की नाईं
जड़ चेतनहिं ग्रन्थि[4] परि गई ❀ जदपि मृषा[5] छूटत कठिनई

हे गोसाईं! वह माया के वश हो गया और तोते और बानर की भाँति अपने आप ही बँध गया। इस प्रकार जड़ और चेतन में गाँठ पड़ गई। यद्यपि वह गाँठ मिथ्या ही है, तथापि उसके छूटने में कठिनता है।

तब तें जीव भयेउ संसारी ❀ छूट न ग्रन्थि न होइ सुखारी
श्रुति पुरान बहु कहेउ उपाई ❀ छूट न अधिक अधिक अरुझाई

---

१. एकरस। २. तोता। ३. बन्दर। ४. गाँठ। ५. मिथ्या।

तभी से जीव संसारी (जन्मने-मरने वाला) हो गया। न गाँठ छूटती है, न वह सुखी होता है। वेदों और पुराणों ने बहुत-से उपाय बताये हैं, पर उनसे वह छूटती नहीं, बल्कि और भी अधिक उलझती ही जाती है।

जीव हृदयँ तम मोह बिसेषी ❀ ग्रन्थि छूट किमि परइ न देखी
अस संजोग ईस जब करई ❀ तबहु कदाचित सो निरुवरई[1]

जीव के हृदय में अज्ञान-रूपी अन्धकार बहुत है। गाँठ छूटे कैसे? वह दिखाई तो पड़ती ही नहीं। ईश्वर जब ऐसा संयोग (जैसा आगे कहा जाता है) करता है, तो भी शायद ही वह छूटे तो छूटे।

सात्विक श्रद्धा धेनु लवाई[2] ❀ जौं हरि कृपाँ हृदय बसि आई
जप तप ब्रत जम नियम अपारा ❀ जे श्रुति कह सुभ धर्म अचारा

सात्विकी श्रद्धारूपी नई ब्याई हुई गाय, जो हरि-कृपा से हृदय-रूपी घर में आकर बस जाय, जप, तप, व्रत, यम और नियम आदि जो शुभ धर्म और आचार वेद ने कहे हैं—

तेइ तृन हरित चरै जब गाई ❀ भाव बच्छ सिसु पाइ पेन्हाई
नोइ निबृत्ति पात्र बिस्वासा ❀ निर्मल मन अहीर निज दासा

वे ही हरे तृण हैं, उन्हें जब गाय चरे, और आस्तिक भाव-रूपी छोटे बछड़े को पाकर वह पेन्हावे (ओगरे)। निवृत्ति नोई (रस्सी, जिससे दूध दुहते समय गाय के पिछले पैर बाँधे जाते हैं) है; विश्वास दूध दुहने का पात्र है, निर्मल मन दुहने वाला अहीर है, जो स्वयं अपना सेवक है।

परम धरममय पय दुहि भाई ❀ अवटै[3] अनल अकाम बनाई
तोष मरुत तब छमाँ जुड़ावै ❀ धृति सम जावनु[4] देइ जमावै

हे भाई! परम धर्ममय दूध दुहकर उसे निष्कामनारूपी अग्नि में अच्छी तरह औटे। तब संतोष और क्षमा-रूपी पवन से उसे शीतल करे, और धैर्य और शम-रूपी जामन देकर उसे जमावे।

मुदिता मथै बिचार मथानी ❀ दम अधार रजु सत्य सुबानी
तब मथि काढ़ि लेइ नवनीता ❀ बिमल बिराग सुभग सुपुनीता

तब मुदिता-रूपी कमोरी में, तत्व-विचाररूपी मथानी से दम रूपी आधार

---

१. छूटे। २. नई ब्याई हुई। ३. खौलाये। ४. जामन।

पर सत्य सुन्दर वाणी रूपी रस्सी से उसे मथकर उसमें से वैराग्य रूपी निर्मल परम सुन्दर और पवित्र मक्खन निकाल ले—

दो०— जोग अगिनि करि प्रगट तब कर्म सुभासुभ लाइ।
बुद्धि सिरावै[1] ग्यान घृत ममता मल जरि जाइ॥(क)

तब योग रूपी अग्नि प्रकट करके, उसमें शुभाशुभ कर्म रूपी ईंधन लगादे। जब ममता रूपी मल जल जाय, तब ज्ञान रूपी घृत को बुद्धि से ठंडा करे।

तब बिग्यान रूपिनी बुद्धि बिसद घृत पाइ।
चित्त दिया भरि धरै दृढ़ समता दिअटि[2] बनाइ॥(ख)

तब विज्ञान-रूपिणी बुद्धि उस निर्मल घी को पाकर चित्त रूपी दिये को भरकर समता की दीवट बनाकर उस पर उसे दृढ़ता से रक्खे।

तीनि अवस्था तीनि गुन तेहि कपास तें काढ़ि।
तूल तुरीय सँवारि पुनि बाती करै सुगाढ़ि॥(ख)

तीनों अवस्थाओं (जागृति, स्वप्न और सुषुप्ति) और तीनों गुणों (सत, रज और तम) रूपी कपास से तुरीयावस्थारूपी रुई को निकालकर और फिर उसे सँवारकर सुन्दर कड़ी बत्ती बनावे।

सो०— एहि बिधि लेसै[3] दीप तेज रासि बिग्यान मय।
जातहिं जासु समीप जरहिं मदादिक सलभ[4] सब॥

इस प्रकार तेज की राशि और विज्ञानमय दीपक को जलावे; जिसके समीप जाते ही मद आदि सब पतंगे जल जाते हैं।

सोहमस्मि[5] इति बृत्ति अखंडा ❀ दीप सिखा[6] सोइ परम प्रचंडा
आतम अनुभव सुख सुप्रकासा ❀ तब भवमूल भेद भ्रम नासा

'वह मैं हूँ' यह अखण्ड वृत्ति ही परम प्रचंड दीप-शिखा है, आत्मानुभव के सुख का सुन्दर प्रकाश होने पर संसार के मूल-स्वरूप भेद-रूपी भ्रम का नाश होता है।

१. ठंडा करे। २. दीवट। ३. जलावे। ४. पतंगा। ५. वह मैं हूँ। ६. लौ।

प्रबल अविद्या कर परिवारा ❀ मोह आदि तम मिटइ अपारा
तब सोइ बुद्धि पाइ उँजिआरा ❀ उर गृहँ बैठि ग्रन्थि निरुआरा

और महान् बलवती अविद्या के परिवार मोह आदि का अपार अन्धकार मिट जाता है। तब वही बुद्धि उजाला पाकर हृदय-रूपी घर में बैठकर गाँठ खोलती है।

छोरन ग्रन्थि पाव जौं सोई ❀ तौ यह जीव कृतारथ होई
छोरत ग्रन्थि जानि खगराया ❀ बिघन अनेक करइ तब माया

यदि वह (बुद्धि) उस गाँठ को खोलने पावे, तब यह जीव कृतार्थ हो। परंतु हे पक्षिराज! गाँठ को खोलते हुये जानकर माया अनेकों विघ्न करती है।

रिद्धि सिद्धि प्रेरइ बहु भाई ❀ बुद्धिहि लोभ देखावहिं आई
कल बल छल करि जाहिं समीपा ❀ अंचल बात[1] बुझावहिं दीपा

हे भाई! वह बहुत-सी ऋद्धि-सिद्धियों को प्रेरणा करती है, जो आकर बुद्धि को लोभ दिखाती हैं। वे कल, बल और छल करके, निकट जाकर, आँचल की वायु से उस ज्ञान-रूपी दीपक को बुझा देती हैं।

होइ बुद्धि जौं परम सयानी ❀ तिन्ह तनु[2] चितव न अनहित जानी
जौं तेहि बिघन बुद्धि नहिं बाधी ❀ तौ बहोरि सुर करहिं उपाधी

यदि बुद्धि बहुत ही सयानी हुई, तो वह उन्हें हानिकर समझकर उनकी ओर देखती ही नहीं। यदि माया के विघ्नों से बुद्धि को बाधा न हुई, तो फिर देवता विघ्न डालते हैं।

इन्द्री द्वार झरोखा नाना ❀ तहँ तहँ सुर बैठे करि थाना
आवत देखहिं बिषय बयारी ❀ ते हठि देहिं कपाट उघारी

इन्द्रियों के द्वार हृदय-रूपी घर के अनेकों झरोखे हैं। वहाँ हरएक झरोखे पर देवता अड्डा जमाये बैठे हैं। विषय-रूपी हवा का झोंका आते देखकर वे हठ करके किवाड़ खोल देते हैं।

जब सो प्रभञ्जन[3] उर गृहँ जाई ❀ तबहिं दीप बिग्यान बुझाई
ग्रन्थि न छूटि मिटा सो प्रकासा ❀ बुद्धि बिकल भइ बिषय बतासा[4]

ज्योंही वह झोंका हृदय-रूपी घर में जाता है, त्योंही विज्ञान-रूपी दीपक

१. हवा। २. ओर। ३. हवा। ४. हवा।

बुझ जाता है। गाँठ भी नहीं छूटी और वह प्रकाश भी जाता रहा। इससे विषय-रूपी वायु के झोंके से बुद्धि विकल हो जाती है!

इन्द्रिन्ह सुरन्ह न ग्यान सोहाई ❀ बिषय भोग पर प्रीति सदाई
बिषय समीर बुद्धि कृत भोरी ❀ तेहि बिधि दीप को बार बहोरी

इन्द्रियों और उनके देवताओं को ज्ञान प्रिय नहीं लगता; विषय-भोग पर उनकी सदा ही प्रीति रहती है। विषय रूपी वायु ने बुद्धि को बावली बना दिया, तब उसी प्रकार से उस ज्ञान-दीपक को फिर कौन जलावे ?

दो०— तब फिरि जीव बिबिध बिधि पावइ संसृति क्लेस।
हरि माया अति दुस्तर तरि न जाइ बिहगेस ॥(क)

तब फिर जीव अनेकों प्रकार से संसार के क्लेश पाता है। हे पक्षिराज! हरि की माया अत्यन्त दुस्तर है, वह सहज ही में तरी नहीं जा सकती।

कहत कठिन समुझत कठिन साधन कठिन बिबेक।
होइ घुनाच्छर न्याय जौं पुनि प्रत्यूह[1] अनेक॥

विवेक (ज्ञान) कहने में कठिन, समझने में कठिन और साधने में भी कठिन है। घुणाक्षर न्याय से यदि वह संयोगवश हो भी जाय, तो भी अनेकों विघ्न हैं।

ग्यान पंथ कृपान कै धारा ❀ परत खगेस होइ नहिं बारा[2]
जौं निरबिघन पंथ निरबहई ❀ सो कैवल्य परम पद लहई

ज्ञान का मार्ग तलवार की धार के समान है। हे गरुड़! उस पर से गिरने में देर नहीं लगती। जो निर्विघ्न उस मार्ग को निबाह ले जाता है, वही कैवल्य-रूप परमपद (मोक्ष) को प्राप्त करता है।

अति दुर्लभ कैवल्य परम पद ❀ संत पुरान निगम आगम बद[3]
राम भजत सोइ मुक्ति गोसाईं ❀ अनइच्छित आवै बरिआईं

कैवल्य-रूप परमपद अत्यन्त दुर्लभ है, संत, पुराण, वेद और शास्त्र सब ऐसा ही कहते हैं। हे गोसाईं! वही मुक्ति रामजी को भजने से बिना इच्छा किये ज़बरदस्ती आ जाती है।

---

१. विघ्न। २. देर। ३. कहते हैं।

जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई ❁ कोटि भाँति कोउ करै उपाई
तथा मोच्छ सुख सुनु खगराई ❁ रहि न सकइ हरि भगति बिहाई

कोई करोड़ों प्रकार के उपाय करे, पर जैसे स्थल के बिना जल नहीं रह सकता, वैसे ही हे पक्षिराज ! सुनिये, मोक्ष-सुख भी हरि-भक्ति को छोड़कर नहीं रह सकता।

अस बिचारि हरि भगत सयाने ❁ मुक्ति निरादर भगति लोभाने
भगति करत बिनु जतन प्रयासा ❁ संसृति मूल अबिद्या नासा

ऐसा विचारकर बुद्धिमान् हरिभक्त मुक्ति का तिरस्कार करके भक्ति पर लुभाये रहते हैं। भक्ति करने से यत्न और परिश्रम के बिना ही संसार (जन्म-मृत्यु आदि) की मूल, अविद्या, नष्ट हो जाती है।

भोजन करिअ तृपिति हित लागी ❁ जिमि सो असन पचव जठरागी
असि हरि भगति सुगम सुखदाई ❁ को अस मूढ़ न जाहि सोहाई

जैसे भोजन तृप्ति के लिये किया जाता है और उस भोजन को जठराग्नि पचा डालती है। ऐसी हरि-भक्ति, जो सुगम और परम सुखदायी है, किसे प्रिय न लगेगी ? ऐसा मूढ़ कौन है ?

दो॰ सेवक सेब्य भाव बिनु भव न तरिय उरगारि।
भजहु राम पद पङ्कज अस सिद्धान्त बिचारि॥

हे गरुड़ ! सेवक और सेव्य के भाव बिना भवसागर नहीं तरा जा सकता। ऐसा सिद्धान्त विचारकर रामजी के चरण-कमलों का भजन कीजिये।

जो चेतन कहँ जड़ करइ जड़हिं करइ चैतन्य।
अस समरथ रघुनाथहिं भजहिं जीव ते धन्य॥

जो चेतन को जड़ कर देता है और जड़ को चेतन कर देता है, ऐसे समर्थ रामजी को जो जीव भजते हैं, वे धन्य हैं।

कहेउँ ग्यान सिद्धान्त बुझाई ❁ सुनहु भगति मनि कै प्रभुताई[1]
राम भगति चिंतामनि सुन्दर ❁ बसइ गरुड़ जाके उर अंतर

मैंने ज्ञान का सिद्धान्त समझाकर कहा। भक्तिरूपी मणि की प्रभुता

१. महिमा।

सुनिये। राम-भक्ति सुन्दर चिन्तामणि है। हे गरुड़ ! वह जिसके अन्तस्तल में बस जाती है,

परम प्रकास रूप दिन राती ❀ नहिं कछु चहिय दिआ घृत बाती
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा ❀ लोभ बात नहिं ताहि बुझावा

वह रात-दिन परम प्रकाशरूप रहता है। उसको दिया, घी और बाती कुछ भी नहीं चाहिये। फिर मोह रूपी दरिद्रता उसके समीप नहीं आती; लोभ रूपी पवन उसे नहीं बुझा सकता,

प्रबल अविद्या तम मिटि जाई ❀ हारहिं सकल सलभ समुदाई
खल कामादि निकट नहिं जाहीं ❀ बसइ भगति जाके उर माहीं

अविद्या का प्रबल अन्धकार मिट जाता है। मदादि पतंगों का सारा समूह हार जाता है। उसके निकट जिसके हृदय में भक्ति बसती है, काम, क्रोध और लोभ आदि खल नहीं जाते।

गरल[1] सुधा सम अरि हित[2] होई ❀ तेहि मनि बिनु सुख पाव न कोई
ब्यापहि मानस रोग न भारी ❀ जिनके बस सब जीव दुखारी

उसके लिये विष अमृत के समान और शत्रु मित्र हो जाता है। उस मणि के बिना कोई सुख नहीं पाता। उसको भारी मानस रोग, जिनके वश होकर सब जीव दुखी हो रहे हैं, नहीं व्यापते।

राम भगति मनि उर बस जाकें ❀ दुख लवलेस न सपनेहुँ ताकें
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं ❀ जे मनि लागि सुजतन कराहीं

राम-भक्ति रूपी मणि जिसके हृदय में बसती है, उसे स्वप्न में भी लेशमात्र दुख नहीं होता। संसार में वे ही मनुष्य चतुरों के शिरोमणि हैं जो उस मणि के लिये भलीभाँति यत्न करते हैं।

सो मनि जदपि प्रगट जग अहई ❀ राम कृपा बिनु नहिं कोउ लहई
सुगम उपाइ पाइबे केरे ❀ नर हतभाग्य देहिं भटभेरे

वह मणि यद्यपि जगत् में प्रकट है, पर रामजी की कृपा के बिना कोई उसे नहीं पाता। उसके पाने का उपाय भी सुगम ही है, पर भाग्यहीन मनुष्य उसे ठुकरा देते हैं।

---

१. विष। २. मित्र।

पावन पर्वत बेद पुराना ❀ राम कथा रुचिराकर नाना
मर्मी सज्जन सुमति कुदारी ❀ ग्यान बिराग नयन उरगारी

वेद और पुराण पवित्र पर्वत हैं। रामजी की नाना प्रकार की अनेकों कथाएँ उसमें सुन्दर खानें हैं। संत पुरुष उसके जानकार हैं और उनकी सुबुद्धि कुदाल है। हे गरुड़! ज्ञान और वैराग्य ये ही दो नेत्र हैं।

भाव सहित खोजइ जो प्रानी ❀ पाव भगति मनि सब सुख खानी
मोरें मन प्रभु अस बिस्वासा ❀ राम तें अधिक राम कर दासा

जो प्राणी उसे प्रेम के साथ खोजता है, वह सब सुखों की खान इस भक्ति-रूपी मणि को पा जाता है। हे प्रभो! मेरे मन में ऐसा विश्वास है कि रामजी के दास रामजी से भी बढ़कर हैं।

राम सिंधु घन सज्जन धीरा ❀ चंदन तरु हरि संत समीरा
सब कर फल हरि भगति सुहाई ❀ सो बिनु संत न काहू पाई
अस बिचारि जोइ कर सतसंगा ❀ राम भगति तेहि सुलभ बिहंगा

राम समुद्र हैं, धीरबुद्धि सज्जन मेघ हैं। हरि चंदन के वृक्ष हैं, संत पवन हैं। सब साधनों का फल सुन्दर हरि-भक्ति ही है। उसे संत के बिना किसी ने नहीं पाया। ऐसा विचारकर जो सत्संग करता है, हे गरुड़! उसके लिये राम-भक्ति सुलभ हो जाती है।

दो॰ ब्रह्म पयोनिधि मन्दर[1] ग्यान संत सुर आहिं।
कथा सुधा मथि काढ़हिं भगति मधुरता जाहिं॥(क)

ब्रह्म समुद्र है, ज्ञान मंदराचल है और सन्त देवता हैं, जो समुद्र को मथकर कथा-रूपी अमृत निकालते हैं, जिसमें भक्ति-रूपी मिठास रहती है।

बिरति चर्म[2] असि[3] ग्यान मद लोभ मोह रिपु मारि।
जय पाइअ सो हरि भगति देखु खगेस बिचारि॥(ख)

वैराग्य-रूपी ढाल से अपनी रक्षा करते हुये और ज्ञान-रूपी तलवार से मद, लोभ और मोह-रूपी शत्रु को मारकर जो विजय पाती है, वह हरि-भक्ति ही है। हे गरुड़! विचारकर देखिये।

---

१. मंदराचल पर्वत। २. ढाल। ३. तलवार।

पुनि सप्रेम बोलेउ खगराऊ ❀ जौं कृपाल मोहि ऊपर भाऊ
नाथ मोहि निज सेवक जानी ❀ सप्त प्रस्न मम कहहु बखानी

फिर पक्षिराज गरुड़ प्रेम-सहित बोले—हे कृपालु ! यदि मुझ पर आपका प्रेम है, तो हे नाथ ! मुझे अपना सेवक जानकर मेरे सात प्रश्नों के उत्तर समझा-कर कहिये।

प्रथमहिं कहहु नाथ मतिधीरा ❀ सब तें दुर्लभ कवन सरीरा
बड़ दुख कवन कवन सुख भारी ❀ सोउ संछेपहिं कहहु बिचारी

हे धीर-बुद्धि नाथ ! पहले तो यह बताइये कि सबसे दुर्लभ कौन-सा शरीर है ? फिर कौन-सा बड़ा दुःख और कौन-सा बड़ा सुख है। यह भी विचारकर संक्षेप ही में कहिये।

संत असन्त मरम तुम्ह जानहु ❀ तिन्हकर सहज सुभाव बखानहु
कवन पुन्य स्रुति बिदित बिसाला ❀ कहहु कवन अघ परम कृपाला

आप संत और असंत के मर्म को जानते हैं। उनके सहज स्वभाव का वर्णन कीजिये। फिर वेद में प्रसिद्ध कौन-सा बड़ा पुण्य है ? और कौन-सा पाप बड़ा है ? हे कृपालु ! बताइये।

मानस रोग कहहु समुझाई ❀ तुम्ह सर्बग्य कृपा अधिकाई
तात सुनहु सादर अति प्रीती ❀ मैं संछेप कहउँ यह नीती

फिर मानस रोग क्या है ? यह समझाकर कहिये। आप सर्वज्ञ हैं, और मुझ पर आपकी कृपा भी विशेष है। भुशुण्डि ने कहा—हे तात ! आदर-पूर्वक और बड़े प्रेम से सुनिये। मैं यह नीति संक्षेप में कहता हूँ।

नर तन सम नहिं कवनिउ देही ❀ जीव चराचर जाँचत जेही
नरक सर्ग अपवर्ग निसेनी ❀ ग्यान बिराग भगति सुख देनी

मनुष्य-शरीर के समान कोई शरीर नहीं है। चर और अचर सभी जीव उसकी याचना करते हैं। यह देह नरक, स्वर्ग और मोक्ष की सीढ़ी तथा ज्ञान, वैराग्य और भक्ति के सुख की देने वाली है।

सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर ❀ होहिं बिषय रत मंद मंद तर
काँच किरिच[1] बदलें तें लेही ❀ कर ते डारि[2] परस मनि देहीं

१. टुकड़ा। २. फेंक।

ऐसा मनुष्य-शरीर धारण करके जो लोग हरि को नहीं भजते और नीच से नीच विषयों में अनुरक्त रहते हैं, वे मानो पारस-मणि को हाथ से फेंक देते हैं और बदले में काँच के टुकड़े ले लेते हैं।

नहिं दरिद्र सम दुख जग माहीं ❁ सन्त मिलन सम सुख कहुँ नाहीं
पर उपकार बचन मन काया ❁ सन्त सहज सुभाउ खगराया

दरिद्रता के समान जगत् में दुःख नहीं और संतों के मिलन के समान कहीं सुख नहीं। हे पक्षिराज! वचन, मन और शरीर से परोपकार करना यह संतों का सहज स्वभाव है।

सन्त सहहिं दुख परहित लागी ❁ पर दुख हेतु असन्त अभागी
भूरज[1] तरु सम सन्त कृपाला ❁ परहित निति[2] सह बिपति बिसाला

सन्त दूसरों के कल्याण के लिये दुःख सहते हैं और अभागे असन्त दूसरों को दुःख पहुँचाते हैं। कृपालु सन्त भोज-पत्र के वृक्ष के समान पराये कल्याण के लिये भारी विपत्ति सहते हैं।

सन इव खल परबन्धन करई ❁ खाल कढ़ाइ बिपति सहि मरई
खल बिनु स्वारथ पर अपकारी ❁ अहि मूषक इव सुनु उरगारी

दुष्ट लोग सन की तरह दूसरों को बाँधते हैं, और अपनी खाल खिचवाकर, विपत्ति सहकर मरते हैं। हे गरुड़! सुनिये, दुष्ट बिना स्वार्थ के अकारण ही साँप और चूहे की तरह दूसरों का अपकार करते हैं।

पर संपदा बिनासि नसाहीं ❁ जिमि ससि[3] हति हिम उपल बिलाहीं
दुष्ट उदय जग आरत हेतू ❁ जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू

वे दूसरे की सम्पत्ति का नाश करके स्वयं नष्ट हो जाते हैं, जैसे खेती का नाश करके ओले नष्ट हो जाते हैं। दुष्ट का उदय (उन्नति) जगत् के कष्ट के लिये ही होता है, जैसे अधम ग्रह केतु प्रसिद्ध ही है।

संत उदय संतत सुखकारी ❁ बिस्व सुखद जिमि इन्दु तमारी
परम धरम श्रुति बिदित अहिंसा ❁ पर निंदा सम अघ न गरीसा[4]

सन्तों का अभ्युदय (उन्नति) सदा ही सुखकर होता है, जैसे चन्द्रमा और सूर्य का उदय जगत् भर के लिये सुखदायी है। वेदों में अहिंसा को परम धर्म

१. भोज-पत्र। २. लिये। ३. खेती। ४. भारी।

माना है और पराई निन्दा करने के समान कोई भारी पाप नहीं है।

हर गुर निंदक दादुर होई ❀ जनम सहस्र पाव तन सोई
द्विज निंदक बहु नरक भोग करि ❀ जग जनमइ बायस सरीर धरि

शिव और गुरु की निन्दा करने वाला मनुष्य अगले जन्म में मेंढक होता है और वह सहस्र जन्मों तक वही मेंढक का शरीर पाता रहता है। ब्राह्मणों की निन्दा करने वाला व्यक्ति अनेकों नरक भोगकर जगत् में कौवे का शरीर धरकर जन्म लेता है।

सुर श्रुति निन्दक जे अभिमानी ❀ रौरव नरक परहिं ते प्रानी
होहिं उलूक संत निन्दा रत ❀ मोह निसा प्रिय ग्यान भानु गत

जो अभिमानी मनुष्य देवताओं और वेदों की निन्दा करते हैं, वे रौरव नरक में पड़ते हैं। संतों की निन्दा में लगे हुये लोग उल्लू होते हैं। उन्हें मोहरूपी रात्रि प्रिय होती है और ज्ञान का सूर्य उनके लिये अस्त हुआ रहता है।

सब के निन्दा जे जड़ करहीं ❀ ते चमगादुर होइ अवतरहीं
सुनहु तात अब मानस रोगा ❀ जेहि तें दुख पावहिं सब लोगा

जो मूर्ख सबकी निन्दा करते हैं, वे चमगीदड़ होकर जन्म लेते हैं। हे तात ! अब मानस-रोग सुनिये, जिनसे सब लोग दुःख पाया करते हैं।

मोह सकल ब्याधिन कर मूला ❀ तेहि तें पुनि उपजहिं बहु सूला
काम बात कफ लोभ अपारा ❀ क्रोध पित्त नित छाती जारा

मोह (अज्ञान) समस्त व्याधियों का मूल है। उनसे फिर अनेकों शूल उत्पन्न होते हैं। काम वात है, लोभ अपार कफ है और क्रोध पित्त है जो नित्य छाती जलाता रहता है।

प्रीति करहिं जौं तीनिउ भाई ❀ उपजइ सन्निपात दुखदाई
बिषय मनोरथ दुर्गम नाना ❀ ते सब सूल नाम को जाना

यदि तीनों भाई (वात, पित्त, कफ) आपस में मेल करलें, तो दुःखदायी सन्निपात रोग उत्पन्न होता है। अनेकों प्रकार की कठिनता से मिलने वाले जो विषयों के मनोरथ हैं, वे ही सब शूल हैं; उनके नाम कौन जानता है ?

ममता दादु कंडु इरषाई ❀ हरष विषाद गरह बहुताई
पर सुख देखि जरनि सोइ छई ❀ कुष्ट दुष्टता मन कुटिलई

ममता दाद है, ईर्ष्या (डाह) खुजली है, हर्ष-विषाद गले के रोगों की वृद्धि है, दूसरे का सुख देखकर जो जलन होती है, वह क्षयी है। दुष्टता और मन की कुटिलता ही कोढ़ है।

अहंकार अति दुखद डवँरुआ ❀ दंभ कपट मद मान नहरुआ
तृस्ना उदर बृद्धि अति भारी ❀ त्रिविध ईषना तरुन तिजारी
जुग बिधि ज्वर मत्सर अबिबेका ❀ कहँ लगि कहौं कुरोग अनेका

अहंकार अत्यन्त दुःख देनेवाला डमरू (गठिया) रोग है; दम्भ, कपट, मद और मान नहरुवा (नसों का) रोग है। तृष्णा अत्यन्त भारी जलोदर रोग है; पुत्र, धन और स्त्री की तीन प्रकार की इच्छायें प्रबल तिजारी रोग हैं। मत्सर और अविवेक दो प्रकार के ज्वर हैं। कहाँ तक कहूँ, इस प्रकार के असंख्य कुत्सित रोग हैं।

दो० **एक ब्याधि बस नर मरहिं ये असाध्य बहु ब्याधि।**
पीड़हिं संतत जीव कहुँ सो किमि लहै समाधि[1] ॥(क)

मनुष्य एक ही व्याधि के वश होकर मर जाते हैं, ये तो बहुत-सी असाध्य व्याधियाँ हैं। ये सदा जीव को पीड़ा पहुँचाती रहती हैं। भला, वह समाधि (शांति) कैसे प्राप्त करे ?

नेम धर्म आचार[2] तप ग्यान जग्य जप दान।
भेषज[3] पुनि कोटिन्ह नहिं रोग जाहिं हरिजान ॥(ख)

हे गरुड़ ! फिर नियम, धर्म, आचार, तप, ज्ञान, यज्ञ, जप और दान तथा और भी करोड़ों औषधियाँ हैं, पर इनसे ये रोग नहीं जाते।

एहि बिधि सकल जीव जग रोगी ❀ सोक हरष भय प्रीति बियोगी
मानस रोग कछुक मैं गाये ❀ हहिं सबके लखि बिरलेन्ह पाये

इस प्रकार जगत् के सम्पूर्ण जीव रोगी हैं। वे शोक, हर्ष, भय, प्रीति और वियोग के दुःख से और भी दुःखी हो रहे हैं। मैंने ये कुछ मानस-रोग कहे हैं। ये हैं तो सभी को, पर बिरले ही इन्हें जान पाये हैं।

जाने तें छीजहिं कछु पापी ❀ नास न पावहिं जन परितापी
बिषय कुपथ्य पाइ अंकुरे ❀ मुनिहु हृदय का नर बापुरे

१. शांति। २. आचरण। ३. औषधि।

प्राणियों को जलाने वाले ये पापी रोग जान लिये जाने पर कुछ क्षीण अवश्य हो जाते हैं, पर नाश को नहीं प्राप्त होते। विषय का कुपथ्य पाते ही ये मुनियों के हृदयों में भी अंकुरित हो उठते हैं, साधारण आदमियों की तो बात ही क्या?

राम कृपाँ नासहिं सब रोगा ❀ जौं एहि भाँति बनै संजोगा
सदगुर बैद बचन बिस्वासा ❀ संजम यह न बिषय कै आसा

यदि रामजी की कृपा से इस भाँति का संयोग बन जाय, तो ये सब रोग नष्ट हो जाते हैं। सद्गुरु-रूपी वैद्य के वचन में विश्वास हो; विषयों की आशा न करे, यही संयम (परहेज़) हो।

रघुपति भगति सजीवन मूरी ❀ अनूपान श्रद्धा मति रूरी[1]
एहि बिधि भलेहिं सो रोग नसाहीं ❀ नाहिं त जतन कोटि नहिं जाहीं

रामजी की भक्ति संजीवनी जड़ी है। श्रद्धा से पूर्ण बुद्धि ही उसका अत्यंत सुन्दर अनुपान है। इस प्रकार हो, तो भले ही वे रोग नष्ट हो जायँ; नहीं तो करोड़ों उपायों से भी नहीं जाते।

जानिअ तब मन बिरुज[2] गोसाईं ❀ जब उर बल बिराग अधिकाई
सुमति छुधा बाढ़इ नित नई ❀ बिषय आस दुर्बलता गई

हे गोसाईं! मन को तब नीरोग हुआ जानना चाहिये, जब हृदय में वैराग्य रूपी बल बढ़ जाय। सुमति रूपी भूख नित्य नवीन बढ़ती रहे और विषयों की आशा रूपी दुर्बलता जाती रहे।

बिमल ग्यान जल जब सो नहाई ❀ तब रह राम भगति उर छाई
सिव अज सुक सनकादिक नारद ❀ जे मुनि ब्रह्म बिचार बिसारद[3]

रोगों से छुटकारा पाकर जब वह निर्मल ज्ञानरूपी जल से नहायेगा, तब उसके हृदय में रामभक्ति छा रहेगी। शिव, ब्रह्मा, शुकदेव, सनकादि और नारद आदि जो ब्रह्म-विचार में निपुण मुनि हैं,

सब कर मत खगनायक एहा ❀ करिअ राम पद पंकज नेहा
श्रुति पुरान सब ग्रन्थ कहाहीं ❀ रघुपति भगति बिना सुख नाहीं

हे पक्षिराज! उन सबका मत यही है कि राम के चरण-कमलों में प्रेम

---

१. सुन्दर। २. नीरोग। ३. निपुण, पंडित।

करना चाहिये। वेद, पुराण और अन्य सभी ग्रन्थ कहते हैं कि राम की भक्ति के बिना सुख नहीं है।

कमठ पीठ जामहिं बरु बारा ❁ बन्ध्या सुत बरु काहुहि मारा
फूलहिं नभ बरु बहु बिधि फूला ❁ जीव न लह सुख हरि प्रतिकूला

कछुवे की पीठ पर भले ही बाल उग आयें, बंध्या का पुत्र भले ही किसी को मार डाले, आकाश में भले ही अनेकों प्रकार के फूल खिले रहें, पर जीव भगवान् से विमुख होकर सुख नहीं पा सकता।

तृषा[2] जाइ बरु मृगजल पाना ❁ बरु जामहिं सस सीस बिषाना[3]
अन्धकार बरु रबिहि नसावै ❁ राम बिमुख न जीव सुख पावै
हिम ते अनल प्रगट बरु होई ❁ बिमुख राम सुख पाव न कोई

मृगतृष्णा के जल को पीने से भले ही प्यास बुझ जाय, खरहे के सिर पर भले ही सींग निकल आये, अन्धकार भले ही सूर्य का नाश कर दे, परन्तु रामजी से विमुख होकर जीव सुख नहीं पा सकता। बरफ से भले ही अग्नि प्रकट हो, पर रामजी से विमुख होकर कोई भी सुख नहीं पा सकता।

दो०—बारि मथें घृत होइ बरु सिकता[4] तें बरु तेल।
बिनु हरि भजन न भव तरिअ यह सिद्धान्त अपेल[5]॥

पानी मथने से भले ही घी निकल आये, और बालू से भले ही तेल निकले, परन्तु भगवद्भजन के बिना भवसागर नहीं तरा जा सकता, यह सिद्धान्त अटल है।

मसकहि[6] करइ बिरंचि प्रभु अजहि[7] मसक तें हीन।
अस बिचारि तजि संसय रामहि भजहिं प्रबीन॥

प्रभु मच्छर को ब्रह्मा कर सकते हैं और ब्रह्मा को मच्छर से भी तुच्छ बना सकते हैं। ऐसा विचारकर, बुद्धिमान लोग संदेह छोड़कर रामजी को ही भजते हैं।

श्लोक—विनिश्चितं बदामि ते न अन्यथा वचांसि मे।
हरिं नरा भजन्ति येऽतिदुस्तरं तरन्ति ते॥(ग)

मैं आपसे निश्चित रूप से कहता हूँ, मेरे वचन मिथ्या नहीं हैं, कि जो

१. भले ही, चाहे। २. प्यास। ३. सींग। ४. बालू। ५. अटल। ६. मच्छर। ७. ब्रह्मा को।

मनुष्य हरि को भजते हैं, वे अत्यन्त दुस्तर संसार-सागर को तर जाते हैं।

कहेउँ नाथ हरि चरित अनूपा ❀ ब्यास[1] समास[2] स्वमति अनुरूपा
स्रुति सिद्धान्त इहइ उरगारी ❀ राम भजिअ सब काम बिसारी

हे नाथ ! मैंने भगवान् का अनुपम चरित्र अपनी बुद्धि के अनुसार कहीं बढ़ाकर और कहीं संक्षेप से कहा। हे गरुड़ ! वेदों का यही सिद्धान्त है कि सब कामनाओं को छोड़कर रामजी का भजन करना चाहिये।

प्रभु रघुपति तजि सेइअ काही ❀ मोहि से सठ पर ममता जाही
तुम्ह बिग्यान रूप नहिं मोहा ❀ नाथ कीन्हि मो पर अति छोहा

हे प्रभो ! रामजी को छोड़कर और किसका सेवन किया जाय ? जिनका प्रेम मेरे जैसे मूर्ख पर भी है। हे नाथ ! आप तो विज्ञान-रूप हैं, आपको मोह नहीं है, आपने तो मुझ पर बड़ी कृपा की है।

पूँछेहु राम कथा अति पावनि ❀ सुक सनकादि सम्भु मन भावनि
सत सङ्गति दुर्लभ संसारा ❀ निमिष[3] दंड[4] भरि एकउ बारा

जो आपने मुझसे अति पवित्र रामजी की कथा पूछी, जो शुकदेव, सनकादि और शिव के मन को प्रिय लगने वाली है। संसार में सत्संग दुर्लभ है, वह चाहे पल भर का हो, दंड भर का हो या केवल एक ही बार का हो।

देखु गरुड़ निज हृदयँ बिचारी ❀ मैं रघुबीर भजन अधिकारी
सकुनाधम[5] सब भाँति अपावन ❀ प्रभु मोहि कीन्ह बिदित जगपावन

हे गरुड़ ! अपने हृदय में विचारकर देखिये, क्या मैं भी रामजी के भजन का अधिकारी हूँ ? मैं पक्षियों में सबसे अधम और सब प्रकार से अपवित्र हूँ, फिर भी प्रभु ने मुझे जगत् को पवित्र करने वाला प्रसिद्ध कर दिया।

दो०— आजु धन्य मैं धन्य अति जद्यपि सब बिधि हीन।
निज जन जानि राम मोहि सन्त समागम दीन ॥(क)

यद्यपि मैं सब प्रकार से हीन हूँ, तो भी आज मैं धन्य हूँ, अत्यंत धन्य हूँ, जो रामजी ने मुझे अपना निज जन जानकर सन्त का समागम दिया।

नाथ जथामति भाषेउँ राखेउँ नहिं कछु गोइ।
चरित सिन्धु रघुबीर के थाह कि पावइ कोइ ॥(ख)

---

१. विस्तार। २. संक्षिप्त। ३. पल भर। ४. एक घड़ी। ५. पक्षियों में नीच।

हे नाथ ! मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार कहा, कुछ भी छिपा नहीं रक्खा। रामचरित-रूपी समुद्र की क्या कोई थाह पा सकता है ?

सुमिरि राम के गुन गन नाना ॐ पुनि पुनि हरप भुसुंडि सुजाना
महिमा निगम नेति करि गाई ॐ अतुलित बल प्रताप प्रभुताई

रामजी के अनेक गुण-समूहों को याद करके बुद्धिमान् भुशुण्डि फिर-फिर हर्षित हो रहे हैं। जिनकी महिमा वेद ने 'नेति' (नहीं है इति जिसकी) कहकर गायी है, जिनका बल, प्रताप और प्रभुता अतुलनीय है।

सिव अज पूज्य चरन रघुराई ॐ मो पर कृपा परम मृदुलाई
अस सुभाउ कहुँ सुनउँ न देखउँ ॐ केहि खगेस रघुपति सम लेखउँ

जिन रामजी के चरण शिव और ब्रह्मा से पूजित हैं, मुझ पर उनकी कृपा होनी यह उनकी परम कोमलता है। किसी का ऐसा स्वभाव न कहीं सुनता हूँ, न देखता हूँ। हे गरुड़ ! रामजी के समान मैं किसे गिनूँ ?

साधक सिद्ध बिमुक्त उदासी ॐ कबि कोबिद कृतग्य संन्यासी
जोगी सूर सुतापस ग्यानी ॐ धर्म निरत पण्डित बिग्यानी

साधक, सिद्ध, जीवन्मुक्त, उदासीन, कवि, कोविद, कर्म के ज्ञाता, संन्यासी, योगी, शूर, बड़े तपस्वी, ज्ञानी, धर्म-निष्ठ, पंडित और विज्ञानी,

तरहिं न बिनु सेयें मम स्वामी ॐ राम नमामि नमामि नमामी
सरन गयें मोसे अघरासी ॐ होहिं सुद्ध नमामि अबिनासी

ये कोई भी मेरे स्वामी की सेवा किये बिना नहीं तर सकते। हे रामजी ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ, नमस्कार करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। जिनकी शरण जाने पर मुझ जैसे पाप-राशि भी शुद्ध हो जाते हैं, उन अविनाशी रामजी को नमस्कार करता हूँ।

जासु नाम भव भेषज हरन ताप त्रय सूल।
सो कृपाल मोहि तोहि पर सदा रहउ अनुकूल ॥(क)

जिनका नाम भव-रोग की औषधि है, जो तीनों तापों की पीड़ा को हरनेवाले हैं, वे कृपालु मुझ पर और आप पर सदा प्रसन्न रहें।

सुनि भुसुंडि के बचन सुभ देखि राम पद नेह।
बोलेउ प्रेम सहित गिरा गरुड़ बिगत संदेह ॥(ख)

भुशुण्डि के कल्याणकारी वचन सुनकर और रामजी के चरणों में उनका प्रेम देखकर, संदेह से रहित गरुड़ प्रेम-सहित वचन बोले—

मैं कृतकृत्य भयेउँ तव बानी ❀ सुनि रघुबीर भगति रस सानी
राम चरन नूतन रति भई ❀ माया जनित बिपति सब गई

मैं राम के भक्ति-रस में सनी हुई आपकी वाणी सुनकर कृतार्थ हो गया। रामजी के चरणों में मेरी नवीन प्रीति उत्पन्न हुई और माया से उत्पन्न सारी विपत्ति जाती रही।

मोह जलधि बोहित तुम्ह भयऊ ❀ मो कहँ नाथ बिबिध सुख दयऊ
मो पर होइ न प्रति उपकारा ❀ बंदउँ तव पद बारहिं बारा

आप मेरे लिये मोह-रूपी समुद्र में जहाज हुये। हे नाथ! आपने मुझे बहुत प्रकार के सुख दिये। मुझसे इस उपकार का बदला चुकाया नहीं जा सकता। मैं बार-बार आपके पदों की वन्दना करता हूँ।

पूरन काम राम अनुरागी ❀ तुम्ह सम तात न कोउ बड़ भागी
संत बिटप सरिता गिरि धरनी ❀ पर हित हेतु सबन्हि कै करनी

आप पूर्ण-काम हैं और रामजी के अनुरागी हैं। हे तात! आपके समान कोई भाग्यवान् नहीं है। सन्त, वृक्ष, नदी, पर्वत और पृथ्वी, इन सबकी करनी पराये हित के लिये ही होती है।

संत हृदय नवनीत[1] समाना ❀ कहा कबिन्ह पै कहै न जाना
निज परिताप द्रवइ नवनीता ❀ पर दुख द्रवहिं सुसंत पुनीता

कवियों ने सन्तों के हृदय को मक्खन के समान कहा, पर उनसे कहते न बन पड़ा, क्योंकि मक्खन तो अपने को ताप मिलने से पिघलता है, पर परम पवित्र सन्त दूसरों के दुख से पिघल जाते हैं। [व्यतिरेक अलंकार]

जीवन जनम सुफल मम भयऊ ❀ तव प्रसाद संसय सब गयऊ
जानेहु सदा मोहि निज किंकर[2] ❀ पुनि पुनि उमा कहइ बिहंगबर

मेरा जीवन और जन्म सफल हुआ। आपकी कृपा से मेरा सारा संदेह जाता रहा। मुझे सदा अपना दास ही समझियेगा। हे उमा! गरुड़ बार-बार ऐसा कहते रहे।

---

१. मक्खन। २. दास।

दो०- तासु चरन सिर नाइ करि प्रेम सहित मतिधीर।
गयेउ गरुड़ बैकुंठ तब हृदय राखि रघुबीर॥(क)

उसके चरणों पर प्रेम-सहित सिर नवाकर और हृदय में रामजी को धारण करके धीरबुद्धि गरुड़ बैकुंठ को गये।

गिरिजा संत समागम सम न लाभ कछु आन।
बिनु हरि कृपा न होइ सो गावहिं बेद पुरान॥(ख)

हे पार्वती! संत-समागम के समान दूसरा कोई लाभ नहीं है। पर वह हरि की कृपा के बिना नहीं हो सकता, ऐसा वेद और पुराण गाते हैं।

कहेउँ परम पुनीत इतिहासा ❁ सुनत स्रवन छूटहिं भव पासा
प्रनत कलपतरु करुना पुञ्जा ❁ उपजइ प्रीति राम पद कंजा

मैंने यह परम पवित्र इतिहास कहा, जिसे कान से सुनते ही भव-बन्धन छूट जाते हैं। शरणागतों के लिये कल्पवृक्ष तथा दया के समूह रामजी के चरण-कमलों में प्रीति उपजती है।

मन बच कर्म जनित[1] अघ जाई ❁ सुनहिं जे कथा स्रवन मन लाई
तीर्थाटन साधन समुदाई ❁ जोग बिराग ग्यान निपुनाई

जो कान और मन लगाकर इस कथा को सुनते हैं, उनके मन, वचन और कर्म से उत्पन्न सब पाप जाते रहते हैं। तीर्थ-यात्रा आदि बहुत-से साधन, योग, वैराग्य और ज्ञान में निपुणता,

नाना कर्म धर्म ब्रत दाना ❁ संजम दम जप तप मख नाना
भूत दया द्विज गुरु सेवकाई ❁ बिद्या बिनय बिबेक बड़ाई

अनेकों प्रकार के कर्म, धर्म, व्रत, दान, संयम, दया, जप, तप, अनेकों प्रकार के यज्ञ, प्राणियों पर दया, ब्राह्मण और गौ की सेवा, विद्या, विनय और विवेक की बड़ाई इत्यादि

जहँ लगि साधन बेद बखानी ❁ सब कर फल हरि भगति भवानी
सो रघुनाथ भगति श्रुति गाई ❁ राम कृपा काहू एक पाई

जहाँ तक वेदों ने साधन कहे हैं, हे भवानी! उन सबका फल हरि-भक्ति

१. उत्पन्न।

ही है। वह वेदों में गाई हुई राम-भक्ति रामजी ही की कृपा से किसी एक ने ही पाई है।

दो०- मुनि दुर्लभ हरि भगति नर पावहिं बिनहिं प्रयास।
जे यह कथा निरन्तर सुनहिं मानि बिस्वास॥

वे मनुष्य मुनियों को भी दुर्लभ हरि-भक्ति परिश्रम के बिना ही प्राप्त कर लेते हैं, जो यह कथा विश्वास करके सदा सुनते हैं।

सोइ सर्बग्य गुनी सोइ ग्याता ❁ सोइ महि मंडित[1] पंडित दाता
धर्म परायन सोइ कुल त्राता ❁ राम चरन जाकर मन राता[2]

वही सर्वज्ञ है, वही गुणी है, वही ज्ञानी है, वही पृथ्वी का भूषण, पंडित और दानी है, वही धर्म-निष्ठ और वही कुल का रक्षक है, जिसका मन रामजी के चरणों में अनुरक्त है।

नीति निपुन सोइ परम सयाना ❁ श्रुति सिद्धान्त नीक तेहिं जाना
सो कबि कोबिद सोइ रनधीरा ❁ जो छल छाँड़ि भजइ रघुबीरा

वही नीति में निपुण, वही परम बुद्धिमान् है और उसी ने वेदों के सिद्धान्त को अच्छी तरह समझा है, और वही कवि, कोविद और वही रणधीर है, जो छल छोड़कर राम का भजन करता है।

धन्य देस सो जहँ सुरसरी ❁ धन्य नारि पतिब्रत अनुसरी
धन्य सो भूपु नीति जो करई ❁ धन्य सो द्विज निज धर्म न टरई

वह देश धन्य है, जहाँ गङ्गाजी हैं; वह स्त्री धन्य है, जो पतिव्रत-धर्म का पालन करती है; वह राजा धन्य है, जो नीति का पालन करता है और वह ब्राह्मण धन्य है, जो अपने धर्म से नहीं डिगता।

सो धन धन्य प्रथम गति[3] जाकी ❁ धन्य पुन्य रत मति सोइ पाकी
धन्य घरी सोइ जब सतसंगा ❁ धन्य जनम द्विज भगति अभंगा

वह धन धन्य है, जिसकी प्रथम गति (दान) है; वह बुद्धि धन्य और परिपक्व है, जो पुण्य में लगी हुई है; वही घड़ी धन्य है, जब सत्संग हो और वह जन्म धन्य है, जिसमें ब्राह्मण की अखण्ड भक्ति हो।

१. भूषण। २. अनुरक्त, लगा हुआ। ३. धन की तीन गतियां हैं—दान, भोग और नाश।

दो० सो कुल धन्य उमा सुनु जगत पूज्य सुपुनीत।
श्रीरघुबीर परायन जेहिं नर उपज बिनीत॥

हे उमा! सुनो, वह कुल धन्य है, संसार-भर के लिये पूज्य, सुन्दर और पवित्र है, जिसमें श्रीरामजी में अनुरक्त, बिनयशील पुरुष उत्पन्न हों।

मति अनुरूप कथा मैं भाषी ❀ जद्यपि प्रथम गुप्त करि राखी
तव मन प्रीति देखि अधिकाई ❀ तब मैं रघुपति कथा सुनाई

मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार यह कथा कही, यद्यपि पहले इसे छिपाकर रक्खा था। तुम्हारे मन में प्रीति की अधिकता देखी तब मैंने रामजी की यह कथा तुम को सुनाई है।

यह न कहिअ सठ ही हठसीलहि ❀ जो मन लाइ न सुन हरि लीलहि
कहिअ न लोभिहि क्रोधिहि कामिहि ❀ जो न भजइ सचराचर स्वामिहि

यह कथा धूर्त और हठी से, जो मन लगाकर हरि की लीला को न सुनते हों, न कहनी चाहिये। लोभी, क्रोधी और कामी को भी, जो सचराचर के स्वामी को नहीं भजते, यह कथा न कहनी चाहिये।

द्विजद्रोहिहि न सुनाइअ कबहूँ ❀ सुरपति सरिस होइ नृप तबहूँ
राम कथा के ते अधिकारी ❀ जिन्ह कें सत सङ्गति अति प्यारी

ब्राह्मण-द्रोही को भी, चाहे वह इन्द्र के समान राजा ही क्यों न हो, यह कथा न सुनानी चाहिये। राम-कथा के अधिकारी वे हैं, जिनको सत्संगति अत्यन्त प्रिय है।

गुर पद प्रीति नीति रत जेई ❀ द्विज सेवक अधिकारी तेई
ता कहँ यह बिसेष सुखदाई ❀ जाहि प्रानप्रिय श्रीरघुराई

जिनकी गुरु के चरणों में प्रीति है, जो नीति में तत्पर हैं और ब्राह्मणों के सेवक हैं, वे ही इसके अधिकारी हैं। और जिनको श्रीरामचन्द्रजी प्राण के समान प्यारे हैं, उनके लिये तो यह विशेष सुख देने वाली है।

दो० राम चरन रति जो चह अथवा पद निर्बान[1]।
भाव सहित सो यह कथा करउ श्रवन पुट[2] पान॥१२८

१. मोक्ष। २. दोना।

जो रामजी के चरणों में प्रेम चाहता हो, अथवा निर्वाण-पद (मोक्ष) चाहता हो, प्रेम-सहित इस कथा को कानरूपी दोने से पिये।

राम कथा गिरिजा मैं बरनी ❁ कलि मल समनि मनोमल हरनी
संसृति रोग सजीवन मूरी ❁ राम कथा गावहिं श्रुति सूरी[1]

हे पार्वती ! मैंने रामजी की कथा का वर्णन किया, जो कलियुग के पापों को नाश करने वाली और मन के मल को हरने वाली है। राम-कथा संसार के रोगों के लिये संजीवनी जड़ी है, वेद और पंडित ऐसा कहते हैं।

एहि महँ रुचिर सप्त सोपाना ❁ रघुपति भगति केर पंथाना[2]
अति हरि कृपा जाहि पर होई ❁ पाउँ देहि एहिं मारग सोई

इसमें सात सुन्दर सीढ़ियाँ हैं, जो राम-भक्ति को प्राप्त करने के मार्ग हैं। जिस पर हरि की अत्यन्त कृपा होती है, वही इस मार्ग पर पैर रखता है।

मन कामना सिद्धि नर पावा ❁ जो यह कथा कपट तजि गावा
कहहिं सुनहिं अनुमोदन[3] करहीं ❁ ते गोपद[4] इव भवनिधि तरहीं

जो कपट छोड़कर यह कथा गाते हैं, वे मनुष्य अपने मनोरथ की सिद्धि प्राप्त कर लेते हैं। जो इसे कहते, सुनते और अनुमोदन करते हैं, वे भवसागर को गाय के खुर से बने गड्ढे की तरह तर जाते हैं।

सुनि सुभ कथा हृदय अति भाई ❁ गिरिजा बोली गिरा सुहाई
नाथ कृपाँ मम गत संदेहा ❁ राम चरन उपजेउ नव नेहा

यह शुभ कथा सुनकर पार्वती के हृदय को बहुत प्रिय लगी। वे सुन्दर वाणी बोलीं—नाथ की कृपा से मेरा संदेह जाता रहा और रामजी के चरणों में नवीन प्रेम उत्पन्न हो गया।

दो०— मैं कृतकृत्य भइउँ अब तव प्रसाद बिस्वेस।
उपजी राम भगति दृढ़ बीते सकल कलेस ॥१२९

हे विश्वनाथ ! आपकी कृपा से अब मैं कृतार्थ हो गई। मुझमें राम की दृढ़ भक्ति उत्पन्न हो गई और मेरे समस्त क्लेश नष्ट हो गये।

यह सुभ संभु उमा सम्बादा ❁ सुख सम्पादन समन बिषादा
भव भञ्जन गंजन सन्देहा ❁ जन रंजन सज्जन प्रिय एहा

१. विद्वान्, पंडित। २. मार्ग। ३. प्रशंसा। ४. गाय का खुर।

शिव और पार्वती का यह कल्याणकारी संवाद सुख उत्पन्न करने वाला और विषाद का नाश करने वाला है। भव को तोड़ने वाला, संदेहों को नष्ट करने वाला, भक्तों को आनन्द देने वाला और सज्जनों को प्रिय है।

राम उपासक जे जग माहीं ❀ एहि सम प्रिय तिन्हकें कछु नाहीं
रघुपति कृपाँ जथामति गावा ❀ मैं यह पावन चरित सुहावा

जगत् में जो रामजी के उपासक हैं, उनको इसके समान और कुछ भी प्रिय नहीं है। रामजी की कृपा से मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार यह सुन्दर और पवित्र करने वाला चरित्र कहा है।

एहिं कलिकाल न साधन दूजा ❀ जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि ❀ सन्तत सुनिय राम गुन ग्रामहि

तुलसीदासजी कहते हैं—इस कलियुग में योग, यज्ञ, जप, तप, व्रत और पूजा आदि दूसरा कोई साधन नहीं है। बस, राम ही को सुमिरिये, राम ही को गाइये और सदा राम ही के गुण-समूहों को सुनिये।

जासु पतित पावन बड़ बाना ❀ गावहिं कबि श्रुति संत पुराना
ताहि भजहि मन तजि कुटिलाई ❀ राम भजे गति केहि नहिं पाई

पतितों को पवित्र करना जिनका महान् बाना है; ऐसा कवि, वेद, संत और पुराण गाते हैं। रे मन! कुटिलता छोड़कर उन्हीं को भज। रामजी को भजकर किसने गति नहीं पाई?

छंद—पाई न केहि गति पतितपावन राम भजि सुनु सठ मना।
गनिका अजामिल ब्याध गीध गजादि खल तारे घना॥
आभीर जवन किरात खस स्वपचादि अति अघरूप जे।
कहि नाम बारक[1] तेऽपि[2] पावन होहिं राम नमामि ते॥

रे मूर्ख मन! सुन, पतितपावन रामजी को भजकर किसने परम गति नहीं पाई? गणिका, अजामिल, व्याध, गीध, गजेन्द्र आदि अनेकों दुष्टों को रामजी ने तारा है। आभीर, यवन, किरात, खस, श्वपच आदि जो बड़े ही पाप-रूप हैं, वे भी एक बार जिनके नाम को लेकर पवित्र हो जाते हैं, उन रामजी को मैं नमस्कार करता हूँ।

---

१. एक बार। २. वे भी।

रघुबंस भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं।
कलि मल मनोमल धोइ बिनु श्रम राम धाम सिधावहीं॥
सत पंच चौपाईं मनोहर जानि जे नर उर धरै।
दारुन अविद्या पंच जनित बिकार श्री रघुबर हरै॥

रघुकुल के भूषण रामजी का यह चरित्र जो मनुष्य कहते हैं, सुनते हैं और गाते हैं, वे कलियुग के पाप और मन के मल को धोकर बिना परिश्रम ही राम-धाम (बैकुंठ) को जाते हैं। जो मनुष्य पाँच हज़ार एक सौ चौपाइयों को मनोहर जानकर हृदय में धारण करते हैं, उनके अविद्या से उत्पन्न पाँचों क्लेशों को रामचन्द्रजी हर लेते हैं।

सुन्दर सुजान कृपानिधान अनाथ पर कर प्रीति जो।
सो एक राम अकाम हित निर्बानप्रद सम आन को॥
जाकी कृपा लवलेस तें मतिमन्द तुलसीदासहूँ।
पायेउ परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ॥

सुन्दर, बुद्धिमान्, कृपा के धाम और जो अनाथों पर प्रीति करते हैं, ऐसे एक रामजी ही हैं। इनके समान निःस्वार्थ हित करने वाला और मोक्षदाता दूसरा कौन है? जिनकी लेशमात्र कृपा से मन्दबुद्धि तुलसीदास ने भी परम शान्ति प्राप्त कर ली, उन रामजी के समान स्वामी कहीं नहीं है।

दो०— मो सम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुबीर।
अस बिचारि रघुबंस मनि हरहु बिषम भव भीर॥

हे रघुकुल के शिरोमणि रामजी! मेरे समान कोई दीन नहीं है और आपके समान कोई दीनों का कल्याण करने वाला नहीं है, ऐसा विचारकर आप मेरे जन्म मरण के भयानक भय को हरण कर लीजिये। [प्रथम सम अलंकार]

कामिहि नारि पिआरि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरन्तर प्रिय लागहु मोहि राम॥

जैसे कामी को स्त्री प्रिय लगती है, और लोभी को जैसे धन प्यारा लगता है, वैसे ही हे रघुनाथजी! हे रामजी! आप निरन्तर मुझे प्रिय लगिये।

श्लोक—यत्पूर्वं प्रभुणा कृतं सुकविना श्रीशम्भुना दुर्गमं
श्रीमद्रामपदाब्जभक्तिमनिशं प्राप्त्यै तु रामायणम्।
मत्वा तद्रघुनाथनामनिरतं स्वान्तस्तमःशान्तये
भाषाबद्धमिदं चकार तुलसीदासस्तथा मानसम्॥१

प्रभु और सुकवि श्रीशंभु ने पहले जिस दुर्गम मानस-रामायण की श्रीराम के चरण-कमलों में निरंतर भक्ति प्राप्त होने के लिये रचना की थी, तुलसीदास ने उसी को राम-नाम में निरत मानकर अपने अंतःकरण के अंधकार को मिटाने के लिये भाषा में यह मानस रचा।

पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं
मायामोहमलापहं सुविमलं प्रेमाम्बुपूरं शुभम्।
श्रीमद्रामचरित्रमानसमिदं भक्त्यावगाहन्ति ये
ते संसारपतङ्गघोरकिरणैर्दह्यन्ति नो मानवाः॥२॥

यह श्रीरामचरितमानस पुण्य-रूप, पापों को हरने वाला, सदा कल्याण करने वाला, विज्ञान और भक्ति देने वाला, माया-मोह-रूपी मल को नष्ट करने-वाला, अत्यंत निर्मल, प्रेम-रूपी जल से पूर्ण तथा कल्याणकारी है। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इसमें गोता लगाते हैं, वे संसार-रूपी सूर्य की अति प्रखर किरणों से नहीं जलते।

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने
सप्तमः सोपानः समाप्तः

॥ शुभमस्तु, मंगलमस्तु ॥

यह टीका आश्विन कृष्ण ३०, सं० १९९२, ता० २७-९-३५ को दिन के दो बजे पूर्ण हुई।



रामायण की आरती

आरति श्रीरामायनजी की। कीरति कलित ललित सिय पी की।
गावत ब्रह्मादिक मुनि नारद। बालमीकि बिग्यान बिसारद।
सुक सनकादि सेष अरु सारद। बरनि पवनसुत कीरति नीकी ॥१॥

मैं श्रीरामायणजी की आरती करता हूँ, जो सीतापति की सुन्दर शोभा-युक्त कीर्ति है। जिसे ब्रह्मा आदि देवता, नारद मुनि, वाल्मीकि, शुकदेव, सनकादि विज्ञान-वेत्ता तथा शेष, सरस्वती और हनुमानजी गान करते हैं।

गावत बेद पुरान अष्ट दस। छवों सास्त्र सब ग्रन्थन्ह को रस।
मुनि जन धन सन्तन्ह को सरबस। सार अंस सम्मति सबही की ॥२॥

जिसे वेद, अठारहों पुराण और छहों शास्त्र गाते हैं और जिसमें सब ग्रन्थों का रस है, जो मुनिजनों की सम्पत्ति, सन्तों का सर्वस्व और सभी की सम्मति का सारांश है।

गावत सन्तत सम्भु भवानी। अरु घटसम्भव मुनि बिग्यानी।
ब्यास आदि कबिबर्ज बखानी। कागभुसुण्डि गरुड़ के ही की ॥३॥

जिसे निरन्तर शिव-पार्वती गाते हैं और जिसका बखान विज्ञानी मुनि अगस्त्य, व्यास आदि कवि-श्रेष्ठों ने किया है, जो कागभुशुण्डि और गरुड़ के हृदय की वस्तु है।

कलि मल हरनि बिषय रस फीकी। सुभग सिंगार भक्ति जुवती की।
दलन रोग भव मूरि अमी की। तात मात सब बिधि तुलसी की ॥४॥

जो कलियुग के पापों को हरने वाली, विषय-रस से उदास तथा भक्ति-रूपिणी स्त्री का सुन्दर शृङ्गार है और जो संसारी रोगों को नष्ट करने में अमृत की जड़ी तथा तुलसीदास की सब तरह से पिता-माता है।

रामचरित-मानस के चुने हुए उपदेश

अ

अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई
अघ कि पिसुन ता सम कछु आना। धर्म कि दया सरिस हरिजाना
अति दीन मलीन दुखी नितहीं। जिन्हके पदपंकज प्रीति नहीं
अति दुर्लभ कैवल्य परम पद। संत पुरान निगम आगम बद
अति प्रचण्ड रघुपति कै माया। जेहि न मोह अस को जग जाया
अनुजवधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी
अमित दानि भर्त्ता बैदेही। अधम सो नारि जो सेव न तेही

अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहौं निर्बान।
जनम जनम रति रामपद यह बरदान न आन॥

अरिबस दैउ जियावत जाही। मरनु नीक तेहि जीव न चाही

अवगुन मूल सूल प्रद प्रमदा सब दुख खानि।

अस बिचारि जोइ कर सतसंगा। राम भगति तेहि सुलभ बिहंगा
अस बिचारि हरि भगत सयाने। मुक्ति निरादर भगति लोभाने

असुर मारि थापहिं सुरन्ह राखहिं निज श्रुति सेतु।
जग बिस्तारहिं बिषद जस रामजनम कर हेतु॥

आ

आगम निगम प्रसिद्ध पुराना। सेवा धरमु कठिन जगु जाना
आगे कह मृदु बचन बनाई। पाछे अनहित मन कुटिलाई

इ

इच्छित फल बिनु सिव अवराधे। लहिअ न कोटि जोग जप साधे
इन्द्र कुलिस मम सूल बिसाला। कालदण्ड हरिचक्र कराला
इमि कुपन्थ पगु देत खगेसा। रह न तेज तन बुधि बल लेसा

ई

ईस रजाइ सीस सबही के। उतपति थिति लय बिषहु अमी के

उ

उघरहिं अन्त न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावन राहू
उचित कि अनुचित किए बिचारू। धरम जाइ सिर पातक भारू
उदासीन नित रहिय गोसाईं। खल परिहरिय स्वान की नाईं
उमा दारुजोषित की नाईं। सबहिं नचावत राम गोसाईं
उदासीन अरि मीत हित सुनत जरहिं खल रीति।
उमा सन्त कै इहै बड़ाई। मन्द करत जो करै भलाई
उमा राम सुभाव जेहि जाना। ताहि भजनु तजि भाव न आना
उमा जोग जप दान तप नाना ब्रत मख नेम।
राम कृपा नहिं करहिं तसि जसि निस्केवल प्रेम ॥
उमा राम सम हित जग माहीं। गुरु पितु मातु बन्धु कोउ नाहीं
उमा राम मृदुचित करुनाकर। बैरभाव सुमिरत मोहि निसिचर
उमा राम गुन गूढ़ पंडित मुनि पावहिं बिरति।
पावहिं मोह बिमूढ़ जे हरि बिमुख न धरम रति।
उलटा नाम जपत जग जाना। बालमीकि भये ब्रह्म समाना

ए

एहि जग जामिनि जागहिं जोगी। परमारथी प्रपंच बियोगी
एहि तें अधिक धरमु नहिं दूजा। सादर सासु ससुर पद पूजा

औ

औरउ एक गुपुत मत सबहिं कहउँ कर जोरि।
संकर भजन बिना नर भगति न पावइ मोरि ॥

क

कनकहिं बान चढ़ै जिमि दाहें। तिमि प्रियतम पद प्रेम निबाहें
कबहुँ कि दुख सबकर हित ताके। तेहि कि दरिद्र परसमनि जाके
कबि कोबिद गावहिं अस नीती। खल सन कलह न भल नहिं प्रीती
करइ स्वामि हित सेवक सोई। दूखन कोटि देइ किन कोई
करमनास जल सुरसरि परई। तेहि को कहहु सीस नहिं धरई
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी। सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी
करम प्रधान बिस्व करि राखा। जो जस करइ सो तस फल चाखा
कलि कर एक पुनीत प्रतापा। मानस पुन्य होइ नहिं पापा

कलिकाल बिहाल किए मनुजा। नहिं मानत कोउ अनुजा तनुजा
कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना। एक अधार राम गुन गाना

कलिजुग सम जुग आन नहिं जो नर कर बिस्वास।
गाइ राम गुन गन बिमल भव तर बिनहिं प्रयास॥

कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा। बिनु हरिभजन न भव भय नासा
कवनेहु जनम अवध बस जोई। राम परायन सो परि होई
कसे कनक मनि पारखि पाये। पुरुष परखियहि समय सुभाये
कहउँ कहाँ लगि नाम बड़ाई। राम न सकहिं नाम गुन गाई

कहत कठिन समुझत कठिन साधन कठिन बिबेक।
होइ घुनाच्छर न्याय जौं पुनि प्रत्यूह अनेक॥

कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानौं एक भगति कर नाता
कह हनुमन्त बिपति प्रभु सोई। जब तब सुमिरन भजनु न होई
कहिय तात सो परम बिरागी। तृन सम सिद्धि तीनि गुन त्यागी
काटै परसु मलय सुनु भाई। निज गुन देइ सुगन्ध बसाई
काटिय तासु जीभ जो बसाई। श्रवन मूँदि न तु चलिय पराई

काटेहि पइ कदली फरइ कोटि जतन कोउ सींच।
बिनय न मान खगेस सुनु डाँटेहि पै नव नीच॥

का बरषा जब कृषी सुखाने। समय चुकि पुनि का पछिताने

काम क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धारि।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद माया रूपी नारि॥
काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पन्थ।

काल करम बस होहिं गुसाईं। बरबस रात दिवस की नाईं
काल दंड गहि काहु न मारा। हरै धर्म बल बुद्धि बिचारा
कालसुभाउ करम बरिआई। भलेउ प्रकृतिबस चुकइ भलाई
कालधर्म नहिं ब्यापहिं तेही। रघुपति चरन प्रीति रति जेही

काह न पावक जारि सक का न समुद्र समाइ।
का न करइ अबला प्रबल केहि जग काल न खाइ॥

काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत करमु भोग सबु भ्राता
काहू सुमति कि खल सँग जामी। सुभ गति पाव कि परत्रियगामी
किएहु कुबेषु साधु सनमानू। जिमि जग जामवन्त हनुमानू
कीन्हे प्राकृत जन गुन गाना। सिर धुनि गिरा लगति पछिताना

कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सब कहँ हित होई
कुपथ निवारि सुपन्थ चलावा। गुन प्रगटै अवगुनन्हि दुरावा
कुलिस कठोर निठुर सोइ छाती। सुनि हरि चरित न जो हरषाती
केहि न सुसंग बड़प्पन पावा।

कोउ बिस्राम कि पाव तात सहज सन्तोष बिनु।

कोटि बिप्र बध लागहि जाहू। आये सरन तजौं नहिं ताहू
कोमल चित्त अति दीनदयाला। कारन बिनु रघुनाथ कृपाला
को रघुबीर सरिस संसारा। सीलु सनेहु निबाहनि हारा
कौल काम बस कृपिन बिमूढ़ा। अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा
कौतुक देखि चले गुरु पाहीं। जानि बिलम्ब त्रास मन माहीं

कृत त्रेता द्वापर समय पूजा मख अरु जोग।
जो गति होइ सो कलिहि बिषै नाम तें पावहिं लोग॥
क्रोध पाप कर मूल... .... ।

क्रोधिहिं सम कामिहिं हरिकथा। ऊसर बीज बएँ फल जथा

ख

खलउ करहिं भल पाइ सुसंगू। मिटइ न मलिन सुभाउ अभंगू
खल बिनु स्वारथ पर अपकारी। अहि मूषक इव सुनु उरगारी

ग

गगन चढ़इ रज पवन प्रसङ्गा। कीचहि मिलइ नीच जल सङ्गा
गगन समीर अनल जल धरनी। इन्ह कै नाथ सहज जड़ करनी
गरल सुधा रिपु करैं मिताई। गोपद सिन्धु अनल सितलाई
गरुअ सुमेरु रेनु सम ताही। राम कृपा करि चितवा जाही

ग्रह भेषज जल पवन पट पाइ कुजोग सुजोग।
होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग लखहिं सुलच्छन लोग॥

गुनसागर नागर नर जोऊ। अलप लोभ भल कहै न कोऊ
गुरु के बचन प्रतीति न जेही। सपनेहु सुगम न सुख सिधि तेही
गुरु पद रज मृदु मंजुल अञ्जन। नयन अमिय दृग दोष बिभञ्जन
गुरु पितु मातु स्वामि हित बानी। सुनि मन मुदित करिअ भलि जानी
गुरु पितु मातु स्वामि सिख पाले। चलेहु सुगम पथ परहिं न खाले
गूढ़उ तत्त्व न साधु दुरावहिं। आरत अधिकारी जहँ पावहिं

च

चरित राम के सगुन भवानी। तरकि न जाहिं बुद्धि बल बानी
चहुँ जुग चहुँ स्रुति नाम प्रभाऊ। कलि बिसेषि नहिं आन उपाऊ
चातक रटनि घटे घटि जाई। बढ़े प्रेम सब भाँति भलाई
चारि खानि जग जीव अपारा। अवध तजे तन नहिं संसारा
चौदह भुवन एक पति होई। भूत द्रोह तिष्टै नहिं सोई

छ

छत्रिय तनु धरि समर सकाना। कुल कलंक तेहिं पाँवर जाना
छूटै मल कि मलहि के धोएँ। घृत कि पाव कोउ बारि बिलोएँ

ज

जगु पेखन तुम देखनहारे। बिधि हरि संभु नचावनिहारे
जगत प्रकास्य प्रकासक रामू। मायाधीस ग्यान गुन धामू
जथा धर्मसीलन्हि के दिन सुख संजुत जाहिं।
जदपि मित्र प्रभु पितु गुरु गेहा। जाइय बिनु बोलेहु न सँदेहा
जनम मरन सब दुख सुख भोगा। हानि लाभ प्रिय मिलन बियोगा
जन अवगुन प्रभु मान न काऊ। दीनबन्धु अति मृदुल सुभाऊ
जपहिं नाम जनु आरत भारी। मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी
जब लगि उर न बसत रघुनाथा। धरे चाप सायक कटि भाथा
जरउ सो सम्पति सदन सुख सुहृद मातु पितु भाइ।
सन्मुख होत जो राम पद करइ न सहज सहाइ॥
जल पय सरिस बिकाइ देखहु प्रीति कि रीति भल।
बिलग होइ रस जाइ कपट खटाई परत पुनि॥
जहँ लगि साधन बेद बखानी। सब कर फल हरि भगति भवानी
जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते। प्रिय बिनु तियहु तरनिहुँ ते ताते
जहाँ सुमति तहँ सम्पति नाना। जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना
जाकर चित अहि गति सम भाई। अस कुमित्र परिहरेहि भलाई
जातें बेगि द्रवउँ मैं भाई। सो मम भगति भगत सुखदाई
जान आदि कबि नाम प्रतापू। भयेउ सिद्ध करि उलटा जापू
जाना चहहिं गूढ़गति जेऊ। नाम जीह जपि जानहिं तेऊ
जानिय तबहिं जीव जग जागा। जब सब बिसय बिलास बिरागा

जानिय तब मन बिरुज गोसाईं । जब उर बल बिराग अधिकाईं
जाने बिनु न होइ परतीती । बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती
जाय जियत जग सो महि भारू । जननी जोबन बिटप कुठारू
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी । सो नृपु अवसि नरक अधिकारी
जासु त्रास डर कहुँ डर होई । भजन प्रभाव दिखावत सोई
जिअ बिनु देह नदी बिनु बारी । तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी
जिन्हके असि मति सहज न आई । ते सठ हठि कत करत मिताई
जिन हरिकथा सुनी नहिं काना । स्रवन रंध्र अहि भवन समाना
जिन्हके चरन सरोरुह लागी । करत बिबिध जप जोग बिरागी
जिन्ह कृत महा मोह मद पाना । तिन्हकर कहा करिय नहिं काना
जिन्हके यह आचरन भवानी । ते जानहु निसिचर सब प्रानी
जिन्हके लहहिं न रिपु रन पीठी । नहिं लावहिं परतिय मन डीठी
जिन्ह हरि भगति हृदय नहिं आनी । जीवत सव समान तेइ प्रानी
जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई । कोटि भाँति कोउ करै उपाई
जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं । जद्यपि ताहि कामना नाहीं
जीव चराचर बस कै राखे । सो माया प्रभु सों भय भाखे

जीवन मुक्त ब्रह्मपर चरित सुनहिं तजि ध्यान ।
जे हरिकथा न करहिं रति तिन्ह के हिय पाषान ॥

जे असि भगति जानि परिहरहीं । केवल ग्यान हेतु स्रम करहीं
जे गुरु चरन रेनु सिर धरहीं । ते जनु सकल बिभव बस करहीं
जे न मित्र दुख होहिं दुखारी । तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी
जे सठ गुर सन इरषा करहीं । रौरव नरक कोटि जुग परहीं
जेहि के जेहि पर सत्य सनेहू । सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू
जो अपराध भगत कर करई । राम रोष पावक सो जरई
जो इन्ह कर मारा नहिं मरई । बिप्र द्रोह पावक सो जरई
जोगु कुजोगु ग्यान अग्यानू । जहँ नहिं राम पेम परधानू
जो गुन रहित सगुन सोइ कैसे । जलु हिम उपल बिलग नहिं जैसे
जोग जुगुति तप मन्त्र प्रभाऊ । फलै तबहिं जब करिअ दुराऊ
जो नहिं करइ राम गुनगाना । जीह सो दादुर जीह समाना
जो सेवक साहिबहिं सँकोची । निज हित चहै तासु मति पोची
जौं निरबिघन पंथ निरबहई । सो कैवल्य परमपद लहई

जौं सब के रह ग्यान एक रस। ईश्वर जीवहिं भेद कहहु कस

ज्ञ

ज्ञान अखंड एक सीतावर। मायाबस्य जीव सचराचर
ज्ञान पन्थ कृपान कै धारा। परत खगेस होत नहिं बारा

ज्ञानी तापस सूर कबि कोबिद गुन आगार।
केहि कै लोभ बिडम्बना कीन्हि न एहि संसार॥

ज्ञानी मूढ़ न कोइ।
जेहि जस रघुपति करहिं जब सो तस तेहि छन होइ॥

ट

टेढ़ जानि संका सब काहू। बक्र चन्द्रमहिं ग्रसै न राहू

ढ

ढोल गँवार सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी

त

तजि मद मोह कपट छल नाना। करौं सद्य तेहि साधु समाना
तथा मोच्छ सुख सुनु खगराई। रहि न सकइ हरि भगति बिहाई
तदपि बिरोध मान जहँ कोई। तहाँ गए कल्यान न होई
तनु धनु धामु धरनि पुर राजू। पति बिहीन सब सोक समाजू
तनु पोषक निन्दक अघखानी। जीवत सव सम चौदह प्रानी
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा
तब लगि हृदय बसत खल नाना। लोभ मोह मत्सर मद माना

तब लगि कुसल न जीव कहुँ सपनेहुँ मन बिश्राम।
जब लगि भजत न राम कहँ सोक धाम तजि काम॥

तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि बिज्ञान धाम मन करहिं निमिष महुँ छोभ॥

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिय तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग॥

तातें सुर सीसन्ह चढ़त जग बल्लभ श्रीखण्ड।
अनल दाहि पीटत घनहिं परसु बदन यह दण्ड॥

तातें नास न होइ दास कर। भेद भगति बाढ़ै बिहंगवर

ताहि कि संपति सगुन सुभ सपनेहुँ मन बिस्राम ।
भूत द्रोह रत मोह बस राम बिमुख रतकाम ॥
तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाए । धरमसील पहिं जाहिं सुभाए
तुलसी जसि भवितव्यता तैसी मिलै सहाइ ।
आपु न आवै ताहि पहिं ताहि तहाँ लै जाइ ॥
ते जड़ जीव निजात्मक घाती । जिन्हहिं न रघुपति कथा सुहाती
ते जड़ कामधेनु गृह त्यागी । खोजत आक फिरहिं पय लागी
तेइ दोउ बन्धु प्रेम जनु जीते । गुरु पद कमल पलोटत प्रीते
ते सठ महासिन्धु बिनु तरनी । पैरि पार चाहहिं जड़ करनी
ते सिर कटु तुंबरि सम तूला । जे न नमत हरि गुरुपद मूला
तृषित बारि बिनु जो तनु त्यागा । मुए करै का सुधा तड़ागा
तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा । केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा

द

दीप सिखा सम जुबतिजन मन जनि होसि पतंग ।
भजहिं राम तजि काम मद करहिं सदा सतसंग ॥
दुष्ट उदय जग आरत हेतू । जथा प्रसिद्ध अधम ग्रहकेतू
देत लेत मन संक न धरई । बल अनुमान सदा हित करई
देह धरे कर यह फलु भाई । भजिय राम सब काम बिहाई
देहिं परम गति सो जिय जानी । अस कृपालु को कहहु भवानी
द्वैत बुद्धि बिनु क्रोध किमि द्वैत कि बिनु अग्यान ।
मायाबस परिछिन्न जड़ जीव कि ईस समान ॥

ध

धन्य घरी सोइ जब सतसंगा । धन्य जनम द्विज भगति अभंगा
धरम न दूसर सत्य समाना । आगम निगम पुरान बखाना
धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना । ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना
धीरजु धरम मित्र अरु नारी । आपद काल परखियहि चारी
धूमौ तजै सहज करुआई । अगरु प्रसंग सुगंध बसाई

न

नतरु बाँझ भलि बादि बिआनी । राम बिमुख सुत ते हित हानी
नयनन्हि सन्त दरस नहिं देखा । लोचन मोर पंख कर लेखा

नरक सर्ग अपवर्ग निसेनी। ग्यान बिराग भगति सुखदेनी
नरतनु पाइ बिषय मन देहीं। पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं
नवनि नीच कै अति दुखदाई। जिमि अंकुस धनु उरग बिलाई
नवहिं बिरोधे नहिं कल्याना।
नहिं असत्य सम पातक पुंजा।
नहिं कलि करम न भगति बिबेकू। राम नाम अवलम्बन एकू
नहिं दोष विचार न सीतलता। सब जाति कुजाति भए मँगता
नहिं दरिद्र सम दुख जग माहीं। सन्त मिलन सम सुख कहुँ नाहीं
नाम प्रभाव जान सिव नीको। कालकूट फल दीन्ह अमी को
नामु सप्रेम जपत अनयासा। भगत होहिं मुद मंगल बासा
नारि धरम पति देव न दूजा।
नारि नयन सर जाहि न लागा। घोर क्रोध तम निसि जो जागा
नारि सुभाव सत्य कबि कहहीं। अवगुन आठ सदा उर रहहीं
निगम नेति सिव अन्त न पावा। ताहि धरैं जननी हठि धावा

निर्गुन रूप सुलभ अति सगुन न जानहिं कोइ।
सुगम अगम नाना चरित सुनि मुनि मन भ्रम होइ॥

निज अनुभव अब कहौं खगेसा। बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा
निज दुख गिरि सम रज करि जाना। मित्र क दुख रज मेरु समाना
निज परिताप द्रवै नवनीता। पर दुख द्रवहिं सुसंत पुनीता
निज प्रतिबिंब बरुक गहि जाई। जानि न जाइ नारि गति भाई
निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा। परस कि होइ बिहीन समीरा
निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा

प

पन्नगारि असि नीति स्रुति संमत सज्जन कहहिं।
अति नीचहु सन प्रीति करिय जानि निज परम हित॥

पर उपकार बचन मन काया। संत सहज सुभाव खगराया
पर उपदेस कुसल बहुतेरे। जे आचरहिं ते नर न घनेरे
परद्रोही कि होइ निःसंका। कामी पुनि कि रहै अकलंका
परबस जीव स्वबस भगवन्ता। जीव अनेक एक श्रीकंता
परम धरम श्रुति बिदित अहीसा। पर निंदा सम अघ न गरीसा

पर संपदा बिनासि नसाहीं । जिमि ससि हति हिम उपल बिलाहीं
परहित बस जिनके मन माहीं । तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं
परहित लागि तजैं जो देही । संतत संत प्रसंसहि तेही
परहित सरिस धर्म नहिं भाई । परपीड़ा सम नहिं अधमाई
पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं ।
पावन जसु कि पुन्य बिनु होई । बिनु अघ अजस कि पावै कोई
पितु आयसु सब धरम क टीका ।
पुत्रवती जुवती जग सोई । रघुबर भगतु जासु सुत होई
पुनि पुनि सत्य कहौं तोहि पाहीं । मोहिं सेवक सम प्रिय कोउ नाहीं
पुनि रघुबीरहिं भगति पियारी । माया खलु न नर्त्तकी बिचारी
पुन्य एक जग महुँ नहिं दूजा । मन क्रम बचन बिप्र पद पूजा
पुन्य पुञ्ज बिनु मिलहिं न सन्ता । सतसंगति संसृति कर अन्ता
पूजिअ बिप्र सील गुनहीना । सूद्र न गुनगन ग्यान प्रबीना
प्रभु अपने नीचहु आदरहीं । अगिनि धूम गिरि सिर तिन धरहीं

प्रभु तरुतर कपि डार पर ते किय आपु समान ।
तुलसी कहूँ न राम से साहिब सीलनिधान ।।

प्रिय बानी जे सुनहिं जे कहहीं । ऐसे नर निकाय जग अहहीं
प्रीति प्रनय बिनु मद तें गुनी । नासहिं बेगि नीति असि सुनी
प्रीति बिना नहिं भगति दृढ़ाई । जिमि खगपति जल कै चिकनाई

प्रीति बिरोध समान सन करिय नीति असि आहि ।
जौं मृगपति बध मेडुकन्हि भल कि कहै कोउ ताहि ।।

प्रेम भगति जल बिनु रघुराई । अभि अन्तर मल कबहुँ न जाई

फ

फल भर नम्र बिटप सब रहे भूमि नियराइ ।
पर उपकारी पुरुष जिमि नवहिं सुसंपति पाइ ।।
फूलै फरै न बेत जदपि सुधा बरषहिं जलद ।
मूरख हृदय न चेत जौं गुरु मिलहिं बिरंचि सत ।।

ब

बचन परम हित सुनत कठोरे । सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे

बड़े भाग पाइअ सतसंगा । बिनहिं प्रयास होइ भवभंगा
बड़े सनेह लघुन्ह पर करहीं । गिरि निज सिरन्ह सदा तृन धरहीं
बधू लरिकिनी पर घर आई । राखेहु नयन पलक की नाई
बरु भल बास नरक कर ताता । दुष्ट संग जनि देइ बिधाता
बवा सो लुनिअ लहिअ जो दीन्हा ।
बसनहीन नहिं सोह सुरारी । सब भूषन भूषित बर नारी
बादि बसन बिनु भूषन भारू । बादि बिरति बिनु ब्रह्म बिचारू
बायस पलिअहि अति अनुरागा । होहिं निरामिष कबहुँ कि कागा

बारि मथे घृत होइ बरु सिकता तें बरु तेल ।
बिनु हरि भजन न भव तरहिं यह सिद्धान्त अपेल ॥

बारक राम कहत जग जेऊ । होत तरन तारन नर तेऊ
बिधिबस सुजन कुसंगति परहीं । फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं
बिधुबदनी सब भाँति सँवारी । सोह न बसन बिना बर नारी

बिनु गुरु होइ कि ग्यान ग्यान कि होइ बिराग बिनु ।

बिनु छल बिस्वनाथ पद नेहू । राम भगत कर लच्छन एहू
बिनु तप तेज कि कर बिस्तारा । जल बिनु रस कि होइ संसारा

बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहिं न राम ।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह बिस्राम ॥

बिनु बिज्ञान कि समता आवै । कोउ अवकास कि नभ बिनु पावै

बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग ।
मोह गये बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग ॥

बिनु सतसंग बिबेकु न होई । रामकृपा बिनु सुलभ न सोई
बिनु संतोष न काम नसाहीं । काम अछत सुख सपनेहुँ नाहीं
बिपति काल कर सतगुन नेहा । स्रुति कह संत मित्र गुन एहा
बैषानष सोइ सोचन जोगू । तप बिहाइ जेहि भावइ भोगू
बंस कि रह द्विज अनहित कीन्हे । कर्म कि होहिं स्वरूपहिं चीन्हे

भ

भगति तात अनुपम सुखमूला । मिलै जो संत होहिं अनुकूला
भगतिवन्त अति नीचउ प्रानी । मोहि प्रानप्रिय असि मम बानी

भगति सुतंत्र सकल सुखखानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी
भगतिहिं सानुकूल रघुराया। तातें तेहि डरपति अति माया
भगतिहीन नर सोहै कैसा। बिनु जल बारिद देखिअ जैसा
भगतिहीन बिरंचि किन होऊ। सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोऊ
भनिति बिचित्र सुकबि कृत जेऊ। राम नाम बिनु सोह न सोऊ
भगतिहीन गुन सब सुख कैसे। लवन बिना बहु ब्यंजन जैसे
भयदायक खल कै प्रिय बानी। जिमि अकाल के कुसुम भवानी
भरत सरिस को राम सनेही। जग जप राम राम जप जेही

भरद्वाज सुनु जाहि जब होइ बिधाता बाम।
धूरि मेरु सम जनक जम ताहि ब्याल सम दाम॥

भलो भलाइहि पै लहै लहै निचाइहि नीचु।
सुधा सराहिअ अमरता गरल सराहिअ मीचु॥

भव कि परहिं परमातमबिंदक। सुखी कि होहिं कबहुँ परनिंदक
भाय कुभाय अनख आलसहूँ। नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ
भाविउ मेटि सकहिं त्रिपुरारी।
भ्राता पिता पुत्र उरगारी। पुरुष मनोहर निरखत नारी
भूरज तरु सम संत कृपाला। परहित नित सह बिपति बिसाला
भोग रोग सम भूषन भारू। जम जातना सरिस संसारू

म

मज्जनफल पेखिय ततकाला। काक होहिं पिक बकउ मराला
मन क्रम बचन छाँड़ि चतुराई। भजत कृपा करिहहिं रघुराई
मन क्रम बचन अगोचर जोई। दसरथ अजिर बिचर प्रभु सोई

मन क्रम बचन कपट तजि जो कर भूसुर सेव।
मोहि समेत बिरंचि सिव बस ताके सब देव॥

मन मलीन तनु सुन्दर कैसे। बिषरस भरा कनकघट जैसे
ममतारत सन ग्यान कहानी। अति लोभी सन बिरति बखानी
माँगै भीख त्यागि निज धरमू। आरत काह न करइ कुकरमू
मातु पिता गुर प्रभु कै बानी। बिनहिं बिचारि करिअ सुभ जानी
मानहिं मातु पिता नहिं देवा। साधुन्ह सन करवावहिं सेवा

माया ईस न आपु कहँ जानि कहिय सो जीव ।
बंध मोच्छ प्रद सर्ब पर माया प्रेरक सीव ॥

मायावस्य जीव अभिमानी । ईसबस्य माया गुनखानी

मुखिया मुखु सो चाहिये खान पान कहुँ एक ।
पालइ पोषइ सकल अँग तुलसी सहित बिबेक ॥

मुद मंगलमय संत समाजू । जो जग जंगम तीरथराजू
मुधा भेद जद्यपि कृत माया । बिनु हरि जाय न कोटि उपाया
मुनि तापस जिन्हते दुखु लहहीं । ते नरेस बिनु पावक दहहीं
मेटि जाइ नहिं राम रजाई । कठिन करमगति कछु न बसाई
मोरे मत बड़ नाम दुहूँ ते । किय जेहि जुग निज बस निज बूते
मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा । राम तें अधिक राम कर दासा
मोह न अन्ध कीन्ह केहि केही । को जग काम नचाव न जेही
मोहनिसा सबु सोवनिहारा । देखिअ सपन अनेक प्रकारा
मोह सकल ब्याधिन कर मूला । तेहि तें पुनि उपजै बहु सूला
मंगलमूल बिप्र परितोषू । दहइ कोटि कुल भूसुर रोषू
मंगन लहहिं न जिन्हकै नाहीं । ते नरबर थोरे जग माहीं

मन्त्र परम लघु जासु बस बिधि हरिहर सुर सर्ब ।
महामत्त गजराज कहँ बस कर अँकुस खर्ब ॥

र

रघुपति बिमुख जतन कर कोरी । कवन सकै भवबन्धन छोरी
रघुबंसिन्ह कर सहज सुभाऊ । मन कुपन्थ पगु धरहिं न काऊ
रमा बिलास राम अनुरागी । तजत बमन जिमि जन बड़ भागी
राखै गुरु जौं कोप बिधाता । गुरु बिरोध नहिं कोउ जगत्राता
राखि को सकै राम कर द्रोही ।
राखिय नारि जदपि उर माहीं । जुबती सास्त्र नृपति बस नाहीं
राज कि रहै नीति बिनु जाने । अघ कि रहै हरि चरित बखाने
राज धरम सरबस एतनोई । जिमि मन माँह मनोरथ गोई
राजु नीति बिनु धन बिनु धर्मा । हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा
रामकथा सुन्दर करतारी । संसय बिहग उड़ावन हारी
राम कृपा बिनु सुनु खगराई । जानि न जाइ राम प्रभुताई

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई। करै अन्यथा अस नहिं कोई
रामचरन पंकज उर धरहू। लंका अचल राजु तुम्ह करहू
रामचरित जे सुनत अघाहीं। रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं

रामचन्द्र के भजन बिनु जो चह पद निर्बान।
ग्यानवंत अपि सो नर पसु बिनु पूछ बिषान॥

राम नाम मनि दीप धरु जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहरहुँ जौं चाहसि उँजियार॥

राम बिमुख संपति प्रभुताई। जाइ रही पाई बिनु पाई
राम बिमुख लहि बिधि सम देही। कबि कोबिद न प्रसंसहिं तेही
राम भजत सोइ मुकुति गोसाईं। अनइच्छित आवै बरिआईं
राम भजन बिनु मिटहि कि कामा। थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा
राम रजाइ मेटि मन माहीं। देखा सुना कतहुँ कोउ नाहीं
राम राम कहि जे जमुहाहीं। तिन्हहिं न पाप पुंज समुहाहीं
राम सनेह सरस मन जासू। साधु सभा बड़ आदर तासू

रिपु तेजसी अकेल अपि लघु करि गनिअ न ताहु।
अजहुँ देत दुख रबि ससिहिं सिर अवसेषित राहु॥
रिपु रुज पावक पाप प्रभु अहि गनिअ न छोट करि।

ल

लखि सुबेष जग बंचक जेऊ। बेष प्रताप पूजिअहि तेऊ
लाभ कि कछु हरि भगति समाना। जेहि गावहिं श्रुति सन्त पुराना
लिखत सुधाकर गा लिखि राहू। बिधि गति बाम सदा सब काहू
लोभ फाँस जेहि गर न बँधाया। सो नर तुम्ह समान रघुराया
लोभी जसु चह चार गुमानी। नभ दुहि दूध चहत ए प्रानी

व

विद्या बिनु बिबेक उपजाए। स्रम फल पढ़े किए अरु पाए
बिधिहु न नारि हृदय गति जानी। सकल कपट अघ अवगुन खानी
बिषय करन सुर जीव समेता। सकल एकतें एक सचेता

श

श्रीगुरपद नख मनि गन जोती। सुमिरत दिब्य दृष्टि हिय होती

श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि।
मृगलोचनि लोचन सर को अस लाग न जाहि॥

श्रुति कह परम धरम उपकारा।

स

सकल सुकृत कर बड़ फल एहू। राम सीय पद सहज सनेहू

सगुन उपासक परम हित निरत नीति दृढ़ नेम।
ते नर प्रान समान मम जिन्हके द्विज पद प्रेम॥

सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा

सचिव बैद गुरु तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगि ही नास॥

सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपन सन सुन्दर नीती
सठ सुधरहिं सतसङ्गति पाई। पारस परस कुधातु सोहाई

सठ सेवक की प्रीति रुचि रखिहहिं राम कृपालु।
उपल किए जल जान जेहि सचिव सुमति कपि भालु॥

सतसंगति मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला
सदा रोगबस संतत क्रोधी। बिष्णु बिमुख श्रुति संत बिरोधी
सन इव खल परबंधन करई। खाल कढ़ाइ बिपति सहि मरई
सनमुख होइ जीव मोहिं जबहीं। जनम कोटि अघ नासहिं तबहीं

सपने होइ भिखारि नृपु रंकु नाकपति होइ।
जागे लाभ न हानि कछु तिमि प्रपंच जिय जोइ॥

सब कर फल हरि भगति दृढ़ाई। सो बिनु संत न काहू पाई
सब कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई
सब गुन रहित कुकबि कृत बानी। राम नाम जस अंकित जानी
सब जग तेहि अनलहुँ तें ताता। जो रघुबीर बिमुख सुनु भ्राता
सब बिधि सोचिअ पर अपकारी। निज तनुपोषक निरदय भारी

समरथ कहुँ नहिं दोष गोसाईं। रबि पावक सुरसरि की नाईं
सरन गए प्रभु ताहु न त्यागा। बिस्व द्रोहकृत अघ जेहि लागा

सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।
ते नर पाँवर पापमय तिन्हहिं बिलोकत हानि॥

सरुज सरीर बादि बहु भोगा। बिनु हरिभगति जाय जप जोगा
सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी। बैद बंदि कबि मानस गुनी

सहज सुहृद गुरु स्वामि सिख जो न करइ सिर मानि।
सो पछिताइ अघाइ उर अवसि होइ हित हानि॥

सहसा करि पाछे पछिताहीं। कहहिं बेद बुध ते बुध नाहीं
सादर कहहिं सुनहिं बुध ताही। मधुकर सरिस संत गुनग्राही
साधक नाम जपहिं लय लाए। होहिं सिद्ध अनिमादिक पाए
साधु अवग्या तुरत भवानी। कर कल्यान अखिल कै हानी
साधु तें होइ न कारज हानी।
साधु समाज न जाकर लेखा। राम भगत महुँ जासु न रेखा
साधु सुजान सुसील नृपाला। ईस अंस भव परम कृपाला
सास्त्र सुचिन्तित पुनि पुनि देखिअ। भूप सुसेवित बस नहिं लेखिअ
साहस अनृत चपलता माया। भय अबिबेक असौच अदाया
सापत ताड़त परुष कहन्ता। बिप्र पूज्य अस गावहिं सन्ता
सिव द्रोही मम भगत कहावा। सो नर सपनेहुँ मोहिं न भावा
सिव पद कमल जिन्हहिं रति नाहीं। रामहिं ते सपनेहुँ न सुहाहीं
सिर भरि जाउँ उचित अस मोरा। सबतें सेवक धरम कठोरा
सीतापति सेवक सेवकाई। कामधेनु सम सरिस सुहाई
सीम कि चाँपि सकै कोउ तासू। बड़ रखवार रमापति जासू
सील कि मिल बिनु बुध सेवकाई। जिमि बिनु तेज न रूप गुसाईं
सुख हरषहिं जड़ दुख बिलखाहीं। दोउ सम धीर धरहिं मन माहीं

सुनहु तात माया कृत गुन अरु दोष अनेक।
गुन यह उभय न देखिअहिं देखिअ सो अबिबेक॥

सुनहु राम कर सहज सुभाऊ। जन अभिमान न राखहिं काऊ
सुनु खगेस हरि भगति बिहाई। जे सुख चाहहिं आन उपाई

सुनु सुरेस रघुनाथ सुभाऊ। निज अपराध रिसाहिं न काउ
सुमति कुमति सबके उर बसहीं। नाथ पुरान निगम अस कहहीं
सुर नर मुनि सबकै यह रीती। स्वारथ लागि करहिं ए प्रीती
सुरसरि मिले सो पावन जैसे। ईस अनीसहिं अन्तर तैसे
सुलभ सिद्धि सब प्राकृतहू राम कहत जमुहात।
सूल कुलिस सम अँगवनिहारे। ते रतिनाथ सुमनसर मारे
सेवक कर पद नयन से मुख सों साहिबु होइ।
सेवक सुख चह मान भिखारी। व्यसनी धन सुभ गति बिभिचारी
सेवक सठ नृप कृपन कुनारी। कपटी मित्र सूल सम चारी
सेवक सेव्य भाव बिनु भव न तरिय उरगारि।
भजहु राम पदपंकज जस सिद्धान्त बिचारि॥
सेवक हित साहिब सेवकाई। करै सकल सुख लोभ बिहाई
सेवत बिषय बिबर्ध जिमि नित नित नूतन मार।
सोइ गुनग्य सोई बड़ भागी। जो रघुबीर चरन अनुरागी
सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा। जो तनु पाइ भजिअ रघुबीरा
सो कुल धन्य उमा सुनु जगतपूज्य सुपुनीत।
श्रीरघुबीर परायन जेहि नर उपज बिनीत।
सोचनीय सबही बिधि सोई। जो न छाँड़ि छल हरिजन होई
सोचिअ गृही जो मोहबस करइ करम पथ त्याग।
सोचिअ जती प्रपंचरत बिगत बिबेक बिराग॥
सोचिअ नृपति जो नीति न जाना। जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना
सोचिअ पिसुन अकारन क्रोधी। जननि जनक गुरु बन्धु बिरोधी
सोचिअ पुनि पतिबंचक नारी। कुटिल कलहप्रिय इच्छाचारी
सोचिअ बटु निज ब्रत परिहरई। जो नहिं गुरु आयसु अनुसरई
सोचिअ बयसु कृपन धनवानू। जो न अतिथि सिव भगति सुजानू
सोचिअ सूद्र बिप्र अवमानी। मुखर मानप्रिय ग्यान गुमानी
सोचिअ बिप्र जो बेद बिहीना। तजि निज धरम बिषय लयलीना
सो सुख धरमु करमु जरि जाऊ। जहँ न राम पदपंकज भाऊ
सो सुतन्त्र अवलंब न आना। तेहि आधीन ग्यान बिग्याना
संकर बिमुख भगति चह मोरी। सो नारकी मूढ़ मति थोरी
संकर प्रिय मम द्रोही सिव द्रोही मम दास।
ते नर करहिं कलप भरि घोर नरक महँ बास॥

संग तें जती कुमन्त्र तें राजा। मान तें ग्यान पान तें लाजा
संत उदय संतत सुखकारी। बिस्व सुखद जिमि इन्दु तमारी
संत असंतन्ह कै असि करनी। जिमि कुठार चन्दन आचरनी
सन्त सहहिं दुख परहित लागी। पर दुख हेतु असंत अभागी
सन्त सम्भु श्रीपति अपवादा। सुनिअ जहाँ तहँ असि मरजादा

सन्त पंथ अपवर्ग कर कामी भवकर पन्थ।
कहहिं सन्त कवि कोविद श्रुति पुरान सद्ग्रन्थ॥

सन्त हृदय नवनीत समाना। कहा कबिन्ह पै कहै न जाना
सम्भावित कहँ अपजस लाहू। मरन कोटि सम दारुन दाहू
संसृत मूल सूलप्रद नाना। सकल सोकदायक अभिमाना
स्रद्धा बिना धरम नहिं होई। बिनु महि गन्ध कि पावै कोई
स्रुति पुरान सब ग्रन्थ कहाहीं। रघुपति भगति बिना सुख नाहीं

स्रोता सुमति सुसील सुचि कथा रसिक हरिदास।
पाइ उमा अति गोप्य अपि सज्जन करहिं प्रकास॥
स्वपच सबर खस जमन जड़ पाँवर कोल किरात।
राम कहत पावन परम होत भुवन बिख्यात॥

स्वामि धरम स्वारथहिं बिरोधू। बैरु अंध प्रेमहिं न प्रबोधू
स्वारथ साँच जीव कहुँ एहा। मन क्रम बचन राम पद नेहा

ह

हरि ब्यापक सर्बत्र सुजाना। प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना
हरि सेवकहिं न ब्याप अबिद्या। प्रभु प्रेरित ब्यापै तेहि बिद्या
हरिहर निन्दा सुनै जो काना। होइ पाप गोघात समाना
हानि कि जग एहि सम किछु भाई। भजिय न रामहिं नर तनु पाई
हानि कुसंग सुसंगति लाहू। लोकहु बेद बिदित सब काहू

हानि लाभ जीवन मरन जस अपजस बिधि हाथ।
होइ न बिमल बिबेक उर गुरु सन किए दुराव।

होइ बिकल सक मनहिं न रोकी। जिमि रबि मनि द्रव रबिहिं बिलोकी
होइ बिबेक मोह भ्रम भागा। तब रघुनाथ चरन अनुरागा
होइहि सोइ जो राम रचि राखा। को करि तरक बढ़ावइ साखा
होत न भूतल भाउ भरत को। अचर सचर चर अचर करत को॥

❀ समाप्त ❀